

जैवाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्री-घासीलालजी-महाराज-
विरचितया अनुयोगवार्ता-द्रकाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाप्रवादसहितम्-

श्री-अनुयोगद्वारसूत्रम्

(प्रथमो भागः)

निर्वाहकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-
पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः

साणंदनिवासी-श्रेष्ठिश्री-डोसाभाई-गोपालदाससस्मरणार्थं
तत्पुत्रप्रदत्त-द्रव्यसाहाय्येन

अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धासमितिप्रमुखः
श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-आवृत्तिः
वर्ष १९००

वीर संवत्
२४९३

विक्रम-संवत्
२०९३

ईसवीसंवत्
१९९७

मूल्यम्-२५-००

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-

विरचितया अनुयोगवन्द्रिकाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्

श्री अनुयोगद्वारसूत्रम्

(प्रथमो भागः)

नियोजक :

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि

पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः

साणंदनिवासी-श्रेष्ठिश्री डोसाभाई गोपालदासस्मरणार्थ

तत्पुत्रप्रदत्त-द्रव्यसाहाय्येन

अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः

श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-आवृत्तिः

वीर-संघत्

विक्रम-संवत्

ईसवीसन

प्रति १२००

२४२३

२०२३

१९६७

मूल्यम्-रु० २५-०-०

Published by :

Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastrodhdhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालोह्वयं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुलपृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

भूद्वयः ३. २५=००

प्रथम आवृत्ति प्रत १२००

वीर संवत् २४६३

विक्रम संवत् २०२३

धनवीसन १६६७

: मुद्रक :

भण्डिलाद छपनदाद शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
धीकांटा रोड, अमडावाड.

श्री अनुयोगद्वारसूत्र भाग पहले की विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
१	मंगलाचरण	१-२
२	विषयों का विवरण	३-१३
३	पाँच प्रकार के ज्ञान के स्वरूप का निरूपण	१३-२९
४	श्रुतज्ञान के स्वरूप का निरूपण	३०-५७
५	आवश्यक के अनुयोगस्वरूप का निरूपण	५८-६०
६	आवश्यक के निक्षेप का निरूपण	६१-६३
७	नामावश्यक के स्वरूप का निरूपण	६४-७२
८	स्थापनावश्यक के स्वरूप का निरूपण	७२-७७
९	नामावश्यक और स्थापनावश्यक के भेद का कथन	७८-८५
१०	द्रव्यावश्यक का निरूपण	८६-१०१
११	नयभेद से द्रव्यावश्यक के स्वरूप का निरूपण	१०२-११५
१२	नो आगम से द्रव्यावश्यक का निरूपण	११६-११९
१३	ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक का निरूपण	११९-१२६
१४	भव्यशरीर द्रव्यावश्यक निरूपणम्	१२७-
१५	ज्ञायक शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक का निरूपण	१३१-१३२
१६	लौकिक द्रव्यावश्यक का निरूपण	१३२-१४१
१७	कुमावचनिक द्रव्यावश्यक का निरूपण	१४२-१५०
१८	ज्ञायक शरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त लोकोत्तरीय द्रव्यावश्यक का निरूपण	१५०-१५२
१९	भावावश्यक का निरूपण	१५९-१६४
२०	नो आगम भावावश्यक का निरूपण	१६४-१६८

४

२१	कुप्रभावचनिक भावावश्यक का निरूपण	१६८-१७०
२२	लोकोत्तरीय भावावश्यक का निरूपण	१७१-१७७
२३	भावावश्यक के पर्याय का निरूपण	१७८-१८२
२४	नामश्रुतका निरूपण	१८३-१८४
२५	आगम से द्रव्य श्रुतका निरूपण	१८४-१८६
२६	नो आगम से द्रव्यावश्यक का निरूपण	१८६-१८७
२७	ज्ञायक शरीर द्रव्यश्रुतका निरूपण	१८७-१८८
२८	भव्यशरीर द्रव्यश्रुतका निरूपण	१८९-१९०
२९	ज्ञायक शरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यश्रुतकानिरूपण	१९०-१९९
३०	आगमसे भावश्रुतका निरूपण	२००-२०१
३१	लौकिक नो आगम से भावश्रुतका निरूपण	२०२-२०५
३२	लोकोत्तरीय नो आगमसे भावश्रुतका निरूपण	२०६-२१०
३३	भावश्रुत के पर्यायों का निरूपण	२१०-२१२
३४	स्कन्धाधिकार का निरूपण	२१३-२१५
३५	द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२१६-२१८
३६	द्रव्यस्कन्ध के सचित्तरूप प्रथम भेद का निरूपण	२१९-२२१
३७	अचित्तरूप द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२२२-२२३
३८	मिश्र द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२२४-२२७
३९	अकृत्स्नस्कन्ध का निरूपण	२२८-२३०
४०	अनेक द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२३१-२३४
४१	आगमसे भावस्कन्ध का निरूपण	२३५-
४२	नो आगमसे भावस्कन्ध का निरूपण	२३६-२३८
४३	स्कन्धों के पर्यायों का निरूपण	२३९-२४१
४४	आवश्यक के छ अध्ययनों का निरूपण	२४१-२४५
४५	आवश्यक व्याख्यात हो चुके और आगे व्याख्यात होने वाले विषय का निरूपण	२४५-२५१
४६	लौकिक उपक्रम का निरूपण	२५१-२५३

४७ सचित्त द्रव्योपक्रम का निरूपण	२३४-२५७
४८ द्विपद संबंधी द्रव्योपक्रम का निरूपण	२५७-२५९
४९ चतुष्पद विषयक दोनों प्रकार के उपक्रम का निरूपण	२६०-२६१
५० अपद विषय दोनों प्रकार के उपक्रम का निरूपण	२६१-२६२
५१ अविस्त द्रव्योपक्रम का निरूपण	२६२-२६३
५२ मिश्र द्रव्योपक्रम का निरूपण	२६३-२६५
५३ क्षेप्रोपक्रम का निरूपण	२६६-२६९
५४ कालोपक्रम का निरूपण	२६९-२७१
५५ नौ आगम से मावोपक्रम का निरूपण	२७१-२८४
५६ सास्त्रमावोपक्रम का निरूपण	२८४-२८५
५७ आनुपूर्वी प्रादि के स्वरूप का निरूपण	२८६-
५८ नामादि आनुपूर्वी का निरूपण	२८७-३०४
५९ अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी का निरूपण	३०५-३१६
६० नैगमव्यवहारार्थपदका निरूपण	३१७-३१९
६१ मङ्गलश्रुतीर्तनता का निरूपण	३१९-३२७
६२ मङ्गलदर्शनता का निरूपण	३२७-३३४
६३ समवतार के स्वरूप का निरूपण	३३५-३३९
६४ अनुगमके स्वरूप का निरूपण	३३९-३४३
६५ सारपद का निरूपण	३४३-३४४
६६ द्रव्यप्रमाण का निरूपण	३४५-३४७
६७ क्षेत्रप्रमाण का निरूपण	३४८-३५५
६८ स्पर्शनाद्वार का निरूपण	३५५-३६०
६९ कालद्वार का निरूपण	३६१-३६४
७० अन्तरद्वार का निरूपण	३६५-३७६
७१ भागद्वार का निरूपण	३७६-३८३
७२ भावद्वार का निरूपण	३८३-३८७

७३ अल्प बहुत्वद्वार का निरूपण	३८७-३९७
७४ अर्थपद का निरूपण	३९९-४०२
७५ भङ्ग समुत्कीर्तनता का निरूपण	४०३-४०५
७६ भङ्गोपदर्शनता का निरूपण	४०६-४०८
७७ समवतार के स्वरूप का निरूपण	४०८-४१०
७८ अनुगम के स्वरूप का निरूपण	४१०-४२४
७९ पूर्वानुपूर्वी आदि तीन भेदों का निरूपण	४२५-४३१
८० पुद्गलास्तिकायकों अधिकृत करके तीन द्रव्यों का निरूपण	४३१-४३८
८१ क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	४३९-४४२
८२ अर्थपद की प्ररूपणा	४४२-४४८
८३ अर्थपद प्ररूपणा के प्रयोजन का निरूपण	४४९-४५०
८४ भङ्गसमुत्कीर्तनता के प्रयोजन का निरूपण	४५१-४५२
८५ भङ्गोपदर्शनता का निरूपण	४५२-४५६
८६ समवतार का निरूपण	४५६-४५७
८७ अनुगम का निरूपण	४५८-४५९
८८ द्रव्यप्रमाण का निरूपण	४६०-४६४
८९ क्षेत्रप्रमाणद्वार का निरूपण	४६५-४७७
९० स्पर्शनाद्वार का निरूपण	४७७-४७९
९१ कालद्वार का निरूपण	४८०-४८४
९२ अन्तरद्वार का निरूपण	४८५-४९०
९३ भागद्वार का निरूपण	४९१-५००
९४ मात्रद्वार का निरूपण	५०१-५०२
९५ अल्पबहुत्वद्वार का निरूपण	५०३-५१०
९६ अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५११-५१६
९७ औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५१६-५२३
९८ अधोलोक गत क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५२३-५२६

ॐ

१०१	तिर्यग्लोक क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५२७-५३२
१००	ऊर्ध्वलोक क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५३३-५३९
१०१	कालानुपूर्वी आदि का निरूपण	५३९-५४०
१०२	नैगमव्यवहारनयसंमत अर्थपद का निरूपण	५४१-५४७
१०३	नैगमव्यवहारनयसंमत भङ्गसमुत्कीर्तन का निरूपण	५४८-५५०
१०४	नैगमव्यवहारनयसंमत मङ्गोपदर्शन का निरूपण	५५१-५५४
१०५	समस्तार के स्वरूप का निरूपण	५५५-५५६
१०६	अनुगम के स्वरूप का निरूपण	५५७-५६२
१०७	क्षेत्रद्वार और स्पर्शनाद्वार का निरूपण	५६३-५७३
१०८	कालद्वार का निरूपण	५७४-५७७
१०९	अन्तरद्वार का निरूपण	५७७-५८७
११०	अनीपनिधिकी कालानुपूर्वी का निरूपण	५८७-५८८
१११	अर्थपदमरुण आदि का निरूपण	५८८-५८९
११२	औपनिधिकी कालानुपूर्वी का निरूपण	५९०-६०१
११३	उत्कीर्तनानुपूर्वी का निरूपण	६०१-६०५
११४	गणनानुपूर्वी का निरूपण	६०५-६०८
११५	संस्थानानुपूर्वी का निरूपण	६०८-६१४
११६	सामाचार्यानुपूर्वी का निरूपण	६१४-६२३
११७	भावानुपूर्वी का निरूपण	६२३-६२८
११८	उपक्रम के दूसरेभेद नाम का निरूपण	६२८-६३०
११९	एक नाम के स्वरूपका निरूपण	६३०-६३२
१२०	द्विनाम आदिके स्वरूपका निरूपण	६३३-६४४
१२१	त्रिनाम के स्वरूपका निरूपण	६४५-६५५
१२२	पर्यवनामका निरूपण	६५५-६६६
१२३	प्रकारान्तरसे त्रिनामका निरूपण	६६६-६७१
१२४	चतुर्नामका निरूपण	६७१-६७७
१२५	पांचनामों का निरूपण	६७७-६७९
१२६	छ नामों का निरूपण	६७९-६८२
१२७	औदयिकादि भावों के स्वरूपका निरूपण	६८२-६९१
१२८	औपशमिक भावका निरूपण	६९३-६९६

१२९	क्षायिक भावका निरूपण	६९७-७१६
१३०	क्षायोपशमिक भावका निरूपण	७२०-७३५
१३१	पारिणामिक भावका निरूपण	७३५-७४५
१३२	सान्निपातिक भावका निरूपण	७४५-७४६
१३३	द्विकादि संयोगका निरूपण	७४७-७५६
१३४	द्विकादि त्रिकसंयोगज सान्निपातिक भावका निरूपण	७५७-७७२
१३५	चतुष्कसंयोगज सान्निपातिक भावका निरूपण	७७२-७८२
१३६	पंचक संयोगज सान्निपातिक भावका निरूपण	७८२-७८८
१३७	सप्तनामका निरूपण	७८९-७९२
१३८	कारणदर्शनपूर्वक स्वरोंका निरूपण	७९२-७९८
१३९	सात स्वरों के लक्षण का निरूपण	७९८-८०२
१४०	स्वरों के ग्राम एवं मूर्च्छना का निरूपण	८०३-८०५
१४१	स्वर के उत्पत्ति आदि का निरूपण	८०६-८०८
१४२	गीत में हेय और उपादेय का निरूपण	८०८-८२१
१४३	अष्ट नाम का निरूपण	८२१-८२७
१४४	नव नाम का निरूपण	८२८-८३३
१४५	लक्षणपूर्वक वीररस का निरूपण	८३३-८३६
१४६	लक्षणपूर्वक शृंगाररस का निरूपण	८३६-८३९
१४७	लक्षण सहित अद्भुतरस का निरूपण	८३९-८४०
१४८	लक्षण सहित रौद्ररस का निरूपण	८४१-८४४
१४९	लक्षणसहित व्रीडनकरस का निरूपण	८४५-८४८

समाप्त



પટેલ ડોસાભાઈ ગોપાલદાસ

સુ. સાણંદ (જ. અમદાવાદ)



જન્મ : તા. ૧૭-૧-૧૮૭૦

મરણ : તા. ૫-૬-૧૯૬૪

સાણુંદનિવાસી ધર્માનુરાગી સ્વ. શ્રી ડોસાભાઈ ગોપાળજીભાઈ પટેલનું સંક્ષિપ્ત જીવનચરિત્ર

સાણુંદ (જી. અમદાવાદ) નિવાસી પટેલ ડોસાભાઈનો જન્મ વિક્રમ સંવત ૧૯૨૬ તા. ૧૭-૧-૧૮૭૦ના રોજ થયો હતો. તેઓ જે ભાઈઓ હતા. મોટા હરીભાઈ અને નાના ડોસાભાઈ તેઓ કડવા પાટીદાર જ્ઞાતિના હતા. કડવા પાટીદાર જ્ઞાતિમાં વૈષ્ણવધર્મી અને જૈનધર્મી હોય છે શ્રી ગોપાળજીભાઈમાં જૈનધર્મના સંસ્કારો દૃઢ હતા. તેઓ સ્થાનકવાસી જૈનધર્મના ચુસ્ત અનુયાયી હતા તેથી તેમના બંને પુત્રોમાં જૈનધર્મના સંસ્કારો બાલ્યાવસ્થામાંથી દૃઢ થયા હતા તેમના પૂર્વજો મૂળ અમદાવાદ પાસેના નરોડા ગામના વતની હતા, પરંતુ સમય જતાં તેઓ સાણુંદમાં આવી વસ્યા હતા.

બંને પુત્રોએ ધાર્મિક શિક્ષણ સાથે ગુજરાતી શિક્ષણ લીધું, તે દરમિયાન બંને પુત્રોને બાળ-અવસ્થામાં છોડી પિતા ગોપાળજીભાઈ સ્વર્ગવાસ પામ્યા. માતા બંને પુત્રોને લઈ પોતાના પિયર ગયા ત્યારબાદ ૧૮ વર્ષની ઉંમરે ડોસાભાઈને લઈ તેમની માતા પુનઃ સાણુંદમાં આવી વસ્યા. ઈ સ. ૧૯૦૨માં શ્રી ડોસાભાઈનું શ્રીમંત કન્યા જડાવબાઈ સાથે બીજીવાર લગ્ન થયું જડાવબાઈ સરળ, ધાર્મિક અને સેવાપરાયણ હતા. પોતાના ખેતીના ધંધામાં જીવનનિર્વાહ બરોબર ચાલતો ન હોવાથી ડોસાભાઈએ નોકરી રવીકારી ૩૦ વર્ષ સુધી નોકરી કર્યા બાદ અનાજના ધંધામાં પડ્યા અને પ્રમાણિકતા, મીઠી ભાષા વગેરે સદ્ગુણોથી તેઓએ ધંધામાં ખૂબ પ્રગતિ સાધી સાથે સાથે દ્રવ્ય પ્રાપ્તિ પણ ઘણી સારી કરી.

શ્રી ડોસાભાઈ ધર્મના રંગથી ખરેખરા રંગાયેલા હતા સામાયિક, બંને વખત અતિક્રમણ, વરસોનાવરસો સુધી કરેલી બંને વખતની આયંબીલની સંપૂર્ણ ઝોળી, ઉપવાસાદિ તપશ્ચર્યા એ જૈનધર્મ પ્રત્યેની. તેમની ભક્તિના અપૂર્વ પ્રતીકો હતાં.

પશુ-પ્રાણીઓ પ્રત્યેની તેમની હયા પ્રશંસનીય હતી. એકવાર તેઓ કોઈ ગામડામાં ઉઘરાણીએ ગયેલા, ત્યાં રસ્તામાં ભૂખતરસથી પીડાતી એવી દુબળા ગાયને જોઈ, તેમણે હૃદય કરુણાથી ભરાઈ આવ્યું. તેમણે ગામલોકોને આ દુઃખી ગાયની વ્યવસ્થા કરવાનું કહ્યું પણ કોઈએ ગંજીકાયું નહિ, તેથી ડોસાભાઈ પોતાની ઉઘરાણીના કામને જતું કરી તરતજ ગામમાંથી એક ગાડું ભાડે લાવી તેમાં ગાયને તેમાં નાખી, સાણુંદ લાવ્યા અને પાંજરાપોળમાં મૂકી પોતાના તરફથી તેના ઘાસચારાને સંપૂર્ણ બંદોબસ્ત કર્યો.

૧૦

સાધુમુનિરાજે પ્રત્યે તેમને અનન્ય ભક્તિ હતી ગાંધીમાં સંતસતીજીએ બિરાજતા હોય ત્યારે તેમના દર્શન કર્યા પહેલાં તેઓ કદી અન્નજળ લેતા ન હતા. સંઘના દરેક કાર્યમાં તેમનો તન, મન, ધનનો હમેશાં સક્રિય સહકાર રહેતો તેમણે અને તેમના પુત્રોએ અમદાવાદ દાણા ખજારમાં (કાણુપુર-ચોખાખજાર) અનાજની જથ્થાબંધ દુકાન શરૂ કરી તેની સાથે તેમણે પેઢીમાં પોતાનું નામ રાખવાનું બીલકુલ પસંદ કર્યું નહિ તેઓ જૈનધર્મના સૂક્ષ્મ તરવારને જાણતા હોઈ, તેમણે “ક્રિયા”, (પાપની રાયાઈ) આવવાનાં કારણે નામ સ્થાપનાથી મુક્ત થયા છેવ્લા કેટલાયે વરસોથી તેઓ નિવૃત્ત ધાર્મિક જીવન ગાળતા.

તેઓ સાદુ જીવન ગાળતા જીંદગીમાં તેમણે કદી ડોક્ટરની દવા સુદ્ધાં લીધી ન હતી. તેઓએ ખૂબજ લાંબુ આયુષ્ય ભોગવી, ૬૫ વર્ષની ઉંમરે સંવત ૨૦૨૦ ના વૈશાખ વદ દશમ તા. ૫-૬-૧૯૬૪ના રોજ ખૂબજ સમતાપૂર્વક સ્વર્ગગમન કર્યું. તેમને પોતાના અંતિમ સમયની જાણ થઈ હોય તેમ તેમણે પોતાના જ્યેષ્ઠ પુત્ર મહાસુખભાઈને કહી દીધું કે સમસ્ત કુટુંબને અહિં એકત્ર કરો તે મુજબ આજુ કુટુંબ તેમની પાસે હાજર થયું સૌની ક્ષમાયાચના કરી અને પવિત્ર નવકારમંત્રના શાંત જાપપૂર્વક તેઓ આ દુનિયાનો ત્યાગ કરી ગયા અને પોતાના મનુષ્યજીવનને ધન્ય બતાવી ગયા.

શ્રી ડાસાભાઈને એક પુત્રી અને ત્રણ પુત્રો છે. પુત્રી મહાલક્ષ્મીજીને ધર્મના સંસ્કારથી ભૂષિત છે. ત્રણ પુત્રો (૧) મહાસુખભાઈ (૨) બલદેવભાઈ (૩) ચમનલાલભાઈ જેઓ પોતાના અનાજના વ્યવસાયમાં રોકાયેલા હોવા છતાં જૈનધર્મમાં ઉત્થાન કાર્યમાં સારો ફાળો આપે છે, જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમીતીને તેમણે પોતાના સદ્ગત પિતાશ્રી ડાસાભાઈની પુણ્યસ્મૃતિમાં રૂા. ૫૦૦૧ આપીને છે અને આ આગમ તેમના સ્મરણથી પ્રગટ કરાવેલ છે.

તેમના જ્યેષ્ઠ પુત્ર મહાસુખભાઈ વર્ષો સુધી સરકારી સ્કૂલમાં અધ્યાપક કરીકે રહ્યા હતા. હાલ પોતાની અનાજની પેઢીમાં ધીકરો વ્યવસાય કરી રહ્યા છે બીજા પુત્ર શ્રી બલદેવભાઈ અમદાવાદ જૈન મંચ-૨૬ એસોસીએશનના પ્રમુખ પદ પર છે અને ત્રીજા પુત્ર શ્રી ચમનભાઈ શિક્ષણપ્રિય સંસ્થાન છે. ત્રણે ભાઈઓનો ફાળો જૈનધર્મના કાર્યોમાં સહકાર ભરેલો રહેલ છે તે ખરેખર આનંદજનક છે.

રાજકોટ

માનદમંત્રીઓ

તા. ૨૫-૬-૧૯૬૭

અ. ભા. એ. સ્થા. જૈન. શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ

આધ્યમુરખીશ્રીઓ



શ્રી શાંતિલાલ ભગંદાસભાઈ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શ્રી શામજીભાઈ વેલજીભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.



(સ્વ.) શ્રી છાગનલાલ શામજીદાસ લાવસાર - અમદાવાદ.



શ્રી રામજીભાઈ શામજીભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.



વચ્ચે બેઠેલા
લાલાજી કિશનચંદજી સા. જોહરી
ઉમેશ સુપુત્ર ચિ. મહેતાચંદજી સા.
નાના - અનિલકુમાર જૈન (દીપતા)

આવમુરખીશ્રીઓ



(સ્વ.) શેઠશ્રી હરખચંદ કાલીદાસ વારિઆ
ભાણવડ.



(સ્વ.) શેઠ રંગભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



શ્રી વિનોદભાઈ વીરાણી



શેઠશ્રી જસિંગભાઈ પોચાલાલભાઈ
અમદાવાદ.



સ્વ. શેઠશ્રી આત્મારામ માલુકલાલ
અમદાવાદ.

આધ્યમુરખીશ્રીઓ



શ્રી વ્રજલાલ દુલ્લલ પારેખ
રાજકોટ.



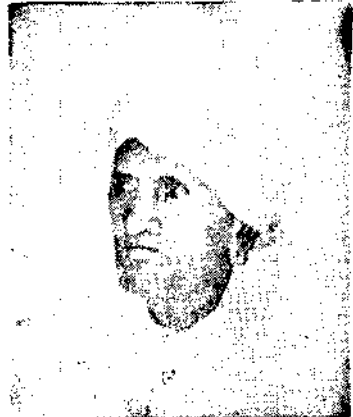
કેશરી હરગોવિંદ જેયંદભાઈ
રાજકોટ.



શેઠશ્રી મિશ્રીલાલ લાલચંદલ સા. દુષિયા
તથા શેઠશ્રી જેવંતરાજલ લાલચંદલ સા.



(સ્વ.) શેઠશ્રી ધારશીભાઈ લવજીલાલ
બારસી.



સ્વ. શ્રીમાન શેઠશ્રી સુકનચંદલ સા.
આલિયા પાદી ભારવાડ

આવમુરજીશ્રીઓ



સ્વ. શેઠશ્રી હરિલાલ અનોપચંદ શાહ
ખંભાત.



સ્વ. શેઠ તારાચંદજી સાહેબ ગેલડા
મદ્રાસ.



શ્રીમાન્ શેઠ સા. ચીમનલાલજી સા.
કૃષ્ણચંદજી સા. અજીતવાલે (સપરિવાર)



૧. વચ્ચે બેઠેલા મોટાભાઈ શ્રીમાન્ મૂલચંદજી
જવાહીરલાલજી બરડિયા
૨. બાજુમાંબેઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી બરડિયા
૩. ઉભેલા સૌથી નનાભાઈ પૂનમચંદ બરડિયા



શ્રીમાન્ સેઠશ્રી
સીમરાજજી સા. ચોરડિયા

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री जैनाचार्य—जैनधर्मदिवाकर—पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितया
अनुयोगचन्द्रिकारूपया व्याख्यया समलङ्कितम्—

श्री_अनुयोगद्वारसूत्रम्

(प्रथमो भागः)

(मालिनी वृत्तम्)

शिवसरणिविधानं जीवरक्षैकतानं,
सुरनरकृतगानं केवलज्ञानभानम् ।
प्रशमरसनिदानं ज्ञानदानप्रधानं,
परमसुखनिधानं वर्धमानं नमामि ॥ १ ॥

(२)

करणचरणभारं सर्वपूर्वाब्धिपारं,
शुभतस्गुणभारं प्राप्तसंसारपारम् ।
कलितसकललब्धिं लब्धविज्ञानसिद्धिं,
गणधरमभिरामं गौतमं तं नमामि ॥ २ ॥

॥ श्री ॥

अनुयोगद्वार सूत्र का हिन्दी भाषान्तर प्रारम्भ

मैं उन अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर जिनेन्द्र को नमस्कार करता हूँ कि जिन्होंने ४ घातिक कर्मों का अत्यंत विनाश करके केवलज्ञानरूपी अनन्त प्रकाश प्राप्त कर लिया है। और इसी कारण जो मोक्षमार्ग के विधायक तथा अनन्त अव्याबाध सुख के निधान (निधि) बने हैं। भव्य जीवों को जो प्रधानरूप से ज्ञान का दान देते हैं और जीवों की रक्षा करने में रुदा तत्पर रहते हैं। देव और मनुष्य जिनके गुणों का गान करते हैं तथा जो प्रशम (शांत) रस के निदान—आदिकारण हैं ॥१॥

अनुयोगद्वार सूत्रनुं भाषान्तर प्रारंभ—

जेमले आर घातिया कर्मोना संपूर्णतः क्षय करीने केवलज्ञानरूपी अनन्त प्रकाशने प्राप्त करी लीया छे, अने ते कारले जेयो मोक्षमार्गना विधायक तथा अनन्त अव्याबाध सुखना निधान (निधि) बनेला छे, जेयो अव्य लोवोने सुभ्यत्वे ज्ञाननुं दान दे छे अने लोवोनी रक्षा करवामा जे सदा तत्पर रहे छे, हेवो अने मनुष्यो जेमना गुणो गाय छे, अने जेयो शान्तरसना निदान आदिकारण छे जेवां अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर जिनेन्द्रने हुं नमस्कार करे छुं ॥ १ ॥

(પૃથ્વીચ્છન્દઃ)

સગુપ્તિસમિતિ સમાં વિરતિમાદધાનં સદા,

ક્ષમાવદસ્વિલક્ષ્મં કલિતમઞ્જુચારિત્રકમ્ ।

સદોરમુખવસ્ત્રિકા વિલસિતાનનેન્દુ ગુરુ,

દુરન્ત ભવવારિધિપ્લવમર્પૂર્વબોધં સ્તુવે ॥૩॥

(ગીતિઃ)

મધ્યાનામુપકૃતયે, પ્રવચનસિદ્ધાન્તવોધિનીં સરલામ્ ।

વાસીલાલઃ કુરુતે, વ્યાખ્યામનુયોગચન્દ્રિકાં શિવદામ્ ॥ ૪ ॥

જો કરણસત્તરિ ઔર ચરણસત્તરિ કે ધારણ કરને વાલે હૈં । સમસ્ત ૧૪ પૂર્વરૂપ સમુદ્ર કે જો પારગામી હૈં । અત્યન્ત શ્રેષ્ઠ સમ્યગ્દર્શનાદિ ગુણાં કે જો ધારક હૈં । સંસાર કા પાર જિન્હોને પા લિયા હૈ । સમસ્ત લબ્ધિયાં કે જો મંડાર હૈં વિજ્ઞાન (વિશિષ્ટ જ્ઞાન) કો સિદ્ધિ જિન્હેં પ્રાપ્ત હોં ચુકી હૈ—એસે ઉન મુનિશ્રેષ્ઠ ગૌતમ ગણધર કો મૈં નમસ્કાર કરતા હૂં । ॥૨॥

જો ત્રીન ગુપ્તિયોં સહિત પાંચ સમિતિયોં કો ઔર સમસ્ત વિરતિ કો સદા ધારણ કરતે હૈં । પૃથ્વી કી તરહ જો સર્વસહ હૈં । નિર્મલ ચારિત્ર કે જો આરાધક હૈં । વાયુકાયાદિક જીવોં કી રક્ષા કે લિયે સદોરકમુખવસ્ત્રિકા સે જિન કા મુખચન્દ્ર સર્વદા મુશોભિત હોતા રહતા હૈ । જો હસ દુરન્ત સંસારરૂપ સમુદ્ર મેં પ્રવહન—(નૌકા) કે જૈસે હૈં । એસે અપૂર્વ બોધ વિશિષ્ટ ગુરુદેવ કો મૈં નમસ્કાર કરતા હૂં । ॥૩॥

જેઓ કરણસત્તરિ (સત્તર કરણ) અને ચરણસત્તરિ (સત્તર ચરણ)ના ધારક છે, સમસ્ત ૧૪ પૂર્વરૂપ સમુદ્રનો પાર જેમણે પામી લીધો છે, અત્યંત શ્રેષ્ઠ સમ્યગ્દર્શન-આદિ ગુણોથી જેઓ વિભૂષિત છે, જેમણે પોતાના સંસારનો અન્ત કરી નાખ્યો છે, જેઓ સમસ્ત લબ્ધિયોના મંડાર છે, અને વિજ્ઞાન (વિશિષ્ટ જ્ઞાન)ની સિદ્ધિ જેમને થઈ ચુકી છે એવાં મુનિશ્રેષ્ઠ ગૌતમ ગણધરને હું નમસ્કાર કરું છું ॥ ૨ ॥

ત્રણ ગુપ્તિઓ અને પાંચ સમિતિઓ તથા સમસ્ત વિરતિને સદા ધારણ કરનારા, પૃથ્વીના જેવા સહિષ્ણુ, નિર્મલ ચારિત્રના આરાધક, સદોરકમુખવસ્ત્રિકા (મુહપત્તી) વડે જેમણે મુખચન્દ્ર સદા મુશોભિત રહે છે, જેઓ આ દુરન્ત સંસારમાં ભ્રમણ કરતાં હોયો માટે નૌકા સમાન છે, એવાં અપૂર્વ બોધવિશિષ્ટ ગુરુદેવને હું નમસ્કાર

કરું છું. ॥ ૩ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા મણ્ડલાચરણમ્

૩

इह मनुष्यजन्म दुर्लभं, यथा—केनाऽपि क्रीडापरेण देवेन यदि माणिक्य-
मयं स्तम्भं वज्रेण चूर्णीकृत्य परमाणुतुल्यं तच्चूर्णं नलिकान्तर्निधाय मेरुशिखरं
समाख्य फलकृतसमीपेऽस्तच्चूर्णं सकलं सर्वतः समुद्घातितं भवेत् । तदनन्तरं च
यदि विक्षिप्तास्ते परमाणवः प्रचण्डपवनोद्धृताः सर्वासु दिक्षु दूरं गता एकै
कशो विभिन्नाः पतिताः स्युस्तदा तान् परमाणुरूपान् सर्वतः संचित्य तैः पुनः

મैं ઘાસીલાલ મુનિવ્રતિ મન્ય જીવોં કે ઉપકાર કે નિમિત્ત પ્રવચન કે સિદ્ધાન્ત
કો સ્પષ્ટ કરનેવાલી અનુયોગદ્વાર સૂત્ર પર અનુયોગચન્દ્રિકા નામ કી સરલ
વ્યાખ્યા કો કિ જો મન્ય જીવોં કે લિયે આનન્દપ્રદ હૈ—રચતા હું । ॥૪॥

इस चतुर्गतिरूप संसार में मनुष्य जन्म बहुत दुर्लभ है । इस की
दुर्लभता शास्त्रकारोंने इस प्रकार से—प्रकट की है—जैसे क्रीडा में तत्पर बना
हुआ कोई—देव माणिक्य के स्तम्भ को वज्र से तोड़कर चूर २ कर देवें,
और फिर उस चूर्ण को एक नली के भीतर भरकर मेरु के शिखर पर खड़ा
२ अपनी फूंक से इधर उधर दिशाओं में उसे सब ओर उड़ादेवें । इस तरह
सर्व दिशाओं में बिखरे हुए वे चूर्ण परमाणु कि जिन्हें प्रचंड वायु के वेग
ने एक २ करके बहुत अधिक दूरतक तितर बितर कर लिया है अब यदि
वह देव—उन बिखरे हुए विभिन्न परमाणुओं को सर्व दिशाओं से एकत्रित

ભવ્ય જીવોના ઉપકારને માટે, પ્રવચનના સિદ્ધાન્તનું સ્પષ્ટીકરણ કરનારી,
અનુયોગદ્વાર સૂત્રની અનુયોગચન્દ્રિકા નામની સરળ વ્યાખ્યા, કે જે ભવ્ય જીવોને
માટે આનન્દપ્રદ છે, તેની હું ઘાસીલાલજી મુનિ, રચના કરું છું. ॥ ૪ ॥

ચાર ગતિવાળા આ સંસારમાં મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ થવી મુશ્કેલી હોય છે.
તેની હોંશ્વરતાનું શાસ્ત્રકારોએ નીચેના ઉદાહરણ દ્વારા પ્રતિપાદન કર્યું છે.

ધારો કે કોઈ એક દેવ ક્રીડામાં તત્પર બનેલો છે. તે વજ્રની મદદથી માણિક્યાના
સ્તંભને તોડી નાખીને તેના ચૂરેચૂરા કરી નાખે છે. ત્યાર બાદ તે ચૂર્ણને એક
નળીમાં ભરી લે છે. ત્યારબાદ તે દેવ તે માણિક્યાના બૂકાથી ભરેલી નળીને લઈને
મેરુ પર્વતના શિખર ઉપર જઈને જોડો રહે છે અને ફૂંક મારી મારીને તે નળીમાં
ભરેલા માણિક્યાના બૂકાને ચારે દિશાઓમાં ઉડાડી દે છે. ત્યાર બાદ પ્રચંડ વાયુ
ફૂંકવાને લીધે ચારે દિશાઓમાં વિખરાયેલા તે માણિક્યાના પરમાણુઓ દૂર દૂર સુધી
જાડી જઈને વેર વિખેર થઈ જાય છે. હવે ધારો કે તે દેવ એક વિચાર કરે કે
સર્વ દિશાઓમાં વેરવિખેર પડેલા તે માણિક્યાના પરમાણુઓને એકત્ર કરીને ફરીથી

સ્તમ્ભનિષ્પાદનં દુષ્કરં, તથૈવ ચતુર્ગતિસંસારેષુ ભ્રમતાં જીવાનાં મનુષ્યજન્મ
દુર્લભમ્ તથા ચાયં સંગ્રહશ્લોકઃ—

“ચૂર્ણીકૃત્ય પરાક્રમાન્મણિમયં સ્તમ્ભં સુરેણ સ્વયં,

મેરૌ સન્નલિકાસમીરવશતઃ ક્ષિપ્તં રજો વિશ્વત્ ।

સ્તમ્ભસ્તઃ પરમાણુભિઃ સુમિલિતૈર્લોકે યથા દુષ્કરઃ,

સંસારે ભ્રમતો મનુષ્યજનનં જન્તોસ્તથા દુર્લભમ્” ॥ ૬૩ ॥

એવંવિધમતિદુર્લભં માનુષં જન્મ સમ્પ્રાપ્ય, મિથ્યાત્વતિમિરપ્રણાશકં
શ્રદ્ધાજ્યોતિઃપ્રકાશકં તત્ત્વાતત્ત્વવિવેચકં પીયૂષપાનમિવ હિતાવહં ચન્નચન્ન-
ચન્દ્રિકામિવ હૃદયાહ્લાદક સ્વપ્નદૃષ્ટવસ્તુનઃ પુનર્જાગ્રદવસ્થાયાં—તદ્દ્યામવત્પ્રમોદજનકં
ભૂમિગતનિધાનપ્રાપ્તિમિવ સુખજનકસકલસન્તાપહારકં ધર્મશ્રવણં સમુપલભ્ય,

કર પુનઃ ઉનસે મણિમય સ્તંભ બનાના યાહે તો જિસ પ્રકાર યહ સ્તંભ નિર્માણ કાર્ય
ઉપકા દુષ્કર હૈ, ઉસી પ્રકાર સે ઇસ ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં મટકતે હુએ જીવો
કો મનુષ્ય જન્મ-મિલના દુર્લભ હૈ । યહી બાત ઇસ “ચૂર્ણીકૃત્ય—ઇત્યાદિ શ્લોક
દ્વારા કહી ગઈ હૈ । ઇસ તાહ સે અતિ દુર્લભ બને હુએ મનુષ્યજન્મ કો પાકર-
કે ઔર ઇસમેં મી મિથ્યાત્વરૂપ અન્બકાર કો નાશ કરનેવાલે, શ્રદ્ધારૂપ જ્યોતિ
કા પ્રકાશ કરનેવાલે એવં તત્ત્વ ઔર અતત્ત્વ કા સ્વરૂપ કહને વાલે, એસે ધર્મ
કા શ્રવણ કિ જો જીવ કે લિયે અમૃતપાન કે સમાન હિતકારક હૈ—ચમકતી
હુઈ ચન્દ્રિકા કે સમાન, હૃદયાનન્દજનક હૈ—જાગૃત અવસ્થા મેં સ્વપ્નદૃષ્ટ વસ્તુની
પ્રાપ્તિ કે સમાન પ્રમોદકારક હૈ, ભૂમિગતનિધાન કી પ્રાપ્તિ કે સમાન સુખ-
દાયક ઔર સમસ્ત સન્તાપોં કા નાશક હૈ, પ્રાપ્ત કાકે તથા ઇસકે પ્રમાણ સે

તેમાંથી માણિક્ય સ્તંભનું નિર્માણ કરે. તો તે વેર વિખર થઈને પડેલા પરમાણુઓને
એકત્ર કરીને તેમાંથી માણિક્ય સ્તંભનું નિર્માણ કરવાનું કામ તે દેવને માટે બેટલું
દુષ્કર છે, બેટલું જ દુષ્કર ચાર ગતિવાળા આ સંસારમાં ભટકતાં જીવોને માટે
મનુષ્ય જન્મની પ્રાપ્તિરૂપ કાર્ય છે. એજ વાત સૂત્રકારે “ચૂર્ણીકૃત્ય” ઇત્યાદિ શ્લોક
દ્વારા પ્રકટ કરી છે.

આ રીતે અતિ દુર્લભ એવા મનુષ્યજન્મને પ્રાપ્ત કરીને, મિથ્યાત્વરૂપ અંધ-
કારનો નાશ કરનાર, શ્રદ્ધારૂપી જ્યોતિને પ્રકાશિત કરનાર, તત્ત્વ અને અતત્ત્વના સ્વ-
રૂપનું પ્રતિપાદન કરનાર, એવા ધર્મનું શ્રવણ કે જે જીવોને માટે અમૃતપાન સમાન
હિતકર છે, જે ચમકતી એવી ચન્દ્રિકાના પ્રકાશસમાન હૃદયને આનન્દદાયક છે,
જાગૃત અવસ્થામાં જે સ્વપ્નદૃષ્ટ વસ્તુની પ્રાપ્તિના સમાન પ્રમોદકારક છે, જે ભૂમિની

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા—વિષયવિવર્ણનમ્

૫

સંસારસાગરતરણતરણિ મિથ્યાત્વતિમિરહરણદ્યુમર્ણિ સ્વર્ગપવનસુખચિન્તામર્ણિ
ક્ષપકશ્રેણિસરણિ કર્મરિપુદમનીં કેવલદર્શનજનનીં શ્રદ્ધામવાપ્ય. કર્મરજઃ
પ્રક્ષાલને જલમિવ ભોગશુજઙ્ગનિવારણે મંત્રમિવ, કર્મધનાધનવિકરણે પવનમિવ-
કેવલજ્ઞાનભાસ્કરપ્રકટને પ્રાચીદિશમિવ સાધનઃતદ્યુક્તિસામ્રાજ્યામિલિષત-
પ્રાપ્તૌ કલ્પારુમિત્ર સંયમ લઃયા, હે ગેપાદે ચતુસ્વલ્પનિરૂપકાણિચગાવાધ-

સંસારસાગર સે પાર ઉતારને કે લિયે, તરણિ—નૌકા—જસી મિથ્યાત્વરૂપ-
ગહન અન્ધકાર કોં નાશ કરને કે લિયે સૂર્ય જૈસી સ્વર્ગ ઓર મોક્ષ કે સુખાં
કો દેને કે લિયે ચિન્તામણિ જૈસી ઓર ક્ષપકશ્રેણિ પર આરૂઢ કરાને કે
લિયે નસૈની (નિસરણી) જૈસી, એસી શ્રદ્ધા કો કિ જો જીવોં કે અનાદિ સંચિત
કર્મરૂપ રિપુઓં કો નાશ કરને વાલી હોતી હૈ એવં કેવલજ્ઞાન ઓર કેવલ-
દર્શન કો જન્મ દેને વાલી હોતી હૈ પ્રાપ્ત કરકે તથા જલ કે સમાન સંચિત
કર્મરૂપરજ કો ધોનેવાલે મંત્ર કે સમાન ભોગરૂપ શુજંગ કો દૂર કરનેવાલે,
પવન કે સમાન મિથ્યાત્વ કાલીન કર્મરૂપ મેઘોં કો ઉડા દેનેવાલે, અર્થાત્
(વિચેરનેવાલે) પૂર્વ દિશા કે સમાન કેવલજ્ઞાનરૂપ સૂર્ય કો પ્રકટિત કરને-
વાલે, ઓગ વલ્પવૃક્ષ કે સમાન સાદિ-અનંત મુક્તિ કે સામ્રાજ્યરૂપ ઇચ્છિત
પદાર્થ કી પ્રાપ્તિ કરા દેને વાલે, એસે સંયમ કો પ્રાપ્ત કરકે તથા—હેય

નીચે છુપાયેલા ખજાનાની પ્રાપ્તિસમાન સુખદાયક છે, જે સમસ્ત સંતાપોત્તું નાશક
છે, એવા ધાર્મિક પ્રવચનનું ભાવિક જીવે શ્રવણ કરવું જોઈએ.

આ પ્રકારના ધર્મશ્રવણને પ્રાપ્ત કરીને, તેના પ્રભાવથી સંસારસાગરને પાર
કરવાને માટે શ્રદ્ધાની ખાસ જરૂર રહે છે તે શ્રદ્ધાને અહીં નૌકા સમાન કહી છે,
કારણ કે સંસારસાગરને પાર કરવામાં તે નૌકાની ગરજ સારે છે. એવી નૌકા
સમાન, મિથ્યાત્વરૂપ ગહન અન્ધકારને ભેદવામાં સૂર્યસમાન, સ્વર્ગ અને મોક્ષના
સુખ પ્રાપ્ત કરાવવામાં ચિન્તામણિ રત્ન સમાન ક્ષપકશ્રેણિ પર આરાધણ કરાવવામાં
નિસરણી સમાન, એવી શ્રદ્ધા ધર્મતત્ત્વ પ્રત્યે હોવી જોઈએ. એવી શ્રદ્ધા જીવેના
અનાદિ કાળથી સંચિત કર્મરૂપ શત્રુઓનો નાશ કરનારી અને કેવળજ્ઞાન અને
કેવળદર્શનની પ્રાપ્તિ કરાવનારી હોય છે.

જળની જેમ સંચિત કર્મરૂપ રજને ધોનાર, મંત્રની જેમ ભોગરૂપ ભુજંગને
દૂર કરનાર, પવનની જેમ ભવિષ્યકાલિન કર્મરૂપ વાદળોને અસ્તવ્યસ્ત કરી નાખનાર,
પ્રાચી દિશા (પૂર્વ દિશા) સમાન કેવળજ્ઞાનરૂપ સૂર્યને પ્રકટ કરનાર, અને કલ્પવૃક્ષ
સમાન આદિ અનંત મુક્તિના સામ્રાજ્યરૂપ ઇચ્છિત પદાર્થની પ્રાપ્તિ કરાવનાર એવા

સુખજનકાનિ આચારાજ્ઞાદિસૂત્રાણિ વિધિવદધીત્ય, સંસારવારિધિમહાતરણિ શિવ-
પદ-સરલસરણિ સિદ્ધિપદદાયકં સશ્વલગુણનાયકમ્ અનાદિં ભવસંચિતાષ્ટવિધ-
કર્મવન્ધનોચ્છેદકં મિથ્યાત્વગ્રન્થિભેદકં સમ્યગ્જ્ઞાનવર્ણણે સમર્થં સૂત્રપરમાર્થં
સ્વપરસમયઃપ્રસ્યં ચ વિજ્ઞાય, તથાવિધકર્મક્ષયોપશમતમ્ભવિનીં જ્ઞાનલત્ત-
સ્વરૂપનિર્દર્શિનીં દ્રવ્યગુણપર્યાયવિષયવિજ્ઞાં વિશદપ્રજ્ઞાં સમધિગમ્ય, પ્રવચનાનુ-
યોગકરણે યતિમિર્યતિતત્ત્વમ્ ।

और उपादेयरूप वस्तुओं के स्वरूप के निरूपक एवं अव्याबाध सुख के जनक
आचाराज्ज्ञ आदि-आगम शास्त्रों का सविधि अध्ययन करके, तथा-संसारमसृद्र
से पार उतारने में महातरणि जैसे-और शिवपद के सोपान जैसे, सूत्र के पर-
मार्थ को एवं स्व-पर समय के रहस्य को कि जिसके बल पर जीव को
सिद्धि गति की प्राप्ति होती है, और जीवों के अनादि भव परम्परा से
संचितअष्टविध कर्मों का समूह विनाश होता है तथा-मिथ्यात्वरूपी अन्तरंग
ग्रन्थि (गाँठ)का जो भेदक होता है और सम्यग्ज्ञानरूपी वर्षा को जो बरसाने में
समर्थ होता है, जान करके, तथा तथाविधकर्म-ज्ञानावरणीय-के क्षयो-
पशम से उत्पन्न-हुई विशदप्रज्ञा को कि जो समस्त तत्त्वों के स्वरूप का यथार्थ
दर्शन कराती है, और जिन्हें-द्रव्यों के सहवर्ती गुणों एवं क्रमवर्ती पर्यायों
का वास्तविक भान होता है इस बात को जान करके भौक्षाभिलाषियों का
कर्तव्य है कि वे प्रवचन के व्याख्यान करने में प्रयत्नशील रहें ।

સંયમને પ્રાપ્ત કરીને તથા હેય અને ઉપાદેયરૂપ વસ્તુઓના સ્વરૂપના નિરૂપક અને
અવ્યાબાધ સુખના જનક આચારાંગ આદિ આગમશાસ્ત્રોનું વિધિપૂર્વક અધ્યયન કરીને
તથા સંસાર સાગરને તરી જવામાં મહાતરણિ (નૌકા) જેવા, શિવપદના સોપાન
સમાન, સૂત્રના પરમાર્થને પ્રકટ કરનાર, સ્વ અને પર સમયના (જેન સિદ્ધાંત અને
અન્ય સિદ્ધાંતોના) રહસ્યને પ્રકટ કરનાર, જેના પ્રભાવથી જીવને સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ
થાય છે, અનાદિ ભવ પરમ્પરાથી સંચિત અષ્ટવિધ કર્મોના સમૂહને જેના દ્વારા
વિનાશ થઈ જાય છે, તથા મિથ્યાત્વરૂપ અન્તરંગ ગ્રન્થિનું જે લેદક હોય છે, અને
સમ્યક્ જ્ઞાનરૂપ વર્ષા વરસાવવાને જે સમર્થ હોય છે, એવા પ્રવચનનું શ્રવણ કરવામાં
તથા પઠન કરવામાં જીવે તત્પર રહેવું જોઈએ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયોપશમથી
ઉત્પન્ન થયેલી વિશદ પ્રજ્ઞા કે જે સમસ્ત તત્ત્વોના સ્વરૂપનું યથાર્થ દર્શન કરાવે
છે, અને જેના દ્વારા દ્રવ્યોના સહવર્તી ગુણો અને કર્મવર્તી પર્યાયોનું વાસ્ત-
વિક ભાન થાય છે, એ વાતને સમજીને ભૌક્ષાભિલાષી જીવોએ પ્રવચનનું વ્યાખ્યાન
કરવામાં પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. વિષયવિવર્ણનમ્

૭

નતુ કસ્તાવદનુયોગઃ ? ઉચ્યતે-યુજ્યતે=સંબધ્યતે ભગવદુક્તાર્થેન સહેતિ યોગઃ કથનલક્ષણો વ્યાપારઃ, અનુરૂપોઽનુકૂલો વા યોગઃ અનુયોગઃ । ભગવદ્ગ્રાપિતાર્થતો ન્યૂનાધિકવિપરીતભાવવૈલક્ષણ્યમીપદપિ ગણધરોક્તસૂત્રેષુ નાસ્તિ-ઈતિ ભગવદુક્તાર્થાનુરૂપઃ પ્રતિપાદનલક્ષણો વ્યાપારોઽનુયોગ-ઈતિ નિષ્કર્ષઃ ।

અયમનુયોગશ્ચતુર્ધા-(૧) ચરણકરણાનુયોગઃ (૨) ધર્મકથાનુયોગઃ, (૩) ગણિતાનુયોગઃ, (૪) દ્રવ્યાનુયોગશ્ચ ।

શંકા—અનુયોગ શબ્દ કા કથા અર્થ હૈ,

ઉત્તર—ભગવાન્ ને અર્થરૂપ સે જો પ્રવચન કી પ્રરૂપણા કી હૈ उसी के अनुसार अनुकूल-जो वक्ता द्वारा प्रवचन का कथन किया जाता है-उपका नाम अनुयोग है ।

यहां पर कथन करनेरूप व्यापारका नाम योग है । भगवद्ग्रापित अर्थ को गणधरों ने सूत्ररूप से ग्रथित किया है । सो इस ग्रथनकार्य में उन्होंने अपनी तर्क से कुछ भी मिश्रण नहीं किया है—किन्तु जैसा प्रभु का कथन था उसी के अनुसार उन्होंने न्यूनता, अधिकता विपरीतता, एवं भाववैलक्षण्य का परिहार करते हुए ज्यों का त्यों कथन किया है—उसे सुमंचद्ध किया है । इसी कारण गणधरोक्त सूत्रों में न्यूनता अधिकता आदि बातें जगसी भी मात्रा में नहीं हैं । इस तरह “भगवदुक्त अर्थ के अनुरूप प्रतिपादन रूप जो व्यापार है—उपका नाम अनुयोग है” यह इसका निष्कर्षार्थ है ।

પ્રશ્ન—“અનુયોગ” શબ્દનો શો અર્થ થાય છે ?

ઉત્તર—ભગવાને અર્થરૂપ જે પ્રવચનની પ્રરૂપણા કરી છે, તેને અનુકૂળ અથવા તેની અનુસાર વક્તાદ્વારા પ્રવચનનું જે કથન કરાય છે તેનું નામ અનુયોગ છે.

અહીં કથન કરવારૂપ વ્યાપારને યોગ કહેવામાં આવેલ છે. ભગવદ્ગ્રાપિત અર્થને ગણધરોએ સૂત્રરૂપે ગ્રથિત કર્યો છે. પરંતુ તે ગ્રંથનકાર્યમાં તેમણે પોતાની કદપનાથી કોઈ પણ વસ્તુને ઉમેરો કર્યો નથી ભગવાનનું જે પ્રકારનું કથન હતું તેને અનુરૂપ કથન જ તેમણે કર્યું છે. ભગવાનના કથનમાં સહેજ પણ વધારો કે ઘટાડો કર્યો વિના. તથા વિપરીતતા અને ભાવવૈલક્ષણ્યનો પરિહાર કરીને તેમણે તે કથન અનુસારનું જ કથન સૂત્રરૂપે ગ્રથિત કરેલું છે. તે કારણે ગણધરો દ્વારા કથિત સૂત્રોમાં ન્યૂનતા, અધિકતા આદિનો અલ્પ માત્રામાં પણ સહભાવ નથી. આ પ્રકારે ભગવદુક્ત (અહીં તો દ્વારા ગ્રથિત) અર્થને અનુરૂપ પ્રતિપાદન રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું નામ જ અનુયોગ છે. આ પ્રકારનો અનુયોગ પદનો અર્થ ફલિત થાય છે.

યથા ગણધરેણ સુધર્મસ્વામિના જમ્બૂસ્વામિનં પ્રતિ ભગવદુક્તાર્થાનુરૂપ-
કથનરૂપોઽનુયોગ ઉપક્રમાદીનિ ચત્તારિ દ્વારાણિ સમાશ્રિત્ય કૃતસ્તથાઽન્યેનાપ્યા-
ચાર્યેણ શિષ્યેભ્યઃ સૂત્રાર્થકથનરૂપોઽનુયોગઃ કર્તવ્યઃ । યદ્યપિ સર્વેષામાગમાનામ-
નુયોગઃ કર્તવ્યઃ, તથાઽપ્યત્રસૂત્રે આવશ્યકસ્યાનુયોગઃ પ્રસ્તુતઃ । આવશ્યકઽનુ-
યોગકરણે સમર્થઃ સ્વતઃ સર્વેષામાગમાનામનુયોગકરણે સમર્થો ભવતિ । તસ્માદનુ-
યોગવિધિજિજ્ઞાસુના મુનિનાઽનુયોગદ્વારસૂત્રમધ્યેતવ્યમ્ । इदं च सूत्रं द्रव्या-
नુયોગાન્તર્गतम् ।

यह अनुयोग चार प्रकार का है—(१) चरणकरणानुयोग (२) धर्मकथानुयोग
(३) गणितानुयोग और (४) द्रव्यानुयोग ।

જિમ પ્રકાર સે ગણધર સુધર્મા સ્વામીને જંબૂસ્વામી કે પ્રતિ ભગવદુક્ત
અર્થ કે અનુસાર કથન કરનેરૂપ અનુયોગ કા ઉપક્રમ આદિ ચાર દ્વારોં કા
આશ્રય કરકે કિયા હૈ ઉસી તરહ સે અન્ય આચાર્ય કો મી શિષ્યો કે—
પ્રતિ સૂત્રાર્થ કા કથન કરનેરૂપ અનુયોગ કરના ચાહિયે । યદ્યપિ આચાર્ય
કો શિષ્યોં કે લિયે સમસ્ત આગમોં કા અનુયોગ કર્તવ્ય હૈ, ફિર મી ઇસ
સૂત્ર મેં આવશ્યક કા અનુયોગ પ્રસ્તુત કિયા ગયા હૈ ।—ક્યોં કિ આવશ્યક કે
અનુયોગ કરને મેં સમર્થ—બના હુઆ મુનિજન સમસ્ત આગમોં કે અનુયોગ કરને
મેં શક્તિશાલી હો જાતા હૈ । ઇસલિયે અનુયોગ કી વિધિ કો જાનને કી
ઇચ્છા રખનેવાલે મુનિજન કો ઇસ અનુયોગદ્વારસૂત્ર કા અધ્યયન અવશ્ય કરતા
ચાહિયે । ઇસ સૂત્ર કા અન્તર્ભાવ દ્રવ્યાનુયોગ મેં હુઆ હૈ । અનુયોગ શબ્દ
કા અર્થ વ્યાખ્યાત હૈ ।

આ અનુયોગ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના છે—(૧) ચરણકરણાનુયોગ, (૨) ધર્મ
કથાનુયોગ, (૩) ગણિતાનુયોગ અને (૪) દ્રવ્યાનુયોગ.

જે પ્રકારે ગણધર સુધર્માસ્વામીએ પોતાના શિષ્ય જંબૂસ્વામીની સમક્ષ ભગ
વદુક્ત અર્થને અનુરૂપ કથન કરવા રૂપ અનુયોગનું ઉપકર્મ આદિ ચાર દ્વારોને
આશ્રય લઈને કથન કર્યું છે; એજ પ્રમાણે અન્ય આચાર્યોએ પણ શિષ્યોના હિતને
માટે સૂત્રાર્થનું કથન કરવા રૂપ અનુયોગ કરવો જોઈએ. જો કે આચાર્યોએ શિષ્યોને
માટે સમસ્ત આગમોનો અનુયોગ કરવો જોઈએ, પરંતુ આ સૂત્રમાં આવશ્યકને
અનુયોગ પ્રસ્તુત કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે આવશ્યકનો અનુયોગ કરવાને સમર્થ
હોય એવા આચાર્ય અથવા મુનિજન સમસ્ત આગમોનો અનુયોગ કરવામાં સમર્થ
બની જાય છે. તેથી અનુયોગની વિધિને જાણવાની ઇચ્છાવાળા મુનિઓએ આ અનુ
યોગદ્વાર સૂત્રનું અધ્યયન અવશ્ય કરવું જોઈએ. આ શબ્દનો અન્તર્ભાવ (સમાવેશ
દ્રવ્યાનુયોગમાં થયો છે. અનુયોગ શબ્દનો અર્થ વ્યાખ્યાત સમજવો.

अनुयोगचन्द्रिका टीका. विषयविवर्णनम्

९

अस्य शब्दार्थस्त्वेवम्—अनुयोगस्य—व्याख्यानस्य द्वाराणि अनुयोगद्वाराणि, तत्प्रतिपादकं सूत्रम्—अनुयोगद्वारसूत्रम् । अनुयोगस्य चत्वारि द्वाराणि सन्ति । तद्यथा—उपक्रमः, निक्षेपः, अनुगमः, नयश्चेति । तत्र उपक्रमः—उपक्रमणम् उपक्रमः । व्याख्येयवस्तुनो नामनिर्देशः, व्याचिख्यासितशास्त्रस्य तैस्तैः प्रतिपादनप्रकारैः समीचीकरणं न्यासदेशानयनं निक्षेपयोग्यताकरणमित्यर्थः । उपक्रान्तं हि उपक्रमान्तर्गतभेदैर्विचारितं—निक्षिप्यते, नत्वनुपक्रान्तम् १ । निक्षेपः—निक्षेपणं निक्षेपः—उपक्रमानीतस्य व्याचिख्यासितस्य षड्विधवश्यकदादेः शास्त्रस्य नाम स्थापनादि भेदेन निरूपणम् २ । अनुगमः—अनुगमनम्—अनुगमः । नामादिना निक्षिप्तस्य शास्त्रस्थानुकूलं ज्ञानम्, अनुकूलार्थकथनं च ३ । नयः—नयति=अनेकांशात्मकं वस्तु

इस व्याख्यानरूप अनुयोग के द्वारों का प्रतिपादन करनेवाला जो सूत्र—आगम—है वह अनुयोगद्वार सूत्र है । अनुयोग के चार द्वार हैं । वे इस प्रकार से हैं—[१] उपक्रम (२) निक्षेप, (३) अनुगम और (४) नय । व्याख्येय वस्तु के नाम का कथन करना अर्थात् व्याचिख्यासित-व्याख्या से युक्त करने की इच्छा के विषयभूत बने हुए शास्त्र को उस २ रूपसे प्रतिपादन करने की शैली से न्यासदेश में लाना—निक्षेप की योग्यतावाला उसे बनाना इसका नाम उपक्रम है । उपक्रान्त-उपक्रम के अन्तर्गत भेदों से विचारित-वस्तु का ही तो निक्षेप होता है । अनुपक्रान्त का नहीं । षड्विध आवश्यक आदि शास्त्र का कि जो उपक्रमित एवं व्याचिख्यासित है, नाम स्थापना आदि के भेद से निरूपण करना इसका नाम निक्षेप हैं । नामादि के भेद से निरूपित शास्त्र का अनुकूल ज्ञान होना और अनुकूल उसके अर्थ का कथन करना इसका नाम अनुगम है । अनेक-धर्मात्मक वस्तु को एकांश के

आ व्याख्यानरूप अनुयोगना द्वारेण प्रतिपादन करनार जे सूत्र-आगम-छे, तेनुं नाम अनुयोगद्वार सूत्र छे. अनुयोगना जे चार द्वार छे, ते नीचे प्रमाणे छे. (१) उपक्रम, (२) निक्षेप, (३) अनुगम अने (४) नय. व्याख्येय वस्तुना नामनुं कथन करवुं जेतले के व्याचिख्यासित व्याख्याथी युक्त करवानी छच्छाना विषयरूप अनेल शास्त्रने ते ते रूपे प्रतिपादन करवानी शैली वडे न्यासदेशमां लाववुं. तेने निक्षेपनी योग्यतावाणुं अनाववुं तेनुं नाम उपक्रम छे. उपक्रान्त-उपक्रमना अन्तर्गत लेहोनी अपेक्षाये विचारयेली वस्तुनो जे निक्षेप थाय छे—अनुपक्रान्तनो थतो नथी. जे उपक्रमित अने व्याचिख्यासित छे जेवा छे प्रकारना आवश्यक आदि शास्त्रनुं नाम स्थापना आदि लेहोथी निरूपण करवुं. तेनुं नाम निक्षेप छे नामादिना लेहोथी निरूपित शास्त्रनुं अनुकूल ज्ञान होवुं अने तेना अर्थनुं अनुकूल कथन करवुं

૧૦

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

एकांशः।वलम्बनेन प्रतीतिपथं प्रापयतीति नयः, नयनम्=अनन्तधर्मात्मकस्य वास्तु-
नो नियतैकधर्मात्मकतावलम्बनेन प्रतीतौ प्रापणं नयः। अनन्तधर्मात्मकस्य
वस्तुन एकांशपरिच्छेदो नय इति ४।

अत्र नगरदृष्टान्तमाह—

यथा द्वाररहितं नगरं नगरमेव न भवति। यद्येकस्यामेव प्राच्यां दिशि
द्वारं भवेत्, तर्हि तत्र गजरथतुरगपदातीर्णां नगरवासिनां तदितरेषा-
मागन्तुकानां जनानां च संघर्षे निर्गमः प्रवेशो वा दुष्करोऽनर्थकरश्च भवति।

અવલમ્બન સે જો પ્રતીતિ કરાતા હૈ, ઇસકા નામ નય હૈ। નગર કે દૃષ્ટાન્ત
સે ઇન ચારો દ્વારોં કા સ્પષ્ટીકરણ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—જિસ નગર કો ઈ
નહીં હોતા હૈ વહ વાસ્તવ મેં નગર હી નહીં માના જાતા હૈ। જિસ નગર મેં
કેવલ પૂર્વદિશા મેં હી દ્વાર હો તો વહાં કે રહનેવાલે ગજ, તુરગ આદિ
જાનવરોં કા મનુષ્યો કા, તથા બાહર સે આયે હુએ પ્રાણિયોં કા આને જાને
મેં સંઘર્ષ હોને પર પ્રવેશ ઔર નિર્ગમ દુષ્કર બન જાતા હૈ, તથા વહ આના જાના
અનર્થોત્પાદક મી હેતા હૈં। ઇસી પ્રકાર સે ઇસ નગર મેં પ્રવેશ કરને
કે લિયે કેવલ પૂર્વ ઔર પશ્ચિમ દિશા મેં એક ૨ દ્વાર હો તો એસી સ્થિતિ મેં
યદ્યપિ પૂર્વ પશ્ચિમ દિગ્વિભાગવતીં પ્રાણિયોં કો આને જાને મેં સરલતા ભલે
હી રહે, પરંતુ જો ઔર દિશાઓં મેં વહાં રહેતે હૈં, ઉન્હે તથા બાહર સે આને-
વાલે જો પ્રાણી હૈં ઉન્હેં ઔર ગજ, રથ તુરગ, આદિ જો જાનવર હૈં—ઉન્હેં સંઘર્ષ

તેનું નામ અનુગમ છે. અનેક ધર્માત્મક અર્થાત્ અનેક ધર્મના સ્વભાવવાળી વસ્તુની
જે એકાંશના અવલંબનથી પ્રતીતિ કરાવે છે તેનું નામ નય છે.

નગરના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા આ ચાર દ્વારોનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે-

જે નગરને દરવાજો જ ન હોય તેને વાસ્તવિક રીતે તો નગર જ કહી શકાય
નહીં. કેાઇ નગરને માત્ર પૂર્વાદિ કેાઇ એક જ દિશામાં એક જ દરવાજો હોય, તે
નગરમાં દાખલ થવાનું કે તે નગરમાંથી બહાર જવાનું કાર્ય મુશ્કેલ બની જાય છે,
કારણ કે હાથી, ઘોડા આદિ પ્રાણીઓ તથા મનુષ્યોની અવરજવરમાં સંઘર્ષ થવાને
કારણે તે નગરમાં પ્રવેશ કરવાનું કે તે નગરમાંથી બહાર નીકળવાનું કાર્ય દુષ્કર
બની જાય છે, તથા તે અવર-જવર ક્યારેક અનર્થોત્પાદક પણ બની જતી હોય છે.
કેાઇ નગરમાં પૂર્વ પશ્ચિમ બે દિશામાં બે દ્વારો હોય તો તે તે દિશામાં રહેલા પ્રાણીઓ
અને મનુષ્યોને તો અવર જવર કરવાની અનુકૂળતા રહે છે, પરંતુ અન્ય દિશાઓમાં જે
પ્રાણીઓ અને મનુષ્યો રહેતા હોય છે, તેમને તો અવરજવરમાં મુશ્કેલી જ પડે છે.
અન્ય દિશાઓમાંથી નગરમાં પ્રવેશ કરતાં હાથી, રથ ઘોડા આદિ પ્રાણીઓ અને
નગરની બહાર જતા પ્રાણીઓ વચ્ચે સંઘર્ષ થયા જ કરે છે, તે કારણે તે

अनुयोगचन्द्रिका टीका. विषयविश्लेषणम्

११

प्राच्यां पश्चिमायां च दिशि द्वारसद्भावे तत्तद्विग्भागवर्तिनां निर्गमप्रवेशसौ कर्येऽपि तदितरदिग्भागवर्तिनां नगरान्तर्निवासिनां तदितरेषां बाह्य देशादागतान च जनानां गजरथतुरगादीनां च संघर्षे निर्गमः प्रवेशो वा दुष्करोऽनर्थकरश्च भवति, तथैव त्रिषु दिग्भागेषु द्वारत्रयसद्भावेऽपि जनानां निर्गमः प्रवेशो वा दुष्करोऽनर्थकरश्च भवति, यत्र तु नगरे चतुस्रषु दिशासु चत्वारि मूलद्वाराणि, तथा तदनुगतानेकमार्गसंलग्नरथ्याद्वाराणि विद्यन्ते, तत्र निर्गमः प्रवेशो वा सुकरो भवति। तथैवावश्यकरूपं नगरमपि उपक्रमादिद्वाररहितं नाधिगन्तुं शक्यते। न च केवलमुपक्रमद्वारेण, नापि वा द्वाभ्यामुपक्रमनिक्षेपाभ्यां, न चापि त्रिभिरूप-

होने पर आना जाना बड़ा मुश्किल हो जाता है। परस्पर में धक्कमधक्का होने से अनेक प्रकार के अनिष्ट भी हो जाते हैं। इसी तरह से यदि उसमें प्रवेश करने के लिये तीन द्वार हों, तो कुछ पहिले की अपेक्षा प्रवेश निर्गम में सरलता होने पर भी सर्वथा सरलता नहीं आती है। परन्तु जब उसमें आने जाने के लिये चारो दिशाओं में चार दरवाजे हों, तथा और भी अनेक मार्ग संलग्न रथ्याद्वार हों, तो फिर आने जाने में किसी प्रकार का संघर्ष न होने से कोई भी प्राणी को रुकावट नहीं होती है और न किसी प्रकार के अनर्थ होने की संभावना ही रहती है। ठीक इसी प्रकार से आवश्यकरूप नगर भी यदि उपक्रम आदि चार द्वारों से विहीन हो तो वह ज्ञान का विषयभूत नहीं बन सकता अर्थात् उसका वास्तविक रहस्यज्ञात नहीं हो सकता, अतः उसे वास्तविकरूप में जानने के लिये इन चार ही उपक्रम आदि द्वारों की परम

नगरमां प्रवेश करवानुं' अने ते 'नगरमांथी निर्गमन करवानुं' कार्य' मुश्किल न थई पडे छे. त्यां ऐकपील वच्चे धक्का धक्की थवाथी अनेक प्रकारना अनिष्टो पणु उटूलवे छे. ऐन प्रमाणे जे ते नगरने त्रिषु दिशाओमां त्रिषु दरवाजा राख्या होय तो पड़ेला अने पील प्रकारना नगर करतां प्रवेश अने निर्गममां अधिक सरणता तो रडे छे, पणु संपूर्ण सरणता तो रडेती नथी. पणु जे नगरमां आववा-जवा भाटे आरे दिशाओमां आर दरवाजा राख्या होय, तथा पील मार्गेनि जेउतां पील' पणु उपद्वारे-राख्यां होय, तो त्यां अवरजवरमां कौछ पणु प्रकारना संघर्ष थतो नथी-कौछ पणु जे प्राणीओ वच्चे धक्काधक्की खालती नथी अने ते कारणे त्यां कौछ पणु प्रकारना अनर्थनी शक्यता रडेती नथी. त्यां प्राणीओ अने मनुष्यो सरणताथी प्रवेश पणु करी शके छे अने निर्गम पणु करी शके छे. ऐन प्रमाणे आवश्यकइय नगर पणु जे उपक्रम आदि आर द्वारेथी रडित होय, तो ज्ञानना विषयइय जनी शकतुं नथी-ऐटले के तेनुं वास्तविक रहस्य ज्ञाणी शकतुं नथी. तेथी तेने यथार्थइये जाणुवा भाटे उपक्रम आदि आ आरे

૧૨

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

ક્રમનિષ્કેપાનુગમૈર્દારૈસ્તદર્થમધિગતું શક્યતે । તદર્થાનિધિગમે ચ સતિ કલેશો
 ડનર્થશ્ચ જાયતે । મેદપ્રમેદસહિતોપક્રમાદિદ્વારચતુષ્ટયસંજ્ઞાવે તુ સ્વલ્પેનૈવ કાલેન
 તત્સુગમં શાશ્વતસુખપ્રદં ચ ભવતિ । તસ્માદ્ દ્વારચતુષ્ટયમાશ્રિત્ય ષડ્વિધાવશ્યક-
 પ્રતિપાદનાર્થમિદં સૂત્રં પ્રસ્તુતમ્ ।

इह शास्त्रे प्रवृत्त्यर्थमादावानुबन्धचतुष्टयं विज्ञेयम् । तच्च विषयः, प्रयोजनं
 संबन्धः, अधिकारी चेति । तत्र विषयोऽभिधेयः—स चेह उपक्रमादीन्यनुयोग-

આવશ્યકતા છે । કેવલ એક ઉપક્રમદ્વારે તે યા ઉપક્રમ નિષ્કેપરૂપે દો દ્વારોં સે
 અથવા ઉપક્રમ નિષ્કેપ ઓર અનુગમ ઇન ત્રીન દ્વારોં સે ઉસકા અર્થ નહીં જાના
 જા સકતા । અર્થાધિગમ—પદાર્થ કે જ્ઞાન હુણે વિના કલેશ એવં અનર્થ હોતા
 છે । જબ મેદ પ્રમેદ સહિત ઇન ઉપક્રમ આદિ ચાર દ્વારોં કા ઉસમેં સંજ્ઞાવ
 હોતા છે, તો ઉનકી સહાયતા સે સ્વલ્પ કાલ મેં હી વાસ્તવિકરૂપે મેં શાસ્ત્ર કે
 અર્થ કા બોધ સુગમરીતિ સે હો જાતા છે ઓર ઇસ સે વહ શાસ્ત્ર શાશ્વત સુખ
 પ્રદ મી હો જાતા છે । ઇસલિયે સૂત્રકારને ઇન પૂર્વોક્ત ચાર દ્વારોં કો
 લેકર ષડ્ વિધ આવશ્યકોં કો પ્રતિપાદન કરાને કે લિયે ઇસ સૂત્ર કો
 પ્રસ્તુત કિયા છે ।

इस शास्त्र में प्रवृत्ति होने के निमित्त चार बातों की आवश्यकता है ।
 उनका नाम अनुबंध चतुष्टय है । और वे “विषय, प्रयोजन, संबन्ध अधिकारी”
 ये हैं । जो इस शास्त्र का अभिधेय है, वह विषय है । वह विषय उपक्रमादि चार

દ્વારોની પરમ આવશ્યકતા રહે છે. કેવળ એક ઉપક્રમ દ્વારથી જ, અથવા ઉપ-
 ક્રમ અને નિષ્કેપરૂપે બે દ્વારોથી અથવા ઉપશમ, નિષ્કેપ અને અનુગમરૂપે ત્રણ
 દ્વારોથી તેનો અર્થ બાજી શકતો નથી અર્થાધિગમ (અર્થનું જ્ઞાન) થયા વિના
 તો કલેશ અને અનર્થને પાત્ર થવું પડે છે. જ્યારે લેહ પ્રલેહ સહિત આ ઉપ-
 ક્રમ આદિ ચારે દ્વારોનો તેમાં સદ્ભાવ હોય છે, ત્યારે તેની સહાયતાથી ઘણા
 થોડા સમયમાં જ અને સરળતાથી વાસ્તવિકરૂપે શાસ્ત્રના અર્થનો યોગ્ય થઈ બાજ
 છે, અને તેને લીધે તે શાસ્ત્ર શાશ્વત સુખપ્રદ પણ થઈ બાજ છે. તેથી સૂત્રકારે
 પૂર્વોક્ત ઉપક્રમ આદિ ચાર દ્વારોને એનુલક્ષીને છ પ્રકારના આવશ્યકોં પ્રતિ-
 પાદન કરવાને માટે આ સૂત્રને પ્રસ્તુત કર્યું છે.

આ શાસ્ત્રમાં પ્રવૃત્તિ થવાને નિમિત્તે ચાર બાબતોની આવશ્યકતા રહે છે.
 જે ચાર બાબતોની આવશ્યકતા રહે છે તે ચાર બાબતોને અનુબંધ ચતુષ્ટય કહે
 છે. તે ચાર બાબતો નીચે પ્રમાણે છે—વિષય, પ્રયોજન, સંબંધ અને અધિકારી.
 આ શાસ્ત્રનો જે અભિધેય છે તેનું નામ જ વિષય છે. તે વિષય ઉપક્રમ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા વિષયવિવર્ણનમ્

૧૩

દ્વારાણિ । પ્રયોજન—ફલમ્, તત્ત્વ દ્વિવિધમ્—અન્તરફલં પરમ્પરાફલં ચ । તત્રાદ્યં શાસ્ત્રકર્તુર્ભવ્યાનુગ્રહરૂપમ્ । શ્રોતુશ્ચ શાસ્ત્રાર્થબોધઃ । ઉભયોરપિ પરમ્પરા પ્રયોજનેમ્—પરમપદપ્રાપ્તિઃ । શાસ્ત્રસ્ય વિષયસ્ય ચ સંબન્ધઃ—પ્રતિબોધ્ય પ્રતિબોધકભાવઃ । પરમપદપ્રાપ્તિઃ । અધિકારી તુ જિનાજ્ઞારાધક इति ।

અથ શિષ્ટાચારપરિપાલનાર્થં શાસ્ત્રનિર્વિઘ્નપરિસમાપ્ત્યર્થં શાસ્ત્રસ્ય મંગલસ્વરૂપત્વેऽપિ શિષ્યસ્ય શાસ્ત્રવિષયીભૂતાર્થજ્ઞાનપ્રાપ્તિદર્શનશ્વાસાર્થં ચ મંગલરૂપં પ્રથમં સૂત્રમાહ—

મૂલમ્—નાણં પંચવિહં પળણત્તં, તં જહા—આભિનિબોહિયનાણં સુયનાણં, ઓહિનાણં, મળપજ્જવનાણં, કેવલનાણં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અનુયોગ દ્વારૂપ હૈ । પ્રયોજન નામ ફલ કા હૈ । વહ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—
[૧] અનન્તર—સાક્ષાત્—ફલ ઓર દૂસરા પરમ્પરા ફલ । “પઢને વાલે, સુનને વાલે ભવ્યજીવીં કા ઇસ સે અનુગ્રહ હો એસી ભાવના જો શાસ્ત્રકાર કે હૃદય મેં હોતી હૈ વહ ગ્રન્થકર્તા કી અપેક્ષા તથા ઇસે અધ્યયન કરનેવાલે, સુનનેવાલે પ્રાણિયોં કો જો ઇસ કે દ્વારા બોધ પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ ઉનકી અપેક્ષા ઇસકા સાક્ષાત્ પ્રયોજન હૈ । એવં ગ્રન્થ—શાસ્ત્ર—કર્તા—ઔર અધ્યેતા—શ્રોતા કો જો પરમપદ (મોક્ષ) કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ વહ ઇસકા પરમ્પરા પ્રયોજન હૈ । શાસ્ત્ર કા ઔર વિષય કા પ્રતિબોધ્ય પ્રતિબોધકભાવ સંબન્ધ હૈ વિષય પ્રતિબોધ્ય શાસ્ત્ર ઉસકા પ્રતિબોધક હૈ જિનાજ્ઞા કા આરાધક જીવ અધિકારી હૈ ।—

આદિ ચાર અનુયોગ દ્વારરૂપ જ છે. પ્રયોજન એટલે જ્ઞા. તે પ્રયોજન બે પ્રકારનું હોય છે. અનન્તર સાક્ષાત્ અને (૨) પરમ્પરા જ્ઞા.

વાંચનારા અને શ્રવણ કરનારા ભવ્ય જીવોનું તેના દ્વારા કલ્યાણ થાય, એવી બે ભાવના તે શાસ્ત્રકારના હૃદયમાં હોય છે, તે ગ્રન્થકર્તાની અપેક્ષાએ તેનું સાક્ષાત્ પ્રયોજન છે. તથા તેનું અધ્યયન કરવાથી કે શ્રવણ કરવાથી અધ્યયન કરનારને કે શ્રોતાને બે બોધ થાય છે, તે તેમની અપેક્ષાએ તેનું સાક્ષાત્ પ્રયોજન ગણાય છે. ગ્રન્થ (શાસ્ત્ર) કર્તાને, ગ્રન્થનું અધ્યયન કરનારને અને તેનું શ્રવણ કરનારને બે પરમપદની પ્રાપ્તિ થાય છે, એજ તેનું પરમ્પરા પ્રયોજન ગણાય છે. શાસ્ત્રનો અને વિષયનો પ્રતિબોધ્ય-પ્રતિબોધકભાવ રૂપ સંબંધ હોય છે. વિષય પ્રતિબોધ્ય અને શાસ્ત્ર તેનું પ્રતિબોધક હોય છે. જિનાજ્ઞાનું આરાધન કરનાર જીવ તેનો અધિકારી ગણાય છે.

છાયા—જ્ઞાનં પચ્ચવિહં પ્રજ્ઞસમ્, તદ્ યથા—આમિનિવોધિકજ્ઞાનં, શ્રુત-જ્ઞાનમ્, અવધિજ્ઞાનં, મનઃપર્યવજ્ઞાનં, કેવલજ્ઞાનમ્ ॥૧॥

ટીકા—‘નાળં’ इत्यादि—

જ્ઞાનમ્—જ્ઞાતિર્જ્ઞાનમિતિ ભાવસાધનઃ, સવિદિત્યર્થઃ । જ્ઞાયતેવાઽનેના-સ્માદ્દેતિ જ્ઞાનં, તદાવરણસ્ય ક્ષયઃ ક્ષયોપશમો વા । જ્ઞાયતે વાઽસ્મિન્નિતિ

અવ સૂત્રકાર શિષ્ટ પુરુષોં કે આચાર કો પાલન કરને કે લિયે શાસ્ત્ર કી નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિ કે લિયે ઔર-શિષ્યોં કો શાસ્ત્ર વિષયીભૂત અર્થજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા દૃઢ વિશ્વાસ જમાને કે લિયે મંગલરૂપ હોને પર મી ઇસ શાસ્ત્ર કી આદિ મેં સર્વ પ્રથમ મંગલ સૂત્ર કા પાઠ કરતે હૈં ।

“નાળં પંચવિહં પળ્ણત્તં” इत्यादि । ॥ सू० १ ॥

શબ્દાર્થ—(ળાળં) જ્ઞાન (પંચવિહં) પાંચ પ્રકાર કા—(પળ્ણત્તં) કહા ગયા હૈં । યહાં જ્ઞાન શબ્દ ભાવસાધન-કરણસાધન ઔર કર્તૃસાધન હૈ “જ્ઞાતિઃ-જ્ઞાનમ્” જાનના ઇસકા નામ જ્ઞાન હૈ યહ ભાવસાધન મેં જ્ઞાન કી વ્યુત્પત્તિ હૈ—“જ્ઞાયતે અનેન ઇતિ જ્ઞાનમ્” યહ કરણસાધન મેં વ્યુત્પત્તિ હૈ—આત્મા જિસકે દ્વારા પદાર્થોં કો જાનતા હૈ વહ જ્ઞાન હૈ—ઇસ કરણસાધન સે જ્ઞાનાવરણ કર્મ કા ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમ લક્ષિત હોતા હૈ । ક્યોં કિ ઇસ કે હોને પર હી આત્મા મેં જ્ઞાન કા પ્રાદુર્ભાવ (ઉત્પત્તિ) યા જ્ઞાનમેં સર્વથા નિર્મલતા આતી હૈ । અતઃજ્ઞાનાવરણ કા ક્ષય ઔર ક્ષયોપશમ જ્ઞાનરૂપ હોને કે કારણ અભેદ સંબંધ સે જ્ઞાનરૂપ હી

શાસ્ત્રકારે શિષ્ટ પુરુષોના આચારનું પાલન કરવા માટે, શાસ્ત્રની નિર્વિઘ્ને પરિસમાપ્તિ કરવા નિમિત્તે અને શિષ્યોમાં શાસ્ત્રવિષયીભૂત અર્થજ્ઞાનની પ્રાપ્તિને દૃઢ વિશ્વાસ જમાવવાને નિમિત્તેજે કે શાસ્ત્ર પોતે જ મંગળરૂપ હોવા છતાં પણ આ શાસ્ત્રને પ્રારંભ કરતી વખતે સૌથી પહેલાં મંગળ સૂત્રને પાઠ કર્યો છે.

“નાળં પંચવિહં પળ્ણત્તં” इत्यादि

॥ सू० १ ॥

શબ્દાર્થ—(ળાળં) જ્ઞાન (પંચવિહં) પ્રાચ પ્રકારનું (પળ્ણત્તં) કહ્યું છે. અહીં ‘જ્ઞાન’ શબ્દ ભાવસાધન, કરણસાધન અને કર્તૃસાધનરૂપ છે. ભાવસાધનમાં જ્ઞાનની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે. “જ્ઞાતિઃ-જ્ઞાનમ્” બાણુડું તેનું નામ જ્ઞાન છે. કરણસાધનમાં જ્ઞાનની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે. “જ્ઞાયતે અનેન ઇતિ જ્ઞાનમ્” આત્મા જેના દ્વારા પદાર્થોને બાણુ છે તેનું નામ જ્ઞાન છે. આ કરણસાધન દ્વારા જ્ઞાનાવરણકર્મને ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમ લક્ષિત થાય છે, કારણ કે જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમ થવાથી જ આત્મામાં જ્ઞાનનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે અથવા જ્ઞાનમાં સર્વથા નિર્મળતા પ્રકટ થાય છે. તેથી જ્ઞાનાવરણનો ક્ષય અને ક્ષયોપશમ જ્ઞાન રૂપ જ હોવાને કારણે અલેદ સંબંધની અપેક્ષાએ જ્ઞાનરૂપ જ નિવડે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂ. ૧ પંચવિધજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૧૫

જ્ઞાનમાત્મા—તદાવરણક્ષયક્ષયોપશમપરિણામયુક્તાઃ । જાનાતીતિ વા જ્ઞાનમ્ । તત્ પञ्चविधं=પञ્ચવિધં પ્રજ્ઞસં—પ્રરૂપિતમ્ અર્થતરતીર્થક્રૂરૈઃ સૂત્રેતશ્ચ ગણધરૈઃ । અત્ર ગણધરેણ સ્વબુદ્ધ્યા પરિકલ્પિતં કિંચિદપિ નોચ્યતે । પળ્ણતં’ इत्यस्य ‘प्राज्ञा-प्तम्’ इतिच्छायापक्षे—પ્રાજ્ઞાત્—સર્વજ્ઞાત્ આપ્તં—પ્રાપ્તં ગણધરૈરિત્યર્થઃ, યદ્વા—પ્રજ્ઞયા ભવ્યજન્તુભિરાપ્તં—પ્રાપ્તં—પ્રજ્ઞાપ્તં તદેવ પ્રાજ્ઞાપ્તમ્ । નહિ પ્રજ્ઞાતિકલૈરિદમ્ ગાપ્તું શક્યતે

હોતા હૈ । इसलिये करणसाधन में पदार्थों के जानने में अत्यन्त साधक जो ज्ञान है वह गृहीत हुआ है । जो कि ज्ञानावरण के क्षय और क्षयोपशमस्वरूप है इसी तरह से पदार्थ जिस से जाना जाय वह ज्ञान है इस प्रकार की व्युत्पत्ति करने पर भी ज्ञानावरण का क्षय और क्षयोपशम—ज्ञानरूप ही होता है क्योंकि पदार्थ ज्ञान से जाना जाता है । “ज्ञायते अस्मिन्निति ज्ञानमात्मा” पदार्थ जिस से जाना जावे—उसका नाम ज्ञान है इस प्रकार की व्युत्पत्ति में आत्मा ज्ञान रूप प्रतीत होता है । यहां परिणाम और परिणामवाले का अभेद होनेके कारण आत्मा को ज्ञानरूप मान लिया गया है । क्योंकि ज्ञानावरणकर्म के क्षय अथवा क्षयापशम से विशिष्ट आत्मा का परिणाम ज्ञान है और आत्मा परिणाम वाला है । “जानाति इति ज्ञानम्” इस व्युत्पत्ति में भी यही अर्थलभ्य है । ज्ञान में पांच प्रकारता अर्थ की अपेक्षा तीर्थ करने और सूत्र की अपेक्षा गणधरोंने प्ररूपित की है । इस विषय में गणधरोंने अपनी तरफ से कुछ भी कल्पित करके नहीं कहा है “यह बात पण्णत्तं” इस शब्द

તેથી કરણસાધનમાં પદાર્થોને જાણવામાં અત્યન્ત સાધક જે જ્ઞાન છે તેને જ અહીં અહીં કરાયું છે. એવું જ્ઞાન જ્ઞાનાવરણના ક્ષય અને ક્ષયોપશમ સ્વરૂપ જ હોય છે. એજ પ્રમાણે “પદાર્થ જેના વડે જાણી શકાય તે જ્ઞાન છે,” આ પ્રકારની વ્યુત્પત્તિ કરવામાં આવે તો પણ જ્ઞાનાવરણનો ક્ષય અને ક્ષયોપશમ જ્ઞાનરૂપ જ થઈ પડે છે, કારણ કે પદાર્થ જ્ઞાનદ્વારા જ જાણી શકાય છે. “જ્ઞાયતે અસ્મિન્નિતિ જ્ઞાનમાત્મા” “પદાર્થ જેમાં જાણી શકાય તેનું નામ જ્ઞાન છે,” આ પ્રકારની વ્યુત્પત્તિમાં આત્મા જ્ઞાનરૂપ પ્રતિપાદિત થાય છે. અહીં પરિણામ અને પરિણામવાળામાં અભેદ હોવાને કારણે આત્માને જ્ઞાનરૂપ માની લેવામાં આવ્યો છે, કારણ કે જ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમવાળા આત્માનું પરિણામ જ્ઞાન છે અને આત્મા તે પ્રકારના પરિણામવાળો છે. “જાનાતિ ઇતિ જ્ઞાનમ્” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર પણ એજ અર્થ પ્રાપ્ત થાય છે. જ્ઞાનમાં અર્થની અપેક્ષાએ પાંચ પ્રકારતા તીર્થ કર્મોએ પ્રરૂપિત કરી છે અને સૂત્રની અપેક્ષાએ પાંચ પ્રકારતા ગણધરોએ પ્રરૂપિત કરી છે. આ બાબતમાં ગણધરોએ પોતાના તરફથી કલ્પિત કરીને કંઈ પણ મિશ્રિત કંઈ નથી, એજ વાત સૂત્રકારે “પાળ્ણત્તં” પદ દ્વારા પ્રકટ કરી છે. અથવા

પઞ્ચબિધત્વં દર્શયતિ—‘તં જહા’ इत्यादिना ‘तं जहा’ तद्यथा—तज्ज्ञानं यथा पञ्चविधं भवति, तथा प्रोच्यते । तत्र (१) प्रथमं ज्ञानम्—‘आभिनिबोधिय-नाणं’ आभिनिबोधिज्ञानम्. ‘अभि’ इति अभिमुखः—वस्तुयोग्यदेशवस्थाना-पेक्षी, ‘नि’ इति नियतः—इन्द्रियमनःसमाश्रित्य स्व स्व विषयापेक्षीबोधः—अभिनिबोधः, स एव आभिनिबोधिकम् तच्च तद् ज्ञानं च आभिनिबोधिक-ज्ञानम् । अत्र ‘ज्ञान’ शब्दः सामान्यज्ञान-वाचकः । अभिनिबोधशब्दः इन्द्रिय नो

સે સૂત્રકારને પ્રકટ કરી છે । અથવા, “પણ્ણત્ત” इस पद की संस्कृत छाया “प्राज्ञाप्त” ऐसी भी होती है—इस का अर्थ यह है कि ज्ञान में पंच प्रकारता गणधरो ने प्राज्ञ तीर्थंकर सर्वज्ञ भगवान से प्राप्त की है । अथवा इसी छाया के पक्ष में ऐसा अर्थ भी होता है कि ज्ञान में यह पंच प्रकारता भव्य प्राणियों ने अपनी बुद्धि से ही पाई है । बिना बुद्धि से तो यह प्राप्त की नहीं जा सकती है । इस तरह जो प्रज्ञाप्त है वही प्राज्ञाप्त हैं । (तं जहा) वह ज्ञान में पंच प्रकारता इस तरह से है ।

(આભિનિબોધિયનાણં) (૧) આભિનિબોધિક જ્ઞાન—યહ જ્ઞાન વસ્તુ કો યોગ્ય દેશ મેં હોને કી અપેક્ષા રાખતા હૈ તથા પાંચ ઇન્દ્રિય ઓર મન કી સહાયતા સે હોતા હૈ । યહ વાત “અભિ” ઓર “નિ” શબ્દ સે પ્રકટ હોતી હૈ । ઇસ તરહ યોગ્ય દેશ મેં સ્થિત વસ્તુ કો ઇન્દ્રિય ઓર મન કી સહાયતા સે જાનને વાલે જ્ઞાન કા નામ અભિનિબોધ જ્ઞાન હૈ । યહ અભિનિબોધ હી આભિનિબોધિક

“પણ્ણત્ત” આ પદની સંસ્કૃત છાયા “પ્રાજ્ઞાપ્ત” છે. આ પ્રાજ્ઞાપ્તની અપેક્ષાએ જે વિચાર કરવામાં આવે તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—જ્ઞાનમાં પંચવિધતાની પ્રાપ્તિ ગણધરોએ પ્રાજ્ઞ તીર્થંકર સર્વજ્ઞ ભગવાન પાસેથી કરી છે.

અથવા તેનો અર્થ એવો પણ થાય છે કે—જ્ઞાનમાં આ પાંચ પ્રકારતા ભવ્ય જીવોએ પોતાની બુદ્ધિથી જ પ્રાપ્ત કરેલ છે. બુદ્ધિ વગર તો તેની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી જ નથી. આ રીતે જે પ્રજ્ઞાપ્ત છે, એજ પ્રાજ્ઞાપ્ત છે. (તં જહા) જ્ઞાનના તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(આભિનિબોધિયનાણં) (૧) આભિનિબોધિક જ્ઞાન—

આ જ્ઞાન વસ્તુ યોગ્ય દેશમાં હોય એવી અપેક્ષા રાખે છે, તથા પાંચ ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી થાય છે. એજ વાત “અભિ” અને “નિ” ઉપસર્ગો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. આ રીતે આભિનિબોધિક જ્ઞાનની વ્યાખ્યા આ પ્રમાણે થાય છે—“યોગ્ય દેશમાં સ્થિત (રહેલી) વસ્તુને ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી જાણનારા જ્ઞાનનું” નામ આભિનિબોધ છે. તે આભિનિબોધ જ આભિનિબોધિક

અનુયોગવન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૧ પચ્ચવિધજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૧૭

इन्द्रियजन्यविशिष्टज्ञानवाचकः । अतः सामान्यविशेषयोर्ज्ञानयोः सामानाधिकरण्यम् । इदं मतिज्ञानमप्युच्यते ॥१॥

(૨) શ્રુતજ્ઞાનમ્—શ્રુતં—શ્રુતિઃ—શ્રવણં જ્ઞાનવિશેષઃ । તત્ત્વ કીદૃશમ્ ? ઉચ્યતે, શબ્દાય શ્રવણેન ભાષણાદિના વા તત્ત્વજ્ઞાનં મુત્પદ્યતે તદેવ શ્રુતમ્ । અત્ર શ્રુતશબ્દેન શ્રુતજ્ઞાનં ગૃહ્યતે—જ્ઞાનં પ્રમેદોપકરણાન્તઃપાતિત્વાત્ । ન તુ શ્રૂયતે’ इति व्युत्पत्त्या शब्दार्थकः श्रुतशब्दः । लब्धिरूपे मतिज्ञाने सति पश्चात् श्रुतज्ञानमुत्पद्यते, न तु मतिज्ञानाभावे । अतो मतिज्ञानं कारणं श्रुतज्ञानस्य ।

જ્ઞાન હૈ । यहां ज्ञान शब्द सामान्यज्ञान का वाचक और अभिनिबोध शब्द इन्द्रिय और मन से उत्पन्न होने वाले विशिष्टज्ञान का वाचक है । अतः ‘‘आभिनिबोधिकं च तज्ज्ञानं च आभिनिबोधिकज्ञानं’’ इस तरह से इन दोनों सामान्य विशेष ज्ञानों में समानाधिकरण्या हुई है । इस आभिनिबोधिकज्ञान का दूसरा नाम मतिज्ञान भी है ।

શ્રુતજ્ઞાન—શબ્દ કે શ્રવણ સે અથવા ભાષણ આદિ સે જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન હૈ । જ્ઞાન કે પ્રમેદોં કે પ્રકરણ કે આને કે કારણ યહાં શ્રુતશબ્દ સે જ્ઞાન કા ગ્રહણ હુઆ । શ્રુત સે શબ્દ કા નહીં । ‘‘શ્રૂયતે’’ इति श्रुतं इस प्रकार की व्युत्पत्ति से श्रुत शब्दरूप अर्थ का वाचक भी हाता है परन्तु वह शब्दार्थक श्रुत यहां गृहीत नहीं हुआ है । कारणवह शब्द पौद्गलिक पर्याय होने से अचेतन है, और ज्ञान आत्मा का निजस्वरूप होने से चेतन है ।

જ્ઞાન છે.” અહીં જ્ઞાન પદ સામાન્ય જ્ઞાનનું વાચક છે અને અભિનિબોધ પદ ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થનાર વિશિષ્ટ જ્ઞાનનું વાચક છે. તેથી ‘‘આભિનિબોધિકં ચ તજ્ઞાનં ચ આભિનિબોધિકજ્ઞાનં’’ આ પ્રકારે તે બંને સામાન્ય વિશેષ જ્ઞાનોમાં સમાનાધિકરણતા થઈ છે. આ આભિનિબોધિક જ્ઞાનનું બીજું નામ મતિજ્ઞાન પણ છે.

(૨) શ્રુતજ્ઞાન—શબ્દના શ્રવણથી અથવા ભાષણ આદિ વડે જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે. જ્ઞાનના પ્રમેદોના પ્રકરણમાં આવી જતું હોવાને લીધે અહીં શ્રુત શબ્દ વડે જ્ઞાનનું જ અર્થક થયું છે—અહીં ‘શ્રુત’ પદ દ્વારા શબ્દ ગૃહીત થયેલ નથી. ‘શ્રૂયતે इति श्रुतम्’ આ પ્રકારની વ્યુત્પત્તિને આધારે શ્રુત પદ શબ્દરૂપ અર્થનું વાચક પણ સંભવી શકે છે, પરન્તુ તે શબ્દાર્થક શ્રુત અહીં અર્થક કરવામાં આવ્યું નથી. કારણ કે તે શબ્દ પૌદ્ગલિક પર્યાયરૂપ હોવાથી અચેતન છે, પણ જ્ઞાન આત્માના નિજશુદ્ધરૂપ હોવાથી ચેતન છે.

શંકા—શબ્દ કે શ્રવણ અથવા ભાષણ આદિ સે જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ” એસા જો શ્રુત કા લક્ષણ કહા જા રહા હૈ વહ અતિવ્યાપ્તિ દોષ સે યુક્ત હોને કે કારણ ઠીક નહીં હૈ । વયોં કિ યહ લક્ષણ મતિજ્ઞાન મેં મી રહતા હૈ । વહ શ્રોત્રેન્દ્રિય ઓર મન સે મી હોતા હૈ ।—

ઉત્તર—એસા સમજના ઠીક નહીં હૈ—કારણ મતિજ્ઞાન પાંચોં ઇન્દ્રિયોં ઓર મન સે હી હોતા હૈ— તવ યહ જ્ઞાન કેવલ મન સે હી હોતા હૈ—અન્ય ઇન્દ્રિયોં સે નહીં ।” શબ્દશ્રવણ અથવા ભાષણઆદિ સે જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ । એસા જો કહા ગયા હૈ ઉસના કારણ યહ હૈ કિ શબ્દ શ્રવણ ઓર ભાષણ આદિ જન્ય જો શ્રોત્રેન્દ્રિય સે ઉસ વા જ્ઞાન હોતા હૈ વહ મતિજ્ઞાન હૈ—ઓર ઇસ મતિજ્ઞાનપૂર્વક ઉસ વિષય મેં જો શબ્દશ્રવણ આદિ કે સંબન્ધ સે વિશેષ ચિંતન ચાલુ હોતા હૈ કિ જો કેવલ મન કા હી કાર્ય હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ । ઉદાહરણાર્થ—શબ્દ વિષયક શ્રોત્ર જન્યજ્ઞાન હોને પર ઉસકે સંબન્ધ સે મન મેં” યહ કિસ પ્રકાર કે શબ્દ કો બોલ રહા હૈ—ઉચ્ચસ્વર સે શબ્દ ઉચ્ચરિત હો રહા હૈ યા ધીમે સ્વર સે” ઇત્યાદ વિકલ્પોં કા હોના શ્રુતજ્ઞાન હૈ ।

શંકા—“શબ્દના શ્રવણ અથવા ભાષણ આદિથી જે જ્ઞાન થાય છે, તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે,” આ પ્રકારનું જે શ્રુતનું લક્ષણ અહીં ગતાવવામાં આવ્યું છે તે અતિવ્યાપ્તિ દોષથી યુક્ત હોવાને કારણે ઉચિત નથી, કારણ કે તે લક્ષણનો સદ્ભાવ તો મતિજ્ઞાનમાં પણ હોય છે. તે શ્રોત્રેન્દ્રિય અને મનની સહાયતાથી થાય છે.

ઉત્તર—આ માન્યતા બરાબર નથી. કારણ કે—મતિજ્ઞાન પાંચે ઇન્દ્રિયોં અને મનની સહાયતાથી જ ઉત્પન્ન થાય છે, પરંતુ શ્રુતજ્ઞાન તો માત્ર મનની સહાયતાથી જ ઉત્પન્ન છે—અન્ય ઇન્દ્રિયોંની સહાયતાની તેને જરૂર રહેતી નથી. “શબ્દશ્રવણ અથવા ભાષણઆદિથી જે જ્ઞાન થાય છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે,” આ પ્રમાણે જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ છે કે શબ્દશ્રવણ અને ભાષણઆદિ જન્ય જે શ્રોત્રેન્દ્રિય થી તેનું જ્ઞાન થાય છે તે મતિજ્ઞાનરૂપ હોય છે. અને તે મતિજ્ઞાનપૂર્વક તે વિષયને અનુલક્ષીને શબ્દશ્રવણ આદિના વિષયમાં વિશેષ ચિંતન ચાલુ થઈ જાય છે તે તો માત્ર મનનું જ કાર્ય હોવાથી તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે ઉદાહરણ દ્વારા આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—શબ્દવિષયક શ્રોત્રજન્ય જ્ઞાન થવાથી તેને વિષે મનમાં આ પ્રકારના વિકલ્પો ઉદ્ભવે છે—“આ કયા પ્રકારના શબ્દનું ઉચ્ચારણ થઈ રહ્યું છે જો એ સ્વરે શબ્દનું ઉચ્ચારણ થઈ રહ્યું છે કે ધીમે સ્વરે શબ્દનું ઉચ્ચારણ થઈ રહ્યું છે” આ પ્રકારના વિકલ્પો જે જ્ઞાનમાં ઉદ્ભવે છે તે જ્ઞાનને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે.

अनुयोगचन्द्रिका टीका—वृ. १ पञ्चविधज्ञानस्वरूपनिरूपणम्

१९

शंका—यद्यपि जिस प्रकार मतिज्ञान की उत्पत्ति में इन्द्रियां साक्षात् निमित्त होती हैं वैसे वे श्रुतज्ञान की उत्पत्ति में साक्षात् निमित्त नहीं होती हैं—परन्तु परम्परा से तो होती ही हैं। जैसे—स्पर्शन आदि इन्द्रियों से मतिज्ञान हो गया और फिर बाद में उनके विषय में श्रुतज्ञान—जो विशेष विचार-रूप है वह होता है। अतः इस अपेक्षा से तो मतिज्ञान और श्रुतज्ञान में कोई भेद प्रतीत नहीं होता सो ऐसा कथन भी ठीक नहीं है कारण कि यह औपचारिक कथन है। दूसरे मतिज्ञान विद्यमान वस्तु में ही प्रवृत्त होता है, और श्रुतज्ञान त्रैकालिक विषयों में प्रवृत्त होता है। तथा मतिज्ञान में शब्दो-ल्लेखन ही होता है और श्रुतज्ञान में नहीं होता है। अर्थात् जैसे श्रुतज्ञान की उत्पत्ति के समय संकेत स्मरण और श्रुतग्रन्थ का तात्पर्य अनुसरण अपेक्षित होता है, वैसे वह ईहा आदि मतिज्ञान की उत्पत्ति में अपेक्षित नहीं है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि लब्धिरूप मतिज्ञान के होने पर श्रुतज्ञान उत्पन्न होता है मतिज्ञान के अभाव में नहीं। इसलिये इस श्रुतज्ञान का कारण मतिज्ञान है।

शंका—जेम मतिज्ञाननी उत्पत्तिमां इन्द्रियो साक्षात् निमित्त भने છે એમ શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં તેઓ સાક્ષાત્ નિમિત્ત બનતી નથી. પરન્તુ પરમ્પરાની અપેક્ષાએ તો તેઓ શ્રુતજ્ઞાનમાં પણ નિમિત્ત રૂપ બને જ છે. જેમ કે સ્પર્શેન્દ્રિય આદિની સહાયતાથી ધારે કે મતિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ ગઈ છે, ત્યારબાદ તેમને વિષે વિશેષ વિચાર કરવારૂપ શ્રુતજ્ઞાન પણ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. આ રીતે વિચાર કરવામાં આવે તો મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન વચ્ચે કોઈ ભેદ જ જણાતો નથી. સમાધાન—આ પ્રકારની માન્યતા પણ ખરી નથી. કારણકે આ કથન તો માત્ર ઔપચારિક કથન જ છે. વળી બીજું કારણ એ છે કે મતિજ્ઞાન તો માત્ર વિદ્યમાન વસ્તુમાં જ પ્રવૃત્ત થાય છે, પરન્તુ શ્રુતજ્ઞાન તો ત્રૈકાલિક વિષયોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે. તથા મતિજ્ઞાનમાં શબ્દોલ્લેખન જ થાય છે, જ્યારે શ્રુતજ્ઞાનમાં તો સ્મરણ તર્કવિતર્ક આદિ પણ થાય છે એટલે કે જેવી રીતે શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિને સમયે સંકેત, સ્મરણ અને શ્રુતગ્રંથનું અનુસરણ અપેક્ષિત હોય છે, એવી રીતે ઇંદ્રિય આદિરૂપ મતિજ્ઞાનમાં તે સંકેત, સ્મરણ આદિની અપેક્ષા રહેતી નથી. આ વાત પરથી એજ વાત નિશ્ચિત થાય છે કે લબ્ધિરૂપ મતિજ્ઞાનના સદ્ભાવમાં જ શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે—મતિજ્ઞાનનો અભાવ હોય તો શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન થતું નથી. તેથી મતિજ્ઞાનને શ્રુતજ્ઞાનમાં કારણભૂત કહ્યું છે.

નતુ આભિનિબોધિકાઽપરપર્યાયમતિજ્ઞાનમેવ શ્રુતજ્ઞાનં સમ્પદ્યતે યથા મૃત્તિકૈવ ઘટઃ, તન્તુરેવ પટઃ. તર્હિ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય પૃથગુપાદાનં ભગવતા ક્વિમર્થકૃતમ્ ? ઉચ્યતે દૃષ્ટાન્તદ્વયમિદં વિષમમ્, યથા ઘટ પ્રાદુર્ભવિ-પિષ્ટાકારા મૃત્તિકા પ્રણ-શ્યતિ, પટોત્પત્તૌ સત્પાં તન્તુપુઞ્જશ્ચ તથા શ્રુતજ્ઞાને સમુત્પન્ને મતિજ્ઞાનં ન પ્રણશ્યતિ ।

શંકા—જब શ્રુતજ્ઞાન का कारण मतिज्ञान है किं जिसका दूसरा नाम आभिनिबोधिकज्ञान है भी तब जिस प्रकार मिट्टीरूप कारण घटकार्यरूप से परिणम जाता है उसी प्रकार से मतिज्ञान भी श्रुत ज्ञानरूप से परिणम जावे गा—अथवा जिस प्रकार मिट्टी ही घट बन जाती है, और तन्तु ही पट बन जाया करते हैं इसी तरह से मतिज्ञान भी श्रुतज्ञान हो जावेगा—तो फिर सूत्र कारने श्रुतज्ञान का पृथक् रूप से पाठ सूत्र में क्यों रखा है ?

उत्तर—ये दोनों दृष्टान्त ही विषम हैं क्यों कि—

इस प्रकार की मान्यता में मतिज्ञान का विनाश प्रसक्त होगा—हम देखते हैं कि जब घट का उत्पत्ति होती है, तब पिण्डाकार मृत्तिका का विनाश होता है और पट की उत्पत्ति में तन्तुपुंज का । परन्तु जब श्रुतज्ञान होता है तब मतिज्ञान का अभाव नहीं होता है । क्योंकि एक आत्मा में एक साथ चार ज्ञान तक होना सिद्धान्तकारों ने माना है । यदि श्रुतज्ञान के सद्भाव में मतिज्ञान का अभाव स्वीकार किया जावे तो यह सिद्धान्त विरुद्ध कथन

શંકા—જે મતિજ્ઞાન અથવા આભિનિબોધિક જ્ઞાનને જ શ્રુતજ્ઞાનના કારણરૂપ માનવામાં આવે, તે જેમ માટીરૂપ કારણ ઘટકાર્યરૂપે પરિણુમી જાય છે, એજ પ્રમાણે મતિજ્ઞાન પણ શ્રુતજ્ઞાનરૂપે પરિણુમી જશે, અથવા જે પ્રકારે માટી જ ઘડારૂપે પરિણુમિત થઈ જાય છે, એજ પ્રમાણે મતિજ્ઞાન પણ શ્રુતજ્ઞાનરૂપે પરિણુમિત થઈ જશે. તે પછી સૂત્રકારે શ્રુતજ્ઞાનને અહીં પૃથક્કરૂપે (એક જુદા જ જ્ઞાનરૂપે) શા માટે પ્રતિપાદિત કર્યું છે ?

ઉત્તર—આ બન્ને દૃષ્ટાન્તો જ વિષમ છે, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતામાં તે મતિજ્ઞાનનો વિનાશ થવાની વાત માનવાનો પ્રસંગ ઉદ્ભવશે. આપણે એ વાતને તે પ્રત્યક્ષ દેખી શકીએ છીએ કે જ્યારે ઘટ (ઘડા)ની ઉત્પત્તિ થાય છે ત્યારે માટીના પિંડાનો વિનાશ થઈ જાય છે અને જ્યારે પટ (કાપડ)ની ઉત્પત્તિ થાય છે ત્યારે તંતુ-પુંજનો નાશ થઈ જાય છે. પરંતુ જ્યારે શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે મતિજ્ઞાનનો વિનાશ થઈ જતો નથી, કારણ કે એક આત્મામાં એક સાથે ચાર જ્ઞાનનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે, એવું સિદ્ધાન્તકારોએ સ્વીકારેલું છે. જે શ્રુતજ્ઞાનનો સદ્ભાવ હોય ત્યારે મતિજ્ઞાનનો અભાવ હોય છે એવું માનવામાં આવે, તે તે માન્યતા તે

અનુયોગચંદ્રિકા ટીકા સૂ. ૧ ચ્ચવિધજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૨૧

“જત્ય મઈ તત્ય સુયં, જત્ય સુયં તત્ય મઈ” (નન્દી સૂ. ૨૪)

છાયા—યત્ર મતિસ્તત્ર શ્રુતં, યત્ર શ્રુતં તત્ર મતિઃ ।

અંતસ્ય સદ્ભાવે મતેર્વિધમાનતા ભગવતાઽભિહિતા તસ્માદપેક્ષાકારણમેવ મતિ જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનસ્યેતિ મન્તવ્યમ્, તથા ચ મતિજ્ઞાનપૂર્વકમિન્દ્રિયમનોજન્યમાત્સવચનાનુસારિ જ્ઞાનં તજ્ઞાનમિતિ નિષ્કર્ષઃ ।

‘શ્રૂયતે યત્ત્વશ્રુતમ્’ ઇતિ વ્યુત્પત્ત્યા શ્રુતશબ્દેન પ્રવચનમપિ ગૃહ્યતે । તસ્મિન્પક્ષે—શ્રુતસ્ય=આપ્તવચનસ્ય જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમિતિ ષષ્ટીતત્પુરુષઃ । આસો રાગાદિ

ઠહરતા હૈ । કિ “જત્ય મઈ તત્ય સુયં, જત્ય સુયં તત્ય મઈ” જહાં પર મતિ-જ્ઞાન હૈ વહાં શ્રુતજ્ઞાન હૈ ઓર જહાં શ્રુતજ્ઞાન હૈ વહાં મતિજ્ઞાન હૈ । ઇસ તહ શ્રુત કે સદ્ભાવ મેં મતિજ્ઞાન કા સદ્ભાવ-ભગવાનને કહા હૈ । ઇસલિયે એસા માનના ચાહિયે, કિ તજ્ઞાન કા મતિજ્ઞાન કેવલ અપેક્ષાકારણ હી હૈ । અપેક્ષાકારણ કા તાત્પર્ય નિમિત્તકારણ સે હૈ । જો નિમિત્તકારણ હોતે હૈં વે ઉપાદાન કારણ કી તરહ સ્વયં કાર્યરૂપ નહીં પરિણમતે હૈં કેવલ ઉપાદાન કારણ હી કાર્યરૂપ પરિણમતા હૈ । તથા ચ—જો મતિજ્ઞાનપૂર્વક હી પરંપરા સે ઇન્દ્રિયોં સે જો જનિત હોં ઓર સાક્ષાત્કારણ જિસકી ઉત્પત્તિ મેં મન હો એસા આત્મવચનાનુસારી જા જ્ઞાન હૈં વહી શ્રુતજ્ઞાન હૈ ।

શ્રૂયતે યત્ તત્ શ્રુતમ્ “ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર શ્રુતશબ્દ સે પ્રવચન કા મી પ્રહ્ણ હો જાતો હૈ । અતઃ ઇસ પક્ષ મેં આપ્તવચનરૂપ શ્રુત કા જો જ્ઞાન હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ એસા ષષ્ટી તત્પુરુષ સમાસ કરના ચાહિયે । રાગદ્વેષઆદિ સે રહિત

સિદ્ધાન્તની વિરૂદ્ધની માન્યતા પ્રતિપાદિત થાય છે. શાસ્ત્રોમાં એવું કહ્યું છે કે.... “જત્ય મઈ તત્ય સુયં, જત્ય સુયં તત્ય મઈ” જ્યાં મતિજ્ઞાન હોય છે, ત્યાં શ્રુતજ્ઞાન હોય છે જ્યાં શ્રુતજ્ઞાન હોય છે ત્યાં મતિજ્ઞાન હોય છે.” આ રીતે શ્રુતના સદ્ભાવમાં મતિજ્ઞાનનો પણ સદ્ભાવ લગવાને કહેલો છે. તેથી એવું માનવું જોઈએ કે મતિજ્ઞાન એ શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં માત્ર અપેક્ષાકારણ (નિમિત્તરૂપ કારણ) જ છે, જે નિમિત્ત કારણો હોય છે તે ઉપાદાન કારણની જેમ સ્વયં કાર્યરૂપે પરિણમતા નથી. માત્ર ઉપાદાન કારણ જ કાર્યરૂપે પરિણમે છે. આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો શ્રુતજ્ઞાનનો આ પ્રમાણે અર્થ ફક્ત થાય છે.

જે મતિજ્ઞાનપૂર્વક હોય, પરંપરાની અપેક્ષાએ જે જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોથી જનિત હોય છે પણ જેની ઉત્પત્તિમાં સાક્ષાત્ કારણભૂત મન હોય છે, એવું આત્મવચનાનુસારી જે જ્ઞાન છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે. “શ્રૂયતે યત્ તત્ શ્રુતમ્” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર શ્રુત પદ દ્વારા પ્રવચન પણ અહીં થઈ ગય છે. તેથી આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો આત્મવચન રૂપ શ્રુતનું જે જ્ઞાન છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે, એવો ષષ્ઠી તત્પુરુષ

રહિતઃ સર્વશસ્ત્રસ્ય વચનમ્—આપ્ત વચનમ્ । તદર્થાધ્યવસાય (નિર્ણય) રૂપં જ્ઞાનં શ્રુત જ્ઞાનમિતિ । શ્રુતજ્ઞાનં પ્રતિ શબ્દસ્ય નિમિત્તકારણતયા શબ્દેઽપિ શ્રુતવ્યપદેશો ભવતિ । જ્ઞાનભેદવ્યવસ્થાયાં શ્રુતશબ્દઃ શ્રવણાર્થવાચીત્યભિધેયમ્ ॥૨॥

(૩) અવધિજ્ઞાનમ્—અવધાનમવધિ—ઇન્દ્રિય નોઇન્દ્રિય નિર્પેક્ષસ્ય આત્મનઃ સાક્ષાદર્થગ્રહણમ્, અવધિરેવજ્ઞાનમ્ અવધિજ્ઞાનમ્ । અથવા—‘અવ’ શબ્દોઽધઃશબ્દાર્થઃ । અવ=અધઃ વિસ્તૃતં વસ્તુ ધીયતે=જાયતેઽનેનેત્યવધિઃ । અવધિશ્ચાસૌ તજ્ઞાનં ચેત્યવધિજ્ઞાનમ્ । વિસ્તૃતવિષયકં જ્ઞાનમિત્યર્થઃ । યથા—અનુત્તરોપપાતિકા દેવા અવધિ જ્ઞાનવલેન, ભગવન્તમાપ્નુચ્છ્ય જીવાદિતત્ત્વસ્વરૂપં નિર્ધારયન્તિ ।

વિશિષ્ટ વ્યક્તિ કા નામ આપ્ત હૈ । જિસે સર્વજ્ઞ કહા જાતા હૈ । ઉસકે વચન કા નામ આપ્તવચન હૈ । ઉનકે દ્વારા પ્રતિપાદિત અર્થરૂપ જો આગમ હૈ । ઉસ આગમ કા નિર્ણયરૂપ જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન હૈ । શ્રુતજ્ઞાન કે પ્રતિ શબ્દ નિમિત્તકારણ હોતા હૈ એવાવડા નિમિત્ત કારણ કી અપેક્ષા લેકર શબ્દ મેં મી શ્રુત કા વ્યવહાર હોતા હૈ । પરંતુ જ્ઞાન ભેદ કી વ્યવસ્થા મેં શ્રુતશબ્દ શ્રવણ જન્યજ્ઞાનરૂપ અથ કા વાચી લિયા ગયા હૈ ।

“અવધાનમવધિઃ” અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોં એવં મનકી સહાયતા કે વિના કેવલ આત્મા સે હી દ્રવ્ય ક્ષેત્રકાલ ઓર ભાવ કી મર્યાદા લેકરરૂપી પદાર્થોં કો જો સાક્ષાત્ રૂપ સે ગ્રહણ કરનેવાલા જ્ઞાન હોના હૈ ઉસકા નામ અવધિ હૈ ।

અથવા—અવધિજ્ઞાન મેં જો અપશબ્દ હૈ વહ અધઃશબ્દ કે અર્થ કો કહને વાલા હૈ । ઇસલિયે જિસજ્ઞાન કે દ્વારા નીચે કા વિષય વિસ્તારરૂપ સે “ધીયતે” જાના જાતા હૈ । વહ અવધિજ્ઞાન હૈ તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ જબ

સમાસ અહીં સમજવો જોઇએ. રાગ, દ્વેષ આદિથી રહિત વિશિષ્ટ વ્યક્તિને આપ્ત કહે છે. સર્વજ્ઞને જ એવાં આપ્ત કહી શકાય છે. તે સર્વજ્ઞના વચનને આપ્તવચન કહે છે. તેમના દ્વારા પ્રતિપાદિત અર્થ રૂપ જો આગમ છે, તે આગમના નિર્ણયરૂપ જ્ઞાનને જ શ્રુતજ્ઞાન કહે છે. શ્રુતજ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં શબ્દરૂપ નિમિત્ત પરમ્પર કારણ રૂપ હોય છે. તેથી નિમિત્ત કારણની અપેક્ષાએ શબ્દમાં પણ શ્રુત શબ્દનો વ્યવહાર થાય છે પરંતુ જ્ઞાનના ભેદોની વ્યવસ્થામાં શ્રુત શબ્દને શ્રવણજન્ય જ્ઞાનરૂપ અર્થનો વાચક લેવામાં આવેલ છે.

(૩) “અવધાનમવધિઃ” અવધિજ્ઞાન—

ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતા વિના કેવળ આત્મા દ્વારા જ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની મર્યાદાની અપેક્ષાએ રૂપી પદાર્થોને સાક્ષાત્ રૂપે ગ્રહણ કરનારું જો જ્ઞાન છે, તેને અવધિજ્ઞાન કહે છે. અથવા—અવધિજ્ઞાનમાં જો ‘અવ’ ઉપસર્ગ છે તે અધઃ શબ્દના અર્થનો વાચક છે. તેથી જો જ્ઞાન દ્વારા નીચેના વિષયનું વિસ્તૃત રૂપે “ધીયતે” જ્ઞાન થાય છે, તે જ્ઞાનને અવધિજ્ઞાન કહે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—અવધિજ્ઞાનનું ક્ષેત્ર આંગળના અસંખ્યાતમાં

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० १ पञ्चविंशज्ज्ञानस्वरूपनिरूपणम्

२३

यद्वा—अवधिना ज्ञानम्—इति तृतीया समासः । अवधिमर्थादारूपिद्रव्याप्येव विषयीकरोति नेतराणीति व्यवस्थारूपा । तथाचायमर्थः—अरूपि द्रव्यपरिहारेण रूपिद्रव्यमात्रविषयकं ज्ञानमवधिज्ञानमिति ।

यद्वा—अधोऽधोऽधिकं पश्यति येन तदवधिज्ञानम् । तच्चतुर्गतिवर्तिनां जीवानामिन्द्रियमनोनीरपेक्षं प्रतिविशिष्टक्षयोपशमनिमित्तं रूपिद्रव्यसाक्षात्कारजनकं भवति । एतस्य देवमनुष्यतिर्यङ्मनसका अधिकारिणः ॥३॥

अवधिज्ञान का क्षेत्र अंगुल केअवस्थायीयें भाग से लेकर सारा लोक हैं—तब उसका विषय भी कतिपय पर्याय सहितरूपी द्रव्य है इसलिये यह ज्ञान विस्तृत विषयवाला है । विस्तृत विषयता जो इस में प्रकट की है वह मनः पर्यायज्ञान की अपेक्षा जाननी चाहिये । क्यों कि मनःपर्याय ज्ञान का क्षेत्र सिर्फ मानुषोत्तर पर्वत पर्यन्त ही है और उसका विषय अवधिज्ञान के विषयभूत हुए रूपी द्रव्य का अनन्ततवां भाग है । अथवा—अवधिशब्द का अर्थ मर्थादा है । इस अर्थ में अवधि और ज्ञान का तृतीया तत्पुरुष समास हो र ऐसा अर्थ होता है कि जो ज्ञान मर्थादा लेकर पदार्थों को जानता है । यह अवधिज्ञान है । इस में मर्थादा रूपी पदार्थों को जानने की अपेक्षा से जाननी चाहिये । क्यों कि यह ज्ञान रूपी पदार्थों को नहीं जानता है । इसलिये इस प्रकार का व्यवस्थारूप मर्थादा युक्त होने के कारण इस ज्ञानक नाम अवधिज्ञान रखा है । अथवा—नीचे नीचे की ओर जो ज्ञान अधिक विषय को

आगयी लधने आया लोक पर्यन्तनुं छि, अने कतिपय पर्याय सहितना इपी द्रव्यने विषय करनाइं ज्ञान छे. आ रीते ते ज्ञान विस्तृत विषयवाणुं छे. तेमां जे विस्तृत विषयता प्रकट करवाभां आवी छे ते मनःपर्याय ज्ञाननी अपेक्षाये समजवी, कारण के मनःपर्याय ज्ञाननुं क्षेत्र मात्र मानुषोत्तर पर्वत पर्यन्त न छे अने अवधिज्ञान द्वारा जेटलाइपी द्रव्यने जेष्ठ शक्य छे तेना करतां मनःपर्याय ज्ञानद्वारा अनन्तमां आगना इपी द्रव्यने जेष्ठ शक्य छे.

अथवा—अवधि जेटले मर्थादा. आ अर्थमां अवधि अने ज्ञान, आ जे पढेने। तृतीया तत्पुरुष समास मन्ये छे. आ एटीये वीचारव.मां आवे तो अवधिज्ञानने अर्थ आ प्रमाणे धरे-जे ज्ञान मर्थादित पदार्थोंने जाले छे, ते ज्ञाननुं नाम अवधि-ज्ञान छे. ते ज्ञान, इपी पदार्थोंने न जाले छि-अइपी पदार्थोंने जालुनुं नथी, आ प्रकारनी इपी पदार्थोंने न जालुवाइय आ मर्थादा समजवी. तेथी आ प्रकारनी व्यवस्थाइय मर्थादाथी युक्त होवाने दीधे आ ज्ञाननुं नाम अवधिज्ञान पड्युं छि. अथवा—जे ज्ञान नीचेनी आगुये अधिक विषयने देपी शके छे ते ज्ञानने अवधिज्ञान कहे

દેખતા હૈ—વહ જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન હૈ એસા યહ અવધિજ્ઞાન ચારોં ગતિયોં કે જીવોં કો ઇન્દ્રિયાં ઓર મન કી સહાયતા કે બિના અર્વાધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ ।

શંકા:—શાસ્ત્રકારોં ને મનુષ્ય ઓર તિર્યંચગતિ કે જીવોં કો જો અવધિજ્ઞાન કહા હૈ વહી ક્ષયોપશમ નિમિત્તક કહા હૈ—ફિર યહાં ચારોં ગતિયોં કે જીવોં કો જો અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ વહ ક્ષયોપશમ નિમિત્તક હોતા હૈ એસા ક્યોં કહા—તો ઇસ શંકા કા સમાધાન ઇસ પ્રકાર સે હૈ કિ અવધિજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ નિયમતઃ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી હોતી હૈ—પરંતુ ઇસ ક્ષયોપશમ મેં જહાં વ્રત, નિયમ, આદિ અનુષ્ઠાન કી અપેક્ષા રહતી હૈ—વહ ક્ષયોપશમ નિમિત્તક કહલાતા હૈ એસા અવધિજ્ઞાન મનુષ્ય ઓર તિર્યંચોં કે હોતા હૈ । જિસ અવધિજ્ઞાન મેં ઇનકી અપેક્ષા ન હો કિન્તુ ભવજન્મ લેના હી કારણ હો વહાં વહ અવધિજ્ઞાન ઇન ગુણોં કી અપેક્ષા બિના હી અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । એસા અવધિજ્ઞાન દેવ ઓર નારકિયોં કો હોતા હૈ । અન્તરંગ કારણ ઇન દોનોં પ્રકાર કે અવધિજ્ઞાનોં

છ. ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતા વિના રૂપી પદાર્થોને જોઈ શકનારું આ અવધિજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયથી ચારે ગતિના જીવોમાં ઉત્પન્ન થતું હોય છે.

શંકા—શાસ્ત્રકારોએ તો એવું કહ્યું છે કે મનુષ્ય અને તિર્યંચગતિના જીવોને જે અવધિજ્ઞાન થાય છે તે ક્ષયોપશમ નિમિત્તક હોય છે. છતાં આપ શા કારણે એવું કહેા છે કે ચારે ગતિના જીવોને અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ શકે છે ?

સમાધાન—અવધિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ તો નિયમથી જ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી જ થાય છે, પરંતુ આ ક્ષયોપશમમાં જ્યાં વ્રત, નિયમ આદિ અનુષ્ઠાનોની આવશ્યકતા રહે છે, ત્યાં તે અવધિજ્ઞાનને ક્ષયોપશમનિમિત્તક કહેવામાં આવે છે. એવા ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિજ્ઞાનનો સદ્ભાવ મનુષ્ય અને તિર્યંચોમાં જ હોય જે અવધિજ્ઞાનમાં તેની આવશ્યકતા ન હોય પણ ભવ જ (જન્મ લેવો એજ) કારણ રૂપ હોય, ત્યાં આ ગુણોની અપેક્ષા વિના જ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. એવા અવધિજ્ઞાનનો સદ્ભાવ દેવો અને નારકોમાં હોય છે. આ રીતે આ બંને પ્રકારના અવધિજ્ઞાનમાં અન્તરંગ કારણ તો સમાન જ છે. અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમ જ તે બંનેમાં અન્તરંગ કારણ છે. તે કારણે “અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી ચારે ગતિના જીવોમાં અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે.” આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ સંભવતો નથી.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. ૧ જ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્ ૨૫

મનઃપર્યવજ્ઞાનમિતિ । અવનમ્ અવઃ । ‘અવ રક્ષણ ગતિકાન્તિપ્રીતિતુષ્ટ્ય-
વગમાદ્યર્થેષુ’ પઠિતોઽસ્તિ, તત્રાવગમાર્થમાશ્રિત્ય નિષ્પન્નઃ । અવઃ—અવગમઃ, બોધ
इत्यर्थः । પરિશબ્દઃ સર્વતો ભાવે, પર્યવઃ—સમન્તાદવબોધઃ । મનસઃ પર્યવો મનઃ
પયવઃ મનોવિષયકઃ સમન્તાદવબોધ इत्यर्थः । મનઃપર્યવશ્ચાસૌ તત્તજ્ઞાનં ચેતિ
મનઃપર્યવજ્ઞાનમ્ । પર્યાયઃ, પર્યાયઃ, એતે શબ્દા એકાર્થવાચકાઃ ।

में समान हैं । अवधिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम ही अन्तरंग कारण है ।
अतः ऐसा कहने में कि अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से अवधि-
ज्ञान की उत्पत्ति चारों गतियों के जीवों को होती है इस प्रकार के कथन
में कोई विरोध नहीं है ।

મનઃપર્યવજ્ઞાન-પર્યવ યહ શબ્દ પરિ ઉપ-ગ્ અવ ધાતુ સે બના છે । અવ
ધાતુ રક્ષણ, ગતિ, કાન્તિ, પ્રીતિ, તૃપ્તિ, અગમ આદિ અર્થો મેં પઠિત હુઆ
છે સો યહી પર ઇન મેં સે અવગમ અર્થ લિયા ગયા છે ।
અવગમ કો અર્થ બોધ છે । “પરિ” કો અર્થ સર્વ પ્રકાર સે છે । મન કી સર્વ
પર્યાયોં કા સાક્ષાત્ જાનને વાલા જો જ્ઞાન છે વહ મનઃ પર્યવજ્ઞાન છે । પર્યાય
પર્યાય યે સર્વ શબ્દ એકાર્થવાચક છે । તાત્પર્ય ઇસકા યહ છે કિ મનવાલે
સંજ્ઞી પ્રાણી—કિસી મી વસ્તુ કા ચિન્ત્વન મનસે કરતે છે । ચિન્ત્વન કે સમય
ચિન્તનીયવસ્તુ કે ભેદ કે અનુસાર ચિન્તનકર્મ મેં પ્રવૃત્ત મન મિત્ર ૨ આકારોં
કો ધારણ કરતા રહતા છે । યે આકૃતિયાં હી મન કી પર્યાય છે । ઇન મન કી
પર્યાયોં કો સાક્ષાત્ જાનને વાલા જ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન છે દ્રવ્ય મન ઓર

(૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન-પરિ+અવ=પર્યવ. આ રીતે ‘અવ’ ધાતુને ‘પરિ’ ઉપસર્ગ
લાગવાથી ‘પર્યવ’ પદ બન્યું છે. ‘અવ’ ધાતુ રક્ષણ, ગતિ, કાન્તિ, પ્રીતિ, તૃપ્તિ,
અવગમ આદિ અર્થોમાં વપરાય છે. અહીં તેનો અવગમ અર્થ ગૃહીત થયો છે.
અવગમ એટલે બોધ, અને ‘પરિ’ એટલે ‘સર્વ’ પ્રકારે

“મનના સઘળા પયોયોને સાક્ષાત્ જાણનારું જે જ્ઞાન છે, તેનું નામ મનઃ
પર્યવજ્ઞાન છે.” પર્યાય અને પર્યાય આ બંને શબ્દો સમાનાર્થી છે. આ કથનને
જાવાઈ નીચે પ્રમાણે છે-મનવાળા જીવો (સંજ્ઞી જીવો) કોઈ પણ વસ્તુનું મનની
મદદથી ચિન્તવન કરે છે. આ પ્રકારના ચિન્તનકર્મમાં પ્રવૃત્ત થયેલું મન લિન્નલિન્ન
આકારોને ધારણ કરતું રહે છે. તે આકૃતિઓ જ મનના પયોયો છે. મનન એ
પયોયોને સાક્ષાત્ જાણનારું જે જ્ઞાન છે તે જ્ઞાનનું નામ જ મનઃપર્યવજ્ઞાન છે.

મનોદ્વિવિધં-દ્રવ્યભાવભેદાત્ । તત્ર દ્રવ્યમનો મનોવર્ગણાઃ । સંજ્ઞિના મનો-
વર્ગણા ગૃહીતાઃ સત્યો મન્યમાનાશ્ચિત્યમાના ભાવમનોઽભિધીયતે ।

તત્રેહ ભાવમનઃ પરિગૃહ્યતે । ભાવમનસઃ પર્યાયાશ્ચ પરેષામ્ અર્દ્ધતૃતીયદ્વીપાભ્ય-
ન્તરવર્તિસંજ્ઞિપંચેન્દ્રિયાણાં ચિન્ત્યમાનવિષયાઽધ્યવસાયરૂપાઃ । યથા-અન્યઃકશ્ચિ-
દેવં ચિન્તયેત્-આત્મા કીદૃશઃ ? અરૂપી, ચેતનાસ્વભાવઃ, કર્મણાં કર્તા
તત્કલભોક્તા । ચેત્યાદયો યે જ્ઞાનવિશેષરૂપાસ્તસ્યાત્મનઃ પરિણામવિશેષા તેષાં યદ્
જ્ઞાનં તન્મનઃપર્યયજ્ઞાનમ્ ।

ભાવ મન કે ભેદ સે મન દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । इनमें मनोवर्गणारूप तो
द्रव्य मन हैं तथा संज्ञी जीव उन मनोवर्गणाओं को ग्रहण करके उनके निमित्त
से जो विचार करता है वह भावमन हैं । वहां पर भावमन का ग्रहण हुआ
है । मनः पर्यवज्ञानी दूसरों के इस भावमन की पर्यायों को कि जो अढाई
द्वीपवर्ती संज्ञी पंचेन्द्रिय प्राणियों द्वारा विचारी गई हैं उन्हें साक्षात् जानता
है । जैसे कोई यह विचारे कि आत्मा कैसा है ? “अरूपी है चेतना स्वभाव-
वाला है, कर्मों का कर्ता है, और उन कर्मों के फलों का भोक्ता है “इस
तरह ये ज्ञानाविशेषरूप जो उस आत्मा के विचारित परिणाम विशेष हैं उन
परिणाम विशेषों का जो ज्ञान है वह मनःपर्यव ज्ञान है । अर्थात् मनःपर्यव-
ज्ञानी इन से कल्पित मन की पर्यायों को साक्षात् जानता है । इससे यह
बात ध्वनित होती है कि मनःपर्यवज्ञानी मन को ही प्रत्यक्षरूप से जानता
है, चिन्तनीय वस्तुओं को नहीं ।

દ્રવ્યમન અને ભાવમનના ભેદથી મન બે પ્રકારનું કહ્યું છે. આ બન્નેમાંનું જે દ્રવ્ય
મન છે તે મનોવર્ગણારૂપ છે, તે મનોવર્ગણાઓને ગ્રહણ કરીને તેમના નિમિત્તથી
સંજ્ઞી જીવ જે વિચાર કરે છે તે ભાવમનરૂપ છે. અહીં ભાવમન ગ્રહણ કરવામાં
આવ્યું છે. અહીં દ્વીપવર્તી સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવો દ્વારા વિચારવામાં આવેલી ભાવ-
મનના પર્યાયોને મનઃપર્યવજ્ઞાની જીવ સાક્ષાત્ જાણે છે. જેમ કે કોઈ એવો વિચાર
કરે કે “આત્મા કેવો છે ? શું તે અરૂપી છે ? શું તે ચેતના સ્વભાવવાળો છે ? શું
તે કર્મોના કર્તા અને તે કર્મોના ફલોના ભોક્તા છે ?” આ પ્રકારનું આ જ્ઞાનવિશેષ-
રૂપ ને આત્માદ્વારા વિચારિત જે પરિણામવિશેષ છે, તે પરિણામવિશેષોને જાણનાર
જે જ્ઞાન છે, તે જ્ઞાનનું નામ મનઃપર્યવજ્ઞાન છે. એટલે કે મનપર્યવજ્ઞાની જીવ આ
સંકલ્પિત મનના પર્યાયોને સાક્ષાત્ જાણી શકે છે. આ કથન દ્વારા એ વાત સૂચિત
થાય છે કે મનપર્યવજ્ઞાની જીવ મનની પર્યાયોને જ પ્રત્યક્ષરૂપે જાણે છે-ચિન્તનીય
વસ્તુઓને જાણતો નથી.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૧ જ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૨૭

મનઃપર્યયજ્ઞાની ચ મનઃપર્યયાનેવ પ્રત્યક્ષી કરોતિ, ન તુ બાહ્યવસ્તુ । ન ચ મનઃ પર્યયજ્ઞાનિના બાહ્યવસ્તુ જ્ઞાયતે इति वाच्यम्, अनुमानः ततस्तस्य बाह्यवस्तुज्ञान-सद्भावात् । यथा विशिष्टक्षयोपशमिकप्रतिभाशाली प्रेक्षावान् प्रशान्तःकस्यचि-दाकारेङ्गितादिकं विलोक्य तदीयमनोगतं भावं सामर्थ्यं चानुमानतो विजानाति तथा मનःपर्यय-ज्ञानी कस्यचिद् भावरूपं मનःसर्वतोभावेन प्रत्यક્ષીकृत્वाનુमानेन बाह्यं विपश्यन्ववु-त्ते—‘इदं वस्त्वनेन चिन्त्यते’ इति । बाह्यपदार्थचिन्तनसमये हि बाह्यपदार्थाकारसदृशाकारं मनो भवति ।

इदं मનःपर्ययજ્ઞાનં રૂપિવિપયત્વપ્રત્યક્ષાયોપશમિકત્વપ્રયક્ષત્વાદિસામ્યેઽપ્ય-વધિજ્ઞાનાદ્ મિન્નં, સ્વામ્યાદિ ભેદાત્ । તથાહિ અવધિજ્ઞાનમવિસ્તસમગ્દષ્ટેરપિ

પ્રશ્ન —તો કયા ચિન્તનીય વસ્તુઓં કો મનઃપર્યયજ્ઞાની જાન નહીં સકતા ?—ઉત્તર:—જાન સકતા હૈ—પર પીછે સે અનુમાનદ્વારા । જૈસે કોઈ વિશિષ્ટક્ષયોપશમિક પ્રતિભાશાલી વિદ્વાન્ શાન્તભાવ સે કિસી દૂસરે વ્યક્તિ કે આકાર ઇંગિત આદિ કો પ્રયક્ષ દેખ કર ઉસકે મનોગત ભાવ એવં સામર્થ્ય કો અનુમાન સે જાન લેતા હૈ ઉસી તરહ મનઃપર્યયજ્ઞાની કિસી કે ભાવરૂપ મન કો સર્વતોભાવ સે પ્રયક્ષ કર અનુમાન સે તર્જીત ચિન્તનીય બાહ્ય વસ્તુ-ઓં કો જાનલિયા કરતા હૈ કિ હસને ઇસ વસ્તુ કા ચિન્તન ઢિયા હૈ ક્યોં કિ ઇસકા મન ઉવ વસ્તુ કે ચિન્તન કે સમય અવશ્ય હોનેવાલે ઇસપ્રકાર કે આકારોં સે યુક્ત હૈ । મન જબ બાહ્ય પદાર્થોં વા ચિન્તન કરતા હૈ તો ઉસ સમય વહ ઉસ ચિન્તિત બાહ્યપદાર્થ કે આકાર જૈસા આતરવાલા હો જાતા હૈ ।

મનઃપર્યયજ્ઞાન ઓર અવધિજ્ઞાન ઇન દોનોં મેં રૂપી પદાર્થોં કો જાનને

પ્રશ્ન શું મનઃપર્યયજ્ઞાની ઇવ ચિન્તનીય વસ્તુઓને બાણી શકતો નથી ?

ઉત્તર—મનઃપર્યયજ્ઞાની ઇવ ચિન્તનીય વસ્તુઓને પાછળથી અનુમાનદ્વારા જ બાણી શકે છે જેવી રીતે કોઈ વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમિક પ્રતિભાશાળી વિદ્વાન્ શાન્તભાવે કોઈ અન્ય વ્યક્તિની સુખાકૃતિ, તેની ચેષ્ટાઓ આદિને પ્રત્યક્ષ જોઈને તેના મનોગત ભાવોને સામર્થ્યને અનુમાનથી બાણી લે છે, એજ પ્રમાણે મનઃપર્યયજ્ઞાની ઇવ કોઈ અન્ય ઇવના ભાવરૂપ મનને પોતાના મનઃપર્યયજ્ઞાન વડે પ્રત્યક્ષ કરીને અનુમાનથી તદ્દગત ચિન્તનીય બાહ્ય વસ્તુઓને પાણુ બાણી શકે છે. તે મનઃપર્યયજ્ઞાની ઇવ એવું અનુમાન કરે છે કે આ વ્યક્તિએ આ વસ્તુનું ચિન્તન કર્યું છે, કારણ કે તેનું મન તે વસ્તુના ચિન્તન સમયે જેવાં આકારોથી અવશ્ય યુક્ત હોવું જોઈએ એવા આકારોથી અવશ્ય યુક્ત છે. મન જ્યારે બાહ્યપદાર્થોનું ચિન્તન કરે છે, ત્યારે તે (મન) તે ચિન્તિત બાહ્યપદાર્થોના આકાર જેવા આકારવાળું થઈ જાય છે.

મનઃપર્યયજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનમાં રૂપી પદાર્થોને બાણુવાની અપેક્ષાએ, ક્ષાયો-

૨૯

અનુયોગવારસૂત્રે

भवति । द्रव्यतोऽशेषरूपिद्रव्यविषयम्, क्षेत्रतोऽसंख्यातलोकविषयम् । कालतोऽतीतानागतासंख्यातोऽत्सर्पिण्यवसर्पिणीविषयम् । भावतः सकलरूपिद्रव्येषु प्रतिद्रव्यमसंख्यातपर्यायविषयम् ।

मनःपर्यवज्ञानं तु प्रमादरहितस्याऽऽमर्षाद्यन्यतमलब्धिधारिणः संयतस्य भवति । द्रव्यतः—संज्ञिपञ्चेन्द्रियमनोद्रव्यविषयम् । क्षेत्रतः—समक्षेत्रमात्रविषयम् । कालतः—अतीतानागतपल्लयोपमासंख्यातभागविषयम् । भावतो—मनोद्रव्यगतानन्दपर्यायविषयम् ॥४॥

કી, ક્ષાયોપશમિકત્વ કી एवं प्रत्यक्षत्व आदि की अपेक्षा से समानता हैं— तो भी स्वाम्यादि की अपेक्षा से भिन्नता है—अवधिज्ञान जो अविरतसम्प्रकृ दृष्टि है, उसको भी हो जाता है, द्रव्य की अपेक्षा यह समस्तरूपी पदार्थों को विषय करना है, क्षेत्र की अपेक्षा असंख्यात लोक इसका विषय माना गया है, काल की अपेक्षा यह अतीत अनागतकाल के असंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालों को जानता है, तथा भाव की अपेक्षा यह समस्तरूपी द्रव्यों में प्रतिद्रव्य की असंख्यात पर्यायों को जानता है । मनःपर्यवज्ञान अविरत अवस्थावाले जीव को नहीं होता है । उसमें भी प्रमत्त संयत का नहीं होता है किन्तु जो अप्रमत्त संयत है उसको होता है । उसमें भी आमर्ष आदि किसी एक लब्धिधारी के ही होता है । द्रव्य की अपेक्षा संज्ञी पंचेन्द्रियजीव के मनोद्रव्य को विषय करता है । क्षेत्र की

પશમિકત્વની અપેક્ષાએ અને પ્રત્યક્ષત્વ આદિની અપેક્ષાએ સમાનતા છે. પરંતુ કેટલીક બાબતોમાં તે અવધિજ્ઞાનથી ભુલું પડે છે.

અવધિજ્ઞાન અવિરત સમ્યક્દૃષ્ટિ જીવમાં પણ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે, દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તે સમસ્તરૂપી પદાર્થોને જોઈ શકે છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત લોક તેનો વિષય મનાય છે, કાળની અપેક્ષાએ તે અતીત અને અનાગતકાળના અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી કાળોને જાણે છે, તથા ભાવની અપેક્ષાએ તે સમસ્તરૂપી દ્રવ્યોમાંના પ્રત્યેક દ્રવ્યની અસંખ્યાત પદાર્થોને જાણે છે. મનઃપર્યવજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ અવિરત અવસ્થાવાળા જીવમાં થતી નથી, પરંતુ જે જીવ સંયત હોય છે તેને જ મનઃપર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. વળી પ્રત્યેક સંયત જીવને તે ઉત્પન્ન થાય છે એવો કોઈ નિયમ નથી. જેમ કે પ્રમત્ત સંયતને તે ઉત્પન્ન થતું નથી, પણ અપ્રમત્ત સંયતને જ ઉત્પન્ન થાય છે. અપ્રમત્ત સંયતમાં પણ આમર્ષ આદિ કોઈ એક લબ્ધિધારીને જ મનઃપર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવના મનોદ્રવ્યને તે વિષય કરે છે—જાણી શકે છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂ. ૧ જ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૨૯

(૫) કેવલજ્ઞાનમ્—કેવલમ્=એકમસહાયં જ્ઞાનાવરણીયકર્માત્મન્તક્ષયસમુદ્ભૂતમ્ અતીતાનાગતવર્તમાનધર્માસ્થિતસકલદ્રવ્યગુણવર્ધ્યવિષયકમપ્રતિપાતિજ્ઞાનં કેવલજ્ઞાનમ્ ॥૫॥

અધિકં જિજ્ઞાસુર્ભિન્નદિસૂત્રે મત્કૃતજ્ઞાનચન્દ્રિકાટીકાયાં વિલોકનીયમ્ ।

इत्थं शास्त्रस्यादावेव ज्ञानपञ्चकवर्णनेन मङ्गलं प्रदर्शितं भवति, सकलक्लेशो-
च्छित्तिमूलत्वेन ज्ञानस्य परममङ्गलत्वात् ॥सू० १॥

અપેક્ષા—ઇસકા વિષય સમયક્ષેત્ર માત્ર હૈં । કાલ કી અપેક્ષા—અતીત અનાગત કાલ કા—પલ્લોપમ કા અસંખ્યાત વાં ભાગ ઇસકા વિષય હૈં । ભાવ કી અપેક્ષા—ઇસકા વિષય મનોદ્રવ્ય સંબન્ધી અનંત પર્યાયે હૈં । કેવલજ્ઞાન—એક અસહાય જ્ઞાન કા નામ કેવલજ્ઞાન હૈં । યહ જ્ઞાન જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે અત્યન્ત ક્ષય સે હોતા હૈં । અન્ય જ્ઞાનોં કી તરહ યહ પ્રતિપાતી નહીં હૈં । ઇસકે વિષય કા અધિક વિસ્તાર નન્દીસૂત્ર કી જ્ઞાનચન્દ્રિકા નામ કી ટીકા મેં મૈનેં લિખા હૈં—સો જિજ્ઞાસુ મહાનુભાવ વહાં સે ઇસે દેખલેં ।

इस प्रकार से सूत्रकार ने शास्त्र की आदि में ही जो पांच प्रकार के ज्ञानों का वर्णन किया है उससे मंगल प्रदर्शित होता है। क्योंकि ज्ञान सकलक्लेशों की उच्छित्ति का मूलकारण है। अतः उसमें परम मंगल आती है । ॥ सूत्र० १ ॥

સમયક્ષેત્ર માત્રને જ તે વિષય કરનારું—અણુનારું—છે. કાળની અપેક્ષાએ અતીત (ભૂત) અને અનાગત (ભવિષ્ય) કાળના પલ્લોપમનો અસંખ્યાતનો ભાગ તેનો વિષય છે. ભાવની અપેક્ષાએ તેનો વિષય મનોદ્રવ્ય સંબન્ધી અનંત પર્યાયો છે.

(૫) કેવળજ્ઞાન—આ જ્ઞાન એવું છે કે જેમાં ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાની અપેક્ષા રહેતી નથી, જ્ઞાનવરણીય કર્મના આત્યન્તિક (સંપૂર્ણતઃ) ક્ષયથી આ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. તેનો વિષય, ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, આ ત્રણે કાળ સંબન્ધી સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેમની સમસ્ત (અનંત) પર્યાયો છે. અન્ય જ્ઞાનોની જેમ તે પ્રતિપ્રાપ્તિ (એક વખત પ્રાપ્ત થયા બાદ જેનો વિનાશ થાય એવું) નથી. કેવળજ્ઞાનનું વિસ્તૃત નિરૂપણ નન્દીસૂત્રની જ્ઞાનચન્દ્રિકા નામની એ લખેલી ટીકામાં કરવામાં આવ્યું છે, તો જિજ્ઞાસુ પાઠકેએ ત્યાંથી તે વાંચી લેવું.

આ પ્રકારે સૂત્રકારે શાસ્ત્રને પ્રારંભે જ પાંચ પ્રકારના જ્ઞાનોનું જે નિરૂપણ કર્યું છે તેનું કારણ એ છે કે જ્ઞાન પોતે જ મંગલરૂપ છે. સકલ ક્લેશોના ઉચ્છેદનમાં જ્ઞાન જ કારણભૂત બને છે. આ રીતે જ્ઞાનમાં પરમ મંગળતાનો સદ્ભાવ હોવાથી સૂત્રકારે શરૂઆતમાં જ તેની પ્રરૂપણ કરી છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

पञ्चविधेषु ज्ञानेषु श्रुतज्ञानस्यैव उद्देशसमुद्देशाद्यवसरेऽधिकारोऽस्ति, नेतरे-
पामिति बोधयितुमाह—

मूलम्—तत्थ चत्तारि नाणाइं ठप्पाइं ठवणिज्जाइं णो उद्दिंसन्ति,
णो समुद्दिंसन्ति, णो अणुण्णविज्जन्ति । सुयनाणस्स उद्देसो समुद्देसो
अणुण्णो अणुओगो य पवत्तइ ॥ सू० २ ॥

छा । तत्र चत्वारि ज्ञानानि स्थाप्यानि स्थापनीयानि नो उद्दिश्यन्ते, नो समुद्दि-
श्यन्ते, नो अनुज्ञाप्यन्ते । श्रुतज्ञानस्य उद्देशः समुद्देशः अनुज्ञा अनुयोगश्च प्रवर्तते ॥ सू० २ ॥

टीका—‘तत्थ चत्तारि’ इत्यादि—

तत्र=तेषु पञ्चविधेषु ज्ञानेषु चत्वारि—चतुःसंख्यकानि ज्ञानानि आभिनिवो-
दिकाऽवधिमनःपर्यवकेवलरूपाणि अन्तःकल्याणानि-न व्यवहारार्हाणि ‘ठप्पाइं’ स्था-
प्यानि उद्देशसमुद्देशाद्यवसरे अत एव ‘ठवणिज्जाइं’ स्थापनीयानि=अनधि-
कृतानि । न तेषामुद्देशादयः क्रियन्ते इति भावः ।

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि पांच प्रकार के जो ये ज्ञान हैं—
इनमें श्रुतज्ञान का ही उद्देश, समुद्देश आदि के अवसर में अधिकार है दूसरे
चार ज्ञानों का नहीं—“तत्थ चत्तारि”—इत्यादि । ॥ सू० २ ॥

शब्दार्थः—(तत्थ) इन पूर्वोक्त पांच प्रकार के ज्ञानों में (चत्तारि नाणाइं)
चार प्रकार के ज्ञान—मति—अवधि, मनःपर्यव और केवलज्ञान—(ठप्पाइं) उद्देश,
समुद्देश आदि के अवसर में व्यवहारयोग्य नहीं हैं । क्यों कि ये गुरु के
उपदेश की अपेक्षावाले नहीं हैं । इसलिये (ठवणिज्जाइं) ये स्थापनीय हैं—
अर्थात् इनके उद्देश आदि नहीं—किये गये हैं । इस विषय में ऐसा जानना
चाहिये कि श्रुतज्ञान ही वाचना आदि द्वारा अपने विषयभूत पदार्थों में

इसे सूत्रकार ने प्रकट करे छ के पांच प्रकारना के ज्ञान छ तेमांथी श्रुत-
ज्ञाननो न उद्देश, समुद्देश आदिने अवसरे अधिकार छ—अन्य चार ज्ञाननो नथी.

“तत्थ चत्तारि” इत्यादि—

शब्दार्थ—(तत्थ) पूर्वोक्त पांच प्रकारनां ज्ञानोमांथी (चत्तारि नाणाइं) चार
प्रकारनां ज्ञान ओटवे के मतिज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान अने केवलज्ञान
(ठप्पाइं) उद्देश, समुद्देश आदिना अवसरे व्यवहारयोग्य नथी. कारण के अरे
ज्ञानमां गुरुना उपदेशनी अपेक्षा रहेती नथी, तेथी (ठवणिज्जाइं) ते अरे ज्ञान
स्थापनीय छ. ओटवे के तेमना उद्देश आदि करवामां आवेल नथी आ विषयने
अनुलक्षिने ओवुं समजवुं जेठवे के श्रुतज्ञान न वाचना आदि द्वारा पेताना

इदमत्रावधेयम्--श्रुतज्ञानमेव हि वाचनादिना साक्षात् प्रवर्त्तकं च। अन्यानि तु यद्यपि पदार्थानां स्वरूपमवबोधयन्ति, तथापि श्रुतज्ञानमनाश्रित्य साक्षात् प्रवर्त्तयितुं निवर्त्तयितुं वा न समर्थानि, तस्मादिह तेषां नाधिकार इति। उक्तमेवार्थं विशदयन्नाह--(णो उद्दिस्सन्ति' इत्यादि। नो उद्दिश्यन्ते शिष्येभ्यो नोपदिश्यन्ते। नो समुद्दिश्यन्ते-एतानि स्थिरपरिचितानि कुरु इत्येवंरूपेण एतानि चत्वारि ज्ञानानि गुरुभिः शिष्यान् प्रति नोपदिश्यन्ते, अत एव एतानि नो अनुज्ञाप्यन्ते-एतानि सम्प्रगवधारय, अन्यथापि अध्यापय' इत्येवं रूपेण एतानि शिष्यान् प्रति नानुमोद्यन्ते।

अथ-1-आभिनिबोधिकज्ञानम् अवधि-आदिनि च ज्ञानानि स्थाप्यानि गुर्वनधीनत्वेन-देशाद्यविषयाणि, अतः स्थापनीयानि-अव्याख्येयानि। श्रुतज्ञानं तु साक्षात् प्रवर्त्तक होता हैं। यद्यपि अन्यज्ञान भी पदार्थों के स्वरूप का बोध कराते हैं, परन्तु वे श्रुतज्ञान का आश्रय लिये बिना अपने विषयभूत हेयोपादेय विषय से न साक्षात् रूप में निवर्त्तक होते हैं, और न उसमें प्रवर्त्तक होते हैं। इसलिये उन ज्ञानों का यहां उद्देश समुद्देश आदि में विचार नहीं किया गया है। इसी अर्थ को सूत्राग विशद रूप से विवेचन करने के लिये कहते हैं कि (णो उद्दिस्सन्ति णो समुद्दिस्सन्ति) ये चार ज्ञान गुरुजनों द्वारा शिष्यों के लिये उपदिष्ट नहीं होते हैं-और न गुरुजन उनसे ऐसा कहते हैं। कि तुम इनका स्थिररूप से परिचय करो (णो अणुणविज्जन्ति) इन्हें अच्छी तरह से निश्चित कर हृदय में धारण करो तथा दूसरों को भी इन्हें पढाओ अथवा-ये आभिनिबोधिक और अवधि आदि ज्ञान स्थाप्य हैं-गुरुजनों के ये आधीन नहीं हैं इस कारण उद्देश आदि विषयभूत नहीं हैं इसलिये स्थापनीय

विषयभूत पદાર્થોમાં સાક્ષાત્ પ્રવર્તક અને નિવર્તક હોય છે. જો કે અન્ય જ્ઞાન પણ પદાર્થોના સ્વરૂપનો બોધ કરાવે છે પણ, પરન્તુ તેઓ શ્રુતજ્ઞાનનો આધાર લીધા વિના પોતાના વિષયભૂત હેયોપાદેય વિષયથી સાક્ષાત્ રૂપે નિવર્તક પણ હોતાં નથી. અને તેમાં પ્રવર્તક પણ હોતાં નથી. તેથી તે જ્ઞાનોનો અહીં ઉદ્દેશ સમુદ્દેશ આદિમાં વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. એજ વિષયનું વિશદરૂપે વિવેચન કરવા નિમિત્તે સૂત્રકાર કહે છે કે-

(णो उद्दिस्सन्ति णो समुद्दिस्सन्ति) તે ચાર જ્ઞાન ગુરુજનો દ્વારા શિષ્યોને ઉપદિષ્ટ થતાં નથી, અને ગુરુજન તેમને એવું પણ કહેતા નથી કે તમે તેમનો સ્થિર રૂપે પરિચય કરો, (णो अणुणविज्जन्ति) તેમને સારી રીતે નિશ્ચય કરીને હૃદયમાં ધારણ કરો તથા અન્યને પણ તેનું અધ્યયન કરાવો.

અથવા-આભિનિબોધિક, અવધિજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન સ્થાપ્ય છે, તે ચાર જ્ઞાનો ગુરુજનોને

અનેકાર્થવાદતિગમ્भीરવાદ વિવિધમન્ત્રાદ્યતિશયસમ્પન્નત્વાચ્ચ ગુરુપદેશસાપેક્ષમ્, અત એવ ગુરોરન્તિકે ઉદ્દેશાદિવિધિના પરમકલ્યાણકારિ શ્રુતમેવ ગૃહ્યતે । આભિ-
નિબોધિકાદીનિ તુ તત્ત્વાદાવરણીયકર્મક્ષયક્ષયોપશમાભ્યાં રવત એવ જાયતે,
ન તુ ઉદ્દેશાદિક્રમપેક્ષન્તે । અત એવ-આભિનિબોધિકસ્ય અવધ્યાદીનાં ચ ઉદ્દેશ-
દાં ન ક્રિયન્તે, કિન્તુ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ઉદ્દેશઃ=ઉદ્દિગ્ધતે इत्युद्देशः=इदमध्ययनादि
ત્વયા પઠિતવ્યમિતિ ગુરોરુપદેશરૂપં વચનમ્ । સમુદ્દેશઃ=‘इदमधीतसूत्रादिकं स्थिर-
परिचितं कुरु’ इति ગુરોરુપદેશવચનમ્ । અનુજ્ઞા-‘इदं धारय अन्याश्च अध्यापयेति

हैं-अव्याख्येय हैं । परन्तु जो श्रुतज्ञान है वह तो अनेक अर्थवाला होने से,
अति गंभीरता युक्त होने से, और विविध प्रकार के मंत्रादिकों के अतिशय
से समन्वित होने से गुरुजनों के उपदेश की अपेक्षावाला है । इसलिये गुरु-
जन के समीप उद्देश आदिरूप विधिपूर्वक परम कल्याणकारी श्रुत ही ग्रहण
किया जाता है । अवशिष्ट जो आभिनियोगिक आदिक ज्ञान हैं वे तो अपने
२ आवरणीय कर्म के क्षयोपशम और क्षय से रवतः ही आविर्भूत हो जाया
करते हैं । ये उद्देश, समुद्देश आदिरूप क्रम की अपेक्षा अपनी आविर्भूति-
उत्पत्ति-में नहीं रखते हैं । इसलिये आभिनियोगिक ज्ञान और अवधिज्ञानों
के उद्देश आदि नहीं किये जाते हैं । किन्तु जो (सुयनाणस्स) श्रुतज्ञान है-
उसका ही (उद्देशो) उद्देश-इस अध्ययन आदि-को तुम्हें पढ़ना चाहिये इस
प्रकार का गुरु का उपदेशरूप वचन, (समुद्देशो) समुद्देश-ये पठित सूत्रादिक
वि मृत न हो जावे इसलिये इन्हें स्थिररूप से परिचित करो बार २ इनका
पाठ करो इस प्रकार का गुरु का उपदेशरूपवचन (अणुण्णा) अनुज्ञा हृदय

આધીન નથી, તે કારણે તે ચારે જ્ઞાન ઉદ્દેશ આદિના વિષયભૂત નથી. તેથી તે ચારે જ્ઞાનેના
સ્થાપનીય-અવ્યાખ્યેય કહેવામાં આવેલ છે. પરન્તુ શ્રુતજ્ઞાન તો અનેક અર્થવાળું
હોવાથી, અતિ ગંભીરતા યુક્ત હોવાથી, અને વિવિધ પ્રકારના મંત્રાદિકોના અતિ-
શયેથી સમન્વિત (યુક્ત) હોવાથી ગુરુજનોના ઉપદેશની અપેક્ષાવાળું છે. તે કારણે
ગુરુજનોની સમીપે ઉદ્દેશ આદિરૂપ વિધિપૂર્વક પરમ કલ્યાણકારી શ્રુત જ અહણ્ય
કરવામાં આવે છે. બાકીના આભિનિયોગિક આદિ જે ચાર જ્ઞાને છે તે તો પોતા
પોતાના આવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમ અને ક્ષયથી પોતાની બાતે જ અવિર્ભૂત
(પ્રકટ) થઇ બાધ છે. તે ચારે જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં આ ઉદ્દેશ સમુદ્દેશ આદિરૂપ
કર્મની અપેક્ષા રહેતી નથી. તેથી આભિનિયોગિક જ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાન આદિ
જ્ઞાનેના ઉદ્દેશ કરવામાં આવતા નથી. પરંતુ જે (સુયનાણ સ ઉદ્દેસો) શ્રુતજ્ઞાન
છે. તેના જ ઉદ્દેશ, (સમુદ્દેસો) સમુદ્દેશ, (અણુણ્ણા) અનુજ્ઞા (અણુઓનો ય) અને
અનુયોગ (પવત્તદ્) હોય છે-અન્ય જ્ઞાનેના ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ આદિ હોતા નથી.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા—મૂ. ૨ શ્રુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૩

શિષ્યં પ્રતિ ગુરોરુપદેશવચનમ્ । અનુયોગઃ—ભગવદુક્તાનુરૂપતા ચ પ્રવર્તતે । શ્રુત-
જ્ઞાનસ્યૈવ ઉદ્દેશઃ સમુદ્દેશઃ અનુજ્ઞા અનુયોગશ્ચ ભવતિ, નાન્યેષામિતિભાવઃ ॥સૂ.૦૨॥

મૂલમ—જઈ સુચનાણસ્સ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો અણુળ્ણા અણુઓગો
ય પવત્તઈ કિં અંગપવિટ્ટસ્સ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો અણુળ્ણા અણુઓગો
ય પવત્તઈ ? કિં અંગવાહિરસ્સ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો અણુળ્ણા અણુઓગો

મેં इनका धारणरूप संस्कार जमाओ, और दूसरों के लिये इन्हें पढ़ाओं इस प्रकार का गुरु का उपदेशरूपवचन, (अणुओगो य) और अनुयोग भगवदुक्तानुरूपतां (पवत्तइ) ये सब होते हैं । अन्य ज्ञानों के नहीं ।

ભાવાર્થ—શ્રુતજ્ઞાન કે અતિરિક્ત અવશિષ્ટ ચાર જ્ઞાનોં મેં ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુજ્ઞા ઓર અનુયોગ યે ચાર બાતેં નહીં હોતીં હૈં । ક્યોં કિં इन જ્ઞાનોં મેં ગુરુ કે ઉપદેશ સે જન્યત્વ કી અપેક્ષા નહીં હૈં । યે તો અપને ૨ આવરણ-કર્મોં કે ક્ષય ક્ષયોપશમ કે અનુસાર ઉત્પન્ન હોતે હૈં । યદ્યપિ તજ્ઞાન ભી અપને આવરણકર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ—ફિર ભી ઉસ મેં ગુરુ પદેશ કી અપેક્ષા સે જન્યતા માની ગઈ હૈ । અતઃ ઉસમેં ઉદ્દેશ આદિ હોતે હૈ । ॥સૂ.૦૨॥

આ અધ્યયન આદિનો તમારે અભ્યાસ કરવો જોઈએ, આ પ્રકારના ગુરુના ઉપદેશરૂપ વચનને ઉદ્દેશ કહે છે. આ પઠિત સૂત્રાદિ ભૂલી ન જવાય તે મ'ટે સ્થિર ચિત્તે તેમનો પરિચય કરો. વારંવાર તેનો પાઠ કરો, આ પ્રકારે । ગુરુના વચનને સમુદ્દેશ કહે છે.

હૃદયમાં આ સૂત્રને કઢી પણ વિસ્મૃત ન થાય એવી રીતે ધારણ કરો અને અન્યને તેનું અધ્યયન કરાવો, આ પ્રકારના ગુરુના ઉપદેશરૂપ વચનને અનુજ્ઞા કહે છે.

ભગવદુક્તાનુરૂપતાને અનુયોગ કહે છે.

ભાવાર્થ—શ્રુતજ્ઞાન સિવાયના જે ચાર જ્ઞાનો છે તેમાં ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુજ્ઞા અને અનુયોગનો—(આ ચાર વાતનો) સદ્ભાવ હોતો નથી, કારણ કે તે જ્ઞાનોની ઉત્પત્તિ ગુરુના ઉપદેશને લીધે સંભવી શકતી નથી. તે ચાર જ્ઞાનોની ઉત્પત્તિ તો ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે તે પ્રત્યેક જ્ઞાનના આવારક કર્મોનો ક્ષયોપશમ અથવા ક્ષય થઈ જાય છે, કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે જ્ઞાનવરણીય કર્મોનો સંપૂર્ણતઃ ક્ષયોપશમ થવાથી જ તે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. જો કે શ્રુતજ્ઞાન પણ તેનું આવરણ કરનારા કર્મોના ક્ષયોપશમથી જ ઉત્પન્ન થતું હોય છે. છતાં પણ તેમાં ગુરુના ઉપદેશની અપેક્ષાએ જન્યતા માનવામાં આવી છે. તેથી જ શ્રુતજ્ઞાનમાં ઉદ્દેશ સમુદ્દેશ આદિનો સદ્ભાવ રહે છે. ॥ સૂ. ૨ ॥

૩૪

અનુયોગદ્વારણ

ય પવત્તઈ ? અંગપવિટ્ઠસ્સ વિ ઉદેસો જાવ પવત્તઈ, અંગંગપવિટ્ઠસ્સ વિ ઉદેસો જાવ પવત્તઈ । ઇમં પુણ પટ્ટવણં પટ્ટુચ્ચ અંગંગપવિટ્ઠસ્સ અણુઓગો ॥ ૩ ॥

છાયા—યદિ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ઉદેશઃ, સમુદેશઃ, અનુજ્ઞા, અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે કિમ્ અજ્ઞપ્રવિષ્ટસ્ય ઉદેશઃ, સમુદેશઃ અનુજ્ઞા અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે ? કિમ્ અજ્ઞ-વાહ્યસ્ય ઉદેશઃ સમુદેશઃ અનુજ્ઞા, અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે ? અજ્ઞપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ઉદેશો યાવત્ પ્રવર્તતે, અનજ્ઞપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ઉદેશો યાવત્ પ્રવર્તતે । ઇદં પુનઃ પ્રસ્થાપનં પ્રતીત્ય અનજ્ઞપ્રવિષ્ટસ્ય અનુયોગઃ ॥૨૦ ॥૩॥

ટીકા—‘જઈ સુચનાણસ્સ’ ઇત્યાદિ—

યદિ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ઉદેશઃ સમુદેશઃ અનુજ્ઞા અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે તર્હિ સ ઉદેશાદિઃ કિમ્ અજ્ઞપ્રવિષ્ટસ્ય—દ્વાદશાજ્ઞાન્તર્ગતસ્યાચારાજ્ઞાદેઃ પ્રવર્તતે, કિં વા અનજ્ઞપ્રવિષ્ટસ્ય—અજ્ઞવાહ્યસ્ય દશવૈકલિકાદેઃ પ્રવર્તતે ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ગુરુ-રુક્ષસ્યતિ—‘અંગપવિટ્ઠસ્સ વિ’ ઇત્યાદિના । હે શિષ્ય ! અજ્ઞપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ઉદેશો

“જઈ સુચનાણસ્સ” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(જઈ) યદિ (સુચનાણસ્સ) શ્રુતજ્ઞાન મેં (ઉદેસો) ઉદેશ (સમુદેસો) સમુદેશ, (અણુણા) અનુજ્ઞા (ય) ઓર (અણુઓગો) અનુયોગ ઇન કી (પવત્તઈ) પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ તો (કિં) કયા (અંગપવિટ્ઠસ્સ) જો અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત હૈ ઉસમેં (ઉદેસો) ઇન ઉદેશ, (સમુદેસો) સમુદેશ, (અણુણા) અનુજ્ઞા (ય) ઓર (અણુઓગો) અનુયોગ કી (પવત્તઈ) પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ ? કયા અથવા જો (અંગવાહિરસ્સ) અંગ વાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન હૈ ઉસમેં (ઉદેસો સમુદેસો અણુણા અણુઓગો ય પવત્તઈ) ઉદેશ, સમુદેશ, અનુજ્ઞા ઓર અનુયોગ ઇનકી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ કયા ? ઉત્તર—(અંગપ-વિટ્ઠસ્સ) અંગ પ્રવિષ્ટ જો આચારાજ્ઞાદિ શ્રુત હૈ ઉનમેં (વિ) મી (ઉદેસો ય જાવ

“જઈ સુચનાણસ્સ” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(જઈ) જો (સુચનાણસ્સ) શ્રુતજ્ઞાનમાં (ઉદેસો) ઉદેશ, (સમુદેસો) સમુદેશ, (અણુણા) અનુજ્ઞા (ય) અને (અણુઓગો પવત્તઈ) અનુયોગની પ્રવૃત્તિ (સદ્ભાવ) થાય છે, તો (કિં અંગપવિટ્ઠસ્સ) શું જે અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત છે તેમાં (ઉદેસો, સમુદેસો, અણુણા ય અણુઓગો પવત્તઈ) એ ઉદેશ, સમુદેશ, અનુજ્ઞા અને અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે ? કે જે (અંગવાહિરસ્સ) અંગવાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન છે તેમાં (ઉદેસો, સમુદેસો અણુણા અણુઓગો ય પવત્તઈ) ઉદેશ, સમુદેશ, અનુજ્ઞા અને અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે ?

ઉત્તર—(અંગપવિટ્ઠસ્સ વિ ઉદેસો જાવ પવત્તઈ) આચારાંગ આદિ જે અંગ

અનુયોગવન્દિકા ટીકા. સૂ. ૪ શ્રુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૫

યાવત્ પ્રવર્ત્તે, અનંગપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ચ ડ શો યાવત્ પ્રવર્ત્તે । અત્ર શાસ્ત્રે પુનઃ
ઈદં=પ્રસ્તુતં પ્રસ્થાપનં—પ્રારમ્ભં પ્રતીત્ય આશ્રિત્ય અનંગપ્રવિષ્ટસ્ય અનુયોગઃ પ્રવર્ત્તે।સૂ.૩

મૂલમ્—જહ અંગપવિટ્વસ્સ અણુઓગો, કિં કાલિયસ્સ અણુ-
ઓગો ? ઉક્કાલિયસ્સ અણુઓગો ? । કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો,
ઉક્કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો । ઇમં પુણપટ્ટવણં પટ્ટુચ્ચ ઉક્કાલિયસ્સ
અણુઓગો ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—યદિ અનંગપ્રવિષ્ટસ્ય અનુયોગઃ, કિં કાલિકસ્ય અનુયોગઃ ? ઉક્કા-
લિકસ્યાનુયોગઃ ? કાલિકસ્યાપિ અનુયોગઃ, ઉક્કાલિકસ્યાપિ અનુયોગઃ । ઈદં
પુનઃ પ્રસ્થાપનં પ્રતીત્ય ઉક્કાલિકસ્યાનુયોગઃ ॥ સૂ. ૪-॥

ટીકા—‘જહ’ इत्यादि—

यदि अनङ्गप्रविष्टस्य अनुयोगः किं कालिकस्यानुयोगः ? किं वा उत्का-
लिकस्यानुयोगः ? इति शिष्यप्रश्नः । तत्र-कालेन निर्वृत्तं कालिकम् । काले प्रथम-

पवि तइ] इन उद्देश समुद्देश आदि की प्रवृत्ति होती है, तथा “अंगपविट्ठस्स वि जा’
अनंग प्रविष्ट दशवैकालिक आदि सूत्र हैं उनमें भी (उद्देशो जाव पवत्तइ) उद्देश
आदि की प्रवृत्ति होती है । (इमं पुण पट्टवणं पट्टुच्च) इस शास्त्र में यह प्रारंभ की
अपेक्षा लेकर अनंग प्रविष्ट में अनुयोग प्रवर्तित होता है ऐसा कहा गया है । ॥सूत्र३॥

“जह अंगपविट्ठस्स इत्यादि ।”

शब्दार्थ—(जह) यदि (अंगपविट्ठस्स अणुओंगो) अनंग प्रविष्ट श्रुत में
अनुयोग की प्रवृत्ति होती है तो (कि) क्या (कालियस्स अणुओंगो ?) कालिक
में अनुयोग प्रवृत्ति होती है क्या ? या (उक्कालियस्स अणुओंगो) उत्कालिक

પ્રવિષ્ટ શ્રુત છે તેમાં ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુસા અને અનુયોગ પ્રવર્તે છે, તથા
(અંગપવિટ્ઠસ વિ ઉદ્દેસો જાવ પવત્તइ) દશ વેકાલિક આદિ જે અનંગપ્રવિષ્ટ
શ્રુત છે તેમાં પણ ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુસા અને અનુયોગ પ્રવર્તે છે, આ રીતે
અંગપ્રવિષ્ટ અને અંગખાલ્ય, એ બંને પ્રકારના શ્રુતમાં ઉદ્દેશ આદિ ચારેનો સદ્ભાવ
સમજવો. (ઇમં પુણ પટ્ટવણં પટ્ટુચ્ચ) આ શાસ્ત્રમાં આ પ્રારંભની અપેક્ષાએ એવું
કહેવામાં આવ્યું છે કે અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુતમાં અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

“જહ અંગપવિટ્ઠસ” इत्यादि— ॥ સૂ. ૪ ॥

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન (જહ અંગપવિટ્ઠસ અણુઓગો) જે અનંગપ્રવિષ્ટ શ્રુતમાં અનુ-
યોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે, તે (કિં કાલિયસ્સ અણુઓગો ?) શું કાલિક શ્રુતમાં

ચરમપૌરૂષીલક્ષણે અસ્વાધ્યાયકાલં વિહાય પઠયતે યત્ તત્કાલિકમ્ । તચ્ચ ઉત્તરાધ્યયનાદિકં, યદિહ દિવસરાત્રિ પ્રથમચરમપૌરૂષીદ્વયે એવ પઠયતે । ઊર્ધ્વકાલાત્ પઠયતે, ઇત્યુત્કાલિકમ્ । અસ્વાધ્યાયકાલં વિહાય દિવસે રાત્રૌ ચ સર્વસ્મિન્ યામે યત્ પઠયતે તદુત્કાલિકમિત્યર્થઃ કાલિકસૂત્રાણિ— (૧) ઉત્તરાધ્યયન—(૨) દશાશ્રુતસ્કન્ધ—(૩) બૃહત્કલ્પ—(૪) વ્યવહાર—(૫) નિશીથ—(૬) જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ—(૭) ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ—(૮) નિરયાવલિકા—(૯) કલ્પાવતંસિકા—(૧૦) પુષ્પિતા (૧૧) પુષ્પચૂલિકા—(૧૨) વૃષ્ણિદશાદીનિ અઙ્ગવાહ્યાનિ, આચારાઙ્ગાદીનિ

મેં અનુઓગ કી પ્રવૃત્તિ હાતી હૈ ? (કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો ઉત્કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો) ઉત્તરઃ—કાલિકકા મી અનુઓગ હોતા હૈ ઓર ઉત્કાલિક કા મી અનુઓગ હોતા હૈ । (ઈમં પુણ પઠવણં પઠુચ્ચ ઉત્કાલિયસ્સ અણુઓગો) ઇસ શાસ્ત્ર મેં યહ પ્રારંભ કી અપેક્ષા લેકર ઉત્કાલિક કા અનુઓગ કહા હૈ ।

ભાવાર્થ—અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુત કે અનેક ભેદ કહે ગયે હૈ—અનમેં કાલિક ઉત્કાલિક શ્રુત હૈ । પ્રથમ પૌરૂષી ઓર અન્તિમ પૌરૂષીરૂપ કાલ મેં જો અસ્વાધ્યાયકાલ કો છોડકર પઢા જાતા હૈ. વહ કાલિક શ્રુત હૈ । જૈસે—ઉત્તરાધ્યય ૧, દશાશ્રુતસ્કન્ધ ૨, બૃહત્કલ્પ ૩, વ્યવહાર ૪, નિશીથ, ૫ જંબૂદ્વીપ પ્રજ્ઞપ્તિ ૬, ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ ૭, નિરયાવલિકા ૮, કલ્પાવતંસિકા ૯, પુષ્પિતા ૧૦, પુષ્પચૂલિકા ૧૧, વૃષ્ણિદશા આદિ યે સબ અંગવાહ્ય શ્રુત હૈ વે કાલિક શ્રુત હૈ । તથા આચારા-

અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે, કે (ઉત્કાલિયસ અણુઓગો) ઉત્કાલિક શ્રુતમાં અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે ?

ઉત્તર—(કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો ઉત્કાલિયસ વિ અણુઓગો) કાલિક શ્રુતમાં પણ અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે અને ઉત્કાલિક શ્રુતમાં પણ અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે. (ઈમં પુણ પઠવણં પઠુચ્ચ ઉત્કાલિયસ અણુઓગો) આ શાસ્ત્રમાં આ પ્રારંભની અપેક્ષાએ ઉત્કાલિકનો અનુઓગ કહ્યો છે.

ભાવાર્થ—અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુતના અનેક ભેદ કહ્યા છે. તેમાંના બે ભેદો આ પ્રમાણે છે—(૧) કાલિકશ્રુત અને (૨) ઉત્કાલિક શ્રુત.

પહેલી પૌરૂષી (પહેલો પ્રહર) અને છેલ્લી પૌરૂષી (છેલ્લો પ્રહર) ૩૫ કાળમાં અસ્વાધ્યાયકાળ બે કહ્યો છે તેટલા કાળને છોડીને, જેનું અધ્યયન કરવામાં આવે છે, એવા શ્રુતને કાલિક શ્રુત કહે છે. કાલિક શ્રુત નીચે પ્રમાણે કહ્યાં છે—

(૧) ઉત્તરાધ્યયન (૨) દશાશ્રુતસ્કન્ધ, (૩) બૃહત્કલ્પ, (૪) વ્યવહાર, (૫) નિશીથ (૬) જંબૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ, (૭) ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ, (૮) નિરયાવલિકા (૯) કલ્પાવતંસિકા, (૧૦) પુષ્પિતા, (૧૧) પુષ્પચૂલિકા (૧૨) વૃષ્ણિદશા વગેરે બે અંગવાહ્ય શ્રુત છે તેમનો કાલિકશ્રુતમાં સમાવેશ થાય છે, તથા આચારાંગાદિ બે ૧૧ અંગ છે તેમનો પણ

જનુભૌમચન્દ્રિકા ટીકા સૂ. ૪ શ્રુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૭

एकादशज्ञानि च । इतोऽतिरिक्तान्यपि कालिकसूत्राणि नन्दिसूत्रे निर्दिष्टानि सन्ति, विच्छिन्नत्वान्नेह तानि निर्दिश्यन्ते । उत्कालिकसूत्राणि—(१) दशवैकालिकौ—(२) पपातिक—[३] राजप्रश्नीय—(४) जीवाभिगम—(५) प्रज्ञापना(६)—नन्दीसूत्रा—[७] अनुयोगद्वारा—(८) आवश्यक—(९) सूर्यप्रज्ञप्ति सूत्राणि । इतोऽन्यान्यप्युत्कालिकसूत्राणि नन्दिसूत्रे निर्दिष्टानि सन्ति, विच्छिन्नत्वान्नेह तानि निर्दिश्यन्ते । उत्तरयति—कालिकस्याऽप्यनुयोगः, उत्कालिकस्याप्यनुयोगः । पुनरत्र शास्त्रे इदं=प्रस्तुतं प्रस्थापनं=प्रारम्भं प्रतीत्य=आश्रित्य, उत्कालिकस्यानुयोगः ॥ सू. ४ ॥

મૂલમ્—જઈ ઉત્કાલિકસસ અણુઓગો, કિં ઓવસ્સગસસ અણુઓગો? આવસ્સગવડરિત્તસસ અણુઓગો? આવસ્સગસસ વિ અણુઓગો,

गादि जो ११ अंग हैं ये भी कालिकश्रुत हैं । इन से अतिरिक्त और भी कालिक सूत्र हैं जिनका कथन नंदिसूत्र में किया गया है । विच्छिन्न हो जाने के कारण हम उन्हें यहां निर्दिष्ट नहीं करते हैं । (१) दशवैकालिक, (२) औपपातिक, (३) राजप्रश्नीय (४) जीवाभिगम, (५) प्रज्ञापना (६) नन्दीसूत्र (७) अनुयोगद्वार (८) आवश्यक, (९) सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्र, ये सब उत्कालिकमूत्र हैं । इनसे अतिरिक्त और भी उत्कालिक सूत्र है । जिन्हें नंदिसूत्र में निर्दिष्ट किया गया है, परन्तु वे सब विच्छिन्न हो चुके हैं अतः हम उन्हें यहां प्रकट नहीं करते हैं । उत्कालिक सूत्र अस्वाध्यायकाल को छोड़कर दिन में और रात्रि में जब चाहे तब हरएक समय में पढ़े जाते हैं । इस शास्त्र में उत्कालिक का अनुयोग ही प्रस्तुत होने से प्रकट किया गया है । ॥सूत्र ४॥

કાલિકશ્રુતમાં ૧૧ સમાવેશ થાય છે. તે સિવાય બીજાં કેટલાક કાલિકસૂત્રો પણ છે, જેમનું કથન નન્દિસૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. તે સૂત્રો વિચ્છિન્ન થઈ ગયેલા હોવાથી અહીં તેમનો નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો નથી.

હવે ઉત્કાલિક સૂત્રોનાં નામ આપવામાં આવે છે—

(૧) દશવૈકાલિક, (૨) ઔપપાતિક, (૩) રાજપ્રશ્નીય, (૪) જીવાભિગમ, (૫) પ્રજ્ઞાપના, (૬) નન્દિસૂત્ર, (૭) અનુયોગદ્વાર, (૮) આવશ્યકસૂત્ર અને (૯) સૂર્યપ્રજ્ઞાપ્તિસૂત્ર, આ બધાં સૂત્રોનો ઉત્કાલિક શ્રુતમાં સમાવેશ થાય છે. આ સિવાય બીજાં કેટલાક ઉત્કાલિક સૂત્રો છે, જેમનાં નામ નન્દિસૂત્રમાં આપવામાં આવ્યાં છે. પરન્તુ તે સૂત્રો વિચ્છિન્ન થઈ ગયેલાં હોવાથી તેમનાં નામો અહીં પ્રકટ કર્યાં નથી. અસ્વાધ્યાય કાળ સિવાયના કોઈ પણ કાળે—દિવસે અથવા રાત્રે, જ્યારે ઇચ્છા થાય ત્યારે ઉત્કાલિકસૂત્રોનું અધ્યયન થઈ શકે છે. આ શાસ્ત્રમાં ઉત્કાલિકનો અનુયોગ જ પ્રસ્તુત હોવાથી પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. ॥ સૂત્ર ૪ ॥

૩૮

અનુયોગદ્વારક્રમે

આવસ્સગવહરિત્તસ્સ વિ અણુઓગો ! इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च आव-
स्सगस्स अणुओगो ॥ सू० ५ ॥

છાયા-યદિ ઉત્કાલિકસ્ય અનુયોગઃ, કિમાવશ્યકસ્ય અનુયોગઃ ? આવ-
શ્યકવ્યતિરિક્તસ્ય અનુયોગઃ ? આવશ્યકસ્યાપિ અનુયોગઃ, આવશ્યકવ્યતિરિક્ત-
સ્યાપિ અનુયોગઃ । इदं पुनःप्रधानं प्रतीत्य आवश्यकस्य अनुयोगः ॥सू० ५॥

ટીકા-‘જઈ’ ઇત્યાદિ-

यदि उत्कालिकस्य अनुयोगः, किमावश्यकस्य अनुयोगः ? आवश्यक
व्यतिरिक्तस्य वाऽनुयोगः ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति-‘आवस्सगस्स वि’
इत्यादिना । अनुयोग आवश्यकस्यापि भवति, आवश्यकव्यतिरिक्तस्यापि भवति ।

“જઈ ઉત્કાલિયસ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ-‘(જઈ) યદિ (ઉત્કાલિયસ) ઉત્કાલિક શ્રુત કા (અણુઓગો) અનુયોગ હોતા હૈ તો (કિ) કયા (આવસ્સગસ અણુઓગો ?) આવશ્યક કા અનુયોગ હોતા હૈ ? યા (આવ સગવહરિત્તસ્સ અણુઓગો) આવશ્યક સે વ્યતિ-
રિક્ત કા અનુયોગ હોતા હૈ ? ઉત્તર-(આવસ્સગસ્સ વિ અણુઓગો) આવશ્યક કા બી અનુયોગ હોતા હૈ । ઓર (આવ સગવહરિત્તસ વિ અણુઓગો) જો આવશ્યક સે ભિન્ન હૈ ઉનકા બી અનુયોગ હોતા હૈ । (इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च आव-
स्सगस्स अणुओगो) इस शास्त्र में यह प्रारम्भ की अपेक्षा लेकर आवश्यक
का अनुयोग कहा है ।

ભાવાર્થ-‘શિષ્ય પૂછ રહા હૈ કિ હે ભદ્રંત ! યદિ ઉત્કાલિક શ્રુત કા અનુયોગ હોતા હૈ તો કિસ ઉત્કાલિક શ્રુત કા-આવશ્યક કા યા આવશ્યક

“જઈ ઉત્કાલિયસ” ઇત્યાદિ-

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(જઈ ઉત્કાલિયસ્સ અણુઓગો) જે ઉત્કાલિકશ્રુતનો અનુ-
યોગ થાય છે, તો (કિ આવસ્સગસ્સ અણુઓગો) શું આવશ્યકનો અનુયોગ થાય છે કે
(આવસગસગવહરિત્તસ અણુઓગો ?) આવશ્યકથી ભિન્ન હોય એવાં શ્રુતનો
અનુયોગ થાય છે.

ઉત્તર-(આવસ્સગસ્સ વિ અણુઓગો) આવશ્યકનો પણ અનુયોગ થાય છે, અને
(આવસ્સગવહરિત્તસ્સ વિ અણુઓગો) જે આવશ્યકથી ભિન્ન છે તેમનો પણ અનુ-
યોગ થાય છે. (इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च आव-
स्सगस्स अणुओगो) આ શાસ્ત્રમાં આ
પ્રારંભની અપેક્ષાએ આવશ્યકનો અનુયોગ કહ્યો છે.

ભાવાર્થ-‘શિષ્ય અહીં એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “હે ભગવન ! જે ઉત્કાલિક
શ્રુતનો અનુયોગ થાય છે, તો કયા ઉત્કાલિક શ્રુતનો અનુયોગ થાય છે ? શું આવશ્યકનો
અનુયોગ થાય છે ? કે આવશ્યક સિવાયના જે ઉત્કાલિક શ્રુત છે તેમનો અનુયોગ થાય છે ?”

अनुयोगचन्द्रिका टीका. ४ श्रुतज्ञानस्वरूपनिरूपणम्

३९

पुनरत्र शास्त्रे इदं—प्रस्तुतं परथापनं—प्रारम्भं प्रतीत्य—आश्रित्य आवश्यक—प्रमणैः
श्रावकश्रोत्रभयकालमवश्यकरणीयस्य सामायिकादिषडध्ययनात्मकस्य सकलसामाचा-
रीमूलस्यावश्यकसूत्रस्यानुयोगः प्रवर्तते । यद्यप्यावश्यकसूत्रे उद्देशसमुद्देशानुज्ञा
वर्तन्ते तथाऽप्यत्र सूत्रे उद्देशादिकं त्रयं विहायानुयोग एवाधिक्रियते, तस्यावसरप्राप्त
त्वात् । अनुयोगस्य वक्तव्यताचैवम्—

“निक्खेवेगट्ठं निरुत्तिं विही, पवित्तीं यं केण वा कस्स ? ।

तद्धारं भेयलक्षणं,—तदरिहं परिसां यं सुत्तथो ॥ ”

छाया—निक्षेप एकार्थो निरुक्तिः विधिः प्रवृत्तिश्च केन वा कस्य ।

तद्द्वाराणि भेदा लक्षणं, तदर्हा परिषच्च सूत्रार्थः ॥ इति ॥

अत्र व्याख्या—निक्षेपः=नामस्थापनादिकः । एकार्थः=पर्यायः—अनुयोगो

से अतिरिक्त का—तब उत्तर देते हुए आचार्य कहते हैं कि इन दोनों का
भी अनुयोग होता है । यहां पर उद्देश, समुद्देश और अनुज्ञा का कथन कर
के सूत्रकार ने जो आवश्यक में केवल अनुयोग का कथन किया है वह अनु-
योग को अवसर प्राप्त होने से किया है । यह आवश्यक साधु साध्वी और
श्रावक श्राविका को प्रातः और सायंकाल दोनों समय अवश्य करने योग्य
कहा गया है । सामायिक आदि के भेद से यह आवश्यक छह प्रकार का है ।
इसके ऊपर षडध्ययनात्मक एक स्वतन्त्र सूत्र रचा गया है—जिसका नाम आव-
श्यक सूत्र है । यह सकल सामाचारी का मूल कारण है । अनुयोग के विषय
में वक्तव्यता इस प्रकार से है—

“निक्खेवेगट्ठं इत्यादि” नाम स्थापना आदिरूप से अनुयोग का कहना
यह अनुयोग का निक्षेप है । अनुयोग के पर्यायवाची शब्दों को कहना—जैसे

आ प्रश्नो उत्तर आपतां आचार्यो कहे छि के “आ जन्नेनो अनुयोग छे ?”

अही उद्देश, समुद्देश अने अनुज्ञातुं कथन करीने सूत्रकारे आवश्यकमां डेवण
अनुयोगतुं जे जे कथन कथुं छे ते अनुयोगना प्राप्त अवसरनी अपेक्षाये कथुं
छे. आ आवश्यक साधु साध्वी, श्रावक अने श्राविकाये प्रातः अने सायंकाल, जे
जन्ने समये करवा योग्य कहेल छे. सामायिक आदिना वेदथी आ आवश्यक छ
प्रकारनो कह्यो छे. आ विषयने अनुलक्षीने छ अध्ययनवाणुं जेक स्वतंत्र सूत्र
रचवामां आणुं छे. ते सूत्रनुं नाम “आवश्यक सूत्र” छे. ते सकल सामाचारीनुं
भूण कारण छे. अनुयोगना विषयमां आ प्रमाणे वक्तव्यता छे,

“निक्खेवेगट्ठं” इत्यादि—नाम, स्थापना आदिरूपे अनुयोगतुं कथन थनुं तेनुं
नाम अनुयोगनो निक्षेप छे. अनुयोगना पर्यायवाची शब्दोनुं कथन करवुं—जेम के

નિયોગો ભાષા વિભાષા વાર્તિકં ચૈતેનુયોગ પર્યાયાઃ । નિરુક્તિઃ=નિર્વચનમ્, સા
 ચૈવમ્-તીર્થંકરપ્રરૂપિતાર્થસ્ય ગણધરોક્તશબ્દસમૂહરૂપસૂત્રેણ સહ અનુ=અનુકૂલો
 નિયતો વા યોગઃ સમ્બન્ધોનુયોગઃ । અનુયોગશબ્દસ્ય વિસ્તૃતવ્યાખ્યા-ઉપા-
 સકદશાસૂત્રસ્ય મત્કૃતાયામગાર્ધર્મસંજીવન્યાં ટીકાયાં વિલોકનીયા । વિધિઃ=
 સૂત્રાર્થવથનવિધિઃ । તત્ર-ગુરુણા પ્રથમં શિષ્યેભ્યઃ સૂત્રાર્થો વક્તવ્યઃ । તદનુ સોઽર્થો
 નિર્યુક્તિમિશ્રો વક્તવ્યઃ । સૂત્રે નિર્યુક્તાનાં-નિશ્ચયેન યુક્તાનામેષાર્થાનાં યુક્તિપુરસઃ મર્થઃ
 શિષ્યેભ્યો વક્તવ્ય इत्यर्थः । ततः पुनरपि प्रसङ्गानुप्रसङ्गागतः सर्वोऽप्यर्थो वाच्यः । तदुक्तम्—
 “सुचत्थो खलु पढमो वीयो निज्जुत्तिमीसिओ भणिओ ।
 तइओ य निरवसेसो, एस विही होइ अणुओगे ॥”

અનુયોગ, નિયોગ, ભાષા, વિભાષા, વાર્તિકં યહ શબ્દ અનુયોગ કે પર્યાયવાચક
 હૈં । નિરુક્તિપૂર્વક અનુયોગ વા અર્થ કહના યહ અનુયોગ કી નિરુક્તિ હૈં ।
 હસ મૈં તીર્થંકરોં દ્વારા પ્રરૂપિત ઋર્થ કા ગણધરોક્ત શબ્દ સમૂહરૂપ સૂત્ર કે સાથ
 અનુકૂલ અથવા નિયત સંબન્ધ પ્રવટ્ કરના હોતા હૈં । સૂત્રાર્થ કહ ને કી પદ્ધતિ
 કા નામ વિધિ હૈં । હસમૈં સર્વ પ્રથમ ગુરુ કો શિષ્ય કે લિયે સૂત્ર કા અર્થ
 સિખલાને કા વિધાન હૈં । બાદ મૈં હસ શિક્ષિત અર્થ કો નિર્યુક્તિ સે મિશ્રિત
 કર શિષ્ય કો સિખલાના ચાહિયે અર્થાત્ નિશ્ચયયુક્ત પદાર્થોં કા હી-અર્થાત્
 વીતરાગ કથા સે જિન પદાર્થોં કા પદોં કે અર્થોં કા ગુરુ કે
 દ્વારા શિષ્યને નિશ્ચય કર લિયા હૈં પૈસે હી પદાર્થોં કા યુક્તિ પ્રદાનપૂર્વક
 શિષ્ય કો ઓર અર્થ કહના ચાહિયે, હસકે બાદ પ્રસંગ અનુપ્રસંગ કો લેકર
 ઓર મી જો ૨ અર્થ હોતા હો—હસ સબ કો પ્રવટ્ કરના ચાહિયે—હન સબ

અનુયોગ, નિયોગ, ભાષા, વિભાષા વાર્તિક, આ બધા પદો અનુયોગના પર્યાયવાચક
 શબ્દો છે. નિરુક્તિપૂર્વક અનુયોગનો અર્થ કહેવો તેનું નામ “અનુયોગ નિરુક્તિ
 દ્વર્ષક અનુયોગનો અર્થ કહેવો તેનું નામ “અનુયોગની નિરુક્તિ” છે. તેમાં તીર્થંકરો
 દ્વારા પ્રરૂપિત અર્થનો ગણધરોક્ત શબ્દસમૂહરૂપ સૂત્રની સાથે અનુકૂળ અથવા નિયત
 સંબંધ પ્રકટ કરવાનો હોય છે. સૂત્રાર્થ કહેવાની પદ્ધતિનું નામ વિધિ છે. તેમાં
 શુરૂએ સૌથી પહેલાં તે શિષ્યને સૂત્રનો અર્થ શિખવવો જોઈએ, એવું વિધાન છે.
 ત્યારબાદ શિખવવામાં આવેલા તે અર્થને નિર્યુક્તિથી મિશ્રિત કરીને શિષ્યને શિખ-
 વવો જોઈએ. એટલે કે નિશ્ચયયુક્ત પદાર્થોના જ [વીતરાગ દ્વારા પ્રરૂપિત જે પદાર્થોના
 પદોના અર્થોના ગુરુની મદદથી શિષ્યે નિશ્ચય કરી લીધો હોય એવાં જ
 પદાર્થોના] યુક્તિ પ્રદાનપૂર્વક જે કોઈ બીજો અર્થ થતો હોય તે પણ શિષ્યને કહેવો
 જોઈએ, ત્યારબાદ પ્રસંગ અને અનુપ્રસંગને અનુલક્ષીને તેના બીજાં જે જે અર્થ
 થતાં હોય તે સઘળાં અર્થ પણ પ્રકટ કરવા જોઈએ. આ બધી બાબતોને અનુયોગનાં

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સ્વ. ૫ શ્રુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૧

છાયા-સત્ત્વર્યઃ સ્વલુ પ્રથમો, દ્વિતીયો નવૃત્તિમિશ્રિતો મળિતઃ ।

તૃતીયશ્ચ નિરવશેષઃ, એષ વિધિર્ભવત્યનુયોગો ॥ इति ॥

વિસ્તરતઃ વચ્ચે । તથા-અનુયોગઃ પ્રવૃત્તિઃ અત્ર ચત્વારો મઙ્ગાઃ । તત્ર પ્રથમો મઙ્ગઃ-ઉચ્ચમી ગુરુઉચ્ચમી શિષ્યઃ । દ્વિતીયો મઙ્ગઃ-ઉચ્ચમી ગુરુઅનુચમી શિષ્યઃ । તૃતીયો મઙ્ગઃ-અનુચમી ગુરુઉચ્ચમી શિષ્યઃ । ચતુર્થો મઙ્ગઃ-અનુચમી ગુરુઅનુચમી શિષ્યઃ । અત્ર-પ્રથમમઙ્ગે-અનુયોગઃ સર્વથા પ્રવૃત્તિર્ભવતિ, ચતુર્થમઙ્ગે-તુ સર્વથા નૈવ ભવતિ । દ્વિતીય તૃતીયયોસ્તુ કદાચિત્ પ્રવૃત્તિર્ભવતિ ત કદાચિન્નાપિ ભવતિ । તથા-અનુયોગઃ કેન કર્તવ્યઃ ? इति प्रोच्यते-

કા અનુયોગ મેં સમાવિષ્ટ હૈ । યહી વાત તદુક્ત કરકે “સુત્તથો” ઇત્યાદિ-ગાથા દ્વારા પુષ્ટ કી હૈ । વિધિ સંબન્ધી વિસ્તાર અન્ય શાસ્ત્રોં મેં લિખા હૈ । અતઃ જિજ્ઞાસુ જન ઇસ વિષય કો વહાં સે જાન લેવેં અનુયોગ કી પ્રવૃત્તિ મેં ચાર મંગ હૈ—વે ઇસ પ્રકાર સે હૈ-

ઉચ્ચમી ગુરુ ઉચ્ચમી શિષ્ય યહ પ્રથમ મંગ હૈ । ઉચ્ચમી ગુરુ અનુચમી શિષ્ય યહ દ્વિતીય મંગ હૈ । અનુચમી ગુરુ ઉચ્ચમી શિષ્ય યહ તીસરા મંગ હૈ । અનુચમી ગુરુ અનુચમી શિષ્ય યહ ચૌથા મંગ હૈ । ઇન મેં સે જો પ્રથમ મંગ હૈ ઉસમેં તો અનુયોગ કી સર્વથા પ્રવૃત્તિ હોના નિશ્ચિત હૈ । ચૌથે મંગ મેં અનુયોગ કી પ્રવૃત્તિ વિલકુલ નહીં હોતી હૈ । દ્વિતીય ઓર તૃતીય મંગ મેં અનુયોગ કી પ્રવૃત્તિ કમી હોતી હૈ ઓર કમી નહીં મી હોતી હૈ ।

સંભવી શકાય છે એક વાત “સુત્તથો” ઇત્યાદિ ગાથાઓ દ્વારા પુષ્ટ કરવામાં આવી છે. વિધિ સંબન્ધી વિસ્તૃત કથન અન્ય શાસ્ત્રોમાં આપવામાં આવેલું છે, તો જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ આ વિષયનું વિશેષ કથન ત્યાંથી વાંચી લેવું જોઈએ. અનુયોગની પ્રવૃત્તિમાં નીચે પ્રમાણે ચાર ભાગોએ (વિકલ્પો) છે—

(૧) ઉચ્ચમીગુરુ અને ઉચ્ચમી શિષ્ય, આ પહેલો ભાગો છે.

(૨) ઉચ્ચમી ગુરુ અને નિઃચમી શિષ્ય, આ બીજો ભાગો છે.

(૩) અનુચમી ગુરુ અને ઉચ્ચમી શિષ્ય, ત્રીજો ભાગો છે.

(૪) અનુચમી ગુરુ અને અનુચમી શિષ્ય, આ ચોથો ભાગો છે.

આ ચાર વિકલ્પોમાંથી જે પહેલો વિકલ્પ ખતમ્યો છે તે વિકલ્પ પ્રમાણેની પરિસ્થિતિમાં તો અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થવાનું કાર્ય સર્વથા નિશ્ચિત જ હોય છે. બાકી વિકલ્પમાં ખતાવ્યા પ્રમાણેની જગ્યા પર પરિસ્થિતિ હોય છે, ત્યારે અનુયોગની પ્રવૃત્તિ બિલકુલ ચાલી શકતી નથી. બીજા અને ત્રીજા વિકલ્પોમાં ખતાવેલી પરિસ્થિતિમાં ક્યારેક અનુયોગની પ્રવૃત્તિ સંભવી પણ શકે છે અને ક્યારેક નથી પણ સંભવી શકતી.

“દેસ કુલ જાઈ રૂઘી, સંહનની, ધિહજુઓ અણાસંસી ।
 અવિકત્યુઓ અમાઈ, થિરપરિવાડી ગદિયવકો ॥ ૧ ॥
 જિયપરિસો જિયનિદો, મજ્જાત્યો દેસકાલભાવન્ન ।
 આસન્નહરપરમો, માનાધિદેસભાસન્ન ॥ ૨ ॥
 પંચવિદે આચારે, જુતો સુતત્વતદુભયવિહિન્ન ।
 આહરણ હેઉ ઉવળય, નય નિડુઓ ગાહણાકુસલો ॥ ૩ ॥
 સસમયપરસમયવિઝ, ગંમીરો દિસિમેં સિષો સોમો ।
 ગુણસયકલિયો જુતો, પવચણસારં પરિકહેઉં ॥ ૪ ॥
 છાયા-દેશકુલજાતિરૂપી સંહનની, ધૃતિયુતઃ અનાશંસી ।
 અવિકત્યનઃ આમાયી, સ્થિરપરિવાટી ગૃહીતયાન્યઃ ॥૧॥
 જિતપરિષદ્ જિતનિદ્રો મધ્યસ્થો દેશકાલભાવજ્ઞઃ ।
 આસન્નલબ્ધપ્રતિભો નાનાવિધદેશભાષાજ્ઞઃ ॥૨॥
 પંચવિદે આચારે, યુક્તઃ સૂત્રાર્થતદુભયવિધિજ્ઞઃ ।
 આહરણહેતુપનય, નય નિપુણો ગ્રાહણાકુશલઃ ॥૩॥
 સ્વસમયપરસમયવિદ્, ગમ્મીરો દીપ્તિમાન્ શિવઃ સોમઃ ।
 ગુણશતકલિતો યુક્તઃ, પ્રવચનસારં પરિકથયિતુમ્ ॥૪॥

ગાથાર્થઃ—યો મુનિઃ દેશકાલકુલ જાતિરૂપી-દેશઃ=આર્યદેશઃ, કુલં=વિશુદ્ધઃ
 પિતૃવંશઃ, જાતિઃ=વિશુદ્ધો માતૃવંશઃ, રૂપં=શોભનાડઠકૃતિઃ, એતાનિ
 ચત્વારિ સન્ત્યસ્યેતિ તથા ભવતિ । અર્થાદ્ યઃ આર્યદેશોત્પન્નઃ, વિશુદ્ધપિતૃમાતૃ-
 વંશોદ્ભવઃ રૂપવાંશ્ચ ભવતિ । તથા સંહનની=દૃઢસંહનનવાન્ । દૃઢસંહનની દિ

અવ યહ કહા જાતા હૈ કિ યહ અનુયોગ કિસ પ્રકાર કે વિશેષણોં સે વિશિષ્ટ
 મુનિજન દ્વારા કિયા જાતા હૈ—“દેસકુલ જાઈ રૂઘી” ઇત્યાદિ દેશ-જો મુનિ આર્ય
 દેશ મેં ઉત્પન્ન હુઆ હો (૧) કુલ જાતિ શુદ્ધ હો જિસકા પિતૃવંશ ઓર જિસકા માતૃવંશ
 વિશુદ્ધ હો (૨) રૂપ-આકાર જિસકા શોભન હો (૩) સંહનની-જો દૃઢ સંહનન
 વાલા હો (૪) ધૃતિ યુક્ત-અતિ મહન મી અર્થ મેં જિસે કિસી મી પ્રકાર કી

હવે એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવે છે કે કયા કયા શુભોદ્ધી (વિશેષણોથી)
 સંવન્ન વિશિષ્ટ મુનિજનો દ્વારા આ અનુયોગમાં પ્રવૃત્તિ થઈ શકે છે-

“દેસકુલ જાઈ” ઇત્યાદિ—

(૧) જે મુનિ આર્યદેશમાં ઉત્પન્ન થયેલા હોય, (૨) જે મુનિના કુળજાતિ
 શુદ્ધ હોય-એટલે કે જેનો માતૃવંશ અને પિતૃવંશ વિશુદ્ધ હોય, (૩) રૂપ-જેમનો
 આકાર (દેખાવ) સુંદર હોય, (૪) સંહનની-જે મુનિ દૃઢ સંહનનવાળા હોય, (૫)

अनुयोगचन्द्रिका टीका—सू. ५ श्रुतज्ञानस्वरूपनिरूपणम्

३३

व्याख्यानादौ न श्राम्यतीति भावः । धृतियुतः—धृतिः=अतिगहनेष्वप्यर्थेषु निर्भ्रान्ता, परीषहोपसर्गसहने निश्चलता च, तथा युतः=युक्तः । अनाशंसी=वस्त्रसत्काराद्यनाकाङ्क्षी । अविकल्थनः=आत्मश्लाघा वर्जितो नाति बहुभाषी वा । अमायी=कपटवर्जितः । स्थिरपरिपाटी—स्थिरा=अतिशयेन निरन्तराभ्यासतः स्थैर्यमापन्ता परिपाटी—अनुयोगकरणक्रमो यस्य स तथा । यद्वा—गुरुपरम्पराप्राप्तज्ञाननिरन्तरपाठकः । एतादृशो हि सूत्रमर्थं च न कदाचिदपि विपरीतं करोति । गृहीतवाक्यः—गृहीतं वाक्यं=वचनं यस्य स तथा, आदेयवचनवान् इत्यर्थः । तस्य हि अल्पमपि वचनं महार्थमिव प्रतिभाति । जितपरिषद्—जिता परिषद् येन स तथा, महत्यामपि परिषदि यः क्षोभं नोपयाति । जितनिद्रा—जिता निद्रा येन स तथा, रात्रौ सूत्रमर्थं च चिन्तन् निद्राधीनो न भवतीत्यर्थः । मध्यस्थः=पक्षपातवर्जितः । देशकालभावज्ञः—द्रव्यक्षेत्रकालभावज्ञानसम्पन्नः । आसन्नलब्धप्रतिभः—

भ्रान्ति न हो, तथा परीषद् और उपसर्ग के सहने में जिसके निश्चलता हो (५) अनाशंसी—वस्त्र सत्कार आदि की जिसके आकांक्षा न हो (६) अविकल्थन आत्मप्रशंसा से जो रहित हो अथवा व्यर्थ का जा बहुत भाषण करने वाला न हो (७) अमायी—कपट भाव से जो रहित हो (८) स्थिर परिपाटी—जिसका अनुयोग करने का क्रम अतिशय निरन्तर अभ्यास के वश से स्थिरता को प्राप्त हो गया हो अथवा—गुरु परम्परा से प्राप्त ज्ञानका जो पाठक हो, (९) गृहीत वाक्य—जिसके वचन आदेय हों (१०) जित परिषद्—बड़ी भारी सभा में भी जो क्षोभ को प्राप्त न हो, ११, जितनिद्रा—रात्रि में भी जो सूत्र और अर्थ का चिन्तन करता हुआ निद्रा के वशवर्ती नहीं होता हो १२, मध्यस्थ—पक्षपात से जो रहित हो १३, देशकाल भावज्ञ—जो देश, काल भाव का ज्ञान

वर्तियुक्त—अति गहान विषयना अर्थ विषे पक्ष जेभना मनमां कोरि पक्ष प्रकारकी भ्रान्ति न होय. तथा परीषद् अने उपसर्गोनी निश्चलतापूर्वक जे सहन करनाश होय, ६, अनाशंसी वस्त्र, सत्कार आदिनी आकांक्षाथी जेयो रहित होय, ७, अविकल्थन—जेयो आत्मश्लाघाथी रहित होय अथवा नकासुं सांयुं थोडुं लापयु करनाश न होय. ८, अमायी—जेयो कपटभावथी—मायाधारीथी रहित होय. ९, स्थिरपरिपाटी निरन्तर अभ्यासने कारणे जेभने अनुयोग करवाने कम स्थिरता युक्त अन्यो होय, अथवा गुरुपरम्पराथी प्राप्त ज्ञानना जेयो पाठक होय, १०, गृहीतवाक्य—जेभना जेभने आदेय (अहणु करवा योज्य) होय. ११, जितपरिषद्—धल्ली विशाल सभामां पक्ष जेयो क्षोभ अनुभवता न होय. १२, जितनिद्रा—जेभणे निद्रा उपर पक्ष विषय प्राप्त कयो होय ओटले के रात्रे पक्ष निद्राने अधीन तथा विना जेयो सूत्र अने अर्थनु चिन्तन कयो करता होय. १३, मध्यस्थ—जेयो पक्षपातथी रहित होय, १४, देशकाल

આસન્ન=શાસ્ત્રાર્થ કર્તુ સમીપે સમાગતં પરવાદિનં પ્રતિ. લભ્યા પ્રતિભા યેન સ
તથા, પરવાદિમિરાશિષ્ઠઃ શીઘ્રમુત્તરદાયીત્યર્થઃ । નાનાવિધદેશભાષાજ્ઞઃ—
અનેકદેશભાષાજ્ઞાનસંપન્નઃ । પચ્ચવિધઆચારે યુક્તઃ=જ્ઞાનાદિપચ્ચાચારે યુક્તઃ ।
સૂત્રાર્થતદુભયવિધિજ્ઞઃ । આહરણહેતૂપનયનિપુણઃ-તત્ર-આહરણ=દૃષ્ટાન્તઃ, હેતુઃ=
કારકો જ્ઞાપકશ્ચ । તત્ર કારક=યથા ઘટસ્ય કર્તા કુમ્ભકારઃ । જ્ઞાપકો યથા-ઘટા-
નામિભિઃ જ્ઞકઃ પ્રદીપઃ । ઉપનયઃ=ઉપસંહારઃ, નયાઃ=નૈગમાદયઃ, એતેષુ નિપુણઃ=
કુશલઃ । ગ્રાહણાકુશલઃ ગ્રાહણાર્યા=શિષ્યઃ સૂત્રાર્થતદુભયગ્રાહણાર્યા કુશલઃ ।
સ્વસમયપરસમયવિત્=સ્વસિદ્ધાન્તપરસિદ્ધાન્તજ્ઞાનસંપન્નઃ । ગમ્भीરઃ=અતુચ્છસ્વભાવઃ ।

હો—અર્થાત્ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ ના જો જાનને વાલે હો ૧૪, આસ-
ન્નલભ્યપ્રતિભઃ—શાસ્ત્રાર્થ કરને કે લિયે નિકટ આવે હુણ પરવાદી કો પરાસ્ત
કરને કે લિયે જિસ કી પ્રતિભા તેજ હો—અર્થાત્ પરવાદી સે આશિષ્ઠ હોને
પર જા શીઘ્ર હી ઉત્તર દાતા હો ૧૫, નાનાવિધ દેશભાષાજ્ઞઃ—અનેક દેશો
કી ભાષાઓં ના જિસે જ્ઞાન હો ૧૬, પચ્ચવિધ આચારયુક્તઃ—જ્ઞાનાચાર આદિ
પાંચ પ્રાર્થ કે આચારોં ના જો પાલન કર્તા હો, ૧૭, સૂત્રાર્થ તદુભય વિધિજ્ઞઃ—
સૂત્ર અર્થ તથા તદુભય સૂત્રાર્થ બી વિધિ ના જાનનાર હો ૧૮, આહરણ
હેતૂપનયનનિપુણઃ—ઉદાહરણ, હેતુ, ઉપનય ઓર નય इनमें જો નિપુણ હો ૧૯,
ગ્રહણ કુશલ—જો શિષ્ય કો તત્ત્વ ગ્રહણ કરાને મેં કુશલ હો ૨૦, સ્વસમય પર
સમયવિત્—જિસ સ્વસમય ના ઓર પરસમય ના અચ્છી તરફ સે બોધ—જ્ઞાન

લાવજા-જેઓ દેશ, કાળ અને ભાવના જાણતા હોય, એટલે કે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ
અને ભાવના જેઓ જાણકાર હોય, ૧૫, “આસન્નલભ્યપ્રતિભઃ” શાસ્ત્રાર્થ કરવાને
માટે પોતાની પાસે આવેલા પરમવાદીને પરાસ્ત કરવાને યોગ્ય પ્રતિભાથી જેઓ
સંપન્ન હોય-એટલે કે પરમવાદીની સાથે જ્યારે અર્થ આવે ત્યારે તેના પ્રશ્નોનો
યોગ્ય ઉત્તર આપીને તેના મતનું ખાંડન અને પોતાના મતનું (સ્વ સમયનું)
સમર્થન કરવાને જેઓ સમર્થ હોય છે, ૧૬, “નાનાવિધદેશભાષજ્ઞઃ” જેમને
અનેક દેશની ભાષાઓનું જ્ઞાન હોય, ૧૭, “પચ્ચવિધઆચારયુક્તઃ” જ્ઞાનાચાર
આદિ પાંચ પ્રકારના આચારોનું જેઓ પાલન કરનારા હોય, ૧૮, “સૂત્રાર્થતદુ-
ભયવિધિજ્ઞઃ” — જેઓ સૂત્ર, અર્થ તથા તદુભય (સૂત્ર અને અર્થ બન્ને) સૂત્રાર્થની
વિધિના જાણકાર હોય, ૧૯, “આહરણહેતૂપનયનનિપુણઃ” ઉદાહરણ, હેતુ
ઉપનય અને નયમાં જેઓ નિપુણ હોય, ૨૦, “ગ્રહણકુશલઃ” જેઓ શિષ્યને તત્ત્વ
ગ્રહણ કરાવવામાં કુશળ હોય, ૨૧, “સ્વસમયપરસમયવિત્” જેઓ સ્વસમય
(જેવ-સિદ્ધાંત) અને પરસમયનું (બન્ય-સિદ્ધાંતોનું) સાચું જ્ઞાન ધરાવતા હોય,

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० ५ श्रुतज्ञानस्वरूपनिरूपणम्

४५

दीप्तिमान्-परवादिभिर्नुद्वर्णयः । शिवः-अक्रोधः यदा-त्र तत्र वा विहन् लोकालयाणकारी । सोमः-शान्तदृष्टिः । गुणशतकलितः=गुणाः=दयादाक्षि-
ण्णादयः तेषां शतानि, तैः कलित, इह शतशब्दो बहुत्ववाचकः । एतादृश एव
मुनिः प्रवचनसारं=द्वादशाङ्गरूपप्रवचनार्थं परिकल्पितुं सम्यक् प्ररूपयितुं युक्तः=
योग्यः समर्थो भवतीत्यर्थः । उक्तपञ्चविंशतिगुणयुतस्य मुनेर्वचनं धृतपरिषिक्त-
बहिरिव भाति । उक्तगुणहितः । वचनं तु स्नेहविहीनदीप इव न शोभते ।
एवं पञ्चविंशतिगुणयुक्तेन मुनिना कस्य चाऽनुयोगः=कस्य शास्त्रेऽनुयोगः
कर्तव्य इत्यपि वक्तव्यम् । तद्द्वाराणि-तस्य अनुयोगस्य द्वाराणि=उपक्रमादीनि
वक्तव्यानि । वक्ष्यते अग्रे स्वयमेव सूत्रकारः । तान्-अनुयोगस्य लक्षणं वक्तव्यम् ।
लक्षणं चैवमुक्तम्—

हो २१, गंभीरः—जिसका स्वभाव गहरा हो २२, दीप्तिमान् परवादियों द्वारा
जो परास्त न किया जा सके २३, शिव—क्रोध जिसे न आवे, अथवा—इत-
स्ततः विहार करता हुआ जो लोक का कल्याणकारी हो २४, सोम—जिसकी
दृष्टि शांत हो २५, और गुणशत कलित—सैकड़ों दयादाक्षिण्य आदि गुणों से
जो युक्त हो, ऐसा मुनि द्वादशाङ्गरूप प्रवचन के अर्थ को अच्छी तरह से
प्ररूपित करने के लिये समर्थ होता है । इन २५, (पच्चीस) गुणों से युक्त
मुनि के वचन धृत से सिंचित अग्नि के जैसे तेजस्वी होते हैं । परन्तु इन
गुणों से रहित जो साधु होता है उसके वचन स्नेह से रहित दीपक की तरह
शोभित नहीं होते हैं । इस प्रकार इन २५ गुणों से युक्त मुनि को “जिस
शास्त्र का अनुयोग कर्तव्य है यह भी कहना चाहिये । अनुयोग के जो उपक्रम
आदि द्वार कहे गये हैं—वे भी शिष्य को कहना चाहिये । अनुयोग के भेद

२२, “गंभीरः” जेम्हो स्वभाव गंभीर होय, २३, “दीप्तिमान्” जेम्हो दीप्तिमान्
होय—परमत्तवादीजो जेम्हने परास्त करवाने समर्थ न होय, २४, “शिवः”
जेम्हनाको क्रोधनो अभाव होय अथवा अहाँ तहाँ विहार करता यहाँ जेम्हो
छोपेतुं कल्याण करना होय, २५, “सोम” जेम्हनी दृष्टि अथवा मुग्धमुद्रा शान्त
होय, “गुणशतकलितः” अने जेम्हो दया दाक्षिण्य आदि सैकड़ो गुणोधी सम्पन्न
होय, जेम्हो मुनि जे द्वादशाङ्गरूप प्रवचनना अर्थने सारी रीते पररूपित करवाने
समर्थ होय छे, आ २५ गुणोधी युक्त मुनिना वचनो धी वटे सिंचित अग्निना
अमान तेजस्वी होय छे परन्तु आ गुणोधी रहित जे साधु होय छे तेना वचनो
तेजस्वी रहित दीपकना समान तेजस्वित (प्रभाव रहित) होय छे.

आ प्रकारना २५ गुणोधी युक्त मुनिजे क्या शास्त्रनो अनुयोग करवो
जेछेजे, जे बात पण अहाँ प्रकट करवा अनुयोगना जे उपक्रम आदि द्वार

“સંહિતા ય પયં ચેવ, પયત્થો પયવિગ્રહો ।

ચાલના ય પસીન્દ્રી ય છન્વિહં વિદ્ધિ લક્ષણં ॥

છાયા—સંહિતા ચ પદં ચૈવ પદાર્થઃ પદવિગ્રહઃ ।

ચાલના ચ પ્રસિદ્ધિશ્ચ ષર્ણિધં વિદ્ધિ લક્ષણમ્ ॥

તત્ર-સંહિતા=અસ્ત્રલિતપદોચારણમ્ । પદમ્=વર્ણાનામન્યોન્યાપેક્ષાણાં નિરપેક્ષા સંહિતિ, સુવન્તં તિહન્તં વા । પદાર્થઃ-પદસ્ય અર્થઃ=અભિધેયઃ । પદવિગ્રહઃ=પ્રકૃતિપ્રત્યયવિભાગરૂપો વિસ્તારઃ । ચ=પુનઃ ચાલના=પ્રશ્નઃ । પ્રશ્ને સતિ પ્રસિદ્ધિઃ=સમાધાનં ચેતિ ષર્ણિધમ્ અનુયોગસ્ય લક્ષણં વિદ્ધ=જાનીહિ । વ્યાખ્યેયસૂત્રમ્ ય ચ અલિપ્તમુવઘાયજળયં’ ઇત્યાદિ દ્વાત્રિશદોપરહિતત્વાદિકં લક્ષણં વક્તવ્યમ્ ।

કિં જિન્હે સૂત્રકાર ચયં હી આગે કહેંગે । અનુયોગ કા લક્ષણ લક્ષણ હૈ યહ મી શિષ્ય કો સમજાનાં યાહિયે । અનુયોગ કા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર વહા હૈ—“સંહિતા ય” ઇત્યાદિ—અસ્ત્રલિતરૂપ સે પદોં કા ઉચ્ચારણ કરના ઇસ કા નામ સંહિતા હૈ । અન્યોન્યાપેક્ષાવાલે વર્ણોં કી નિરપેક્ષ જો સંહિતા હૈ ઉસના નામ અથવા સુવન્ત ઓર તિહન્ત વા નામ પદ હૈ । પદ કે અભિધેય કા નામ પદ વિગ્રહ હૈ । ચાલના નામ પ્રશ્ન કા હૈ । પ્રશ્ન કે સમાધાન કા નામ પ્રસિદ્ધિ હૈ । યે છહ પ્રકાર કા અનુયોગ કા લક્ષણ હૈ । રહ લક્ષણ વહનાં યાહિયે—તથા “અલિપ્તમુવઘાયજળયં” ઇત્યાદિ જો ૩૨, દોષ કહે ગયે હૈ ઉનસે રહિત અનુયોગ હોતા હૈ રહ મી અનુયોગ કા લક્ષણ કહના યાહિયે । તથા રહ મી કહના યાહિયે કિં અનુયોગ કો સુનને કે સ્તિમે

જો તે પછુ તેમણે શિષ્યોને કહેવા બેઠ્યો. અનુયોગના પછુ બેઠો શિષ્યોને. બત્તવવા બેઠ્યો. તે બેઠોતું નિરપેક્ષ સૂત્રકાર પોતે જ આગળ કરવાના છે. તેમણે શિષ્યોને અનુયોગનાં લક્ષણો પછુ સમજાવવા બેઠ્યો. અનુયોગનાં લક્ષણો નીચે પ્રમાણે છે.

“સંહિતા ય” ઇત્યાદિ—પદોતું અસ્ત્રલિત રૂપે ઉચ્ચારણ કરવું તેતું નામ સંહિતા છે. અન્યોન્યની અપેક્ષાવાળા વર્ણોથી નિરપેક્ષ જે સંહિતા છે તેતું નામ અથવા સુવન્ત અને તિહન્તતું નામ પદ છે. પદના અભિધેયતું નામ પદાર્થ છે. પ્રકૃતિ પ્રત્યયના વિભાગરૂપ વિસ્તારતું નામ પદવિગ્રહ છે. પ્રશ્નને “ચાલના” કહે છે. પ્રશ્નના સમાધાનરૂપ ઉત્તરને પ્રસિદ્ધિ કહે છે. આ છ પ્રકારતું અનુયોગતું લક્ષણ છે. ગુરૂએ અનુયોગના આ છ લક્ષણો પછુ શિષ્યને કહેવા બેઠ્યો. તથા “અલિપ્તમુવઘાયજળયં” ઇત્યાદિ જે ૩૨ દોષ છે તે પછુ કહેવા બેઠ્યો. આ ૩૨ દોષોથી અનુયોગ રહિત હોય છે, અને પછુ શિષ્યોને કહેવું બેઠ્યો. વળી તેમણે શિષ્યોને એ પછુ સમજાવવું બેઠ્યો કે અનુયોગતું શ્રવણ કરવા માટે કેવા કેવા મુનિને યોગ્ય ગણવામાં આવે છે. અનુયોગતું શ્રવણ કરવા માટે મુનિમાં નીચેની યોગ્યતાઓ હોવી બેઠ્યો.

अनुयोगचन्द्रिका टीका. ५ श्रुतज्ञानस्वरूपनिरूपणम्

४७

तदहं: तस्य=अनुयोगरथ अहं: =योग्या मुनयो वक्तव्या: । तथाहि—

बहुस्तु ए चिरपव्वइए, कप्पए य अचंचले ।

अवट्ठिए य मेहावी, अपरिभाविओ विऊ ॥१॥

पैए य अणुष्वाए, भावओ परिणासो ।

एमारिसे महाभागे, अनुओगं सीउपरिइए ॥२॥

छाया—बहुश्रुत=चिरप्रव्रजितः, कल्पिकश्च अचञ्चलः ।

अवस्थितश्च मेधावी, अपरिभाविता विद्वान् ॥१॥

पात्रं चानुज्ञातः, भावतः, परिणामकः ।

एतादृशो महाभागः, अनुयोगं श्रोतुमर्हति ॥२॥

यो मुनिः बहुश्रुतः=शास्त्रज्ञः, चिरप्रव्रजितः=चिरकालगृहीतदीक्षः, कल्पिकः=गीतार्थः, अचञ्चलः=चाञ्चल्यवर्जितः, अवस्थितः=साधुमर्यादायां स्थितः, मेधावी=बुद्धिमान्, अपरिभाविता=परिषहोपसर्गैरपरिभूतः, परतीर्थिकैरपरिभूतो वा, विद्वान्=पण्डितः—प्रभूताशेषशास्त्राभ्यासनिर्मलबुद्धिस्तिर्यर्थः, पात्रं=योग्यः, अनुज्ञातः=गुरुणाऽऽज्ञप्तः, तथा—भावतः परिणामकः=भावपरिणामयुक्तश्च भवति ।
एतादृशो महाभागो मुनिरनुयोगं श्रोतुमर्हति ।

ऐसा मुनि योग्य होता है—जो बहुस्तु ए चिरपव्वइए” इत्यादि बहुश्रुत—शास्त्रों का ज्ञाता हो, चिरकाल का दीक्षित हो, गीतार्थ हो चञ्चलता से रहित हो, साधुमर्यादा में स्थिर हो, बुद्धिशाली हो, परिषह और उपसर्गों से तथा अन्यतीर्थिकजनों से अपरिभूत हो, विद्वान् हो,—अर्थात् अनेकशास्त्रों के अभ्यास से जिस की बुद्धि निर्मल हो अनुयोग का पात्र हो गुरु से अनुयोग सुनने की जिसे आज्ञा मिल चुकी हो, और जो भावसे परिणामयुक्त हो ऐसा महाभाग मुनि अनुयोग को सुनने के योग्य होता है । गुरु को अनुयोग सुनने वाली सभा का भी कथन करना चाहिये—उन्हें कहना चाहिये कि

“बहुस्तु ए चिरपव्वइए” इत्यादि—जे भावत—(शास्त्रों का ज्ञाता) होय, चिरकाल से दीक्षित होय, गीतार्थ होय, अचञ्चलतायी रहित होय, साधुनी मर्यादातुं दृढतापूर्वक पालन करनार होय, बुद्धिशाली होय, परिषहो, उपसर्गों अने अन्यतीर्थिकों की जे अपरिभूत (परास्त न थाय ओयो) होय, विद्वान् होय—ओरले के अनेकशास्त्रों ना अव्यासयी जेनी बुद्धि निर्मल थयेली होय, अनुयोगने पात्र होय, गुरुओ जेने अनुयोगतुं श्रवण करवानी अनुज्ञा आयी होय, अने जे भावनी अपेक्षाओ परिष्ठाभयुक्त होय, ओवा महाभाग मुनिने जे अनुयोगतुं श्रवण करवाने पात्र भावनामा आवे छे, गुरुओ अनुयोग श्रवण करनारी परिषह देवी होय

તથા-પરિપદ=અનુયોગસ્ય યોગ્યા પરિપદ વક્તવ્યા । સા ચ સામાન્યત-
ત્રિવિધા ભવતિ । તથા—

“જાણંતિયા ધ્રજાણંતિયા ય, તહ દુર્વિદગ્ધિકા વૈષ ।

તિવિહા ય હોદ પરિસા, તીસે નાણસગં વોચ્છં ॥૧॥”

છાયા—જાનાના અજાનાના ચ, તથા દુર્વિદગ્ધિકા વૈષ ।

ત્રિવિધા ચ ભવતિ પરિપદ તસ્યા નાનાત્વં વક્ષ્યે ॥૧॥

અર્થ ભાવઃ—પરિપદ ત્રિવિધા ભવતિ,—જ્ઞાયકપરિપદ, અજ્ઞાયકપરિપદ,
દુર્વિદગ્ધિકા પરિપદિતિ । તત્ર—એકૈકપરિપદસ્વરૂપં લક્ષયિતું પ્રથમં જ્ઞાયકપરિ-
પદસ્વરૂપમાહ—

‘ગુણદોષવિસેસણૂ અણભિગ્ગહિયા ય કુસ્સુદ્ધમણુ’ ।

સા સ્વલુ જાણપરિસા, ગુણતત્તિછા અગુણવજ્ઞા ॥૧॥

ક્ષીરમિવ રાયહંસા, જે ઘુઠ્ઠંતિ ગુણે ગુણસમિદ્ધા ।

દ સે વિ ય છઢ્ઢિણા, તે વસહા ધીરપુરિસત્તિ ॥૨॥

છાયા—ગુણદોષવિશેષજ્ઞા અનભિગૃહીતા ચ કુશ્રુતિમતેષુ ।

સા સ્વલુ જ્ઞાયકપરિપદ, ગુણતત્પરા અગુણવર્જા ॥૧॥

ક્ષીરમિવ રાજહંસા, તે પિવન્તિ ગુણાન ગુણસમૃદ્ધાઃ ।

દોષાનપિ ચ ત્યક્ત્ત્વા, તે વૃષભા ધીરપુરુષા इति ॥૨॥

અર્થ ભાવઃ—યા પરિપદ ગુણદોષાન્ વિશેષતો જાનાતિ । કુશ્રુતિમતેષુ
આગ્રહવતી ન ભવતિ । એવંવિધા ગુણેષુ તત્પરા અગુણેભ્યો રહતા પરિપદજ્ઞાયક

અનુયોગ કો સુનને કે યેગ્ય એસી પરિપદ હોતી હૈ—અર્થાત્ પરિપદ સામાન્ય
સે ૩, પ્રકાર કી હોતી હૈ—એક જ્ઞાયક પરિપદ, દૂસરી અજ્ઞાયક પરિપદ ઓર
૩ તીસરી દુર્વિદગ્ધિકા પરિપદ । યહી વાત “જાણંતિયા” ઇત્યાદિ ગાથાઢારા પ્રકટ
કી ગઈ હૈ । ઇનમેં સે જ્ઞાયક પરિપદ કો સ્વરૂપ ઇવ પ્રકાર સે હૈ—ગુણદોષ
વિસેસણૂ “ઇત્યાદિ—જો પરિપદ ગુણ ઓર દોષોં કો વિશેષરૂપ સે જાનતી હૈ

નેધએ તે પથુ શિષ્યને સમજાવવું નેધએ, તેમણે તેને એ વાત સમજાવવી
નેધએ કે અનુયોગનું શ્રવણ કરનારી પરિપદમાં આ પ્રકારની યોગ્યતા
કોવી નેધએ-પરિપદના સામાન્ય રીતે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે, તે પ્રકારો નીચે
પ્રમાણે છે—૧, જ્ઞાયક પરિપદ, ૨, અજ્ઞાયક પરિપદ અને ૩, દુર્વિદગ્ધિકા પરિપદ
આ વાત “જાણંતિયા” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

જ્ઞાયક પરિપદનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું હોય છે—

“ગુણદોષવિસેસણૂ” ઇત્યાદિ—જે પરિપદ ગુણ અને દોષોને વિશેષરૂપે
જાણતી હોય છે, અને ખોટાં શાસ્ત્રોની માન્યતાઓને જે માનતી નથી—ખોટાં શાસ્ત્રોને

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૫ થુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૯

પરિષદુચ્યતે । અત્ર પરિષદિ યે નરા ભવન્તિ, તે ગુણસમૃદ્ધા ભવન્તિ ।

યથા રાજહંસા સજલદુગધાદ્ જલં વિહાય દુગ્ધમેવ પિવન્તિ, તથૈવ એતે દોષાન્ વિહાય ગુણાનેવ ગૃહ્ણન્તિ । એતે હિ ધર્મધુરાધાષ્ણે વૃષભાઃ ઇવ ઉદ્યુક્તા ભવન્તિ । અતઃ એવ એતે ધીરપુરુષા ઉચ્યન્તે, ઇતિ જ્ઞાયક-પરિષત્ ।

અથ-અજ્ઞાયકપરિષત્સ્વરૂપમાહ—

“જા હોઈ પગહમૃદ્ધા મિગસાવગસીહકુકુટકમૃદ્ધા ।

રયણમિવ અસંઠવિયા, સુહસંભવ્યા ગુણસમિદ્ધા ॥૧॥

છાયા-યા ભવન્તિ પ્રકૃતિમુગ્ધા મૃગશાવકસિંહકુકુટકમૃદ્ધા ।

રત્નમિવાસંસ્થાપિતા સુખસંજ્ઞાપ્તા ગુણસમૃદ્ધા ॥૧॥

અર્થ-માવ:-યા પરિષત્ પ્રકૃતિમુગ્ધા=પ્રકૃત્યા-સ્વભાવેન મુગ્ધા=મદ્રભાવ-સંપન્ના, મૃગશાવકસિંહકુકુટકમૃદ્ધા:-તવ મૃગશાવકા:=હરિણશિશવ:, સિંહા:=સિંહ-

ઔર खोटे शास्त्रों को मानने वालों के मत में जिसे आग्रह नहीं होता है वह परिषत् ज्ञायक परिषत् है । ऐसी परिषत् गुणों में तत्पर और अगुणों से रहित होती है । इस परिषत् में जो मनुष्य होते हैं वे गुणसमृद्ध होते हैं । जैसे राज हंस जलसहितदुग्ध मेंसे जल का परित्याग कर दूध का ही पान करते हैं । ऐसे ही यह परिषत् दोषों को छोड़ कर गुणों को ही ग्रहण करती है । इस परिषत् के सदस्यजन धर्म की धुरा को धारण करने में वृषभ की तरह सदा ध्योगशील रहा करते हैं । इसलिये ये धीर पुरुष कहलाते हैं । अज्ञायक परिषत् का स्वरूप इस प्रकार से है—“जा होइ पगइ मदा” इत्यादि—जो परिषत् स्वभाव से मद्रभावयुक्त होती है । तथा मृगशिशु, सिंहशिशु और कुक्कुटशिशु के समान जिसके सदाय सरल भाव वाले होते हैं—एवं जो खान से निकले हुए

નનારા લોકોના મતમાં જેને બિલકુલ શ્રદ્ધા હોતી નથી એવી પરિષદને જાયક પરિષદ કહે છે. એવી પરિષદ ગુણગ્રાહી અને અગુણથી રહિત હોય છે. આ પરિષદમાં એકત્ર થયેલા મનુષ્યો ગુણસમૃદ્ધ હોય છે. જેવી રીતે રાજહંસ જલમિશ્રિત ધમાંથી દૂધને જ ગ્રહણ કરે છે અને જળને પરિત્યાગ કરે છે. તેમ આ પરિષદ જુ દોષોનો પરિત્યાગ કરીને ગુણોને ગ્રહણ કરે છે. આ પરિષદના સભ્યો ધર્મની રાને ધારણ કરવામાં વૃષભની જેમ સદા ઉદ્યોગશીલ રહે છે. તે કારણે તેમને ૩ પુરૂષો માનવામાં આવે છે.

અજાયક પરિષદનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું હોય છે—

“જા હોઈ પગહમદા” ઇત્યાદિ—જે પરિષદના સભ્યો સ્વભાવની અપેક્ષાએ દ્રભાવ (સરલતા)થી યુક્ત હોય છે. જેના સભ્યો મૃગશિશુ, સિંહશિશુ અને કુકુટાના

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂં ૫ શ્રુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૫૧

છાયા—ન ચ કુત્રાપિ નિર્માતો ન ચ પૃચ્છતિ પારમ્ભવસ્ય દોષેણ ।

વસ્તિરિવ વાતપૂર્ણઃ સ્ફુટતિ ગ્રામેયકોઽવિદગ્ધઃ ॥૧॥

કિંચિન્માત્રગ્રાહિણી, પલ્લવગ્રાહિણી ત્વરિતગ્રાહિણી ચ ।

દુર્વિદગ્ધા ત્વેષા મણિતા, ત્રિવિધેયં પરિષ્પત્ ॥૨॥

યો નરઃ કુત્રાપિ વિષયે નિષ્ણાતો ન ભવતિ ।

પરિભવસ્ય દોષેણ=અપમાનદોષેણ ચાન્યં જનં વસ્તુતત્ત્વં ન પૃચ્છતિ । ‘યદ્યહમેનં પ્રદ્શ્યામિ તવ મમાપ્રતિષ્ઠા સ્યાદિતિ હેતો સ્તત્ત્વજ્ઞાનઃ કાશાત્ તત્ત્વજ્ઞાનં લબ્ધું ન યતતે ઇતિ ભાવઃ । एतादृशो ग्रामेयको—ग्राम्यः=संस्कारवर्जितः अविदग्धः—अनिपुणः पुरुषः, वातपूर्णो वस्तिरिव स्फुटति =स्थूलो भवति अहंकारी भवतीत्यर्थः किंच—य किञ्चिन्मात्रग्राही भवति,

નિષ્ણાત હૈં ઉનસે વહ ઇસ અભિપ્રાય સે વસ્તુતત્ત્વ કો નહીં પૂછતા હો કિ ઇન સે પૂછને પર મેરી અપ્રતિષ્ઠા—અવજ્ઞા—હોગી ઇસી કારણ વહ તત્ત્વજ્ઞાન પ્રાપ્તિ મેં પ્રયત્નશાલી નહીં હોતા હૈં એસી વ્યક્તિ સત્ જ્ઞાન કે સંસ્કાર સે રહિત બન કર કેવલ અવિદગ્ધ—અનિપુણ બના રહતા હૈં ઓર વાયુ સે પૂર્ણ ધમની કે સમાન અપને અભિમાન મેં ફૂલા રહતા હૈં । ઇસી તરહ જો થોડા વહુત જાનતા હૈં તથા પલ્લવગ્રાહી પાંડિત્ય—જિસકે પાસ મેં હૈં, જો ત્વરિતગ્રાહી હૈં—કહને પર શીઘ્ર સમજાતો લેતો હૈં—પર ફિર વિસ્મૃત હો જાતા હૈં—ફિર મી જ્ઞાનિ કે અહંકાર મેં તત્પર રહતા હૈં એસે ઇન વ્યક્તિયોં કી સમા કા નામ દુર્વિદગ્ધા સમા હૈં । તાત્પર્ય ઇસ કા યહ હૈં કિ બોધ લવ હોને પર જો અપને આપ

દુર્વિદગ્ધ પરીપદનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું હોય છે.

‘નય કત્ય વિ’ ઇત્યાદિ—કોઈ એક પુરૂષ અમુક વીષયમાં નીષ્ણાત નથી. તે વિષયમાં બીજી કોઈ એક વ્યક્તિ નિષ્ણાત છે, પરંતુ પહેલી વ્યક્તિ બીજી વ્યક્તિને વસ્તુતત્ત્વ વિષે એ કારણે પૂછતી નથી કે તેને પૂછવાથી મારી અપ્રતિષ્ઠા થશે. આ પ્રકારના અભિમાનને કારણે તે તત્ત્વજ્ઞાન—પ્રાપ્તિમાં પ્રયત્નશીલ રહેતો નથી. એવો માણસ સાચા જ્ઞાનના સંસ્કારથી રહિત જ રહેવાને કારણે અવિદગ્ધ—અનિપુણ જ રહે છે. એવો માણસ હવાથી ભરેલી ધમણ સમાન અભિમાનથી ફૂલાયા જ કરે છે, આ પ્રકારના અધકચરા જ્ઞાનવાળાને અર્ધદગ્ધ કહે છે. આ પ્રકારના અર્ધદગ્ધ, છીછરા જ્ઞાનવાળા, ત્વરિતગ્રાહી (કોઈ વાત કહેવામાં આવે તો શીઘ્ર સમજી લેનારા પણ પાછળથી તેને ભૂલી જનારા) માણસો જ્ઞાનના અભિમાનમાં તત્પર રહેતા હોય છે. એવી વ્યક્તિયોની સલાને દુર્વિદગ્ધા પરિપદ કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જેઓ પોતાને વિશિષ્ટ તત્ત્વજ્ઞાની માની રહ્યા છે, અને જેવો વારંવાર સમજાવવા

પણ્ણવગ્રાહી ત્વરિતગ્રાહી ભવતિ । તેષાં પરિષદ્ દુર્વિદગ્ધા । इत्येवमुक्तरीत्या त्रिविधा परिषद् विज्ञेया । इहाद्ये उमे अनुयोगार्हे, तृतीया तु अनुयोगानर्हा । एतत्सर्व-मुक्त्वा सूत्रार्थो वक्तव्यः । इत्येवमनुयोगस्य द्वादश द्वाराणि वक्तव्यानि भवन्ति । सूत्रकारस्तु शेषाणि द्वाराण्युपलक्षयितुं ‘कस्य शास्त्रस्यायमनुयोगः ?’ इति सप्तमं द्वारं चेतसि निधाय ‘जइ सुयनाणस्स उद्देशो’ इत्यारभ्य ‘इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो’ इति यावदुक्तवान् ॥मू० ५॥

કો વિશિષ્ટ તત્ત્વજ્ઞાની માન બેઠે છે અને સમજાને પર ખી જો અપને સૂત્રે આગ્રહ કો છોડતે નથી છે એસે વ્યક્તિ દુર્વિદગ્ધ કહે ગયે છે । इन की सभा का नाम दुर्विदग्ध सभा है । इस प्रकार इन तीन सभाओं में से आदि की दो सभाएं तो अनुयोग के योग्य हैं, परन्तु जो तीसरी सभा है वह अनुयोग है वह अनुयोग के योग्य नहीं हैं ।—

यह सब अनुयोग से लगता हुआ विषय पहिले कहकर अनुयोगाचार्य को सूत्रार्थ का कथन करना चाहिये । इस प्रकार ये अनुयोग के १२ द्वार हैं । इन बारह द्वारों को अनुयोगाचार्य के विषय कहना चाहिये । सूत्रकारने यद्यपि इन १२ द्वारों का यहाँ कथन नहीं किया है तो भी उन्होंने शेष द्वारों को उपलक्षित करनेकेलिये “कस्य शास्त्रस्य अयम्-अनुयोगः” इस सप्तमद्वार को चित्त में रखकर—“जइ सुयनाणस्स उद्देशो” यहाँ से प्रारंभ करके “इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो” यहाँ तक कहा है । स्थिर परिपाटी—

છતાં પણ પોતાના દુરાગ્રહને છોડતા નથી, જેઓ જ્ઞાની પુરુષોની વાત સમજવાને પણ તત્પર નથી એવાં પુરુષોને દુર્વિદગ્ધ કહે છે અને એવા પુરુષોની સભાને દુર્વિદગ્ધ પરિષદ કહે છે. આ ત્રણ પ્રકારની જે પરિષદો કહી તેમાંની પહેલા બે પ્રકારની પરિષદો તો અનુયોગને પાત્ર ગણાય છે, પણ ત્રીજા પ્રકારની જે દુર્વિદગ્ધ પરિષદ છે, તેને અનુયોગને પાત્ર ગણી નથી, અનુયોગને લગતું આ બધું કથન સૌથી પહેલાં કરવું જોઇએ. ત્યારબાદ જ અનુયોગાચાર્યે સૂત્રાર્થનું કથન કરવું જોઇએ. આ પ્રકારના તે અનુયોગના ૧૨ દ્વાર છે. તે બાર દ્વારોનું અનુયોગાચાર્યે (શિષ્ય આગળ કથન કરવું જોઇએ. જો કે સૂત્રકારે બે ૧૨ દ્વારોનું કથન અહીં કયું નથી, છતાં પણ બાકીના દ્વારોને ઉપલક્ષિત કરવા નિમિત્તે “કસ્ય શાસ્ત્રસ્ય અયમ્ અનુયોગઃ” “કયા સૂત્રનો આ અનુયોગ છે,” આ સાતમાં દ્વારને હૃદયમાં ધારણ કરીને “જइ सुयनाणस्स उद्देशो” આ સૂત્રપાઠથી શરૂ કરીને “इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो” આ સૂત્રપાઠ પર્યન્તનું કથન કયું છે. “स्थिर परिपाटी” આ વિશેષણ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૬ શ્રુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૫૩

મૂલમ્—આવસ્સયં ણં કિં અંગં અંગાઈ ? સુયં સુયાઈ ?
 સંધો સંધા ? અજ્ઞયણં અજ્ઞયણાઈ ? ઉદેસો ઉદેસા ? । આવસ્સયં
 ણં નો અંગ, નો અંગાઈ, સુયં, નો સુયાઈ, સંધો, નો સંધા, નો
 અજ્ઞયણં, અજ્ઞયણાઈ, નો ઉદેસો, નો ઉદેસા ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા-આવશ્યકં સ્વલુ કિમ્ અન્નમ્ અજ્ઞાનિ ? શ્રુતં શ્રુતાનિ ?, સ્કન્ધઃ સ્કન્ધાઃ ?
 અધ્યયનમ્ અધ્યયનાનિ ?, ઉદેશઃ ઉદેશાઃ ? । આવશ્યકં સ્વલુ ના અન્નં, નો

જો વિશેષણ વતલાયા ગયા હૈ વહ યહ પ્રમાણિત કરતા હૈ કિ હમ વિશેષણ-
 વાલા મુનિ કમી મી સૂત્ર ઔર અર્થ કો વિપરીત નહી કરતા હૈ । જો આદેય
 વચનવાલા મુનિ હોતા હૈ—અસકે થોડે મી વચન મહાર્થ સે ભરે હુએ જૈસે
 માલુમ હોતે હૈ । આહરણ નામ ઉદાહરણ કા હૈ । હેતુ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—
 ૧ એક જ્ઞાપક હેતુ ઔર દૂસરા કારક હેતુ-ઘટકા-અભિવ્યંજક દીપ ઘટકા જ્ઞાપક
 હેતુ હૈ । ઘટકા કર્તા કુંભકાર-ઘટકા કારક હેતુ હૈ । ઉપસંહાર કા નામ
 ઉચ્ચય હૈ । નૈગમાદિ સાત નય હૈ । ॥સૂત્ર ૫॥

“આવસ્સયં ણં” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૬॥

શબ્દાર્થ—(આવસ્સયં ણં) આવશ્યક સૂત્ર (કિં અંગમ્) કયા ? એક અંગ
 રૂપ હૈ ? (અંગાઈ) યા અનેક અંગરૂપ હૈ ? (સુયં સુયાઈ) એક શ્રુતરૂપ હૈ ?
 યા અનેક શ્રુતરૂપ હૈ ? (સંધો સંધાઈ) એક સ્કંધરૂપ હૈ ? યા અનેકસ્કંધ
 રૂપ હૈ ? (અજ્ઞયણં અજ્ઞયણાઈ) એક અધ્યયનરૂપ હૈ—યા અનેક અધ્યયનરૂપ
 હૈ ? (ઉદેસો ઉદેસા) એક ઉદેશરૂપ હૈ યા અનેક ઉદેશરૂપ હૈ ?—

એ વાતનું સમર્થન કરે છે કે આ વિશેષણવાળો મુનિ કદી પણ સૂત્ર અને અર્થનું
 વિપરીત કથન કરતો નથી. જે મુનિ આદેયવચનથી યુક્ત હોય છે, તેમના થોડાં
 વચનો પણ મહા અર્થથી ભરેલા લાગે છે. “આહરણ” એટલે ઉદાહરણ અથવા
 દૃષ્ટાન્ત હેતુ બે પ્રકારનો હોય છે—(૧) જ્ઞાપકહેતુ અને (૨) કારક હેતુ ઘટનો
 અભિવ્યંજક દીપક ઘટના જ્ઞાપક હેતુરૂપ છે. ઘટનું નિર્માણ કરનાર કુંભકાર (કુંભાર)
 ઘટના કારકહેતુરૂપ છે. ઉપસંહારનું નામ ઉપગમ છે. નૈગમ આદિ સાત નય છે. । સૂત્ર ૫.

“આવસ્સયં ણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(આવસ્સયં ણં અંગમ્ અંગાઈ ?) આવશ્યક સૂત્ર શું એક અંગરૂપ
 છે, કે અનેક અંગરૂપ છે ? (સુયં સુયાઈ ?) શું તે એક શ્રુતરૂપ છે, કે અનેક શ્રુત-
 રૂપ છે ? (સંધો સંધાઈ ?) શું તે એક સ્કંધરૂપ છે, કે અનેક સ્કંધરૂપ છે ?
 (અજ્ઞયણં અજ્ઞયણાઈ ?) શું તે એક અધ્યયનરૂપ છે, કે અનેક અધ્યયનરૂપ છે ?
 (ઉદેસો ઉદેસા ?) શું તે એક ઉદેશરૂપ છે, કે અનેક ઉદેશરૂપ છે ?

अङ्गानि, श्रुतम्, नो श्रुतानि, स्कन्धः नो स्कन्धाः नो अध्ययनम् अध्ययनानि, नो उद्देशो नो उद्देशाः ॥सू० ६॥

टीका—‘आवस्सयं णं’ इत्यादि—

आवश्यकं खलु किं द्वादशान्तर्गतमेकमङ्गमिदम् ? किं वा अङ्गानि—बहून्यङ्गानि । तथा किं श्रुतं श्रुतानि ? आवश्यकं किमेकश्रुतरूपं किंवाऽनेकश्रुतरूपम् ? तथा किं स्कन्धः स्कन्धाः—किमेकः स्कन्धः, बहवो वा स्कन्धाः ! । तथा अध्ययनम् अध्ययनानि आवश्यकमिदं किमेकमध्ययनं किं वा बहून्यध्ययनानि । तथा उद्देश-उद्देशा वा—किम्—एक उद्देशो वा बहवो वा उद्देशाः इति दश प्रश्नाः ।

उत्तरयति—‘आवस्सयं णं’ इत्यादि । आवश्यकं खलु नो एकाङ्गरूपं नैवा-

उत्तर—(आवस्सयं णं नो अंगं नो अंगाइं) अंगं प्रविष्टरूपं श्रुतं होने के कारण आवश्यक सूत्र—न एक अंगरूप है । और न अनेक अंगरूप है । ‘सुयं नो सुयाइं’ यह तो एक श्रुतरूप है । अनेक श्रुतरूप नहीं है । (खंधो नो खंधा) एक स्कंधरूप है, अनेक स्कंधरूप नहीं है । (नो अज्झयणं, अज्झयणाइं) षड् अध्ययन स्वरूप होने से यह एक अध्ययनरूप नहीं है किन्तु अनेक अध्ययनरूप है । (नो उद्देशो नो उद्देशा) यह न एक उद्देशरूप है और न अनेक उद्देशरूप है । इसका तात्पर्य यह है कि यह आवश्यक सूत्र एक श्रुत स्कंधात्मक और षड् अध्ययनरूप है । यह एक अंगरूप और अनेक अंगरूप नहीं है । अनेक श्रुतस्कंधरूप नहीं है और न एक अध्ययनात्मक है, न एक और अनेक उद्देशरूप ही है ।

शंका—यहां ये दो प्रश्न हैं कि “यह आवश्यक सूत्र १ अंगरूप है या अनेक अंगरूप है” करने योग्य ही नहीं प्रतीत होते—क्यों कि यह सूत्र नन्दि-

उत्तर—(आवस्सयं णं नो अंगं नो अंगाइं) अंगं प्रविष्ट श्रुतरूप होवाने कारणे आवश्यकसूत्र एक अंगरूप पणु नथी, अने अनेक अंगरूप पणु नथी. (सुयं नो सुयाइं) ते एक श्रुतरूप न छे. अनेक श्रुतरूप नथी, (खंधा नो खंधा) ते एक स्कंधरूप छे, अनेक स्कंधरूप नथी, (नो अज्झयणं, अज्झयणाइं) ते ६ अध्ययनवाणुं होवाने क्षीघे तेने एक अध्ययनवाणुं कही सकय नही, पणु अनेक अध्ययनवाणुं कही सकय. (नो उद्देशो, नो उद्देशा) ते एक उद्देशरूप पणु नथी अने अनेक उद्देशरूप पणु नथी. आ कथननो भावार्थ नीचे प्रमाणे छे—आवश्यक सूत्र एक श्रुतस्कंधात्मक अने छ अध्ययनवाणुं छे, ते एक अंगरूप पणु नथी अने अनेक अंगरूप पणु नथी, ते अनेक श्रुतस्कंधरूप पणु नथी, ते एक अध्ययनात्मक पणु नथी, अने एक अथवा अनेक उद्देशरूप पणु नथी.

शंका—“आवश्यक सूत्र एक अंगरूप छे ? के अनेक अंगरूप छे ?” आ ये प्रश्नो अही पृष्ठता निर्जता न छता, कारणे के आपे न आगण ऐनी बात करी

अनुयोगचन्द्रिका टीका ६ श्रुतज्ञानस्वरूपनिरूपणम्

५५

नेकाङ्गरूपम् आभ्यानङ्गप्रविष्टत्वात् । श्रुतम्—इदमेकश्रुतरूपमस्ति नो श्रुतानि—बहु-
श्रुतात्मकं च नास्ति । स्कन्धः—इदमेकस्कन्धरूपं नतु स्कन्धाः—बहुस्कन्धात्मकं
न भवति । नो अध्ययनम्—नैकाध्ययनरूपम्, किन्तु अध्ययनानि—बहुध्ययनात्म-
कतयाऽनेकाध्ययनरूपम् । नो उद्देशः—इदं नैकोद्देशरूपम्, नो उद्देशाः—न बहुद्देशा-
त्मकमित्यर्थः ।

अयं भावः—इदम् आवश्यकम् एकश्रुतात्मकत्वात् श्रुतमृण्येक स्कन्धात्मकत्वात्
स्कन्धः बहुध्ययनात्मकत्वात् अध्ययनानि च, किन्तु नो अङ्गम्, नो अङ्गानि, नो
श्रुतानि, नो स्कन्धाः, नो अध्ययनम्, नो उद्देशः, नो उद्देशा वा ।

नचावश्यम्—अङ्गम् अङ्गानि वा ? इति प्रश्नद्वयमकरणीयमेव, नन्दिसूत्रे-
ऽभ्यानङ्गप्रविष्टत्वेनोक्तत्वात्, अत्र तृतीयसूत्रे—‘इमं पुण पटुवणं पटुच्च अणंग-
पविट्टस्स अनुओगो’ इत्यनेनायं सूत्रस्यानङ्गप्रविष्टत्वेनोक्तत्वात् ? इति चेत्,
उच्यते—यत्तावदुक्तम्—नन्दिसूत्रेऽभ्यानङ्गप्रविष्टत्वमुक्तम्, अतोऽत्र सूत्रेऽभ्याङ्गत्वविषये
प्रश्नोऽयुक्त इति, तदयुक्तम्, यतो नास्ति कोश्वदेवंविधो नियमो यत्प्रथमं नन्दि-
सूत्रं व्याख्यायैवेदं सूत्रं व्याख्येयम्, कदाचिदनुयोगद्वारं व्याख्यायैव नन्दिसूत्रं

सूत्र में अनंग प्रविष्टरूप से कहा गया है । तथा इसी सूत्र के तृतीय सूत्र में
“इमं पुण पटुवणं पटुच्च अणंगपविट्टस्स अनुओगो” इस अंशद्वारा भी इसी
बात को कहा है कि यह सूत्र अनंग प्रविष्ट श्रुतरूप है । अतः अनंग-
प्रविष्ट होने के कारण इस सूत्र के प्रति ये पूर्वोक्त दो प्रश्न अकरणीय ही हैं ।
उत्तर—इस बात को लेकर कि नन्दिसूत्र में इस सूत्र के अनंग प्रविष्ट कहा है;
इसलिये सूत्र में अंगत्वविषयक ये दो प्रश्न अयुक्त हैं सो ऐसा कहना ठीक
नहीं है क्यों कि इस प्रकार का कोई नियम तो है नहीं कि पहिले नन्दि-
सूत्र का व्याख्यान करके ही इस सूत्र का व्याख्यान करना चाहिये । कदाचित्
ऐसा भी हो सकता है कि पहिले इस अनुयोगद्वारा सूत्र का व्याख्यान कर

छे के आवश्यक सूत्रने नन्दिसूत्रमां अनंग प्रविष्ट (अंगभाह्य) सूत्ररूपे कहेवामां
आव्युं छे. वणी आ अन्यना त्रीन सूत्रमां ज “इमं पुण पटुवणं पटुच्च अणंग-
पविट्टस्स अनुओगो” आ सूत्रांश द्वारा पण आवश्यक सूत्रने अनंग प्रविष्ट श्रुत
रूपे प्रतिपादित करवामां आव्युं छे. आ रीते तेने अनंगप्रविष्ट श्रुतरूप प्रकट कयां
आद उपयुक्त जे प्रश्नो शुं अस्थाने नथी ? आ प्रकारना प्रश्न करी पछवामां शुं
पुनरुक्ति होपनी संभावना रहैती नथी ?

उत्तर—नन्दिसूत्रमां आवश्यकसूत्रने अनंग प्रविष्ट श्रुतरूप कहेवामां आव्युं
छे, तेथी आ सूत्रने अनुलक्षीने अंगत्व विषयक जे जे प्रश्नो पछवामां आव्या छे,
ते प्रश्नाने अयुक्त गणुवा ते उचित नथी, कारण के जेवो केह नियम तो नथी

વ્યાખ્યેયં ભવેત્ । કિઠ્ચ-યદિ નન્દિસૂત્રેઽસ્યા બાહ્યત્વે નિર્ણતિ પુનરસ્યાઙ્ગત્વવિષયે પ્રશ્નો નિર્ણયસ્તર્હિ ‘જહ સુયનાણસ’ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો અણુણ્ણા અણુઓગો ય પવ-ત્તહ, કિં અંગપવિટ્ઠસ.....? કિં અંગવાહિરસ્સ.....?’ इत्यादि तृतीयसूत्रोप-न्यास एव निरर्थकः स्यात्, अतो नास्ति नन्दिस्त्र-अनुयोगद्वारसूत्रयोः पौर्वा-पर्यभावः, अतोऽन्याङ्गत्वविषये प्रश्नः समीचीन एव ।

નનુ મજ્જલાર્થે નન્દિસૂત્રમેવ પ્રથમં વ્યાખ્યાતવ્યમ્ ? इति चेदुच्यते-तदपि न, नन्दिस्त्रेऽपि ज्ञानपठचक्रेत्कीर्त्तनस्यैव मज्जलत्वम्, तच्चेहाऽप्यस्तीति मज्जल-स्यापि नन्दिस्त्रस्य प्रथमव्याख्याने प्रयोजनाभावात् । यच्चेत्तम्-‘इमं पुण पट्टवणं’

કે બાદ મેં વ્યાખ્યાતા નન્દિસૂત્ર કા વ્યાખ્યાન કરદે । કિઠ્ચ-યદિ નન્દિ સૂત્ર મેં ઇસમેં અંગવાહ્યતા કા નિર્ણય હોને સે અંગત્વ વિષયક પ્રશ્ન નિર્ણયક હૈ એસા હી માન લિયા જાવે તો ફિર “જહ સુયનાણસ” इत्यादि तृतीय सूत्र का उपन्यास ही निरर्थक हो जावे गा । इसलिये नन्दिस्त्र और अनुयोग-द्वारસૂત્ર इनमें पौर्वापर्यभाव नहीं है-अतः अंगत्व विषयक प्रश्न इसके ऊपर जो किया गया है वह समीचीन ही है ।

શંકા-મંગલ કે નિમિત્ત નન્દિસૂત્ર હી પ્રથમ વ્યાખ્યાન કરને યોગ્ય હૈ અતઃ ઇસ તરહ ઇન મેં પૌર્વાપર્યભાવ આ જાયગા-સો એસી મી વાત નહી હૈ ક્યોં કિ નન્દિસૂત્ર મેં મી પાંચ જ્ઞાનોં કે કથન સે જિસ પ્રકાર મંગલતા હૈ ડસી પ્રકાર સે વહ મંગલતા ઇસમેં મી હૈ । क्योंकि यहां पर भी पांच ज्ञानों

જ કે પહેલાં નન્દિસૂત્રનું વ્યાખ્યાન (કથન) કર્યા બાદ આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન કરવું ન જોઈએ. કહાય એવું પણ સંભવી શકે છે કે પહેલાં આ અનુયોગ દ્વાર સૂત્રનું વ્યાખ્યાન કરીને ત્યારબાદ વ્યાખ્યાતા નન્દિસૂત્રનું વ્યાખ્યાન પણ કરે.

વળી એવું જ માની લેવામાં આવે કે નન્દિસૂત્રમાં આ સૂત્ર (આવશ્યક સૂત્ર) ની અંગબાહ્યતાનો નિર્ણય થઈ ગયો હોવાથી-અંગત્વ વિષયક જે પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા છે તે નિર્ણયક લાગે છે, એવી પરિસ્થિતિમાં તો “જહ સુયનાણસ” इत्यादि त्रीण सूत्रनो उपन्यास જ નિર્ણયક બની જશે. નન્દિસૂત્ર અને અનુયોગદ્વારસૂત્રમાં પૌર્વાપર્ય ભાવનો સદ્ભાવ નથી, તેથી તેને અનુલક્ષીને અંગત્વ વિષયક જે પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા છે તે ઉચિત જ છે.

શંકા-મંગળનિમિત્તની અપેક્ષાએ તો નન્દિસૂત્ર જ પ્રથમ વ્યાખ્યાન કરવા યોગ્ય છે, તે કારણે તે અન્નેમાં પૌર્વાપર્ય ભાવનો સદ્ભાવ પણ સંભવી શકે છે.

ઉત્તર-એવી વાત પણ નથી, કારણ કે નન્દિસૂત્રમાં પણ પાંચ જ્ઞાનના કથનથી જેવી મંગળતાનો સદ્ભાવ છે, એવી જ મંગળતાનો આ સૂત્રમાં પણ સદ્ભાવ છે,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૬ ધ્રુતજ્ઞાનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૫૭

હત્યાદિનાઽસ્થાનઙ્ગત્વમુક્તમેવ, પુનરસ્ત્યાઙ્ગત્વવિષયે પ્રશ્નોઽસમીચીન એવેતિ. તત્સત્યમ્, પરન્તુ વિસ્મરણશીલાનામલ્પબુદ્ધિમર્તા શિષ્યાણામનુગ્રહાર્થમેવાયં પ્રશ્નઃ, હત્યસ્થા-ઙ્ગત્વવિષયે પ્રશ્નો નિર્દુષ્ટ એવેતિ બોધ્યમ્ ॥ સૂ. ૬ ॥

‘ઇમં પુણ પદ્ધવણં પદુચ્ચ આવસ્સગસ્સ અણુઓગો’ । इत्यनेन ‘आवश्यकम्’ इति सूत्रनाम निर्णीतम्, तथाऽनन्तरोक्तेषु दशसु प्रश्नेष्वावश्यकं श्रुतत्वेन स्कंध-त्वेनाध्ययनकलापात्मकत्वेन च निर्णीतम्, तस्मात् प्रकृते किम् ? इत्याह-‘तम्हा’ इत्यादिना

કા સર્વ પ્રથમ કથન કિયા ગયા હૈ । इस लिये इस बात को लेकर मंगल भूतभी नन्दिसूत्र का प्रथम व्याख्यान करना चाहिये यह बात नहीं बनती है । क्योंकि इस प्रकार के कथन में कोई खास प्रयोजन की पुष्टि नहीं होती है । तथा यह जो बात यही है कि ‘इमं पद्धवणं’ इत्यादि पाठ से भी इस अनुयोगद्वार में अनङ्गप्रविष्टता प्रतिपादित होती है अतः इस में यह अंगत्व विषयक प्रश्न असमीचीन ही है सो यह बात ठीक है-परन्तु जो शिष्य विस्मरणशील है और अल्पबुद्धिवाले हैं उनके अनुग्रह के लिये ही यह प्रश्न किया गया है । इस तरह इसमें यह अंगत्व विषयक प्रश्न निर्दोष ही है ऐसा जानना चाहिये । ॥सू. ६॥

“इमं पुण पद्धवणं पदुच्च आवस्सगस्स अणुओगो” इस सूत्र पाठ से इसका नाम आवश्यक सूत्र है यह निर्णीत हो जाता है, तथा अनन्तरोक्त दश प्रश्नों में यह आवश्यक श्रुतरूप है, स्कंधरूप है, और पद्धाध्ययनात्मक है यह

કારણ કે આ સૂત્રમાં પણ સૌથી પહેલાં પાંચ જ્ઞાનોનું જ કથન કરવામાં આવ્યું છે. આ દ્રષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો મંગળભૂત નન્દિસૂત્રનું જ પ્રથમ ધ્યાન કરવું જોઈએ, એવી વાત પ્રતિપાદિત થતી નથી, કારણ કે આ પ્રકારના કથનથી કોઈ ખાસ પ્રયોજનને પુષ્ટિ મળતી નથી.

તથા એવી જ દલીલ કરવામાં આવી છે કે “इमं पद्धवणं” ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા પણ આ અનુયોગ દ્વારમાં અનંગપ્રવિષ્ટતા પ્રતિપાદિત થાય છે, તેથી અંગત્વ વિષયક પ્રશ્નો અનુચિત જ છે, તો એ દલીલ પણ બરાબર નથી, કારણ કે જે શિષ્ય વિસ્મરણશીલ અને અલ્પબુદ્ધિવાળા હોય તેમના ઉપર અનુગ્રહ કરવાને માટે જ આ એ પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યા છે. તે કારણે અંગત્વ વિષયક જે પ્રશ્ન પૂછવામાં આવેલ છે, તે બધા નિર્દોષ પ્રશ્નો જ સમજવા જોઈએ. ॥ સૂ. ૬ ॥

‘इमं पुण पद्धवणं पदुच्च आवस्सगस्स अणुओगो’ આ સૂત્રપાઠ દ્વારા તેનું નામ આવશ્યકસૂત્ર છે, તે નિર્ણીત થઈ બદ્ય છે, અને ત્યાર પછીના દસ પ્રશ્નો દ્વારા એ નિર્ણીત થઈ બદ્ય છે કે આ સૂત્ર શ્રુતરૂપ છે, સ્કંધરૂપ છે અને છ

अनुयोगचन्द्रिका टीका. ७ आवश्यकस्यानुयोगस्वरूपनिरूपणम्

५९

प्राप्तिम् । अयं भावः—इदं शास्त्रमावश्यकानि रूपतया निर्णीतम्, अतः आवश्यकानि शब्दानामर्थो निरूपणीयः ! स च निक्षेपपूर्वक एव स्पष्टतया निरूपितो भवति, अतः आवश्यकानि निक्षेपः क्रियते । निक्षेपश्च निक्षेपणं आवश्यकानि देयथासम्भवं नामादिभेदनिरूपणम् ॥सू० ७॥

उत्कृष्टतो जघन्यतश्च किञ्चान् निक्षेपः कर्तव्यः ? इत्याह —

मूलम्—जत्थ य जं जाणेज्जा निक्खेवं निक्खिक्खे निरवसेसं ।
जत्थ वि य न जाणेज्जा चउक्कग निक्खिक्खे तत्थ ॥सू० ८॥

छाया—यत्र च यं जानीयाद् निक्षेपं निक्षिपेत् निरवशेषम् । यत्रापि च न जानीयात्, चतुष्कं निक्षिपेत्तत्र ॥सू० ८॥

के अर्थ का विवेचन स्पष्टरूप से नहीं हो सकता है । इसलिये इन आवश्यक आदि शब्दों वा अब निक्षेप किया जाता है । निक्षेप का अर्थ—आवश्यक आदि शब्दों के यथा सम्भव नामादि भेदों का निरूपण करना—होता है । ॥सूत्र ७॥

उत्कृष्टरूप से और जघन्यरूप से कितने निक्षेप कर्तव्य होते हैं इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि— “जत्थ य जं जाणेज्जा” इत्यादि । सू० ८ ॥

शब्दार्थ—(जत्थ य जं जाणेज्जा) जीवादिरूप वस्तु में निक्षेप यदि निक्षेप—न्यास—को जानता हो तो उस जीवादिरूप वस्तु में वह (निरवसेसं निक्खेवं निक्खिक्खे) नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भावादि स्वरूप समस्त निक्षेप भेदों का निरूपण करें । (जत्थ वि य न जाणेज्जा तत्थ चउक्कगं निक्खिक्खे) तथा जिस वस्तु में जीवादिरूप पदार्थ में—

क्या बिना अर्थानु विवेचन स्पष्टतापूर्वक थोड़ा शक्तुं नहीं। तेथी आ आवश्यक आदि पदोना हुवे निक्षेप करवाभां आवे छे.

निक्षेपना अर्थ आवश्यक शब्दोना यथा संभव नामादि लेहोनुं निरूपण करवुं तेनुं नाम न निक्षेप छे. ॥ सू० ७ ॥

उत्कृष्टरूपे अने जघन्यरूपे कटला निक्षेप कर्तव्य (यखा येज्य) होय छे, ते प्रकट करवाने माटे सूत्रकार कहे छे डे—

“जत्थ य जं जाणेज्जा” इत्यादि—

शब्दार्थ—(जत्थ य जं जाणेज्जा) अवादिइय वस्तुभां निक्षेप निक्षेप (न्यास)ने जानुतो होय तो (निरवसेसं निक्खेवं निक्खिक्खे) ते अवादिइय वस्तुभां नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव अने भावादिइय निक्षेपना समस्त लेहोनुं निरूपण करवुं लेछे. (जत्थ वि य न जाणेज्जा तत्थ चउक्कगं निक्खिक्खे) तथा जे वस्तुभां—अवादिइय पदार्थभां—समस्त निक्षेपाने (निक्षेप निक्षेप करनार शुरु)

ટીકા—‘જત્થ ચ’ इत्यादि—

यत्र च=जीवादि वस्तूनि यं निक्षेपं-न्यासं जानीयात्,
तत्र जीवादिवस्तूनि निरवशेषं=समग्रं-नाम स्थापना द्रव्यक्षेत्रकालभवभावादि
स्वरूपं निक्षेपभेदसमूहं निक्षिपेत्-निरूपयेत् । यत्रापि च अपि च=पुनः यत्र=यस्मिन्
जीवादिवस्तूनि सर्वान् निक्षेपान् न जानीयात्, तत्र-तस्मिन्नपि जीवादिवस्तूनि
चतुष्कं-नामस्थापनाद्रव्यभावरूपं निक्षेपं निक्षिपेत्-न्यस्येत् । अयं भावः-यत्र
नामस्थापनाद्रव्यक्षेत्रकालभवभावादिलक्षणा भेदा ज्ञायन्ते, तत्र एभिः सर्वैरपि
भेदैर्वस्तुनो निक्षेपो भवति । यत्र तु सर्वे भेदा न ज्ञायन्ते, तत्रापि नामादि-
भिश्चतुर्भिर्वस्तुनिक्षेपव्यमेव, नामादीनां सर्वव्यापकत्वात् । न हि किमपि सदृशं
वस्तु विद्यते, यत्र नामादिचतुष्टयं नास्तीति ॥सू० ८॥

यदि वह निक्षेपता समस्त निक्षेपों को नहीं जानता हो तो भी उस वस्तु में वह नाम स्थापना, द्रव्य, और भावरूप चार निक्षेपों का न्यास करें ।

भावार्थ—जहां पर नाम स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, और भाव आदिरूप निक्षेप भेद जाने जाते हैं वहां पर इन समस्त भी भेदों से वस्तु का निक्षेप होता है । परन्तु जहां ये सब भेद नहीं जाने जाते हैं वहां भी नाम आदि चार वस्तु का निक्षेप तो करना ही चाहिये । क्यों कि नामादिक सर्वव्यापक हैं । ऐसी कोई वस्तु नहीं है कि जिस में नामादि चतुष्टय नहीं हैं ।

लोक में या आगम में जितना भी शब्दव्यवहार होता-है-वह कहाँ किस अपेक्षा से किया जा रहा है । इस ग्रन्थी को सुलझाना ही निक्षेप-व्यवस्था का काम है । प्रयोजन के अनुसार एक ही शब्द के अनेक अर्थ हो

બાણુતા ન હોય, તે વસ્તુમાં પણ નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ નિક્ષેપના ચાર ભેદોનું નિરૂપણ તો તેમણે કરવું જ બોધ્યે.

ભાવાર્થ—જ્યાં નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભવ અને ભાવ આદિરૂપ નિક્ષેપ બાણી શકાય એમ હોય ત્યાં આ સમસ્ત ભેદોની અપેક્ષાએ વસ્તુનો નિક્ષેપ થાય છે. પરન્તુ જ્યાં આ અર્થો ભેદો બાણી શકાતા ન હોય ત્યાં પણ નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય અને ભાવ, આ ચાર વસ્તુનો નિક્ષેપ તો કરવો જ બોધ્યે, કારણ કે નામાદિક ચારે વસ્તુઓ તો સર્વવ્યાપક છે. એવી કોઈ પણ વસ્તુ નથી કે જેમાં નામાદિ ચતુષ્ટયનો સંભાવ ન હોય.

લોકમાં અથવા આગમમાં જેટલા શબ્દોનો વ્યવહાર થાય છે તે ક્યાં કંઈ દૃષ્ટિએ કરવામાં આવતો હોય છે, આ સમસ્યાને હલ કરવાનું જ નિક્ષેપ-વ્યવસ્થાનું કામ છે. એક જ શબ્દના પ્રયોજન અનુસાર અनेક અર્થ થતા હોય છે. તે અર્થ

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० ९ आवश्यकस्य निक्षेपनिरूपणम्

६१

आवश्यकं, श्रुतं, स्कन्धम्, अध्ययनानि च निक्षेप्यामीति प्रतिज्ञातम् ।
तत्र प्रतिज्ञानुसारेण प्रथममावश्यकनिक्षेपार्थमाह—

मूलम्—से किं तं आवस्सयं ? आवस्सयं चउव्विहं पणणत्तं,
तं जहा—नामावस्सयं ठवणावस्सयं दव्वावस्सयं भावावस्सयं ।सू० ९।

जाते हैं । ये अर्थ ही उस शब्द के न्यास—निक्षेप—अथवा विभाग हैं । शब्द का अर्थ यदि निक्षेपा नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव आदि रूप से जानता है तो उसका कर्तव्य है कि वह इन सब न्यासों का विश्लेषण उस शब्द के अर्थ को समझाने में करे । यदि वह इन सब भेदों से परिचित नहीं है तो कम से कम उस शब्दार्थ को वह नाम, स्थापना, द्रव्य और भावरूप से विश्लेषण अवश्य करें । क्यों कि ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जो इन चाररूप न हो । हरएक पदार्थ कम से कम नाम, स्थापना, द्रव्य और भावरूप तो है ही । इन में से वक्ता किस निक्षेपरूप अर्थ का प्रतिपादन कर रहा है यह बात सहज में समझ में आ जाती है । इस से प्रकृत अर्थ का बोध और अप्रकृत अर्थ का निराकरण होनेरूप फल श्रोता को प्राप्त हो जाता है । सूत्र ८।

अब सूत्रकार प्रतिज्ञा के अनुसार आवश्यक इस शब्द का निक्षेपार्थ क्या है । इस बात को स्पष्ट करते हैं । क्यों कि उन्होंने अभी ऐसी प्रतिज्ञा की है कि मैं आवश्यक, त, स्कन्ध और अध्ययनों का निक्षेप करूँगा ।

७ ते शब्दना न्यास, निक्षेप अथवा विभागइय छे । जे निक्षेपा (निक्षेप करनार शुरु) शब्दना अर्थ नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव अने भाव आदि इपे जाणुतो होय, तो तेनुं जे कर्तव्य थछ पडे छे के तेखे शब्दना अर्थ समजवती वजते आ जधां न्यासो (विभागो)नुं विश्लेषणकरवुं जेछज्ये । जे निक्षेपा जे जधां खेहोथी परिचित न होय तो तेखे शब्दार्थनुं नाम, स्थापना, द्रव्य अने भावइपे तो अवश्य विश्लेषण करवुं ७ जेछज्ये, कारण के जेवो केछ पदार्थ नथी के जेभां नाम आदि उपयुक्त तार निक्षेपोना सहभाव ७ न होय त्रयेक पदार्थ जोछाभां जोछा नाम, स्थापना, द्रव्य अने भावइपे तो अवश्य होय ७ छे । आ निक्षेपो-भांथी वक्ता क्या निक्षेपइय अर्थनुं प्रतिपादन करी रह्यो छे जे वात सरणताथी समजछ जय छे । तेना द्वारा प्रकृत अर्थना जोध अने अप्रकृत अर्थनुं निराकरण थवाइप इण श्रोताने प्राप्त थछ जय छे । ॥ सू. ८ ॥

इवे सूत्रकार पोतानी प्रतिज्ञा अनुसार “आवश्यक” आ शब्दना शेा निक्षे-पार्थ छे, ते प्रकट करे छे, कारण के तेमखे हमखुं ७ (पूर्व सूत्रभां) जेवुं वयन जाणुं छे के “हुं आवश्यक, श्रुत, स्कन्ध अने अध्ययनोना निक्षेप करीश ।”

છાયા—અથ કિં તદાવશ્યકમ્ આવશ્યકં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞસમ્, તદ્વયા—નામા-
વશ્યકં સ્થાપનાવશ્યકં, દ્રવ્યાવશ્યકં, ભાવાવશ્યકમ્ ॥સુ. ૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

‘સે’ इति ‘अथ’ शब्दार्थे । स चेह वाक्योपन्यासे । उक्तं च—‘मङ्गला-
नन्तरारम्भप्रश्नकात्स्न्यं’ इति । किं शब्दः प्रश्ने । तदिति पूर्वप्रक्रान्तपरामर्शे
ततोऽयं निष्कर्षो—अथ तत्=पूर्वप्रक्रान्तम् आवश्यकं किम्=किं स्वरूपम् ?
इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—‘आवस्सयं’ इत्यादिना । आवश्यकम्—अवश्यं कर्त्त-
व्यम्—आवश्यकम्—श्रमणादिभिश्चतुर्विधसंघेयवद्यमुभयकालं क्रियते इति भावः ।

સે કિં તં આવસ્સયં इत्यादि । ॥सूत्र १॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આવસ્સયં) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે ભદંત ! પૂર્વ
પ્રક્રાન્ત આવશ્યકતા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(આવસ્સયં ચઉચ્ચિહં પળ્ણત્તં) આવશ્યક ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા
હૈ । (તંજહા) ઉસકે વે ચાર પ્રકાર વે હૈ—(નામાવસ્સયં, ઠવણાવસ્સયં, દવ્વા-
વસ્સયં ભાવાવસ્સયં) નામ આવશ્યક સ્થાપના આવશ્યક દ્રવ્ય આવશ્યક, ઔર
ભાવ આવશ્યક । અથ શબ્દ કા પ્રયોગ મઙ્ગલ અનન્તર, આરંભ, પ્રશ્ન ઔર
કાત્સ્ન્યે ઇન અર્થોં મેં હોતા હૈ । યહાં ઇસકા પ્રયોગ વાક્ય કે ઉપન્યાસ મેં
હુઆ હૈ । “કિં શબ્દ પ્રશ્ન મેં આયા હૈ । અવશ્ય કર્તવ્ય જો હોતા હૈ ઉસકા
નામ આવશ્યક હૈ । સાધુસાધ્વી ઔર શ્રાવક શ્રાવિકારૂપ ચતુર્વિધ સંઘ કે
લિયે પ્રાતઃકાલ ઔર સાયંકાલ યહ વર્મ આવશ્યક કર્તવ્ય કહા ગયા હૈ ।—અથવા

“સે કિં તં આવસ્સયં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આવસ્સયં ?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
“હે ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત આવશ્યકત્વં સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(આવસ્સયં ચઉચ્ચિહં પળ્ણત્તં) આવશ્યક ચાર પ્રકારના કહ્યા છે,
(તં જહા) એ ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નામાવસ્સયં, ઠવણાવસ્સયં, દવ્વા-
વસ્સયં, ભાવાવસ્સયં) (૧) નામ આવશ્યક, (૨) સ્થાપના આવશ્યક, (૩) દ્રવ્ય
આવશ્યક અને (૪) ભાવ આવશ્યક. “અથ” શબ્દનો પ્રયોગ મંગળ, અનન્તર,
આરંભ, પ્રશ્ન, અને કાત્સ્ન્ય, આટલા અર્થોમાં થાય છે. અહીં તેનો પ્રયોગ વાક્યના
ઉપન્યાસમાં થયો છે. (“કિં”) આ પદ પ્રશ્ન પૂછવા નિમિત્તે વપરાયું હોવાથી પ્રશ્ન-
ર્થત્વં વાચક છે. જે અવશ્ય કરવા યોગ્ય હોય છે તેને આવશ્યક કહે છે. સાધુ,
સાધ્વી, શ્રાવક અને શ્રાવિકા રૂપ ચતુર્વિધ સંઘને સવારે અને સાંજે (સાયંકાળે)
અવશ્ય કર્તવ્ય (કરવા યોગ્ય) અમુક જે કાર્યો છે તેને આવશ્યક કહે છે. અથવા
અવશ્ય શબ્દનો આ પ્રમાણે પણ અર્થ થાય છે—અચલ, અરુજ, અક્ષય, અન્યાયાધ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સુ. ૯ આવશ્યકસ્ય નિશ્લેષનિરૂપણમ્

૬૩

યદ્વા—અચલમરુજમક્ષયમવ્યાવાધમમન્દાનન્દસન્દેહરૂપં શાશ્વતં શિવસુખમવશ્યં—
નિશ્ચયેન ભવતિ યસ્માત્—તદાવશ્યકમ્ । યદ્વા—આ=સમન્તાદ્વશ્યા ભવન્તિ ઇન્દ્રિ-
યકષાયાદિ ભાવશત્રુઓ યસ્માત્તદાવશ્યકમ્ । યદ્વા—જ્ઞાનાદિગુણસમૂહો મોક્ષો વા
આ=સમન્તાદ્વશ્યઃ ક્રિયતેન્નેનેતિ—આવશ્યકમ્ ।

યદ્વા—‘આવસ્સય’ इत्यस्य ‘आवासक’ मितिच्छाया । विंशतिसंख्यकेषु
स्थानकेषु आवासयति—तदाराधने तत्परं करोत्यात्मानमित्यावासकं पण्डित्यावश्य-
कमेव । यद्वा—श्रुतचारित्रलक्षणधर्मारामे आवासयति—निवासयत्यत्मानमित्यावासकम् ।

इदं आवश्यकं चतुर्विधं—चत्स्रो विधा भेदा अस्येति चतुर्विधं—चतुःप्रकार-
कं प्रज्ञप्तं—प्ररूपितम् । तद्यथा—यथा—तदाव यकं चतुर्विधं भवति तथोच्यते—नामा-
वश्यकं, स्थापनावश्यकं, द्रव्यावश्यकं, भावावश्यकम्, इत्येवं चतुर्विधमावश्यकं भवति।सू९।

અવશ્યકશબ્દ કા અર્થ અચલ અરુજ અક્ષય અવ્યાવાધ અમન્દાનન્દ (અત્યન્ત આનંદ કા
પુંજ) કા સંદોહરૂપ જો શાશ્વત શિવ સુખ હૈ વહ હૈ । યહ શિવ સુખ નિશ્ચય સે જિસકે
પ્રભાવ વશ જીવાં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ આવશ્યક હૈ । અથવા—ઇન્દ્રિય ઔર કપાય
આદિ ભાવશત્રુ સર્વ પ્રકાર સે જિસ સે વશ મેં હો જાતે હૈ વહ આવશ્યકહૈ ।
અથવા—જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા સમૂહ યા મેં ક્ષ જિસકે દ્વારા સર્વ પ્રકાર સે વશ્ય
કિયા જાતા હૈ વહ આવશ્યક હૈ । અથવા—“આવસ્સય” કી સંસ્કૃત છાયા
“આવાસક” એસી મી હૈ—જો ૨૦ સ્થાનોં મેં—અર્થાત્ ઇન સ્થાનોં કી આરાધના
મેં—આત્મા કો તત્પર બનાતા હૈ ઉસકા નામ આવાસક હૈ ઔર વે । છહ
પ્રકાર કે આવશ્યક હી હૈ । અથવા—શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મોદ્યાન મેં જા આત્મા
કા નિવાસ કરતા હૈ વહ આવાસક હૈ । યહ આવાસકરૂપ આવશ્યક ચાર
પ્રકાર કા કથિત હુઆ હૈ । ॥સુત્ર ૯॥

અમન્દ આનંદના સંદોહરૂપ જે શાશ્વત શિવ સુખ છે તેને અવશ્ય કહે છે. જેના
પ્રભાવથી જીવને તે શિવ સુખની અવશ્ય પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે, તે વસ્તુનું નામ
આવશ્યક છે. અથવા—ઇન્દ્રિયો અને કષાય આદિ ભાવશત્રુઓ જેના દ્વારા સર્વ પ્રકારે
વશ થઈ જાય છે, તેનું નામ આવશ્યક છે. અથવા જ્ઞાનાદિ ગુણોના સમૂહ અથવા
મોક્ષ જેના દ્વારા સર્વ પ્રકારે વશ્ય (પાતાને અધીન) કરવામાં આવે છે, તેનું નામ
આવશ્યક છે. અથવા ‘આવસ્સય’ આ પદની સંસ્કૃત છાયા “આવાસક” પણ
થાય છે. એ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો આવશ્યકનો અર્થ આ પ્રમાણે પણ થાય
છે—જે ૨૦ સ્થાનોની આરાધના કરવામાં પાતાના આત્માને પ્રવૃત્ત રાખે છે તેનું
નામ આવાસક છે, અને એવાં છ પ્રકારના જ આવશ્યક છે. અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ
ધર્મધ્યાનમાં જે આત્મા નિવાસ કરે છે તેને આવાસક કહે છે. તે આવાસકરૂપ
આવશ્યક ચાર પ્રકારના કહ્યા છે. ॥ સુ. ૯ ॥

સમ્પ્રતિ નમાવશ્યકસ્ય સ્વરૂપં પ્રતિપાદયિતું સૂત્રકાર આહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નામાવસ્સયં ?, નામાવસ્સયં જસ્સ ણં જીવ-
સ્સ વા અજીવસ્સ વા જીવાણં વા અજીવાણં વા તદુભયસ્સ વા તદુ-
ભયાણં વા, આવસ્સણ્ણિ નામં કજ્જહિ, સે તં નામાવસ્સયં ॥સૂ.૦૧૦॥

છાયા—અથ કિં તદ્ નામાવશ્યકમ્ ? નામાવશ્યકં—યસ્ય સ્વલુ જીવસ્ય વા અજીવ-
સ્ય વા જીવાનાં વા અજીવાનાં વા, તદુભયસ્ય વા, તદુભયેષાં વા આવશ્યક-
મિતિ નામ ક્રિયતે, તદેતન્નામાવશ્યકમ્ ॥ સૂ. ૧૦॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં નામાવસ્સયં’ ઇતિ । અથ કિં
તન્નામાવશ્યકમ્ ? ઉત્તરયતિ—નામાવશ્યકમ્—એવં મન્વતિ યસ્ય સ્વલુ જીવસ્ય વા
અજીવસ્ય વા, જીવાનાં વા અજીવાનાં વા, તદુભયસ્ય વા જીવાજીવોભયસ્ય વા,
તદુભયેષાં વા=જીવાજીવોભયેષાં વા આવશ્યકમિતિ નામ ક્રિયતે તદેતન્નામાવ-

અવ કાર નામ આવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈં ઇસે પ્રતિપાદન કરને
કે લિપે સૂત્ર કથન કરતે હૈં—‘સે કિં તં નામાવસ્સયં’ ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૧૦॥

શબ્દાર્થ—શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે મદંત । (સે કિં તં નામાવસ્સયં) પૂર્વ
પ્રકાન્ત નામ આવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—(નામાવસ્સયં) નામ આ-
વશ્યક કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(જસ્સ ણં જીવસ્સ વા અજીવસ્સ વા જીવાણં
વા અજીવાણં વા) જિસ મિસી જીવ કા અથવા અજીવ કા, યા અનેકજીવો
કા યા અનેક અજીવો કા (તદુભયસ્સ વા તદુભયાણં વા) અથવા જીવઅજીવ
દોનો કા, યા જીવાજીવો કા (આવસ્સણ્ણિ નામં કજ્જહિ) આવશ્યક એસા
જો નામ સ્ખલિયા જાતા હૈ (સે તં નામાવસ્સયં) વહ નામ આવશ્યક હૈ । નામ

હવે સૂત્રકાર નામ આવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન
કરવાને માટે નીચેના સૂત્રનું કથન કરે છે—‘સે કિં તં નામાવસ્સયં’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(સે કિં તં નામાવસ્સયં ?) હે
ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત નામ આવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નામાવસ્સયં) નામ આવશ્યકનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—(જસ્સ ણં
જીવસ્સ વા અજીવસ્સ વા, જીવાણં વા અજીવાણં વા) જે કોઈ જીવનું અથવા
અજીવનું, અથવા અનેક જીવોનું કે અનેક અજીવોનું, (તદુભયસ્સ વા તદુભયાણં વા)
અથવા જીવ અજીવ બન્નેનું અથવા જીવોનું અને અજીવોનું (જીવો અને અજીવો
બન્નેનું) (આવસ્સણ્ણિ નામં કજ્જહિ) ‘આવશ્યક’ એવું જે નામ રાખવામાં આવે
છે. (સે તં નામાવસ્સયં) તેને ‘નામ આવશ્યક’ કહે છે. નામ આવશ્યકમાં નામ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂ. ૧૦ નામાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૫

શ્યકમ્ । નામ ચ તદાવશ્યકં ચેતિ નામાવશ્યકં નામરૂપમાવશ્યકમિત્યર્થઃ । યદ્વા-જીવાદિવસ્તુ નામાવશ્યકં ભવતિ, નામના-નામમાત્રેણ આવશ્યકં નામાવશ્યક-મિતિ વ્યુત્પત્તિસંભવાત્ । યદિ જીવાદિ-વસ્તુન આવશ્યકમિતિ નામ ક્રિયતે તદા જીવાદિવસ્તુ નામમાત્રેણાવશ્યકં ભવતીતિ નામાવશ્યકશબ્દાર્થો જીવાદિ-વસ્તુભવતીતિ ભાવઃ । નામ્નો લક્ષણં ચેદમ્—“યદ્વસ્તુનોઽભિધાનં, સ્થિતમન્યાર્થે તદર્થનિરપેક્ષમ્ “અપર્યાયાનભિધેયં ચ નામ યાદૃચ્છિકં તથા ।” ઇતિ । અયં ભાવ — ‘યદ્વસ્તુનોઽભિધાનમ્’ વસ્તુનઃ ઇન્દ્રાદેઃ યદભિધાનમ્=ઇન્દ્રેતિ વર્ણપચ્ચકાનુપૂર્વીરૂપં

આવશ્યક મેં નામ હી આવશ્યક હો જાતા હૈ । અર્થાત્ “આવશ્યક” એસા નામ ઉસ વસ્તુ કા રચ લિયા જાતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ મિસી મી જીવાદિક કા “આવશ્યક” એસા જો વ્યવહાર મેં ઇચ્છાનુસાર ગુણનિરપેક્ષ નામ રચ લિયા જાયા કરતા હૈ વહ “આવશ્યક” કા નામનિક્ષેપ હૈ । ઇસ નામનિક્ષેપ મેં વસ્તુ કેવલ “આવશ્યક” ઇસ નામ માત્ર સે હી ઉસરૂપ કહી જાતી હૈ । ઇસ નામનિક્ષેપ મેં તદનુરૂપ ગુણોં કી આવશ્યકતા નહીં હોતી હૈ । કેવલ વ્યવહાર ચલાને કે લિયે હી એસા ક્રિયા જાતા હૈ । અતઃ નામ માત્રેણ આવશ્યકં નામાવશ્યકં” ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર વહ આવશ્યકરૂપ વસ્તુ નામ માત્ર સે આવશ્યક કહા જાતા હૈ । આવશ્યક જૈસેગુણ ઉસમેં નહીં હોતે । ઇસ વિષય કા સુલાસા અર્થ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—જવ મિસી જીવાદિ વસ્તુ વા “આવશ્યક” એસા નામ રચ લિયા જાતા હૈ ઉસ સમય વહ જીવાદિક વસ્તુ નામ માત્ર સે આવશ્યક કહલાતી હૈ । ઇસ પ્રકાર નામરૂપ આવશ્યક ઇસ

જ આવશ્યક થઇ જાય છે. એટલે કે તે વસ્તુનું “આવશ્યક” એવું નામ સંભવામાં આવે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે કોઈ પણ જીવાદિકનું “આવશ્યક” એવું જે શુણ્નિરપેક્ષ (શુણ્ની અપેક્ષાથી રહિત) નામ, ઇચ્છાનુસાર વ્યવહાર નક્કી કરવામાં આવે છે તેને “આવશ્યકનો નામ-નિક્ષેપ” કહે છે. આ નામનિક્ષેપમાં વસ્તુને કેવળ “આવશ્યક” એવા નામ માત્રથી જ તે રૂપે યોગ્યતામાં આવે છે. આ નામ નિક્ષેપમાં તેને અનુરૂપ હોય એવા શુણ્ની આવશ્યકતા રહેતી નથી. કેવળ વ્યવહાર ચલાવવાને નિમિત્તે જ એવું કરવામાં આવે છે. તેથી “નામમાત્રેણ આવશ્યકં નામાવશ્યકં” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર તે આવશ્યકરૂપ વસ્તુને નામ માત્રની અપેક્ષાએ જ—એટલે કે નામ પુરતી જ આવશ્યક કહેવામાં આવે છે—જે કે આવશ્યકને અનુરૂપ શુણ્નોના તે વસ્તુમાં ચલાવ હોય છે. આ વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ હવે કરવામાં આવે છે—જ્યારે કોઈ જીવાદિક વસ્તુનું “આવશ્યક” એવું નામ સંભવામાં આવે છે. ત્યારે તે જીવાદિક વસ્તુને નામમાત્રની અપેક્ષાએ જ આવશ્યક

તન્નામ, इति प्रथमः प्रकारः । अथ द्वितीयेन प्रकारेण नाम्नो लक्षणमाह—
‘स्थितमन्यार्थे’ तदर्थनिरपेक्षं पर्यायानभिधेयं च’ इति । अन्यार्थे—गोपालदार-
कादौ स्थितम्—इन्द्रेति नाम तदर्थनिरपेक्षं=ताय प्रसिद्धस्य इन्द्रशब्दस्य परमै-
श्वर्यादिरूपो योऽर्थस्तन्निरपेक्षं भवति, गोपालदारकादौ परमैश्वर्यादेरभावात् ।
तथा—गोपालदारकादौ स्थितम् ‘इन्द्र’ इति नाम इन्द्रस्य ये पर्यायाः शक्रादयस्त-
दनभिधेयं च भवति । शक्रादौ इन्द्रेति प्रसिद्धं नाम वाच्यार्थशून्ये गोपालदारका-

शब्द का वह जीवादिरूप वस्तु वाच्यार्थ हो जाता है । नाम का लक्षण इस प्रकार से कहा गया हुआ—

“वस्तुनो यदभिधानं तन्नाम” वस्तु का जो व्यवहार में नाम रहे वह नाम है । जैसे किसी इन्द्रादिरूप वस्तु का इन्द्र इनमें इन्द्र-इन्द्र-अ-इन पांच अक्षरों की आनु-पूर्वीरूप अभिधान यह नाम का प्रथम प्रकार है । नाम के लक्षण का द्वितीय प्रकार इस तरह से है—“स्थितमन्यार्थे निरपेक्षं पर्यायानभिधेयं च” किसी गोपाल के लडके का नाम किसी ने इन्द्र ऐसा रख दिया—उसमें परमैश्वर्य आदि-रूप जो इन्द्रशब्द का अर्थ है वह है नहीं—क्या कि वह तो ग्वाले का लडका है उस में परमैश्वर्य का होना कहां से आ सकता है, उसका तो उसमें अभाव ही है—इसलिये उसका इन्द्र यह नाम अपने अर्थ से निरपेक्ष है । और इन्द्र के जो शक्र पुरन्दर आदि पर्यायवाची शब्द हैं उन से भी वह अनभिधेय (नहीं कहने योग्य) है । इन पर्यायवाची शब्दों से अभिधेय तो इन्द्र ही हो सकता है । अतः

કહેવામાં આવે છે. આ રીતે તે જીવાદિરૂપ વસ્તુ નામરૂપ ‘આવશ્યક’ આ શબ્દનો વાચ્યાર્થ બની જાય છે. નામનું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહ્યું છે.

“વસ્તુનો યદભિધાનં તન્નામ” વસ્તુનું જે વ્યવહારમાં નામ રહે તેનું જ નામ ‘નામ’ છે. જેમ કે કોઈ ઇન્દ્રાદિરૂપ વસ્તુનું ‘ઇન્દ્ર’ એવું પાંચ અક્ષરોની આનુપૂર્વીરૂપ અભિધાન. આ નામનો પ્રથમ પ્રકાર છે. નામના લક્ષણનો બીજો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—“સ્થિતમન્યાર્થે તદર્થનિરપેક્ષં પર્યાયાનભિધેયં ચ” કોઈગોવાળના પુત્રનું નામ કોઈએ ‘ઇન્દ્ર’ પાડ્યું ‘ઇન્દ્ર’ પદ તો પરમ ઐશ્વર્યનું વાચક છે. ગોવાળ-ના ‘ઇન્દ્ર’ નામના પુત્રમાં આ ઐશ્વર્ય ક્યાંથી સંભવી શકે ? તેમાં તો આ શુણ્ણનો અભાવ જ હોય છે. આ રીતે તેનું આ નામ પોતાના અર્થની અપેક્ષાએ તો બરાબર ભાગતું નથી. આ રીતે અર્થની અપેક્ષા રાખ્યા વિના પણ કોઈ વસ્તુ કે વ્યક્તિને અમુક નામે ઓળખવામાં આવતી હોય છે. વળી શકે. પુરન્દર આદિ જે શબ્દો ઇન્દ્રના પર્યાયવાચી છે. તેમના દ્વારા પણ તે અનભિધેય છે. આ પર્યાયવાચી શબ્દો દ્વારા અભિધેય તો ઇન્દ્ર જ હોઈ શકે છે. આ રીતે ગોવાળના બાળકને ઇન્દ્ર એવું

અનુયોગવન્દિકા ટીકા ૧૦ નામાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૭

દાવાગોપિતં, તદપિ નામ ભવતીતિ બોધમ્ । તૃતીયપ્રકારેણાપિ તલ્લક્ષણમાહ—
‘યાદૃચ્છિકં ચ તથા’ ઇતિ । તથા—યાદૃચ્છયા કમપ્યર્થમનાશ્રિત્ય સ્વેચ્છયા તથા-
વિધવ્યુત્પત્તિશૂન્યં “હિત્યહવિત્યાદિરૂપં નામ ક્રિયતે, તદપિ નામ । ઇતિ
ત્રિવિધં નામલક્ષણમ્ । ત્રિવિધિમપિ નામ અવશ્યકરણીયત્વાદ નામાવશ્યકમુચ્યતે ।
અત્ર સૂત્રે ‘વા’ શબ્દાઃ વિકલ્પાર્થકાઃ ।

નનુ જીવસ્ય ‘આવશ્યકમ્’ ઇતિ નામ કથં સંભવાત ? ઉચ્યતે—યથા
કશ્ચિલ્લેકે જીવસ્ય સ્વપુત્રાદે ‘દેવદત્ત’ ઇત્યાદિ નામ કરોતિ તથા કશ્ચિત્ સ્વે-

ગોપાલદારક (બાલક) કા ઇન્દ્ર એસા નામ જો કિ શક્ર આદિ મેં પ્રસિદ્ધ હૈ
વાચ્યાર્થ સે શૂન્ય બને હુએ ઉસ ગોપાલદારક મેં આરોપિત કિયા ગયા હૈ ।
નામ કે લક્ષણ કા યહ દ્વિતીય પ્રકાર હૈ । તથા જો યદૃચ્છા સે નામ રચ
લિયે જાતે હૈ વે યાદૃચ્છિક નામ હૈ જૈસે કિસી અર્થ કી અપેક્ષા કિયે વિના
હી હિત્ય હવિત્ય ઇત્યાદિ નામ તથાવિધ વ્યુત્પત્તિ સે રહિત રચે જાતે હૈ ।
ઇન નામોં કે રચને મેં રચનેવાલે કી ઇચ્છા હોતી હૈ । ઇસ તરહ યહ ત્રીન
પ્રકાર નામ કે લક્ષણ હૈ । યે ત્રીનોં પ્રકાર કે નામ અવશ્યકરણીય હોને કે
કારણ નામ આવશ્યક કહે જાતે હૈ ।

શંકા—જીવકા “આવશ્યક” એસા નામ કૈસે સંભવિત હોતા હૈ ?

જે નામ રાખવામાં આવ્યું છે તે વાચ્યાર્થથી રહિત જ લાગે છે. શક્ર આદિને
અનુલક્ષીને જ્યારે “ઇન્દ્ર” નામ વપરાય છે. ત્યારે તો તે નામ તેના વાચ્યાર્થથી
શુદ્ધ લાગે છે. આ રીતે વાચ્યાર્થ સાથે મેળ ન ખાય અથવા જે નામમાં વાચ્યાર્થ
નો જ અભાવ હોય એવું નામ પણ કોઈ કોઈ વાર રાખવામાં આવતું હોય છે.
નામના લક્ષણનો આ બીજો પ્રકાર સમજવો.

તથા જે નામ ઇચ્છા અનુસાર રાખવામાં આવે છે, તે નામને યાદૃચ્છિક નામ કહે
છે. જેમકે કોઈ અર્થની અપેક્ષા રાખ્યા વિના જ “હિત્ય, હવિત્ય” ઇત્યાદિ, તે
પ્રકારની વ્યુત્પત્તિથી રહિત નામો પણ રાખવામાં આવે છે. આ પ્રકારના
નામો રાખવામાં તે નામ રાખનારની ઇચ્છા જ મુખ્ય લાગ ભજવતી હોય છે.
નામનું આ ત્રીજા પ્રકારનું લક્ષણ છે. આ રીતે પહેલા પ્રકારમાં “ઇન્દ્ર”
નામ સાર્થક લાગે છે, બીજા પ્રકારમાં ગોવાળના પુત્રનું “ઇન્દ્ર” નામ
તેના અર્થ પ્રમાણે શુભથી સંપન્ન લાગતું નથી ત્રીજા પ્રકારના
“હિત્ય, હવિત્ય” આદિ નામો કોઈ પણ પ્રકારના અર્થની અપેક્ષા વિના માત્ર
નામ રાખનારની ઇચ્છાનુસાર રાખવામાં આવે છે. આ ત્રણ પ્રકારનાં નામ અવશ્ય
કરણીય હોવાથી તેમને આવશ્યક કહેવામાં આવે છે.

શંકા—જીવનું “આવશ્યક” એવું નામ કેવી રીતે સંભવ શકે છે ?

ચ્છાવશાત્ સ્વપુત્રાદેરાવશ્યકમિતિ કરોતિ । ભાવાવશ્યક સ્વરૂપશૂન્યે ગોપાલદારકાદૌ
 આવશ્યકેતિ નામકરણે નામ્ના-નામમાત્રેણાવશ્યકં નામાવશ્યકં ગોપાલદારકાદિ ભવતિ
 અજીવસ્યાવશ્યકમિતિ નામ કથં સંભવતિ । ઉચ્યતે-‘આવશ્યકાવાસક’
 શબ્દયોરેકાર્થતા પ્રોક્તા । લોકે હિ-શુષ્કોઽચિત્તો બહુકોટરાકીર્ણો વૃક્ષોઽન્યો

ઉત્તર—જેમ્ને કોઈ વ્યક્તિ અપને પુત્ર કા નામ દેવદત્ત રચ લેતા હૈં ઉસે
 દેવને તો દિયા નહીં હૈં-પરન્તુ લોક વ્યવહાર ચલાને કે લિયે એસા કિયા
 જાતા હૈં-ઉસી તરહ કોઈ ગ્વાલા આદિ અપની ઇચ્છા સે અપને પુત્ર આદિ
 કા નામ “આવશ્યક” એસા રચલેં તો યહ આવશ્યક કા નામ નિશ્લેષ હૈં ।
 વાસ્તવ મેં આવશ્યક જૈસે ગુણ ઉસ ગોપાલદારક મેં નહીં હૈં-વહ તો ઉન સે
 શૂન્ય હૈં-અર્થાત્ ભાવાવશ્યક સે વહ રહિત હૈં-ઉસ મેં આવશ્યક એસા જો નામ-
 કરણ કિયા ગયા હૈં વહ એક જીવ કો આશ્રિત નામ માત્ર કા આવશ્યક હૈં ।
 ઇસ નામ માત્ર આવશ્યક કા વાચ્ય વહ ગોપાલદારક હૈં । એક અજીવ મેં
 આવશ્યક એસા નામ નિશ્લેષ ઇસ પ્રકાર સે ઘટિત કરના ચાહિયે-

આવશ્યક ઔર આવાસક ઇન દોનોં શબ્દોં મેં એકાર્થતા અમી ૨ કહી
 ગઈ હૈં-સો ઇસ દૃષ્ટિ કો ધ્યાન મે રચકર અજીવ મેં “આવશ્યક” યહ નામ
 એસે ઘટિત હો જાતા હૈં કિ કિસી વ્યક્તિને કિસી એક શુષ્ક (સૂચે) ઔર

ઉત્તર—જેમ કોઈ વ્યક્તિ પોતાના પુત્રનું નામ ‘દેવદત્ત’ રાખે છે, જે કે
 દેવે તેને તે પુત્ર આપ્યો હોતો નથી, પરન્તુ લોકવ્યવહાર ચલાવવાને એવું કોઈ
 પણ નામ રાખવું જ પડે છે, એજ પ્રમાણે જે કોઈ ગોવાળ આદિ વ્યક્તિ પોતાની
 ઇચ્છાથી પોતાના પુત્રનું નામ “આવશ્યક” રાખી શકે છે. તે આ પ્રકારનું નામ
 રાખવું તેનું નામ જ આવશ્યકને નામનિશ્લેષ સમજવો. ખરી રીતે તો
 તે ગોવાળના પુત્રમાં આવશ્યક જેવા શુભો તો હોતા નથી-એ
 પ્રકારના શુભોથી તો તે રહિત જ હોય છે. એટલે કે ભાવાવશ્યકથી તે બાળક
 રહિત જ છે, છતાં પણ તેમાં ‘આવશ્યક’ એવા નામનું જ આદેશ પણ કરવામાં
 આવ્યું છે તે એક જીવને આશ્રિત નામ માત્રનું જ ‘આવશ્યક’ છે. આ નામ માત્ર
 ના આવશ્યકને વાચ્ય તે ગોવાળપુત્ર છે. લોક વ્યવહાર ચલાવવા નિમિત્તે જ આવી
 કોઈ પણ ‘સંજ્ઞા’ તે બાળકને આગળવા માટે ઉપયોગી થઈ પડે છે એટલે જેમ
 ‘દેવદત્ત’ નામ રાખી શકાય છે, તેમ “આવશ્યક” નામ પણ શા માટે ન રાખી
 શકાય કોઈ એક અજીવમાં “આવશ્યક” એવો નામ નિશ્લેષ આ પ્રકારે ઘટાવી શકાય
 છે-આ સૂત્રમાં જ આગળ એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે આવશ્યક અને
 આવાસક, આ બન્ને સમતાથી પડે છે. આ દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો
 અજીવમાં “આવશ્યક” એવું નામ આ પ્રમાણે સુસંગત લાગે છે—

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૧૦ નામાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૯

વા તથાવિધઃ કશ્ચિત્ પદાર્થવિશેષઃ સર્પાદેરાવાસોઽયમિતિ પ્રોચ્યતે । સ વૃક્ષો-
ઽન્યો વા તથાવિધઃ પદાર્થો યદ્યપ્યનન્તૈઃ પરમાણુલક્ષણૈરજીવદ્રવ્યૈર્નિષ્પન્નસ્તથાઽપ્યેક-
સ્તન્વપરિણતિમાશ્રિત્ય એકાજીવત્વેન વિવક્ષિતઃ । સ્વાર્થિક ક પ્રત્યયે કૃતે આવાસ
એવ આવાસકમિતિ નામ એકસ્યાજીવસ્ય સિદ્ધમ્ ।

બહુનામપિ જીવાનામાવાસકમિતિ નામ સંમતિ । યથા ઇષ્ટકાપાકાદ્ય-
ગ્નિર્મૂષિકાવાસ इत्युच्यते । ઇષ્ટકાપાકાદ્યગ્નો હિ મૂષિકાઃ સંમૂર્છિન્તિ । અત-
સ્તેષામસંખ્યેષાનામગ્નિજીવાનાં પૂર્વદાસકમિતિ નામ સિદ્ધમ્ । બહુનામ-
જીવાનામપિ આવાસકમિતિ નામ ભવતિ । દૃશ્યતે હિ બહુભિરચિતૈ સ્તૃષ્ણૈર્નીંડં

अनेक कोटरों से युक्त वृक्ष को अथवा इसी प्रकार के किसी दूसरे पदार्थ को
कि जिस में सर्पादिक का निवास स्थान है देखकर कह दिया कि यह वृक्षा-
दिशुष्क पदार्थ सर्पादिक का निवासस्थान है—आवासभूत है—। लोक में ऐसा
व्यवहार चलता है—इसलिये उस अजीव एक वृक्षादि पदार्थ का “आवासक
या आवश्यक ऐसा नाम रखना यह एक अजीव के आश्रित नाम निक्षेप का
विषय है। यद्यपि वह वृक्षादि पदार्थ अनंत परमाणुरूप अजीव द्रव्यों से निष्पन्न
हुआ है तो भी एक स्कंधरूप परिणति को आश्रित करके वह एक अजीव-
रूप विवक्षित किया गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि कोई यहां
पर ऐसी आशंका करें कि यहां पर एक अजीव पदार्थ को लेकर आवश्यक
ऐसा नाम निक्षेप का विषय प्रस्तुत है—शुष्क-वृक्ष में आपने इसे घटित किया
है सो वह शुष्क वृक्ष एक अजीव पदार्थ नहीं है—वह तो अनेक परमाणु

કોઈ એક શુષ્ક (સૂકા) અને અનેક બખોલોથી યુક્ત વૃક્ષમાં સર્પાદિક જીવોનો
વાસ જોઈને એમ કહી દેવામાં આવે છે કે આ વૃક્ષ તો ‘સર્પાદિકતું’ નિવાસસ્થાન
છે અથવા સર્પાદિકના આવાસરૂપ છે. લોકમાં આ પ્રકારનો વ્યવહાર ચાલે છે. તેથી
તે વૃક્ષાદિ અજીવ પદાર્થતું “આવાસક અથવા આવશ્યક” એવું નામ રાખવું તે
એક અજીવમાં “આવાસક અથવા આવશ્યક” એવા નામ નિક્ષેપરૂપ સમજવું. જો કે
તે વૃક્ષાદિ પદાર્થ અનંત પરમાણુ રૂપ અજીવ દ્રવ્યો વડે નિષ્પન્ન થયેલ હોય છે,
છતાં પણ એક સ્કંધરૂપ પરિણતિનો આશ્રય લઈને તેને એક અજીવરૂપે પ્રકટ
કરવામાં આવેલ છે. અહીં કોઈ એવી શંકા કરે કે અહીં તો એક અજીવ પદાર્થની
અપેક્ષાએ આવશ્યક એવા નામનિક્ષેપની વાત ચાલી રહી છે, આપે તો શુષ્ક વૃક્ષમાં
‘આવશ્યક’ એવો નામનિક્ષેપ કયો છે, પરંતુ તે શુષ્ક વૃક્ષ એક અજીવ પદાર્થરૂપ
નથી. તે તો અનેક પરમાણુ પુંજમાંથી નિષ્પન્ન થયેલું હોવાથી અનેક અજીવ દ્રવ્ય
રૂપ પદાર્થ જ છે, તો આ શંકાતું સમાધાન આ કથન દ્વારા કરવામાં આવ્યું છે.
અહીં એમ બતાવવામાં આવ્યું છે કે શુષ્ક વૃક્ષ જો કે અનેક પૌદ્ગલિક પરમાણુ

સમ્પદ્યતે । તદ્વિ પક્ષિણામાવાસક મિત્યુચ્યતે । इत्थं बहुनामजीवानामपि 'आवासक'मिति नाम सिद्धम् ।

પુંજ સે નિષ્પન્ન હોને કે કારણ અનેક અજીવ દ્રવ્યરૂપ પદાર્થ હૈ—સો ઇસ શંકા વા સમાધાન ઇસ વચન મેં કિયા ગયા હૈ । કહા ગયા હૈ કિ વહ શુદ્ધ પદાર્થ યદ્યપિ અનેક પૌદ્ગલિક પરમાણુઓ કે પુંજ સે નિષ્પન્ન હુઆ હૈ—પરન્તુ ઉસરૂપ કી યહાં વિવક્ષા નહીં હૈ—યહાં તો ઉન સબકે સંબન્ધ સે એક પરિણતિરૂપ હુવ એક સંઘદ્રવ્ય કી વિવક્ષા હૈ—ઇસસે વહ એક અજીવ દ્રવ્ય કી વિવક્ષા હૈ—ઇસસે વહ એક અજીવ દ્રવ્ય હૈ । અનેક અજીવ દ્રવ્ય નહીં ।

અનેક જીવોં મેં આવાસક એસા નામ ઇસ પ્રકાર સે ઘટિત કરના ચાહિયે—ઈષ્ટકા (ઈંટ) પાક આદિ કી જો અગ્નિ હોતી હૈ ઉસમેં અનેક મૃષિકાઈ સંમૂર્છન જન્મ ધારણ કરતી હૈ । ઇસ અપેક્ષા વહ ઈષ્ટપાક આદિ કી અગ્નિ મૃષિકા-વાસરૂપ સે વહ દી જાતી હૈ । ઇસ તરહ ઉન અસંરુધાત અગ્નિ જીવોં વા આવાસક એસા નામ સિદ્ધ હો જાતા હૈ । અનેક અજીવોં વા આવાસક એસા નામ ઇસ પ્રકાર સે હાતા હૈ કિ અનેક અચિત્ત તિનકોં સે નીડ-ઘોંસલા-બનતા હૈ । ઔર ઉસમેં પક્ષી રહતે હૈ—ઇસલિયે વહ” પક્ષિયોં વા આવાસક હૈ—ઇસ નામ સે વહા જાતો હૈ । અતઃ અનેક અજીવ મેં આવાસક એસા આવાસકા નામનિશ્લેષ

ઓના પુંજથી નિષ્પન્ન થયેલું છે, પરન્તુ અહીં તે પ્રકારની વિવક્ષા કરવામાં આવી નથી. અહીં તો તે બધાના સંબંધથી એક પરિણતિરૂપ થયેલા એક સંઘ દ્રવ્યની જ વિવક્ષા ચાલી રહી છે. તેથી તેને અહીં એક અણુવ દ્રવ્ય રૂપે જ પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે, અનેક અણુવ દ્રવ્ય રૂપે પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ નથી.

અનેક જીવોમાં “આવશ્યક” એવું નામ આ પ્રમાણે ઘટિત કરવું જોઈએ—

ઈંટો પકવવાના લઠ્ઠા આદિની જે અગ્નિ હોય છે તેમાં અનેક મૃષિકાઓ (ઉંદરડીઓ) સંમૂર્છન જન્મ ધારણ કરે છે. તેથી તે લઠ્ઠા આદિની અગ્નિને મૃષિકાવાસરૂપે પણ ઓળખવામાં આવે છે. આ રીતે તે અસંખ્યાત અગ્નિજીવોતું “આવાસક” એવું નામ સિદ્ધ થઈ જાય છે.

અનેક અણુવોતું આવાસક એવું નામ આ પ્રમાણે સિદ્ધ કહી શકાય છે.

અનેક અચિત્ત તણુખલાંઓની મદદથી માળો બને છે, અને તેમાં પક્ષીઓ રહે છે, તે કારણે તેને પક્ષીઓના આવાસરૂપ ગણીને એવું કહેવામાં આવે છે કે “આ પક્ષીઓનો આવાસક છે.” આ રીતે અનેક અણુવોમાં “આવાસક” એવો

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. ૧૦ નામાવસ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૧

જીવાજીવોમયશ્યાપિ 'આવાસક'મિતિ નામ સંભવતિ । દૃશ્યતે હિ-જલા-શયોધાનજલયન્ત્રાદિસહિતઃ પ્રાસાદાદિપ્રદેશો રાજાદેરાગસ ઉચ્યતે । અ^૧ ચ-જલાશયોધાનાદયઃ સચેતનરત્નાદયશ્ચ જીવાઃ સન્તિ । ઇષ્ટકા કાષ્ઠગ્રાદયોઽચેતન-રત્નાદયશ્ચજીવાઃ સન્તિ । એતદુભયનિષ્પન્નસ્ય રાજપ્રાસાદાદિ-પ્રદેશસ્ય આવા-સકં નામ સિદ્ધયતિ ।

ઉભયેષાં જીવાનામજીવાનાં ચાપિ 'આવાસક'મિતિ નામ સંભવતિ । દૃશ્યતે હિ-રાજપ્રાસાદયુક્તં સમ્પૂર્ણનગરં રાજાદીનામાવાસ ઉચ્યતે । સઘલઃ સૌધર્મા-દિકલ્પ ઇન્દ્રાદીનામાવાસ ઉચ્યતે । इत्थं बहूनां जीवानामजीवानां च सम्मिलितानाम् 'आवासकम्' इति नाम सिद्धम् । રાજપ્રાસાદસ્ય લઘુત્વાદેકમેવ જીવા-

સિદ્ધ હો જાતા હૈ । जीव और अजीव इन दोनों में आवासक यह नाम निक्षेप इस प्रकार से बनता है कि जो राजमहल वा प्रदेश जलाशय, उद्यान एवं जल यन्त्र-नल-भादि से युक्त होता है वह राजा आदिका आवासस्थान है— इस नाम से कहा जाता हैं । वहां जो जलाशय, उद्यान एवं सचेतन रत्ना-दिक हैं—वे तो सचित द्रव्य हैं और इष्टका (ईंट) वा काष्ठ, अचेतन रत्नादिक हैं वे सब अजीव हैं । इन दोनों से निष्पन्न हुए उस राजमहल आदि के प्रदेश का नाम आवासरूप होने के कारण "आवासक" का निक्षेप बनता है । इसी प्रकार से जीव अजीव इन दोनों का भी आवासक यह नाम इस प्रकार से घटित होता है कि राजप्रासाद से युक्त समस्त नगर राजादिक का आवास है इस रूप से व्यवहार में कह दिया जाता है । तथा सौधर्म आदि समस्त कल्प इन्द्रादिकों के आवासरूप से व्यवहृत होते हैं । इस तरह संमिलित अनेक अजीव और जीवों का "आवासक" ऐसा नाम सिद्ध हो जाता

આવાસનો નામનિક્ષેપ સિદ્ધ થઈ જાય છે. જીવ અજીવ, એ બન્નેમાં "આવાસક" આ નામનિક્ષેપ આ પ્રમાણે સિદ્ધ કરી શકાય છે.

જે રાજમહેલનો પ્રદેશ જળાશય, ઉદ્યાન અને જળયન્ત્ર (નળ) આદિથી યુક્ત હોય છે, તેને "રાજા આદિનું આવાસસ્થાન છે," એ રૂપે કહેવામાં આવે છે, ત્યાં જે ઉદ્યાન, જળાશય અને સચેતન રત્નાદિક વસ્તુઓ છે, તે તો સચિત્ત દ્રવ્યરૂપ જ છે, અને ઈંટની દીવાલો, અને અચેતન રત્નાદિકો વગેરે જે વસ્તુઓ છે, તે અચિત્તદ્રવ્યરૂપ હોવાથી અજીવ છે, એ બન્નેથી જેનું નિર્માણ થયું છે. એવા તે મહેલ આદિના પ્રદેશનું નામ આવાસરૂપ હોવાને કારણે "આવાસક"નું નિક્ષેપ બને છે. એજ પ્રમાણે જીવાજીવમાં પણ 'આવાસક' આ નામનિક્ષેપ આ પ્રમાણે ઘટાવી શકાય છે.

રાજપ્રાસાદથી યુક્ત સમસ્ત નગર "રાજાદિકનો આવાસ છે." આ રૂપે વ્યવહારમાં કહેવામાં આવે છે. તથા સૌધર્મ આદિ સમસ્ત કલ્પને ઇન્દ્રાદિકોના આવાસ રૂપ કહેવામાં આવે છે આ રીતે સંમિલિત અનેક અજીવો અને જીવોનું "આવાસક"

જીવોભયં વિવક્ષિતમ્ । નગરાદોનાં સૌધર્માદિકલ્પાનાં ચ મહત્ત્વાદ્ બહૂનિ જીવા-
જીવોભયાનિ વિવક્ષિતાનિ । इत्थं जीवाजीवोभयैकत्वबहुत्वविषये एकत्वं बहुत्वं
च विवक्षाधीनं द्रष्टव्यम् । एवमन्यत्रापि जीवादीनामावासकनाम यथासंभवं
भावनीयम् । इदं हि दिङ्मात्रप्रदर्शनार्थमुक्तम् इति नामावश्यकप्ररूपणा ॥सू० १०॥

અથ સ્થાપનાઽઽવશ્યકં નિરૂપયિતું સૂત્રકાર આહ—

મૂળમ્—સે કિં તં ઠવળાવસ્સયં ? ઠવળાવસ્સયં જળળં કટુકમ્મે

હૈ । राजप्रासाद नगर एवं सौधर्म आदि की अपेक्षा लघु होने के कारण
जीव और अजीव इन दोनों रूप से एक कहा गया है । तथा राजप्रासाद
की अपेक्षा नगरादिक एवं सौधर्मकल्प महान्-विशाल-होने के कारण
अनेक जीव और अजीवरूप से विवक्षित, हुए हैं । इस प्रकार जीव, अजीव,
और उभय में अनेकत्व का यह विचार विवक्षा के आधीन हुआ जानना
चाहिये । इस प्रकार से अन्यत्र भी जीवादि वों का आवासक नाम यथा
संभव समझ लेना चाहिये । यह जो यहाँ समझाया गया है वह तो बहुत
ही संक्षेप से समझाया गया है ।

इस प्रकार यह नाम आवश्यक की प्ररूपणा जाननी चाहिये ।

માવાર્થ—સૂત્રકાર ને યહાં નામ આવશ્યક કા સ્વરૂપ જીવ અજીવ આદિ
પદાર્થોં કે એકત્વ અનેકત્વ કો લેકર સમજાયા હૈં । ઇસે વ્યવહાર મેં પહિલે
યોં સમજ લેના ચાહિયે-કિ પ્રત્યેક શબ્દ કા અર્થ ચાર પ્રકાર કા હોતા હૈ-
(૧) નામરૂપ (૨) સ્થાપનારૂપ, (૩) દ્રવ્યરૂપ ઓર ચૌથા ભાવરૂપ । શાસ્ત્રીય
પરિભાષા મેં ઇન્હેં નિક્ષેપ કહા ગયા હૈ । નિક્ષેપ નામ રચ્ચને યા ન્યાસ કા હૈ ।

એવું નામ તિદ્ધ થઈ ગય છે. રાજપ્રાસાદ, નગર એને સૌધર્મકલ્પ આદિની અપેક્ષાએ
લઘુ અને અલગ નાના હોવાને કારણે તે બંનેને અહીં અલગરૂપ એક શબ્દથીજ
પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. તથા રાજમહેલ કરતાં નગર સાધર્મિકલ્પો વિશાળ
હોવાને કારણે અનેક લઘુ અને અલગરૂપે વિવક્ષિત થયેલ છે. આ રીતે લઘુ,
અલગ અને ઉભયમાં એકત્વ અનેકત્વનો આ વિચાર વિવક્ષાને અધીન રહીને
થયેલો સમજવો. એજ પ્રકારે અન્યત્ર પણ 'લવાદિકોનુ' 'આવાસક' નામ યથા સંભવ
સમજ લેવું જોઈએ. અહીં આ જો સમજૂતી આપવામાં આવી છે. તે તો બહુજ
સંક્ષિપ્તમાં આપવામાં આવી છે. આ પ્રકારની આ નામ આવશ્યકની પ્રરૂપણા સમજવી.

સૂત્રકારે અહીં નામ આવશ્યકનું સ્વરૂપ લઘુ અલગ આદિ પદાર્થોના એકત્વ
અનેકત્વની અપેક્ષાએ સમજાવ્યું છે. આ બાબતમાં પહેલાં તો એ સમજ લેવું
જોઈએ કે પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ ચાર પ્રકારનો હોય છે. તે ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂ. ૧૦ નામાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૩

વા પોત્થકમ્મે વા, ચિત્તકમ્મે વા, લેપ્પકમ્મે વા મંથિમે વા વેઢિમે
વા પૂરિમે વા સંઘાઈમે વા અક્ખે વા વરાડણ વા એગો વા અણેગો
વા સઘ્ભાવઠવણા વા અસઘ્ભાવઠવણા વા આવસ્સણ ત્તિ ઠવણા
ઠવિજ્ઞહ, સે તં ઠવણાવસ્સયં ॥સૂ. ૧૧ ॥

જિસમેં વ્યુત્પત્તિ કી પ્રધાનતા નહીં હૈ કિન્તુ જો માતાપિતા યા इतलोगों के संकेत बल से जाना जाता हैं वह नामनिक्षेप का विषय है। जैसे किसी व्यक्ति में “महावीर” जैसे गुण नहीं होने पर भी व्यवहार चलाने के निमित्त उसके माता पिता आदि जन उसका नाम महावीर रख लेते हैं। जो वस्तु असली वस्तु के सदृश आकार वाली है वह स्थापना निक्षेप का विषय है। जैसे जंबूद्वीप का नक्शा अढाईद्वीप का नक्शा तथा वृक्ष महेल आदि का चित्र। जा पदार्थ भाव का पूर्वरूप या उत्तररूप हो वह द्रव्यनिक्षेप का विषय है—जैसे जो वर्तमान में श्रावकपुत्र है वह आगे श्रावक बनेगा उसे श्रावक कहना। जिस शब्द के अर्थ में शब्द का व्युत्पत्ति या प्रवृत्ति निमित्त वर्तमान में बराबर घटित हो रहा हो वह भावनिक्षेप का विषय है। जैसे वर्तमान में महान् वीरता के कार्य करने वालेको महावीर कहना। इसी तरह से जिस जीवादि

(૧) નામરૂપ (૨) સ્થાપનારૂપ, (૩) દ્રવ્યરૂપ અને (૪) ભાવરૂપ શાસ્ત્રોની પરિભાષામાં તેને નામનિક્ષેપ કહેવામાં આવે છે. નિક્ષેપ એટલે નામ સમુપું અથવા ન્યાસ (વિભાગ) કરવો તેનું નામ નિક્ષેપ છે.

જેમાં વ્યુત્પત્તિની પ્રધાનતા હોતી નથી પણ જે માતા, પિતા અથવા અન્ય લોકોના સંકેતનો આધાર લઇને બદલી શકાય છે, એવું નામનિક્ષેપનું સ્વરૂપ અથવા એવો નામનિક્ષેપનો વિષય છે. જેમકે કોઇ વ્યક્તિમાં મહાવીર જેવાં ગુણોના અભાવ હોવા છતાં પણ વ્યવહાર અજાવવાને નિમિત્તે તેના માતા, પિતા આદિ લોકો તેનું નામ મહાવીર રાખી લે છે જે વસ્તુ અસલી વસ્તુના સમાન આકારવાળી છે, તે સ્થાપના નિક્ષેપનો વિષય છે. જેમકે જંબૂદ્વીપનો નકશો, અઢીદ્વીપનો નકશો, વૃક્ષ મહેલ આદિના ચિત્ર, આ બધા સ્થાપના નિક્ષેપના ઉદાહરણો છે.

જે પદાર્થ ભાવનો પૂર્વરૂપ કે ઉત્તરરૂપ હોય, તે દ્રવ્યનિક્ષેપનો વિષય છે. જેમકે જે અત્યારે શ્રાવકપુત્ર છે તે ભવિષ્યમાં શ્રાવક બનશે માટે તેને શ્રાવક કહેવો જોઇએ. આનું નામ દ્રવ્યનિક્ષેપ છે.

જે શબ્દના અર્થમાં શબ્દની વ્યુત્પત્તિ અથવા પ્રવૃત્તિનું નિમિત્ત વર્તમાનમાં બરાબર ઘટાવી શકાતાં હોય, તે ભાવનિક્ષેપનો વિષય છે જેમકે વર્તમાન સમયે મહાવીરતાનું કાર્ય કરનારને મહાવીર કહેવો, તે ભાવરૂપ નિક્ષેપ થયો ગણાય.

પદાર્થ મેં આવશ્યક જૈસા એક મી ગુણ નહીં હૈ ઓર ઉસે આવશ્યક ઇસ નામ સે વ્યવહાર કરના સો નામ આવશ્યક હૈ । નામ કા ત્રીન પ્રકાર કે લક્ષણ સે વ્યવહાર હોતા હૈ—જહાં નામ કા વ્યુત્પત્તિ યા પ્રવૃત્તિ કા નિમિત્ત ઘટિત હોતા હૈ વહ નામ-નામનિક્ષેપ કા વિષય ન હો કર ભાવનિક્ષેપ કા વિષય બનતા હૈ । જૈસે પરમેશ્વર્ય કો મોગતે હુએ ઇન્દ્ર નામધારી વ્યક્તિ કો ઇન્દ્ર ઇસ નામ સે પુકારના । યહ નામ કા પ્રથમ પ્રકાર હૈ । ઢિર્તીય પ્રકાર મેં જૈસા નામ હો ઉસકી પ્રવૃત્તિ કા નિમિત્ત વ્યુત્પત્તિ કા નિમિત્ત ઉસ મેં ન હો કિન્તુ સંકેત આદિ હો તો યહ નામનિક્ષેપ મેં પરિણમિત કિયા ગયા હૈ જૈસે ગોપાલદારક-ગોપાલ ઘાલક । તૃતીય પ્રકાર મેં ઢિત્ય, ઢવિત્ય આદિરૂઢ શબ્દ કિ જો વ્યુત્પત્તિ રહિત હી સ્વેચ્છાનુસાર પ્રચલિત હોતે હૈ—લિયે ગયે હૈ । ઇન મેં મી પ્રવૃત્તિ કા નિમિત્ત વ્યુત્પત્તિ કા નિમિત્ત નહીં હોતા હૈ કિન્તુ રુઢિ હોતી હૈ । ઇસ તરહ કેવલ ઢિર્તીય પ્રકાર હી નામનિક્ષેપ કા વિષય પડતા હૈ । અતઃ જિસ મેં આવશ્યક જૈસે ગુણ નહીં હૈં ઉસ મેં આવશ્યક ઇસ નામ કા ન્યાસ (રચના) કરના યહ આવશ્યક કા નામનિક્ષેપ હૈ । જીવઆદિક પદાર્થોં મેં યહ નિક્ષેપ કિસ

એજ પ્રમાણે જે છવાદિ પદાર્થોંમાં ‘આવશ્યક’ એવા એક પણ ગુણ નથી, તે છવાદિ પદાર્થોંમાં ‘આવશ્યક’ એવા નામનો વ્યવહાર કરવો, તેને નામ આવશ્યક કહે છે. નામનો પણ પ્રકારના લક્ષણોથી વ્યવહાર થાય છે—જ્યાં નામનું વ્યુત્પત્તિ અથવા પ્રવૃત્તિનું નિમિત્ત ઘટિત થતું હોય છે, તે નામ-નામનિક્ષેપનો વિષય બનવાને બદલે ભાવનિક્ષેપનો વિષય બની જાય છે. જેમકે પરમ એશ્વર્યથી સંપન્ન એવી કેઈ વ્યક્તિને ‘ઇન્દ્ર’ એવા નામે ઓળખવી. આ નામનો પહેલો પ્રકાર છે.

નામનો બીજો પ્રકાર—જેનું નામ હોય એવી પ્રવૃત્તિના નિમિત્તનો અથવા વ્યુત્પત્તિના નિમિત્તનો જેમાં સદ્ભાવ ન હોય, પરંતુ સંકેત આદિનો સદ્ભાવ હોય તો તેને નામનિક્ષેપમાં પરિણમિત કરવામાં આવ્યું છે. જેમકે ગોવાળના પુત્રનું ‘ઇન્દ્ર’ નામ.

ત્રીજા પ્રકારમાં ‘ઢિત્ય ઢવિત્ય’ આદિ રૂઢ શબ્દો કે જે વ્યુત્પત્તિથી રહિત છે અને બોલનારની ઇચ્છાનુસાર પ્રચલિત (ઉચ્ચારિત) થયેલ છે, તેમને ગણાવી શકાય છે. તેમાં પણ પ્રવૃત્તિનું નિમિત્ત અથવા વ્યુત્પત્તિનું નિમિત્ત હોતું નથી પણ રુઢિનો જ સદ્ભાવ હોય છે. આ રીતે કેવળ બીજો પ્રકાર જ નામનિક્ષેપના વિષયરૂપ ગણી શકાય છે. તેથી જેમાં આવશ્યક જેવાં ગુણ નથી, તેમાં ‘આવશ્યક’ આ નામનો ન્યાસ કરવો તેને આવશ્યકનો નામનિક્ષેપ કહે છે. છવાદિક પદાર્થોંમાં આ નિક્ષેપ કેવા પ્રકારે ઘટિત કરવામાં આવ્યો છે, તે વિષયનું ટીકાકારે સૂત્રની

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા—સુ. ૧૧ સ્થાપનાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૫

છાયા:—અથ કિં તત્ સ્થાપનાવશ્યકમ્ ? સ્થાપનાવશ્યકં-યત્તલ્લુ કાદ-કર્મણિ વા પુસ્તકર્મણિ વા ચિત્રકર્મણિ વા લેખ્યકર્મણિ વા ગ્રન્થિમે વા વેષ્ટિમે વા પૂરિમે વા સદ્ગતિમે વા અક્ષે વા વરાટકે વા ઈકો વા અનેકો વા સદ્ભાવસ્થાપનયા વા અસદ્ભાવસ્થાપનયા વા આવશ્યકેતિ સ્થાપ્યતે, તદેતત્ સ્થાપનાવશ્યકમ્ ॥મુ૦ ૧૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

‘સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં’ અથ કિં તત્ સ્થાપનાવશ્યકમ્ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ઠવણાવસ્સયં’ ઇત્યાદિ । સ્થાપનાવશ્યકમ્—સ્થાપ્યતે—ક્રિયતે ઇતિ સ્થાપના । યથા—જમ્બૂદ્વીપ-ય માનચિત્રમ્, ‘નકશા’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધમ્ । આવશ્યકમિત્યનેન આશ્યકક્રિયાવાન્ શ્રાવકાદિરિહ ગૃહ્યતે । આવશ્યક તદ્વતો રમેદોપચારાત્ । કાષ્ઠપાષાણાદૌ કૃતં ત ય ચિત્રં-જ્ઞાનાદિગુણરહિતાઽઽકૃતિઃ સ્થાપના ।

પ્રકાર સે ઘટિત કિયા ગયા હૈં યહ વિષય સૂત્ર કી ટીકા મેં ટીકાકારને સ્પષ્ટ કિયા હૈં । ઉસે ભાવાર્થ મેં સ્પષ્ટ કરને કી આવશ્યકતા નહીં હૈં । ॥સૂત્ર ૧૦॥

અવ સત્રકાર સ્થાપના આવશ્યક કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં) શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈં મંદંત । સ્થાપના આવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈં ?—

ઉત્તર:—(ઠવણાવસ્સયં) સ્થાપના આવશ્યક કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈં—જો કી જાવે ઉસકા નામ સ્થાપના હૈં । જેસે જમ્બૂદ્વીપ કા નકશા, અઢાઈ દ્વીપ કા નકશા હૈં । આવશ્યક શબ્દ સે યહ આવશ્યક ક્રિયાવાલા શ્રાવક આદિ ગૃહીત હુઆ હૈં । કયોં કિ આવશ્યક ક્રિયા ઓર આવશ્યક ક્રિયાવાલે મેં અમેદ કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈં । કાષ્ઠપાષાણ આદિ મેં કિયા ગયા—ઉકેરા ગયા—

ટીકામાં જ સ્પષ્ટીકરણ કરેલું છે. તેથી ભાવાર્થમાં તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરવાની જરૂર નહેતી નથી. ॥ સુ૦ ૧૦ ॥

હવે સૂત્રકાર સ્થાપના આવશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય સુઝને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં ?) હે ભગવન! સ્થાપના આવશ્યકનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(ઠવણાવસ્સયં) સ્થાપના આવશ્યકનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે. જે કરવામાં આવે તેનું નામ સ્થાપના છે. જેમકે જમ્બૂદ્વીપનો નકશો, અઢીદ્વીપનો નકશો, વગેરે સ્થાપના આવશ્યકરૂપ છે. આવશ્યક પદના પ્રયોગદ્વારા અહીં આવશ્યક ક્રિયાવાળા શ્રાવક વગેરે ગૃહીત થયા છે, કારણ કે આવશ્યક ક્રિયા અને આવશ્યક ક્રિયાવાળામાં અભેદને ઉપચાર કરવામાં આવ્યો છે. કાષ્ઠ પાષાણ આદિમાં આવેખવામાં—

તત્ર શ્રાવકાદ્યમેદોપચારાત્ સ્થાપનારૂપમાવશ્યકમિત્યર્થઃ । કાષ્ઠકર્માદિષુ આવશ્યક ક્રિયાં કુર્વન્તો યત્ સ્થાપનારૂપાઃ શ્રાવકાદયઃ સ્થાપ્યન્તે ચિત્રરૂપેણ તત્ સ્થાપનાવશ્યકમિતિ તાત્પર્યમ્ ! તદાહ—જર્ણ” ઇત્યાદિ । વસ્તુલુ કાષ્ઠકર્મણિ વા—કાષ્ઠે સમુત્કીર્ણે રૂપકે વા પુસ્તકર્મણિ વા । પુસ્તં વસ્ત્રં તમ્ય કર્મ—તન્નિર્મિતા પુત્તલિકા તસ્મિન્ વા । અથવા—‘પોત્યકર્મણિ’ ઇતિચ્છાયા, પોત્યં=પુસ્તકં, તત્ત્વેહ સંપુટકરૂપમ્, તત્ર કર્મ=તન્મયે વર્તિકાલિખિતં રૂપકં તસ્મિન્ વા । યદ્વા—પોત્યં—પુસ્તં=તાડપત્રં, તત્ર કર્મ—તત્ત્વેદનિષ્પન્નં રૂપકં તસ્મિન્ વા । ચિત્રકર્મણિ વા=ચિત્રલિખિતે રૂપકે વા લેપ્યકર્મણિ-લેપ્યરૂપકે વા, ગ્રન્થિમે વા-ગ્રન્થેન નિવૃત્તં ગ્રન્થિમં-નૈપુણ્યાતિશયાત્ ગ્રન્થિસમુદાય નિષ્પાદિતં રૂપકં તસ્મિન્ વા । વેદિમે વા—વેદનેન=પુષ્પવેદનક્રમેણ નિષ્પન્નં રૂપકં વેદિમં

સકા ચિત્ર જો કિ જ્ઞાનાદિ ગુણોં સે સર્વથા શૂન્ય (રહિત) હોતા હૈ. વહ સ્થાપના-નિષ્કેપ હૈ સત્તમેં આવશ્યક ક્રિયા કો સંપાદન કરને કી આકૃતિરૂપ મેં શ્રાવક આદિ કોં કા ફોટો—પથર યા કાષ્ઠ કે પટિયે પર બનાયા જાતા હૈ, સો ચિત્ર યહી સ્થાપનારૂપ આવશ્યક હૈ । ઈસી વિષય કો સૂત્રકાર “જર્ણ” ઇત્યાદિ પદોં દ્વારા સ્પષ્ટ કરતે હૈ—(જર્ણ કટ્ટકમ્મે વા પોત્યકમ્મે વા) જો આકૃતિ કાષ્ઠ મેં ઉકેરી જાવે સત્તમેં અથવા પુસ્ત—વસ્ત્ર—કપડે પર ચિત્રિત કી જાવે સત્તમેં અથવા વસ્ત્ર સે પુત્તલિકા કે રૂપ મેં બનાઈ જાવે સત્તમેં યા પોત્યકર્મણિ” પુસ્તક કે વીચ મેં કુચી સે રંગ આદિ ભર કર બનાઈ જાવે સત્તમેં અથવા તાડ પત્ર પર છેદ કરકે બનાઈ જાવે સત્તમેં અથવા (ચિત્તકમ્મે વા) ચિત્રરૂપ મેં બનાઈ જાવે સત્તમેં (લેપ્યકમ્મે વા) અથવા મૃત્તિકા કો ગિલી કરકે બનાઈ જાવે સત્તમેં (ગંથિ-મે વા વેદિમે વા પૂરિમે વા સંધાઈમે વા) અથવા વસ્ત્ર કી ગાંઠોં કે સમુદાય સે

કેાતરવામાં આવેલું તેનું ચિત્ર કે જે જ્ઞાનાદિ ગુણોથી સર્વથા વિહીન હોય છે, તે સ્થાપનાનિષ્કેપ છે. જેમાં આવશ્યક ક્રિયાને સંપાદન કરવાની આકૃતિરૂપે શ્રાવક આદિકોનાં ચિત્રો પથર પર અથવા લાકડાનાં પાટિયાં વગેરે પર બનાવવામાં આવે છે, તેને જ સ્થાપના રૂપ આવશ્યક કહે છે. એજ વિષયને સૂત્રકાર “જર્ણ” ઇત્યાદિ પદો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે—

(જર્ણ કટ્ટકમ્મે વા પોત્યકમ્મે ૧) જે આકૃતિ લાકડા પર કેાતરી કાઢવામાં આવે તેમાં અથવા પુસ્ત પર (વસ્ત્ર પર) ચિત્રિત કરવામાં આવે તેમાં, અથવા વસ્ત્ર-માંથી ઢીંગલીરૂપે બનાવવામાં આવે તેમાં અથવા—પોત્યકર્મણિ” પુસ્તકની અંદર પીછી વડે રંગાદિ પૂરીને બનાવવામાં આવે તેમાં, અથવા ((ચિત્તકમ્મે વા) ચિત્રરૂપે જેનું સર્જન કરવામાં આવે તેમાં, (લેપ્યકમ્મે વા) ભીની માટીમાંથી બનાવવામાં આવે તેમાં, (ગંથિમે વા, વેદિમે વા, પૂરિમે વા, સંધાઈમે વા) અથવા વસ્ત્રની ગાંઠોના સમુદાયથી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૧૧ સ્થાપનાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૭

તસ્મિન્ વા । યદ્વા-એકસ્ય દ્વયોર્વહૂર્ના વા વસ્ત્રાણાં વેષ્ટનેન નિષ્પન્નં યદ્વપં તદ્ વેષ્ટિમં તસ્મિન્ વા । પૂરિમે વા-પૂરણેન ભરણેન નિષ્પન્નં પૂરિમં-તામ્રપિત્તલાદિમયં તસ્મિન્ વા । સજ્ઞાતિમે વા-સજ્ઞાતેન=બહુવસ્ત્રાદિસ્વળ્ડસમુદાયેન નિષ્પન્નં રૂપકં સજ્ઞાતિમં તસ્મિન્ વા । અક્ષે વા-અક્ષશ્ચન્દનકસ્તસ્મિન્ વા વરાટકે=કર્પૂરકે વા સદ્ભાવસ્થાપનયા વા કાષ્ઠકર્માદિષુ આકારવતી યા સ્થાપના સા સદ્ભાવસ્થાપના શ્રાવકાદ્યાકારસ્ય તત્ર સદ્ભાવાત્ । તથા સદ્ભાવસ્થાપનયા, અસદ્ભાવસ્થાપનયા વા અક્ષાદિષુ અનાકારવતી અસમ્યગ્રૂપેણ સ્થાપના ભવતિ સા અસદ્ભાવસ્થાપના, શ્રાવકાદ્યાકારસ્ય તત્રાસદ્ભાવાત્ । તથા વા સ્થાપ્યમાનઃ એકો વા અનેકો વા આવશ્યકેતિ-આવશ્યકક્રિયાયુક્તશ્રાવકાદિઃ સ્થાપના સ્થાપ્યતે=ક્રિયતે । તદેતત્ સ્થાપનાઽવશ્યકમ્ ॥૨૧॥

જો બનાઈ જાવે ઉસમેં, અથવા એક યા દો અથવા અનેક વસ્ત્રોં કોં વેષ્ટિત કરકે જો બનાઈ જાવે ઉસમેં, અથવા પુણીં કો આકૃતિ કે રૂપ મે સજા સજા કરકે જો આકાર બનાયા જાવે ઉસમેં અથવા પિત્તલાદિ દ્રવ્યોં કો સાંચે મૈ ઢાર કર જો આકૃતિ બનાઈ જાવે ઉસમેં અથવા અનેક વસ્ત્રોં કે સ્વળ્ડોં સે-ઘજિજ્યોં સે-જો રૂપ બનાયા જાવે ઉસમેં (અક્ષેવા) અથવા પાશે મેં (વરાડેવા) અથવા કોડી મેં (એગો વા અણેગો વા) એક અથવા અનેક આવશ્યક ક્રિયા યુક્ત એક અનેક શ્રાવક આદિ કી (સન્ભાવઠવળા અસન્ભાવઠવળા) કી ગઈ જો સદ્ભાવસ્થાપના અથવા અસદ્ભાવસ્થાપના હૈ (આવસ્સણ્તિ ઠવળા ઠવિજ્જહ) વહ આવશ્યક કી સ્થાપના હૈ । (સે તં ઠવળાવસ્સયં) યહ સ્થાપના આવશ્વક કા સ્વરૂપહૈ । ॥૨૧॥

ખનાવવામાં આવે તેમાં, અથવા એક, બે અથવા અનેક વસ્ત્રોને વેષ્ટિત કરીને ખનાવવામાં આવે તેમાં, અથવા પુણીની આકૃતિરૂપે સજાવટ કરી કરીને જે આકાર ખનાવવામાં આવે તેમાં, અથવા પિત્તલાદિ દ્રવ્યોને ખીખામાં ઢાળીને જે આકાર ખનાવવામાં આવે તેમાં અથવા આવે તેમાં, અથવા અનેક વસ્ત્રોના લીરાંઓ (ચિંકર-ડાંઓ)માંથી જે આકૃતિ ખનાવવામાં આવે તેમાં (અક્ષે વા) અથવા પાશાઓમાં અથવા (વરાડે વા) કોડીમાં (એગો વા અણેગો વા) એક અથવા અનેક આવશ્યક ક્રિયા યુક્ત એક-અનેક શ્રાવક આદિવડે (સન્ભાવઠવળા અસન્ભાવઠવળા) કરવામાં આવેલી જે સદ્ભાવસ્થાપના અથવા અસદ્ભાવ સ્થાપના છે. (આવસ્સણ્તિ ઠવળા ઠવિજ્જહ) તેનું નામ આવશ્યકની સ્થાપના છે. (સે તં ઠવળાવસ્સયં) આ પ્રકારનું આ સ્થાપનાઆવશ્યકનું સ્વરૂપ છે. ॥ સુ૦ ૧૧ ॥

૭૯

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

નામસ્થાપનયોગેન્દ્રમાહ--

પૂલ્લ-નામદ્વવળાણં કો પઢવિસેસો ? નામં આવકહિયં, ઠવળા
ઇત્તરિયા વા હોજ્જા આવકહિયા વા ॥સૂ. ૧૨॥

છાયા-નામસ્થાપનયોઃ કઃ પ્રતિવિશેષઃ ? નામ યાવત્કથિકમ્, સ્થાપના
ઇત્વરિકા વા ભવેત્, યાવત્કથિકા વા । ॥સૂ. ૧૨॥

ટીકા--'નામદ્વવળાણં' ઇત્યાદિ--

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-નામસ્થાપનયોઃ કઃ પ્રતિવિશેષઃ ? નામસ્થાપનયો કો
વિશેષઃ ? ન કોઽપિ વિશેષો દૃષ્યતે । યથા ભાવાવશ્યકસ્વરૂપશૂન્યે ગોપાલદારકાદૌ
આવશ્યકેતિ નામ ક્રિયતે, તથૈવ સ્થાપનાઽપિ ભાવાવશ્યકસ્વરૂપશૂન્યે કાષ્ઠપુસ્તકા-
દૌ આવશ્યકશાસ્ત્રસ્ય તદાકારરૂપતયા અતદાકારરૂપતયા વા સ્થાપના સ્થાપ્યતે
અતો ભાવશૂન્યે દ્રવ્યમાત્રે ક્રિયમાણત્વાદનયો નાસ્તિ હશ્વિદ્ વિશેષ ઇતિ પ્રશ્નુરા-

અવ સૂત્રકાર નામ ઓર સ્થાપના નિક્ષેપ મેં કયા અન્તર હૈ-ઇસ વાત
કો પ્રકટ કરતે હૈ--"નામદ્વવળાણં" ઇત્યાદિ । ॥મૂત્ર ૧૨॥

શબ્દાર્થ-(હે ભદંત ! નામ ઓર સ્થાપના કા કયા ભેદ હૈ ? ઇસ પૂર્વોક્ત
કથન સે તો ઇન દોનોં મેં કાઠ અન્તર નહીં જ્ઞાત હોતા હૈ ? કારણ--

જિસ પ્રકાર ભાવાવશ્યક કે સ્વરૂપ સે શૂન્ય ગોપાલદારક આદિ મેં આવ
શ્યક પેસા નામનિક્ષેપ કિયા જાતા હૈ-ઊસી પ્રકાર સે ભાવાવશ્યક કે સ્વરૂપ
સે શૂન્ય કાષ્ઠ પુસ્તક આદિ મેં આવશ્યકશાસ્ત્ર કી તદાકારરૂપ સે યા અતદા-
કારરૂપ સે સ્થાપનાનિક્ષેપ કિયા જાતા હૈ । અતઃ ભાવ સે શૂન્ય દ્રવ્યમાત્ર મેં
ક્રિયમાણ હોને કે કારણ ઇન દોનોં મેં કોઈ વિશેષતા લક્ષિત નહીં હોતી હૈ-
ઇસ પ્રકાર કા અભિપ્રાય પૂછનેવાલે શિષ્ય કા હૈ ।

હવે સૂત્રકાર નામ નિક્ષેપ અને સ્થાપના નિક્ષેપ વચ્ચે શો તફાવત છે, તે પ્રકટ કરે છે.
"નામદ્વવળાણં" ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ--શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે "હે ભગવન્ ! નામ અને સ્થા-
પના વચ્ચે શો તફાવત છે ? પૂર્વોક્ત કથન પ્રમાણે તો તે બન્ને વચ્ચે કોઈ ભેદ
જો દેખાતો નથી, કારણ કે.....જેમ ભાવાવશ્યકના સ્વરૂપથી રહિત ગોવાળપુત્ર
આદિમાં "આવશ્યક" એવો નામ નિક્ષેપ કરવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે ભાવા-
વશ્યકના સ્વરૂપથી વિહીન, કાષ્ઠ, પુસ્તક આદિમાં આવશ્યકશાસ્ત્રની તદાકારરૂપે અથવા
અતદાકાર રૂપે સ્થાપના રૂપે નિક્ષેપ કરવામાં આવે છે. તેથી ભાવથી વિહીન દ્રવ્ય
માત્રમાં ક્રિયમાણ હોવાને કારણે એ બન્ને વચ્ચે કોઈ પણ પ્રકારનો ભેદ દેખાતો
નથી. આ પ્રકારની પ્રશ્ન કરનાર શિષ્યની માન્યતા અહીં પ્રકટ કરાઈ છે.

અમુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. ૧૧ સ્થાપનાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૭૨

શયઃ ઉત્તરયતિ—‘જામં આવકહિયં’ ઇત્યાદિ । નામ યાવત્કથિકમ્—સ્વાશ્રયદ્રવ્ય સ્ય અસ્તિત્વકથાં યાવદ્ નામ અવતિષ્ઠતે, નામન આશ્રયદ્રવ્ય યાવત્તિષ્ઠતિ તાવન્નામાપિ તિષ્ઠતીતિ ભાવઃ । સ્થાપના તુ ઇત્વરિકા—સ્વલ્પકાલાવસ્થાયિની વા ભવેત્ યાવત્કથિકા વા ભવેત્ । કાષ્ટકર્માદૌ આવશ્યકશાસ્ત્રસ્ય તદાકારરૂપા અતદાકારરૂપા સ્થાપના યાવત્કથિકા ભવતિ. અક્ષાદૌ તુ સા ઇત્વરિકા ભવતીત્યર્થઃ । અયં ભાવઃ—કાચિત્ સ્થાપના સ્વાશ્રયદ્રવ્યમય સદ્ભાવેઽપિ મત્યકાલ એવ નિવ-

ઉત્તર—(જામં આવકહિયં ટવળા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા આવકહિયા વા) નામ યાવત્કથિક હોતા હૈ ઓર સ્થાપના ઇત્તરિક તથા યાવત્કથિક દોનોં પ્રકાર કા હોતા હૈ ।

સ્વાશ્રય દ્રવ્ય કે અસ્તિત્વ કાલ તક નામ રહતા હૈ—અર્થાત્—જિસકા વહ નામ હૈ વહ જય તક મૌજૂદ રહતા હૈ તય તક ઉસકા વહ નામ વિદ્યમાન રહતા હૈ—હસકા નામ યાવત્કથિક હૈ પરન્તુ સ્થાપના જો હૈ વહ સ્વલ્પ કાલ-તક મી રહતી હૈ ઓર યાવત્કથિક મી હોતી હૈ—કાષ્ટ કર્મ આદિ મેં આવશ્યકશાસ્ત્ર કી તદાકારરૂપ અથવા અતદાકારરૂપકૃત સ્થાપના યાવત્કથિક હોતી હૈ—સ્વાશ્રયદ્રવ્ય કી સ્થિતિ તક રહતી હૈ । તથા અક્ષ—(ચૌકોર પાશા) આદિ મેં કૃત અતદાકાર સ્થાપના સ્વલ્પ કાલ તક રહતી હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ કોઈ સ્થાપના સ્વાશ્રય દ્રવ્ય કે સદ્ભાવ મેં મી બીચ હી મેં સમાપ્ત હો જાયા કરતી હૈ ઓર કોઈ સ્થાપના એસી હંતી હૈ જો અપને આશ્રયભૂત દ્રવ્ય કી

ઉત્તર—(જામં આવકહિયં ટવળા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા, આવકહિયા વા) નામ યાવત્કથિત હોય છે, પરન્તુ સ્થાપના ઇત્વરિક (સ્વલ્પકાળ સુધી જ રહેનાર) અને યાવત્કથિત, એ બન્ને પ્રકારની હોય છે. સ્વાશ્રયભૂત દ્રવ્યના અસ્તિત્વકાળ સુધી નામ રહે છે. એટલે કે જેનું તે નામ રાખવામાં આવ્યું છે તે વસ્તુ અથવા વ્યક્તિનું અસ્તિત્વ જ્યાં સુધી રહે છે. ત્યાં સુધી જ તે નામનું અસ્તિત્વ રહે છે. આ રીતે નામને યાવત્કથિત કહેવામાં આવ્યું છે. પરન્તુ સ્થાપના તો સ્વલ્પકાળ સુધી પણ રહે છે અને યાવત્કથિત (વસ્તુનું) અસ્તિત્વ રહે એટલા માટે કાળ સુધી ટકનારી) પણ હોઈ શકે છે.

જેમકે કાષ્ટ કર્મ આદિમાં આવશ્યકશાસ્ત્રની તદાકારરૂપ અથવા અતદાકારરૂપ કરેલી સ્થાપના યાવત્કથિત હોય છે—સ્વાશ્રયભૂત દ્રવ્યનું જ્યાં સુધી અસ્તિત્વ રહે ત્યાં સુધી જ તે સ્થાપનાનું અસ્તિત્વ રહે છે, તથા અક્ષ (પાશા) આદિમાં કરેલી અતદાકાર સ્થાપના બહુ જ ઓછા કાળ સુધી રહે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે—કોઈ સ્થાપનાના સ્વાશ્રયભૂત દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ રહેવા છતાં પણ વસ્તુથી જ

૮૦

અનુયોગદ્વારમ્ત્રે

તંતે, કાચિત્તુ તત્સત્તાં યાવદ્વતિષ્ઠતે, હિતિ એવં ચ-નામસ્થાપનયોર્ભવશૂન્યત્વે-નાધારસામ્યેઽપિ ભેદઃસ્વ સ્વાવસ્થાનકાલ કૃત એવ ભગવતા પ્રદર્શિતઃ યદ્યપિ ગોપાલ દારુકાદૌ વિદ્યમાનેઽપિ કદાચિદનેદનામપરિવર્તનં લોકે ક્ષવીદ્દશ્યતે, તથાચ કાલકૃતોઽપિ ભેદો નાસ્તિ, તથાપિ-વહુશઃ સ્થલે નામ્નો યાવત્કાથિસ્ત્વમેવ દશ્યતે, નામ્નઃ પરાવર્તનં તુ ક્વચિદ્વિરલતયોપલભ્યતે । અતોઽલ્પસ્થલવ્યાપિત્વેન નામ્નઃ ઇત્વરિકતા ભગવતા ન વિવક્ષિતા । નામ્નોઽલ્પકાલિકતાકલ્પને તૃત્તુત્રપ્રરૂપણા-પત્તિરિતિ બોદ્યમ્ ।

સત્તાં કાલ તક રહતી હૈ । ઇસ પ્રમાર નામ ઔર સ્થાપના નિક્ષેપ મેં ભાવશૂન્યતા કી અપેક્ષા આધાર કી સમાનતા હોને પર મી અપને ૨ અવસ્થાન કાલ કી અપેક્ષા કૃત હી ભેદ હૈ એસા ભગવાન ને પ્રદર્શિત કિયા હૈ । યદ્યપિ ગોપાલ-દારુક આદિ મેં ઉનની વિદ્યમાનતા રહને પર મી કમી ૨ અનેક નામોં કા પરિવર્તન હોતા હુઆ લોક મેં કહીં ૨ દેખા જાતા હૈ-ઇસ અપેક્ષા કાલકૃત ભેદ સર્વથા નહીં આતા હૈ-તો મી અનેક સ્થલોં મેં નામ મેં યાત્કથિકતા દેખી જાતી હૈ । ઇત્વરિકતા નહીં । યહ તો કેવલ વિરલતારૂપ મેં હી કહીં ૨ દેખી જાતી હૈ । ઇસલિયે નામ કી ઇત્વરિકતા અલ્પસ્થલ વ્યાપી હોને કે કારણ ઉસ મેં ભગવાન ને વિવક્ષિત નહીં કી હૈ । યદિ નામ મેં અલ્પકાલિકતારૂપ ઇત્વરિકતા કલ્પિત કી જાવે તો ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપણા કી આપત્તિ આતી હૈ એસા જાનના ચાહિયે ।

જમે ત્યારે સમાપ્ત થઇ જતી હોય છે, ત્યારે કોઇ સ્થાપના એવી હોય છે કે જે પોતાના આશ્રયભૂત દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ જ્યાં સુધી રહે ત્યાં મોજૂદ રહે છે.

આ પ્રમાણે નામ અને સ્થાપના નિક્ષેપમાં ભાવશૂન્યતાની અપેક્ષાએ આધારની સમાનતા હોવા છતાં પણ પોતપોતાના અવસ્થાનકાળની અપેક્ષાએ જ ભેદ રહેલો છે, એવું ભગવાને કહ્યું છે.

જો કે ગોવાળપુત્ર આદિનું અસ્તિત્વ રહેવા છતાં પણ કોઇ કોઇ વાર તેમના નામોમાં પરિવર્તન થયા કરતું હોય છે, એવું પણ જોવામાં આવે છે ખરું. આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો એવી પરિસ્થિતિમાં તો નામમાં યાવત્કથિકતા રહેતી નથી, પરંતુ આવું ભાગ્યે જ બને છે. અનેક વસ્તુઓ અથવા પદાર્થોમાં તો નામની યાવત્કથિકતા જ જોવા મળે છે-ઇત્વરિકતા (અલ્પ સ્થાયિત્વ) દેખાતી નથી. નામની અપેક્ષાએ ઇત્વરિકતા તો કેવળ વિરલતા રૂપે જ કોઇ કોઇ વસ્તુમાં જોવામાં આવે છે. આ રીતે નામની ઇત્વરિકતા અલ્પ સ્થલવ્યાપી હોવાથી ભગવાને અહીં તેની વિવક્ષા કરી નથી. જો નામમાં અલ્પકાલિકતા રૂપ આ ઇત્વરિકતાને સ્વીકારવામાં

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૧૨ નામસ્થાપનયામેદનિરૂપણમ્

૮૧

યત્તુ-ઉપલક્ષણમાત્રં ચેદં કાલમેદેનૈતયામેદકથનમ્-અપરસ્થાપિં બહુપ્રકાર-
મેદસ્ય સમ્ભવાત્, ઇત્યુક્તં,

તદુત્સૂત્રપ્રરૂપણમ્-યથોત્સૂત્રપ્રરૂપણમિથા-નામનિક્ષેપે ઇત્વરિકતાયાઃ ક્વચિત્
સંભવેઽપિ ભગવતાઽનુક્તવાદુપલક્ષણમિતિ ન સ્વીકૃતં, તથૈવ સ્થાપનાયો કાલા-
તિરિક્તસ્ય મેદહેતોઃ કલ્પનેઽપ્યુત્સૂત્રપ્રરૂપણં પ્રસજ્યેત કાલાન્યકૃતમેદસ્ય ભગવતા-
ઽનુક્તવાત્ । एतेन-यत् कैश्चिदुक्तं यथा=प्रतिमारूपस्थापना-दर्शनात् भावः समुल्ल-

જો કોઈ એસા કહેતે હૈં કિ” ઇસ પ્રકાર કે કાલ મેદ સે નામનિક્ષેપ
ઔર સ્થાપનાનિક્ષેપ મેં જો મેદ કા કથન કિયા ગયા હૈં વહ ઉપલક્ષણ માત્ર
હૈં ક્યોંકિ ઇસસે ઔર મીં અનેક પ્રકારોં કો લેકર ઇન દોનોં મેં મેદ સંભવિત
હોતા હૈં “સો ઁનકા એસા કથન કરના ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપણા હૈં-આગમ સે વિરુદ્ધ
હૈં-। દેસો જૈસે નામ નિક્ષેપ મેં ક્વચિત્ ઇત્વરિકતા કા સંભવ હોને પર મીં
ભગવાન્ ને ઇસે ઉત્સૂત્રપ્રરૂપણા કે મય સે ઁસ મેં નહીં કહા હૈં-વહાં તો
યાવત્કથિકતા હીં વહીં હૈં ઔર ઇસીં કારણ સે ઇત્વરિકતા કો ઉપલક્ષણરૂપ સે
સ્વીકાર નહીં કિયા હૈં-ઁસીં તરહ સ્થાપના મેં કાલ સે અતિરિક્ત ઔર કિસી
વાત કો મેદ કા હેતુ સ્વીકાર કિયા જાયગા તો ઁસમેં મીં ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપણા
કી પ્રસક્તિમાનની પડેગી । ક્યોંકિ કાલ કે સિવાય અન્ય કૃત મેદ ભગવાન્
ને ઁસમેં વહા નહીં હૈં । ઇસીં તરહ સે જો કોઈ ઔર મીં એસા કહેતે હૈં કિ” પ્રતિમારૂપ

આવે તો ઉત્સૂત્રપ્રરૂપણાનો દોષ લાગે છે-એટલે કે એ પ્રકારની પ્રરૂપણા કરવી એ
સંત્ર વિરુદ્ધની સિદ્ધાન્તોથી વિરુદ્ધની પ્રરૂપણા કરી ગણાય, એમ સમજવું.

અહીં કોઈ એવી દલીલ કરે કે આ પ્રકારના કાળભેદની અપેક્ષાએ નામનિક્ષેપ
અને સ્થાપનાનિક્ષેપ વચ્ચે જે ભેદ પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે, તે તો ઉપલક્ષણ
માત્ર જ છે. કારણ કે આ સિવાય બીજા અનેક રીતે પણ તે બંને વચ્ચે ભેદ
સંભવી શકે છે. તો આ પ્રકારનું તેનું જે કથન છે તેને ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપણા રૂપ જ
ગણી શકાય, કારણ કે તે પ્રકારની માન્યતા આગમની વિરુદ્ધ જાય છે. જેમ નામ-
નિક્ષેપમાં કોઈ કોઈ પ્રસંગે ઇત્વરિકતા (અલ્પકાલિનતા)નો સંભવ હોવા છતાં પણ
ભગવાને ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપણાના લયથી તેના ઉદ્દેશ્ય કયોં નથી-ત્યાં તો માત્ર યાવત્કથિકતા
જ પ્રદર્શિત કરવામાં આવી છે અને એજ કારણે ઇત્વરિકતાનો ઉપલક્ષણરૂપે સ્વીકાર
કરવામાં આવ્યો નથી, એજ પ્રમાણે સ્થાપનામાં પણ કાળ સિવાયની કોઈ પણ
બાબતને ભેદ કારણરૂપે સ્વીકારવામાં આવે તો એ પ્રકારની પ્રરૂપણામાં પણ
ઉત્સૂત્રપ્રરૂપણાનો જ પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે, કારણ કે સ્થાપના નિક્ષેપમાં કાળકૃત ભેદ
સિવાયનો કોઈ પણ ભેદ ભગવાને ઠહ્યો નથી.

સતિ નૈવ નામશ્રવણમાત્રાદિતિ નામથાપનયોર્મેદઃ, યથા ચન્દ્રાદેઃ પ્રતિમારૂપ સ્થાપનાર્યાં લોકસ્યોપયાચિત્તેન્દ્રા પૂજાપ્રવૃત્તિસમીહિતલાભાદયો દૃશ્યન્તે, નૈવ નામેન્દ્રાદૌ, इत्यपि तयोर्मेदः । एवमन्यदपि वाच्य” મિતિ તદુત્પન્નપ્રરૂપણાજનિ-
તાનન્તસંસારજનકમ્ । આગમે દિદમુપલભ્યતે—“તથારૂપાણં અરહંતાણં નામગો-
સવળયાણ મહાફલં” । इति । तत्र नास्ति नामनिक्षेपस्य विषयः । “अरहंताणं
भगवंताणं” इत्युक्त्या तस्मिन्नर्थे प्रयुक्तस्य नाम्न एव श्रवणेन महाफलसंभवात्

સ્થાપના કે દેવને સે જૈસે માં મેં ઉલ્લાસ હોતા હૈ—નૈસા ભાવ ઉત્પન્ન હોતે હૈ વૈસા
ભાવો મેં ઉલ્લાસ—ઉસ તરહ કા પરિણામ—ઉસ નામ માત્ર કે શ્રવણ સે નહીં હોતા
હૈ—યહી નામ ઔર સ્થાપનાનિષેપ મેં મેદ હૈ ।— દેવો—જબ હન્દ્રકી પ્રતિમા
રૂપ સે સ્થાપના કી જાતી હૈ તો લોગ ઉસકે સમક્ષ વિવિધ પ્રકાર કી
યાચના કરતે હૈ, ઉસકી પૂજા કરતે હૈ, ઔર અપને સમીહિત કી પ્રાપ્તિ કરલે-
તે હૈ, इत्यादि सब बातें देखी जाती हैं—नाम इन्द्र आदि में इस प्रकार की
बातें नहीं देखी जाती—अतः इस तरह से भी इन दोनों निषेधों में भेद है—
तथा और भी इसी तरह से भेद के हेतु वाच्य हैं” સો એસા યહ વક્તવ્ય
મા આગમ કે વિરુદ્ધ હૈ ઔર સ તરહ કી પ્રરૂપણા કરના અનન્ત સંસાર
કા વધાને વાલા હૈ । कि “तथारूपवाले अरहंत भगवंतों के नाम और गोत्र के सुनने
से महाफल होता है” सों यह कथन नामनिक्षेप का विषय नहीं है । “अरहंता
णं भगवंताणं” क्योंकि इस उक्ति से तथारूप भावअरहंत में प्रयुक्त नाम के

વળી કોઈ કોઈ માણસો એવું પણ કહે છે કે.....“પ્રતિમારૂપ સ્થાપનામે
નિહાણવાથી ભાવોનો જેવો ઉલ્લાસ અનુભવવામાં આવે છે—જેવો ઉલ્લાસ ઉત્પન્ન થાય
છે, એવો ભાવોનો ઉલ્લાસ (એ પ્રકારનું મનઃપરિણામ)—તે નામ માત્રના શ્રવણથી
ઉત્પન્ન થતો નથી. નામનિષેપ અને સ્થાપનાનિષેપ વચ્ચે આ પ્રકારનો જ તફાવત
છે. જેમકે ઇન્દ્રની પ્રતિમાની સ્થાપના કરવામાં આવી હોય તો લોકો તેની સમક્ષ
વિવિધ પ્રકારની યાચના કરે છે, તેની પૂજા કરે છે અને પોતાની ઇચ્છિત વસ્તુઓની
પ્રાપ્તિ કરી લે છે, પરંતુ નામ ઇન્દ્ર આદિમાં એવું જોવામાં આવતું નથી. આ રીતે
તે જાને પ્રકારના નિષેધોમાં આ પ્રકારનો ભેદ પણ રહેલો છે. એટલું જ નહીં પણ
તે જાને નિષેધો વચ્ચે રહેલો ભેદ દર્શાવતા બીજા કેટલાક કારણોનો પણ સદ્ભાવ છે.

તો આ પ્રકારનું કથન પણ આગમ વિરૂદ્ધનું કથન હોવાથી ઉત્સૂત્રકથન જ
ગણાય છે. આ પ્રકારની આગમ વિરૂદ્ધની પ્રકૃષ્ટા કરનાર વ્યક્તિ અનન્ત સંસારની
જનક બને છે. આગમમાં આ પ્રકારનું જે કથન આવે છે કે.....

“તથારૂપ અહંત ભગવંતોના નામ અને ગોત્રનું શ્રવણ કરવાથી મહાફલની
પ્રાપ્તિ થાય છે,” આ કથન નામનિષેધના વિષયરૂપ નથી. કારણકે “અરહંતાણં ભગ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૧૨ નામસ્થાપનયોર્મદનિરૂપણમ્

૮૩

ગોપાલદારકાદૌ પ્રયુક્તસ્ય નામ્નઃ શ્રવણેન તુ ગોપાલદારકાર્થસ્યૈવ વૌષાદાત્મ-
પરિણામશુદ્ધિહેતુત્વં તસ્ય નાસ્તીતિ । નામનિક્ષેપસ્થલે ભગવતોઽર્હતઃ સ્મરણા-
સંભવઃ, તસ્ય ભાવશૂન્યવાત્, અત્ર તુ નામગોત્રાભાં ભગવદર્હતઃ સમ્બન્ધં ષષ્ટયન્ત-
પદપ્રયોગાદેવ દર્શયતા ભગવતા નામનિક્ષેપો ન વિવક્ષિતઃ । ભાવજિનવૌધ-

હી શ્રવણ સે મહાફલ હોના વતલાયા ગયા હૈ । કેવલ નામ શ્રવણ સે નહીં ।
નહીં તો ગોપાલદારકા મેં પ્રયુક્ત અર્હત નામ કે શ્રવણ સે મી મહાફલ કી
પ્રાપ્તિ હો જાની ચાહિયે । વહાં તો એના હોતા નહીં
હૈ । કેવલ ઉસ નામ સે ગોપાલદારકારૂપ અર્થ કી હિ પ્રતીતિ હોતી હૈ ।
આત્મપરિણામોં કી શુદ્ધિરૂપ મહાફલ ઉસે પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ । અતઃ યહ
માનના ચાહિયે કિ ભાવરૂપ અર્હત નામ કે હી શ્રવણ સે જીવોં કો આત્મ-
પરિણામોં કી શુદ્ધિરૂપ ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ । ક્યોં કિ વહી ઉસકા હેતુ હૈ ।
સાધારણ નામનિક્ષેપ મેં યહ હેતુતા નહીં આતી હૈ । યદિ કોઈ એસા કહે-
કિ અર્હત નામનિક્ષેપ મલે હી આત્મપરિણામોં કી શુદ્ધિ કા હેતુ ન હો તો
ન સહી પરન્તુ ઉસકે શ્રાવણ સે ભગવાન્ અર્હત કા તો સ્મરણ હો જાતા હૈ
સો એસા કહના મી ઉચિત નહીં હૈ ક્યોં કિ નામનિક્ષેપ સ્થલ મેં ભગવાન્
અર્હત કા, ઉસે નામનિક્ષેપ સે શૂન્ય હોને કે મારગ સ્મરણ હો આના અસં-

વંતાર્ણ” ઇત્યાદિ કથન દ્વારા એ બતાવવામાં આવ્યું છે કે તથાસ્તુ ભાવરૂપ અર્હ-
તમાં પ્રયુક્ત નામના જ શ્રવણથી મહાફલની પ્રાપ્તિ થાય છે—કેવળ નામ નામના જ
શ્રવણથી મહાફલની પ્રાપ્તિ થતી નથી. નહીં તો કેમ પણ વ્યક્તિને માટે (દાખલા
તરીકે ગોવાળાના પુત્રને માટે) ‘અર્હત’ આ નામનો ઉપયોગ કરવામાં આવે, તો
તેના નામનું શ્રવણ કરવાથી પણ મહાફલની પ્રાપ્તિ થઈ જવી જોઈએ ! પણ અહીં
તો એવું બનતું નથી. તે નામદ્વારા માત્ર તે ગોવાળપુત્ર રૂપ અર્થની જ પ્રતીતિ
થાય છે. આત્મપરિણામોની શુદ્ધિ રૂપ મહાફલની પ્રાપ્તિ તેના નામ શ્રવણથી થતી નથી.
તેથી એવું માનવું જોઈએ કે ભાવરૂપ અર્હત નામના જ શ્રવણથી જીવોને આત્મ-
પરિણામોની શુદ્ધિરૂપ ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે, કારણ કે એજ તેના હેતુ છે. સાધારણ
નામનિક્ષેપમાં આ હેતુતા સંભવી શકતી નથી.

વળી કેમ માણસ અહીં એવી દલીલ કરે કે અર્હત નામનિક્ષેપ ભલે આત્મ
પરિણામોની શુદ્ધિમાં કારણભૂત ન થતો હોય, પણ તેના શ્રવણથી ભગવાન અર્હતના
નામનું સ્મરણ તો થઈ જાય છે, એટલું તો આપે માનવું જ પડશે ।

તો આ પ્રમાણે કહેવું તે પણ ઉચિત નથી, કારણ કે ભાવનિક્ષેપથી રહિત
એવા નામનિક્ષેપથી અર્હત ભગવાનનું સ્મરણ થવાની વાત અસંભવિત છે.

કસ્ય નામ્ન એવ શ્રવણેન મહાફલસંભવઃ । એવં સ્થાપનાપિ ભાવરૂપાર્થશૂન્યા, સ્થાપનયા ભાવરૂપાર્થસ્ય નાસ્તિ કોઽપિ સમ્બન્ધઃ । ભાવજિનશરીરવર્તિની યા ઽઽકૃતિરાસીદ્ તસ્યા આશ્રયાશ્રયિભાવરૂપસમ્બન્ધો ભાવજિનેન સહ તદાનીં ભાવો-છાસોઽપિ કસ્યચિત્ સંજાતઃ, તથા મત્ક્યા તામાકૃતિ રમરતો જનસ્ય ભાવોઽસઃ સંભવતુ, તદા ઽઽકૃતેર્ભાવજિનેન સંબન્ધાત્, પરંતુ--સ્થાપનાયા આશ્રયાશ્રયિભાવ-સમ્બન્ધો નાસ્તિભાવજિનેન સહ । ભાવજિનાત્મનસ્તત્રાવાહનં સ્થાપનં તુ જિનાજ્ઞાવાહ્યં

ભવ છે । ફસલિયે “તહારૂવાળં અરહંતાળં” ઇત્યાદિ પાઠ મેં નામ ઝીર ગોત્ર ફન ઢોનોં કે સાથ મગવાન્ અર્હંત કે સંબન્ધ કો પઠ્યન્તપદ કે પ્રયોગ સે પ્રકટ કરનેવાલે સૂત્રકાર ને નામનિષ્લેપ કી વિવક્ષા નહીં કી છે । કિન્તુ ભાવ-નિષ્લેપ જિનકે બોધક નામ કી વિવક્ષા કી છે । ક્યોંકિ ઉસી નામ કે શ્રવણ સે શ્રોતા કો મહાફલ કી પ્રાપ્તિ હોના સંભવિત છે । ફસી તરહ સે સ્થાપના-મી ભાવરૂપ અર્થ સે શૂન્ય હોતી છે । ક્યોં કિ ઉસકા ભાવનિષ્લેપરૂપ અર્થ કે સાથ કોઈ સંબન્ધ હી નહીં છે । યદિ કહા જાવે કિ પહિલે ભાવ જિનકે અસ્તિત્વ કાલ મેં જો ઉનકે શરીર કી આકૃતિ થી--વહ આકૃતિ હી સ્થાપના નિષ્લેપ મેં વિદ્યમાન રહતી છે--ફસલિયે ઉસસે આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબન્ધ કા બોધ હો જાતા છે--સો યહ કથન મી ઠીક નહીં છે--ક્યોંકિ સ્થાપનાનિષ્લેપ મેં આશ્રયી હી નહાં છે તવ ઉસસે ભાવજિન કે સાથ આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબન્ધ જ્ઞાત કેસે હો સકતા છે ? યદ તો ભાવજિનકે સાથ વે જવ થે તવ

તેથી “તહારૂવાળં અરહંતાળં” ઇત્યાદિ પાઠમાં નામ અને ગોત્ર એ બન્નેની સાથે ભગવાન અર્હંતના સંબંધને છૂટી વિભક્તિના પદના પ્રયોગ દ્વારા પ્રકટ કરનાર સૂત્રકારે નામનિષ્લેપની વિવક્ષા કરી નથી, પરંતુ ભાવનિષ્લેપ જિનના બોધક એવા નામની વિવક્ષા કરી છે. કારણ કે એજ નામના શ્રવણથી શ્રોતાને મહાફલની પ્રાપ્તિ થવાનું સંભવી શકે છે. એજ પ્રમાણે સ્થાપના પણ ભાવરૂપ અર્થથી વિહીન જ હોય છે, કારણ કે ભાવનિષ્લેપરૂપ અર્થની સાથે તેના કોઈ સંબંધ જ હોતો નથી.

જો અહીં એવી દલીલ કરવામાં આવે કે પહેલાં ભાવજિનના અસ્તિત્વકાળમાં જ તેમના શરીરની આકૃતિ હતી, એ આકૃતિ જ સ્થાપનાનિષ્લેપમાં વિદ્યમાન રહે છે, તેથી તેના દ્વારા આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબંધનો બોધ થઈ જાય છે, તો એ પ્રકારની માન્યતા પણ ઉચિત નથી, કારણ કે વર્તમાન કાળે સ્થાપના નિષ્લેપમાં જો આશ્રયીનો જ સદ્ભાવ ન હોય તો તેના દ્વારા ભાવજિનની સાથે આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબંધનો બોધ જ કેવી રીતે થઈ શકે ! ભાવજિનની સાથે જ્યારે તે

अनुयोगवन्दिका टीका १२ नामस्थापनयोर्भेदनिष्पत्तिः

८५

प्रवचनविरुद्धं कर्तुमशक्यं, कथं तर्हि—भावजिनसम्बन्धाभावे प्रतिमा भावजिनं तद्गुणं वा स्मारयितुं शक्ता भवेत् । सर्वथा कुप्रावचनिकद्रव्यावश्यकवत् प्रतिमापूजनं कुर्वन्तः कारयन्तश्च मिथ्यात्वं प्राप्नुवन्ति न तु सम्भ्यक्त्वमिति । इति स्थापना वश्यकम् ॥सू० १२॥

था—। हा यह हो सकता है कि जिस प्रकार भावजिन का दर्शन करनेवाले किसी व्यक्ति को भावोल्लास हो आता है, उसी तरह भक्ति से उनकी उस आकृति का स्मरण करनेवाले जन को भावोल्लास हो आवे—क्यों कि उस आकृति का भावजिन के साथ संबन्ध है यदि भावजिनके साथ उस आकृति को संबन्ध नहीं होवे तो फिर प्रतिमा भावजनक और उनके गुणों का स्मरण कराने में समर्थ कैसे हो सकती है ? परन्तु स्थापना का भावजिन के साथ आश्रयाश्रयी भावरूप संबंध तो कोई है नहीं—कि जिस से उससे इसका बोध हो जावे । भावजिन की आत्मा का उसमें आह्वान करना, स्थापन करना यह सब तो जिनाज्ञा से बिल्कुल बाहिर की बात है । ऐसी प्रवचन विरुद्ध बात को करना अशक्य है इसलिये सर्वथा कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक की तरह प्रतिमा पूजन करने और करानेवाले मिथ्यादृष्टिपने को प्राप्त होते हैं—सम्भ्यक्त्व को नहीं । इस तरह स्थापनावश्यक का यह स्वरूप है । भावार्थ इसका स्पष्ट है । ॥सूत्र १२॥

आकृति विद्यमान हुती त्पारे न आ प्रकारनो संभंध अस्तित्व धरावतो हुतो, हा, जेवुं संभवी शके छे के जे प्रकारे भावजिनना दर्शन करनार कोछ व्यक्तिमां भावोद्भासने उभणके आवी जाय छे, जे प्रभावे लकिनभावपूर्वक ते आकृतिनुं स्मरखु करनार व्यक्तिमां पखु भावोद्भासने उभणके आवी जाय अरे, कारखु के आकृतिनो भावजिननी साथे संभंध छे, जे भावजिननी साथे ते आकृतिने संभंध न होय, तो ते प्रतिमा भावजनक अने अनेक गुणानुं स्मरखु कराववाने समर्थ केवी रीते जनी शके ! परन्तु स्थापनानो भावजिननी साथे आश्रयाश्रयी भावद्रव कोछ संभंध तो छे न नही, के जेना द्वारा तेनो बोध यछ जाय, भावजिनना आत्मानुं तेमां आवाहन करवुं—स्थापन करवु, जे तो जिनाज्ञानी विरुद्धनुं कृत्य गणाय, जेवी प्रवचनविरुद्धनी बात करवी जेछजे नही, तेथी सर्वथा कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यकनी जेम प्रतिमापूजन करनार अने करावनार मिथ्यादृष्टियुक्त जनी जाय छे अने सम्भ्यक्त्वथी रहित न रहे छे, स्थापनावश्यकनुं आ प्रकारनुं स्वरूप छे, तेनो भावार्थ स्पष्ट होवार्थी विशेष स्पष्टीकरखुनी जरर रहेती नथी, ॥सू० १२॥

इदानीं द्रव्यावश्यकं निरूपयति—

મૂલમ્—સે કિં તં દઢ્વાવસ્સય ? દઢ્વાવસ્સયં દુવિહં પળ્ણતં
તં જહા—આગમઓ ય નો આગમઓ ય ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા-અથ કિં તદ્ દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? દ્રવ્યાવશ્યકં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞાતમ્,
તચ્ચથા—આગમતશ્ચ નો આગમતશ્ચ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

શિષ્યઃપૂછતિ—અથ ૧ક તદ્ દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? ઉત્તરયતિ—‘દઢ્વાવસ્સયં’
ઇત્યાદિ । દ્રવ્યાવશ્યકમ્—દ્રવતિ=ગ્છતિ તાંસ્તાન પર્યાયાનિતિ દ્રવ્યમ્—વિવ-
ક્ષિતયોસ્તીતમવિષ્યદ્ ભાવયોઃકારણમ્, અનુભૂતવિવક્ષિતભાવમનુભવિષ્યદ્વિવક્ષિત-
ભાવં વા વસ્તિત્વર્થઃ । દ્રવ્યલક્ષણં ચ સામાન્યતઃ ઇદં બોધ્યમ્ ।

अब सूत्रकार द्रव्यावश्यक का निरूपण करते हैं—

“સે કિં તં દઢ્વાવસ્સય” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૧૩॥

શબ્દાર્થ—(અથ) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે મદંત ! (કિં તં દઢ્વાવસ્સયં)
પૂર્વ પ્રકાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુત વિષય) દ્રવ્યાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(દઢ્વાવસ્સયં દુવિહં પળ્ણતં) દ્રવ્યાવશ્યક દો પ્રકાર કા હૈ
જો ઊન ૨ પર્યાયોં કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ઊસકા નામ દ્રવ્ય હૈ અર્થાત્ જો વિવ-
ક્ષિત અતીત અનાગત ભાવ વા કારણ હો વહ દ્રવ્યનિક્ષેપ હૈ । જૈસે રાજગદી
સે પૃથક્ કિયે હુણ રાજા કો નરેશ કહના । તથા જો આગે રાજા હોનેવાલા
હૈ વર્તમાનમ્ વહ રાજા કી પર્યાય મ્ નહાં હૈ ઊસે અબી સે રાજા કહના વહ
મવિષ્યત્ કાલીન પર્યાય કી અપેક્ષા દ્રવ્યનિક્ષેપ હૈ । જૈસે રાજા કા પુત્ર

હવે સૂત્રકાર દ્રવ્યાવશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં દઢ્વાવસ્સય” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે....

“સે કિં તં દઢ્વાવસ્સય?” હે ભગવન! પૂર્વ પ્રકાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુત વિષય)
દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(દઢ્વાવસ્સયં દુવિહં પળ્ણતં) દ્રવ્યાવશ્યક બે પ્રકારનો કહ્યો છે. તે
તે પર્યાયોને જે પ્રાપ્ત કરતું રહે છે તેનું નામ દ્રવ્ય છે. એટલે કે જે વિવક્ષિત
અતીત (ભૂત કાલિન), અનાગત (ભવિષ્યકાલિન) ભાવનું કારણ હોય છે, તે દ્રવ્ય-
નિક્ષેપ છે. જેમકે રાજગાદીનો જેની પાસે ત્યાગ કરાવવામાં આવ્યો છે તેને નરેશ
કહેવો તે ભૂતકાલિન પર્યાયની અપેક્ષાએ દ્રવ્યનિક્ષેપ છે, તથા વર્તમાન કાળે જે
રાજા નથી, પણ ભવિષ્યમાં રાજા બનવાનો છે તેને આત્યાચ્છી જ રાજા કહેવો તે
ભવિષ્યકાલિન પર્યાયની અપેક્ષાએ દ્રવ્યનિક્ષેપ છે. જેમ કે રાજાના પુત્રને રાજા કહે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સ્વ૦ ૧૩ દ્રવ્યાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૮૭

‘ભૂતસ્ય ભાવિનો વા ભાવસ્ય હિ કારણં તુ યદ્લોકે ।

તદ્ દ્રવ્યં તત્ત્વજ્ઞૈઃ સચેતનાચેતનં કથિતમ્ ।’ ઇતિ ।

વ્યાખ્યા—લોકે હિ ભૂતસ્ય=અતીતઘ્ય ભાવિનઃ=ભવિષ્યતો વા ભાવસ્ય તુ યત્કારણં ભવતિ, તત્ તત્ત્વજ્ઞૈઃ દ્રવ્યં-કથિતમ્ । તદ્દ્રવ્યં સચેતનાચેતનં=સચેતનં=પુરુષાદિકમ્, અચેતનં=કાષ્ઠાદિકં ચ ભવતિ । અયં ભાવઃ—યઃ પૂર્વં સ્વર્ગાદિષ્વિન્દ્રાદિર્ભૂત્વા શ્દાનીં મનુષ્યાદિત્વેન પરિણતઃ સ જીવોઃતીતસ્ય ઇન્દ્રાદિપર્યાયસ્ય કારણત્વાત સામ્પ્રતમપિ દ્રવ્યત ઇન્દ્રાદિરુચ્યતે । યથા-અમાત્યાદિ પદાત્ પ્રચ્યુતોઽપિ અમાત્યદિરુચ્યતે । અપિ ચ અગ્રેઽપિ ય ઇન્દ્રાદિત્વેનોત્પત્યતે, સ શ્દાનીમપિ ભવિષ્યદિન્દ્રાદિપદપર્યાયકારણ-

રાજા કહાં જાતા હૈ દ્રવ્ય નિરૂપ મેં વિવક્ષિતપર્યાય કો જા અનુભવિત કર ચુકી હૈ એસી વસ્તુ તથા વિવક્ષિત પર્યાય કો જો ભવિષ્યતકાલ મેં અનુભવ કરેગા એસી વસ્તુ કે વિષયરૂપ સે પરિગણિત હુઈ હૈ યહી વાત સામાન્યરૂપ સે કથિત ઇસ દ્રવ્ય કે લક્ષણ મેં ઇસ પ્રકાર સે જાનને કે લિયે વહી ગઈ હૈ—લોક મેં તત્ત્વજ્ઞો ને ભૂતપર્યાય વા અથવા ભવિષ્યતપર્યાય વા જો કારણ હોતા હૈ ગ્રહ દ્રવ્ય હૈ । એસા કહાં હૈ । ગ્રહ દ્રવ્ય સચેતન મી હૈ ઔર અચેતન મી હૈ । ઇસ કા ભાવ ઇસ પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે—જેસે કોઈ જીવ પહિલે સ્વર્ગ આદિ મેં ઇન્દ્ર આદિ કી પર્યાય મેં થા ઔર વહાં સે જવ કર મનુષ્ય પર્યાય મેં આગયા । ફિર મી ઉસે અતીત ઇન્દ્રાદિ પર્યાય કા કારણ હોને સે મનુષ્ય પર્યાય મેં મી આમાત્યપદ સે રહિત હુઈ વ્યક્તિકો અમાત્ય વહને વી તરહ ઇન્દ્ર વહના યહ દ્રવ્ય નિરૂપ હૈ । ઇસી તરહ જો જીવ ભવિષ્ય મેં

વામાં આવે છે. દ્રવ્યનિરૂપમાં વિવક્ષિત (અમુક) પર્યાયને જે અનુભવિત કરી ચુકી છે એવી વસ્તુ તથા વિવક્ષિત પર્યાયને જે ભવિષ્યકાળમાં અનુભવ કરશે એવી વસ્તુ તેના વિષયરૂપે પરિગણિત થઈ છે. એજ વાત સામાન્યરૂપે કથિત દ્રવ્યના લક્ષણમાં આ પ્રકારે જાણવાને માટે જતાવવામાં આવી છે—તત્ત્વજ્ઞોએ એવું કહ્યું છે કે લોકમાં ભૂતપર્યાયનું અથવા ભવિષ્યની પર્યાયનું જે કારણ છે, તેનું નામ દ્રવ્ય છે. તે દ્રવ્ય સચેતન પણ છે અને અચેતન પણ છે. તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે સમજવો.

જેમકે કૈાઈ એક જીવ પહેલાં સ્વર્ગમાં ઇન્દ્રની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયો હતો. ત્યારબાદ તે ભવનું આયુષ્ય પૂરું થતાં, ત્યાંથી સ્થળીને તે મનુષ્યલોકમાં મનુષ્યની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ ગયો. જેમ અમાત્યના પદથી રચુત થયેલી વ્યક્તિને અમાત્ય કહેવામાં આવે છે. જેમ મનુષ્યની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયેલા તે મનુષ્યને તેની ભૂત-કાલિન ઇન્દ્રરૂપ પર્યાયને કારણે ઉન્દ્ર કહેવો, તેનું નામ જ દ્રવ્યનિરૂપ છે. જેમ

ત્વાદ્ દ્રવ્યત ઇન્દ્રાદિરભિધીયતે, યથા—રાજકુમારોઽપિ રાજા પ્રોચ્યતે ભાવિરાજ પર્યાયપ્રાપ્તિહેતુત્વાત્ । એવમચેતનસ્ય કાષ્ઠાદેરપિ ભૂતભવિષ્યત્પર્યાયકારણત્વેન દ્રવ્યતા ભાવનીયેત્યર્થઃ ।

એવં દ્રવ્યરૂપમાવશ્યકમ્ । તદ્ દ્રવ્યાવશ્યકં ઢિદિધં પ્રજ્ઞસમ્ ? તદ્ યથા— આગમતશ્ચ—આગમમાશ્રિત્ય, નો આગમતશ્ચ—નો આગમમાશ્રિત્ય । ચ શબ્દોઢયોરપિ સ્વસ્વવિષયે પ્રાધાન્યરૂપાપનાર્થો ॥સૂત્રં ૧૩॥

તત્ર—આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં આગમઑ દઢ્વાવસ્સયં ? આગમઑ દઢ્વાવ-
સ્સયં જસ્સ ણં ઑવસ્સણ્તિ પદં સિલ્લિયં ઢિયં જિયં મિયં પરિજિયં
નામસમં ઘોસસમં અહીણક્સવરં અણચ્ચક્સવરં અઢ્વાઢ્ઢક્સવરં અક્સ-
લિયં અભિલિયં અવચ્ચામેલિયં પઢિપુણં પઢિપુણઘોસં કંઠેઑટ્ટવિષ્પ-

ઇન્દ્ર કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોનેવાલા હો ઉસે ભવિષ્યત્કાલીન ઇન્દ્ર પર્યાય કા કારણ હોને કે વારણ રાજકુમાર કો રાજા કહને કી તરહ ઇન્દ્ર વહના યહ મી દ્રવ્ય નિષ્કેપ કા વિષય હૈ । યદ્યપિ રાજકુમાર વર્તમાન મેં રાજા નહીં હૈ આગે રાજા હોગા—પરન્તુ જો ઉસ અવસ્થા મેં મી વહ રાજા વહા જાતા હૈ વહ ભાવિરાજ પર્યાય કી પ્રાપ્તિ કા હેતુ હોને સે હી વહા જાતા હૈ । ઇસી તરહ સે અચેતનકાષ્ઠ આદિ મેં મી ભૂત, ભવિષ્યત્ પર્યાય કી કારણતાલેકર દ્રવ્યતા ઘટિત કર લેની ઑહિયે । ઇસ તરહ દ્રવ્યરૂપ આવશ્યક કા નામ દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । યહ દ્રવ્યાવશ્યક આગમ કો આશ્રિત કરકે ઑર નો આગમ કો આશ્રિત કરકે દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । ભાવાર્થ સ્પષ્ટ હૈ—સૂત્ર ૧૩ ।

ભવિષ્યકાળમાં રાજા બનવાનો હોય એવા રાજકુમારને ‘રાજા’ કહેવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે જે જીવ ભવિષ્યમાં ઇન્દ્રની પર્યાયે ઉત્પન્ન થવાનો હોય તેને ભવિષ્યકાલિન ઇન્દ્ર પર્યાયનું કારણ હોવાને લીધે ઇન્દ્ર કહેવો તે પણ દ્રવ્યનિષ્કેપનો વિષય છે જે કે રાજકુમાર અત્યારે રાજા નથી, પરન્તુ ભવિષ્યમાં રાજા થવાનો છે, છતાં પણ તેને રાજકુમારની અવસ્થામાં પણ જે રાજા કહેવામાં આવે છે તે ભાવિ રાજપર્યાયની પ્રાપ્તિરૂપ કારણની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવે છે. એજ પ્રમાણે અચેતન કાષ્ઠ આદિમાં પણ જીવ-ભવિષ્ય પર્યાયની કારણતાની અપેક્ષાએ દ્રવ્યતા ઘટિત કરી લેવી જોઈએ. આ પ્રકારે દ્રવ્યરૂપ આવશ્યકનું નામ દ્રવ્યાવશ્યક છે તે દ્રવ્યાવશ્યક બે પ્રકારનો છે—(૧) આગમની અપેક્ષાએ અને નો આગમની અપેક્ષાથી બે પ્રકારના સમજવા. ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે. ॥ સૂત્ર ૧૩ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. ૧૪ દ્રવ્યાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૮૯

મુક્તં ગુરુવાયજોવગયં, સે ણં તત્થ વાયણાણ પુચ્છણાણ પરિયટ્ટણાણ
ધમ્મકહાણ નો અણુપ્પેહાણ, કમ્હા ? ‘અણુવઓગો દઠ્ઠવ’ મિતિ કહ્હુસૂ. ૧૪

છાયા—અથ કિં તદ્ આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકં
યસ્ય ચલુ આવશ્યકેતિ પદં શિષિતં સ્થિતં જિતં મિતં પરિજિતં નામસમં
ઘોષસમમ્ અહીનાક્ષરમ્ અનત્યક્ષરમ્ અવ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્ અસ્થલિતમ્ અમિલિતમ્ અવ-
ત્યાગ્રેડિતં પરિપૂર્ણં પરિપૂર્ણઘોષં કણ્ઠોષ્ટવિપ્રમુક્તં ગુરુવાચનોપગતમ્ । સ ચલુ તત્ર
વાચનયા પ્રચ્છનયા પરિવર્તનયા ધર્મકથયા નો અનુગ્રેક્ષયા, કસ્માત્ ? અનુપયોગો
દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા ॥સૂ૦ ૧૪॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં આગમઓ દઠ્ઠાવસ્સયં’ इति ।
अथ किं तद् आगमतो द्रव्यावश्यकम् ? आगममाश्रित्य द्रव्यावश्यकं किम् ?
इति प्रदुराशयः उत्तरयति—‘आगमओ दध्वावस्सयं’ इत्यादि । आगमतो द्रव्या-
वश्यकम्—एवं विज्ञेयम्—यस्य चलु साधो.—आवश्यकमिति पदम्—सर्वज्ञप्रणीतमाव-
श्यकमभिधेयं शास्त्रं शिषितम्—विनयपूर्वकं गुरुमुखाद् गृहीतम् । स्थितं स्मृतिपथे

આગમ કી અપેક્ષા દ્રવ્યાવશ્યક કા સ્વરૂપ સૂત્રકાર નિરૂપિત કરતે હૈં—

“સે કિં તં” इत्यादि ॥સૂત્ર ૧૪॥

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હે કિં હૈં મદંત ! (કિં તં આગમઓ દઠ્ઠા-
વસ્સયં) આગમ કી અપેક્ષા કરકે દ્રવ્યાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈં ? અર્થાત્
દ્રવ્યાવશ્યક કે જો દો મેદ કહે ગયે હૈં ઉનમૈં સે પહિલે મેદ કા કયા
સ્વરૂપ હૈં ? ઉત્તર—(આગમઓ દઠ્ઠાવસ્સયં) આગમ કી અપેક્ષા લેકર દ્રવ્યાવશ્યક
કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈં—(જસ્સ ણં આવસ્સણ્ણિ પદં સિલ્લિખં) જિસ સાધુને
આવશ્યક શાસ્ત્ર કો વિનયપૂર્વક ગુરુકે મુત્ર સે સીખા હૈં (ઠિયં) ઉસે અચ્છી

હવે સૂત્રકાર આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યકના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે.

‘સે કિં તં’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(કિં તં આગમઓ દઠ્ઠા-
વસ્સયં ?) આગમની અપેક્ષાએ જે દ્રવ્યાવશ્યક કહ્યો છે તેનું કેવું સ્વરૂપ છે ?
એટલે કે દ્રવ્યાવશ્યકના જે જે ભેદ બતાવવામાં આવ્યો છે, તેમાંથી જે પહેલાં ભેદ
બતાવ્યો છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(આગમઓ દઠ્ઠાવસ્સયં) આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ
આ પ્રકારનું છે—(જસ્સણં આવસ્સણ્ણિ પદં સિલ્લિખં) જે સાધુએ આવશ્યકશાસ્ત્રનું
ગુરુની સમક્ષ વિનયપૂર્વક અધ્યયન કર્યું છે, (ઠિયં) તેને સાશમાં સારી રીતે પોતાના

વિદ્યમાનમ્, જિતં-શબ્દતોડ્યતશ્ચ પરિચિતમ્-પરિજ્ઞાતમ્ । મિતં-વિજ્ઞાતશ્લોકપદ-
વર્ણાદિ સંખ્યામાનમ્ પરિજિતં-પરિ=સમન્તાત્ સર્વપ્રકારૈર્જિતં-પરિજિતમ્, આનુ-
પૂર્વ્યા, અનાનુપૂર્વ્યા ચ પરાવર્તિતમ્, નામસમમ્-નામના સમં યથા નામં ન વિસ્મૃતં
ભવતિ, તથા ચ ત્ વદાપિ વિસ્મૃતં ન ભવતિ, તન્નામસમમ્, ઘોષસમં=ઘોષા ઉદા-
ત્તાદયગતૈઃ સમમ્, યથા ગુરુણા ઘોષા ઉક્તાસ્તથા યત્ર શિષ્યેણાપિ સમુચ્ચાર્યન્તે
તદ્ ઘોષસમમ્ । અહીનાક્ષરમ્ એકેનાપ્યક્ષરેણ અહીનમ્ । અનત્યક્ષરમ્-એકદ્વયાદિ-
ભિરક્ષરૈરધિકમત્યક્ષરમ્, ન અત્યક્ષરં યત્ર તદનત્યક્ષરમ્-અધિકાક્ષરરહિતમિત્યર્થઃ,
અવ્યાવિદ્વાક્ષરમ્-અવિદ્વાનિ=વિષયસ્તરત્નમાલાગતરત્નાનીવ વિપર્યસ્તાનિ અક્ષરાણિ
યસ્મિન્સ્તદ્ વ્યાવિદ્વાક્ષરમ્, ન તથા અવ્યાવિદ્વાક્ષરમ્=અવ્યાવિદ્વાક્ષરસ્વરોષ-

તરહ સે અપને સ્મૃતિ પથ મેં ઉતારા હૈ, (જિયં) શબ્દ ઓર અર્થ કી અપેક્ષા
લેકર જિસને ઉસે અચ્છી તરહ સે જ્ઞાન લિયા હૈ (મિયં) જિસકે શ્લોકોં કી
પદોં કી ઓર વર્ણોં કી સંખ્યા કા પ્રમાણ જિસે મલી પ્રકાર અભ્યાસ ક્રિયા હુઆ હૈ
(પરિજિયં) આનુપૂર્વીં એવં અનાનુપૂર્વીં સે જિસને ઉસે સબ તરફ સે ઓર સબ
પ્રકાર સે આવર્તિત કિયા હૈ, (નામસમં) અપને નામ કે સમાન જો વખી
મી ઉસે અપને સ્મૃતિ પથ સે દૂર નહીં કરતા હૈ (ઘોષસમં) જિસ પ્રકાર સે
ગુરુ મહારાજ ઉદાત્ત આદિ ઘોષ સ્વરોં કા ઉચ્ચારણ કિયા હૈ, ઉસી
પ્રકાર સે જો ઉસકે ઘોષાદિ સ્વરોં કા ચારુરૂપ સે ઉચ્ચારણ કરતા હૈ, તથા-(અહી
ળવચ્ચરં) એકમી અક્ષર કી હીનતા સે રહિત ઉસે જિસને સીસ્યા હૈ (અળચ્ચ-
વચ્ચરં) બોલતે સમય-પાઠ કરતે સમય જો અપની તરફ સે બોલતા હૈ-અર્થાત્
જૈસા ઉસમેં લિખા હૈ વૈસા હી ઉસે ઉચ્ચારણ કરતા હૈ (અવાહ્યક્ષરં) જિસે

સ્મૃતિપટલમાં ઉતાર્યું છે, (જિયં) શબ્દ અને અર્થની અપેક્ષાએ જેને તેણે સારી
રીતે બાણી લીધેલ છે, (મિયં) જેના શ્લોકોની, પદોની અને વર્ણોની સંખ્યાનું
પ્રમાણ જેણે સારી રીતે સમજી લીધું છે, (પરિજિયં) આનુપૂર્વીં અને અનાનુપૂર્વીં
પૂર્વક જેણે તેને બધી તરફથી અને બધા પ્રકારે પરાવર્તિત કરી લીધું છે, (નામસમં)
પોતાના નામની જેમ જે તેને કદી પણ પોતાના સ્મૃતિપટમાંથી દૂર કરતો નથી.
(ઘોષસમં) જે રીતે શુદ્ધ મહારાજે ઉદાત્ત આદિ ઘોષસ્વરોનું ઉચ્ચારણ કર્યું હોય,
એજ પ્રકારે તેના ઘોષાદિ સ્વરોનું જે સુંદર રીતે ઉચ્ચારણ કરતો હોય, (અહીળવચ્ચરં)
એક પણ અક્ષરની હીનતા ન રહે એવી રીતે જેણે તેનું અધ્યયન કર્યું છે,
(અળચ્ચક્ષરં) બોલતી વખતે-પાઠ કરતા વખતે જે પોતાના તરફથી એક પણ અક્ષર
તેમાં ઉમેરીને બોલતો નથી-એટલે કે તેમાં જે પ્રમાણે લખ્યું હોય એ પ્રમાણે જ
તેનું ઉચ્ચારણ કરે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા—મુ. ૧૪ દ્રવ્યાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૯૧

રહિતમ્, અક્ષરવ્યતિક્રમરહિતમિત્યર્થઃ, અસ્ખલિતમ્—શાસ્ત્રપાઠસમયે મધ્યે મધ્યે વિરમ્ય વિરમ્ય તદુચ્ચારણમ્ તત્સ્ખલિતરૂપોચ્ચારણદોષસ્તેન રહિતમિત્યર્થઃ । અમિલિતં=મિલિતદોષરહિતમ્, તત્ શાસ્ત્રાન્તરસ્વર્તિભિઃ પદૈરમિશ્રિતં, યથા—સામાયિક-સૂત્રે દશવૈકાલિકોત્તરાધ્યયનાદિપદાનિ ન ક્ષિપતિ । અથવા—પરાત્તમાનસ્ય યત્ર પદાદિ વિચ્છેદો ન પ્રતીયતે તન્મિલિતં, ન તથા, અમિલિતમ્ । અવ્યત્યાપ્રેડિતમ્—અકસ્મિન્નેવ શાસ્ત્રેજ્ઞ્યાન્વસ્થાનનિબદ્ધાનિ એવાર્થાનિ સૂત્રાણિ એકત્ર સ્થાને સમાનીય યત્પઠિતં તદ્ અત્યાપ્રેડિતમ્, અથવા—આચારાદ્વાદિસૂત્રમધ્યે સ્વચુદ્ધિ-

ઉસને इस तरह से सीखा है कि जिस से उसके उच्चारण में अक्षरों का व्यतिक्रम नहीं हो सकता हो, (अस्खलितं) पाठ करते समय जो बीच २ में ठहर कर उसका उच्चारण नहीं करता है किन्तु प्रागप्रवाह के समान सावधि जो उसे बोलता चला जाता है, (अमिलितं) शास्त्रान्तरवर्ती पदों का मिलाकर जो उसे नहीं बोलता है—जैसे सामायिक सूत्र में दशवैकालिक, उत्तराध्ययन के सूत्रों को बोलना—यह मिश्रित दोष हैं—इस दोष से रहितकर सामायिक पाठ का बोलना यह अमिश्रित दोष है । अथवा पाठ करते समय जहां पदादिक का विच्छेद प्रतीत नहीं होता है, उसका नाम मिलित है, इसरूप से नहीं बोलना इस का नाम अमिलित है—अर्थात् इस तरह से आवश्यकसूत्र का उच्चारण करता है कि जिसके उच्चारण में पदादिक का विच्छेद अच्छी तरह से लक्षित होता रहता है । (अवच्चांमेलितं) एक ही शास्त्र में अन्य २ स्थानों पर लिखे गये एवार्थक सूत्रों को एक स्थान में लेकर उस शास्त्र का पढ़ना इसका नाम

(अच्चाइद्रस्वरं) જેતું તેણે એવી રીતે અધ્યયન કર્યું છે કે તેના ઉચ્ચારણ વખતે અક્ષરોનો વ્યતિક્રમ થઇ જતો નથી, (અસ્ખલિતં) જેનો પાઠ કરતી વખતે વચ્ચે વચ્ચે અટકીને તેનું ઉચ્ચારણ કરતો નથી પણ પાણીના પ્રવાહની જેમ અસ્ખલિતરૂપે જે તેનું ઉચ્ચારણ કર્યું જાય છે, (અમીલિતં) અન્ય શાસ્ત્રવર્તીપદોને તેની સાથે સેળસેળ કરીને જે તેનું ઉચ્ચારણ કરતો નથી—જેમકે સામાયિક સૂત્રમાં દશવૈકાલિક કે ઉત્તરાધ્યયનનાં સૂત્રોનું ઉચ્ચારણ કરવું તેનું નામ મિશ્રિત દોષ છે, આ દોષો ન થાય એવી રીતે સામાયિક પાઠનું ઉચ્ચારણ થવું જોઈએ. અથવા પાઠ કરતી વખતે જ્યાં પદાદિનો વિચ્છેદ થતો નથી, તેનું નામ મિલિત છે અને તે ઓકરે ઉચ્ચારણ ન કરવું તેનું નામ અમિલિત છે. એટલે કે તે આવશ્યકસૂત્રના પાઠનું એવી રીતે ઉચ્ચારણ કરે છે કે જેના ઉચ્ચારણમાં પદાદિનો વિચ્છેદ સારી રીતે લક્ષિત થતો રહે છે, (અવ્ચ્ચાંમેલિતં) એક જ શાસ્ત્રમાં જુદા જુદા સ્થાનો પર લખાયામાં આવેલા એકાર્થક સૂત્રોને એક જ સ્થાનમાં લઈને તે શાસ્ત્રનો પાઠ કરવો

કલ્પિતાનિ તત્સદ્શાનિ સૂત્રાણિ કૃત્વા પ્રશ્નિષ્ય પઠિતં વ્યત્યાગ્રેહિતમ્ । યદ્વા
અસ્થાનવિરતિકં વ્યત્યાગ્રેહિતમ્, ન તથા, અવ્યત્યાગ્રેહિતદોષરહિતમિત્યર્થઃ ।
પરિપૂર્ણમ્-સૂત્રતો વિન્દુમાત્રાદિભિરનનમ્, અર્થતોઽધ્યાહારાકાઙ્ક્ષાદિરહિતં ચ ।
પરિપૂર્ણઘોષમ્ ઉદાત્તાદિઘોષયુક્તમ્ નનુ 'ઘોષસમમ્' इत्युक्त्वा पुनःपरिपूर्णघोषमिति
કથનં પુનરુક્તિદોષપ્રસૂતમ્, इति चेदुच्यते, ઘોષસમમ્' इति शिक्षाकालमाश्रित्यो-
ક્તમ્, 'परिपूर्णघोषम्' इति तु परावर्तनाकालमाश्रित्योक्तम्, अतो नास्ति पुनरु-

વ્યત્યાગ્રેહિત હૈ અથવા અચારાંગ આદિ સૂત્ર કે વીચ મેં અપની બુદ્ધિ સે
વનાકર ઉસકે જૈસે સૂત્રોં કો પ્રશ્નિષ્ કરકે પઢના હસકા નામ મી વ્યત્યા-
ગ્રેહિત હૈ, અથવા બોલતે સમય જહાં વિરામ લેના ચાહિયે વહાં વિરામ નહી
લેના ઓર નહીં લેના ચાહિયે વહાં વિરામ લેના હસકા નામ મી વ્યત્યાગ્રેહિત
હૈ । હસ પ્રકાર કા વ્યત્યાગ્રેહિત દોષ જિસકે દ્વારા ઉસ આવશ્યક શાસ્ત્ર કે
અધ્યયન કરને મેં નહીં લગા ગયા. હૈ અર્થાત્ હસ દોષ કો વર્જિત કરકે જિસને
આવશ્યકશાસ્ત્ર કો સીખા હૈ, (પઢિપુણ્ણ) સૂત્ર કી અપેક્ષા વિન્દુ માત્ર આદિ સે
અન્યૂન એવં અર્થ કી અપેક્ષા અધ્યાહાર એવં આઙ્ક્ષા આદિ સે રહિનરૂપ સે
ઉસ આવશ્યકશાસ્ત્ર કા જિસને મલી પ્રકાર સે જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ-
(પઢિપુણ્ણઘોસં) ઉદાત્ત અનુદ્યત્તસ્વરિસ ઘોષોં કા યથાસ્થાન જ્ઞાન પ્રાપ્તકર જિસને
ઉસ શાસ્ત્ર કા અચ્છી રીતિ સે પરાવર્તન નિયા હૈ । "ઘોષસમં ઓર પરિપૂર્ણઘોષં" હન
દોનોં વિશેષણોં મેં પુનરુક્તિદોષરૂપ લિયે નહી માનના ચાહિયે કિ પહિલા વિશેષણ-
શિક્ષા કાલ કો આશ્રિત કરકે કહા ગયા હૈ ઓર ધર દૂસરા વિશેષણ પરાવર્તન

તેનું નામ "વ્યત્યાગ્રેહિત છે. અથવા આચારાંગ આદિ સૂત્રનો પાઠ કરતી વખતે
વચ્ચે વચ્ચે પોતાની બુદ્ધિથી શ્લેષાં તેના જેવાં જ સૂત્રોનું ઉચ્ચારણ કરવું તેનું
નામ પણ વ્યત્યાગ્રેહિત છે અથવા બોલતી વખતે જ્યાં વિરામ લેવો અને વિરામ
ન લેવાનો હોય ત્યાં વિરામ લેવો તેનું નામ પણ વ્યત્યાગ્રેહિત છે. આ પ્રકારનાં
વ્યત્યાગ્રેહિત દોષનું જેના દ્વારા તે આવશ્યક શાસ્ત્રનું અધ્યયન કરતી વખતે સેવન
કરાયું નથી, એટલે કે આ દોષના ત્યાગપૂર્વક જેણે આવશ્યકશાસ્ત્ર અધ્યયન કર્યું છે.
(પઢિપુણ્ણ) સૂત્રની અપેક્ષાએ બિન્દુ, માત્ર આદિથી અન્યૂન અને અર્થની અપેક્ષાએ
અધ્યાહાર અને આઙ્ક્ષા આદિથી રહિતરૂપે તે આવશ્યકશાસ્ત્રનું જેણે સારી રીતે
જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લીધું છે.

(પઢિપુણ્ણઘોસં) ઉદાત્ત આદિ ઘોષોનું યથાસ્થાન જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને જેણે
તે શાસ્ત્રનું સારી રીતે પરાવર્તન કર્યું છે, 'ઘોષસમં' અને "પઢિપુણ્ણઘોસં" આ બન્ને
વિશેષણોમાં પુનરુક્તિ દોષ એ કારણે માનવો જોઇએ નહીં કે પહેલું વિશેષણ
શિક્ષા કાળને આશ્રિત કરીને વપરાયું છે અને બીજું વિશેષણ પરાવર્તન કાળને

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० १४ द्रव्यावश्यकस्वरूपनिरूपणम्

९३

क्तिदोषः । कण्ठोष्ठविप्रमुक्तम्—कण्ठश्च-ओष्ठंच-कण्ठोष्ठम्—तेन विप्रमुक्तम्—सुस्पष्ट-
मित्यर्थः न तु बालमूकादिभाषितवदस्पष्टम् । तथा—गुरुवाचनोपगतं—गुरोः सका-
शादधिगता या वाचना,=सूत्रस्यार्थस्य च ग्रहणं तथा उपगतं प्राप्तम्, तदेवं यस्य
साधोरावश्यकपदं शिक्षितादिगुणोपेतमधिगतं भवति, स खलु साधुः तत्र=
आवश्यकपदे वाचनया-शिष्याध्यापनरूपया प्रच्छनया-प्रच्छना-पूर्वाधीतसूत्रादौ
संशये सति गुरुसमीपे प्रच्छनम्, यद्वा—प्रच्छना-विशोधितस्य सूत्रस्य माभूद् विस्मरण-
मिति गुरोः प्रश्नरूपा, तथा, परिवर्तनया=अधीतस्य सूत्रादेः पुनः पुनरावृत्ति करणं
गुणनं परिवर्तना, तथा, धर्मकथना=दुर्गतौ प्रपतन्तं सच्चसंघातं सुगतौ धारय-
(पुनरावर्तन) कालको आश्रित करके कहा गया है। (कण्ठोष्ठविप्रमुक्तं) बाल आदि के
भाषित की तरह जिस का उसशास्त्र का अस्पष्ट उच्चारण नहीं है—किन्तु बिलकुल स्पष्ट स्वर
से जो उसका उच्चारण करता है, तथा (गुरुवायणोवगम्यं) गुरुके पास रहकर जिसने
इस आवश्यकशास्त्र की वाचना पाई है—सूत्र और अर्थ का अध्ययन किया है—जिस
से उसे उस—आवश्यक शास्त्र का ज्ञान प्राप्त हुआ है—इस तरह इन पूर्वोक्त श्रुत-
गुणरूपविशेषों के अनुसार जिस साधुने आवश्यकशास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर-
लिया है—अतः (से) वह साधु (तत्थ) उस आवश्यकशास्त्र में (वायणाए पुच्छ-
णाए परियट्टणाए धम्मकहाए) शिष्य अध्ययनरूप वाचना से, पूर्वाधीत सूत्रादि
में संशय होने पर गुरु के समीप पूछनेरूप अथवा विशोधित सूत्र का विस्म-
रण न हो जावे इस ख्याल से गुरु से प्रश्नकरनेरूप प्रच्छना से, अधीत पदा हुआ
सूत्रादिक कि पुनः पुनः आवृत्ति करनेरूप परिवर्तना से और दुर्गति में पड़ते

आश्रित करीने वपरायुं छे. (कण्ठोष्ठविप्रमुक्तं) बालक अथवा भूंगा माणुसना
जेवुं अस्पष्ट उच्चारणु जे करतो नथी—परन्तु बिलकुल स्पष्ट स्वरर्थी जे तेनु उच्चारणु
करे छे, (गुरुवायणोवगम्यं) श्रुती पास रहनी जेछे आ आवश्यक शास्त्रनी वाचना
करी छे—अटवे के श्रुती समक्ष जेछे सूत्र अने अर्थनु अध्ययन कयुं छे अने
आ रीते जेने आवश्यक सूत्रनु ज्ञान प्राप्त थयुं छे, आ रीते पूर्वोक्त श्रुत श्रुत
इय विशेषज्ञान अनुसार जे साधुमे आवश्यकशास्त्रनु ज्ञान प्राप्त करी लीधुं छे, अने
तेथी (से) ते साधु (तत्थ) ते आवश्यकशास्त्रमां (वायणाए पुच्छणाए परियट्टणाए
धम्मकहाए) शिष्य अध्ययनइय वाचन वडे पूर्वाधीत (पछेला जेनु अध्ययन करवांमां
आव्युं छे तेने पूर्वाधीत कहे छे) सूत्रादिमां संशय थाय त्थारे श्रुते ते विवे प्रश्न
करवाइय पृच्छावडे अथवा विशोधित सूत्रनु विस्मरणु न थयुं जाय ते आलसी
श्रुते प्रश्न करवाइय पृच्छना वडे अधीत सूत्रनो इरी इरीने पाठ करवाइय परिवर्तना
वडे अने दुर्गतिमां पडतां छे जेने सुगतिमां धारय करानार धर्मकथावडे—अटवे

તીનિ ધર્મઃ તસ્ય કથનં ધર્મકથા અહિંસાદિ ધર્મપ્રરૂપણરૂપા, તયા, વર્તમાનોઽસ્તીતિ આગમનો દ્રવ્યાવશ્યકમુચ્યતે । નનુ વાચનાદિભિઃતત્રાવશ્યનશાસ્ત્રે વર્તમાનઃ સાધુઃ કથમાગમનો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતીતિ શિષ્યશક્ત્વાં નિરાકર્તુમાહ—‘નો અણુપ્પેહાણ’ નો અનુપ્રેક્ષયા—વાચનાદિભિસ્તત્ર વર્તમાનોઽપિ શાસ્ત્રાર્થાનુચિન્તનરૂપયાઽનુપ્રેક્ષયા નો વર્તમાનો ભવતિ અનુપ્રેક્ષયા યુક્તો ન ભવતીત્યર્થઃ, અતઃ સ આગમનો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતિ । અનુપ્રેક્ષયાચાઽવર્તમાનઃ કથમાગમનો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતીતિ સ્વયમાહ સૂત્રકારઃ—‘કમ્હા’ ઇત્યાદિના । કસ્માત્ આગમનો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતિ ? ઉત્તરયતિ—‘અણુવઓગો દવ્વ મિતિ વઠ્ઠુ’ અનુપયોગો દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા—ઉપયુજ્યતે—વસ્તુપરિચ્છેદં કરોતિ જીવોઽનેનેત્યુપયોગઃ । કરણે ઘણ્ પ્રત્યયઃ । ઉપયોગઃ=

હું જીવોં કો સુગતિ મેં ધારણ કરાને વાલે (પહોંચાને વાલે) ધર્મ કી કથા સે—અર્થાત્ અહિંસાદિ ધર્મ કી પ્રરૂપણા સે—વર્તમાન હૈ—ઇસ તરહ આગમ કી અપેક્ષા હ સાધુ દ્રવ્યાવશ્યક કહા ગયા હૈ । યહાં એસી આશંકા નહીં કરની चाहिये, कि वाचनादिरूप क्रियाओं से उस आवश्यक शास्त्र में वर्तमान वह साधु आगम की अपेक्षा द्रव्यावश्यक कैसे है क्योंकि (नो अणुप्पेहाण) इस पद से सूत्रकार ने इस शंका का समाधान किया है—वे कहते हैं कि वाचनादिरूप क्रियाओं से आवश्यक शास्त्र में वर्तमान रहा हुआ भी वह साधु शास्त्र के अर्थ का अनुचिन्तन करने रूप अनुप्रेक्षा चिन्तन से उसमें वर्तमान नहीं है । इसलिये वह आगम से द्रव्यावश्यक है । (कम्हा अणुपयोगो दवमिति) क्योंकि “अनुपयोगो द्रव्यं” ऐसा शास्त्र का वचन है । इस का तात्पर्य यह है कि—जीव जिस के द्वारा वस्तु का परिच्छेद करता है उस का नाम उपयोग है । उप उपसर्ग पूर्वक युज्

કે અહિંસાદિ ધર્મની પ્રરૂપણાવડે વર્તમાન (વિદ્યમાન) છે. આ રીતે આગમની અપેક્ષાએ તે સાધુને દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવ્યો છે.

અહીં એવી શંકા ન કરવી જોઈએ કે વાચનાદિ ક્રિયાઓ વડે તે આવશ્યક સૂત્રમાં વર્તમાન તે સાધુ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યક કેવી રીતે સંભવી શકે છે ? સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ દ્વારા તે શંકાનું સમાધાન કર્યું છે—

(નો અણુપ્પેહાણ) વાચનાદિરૂપ ક્રિયાઓ વડે આવશ્યક શાસ્ત્રમાં વર્તમાન રહેલો એવો તે સાધુ શાસ્ત્રના અર્થનું અનુચિન્તન કરવારૂપ અનુપ્રેક્ષાની અપેક્ષાએ તેમાં વર્તમાન હોતો નથી તે કારણે તે આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યક છે. (કમ્હા અણુપયોગો દવમિતિ) અર્થે કે શાસ્ત્રનું એવું વચન છે કે “અનુપયોગો દ્રવ્યં” આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

જીવ એના દ્વારા વસ્તુનો પરિચ્છેદ કરે છે (વસ્તુનું જ્ઞાન મેળવે છે) તેણે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૧૪ દ્રવ્યાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૧૫

જીવસ્ય બોધરૂપો વ્યાપારઃ । ન વિદ્યતે ઉપયોગો દ્વાસૌ-અનુપયોગઃ । ઇતિ
કૃત્વા-અસ્માત્ કારણાત્ સ સાધુરાગમતો દ્રવ્યાવશ્યકં મતિઃ । યસ્ય વસ્યચિત્
સાધોગવશ્યકશાસ્ત્રં શિક્ષિતં સ્થિતં જિતં યાવદ્ વાચનોપગતં ભવતિ, સ ત્વત્
સાધુસ્તત્રાવશ્યકશાસ્ત્રે વાચના-પ્રચ્છના-પરિવર્તના ધર્મકથાભિર્વર્તમાનોઽપિ આશ્યકો-
પયોગરહિત્વાદાગમતો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતીતિ સ્મૃદિતર્થઃ । અત્રેદ વોધ્યમ્-
વાચના પ્રચ્છનાદય ઉપયોગપૂર્વકા અનુપયોગપૂર્વકાશ્ચ ભવન્તિ । પરમિહ દ્રવ્યા-
વશ્યકપ્રસ્તાવાદાનુપયોગપૂર્વકા વાચનાપ્રચ્છનાદયો વોદ્યતાઃ । અનુપયોગસ્તુ ભાવ-

ધાતુ સે કરણ મેં ધજ્ પ્રત્યય કરને સે ઉપયોગ શ્વદ નિષ્પન્ન હુઆ હૈ । જીવ
કે બોધરૂપ વ્યાપાર કા નામ ઉપયોગ હૈ । યહ ઉપયોગ જહાં પર નહીં હૈ
ઉસ કા નામ અનુપયોગ હૈ । ઇસ અનુપયોગ સે ઉસ આવશ્યકશાસ્ત્ર મેં યુક્ત
હોને કે કારણ વહ આવશ્યક શાસ્ત્ર કા જ્ઞાતા આગમ સે દ્રવ્યાવશ્યક માના
જાતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જિસ સાધુને આવશ્યક શાસ્ત્ર કો
અઠ્ઠી તરહ સે જાન લિયા હૈ. સીંચ લિયા હૈ-ઉસકા વહ પૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાતા
હો ચુકા હૈ-અતઃ વહ સાધુ ઉસ આવશ્યકશાસ્ત્ર મેં વાચના પૃચ્છના, પરિવર્તના
અંધ ધર્મકથા કે રૂપ સે વર્તમાન માન લિયા જાતા હૈ-ફિર મી આવશ્યક
કે ઉપયોગ સે રહિત હોને કે કારણ વહ આગમ સે દ્રવ્યાવશ્યક કહલાતા હૈ ।
ઉસે યો સમજના ચાહિયે કિ વાચના પૃચ્છના આદિ ઉપયોગપૂર્વક મી હોતે હૈ
ઔર અનુપયોગપૂર્વક મી । પરન્તુ યહાં દ્રવ્યાવશ્યક કા પ્રકરણ હોને સે વે

નામ 'ઉપયોગ' છ. 'યુજ્' ધાતુને ઉપ ઉપસર્ગપૂર્વક કરણ અર્થ ધજ્ પ્રત્યય લગા-
ડવાથી ઉપયોગ શબ્દ બને છે. જીવના બોધરૂપ વ્યાપારનું નામ ઉપયોગ છે. તે
ઉપયોગનો ન્યાં સદ્ભાવ નથી તેને અનુપયોગ કહે છે. તે અનુપયોગપૂર્વક તે આવ-
શ્યકશાસ્ત્રમાં યુક્ત હોવાને કારણે તે આવશ્યકશાસ્ત્રના જ્ઞાતાને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ
આવશ્યક (દ્રવ્યાવશ્યક) માનવામાં આવે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે જે
સાધુએ આવશ્યક શાસ્ત્રને સારી રીતે બાણી લીધું છે-સારી રીતે તેનું અધ્યયન કરી
લીધું છે. તેનો પૂર્ણરૂપે બાણીકાર થઈ ગયો છે, એવા સાધુને તે આવશ્યકશાસ્ત્રમાં
વાચના, પૃચ્છના, પરિવર્તના અને ધર્મકથા રૂપે વર્તમાન માની લેવામાં આવે છે,
છતાં પણ આવશ્યકના ઉપયોગથી રહિત હોવાને કારણે તેને આગમની અપેક્ષાએ
દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવે છે. આ વાતનો વધુ ખુલાસો આ પ્રમાણે સમજવો-
વાચના, પૃચ્છના, આદિ ઉપયોગપૂર્વક પણ થાય છે અને અનુયોગપૂર્વક પણ થાય
છે પરન્તુ અહીં દ્રવ્યાવશ્યકનું પ્રકરણ ચાલતું હોવાથી તેમને અનુપયોગપૂર્વક જ

શૂન્યતા, તત્ત્વશૂન્યં ચ વસ્તુ દ્રવ્યમેવ વર્તતીતિ વાચનાદિમિતત્ર વર્તમાનોऽપિ સાધુ દ્રવ્યાવશ્યકમ્ । અનુપ્રેક્ષા તૂપયોગપૂર્વિકૈવ સંભવતિ, ઉત્તરત્ર વર્તમાનો દ્રવ્યાવશ્યકં ન ભવતિ ।

નનુ આગમમાશ્રિત્ય દ્રવ્યાવશ્યકમિત્યાગમરૂપમિદં દ્રવ્યાવશ્યકમિત્યુક્તં ભવતિ, એતચ્ચ યુક્તં ન પ્રતિભાતિ, યત્ આગમો જ્ઞાનં, જ્ઞાનં ચ ભાવ એવેતિ કથમસ્ય દ્રવ્યસ્વમુપપચ્ચતે ? ઇતિચેત્ ઉચ્યતે—આગમસ્ય કારણમાત્મા, તદધિષ્ઠિતો દેહઃ, શબ્દશ્રોણયોગશૂન્યસૂત્રોચ્ચારણરૂપ ઇહાસ્તિ, ન તુ સાક્ષાદાગમઃ । એતચ્ચ ત્રિતયમાગમ કારણત્વાત્ કારણે કાર્યોપચારાદાગમ ઉચ્યતે, કારણં ચ વિવક્ષિત ભાવસ્ય દ્રવ્યમેવ ભવતીત્યદોષઃ ।

અનુપયોગપૂર્વક ગૃહીત કિયે ગયે હૈં । ભાવશૂન્યતા કા નામ અનુપયોગ હૈ । ઉપયોગ સે શૂન્ય દ્રવ્ય હી હોતા હૈ । ઇસલિયે વહ આવશ્યકશાસ્ત્ર કા જ્ઞાતા સાધુ ઉસમેં વાચનાદિક સે વર્તમાન હોતા હુઆ મી ઉપયોગ સે શૂન્ય હોને કે કારણ દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । અનુપ્રેક્ષા જો હોતી હૈ વહ ઉપયોગપૂર્વક હી હંતી હૈ ઇસલિયે ઉસમેં વર્તમાન સાધુ દ્રવ્યાવશ્યક નહીં હૈ વહ તો ભાવાવશ્યક હૈ ।—
શંકા—જબ આપ આગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યાવશ્યક કી પ્રરૂપણા કરતે હો તો વહ દ્રવ્યાવશ્યક આગમરૂપ વહા ગયા હૈ માનને મેં આતા હૈ । પરંતુ યહ વાત યુક્ત પ્રતીત નહીં હોતી હૈ કયોંકિ આગમ જો હોતા હૈ વહ તો જ્ઞાનરૂપ હોતા હૈ । ઓર જ્ઞાન ભાવરૂપ હોતા હૈ । અતઃ આગમ મેં દ્રવ્યતા કેસે વન સકતી હૈ ?

ઉત્તર—આગમ કે કારણ આત્મા, આત્માવિષ્ઠિત દેહ, ઓર ઉપયોગશૂન્ય સૂત્ર કા ઉચ્ચારણરૂપ શબ્દ યે ત્રીન માને ગયે હૈં । સાક્ષાત્ આગમ નહીં । યે ત્રીન આગમ કે કારણ હોને સે કારણ મેં આગમરૂપ કાર્ય કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । ઇસલિયે ઇન્હેં આગમરૂપ સે વહા હૈ । વિવક્ષિત ભાવ કા જો કારણ

ગૃહીત કરવામાં આવેલ છે. ભાવશૂન્યતાનું નામ અનુપયોગ છે. દ્રવ્ય જ ઉપયોગથી રહિત હોય છે. તેથી તે આવશ્યક શાસ્ત્રને જ્ઞાતા સાધુ તેમાં વાચના આદિરૂપે વર્તમાન હોવા છતાં પણ ઉપયોગથી રહિત હોવાને કારણે દ્રવ્યાવશ્યક જ કહેવાય છે. અનુપ્રેક્ષા તો ઉપયોગપૂર્વક જ થાય છે. તેથી તેમાં (અનુપ્રેક્ષામાં) વર્તમાન સાધુ દ્રવ્યાવશ્યક નથી, પણ ભાવાવશ્યક છે.

શંકા—જ્યારે આપ આગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યાવશ્યકની પ્રરૂપણા કરે છે. ત્યારે એવું લાગે છે કે દ્રવ્યાવશ્યકને આગમરૂપ કહેવાયાં આનું છે, એવું આપ પ્રતિપાદન કરી રહ્યા છે. પરંતુ એ વાત યુક્ત લાગતી નથી કારણ કે આગમ

अनुयोगचन्द्रिका टीका. १४ द्रव्यावश्यकस्वरूपनिरूपणम्

९७

ननु—आगमतोऽनुपयुक्तो द्रव्यावश्यकम्, इत्येतावतैवेष्टसिद्धेः शिक्षितादि-
श्रुतगुणाभिधानं व्यर्थमिति चेत्, उच्यते—शिक्षितादिश्रुतगुणाभिधानेन सूत्रकार इदं
सूचयति—एवंविधं निर्दोषमपि श्रुतमुच्चारयतोऽनुपयुक्तस्य द्रव्यश्रुतं द्रव्यावश्यक-
मेव भवति, किं पुनः सदोषम् । उपयुक्तस्य स्वलितादिदोषदुष्टमुच्चारयतोऽपि

होता है वह द्रव्य ही होता है । इसलिये आ.वश्यक में उपयोगरहित आत्मा
का आगम से द्रव्यावश्यक कहना निर्दोष है ।

शंका—ठीक है— आवश्यक में अनुपयुक्त आत्मा को आप आगम की
अपेक्षा द्रव्यावश्यक कहिये—इसमें कोई विरोध नहीं है—परन्तु सूत्रकार ने
जो शिक्षितादि श्रुतगुणों का वर्णन किया है सो उनके बहने की क्या
आवश्यकता थी ? वह श्रुतगुण कथन तो व्यर्थ है । क्यों कि इस श्रुतगुण
कथन से आगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यावश्यक की सिद्धि में कोई संगति
प्रतीत नहीं होती ? सो इस प्रकार का आक्षेप भी संगत प्रतीत नहीं होता—
कारण सूत्रकार इस श्रुतगुणवर्णन से यह सूचित करते हैं कि इस प्रकार निर्दोष भी
शास्त्र का उच्चारण करने वाले साधुका कि जो उस में अनुपयुक्त (विना उपयोग के)

तो ज्ञानरूप होय छे अने ज्ञान लावइय होय छे. तेथी आगममां द्रव्यता डेवी
रीते धटावी शकय छे ?

उत्तर—आगमना आ त्रणु कारणो मानवामां आ०यां छे—(१) आत्मा, (२)
आत्माधिष्ठित देह अने (३) उपयोग रहित सूत्रना उच्चारणरूप शब्द—साक्षात्
आगम नहीं. आगमना आ त्रणु कारणो. होवाथी कारणुमां आगमरूप कार्यनो
उपचार करवामां आ०ये छे. ते कारणु तेमने आगमरूप छेवामां आवेल छे. विव-
क्षित लावतुं के कारणु होय छे ते द्रव्य न होय छे. तेथी आवश्यकमां उपयोग
रहित आत्माने आगमनी अपेक्षाये द्रव्यावश्यक छेवेओ ओमां कोछ होय नथी, ओ
तो निर्दोष कथन न गणु शकय.

शंका—आवश्यकमां अनुपयुक्त आत्माने आप आगमनी अपेक्षाये लवे
द्रव्यावश्यक छेओ, ओमां अमने कंछ वांधो नथी; परन्तु सूत्रकारे के शिक्षित आदि
श्रुतगुणोतुं वर्णन कयुं छे. ते वर्णन करवानी अडिं शी आवश्यकता छती ? ते
श्रुतगुणकथन तो व्यर्थ न लागे छे, कारणु के आ श्रुतगुण कथन वडे आगमनी
अपेक्षाये द्रव्यावश्यकनी सिद्धिमां कोछ संगति देजती नथी.

उत्तर—आ प्रकारनो आक्षेप पणु संगत लागतो नथी, कारणु के सूत्रकार आ
श्रुतगुण वर्णन वडे ओ सूचित करवा भागे छे के—आ प्रकारे निर्दोषरूपे पणु शास्त्रं
उच्चारण करनारो साधु के के तेमां अनुपयुक्त न रहेओ छे, तेतुं ते द्रव्य त

ભાવશ્રુતમેવ ભવતિ । एवं प्रत्युपेक्षादि क्रिया निर्दोषा अपि अनुपयुक्तस्य न तथाविधफलदायिन्यो भवन्ति । उपयुक्तस्य तु मतिर्विकल्पादिनः सदोषा अपि प्रत्युपेक्षादि क्रियाः कर्ममलापनयनाय समर्था भवन्तीति ।

નનુ ભવત્વનુપયુક્તો દ્રવ્યાવશ્યકમ્, કિન્તુ હીનાક્ષરંસૂત્રં સમુચારિતે કો દોષઃ ? કથમુક્તમહીનાક્ષર ? મિતિ, ઉચ્યતે—લૌકિકવિદ્યામંત્રા અપિ અક્ષરહીનાઃ સમુચાર્યમાનાસ્તત્કલં દાતુમશ્નમર્થા અનર્થવિહાશ્ચ ભવન્તિ, કિં તર્હિ પરમમંત્રરૂપે

હો રહા હૈ—વહ દ્રવ્યશ્રુત દ્રવ્યાવશ્યક હી હૈ । તો ફિર સદોષ શાસ્ત્ર કો ઉચ્ચારણ કરને વાલે કી તો વાત હી ક્યા હૈ ? જો એસ શાસ્ત્ર મેં ઉપયોગ યુક્ત હૈ એસા પ્રાણી યદિ સ્વલિત આદિ દોષ સે મી દૂષિત શાસ્ત્ર કા ઉચ્ચારણ કરતા હૈ તો ઉસકા વહ દ્રવ્ય ત ભાવશ્રુત હી હૈ । ઈસી તરહ અનુપયુક્ત સાધુ રૂપ પ્રાણી કી પ્રત્યુપેક્ષાદિ ક્રિયા નિર્દોષ મી હૈ તો મી વે તથાવિધ ફલ કી પ્રદાતા નહીં હોતી હૈ । પરન્તુ જો સાધુ એ પ્રત્યુપેક્ષાદિ-પડિલેહના ક્રિયાઓં કો એમં ઉપયુક્ત બન કર કરતા હૈ ઓર યદિ વે મતિ વિકલતા આદિ કે વશ સે સદોષ મી કર્મમલકો દૂર કરને કે લિયે સમર્થ હોતી હૈ ।

શંકા—અનુપયુક્ત સાધુ દ્રવ્યાવશ્યક મલે હો પરન્તુ હીનાક્ષરરૂપ સે સૂત્ર કે ઉચ્ચારિત હોને પર ક્યા દોષ હૈ કિં જિસ સે “અહીંજવચ્ચર” યહ શ્રુત કા કથિત ગુણરૂપ સ્વરૂપ વિશેષણ સફલ માના જા સકે ?

ઉત્તર—લૌકિક વિદ્યા, મંત્ર, મી જવ અક્ષર ન્યૂન બોલે જાતે હૈ તો વે અપને વાસ્તવિક ફલ કો દેને મેં અસમર્થ હો જાતે હૈ ઓર અનર્થકારક બન જાતે હૈ તવ ફિર પરમમંત્ર રૂપ સૂત્ર કે વિષય મેં ક્યા કહના । હીનાક્ષર સૂત્ર કે

દ્રવ્યાવશ્યક જ છે, તો સદોષ શાસ્ત્રનું ઉચ્ચારણ કરનારની તો વાત જ થી કરવી । જે તે શાસ્ત્રમાં ઉપયોગયુક્ત છે એવો સાધુ પણ જે સ્વલિત આદિ દોષથી દૂષિત થયેલા શાસ્ત્રનું ઉચ્ચારણ કરે છે, તો તેનું તે દ્રવ્યશ્રુત ભાવશ્રુત જ છે. એજ પ્રમાણે અનુપયુક્ત સાધુજી જીવની પ્રત્યુપેક્ષાદિ ક્રિયા નિર્દોષ હોય તો પણ તથાવિધ (તે પ્રકારના) ફલની પ્રદાતા સંભવી શકતી નથી. પરન્તુ જે સાધુ તે પ્રત્યુપેક્ષાદિ ક્રિયા-ઓને તેમાં ઉપયુક્ત બનાવે છે, એવો સાધુ કદાચ મતિ વિકલતા આદિને કારણે સદોષ હોય તો પણ તેની તે ક્રિયાઓ કર્મમળને દૂર કરવાને સમર્થ જ હોય છે.

શંકા—અનુપયુક્ત સાધુને દ્રવ્યાવશ્યક માની લઈએ, પરન્તુ હીનાક્ષરરૂપે સૂત્રનું ઉચ્ચારણ કરવામાં એવો તો કયો દોષ છે કે જેથી “અહીંજવચ્ચર” આ શ્રુતના કથિત ગુણરૂપ વિશેષણને સફળ બાની શકાય ?

ઉત્તર—લૌકિક વિદ્યારૂપ મંત્રનું ઉચ્ચારણ કરવામાં પણ જે એકાદ અક્ષરને ઉડાડી દેવામાં આવે છે, તો તે મંત્ર પણ વાસ્તવિક રૂપ આપવાને અસમર્થ

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० १४ द्रव्यावश्यकस्वरूपनिरूपणम्

९९

सूत्रे वक्तव्यम् ? हीनाक्षरे सूत्रे उच्चारिते तत्कलारमकल्याणरूपमोक्षान्वाप्तिरनन्तसंसारवाप्तश्च भवतीति सुभीभिर्विभावम् ।

अत्रायं दृष्टान्तः—एकदा राजगृहनगरोद्याने समस्मृतस्य भगवतो महावीरस्य चरणौ वन्दितुं देवासुरविद्याधरनरसमुदायः समागतः । स्वपुत्रेणाभयकुमारेण सह राजा श्रेणिकोऽपि समागतः । भगवता परिषदि धर्मदेशना दत्ता । धर्मदेशनान्तरं सर्वेऽपि भगवन्तमभिवन्द्य स्वस्वस्थानं गताः । सपुत्रः श्रेणिको भगवन्तं पर्युपासीनः । भगवत्समीप एव स्थितः । अस्मिन् समये कश्चिद् विद्याधरो विस्मृतविद्वैकाक्षरो नभसा गन्तुमुत्पतितः, किञ्चिद् गत्वा

उच्चरित होने पर उसका फल जो परम कल्याणरूप मोक्ष की प्राप्ति होना वह नहीं होती है और अनन्त संसार की प्राप्तिरूप अनर्थ प्रगट होते हैं, इस विषय में यह दृष्टांत हैं—एक समय राजगृह नगर के उद्यान में भगवान् महावीर वा समवसरण हुआ ।

प्रभु को वंदना करने के लिये देव, असुर, विद्याधर एवं मनुष्य इन सबका समुदाय आ पहुंचा । अपने पुत्र अभयकुमार के साथ राजा श्रेणिक भी आये । भगवान् ने परिषदा में धर्म की देशना दी । देशना सुनकर सब भगवान् को वंदना करके अपने २ स्थान पर चले गये । पर राजा श्रेणिक नहीं गये । सपुत्र वे भगवान् की पर्युपासना में लवलीन हो कर भगवान् के समीप में ही बैठ गये । इतने में कोई एक विद्याधर जिसको अपनी विद्या का एक अक्षर विस्मृत हो गया था । आकाशमार्ग से जाने के लिये उड़ा । वह

जानी नाथ छि करने अनर्थकांक्षक पणु जनी शके छि, तो पछी परम भंत्ररूप सूत्रनी तो बात न शी करवी ? हीनाक्षर सूत्रना उच्चारणुने दीधि परम कल्याणकारक मोक्ष रूप इजानी प्राप्ति पणु थती नथी अेलुं न नही पणु अनंत संसारनी प्राप्तिरूप अनर्थ पणु प्रगट थाय छि आ विषयने अनुलक्षीने नीयेतुं दृष्टांत आपवाभां आयुं छे.

कौछ अेक समये राजगृह नगरना उद्यानभां महावीर प्रभुतुं समवसरणु थयुं प्रभुने वंदणु करवा निमित्ते देव, असुर, विद्याधर अने मनुष्यने समुदाय आवी पडोअ्यो. पोताना पुत्र अलखकुमारने साथे लघने महाराज श्रेणिक पणु आवी पडोअ्या भगवाने त्यां अेकत्र थयेदी परिषदाने धर्मनी देशना दीधी. भगवाननी देशना सांलजानी अने भगवानने वंदणु करीने सो पोतपोताने स्थाने पाछां इर्यां. परन्तु राज श्रेणिक त्यांथी अस्या नही. ते पोताना पुत्रनी साथे भगवाननी पर्युपासनाभां लवलीन थघने त्यां न अेसी रह्यो. हुवे आ वणते नीयेतो जनाव जन्थो. समवसरणु भांथी पाछी इरतो कौछ अेक विद्याधर आकाशमार्गे उडवा भागतो हुतो पणु आकाशभां उडवा भाटे अे भंत्रने उच्चार करवो जेधअे ते भंत्रने अेक अक्षर ते जूदी

નિપતિતઃ, પુનરુત્પતિતો નિપતિતશ્ચ । एवं पुनः पुनरुत्पतन्तं निपनन्तं तं विद्याधरं वीक्ष्य अभयकुमारो भगवन्तं प्रणम्यैवमब्रवीत्—भदन्त । कथमयं महाभागो विद्याधरो विच्छिन्नपक्षः पक्षीव पुनः पुनर्नभसि उत्पतति निपतति च ? ततो भगवता प्रोक्तम्—अयं विद्याधरो विस्मृतविद्यैकाक्षरो नभसि गन्तुं प्रयतते, पन्तु सफला न भवति । भगवद्वचनं श्रुत्वा अभयकुमारस्तस्य विद्याधरस्य समीपे समागत्यैवमब्रवीत्—महाभाग ! यदि वं मह्यमपि विद्यासाधनोपायं कथयेस्तदा—त्वद्विस्मृत-विद्यैकाक्षरं तुभ्यं निवेदयामि । विद्याधरेणाभयकुमारवचनं प्रतिपन्नम् । अभय-

कुछ दूर गया. ही था कि नीचे गिर पड़ा । वहाँ से फिर उड़ा और फिर आगे जाकर गिर पड़ा । इस तरह बारबार उड़ते और गिरते हुए उस विद्याधर को अभयकुमारने देख लिया । देखकर उसने भगवान् से नमस्कार कर पूछा—हे भदन्त ! कटे हुए पक्षवाले पक्षी की तरह यह विद्याधर बार २ आकाश में उड़ता है और गिर पड़ता है सो इसका क्या कारण है ? तब भगवान् ने कहा—यह विद्याधर अपनी आकाश गामिनी विद्या का एक अक्षर भूल गया है—अतः उड़ने का प्रयत्न करता हुआ भी यह उसमें सफल नहीं हो पा रहा है । भगवान् के इस प्रकार वचन सुनकर अभयकुमार शीघ्र ही उस विद्याधर के पास गया और बोला—महाभाग ! यदि तुम मुझे विद्या सिखा देंगे तो मैं तुम्हारे लिये विद्या के विस्मृत हुए एक अक्षर को कह दूंगा । अभयकुमार की इस बात को उस विद्याधरने मान लिया—तब अभय-

ગયો હતો. તે આકાશમાં ઉડ્યો તો ખરો પણ થોડે દૂર જઈને નીચે પડી ગયો. વળી ફરીથી ઉડ્યો, પરન્તુ થોડે દૂર જઈને ફરી નીચે પડી ગયો. આ પ્રમાણે વારંવાર ઉડતાં અને પડતાં તે વિદ્યાધરને અભયકુમારે જોયો. તેનું કારણ જાણવાની તેને ઇચ્છા થઈ તેણે મહાવીર પ્રભુને વંદણા નમસ્કાર કરીને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો—“હે ભગવન્ ! તુટેલી પાંખવાળા પક્ષીની જેમ આ વિદ્યાધર વારંવાર આકાશમાં ઉડે છે અને નીચે પડી જાય છે. તેનું કારણ શું હશે ?

ત્યારે મહાવીર પ્રભુએ અભયકુમારને આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો—હે અભયકુમાર ! તે વિદ્યાધર પોતાની આકાશગામિની વિદ્યાનો એક અક્ષર ભૂલી ગયો છે. તે કારણે ઉડવાનો પ્રયત્ન કરવા છતાં પણ તે તેમાં સફળ થતો નથી.

ભગવાનનાં એવાં વચનો સાંભળીને અભયકુમાર તુરત જ તે વિદ્યાધરની પાસે પહોંચી ગયો. તેણે તે વિદ્યાધરને કહ્યું—“હે મહાભાગ ! જો તમે મને વિદ્યા સાધવાનો ઉપાય બતાવો, તો હું તમને આકાશગામિની વિદ્યાના મંત્રનો વિસ્મૃત થઈ ગયેલો એક અક્ષર બતાવી દઉં વિદ્યાધરે અભયકુમારની તે વાતનો સ્વીકાર કર્યો.

अनुयोगचन्द्रिका टीका—वृ. १४ द्रव्यावश्यत्वस्वरूपनिरूपणम्

१०१

कुमारस्य एकस्मादपि पदादनेकपदाभ्यूहनशक्तिरासीत् । स विद्याधरकथितमन्त्रं श्रुत्वा विस्मृतमक्षरं तस्मै निवेदितवान् । स विद्याधरोऽपि तस्मै विधासाधनोपायमकथयत् । ततो विद्याधरो विस्मृतमक्षरमुपलभ्य स्वसमीहितप्रदेशं गतः । अनेन दृष्टान्तेनेदं बोध्यम्—यथा तस्य विद्याधरस्यैकाक्षरविस्मरणेन हीनाक्षरतादोषान्नभोगतिरुपरता, विद्या च व्यर्थतां याता तथैव हीनाक्षरे सूत्रे उच्चारितेऽर्थभेदतद्भेदात् क्रियाभेदः, क्रियाभेदे च मोक्षानवाप्तिः । ततो दीक्षाग्रहणादिकमपि वैयर्थ्यमापद्येतेति । एवमधिकाक्षरादिष्वपि दोषा बोध्याः । विस्तरभिया दृष्टान्ताभिगानाद् विरम्यते । ॥ सू० १४ ॥

कुमार ने कि जिसे 'सर्वाक्षरसन्निपाती' विद्या में निपुणता थी जिससे उनको एक भी पद से अनेक पदों को विचार करने की शक्ति प्राप्त थी उस विद्याधर के कथित मंत्र को सुनकर विस्मृत अक्षर उसे कह दिया । विद्याधरने भी अमयकुमार को विधासाधन के उपाय कह दिये । इस प्रकार अपनी विद्या के विस्मृत अक्षर को प्राप्त कर वह विद्याधर अपने यथेष्ट स्थान पर चला गया । अतः इस दृष्टान्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस प्रकार उस विद्याधर की एक अक्षर विस्मृत हो जाने के कारण विद्या हीनाक्षरता के दोष से दूषित होने से नभोगति करने में असमर्थ हुई और व्यर्थ हुई उसी तरह हीनाक्षर करके सूत्र का उच्चारण से अर्थ में भेद हो जाता है, उस से क्रिया में भेद आने से मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो पाती है । इस से दीक्षा ग्रहण आदि कार्य भी सब व्यर्थ हो जाते हैं । इसी तरह

अमयकुमार पासे 'सर्वाक्षरसन्निपाती' विद्या होवाथी तेओमां ओवी शक्ति हुती के ते ओकाद पदने श्रवण करीने पणु अनेक पदोने विचार करी शकता हुता. आ शक्तिना प्रभावथी विद्याधर कथित मन्त्रने सांभलीने विस्मृत अक्षर तेणे ते विद्याधरने गतावी दीधा. विद्याधरे पणु अमयकुमारने विद्या साधवाना उपाय गतावी दीधा. आ प्रकारे मन्त्रना विस्मृत अक्षरने ओणी लछने ते विद्याधर पोताने यथेष्ट स्थाने आदथे गयो.

आ दृष्टान्त द्वारा ओ बात सिद्ध थाय छे के-जेम ते विद्याधर पोतानी आकाशगामिनी विधाने ओक अक्षर भूली जवाने कारणे तेनी विद्या हीनाक्षरताना होवथी दूषित थवाने दीधे तेने नभोगति कराववाने असमर्थ भनी गछ, ओज प्रभाणे हीनाक्षर करीने सूत्रनु उच्चारण करवामां आवे तो अर्थमां लेद पडी नय छे, अर्थमां लेद पडी जवाने कारणे क्रियामां पणु लेद पडी नय छे अने क्रियामां लेद पडी जवाने दीधे मोक्षनी प्राप्ति पणु थछ शकती नथी. ते कारणे दीक्षाग्रहण आदि कार्य पणु व्यर्थ भनी नय छे. ओज प्रभाणे सूत्रमां अक्षराने उभेरीने सूत्रनु

सम्प्रति नयभेदेन द्रव्यावश्यकभेदा उच्यन्ते—

मूलम्—नेगमस्स णं एगो अणुवउत्तो आगमओ एगं दव्वावस्सयं, दोण्णि अणुवउत्ता आगमओ दोण्णि दव्वावस्सयाइं, तिण्णि अणुवउत्ता आगमओ तिण्णि दव्वावस्सयाइं, एवं जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइयाइं दव्वावस्सयाइं । एवमेव ववहारस्सवि संगहस्स णं एगो वा अणेगे वा अणुवउत्तो वा अणुवउत्ता वा दव्वावस्सयं दव्वावस्सयाणि वा, से एगे दव्वावस्सए । उज्जुसुयस्स एगो अणुवउत्तो आगमओ एगं दव्वावस्सयं, पुहुत्तं नेच्छइ । तिण्हं सइनयाणं जाणए अणुवउत्ते अवत्थु, कम्हा ? जइ जाणए अणुवउत्ते न भवइ, जइ अणुवउत्ते जाणए ण भवइ तम्हा णत्थि आगमओ दव्वावस्सयं । से तं आगमओ दव्वावस्सयं ॥सू० १५॥

अधिक अक्षर आदि करके सूत्र के उच्चारण में दोष आते हैं । इनके ऊपर भी दृष्टान्त है जिन्हें यहाँ शास्त्र के विस्तार के भय से नहीं लिखा है ।

भावार्थ—संक्षेप में आगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यावश्यक का स्वरूप सूत्रकार के अभिप्रायानुसार इस प्रकार जानना चाहिये जिस साधुने आवश्यक सूत्र को सविधि अच्छी तरह से सीख लिया है—श्रुत गुण के अनुसार उसका अध्ययन कर लिया है—परन्तु उसमें उपयोग से वह रहित है—ऐसी स्थिति में वह साधु का आगम द्रव्यावश्यकरूप है । ॥सूत्र १४॥

उच्चारण करनेवालों पणु दोष रहेलो छे, तेतुं प्रतिपादन करतुं ओक दृष्टान्त आपी शक्य ओभ छे, पणु शास्त्रने विस्तार धरि जवाना लयथी अही ते दृष्टान्त आप्युं नथी.

भावार्थ—आगमनी अपेक्षाओ द्रव्यावश्यकतुं स्वइय सूत्रकारना आलिप्राय अनुसार केतुं छे ते हुवे संक्षिप्तमां प्रकट करवातां आवे छे—

जे साधुओ आवश्यकसूत्रने विधिपूर्वक सारी रीते शीघ्री दीधुं छे—श्रुतशुष्णानुसार तेतुं अध्ययन करी दीधुं छे परन्तु तेनां ते उपयोगशी विहीन छे, ओवी परिस्थितिमां ते साधु आगमनी अपेक्षाओ द्रव्यावश्यक कहेवाने योग्य गण्य छे ॥सूत्र १४॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० १४ द्रव्यावश्यकस्वरूपनिरूपणम्

१०३

छाया—नैगमस्य खलु एकः अनुपयुक्त आगमत एकं द्रव्यावश्यकम्, द्वावनुपयुक्तौ आगमतो द्वे द्रव्यावश्यके, त्रयः अनुपयुक्ता आगमतः त्रीणि द्रव्यावश्यकानि । एवं यावन्तः अनुपयुक्ता आगमतः तावन्ति द्रव्यावश्यकानि । एवमेव व्यवहारस्यापि । संग्रहस्य खलु एका वा अनेके वा अनुपयुक्तो वा अनुपयुक्ता वा द्रव्यावश्यकं द्रव्यावश्यकानि वा, स एकं द्रव्यावश्यकम् । ऋजुसूत्रस्य एकः अनुपयुक्त

अब सूत्रकार नयों के भेद से द्रव्यावश्यक के भेद कहते हैं:—

“नैगमस्स णं एगो” इत्यादि । ॥सू० १५॥

शब्दार्थ—(नैगमस्स णं) नैगमनय की विवक्षा से (एगो) एक (अणुवउत्तो) अनुपयुक्त आत्मा (आगमओ) आगम को आश्रित करके (एगं द्वावस्सयं) एक द्रव्यावश्यक है । (दोणिण अणुवउत्ता आगमओ दोणिण द्वावस्सयाइं) दो अनुपयुक्त आत्माएं आगम की अपेक्षा लेकर दो द्रव्यावश्यक हैं । (तिणिण अणुवउत्ता आगमओ तिणिण द्वावस्सयाइं) तीन अनुपयुक्त आत्माएं आगम की अपेक्षा लेकर तीन द्रव्यावश्यक हैं । (एवं जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइयाइं द्वावस्सयाइं) इसी तरह जितनी और भी आत्माएं अनुपयुक्त हैं उतने ही आगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यावश्यक हैं । (एवमेव व्यवहारस्स वि) इसी तरह से व्यवहारनयकी विवक्षा से जानना चाहिये । (संग्रहस्स णं एगो वा अणोगो वा अणुवउत्तो वा अणुवउत्ता वा द्वावस्सयं द्वावस्सयाणि वा से एगे द्वावस्सए) संग्रहनय की विवक्षा से एक, अनुपयुक्त आत्मा एक द्रव्यावश्यक तथा अनेक द्रव्यावश्यक हैं’ ऐसा जो कथन नैगमनय और व्यवहार

इसे सूत्रकार नयाना लेदनी अपेक्षाओं द्रव्यावश्यकता लेदितुं कथन करे छ,

“नैगमस्स णं एगो” इत्यादि—

शब्दार्थ—(नैगमस्स णं) नैगम नयनी दृष्टिसे विचार करवाभां आवे तो (एगो) ओक (अणुवउत्तो) अनुपयुक्त आत्मा (आगमओ) आगमने आश्रित करीने (एगं द्वावस्सयं) ओक द्रव्यावश्यक छे. (दोणिण अणुवउत्ता आगमओ दोणिण द्वावस्सयाइं) ओ अनुपयुक्त आत्माओ आगमनी अपेक्षाओ ओ द्रव्यावश्यक छे. (तिणिण अणुवउत्ता आगमओ तिणिण द्वावस्सयाइं) त्रणु अनुपयुक्त आत्माओ आगमनी अपेक्षाओ त्रणु द्रव्यावश्यक छे. (एवं जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइयाइं द्वावस्सयाइं) ओज प्रमाणे नीत्तं जेटला आत्माओ अनुपयुक्त छे. जेटला आगमनी अपेक्षाओ द्रव्यावश्यक छे. (एवमेव व्यवहारस्स वि) व्यवहार नयनी दृष्टिसे विचारवाभां आवे तो पणु आ विगयने अनुलक्षीने उपर मुज्ज्भुत्तं ज कथन समज्ज्भुत्तं. (संग्रहस्स णं एगो वा अणोगो वा अणुवउत्तो वा अणुवउत्ता वा द्वावस्सयं द्वावस्सयाणि वा से एगे द्वावस्सए) संग्रह नयने आधारे विचार करवाभां आवे तो “ओक अनुपयुक्त आत्मा आगमनी अपेक्षाओ ओक द्रव्यावश्यक

આગમતે એક દ્રવ્યાવશ્યકમ્, પૃથક્ત્વં નેચ્છતિ । ત્રયણાં શબ્દનયાનાં જ્ઞાયકઃ અનુપયુક્તઃ
અવસ્તુ, કસ્માત્ ? યદિ જ્ઞાયકોઽનુપયુક્તો ન ભવતિ, યદિ અનુપયુક્તો જ્ઞાયકો ન ભવતિ
તત્તમાદ્ નારિતિ આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકમ્ । તત્તેતદાગમતો દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ॥૬૦૧૫॥

ટીકા—‘નેગમસ્સ ણં’ इत्यादि—

जिनशासने हि सर्वमपि सूत्रमर्थश्च नयैर्विचार्यते । तत्र नयाः सप्तविधाः ।

નય કી દષ્ટી સે ક્રિયા જાતા હૈ વહ સબ એક દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । ક્યોંકિ સંગ્રહનય ભિન્ન ૨ પ્રકાર કી વસ્તુઓં કો તથા અનેક વ્યક્તિઓં કો વિસીં
મી સામાન્ય તત્ત્વ કે આધાર પર એક રૂપ મેં સંકલિત કરતા હૈ । (ઉજ્જુ
મુયસસ એમો અણુવડત્તો આગમઓં એમં દ્વાવાવસયં પુહુત્તં નેચ્છઈ) ઋજુ સૂત્ર
નયકી દષ્ટી મેં એક અનુપયુક્ત આત્મા આગમ કી અપેક્ષા લેવર એક દ્રવ્યા-
વશ્યક હૈ । વહ નય મેદવાદ કો નહીં ચાહતા હૈ । (તિણં સદ્નયા-
ણં જાણઈ અણુવડત્તે અવત્થુ, કમ્હા ? જઈ જાણઈ અણુવડત્તે ન ભવઈ, જઈ અણુવડત્તે,
જાણઈ ન ભવઈ) ત્રીન શબ્દનયોં કી દષ્ટિ મેં જો જ્ઞાયક હોતા હૈ વહ યદિ તો
અનુપયુક્ત હૈ, તો વહ અવતરુસ્વરૂપ હૈ । ક્યોં કિ જ્ઞાયક અનુપયુક્ત નહીં
હોતા । યદિ વહ અનુપયુક્ત હૈ તો વહ જ્ઞાયક નહીં હૈ । ઇસલિયે આગમ કી
અપેક્ષા લેવર દ્રવ્યાવશ્યક જો કહા ગયા હૈ વહ નહીં હૈ । (સે તં આગ-
મઓં દ્વાવાવસયં) ઇસ તરહ આગમ કો આશ્રિત કરકે પ્રકાન્ત દ્રવ્યાવશ્યક

છે, તથા અનેક અનુપયુક્ત આત્માઓં અનેક દ્રવ્યાવશ્યક છે.” આ પ્રકારનું જે
જે કથન નેગમ નય અને વ્યવહાર નયની અપેક્ષા કરવામાં આવ્યું છે, તેને બદલે
અહીં બધાને એક દ્રવ્યાવશ્યક જ કહેવા બોધ્યું છે, કારણ કે સંગ્રહનય બુદ્ધ બુદ્ધ
પ્રકારની વસ્તુઓને તથા અનેક વ્યક્તિઓને કેઈ પણ સામાન્ય તત્ત્વનો આધાર
લઈને એક રૂપમાં સંકલિત કરે છે. (ઉજ્જુમુયસસ એમો અણુવડત્તો આગમઓં એમં
દ્વાવાવસયં પુહુત્તં નેચ્છઈ) ઋજુસૂત્ર નયની દષ્ટિએ એક અનુપયુક્ત આત્મા આગમની
અપેક્ષાએ એક દ્રવ્યાવશ્યક છે. આ નય ભેદભાવને આહતો નથી. (તિણં સદ્નયા-
ણં જાણઈ અણુવડત્તે અવત્થુ, કમ્હા ? જઈ જાણઈ અણુવડત્તે, ન ભવઈ,
જઈ અણુવડત્તે, જાણઈ ન ભવઈ) ત્રણ શબ્દ નયોની દષ્ટિએ એવું માનવામાં આવે
છે કે—જે જ્ઞાયક હોય છે તેને અનુપયુક્ત હોય તો તે અવસ્તુ સ્વરૂપ છે, કારણ
કે જ્ઞાયક અનુપયુક્ત સંભવી શકે જ નહીં જો તે અનુપયુક્ત હોય, તો તે જ્ઞાયક
જ હોઈ શકે નહીં. તે કારણે આગમનો આશ્રય લઈને જે દ્રવ્યાવશ્યક બતાવવામાં
આવેલ છે તેનો સદ્ભાવ જ નથી. (સે તં આગમઓં દ્વાવાવસયં) આ પ્રકારનું
આગમને આશ્રિત કરીને પ્રકાન્ત (પ્રસ્તુત વિષયરૂપ) દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ છે.

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० १५ नयभेदेन द्रव्यावश्यकनिरूपणम्

१०५

उक्तं च—

नैगम संग्रहव्यवहार, उज्जुसुए चेव होइ बोद्धव्वे ।

सदे य समभिरूढे, एवंभूए य मूलनया ॥१॥

छाया—नैगमः संग्रहो व्यवहार ऋजुसूत्रश्चैव भवति बोद्धव्यः ।

शब्दश्च समभिरूढ एवंभूतश्च मूलनयाः ॥इति॥

तत्र—नैगमनयमाश्रित्य आगमतो द्रव्यावश्यकभेदमाह—

का स्वरूप है ।—

जिनशासन में समस्त सूत्र और अर्थों का विचार नगों को लेकर किया गया है। ये नय मूल में सात हैं कहाभी है (१) नैगम (२) संग्रह (३) व्यवहार (४) ऋजु सू (५) शब्द (६) समभिरूढ (७) एवंभूत । इनमें से नैगमनय को लेकर सूत्रकार आगम की अपेक्षा से द्रव्यावश्यक के भेदों को कहते हैं—नैगमनय का तात्पर्य उन विचारों से है कि जिनके बल पर पदार्थ का बोध विविध प्रकार से होता है। “नैको गमो बोधमार्गः यस्य सः नैगमः” बोधका अनेक उपाय है वे नैगम हैं इस व्युत्पत्ति के अनुसार यही अर्थ लभ्य होता है।

इस नैगम नयकी अपेक्षा से उपयोग वर्जित एकदेवदत्त आदि व्यक्ति एक आगम द्रव्यावश्यक हैं। दो अनुपयुक्त देवदत्त और यज्ञदत्त नाम के व्यक्ति दो आगम द्रव्यावश्यक हैं। अनुपयुक्त देवदत्त, यज्ञदत्त और विष्णुदत्त नाम के व्यक्ति ३ आगमद्रव्यावश्यक हैं। इसी तरह जितने भी अनुपयुक्त व्यक्ति हैं वे सब उतने ही आगमद्रव्यावश्यक इस नय की दृष्टि

जिन शासनमां समस्त सूत्र अने अर्थोना गुदा गुदा नयनो आधार लधने विचार करवामां आव्यो छि. ये नय मुख्यत्वे सात कहा छि. (१) नैगम नय, (२) संग्रह नय, (३) व्यवहार नय, (४) ऋजुसूत्र नय, (५) शब्द नय, (६) समभिरूढ नय अने (७) एवंभूत नय.

पछेक्षां तो नैगम नयनी मान्यता अनुसार सूत्रकार आगमनी अपेक्षासे द्रव्यावश्यकना लेहोतुं निरूपण करे छि. नैगम नयनो बोधार्थ नीचे प्रमाणे छि—जे विचारोने आधारे पदार्थोना बोध विविध थाय छि, ते विचारधारोना नाम जे नैगम नय छि. नैको गमो बोधमार्गः यस्य सः नैगमः” आ व्युत्पत्ति अनुसार उपयुक्त अर्थ ज प्राप्त थाय छि,

आ नैगमनयनी अपेक्षासे उपयोग वर्जित एक देवदत्त आदि व्यक्ति एक आगम द्रव्यावश्यक छि. उपयोगरहित (अनुपयुक्त) देवदत्त अने यज्ञदत्त नामनी जे व्यक्ति जे आगमद्रव्यावश्यक छि. देवदत्त, यज्ञदत्त अने विष्णुदत्त नामनी त्रय अनुपयुक्त व्यक्तिओ त्रय आगमद्रव्यावश्यक छि. जे प्रमाणे जेटली अनुपयुक्त व्य

નેગમસ ણં' इत्यादिना' नको गमोऽर्थमार्गो यस्य स नैगमः । पृषोदरा-
दित्वात् ककारस्य लोपः बहुविधवस्त्ववबोधक इत्यर्थः । तस्य नैगमस्य खलु
एको देवदत्तादिः अनुपयुक्तः=उपयोगवर्जितः, आगमत एकं द्रव्यावश्यकम् ।
द्वौ देवदत्तयज्ञदत्तावनुपयुक्तौ आगमतो द्वे द्रव्यावश्यके । त्रयो देवदत्तयज्ञदत्त-
विष्णुमित्रा अनुपयुक्ता आगमतस्त्रीणि द्रव्यावश्यकानि । 'एवं' अनेन प्रकारेण
धावन्तः अनुपयुक्ताः, आगमतः तावन्ति द्रव्यावश्यकानि अयं भावः-नैगमनयः
सामान्यरूपं विशेषरूपं च वस्तु अधिगमयति=बोधयति । न तु संग्रहवत्सामान्यमेव ।
तत्र-विशेषरूपं भेदमाश्रित्य देवदत्तादि प्रत्येकव्यति भेदेन यावन्तोऽनुपयुक्ताः भवन्ति
सर्वाण्यप्यस्य द्रव्यावश्यकानि । न पुनःसंग्रहवत्सामान्यवादित्वादेव मेव द्रव्यावश्यकम् इति।।

મેં છે । તાત્પર્યેં इसका यह है कि-नैगमनय सामान्य और विशेषरूप अर्थ को
कहता है-जिस प्रकार संग्रहनय सामान्यरूप ही अर्थ है ऐसा कहता है, उस
प्रकार से यह नय नहीं कहता । यह तो विशेष को भी विषय करता है ।
इसकी मान्यतानुसार पदार्थ सामान्य और विशेष उभयरूप है वह न सामान्यरूप
है और न केवल विशेषरूप ही । इस तरह विशेषरूप भेद का आश्रय करके
देवदत्त आदि जितने भी अनुपयुक्त व्यक्ति हैं उतने ही आगम द्रव्यावश्यक
इस नय की दृष्टि से हैं सामान्यवादी होने के कारण संग्रहनय की तरह
एक ही द्रव्यावश्यक नहीं हैं । संग्रहनय से गृहीत पदार्थों का विधिपूर्वक-
विभाग जिस अभिप्राय के द्वारा किया है उस अभिप्राय का नाम व्यवहार
नय है । इस नय की मान्यतानुसार सामान्य कोई वस्तु नहीं है । क्योंकि
यह सामान्य का निरावरण करता है । इसके प्रतिपादन का विषय विशेष है ।

કિત્યો હોય છે તેઓ આ નયની માન્યતા અનુસાર એટલા જ આગમદ્રવ્યાવશ્યક
છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે. નેગમ નય સામાન્ય અને વિશેષરૂપ
અર્થને બતાવે છે. જેવી રીતે સંગ્રહનય “સામાન્યરૂપ જ અર્થ છે,” એવું કહે છે,
એ પ્રકારે આ નય કહેતો નથી. એ તો વિશેષરૂપે પણ અર્થને બતાવે છે. નેગમ
નયની માન્યતા અનુસાર તો પદાર્થ કેવળ સામાન્યરૂપ પણ નથી, કેવળ વિશેષરૂપ
પણ નથી, પરંતુ સામાન્ય અને વિશેષરૂપ એટલે કે ઉભયરૂપ છે. આ રીતે વિશેષ-
રૂપ ભેદની અપેક્ષાએ દેવદત્ત આદિ જેટલા અનુપયુક્ત પુરૂષો છે, એટલા જ
આ નયની દૃષ્ટિએ આગમ દ્રવ્યાવશ્યક છે-સામાન્યવાદી હોવાને કારણે સંગ્રહનયની
જેમ એક જ દ્રવ્યાવશ્યક નથી, સંગ્રહનયથી ગૃહીત પદાર્થોનો જે અભિપ્રાયદ્વારા
વિધિપૂર્વક વિભાગ કરવામાં આવે છે, તે અભિપ્રાયનું નામ વ્યવહાર નય છે. આ
નયની માન્યતા અનુસાર કોઈ વસ્તુ સામાન્ય નથી, કારણ કે તે સામાન્યનું નિરા-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૧૫ નયભેદન દ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણં

૧૦૭

एवं व्यवहारस्यापि—संग्रहनयेन गृहीतानामर्थानां विधिपूर्वकमवहरणं येनाभिसंधिना क्रियते स व्यवहारः । अर्थात् विशेषप्रतिपादनपरो व्यवहारनय इत्यर्थः । परसंग्रहनयेन गृहीतार्थविषये व्यवहारोदाहरणं यथा—यत् सत्, तद् द्रव्यं पर्यायो वेति । अपरसंग्रहगृहीतार्थविषये व्यवहारोदाहरणं यथा—यद् द्रव्यं तज्जीवादिपञ्चिधम् । स पर्यायः द्विविधः—क्रमभावी सहभावी चेति । एवं यो जीवः स मुक्तः संसारी-

અતઃ એહ ઉસકે પ્રતિપાદન કરને મેં હી તત્પર રહતા હૈ । સંગ્રહનય કે દો ભેદ હૈ—(૧) પર સંગ્રહનય ઓર દૂસરા અપર સંગ્રહનય—। જડ ચેતનરૂપ અનેકદ્રવ્યતિ-યોં મેં જો સદ્રૂપ એક સામાન્યતત્ત્વ હૈ ઉસી પર દષ્ટિ રાખકર દૂસરે વિશેષોં કો ધ્યાન મેં ન રાખતે હુએ સમી વ્યક્તિયોં કો એક રૂપ માનકર એસા જો વિચાર હોતા હૈ કિ સંપૂર્ણ જગત્ સદ્રૂપ હૈ ક્યોં કિ—સત્તા સે રહિત કોઈ વસ્તુ હૈ હી નહીં । ઈસી કા નામ પરસંગ્રહનય હૈ । ઈસ પર સંગ્રહનય સે ગૃહીત વિષય કે વિષય મેં વ્યવહાર એસા વિચાર કરતા હૈ કિ જો સદ્રૂપ હૈ વહ દ્રવ્ય હૈ યા પર્યાય હૈ । યદિ દ્રવ્ય સત્ હૈ જો કિ પરસંગ્રહ નયકે વિષય કી અપેક્ષા ડપર સંગ્રહનય કા વિષય પડતા હૈ તો વથા જીવ દ્રવ્ય હૈ, યા અજીવ દ્રવ્ય હૈ । કય કિ દ્રવ્ય કે જીવ પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ ઓર કાલ ઈસ પ્રકાર સે ૬ ભેદ હૈ । ઇન મેં જીવ કો છોડકર પુદ્ગલ આદિ સર્વ અજીવ દ્રવ્ય કે ભેદ હૈ । યદિ પર્યાય સત્ હૈ—તો વહ દો પ્રકાર કી હૈ (૧) ક્રમભાવી ઓર દૂસરી સહભાવી । યદિ જીવદ્રવ્ય સત્ હૈ તો

કરણુ કરે છે. તેને પ્રતિપાદન કરવાનો વિષય વિશેષ છે, તેથી તે તેનું પ્રતિપાદન કરવાને જ તત્પર રહે છે. સંગ્રહનયના બે ભેદ છે—(૧) પર સંગ્રહનય અને (૨) અપરસંગ્રહનય જડ ચેતનરૂપ અનેક વસ્તુઓમાં જે સદ્રૂપ એક સામાન્ય તત્ત્વ છે. એના પર જ નજર નાખીને બીજી વિશિષ્ટતાઓને ધ્યાનમાં લીધા વિના સઘળી વસ્તુઓને એકરૂપ માનીને એવો જે વિચાર કરવામાં આવે છે કે સંપૂર્ણ જગત્ સદ્રૂપ છે, કારણ કે સત્તા (અસ્તિત્વ)થી રહિત કોઈ પદાર્થ છે જ નહીં, તેનું જ નામ પરસંગ્રહનય દ્વારા ગૃહીત પદાર્થના વિષયમાં વ્યવહાર એવો વિચાર કરે છે કે જે સદ્રૂપ છે તે દ્રવ્ય છે કે પર્યાય છે ? જો તે દ્રવ્યસત્ રૂપ હોય તો તે પરમસંગ્રહનયનો વિષય હોવાને બદલે અપરસંગ્રહનયનો વિષય ગણી શકાય છે. જો તે દ્રવ્યસત્ રૂપ હોય તો શું તે અણુદ્રવ્યરૂપ છે કે અણુવદ્રવ્યરૂપ છે ? કારણ કે દ્રવ્યના પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ અને કાળ, આ પ્રકારે ૬ ભેદ પડે છે. તેમાંથી અણુવિભાવનો જે પાંચ ભેદો કહ્યા છે તે અણુવદ્રવ્યના ભેદો છે. જો પર્યાયસત્ હોય તો તે પર્યાય બે પ્રકારની હોય છે—(૧) ક્રમભાવી અને (૨) સહભાવી.

ચ," ઇત્યાદિ । તસ્ય એવમેવ=નૈગમવદેવ એકો દેવદત્તાદિરનુપયુક્ત આગમત્ત એકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્, દ્રાવનુપયુક્તૌ આગમતો દ્વે દ્રવ્યાવશ્યકે, ત્રયાનુપયુક્તા અગમતસ્ત્રીણિ દ્રવ્યાવશ્યકાનિ । એવં યાવન્તોનુપયુક્તાસ્તાવન્તિ આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકાનિ વિજ્ઞાતવ્યાનિ । વિશેષાર્થપ્રતિપાદકતયા નૈગમવ્યવહારયોઃ સામ્યમ્, અતઃક્રમપ્રાપ્તં સંગ્રહમતિક્રમ્ય ગ્રન્થલાઘવાર્થં વ્યવહારં પન્થાસો નૈગમમનુક્રુતઃ । સમ્પ્રતિ

કૌન સા જીવદ્રવ્ય સંસારી જીવ યા યુક્ત જીવ ? ઇસ તરહ યહ વ્યવહાર નય વહાં તક મેદ કરતા ચલા જાતા હૈ કિ ફિર જિસ સે ઓર મેદ નહીં હો સકે । જિસ વિધિ સે સંગ્રહ કિયા જાતા હૈ ઉસી વિધિ સે ઉનકા વિભાગ કિયા જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર નૈગમનય કી તરહ હી અનુપયુક્ત એક દેવદત્ત આદિ વ્યક્તિ આગમ દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । અનુપયુક્ત દો વ્યક્તિ દો આગમ દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । અનુપયુક્ત ત્રી વ્યક્તિ ત્રી આગમ દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । ઇસ તરહ જિતને મી આગમ મેં અનુપયુક્ત વ્યક્તિ હૈ વે સબ ઉતને હી આગમ દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । જિસ પ્રકાર વિશેષરૂપ અર્થ કી પ્રરૂપણા નૈગમનય કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે ઉસકી પ્રરૂપણા વ્યવહારનય મી કરતા હૈ—એતા તા ઇન દોનોં મેં સમાનતા હૈ । ઇસીલિયે સૂત્રકારને ક્રમપ્રાપ્ત સંગ્રહનય કો છોડકર શાસ્ત્ર કી લઘુતા નિમિત્ત વ્યવહારનય કા ઉપન્યાસ સંગ્રહનય સે પહિલે ઓર નૈગમનય કે પીછે કિયા હૈ । સંગ્રહનય કી વિચારધારા કે અનુસાર આગમ દ્રવ્યાવશ્યક એક હી હૈ—વહ ઇસ પ્રકાર સે સામાન્ય માત્ર કો વિષય કરનેવાલા જો પરા-

ને જીવદ્રવ્ય સત્ હોય તો કયું જીવદ્રવ્ય એવું છે—સંસારી જીવદ્રવ્ય એવું છે કે મુક્ત જીવદ્રવ્ય એવું છે ? આ પ્રકારે આ વ્યવહારનય ત્યાં સુધી લેદ કરતો જ નય છે કે જેવડે એમાંથી અન્ય કોઈ લેદ પાડી શકાય જ નહીં. જે વિધિથી સંગ્રહ કરવામાં આવે છે, એજ વિધિથી તેમનો વિભાગ કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે નૈગમનયની જેમજ અનુપયુક્ત એક દેવદત્ત આદિ વ્યક્તિ એક આગમ દ્રવ્યાવશ્યક છે. અનુપયુક્ત બે વ્યક્તિ બે આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે. અનુપયુક્ત ત્રણ વ્યક્તિ ત્રણ આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે. એજ પ્રમાણે જેટલી આગમમાં અનુપયુક્ત વ્યક્તિઓ હોય, એટલાં જ આગમદ્રવ્યાવશ્યક સમજવા. જે પ્રકારે નૈગમનય વિશેષ રૂપ અર્થની પ્રરૂપણા કરે છે, એજ પ્રમાણે તેની પ્રરૂપણા વ્યવહારનય પણ કરે છે. એટલા પુરતી એ બન્નેમાં સમાનતા છે. તે કારણે સૂત્રકારે ક્રમપ્રાપ્ત સંગ્રહનયને છોડીને શાસ્ત્રની લઘુતાને નિમિત્તે નૈગમનયની પછી અને સંગ્રહનયના પહેલાં વ્યવહારનયનો ઉપન્યાસ કર્યો છે.

સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસાર આગમદ્રવ્યાવશ્યક એક જ છે. તે આ પ્રમાણે સમજવું—સામાન્ય માત્રને વિષય કરનારો જે પ્રમાણે (અભિપ્રાય-માન્યતા) છે, તેવું

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫ નયભેદેન દ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૦૯

સંગ્રહનયમતેન ગ્રાહ-‘સંગહસ્સ’ इत्यादिना । संग्रहस्य, सामान्यमात्रग्राही परामर्शः संग्रहः । स द्विविधः—परोऽपरश्च । सर्वं वस्तु एकं, सद्रूपत्वेनाविशेषात् । अयमर्थः—सर्वस्मिन् वस्तुनि सत्ता विद्यते, सा चैकैव, अतस्तां सत्तामाश्रित्य सर्वं वस्तु एकं सदित्युच्यते । सत्ताख्यं महासामान्यमाश्रित्य परसंग्रहः प्रोक्तः । अपर-संग्रहस्तु अवान्तरसामान्यं द्रव्यत पर्यायत्वादिकमाश्रित्य भवति । यथा—‘धर्मा-धर्माकाशकालपुद्गलजीवद्रव्याणामैक्यं द्रव्यत्वाभेदात्’ इत्यादि । अयमर्थः—

મર્શ હૈં उसका नाम संग्रहनय है । यह संग्रहनय पर सामान्य और अपरसामान्य को विषय करने की दृष्टि से दो प्रकार का है—परसामान्य को विषय करनेवाला—परसंग्रहनय और अपरसामान्य को विषय करनेवाला अपरसंग्रहनय है । सत्ता नाम का महा सामान्य परसामान्य है । द्रव्यत्व, पर्यायत्व आदि जो अवान्तर सामान्य है वह अपरसामान्य की अविशेषता से एक है—अर्थात् ऐसी कोई वस्तु नहीं है कि जिस में सत्ता नहीं हो अतः—अब सब में सत्ता विद्यमान है और वह सत्ता एक ही है—तब इस सत्ता को लेकर सब वस्तुएँ एक सद्रूप हैं । यह परसंग्रहनय की विचार धारा है । अपरसंग्रहनय की विचारधारा अवान्तर सामान्य को लेकर चलती है—जैसे धर्म, अधर्म आकाश काल, पुद्गल और जीव इन द्रव्यों में द्रव्यत्वजाति की अपेक्षा अभेद होने से एकता है । क्योंकि कि इनमें इसी से द्रव्य द्रव्य ऐसा

નામ સંગ્રહનય છે. તે સંગ્રહનય પરસામાન્ય અને અપરસામાન્યને વિષય કરવાની દૃષ્ટિએ બે પ્રકારનો છે. પર સામાન્યને વિષય કરનારો પરસંગ્રહનય છે અને અપરસામાન્યને વિષય કરનારો અપરસંગ્રહનય છે સત્તા નામના મહાસામાન્યને પરસામાન્ય કહે છે. દ્રવ્યત્વ, પર્યાયત્વ, આદિ જે અવાન્તર સામાન્ય છે, તેને અપરસામાન્ય કહે છે. જ્યારે એવો વિચાર કરવામાં આવે છે કે સમસ્ત વસ્તુ સત્તા સામાન્યની અવિશેષતાની અપેક્ષાએ એક જ છે—એટલે કે એવી કોઈ વસ્તુ જ નથી કે જેમાં સત્તા જ (અસ્તિત્વજ) ન હોય. આ રીતે સઘળી વસ્તુઓમાં સત્તા વિદ્યમાન છે અને તે સત્તા એક જ છે, બે એ સત્તાની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો સઘળી વસ્તુઓ એક સદ્રૂપ જ છે. આ પ્રકારની પરસંગ્રહનયની વિચારધારા (માન્યતા) છે.

અપરસંગ્રહનયની વિચારધારા અવાન્તર સામાન્યની અપેક્ષાએ ચાલે છે—જેમકે ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, કાળ, પુદ્ગલ અને જીવ, આ દ્રવ્યોમાં દ્રવ્યત્વ-જાતિની અપેક્ષાએ અભેદ હોવાથી એકતા છે. કારણ કે તેમનામાં તેના દ્વારા જ દ્રવ્યોદ્રવ્ય એવું જ્ઞાન અને દ્રવ્યાદ્રવ્ય એવી વચનપ્રવૃત્તિ થાય છે. એજ વાતને

लोके हि धर्मो द्रव्यम् अधर्मो द्रव्यम्, आकाशो द्रव्यं, कालो द्रव्यं, पुद्गलो द्रव्य-
जीवो द्रव्यम्, इत्येवमुच्यते, अतो ज्ञायते-धर्मादौ द्रव्यत्वं वर्तत इति । एव-
मेव द्रव्यत्वं धर्मादिषु षट्सु विद्यते । द्रव्यत्वेन धर्मादीनामेकत्वं संगृह्यते । एवं
चेतनाचेतनपर्यायाणां सर्वेषामेकत्वं संगृह्यते, पर्यायत्वाविशेषादिति । एवंभूतो
यः संग्रहो न्यस्तस्यापेक्षया खलु एको वा अनेके वा अनुपयुक्तो वा अनुपयुक्ता
वा यद् आगतो द्रव्यावश्यकं द्रव्यावश्यकानि वा । तत् किमि-याह-‘स एगे’
इति । तदेकं द्रव्यावश्यकम् । अस्या माशयः-संग्रहनयो हि सामान्यस्यैव ग्राहकः
न तु विशेषाणाम्, तस्मात् सामान्यव्यतिरेकेण विशेषसिद्धेर्यानि कानिचिद् द्रव्या-

ज्ञान और द्रव्य, द्रव्य ऐसीवचन प्रवृत्ति होती है । इसी बात को “धर्मो द्रव्यं
अधर्मो द्रव्यं, आकाशो द्रव्यं, कालो द्रव्यं पुद्गलो द्रव्यं, जीवो द्रव्यं” इन षट्दों द्वारा
प्रगट किया है, इस तरह अनुवृत्ति प्रत्यय होने से यह प्रतीत होता है कि इनमें द्रव्यत्व
है । और यह द्रव्यत्व धर्मादिक ६ द्रव्यव्यक्तियों में एक ही है । इसलिये इस
द्रव्यत्व की अपेक्षा धर्मादिक द्रव्यों में एकता का संग्रह हो जाता है । इसी
तरह से सचेतन और अचेतन द्रव्यों की जितनी भी पर्यायें हैं उन सब में
भा पर्यायत्वरूप सामान्य की अपेक्षा से एकता का संग्रह हो जाता है । इस
प्रकार का जो यह संग्रहनय है । उस की अपेक्षासे चाहे तो एक आगम
में अनुपयुक्त देवदत्तादि व्यक्ति हों चाहे अनेक देवदत्तादि व्यक्ति हों वे
सब एक ही आगमद्रव्यावश्यक हैं । तात्पर्य इसका यह है-कि संग्रहनय एक
सामान्यमात्र का ही ग्राहक है, विशेषों का नहीं । इसलिये विशेष की
अपेक्षा जो अनेक आगम द्रव्यावश्यक हैं वे सब जब सामान्य के अतिरिक्त

“ધર્મો દ્રવ્યં અધર્મો દ્રવ્યં, આકાશો દ્રવ્યં, પુદ્ગલો દ્રવ્યં જીવો દ્રવ્યં” આ પદો
દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. આ રીતે અનુવૃત્તિ પ્રત્યય હોવાથી એવું લાગે છે કે
તેમનામાં દ્રવ્યત્વ છે. અને તે દ્રવ્યત્વ ધર્માદિક ૬ દ્રવ્યવ્યક્તિઓમાં (પદાર્થોમાં)
એક જ છે. તેથી આ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માદિક દ્રવ્યોમાં એકતાનો સંગ્રહ થઈ
જાય છે. એજ પ્રમાણે સચેતન અને અચેતન દ્રવ્યોની જેટલી પર્યાયો છે, તે સઘળી
પર્યાયોમાં પણ પર્યાયત્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકતાનો સંગ્રહ થઈ જાય છે.
આ પ્રકારનો સંગ્રહનય છે તેની અપેક્ષાએ એક આગમમાં અનુપયુક્ત દેવદત્ત આદિ
વ્યક્તિ પણ એક જ આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે, અને અનુપયુક્ત દેવદત્ત આદિ અनेक
વ્યક્તિઓ પણ એકજ આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે સંગ્રહ-
નય એક સામાન્ય માત્રનો જ ગ્રાહક છે. વિશેષોનો ગ્રાહક નથી. તેથી વિશેષની
અપેક્ષાએ જે અनेક આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે, તે બધાં જ જો સામાન્ય છે-વિશેષારૂપ

अनुयोगचन्द्रिका टीका १५ नयभेदेन द्रव्यावश्यकनिरूपणम्

१११

वक्ष्यवानि तानि सर्वाणि सामान्यापेक्षया सत्ताया एकत्वादेकमेव, अत संग्रह-
नयमते एकमेव द्रव्यावश्यकम् । इति ।

अथ ऋजुसूत्रमते आह—‘उज्जुसुयस्स’ इत्यादि । ऋजुसूत्रस्य ऋजु=वर्त-
मानक्षणस्थायि पर्यायमात्रं प्राधान्यतः सूत्रयति—सूत्ररतीति ऋजुसूत्रम् । यथा

विशेष हैं ही—नहीं तो उसकी अपेक्षा जायमान ये अनेक आगम द्रव्यावश्यक
सत्ता की एवता के कारण एक ही हैं । इसलिये संग्रहनय के मत में एक
ही द्रव्यावश्यक है । अब सूत्रकार ऋजु सूत्रनय की अपेक्षा आगम द्रव्यावश्यक
का विचार करते हैं—वर्तमानक्षण स्थायि पर्यायमात्र को जो प्रधानता से विषय
करता है उसका नाम ऋजु सूत्रनय है । नैगम, संग्रह और व्यवहार ये तीन
नय पदार्थों की विविध अवस्थाओं की ओर ध्यान नहीं देते हैं । इसलिये
उन्हें क्या पता कि वर्तमान में पदार्थ का क्या रूप है । इसीलिये इन तीन
नयों को द्रव्यार्थिकनय माना गया है । क्या कि इनमें द्रव्य को ही विषय
करने की मुख्यता है । पर्यायों की तरफ इनका लक्ष्य नहीं है—क्योंकि इन
की दृष्टि में अविश्वसित है—गौण—हैं । परन्तु ऐसा तो हो ही नहीं सत्ता
कि विचारक का ध्यान केवल द्रव्य पर ही रहे, पर्याय पर न जावे । विचा-
रक के विचार जिस प्रकार विविध पदार्थों का उनकी विविध अवस्थाओं
की विवक्षा किये बिना वर्गीकरण और विभाग करते हैं उसी प्रकार वे उन
पदार्थों की विविध अवस्थाओं को भी अपने लक्ष्य में रखते हैं । कि तु

न थी, तो तेनी अपेक्षासे जायमान ते अनेक आगम द्रव्यावश्यक सत्तानी ओकताने
कारण ओक न छे, तेथी संग्रहनयनी मान्यता अनुसार तो ओकन द्रव्यावश्यक छे

हुवे सूत्रकार ऋजुसूत्रनयनी अपेक्षासे आगमद्रव्यावश्यकने विचार करे छे—
वर्तमान क्षणस्थायी पर्यायमात्रने न न मुण्यत्वे विचार करे छे, ते नयतुं नाम
ऋजुसूत्रनय छे, नैगम, संग्रह अने व्यवहार, या त्रय प्रकारना नय, पदार्थनी
विविध अवस्थाओ तरङ्ग ध्यान देता नथी, तेथी ते नयने आधार ओवुं केवी रीते
जाली शक्य के वर्तमानमां पदार्थतुं केवुं स्वप्न छे ? ते कारणे ते त्रय नयने
द्रव्यार्थिक नय मानवामां आवेल छे, कारणे के तेमां द्रव्यने न विचार करवानी—
द्रव्यने न विचार करवानी—प्रधानता होय छे; परन्तु पर्यायेनी तरङ्ग तेमनुं लक्ष्य
होतुं नथी, कारणे के ते तो तेमनी दृष्टिसे अविश्वसित अथवा गौण छे, पण वि-
चारकनुं ध्यान केवण द्रव्य पर न रहे अने पर्याय पर न जाय ओवुं तो संभव
शकतुं नथी, विचारकना विचारे न प्रमाणे विविध पदार्थतुं—तेमनी विविध अव-
स्थाओनी विवक्षा कर्या बिना—ध्यानमां लीधा बिना नेम वर्गीकरण अने विभागी-
करण करे छे, ओन प्रमाणे तेओ विविध पदार्थनी विविध अवस्थाओने पण

‘સંપ્રતિ સુખવિવર્તોઽસ્તિ’ ઇત્યાદિ । અનેન વાક્યેન હિ વર્તમાનક્ષણવર્તિ સુખા-
લયં પર્યાયમાત્રં પ્રદર્શયતે । તસ્ય મતે-एको देवदत्तादिः अनुपयुक्तः, आगत एकं
द्रव्यावश्यकम् । અયં માવ:-ऋजुसूत्रनयो हि वर्तमानकालिकमेव पर्यायवस्तु
बोधं ति, नातीतं विनष्टत्वात्, नाप्यनागतमनुत्पन्नत्वात् । વર્તમાનકાલિકમપિ

વિવિધ અવસ્થાઓં કા સમ્મેલન દ્રવ્ય કોટિ મેં આતા હૈ પર્યાયકોટિ મે આતા
હૈ ક્યોંકિ પર્યાય એક ક્ષણવર્તીં હોતી હૈ । ઉસમેં મી વર્તમાન કા નામ હી
પર્યાય હૈ । ક્યોંકિ અતીત વિનષ્ટ ઔર અનાગત અનુત્પન્ન હોને કે કારણ
ઉનમેં પર્યાય કા વ્યવહાર નહીં હો સકતા । ઇસી સે ઋજુ સૂત્રનય કા વિષય
વર્તમાન પર્યાયમાત્ર કહા ગયા હૈ । આશય યહ હૈ કિ યહ નય વિદ્યમાન
અવસ્થારૂપ સે હી વસ્તુ કો સ્વીકાર કરતા હૈ । દ્રવ્ય ઉપમે સર્વથા અવિવક્ષિત
રહતા હૈ । અતઃ પર્યાય સંબન્ધી જિતને મી વિચાર હોતે હૈં વે સવ ઋજુ
સૂત્રનય કી શ્રેણિ મેં આતે હૈં । જૈસે “સંપ્રતિ સુખવિવર્તોઽસ્તિ” ઇસ સમય સુખયુક્ત હૈં
ઇસ વાક્ય સે વર્તમાનક્ષણવર્તીં સુખ નામ કી પર્યાયમાત્ર દિશ્વલાઈ ગઈ હૈં । ઉસકે
મત મેં એક અનુપયુક્ત દેવદત્તાદિ એક આગમ દ્રવ્યાવશ્યક હૈં । યહ અમી
ર સ્પષ્ટ ક્રિયા ગદ્યા હૈં કિ વર્તમાનકાલીન પર્યાય વસ્તુ કો હી યહ નય
વિષય કરતા હૈં અતીત અનાગત પર્યાયોં કો નહીં-ક્યોંકિ અતીતપર્યાય વિનષ્ટ
હૈં ઔર અનાગત પર્યાયેં અનુત્પન્ન હૈં । વર્તમાન કાલીન પર્યાય મેં મી જો

લક્ષ્યમાં રાખે છે. પરંતુ વિવિધ અવસ્થાઓનું સંમેલન દ્રવ્યકોટિમાં આવે છે-
પર્યાયકોટિમાં આવતું નથી. વાસ્તવમાં તો એક પર્યાય જ પર્યાયકોટિમાં આવે છે,
કારણ કે પર્યાય એક ક્ષણવર્તીં હોય છે. તેમાં પણ વર્તમાનનું નામ જ પર્યાય છે.
કારણ કે અતીત (ભૂતકાલિન) વિનષ્ટ હોય છે અને અનાગત (ભવિષ્ય કાલિન)
અનુત્પન્ન હોય છે. તે કારણે તેમનામાં પર્યાયનો વહેવાર થઈ શકતો નથી. તે
કારણે ઋજુસૂત્ર નયનો વિષય વર્તમાન પર્યાય માત્ર જ કહ્યો છે. આ કથનનો ભાવાર્થ
એ છે કે આ નય વિદ્યમાન અવસ્થા રૂપે જ વસ્તુનો સ્વીકાર કરે છે. દ્રવ્ય તેમાં
સર્વથા અવિવક્ષિત રહે છે. તેથી પર્યાય સંબંધી જેટલાં વિચારો હોય છે, તે
બધાં ઋજુસૂત્રનયની શ્રેણિમાં આવી જાય છે. જેમકે “સંપ્રતિ સુખવિવર્તોઽસ્તિ”
આ વાક્યથી વર્તમાન ક્ષણવર્તીં સુખ નામની પર્યાય માત્ર જ બતાવવામાં આવી
છે. ઋજુસૂત્રનયની માન્યતા અનુસાર એક અનુપયુક્ત દેવદત્તાદિ એક આગમદ્રવ્યા-
વશ્યક છે. એ વાત તો આગળ સ્પષ્ટ કરવામાં આવી ચૂકી છે કે આ નય વર્તમાન
કાલિન પર્યાયવસ્તુને જ વિષય કરે છે-અતીત અનાગત પર્યાયોંને વિષય કરતો નથી
કારણ કે અતીત (ભૂતકાલિન) પર્યાયો વિનષ્ટ હોય છે અને અનાગત (ભવિષ્ય

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂ. ૧૫ નયભેદન દ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૧૧૩

સ્વકીયમેવ बोधयति. स्वकार्यसाधकत्वात् स्वधनवत्, न तु परकीयं, स्वकार्यसाधकत्वात् परधनवत्, तस्मादेको देवदत्तादिरनुपयुक्तोऽस्य मते आगमन एकं द्रव्यावश्यकम्, इति । अयं नयः—पृथक्त्वं नेच्छति—अतीतानागतभेदतः परकीयभेदतश्च पार्थक्यं नाभिलषति, किंतु वर्तमानकालिकं स्वगतमेव वस्तु, तच्चैकमेव । तस्मादेकमेव द्रव्यावश्यकमेतन्नयमते ।

શબ્દાદીક્ષીન્ નયાન્ સમાશ્રિત્ય કથયતિ—‘તિપ્પં સદ્નયાણં’ इत्यादि । त्रयाणां शब्दप्रधाना नयाः शब्दनयाः=शब्दसमभिरूढैवम्भूता, एते हि अर्थावगमकारणत्वात् शब्दस्यैव प्रधान्यमिच्छन्ति, न तर्कस्य । शब्दादेवार्थश्रुतीतेः, तेषां

अपनी पर्याय है उसे ही कहता है क्योंकि वही स्वधन की तरह अपने कार्य की साधक होती है । परकीय पर्याय को वह विषय नहीं करती है कारण वह अपने कार्य की साधक नहीं होती है जैसे परका धन । इस नयकी दृष्टि में इसी कारण से पृथक्त्व—नानात्व नहीं है—अर्थात् अतीत अनागत के भेद से और परकीय भेद से यह पर्यायों में भिन्नता नहीं मानता है । किन्तु वर्तमान कालिक स्वगत पर्याय को ही वास्तविक मानता है और एक ही है ऐसा प्रतिपादन करता है । इसलिये इस नयकी मान्यतानुसार आगमद्रव्यावश्यक एक ही है—अनेक नहीं ।—अब सूत्रकार शब्द, समभिरूढ और एवम्भूत नय को लेकर आगमद्रव्यावश्यक का विचार करते हैं ।—शब्दप्रधाननयों का नाम शब्दनय है और ऐसे ये तीन नय हैं । अर्थावगम अर्थ का ज्ञान होने का कारण होने से शब्द की ही ये प्रधानता मानते हैं—अर्थ की नहीं । इन नयों की ऐसी

કાલિન) પર્યાયો અનુત્પન્ન હોય છે. વર્તમાનકાલિન પર્યાયમાં પણ જે પોતાની પર્યાય છે તેને જ તે બતાવે છે, કારણ કે એજ પોતાના ધનની જેમ પોતાના કાર્યની સાધક હોય છે. કારણ કે એજ પોતાના ધનની જેમ પોતાના કાર્યની સાધક હોય છે. પરકીય પર્યાયને તે વિષય કરતો નથી. કારણ કે અન્યના ધનની જેમ તે પોતાના કાર્યની સાધક હોતી નથી. આ નયની દૃષ્ટિએ એજ કારણે પૃથક્ત્વ-વૈવિધ્ય નથી કારણ કે અતીત અનાગતના ભેદથી અને પરકીય ભેદથી આ નય પર્યાયોમાં ભિન્નતા માનતો નથી. પરંતુ વર્તમાનકાલિક સ્વગત પર્યાયને જ તે વાસ્તવિક માને છે અને એક જ છે એવું પ્રતિપાદન કરે છે. તેથી આ નયની માન્યતા અનુસાર આગમ દ્રવ્યાવશ્યક એક જ છે અનેક નથી.

હવે સૂત્રકાર શબ્દનય, સમભિરૂઢ નય અને એવંભૂત નયની દૃષ્ટિએ આગમ-દ્રવ્યાવશ્યકનો વિચાર કરે છે—શબ્દ પ્રધાન નયોતું નામ શબ્દનય છે. અને એવાં આ ત્રણ નય છે. અર્થાવગમ (અર્થનો ઓળખ)નું કારણ હોવાથી શબ્દની જ પ્રધાનતા

જ્ઞાયકઃ-જ્ઞાતા, અથ ચ અનુપયુક્તઃ, इत्येतत् अवस्तु=असत्, न संभवतीत्यर्थः । कस्मात् एवमुच्यते ? इत्याह-‘जह’ इत्यादि-यदि ज्ञायको भवति, अथ अनुप-युक्तो न भवति, यदि अनुपयुक्तो भवति तर्हि ज्ञायको न भवति । अयं भावः-आवश्यकशास्त्रज्ञस्तत्र चानुपयुक्त आगमतो द्रव्यावश्यकमिति पूर्वं प्ररूपितम् । एतच्च शब्दादिनया न स्वीकुर्वन्ति । एतेषां मते यो हि-आवश्यकशास्त्रज्ञः सो-अनुपयुक्तो न भवितुमर्हति, यो हि-अनुपयुक्तः स आवश्यकशास्त्रज्ञो न भवितु-मर्हति, ज्ञानस्थोपयोगरूपत्वात् । एते हि शुद्धन-माश्रित्य वस्त्वभ्युपगच्छन्ति,

मान्यता है कि द्रव्य और पर्याय के संबंध में जितने विचार होते हैं उनका वर्गीकरण उपर्युक्त चार नयों में ही हो जाता है । जिनका वर्गीकरण स्वतंत्र नय द्वारा किया जाय ऐसे विचार ही शेष नहीं रहते । तथापि विचारों को प्रकट करने और इष्ट पदार्थ का ज्ञान कराने का प्रधान साधन शब्द है । इसलिये इसकी मुख्यता से जितना भी विचार किया जाता है वह सब तीन नयों की ही कोटि में आता है । ये नय यह कहते हैं कि अबतक शब्द प्रयोग की विविधता होने पर भी अर्थ में भेद स्वीकार नहीं किया गया है-परन्तु जहाँ शब्दनिष्ठ तारतम्य है उसके अनुसार अवश्य अर्थभेद है । इसीलिये ये कहते हैं कि यह बात कैसे बन सकती है कि जो आवश्यक शास्त्र का ज्ञाता है वह उसमें अनुपयुक्त है । क्योंकि ज्ञाता होने पर अनुप-युक्त-और अनुपयुक्त होने पर ज्ञाता यह असत् है-संभवित नहीं होता है ।

આ ત્રણે નયો માને છે-અર્થની પ્રધાનતા માનતા નથી. આ નયોની એવી માન્યતા છે કે દ્રવ્ય અને પર્યાયના સંબંધમાં જેટલા વિચારો હોય છે, તે વિચારોનું વર્ગી-કરણ ઉપર્યુક્ત ચાર નયમાં જ થઈ જાય છે.

જેમનું વર્ગીકરણ સ્વતંત્ર નય દ્વારા કરી શકાય એવો કોઈ વિચાર જ બાકી રહેતો નથી. છતાં પણ વિચારોને પ્રકટ કરનાર અને ઈષ્ટ પદાર્થોનું જ્ઞાન કરાવનાર મુખ્ય સાધન શબ્દ છે. તેથી તેની (શબ્દની) પ્રધાનતાની અપેક્ષાએ જેટલા વિચારો કરવામાં આવે છે તેટલા વિચારોને આ ત્રણ નયોની કોટિમાં જ મૂકી શકાય છે. તે નયો એ બતાવે છે કે હજી સુધી શબ્દ પ્રયોગની વિવિધતા હોવા છતાં પણ અર્થમાં ભેદનો સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો નથી પરન્તુ જ્યાં શબ્દ નજીક તારતમ્ય છે. તેના અનુસાર અર્થભેદ પણ અવશ્ય છે જ. તેથી તેઓ કહે છે કે-“એવી વાત કેવી રીતે સંભવી શકે કે જે આવશ્યકશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા છે. તે તેમાં અનુપયુક્ત છે, કારણકે જ્ઞાતા હોવા છતાં પણ અનુપયુક્ત હોય અને અનુપયુક્ત હોવા છતાં પણ જ્ઞાતા હોય એ વાત જ અસંભવિત હોય છે. જ્ઞાતા હોય તો તે તેમાં ઉપયુક્ત

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. ૧૬ નયમેદેન દ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૧૫

અતો યાગમકારણત્વાદાત્મદેહાદિકમાગમત્વેનોક્તં તદપ્યૌપચારિકમ્, અત-
તદાગમત્વેન ન પ્રતિપદ્યન્તે । તસ્માદેતન્મતે દ્રવ્યાવશ્યકાય અહંભાવેતિ ।
ઉક્તાદ્મુપસંહરન્નાહ—‘સે તં આગમઓ દવ્વાવસયં’ ઇતિ । તદેતદાગમતો દ્રવ્યા-
વશ્યકમ્ ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

જ્ઞાતા હૈ તો વહ ઉસ મેં ઉપયુક્ત હૈ । અનુપયુક્ત હૈ તો વહ ઉસ કા જ્ઞાતા
નહ હૈ । અતઃ આશ્યક શાસ્ત્ર કે અનુપયુક્ત જ્ઞાતા કો હેકર જો આગમદ્રવ્યા-
વશ્યક કી પ્રરૂપણા કો યે શબ્દાદિનય સ્વીકાર નહીં કરતે હૈં । ક્યોંકિ
જ્ઞાતા ઓર અનુપયુક્તતા કા સમન્વય બૈઠતા નહીં હૈ । અનુપયુક્તતા કી સ્થિતિ
મેં વહ આશ્યક શાસ્ત્ર કા જ્ઞાતા હી નહીં હો સમતા હૈ । જ્ઞાતા શબ્દ કા
અર્થ “ઉપ સંબન્ધી જ્ઞાનવાલા” એસા હોતા હૈ । જબ તત્સંબન્ધી જ્ઞાનવાલા વહ
હૈ તો ઇકા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ વહ જ્ઞાન કે ઉપયોગવાલા હૈ । ક્યોંકિ
જ્ઞાન સયં ઉપયોગરૂપ હૈ । યે તીનોં નય શુદ્ધનય કો આશ્રિત કરકે વસ્તુ કો
સ્વીકાર કરતે હૈં । ઇસલિયે જો “આગમ કે કારણ હોને સે આત્મા તદધિ-
ષ્ઠિત દેહ, ઓર શબ્દ યે આગમરૂપ હૈ” એસા કહા હૈ । ક્યોંકિ યે આગમ-
રૂપ સે નહી માને જાતે હૈં । ઇસલિયે ઇન નયોં કે મન્તવ્યાનુસાર આગમદ્રવ્યા
વશ્યક અસંભવ હી હૈ । ઇસ તરહ પૂર્વ પ્રકાન્ત આગમદ્રવ્યાવશ્યક કા સ્વરૂપ
ઇસ પ્રકાર કા વહા હૈ ।

(ઉપયોગ સંપન્ન) હોય. અને અનુપયુક્ત હોય તો તેનો જ્ઞાતા જ ન
હોય એ વાત જ સંભવી થકે છે. તેથી આવશ્યકશાસ્ત્રના અનુપયુક્ત જ્ઞાતાની અ-
પેક્ષાએ જે આગમ વ્યાવશ્યકની પ્રરૂપણા કરી છે. એ પ્રરૂપણાનો આ શબ્દાદિ ત્રણ
પ્રકારના નયોં સ્વીકાર કરતા નથી. કારણ કે જ્ઞાતા અને અનુપયુક્તતાનો સમન્વય
જ સંભવી થકતો નથી. અનુપયુક્તતાની સ્થિતિમાં તે આવશ્યકશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા જ
સંભવી થકતો નથી. (‘જ્ઞાતા’ એટલે “તેના સંબંધી જ્ઞાન ધરાવનારો.” આ પ્રકાર-
નો અર્થ સમજવો) એ તે જ્ઞાતા હોય એટલે કે તે વિષયના જ્ઞાનથી સંપન્ન હોય.
તો તેનું તાત્પર્ય એજ છે કે તે જ્ઞાનના ઉપયોગવાળો (ઉપયુક્ત) છે. કારણ કે જ્ઞાન
પોતે જ ઉપયોગરૂપ હોય છે આ ત્રણે નય શુદ્ધ નયને આધારે વસ્તુનો સ્વીકાર
કરે છે. તેથી એવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે “આગમનાં કારણરૂપ હોવાથી આત્મા
તદધિષ્ઠિત દેહ અને શબ્દ એ આગમરૂપ છે.” આ કથન પણ ઔપચારિક કથન
જ છે. કારણ કે તેમને આગમરૂપ માનવામાં આવતા નથી. તેથી આ ત્રણે નયોની
માન્યતા અનુસાર આગમદ્રવ્યાવશ્યક સંભવિત જ નથી. આ રીતે પૂર્વપ્રકાન્ત આગમ-
દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું કહ્યું છે.

११६

अनुयोगभारसूत्रे

सम्प्रति नोआगमता द्रव्यावश्यकं प्राह—

मूलम्—से किं तं नो आगमओ द्रव्यावस्सयं ? नो आगमओ द्रव्यावस्सयं तिविहं पणत्तं, तं जहा-जाणयसरीरद्रव्यावस्सयं, भवियसरीरद्रव्यावस्सयं, जाणयसरीरभवियसरीरवइरित्तं द्रव्यावस्सयं । सू० १६ ।

छाया—अथ किं तद् नोआगमतो द्रव्यावश्यकम्, नो आगमतो द्रव्या-

अयं भावः—सूत्रकार ने नैगमादि सात नयों की मान्यता को आश्रित करके आगमद्रव्यावश्यक में एकत्व अनेकत्व आदि का प्रतिपादन किया है । नैगमनय की अपेक्षा से आगमद्रव्यावश्यक में एकत्व और अनेकत्व है । संग्रहणय की अपेक्षा से उसमें केवल एकत्व है । व्यवहारनय की अपेक्षा से एक और अनेक आगम द्रव्यावश्यक हैं । ऋजुसूत्रनय की अपेक्षा से आगमद्रव्यावश्यक एक ही हैं । शब्द, समभिरूढ और एवंभूत इन तीन नयों की अपेक्षासे आगमद्रव्यावश्यक हैं ही नहीं । इन सब नयों की मान्यताओं का स्पष्टीकरण टीका के अर्थ में कर दिया गया है । ॥ सूत्र १५ ॥

अब सूत्रकार नोआगमद्रव्यावश्यक का प्रतिपादन करते हैं—

“से किं तं नो आगमओ” इत्यादि । ॥ सूत्र १६ ॥

शब्दार्थ—(से किं तं नोआगमओ द्रव्यावस्सयं) हे भदंत ! नोआगम

संक्षिप्त बोधार्थ—सूत्रकार ने नैगम आदि सात नयों की मान्यता को आधार ली है आगमद्रव्यावश्यक में एकत्व अनेकत्व आदि का प्रतिपादन किया है । नैगमनय की मान्यता अनुसार आगमद्रव्यावश्यक में एकत्व अनेकत्व है । संग्रहणय की मान्यता अनुसार तेषां मात्र एकत्व है । व्यवहारनय की मान्यता अनुसार एक आगमद्रव्यावश्यक पक्ष है अनेक द्रव्यावश्यक पक्ष है । ऋजुसूत्रनय की मान्यता प्रमाणे आगमद्रव्यावश्यक एक है । शब्दनय, समभिरूढनय अनेक एवंभूतनय आश्रिते नयों की मान्यता अनुसार आगमद्रव्यावश्यक है ही नहीं । आसंघण्य नयों की मान्यतानुं स्पष्टीकरण टीका अर्थों में करवाया है । ॥ सू० १५ ॥

इसे सूत्रकार “नोआगमद्रव्यावश्यकम्” प्रतिपादन करे छे—

“से किं तं नोआगमओ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं नोआगमओ द्रव्यावस्सयं ?) हे भगवन् ! नोआगम ने आश्रित करीने द्रव्यावश्यकनुं केवुं स्वइय छे ।

अनुयोगचन्द्रिका टीका—प्र. १६ नोआगमतो द्रव्यावश्यकमनिष्पणम्

११७

वश्यकं त्रिविधं प्रज्ञप्तम्, तथा-ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम्, भव्यशरीरद्रव्यावश्यकम्, ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यकम् ॥ सू० १६॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ किं तद् नो आगमतो द्रव्यावश्यकम् ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—
‘नोआगमओ दव्वावस्सयं तिविहं पण्णत्तं’ इत्यादि । नो आगमतो द्रव्यावश्यकं त्रिविधं प्रज्ञप्तम् । अत्र नो शब्दः सर्वथा प्रतिषेधे देशतः प्रतिषेधेऽपि च वर्तते । तथा च सर्वथा आगमाभावमाश्रित्य द्रव्यावश्यकं, तथा-देशतः आगमाभावमाश्रित्य द्रव्यावश्यकं च नोआगमतो द्रव्यावश्यकमिति । तत् त्रिविधं प्रज्ञप्तं=तीर्थं करैः प्ररूपितमिभ्यर्थः । (१) ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकं, (२) भव्यशरीरद्रव्यावश्यकम्, (३) ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्यावश्यकं चेति । तत्र—ज्ञानवानिति ज्ञायकः, शीयंते

को आश्रित कर के द्रव्यावश्यक का क्या स्वरूप है ? उत्तर—(नोआगमओ दव्वावस्सयं तिविहं पण्णत्तं) नोआगम की अपेक्षा करके द्रव्यावश्यक तीन प्रकार का प्रज्ञप्त हुआ है । (तंजहा) उसके वे तीन प्रकार ये हैं—(जाणयसरीर-दव्वावस्सयं, भवियसरीरदव्वावस्सयं, जाणयसरीरभवियसरीरवइरिक्तं दव्वावस्सयं) (१) ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक (२) भव्य शरीरद्रव्यावश्यक, और ज्ञायक शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक । नो शब्द सर्वथा प्रतिषेध में और किञ्चित् प्रतिषेध में भी आता है । नो आगमद्रव्यावश्यक में नो शब्द इन्हीं दोनों अर्थों में व्यवहृत हुआ है । इस तरह आगम के सर्वथा अभाव की और आगम के एकदेश अभाव को लेकर द्रव्यावश्यक बनता है । यह नो आगम द्रव्यावश्यक ज्ञायक शरीर आदि के भेद से ३ प्रकार का है । जो आगमशास्त्र को जान चुका है ऐसे ज्ञायक का निजीव शरीर नोआगम-

उत्तर—(नोआगमओ दव्वावस्सयं तिविहं पण्णत्तं) नो आगमनी अपेक्षा-द्रव्यावश्यकना त्रय प्रकार कहे छे । (तंजहा) ते त्रय प्रकारो नीचे प्रमाणे समझवा—

(जाणयसरीरदव्वावस्सयं, भवियसरीरदव्वावस्सयं, जाणयसरीरभविय-सरीरवइरिक्तं दव्वावस्सयं) (१) ज्ञायकशरीर द्रव्यावश्यक, (२) भव्यशरीर द्रव्यावश्यक अने ज्ञायकशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक.

टीका—“नो” शब्द सर्वथा निषेध अथवा अंशतः निषेधना अर्थों में व्यवहृत छे. “नोआगम द्रव्यावश्यकमां” के “नो” शब्द आन्वये छे ते उपर्युक्त अर्थों में व्यवहृत छे. आ हीते आगमना सर्वथा अभावने अने आगमना के देशतः अभावने लघने द्रव्यावश्यक णने छे. आ नोआगमद्रव्यावश्यक ज्ञायक शरीर आदिना लेखी त्रय प्रकारनो कही छे. के आगमनुं जाणुं युक्त छे जेवना ज्ञायकनुं निजीव शरीर नो आगमद्रव्यावश्यक छे. आगामी जाणमां के लघ विवक्षित

૧૧૮

અનુયોગદ્વારસૂત્ર

પ્રતિષ્ઠાનં ક્ષીયતે ઇતિ શરીરં, જ્ઞાયકશરીરં જ્ઞાયકશરીરં તદેવ દ્રવ્યાવશ્યકમિતિ ત્રિગ્રહઃ
 જીવપરિત્યક્તમાવશ્યકશાસ્ત્રજ્ઞાનંવતઃ શરીરં જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ । વિવ-
 ક્ષિતપર્યાયિણ મવિવિષ્યતીતિ મન્યસ્તસ્ય શરીરં માત્રિભાવાવશ્યકકારણત્વાત્ દ્રવ્યા-

દ્રવ્યાવશ્યક છે । વિવક્ષિત પર્યાય સે યુક્ત જો આગામી કાલ મેં હોગા ઉસકા
 નામમન્ય છે । માત્રિ ભારૂપ આવાક કા કારણ હોને સે ઉસકા શરીર મન્ય
 શરીર દ્રવ્યાવશ્યક છે જ્ઞાયક શરીર ઓર મન્યશરીર ઇન દોનોં સે ભિન્ન જો
 દ્રવ્યાવશ્યક છે વહ જ્ઞાયક શરીર-મન્ય શરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક છે । ઇસ
 પ્રકાર યહ ત્રીન પ્રકાર કા નો આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે ।

માવાર્થ—નો આગમદ્રવ્યાવશ્યક કા સ્વરૂપ પ્રકટ કરને કે લિયે સૂત્ર-
 કાર ને ઇસકે ત્રીન ભેદ કિયે છે—(૧) જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક, (૨) મન્ય
 શરીરદ્રવ્યાવશ્યક ઓર (૩) તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક । નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક
 મેં નો શબ્દ આગમ કે સર્વથા નિષેધ કરને મેં પ્રયુક્ત હુઆ છે—તથા ચ—જીવ
 પહિલે આવશ્યકશાસ્ત્ર વા જ્ઞાના થા વહ જવ મર જાના છે—પર્યાયાન્નરિત હો
 જાતા છે તવ ઉસ સમય કા નિર્જીવ શરીર છે વહ આગમાભાવ સે વિશિષ્ટ
 હોને કે કારણ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક છે । ઇસી તરહ જો આગામી કાલ
 મેં આવશ્યકશાસ્ત્ર કા જ્ઞાતા હોગા એસે ઉસકા જો શરીર છે વહ મન્યશરીર

પર્યાયથી યુક્ત થવાનો છે, તેને ભવ્યભવ કહે છે. ભાવિ સ્વભાવરૂપ આવશ્યકત્વ કારણ
 હોવાથી તેનું શરીર ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક ગણાય છે. જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યાવશ્યક
 અને ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યકથી ભિન્ન જે દ્રવ્યાવશ્યક છે તેને જ્ઞાયકશરીર-ભવ્ય-
 શરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક કહે છે. આ પ્રમાણે આ ત્રણ પ્રકારનો આ
 નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક છે.

ભાવાર્થ—નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યકત્વ સ્વરૂપ પ્રકટ કરવા નિમિત્તે સૂત્રકારે તેના
 નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ કહ્યા છે—

(૧) જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક (૨) ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યક, (૩) તદ્વ્યવ્યતિરિક્ત
 (અન્નેથી ભિન્ન) દ્રવ્યાવશ્યક.

નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યકમાં “નો” પદ આગમનો સર્વથા નિષેધ કરવામાં
 પ્રયુક્ત થયો છે. જેમકે—

જે ભવ પહેલાં આવશ્યકશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા હોતો, તે જ્યારે મરણ પામે છે—અન્ય
 પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, તે સમયનું તેનું જે નિર્જીવ શરીર હોય છે તે આગમના
 અભાવવાળું હોવાને કારણે જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક રૂપ ગણાય છે. એજ પ્રમાણે
 જે ભવ ભવિષ્યમાં આવશ્યકશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા થવાનો છે; તે ભવના શરીરને ભવ્ય

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૭ જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૧૯

અવશ્યકં મન્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ । જ્ઞાયકશરીરમન્યશરીરગમ્યાં વ્યતિરિક્ત-ભિન્ન
દ્રવ્યાવશ્યકં હત્યેવં ત્રિવિધં નોઆગમતા દ્રવ્યાવશ્યકં બોધ્યમ્ ॥ સૂ. ૧૬ ॥

તત્ર પ્રથમભેદં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલ—મે કિં તં જાણયસરીરદ઼્વાવસ્સયં ? જાણયસરીર-
દ઼્વાવસ્સયં આવસ્સણ્તિ પયત્થાહિગારજાણયસ્સ જં સરીરયં વવગય-
ચુયચવિયચત્તદેહં જીવવિપ્પજઠં સિજ્ઞાગયં વા સંથારગયં વા નિસી-
હિયાગયં વા સિદ્ધસિલાતલગયં વા પાસિત્તા ણં કોઈ મળેજ્ઞા અહો !
इमेणं सरीरसमुस्सएणं जिणदिट्ठेणं भावेणं आवस्सएत्तिपयं आघ-
वियं पणवियं परूवियं दंसियं निदंसियं उवदंसियं । जहा को दि-
ट्ठतो ? अयं महुकुंभे आसी, अयं घयकुंभे आसी से तं जाणयसरीर-
दवावस्सयं ॥ सू. ૧૭ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ આ-
વશ્યકેતિ પદાર્થાધિકારજ્ઞાયકસ્ય યત્ શરીરકં વ્યવગતચ્યુતત્ત્યત્તિત્યક્તદેહં જીવ-

દ્રવ્યાવશ્યકં છે । તથા ઇન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત જો દ્રવ્યાવશ્યકં છે વહ તદ્વ્ય-
તિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકં છે । ॥ સૂત્ર ૧૬ ॥

અવ સૂત્રકાર નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક કા જો પ્રથમ ભેદ જ્ઞાયક શરીર
દ્રવ્યાવશ્યકં છે ઉસે વિશેષરૂપ સે સ્પષ્ટ કરતે હૈ—

‘સે કિં તં જાણયસરીરદ઼્વાવસ્સયં’ ઇત્યાદિ । ॥ સૂ. ૧૭ ॥

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં જાણયસરીરદ઼્વાવસ્સયં) હે મદંત ! જ્ઞાયક
શરીર દ્રવ્યાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

શરીર દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ માનવામાં આવે છે. તથા આ બન્ને કરતાં ભિન્ન એવો એ
દ્રવ્યાવશ્યક છે તેને તદ્વ્યવ્યતિરિક્ત (ઉભયથી ભિન્ન) દ્રવ્યાવશ્યક કહે છે. ॥ સૂ. ૧૬ ॥

‘નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક’ નો, જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક નામનો એ પહેલો
ભેદ છે તેનું સૂત્રકાર હવે વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—

‘સે કિં તં જાણયસરીરદ઼્વાવસ્સયં’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં જાણયસરીરદ઼્વાવસ્સયં) હે ભગવન ! જ્ઞાયક
શરીર દ્રવ્યાવશ્યકનું કેવું સ્વરૂપ કહ્યું છે ?

विप्रहीणं शय्यागतं वा संस्तारगतं वा नैषेधिकीगतं वा सिद्धशिलातलगतं वा दृष्ट्वा खलु कोऽपि भणेत—अहो ! अनेन शरीरसमुद्भवेण जिनदृष्टेन भावेन आश्चर्यकेतिपदम् आघवितं प्रज्ञापितं प्ररूपितं दर्शितं निदर्शितम् उ दर्शितम् ।

उत्तर—(आवरसएत्ति पयत्थाहिगारंजाणयरस जं सरीरं) आवश्यक पदवाच्य आगम के अर्थरूप अधिकार के ज्ञाता वा—अर्थात् आवश्यकपद के अर्थ को जाननेवाले साधु आदि का—ऐसा शरीर कि जो (ववगयचुयचवियचत्तदेहं) व्यपगत चैतन्यपर्याय से रहित है, च्युत-बलिष्ठ आयुक्षय के कारणों से प्राण रहित है रक्तदेह-आहारपरिणति जनित वृद्धि जिससे सर्वथा निकलचुकी है (जाणयरसरीरदन्वावरसयं) ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक है । इसी अर्थ का स्पष्ट ज्ञान होने के लिये सूत्रकार शब्दान्तर से इसका वर्णन करते हैं (जीवविषज्जं सिज्जागयं वा संथारगयं वा निवीहियागयं वा सिद्धशिलातलगयं वा पासिच्चा णं कोई भणोज्जा) वे कहते हैं कि जब इस प्रकार के प्राण रहित शरीर को शय्या पर देखकरके, संस्तारगत देखकरके स्वाध्यायभूमि अथवा स्मशानभूमि गत देखकरके या सिद्ध शिलातलगत देखकरके वे कहते हैं कि (अहो) अहो ! (इमेणं) इस (सरीरसमुस्सएणं) शरीररूप पुद्गल संघात ने (जिनदिट्ठेणं भावेणं) तीर्थंकरों द्वारा मान्य हुए कर्म निर्जरण के अभिप्राय से अथवा तदावरण के क्षय, क्षयोपशमरूप भाव से अर्थात् ज्ञानावरणीयकर्म के क्षय

उत्तर—(आवरसएत्ति पयत्थाहिगारं जाणयरस्स जं सरीरं) आवश्यक पदवाच्य आगमना अर्थरूप अधिकारना ज्ञातानुं ओटले के आवश्यकसूचना अर्थने ज्ञानाना साधु आदिनुं ओपुं शरीर के जे (ववगयचुयचवियचत्तदेहं) व्यपगत-चैतन्य पर्यायशी रहित छे, च्युत-दृढ प्रकारना प्राणोशी परिवर्जित (रहित) छे, रक्तदेह आहारपरिणति जनित वृद्धि जेभांशी संपूर्ण नीकणी चुकी छे, (जाणयर सरीरदन्वावरसयं) ओवा शरीरने “ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक” कहे छे, आ अर्थने वधु स्पष्ट ज्ञान आपवाना हेतुशी सूत्रकार अन्य शब्दों द्वारा तेनुं वर्णन करे छे—

(जीवविषज्जं सिज्जागयं वा, संथारगयं वा, निवीहियागयं वा, सिद्धशिलातलगयं वा पासिच्चाणं कोई भणोज्जा) आ प्रकारना प्रखुरहित शरीरने शय्या पर देणीने, संस्तारगत देणीने, स्वाध्यायभूमि अथवा स्मशानभूमिगत देणीने अथवा सिद्धशिलागत देणीने तेओ कहे छे के—(अहो) अहो ! (इमेणं सरीरसमुस्सएणं) आ शरीर रूप पुद्गल संघाते (जिनदिट्ठेणं भावेणं) तीर्थंकर लगवाना द्वारा मान्य दयेला कर्मनिर्जरणना अभिप्रायशी अथवा तदावरणना क्षय, क्षयोपशम रूप भावशी ओटले के ज्ञानावरणीय कर्मना क्षय क्षयोपशम अनुसार (आवरसएत्तपयं)

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० १७ ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकनिरूपणम् १२१

यथा को दृष्टान्तः ? अयं मधुकुम्भ आसीत्, अयं घृतकुम्भ आसीत् । तदेतत् ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम् ॥ सू० १७ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । हे भदन्त ! अथ किं तत् ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम् ? उत्तरमाह—‘जाणदसरीरद्रव्यावस्यं’ इत्यादि । ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकं दर्शयते इत्यर्थः । आवश्यवेति पदार्थाधिकारज्ञायकस्य—आवश्यवेतिपदस्य=आवश्यपदवाच्यस्य आगमस्य यः अर्थाधिकारः=अर्थ एव अर्थाधि, कारः तस्य ज्ञायकः=ज्ञाता, तस्य आवश्यकमर्थार्थं ज्ञातवतः साध्वादे येत् शरीरम् ।

छयोपशम के अनुसार (आवस्यएत्तिपयं) आवश्यकसूत्र वा विशेषरूप से (आध-वियं) गुरु से ज्ञान प्राप्त किया था (पणवियं) सामान्यरूप से उसे शिष्यों को समझाया था । (परुविंयं) सूत्रार्थ वचनपूर्वक फिर उसे शिष्यजनों को पढ़ाया था (दंसियं) प्रतिलेखनादि क्रियारूप में उसे स्वयं ने अपनी आत्मा में उतारा था । और बाद में इसी रूप में दूसरों को दिखलाया था—अर्थात् प्रतिलेखनादि क्रिया के प्रदर्शन से यह प्रकट किया था कि दोनों समय समस्त भंड पकरणों की प्रतिलेखना करनी आवश्यक हैं । अंगुल मात्र वस्त्र खण्ड भी बिना प्रतिलेखना के नहीं रहना चाहिये । (निदंसियं) आवश्यकशास्त्र के ग्रहण करने में जो शिष्यजन अक्षम थे उनके लिये इसने करुणावश होकर बार २ आवश्यकशास्त्रग्रहण कराया था । (उवदंसियं) सर्वनय और युक्तियों द्वारा शिष्यजनों के हृदयस्थान में इसे बिना किसी संदेह के इसने जमाया था अतः वह शरीरज्ञायक शरीरद्रव्यावश्यक हैं ।

आवश्यक सूत्रतुं विशेषरूपे (आधवियं) गुरु पास से अध्ययन कथुं हतुं—ज्ञान प्राप्त कथुं हतुं । (पणवियं) सामान्यरूपे तेष्ते शिष्येभ्यो ते समञ्जस्युं हतुं । (परुविंयं) सूत्रार्थना वचनपूर्वक तेष्ते शरीरि शिष्यजनाने तेनुं अध्ययन कराव्युं हतुं । (दंसियं) प्रतिलेखनादि क्रियारूपे तेष्ते पोते पोताना आत्माभां उतायुं हतुं, अने त्थार भाद ओव रूपे शिष्येभ्यो जताव्युं हतुं, ओटवे के प्रतिलेखना आदि क्रियाना प्रद-शंनधी ओ प्रकट कथुं हतुं के जन्ने समय समस्त पात्र वस्त्रादि उपकरणोनी प्रतिलेखना करनी आवश्यक छे । वस्त्रो ओक धंय नेटलो लाग पण प्रतिलेखना बिनानो रह्यो ओधओ नहीं । (निदंसियं) आवश्यकशास्त्रने ग्रहण करवाने के शिष्यो अक्षम हुता, तेमना प्रत्ये करुणाकाव राणीने तेष्ते तेमने बार-बार आवश्यक सूत्र ग्रहण करावानो प्रयत्न कथो हुतो । (उवदंसियं) जथा नय अने युक्तिओ द्वारा तेष्ते शिष्यजनाना हृदयस्थानभां निःशंरूपे तेने अवधान करव्युं हतुं । तेथी तेनुं आ शरीर ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक छे ।

કીદંશં જ્ઞાયવદરીર દ્રવ્યાદ્યકં મદતીત્યાહ—‘વવગય’ इत्यादि । व्यपगतचतु-
 र्यावितत्यक्तदेहं—व्यपगतं=दैतन्पर्यायः हितम्, उत एव—चतुर्तं=दशविधप्राणेभ्यः
 परिवर्जितम्, र्यावितम्=बलवताऽऽयुःक्षरेण प्राणेभ्यः परिशंसितम्, त्यक्तदेहं—
 त्यक्तो देहः=आहारपरिणतिजनित उपचयो देन तत्तथा, व्यपगतादीनां चतुर्णां
 कर्मभारयः । अमुमेवार्थं स्पष्टप्रतिपत्तये शब्दान्तरेणाह—‘जीवविष्यजदं’ इति,
 जीवविप्रहीणं=जीवात्मना सर्वथा परित्यक्तं तत् शय्यागतं वा—शय्या शरीरप्रमाणा
 तत्र गतं=स्थितं दृष्ट्वा संस्तारगतं वा संस्तारेऽर्धहृतीयहरतप्रमाणरतत्र गतं दृष्ट्वा
 नैषेधिकीगतं वा—नैषेदिकी स्वाध्यायभूमिः अशान्भूमिश्च तत्र गतं दृष्ट्वा सिद्ध-
 शिलातलगतं वा—अनेकविधतपःपरिशोषितदरीराः साधवो यत्र स्वरमेवगत्वा
 भक्तप्रत्याख्यानरूपमनशनं कृतवन्तः, कुर्वन्ति, वरिणन्ति च, तत् सिद्धशिला-
 तलम्, यद्वा यत्र कश्चिद् महर्षिः सिद्धरतत् सिद्धशिलातलम्, तत्र गतं=स्थितं दृष्ट्वा
 खलु कोऽपि श्रावकादिः, भगतिः=कथयति—‘अहो !’ अहो इति दैन्ये, विस्मय,
 आमन्त्रणे च ‘अनित्यं शरीरम्’ दैन्यम् । ‘आवश्यकं ज्ञातम्’ इति विस्मयः ।
 पार्श्वस्थं प्रति आमन्त्रणम् । त्रितयोऽप्यर्थोऽत्र संगच्छते । खलु अनेन=प्रत्यक्ष-
 तया परिदृश्यमानेन शरीरसमुच्छ्रयेण=शरीरमेव समुच्छ्रयः पुद्गलसंघातस्तेन
 जिनदृष्टेन तिथेङ्करामितेन भावेन=कर्मनिर्जराभिप्रायेण, यद्वा—तदावरणक्ष-
 क्षयोपशमलक्षणेन आवश्यकवेतिपदम्—आवश्यकशास्त्रम्, आगृहीतम्=गुरोः सका-
 शादधिगतम्, प्रज्ञापितम्—सामान्यरूपेण शिष्येभ्यः कथितम्, प्ररूपितम्=सुत्रार्थ-
 कथनपूर्वकं शिष्येभ्योऽध्यापितम्, दर्शितम्=प्रतिलेखनादिक्रियायाः प्रतिलेखनी-
 यम् अर्गुलमात्रं वस्त्रखण्डमपि अप्रतिलेखनेन न स्थापनीयम्, इति । निदर्शितम्—

શંકા—અચેતન હોને સે શરીરરૂપ પુદ્ગલ સ્વંધ જબ આવશ્યકશાસ્ત્ર વા
 જ્ઞાતા હી નહીં હો સકતા હૈ તબ સૂત્રકાર વા “આવસ્સણ્તિ પદં આધવિયં”
 આદિ વહના સંગત પતીત નહીં હોતા હૈ । ક્યોંકિ પ્રહ્ણ કરના પ્રરૂપણાઆદિ
 કરના યે સર્વ ક્રિયાએ જીવ કે સાથ સંબન્ધિત હોતી હૈ । અતઃ જીવ
 કે ધર્મ હોને કે કારણ હનકી ઘટના શરીર કે સાથ નહીં હો
 સકતી હૈ ? સો ઇસ આશંકા કા ઉત્તર ઇસ પ્રકાર

શંકા—અચેતન હોવાને કારણે શરીરરૂપ પુદ્ગલ સ્વંધ જો આવશ્યકશાસ્ત્રના
 જ્ઞાતા જ હોઈ શકતા નથી, તે સૂત્રકારનું “આવસ્સણ્તિ પદં આધવિયં” આ પ્રકાર
 નું કથન સંગત લાગતું નથી. કારણ કે ગ્રહણ કરવાની અને પ્રરૂપણા આદિ કરવાની
 ક્રિયાઓ તે જીવની સાથે સંબંધ ધરાવનારી હોય છે. આ ક્રિયાઓ જીવના ધર્મ
 રૂપ હોવાને કારણે મૃત શરીરમાં તેને કેવી રીતે ઘટાવી શકાય ? ચેતન્ય સુકૃત
 શરીરમાં જ આ ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે.

અયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૧૭ જ્ઞાપકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૨૩

આવશ્યકશાસ્ત્રગ્રહણાક્ષમેભ્યઃ શિષ્યેભ્યઃ કરુણાવશાત્ પુનઃ પુનર્દર્શિતમ્, ઉપદર્શિતમ્=સર્વનયયુક્તિભિશ્ચ પ્રદર્શિતમ્ । અતઃ इदं शरीरं ज्ञापकशरीरद्रव्यावश्यकम् !

નન્વનેન શરીરસમુચ્છ્રેણાઽઽવશ્યકમાગૃહીતમિત્યાદિ નોપપદ્યતે, ગ્રહણ-પ્રરૂપણાદીનાં જીવધર્મત્વેન શરીરસ્થાપટમાંત્વાત્, इति चेदुच्यते-भूतपूर्वमाश्रित्य तत्कथितम्, અતો નાસ્તિ દોષઃ । નનુ शय्यादिगतं साधुशरीरं दृष्ट्वा कश्चित् पूर्वोक्तप्रकारेण वदति, પરન્તુ તસ્ય દ્રવ્યાવશ્યકત્વં ન સંભવતિ, “भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारणं तु यल्लोके । तद्रव्यं तत्त्वज्ञैः सचेतनाचेतनं कथितम्” इति पूर्वोक्तवचनान् आवश्यकपर्यायस्य कारणमे । द्रव्यावश्यकं भवितुमर्हति । आवश्यकपर्यायस्य कारणं तु चेतनाधिष्ठितमेव शरीरम्, नत्वचेतनम्, अतो निर्जीव

સે હૈ કિ જ્ઞાપક શરીર કો જો દ્રવ્યાવશ્યક કહા હૈ વહ ભૂતપૂર્વ કો (અર્થાત્ ભૂતકાલ કી અપેક્ષા કો) લેવર કહા હૈ । અર્થાત્ જબ રહ શરીર ચેતનાધિષ્ઠિત થા—તબ ઉસ કે સંબન્ધ સે યહ ઉસ શાસ્ત્ર કીપ્રરૂપણા આદિ કરતા થા । અતઃ इसमें कोई दोष नहीं हैं ।

શંકા-શય્યાદિગત સાધુ કે શરીર કો દેખ વરકે યદિ કોઈ પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે વહતા હૈ તો ભલે કહો । પરન્તુ ઉસ શરીર મેં દ્રવ્યાવશ્યકતા સંભવિત નહીં હંતી હૈ ક્યોં કિ ભૂત અથવા ભાવી પર્યાય કા જો કારણ હૈ—ચાહે વહ સચેતન હો ચાહે અચેતન હા વહી તત્ત્વજ્ઞોં કી દૃષ્ટિ મેં દ્રવ્ય—દ્રવ્ય નિક્ષેપ કા વિષય માના ગયા હૈ । અતઃ इस कथन से आवश्यकपर्याय का कारण ही द्रव्यावश्यक होने के योग्य हो सकता है । सो ऐसे द्रव्यावश्यक का ऐसा कारण तो चेतनाधिष्ठित शरीर ही होता है, अचेतन शरीर नहीं । इसलिये निर्जीव शय्यादिगत साधु शरीर द्रव्यावश्यक नहीं हो सकता है ।

આ શંકાનું સમાધાન નીચે પ્રમાણે સમજવું—

જ્ઞાપક શરીરને જે દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવ્યું છે, તે ભૂતપૂર્વની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે. એટલે કે જ્યારે તે શરીર ચેતન્યથી યુક્ત હતું ત્યારે તે આ શાસ્ત્રની પ્રરૂપણા આદિ કરતું હતું. તેથી આ પ્રદારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી.

શંકા—શય્યાદિગત સાધુના શરીરને જોઈને કોઈ પૂર્વોક્ત પ્રકારે કહેતા હોય તો ભલે કહે, પરન્તુ એ શરીરમાં દ્રવ્યાવશ્યકતા તો સંભવી જ શકતી નથી । કારણ કે ભૂત કે ભાવી પર્યાયનું જે કારણ છે—જેલે તે સચેતન હોય અથવા જલે તે અચેતન હોય. પણ એને જ તત્ત્વજ્ઞો દ્રવ્ય—દ્રવ્યનિક્ષેપને વિષય માને છે. તેથી આ કથન અનુસાર તો આવશ્યકપર્યાયનું કારણ જ દ્રવ્યાવશ્યક ગણવાને યોગ્ય હોઈ શકે છે. અને એવા દ્રવ્યાવશ્યકનું એવું કારણ તો ચેતનાયુક્ત શરીર જ હોઈ શકે છે, અચેતન શરીર એવાં કારણરૂપ ણની શકતું નથી. તે કારણે શય્યાદિગત નાનુજ સાધુનું શરીર દ્રવ્યાવશ્યક હોઈ શકતું નથી.

શર્યાદિગતં સાધુશરીરં દ્રવ્યાવશ્યકં ભવિતું નાર્હતીતિ ચેદુચ્યતે—યદપિ તસ્મિન્ કાલે ચૈતન્યાભાવાત્ શરીરસ્ય દ્રવ્યાવશ્યકત્વં નાસ્તિ, તથાપિ અતીતપર્યાયાનુવૃત્ત્યા-ભ્યુપગમપરનાનુવૃત્ત્યાઽતીતમાવશ્યકપર્યાયકારણભ્રમપેક્ષાસ્ય દ્રવ્યાવશ્યકત્વં बोध्यमिति नास्ति काचिद् विप्रतिपत्तिः । अत्रार्थे शिष्यो दृष्टान्तं पृच्छति—‘जहा कं दि-द्वतो’ इति । यथा को दृष्टान्तः=अत्र यथा कश्चिद् दृष्टान्तो भवेत्, तथा कथय-तु ? इति शिष्यपृच्छायां दृष्टान्तमाह—‘अयं महुकुंभे आसी, अयं घयकुंभे आसी’ इति । अयं मधुकुम्भ आसीत्, अयं घृतकुम्भ आसीत् इति । अयं भावः—यथा कोऽपि कस्मिंश्चिद् घटे घृतं वा मधु वा भृत्वा समानीतवान्, पुनस्तत्तत्तदपसारितवान्, अपसारिते तस्मिन्-अयं घृतकुम्भ आसीत्, अयं मधुकुम्भ आसीदिति

સો આ શંકા કા ઉત્તર આ પ્રકાર સે છે કે યદપિ આ કાલ મેં ચેતના નહીં હોને સે આ શરીર મેં દ્રવ્યાવશ્યકરૂપતા નહીં છે તો ધી ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપન નય કી અપેક્ષા સે અતીત આવશ્યક પર્યાય કે પ્રતિ કારણતા આમે ધી આ માનકર આમે દ્રવ્યાવશ્યકતા જાનની ચાહિયે । આ તરફ આ કથન મેં કોઈ દોષ નહીં છે । શિષ્યજનાં કો સમજાને કે લિયે આ વિષય મેં સુત્રકાર દૃષ્ટાન્ત કહતે છે ક્યોંકિ (જહા કોદિદ્વતો) આંહોને આ પદોંદ્વાર આ પૂછા છે કે હે ગુરુ મહારાજ ! આ વિષય મેં જૈસા કોઈ દૃષ્ટાન્ત હો વૈસા આપ કહિયે । (અયં મહુકુંભે આસી અયં ઘયકુંભે આસી) તવ વે શિષ્ય કો દૃષ્ટાન્ત કહતે છે કે જિસ પ્રકાર કોઈ વ્યક્તિ ઘડે મેં મધુ યા ઘૃત ભરકર લાગા ઓર ફિર આમે સે આ મધુ યા ઘૃતકો નિકાલ લિયા ધી વહ આ મધુ મધુકુંભ યા યા વહ ઘૃતકુંભ યા આ પ્રકાર સે કહતા છે । ઓર આ વ્યવહાર ધી લોક મેં આમે ભૂતકાલિક મધુ યા ઘૃત કા આધાર-

આ શંકાતું હવે સમાધાન કરવામાં આવે છે—

જો કે તે કાળે તે સાધુશરીરમાં ચેતનાનો સદ્ભાવ નથી અને તે કારણે તે શરીરમાં દ્રવ્યાવશ્યકરૂપતાનો સદ્ભાવ નથી, પરંતુ ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાએ અતીત (ભૂતકાલિન) આવશ્યકપર્યાયના કારણે તે તેમાં સદ્ભાવ હતો જ, એમ માનીને તેમાં દ્રવ્યાવશ્યકતા બાજુથી જોઈએ. આ રીતે વિચારવામાં આવે તો આ કથનમાં કોઈ દોષ નથી, આ વિષય શિષ્યજનોને સારી રીતે સમજાવવા માટે સુત્રકાર એક દૃષ્ટાન્ત આપે છે, (જહા કો દિદ્વતો) કારણ કે શિષ્યો દ્વારા જ આ પ્રકારનું સૂચન કરવામાં આવ્યું છે “હે ગુરુમહારાજ ! આ વિષયનો અમને સચોટ ખ્યાલ આવે તે માટે એવું કોઈ દૃષ્ટાન્ત હોય, તો આપ અમને તે કહી સંભળાવવાની કૃપા કરો.”

(અયં મહુકુંભે આસી અયં ઘયકુંભે આસી) શિષ્યજનોની આ વિનંતિને ધ્યાનમાં લઈને ગુરુ નીચેનું દૃષ્ટાન્ત આપે છે—કોઈ એક વ્યક્તિ એક ઘડામાં મધ અથવા ઘી ભરીને આવે છે. ત્યાર બાદ તે તેમાંથી મધ અથવા ઘી કાઢી નાખે છે અથવા વાપરી નાખે છે. છતાં પણ તે એવું કહે છે કે “આ મધનો ઘડો છે અથવા આ ઘીનો ઘડો છે.” ભૂતકાળમાં તે કુંભ મધ અથવા ઘીને ભરવા

અનુયોગચંદ્રિકા ટીકા. સૂ. ૧૭ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૨૫

ભૂતકાલિક ઘૃતમધ્વાધારસ્ત્વેન લોકે વ્યપદિધ્યતે । તથૈવ ભૂતકાલિકાવશ્યકપર્યાય
કારણત્વાધારસ્ત્વેન નિર્જીવં શય્યાગતં શરીરમપિ દ્રવ્યાવશ્યકમુચ્યતે, ઇતિ ।

અર્થ પૂર્વોક્ત જીવ વિપ્રમુક્તં શય્યાદિગતં સાધુશરીરં નોઆગમતો દ્રવ્યા-
વશ્યકં ભવતિ । આવશ્યકાર્થજ્ઞાનલક્ષણસ્ય આગમસ્ય તદાનીં તચ્છરીરે સર્વથાઽભાવાત્ ।

‘ચુય’ ઇત્યુત્ત્વા ‘ચાવિય’ ઇતિ પુનરભિધાને સ્વભાવવાદિનો મતનિરાકર-
ણાર્થમ્ । સ્વભાવવાદિનાં હિ સ્વભાવત એવ મરણં મન્યન્તે, પરન્તુ સ્વભાવસ્ય સર્વદા
વર્તમાનત્વેન સર્વદા તત્પ્રસન્નાત્, અતઃ આયુઃ ક્ષયેનૈવ પ્રાણિનાં પ્રાણાઃ શરીરા-
નિર્ગચ્છન્તીતિ સૂચયિતું ‘ચાવિય’ ઇત્યુક્તમ્ ।

વાલા હોને સે વ્યપદિષ્ટ હોના હૈ । ઉસી પ્રકાર ભૂતકાલીન આવશ્યક પર્યાય
કા કારણરૂપ આધારવાલા હોને સે નિર્જીવ શય્યાદિગત શરીર મી દ્રવ્યાવશ્યક
કહા જાતા હૈ । ઇસ તરહ પૂર્વોક્ત જીવ વિપ્રમુક શય્યાદિગત સાધુ આદિ કા
શરીર નોઆગમકી અપેક્ષા લેકર દ્રવ્યાવશ્યક હોતા હૈ । કયોંકિ ઉન અવસ્થા
મેં આવશ્યક કા અર્થજ્ઞાનરૂપ આગમ કા ઉસ શરીર મેં સર્વથા અભાવ હૈ “ચુય”
એસા કહકરકે મી જો સૂત્રકાર ને “ચાવિય” એસા કહા હૈ વહ સ્વભાવવાદી
મત કો નિરાકરણ કરને કે લિયે કહા હૈ, કયોંકિ સ્વભાવવાદિગોં કી એસી
માન્યતા હૈ કિ મરણ સ્વભાવ સે હી હોતા હૈ । પરન્તુ યહ ઉનકી માન્યતા ઠીક
નહીં હૈ કયોંકિ મરણ સ્વભાવ તો સર્વદા વર્તમાન હી રહતા હૈ—અતઃ સર્વદા
મરણ હોને કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ । ઇસલિયે ઇસ પદ સે યહ વત ટાયા ગયા
હૈ કિ જવ આયુ કા ક્ષય હોતા હૈ તમી પ્રાણિયોં કે પ્રાણ શરીર સે નિકલતે

માટે વપરાતો હોતો. તે કારણે લોકોમાં તેને મધ્યના ઘડો અથવા ધીનો ઘડો કહેવાનો
વ્યવહાર થતો જોવામાં આવે છે. એજ પ્રમાણે ભૂતકાલિન આવશ્યક પર્યાયનાં કારણ
રૂપ આધારવાળું હોવાથી નિર્જીવ શય્યાદિગત શરીર પણ દ્રવ્યાવશ્યક જ કહેવાય
છે. આ પ્રકારે પૂર્વોક્ત જીવવિપ્રમુક્ત (પ્રાણીથી રહિત) શય્યાદિગત સાધુ આદિનું
શરીર નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યક હોય છે. કારણ કે તે અવસ્થામાં આવ-
શ્યકના અર્થજ્ઞાનરૂપ આગમનો તે શરીરમાં બિલકુલ અભાવ હોય છે.

“ચુય” અથવા “ચુત” આ પદનો પ્રયોગ કર્યા બાદ “ચાવિય” અથવા “ચાવિત” આ
પદનો જે પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે સ્વાભાવવાદીઓના મતનું નિરાકરણ કરવા
માટે કરવામાં આવેલ છે. સ્વાભાવવાદીઓની એવી માન્યતા છે કે મરણ તો સ્વાભા-
વિક રીતે જ થાય છે. તેમની તે માન્યતા બરાબર નથી. કારણ કે મરણસ્વભાવ તો
સર્વદા વિદ્યમાન રહે છે. અને તેમની માન્યતા સ્વીકારવામાં આવે તો સર્વદા મરણ
થકાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે. તેથી તેમની તે માન્યતા ખોટી છે. “ચાવિય” આ પદનો

સમ્પ્રત્યુપસંહરન્નાહ—‘સે તં જાણયસરીરદ્રવ્યાવશ્યય’ ઇતિ । તદેતત્ જ્ઞા’ક શરીરદ્રવ્યાવશ્યકં વર્ણિતમ્ । ઇતિ ॥ સૂ. ૧૭ા

हैं । इतना बचनकर अब सूत्रकार इसका उपसंहार करते हुए कहते हैं कि— (से तं जाणयसरीरद्रव्यावश्यं) इस प्रकार पूर्वोक्त ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यक का यह वर्णन है ।

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा ज्ञायकशरीर द्रव्यावश्यक का स्वरूप वर्णन किया है । यह बात पहिले स्पष्ट की जा चुकी है कि भूत या भविष्यत् का कारण ही द्रव्य होता है । अतः जो साधु आदि आवश्यकशास्त्र को जान रहा है परन्तु उसका उसमें उपयोग नहीं है ऐसा वह साधु आदि वा जीव द्रव्यावश्यक है । इस द्रव्यावश्यक का भेद ही नोआगम द्रव्यावश्यक है । जिस साधुने पहिले आवश्यक सूत्र का सविधिज्ञान प्राप्तकर लिया था और जब वह पर्याप्तान्तरित होता है—तो उसका वह निजीव शरीर आवश्यक सूत्र के ज्ञान से सर्वथा अभावविशिष्ट होने के कारण ही नोआगमज्ञायकशरीर-द्रव्यावश्यक है । आगमज्ञान जिस में बिल्कुल नहीं है ऐसा वह शरीर उस आगम के ज्ञाता का है कि जिसने उा आगम को जाना तो था परन्तु वह उसमें उपयोग से विहीन था । इस तरह नोआगमज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक पदों के अर्थ से वह निजीव शय्यादिगत साधु का शरीर नोआगमज्ञायक

પ્રયોગ કરીને એ વાતનું પ્રતિભાદન કરવામાં આવ્યું છે કે જ્યારે આયુકર્મનો ક્ષય થાય છે ત્યારે જ પ્રાણીઓનાં પ્રાણ શરીરમાંથી નીકળી બાહ્ય છે.

હવે સૂત્રકાર આ સૂત્રનો ઉપસંહાર કરતાં આ પ્રમાણે કહે છે—(સે તં જાણય સરીરદ્રવ્યાવશ્યય) આ પ્રકારનું પૂર્વોક્ત જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યાવશ્યકના સ્વરૂપનું વર્ણન કર્યું છે. એ વાત તો પહેલાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે જૂન અથવા ભવિષ્ય પર્યાયનું કારણ જ દ્રવ્ય હોય છે તેથી જ સાધુ આદિ આવશ્યકશાસ્ત્રને જાણી ગયો છે પણ તેમાં તેનો ઉપયોગ નથી એટલે કે જ અનુપયુક્તતા સંબંધન છે, એવાં તે સાધુ આદિનો જીવ દ્રવ્યાવશ્યક કહેવાય છે.

“નોદ્રવ્યાવશ્યક” આ દ્રવ્યાવશ્યકનો એક ભેદ છે.

જે સાધુએ પહેલાં આવશ્યક સૂત્રનું સવિધિ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીલીધું હતું. એવા સાધુનો જીવ જ્યારે મનુષ્યપર્યાયમાંથી નીકળીને અન્ય પર્યાયમાં આવ્યો બાહ્ય છે. ત્યારે તેનું તે નિર્જીવ શરીર આવશ્યક સૂત્રના જ્ઞાનથી સર્વથા અભાવવિશિષ્ટ (રહિત) થઈ બાહ્ય છે. તે કારણે તેનાતે નિર્જીવ શરીરને નો આગમજ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યાવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવે છે. આગમજ્ઞાન જેના બિલકુલ નથી. એવું તે શરીર તે આગમજ્ઞાતાતું છે કે જેણે તે આગમને જાણ્યો તો હતો પણ તે તેમાં ઉપયોગથી વિહીન (અનુપયુક્ત) હતો. આ રીતે નોઆગમ જ્ઞાયક શરીર

અનુયોગચન્કિા ટીકા ૧૮ મવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યક નિરૂપણમ્

૧૨૭

અથ દ્વિતીયભેદં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં મવિયસરીરદ્વાવસ્સયં ? મવિયસરીર-
દ્વાવસ્સયં જે જીવે જોણિ મ્મણનિવ્વત્તે ઇમેણં ચેવ આત્તણં
સરીરસમુસ્સણં જિવોવદિટ્ઠેણં માવેણં આદસ્સણ્તિપયં સેયકાલે
સિવિવ્વસ્સઈ ન તાવ સિવ્વવાઈ । જહા કા દિટ્ઠતો ? અય મહુકુંભે
મવિવ્વસ્સઈ, અયં ઘયકુંભે મવિવ્વસ્સઈ । સેત્તં મવિયસરીરદ્વાવસ્સયં । સૂ૦ ૧૮ ।

છાયા—અથ કિં તદ્ મવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? મવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યકં
યો જીવો યોનિજન્મનિષ્ક્રાન્તઃ । અનેનૈવ આત્તકેન શરીરસમુચ્છયેણ જિનોપદિષ્ટેન
શરીર દ્રવ્યાવશ્યકં હૈ । અનેવ વિધ તપસ્યાઓં સે જિનકા શરીર પરિશેષિત હો
રહા હૈ એસે સાધુજનોં ને જહાં સયમેવ જાકર મક્ત પ્રત્યાખ્યાનરૂપ અનરૂપ કો
કિયા હૈ કરતે હૈ ઓર આગે મી વરેગે ઉસ સ્થાનમા નામ સિદ્ધશિલાતલ
હૈ । અથવા જહાંપર જો કોઈ મહર્ષિ સંસ્તારક કરકે મગ્ધધર્મકો પ્રાપ્ત કિયા હો
ઉસ સ્થાન વા નામ સિદ્ધ શિલાતલ હૈ । ॥ મૂ૦ ૧૭ ॥

અથ સૂત્રમાર નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક વા જો દૂસરા ભેદ મવ્યશરીર
દ્રવ્યાવશ્યક હૈ—ઉસકિ પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં મવિયસરીરદ્વાવસ્સયં ઇત્યાદિ—॥ મૂ૦ ૧૮ ॥

શબ્દાર્થ—(અથ) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે મદન્ત ! (તં મવિયસરીર-
દ્વાવસ્સયં કિં) પૂર્વપ્રક્રાન્ત મવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યક વા કયા રૂપ હૈ ?

દ્રવ્યાવશ્યક” આ પદોના અર્થની અપેક્ષાએ તે નિર્ણવ શય્યાદિગત સાધુનું શરીર નો
આગમ જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાવશ્યક” છે.

અનેક પ્રકારની તપસ્યાઓ વડે જેનું શરીર પરિશેષિત થઈ રહ્યું છે. એવાં
સાધુઓ જ્યાં જાતે જ જઈને આહારપાણીના પ્રત્યાખ્યાનરૂપ અનરૂપ ધારણ કરે
છે. ધારણ કરતા હતા અને ધારણ કરશે. તે સ્થાનનું નામ ‘સિદ્ધશિલાતલ’ છે.
અથવા જે સ્થાને કેઈ મહર્ષિ થઈ ગયા હોય તે સ્થાનને સિદ્ધશિલાતલ કહે છે. સૂ ૧૭

હવે સૂત્રકાર ભવ્ય શરીર દ્રવ્યાવશ્યક નામનો નો આગમદ્રવ્યાવશ્યકનો જે બીજો
ભેદ છે તેની પ્રરૂપણા કરે છે—“સે કિં તં મવિયસરીરદ્વાવસ્સયં ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અથ) હવે શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (તં મવિયસરીર-
દ્વાવસ્સયં કિં?) હે ભગવન! પૂર્વોક્ત ભવ્ય દ્રવ્યાવશ્યકનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

૧૨૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

भावेन आवश्यकेति पदम् एकाले शिक्ष्यते, न तावत् शिक्षते । यथा को दृष्टातः ? अयं मधुकुम्भो भविष्यति, अयं घृतकुम्भो भविष्यति । तदेतत् भव्यशरीरद्रव्यावश्यकम् ॥ सू० १८ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—से किं तं भवियसरीरदवावरसय' इति अथ किं तद् भव्यशरीरद्रव्यावश्यकम् ? उत्तरमाह—'शिव' सरीरदवावरसय' इति भव्यशरीरद्रव्यावश्यकं=भविष्यतीति शब्दः—विवक्षितपर्याययोग्य इत्यर्थः, तस्य शरीरं तदेव भविभावावश्यककारणत्वाद् द्रव्यावश्यकं—भव्यशरीरद्रव्यावश्यकं वर्ण्यते इत्यर्थः । यो जीव—योनिजन्मनिष्क्रान्तः=योन्मः=योनिमध्यात्—जन्म काले निष्क्रान्तः=निर्गतो न तु पूर्णसमयात् पूर्वमेव गर्भात् पतितो अनेक आत्त-केन=गृहीतेन शरीरसमुल्लेखेण जिनोपदिष्टेन भावेन आवश्यकेति पदम्=आव-श्यकशब्दं भविष्यत्काले शिक्ष्यते=अध्यय्यते, न तावत्—संप्रति शिक्षते ? एवं विधं शरीरं भव्यद्रव्यावश्यकं भवति । अत्रापि आगमाभावमाश्रित्य नोऽगमवं बोध्यम्, तस्मिन् समये तत्र शरीरे सर्वथाऽऽगमस्याभावात् । नो शब्देऽत्र आगमस्य सर्वथा निषेधं सूचयति ।

उत्तर—(जे जीवे जोणिजम्भणनिर्वन्ते इमेणं चेव आत्तएणं સરીરસમુસ-
ર્ણં જિનોપદિદ્ધેણં આવસ્સણંતિ પયં સેયકાલે સિવિલ્લસઇ ન તાવસિલ્લવાઇ
ભવિયસરીરદવાવસયં) જો જીવ ઉત્પત્તિસ્થાનરૂપ યોનિ સે અપના સમયપૂર્ણ
કારકે હી નિકલા હૈ—સમય કે પહિલે વીચ મેં ઉત્પન્ન રહીં હુઆ હૈ—એસા
વહ જીવ ઉસ પ્રાપ્ત શરીર સે જિનોપદિદ્ધ ભાવકે અનુસાર આ વ્યકશાસ્ત્ર કો
ભવિષ્યતકાલ મેં સીલેગા—વર્તમાન કાલમેં સીલ નહીં રહા હૈ એસા વહ શરીર
ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । ઇસ ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક મેં મી આગમ કે
અભાવ કો લેકર નો આગમતા જાનની યાહિયે । ક્યોં કિ ઉસ સમય ઉસ

ઉત્તર—(જે જીવે જોણિજમ્મણનિર્વન્તે ઇમેણં ચેવ આત્તણં સરીરસમુસર્ણં
જિનોપદિદ્ધેણં ભાવેણં આવસ્સણંતિ પયં સેયકાલે સિવિલ્લસઇ ન તાવસિલ્લવાઇ
ભવિયસરીરદવાવસયં) જે જીવ ઉત્પત્તિસ્થાનરૂપ યોનિમાંથી પોતાનો સમયપૂરો
કરીતે જ બહાર નીકળ્યો છે સમય પૂરો થયા પહેલા બહાર નીકળ્યો નથી એટલે કે ગર્ભમાંથી
પૂરો સમય વ્યતીત થયા પહેલાં પતિત થયો નથી એવા તે જીવ તે પ્રાપ્ત શરીર
વડે જ જિનોપદિદ્ધ ભાવ અનુસાર આવશ્યકશાસ્ત્રને ભવિષ્યમાં શિખશે—વર્તમાન
કાળમાં તે તેને શીખી રહ્યો નથી, એવાં તે જીવ જીવનું શરીર 'ભવ્યશરીર દ્રવ્યા-
વશ્યક' કહેવાય છે. આ જીવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમાં પણ આગમના અભાવને લીધે
નોઆગમતા (આવશ્યકશાસ્ત્રના જ્ઞાનનો સર્વથા અભાવ) બાબતી, કારણ કે તે સમયે

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० १८ भव्यशरीरद्रव्यावश्यकनिरूपणम्

१२

ननु-आवश्यकपर्यायस्य कारणं द्रव्यावश्यकमुच्यते-तदानीं तत्र शरीर आगमाभावात् तस्य नास्ति तं प्रति कारणत्वम्, अतोऽयं शरीरे नास्ति द्रव्यावश्यकत्वम् ? इति चेत्, उच्यते-तदानीमपि तत्र द्रव्यावश्यकत्वमुपचर्यते इति नास्ति कोऽपि दोषः । अत्र दृष्टान्तजिज्ञासया शिष्यः पृच्छति-‘जहा को दिहंतो’ इति । यथा को दृष्टान्तः हे भदन्त । अत्र यथा कोऽपि दृष्टान्तो भवेत् तथा द्रष्टुं उत्तरमाह-‘अयं महुकुंभे भविस्सइ, अयं घटकुंभे भविस्सइ’ इति । अयं महुकुंभं भविष्यति, अयं घटकुंभो भविष्यति । अयं भावः-घृतरक्षणाय मधुरक्षणाय च कुंभ शरीर में आगम का सर्वथा अभाव है । नो शब्द इस समय के शरीर में आगम का सर्वथा निषेध सूचित करता है ।

शंका-आवश्यक पर्याय का जो कारण होता है वह द्रव्यावश्यक कह जाता है । इस समय के शरीर में तो आगम का सर्वथा अभाव है, इसलिये उस शरीर को द्रव्यावश्यक के प्रति कारणता नहीं होने से उसमें द्रव्यावश्यकता कैसे आसकती है ?

उत्तर-उम समय भी उसमें द्रव्यावश्यकता उपचार किया जाता है । क्योंकि यह शरीर आगे चलकर इसी पर्याय में आवश्यकशास्त्र का ज्ञाता बनेगा-परन्तु वर्तमान में नहीं है । इसलिये आवश्यकशास्त्र का भाविबाल संबन्धी अनुपयुक्त ज्ञातृत्व का उसमें उपचार करके उसका सर्वथा निषेध किया गया है । इस विषय में दृष्टान्त जानने की इच्छा से शिष्य पृच्छति है कि हे भदन्त ! (जहा को दिहंतो) यहां पर जैसा दृष्टान्त हो वैसा आप बहिये

ते शरीरमां आगमनां सर्वथा अलाव न होय छि. “नो” यह ते समये शरीरमां सर्वथा निषेध सूचित करे छि.

शंका-आवश्यकपर्यायनुं के कारण होय छि, तेने द्रव्यावश्यक कहैवांमां आवे छि. अत्यारे तो तेना शरीरमां आगमनां सर्वथा अलाव न छि. ना रीते शरीरमां द्रव्यावश्यकता कारणुनो न सदृलाव न होवा छतां पणु तेमां द्रव्यावश्यकता केवी रीते संलवी शके छि ?

उत्तर-आ समये तो तेमां द्रव्यावश्यकतानो उपचार करवांमां आवे छि अतएवे के आ कथनने आपत्त्यारिक स्थित न समजवु केहंओ कारणु के आ शरीर आगम जतां आ मनुष्य पर्यायमां न आवश्यकशास्त्रना ज्ञाता बनवाना । -वर्तमानमां तो ते तेना ज्ञाता नथी. तेधी आवश्यकशास्त्रना विषयज्ञा संलधी अनुपयुक्त ज्ञातृत्वने तेमां उपचार करीने तेना सर्वथा निषेध करवांमां आवे छि.

आ विषयने दृष्टान्तधी समजवा भाटे शिष्य गुरुने आ प्रमाणुं कहे छि- (जहा को दिहंतो) हे भदन्त ! आ विषयनुं प्रतिपादन करतुं केहं दृष्टान्त कहैवानी कृपा करो. गुहं महाराज आ विषयनुं प्रतिपादन करवा निमित्ते नीचेनुं दृष्टान्त आवे छि.

૧૩૦

અનુયોગશરણે

કારેણ ઘૌ ઘટૌ નિર્મિતૌ । તતઃકોઽપિ તં પૃથ્વાન્-કિમર્થૌ એતૌ ઘટૌ ? કુમ્ભ-
કારઃ કથયતિ અયં ઘૃતકુમ્ભો ભવિષ્યતિ, અયં તુ મધુકુમ્ભો ભવિષ્યતિ, इति ।
મથા ભવિષ્યદ્ઘૃતાધાત્વપર્યાયં મધ્વાધારત્વપર્યાયં તદાનીમપ્યાશ્રિત્ય ઘૃતકુમ્ભો
મધુકુમ્ભશ્ચેતિ વ્યપદિષ્યતે, તથાઽગ્રાપિ ભાવિનઃપ્રધ્યાવશ્યકપર્યાયકારણત્વ-

(અયં મહુકુમ્ભે ભવિસસઙ્, અયં ઘગકુમ્ભે ભવિસસઙ્) સુનો દૃષ્ટાન્ત । સ વિષય મેં
હસ પ્રકાર હૈ-ઘૃત રચને કે લિયે, ઓર મધુ રચને કે લિયે, કિસી કુમ્ભ
મે દો ઘડે બનાયે । ઉન્હેં દેખાર કિસીને ઉસસે પૂછા કિ યે કિસલિયે તુમને
બનાયે હૈ-તવ ઉસને ઉસસે કહા કિ યહ ઘૃત કુમ્ભ હોગા ઓર યહ મધુકુમ્ભ
હોગા । તો જિસ પ્રકાર ઉસ સમય ભવિષ્યત્ ઘૃતાધારત્વરૂપ પર્યાય ઓર મધ્વા-
ધારત્વરૂપ પર્યાય યા ઉન દોનોં મેં આશ્રય કર ઉન્હેં વહ ઘૃત કુમ્ભ ઓર મધુ-
કુમ્ભ હસરૂપ કે કહ દેતા હૈ, ઉસી તરહ હસ સમય કે શરીર મેં બી ભાવિ
આવશ્યકરૂપ પર્યાય કે પ્રતિ કારણતા કો લેકર ઉસે દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ સે માન
લિયા જાતા હૈ । હસ દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ ભવ્યશરીર મેં વર્તમાન મેં આવશ્યક કે
અર્થજ્ઞાન યા સર્વથા અભાવ હૈ હસલિયે ઉસમેં નોઆગમતા જાનની ચાહિયે ।
હમ તરહ યહ પ્રકાન્ત (પૂર્વપ્રસ્તુત) ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક કા વર્ણન કિયા ।

તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ-સૂત્રકારને હસ સૂત્રદ્વારા ભવ્યશરીર દ્રવ્યા-
વશ્યક કા સ્વરૂપ પ્રગટ કિયા હૈ । મનુષ્ય પ્રાપ્ત શરીર સે જા આગે આવશ્યક

(અયં મહુકુમ્ભે ભવિસસઙ્, અયં ઘગકુમ્ભે ભવિસસઙ્) કેઠ એક કુંભારે મધ
ભરવાને માટે તથા ઘી ભરવાને માટે જે ઘડા બનાવ્યા, તે બન્ને ઘડાને બેઠને
કેઠએ તેને એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો કે “આ જે ઘડા તમે શા માટે બનાવ્યા છે ?”
ત્યારે કુંભારે એક ઘડો બતાવીને કહ્યું કે “આ મધુકુંભ છે” અને બીજો ઘડો
બતાવીને કહ્યું કે “આ ઘૃતકુંભ છે” જે પ્રકારે ભવિષ્યકાલિન ઘૃતાધારત્વરૂપ પર્યાય
અને મધુ આધારત્વરૂપ પર્યાયનો તે બન્ને ઘડામાં આશ્રય લઈને અત્યારે પણ તેમને
ઘૃતકુંભ અને મધુકુંભ રૂપે ઓળખવામાં આવે છે-(બે કે વર્તમાનકાળે તો તેમાં
ઘૃત પણ નથી અને મધ પણ નથી) એજ પ્રમાણે આ સમયના શરીરમાં પણ
ભવિષ્યકાલિન આવશ્યકરૂપ પર્યાયના દારણનો સદ્ભાવ હોવાને કારણે તેને દ્રવ્યાવશ્યક
રૂપે માની લેવામાં આવે છે. આ દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ ભવ્યશરીરમાં વર્તમાન કાળે તો
આવશ્યકના અર્થજ્ઞાનનો સર્વથા અભાવ જ છે, તે કારણે તેમાં “નોઆગમતા”
સમજવી. પૂર્વપ્રકાન્ત (પૂર્વપ્રસ્તુત) ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકતું આ પ્રકાન્તું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યકતું સ્વરૂપ પ્રગટ કર્યું
છે. જે મનુષ્ય પ્રાપ્ત શરીર દ્વારા જ ભવિષ્યમાં આવશ્યકસૂત્રનો અનુપયુક્ત જાણા

અનુયાગચત્રિકા ટીકા. ૧૯ જ્ઞાનવ્યશરીરવ્યતિરિક્તદ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્ ૧૩૧

માશ્રિત્ય દ્રવ્યાવશ્યકત્વં વિજ્ઞેયમિતિ । મવ્યશરીરે આવશ્યકાર્થજ્ઞાનાભાવાન્નો-
આગમત્વં વોધ્યમ્ । તદેતદ્ મવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકં વર્ણિતમ્ ॥સૂ૦ ૧૮॥

અથ તૃતીયભેદં નિરૂપયિતુમાહ--

મૂલમ્—સે કિં તં જાણયસરીરભવિ સરીરવડરિત્તં દઢવાવસ્સયં
જાણયસરીરભવિયસરીરવડરિત્તં દઢવાવસ્સયં તિવિહ પળણસં । તં
જહા—લોહયં, કુપ્પાવચણિયં, લોત્તરિયં ॥ સૂ૦ ૧૯ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ જ્ઞાનકશરીરમવ્યશરીરવ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ।
જ્ઞાયકશરીરમવ્યશરીરવ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથથા લૌકિકં,
કુપ્પાવચનિકં, લોત્તરિકમ્ ॥સૂ૦ ૧૯॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૂછતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ किं तद् ज्ञायकशरीर-
मव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यकम् ? उत्तरमाह—‘जाणयसरीरभवियसरीरवडरित्तं’

શાસ્ત્ર વા અનુપયુક્ત જ્ઞાતા બનેગા उस वा वह शरीर द्रव्यावश्यक है । वर्तमान
में वह ऐसा नहीं है, अतः उसका उसमें उपचार करलिया जाना है । इस
द्रव्यवशक में आवश्यक का अर्थज्ञान बिलकुल नहीं है । इसलिये इसे नो-
आगम की अपेक्षा वह मव्यशरीर द्रव्यावश्यक है । ॥ सूत्र १८ ॥

अथ सूत्रकार तृतीय भेद के स्वरूप वा निरूपण करते हैं—

से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवडरित्तं इत्यादि । ॥ सू० १९ ॥

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિ હે મદંત ! (ત જાણયસરીર ભવિય
સરીર વડરિત્તં દઢવાવસ્સયં કિ) પૂર્વે પ્રકાન્ત (પૂર્વપ્રતુત) જ્ઞાયકશરીર મવ્યશરીર
વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક વા વયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—(જાણયસરીરભવિયસરીર-

ખનવાનો છે, તેના તે શરીરને દ્રવ્યાવશ્યકરૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે.
વર્તમાનકાળે તે એવું નથી, તેથી તેના તેમાં ઉપચાર કરી લેવામાં આવે છે. આ
અપેક્ષાએ તેને દ્રવ્યાવશ્યક બનાવી લેવામાં આવે છે. આ દ્રવ્યાવશ્યકતાં આવશ્યકત્વં
અર્થજ્ઞાન બિલકુલ નથી, તેથી નોઆગમની અપેક્ષાએ તેને લવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક
કહેવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ૦ ૧૮ ॥

इये सूत्रकार उपयुक्त जाननेથી सिन्न એવા નોઆગમદ્રવ્યાવશ્યક'ના ત્રીબા
લેહનું સ્વરૂપ સમજાવે છે—‘સે કિં તં જાણયસરીરભવિયસરીર વડરિત્તં’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (સે તં જાણયસરીર ભવિયસરીર-
વડરિત્તં દઢવાવસ્સયં કિ) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રતુત જ્ઞાયકશરીર લવ્યશરીર વ્યતિ-
રિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકત્વં સ્વરૂપ કેવું છે ? એટલે કે જ્ઞાયકશરીર અને લવ્યશરીરથી સિન્ન
એવા દ્રવ્યાવશ્યકત્વં સ્વરૂપ કેવું છે ?

૧૩૨

અનુયોગદ્વારક્ષેત્ર

इत्यादि । ज्ञायः शरीरं भव्यशरीरव्यतिरिक्तं ज्ञायकशरीरं भव्यशरीराभ्यां व्यतिरिक्तं
= भिन्नं द्रव्यावश्यकं त्रिविधं प्रदत्तम् । तद्यथा—लौकिकं, कुप्पावचनिकं च ॥ सू० १९ ॥

તત્ર જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તલૌકિક દ્રવ્યાવશ્યકરૂપં પ્રથમં ભેદં નિરૂપયિતુમાહ-

मूलम्—से किं तं लोइयं दव्वावस्सयं लोइयं दव्वावस्सयं जे इमे
राईसरतलवर माडंबियकोडुंबियइब्भसेट्टि सेणावइ सत्थवाहप्पभिइओ
कळं पाउप्पभायाए रयणीए सुविमलाए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मि-
लियम्मि अहापंडुरे पभाए रक्तासोगप्पगाम्भिसुयसुयमुहयुजद्ध-
रागसरिसे कमलागरनलिणिसंडबोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सर-
स्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते मुहधोयणदंतपक्खालण-तेह-ण्हाण-
फणिहसिद्धत्थय-हरि आलिय-अद्दागधूवपुष्फमल्लगंधतंबोलवत्थाइ
याइ दव्वावस्सयाइं करेति । तओ पच्छा रायकुलं वा देवकुलं वा
आरामं वा उज्जाणं वा सभं वा पवं वा गच्छंति से तं लोइयं दव्वा-
वस्सयं ॥ सू० २० ॥

છાયા--અથ કિં તદ્ લૌકિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? લૌકિકં દ્રવ્યાવશ્યકં—ય

વહરિત્તં દવ્વાવસ્સયં તિવિદં પળ્લત્તં) જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યા-
વશ્યક ત્રીન પ્રકાર કા વહા હૈ—(તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ—(લોઇયં કુપ્પાવચ-
નિયં લોઉત્તરિયં) લૌકિક કુપ્પાવચનિક ઔર લૌકોત્તરિક । ॥ સૂ ૧૯ ॥

અથ સૂત્રકાર તદ્વ્યતિરિક્ત લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ પ્રથમ ભેદ કા
કથન કરતે હૈ—સે કિં તં લોઇયં દવ્વાવસ્સયં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૨૦ ॥

શબ્દાર્થ—સે કિં તં શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હૈ મદંત ! (તં લોઇયં દવ્વાવસ્સયં

ઉત્તર—(જાણયસરીર ભવિયસરીર વહરિત્તં દવ્વાવસ્સયં તિવિદં પળ્લત્તં)
જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકના ત્રણ પ્રકાર રહ્યા છે. (તંજહા) તે
પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(લોઇયં કુપ્પાવચનિયં લોઉત્તરિયં) (૧) લૌકિક, (૨)
કુપ્પાવચનિક અને (૩) લૌકોત્તરિક ॥ સૂ. ૧૯ ॥

હવે સૂત્રકાર તદ્વ્યતિરિક્ત લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ પહેલા ભેદનું સ્વરૂપ સમજાવે છે.

“સે કિં તં લોઇયં દવ્વાવસ્સયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન ! (તં લોઇયં

अनुयोगचन्द्रिका टीका—व. २० लौकिकद्रव्यावश्यकानिरूपणम्

१३३

इमे राजेश्वरतलवरमाडम्बिककौटुम्बिकेभ्यश्चेष्टिसेनापतिसार्थवाहप्रभृतयः कल्पे प्रादुर्गमतायां रजन्यां सुविमलायां फुल्लोत्पलकमलक्रीमलोन्मीलिते यथापाण्डुरे प्रभाते रक्ताशोकप्रकाशकिंशुकशुकमुखगुञ्जार्द्ररागसदृशे कमलाकरनलिनीपङ्क-
बोधके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मौ दिनकरे तेजसा ज्वलति मुखधावनदन्तप्रक्षालन

किं) लौकिक द्रव्यावश्यक रूप प्रथम भेद का क्या स्वरूप है? (लो.यं दत्वा-
वस्मयं) उत्तर-लौकिक द्रव्यावश्यक का स्वरूप इस प्रकार से है-(जे इमे
राईसर, तलवरमाडंबिय, कोडुंबिय, इम्भ, सेट्टि, सेणावड, सत्थवाहप्पभिडओ)
जो ये राजेश्वर-मांडलिकनरपति, ऐश्वर्य संपन्न व्यक्ति, तलवर, मांडंबिक कौटु-
म्बिक, इम्भ, अष्टी, सेनापति, सार्थवाह आदि मनुष्य (कल्लं) सामान्य प्रभात
के होने पर (पाउप्पभायाए रयणीए) प्रारंभिक अवस्था प्राप्त है प्रभात जिस
में ऐसी रात्रि के होने पर (सुविमलाए, फुल्लुत्पलकमलक्रीमलुम्मिलियम्मि)
तथा पूर्व की अपेक्षा स्फुटतर प्रकाश संपन्न रात्रि के होने पर विकसित कमल
के पत्रों के और मृगविशेष के नयनों के सुकुमार उन्मीलनवाले (अहापंडुरे) यथा
योग्य पीतमिश्रित शुक (पभाए) प्रभात के होने पर (रत्तासोगप्पगासकिं
सुयसुयमुहुगुज्झरागसरिसे) तथा रक्त अशोकवृक्ष की कांति के तथा पलाश पुष्प,
और शुक मुख एवं गुंजार्द्र के राग के सदृश (कमलागरनलिणिसंडबोहए) कमलों
की उत्पत्ति भूमिरूप ह्रदादिजलाशयों में पद्मवनों के विकाशक (सहस्ररस्सिमि

दत्त्वावस्मयं किं?) लौकिक द्रव्यावश्यक रूप से प्रथम भेद का स्वरूप क्या है?

उत्तर--(लोइयं दत्त्वावस्मयं) लौकिक द्रव्यावश्यक का स्वरूप क्या प्रकार का है-

(जे इमे राईसर, तलवर, माडंबिय, कोडुंबिय, इम्भ, सेट्टि, सेणावड,
सत्थवाहप्पभिडओ) जे आ राजेश्वर (मांडलिक नरपति-ऐश्वर्य संपन्न व्यक्ति),
तलवर, मांडलिक, कौटुम्बिक, इम्भ, अष्टी, सेनापति, सार्थवाह आदि मनुष्य
(कल्लं) सामान्य प्रभातकाण यत्तां, (पाउप्पभायाए रयणीए) रात्रि व्यतीत यत्तने
दिवस्वनी प्रारंभिक अवस्थाइय प्रभातकाणने प्रारंभ यत्तां, (सुविमलाए, फुल्लुत्पल-
कमलक्रीमलुम्मिलियम्मि) तथा रात्रिकाण पसार यत्तने परेलां करता स्फुटतर
प्रकाशय्थी संपन्न, विकसित कमलपत्रेथी संपन्न अने मृगविशेषना नयनोना सुकुमार
उन्मीलनय्थी युक्त, (अहापंडुरे) यथायोग्य पीतमिश्रित शुकल (आछां पीणां) पभाए)
प्रभात यत्तां, (रत्तासोगप्पगासकिंसुय सुयमुहुगुज्झरागसरिसे) तथा पाल अशोकवृक्षना
समान, पलाशपुष्प समान तथा शुकना मुष्प समान अने गुंजार्द्र (यख्खोडीना अर्ध
लाग) समान लाल, (कमलागरनलिणिसंडबोहए) कमलोंना उत्पत्ति स्थानइय
ह्रदादि जलाशयोभां पद्म वनोने विकसित करतार (सहस्ररस्सिमि दिणयरे तेयसा

૧૩૪

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

તૈલસ્નાનફણિહસિદ્ધાર્થકહરિતાલિકાઽઽદર્શધૂપપુષ્પમાલ્યગન્ધતામ્બૂલવસ્ત્રાદિકાનિ દ્રવ્યા-
વશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । તતઃપશ્ચાત્ રાજકુલં વા દેવકુલં વા આરામં વા ઉદ્યાનં
વા સભાં વા પ્રપાં વા ગચ્છન્તિ । તદેતત્ લૌકિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ॥૨૦॥

ટીકા—શિષ્યઃપૃચ્છતિ—‘સે િં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કિં તદ્ લૌકિકં
દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ઇતિ । ઉત્તરમાહ—લૌકિકં—લોકે ભવં લૌકિકં દ્રવ્યાવશ્યકં વર્ણતે

દિળયરે તેયસા જલંતે) સહસ્રાવરણાં સે યુક્ત, દિવસવિધાયક ઓર તેજ સે
દેદીપ્યમાન એસે (સૂરે ઉદ્વિયમ્મિ) દર્ધ કે ઉદિત હોને પર (મુહધોયણ—દંતપવસ્વા-
લણ—તેલ્લ—ખ્હાણફણિહ—સિદ્ધત્થય—હરિ—અદાગધૂપુષ્પમલ્લગંધતંબોલવસ્ત્રાદ્યાઈ
દ્રવ્યાવશ્યકાઈ વરેતિ) મુંહ કા ધોના દન્તોં કા પક્ષાલન કરના ફણિહ
—કંચી સે વાલોં કા ઝંછના, મજ્જલનિમિત્ત સરસોં કા ઓર દૂર્વા કા પ્રક્ષેપણ
કરના, દર્પણ મેં મુંહ કા અવલોકન કરના, ધૂપ સે વસ્ત્રોં કો સુરભિત કરના,
ફૂલોં કો લેના, પુષ્પોં કી માલા પહિરના પાન પ્વાના, ઓર શુદ્ધ વસ્ત્રોં વા
પહિરના ઇત્યાદિરૂપ દ્રવ્યાવશ્યક કરતે હૈં । (તઓ પ છા) ઇસકે વાદ્ વે (રાયકુલં વા
દેવકુલં વા આરામં વા ઉજ્જાણં વા સભં વા, પવં વા ગચ્છન્તિ) રાજકુઠ મેં, યા
દેવકુલ મેં અથવા આરામ મેં યા ઉદ્યાન મેં યા સભા મેં અથવા પાનીયશાલા
મેં જાતે હૈં । તાત્પર્ય ઇસકે વહેને કા યહ હૈ કિ રાજેશ્વરાદિ સંવન્ધી જો
મુખધાન્નાદિ વાર્ય હૈ વહ સર્વ લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈં । રાજા જિન્હે

જલંતે) સહસ્ર કિન્હુથી યુક્ત, દિવસ વિધાયક અને તેજથી દેદીપ્યમાન એવા
(સૂરે ઉદ્વિયમ્મિ) સૂર્યના ઉદય થતાં (મુહધોયણ, દંતપવસ્વાલણ, તેલ્લ, ખ્હાણ-
ફણિહ, સિદ્ધત્થય, હરિ, અદાગધૂપ, પુષ્પમલ્લગંધતંબોલવસ્ત્રાદ્યાઈ દ્રવ્યાવશ્ય-
કાઈ કરેતિ) મુખ ધોવારૂપ, દાંત સાફ કરવા રૂપ શરીર પર તેલનું
માલિશ કરવારૂપ, સ્નાન કરવારૂપ, દાંતિયા કે કાંસડી વડે વળ ઓળવારૂપ, મંગળ
નિમિત્ત સરસવ અને દુર્વાનું પ્રક્ષેપણ કરવારૂપ, દર્પણમાં પોતાના મોઢનું અવલો-
કન કરવારૂપ, સુગંધયુક્ત ધૂપથી વસ્ત્રોને સુગંધિતાર કરવારૂપ, ફૂલો અલણ કરવારૂપ,
ફૂલોની માળાઓ પહેરવારૂપ, પાન પાવારૂપ, શુદ્ધ વસ્ત્રોને પરિધાન કરવારૂપ ઇત્યાદિ-
રૂપ દ્રવ્યાવશ્યક કરે છે (તઓ પછા) ત્યારબાદ તેઓ (રાયકુલં વા, દેવકુલં વા,
આરામં વા, ઉજ્જાણં વા, સભં વા, પવં વા, ગચ્છન્તિ) રાજદરબારમાં, અથવા દેવ
સ્થાનમાં, અથવા આરામગૃહમાં અથવા ખાતમાં, અથવા સભામાં અથવા જગાશય
તરફ જાય છે.

આ સમસ્ત કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે રાજેશ્વર આદિ ઉપયુક્ત માણસોના
કે મુખધોવન આદિ કાર્યો છે તે જોને લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ અણુવામાં આવ્યા છે.

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० २० लौकिकद्रव्यावशकनिरूपणम्

१३५

इत्यर्थः । ये इमे मनुष्याः राजेश्वरतलरमाण्डविककौटुम्बिकेभ्यश्चेष्टितेनापति
 सार्थवाहप्रभृतयः, तत्र-राजानः=माण्डलिका नरपतयः, ईश्वराः=ऐश्वर्यसम्पन्नाः,
 तलवराः=भूपालदत्तपट्टपरिभूषितराजदल्लः कोट्टपाला इत्यर्थः छिन्नमिन्नजनाश्रय-
 विशेषो मण्डवस्तत्राधिकृताः माण्डविकाः ग्रामपञ्चदशीपत्य इत्यर्थः, यद्वा-
 सार्द्धकोशद्वयपरिमितप्रान्तरैर्विच्छिद्यविच्छिद्यस्थितानां ग्रामाणामधिपतयः, कौटु-
 म्बिकाः=कुटुम्बभरणे तत्पराः, यद्वा-बहुकुटुम्बप्रतिपालकाः, इभ्यः इभो=हरती तस्य-
 मणं द्रव्यमर्हतीति तथा, ते च जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदात् त्रिप्रकाराः, तत्र हस्ति-
 परिमितमणिमुक्ताप्रवालसुवर्णरजतादिद्रव्यराशिस्वामिनो जघन्याः, हरिपरिमित
 वज्रमणिमाणिक्यराशिस्वामिनो मध्यमाः, हस्तिपरिमितकेवलवज्रस्वामिनः

पट्टबन्ध प्रदान करता है उनका नाम तलवर है अर्थात् कोटवाल । ये राजा
 जैसे ही होते हैं । छिन्नमिन्न जनाश्रय विशेष का नाम मण्डव है । इन मण्डवों
 में जो अधिकृत होते हैं उका नाम माण्डविक है । ये ५०० गांवों के अधि-
 पति होते हैं । ढाई २ कोस के अन्तर को छोड़ छोड़ कर जो गांव वसते
 हैं उनका नाम भी मण्डव है । इनके जो अधिपति होते हैं वे माण्डविक हैं ।
 कुटुम्ब के भरणपोषण कार्य में जोरत रहते हैं अथवा अनेक कुटुम्बों का जो
 प्रतिपालन करते हैं वे कौटुम्बिक हैं । इभ नाम हाथी का है । हाथी प्रमाण
 द्रव्य उनके पास होता है वे इभ्य है । ये जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट इस
 त ह ३ प्रकार के होते हैं । इनमें से जो हस्ति परिमित मणि, मुक्ता, प्रवाल
 सुवर्ण और रजत आदि द्रव्यराशि के स्वामी होते हैं वे जघन्य इभ्य हैं ।
 हस्तिपरिमित वज्र-हीरा, मणि, और माणिक्य राशि के जो स्वामी होते हैं

इये आ सूत्रमां वपरायेला तलवर आदि पदोनो अर्थ समझववाभां आवे
 छे-“तलवर” संतुष्ट थाय तयारे राज जेमनो राजपोषाक प्रदान करे छे तेमनु नाम
 तलवर छे. तेजो राज जेवां जे होय छे. छिन्नमिन्न जनाश्रयविशेषने मण्डव कहे
 छे. आ प्रकृता मण्डोना अधिपतिने माण्डविक कहे छे. तेजो ५००-५०० गाभोना
 अधिपति होय छे. अथवा अदी अदी गाठने आंतरे जे गाभो वसे छे ते गाभोनुं
 नाम मण्डव छे अने तेना अधिपतिने माण्डविक कहे छे. कुटुम्बना बरख पोषण
 ना कार्यमां जेजो रत रहे छे तेमने. अथवा अनेक कुटुम्बोनुं परिपालन कराने
 कौटुम्बिक कहे छे. “इभ्य” ओटले हाथी हाथी प्रमाण धन जेनी पासे होय छे.
 तेने इभ्य कहे छे इभ्यना नावे प्रमाणे त्रण प्रकार छे. जघन्य. मध्यम अने उत्कृष्ट
 हस्तिपरिमित (हाथी प्रमाण) मणि. मोती. प्रवाल. सुवर्ण. रजत (चांदी) आदि
 द्रव्यराशिना जे स्वामी होय छे तेने “जघन्य” इभ्य कहे छे. हस्तिपरिमित वज्र

ઉત્કૃષ્ટાઃ, શ્રેષ્ઠિનઃ=લક્ષ્મીકૃપાકટાક્ષપ્રત્યક્ષલક્ષ્યમાણદ્રવિણલક્ષલક્ષણ-
વિલક્ષણહિરણ્યપદ્મમલકૃતમૂર્ધાનો નગરપ્રધાનવ્યવહાર્તારિઃ, સેના તત્ત્વઃ
=ચતુરંગસેનાનાયકાઃ, સાર્થવાહાઃ=ગણિમ-ધરિમ-મેય-પરિચ્છેદ્યરૂપક્રેયવિક્રેય વસ્તુ-
જાતમાદાય લાભેચ્છા દેશાન્તરાણિ દ્રેજતાં સાર્થં વાહયન્તિ=યોગક્ષેમેભ્યો પરિ-
પાલયન્તિ, દીનજનોપચારાય મૂલધનં દત્ત્વા તાન્ સંવર્દ્ધન્તીતિ તથા, તત્ર-
ગણિમમ્=અકદિત્રિચતુરાદિ સંસ્થાદ્વમેણ ગણયિત્વા યદીતે તથા-નાલિંગ-પૂગી-

વે મધ્યમ દ્રવ્ય છે । જો હસ્તિ પરિમિત વજ્ર કે હી અકેલે સ્વામી હોતે હૈં વે ઉત્કૃષ્ટદ્રવ્ય હૈં । જિન કે પાસ લક્ષ્મી દેવી કે કૃપાકટાક્ષ સે લાભોં કા દ્રવ્ય હોના હૈં ઓર હસી કાળ જો નગર સેઠ કી ઉપાધિ સે વિભૂષિત રહા કરતે હૈં । હસકે ઉપલક્ષ્ય મેં રાજા હૈં સુવર્ણ વા પદ્મવંધ પ્રદાન કરતા હૈં જિસ સે ઉન કા મરતક સદા વિભૂષિત રહા કરતા હૈં । એસે મનુષ્ય શ્રેષ્ઠી વહલાતે હૈં । ચતુરંગ સેના કે જો નાયક હોતે હૈં ઉનકા નામ સેનાપતિ હૈં । ગણિમ, ધરિમ, મેય, ઓર પરિચ્છેદ્યરૂપ ક્રય વિક્રય યોગ્ય દ્રવ્યસમૂહ કો લેકર જો લાભ કી ઇચ્છા સે દેશાન્તર કા જાતે હુઅ મનુષ્યો કે સાથ કો દીનજનોં કે નિમિત્ત પ્રદાન કર ઉનકા સંવર્દન વરતે હૈં ઉનકા નામ સાર્થવાહ હૈં । અલબ્ધ વસ્તુ કા લાભ હોના હસકા નામ યોગ ઓર લબ્ધ કા પરિરક્ષણ હોના હસકા નામ ક્ષેમ હૈં । નારિકેલ-નારિયલ, પૂગીફળ-સુપારી, કદલીફલ-કેન્વા આદિ યે સવ ગણિમ દ્રવ્ય હૈં । કયોંકિ યે અક, દો, ત્રીન, ચાર, આદિરૂપ સે

—હીરા, મણિ અને માણિકની રાશિનો જે સ્વામી હોય છે તેને 'મધ્ય ઇન્દ્રિય' કહે છે. હસ્તિપરિમિત વજ્રનો જે જે સ્વામી હોય છે તેને ઉત્કૃષ્ટ ઇન્દ્રિય' કહે છે.

જેમની પાસે લક્ષ્મીદેવીની કૃપાને લીધે લાભોત્તરું દ્રવ્ય હોય છે. અને તે કારણે જેને નગરશેઠની પદવી મળી હોય છે. એવા મનુષ્યને શ્રેષ્ઠી (શેઠ) કહે છે. આ પદવીના ઉપલક્ષ્યમાં રાજા તેમને મુવર્ણના પદ્મવંધ પ્રદાન કરે છે તે પદ્મવંધથી તે શ્રેષ્ઠીત્વ મરતક સદા વિભૂષિત રહે છે. ચતુરંગ સેનાના નાયકને સેનાપતિ કહે છે.

હવે સાર્થવાહ' આ પદનો અર્થ સમજાવવામાં આવે છે—

ગણિમ, ધરિમ, મેય, અને પરિચ્છેદ્યરૂપ ક્યવિકયયોગ્ય દ્રવ્યસમૂહને લઇને લાભ પ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી અન્ય દેશ તરફ પ્રયાણ કરતાં મનુષ્યોના સાર્થ (ગમ્હ)ને જે યોગ ક્ષેમપૂર્વક પાળે છે. અથવા તેમને જવાતું હોય તે સ્થાને સલામત રીતે પહોંચાડે છે, જે પોતાના મૂળ ધનનું ગરીબ લોકોને માટે દાન કરીને તેમનું સંવર્ધન કરે છે, એવા પુરુષને સાર્થવાહ કહે છે,

અલબ્ધ વસ્તુનો લાભ (પ્રાપ્તિરૂપ લાભ) થયો તેનું નામ 'યોગ' છે. અને લબ્ધ (પ્રાપ્ત થયેલી વસ્તુ)નું પરિરક્ષણ થવું તેનું નામ 'ક્ષેમ' છે નાગિયેર. સુપારી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૨૦ લૌકિકદ્રવ્ય ત્રયચકનિરૂપણ

૧૩૭

ફલ—કદલીફલાદિકમ્ । ધરિમ્=તુલાસુત્રેણોત્તોલ્ય યદીયતે, યથા વ્રીહિ—યવ-
લવણ—સિતાદિ । મેયમ્=શરાવલધુમાળ્હાદિનોત્તોલ્ય યદીયતે, યથા—દુગ્ધ—ઘૃત—
તૈલપ્રભૃતિ । પરિચ્છેદ્યં ચ પ્રત્યક્ષતો નિકષાદિપરીક્ષયા યદીયતે, યથા—મણિ—
મુક્તા—પ્રવાલાભરણાદિ । એતેષાં રાજેશ્વરાદીનામિતરેતરયોગદ્વન્દ્વઃ, તે પ્રભૃતયઃ—
આઘા સુસ્થા એષાં તે તથા, કલ્પે=સામાન્યેન પ્રભાતે, પ્રભાતસ્યૈવ વિશેષાવસ્થાઃ
પ્રાહ—‘પાઉપ્પમાયા’ ઇત્યાદિના । ‘પાઉપ્પમાયા’ પ્રાદુષ્ભાતાયાં—પ્રાદુર્ભૂતઃ પ્રાસ્-
મ્ભિકાવસ્થા પ્રાપ્તઃ પ્રભાતો યસ્યા સા તથા તસ્માન્, રાત્રિયામ્—રાત્રી ઇતિ
પ્રભાતસ્ય પ્રથમાવસ્થા ? । તદનન્તરમ્ સુચિમલાયાં=પૂર્વાપેક્ષયા—ખુટતરવકાશ્ચર્ચા

ગિનકર બેચે યા દિયે જાતે હૈ । જો તરાજ્ સે તોલકર બેચે યા દિયે જાતે
હૈ—અનકા નામ ધરિમ હૈ જૈસે વ્રીહિ, યવ—જૌ, લવણ, શકર આદિ ।
પીતલ આદિ કે બનાયે ગયે બાઉં સે જો નાપર બેચે યા દિયે જાતે હૈ—
અનકા નામ મેય હૈ—જૈસે ઘૃત, તેલ દુગ્ધ વગરહ । જો કસોટી આદિ પર
કસકર પ્રત્યક્ષ મેં પરીક્ષિત કરકે દિયે જાતે હૈ વે પરિચ્છેદ્ય હૈ । જૈસે મણિ,
મુક્તા પ્રવાલ આદિ । “પાઉપ્પમાયા” ઇત્યાદિ પદોં દ્વારા સૂત્રકારને પ્રભાત
કી વિશેષ અવસ્થાઓં વા પ્રતિપાદન દિવા હૈ । વે અવસ્થાઈં યહાં ૩ તીન
પ્રકટ કી ગઈ હૈ ‘પાઉપ્પમાયા’ ઇસ પદ સે પ્રભાત કી પ્રથમ અવસ્થા બત-
લાઈ ગઈ હૈ—ઇસ અવસ્થા મેં રાત્રિ પ્રભાતપ્રાય હો જાતી હૈ । યહ સમય પ્રભાત
કી આમા પ્રારમ્ભિક અવસ્થા મેં આ જાતી હૈ । ઇસકે બાદ પ્રભાત કીદ્વિતી-

ઠેણાં આદિને ગણિમદ્રવ્ય કહે છે. કારણ કે આ વસ્તુઓ એક બે. ત્રણ આદિરૂપ
ગણીને વેચાય છે અથવા ખરીદ કરાય છે. ત્રાજવાની મદદથી વજન કરીને જે વસ્તુ
ઓને વેચાય અથવા ખરીદાય છે તે વસ્તુઓને ધરિમ કહે છે. જેમકે ચોળા. જવ,
મીઠું. સાકર આદિ દ્રવ્યો પીતળ આદિમાંથી ગનાવેલા પાવણાં આદિ સાધનો વડે
આપીને જે દ્રવ્યો વેચાય છે તે દ્રવ્યોને ‘મેય’ કહે છે. જેમકે ધી. તેલ; દૂધ.
જે દ્રવ્યોને કસોટી પથ્થર આદિ પર કસોટી કરીને—તેમની પ્રત્યક્ષ પરીક્ષા કરીને
કરીને વેચવા કે ખરીદવામાં આવે છે, એવાં દ્રવ્યોને પરિચ્છેદ્ય કહે છે. જેમકે
મણિ. મોતિ. પ્રવાલ આદિ દ્રવ્યો.

‘પાઉપ્પમાયા’ ઇત્યાદિ પદો દ્વારા સૂત્રકારે પ્રભાતની વિશેષ અવસ્થાઓં
પ્રતિપાદન કર્યું છે. તે અવસ્થાઓ અહીં ત્રણ પ્રકારની કહેવામાં આવી છે—‘પાઉ-
પ્પમાયા’ આ પદ દ્વારા પ્રભાતની પ્રથમ અવસ્થા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. આ
અવસ્થામાં રાત્રિ પ્રભાતપ્રાય થઈ જાય છે. લગભગ રાત્રિના ચાર વાગ્યાના સમયને
આ પ્રભાતની પ્રથમ અવસ્થારૂપ સમય સમજવો. તે સમયે પ્રભાતની આભા

તસ્યમેવ રાત્રૌ અનન્તમ્ ફુલ્લોત્પલકમલકોભાન્મીલિતે-ફુલ્લં ચ તદુત્પલં ચ ફુલ્લોત્પલમ્, કમલો મૃગવિશેષઃ, તયોઃ ષોમલં=હુમામ્ દલાન્ નરનપોશ્વ ઓમી-લિતમ્=ઉન્મીલનં યસ્મિન્ પ્રભાતે સ તથા તસ્મિન્ 'અહાપંડુરે' યથાપાન્દુરે =યથાયોગ્યપીતસંકલિતશુક્રે પ્રભાતે સતિ ઇતિ-પ્રભાતરથ દ્વિતીયાવસ્થા ૨। તદનન્તરે-સ્ત્રાશોકપ્રકાશકિંશુકશુકમુખગુજાર્દરાગસદૃશો સ્ત્રાશોકસ્ય પ્રકાશઃ=કાન્તિઃ, વિશુકં =પલાશપુષ્પં ચ, ગુજાર્દં ચ, તેષાં રાગેણ સદૃશો યઃ સ તથા તસ્મિન્, કમલાકરનલિનીષ્ઠબોધકે-કમલાનામ્ આકરાઃ=ઉત્પત્તિભૂમયો હૃદાદિ જલાપવ વિશેષાસ્તેષુ યાનિ નલિનીષ્ઠાનિ=પદ્મવનાનિ તેષાં બોધકસ્વસ્મિન્, સદૃશસ્મી=સદૃશકિરણે દિનકરે=દિવસવિધાયિનિ તેનસા જ્વલતિ સૂર્યે ઉત્થિતે ચ સતિ ઇતિ પ્રભાતરથ તૃતીયાવસ્થા ૩। તદા મુખધાવનદન્તપ્રક્ષાલનતૈલસ્નાનફણિહ-સિદ્ધાર્થકહરિતાલિકાSSદર્શપુષ્પમાલ્યગન્ધતામ્બૂલવસ્ત્રાદિકાનિ દ્રવ્યાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । તત્ર-મુખધાવનં=જલેન મુખપ્રક્ષાલનમ્, દન્તપ્રક્ષાલનમ્=દન્તકાષ્ઠા-

ય અવસ્થા હોતી હૈ-ઇસમેં પહિલે કી અપેક્ષા પ્રકાશ સ્ફુટતર હો જાતા હૈ-જિસે પૌ ફટના કહતે હૈ । ધીરે ૨ પ્રકાશ વધતે ૨ કમલોં કે ઈપ્ત્ વિકાશ ઔર મૃગોં કે ઉન્નિદ્ર-નિદ્રારહિત નયનોં કે સુકુમાર ઉન્મીલન સે યુક્ત હોકર કુછ ૨ પીતવર્ણ સે મિશ્રિતશુભ્રતા સે સમન્વિત બન જાતા હૈ । ઇસ દ્વિતીય અવસ્થા કો પાર કર જવ પ્રભાત અપની તૃતીય અવસ્થા મેં પહુંચતા હૈ તવ ઇસ સમય સૂર્ય ઉદિત હોકર અપને પ્રકાશ-ઉષા સે ઉસે પ્રકાશિત કર દેતા હૈ । ઇસે તૃતીય અવસ્થા સંપન્ન પ્રભાત કે સમય જો રાજેશ્વરાદિ મનુષ્ય મુખધાવનાદિ આવશ્યક કૃત્યોં કા સંપાદન કરતે હૈ વે સવ કાર્ય લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈ ।

પ્રારંભિક અવસ્થામાં આવી જાય છે. ત્યારબાદ પ્રભાતની દ્વિતીય અવસ્થાને પ્રાન્લ ધવા માંડે છે. ત્યારે પહેલાં કરતાં પ્રકાશ સ્ફુટતર થતો જાય છે. આ સમયને 'પો કાટવો' અથવા લળલાખળાનો સમય કહે છે ધીરેધીરે પ્રકાશ વધતો વધતો કમળોનો ઈપ્ત્ (સામાન્ય અદ્ય) વિકાસથી અને રોના ઉન્નિદ્રનયનોના સુકુમાર ઉન્મીલનથી (ઉઘડવાથી) યુક્ત થઇને સહેજ સહેજ પીતવર્ણથી મિશ્રિત એવી શુભ્રતાથી સમન્વિત બની જાય છે આ બીજી અવસ્થા પસાર કરીને જ્યારે પ્રભાત પોતાની ત્રીજી અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે સૂર્યોદય થઇ જવાને કારણે, સૂર્યના હજારે કિરણો વડે-ઊષા વડે પ્રભાત પ્રકાશિત થઇ જાય છે. આ તૃતીય અવસ્થા સંપન્ન પ્રભાતને સમયે રાજેશ્વર આદિ મનુષ્યો જે મુખધાવન આદિ આવશ્યક કૃત્યો કરે છે, તે સઘળાં કૃત્યોને લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યક કહે છે.

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र २० लौकिकद्रव्यावश्यकनिरूपणम्

१३९

दिना दन्तानां धावनं, तैलं=तैलाभ्यङ्गः, स्नानं, तथा—कण्ठिहः—कङ्कतिका—कङ्कति-
कया केशेषु व्यापारणमित्यर्थः, सिद्धार्थकाः=सर्षपाः, हरितालिका=दूर्वा, मस्तके
मङ्गलार्थं सिद्धार्थकानां दूर्वायाश्च प्रक्षेपणम्, आदर्शः=दर्पणः—मुखाद्यवलोकनम्,
धूपः=धूपेन वस्त्राणां सुरभीकरणम्, पुष्पाणि, माल्यम्=पुष्पमाला, पुष्पमाल्यानां मस्त-
कादेशूपयोगः, ताम्बूलम्, वस्त्राणि च आदिर्येषां तानि तथाभूतानि द्रव्यावश्य-
कानि कुर्वन्ति । ततःपश्चात्=मुखधावनादि-द्रव्यावश्यककरणानन्तरं राजकुलं वा
देवकुलं वा आरामं वा उद्यानं वा तथा सभां वा, प्रपां=पानीयशालां वा गच्छ-
न्ति । राजेश्वरादिसम्बन्धिकं मुखधावनादिकं द्रव्यावश्यकं विज्ञेयम् ।

ननु राजेश्वरादिभिरवश्यं क्रियमाणत्वाद् मुखधावनादीनां भवत्वावश्यकत्वम्
परन्तु द्रव्यत्वं तु तेषां नास्ति, विवक्षितपर्यायस्य यत् कारणं तस्यैव द्रव्य-
त्वात्, उक्तं चापि—

“भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारणं तु यल्लोके ।

तद्द्रव्यं तच्चञ्जैः सचेतनाचेतनं कथितम्” ॥ इति ॥

अस्य पद्यस्य व्याख्या प्रागेव ‘से किं तं द्रव्यावसयं’ इति त्रयोदश-
सूत्रस्य टीकायां कृता ।

इत्थं राजेश्वरादि संबन्धिनां मुखधावनादीनामावश्यकपर्यायकारणत्वाभावाद्

शंका—राजेश्वर आदि मनुष्य द्वारा संपादित मुखधावनादि कृत्यों में
अवश्यकरणीयता होने के कारण आवश्यकत्व भले रहे. इस में हमें कोई विवाद
नहीं है—परन्तु उनमें विवक्षित पर्याय के प्रतिकारणत्वरूप द्रव्यत्व नहीं आता
है । क्योंकि विवक्षित यहाँ आवश्यक पर्याय है, उस पर्याय के प्रति मुख
धावनादि क्रियाओं का क्या संबन्ध ? । द्रव्य का लक्षण १३ वें सूत्र का
टी. १ में “भूतस्य भाविनो वा” इत्यादि पद्यद्वारा स्पष्ट ही कर दिया गया
है । अतः इस प्रकार की द्रव्यता राजेश्वर आदि के मुख धावनादि लौकिक

शंका—राजेश्वर आदि मनुष्यद्वारा संपादित मुखधावन आदि क्रियाओं में
अवश्यकरणीयता होवाने कारणसे आवश्यकत्व भले रहे. ये बात संबंध में अनेक
विवादों में उत्तरवा भागता नहीं. परन्तु ते क्रियाओं में विवक्षित पर्यायना कारणरूप
द्रव्यत्व संबंधी शक्यता नहीं. कारण के विवक्षित पर्यायरूप के आवश्यक पर्याय अर्थात्
प्रकट करवा में आवी है, ते पर्यायनी साथे मुखधावन आदि क्रियाओं में शी संबंध
है ? तेर में सूत्रनी टीका में आपे द्रव्यत्वं आ प्रमाणे लक्षण कहे है—“भूतस्य
भाविनो वा” इत्यादि. आपे प्रतिपादित करेला ये लक्षण प्रमाणेनी द्रव्यता राजे-
श्वर आदिना मुखधावन आदि लौकिक कार्यों में नहीं आवी शकवाधी (असंबन्धित

નાસ્તિ દ્રવ્યાવશ્યકત્વમિતિ ચેદુચ્યતે—‘ભૂતસ્ય ભાવિનો વા’ इत्याद्येव द्रव्य-
लक्षणं नास्ति, किन्तु—‘अप्पाहाणे वि दव्वसदोत्थि’ अप्राधान्येऽपि द्रव्यशब्दो-
ऽस्ति—इति वचनात् अप्रधानरूपेऽर्थेऽपि द्रव्य शब्दो वर्तते । मुखधावनादौ मोक्षप्राप्तेर-
प्राधान्यं च मोक्षकारणभूतभावावश्यकपेक्षया बोध्यम् । यतो मोक्षस्य कारणं तु भावा-
वश्यकमेव नतु द्रव्यावश्यकम् अतोऽत्र मुखधावनादेरप्राधान्यमिति । ततश्च-द्रव्यभूतानि-
अप्रधानभूतानि—आवश्यकानि द्रव्यावश्यकानीत्यर्थः, एवं च संसारकारणानां राजेश्व-
रसिद्धि मुखधावनादीनामस्त्येव द्रव्यावश्यकत्वम्, इति नास्ति दोषावसरः । मुख-

कार्यों में नहीं, आसकने से उनमें आवश्यक पर्याय के प्रति कारणता नहीं
बन सकती है । इस कारणता के अभाव में उनमें द्रव्यावश्यकता नहीं आसकती है ?

उत्तर—शंकाकार को जो इस प्रकार की शंका उत्पन्न हुई है । उसका
कारण “भूतस्य भाविनो वा” इत्यादि पद्योक्त द्रव्य वा लक्षण
है कि इसपर यह कहना है कि द्रव्य का लक्षण इना ही नहीं
है किन्तु “अप्पहाणे वि दव्वसदोत्थि” अप्राधान्य अर्थ में भी द्रव्य शब्द है “इस-
कथन के अनुसार अप्रधान अर्थ में भी द्रव्य शब्द का प्रयोग हुआ है ।
इन मुखधावनादि लौकिक कृत्यों में मोक्षप्राप्ति की अप्रधानता मोक्ष के कारण
भूत भावावश्यक की अपेक्षा से बड़ा गया है । क्योंकि मोक्ष का कारण तो
भावावश्यकही होता है, नहि कि द्रव्यावश्यक इसलिए यहाँ मुखधावनादि
की अप्रधानता है । इसकारण द्रव्यभूत-अप्रधानभूत जो आवश्यक
हैं वे द्रव्यावश्यक हैं ऐसा अर्थ द्रव्यावश्यक वा लभ्य हो जाता
है । इस तरह राजेश्वर आदि के संसारकारणभूत मुखधावनादि कार्यों में
द्रव्यावश्यकता घटित हो जाती है । इन मुखधावनादि कृत्यों में लोकप्रसिद्धि
से भी आगमरूपता नहीं हैं—अतः उनमें आगम वा अभाव होने से नो

જોવાથી) તે ક્રિયાઓ આવશ્યકપર્યાયિતા કારણરૂપ બની શકતી નથી. આ કારણત્વાના
અભાવને લીધે તે ક્રિયાઓમાં દ્રવ્યાવશ્યકતાનો સદ્ભાવ સંભવી શકતો નથી,

ઉત્તર—શંકા કરનારે આ પ્રકારની જે શંકા કરી છે તેણે કારણ “ભૂતસ્ય
ભાવિનો વા” ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા દ્રવ્યનું જે લક્ષણ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે,
તે લક્ષણવાળા પદાર્થને જ દ્રવ્ય માનવું જોઈએ, એવી જ તેની માન્યતા છે. આ
પ્રકારની માન્યતાને કાનૂલે જ આ શંકા ઉદ્ભવી છે. તો તેની શંકાના જવાબરૂપે
અમારે એટલું જ કહેવાનું કે દ્રવ્યનું લક્ષણ એટલું જ નથી, પરંતુ “અપ્પહાણે
વિ દવ્વસદોત્થિ” “અપ્રધાન્યમાં પણ દ્રવ્ય શબ્દ છે,” આ કથન અનુસાર અપ્રધાન
અર્થમાં પણ દ્રવ્ય શબ્દનો પ્રયોગ થયો છે. તે મુખધાવન આદિ લૌકિક કૃત્યોમાં
જે અપ્રધાનતા (પ્રધાનતાથી રહિતપણું) હોય છે તે મોક્ષના કારણભૂત ભાવાવશ્યકની
અપેક્ષાએ કહેવામાં આવી છે, તેથી દ્રવ્યભૂત-અપ્રધાનરૂપ જે આવશ્યક છે તેમને

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र २० लौकिकद्रव्यावश्यकनिरूपणम्

१४१

धावनादौ लोकप्रसिद्ध्याऽपि आगमाभावात् सर्वथा नोआगमत्वम्, नोऽदश्चात्र सर्वथा आगमनिषेधे वर्तते । तदेतत् लौकिकं द्रव्यावश्यकं वर्णितम् ॥५० २०॥

आगमता आजाती है । इस प्रकार सर्वथा आगम के अभावजन्य द्रव्यावश्यकता इनमें होने से लौकिक द्रव्यावश्यकता इनमें बन जाती है । इस तरह से लौकिक द्रव्यावश्यकता का स्वरूप वर्णन है ।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकार ने तद्व्यतिरिक्त लौकिकद्रव्यावश्यकता का स्वरूप बतलाया है । उसमें संसारीजनोंद्वारा जो भी मांगलिक कृत्य हैं कि जिन्हें करना आवश्यक होता है वे सब लौकिक द्रव्यावश्यक हैं । मंगल निमित्त सर्पों का श्लेष करना दूर्वा का संसार कार्यों में उपयोग करना, दही आदि का किसी शुभ कार्य के निमित्त भक्षण करना आदि सब द्रव्यावश्यक हैं । यद्यपि इन लौकिक आवश्यकपर्याय के प्रति कोई संबंध नहीं है फिर भी इन्हें द्रव्यावश्यक का अर्थ अधिधानभूत आवश्यक मानकर द्रव्यावश्यकरूप माना गया है । इन लौकिक कार्यों में आगम का सर्वथा अभाव रहता है । अतः ये नोआगमरूप हैं ॥सूत्र २०॥

द्रव्यावश्यकरूप कहे छि आ प्रकारनो द्रव्यावश्यकनो अर्थ प्राप्त थछि जय छि. आ प्रकारे रोजेश्वरादिना संसार कारणभूत सुगंधावन आदि कार्योमां द्रव्यावश्यकता घटित थछि जय छि. आ सुगंधावनादि कृत्योमां लोकप्रसिद्धिनी अपेक्षाओ पणु आगमरूपता नथी. ते कारणे ते कृत्योमां आगमनो अभाव होवाने दीधे नो आगमता सिद्ध थाय छि. आ प्रकारे आगमना सर्वथा अभाव जन्य द्रव्यावश्यकता तेमनामां होवाथी तेमनामां लौकिक द्रव्यावश्यकता होवानी वात सिद्ध थछि जय छि द्रव्यावश्यकताना स्वरूपतुं आ प्रकारतुं वर्णन अही करवामां आव्युं छि.

भावार्थ—आगला जे सूत्रमां (१७ अने १८ भा सूत्रमां शायकशरीर द्रव्यावश्यक अने लक्षणशरीरद्रव्यावश्यकतुं स्वरूप प्रकट करवामां आव्युं. हबे तेजोअनेबी लिन्न जेवा द्रव्यावश्यकनी प्ररूपण करवामां आवे छि. आ सूत्रद्वारा तेना प्रथम लोकरूप लौकिक द्रव्यावश्यकतुं स्वरूप अताववामां आव्युं छि. संसारी जेवा द्वारा जे जे मांगलिक क्रियाओ करवानुं आवश्यक मानवामां आवे छि. ते सबणी क्रियाओ ने लौकिक द्रव्यावश्यक कहेवामां आवे छि. मंगल निमित्त सरसव आदिनो प्रक्षेप करवो, दूर्वा (हली)नो मांगलिक कार्योमां उपयोग करवो. कोष्ठ शुभकार्यने निमित्त हली आदितुं लक्षण करवुं. वगेरे क्रियाओने लौकिक द्रव्यावश्यक कहे छि. जे के आ लौकिक आवश्यक कृत्योना आवश्यकपर्यायनी साथे कोष्ठ संबंध नथी. छातां पणु द्रव्यावश्यकनो अर्थ अधिधानभूत आवश्यक भानीने तेरने द्रव्यावश्यकरूप मानवामां आवेल छि. आ लौकिक कार्योमां आगमनो सर्वथा अभाव रहे छि. तेथी तेओ जे आगमरूप छि. ॥ सूत्र २० ॥

અથ જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્ત—કુપ્પાવચનિકદ્રવ્યાવશ્યકરૂપં દ્વિતીય-
ભેદં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં કુપ્પાવચનિયં દઢ્વાવસ્સયં ? કુપ્પાવચનિયં
દઢ્વાવસ્સયં જે ઇમે ચરગચીરિગચમ્મસ્ખંડિયભિક્ષોઢપંડુરંગગોયમ
ગોઢ્વતિય ગિહિધમ્મધમ્મચિંતગઅવિરુદ્ધવિરુદ્ધવુદ્ધુસાવગ્ગપ્પભિત-
ઓ પાસેઢત્થા કલ્હં પાઉપ્પમાયાણ રયણીણ જાવ તેયસા જલંતે
ઈંદસ્સ વા સ્ખંદસ્સ વા રુદ્ધસ્સ વા સિવસ્સ વાવેસમણસ્સ વા દેવસ્સ
વા નાગસ્સ વા જક્કસ્સ વા મ્હૂયસ્સ વા મુગ્ગુદસ્સ વા અજ્ઞાણ વા
દુગ્ગાણ વા કોઢકિરિયાણ વા ઉવલેવણસંમજ્જણઆવરિસણધૂવ-
પુપ્ફગંધમહાહયાઈં દઢ્વાવસ્સયાઈં કરેતિ, સે તં કુપ્પાવચનિયં
દઢ્વાવસ્સયં ॥ સૂ૦ ૨૧ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ કુપ્પાવચનિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? કુપ્પાવચનિકં દ્રવ્યા-
વશ્યકં ય ઇમે ચરકચીરિકચર્મસ્ખંડિકાવિશ્લોષ્ઢપાણ્ડુરાદ્ગોતમગોત્રતિક

અથ સૂત્રકારતદ્રવ્યતિરિક્ત કા જો દુસરા ભેદ કુપ્પાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક
હૈ ઉસારા વર્ણન કરતે હૈ—“સે કિં તં કુપ્પાવચનિયં” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૨૧॥

શબ્દાર્થ—(સે) હૈ મંદંત ! (તં) પૂર્વપ્રક્રાન્ત પૂર્વ પ્રસ્તુતવિષય) કુપ્પાવચનિયં
દઢ્વાવસ્સયં (કિં) કુપ્પાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક કા વચા સ્વરૂપ હૈ । (કુપ્પાવચનિયં
દઢ્વાવસ્સયં) ઉત્તર—કુપ્પાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર હૈ—સુનો—
(જે ઇમે ચરગચીરિગચમ્મસ્ખંડિયભિક્ષોઢપંડુરંગગોયમગોઢ્વતિયગિહિધમ્મ

“તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકનો જે કુપ્પાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક નામનો ખીલો લેહ છે
તેનું હથે સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે—“સે કિં તં કુપ્પાવચનિયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન ! (તં) પૂર્વ
પ્રક્રાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુત વિષય) (કુપ્પાવચનિયં દઢ્વાવસ્સયં કિં) કુપ્પાવચનિક દ્રવ્યા-
વશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(કુપ્પાવચનિયં દઢ્વાવસ્સયં) કુપ્પાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ આ
પ્રકારનું છે—(જે ઇમે ચરગચીરિગચમ્મસ્ખંડિયભિક્ષોઢપંડુરંગગોયમગોઢ્વતિયગિ-

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० २१ कुप्राचनिकं द्रव्यावश्यकस्वरूपं द्वितीयनिरूपणम् १४३

गृहिधर्म धर्मचिन्तकाविरुद्धविरुद्धवृद्धश्रावकप्रभृतयः पाषण्डस्थाः कल्पे प्रादु-
ष्यभातायां रजःस्थां यावत् तेजसा जलति इन्द्रस्य वा स्कन्दस्य वा रुद्रस्य वा
शिवस्य वा वैश्रवणस्य वा देवस्य वा नागस्य वा यक्षस्य वा भूतस्य वा मुकु-
न्दस्य वा आर्याया वा दुर्गाया वा कोट्टक्रियाया वा उपलेपनसम्मार्जनावर्षण-
धूपपुष्पगन्धमाल्यादिकानि द्रव्यावश्यकानि कुर्वन्ति । तदेतत् कुप्राचनिकं द्रव्या-
वश्यकम् ॥ सू० २१ ॥

धम्मचिन्तगं अविरुद्धविरुद्धवृद्धसावगण्यमितो पासण्डस्था) जो ये चरक,
चीरिक, चर्मखंडिक, भिक्षोण्ड, पाण्डुराङ्ग, गोतम, गोव्रतिक, गृहि, धर्माधर्म
चित्तक, अविरुद्ध, विरुद्ध, और वृद्ध. श्रावक आदि हैं कि जो पाषण्डस्थ
अपने आप को ब्रती मानते हैं (कल्ले पाउण्णभायाए स्यणीए जाव तेयसा जलंते)
सामान्य प्रभात होने पर प्रभातप्राय रजनी के होने पर यावत् तेज से ज्वलित
सूर्य के उदय होने पर (इंदस्स वा) इन्द्र की (खंदस्स वा) अथवा स्कंद—कार्ति
क स्वामी की (रुद्रस्स वा) अथवा रुद्र की (सिवस्स वा) अथवा शिव की (वेस-
मणस्स वा) अथवा वैश्रमण की (देवस्स वा) अथवा सामान्य देव की (नागरस्स वा)
अथवा नाग की (जक्खस्स वा) अथवा यक्ष की (भूयस्स वा) अथवा भूत की
(मुगुंदस्स वा) अथवा मुकुंद की (अज्जाए वा) अथवा आर्यादेवी की (दुग्गाए वा)
अथवा दुर्गा की (कोट्टकिरियाए वा) अथवा कोट्टक्रिया की (उवलेवण संमज्जण—
आवरिसण—धूवपुण्णगंधमल्लाइयाइ दव्वावस्सयाइ वरेति—से तं कुप्पावयणियं

हिधम्मधम्मचित्तगं अविरुद्धविरुद्धवृद्धसावगण्यमितो पासण्डस्था) के आचरक
चीरिक, चर्मखंडिक, भिक्षोण्ड, पाण्डुराङ्ग, गोतम, गोव्रतिक, गृहिधर्मा, धर्मचिन्तक,
अविरुद्ध और वृद्ध श्रावक आदि हैं कि जो पाषण्डस्थ हैं—के पातानी मानते
ब्रती माने हैं (आ जधां पहोने अर्थ शण्डार्थने अन्ते स्पष्ट करवाभां आये हैं)
(कल्ले पाउण्णभायाए स्यणीए जाव तेयसा जलंते) तेरे सामान्य प्रभात यतां—
लगभग रात्रिने अन्तकाण सभीप आवे तारे जललांभणुं थाय तारे अने सूर्य
पोताना सल्लसकिंरुत्थी प्रकाशवा लागे तारे (इंदस्स वा) इन्द्रनी अथवा (खंदस्स वा)
स्कंदनी—कार्तिक स्वामिनी, (रुद्रस्स वा) अथवा रुद्रनी. (सिवस्स वा) अथवा शिवनी
(वेसमणस्स वा) अथवा वैश्रमणुनी कुणेरनी. (देवस्स वा) अथवा सामान्य देवनी
(नागरस्स वा) अथवा नागनी. (जक्खस्स वा) अथवा यक्षनी. (भूयस्स वा) अथवा
भूतनी (मुगुंदस्स वा) अथवा मुकुंदनी. (अज्जाए वा) अथवा आर्यादेवीनी (दुग्गाए वा)
अथवा दुर्गानी (कोट्टकिरियाए वा) अथवा कोट्ट क्रियानी (उवलेवण, संमज्जण—
आवरिसण—धूव पुण्ण गंधमल्लाइयाइ दव्वावस्सयाइ करेति से तं कुप्पावयणियं

टी १—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । अथ किं तत् कुप्रावचनिकं द्रव्यावश्यकम् ? उत्तरमाह—कुप्रावचनिकं=कृत्स्नतं प्रवचनं येषां ते कुप्रावचनाः, कृत्स्नतत्त्वं चा-यं प्रवचनस्य मोक्षानुषंगोक्तित्वात्, तेषामिदं कुप्रावचनिकम् द्रव्यावश्यकमेवं विज्ञेयम्—य इमे चरकचीरिकचर्मखण्डिक-मिक्षोण्ड-पाण्डुराङ्गोत्तमोत्तमतिकमुहिधर्मचर्मचिन्तकाविरुद्धविरुद्धवृद्धआवकप्रभृतयः । पाण्डुराः, तत्र-चरकाः=घाटिवाहकाः—युथवद्धाः सन्तो ये भिक्षां चरन्ति ते चरकाः, अथवा—भुञ्जाना ये चरन्ति ते चरकाः । चीरिकाः=रथ्यापनितवस्त्रखण्डधारकाः, चर्मखण्डिकाः=चर्मवसनाः, यदा-चर्ममा सर्वोपकरणा, भिक्षोण्डाः=ये भिक्षालब्धमेवान्नादिकं भुञ्जते न तु स्वपालितगवादीनां दुग्धादिकं, ते भिक्षोण्डा

द्व्यावस्यं) उपलेपन क्रिया करते हैं, संमार्जन क्रिया करते हैं, दुग्ध एवं गन्धोदक आदि से स्नान क्रिया करते हैं, पुष्पपूजा करते हैं, धूपपूजा करते हैं, चन्दन से उनका उपलेपन करते हैं उन पर माला चढ़ाते हैं, इत्यादिरूप जो द्रव्यावश्यक करते हैं वह सब कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक है । इस प्रकार पूर्व प्रकान्त द्रव्यावश्यक का यह स्वरूप है ।

जो समुदायरूप में एकत्रित होकर भिक्षा मांगते हैं वे चरक हैं । अथवा खाते २ जो चलते हैं वे चरक हैं मार्ग में पड़े हुए वस्त्रखंडों को जो पहना करते हैं वे चीरिक हैं । चमड़े को वस्त्ररूप में पहनते हैं अथवा चमड़े के ही समस्त उपकरण जिनके होते हैं उनका नाम चर्मखण्डिक है । भिक्षा में प्राप्त हुए अन्न से ही जो अपना-उदर पूर्ण करते हैं—अपने घर में पालित गाय आदि के दुग्धादिक से नहीं—

द्व्यावस्यं) उपलेपन किया करे छे, संमार्जन किया करे छे, दूध, गंधोदक आदि वडे स्नान कराववाली किया करे छे, कूबो वडे पूजा करे छे, धूपपूजा करे छे, चन्दन वड तेलुं उपलेपन करे छे, तमना पर माणाओ बडावे छे, इत्यादि प्रकारना के द्रव्यावश्यक करे छे ते सधणा द्रव्यावश्यकने कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक कहे छे. पूर्व प्रस्तुत कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यकतुं आ प्रकारतुं स्वश्य छे छे अरक आदि पहोना अर्थ स्पष्ट करवामां आने छे—जेओ समुदायरूपे अेकत्र धधने भिक्षा मागे छे तेभतुं नाम अरक छे. अथवा भातां भातां जेओ बाले छे. तेभने ‘चरक’ कहे छे. भाग पर पडेला वस्त्रखंडोने अेकत्र करीने जेओ ते वस्त्रखंडोने धारण करे छे—पहेरे छे—तेभने ‘चीरक’ कहे छे, आभडाने जे वस्त्ररूपे पहेरेनार अथवा आभडानां जे उपकरणो राखनारने ‘चर्मखण्डिक’ कहे छे.

भिक्षाभां प्राप्त धयेला अन्नथी जे जेओ पोतातुं पेट भरै छे—पोताने घर आबेदी आभ आदिना दूध आदिथी जे पोतातुं पेट भरतो नथी तेने ‘भिक्षोण्ड’

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० २१ कुप्रावचनिकद्रव्यावश्यकनिरूपणम्

१४५

उच्यन्ते, यद्वा—भिक्षोण्डाः=सुगतशासनस्थाः, पाण्डुराङ्गाः=पाण्डुगणि=भस्मलेप-
नात् शुभ्राणि अङ्गानि=गात्राणि येषां ते तथा, भस्मलेपितशरीरा इत्यर्थः
गोतमाः—ये हि विस्मयकारकपादपतनादिशिक्षाभिर्दृष्टं शिक्षयित्वा वराट-
वमालाभिस्तं विभूष्य तस्य वृषभस्य विविधमभिनयं दर्शयित्वा भिक्षन्ते ते गोतमाः
गोव्रतिकाः—गोव्रतं येषां ते गोव्रतिकाः=गोनर्यानुकारिणः, ते हि गवां मध्ये
वस्तुमिच्छया तद्भवनाभावितान्तःकरणा पुरान्निर्गच्छन्तीभिर्गोभिः सह निर्गच्छन्ति,
तिष्ठन्तीभिः सह तिष्ठन्ति, उपविशन्तीभिः सहोपविशन्ति, भुञ्जानामिः सह तद्वदेव
तृणपुष्पफलादिकं भुञ्जते, जलं पिबन्तीभिः सह तदनुकरणेनैव जलं पिबन्ति ।
उक्तं च— “गावीहिं समं निगमभवेसठाणासणाह पकरन्ति ।

भुञ्जन्ति जहा गावी तिरिक्खवासं विभावन्ता ।।”

उनका नाम भिक्षोण्ड है। अथवा सुगत—(बुद्ध) के शासन को मानने वालों
का नाम भी भिक्षोण्ड है। भस्म के लेपन से जिनका शरीर शुभ्र हो जाता
है उन का नाम शुभ्राङ्ग है। जो बैल को विस्मयकारक चाल सिखा करके
और उसे कौड़ियों की मालाओं से विभूषित करके उसका अभिनय दिखा
कर भिक्षावृत्ति करते हैं उनका नाम गोतम है। राजा दिलीप की तरह
गोव्रत का जो पालन करते हैं उनका नाम गोव्रतिक है। गोव्रत को पालन
करने वाले मनुष्य गावों के मध्य में रहने की इच्छा से गावें जब पुर से
नीकलती हैं तब उनके साथ ही निकलते हैं, जब वे बैठती हैं—तब बैठते हैं
जब वे खड़ी होती हैं—तब वे खड़े होते हैं, जब वे चरती हैं तब वे भोजन
करते हैं फलादि का, और जब वे जल पीती हैं, तब वे जल पीते हैं।

कहे છે અથવા સુગતના (બુદ્ધના) શાસનને માનનારનું નામ ભિક્ષોંડ છે. ભસ્મના
લેપથી જેમનું શરીર શુભ્ર થઈ જાય છે, તેમને ‘શુભ્રાંગ’ કહે છે. જેઓ બળદને
આશ્ચર્યજનક ચાલ શિખવીને અને તેને કોડીઓની માળાઓથી વિભૂષિત કરીને,
તેનો અભિનય લોકોને બતાવી બતાવીને ભિક્ષાવૃત્તિ કરે છે તેમને ‘ગોતમ’ કહે
છે. રાજા દિલીપની જેમ ગોવ્રતનું પાલન કરનારને ‘ગોવ્રતિક’ કહે છે. ગોવ્રતનું
પાલન કરનાર પુરુષ ગાયોની પાસે રહીને તેમની સેવા કર્યા કરે છે. જ્યારે ગાયો
ગામમાંથી બહાર નીકળે છે ત્યારે ગોવ્રતિક પણ તેમની સાથે જ ગામની બહાર
ચાલી નીકળે છે, જ્યારે તે ગાયો નીચે બેસે છે ત્યારે તે ગોવ્રતિક પણ નીચે બેસે
છે. જ્યારે તેઓ ઊભી થાય છે ત્યારે તે પણ ઊભો થાય છે, જ્યારે તેઓ ચરતી
હોય છે, ત્યારે તે પણ ફલાદિષ્ટ લોજન કરે છે, જ્યારે તેઓ પાણી પીવે છે, ત્યારે
તે પણ પાણી પીવે છે. કહ્યું પણ છે, એમ કહીને સૂત્રકારે જે ગાથા આપી છે તે

છાયા—ગોભિઃ સમં નિર્ગમપ્રવેશસ્થાનાસનાદિ પ્રકર્વન્તિ ।

મુઠજતે યથા ગૌઃ, તિર્યગ્વાસં વિમાષયન્તઃ ॥૬૩૮॥

ગૃહિધર્માણઃ—ગૃહિણાં ધર્મો યેષાં તે ગૃહિધર્માણઃ=‘ગૃહસ્થ-ધર્મ એવ શ્રેયાનું’
 इति मत्वा तदुचितधर्माचारिणः, । उक्तं च तदनुसारिभिः—

“ગૃહાશ્રમસમો ધર્મો, ન ભૂતો ન ભવિષ્યતિ ।

તં પાલયન્તિ તે ધીરાઃ, ક્લીબાઃ પાષણ્ડમા તાઃ ॥ ૬૩૯ ॥

ધર્મચિન્તકાઃ—યાજ્ઞવલ્ક્યાદિ પ્રણીતધર્મસંહિતાદિમિઃસહ ચે ધર્મં ચિન્તયન્તિ=તામિ-
 વ્યવહરન્તિ ચે તે ધર્મચિત્તિકા ઉચ્યન્તે, અવિરુદ્ધાઃ—દેવનૃપમાતાપિતૃતિર્યગાદીનામ-
 વિરોધેન વિનયકારિણો ચે ભવન્તિ તેઽવિરુદ્ધાઃ=વૈનયિકા इत्यर्थः, વિરુદ્ધાઃ=

ઉક્તં ચ—કરકે જો ગાથા લિખી છે તેના અર્થ મી યહી છે । ગૃહ-
 સ્થ ધર્મ હી શ્રેયસ્કર છે એસી જિન કી માન્યતા હોતી છે । ઓર ઉસી કે
 ઉચિત જો ધર્મ કા આચરણ કરતે છે તે ગૃહિધર્મા છે । ઇન લોગો કા એસા
 કહના છે કિ ગૃહસ્થાશ્રમ જેસા ધર્મ ન હુઆ છે ઓર ન હોગા । જો ધીર હોતે
 છે તે હી ઇસકા પાલન કરતે છે ઓર જો ક્લીબ-કમજોર છે તે વ્રતોં કો છેલે
 છે । યાજ્ઞવલ્કય આદિ કે દ્વારા રચિત ધર્મસંહિતા આદિ કો લેકર જો
 ધર્મ કા વિચાર કરતે છે-ઉનકે અનુસાર અપની દૈનિક પ્રવૃત્તિ ચલાતે છે તે
 ધર્મચિન્તક છે । દેવ નૃપ, માતાપિતા ઓર તિર્યગ્ચ આદિ કા વિના કિસી
 મેદભાવ કે જો એકસા વિનય કરતે છે તે અવિરુદ્ધ-વૈનયિક મિથ્યાદષ્ટિ-છે ।

ગાથાનો ઉપર મુજબનો જ અર્થ થાય છે. તે ગાથામાં ગોપ્રતિકનાં લક્ષણો બતા-
 વવામાં આવ્યા છે,

“ગૃહસ્થધર્મ જ શ્રેયસ્કર છે,” આ પ્રકારની માન્યતા ધરાવનાર અને તેને
 અનુરૂપ જ ધર્મનું આચરણ કરનાર જે પુરુષો હોય છે તેમને ‘ગૃહિધર્મી’ કહે છે.
 તે લોકોની એવી માન્યતા છે કે “ગૃહસ્થાશ્રમ જેઓ કોઈ ધર્મ થયો, પણ નથી.
 અને થવાનો પણ નથી. જે લોકો ધીર હોય છે તેઓ જ તેનું પાલન કરી રહે છે
 અને જે લોકો ક્લીબ (કમજોર) હોય છે તેઓ જ વ્રતોની આરાધના કરે છે.
 યાજ્ઞવલ્કય આદિ તત્ત્વચિન્તકો દ્વારા રચિત ધર્મસંહિતા આદને આધારે જેઓ
 ધર્મનો વિચાર કરે છે, અને તેને અનુસાર જ પોતાની દૈનિક પ્રવૃત્તિ ચલાવે છે
 તેમને “ધર્મચિન્તક” કહે છે.

જેઓ દેવ, નૃપ, માતા, પિતા, અને તિર્યગાદિનો કોઈપણ પ્રકારનો ભેદભાવ
 રાખ્યા વિના એક સરખો વિનય કરે છે, તેમને ‘અવિરુદ્ધ’ (વૈનયિક મિથ્યાદષ્ટિ)

અક્રિયાવાદિનઃ, એતે હિ પુણ્યપાપપરલોકાદિકં ન મન્યન્તે, અતઃ સર્વપાષણ્ડિ-
વિરુદ્ધાચારત્વાદેતે વિરુદ્ધા ઉચ્યન્તે ।

નન્વેતેષામક્રિયાગાદીનાં પુણ્યપાપાદ્યસ્વીકરણાત્ ઇન્દ્રાદ્યુપલેપનકર્તૃત્વં ન સંભ-
વતીતિ ચેત્, ઉચ્યતે, પુણ્યપ્રાપ્તીચ્છયા યદ્યપિ તેષામ્ ઇન્દ્રાદ્યુપલેપનકર્તૃત્વં ન
સંભવતિ તથાપિ જીવિકોદ્દેશેન તુ તત્સંભવત્યેવેતિ ન કશ્ચિદ્ દોષઃ ।

વૃદ્ધશ્રાવકાઃ=વૃદ્ધાઃ પ્રાચીનકાલમપેક્ષ્ય વૃદ્ધાઃ, તથા શ્રાવયન્તીતિ શ્રાવકાઃ-
બ્રાહ્મણાઃ—ઋષભદેવજ્યેષ્ઠપુત્રભરતશાસનકાલે યે દેવગુરુધર્મસ્વરૂપં શ્રાવયિતાર

પુણ્ય, પાપ ઓર પરલોક આદિ કી માન્યતા સે જો વહિર્ભૂત હોતે હૈં એસે
અક્રિયાવાદી વિરુદ્ધ હૈં । ઇનકા આચારવિચાર સર્વ પાશ્વણ્ડિયો સર્વ ધર્મવાલે
કી અપેક્ષા વિરુદ્ધ હાતા હૈં । ઇસલિયે યે વિરુદ્ધ કહે જાતે હૈં ।

શંકા—યે અક્રિયાવાદી જવ પુણ્યપાપ આદિ કુછ મી નહીં માનતે હૈં
—તવ ઇન્દ્ર આદિ કા યે ઉપલેપન આદિ કયોં કરેંગે—અર્થાત્ નહાં કરેંગે,
એસી સ્થિતિ મેં ઇન્દ્રે ઇન્દ્રાદિકે ઉપલેપન આદિકે કર્તૃત્વ મેં કયોં ગિનાયા
ગયા હૈં—સો ઇસ શંકા કા ઉત્તર ઇસ પ્રકાર સે હૈં કિ ઇન મેં મલે હી પુણ્ય
પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા સે ઇન્દ્રાદિક કા ઉપલેપન કર્તૃત્વ સંભવન હો—તોમી
આજિવિકા કે ઉદ્દેશ સે ઇનમેં ઇન્દ્રાદિક કા ઉપલેપનાદિ કરના સંભ-
વિત હોતા હી હૈં । અતઃ સૂત્રકાર કી કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક મેં ઇનકી
પરિગણના નિર્દુષ્ટ હૈં । વૃદ્ધશ્રાવક કા અર્થ યહાં બ્રાહ્મણ સે હૈં । ક્યોંકિ પ્રાચીન

કહે છે. જેઓ પાપ, પુણ્ય, પરલોક આદિને માનતા જ નથી એવાં અક્રિયાવાદીને
‘વિરુદ્ધ, કહે છે. તેમના આચારવિચાર અધાં ધર્મવાળા કરતાં વિરુદ્ધના જ હોય છે.

શંકા—તે અક્રિયાવાદીઓ જે પાપ પુણ્ય આદિમાં માનતા જ નથી. તો
તેઓ ઇન્દ્ર આદિનું ઉપલેપન, પૂજન આદિ શા માટે કરે ? કહેવાનું તાત્પર્ય એ
છે કે સૂત્રમાં ઇન્દ્રાદિનું ઉપલેપન, પૂજન આદિ કરનારમાં આ અક્રિયાવાદીઓને
પણ ગણાવવામાં આવેલ છે. અક્રિયાવાદીઓ આ પ્રકારની ક્રિયાઓ કરે તે કેવી
રીતે માની શકાય ?

ઉત્તર—ભલે તેઓમાં પુણ્યપ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી ઇન્દ્રાદિનું ઉપલેપન, પૂજન આદિ
ક્રિયાઓ કરવાની વાત અસંભવિત હોય પરંતુ આજિવિકા ચલાવવાના હેતુથી તેઓમાં
પણ ઇન્દ્રાદિકનું ઉપલેપન પૂજન આદિ ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે. તેથી
સૂત્રકારે કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યકમાં તેમની જે પરિગણના કરી છે તે નિર્દોષ કથનરૂપ
જ સમજવી જોઈએ.

આ સૂત્રમાં ‘વૃદ્ધશ્રાવક’ આ પદ બ્રાહ્મણના અર્થમાં વપરાયું છે, કારણ કે
અહીં પ્રાચીન કાળની અપેક્ષાએ તેમનામાં વૃદ્ધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. આ

આસન્ અતઃપશ્ચાદ્, ત ઇવ પશ્ચાદ્ બ્રાહ્મણા જાતાઃ । ઇતેષામિતરેતરસ્યોગદ્વન્દ્વઃ, તે પ્રમૃતયઃ=આઘાઃ=મુખ્યા યેષાં તે તથા, પ્રમૃતિગ્રહણાત્ પરિવ્રાજકાદીનાં સંગ્રહઃ, પાષ્ણંડસ્થાઃ=પાષ્ણંડ=વ્રતં તત્ર તિષ્ઠન્તીતિ પાષ્ણંડસ્થાઃ=વ્રતિનઃ કલ્યે પ્રાદુષ્પ્રમા-તાયાં રજન્યાં યાવત્તેજસા જ્વલતિ, ઇતેષાં પદાનાં ધ્યાત્વ્યા પૂર્વસૂત્રે કૃતા તત ઇવાવગન્તવ્યા, હ્રદ્રસ્ય વા સ્કન્દસ્ય=કાર્તિકેયસ્ય વા, રુદ્રસ્ય=હરસ્ય વા, શિવસ્ય =વ્યન્તરવિશેષસ્ય વા, વૈશ્રવણસ્ય વા, દેવસ્ય=સામાન્યદેવસ્ય વા, નાગસ્ય=

કાલ કી અપેક્ષા લેકર ડનમેં વૃદ્ધતા કહી ગઈ હૈ, ઓર વહ હસ પ્રકાર સે હૈ કિ—જવ ઋષભદેવ ભગવાન્ યહાં ચિરાજમાન થે, તથ ડનકે જ્યેષ્ઠપુત્ર ભરત-ચક્રવર્તી ને અપને શાસનકાલ મેં દેવ ગુરુ ધર્મ કે સ્વરૂપ કો સુનાને કે લિયે હનકી સ્થાપના કી થી । અતઃ સ્થાપના કા કાલ બહુત હી અધિક પ્રાચીન હસ તરહ સે પ્રમાણિત હોતો હૈ ! વાદ મેં યે વૈદિકધર્મ કે ઉપાસક બન ગયે અતઃ યે બ્રાહ્મણ કહલાને લગે । યહાં પ્રમૃતિ શબ્દ સે પરિવ્રાજક આદિ કોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । પાષ્ણંડ શબ્દ કા અર્થ વ્રત હૈ । વ્રતકા પાલન કરને વાલે પાષ્ણંડસ્થ હૈ । યહાં યાવત્ શબ્દ સે ૨૧, વેં સૂત્ર મેં વચિત પ્રાતઃકાલ કી ૩ અવસ્થાઓં કા ઓર મૂર્ચ કે સહસ્ત્રરશ્મિ-દિનકર આદિ વિશેષોં કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । સ્કન્દ નામ કાર્તિકેય કા હૈ । રુદ્રનામ મહાદેવ કા હૈ । શિવ-વ્યન્તરદેવ વિશેષ કા નામ હૈ । વૈશ્રવણ

કથતનું નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ સમજવું—જ્યારે ઋષભદેવ ભગવાન અહીં વિરાજ-માન હતા, ત્યારે તેમના જ્યેષ્ઠ પુત્ર ભરત ચક્રવર્તીએ પોતાના શાસનકાળમાં દેવ, ગુરુ અને ધર્મનું સ્વરૂપ સંભળાવવાનો કાળ ઘણો જ પ્રાચીન હોવાની વાત પ્રમાણિત (સિદ્ધ) થઈ ગય છે. ત્યાર બાદ તે લોકો વૈદિક ધર્મના ઉપાસક બની ગયા, અને તે કારણે બ્રાહ્મણ તરીકે ઓળખાવા લાગ્યા આ રીતે પ્રાચીન કાળમાં જેઓ જિનેન્દ્રના ઉપાસકો હતા, પણ પાછળથી વૈદિક ધર્મના ઉપાસક બની ગયા. એવા લોકોને અહીં “વૃદ્ધશ્રાવક” કહ્યા છે. અહીં ‘પ્રમૃતિ’ પદનો પ્રયોગ કરીને સૂત્રકારે અહીં પરિવ્રાજક આદિ અન્ય પત્રના લોકોને ગ્રહણ કરવાનું સૂચન કર્યું છે.

“પાષ્ણંડ” આ પદ “વ્રત”ના અર્થમાં વપરાયું છે. વ્રતને પાલન કરનારને ‘પાષ્ણંડ’ કહે છે. “કલ્લં પાઉપ્પમાયાણ રયણીણ જાવ તેયસા જલંતે” આ સૂત્રપાઠમાં જે ‘જાવ (યાવત્)’ પદ આવ્યું છે. તેના દ્વારા ૨૧ માં સૂત્રમાં દ્રિષ્ટ પ્રાતઃકાળની ત્રણ અવસ્થાઓને તથા સૂર્યના સહસ્ત્રરશ્મિ. દિનકર આદિ વિશેષણોને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે.

સ્કન્ધ એટલે કાર્તિકેય. રુદ્ર એટલે મહાદેવ. શિવ’ આ શબ્દ વ્યન્તરદેવ.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૨૧ કુપ્રાવચનિકઃશ્યાવશ્કનિરૂપણમ્

૧૪૯

ભવનપતિવિશેષસ્ય વા, યક્ષસ્ય વા, ભૂતસ્ય વા યક્ષોભૂતૌ વ્યન્તરવિશેષૌ સુક-
ન્દસ્ય=નારાયણસ્ય વા, આર્યાયાઃ=આર્યાદેવી વિશેષઃ, તસ્યા વા, દુર્ગાયાઃ—
સિંહારૂઢામહિષાસુરં હંતું તદુપરિનિહિતૈકચરણા દુર્ગા તસ્યા વા, કોટ્ક્રિયાયાઃ
=મહિષકુટ્વનપગા કોટ્ક્રિયા—તસ્યા વા, ઉપલેપનસંમાર્જનાવર્ષણધૂપપુષ્પગન્ધમાલ્યા-
દિકાનિ=દ્રવ્યાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । તત્ર ઉપલેપનમ્=નવનીતાદ્યુપલેપઃ, સંમાર્જનમ્=
વસ્ત્રસ્વંડેન સંશોધનમ્, આવર્ષણમ્=દુગ્ધ-ગન્ધોદકાદિના સ્નપનમ્, પુષ્પમ્=પુષ્પૈઃ
પૂજનમ્, ધૂપઃ=ધૂપદાનમ્, ગન્ધઃ=ચન્દનાદ્યનુલેપનમ્, માલ્યમ્=માલાપરિધાનમ્,
ઇતાન્યાદૌ યેષાં તાનિ તથા, દ્રવ્યાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । અયં ભાવઃ—ય ઇમે
ચરકચીરિકાદયઃ પાષ્ણંડસ્થાઃ કલ્યે પ્રાદુષ્પ્રમાતરજન્યાદિક્રમેણ સમુત્થાય ઇન્દ્રા-

કુબેર કા નામ હૈ । ભવનપતિ વિશેષ નાગકુમાર વા નામ નાગ હૈ । યક્ષ ઔર
ભૂત યે વ્યન્તરદેવવિશેષ હૈ । નારાયણ વા નામ સુકુંદ હૈ । દુર્ગા નામ કી
એક દેવી હૈ । જિસકી સવારી સિંહ પર હૈ । મહિષાસુર કો મારને કે લિયે
इसका एक चरण सिंह पर रखा रहता है—इसरूप में इसकी मूर्ति बनी हुई
होती है । कोट્ક્રિયા નામ કી બી એક દેવી હંતી હૈ । જિસને મહિષાસુર
કા નાશ ક્રિયા હૈ । નવનીત—મવસ્ત્રન આદિ વા ઇન પર ઉપટન કરના इसका
नाम उपलेपन है । વસ્ત્રસ્વંડ સે ઇન્કો જાડના પંછના इसका नाम संमार्जन
है । दुग्ध एवं गन्धोदक से इन्हें नहलाना इसका नाम स्नपन है । તાત્પર્ય
કહને કા યહ હૈ કિ જો ચરક ચીરક આદિ પાષ્ણંડસ્થ પ્રાતઃકાલ આદિ કે

વિશેષને માટે વપરાયો છે. ધૈશ્રણ્ય એટલે કુબેર નામનો લોકપાલ. દસ પ્રકારના
ભવનપતિ દેવોમાં જે નાગકુમાર દેવો છે તેમને અહીં “નાગ” કહેવામાં આવેલ
છે. યક્ષ અને ભૂત. આ બંને વ્યન્તર નિકાયના દેવો છે. “સુકુંદ” એટલે નારાયણ
(વિષ્ણુ ભગવાન), “દુર્ગા” આ નામની એક દેવી છે. તે સિંહ પર સવારી કરે છે.
મહિષાસુરને મારનારી આ દેવીની એવી મૂર્તિ બનાવવામાં આવે છે કે જેનો એક
ચરણ મહિષાસુર પર અને બીજો સિંહ પર રહેલો હોય છે. “કોટ્ક્રિયા” આ નામની
પણ એક દેવી હોય છે. જેણે મહિષાસુરનો ધ્વંસ કર્યો હતો.

હવે ઉપલેપન આદિ પદોનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—ઉપયુક્ત દેવ-
દેવીઓની મૂર્તિ પર માળા આદિનું ઉપટન (લેપન) કરવું તેનું નામ ઉપલેપન
છે. વસ્ત્રના કકડા વડે તેમની મૂર્તિઓને લૂછવી અથવા જાપટવી તેનું નામ સંમા-
ર્જન છે. દૂધ અને ગન્ધોદક (સુગન્ધયુક્ત જળ) આદિ વડે તેમની મૂર્તિઓને
નવરાવવી તેનું નામ ‘સ્નપન’ છે.

આ સઘળા કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે ચરક, ચીરિક આદિ ઉપયુક્ત પાષંડ-
સ્થો (પાખંડીઓ) પ્રાતઃકાળ આદિ સમયે ઇન્દ્રાદિકોની પ્રતિમાઓનું ઉપલેપન આદિ

૧૫૦

અનુયોગદ્વાર સૂત્રે

દીનામુપલેપનાદીનિ દ્રવ્યાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ, તૈઃ કૃતમુપલેપનાદિકં કુપ્રાવચનિકં દ્રવ્યાવશ્યકમિતિ । અત્રાપિ અપ્રાધાન્યાદ્ દ્રવ્યત્વમ્, અપ્રાધાન્યં ચોપલેપનાદૌ મોક્ષકારણભાવાવશ્યકાપેક્ષયા બોધ્યમ્,

મોક્ષકારણં તુ ભાવાવયવમેવ ન તુ દ્રવ્યાવશ્યકમ્,

અતોઽથોપલેપનાદિ દ્રવ્યાવશ્યકસ્થાપાધાન્યં ભવતીતિ ।

સર્વથા-આગમત્વાભાવાત્ નોઆગમત્વં ચ જ્ઞેયમ્ । તદેતત્કુપ્રાવચનિકં દ્રવ્યાવશ્યકં વર્ણિતમિતિ ॥સૂ. ૨૧॥

જ્ઞાયકશરીર-ભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તં દ્રવ્યાવશ્યકત્વય લોકોત્તરિકરૂપં તૃતીય-
ભેદમાહ--

મૂલમ્—સે કિં તં લોગુત્તરિયં દઢ્વાવસ્સયં ? લોગુત્તરિયં દઢ્વા-
વસ્સયં જે ઇમે સમણગુણમુક્કજોગી છક્કાયનિરણુવં.પા હય ઇવ ઉદ્દામા,
ગયા ઇવ નિરંકુસા, ઘટ્ટા મટ્ટા તુપ્પોટ્ટા પંડુરપડપાઉરણા જિણાણાં
મણાણાં સહંદં વિહરિઊણં ઉમઓ કાલં આવસ્સયસ્સ ઉવટ્ટંતિ ।
સે તં લોગુત્તરિયં દઢ્વાવસ્સ । સે ત જાણયસરીરભવિયસરીર-
વહરિત્તં દઢ્વાવસ્સયં । સે તં નોઆગમઓ દઢ્વાવસ્સયં ॥સૂ. ૨૨॥

હો જાને પર ઇન્દ્રાદિકોં કી પ્રતિમાઓં કા ઉપલેપન આદિ આવશ્યક કૃત્ય કરતે હૈં વે સબ કૃત્ય કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈં । ઇન ઉપલેપનાદિ ક્રિયાઓં મેં મોક્ષ કે કારણભૂત ભાવાવશ્યક કી અપેક્ષા અપ્રાધાનતા હોને સે દ્રવ્યત્વ જાનનાં ચાહિયે ઓર સર્વથા આગમ કે અભાવ કી અપેક્ષા નોઆગમતા જાનની ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક કા યહ સ્વરૂપવર્ણિત કિયા હૈં । ભાવાર્થ સ્પષ્ટ હૈં--સૂત્ર ૨૧॥

અબ સૂત્રકાર તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક કા તૈસરા ભેદ જો લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈં--ઉસકા કથન કરતે હૈં--

આવશ્યક કૃત્યો કરે છે. તે બધાં કૃત્યોને કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવે છે. તે ઉપલેપન આદિ ક્રિયાઓમાં મોક્ષના કારણભૂત ભાવાવશ્યકની અપેક્ષાએ અપ્રાધાનતા હોવાથી દ્રવ્યત્વને સદ્ભાવ સમજવો જોઈએ. અને આગમના સર્વથા અભાવની અપેક્ષાએ “નો આગમતા” સમજવી જોઈએ. આ પ્રકારે કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યકત્વ આ સ્વરૂપ અહીં પ્રતિપાદિત કરવામાં આવ્યું છે. ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે. ॥સૂ. ૨૧॥

તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકના લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક નામના ત્રીજા લેદ્ધત્વ સ્વરૂપ હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે--“સે કિં તં લોગુત્તરિયં” ઇત્યાદિ--

अनुयोगचन्द्रिका टीका--सू. २२ तद्व्यतिरिक्तलोकोत्तरीयद्रव्यावश्यकनिरूपणम् १५१

छाया—अथ किं तद् लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकम् ? लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकं—य इमे श्रमणगुणमुक्तयोगिनः षट्कायनिरणुकम्पाः हया इव उदामानः, गजा इव निरकुंशाः, घृष्टाः सृष्टाः, तुप्रोष्टाः पाण्डुरपटप्रावरणाः जिनानामनाज्ञया स्वच्छन्दं विद्वस्य उभयकालम् आवश्यकाय उपतिष्ठन्ते । तदेतद् लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकम् । तदेतद् ज्ञायकशरीर-भन्दशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यकम् । तदेतद् नो आगमतो द्रव्यावश्यकम् ॥सू० २२॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । अथ किं तद् लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकम् ? उत्तरमाह—लोकोत्तरिकं लोकेषु=भुवनत्रये उत्तराः=उत्कृष्टतराः साधवः, यदा—लोकेषु=भुवनत्रये उत्तरम्=उत्कृष्टतरं जिनप्रवचनं, तेषां तस्य वा इदम्—लोकोत्तरिकं साधुसम्बन्धिजिनशासनसम्बन्ध वा, द्रव्यावश्यकम् एवं विज्ञेयम् य इमे श्रमणगुणमुक्तयोगिनः—श्रमणाः=साधवस्तेषां गुणाः=मूलोत्तरगुणरूपाः, तत्र—आणतिपातविरमणादो मूलगुणाः, पिण्डविशुद्ध्यादयस्तत्तरगुणाः—तेषु मुक्तः=परित्यक्तो योगो=व्यापारो दैस्ते श्रमणगुणमुक्त-

‘से किं तं लोकोत्तरियं’ इत्यादि । ॥सूत्र २२॥

शब्दार्थ—(से) हे भर्त । (तं) लोकोत्तरियं द्रव्यावस्यं किं लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(लोकोत्तरियं द्रव्यावस्यं) लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक का स्वरूप इस प्रकार है—(जे इमे समणगुणमुक्तजोगी छक्काय निरणुकम्पा हया इव उदामा) श्रमण के मूल गुणों और उत्तर गुणों में जिनका व्यापार परित्यक्त हो चुका है—अर्थात्—मूलोत्तर गुणों में जिनकी बिल्कुल आस्था नहीं उपेक्षा है अर्थात् उनसे जो रहित है तथा छहकाय के जीवों के प्रति जिन के अन्तःकरण में दया नहीं है, अतएव उदण्ड घोड़ों की तरह जिनकी प्रवृत्ति बिल्कुल हो रही है—

शब्दार्थ—(से) शिष्य शुरुने जेवो प्रश्न पूछे छे—(तं) लोकोत्तरियं द्रव्यावस्यं किं ? हे भदन्त ! पूर्वप्रस्तुत लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यकतुं स्वरूप केवुं छे ?

उत्तर—(तं) लोकोत्तरियं द्रव्यावस्यं लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यकतुं आ प्रकटतुं स्वरूप छे.

(जे इमे समणगुणमुक्तजोगी छक्काय निरणुकम्पा हयाइव उदामा) श्रमणना भूणशुषो अने उत्तरशुषोभांथी जेमने व्यापार (प्रवृत्ति) परित्यक्त थछे चुकी छे—अेतवे छे सुलोत्तरशुषोभां जेमने निवकुल आस्था नथी पणु उपेक्षा न छे—अेतवे छे जेमो श्रमणना भूणशुषोथी अने उत्तरशुषोथी रहित छे. तथा छक्कायना जेवो प्रत्ये जेमना अन्तःकरणभां हया नथी. अने ते धारणे उद्दम अश्वनी जेम जेमनी

યોગિનઃ, મૂલોત્તરગુણરહિતા इत्यर्थः । एते कदाचित् सानुकम्पा अपि, युरित्याह—‘उक्तायनिरणुकम्पा’ इति । पङ्क्त्यायनिरणुकम्पाः—पङ्क्त्येषु—
=पृथिव्यादिषु निर्गता=अनुकम्पा दया येषां ते तथा, पङ्क्त्यजीवनिकायदयावर्जिताः
अत एव—ते हया इव उदामानः=वलगाः हिता अश्वा इव, चरणनिपातजीवोप-
मर्दनिरपेक्षत्वात् द्रुतचारिणः, गजा इव निरङ्कुशाः=आचार्याञ्जोल्लङ्घनशीलत्वात्
तथा—घृष्टाः=फेनादिना रुक्षणीकृत=जङ्गाधवयवा अवयवावयविनोरभेदापचारात्
घृष्टाः । तथा—मृष्टाः=तैलादवादिना मृष्टाः चिकणीकृताः केशाःशरीरं वा येषां ते
मृष्टाः, तथा—तुष्पोष्ठाः-तुष्पाः=शीतकालव रुक्षत्वापन्नानर्थं नवनीतादिस्निग्धपदार्थै-
र्ऋक्षिता ओष्ठा येषां ते तथा, नवनीतादिभिः चिकणितौष्ठा इत्यर्थः, तथा—

अર્थात् जिस प्रकार विनालगाम के अश्व चरण निपात में जीवोपमर्दन निरपेक्ष होने से
द्रुतगति किया करते हैं उसी तरह जो ईर्यासमिति से रहित होने के कारण
दवदक्कारी (द्रुतचारी) होते हैं (गयाइव निरङ्कुसा) मदनोन्मत्त हाथी की तरह जो
निरङ्कुश होते हैं—जिस प्रकार मदनोन्मत्त गज अपने महावत् की आज्ञा से
बहिर्भूत बन जाया करता है—उसी प्रकार जो आज्ञा को नहीं मानते हैं—
(घट्टा) जिन्होंने फेन आदिसे जंघा आदि अवयवों का चिकण—मुलायम) बनाया
है (मृष्टा) तैल आदिस्निग्धपदार्थों से केशों का जो संस्कार करते हैं, जल
से बा २ जो शरीर को धोते रहते हैं (तुष्पोष्ठा) शीतकाल जन्य ओष्ठों की
रुक्षता हटाने के लिये जो नवनीत-मखन-आदि स्निग्धपदार्थों की उनमें
मालिश करते हैं—अर्थात् नवनीतादिक की मालिश से जो अपने ओष्ठयुगल

પ્રવૃત્તિ ચાલી રહી છે. એટલે કે જેવી રીતે અશ્વ જમીન પર ચરણ સુકતી વખતે
જીવોપમર્દનની પેરવી કર્યા વિના દ્રુતગતિથી ચાલ્યા કરે છે. એજ પ્રમાણે જેઓ
ઇર્યાસમિતિથી વિહીન હોવાને કારણે જીવોપમર્દનની પરવા કર્યા વિના શીઘ્રગતિથી
ચાલ્યા કરતાં હોય છે (દ્રુતાચારી હોય છે). (ગયાइव निरङ्कुसा) જેઓ મદોન્મત્ત
હાથીના જેવાં નિરંકુશ હોય છે—જેમ મદોન્મત્ત હાથી તેના મહાવતની આજ્ઞા
પ્રમાણે ચાલતો નથી એજ પ્રમાણે જેઓ ગુરુની આજ્ઞાને માનતા નથી. (घट्टा)
ફેન (એક પ્રકારનો સ્નિગ્ધ પદાર્થ) આદિ વડે જેમણે બાંધ આદિ અવયવોને મુલા-
યમ બનાવ્યાં છે. (मृष्टा) તેલ આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થ વડે જેઓ પોતાના વાળનો
સંસ્કાર કરે છે. અને જેઓ જળથી શરીરને વારંવાર ધોયા કરે છે.
ધોયાં કરે છે, (तुष्पोष्ठा) ઠંડીને કારણે ફાટી ગયેલા હોઠની રૂક્ષતા દૂર કરવાને માટે
જેઓ માખણ, સ્નો, વેસેલીન આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થોનું તેના પર માલિશ કરે છે,
એટલે કે જેઓ સ્નો આદિના માલિશ વડે પોતાના હોઠોને મુલાયમ રાખવાનો

अनुयोगचन्द्रिका टीका. २२ तद्व्यतिरिक्तलोकोत्तरीयद्रव्यावश्यकनिरूपणम् १५३

पाण्डुरपटप्रावरणाः—पाण्डुराः धौताः मलपरीषहसहनाक्षमत्वात्, पटाः=परिधान-
वस्त्राणि, प्रावरणानि—शरीराच्छादनवस्त्राणि च येषां ते तथा, परिहितनिर्मल-
वसनाः, जिनानामनाङ्गया स्वच्छदं विहृत्य—जिनाङ्गामनादृत्य स्वस्व रुच्या विविध-
क्रियाः कृत्वा उभयकालं—प्रातःसायम् आवश्यकाय—प्रतिक्रमणाय उपतिष्ठन्ते—
उद्युक्ता भवन्ति । तत्सेवामावश्यकं लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकम् । अत्र द्रव्यावश्यक-
त्वं भावशून्यत्वात्, तत्कलाभावात्, संसारकारणत्वाच्च अप्रधानतया बोध्यम् ।

को चिकने रखते हैं. (पंडुरपटपाउरणा) जो मल परीषह को सहने में असमर्थ होने के कारण अपने पहनने और ओढ़ने के वस्त्रों को धोने में आसक्त रहते हैं—(जिणाणमणाणाए) जिन भगवान् की आज्ञाकी परवाह न करके जो (स छंदं विहरिज्जं) अपनी अपनी रुचि के अनुसार विविध क्रियाओं को करके (उभओ कालं) प्रातः सायं दोनों समय (आवस्सयस्स उवट्ठंति) प्रतिक्रमण करने के लिये उद्युक्त होते हैं (से) सो (तं लेउत्तरियं दव्वावस्सयं) उनका वह आवश्यक प्रतिक्रमण—लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक हैं । (से तं जाणयसरीर भविय सरीरवहरितं दव्वावस्सयं) इस तरह ज्ञायकशरीर और भव्यशरीर इन दोनों से जुदा यह द्रव्यावश्यक—लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक है । इन क्रियाओं में भाव-
शून्यता होने के कारण उनका कोई वास्तविक फल प्राप्त नहीं होता है—
उल्टा उन से संसार का ही वर्धन होता है । इसलिये इन भावशून्य द्रव्य-
लिङ्गि साधुओं द्वारा किया गया आवश्यक कर्म अप्रधान होने के कारण द्रव्या-

अथत्न करता रहे छे, (पंडुरपटपाउरणा) जेयो मलपरीषहने सहन करवाभां अस-
मर्थ होवाने कारणे पोताना पहरेवा ओढ़वाना वस्त्रोने धोवाभां आसक्त रहे छे.
(जिणाणमणाणाए) जिनेन्द्र भगवान्नी आज्ञानी परवा कथां विना जेयो (सछंदं
विहरिज्जं) पोतानी छच्छा अनुसारनी विविध क्रियाओ करीने (उभओकालं)
प्रातःकाल अने सायंकाल, आ अन्ने समये (आवस्सयस्स उवट्ठंति) प्रतिक्रमण कर-
वाने तैयार थाय छे, (से तं लेउत्तरियं दव्वावस्सयं) तो तेमनी ते आवश्यक
क्रियाइय प्रतिक्रमण लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यकइय अण्णाय छे. (से तं जाणयसरीर भविय
सरीरवहरितं दव्वावस्सयं) ज्ञायकशरीर अने भव्यशरीर, आ अन्नेथी बिन्न
कोवा द्रव्यावश्यकना लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक नामना श्रीअ लेइतुं आ प्रकारतुं स्व-
इय समज्जुं. आ क्रियाओभां भावशून्यता होवाने कारणे तेमनुं कोइ वास्तविक
इय प्राप्त थतुं नथी, परन्तु जेहो संसार ज वधे छे. तेथी आ प्रकारना द्रव्य-
लिङ्गी साधुओ द्वारा करवाभां आवेलुं आवश्यककर्म अप्रधान होवाने कारणे द्रव्या-

નોઆગમત્વં ચ દેશે ક્રિયાલક્ષणे आगमाभावात् । 'नो' शब्दस्यात्र देशप्रतिषेध-
वचनत्वं बोध्यम् । आवश्यकज्ञानसद्भावादागमोऽपि देशतो वर्तते, इति ।

अत्र लोकोत्तरिकद्रव्यावश्यकके दृष्टान्तः प्रदर्शयते—पुरा वसन्तपुरे नगरेऽ-
गीतार्थे एकः संघो विहरति। तत्र संघे साधुगुणरहितः कश्चित्संविग्नाभासः
साधुः प्रतिदिनं पुरःकर्मादिदोषदुष्टमनेषणीयं भक्तादि गुणीश्वा महता संवेगेन
प्रतिक्रमणकाले सर्वमालोचयति । अगीतार्थो मच्छाचार्यश्च तस्मै अगीतार्थत्वात्

वश्यक माना गया है ऐसा जानना चाहिये । यहां पर 'नो' शब्द एक देश प्रति-
षेध अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । अर्थात् परिक्रमण क्रियाएँ एकदेश में आगम
रूपता नहीं है । परन्तु प्रतिक्रमणरूप आवश्यक के ज्ञान का सद्भाव होने से
वहां आगम भी इस तरह एकदेशरूप आवश्यक क्रिया में आगम का प्रति-
षेध वह 'नो' शब्द करता है । और यह प्रकट करता है कि यहां केवल
आगम एकदेश में वर्तमान है । इस तरह "नो" शब्द में देश प्रतिषेधवच-
नता जाननी चाहिये । लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक के ऊपर दृष्टान्त इस प्रकार
से है—प्राचीनकाल में वसन्तपुर नाम के नगर में एक अगीतार्थ संघविहार
करता हुआ आया । उसमें साधुगुणों से रहित एक साधु था । जो संविग्ना-
भास (ऊपर से बैराग्य देखानेवाला) था । वह प्रतिदिन पुरः कर्मादि दोषों
से युक्त अनेषणीय आहार ले करके आता—और बड़े ही संवेग भाव से

વશ્યકરૂપ માનવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું. અહીં "નો આગમ" પદમાં વપરાયેલો
"નો" શબ્દ એક દેશ પ્રતિષેધ (નિષેધ)ના અર્થમાં પ્રયુક્ત થયો છે, એટલે કે
પ્રતિક્રમણ ક્રિયાએ એક દેશમાં આગમરૂપતા હોતી નથી, પરન્તુ પ્રતિક્રમણરૂપ
આવશ્યતા જ્ઞાનનો સદ્ભાવ હોવાથી ત્યાં આગમનો પણ એકદેશની અપેક્ષાએ
સદ્ભાવ હોય છે. આ રીતે 'નો' પદ અહીં એક દેશરૂપ આવશ્યક ક્રિયામાં આગમ-
નો પ્રતિષેધ (નિષેધ) કરે છે, અને એ વાત પ્રકટ કરે છે, કે ત્યાં આગમ કેવળ
એક દેશમાં વર્તમાન છે. આ પ્રમાણે "નો" શબ્દમાં દેશ પ્રતિષેધ વચનતા સમ-
જવી જોઈએ. લોકોત્તરિક દ્રવ્યવશ્યકનું પ્રતિષ્ઠાન કરવાને માટે હવે નીચેનું
દૃષ્ટાન્ત આપવામાં આવે છે—

પ્રાચીન કાળમાં વસન્તપુર નામના નગરમાં અગીતાર્થ સાધુઓનો એક સંઘ
વિહાર કરતો કરતો આવી પહોંચ્યો. તે સંઘમાં સાધુઓના ગુણોથી રહિત, પ્રજ્ઞ
સંવિગ્નાભાસી (ઉપર ઉપરથી બૈરાગ્ય ભાવ દેખાડનારો) એવો એક સાધુ હતો. તે
હંમેશા પુરઃકર્માદિ દોષોથી યુક્ત અનેષણીય (અકલ્પ્ય) આહાર વહોરી લાવતો
હતો, અને પ્રતિક્રમણ કરતી વખતે ઘણા જ સંવેગભાવ પૂર્વક ચેતાના દોષોની

अनुबोगचन्द्रिका टीका—पृ. २२ तद्व्यतिरिक्तलाकोत्तरीयद्रव्यावश्यकरूपणम् १५५

प्रायश्चित्तं प्रयच्छन् एवं वदति-अस्य साधवः । कथमयं स्वदुष्कृतमगोपयन्
अशठतया प्रकाशयति, दोषासेवनं सुकरम्, आलोचना तु दुष्करा, अतोऽशठ-
तयैव शुध्यतेऽसौ । इत्थं तस्य प्रशंसां त्वाऽन्येऽपि अगीतार्थश्रमणास्तं प्रशंस-
न्ति, चिन्तयन्ति च गुरुसमीपआलोचनम् । चेत् शुद्धस्तर्हि असकृद्दोषासेवनायां
कृतायामपि न कश्चिद् दोषः । इत्थं गच्छति कियतिकाले तत्रैकः संविग्नगीतार्थः
कश्चित् साधुः समायातः । स प्रतिदिनमेवंविधं व्यतिकरं विलोक्य तं गच्छा-

प्रतिक्रमण करने के समय में अपने दोषों की आलोचना करता । गच्छाचार्य
जो कि स्वयं अगीतार्थ थे वे अगीतार्थ जान करके उसके लिये प्रायश्चित्त देते
समय ऐसा कहते कि है साधुओं—देखो—यह साधु कितना भला है कि जो
अपने एक भी दोष को नहीं छिपाता है, और सबको सरल भावसे प्रकटकर
देता है । दोषों का सेवन तो हो जाता है, परन्तु उनकी आलोचना करना
बड़ा कठिन काम है । इसलिये यह किसी भी मायाचार के बिना जो
अपने दोषों की आलोचना करता है उसी से यह शुद्ध हो जाता है । इस
प्रकार आचार्यकृत प्रशंसा को सुनकर के संघस्थ अन्य अगीतार्थ श्रमणजन भी
उसकी प्रशंसा करने लगजाते । और विचारने लगते कि गुरु के समीप में
यदि आलोचना करने मात्र से ही दोषों की शुद्धि हो जाता है तो बार २
दोषों के सेवन करने में भी कोई हानि नहीं है । इस प्रकार करते २ जब
कितनाक समय निकल गया—तब उस संघ में एक संविग्न (क्रियापात्र) गीता
र्थ कोई साधु विहार करता हुआ बाहर से आया । जब उसने संघ की इस

आलोचना करता हुआ । ते गच्छना आचार्य के देखो अगीतार्थ होता, तेजो आ
संविग्नलासी साधुने प्रायश्चित्त देती वधते साधुओंनी पासे तेनी आ प्रभाणु प्रशंसा
करा करतां हुतां—“हे साधुओ ! तुओ, आ साधु डेटलो ललो छि के तेना ओक
पणु दोष छुपावतो नथी, अने पोताना सधणा दोषोने सरलभावे प्रकट करी दे छे.
दोषोनु सेवन तो थछ जय छि, परन्तु तेमनी आलोचना करवानुं काम धलुं न
कठणु छि. कोछ पणु प्रकारना मायाचार बिना पोताना दोषोनी आलोचना करवाने
दीधि ते शुद्ध थछ जय छि.” आचार्य द्वारा तेनी आ प्रभाणु प्रशंसा थती जेधने
सधना अगीतार्थ अन्य श्रमणो पणु तेनी प्रशंसा करवा मंडी जता. ते सधना
साधुओमां आ प्रकारनी जोटी मान्यता व्याप्पी जछ के गुरुनी समीपे मात्र आलो-
चना करवाथी न दोषोनी शुद्धि थछ जती होय, तो बारंवार दोषोनु सेवन करवा-
अं पणु कोछ हानि नथी. आ प्रकारनी तेमनी प्रवृत्ति डेटलाक समय सुधी गल्ल
न रही. ओवामां कोछ ओक संविग्न (क्रियापात्र) गीतार्थ साधु गाभ नगर आदिनो
बिहार करतो करतो ते वसन्तपुर नगरमां आवी पहुँचा. ज्यारे तेछे ते अगी-

१५६

अनुयोगीन्द्र

चार्यमुक्तवान्—त्वमस्य शठसाधुः प्रशंसां कुर्वन् अग्निभक्तप्रशंसको नृप इव दृश्यसे ।
गच्छाचार्येण तत्कथां कथयितुं प्रेरितः स संविग्नगीतार्थो मुनिरेवं प्रोक्तवान् ।

आसीद् गिरिनगरवासी कश्चिदग्निभक्तो वणिक् । स प्रतिवर्षं पद्मराग-
रत्नैः गृहं भृत्वा वह्निना तत् प्रदीपयति । अग्नौ तस्यैवं विधं श्रद्धातिशयं
विलोक्य, तन्नगरवासिनो जना नरपतिभाषिवेकितया तं प्रशंसन्त एवंवदन्ति—‘भन्या-
ज्यं वणिक्, यः प्रतिवर्षं पद्मरागैर्वह्निं सन्तर्पयति । अथान्यदा प्रबलपवनवेगेन

प्रकार की प्रतिदिन की व्यवस्था देखी—तब उससे नहीं रहा गया—और गच्छा-
चार्य के पास जाकर उसने उनसे कहा आप इस शठ साधु की जो प्रशंसा
करते हैं—वह कार्य आपका अग्निभक्त की प्रशंसा करनेवाले ए. राजा की
तरह है । यह कथा कैसी है इस प्रकार गच्छाचार्य के पूछने पर उस संवि-
ग्न गीतार्थ साधुने उन्हें यह कथा इस तरह से सुनाई—गिरिनगर में ए अग्नि-
भक्त वणिक् रहता था । वह प्रतिवर्ष पद्मरागरत्नों को घर में भरकर उसमें
आग लगा देता था । उसके अविवेक पूर्ण कार्य की वहां का राजा और
पुरवासिजन सबही प्रशंसा करते । कहते—देखो इसके श्रद्धातिशय को—जो प्रति
वर्ष पद्मरागमणियों से अग्निदेव को संतर्पित रता है । एकदिन की बात
है कि जब उसने पद्मरागमणियों को भरकर घरमें आग लगाई—तब उस समय
आंधी के वेग से अग्निज्वाला इतनी अधिक प्रदीप्त हुई कि उसका संभालना
मुश्किल हो गया—। देखते २ उस प्रदीप्त अग्निने राजमहल सहित उस समस्तनगर

तार्थसंघना ते संविज्ञावासी साधुनी ते प्रकारनी दरदरानी प्रवृत्ति देणी, त्थारे
तेनाथी ते सहन थछ शडी नही. तेणे ते अगीतार्थ संघाचार्यनी पासे जधने
तेमने आ प्रमाणे कहुं—“आप आ शठ साधुनी जे प्रशंसा करे छे ते अग्नि-
भक्तनी प्रशंसा करनारा जेके राजना कार्य जेपुं कार्य छे. त्थारे ते संघाचार्य
तेमने पूछथुं—“अग्निभक्तनी शी कथा छे ?

त्थारे ते संविज्ञ गीतार्थ साधुजे तेमने नीचे प्रमाणे कथा कही—गिरिनगर-
भां जेके अग्निभक्त वणिक् रहेतो हुतो. ते अग्निदेवने पुश करवा भाटे प्रतिवर्ष
पद्मराग रत्नने घरभां लरीने तेने आग लगाउतो हुतो. तेना आ अविवेकपूर्ण
कार्यनी त्याने राजा अने नगरवासीजे पूज प्रशंसा करता हुता. तेजे जेके पीछने
कहेतां—“जुजे तेने अग्निदेव प्रत्ये डेटली जधी श्रद्धा छे । ते श्रद्धाने कारणे तो
ते प्रतिवर्ष पद्मराग मणियोधी अग्निने संतुप्त करे छे.” हुवे जेके दिवसे जेपुं
अन्युं के ज्यारे ते वणिक् घरभां पद्मरागमणियो लरीने घरने आग लगाडी त्थारे
अज्ञानक आंधी जडवाने कारणे ते आग जेभेर प्रसरी जध अने तेने कायुभां

अनुयोगचन्द्रिका टीका. ख० २२ तद्व्यतिरिक्तलोकोत्तरियद्रव्यावशकनिरूपणम् १५७

प्रवृद्धितस्तत्प्रदीपितवह्नीराजप्रासादसहितं समस्तमपि तन्नगरं ददाह । ततो राज्ञा स वणिग्दण्डितो नगराद् निष्कासितश्च ।

तथा त्वमपि अविधिप्रवृत्तस्य अस्य प्रशंसां कुर्वन् आत्मानं संघं च विना क्षयसि । यदि पुनस्तु मेनं शिक्षयसि, तदाऽपर नृप इव स्वपरकल्याणकारको भविष्यसि । तथाहि—

आसीत्कश्चिद् राजा, यो हि तथाविधकर्मकारिणं कंचीदेकं वणिजं समा-
हूय प्रोक्तवान्—‘‘यदि तव पद्मरागमणिभिरग्रेस्तर्पणमावश्यकं, तर्हि वने गत्वा
को भी स्वाहा करा दिया । राजा ने जब परिस्थिति का विचार किया तो
अपने भोजनाना पर उसे बड़ा पश्चात्ताप हुआ । अन्तमें उसने उस वणिक् को दण्डित
करअपने नगर से बाहिर निकाल दिया । इसी प्रकार आप भी अविधि में प्रवृत्त
हुए इस साधु की जो प्रशंसा करते हैं—वह आप का आर संघ का विनाशक है ।
यदि इस संघ में आप किसी एक को भी शिक्षित करदे तो आपका यह कार्य
एक दूसरे राजा की तरह स्व और पर का कल्याणकारक होगा—सुनिये—एक
राजा था। उसके राज्य में भी इसी अग्निभक्त वणिक् की तरह एक वणिक् रहता था।
वह भी प्रतिवर्ष पद्मरागमणियों के घर में भराए उसमें आप लगा देता था—और
इस तरह से अग्नि को संतर्पित किया करता था । जब राजा को उसकी इस बात का
पता लगा—तब उसे बुलाकर उसने कहा कि यदि पद्मरागमणियों से अग्नि
को संतर्पित करना तुम्हारे लिये आवश्यक है—तो तुम यह कार्य नगर में रह

लेवाना कार्य मुश्किल जनी गयुं, ते आगनी ज्वालाभ्यामां राजभट्टे सङ्गत
आयुं नगर लक्ष्मीभूत थयं गयुं, ज्यारे राज्ञे आ परिस्थितिना कारणेना शान्त-
चित्ते विचार कथे त्थ तेने पोतानी अज्ञानताने भाटे पश्चात्ताप थये। तेणे ते
वण्डिकने सज्ज इरमावीने पोताना नगरमांथी डांडी काढये। ते राजनी जेस आप
अविधिमां-पापाचारमां प्रवृत्त थयेला आ थठ साधुनी जे प्रशंसा करे छे, ते
आपने अने संघने विनाश करनारी निवडथे, जे आप आ संघमांथी जेवा जेक
साधुने पणु शिक्षा करीने डांडी काढथे। तो आपहुं ते कार्य जेक भीज राजना
कार्यनी जेस स्व अने परनुं कल्याण करनाइ थय पडथे, हुवे ते सविज्ञ गीताथं
साधु ते राजनी कथा ते आचार्यने कही संलगावे छे—

कोछ जेक राजना नगरमां उपयुक्त अग्निभक्त वण्डिक जेवे, जेक वण्डिक
रहेतो हुतो, ते पणु अग्निदेवने तृप्त करवा नमिस्ते प्रतिवर्ष पोताना घरमां पद्म-
रागमणियो लरीने घरने आग लगाडी देतो हुतो ज्यारे राजने तेनी आ वातनी
भणर पडी त्यारे तेणे ते वण्डिकने पोतानी पासे जेलावीने आ प्रमाणे येतवणु
आपी-जे पद्मराग मणियो घरमां लरीने तेने आग लगाडीने तमे अग्निदेवने

कथं नैव करोषि ? तवैवं धिया क्रिया कदाचित्सम तोऽपि ग्रामो विनश्यत् । इत्येवं तं निर्भर्त्स्य दण्डयित्वा नगराद् निष्कासितवान् । तथा त्वमपि कुरु ।

एवं तेन संविग्नगीतार्थेन बहुशः प्रतिबोधितोऽपि स गच्छाचार्यो यदा स्वव्यापारान्न निवृत्तस्तदा स साधुः अन्यान् गच्छस्थितान् साधून् एवमुक्तवान् — “यद्येषोऽसंविग्नोऽगीतार्थो गच्छाधिपो भवद्भिर्न परित्यज्यते, तदा भवतां महान् अनर्थो भविष्यतीति । एवंविधं साध्वाभासावशः कप्रकारं सर्वं लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकम् । एतत्सर्वं निगमयन्नाह—‘से तं लोमुत्तरियं दव्वावस्सयं’

कर क्यों करते हो—क्यों नहीं जंगल में जाकर इसे किया करते हो । क्यों कि इस तुम्हारी प्रवृत्ति से कभी न कभी समस्त ग्राम के नष्ट होने की संभावना है । अतः तुम इस दुष्प्रवृत्ति का या तो त्याग करो नहीं तो गांव से बाहिर निवल जाओ । इस प्रकार डाट डपट कर उस राजाने उसे दण्डित करके अपने नगर से बाहिर निकाल दिया । अतः आप भी संघ की कल्याण कामना से ऐसा ही कीजिये । इस प्रकार उस संविग्नगीतार्थ साधुने उन गच्छाचार्य को बहुत प्रकार से समझाया । परन्तु जब वे समझाने पर नहीं समझे तब उस आगतसाधुने संघस्थित अन्य साधुओं से इस प्रकार कहा—देखो यह गच्छाधिपति असंविग्न (क्रियाहीन) और अगीतार्थ है, यदि आपलोग इससे अलग नहीं होते हैं—तो इसमें आप सब का बड़ा भारी अनर्थ होगा । इस प्रकार का साध्वाभासों (वेषधारियों) का जो भी आवश्यक प्रकार है वह

संतुष्ट करवानुं आवश्यक मानता हो। तो तमारे नगरमां रहीने जेवुं कार्यं करवुं जेधये नहीं। जंगलमां जधने तमे ते काम करी शके छे। नगरमां रहीने तमे तमारी आ प्रवृत्ति थालु राखशे। तो तमारी आ दुष्प्रवृत्तिने कारखे कोछ वार आभा नगरने लस्भीजुत करी नाखशे। भाटे कां तो तमारी आ दुष्प्रवृत्ति पध करी हो नहीं तो काम छोडीने जता रहो” आ प्रभाखे धमकायीने राजखे तेने पोताना नगरमांथी डांडी काढये। आपे पणु संघना कल्याणने भातर ते शह साधुने संघमांथी डांडी काढवे जेधये। आ प्रभाखे ते संविग्नगीतार्थ साधुखे ते गच्छाचार्यने भूषभूष समनव्या, छतां पणु जयारे तेमखे तेनी वातने न स्वीकारी तयारे ते संविग्नगीतार्थ साधुखे ते संघना अन्य साधुखेने आ प्रभाखे कहुं—“आ गच्छाधिपति असंविग्न (क्रियाहीन) अने अगीतार्थ छे जे आप तेमनाथी जुदा नहीं पडे तो आपनुं अकल्याणु थशे आपना संसार अदृष थवाने जहले दीर्घ थतो जशे।”

आ प्रकारना द्रव्यसिंगी साधुखेनी (मात्र वेधनी अपेक्षाये ज साधु देखाता होय पणु साधुना आचार्याथी रहित होय जेवा साधुने द्रव्यसिंगी कडे छे) जे

अनुयोगवद्द्रव्या टीका सू० २३ भावावश्यकनिरूपणम्

१५६

इति तदेतत् लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकं वर्णितम् । नोआगमतो द्रव्यावश्यकमपि सर्वं निरूपेतमिति ऋकटयितुमाह—तदेतद् नोआगमतो द्रव्यावश्यकं वर्णितम् । तदेतत् द्रव्यावश्यकं वर्णितम्, इति ॥सू० २२॥

अथावसरमाप्तं भावावश्यकं निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं भावावस्सयं ? भावावस्सयं दुविहं पण्णत्तं तं जहा आगमओ य, नो आगमओ य ॥ सू० २३ ॥

छाया—अथ किं तद् भावावश्यकम् ? भावावश्यकं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्य ॥—आगमतश्च, नोआगमतश्च ॥सू० २३॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं भावावस्सयं’ इति । हे भदन्त ! अथ किं तद् भावावश्यकम् ? उत्तरमाह—‘भावावस्सयं’ इति । भावावश्यकं सत्र लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकं है । इस तरह यहाँ तक (से तं नोआगमओ द्रवावस्सयं) पूर्वं प्रक्रान्त नोआगम द्रव्यावश्यक का कथन किया गया है कि नोआगम को लेकर द्रव्यावश्यक के भेद प्रभेदों का पूर्वोक्तरूप से वर्णन हो चुका है । ॥ सूत्र २२ ॥

अब सूत्रकार भावावश्यक का वर्णन करते हैं—

से किं तं भावावस्सयं इत्यादि ॥सूत्र २३॥

शब्दार्थ—(से) हे भदन्त ! भावावश्यक का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(भावावस्सयं दुविहं पण्णत्तं) भावावश्यक दो प्रकार का है । (तंजहा) वे प्रकार ये हैं—(आगमओ य नोआगमओ य) एक आगम को लेकर भावावश्यक और दूसरा नोआगम को लेकर भावावश्यक । विवक्षित क्रिया के अनुभव से युक्त जो साध्यादिरूपपदार्थ है उसका नाम भाव है । यहाँ भाव

कोष्ठ आवश्यक क्रियाओं को धार्य है, ते कोलोत्तरिक द्रव्यावश्यक रूप में गणाय है, (से तं नो आगमओ द्रवावस्सयं) आ रीते अही सुधीमां पूर्वप्रस्तुत नो, आगम द्रव्यावश्यकत्वं कथन करवाभां आ०युं है, ओम भमवुं, कडेवातुं तात्पर्य ओ है कि नोआगमनी अपेक्षाये द्रव्यावश्यकता के लेह-प्रलेहो यडे है, तेभुं वर्णन अही पूरुं थाय है, ॥सू० २२॥

इसे सूत्रकार भावावश्यकता स्वरूपत्वं निरूपण करे है—

“से किं तं भावावस्सयं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से) शिष्य शुरुने ओवो प्रश्न पूछे है कि—(तं भावावस्सयं किं) हे भगवन् ! भावावश्यकत्वं स्वरूप कैवुं कहुं है ?

૧૬૦

અનુયોગદ્વારમુત્રે

इह-विवक्षितक्रियानुभवयुक्तोऽर्थः साध्यादिरूपः स भावः। भाव तद्वतोऽभेदोपचाराद् भावः। यथा-पेश्वर्यरूपायाः इन्दनक्रियायाः अनुभवाद् इन्द्रो भाव उच्यते। भाव-आसौ आवश्यकं च भावावश्यकम्। यद्वा-विवक्षितक्रियानुभवरूपं भावमाश्रित्य आवश्यकं भावावश्यकम्।

તત્ દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તત્ યથા-આગમતત્ત્વ=આગમમાશ્રિત્ય, નોઆગમ-તત્ત્વ=આગમાભાવમાશ્રિત્ય ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં આગમઓ ભાવાવસ્સયં ? આગમઓ ભાવા-વસ્સયં જાણય ઉવઉત્તે । સે તં આગમઓ ભાવાવસ્સયં ॥ સૂ૦ ૨૪॥

છાયા—અથ કિં તદ્ આગમતો ભાવાવશ્યકમ્ ? આગમતો ભાવાવશ્યકં જ્ઞાયક ઉપયુક્તઃ । તદેતદાગમતો ભાવાવશ્યકમ્ ॥ સૂ૦ ૨૪ ॥

और भाववान् में अभेदोपचार किया गया है। इसलिये विवक्षित क्रिया के अनुभव से युक्त अर्थ को भाव कह दिया है। जैसे ऐश्वर्यरूप इन्दन क्रिया के अनुभव से इन्द्र भाव कहा जाता है। भावरूप आवश्यक का नाम भावा-वश्यक है। अथवा विवक्षित क्रिया के अनुभवरूप भाव को लेकर जो आव-श्यक होता है उसका नाम भावावश्यक है ॥ सूत्र २३॥

ભાવાવશ્યક કા સ્વરૂપ આગમ કી અપેક્ષા લેકર સૂત્રવારે આ પ્રકારે સે પ્રકટ કરતે હૈ—સે કિં તં આગમઓ ભાવાવસ્સયં ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૨૪॥

શબ્દાર્થ—હે મંદંત ! આગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવ આવશ્યક કા વગા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ભાવાવસ્સયં દુવિહં પળ્લસં) ભાવાવશ્યકના એ પ્રકાર છે (તંજહા) તે પ્રકારે । નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે (આગમો ય નોઆગમો ય) (૧) આગમની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક અને (૨) નો આગમની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક.

વિવક્ષિત ક્રિયાના અનુભવથી યુક્ત જે સાધુ આદિ રૂપ પદાર્થ છે, તેનું નામ ભાવ છે. અહીં ભાવ અને ભાવવાનના અભેદોપચારની અપેક્ષાએ આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. તેથી વિવક્ષિત ક્રિયાના અનુભવથી યુક્ત અર્થને ‘ભાવ’ કહેવામાં આવ્યો છે. જેમ કે ‘ઐશ્વર્ય’ રૂપ ઇન્દ્રન ક્રિયાના અનુભવથી ઇન્દ્રને ભાવરૂપ કહેવામાં આવે છે. ભાવરૂપ આવશ્યકનું નામ ભાવાવશ્યક છે. અથવા વિવક્ષિત ક્રિયાના અનુભવન અપેક્ષાએ જે આવશ્યક હોય છે, તેનું નામ ભાવાવશ્યક છે. ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

હવે સૂત્રકાર ભાવાવશ્યકના પ્રથમ ભેદ રૂપ જે “આગમનની અપેક્ષાએ ભાવા-વશ્યક” છે, તેના સ્વરૂપનું કથન કરે છે—

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૨૪ ભાવાવશ્યકસૂત્રરૂપનિરૂપણમ્

૧૬૧

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં આગમઓ ભાવાવશ્યકમ્’ इति ।
 अथ किं तद् आगतो भावावश्यकम् ? उत्तरमाह—‘आगमओ भावावश्यकम्’ इत्यादि ।
 आगतो भावावश्यकम् ज्ञातक उपयुक्तः । अयमर्थः—आवश्यक आगतक पदार्थ-
 ज्ञातजनित—संवेगेन विशुध्यमानपरिणामतत्र चोपयुक्तः साध्यादिरागतो भावा-
 वश्यकम् । आवश्यकार्थज्ञानरूपस्यागमस्यात्र सत्त्वात् । भावेश्चात्रावश्यकार्थज्ञान-
 जनितोपयोगवत्त्वात्, भावमाश्रित्यावश्यकमिति व्युत्पत्तेः । इदमुक्तं भवति—भाव-

उत्तर—(आगमओ भावावश्यकं जाणयउवउत्ते) आवश्यकसूत्र के अर्थ को जानने वाला ऐसा उसमें उपयोगयुक्त बना हुआ साध्यादि कि जिसके परिणाम संवेग से विशुद्ध बन रहे हैं आगततः भावावश्यक है । क्योंकि इसमें आवश्यक सूत्र के अर्थज्ञानरूप आगमका सद्भाव हो रहा है । यद्यपि आवश्यक के अर्थज्ञान से जनित जो उपयोग है उसका नाम भाव है । और इस भाव को आश्रित करके जो आवश्यक है वह भावावश्यक है, इस प्रकार की व्युत्पत्ति से आवश्यक अर्थ के ज्ञाता का आवश्यक में उपयोगरूप बना हुआ परिणाम, आगम से भावावश्यकता ठहरता है फिर भी जो साध्यादि को भावावश्यक रूप में कहा जाता है वह इस प्रकार के परिणाम से युक्त होने के कारण उपचार से कहा जाता है ऐसा जानना चाहिये । आवश्यक में जो यह उपयोग परिणाम

‘સે કિં તં આગમઓ ભાવાવશ્યકમ્’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—હે ભગવન્! આગમને આશ્રિત કરીને (આગમની અપેક્ષાએ) ભાવ આવશ્યકતું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(આગમઓ ભાવાવશ્યકં જાણય ઉવઉત્તે) આવશ્યક સૂત્રના અર્થને જાણનારો અને તેમાં ઉપયોગ યુક્ત બનેલો સાધુ કે જેનાં પરિણામો સંવેગને લીધે વિશુદ્ધ બની રહ્યા હોય છે, તે આગમની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક હોય છે, કારણ કે એવા સાધુમાં આવશ્યક સૂત્રના અર્થજ્ઞાન રૂપ આગમનો સદ્ભાવ થઈ રહ્યો હોય છે. જે કે આવશ્યકના અર્થજ્ઞાનથી જનિત જે ઉપયોગ છે તેનું નામ ભાવ છે, અને તે ભાવને આશ્રિત કરીને જે આવશ્યક છે, તેનું નામ ભાવાવશ્યક છે, આ પ્રકારની વ્યુત્પત્તિ અનુસાર આ શ્યક અર્થના જ્ઞાતાનું આવશ્યકમાં ઉપયોગયુક્ત બનેલું પરિણામ (પરિણામવૃત્ત) આગમની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક રૂપ પ્રતિપાદિત થાય છે, છતાં પણ જે સાધુ આદિને ભાવાવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવેલ છે તે આ પ્રકારના પરિણામથી યુક્ત હોવાને કારણે ઔપચારિક રીતે કહેવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું.

રૂપ ભાવાવશ્યક છે વહ ધર્મ પદવાચ્ય છે કયોંકિ યહ શ્રુત ધર્મ કે અન્તર્ગત છે હસી કી માન્યતા કે વિષય મેં જિન ભગવાન કી આજ્ઞા કા સન્નિધિ છે ।—

તાત્પર્ય કહનેકા યહ છે કિ યહાં પર શંકાકાર કી પેસી શંકા હો સકતી છે કિ નામ આવશ્યક, સ્થાપના આવશ્યક ઓર દ્રવ્ય આવશ્યક યે આરાધના કરને યોગ્ય છે પેસી જિન ભગવાન કી આજ્ઞા હી નહીં છે યહ વાત તો નિશ્ચિત છે-કયોંકિ હનમેં ઉપયોગ કા અભાવ છે ઓર ચારિત્ર ગુણ વિહીનતા છે । અતઃ યે કમોં કિ નિર્જરા કે સાધક નહીં હોતે છે । ઓર હસી ધારણ યે ધર્મપદ વાચ્ય હી નહીં હોતે છે । પરંતુ જો સામાયિક આદિ રૂપ લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક છે કિ જો પ્રવચનોક્ત છે-આગમ સંમત છે-વહ તો ધર્મપદવાચ્ય હોના ચાહિયે-સો હસ શંકા કા સમાધાન હસ પ્રકાર સે છે-કિ સામાયિક આદિ ક્રિયાણું પ્રવચનોક્ત અવશ્યક છે તો હી યે જિનાજ્ઞા સે વહિ ભૂત બને હુએ સાધ્વાભાસોં (વેષધારિયોં) દ્વારા કિ જો સ્વચ્છંદ વિહારી હોતે છે, મૂલગુણ ઓર ઉત્તર ગુણોં મેં જિન્હેં આરથા નહીં હોતી છે, છકાય કે જીવોં કી રક્ષા કરનેરૂપ અનુકંપા કા ભાવ જિનકે અંતઃકરણ મેં શૂન્યરૂપ સે રહતા છે અનુપયોગપૂર્વક અપની રુચિ કે અનુસાર યદ્વા તદ્વા ક્રિયા કી

આવશ્યકતાં જે આ ઉપયોગ પરિણામ રૂપ ભાવાવશ્યક છે તે ધર્મ પદવાચ્ય છે, કારણ કે તે શ્રુતધર્મની અંદર સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે. તેની જ માન્યતાના વિષયમાં જિનેન્દ્ર ભગવાનની આજ્ઞાનો સદ્ભાવ છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—
કહાય કેાદને એવી શંકા થાય કે નામ આવશ્યક સ્થાપના આવશ્યક અને દ્રવ્યાવશ્યક, તે ત્રણે આવશ્યકો આરાધના કરવા યોગ્ય છે, એવી જિનેન્દ્ર ભગવાનની આજ્ઞા જ નથી. કારણ કે તેમનામાં ઉપગનો અભાવ છે, અને ચારિત્રગુણ વિહીનતા રહેલી છે તેથી તેઓ કર્મની નિર્જરાના સાધક થતા નથી. અને એજ કારણે તેઓ ધર્મ પદવાચ્ય પણ હોતા નથી. પરંતુ સામાયિક આદિ રૂપ લોકોત્તર દ્રવ્યાવશ્યક, કે જે પ્રવચનોક્ત છે-આગમ સંમત છે, તે તો ધર્મ પદવાચ્ય હોવા જ જોઈએ.

તો તે પ્રકારની શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે સમજવું સામાયિક આદિ ક્રિયાઓ આગમસંમત અવશ્ય છે. પરંતુ જિનાજ્ઞાના પરિપાલનથી જેઓ વિહીન બનેલા છે એવા દ્રવ્યલિંગી (સાધુ વેષધારી) સાધુઓ દ્વારા કરવામાં આવતી તે સામાયિક આદિ ક્રિયાઓ ધર્મ પદવાચ્ય હોઈ શકતી નથી. કારણ કે એવા સાધુઓ તો સ્વચ્છંદ વિહારી હોય છે, મૂલગુણ અને ઉત્તર ગુણોથી તેઓ રહિત હોય છે, છકાયતા છવોની રક્ષા કરવા રૂપ અનુકંપા ભાવનો તેમનામાં સદંતર અભાવ હોય છે, એવા સાધુઓ તો અનુપયોગ પૂર્વક, પોતાની રુચિ પ્રમાણે ક્ષણે એવી રીતે તે સામાયિક આદિ

અનુયોગવદ્ધિકા ટીકા ૨૪ માવાવશ્યકસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૧૬૩

અવશ્યકશાસ્ત્રસ્ય આવશ્યકોપયોગપરિણામ આગમતો માવાવશ્યકમ્ । સાધ્વાદિસ્તુ તાદશપરિણામવત્ત્વાદુપચારાદાગમતો માવાવશ્યકમુચ્યતે ।

હદમાવશ્યકોપયોગપરિણામરૂપં માવાવશ્યકં ધર્મપદવાચ્યં ભવતિ, શ્રુત ધર્માન્તર્ગતત્વાદત્ર જિનાજ્ઞાયાઃ સત્ત્વાત્ ।

જાતી છે । અતઃ વે મી ધર્મપદવાચ્ય નહીં હો સકતી છે । ફસલિયે ઉસ લોકો-ત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક મેં મી નિર્જરાજનકત્વ કા અભાવ હોને સે જિન ભગવાન કી આજ્ઞા ઉસે માન્યતા પદાન કરને કી-વહ આરાધના કરને યોગ્ય છે ફસ પ્રકાર કી-નહીં હૈં । ફસ પ્રકાર યહ આગમ માવાવશ્યક, કા વર્ણન કિયા ।

માવાર્થ—યહ સૂત્રકારને પહિલે હી પ્રગટ કરદિયા છે કિ વિવક્ષિત ક્રિયા કે અનુભવ સે યુક્ત અર્થ કા નામ માવ છે । અર્થાત્ જો આવશ્યક શાસ્ત્ર કા જ્ઞાતા છે ઓર ઉસમેં ઉપયોગ સે યુક્ત છે—એસા સાધ્વાદિરૂપ અર્થ માવાવશ્યક છે । ફસ માવાવશ્યક કે દો ભેદ હૈં—? એક આગમ માવાવશ્યક ઓર દુસરે નોઆગમ માવાવશ્યક । આગમ માવાવશ્યક મેં જ્ઞાતા કા ઉપયોગ રૂપ પરિણામ આગમરૂપ માના ગયા છે । અતઃ વહ પરિણામ આગમ કી અપેક્ષા માવાવશ્યક હોને સે આગમ માવાવશ્યક છે । સાધ્વાદિકોં કિ જો આવશ્યકશાસ્ત્ર કે જ્ઞાતા હોકર ઉસમેં ઉપયુક્ત બને હુએ હૈં જો આગમમાવાવશ્યક વહા જાતા છે વહ ઉસ પરિણામ કી અભેદ વિવક્ષા સે કહા જાના છે । જિન ભગવાન્ ને ફસ આગમમાવાવશ્યક કો હી ધર્મપદવાચ્ય હાને કે કારણ ઉપાદેય

કિયાઓ કરતા હોય છે. તે કારણે તેમની તે કિયાઓ ધર્મ પદવાચ્ય (ધર્મ કહી શકાય એવી) હોતી નથી. તેથી એ લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યકમાં પણ નિર્જરાજનકત્વનો અભાવ હોવાથી જિન ભગવાને તેમને આરાધના કરવા યોગ્ય કહી નથી. આ પ્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા આગમ ભાવાવશ્યકત્વ રૂપ પ્રગટ કરવામાં આવ્યું છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે એ વાત તો આગળ પ્રગટ કરી હીધી જ છે કે વિવક્ષિત કિયાના અનુભવથી યુક્ત અર્થનું નામ ભાવ છે. એટલે કે જે સાધુ આવશ્યક શાસ્ત્રનો જ્ઞાતા છે અને તેમાં ઉપયુક્ત (ઉપયોગ પરિણામથી યુક્ત) છે, એવા સાધુ આદિ રૂપ અર્થને ભાવાવશ્યક કહે છે. આ ભાવાવશ્યકના બે ભેદ બતાવ્યા છે (૧) આગમ ભાવાવશ્યક અને (૨) નોઆગમ ભાવાવશ્યક.

આગમ ભાવાવશ્યકમાં જ્ઞાતાના ઉપયોગ રૂપ પરિણામને આગમ રૂપ માનવામાં આવેલ છે. તેથી તે પરિણામ આગમની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક રૂપ હોવાથી તેને આગમ ભાવાવશ્યક કહેવામાં આવ્યું છે. સાધ્વાદિકોં કે જેઓ આવશ્યક શાસ્ત્રના જ્ઞાતા હોવાની સાથે સાથે તેમાં ઉપયુક્ત બનેલા તેમને જ જે આગમ ભાવાવશ્યક કહેવામાં આવે

नामावश्यकम्-आवश्यकनामको गोपालदारकादिः, स्थापनावश्यकम् आव-
श्यकक्रियावतः कस्यचित् काष्ठकर्मादिषु चित्रम्, द्रव्यावश्यकं च आवश्यकोप-
योगशून्या देहागमक्रियाः । एषावश्यकेषु उपयोगाभावेन चरणगुणरहितत्वेन
च कर्मनिर्जराजनकत्वाभावादाराध्यत्वेन जिनाज्ञा नास्ति, तस्मादेतत् त्रिविध-
मावश्यकं धर्मपदवाच्यं न भवतीति निश्चयः । लोकोत्तरिकद्रव्यावश्यकं—
प्रवचनोक्तं सदपि जिनाज्ञावाद्यैः स्वच्छन्दविहारिभिर्मूलांतरगुणरहितैः षट्काय-
नि-नुकम्पैरनुपयोगपूर्वकं क्रियमाणं सामायिकादिकम् । तदपि धर्मपदवाच्यं न
भवितुमर्हति तत्रापि निर्जराजनकत्वाभावेन विधेयतया जिनाज्ञाया अभावात् ।

उक्तमर्थमुपसंहरन् प्राह—‘से तं आगमओ भावावस्सयं’ इति । तेतत्
आगमतो भावावश्यकं वर्णितम् ॥ सू० २४ ॥

अथ भावावश्यकस्य द्वितीयभेदमाह—

मूलम्—‘से किं तं नो आगमओ भावावस्सयं ? नो आगमओ
भावावस्सयं तिविहं पणत्तं, तं जहा-लोइयं, कुप्पावयणियं,
लोएत्तमियं ॥ सू० २५ ॥

स्वीकार्यं कहा है—नाम स्थापना और द्रव्य आवश्यक को नहीं । क्योंकि आवश्यक
नाम के धारी गोपालबालों में आवश्यक की स्थापनावाले किसी श्रावकआदि
के आवश्यक क्रिया संपन्न चित्र में तथा आवश्यक क्रिया में उपयोग शून्य
बने हुए नोआगम द्रव्यावश्यकरूप देह में एवं आगमोक्त भी लोकोत्तरिक
द्रव्यावश्यकरूप सामायिक आदि में उपयोग की शून्यता से और चारित्र गुण
की रहितता से कर्म निर्जरा करने की समर्थ्य नहीं हैं । अतः ये धर्मपदवाच्य
नहीं हुए हैं । और इसी कारण इन्हें उपादेय नहीं कहा गया है । ॥सूत्र २४॥

छे ते आ परिणामनी अलेह विवक्षानी अपेक्षाये कडेवाभां आवे छे. आ आगम
आवावश्यक न धर्म पदवाच्य होवाथी जिनेधर लगवाने तेने उपादेय कडेल छे—

नामावश्यक, स्थापना आवश्यक अने द्रव्यावश्यकने उपादेय कहा नथी. कारण
के आवश्यक नामधारी गोपालबाजोभां, आवश्यकनी स्थापनावाना कोछ श्रावक
आदिना आवश्यक क्रिया संपन्न चित्रभां, तथा आवश्यक क्रियाभां उपयोग शून्य
(अनुपयुक्त) अनेवा नोआगम द्रव्यावश्यक. इप सामायिक आदिभां उपयोगनी
शून्यता अने आचरित्रगुणनी रहितताने लीधे कर्मनी निर्जरा करवानुं समर्थ होतुं
नथी. तेथी तेभने धर्म पदवाच्य कही शकय नथी, अने ओन कारणे तेभने उपा-
देय पद्य नथी शकय नथी. ॥ सू० २४ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૨૫ નોઆગમભાવાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૬૫

છાયા--અથ કિં તદ્ નોઆગમતો ભાવાવશ્યકમ્? નો આગમતો ભાવાવશ્યકં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા--લૌકિકં કુપ્પાવચનિકં લોકોત્તરિકમ્ ॥મુ० ૨૫॥

ટીકા--‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યા નિગદસિદ્ધા ॥મુ० ૨૫॥

લૌકિકં ભાવાવશ્યકમાહ--

દ્વલમ્--સે કિં તં લોડ્યં ભાવાવસ્તયં? લોડ્યં ભાવાવસ્તયં પુઞ્વવળહે ભારહં અવરળહે રામાયણં । મે તં લોડ્યં ભાવાવસ્તયં ॥સૂ० ૨૬॥

અવ સૂત્રકાર ભાવાવશ્યક કા દ્વિતીય ભેદ જો નોઆગમભાવાવશ્યક હૈ ઉત્તકા નિરૂપણ કરતે હૈ--‘સે કિં તં નોઆગમઓ’ ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૨૫॥

શબ્દાર્થ--(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે મહંત । નોઆગમ કી અપેક્ષા લેતાર ભાવાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર--(નોઆગમઓ ભાવાવસ્તયં તિવિહં પળ્લત્ત) નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવાવશ્યક ત્રીન પ્રકાર કા કહા હુઆ હૈ । (તંજહા) જૈસે--(લોડ્યં) લૌકિક (કુપ્પાવચનિયં) કુપ્પાવચનિક ઓર (લોગુત્તરિયં) લોકોત્તરિક । ઇમ પ્રકાર જાનનાં ચાહિયે । ઉસ વ્યાખ્યા મેં દ્રવ્યાવશ્યક કી જગહ ભાવાવશ્યક શબ્દ કા પ્રયોગ કરનાં ચાહિયે । ॥સૂત્ર ૨૫॥

અવ સૂત્રકાર લૌકિક ભાવાવશ્યક કા વર્ગન કરતે હૈ--

‘સે કિં તં લોડ્યં’ ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૨૬॥

ભાવાવશ્યકનો જે ‘નોઆગમ ભાવાવશ્યક’ નામનો ખીજો ભેદ છે તેનું સૂત્રકાર હવે નિરૂપણ કરે છે--“સે કિં તં નો આગમઓ” ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ-- (સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે કે હે ભગવન! નો આગમની અપેક્ષાએ જે ભાવાવશ્યક કહ્યો છે તે ભાવાવશ્યકનું એટલે કે નો આગમ ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર--(નોઆગમઓ ભાવાવસ્તયં તિવિહં પળ્લત્ત) નોઆગમને આશ્રિત કરીને ભાવાવશ્યકના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે--

(લોડ્યં) (૧) લૌકિક (કુપ્પાવચનિયં) (૨) કુપ્પાવચનિક અને (૩) લોગુ-ત્તરિયં) લોકોત્તરિક આ પદોની વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યકની જેવી જ સમજવી બેઠએ, પરંતુ તે વ્યાખ્યામાં દ્રવ્યાવશ્યકની જગ્યાએ ‘ભાવાવશ્યક’ પદનો ઉપયોગ કરવો બેઠએ ॥ સૂ. ૨૫ ॥

હવે સૂત્રકાર લૌકિક ભાવાવશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે--

‘સે કિં તં લોડ્યં’ ઇત્યાદિ--

છાયા—અથ કિં તદ્ લૌકિક ભાવાવશ્યકમ્? લૌકિકં ભાવાવશ્યકમ્ પૂર્વાહ્ને ભારતમ્, અપરાહ્ને રામાયણમ્ । તદેતત્ લૌકિકમ્ ભાવાવશ્યકમ્ । સુ.૨૬।

ટીકા—શિષ્યઃ પૂછતિ—‘સે કિં તં લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્’ અથ કિં તદ્ લૌકિકમ્ ભાવાવશ્યકમ્? ઉત્તરમાહ—‘લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્’ ઇત્યાદિ । લૌકિકમ્ ભાવાવશ્યકમ્ પૂર્વાહ્ને ભારતમ્=ભારતસ્ય વાચનં શ્રવણં વા. અપરાહ્ને રામાયણમ્, અપરાહ્ને રામાયણમ્=રામાયણસ્ય વાચનં શ્રવણં વા । લોકે હિ—ભારતસ્ય વાચનં શ્રવણં પૂર્વાહ્ને ક્રિયામાણં દશ્યતે તથા—રામાયણસ્ય વાચનં શ્રવણમ્ અપરાહ્ને ક્રિયામાણં દશ્યતે, વૈપરીત્યે દોષદર્શનાત્ । તત્તથેત્યં લોકેઽવશ્યકરણીયતયાઽઽવશ્યકત્વં તદ્વાચકમ્ શ્રોતુશ્ચ તદર્થોપયોગપરિણામસત્ત્વાદ્ ભાવત્વમ્, તદ્વાચકઃ માણક્રિયાયા પુસ્તકપત્રાદિપરાવર્તનરૂપયા હસ્તામિનયરૂપયા ચ ક્રિયાયા યુક્તા

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે ભરત! પૂર્વપ્રક્રાન્ત (પૂર્વપ્રસ્તુત) લૌકિક ભાવાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર—(લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્ પુર્વાહ્ને ભારતમ્ અવરણે રામાયણં) લૌકિક ભાવાવશ્યક કા સ્વરૂપ એસા હૈ કિં પૂર્વાહ્ને મેં મહાભારત કા વાચના અથવા શ્રવણ કરના, અપરાહ્ને મેં રામાયણ કા વાચન અથવા શ્રવણ કરના । લોકમેં મહાભારત કા વાચન અથવા ઉસકા શ્રવણ કરના યહ કામ પૂર્વાહ્ને મેં દેખા જાતા હૈ, તથા રામાયણ કા વાચના અપરાહ્ને મેં (દૂરે પીછે) । ઉસકે વિપરીત કરને સે દોષ કા પાત્ર હોના પડતા હૈ । ઇસ તરહ યહ કામ અવશ્યક ક ને યોગ્ય હોને કે કારણ અવશ્યકરૂપ હૈ, તથા ઉસકે શ્રોતા ઓર વાચનકર્તા કા ઉસકે અર્થ મેં ઉપયોગરૂપ પરિણામ કે સદ્ભાવ સે ઉનમેં ભાવરૂપતા હૈ । વાચને વાલા

શબ્દાર્થ—શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન! પૂર્વપ્રસ્તુત લૌકિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્ પુર્વાહ્ને ભારતમ્ અવરણે રામાયણં) લૌકિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—પૂર્વાહ્ને (દિવસના આગલા ભાગમાં) મહાભારતને વાંચવું અથવા શ્રવણ કરવું અને અપરાહ્ને (દિવસના પાછલા ભાગમાં) રામાયણને વાંચવું અથવા શ્રવણ કરવું, તે અવશ્ય કરવા યોગ્ય હોવાથી આવશ્યક રૂપ ગણાય છે. લોકોમાં મહાભારતનું વાંચન અથવા શ્રવણ કરવાનું કાર્ય પૂર્વાહ્ને કરવા યોગ્ય ગણાય છે અને રામાયણનું વાંચન અથવા શ્રવણ કરવાનું કાર્ય અપરાહ્ને કરવા યોગ્ય મનાય છે. તેના કરતાં વિપરીત કહે તે કરવાથી દોષને પાત્ર થવું પડે છે. આ રીતે આ કાર્ય અવશ્ય કરવા યોગ્ય હોવાથી આવશ્યક રૂપ છે, તથા તેના શ્રોતા અને વાચનકર્તાના તેના અર્થમાં ઉપયોગ રૂપ પરિણામના સદ્ભાવને લીધે તેમાં ભાવરૂપતા પણ હોય છે. વાચનકર્તા તે વખતે ભાવણ કરવાની ક્રિયાથી, પુસ્તકના

अनुयोगचन्द्रिका टीका.सू०२६ लौकिक भावावश्यकनिरूपणम्

१६७

भवति, श्रोताऽपि च श्रवण-गात्र संयतत्व-कसंपुटीकरणादिक्रियावान् भवति । एवं तयोः क्रियात्वेन नोआगमत्वम्, 'किरियाऽऽगमो न होइ' इति वचनात् । क्रियारूपे देशे आगमत्वाभावाद् नोआगमत्वमपि । अत्र ना शब्दस्य देशनिषेधबोधकत्वात् । लोके भारतादावागमत्वं व्यवह्रियते, तस्माद्देशत आगमोऽत्यपि । तस्मात् पूर्वाह्णेऽपराह्णे यथानिर्दिष्टकाले भारताद्युपयुक्तो यदवश्यं भारतादिकं वाचयति शृणोति वा, तदाचर्य श्रवणं च लौकिकं भावावश्यकमिति

वाचते समय भाषण क्रिया से, पुस्तक के पन्नों को पलटने आदिरूप क्रिया से, और निज हाथ से इशारा करने रूप अभिनय क्रिया से युक्त होता है । तथा जो श्रोता होते हैं । वे भी श्रवण क्रिया से शरीर को संयत करनेरूप क्रिया से और दोनों हाथों को जोड़े रहनेरूप क्रिया से युक्त होते हैं । इस तरह की इन दोनों की इन क्रियाओं में आगमता नहीं है—क्यों कि "किरिया-आगमो न होइ" क्रिया आगम नहीं होती है ऐसा सिद्धांत का वचन है । इसलिये क्रियारूप देश में आगमता का अभाव होने से नोआगमता भी है । यहां नो शब्द देशनिषेधका बोधक है । परन्तु लोक में महाभारत आदि ग्रन्थों में आगमता का व्यवहार होता है—इसलिये इनमें आगमता भी है । इस तरह क्रिया में आगमता का सद्भाव होने से वहीं आगमता का सद्भाव और वहीं आगमता का अभाव बन जाने से नो एकदेश से आगमता बन जाती है । इस प्रकार यथा निर्दिष्ट पूर्वाह्ण और अपराध काल में भारतादि में उायुक्त हुए व्यक्ति आदि का जा उनका वाचना और सुननारूप आग-

पानांओ इरववानी क्रियाथी युक्त होय छे, तथा श्रोताओ ते श्रवण करवा रूप क्रियाथी, शरीरने संयत करवा रूप क्रियाथी अने अने होथेने जेरी राभववा रूप क्रियाथी युक्त होय छे. आ प्रकारनी वकता अने ब्रातानी ते क्रियाओमां आगमतानो सद्भाव होतो नथी कारण के "किरिया आगमो न होइ" "क्रिया आगमरूप होती नथी," आ प्रकारनुं सिद्धान्तनुं कथन छे. आ प्रकारे क्रिया रूप देशमां आगमतानो अभाव होवाथी तेमां नो आगमता'नो पणु सद्भाव होय छे. अर्ही "नो" शब्द देश निषेधनो (अंशत निषेधनो) बोधक छे. परन्तु लोकमां महाभारत आदि ग्रंथोमां आगमतानो व्यवहार थाय छे, ते कारणे तेभनामां आगमतानो सद्भाव पणु रहेवो छे. आ रीते क्रियामां आगमतानो अभाव अने महाभारत आदिमां आगमतानो सद्भाव होवाथी ओटवे के ओक प्रकारे आगमतानो सद्भाव होवाथी तेमां नोआगमता (ओक देशनी अपेक्षाओ आगमता) सिद्ध थाय छे. आ प्रकारे यथा निर्दिष्ट पूर्वाह्ण कागमां महाभारत आदिमां उपयुक्त (उपयोग परिष्कामथी युक्त) थयेल व्यक्तनुं ते तेभना वाचन अने श्रवण रूप

બોધ્યમ્ । તદેતત્ નિગમયન્નાહ—‘સે તં લોહ્યં ભાવાવસ્સયં’ इति । तदेतत् लौकिकं भावावश्यकं वर्णितम् ॥सू० २६॥

કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમાહ—

મૂઝ—સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં ? કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં જે હમે ચરગચીરિગ જાવ પાસંડરથા ઇજ્જંજલિ હોમજપોં દુસ્કનમોક્કારમાહ્યાઈ ભાવાવસ્સયાઈ કરેંતિ । સે તં કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં સૂં ૨૭॥

છાયા—અથ કિં તત્ કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમ્ ? કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકં યદ્દમે ચાકચીરિકયા ત્ પાષણ્ડથાઃ ઇડ્યાજ્જલિહોમજપોંદુસ્કનમસ્કારાદિકાનિ ભાવાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । તદેતત્ કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમ્ ॥સૂં ૨૭॥

શ્યક કર્મ હૈ વહ વાચન और श्र ण लौकिक भावावश्यक है । इस तरह एक-देश में आगमता की अपेक्षा लेकर (से तं लोह्यं भावावस्सयं) यह पूर्वप्रक्रान्त लौकिक भावावश्यक का वर्णन किया । ॥सूत्र २६॥

અવ સુત્રમાઁ કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક ા વર્ણન કરતે હૈં ।

“સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં” इत्यादि । ॥सू० २७॥

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછા હૈં કિં હે મદંત ! તં (તત્) પૂર્વ પ્રક્રાન્ત (પૂર્વપ્રત્યુત) (કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં કિં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક કા વ્યા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક કા સ્વરૂપ

આવશ્યક કમં છે, તે વાચન અને શ્રવણ લૌકિક ભાવાવશ્યક રૂપ હોય છે. (સે તં લોહ્યં ભાવાવસ્સયં) આ પ્રકારનું નો આગમ (એકદેશરૂપ આગમતાના સદ્ભાવવાળા) લૌકિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ ભોમજવું.

હવે સુત્રધાર નો આગમ ભાવાવશ્યકના ખીલ ભેદ રૂપ કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે—“સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (ત) પૂર્વપ્રક્રાન્ત-પૂર્વપ્રત્યુત (કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં કિં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(જે હમે ચરગચીરિગ જાવ પાસંડરથા) જે ચરક, ચીરિક આદિ પૂર્વકૃત

શ્રુત્યોગચત્રિકા ટીકા-પૃ. ૨૭ કુપ્રાવચનિ કમાવાવચયકનિરૂપણમ્

૧૬૧

શિષ્ય: પૂછતિ—‘સે કિં તં કુપ્રાવચનિયં ભાવાવચયકમ્ ?’ इति । अथ किं तत् कुप्रावचनिकं भावावचयकम् ? । उत्तरसाह-कुप्रावचनिकं भावावचयकमेवं विज्ञेयम्—य इमे चरकचीरिक यावत् पाषण्डस्थाः उपयुक्ताः सन्तो यथावसरं यद्व-
स्म, इज्याञ्जलिहोमजपोः दुरुक्कनमस्कारादिकानि, भावावचयकानि कुर्वन्तीत्यन्वयः ।
तत्र चरकादयः प्राग्व्याख्यानाः । तत्र-इज्या=यज्ञः अञ्जलिः-जलाञ्जलिः प्रार्थना
दीयते, होमः=नित्यहवनम् जपः=गायत्र्याः, उन्दुरुक्कम्-धूपः, धूपदानमित्यर्थः,
अयं देशीयः शब्दो धूपार्थकः । नमस्कारः=वन्दनम्, एतान्यादौ येषां तानि
भावावचयकानि कुर्वन्ति । एतानि हि चरकचीरिकादिभिः पाषण्डस्थैरवश्यं क्रिय-
माणत्वादावचयकानि । तदर्थोपयोगः द्वादपरिणामसद्भावाद् भावत्वम् । चरका-
दीनां तदर्थज्ञानरूपो देशत आगमः, करशिरः संयोगादिक्रियारूपो देशस्तु नो आगमः

इस प्रकार से हैं । (जो इमे चरग चीरिग जाव पाषण्डस्था) जो ये चरक चीरिक
आदि पाषण्डस्थ मनुष्य उपयुक्त होकर अवसर के अनुसार (इज्जंजलिहोमजपो-
दुरुक्कनमोक्कारमाइयाइ) यज्ञ करते हैं, सूर्य के लिये जलांजलि देते हैं,
नित्य हवन करते हैं, गायत्री का जाप करते हैं, अग्नि में धूप जलाते हैं,
तथा वंदना आदिरूप भावावचयक करते हैं, सो ये सब क्रिया उन
चरक चीरिकादिकों द्वारा आवश्यककरणीय होने के कारण आवश्यकरूप हैं ।
तथा इनके अर्थ में जो उनका उपयोग परिणाम लगा रहता है तथा श्रद्धा
आदि का भाव जाग्रत रहता है—सो इस वरक ये क्रियाएं भावावचयकरूप
हैं । इस तरह चरक आदि को वा जो उन क्रियाओं संबन्धीज्ञान है वह
एक देश आगमरूप है । तथा उनका कर और शिर का संयोजनादिरूप जो
व्यवहार है कि—क्रियाएं हैं—वह क्रियारूप व्यवहार आगमरूप नहीं हैं—नो-

પાષંડસ્થી (પાષંડી) મનુષ્યો ઉપયુક્ત (ઉપયોગ રૂપ પરિણામ સંપન્ન)
થઈને અવસરને અનુરૂપ (इज्जंजलिहोमजपोःदुरुक्कनमोक्कारमाइयाइ) યજ્ઞ કરે
છે, સૂર્યને જલાંજલિ અર્પણ કરે છે, નિત્ય હોમહવન કરે છે, ગાયત્રીના જાપ કરે
છે, અગ્નિમાં ધૂપ નાખીને તેને બાળે છે, તથા વંદના આદિ ક્રિયાઓ કરે છે, તે
બધી ક્રિયાઓ ભાવાવચયક રૂપ ગણાય છે. આ સઘળી ક્રિયાઓ તે ચરક, ચીરિક
આદિ પૂર્વોક્ત લોકો દ્વારા અવશ્ય કરવા યોગ્ય હોવાને કારણે આવશ્યક રૂપ ગણાય
છે. બળી તે ક્રિયાઓમાં તેમના ઉપયોગ પરિણામનો પણ સદ્ભાવ રહે છે. અને
શ્રદ્ધાદિ લાવે પણ બાળત રહે છે. આ કારણે તે (ક્રિયાઓને ભાવાવચયક રૂપ કહે-
વામાં આવી છે. તથા તે વખતે તેમના કર અને શિરના સંયોજન આદિ રૂપ જે
વ્યવહાર અથવા ક્રિયાઓ થાય છે, તે ક્રિયારૂપ વ્યવહાર આગમ રૂપ નથી પણ નો

૧૭૭

અનુયોગદ્વારકો

તથા ચ દેશિકાગમાભવાશ્રિત્ય નોઆગમત્વમપિ । નો શબ્દસ્યાત્રાપિ દેશનિવેધ
વસ્તુભાત્ । ચરકચીરિકાદિભિઃ પાષ્ણ્ડસ્થૈરવઃ ક્રિયામાણમ્ ઇજ્યાઞ્જલિ હોમાદિકં
કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમિતિભાવઃ । તદેતત્કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકં ઘર્ણિતમામ્ ૮૨૭।

આગમ છે—। इस तरह वैशिक आगमके अभाव को लेकर उन क्रियाओं में
नोआगमता है । नोआगम का तात्पर्य एकदेश में आगमता का सङ्गाव है ।
अतःचरक, चीरक आदि पाषण्डस्थ पुरुषों द्वारा की गई इज्या (यज्ञ) अंजलि
होमादिकरूप एक देश क्रियाओं के ज्ञान में तो आगमता है । इस प्रकार
कुप्रावचनिक—भावावश्यक का यह स्वरूप है ।

भाषार्थ—यहाँ नोआगम का तात्पर्य सर्वथा आगमाभाव से नहीं है ।
किन्तु एकदेशमें आगम के अस्तित्व से है । चरक चीरिकादि पाषण्डी जनों
को यज्ञादि क्रियाएँ उनके सिद्धान्तानुसार अवश्य करणीय होती हैं, वे उन्हें
उपयोगपूर्वक करते हैं । उनमें उनकी अटूट श्रद्धा होती है । इस तरह ये
क्रियाएँ भावावश्यकरूप में पड़ती हैं और ये सब क्रियाएँ उनकी ज्ञान मूलक
ही होती हैं । इसलिये इन क्रियाओं के ज्ञानमें तो आगम रहता ही है ।
परन्तु जो और उनकी हस्त शिर की संयोजन आदिरूप क्रियाएँ हैं उनमें

આગમ રૂપ જ છે; કારણ કે આ ક્રિયાઓ આગમમાન્ય ક્રિયાઓ ન । આ રીતે
વૈશિક આગમના અભાવની અપેક્ષાએ છે ક્રિયાઓમાં નો આગમતાનો સદ્ભાવ હોય
છે એમ સમજવું. “ નો આગમતા ” એટલે એકદેશની અપેક્ષાએ આગમતા. તેથી
ચરક, ચીરિક આદિ પૂર્વોક્ત પાષંડસ્થ પુરુષો દ્વારા કરવામાં આવેલી યજ્ઞ, અંજલિ
દ્વારા અભિષેક, હોમ આદિ રૂપ એકદેશરૂપ ક્રિયાઓના જ્ઞાનમાં તો આગમતાનો
સદ્ભાવ છે. તે દૃષ્ટિએ વિચારતા તે ક્રિયાઓ કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક રૂપ ગણાય
છે. કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકત્વં આ પ્રકારતું સ્વરૂપ સમજવું.

ભાવાર્થ—“ નો આગમ ” આ પદ સર્વથા આગમાભાવતા દર્શાવતું નથી, પણ
એકદેશના આગમનો સદ્ભાવ બતાવે છે. ચરક, ચીરિક આદિ પાષંડી લોકોને માટે
યજ્ઞાદિ ક્રિયાઓ તેમના સિદ્ધાન્તાનુસાર અવશ્ય કરણીય ગણાય છે. તેઓ તે ક્રિયાઓ
ઉપયોગપૂર્વક કરે છે. તેમાં તેમને અટૂટ શ્રદ્ધા હોય છે આ રીતે આ ક્રિયાઓ
ભાવાવશ્યક રૂપ ગણાય છે, અને તેમની આ બધી (યાઓ જ્ઞાનમૂલક જ હોય છે.
તેથી તે ક્રિયાઓના જ્ઞાનમાં તો આગમનો સદ્ભાવ રહે છે જ પરન્તુ એ સિવા-
યની હસ્તશિરના સંયોજન આદિ રૂપ જ ક્રિયાઓ છે તેમાં આગમરૂપતા હોતી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. ૨૮ લોકોત્તરિકભાવાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૭૧

લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકમાહ—

મૂલ્ય—સે કિં તં લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકયં ? લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકયં જણં ઇમે સમણે વા સમણી વા સાવઓ વા સાવિઆ વા તચ્ચિત્તે તમ્મણે તલ્હેસે તદ્જ્ઞવસિણ તત્તિવ્વજ્ઞવસાણે તદ્દુત્થોવ-
ઉત્તે તદપ્પિયકરણે ત ભાવણાભાવિણ અપ્પણત્થકત્થઈમણં અકારેમાણે
ઉભઓકાલં આવશ્સ કરેતિ, તં લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકયં ।
સે તં નો આગમઓ ભાવાવશ્સયં, સે તં ભાવાવશ્સયં ॥ સૂ. ૨૮ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકમ્ ? લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યક-
યત્વલુ ઇમે વણા વા શ્રવણો વા શ્રાવકા વા વિશ્વા વા તચ્ચિત્તાસ્તમ્મ-
મસસ્તલ્હેસ્યાસ્તદધ્વવસિતાસ્તત્તીવ્રાધ્વવસાનાસ્તદર્થોપયુક્તાસ્તદર્પિતકરણાસ્તદ્વાદ્વા-
આગમરૂપતા નહીં હૈં । ઇસ તરહ આગમ કા એકદેશ મેં અસ્તિત્વ લેકર
ચરકચીરિઆદિ સંબંધી હોમ આદિ ક્રિયાએ કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક હૈં ॥ ૨૭ ॥

અથ સૂત્રકાર લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક કા વ્યથન કરતે હૈં—

“સે કિં તં લોગુત્તરિયં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂ. ૨૮ ॥

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈં કિં હે મદંત ! લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક
કા ક્યાં સ્વરૂપ હૈં ?

ઉત્તર—(લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકયં) લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક કા
સ્વરૂપ ઇવ પ્રકાર સે હૈં—(જણં ઇમે સમણે વા સમણી વા
સાવઓ વા સાવિઆ વા) જો યે મણ મણી, શ્રાવક અથવા શ્રાવિક
જન (તચ્ચિત્તે) આવશ્યક મેં ચિત્ત લગાકર (તમ્મણે) મન લગાકર (તલ્હેસે)

તથી. આ રીતે આગમના એકદેશતઃ અસ્તિત્વની અપેક્ષાએ ચરક, ચીરિક આદિ
દ્વારા કૃત હોમ, હવન, યજ્ઞ આદિ ક્રિયાઓ કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક રૂપ હોયછે. ॥ ૨૭ ॥

હવે સૂત્રકાર લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક નામના નો આગમ ભાવાવશ્યકના ત્રીજા
લેકનું નિરૂપણ કરે છે. “સે કિં તં લોગુત્તરિયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે પૂર્વપ્રસ્તુત લોકોત્તરિક
ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકયં) લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યકનું આ પ્રકારનું
સ્વરૂપ હોય છે—

(જણં ઇમે સમણે વા સમણી વા સાવઓ વા સાવિઆ વા) આ શ્રમણ, શ્રમણી
(સાધવી), શ્રાવક અને શ્રાવિકાઓ (તચ્ચિત્તે) આવશ્યકમાં ચિત્ત લગાવીને (તમ્મણે)

૧૭૩

અનુયોગદાસત્રે

ભાવિતા અન્દ્ર કુત્રાપિ મનોઽકુર્વન્ત ઉમયતઃ કાલમ્ આવશ્યકં કુર્વન્તિ । તદેતદ્ લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકમ્ । તદેતન્નો અગમતા ભાવાવશ્યકમ્ તદેતદ્ ભાવાવશ્યકમ્ ॥૨૮॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકમ્’ અથ કિં તદ્ લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકમ્ ? इति । उत्तरमाह—‘लोगुत्तरियं’ भावावश्यकम् इत्यादि । लोकोत्तरिकं भावावश्यकमेवं विज्ञेयम्, यस्खलु इमे श्रमणा वा श्रमण्यो वा श्राम्यन्ति=सुत्तयर्थं तपन्तीति—श्रमणाः स्त्रियश्चेत् श्रमण्यः—साधवो वा साध्व्येवेत्यर्थः भावका वा श्राविका वा, शृण्वन्ति=साधुसमीपे जिनप्रणीतां सामाचारीमिति श्रावकाः=श्रमणोपासकाः, स्त्रियश्चेत् श्राविकाः=श्रमणोपासिकाः, वा शब्दाः समुच्चयार्थाः, तच्चित्ताः=तस्मिन्नेव आवश्यकं चित्तं=सामान्योपयोगरूपं येषां ते तथा, आवश्यकं सामान्योपयोगवन्तः, तथा तन्मनसः—तस्मिन्नेव मनो विशेषो

શુભપરિણામરૂપ લેશ્યાસંપન્ન હોકર (તદજ્ઞવસિણ) ક્રિયા સંપાદન વિષયક અધ્યવસાયયુક્ત હોકર (તત્તિવ્વજ્ઞવસાણે) તીવ્ર આત્મપરિણામ વિશિષ્ટ હોકર (તદદ્વોવઉત્તે) તદર્થ મેં ઉપયુક્ત હોકર (તદપ્પિયકરણે) તદર્પિત કરણવાળે હોકર (તદ્ભાવણાભાવિણ) તદ્ભાવના સે ભાવિત હોકર (અણત્યકત્થઈ મળં અકરેમાણે) અન્ય ઔર કહીં પર મી મનકો નહીં લગાવર (ઉમઓ કાલં) દોનો સમય (આવશ્યક કરેંતિ) આવશ્યક કરતે હૈં (સે ત્ત લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકમ્) વહ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈં । મુક્તિ પ્રાપ્તિ કે નિમિત્ત જો તપ તપતે હૈં ઊન કા નામ “શ્રામ્યન્તીતિ શ્રમણાઃ” ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર શ્રમણ હૈં જો સાધુઓં કે સમીપ જિન પ્રણીત સામાચારી કા શ્રવણ કરતે હૈં ઊનકા નામ શ્રાવક હૈં । યે શ્રમણોપાસક હોતે હૈં । આવશ્યક ક્રિયા મેં જિનકા સામાન્યરૂપ સે ઉપયોગ હૈં, યે શ્રમણ આદિજન યહાં “તન્નિચ્ચે” પદ કે વાચ્યાર્થ હુણ

મન લગાવીને (તદ્દેશ) શુભ પરિણામરૂપ લેશ્યા સંપન્ન થઈને (તદજ્ઞવસિણ ક્રિયાસંપાદન વિષયક અધ્યવસાયથી યુક્ત થઈને, (તત્તિવ્વજ્ઞવસાણે) તીવ્ર આત્મપરિણામ યુક્ત થઈને, (તદદ્વોવઉત્તે) આવશ્યક અર્થમાં ઉપયુક્ત (ઉપયોગરૂપ પરિણામયુક્ત) થઈને (તદપ્પિયકરણે) તદર્પિત કરણયુક્ત થઈને (તદ્ભાવણાભાવિણ) તે પ્રકારની ભાવનાથી ભાવિત (સંપન્ન) થઈને (અણત્યકત્થઈ મળં) અકરેમાણે અને અન્ય કોઈ પણ વસ્તુમાં મનને ભમવા દીધા વિના, (ઉમઓ કાલં) બન્ને સમયે (આવશ્યક કરેંતિ) જે આવશ્યક (પ્રતિક્રમણ આદિ અવશ્ય કરવા યોગ્ય ક્રિયાઓ) કરે છે, તેને લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક કહે છે.

હવે આ સૂત્રમાં શ્રમણ આદિ પદોના ભાવાર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

“શ્રામ્યન્તિ ઇતિ શ્રમણાઃ” આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે “મુક્તિ પ્રાપ્તિ કરવા નિમિત્તે જેઓ તપ તપે છે તેમને શ્રમણ કહે છે જેઓ સાધુઓની સમીપે જિનપ્રણીત સામાચારીનું શ્રવણ કરે છે તેમને શ્રાવક કહે છે. તેઓ શ્રમણોપાસક હોય છે. આવશ્યક ક્રિયામાં સામાન્ય રૂપે ઉપયોગ યુક્ત હોય એવા શ્રમણ આદિને અહીં “તન્નિચ્ચે” આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપે પ્રયુક્ત થયેલા સમજવા. જેઓ વિશેષ રૂપે

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० २८ लोकोत्तरिकभावावश्यकनिरूपणम्

१७३

पयोगरूपं येषां ते तथा, आवश्यकं विशेषेपयोगवन्तः, तल्लेख्याः—तस्मिन्=आव-
श्यकं एव लेख्या=शुभपरिणामरूपा येषां ते तथा, आवश्यकं शुभपरिणामवन्तः,
तथा—तदध्यवसिताः—तस्मिन्=आवश्यकं एव तच्चित्तगदिना अध्यवसितम्=
अध्यवसायः क्रियासम्पादनविषयो येषां ते तथा, आवश्यकक्रियासंपादन-
विषयकविचारयुक्ताः, तथा—तत्तीव्राध्यवसानाः—तस्मिन्=आवश्यकं एव तीव्रं
=प्रारम्भकालादेव प्रतिक्षणं प्रवर्धमानम् अध्यवसानम् इदं सकलकर्मनिर्जराजनकं
तस्मादवश्यमाश्रयणीय'—मित्राकारक आत्मपरिणामो येषां ते तथा, तदर्थापयुक्ताः
आवश्यकार्थोपयुक्ताः—'आवश्यकं-सामायिक-चतुर्विंशतिरतद-वन्दन-प्रतिक्रमण-
कार्योत्सर्ग-प्रत्याख्यानरूपं यदवश्यं शाश्वतमचलमरुजमक्षयमव्याधाधममन्दानन्द-
सन्दोहरूपं शिवसुखं प्रापयति, तस्मादवश्यं सोपयोगं प्रशस्ततः संज्ञेगनिर्वेद-

जानना चाहिये । जिनका उपयोग विशेषरूप से आवश्यक क्रिया में लगा
हुआ है ऐसा श्रमण आदिजन “तस्मणे” इस पद के वाच्यार्थ हुए जानना
चाहिये । आवश्यक क्रियाओं के संपादन विषयक विचारों से जो युक्त हैं
ऐसे श्रमण आदिजन “तदज्ज्ञसिण” इस पद के वाच्यार्थ हुए जाननाचाहि-
ये । तथा जिनका आत्मपरिणाम प्रारम्भकाल से ही इस प्रकार के विचार
से कि यह आवश्यक सकलकर्मों की निर्जरा का जनक है इसलिये अवश्य
आश्रयणीय है, प्रतिक्षण वृद्धिगत होता रहता है वे श्रमण आदिजन “तत्तिव्व-
ज्जवमाणे” इस पद के वाच्यार्थ हुए हैं । आवश्यक में जिन के परिणाम
शुभ हैं वे “तल्लेस्से” पद के वाच्यार्थ—जानना चाहिये । आवश्यक-सामा-
यिक चतुर्विंशतिस्तव, वंदन प्रतिक्रमण, कार्योत्सर्ग इनरूप हैं, सो यह अवश्य,
शाश्वत, अचल, अरुज, अक्षय, अव्याधाध और अनन्द आमन्द के सन्दोहरूपणि ।

आवश्यक क्रियाओंमें उपयोग युक्त थयेला छ ओवां श्रमणाने अही “तस्मणे”
आ पटना वाच्यार्थ इपे प्रयुक्त थयेला समजवा.

, आ आवश्यक आश्रयणीय छ, आ प्रकाशनी विचार धाराथी जेमनु आत्म-
परिणाम आरंभकाणथी ज युक्त रहे छ, अने कमे कमे जेमनु आ प्रकाश
आत्मपरिणाम वृद्धि प्राप्तुं रहे छ, ओवां श्रमणाने अही “तत्तिव्वज्जवमाणे”
आ पटना वाच्यार्थ इपे समजवा. आवश्यक क्रियांमें जेमना परिणाम शुभ छ
ओवां श्रमण आदिने अही “तल्लेस्से” आ पटना वाच्यार्थ इपे समजवा जेधये.

“सामायिक, २४ तिथि” कशानी स्तुति, वंदन, प्रतिक्रमण, कार्योत्सर्ग क्रियादि
इपे जे आवश्यक छ, तेओ शाश्वत, अचल, अरुज, अक्षय, अव्याधाध अने आमन्द
आनंदना सन्दोहरूप (समुदायइप) शिव सुखनी प्राप्ति अवश्य कशानी डेनार छ, अने

પૂર્વકમારાધનીય—' મિત્યાત્મપરિણામયુક્તાઃ' इयर्थः । : तथा—तदर्पितकरणाः—
तस्मिन्=आवश्यक के अर्पितानि=याथातथ्येन नियुक्तानि करणानि=तत्साधकभूतानि
देहरजोहरणसदोरकमुखवस्त्रिकादीनि ये ते तथा, आवश्यककर्मणि सम्यग्यथा
स्थानन्यस्तोपकरणा इत्यर्थः, तथा-तद्भावनाभाविताः—तस्य=आवश्यकस्य भावना=
आवश्यक-सर्वकल्याण-कारणम्, अनन्तभवोपार्जित कर्मरजोऽपहारक-मिति प्रति-
क्षण-मनुस्मरणरूपा, तथा भाविताः प्रमादपरिहारपूर्वक परमोत्साहेन आवश्यक
क्रियाकरणपरायणाः, अन्यत्र कुत्रा मनः अकुर्वन्तः, उपलक्षणत्वाद् वाचं काव
चात्रा कुर्वन्तः उभयकाले यत् आवश्यकं कुर्वन्ति तदेतल्लोकोचरिकं भावाव-

सुख को प्राप्त करा देता है अतः यह अ इय उपयोगपूर्वक प्रशस्ततर संवेग के साथ
निर्वेदपूर्वक आराधनीय है इस प्रकार के आत्मपरिणामों से जो युक्त हैं
ऐसे श्रमण आदिजन “तदद्विष्यते” इस पद के वाच्यार्थ हुए हैं । तथा-जिन्हों
ने आवश्यक में यथास्थान तत्साधकभूत देह, रजोहरण, सदोरकमुखवस्त्रिका
आदिकों को नियुक्त कर रखा है अर्थात् आवश्यक क्रिया में अच्छी तरह
से उ होने यथा स्थान उपकरणों को रखा है ऐसे वे श्रमण आदि जन “तद-
पिष्यकरणे” पद के वाच्यार्थ हुए हैं । आवश्यक समस्त कल्याणों का कारण
है तथा अनन्त भवोपार्जित कर्म रज का नाशक है इस प्रकार की प्रतिक्षण
में अनुस्मरणरूप भावना से जो प्रमाद परिहाणपूर्वक परमोत्साह से आवश्यक
क्रिया के करने में परायण बने हुए हैं ऐसे श्रमण आदिजन “तन्भावनाभा-
विण” पद के वाच्यार्थ हुए हैं । मम यह पद बचन और कायका उपलक्षण

તે ફારણે તે અવશ્ય ઉપયોગ પૂર્વક પ્રશસ્તતર સંવેગની સાથે, નિર્વેદપૂર્વક આરા-
ધનીય છે,” આ પ્રકારના આત્મપરિણામથી જેઓ યુક્ત હોય છે એવાં શ્રમણ
આદિને “તદદિષ્યકરણે” આ પદના વાચ્યાર્થે રૂપે અહણ કરવા બેઠાયે

આવશ્યક ક્રિયા કરતી વખતે તે ક્રિયાના સાધનભૂત દેહ, રજોહરણ, સદોરક
મુઠપતી આદિ ઉપકરણોને જેમણે યોગ્ય સ્થાને રાખેલાં છે એટલે કે આવશ્યક ક્રિયામાં
જેમણે ઉપકરણોને બરાબર વિચાર પૂર્વક ઉચિત સ્થાને સ્થાપિત કરેલાં છે, તે
શ્રમણ આદિને અહીં “તદપિષ્યકરણે” આ પદના વાચ્યાર્થે રૂપે સમજવા બેઠાયે.
“આવશ્યક ક્રિયાઓ સમસ્ત કલ્યાણોની જનક છે, તથા અનન્ત ભવોપાર્જિત
કર્મરજનો નાશ કરનારી છે.” આ પ્રકારની પ્રતિક્ષણે અનુસ્મરણ રૂપ ભાવનાથી
પ્રેરાધને જેઓ પ્રમાદના ત્યાગ પૂર્વક અને પરમોત્સાહ પૂર્વક આવશ્યક ક્રિયાઓ
કરવાને પરાયણ બનેલાં છે એવાં શ્રમણ આદિને “તન્ભાવનાભાવિણ” આ પદના
વાચ્યાર્થે રૂપે સમજવા બેઠાયે.

અનુયોગચત્રિકા ટીકા સૂત્ર ૨૮ લોકોત્તરિકભાવાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૭૫

અવશ્યકમ્ મૂલે સમણે વા' ઇત્યાદૌ બહુત્વે વાચ્યે એકવચનનિર્દેશ આર્થત્વાત્—યદિયે શ્રમણાદયસ્તત્ત્વિચ્છતાદિ વિશેષગ—વિશિષ્ટા ઉભયકાર્ણ પ્રતિક્રમણાદ્યાવશ્યકં કુર્વાન્ત તલ્લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકમ્, ઇતિ સંક્ષેપાર્થઃ । અગ્રાપિ—અવશ્ય કરતાત્ આવશ્યકત્મ્. તદુપયોગપરિણામસ્ય સજ્ઞાવાદ્ ભાવત્વમ્, આવશ્યકક્રયોલક્ષણ દેશસ્થાનોગમન્વાદ્ નોઆગમત્વં ચ ઘોષમ્ । તદેતલ્લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકં ઘર્ષિતમ્ એવં વિધં નોઆગમતો ભાવાવશ્યકં નિરૂપિતમિતિ સુચયિતુમાહ—‘સે સં નોઆગમતો ભાવાવસ્સયં’ હતિ । તદેતન્નો આગમતો ભાવાવશ્યક ઘર્ષિતમ્ । એવં સર્વથા ભાવાવશ્યકં નિરૂપિતમિતિ સુચયિતુમાહ—‘સે તં ભાવાવસ્સયં’ હતિ । સહે-

હૈ । તાત્પર્ય વહેને વા પદ હૈ કિ જો શ્રમણ આદિજન તત્ત્વિચ્છ આદિ વિશિષ્ટપણોં સે યુક્ત બનકર દેનોં કાલ પ્રતિક્રમણ આદિ આવશ્યકો કો કરતે હૈ ભાવાવશ્યક હૈ । યે ક્રિયાઈ શ્રમણ આદિ જનોંકો અવશ્ય કરને યોગ્ય હૈ । સંલિયે તો યે આવશ્યક હૈ । તથા ઉનમ્ ઉનકે કરનેવાલેકો ઉપયોગ પરિણામ વર્તમાન રહતા હૈ ઇસલિયે ઉનમ્ ભાવરૂપતા હૈ । તથા આવશ્યક ક્રિયાઈ સ્વયં આગમ રૂપ નહીં હૈ અનઃ આવશ્યક ક્રિયા રૂપ એકદેશમ્ અનાગમતા ઓર ઉનકે જ્ઞાનરૂપ એકદેશમ્ આગમતાકા સજ્ઞા હોનેસે નો આગમકો અપેક્ષા યે આવશ્યક ક્રિયાઈ લોકોત્તરિકભાવાવશ્યક જ્ઞાનની ચાહિયે । ઇસ તરહ નોઆગમનો આશ્રિત કરકે લોકોત્તરિકભાવાવશ્યકકા યહાં તકકા વર્ણન કિયા । ઇસ પ્રમાં નોઆગમ ભાવાવશ્યકકા પૂર્ણરૂપસે વર્ણન હો ચુકા હૈ ઇસ જ્ઞાનજોતલાને કે લિયે સૂત્રકારને “સે તં ભાવાવસ્સયં” પદકા પ્રયોગ કિયા હૈ ।

‘મન’ આ પદ વચન અને કાયનું ઉપલક્ષક છે. આ સંઘળા કથનનું તાત્પર્ય ક્ષે છે કે જે શ્રમણ, શ્રમણી, શ્રાવક અને શ્રાવિકા “તત્ત્વિચ્છ” આદિ વિશેષજોથી યુક્ત બનીને બન્ને કાળે પ્રતિક્રમણ આદિ જે આવશ્યકો કરે છે, તે આવશ્યકો નોઆગમની અપેક્ષાએ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક ગણાય છે. આ ક્રિયાઓ શ્રમણ શ્રમણી શ્રાવક અને શ્રાવિકોને માટે અવશ્ય કરવા યોગ્ય મનાતી હોવાથી તેમને આવશ્યક રૂપ કહી છે, તે આવશ્યક ક્રિયાઓ કરનાર શ્રમણ આદિનું ઉપયોગ પરિણામ તેમાં વિદ્યમાન રહે છે, તે કારણે તેમાં ભાવરૂપતાનો સદ્ભાવ હોય છે. તથા આવશ્યક ક્રિયાઓ સ્વયં આગમ રૂપ નથી, તેથી આવશ્યક ક્રિયા રૂપ એકદેશમાં અનાગમતા અને તેમના જ્ઞાનરૂપ એકદેશમાં આગમતાનો સદ્ભાવ હોવાથી આ આવશ્યક ક્રિયાઓને નોઆગમની અપેક્ષાએ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ સમજવી આ રીતે નોઆગમને આશ્રિત કરીને લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યકમ્ આ સૂત્રમાં પ્રતિપાદક કરવામાં આવ્યું છે. એજ વાતને સૂત્રકારે “સે તં ભાવાવસ્સયં” આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રગટ કરી છે. આ સૂત્રપાઠ એ વાત સંઘળા

૧૭૬

અનુયોગકારણત્રે

તદ્ ભાવાવશ્યકં સર્વથા વર્ણિતમ્ । ભાવાવશ્યકમેવ ચતુર્વિધસંધેરુપાદેયં ન તુ નામસ્થાપના દ્રવ્યાવશ્યકાનિ, તેષાં કર્મ નિર્જરાજનકસ્વાભાવાત્ સંસારકાસ્પ-
સ્થાષ્ઠ । તથા-ભાવાવશ્યકેઽપિ આગમતો ભાવાવશ્યકં લોકોત્તરિકરૂપં નોઆગમતો
ભાવાવશ્યકં चेति द्वयमेवोपादेयं, न तु-लौकिकं कुप्रावचनिकं च भावावश्यक
मिति सर्वतीर्थ करणामभिप्रायः ॥सू० २८॥

ભાવાવશ્યક હી ચતુર્વિધ સંધેવો ઉપાદેય છે । નામ સ્થાપના ઓર દ્રવ્યરૂપ
આવશ્યક ઉપાદેય નહીં છે । ક્યોંકિં હનમેં કર્મ નિર્જરા કી જનકતાકા સર્વથા
અભાવ છે અર્થાત્ હનકો નિમિત્ત યા હનના સેવન કરકે યદિ કોઈ પ્રાણી અપને
કર્મોંકી નિર્જરા કરના ચાહેં તો વહ નહીં કર સંતા છે- । હસલિયે હનને
સંસાર વર્તક કારણોંમેં પરિગણિત મિયા ગયા છે । ભાવાવશ્યક મેં મી આગમ
ભાવાવશ્યક ઓર નોઆગમના તૃતીય ભેદ રૂપ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક ચે
કોહી ઉપાદેય છે । લૌકિક ઓર કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક નહીં એસા સમસ્ત
તીર્થ કરોંકા કથન છે ।

ભાવાર્થ:—નોઆગમ ભાવાવશ્યકકો આવશ્યક રૂપ આગમના સર્વથા
અભાવ વિવક્ષિત નહાં હુઆ છે । કિન્તુ આગમના એકદેશ વિવક્ષિત હુઆ છે ।
હસ નોઆગમ ભાવાવશ્યકકે લૌકિકકુપ્રાવચનિક ઓર લોકોત્તરિક યે ૩
તીન ભેદ કિયે ગયે છે । પૂર્વાદ્ધ મેં મહાભારતના અપરાદ્ધ મેં રામાયણના વાચના

ઉપસંહાર રૂપે પ્રકટ કરે છે કે આ રીતે નોઆગમ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યકનું
નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે.

ભાવાવશ્યક જ ચતુર્વિધ સંધને માટે ઉપાદેય ગણાય છે. નામ, સ્થાપના અને
દ્રવ્યાવશ્યક ઉપાદેય ગણાતાં નથી, કારણ કે તે ત્રણે આવશ્યકોમાં કર્મનિર્જરાની
જનકતાનો સર્વથા અભાવ જ છે. કારણ કે તેમનું સેવન કરવાથી જો કોઈ જીવ
કર્મોત્તી નિર્જરા કરવાનું ઇચ્છતો હોય, તો તે રીતે કર્મોત્તી નિર્જરા કરી શકતો
નથી. તે કારણે તે ત્રણે આવશ્યકોને સંસારવર્ધન કરનારાં કારણો રૂપે ગણાવવામાં
આવેલ છે. ભાવાવશ્યકમાંથી પણ આગમ ભાવાવશ્યક અને નોઆગમના ત્રીજા ભેદ
રૂપ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક આ બેને જ ઉપાદેય કહી શકાય તેમ છે. લૌકિક અને
કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકને ઉપાદેય રૂપ ગણી શકાય નહીં, એવું સમસ્ત તીર્થ કરોંકા
કથન છે.

ભાવાર્થ:—નોઆગમ ભાવાવશ્યકમાં આવશ્યક રૂપ આગમનો સર્વથા અભાવ
વિવક્ષિત થતો નથી, પરંતુ આગમનો એકદેશ વિવક્ષિત થયો છે. આ નોઆગમ
ભાવાવશ્યકના ત્રીજે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ પડે છે (૧) લૌકિક, (૨) કુપ્રાવચનિક અને
(૩) લોકોત્તરિક પૂર્વાદ્ધમાં મહાભારતનું અને અપરાદ્ધમાં રામાયણનું વાંચન

અનુયોગવત્તિકા ટીકા. સૂ. ૨૮ લોકોત્તરિકભાવાવશ્યકનિરૂપણમ્

૧૭૭

एवं श्रवण करना ये निर्दिष्ट समय पर कियमाण होनेसे आवश्यक रूप है । इनमें वाचक और श्रोताका जो अर्थोपयोग परिणाम है वह भावरूप है । इसलिये वाचक और श्रोता, कि जिनका ग्रन्थों में उपयोग रूप परिणाम लग रहा है वे लौकिक भावावश्यक हैं । तथा लोकको अपेक्षा भारतादिक आगम भी हैं । इन आगमों में उपयुक्त बने हुए वक्ता और श्रोताजन में उस समय विविध प्रकारकी जो क्रिया होती रहें हैं वे आगमरूप नहीं हैं क्योंकि श्रुतज्ञान ही आगमरूप माना गया है । इस तरह एकदेशमें आगमकी विद्यमानता होनेसे भारतादिकका वाचन वण लौकिक भावावश्यक है । चरक चीरिक आदि पाखंडीजनों द्वारा जो होम यज्ञ आदि क्रियाएँ की जाती हैं वे सब उनके लिये उनके मान्य सिद्धान्तानुसार अवश्य वर्तव्य हैं । इसलिये ये सब क्रियाएँ आवश्यक हैं । इन आवश्यक क्रियाओं के संपादन करते समय उन संपादन कर्ताओंका उपयोग आदि रूप परिणाम उनमें संलग्न रहता है इसलिये ये भाव हैं । इस तरह ये क्रियाएँ भावावश्यक मान ली जाती हैं । इनका ज्ञान आगम, और संपादन कर्ताओं की करशिर संयोजनादिरूप क्रियाएँ अनागम हैं । इस प्रकार एकदेशमें आगमका सद्भाव होनेसे आगम के एकदेशको आर्ति करके ये क्रियाएँ कुप्रावचनिक भावावश्यक हैं ।

અને શ્રવણ કરવા રૂપ કાર્ય નિર્દિષ્ટ સમયે ક્રિયાભાવ હોવાથી આવશ્યકરૂપ છે. તેમાં વાચક અને શ્રોતાનું જે અર્થોપયોગ યુક્ત પરિણામ છે, તે ભાવરૂપ છે. આ કારણે તે શ્રદ્ધામાં ઉપયોગ યુક્ત પરિણામથી યુક્ત એવાં તે વાચક અને શ્રોતાજનો લૌકિક ભાવાવશ્યક રૂપ ગણાય છે. તથા લોકની અપેક્ષાએ મહાભારત આદિને આગમ પણ ગણવામાં આવે છે. તે આગમોમાં ઉપયુક્ત બનેલા વક્તા અને શ્રોતાઓમાં તે સમયે વિવિધ પ્રકારની ક્રિયાઓ થતી રહે છે, તે ક્રિયાઓ આગમરૂપ નથી, કારણ કે શ્રુતજ્ઞાનને જ આગમરૂપ માનવામાં આવ્યું છે. આ રીતે એકદેશની અપેક્ષાએ આગમની વિદ્યમાનતા હોવાના કારણે મહાભારત આદિનું વાંચન અને શ્રવણ 'નોઆગમ લૌકિક ભાવાવશ્યક' રૂપ છે. ચરક, ચીરિક આદિ પાખંડીઓ દ્વારા જે યજ્ઞ, હોમ, હવન આદિ ક્રિયાઓ કરવામાં આવે છે તે તેમના માન્ય સિદ્ધાન્તાનુસાર તેમને માટે અવશ્ય કરવા યોગ્ય મનાય છે. તેથી તે બધી ક્રિયાઓને આવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવે છે. આ આવશ્યક ક્રિયાઓ કરતી વખતે તે ક્રિયાઓ કરનાર લોકોના ઉપયોગ આદિ રૂપ પરિણામ તે આવશ્યક ક્રિયાઓમાં સંલગ્ન રહે છે, તેથી આ પ્રકારના ભાવથી યુક્ત તે ક્રિયાઓને ભાવાવશ્યક રૂપ માનવામાં આવે છે. તે ક્રિયાઓનું જ્ઞાન આગમ રૂપ ગણાય છે. અને તે ક્રિયાઓ કરનારની કર શિર સંયોગ આદિ રૂપ ઓ અનાગમ રૂપ ગણાય છે. આ પ્રકારે એક દેશમાં આગમતાનો

૧૭૯

અનુયોગદ્વારણે

અથ—ભાવાવશ્યકસ્ય પર્યાયાનાહ—

મૂલમ્—તસ્સ પં ઇમે ઇગટ્ટિયા ણાનાઘોસા ણાનાવંજણા ણામ-
ધેજ્ઞા ભવંતિ, તં જહા—

આવસ્સયં ૧, અવસ્સકરણિજ્ઞં ૨, ધુવનિગ્ગહો ૩, વિસોહી ૪ય ।

અઙ્ગયણહક્કવગ્ગો ૫, નાઓ, આરાહણા ૭ મગ્ગો ૮ ॥૧॥

સમણેણં સાવણ ય અવસ્સકાયઠ્ઠવયં હવહ્ જમ્હા ।

અંતે અહો નિસસ્સય તમ્હા આવસ્સયં નામ ॥૨॥

સે તં આવસ્સયં ॥સૂ૦ ૨૧॥

ચતુર્વિધ સંઘ દ્વારા ઉપયુક્ત હોકર જો દોનોં સમય—સુબહ ઓર સાય-
કાલ—પ્રતિક્રમણ આદિ આવશ્યક ક્રિયાઈ કી જાતી હૈં વે નોઆગમની અપેક્ષા
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈં સંઘકો યે અવશ્ય હી ઉમયકાલ મેં ક્રિયમાણ
હોનેસે આવશ્યક રૂપ હૈં । કર્તા ઇનમેં ઉપયોગ પૂર્વક તલ્લીન હોતા હૈં ઇસ-
લિયે ઇનમેં ભાવરૂપતા હૈં । ઇનકા જ્ઞાન ઉપયોગરૂપમેં ઉસે હોતા હૈં અતઃ યે
આગમ રૂપ હૈં તથા ઓર અવશિષ્ટ કર શિર સંયોજનાદિ ક્રિયાઈ આગમ રૂપ
નહીં હૈં । ઇસ તરહ નોઆગમકો આશ્રિત કરકે પ્રતિક્રમણ આદિ િ યઈ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈં । સૂત્ર ॥ ૨૮ ॥

સદ્ભાવ હોવાથી આગમના એક દેશને આશ્રિત કરીને તે ક્રિયાઓને નોઆગમ
કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવે છે.

ચતુર્વિધ સંઘ ઉપયુક્ત થઈને બન્ને સમય પ્રાતઃકાળે અને સાયંકાળે પ્રતિ-
ક્રમણ આદિ જે આવશ્યક ક્રિયાઓ કરે છે, તે ક્રિયાઓ નોઆગમની અપેક્ષાએ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે. બન્ને કાળે શ્રમણાદિ દ્વારા તે અવશ્ય કરવા યોગ્ય
હોવાથી આવશ્યક રૂપ છે. કર્તા તેમાં ઉપયોગ પૂર્વક તલ્લીન થઈ જાય છે, તેથી
તેમાં ભાવરૂપતા છે. તે ક્રિયાઓના જ્ઞાનનો ઉપયોગ રૂપે તેનામાં સદ્ભાવ હોય છે,
તેથી તે ક્રિયાઓ આગમરૂપ છે, તથા બીજી કર શિર સંયોજન આદિ ક્રિયાઓ
આગમરૂપ નથી. આ રીતે નોઆગમને આશ્રિત કરીને પ્રતિક્રમણ આદિ ક્રિયાઓ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે, એટલે કે તે પ્રતિક્રમણ આદિ આવશ્યક ક્રિયાઓ
નોઆગમ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે, એમ સમજવું. ॥ સુ. ૨૮ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૨૯ ભાવાવશ્યકપર્યાયનિરૂપણમ્

૧૭૯

છાયા—તસ્ય खलु इमानि एकार्थिकानि नानावोषाणि नानाव्यञ्जनानि नामधेयानि भवन्ति, तद्यथा—

आवश्यकम् १ अवश्यकरणीयम् २ ध्रुवनिग्रहो ३ विशोधिश्च ४ ।

अध्ययनषट्कवर्गः ५ न्यायः ६ आराधना ७ मार्गः ८ ॥ ૧ ॥

શ્રમણેન શ્રાવકેણ ચ અવશ્યકરૂપવ્યકત્ત્વમ્ ભવતિ યસ્માત્ ।

અન્તેઽહર્નિશસ્ય તસ્માદાવશ્યકં નામ ॥ ૨ ॥

તદેતદાવશ્યકમ્ ॥ સૂ. ૨૯ ॥

अब सूत्रकार भावावश्यकका पर्यायोको कहते हैं—

“तस्सणं इमे” इत्यादि । सूत्र ॥ ૨ ॥

શબ્દાર્થઃ—(તસ્ય ણ) તસ આવશ્યક કે (હમે) યે વક્ષ્યમાણ (એગઢિયા) એક અર્થવાલે (નામધેજ્જા) નામ હૈં । યે નામ (ળાણા ઘોસા ળાણા વંજણા) મિન્ન ૨ ઉદાત્ત આદિ સ્વરોં એવં કક્ષાર આદિ અનેક વ્યઞ્જનોંસે સહિત હૈં । (તંજહા) વે ઇસ પ્રકારસે હૈં—(આવસ્સયં) ૧ આવશ્યક (અવસ્સ કરણિજ્જં) અવશ્યકરણીય, (ધ્રુવનિગ્રહો) ધ્રુવનિગ્રહ ૩, (વિસોહી ય) વિશોધિ ૪ અજ્ઞયણ છક્કવર્ગો) અધ્યયનષટ્કવર્ગ ૫, (નાઓ) ન્યાય ૬, (આરાહણા) આરાધના ૭, (મર્ગો) માર્ગ ઇનમેં આવશ્યક શબ્દકા અર્થ (સે કિં તં આવસ્સયં) ઇસકે પહિલે નૌવેં—સૂત્ર મેં સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈં । અવશ્યકરણીય—મોક્ષાર્થીજનોં દ્વારા યહ નિયમસે અનુષ્ટેય (કરને યોગ્ય) હોતા હૈં ઇસલિયે ઇસકા નામ અવશ્યકરણીય હૈં । ધ્રુવ

હવે સૂત્રકાર ભાવાવશ્યકના પર્યાયવાચી શબ્દોત્તું નિરૂપણુ કરેઃ—

“તસ્સણં ઇમે” ઇત્યાદિ—

(તસ્સણં ઇમે એગઢિયા નામધેજ્જા) તે આવશ્યકના નીચે પ્રમાણે એકાર્થક નામો છે—

(ળાણા ઘોસા ળાણા વંજણા) તે નામો જુદા જુદા ઉદાત્ત આદિ સ્વરોં અને કકાર આદિ અનેક વ્યઞ્જનોથી યુક્ત છે. (તંજહા) તે નામો નીચે પ્રમાણે છે—(આવસ્સયં) (૧) આવશ્યક, (અવસ્સકરણિજ્જં) (૨) આવશ્ય કરણીય, (ધ્રુવનિગ્રહો) ધ્રુવનિગ્રહ, (વિસોહાય) (૪) વિશોધિ, (અજ્ઞયણછક્કવર્ગો) (૫) અધ્યયનષટ્કવર્ગ, (નાઓ) (૬) ન્યાય, (આરાહણા) (૭) આરાધના અને (મર્ગો) માર્ગ (૧) ‘આવશ્યક’ આ પદનો અર્થ ‘સે કિં તં આવસ્સયં’ આ પ્રશ્નસૂત્રથી શરૂ થતા નવમાં સૂત્રમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. (૨) ‘અવશ્યકરણીય’—મોક્ષાર્થીજનો દ્વારા તે અવશ્ય અનુષ્ટેય (અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય, આચરણીય) હોય છે, તેથી તેતુ ‘અવશ્યકરણીય’ નામ પડ્યું છે.

ટીકા—‘તસ્ય ણં’ इत्यादि—

तस्य=आवश्यकस्य खलु इमानि=वक्ष्यमाणानि नानाघोषाणि—नाना=अनेक
विधाः भिन्ना भिन्ना इति यावत्, घोषाः=उदात्तादिस्वराः येषां तानि तथा-
भिन्नाभिन्नोदात्तादिस्वरयुक्तानि, तथा-नानाव्यञ्जनानि—नाना=अनेकविधानि
व्यञ्जनानि=ककारादीनि येषां तानि तथा—इकारादिभिन्नभिन्नव्यञ्जनसहितानि
एकार्थिकानि=परमार्थत एकार्थविषयाणि नामधेयाणि-नामानि-पर्यायाः भवन्ति ।
तद्यथा—आवश्यकम् १ अवश्यकरणीयम् २ ध्रुवनिग्रहो ३ विशेषिश्च ४ अध्ययनषट्कवर्गो ५
न्यायः ६ आराधना ७ मार्गः ८ । इति । अयमर्थः—आवश्यकम्, अस्य शब्दार्थः=
‘से किं तं आवस्सयं’ इत्यत्र प्राग् वर्णितः ॥१॥ अवश्यकरणीयम्—मोक्षार्थि-
भिर्नियमेनानुष्ठेयत्वात्—अवश्यकरणीयम् ॥२॥ ध्रुवनिग्रहः—अनादित्वात् चिद-
पर्यवसितत्वाद् ध्रुवं=कर्म तत्फलभूतः संसारो वा, तस्य निग्रहः=निग्रहहेतुत्वात्
निग्रहः, ध्रुवनिग्रहः—चतुर्गतिकसंसारनिवारकः ॥३॥ विशेषिः—विशेषनं
विशेषिस्तद्हेतुत्वाद् आवश्यकं विशेषिः=तस्य कर्ममलापहारकत्वात् ॥४॥ अध्य-
यनषट्कवर्गः—अध्ययनषट्कम्=अध्ययनषट्कम् तद्रूपो वर्गः अध्ययनषट्कवर्गः=सामा-
यिकादिषडध्ययनसमूहरूपः ॥५॥ न्यायः अमीष्टार्थसिद्धेः सम्प्रगुपायत्वाद् न्यायः यद्वा—

निग्रह—अनादि होने के एवं नाना जीवों की अपेक्षा पर्यवसानसे रहित होने के
कारण ध्रुवनामकर्म या कर्म के फलभूत संसार है । इस कर्मका या उसके
फलभूत संसारका निग्रह इससे होता है, इसलिये इसका नाम ध्रुवनिग्रह है ।
विशेषि—कर्मरूप मल की अपहृति (निवृत्ति) इससे होती है— इसलिये इसका
नाम विशेषि है । यह सामायिक आदि छह अध्ययन समूह रूप है—इसलिये
इसका नाम अध्ययनषट्क वर्ग है । अमीष्ट अर्थ की सिद्धिका यह सबसे भला
उपाय है इसलिये इसका नाम न्याय है—अथवा जीव और कर्म के अनादिका-

(૩) ‘ધ્રુવનિગ્રહ’—કર્મ અથવા કર્મના ફલસ્વરૂપ સંસારનું નામ ધ્રુવ છે, કારણ
કે કર્મ અને સંસાર, આ બંને અનાદિ અને વિવિધ જીવોની અપેક્ષાએ પર્યવ-
સાનથી રહિત (અનંત) છે. એવા અનાદિ અનંત કર્મનો અથવા કર્મના ફલભૂત
સંસારનો નિગ્રહ આ આવશ્યક ક્રિયાઓ વડે થાય છે, તેથી તેનું ‘ત્રીશુ’ નામ
‘ધ્રુવનિગ્રહ’ છે.

(૪) વિશેષિ—તેના દ્વારા કર્મરૂપી મળની નિવૃત્તિ અથવા વિશુદ્ધિ થાય છે,
તેથી તેનું ‘ચોથું’ નામ “વિશેષિ” છે.

(૫) ‘અધ્યયનષટ્ક વર્ગ’—તે સામાયિક આદિ ૬ અધ્યયનના સમૂહરૂપ હોવાથી
તેનું ‘પાંચમું’ નામ ‘અધ્યયનષટ્ક વર્ગ’ છે.

(૬) ‘ન્યાય’—અભીષ્ટ અર્થની સિદ્ધિના સૌથી સારા ઉપાય રૂપ હોવાને કારણે

અનુયોગવન્દિકા ટીકા ૨૯ ભાવાવશ્યકપર્યાયનિરૂપણ

૧૮૧

જીવકર્મસંબંધાપનનાકાલીનઃ—યથાર્થિપ્રત્યર્થિનોર્દ્વયોરપિ ક્ષેત્રધનાદિસમ્બન્ધિકં ચિર-
કાલિકમપિ વિવાદં ન્યાયાધ્યક્ષદ્વંશે ન્યાયો રૂપનયતિ, તથૈવાવશ્યકમપિ જીવકર્મણો-
રનાદિકાલિનમાશ્રયાશ્રયિભાવસમ્બન્ધમપનયતીતિ—આવશ્યકમપિ ન્યાય इत्युच्यते
॥૬॥ આરાધના=મોક્ષારાધના હેતુત્વાદાવશ્યકમ્ આરાધના ॥૭॥ માર્ગઃ—તથા
માર્ગો નગરં પ્રાપયતિ, તથૈવાવશ્યકમપિ મોક્ષં પ્રાપયતીતિ મોક્ષરૂપપુરપ્રાપકત્વાત્
આવશ્યકં માર્ગઃ इति ॥૮॥

સમપ્રતિ—પ્રાવશ્યકપદસ્ય શબ્દાર્થઃ સુત્રકારઃ સ્વયમેવ પ્રદર્શયતિ—‘સમ-
ણેણં’ इत्यादि । શ્રમણેન=સાધુના શ્રાવકેણ, ચકારસ્યોપલક્ષણત્વાત્-શ્રમણા
શ્રાવિકયા ચ યસ્મત્ અહર્નિશસ્ય=અહોરાત્રસ્ય અન્તે=અવસાને દિવસાન્તે રાત્ર્યન્તે ચે

લીન સંબન્ધકો યહ દૂર કર દેતા હૈ—જિસ પ્રકાર વાદિ પ્રતિવાદી કે બહુત
સમય કા મી ક્ષેત્ર, ધન આદિ સંબન્ધી વિવાદકો ન્યાયાધ્યક્ષ ન્યાય કે વજ્ર
પર દૂર કર દેતા હૈ—ઉસી પ્રકાર આવશ્યક મી જીવ ઔર કર્મ કે અનાદિ-
કાલીન આશ્રયાશ્રયિભાવરૂપ સંબન્ધકો દૂર કર દેતા હૈ—इसलिये इसका नाम
મી ન્યાય હૈ । મોક્ષકી આરાધના કરનેકા યહ હેતુ હૈ । इसलिये इसका नाम
આરાધના હૈ । જિસ પ્રકાર માર્ગ પથિકકો નગર મેં પહુંચા દેતા હૈ ઉસી
પ્રકાર આવશ્યક મી મોક્ષ રૂપ નગર મેં અપને પથિકકો પહુંચા દેતા હૈ—इसलिये
इसका नाम-मार्ग है । આવશ્યક શબ્દકા ક્યા અર્થ હૈ—इस बातको अब
સુત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ (સમણેણં સાવણં ચ) શ્રમણ, શ્રાવક કે દ્વારા યહ (જમ્હા)
જિસ કારણસે (અહોનિસસ અંતે) દિવસાન્ત ઔર નિશાન્ત મેં (અવસસ કાયવં
હોહ) અવશ્ય કરણીય હોતા હૈ (તમ્હા) इसकारण से (आवससयं नाम) इसका

તેનું છકું નામ “ન્યાય” અથવા—જેવી રીતે ન્યાયાધીશ વાદી અને પ્રતિવાદીના
બર, જમીન આદિ વિવાદોને ન્યાયને આધારે દૂર કરી નાખે છે, એજ પ્રમાણે
આવશ્યક પણ જીવ અને કર્મના અનાદિ કાલિન આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબંધને દૂર
કરી નાખે છે. તેથી આવશ્યકનું છકું નામ ‘ન્યાય’ છે.

(૭) ‘આરાધના’—મોક્ષની આરાધના કરવામાં આવશ્યક હેતુરૂપ (સાધનરૂપ)
થઈ પડે છે, તેથી તેનું સાતમું નામ ‘આરાધના’ છે.

(૮) ‘માર્ગ’—જેવી રીતે માર્ગ પથિકને ગરમાં પહોંચાડી દે છે, એજ પ્રમાણે
આવશ્યક પણ તેના આરાધક જીવને મોક્ષરૂપ નગરમાં પહોંચાડી દે છે, તેથી તેનું
આઠમું નામ માર્ગ છે. આવશ્યક શબ્દનો શો અર્થ છે, તે હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે
છે(સમણેણં સાવણં ચ) શ્રમણ અને શ્રાવક દ્વારા તે (જમ્હા) જે દારણે (અહો
નિસસ અંતે) દિવસને અન્તે અને રાત્રિને અન્તે (અવસસ કાયવં હોહ) અવશ્ય

તર્થઃ, અવશ્યકર્ત્તવ્યક્રમ=અવશ્ય કરણીયં ધવતિ, તસ્માત્ અસ્ય આવશ્યકં નામ ધવતિ । તદેતદાવશ્યકમ્—‘આવસસયં નિક્ષિવિસ્સામિ’ ઇતિ યત્પ્રતિજ્ઞાતં તદેવં નામાદિભેદૈરાવશ્યકં નિશ્ચિપ્ય વર્ણિતમ્ । ઇત્યમનુયોગદ્વારસૂત્રે આવશ્ય-કાધિકારઃ સંપૂર્ણ ॥ સૂ૦ ૨૯ ॥

‘સુયં નિક્ષિવિસ્સામિ’ ઇતિ પ્રતિજ્ઞાનુસારેણ શ્રુતાધિકારઃ પ્રારંભ્યતે-તત્ર પ્રથમં શ્રુતસ્વરૂપં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂળમ્—સે કિં તં સુયં ? સુયં ચડવિહં પળ્લત્તં, તં જહા-નામ-સુયં, ઠવળાસુયં, દવ્વસુયં, ભાવસુયં ॥સૂ૦ ૩૦॥

છાયા--અથ કિં તત્ શ્રુતમ્ ? શ્રુતં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથથા-નામશ્રુતમ્, સ્થાપનાશ્રુતમ્, દ્રવ્યશ્રુતં, ભાવશ્રુતમ્ ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

ટીકા--‘સે કિં તં સુયં’ ઇત્યાદિ--વ્યાખ્યા નિગદસિદ્ધા ॥સૂ૦ ૩૦॥

નામઆવશ્યક છે । (સે તં આવસસયં) “આવસસયં નિક્ષિવિસ્સામિ” ઇસપ્રકાર કી જો સૂત્રકાર ને પહિલે કહા હૈ ઉસી કે અનુસાર નામ, સ્થાપના આદિ ભેદાં દ્વારા આવશ્યકા ન્યાસ કરકે વર્ણન કિયા હૈ । ઇસ પ્રકારસે અનુયોગદ્વાર સૂત્ર મેં આવશ્યકા ધિકાર સમાપ્ત હુઆ । સૂત્ર૦ ૨૯ ॥

અવ સૂત્રકાર “સુયં નિક્ષિવિસ્સામિ” ઇસ વચન કે અનુસાર શ્રુતાધિકાર પ્રારંભ કરતે હૈ--ઇસકે પહિલે વે શ્રુત કે સ્વરૂપકો નિરૂપણ કરને કે લિયે “સે કિં તં સુયં, ઇત્યાદિ । સૂત્ર વહતે હૈ—

‘સે કિં તં સુયં ?’ ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૩૦ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે ભદન્ત ! શ્રુતકા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર—(સુયં ચડવિહં પળ્લત્તં) શ્રુત ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ

કરણીય હોય છે, (તમ્હા)તે કારણે(આવસસયં નામ) તેનું નામ આવશ્યક છે. (સે તં “આવસસયં” આવસસયં નિક્ષિવિસ્સામિ” આ પ્રકારે સૂત્રકારે જે પહેલાં કહ્યું છે તે અનુસાર નામ સ્થાપના આદિ લેહો દ્વારા આવશ્યકનો ન્યાસ (વિલાગ) કરીને વણુ ન ક્યું છે આ પ્રકારે અનુયોગદ્વાર સૂત્રનો આવશ્યક અધિકાર અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥ ૨૯ ॥

હવે સૂત્રકાર “સુયં નિક્ષિવિસ્સામિ” આ વચન અનુસાર શ્રુતાધિકારનો પ્રારંભ કરે છે સૌથી પહેલાં તેઓ શ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે “સે કિં તં સુયં” ઇત્યાદિ સૂત્ર કહે છે—“સે કિં તં સુયં?” ઇત્યાદિ —

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં સુયં ?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે ‘હે ભદન્તા! શ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે?’

અનુયોગચત્રિકા ટીકા સુત્ર ૩૧ નામશ્રુતનિરૂપણમ્

૧૮૩

તત્ર નામશ્રુતિ નિરૂપયતિ -

મૂલમ્—સે કિં તં નામસુય ? નામસુયં જસ્સ ણં જીવસ્સ વા
જાવ સુણત્તિ નામ કજ્જઈ, ॥સૂ૦ ૩૧॥

છાયા—અથ કિં તદ્ નામશ્રુતમ્ ? નામશ્રુત યસ્ય સ્વલુ જીવસ્ય વા યાવત્
શ્રુતેતિ નામ ક્રિયતે, તદેતત્ નામશ્રુતમ્ ॥સૂ૦ ૩૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा ॥ सू० ३१ ॥

અથ સ્થાપનાશ્રુતં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઠવણાસુયં ? ઠવણાસુયં જણં કટ્ટકમ્મે વા
જાવ ઠવણા ઠવિજ્ઞઈ, સે તં ઠવણાસુ । નામઠવણાણં કો પઢવિસે-
સો ? નામ આવકહિયં, ઠવણા ઇત્તરિય વ હોજા આવકહિયા વા ॥સૂ૦ ૩૨॥

(તં જહા) ઉસકે વે ચાર પ્રકાર યે હૈ—(નામસુયં ઠવણાસુયં-દઘ્વસુયં ભાવ-
સુયં) નામશ્રુત, સ્થાપનાશ્રુત, દ્રવ્ય ત ઓર ભાવ ત ॥ સુત્ર ૩૦ ॥

નામ શ્રુતકા કયા સ્વરૂપ હૈ ઇસ વાતરો સુત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘સે કિં તં નામ સુય’ इत्यादि । ॥ सूत्र ३१ ॥

શબ્દાર્થ— હે મદંત ! નામ ત કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—(નામસુય)
નામ શ્રુતકા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ (જસ્સ ણં જીવસ્સ વા અજીવસ્સ વા જાવ
સુણત્તિ નામ કજ્જઈ) જિસ કિસી જીવ અથવા અજાવ આદિ કા ત એસા
જો નામ રચ લિયા જાતા હૈ । ઇસકી વ્યાખ્યા ન માનકસક કી તરફ
જાનની ચાહિયે : ॥ સુત્ર ૩૧ ॥

ઉત્તર—(સુયં ચ્ચઉઘ્વિહં પ્પણત્તં) શ્રુત ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે (તંજહા) તે ચાર
પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નામ સુયં, ઠવણાસુયં, દઘ્વસુયં, ભાવસુયં, (૧) નામ શ્રુત
(૨) સ્થાપનાશ્રુત, (૩) દ્રવ્યશ્રુત, અને (૪) ભાવશ્રુત. ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

હવે સુત્રકાર નામશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નામસુયં?” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! નામશ્રુતનું કેવું
સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(નામસુય)નામશ્રુતનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(જસ્સ ણં જીવસ્સ વા
અજીવસ્સ વા જાવ સુણત્તિ નામ કજ્જઈ) જે કોઈ જીવ અથવા અજીવ આદિનું
“ ત” એવું જે નામ રાખવામાં આવે છે તેને નામ ત કહે છે. આ નામશ્રુતની
વ્યાખ્યા ૧મ આવશ્યકની વ્યાખ્યા અનુસાર જ સમજી લેવી. ॥ સૂ૦ ૩૧ ॥

છાયા—અથ કિં તન્ સ્થાપનાશ્રુતમ્ ? સ્થાપનાશ્રુતં યાત્વલુ કાઠકર્મણિ
વા યાવત્ સ્થાપના સ્થાપ્યતે, તદેતન્ સ્થાપનાશ્રુતમ્ । નામસ્થાપનયોઃ કઃપ્રતિ
દિશેષઃ ? નામ યાવત્કથિકમ્ સ્થાપના ઇત્તરિકા વા ભવેત્, યાવત્કથિકા વા ॥ સૂ. ૩૨

ટોકા—‘સે કિં તં ઠવણાસુ’ ઇત્યાદિ—વ્યાખ્યા પ્રાગ્વત્ ॥ સૂ. ૩૨ ॥
દ્રવ્યશ્રતં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં દઢ્વસુયં ? દઢ્વસુયં દુવિહં પળ્ળત્તં, તં જહા
—આગમઓ ય નો આગમઓ ય ॥ સૂ. ૩૩ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ દ્રવ્યશ્રુતમ્ ? દ્રવ્યશ્રતં દિવિંધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા—
આગમતથ નો આગમતથ ॥ સૂ. ૩૩ ॥

સ્થાપના શ્રુત વા સ્વરૂપ કયા હૈં ઇતિવાતવા સૂત્રવાર નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૩૨ ॥

શબ્દાર્થઃ—સે(કિં તં)હે ભદન્ત ! સ્થાપનાશ્રુત વા કયા સ્વરૂપ હૈં ?

ઉત્તરઃ—(ઠવણાસુયં) સ્થાપનાશ્રત વા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈં (જળ્ળં) જો
(કટ્ટકમ્મે વા જાવ ઠવણાઠવિજ્જહ) કાઠ આદિ મેં “યહ ત હૈં” ઇસ
પ્રકાર કી જો કલ્પના યા આરોપ કિયા જાતા હૈં (સે તં ઠવણાસુયં) વહ
સ્થાપના શ્રુત હૈં । નામ ઠવણાણં કો પહિવિસેસો) નામ ઔર સ્થાપના મેં કયા
અન્તર હૈં ?

ઉત્તરઃ—(નામ આવકહિયં યા ઠવણા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા) નામ યાવત્કથિક
હોતા હૈં ઔર સ્થાપના યાવત્કથિક/ઔર ઇત્તરિક દોનોં પ્રકાર કી હોતી
હૈં । ઇસકી વ્યાખ્યા બારહવેં સૂત્ર કી તરહ જાનની ચાહિયે । ॥ સૂત્ર ૩૨ ॥

હવે સૂત્રકાર સ્થાપના શ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે —

“સે કિં તં ઠવણાસુયં?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં) ઇત્યાદિ—શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્!
સ્થાપનાશ્રુતનું કેવું સ્વરૂપ છે? (કટ્ટકમ્મે વા જાવ ઠવણા ઠવિજ્જહ) ઠાળ
આદિમા “આ શ્રુત છે” આ પ્રકારની જે કલ્પના અથવા આરોપ કરવામાં આવે
છે (સે તં ઠવણાસુયં તેને ‘સ્થાપનાશ્રુત’ કહે છે (નામ ઠવણાણં કો પહિવિસેસો)
હે ભગવન્! નામ અને સ્થાપના વચ્ચે શો તફાવત છે?

ઉત્તર—(નામ આવકહિયં ઠવણા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા) નામ યાવત્કથિક
હોય છે. અને સ્થાપના યાવત્કથિક અને ઇત્તરિક, આ બન્ને પ્રકારની હોય છે. આ
સૂત્રનું વિશેષ વિવેચન તથા આ સૂત્રનો ભાથાર્થ બારમાં સૂત્રમાં (સ્થાપના આવ-
શ્યક સૂત્રમાં) કહ્યા અનુસાર સમજવો. ॥ સૂ. ૩૨ ॥

અણુયોગચત્રિકા ટીકા સ્ત્ર ૩૪ આગમતો દ્રવ્યશ્રુતનિરૂપણમ્

૧૮૫

ટીકા—‘સે કિં તં દ્વસુયં’ इत्यादि।

व्याख्या प्राग्वत् ॥ सू० ३३ ॥

તત્ર—આગમતો દ્રવ્યશ્રુતં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં આગમઓ દ્વસુયં ? આગમઓ દ્વસુયં જસ્સ ણં સુણ્ણિ પયં સિલ્લિયં ઠિયં જિયં જાવ ણો અણુપ્પેહાણ કમ્મા ? અણુવઓગો દ્વસમિત્તિ કદ્દુ, નેગમસ્સ ણં ઇગો અણુવઉત્તો આગમઓ ઇગં દ્વસુયં જાવ કમ્મા ? જહ્ જાણે અણુવઉત્તે ન ભવહ્ । સે તં આગમઓ દ્વસુયં ॥સૂ૦ ૩૪॥

છાયા—અથ કિં તદાગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્, આગમતો દ્રવ્યશ્રુતં—યસ્ય ચલુ ભવેતિ પદં શિક્ષિતં સ્થિતં જિતં યાવત્ નો અનુપ્રેક્ષયા, કસ્માત્ ? અનુપયોગો

શ્વદાર્થ—(સે કિ તં) हे भदन्त ! द्रव्यश्रुत का क्या स्वरूप है ?

ઉત્તર—(દ્વસુયં દુવિહં પણ્ણતં) દ્રવ્યશ્રુત દો પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) उसके वे प्रकार ये हैं—(आगमओ य नोआगमओ य) ? आगम को आश्रित कर के द्रव्यश्रुत होता है और दूसरा नोआगम को आश्रित करके द्रव्यश्रुत होता है । इसकी व्याख्या पहिले की तरह जाननी चाहिये । ॥सूत्र ३३॥

અવ સૂત્રકાર આગમ કી અપેક્ષા કર કે દ્રવ્યશ્રુતકા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સે કિં તં આગમઓ દ્વસુયં” इत्यादि । ॥ सूत्र ३४ ॥

શ્વદાર્થ—(સે કિં તં) शिष्य पूछता है कि हे भदन्त । आगम का आश्रय करके जो द्रव्यश्रुत होता है उसका क्या स्वरूप है ?

હવે સૂત્રકાર દ્રવ્યશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં દ્વસુયં ?” इत्यादि—

શ્વદાર્થ—(સે કિં તં દ્વસુયં?) हे लगवन् ! द्रव्यश्रुतनुं देवुं स्वइप कहुं छे?

ઉત્તર—(દ્વસુયં દુવિહં પણ્ણતં) દ્રવ્યશ્રુતના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે (આગમઓ ય નોઆગમઓય) (૧) આગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુત હોય છે, અને (૨) નોઆગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુત હોય છે. તેની વ્યાખ્યા આવશ્યક સૂત્રમાં આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

હવે સૂત્રકાર આગમને આશ્રિત જે દ્રવ્યશ્રુત છે તેનું નીચે પ્રમાણે નિરૂપણ કરે છે—“સે કિં તં આગમઓ દ્વસુયં” इत्यादि—

શ્વદાર્થ—(સે કિં તં આગમઓ દ્વસુયં?) शिष्य गुरुने એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—હે લગવન્ ! આગમનો આશ્રય કરીને જે દ્રવ્યશ્રુત હોય છે, તે દ્રવ્યશ્રુતનું દેવું સ્વરૂપ છે ?

૧૮૬

અનુયોગતારણ

દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા, રંગમય સ્વરૂપ એકોઽનુપયુક્ત આગમત્ એકં દ્રવ્યશ્રુતં યાવત્
કસ્માત્ ? યદિ જ્ઞાયકઃ અનુપયુક્તો ન ભવતિ । તદ્દેતદાગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્ ॥૨૦૩૪॥

ટીકા—સે કિં તં આગમઓ દ્રવ્યસુયં' इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥ २०३४॥
આગમનો દ્રવ્યશ્રુતમ્ । અથ નો આગમતો દ્રવ્યશ્રુતમાહ—

મૂલ્ય—સે કિં તં નો આગમઓ દ્રવ્યસુયં ? નો આગમઓ
દ્રવ્યસુયં તિવિહ પળણસં, તં જહા—જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં, ભવિષ્ય-
સરીરદ્રવ્યસુયં, જાણયસરીર—ભવિષ્યસરીરવદ્દરિત્તં દ્રવ્યસુયં ॥ ૨૦૩૫ ॥

ઉત્તર—(આગમઓ દ્રવ્યસુયં) આગમ વા આશ્રય કર કે દ્રવ્યશ્રુત કા સ્વરૂપ
હસ પ્રકાર સે હૈ—(જસ્સ ણં સુણતિ પયં સિવિત્થયં ઠિયં જિયં જાવ ણો અણુપ્પેહાણ)
જિસ સાધુ આદિ કો શ્રુતપદ શિક્ષિત હૈ સ્થિત હૈ જિત હૈ । યાત્પદ સે મિત
હૈ, પરિજિત હૈ નામસમ હૈ, ધોષસમ હૈ, અહીનાક્ષર હૈ, અનત્યક્ષર હૈ, અવ્યાવિદ્ધાક્ષર
(ઉલટ પુલટ પનેસે રહિત) હૈ, અસ્વલિત હૈ, અમિલિત હૈ, અવ્યત્યાગ્રેડિત હૈ,
પરિપૂર્ણ ધોષવાલા હૈ. વળ્ઠો ઠવિપ્રમુક્ત હૈ. ઓર શુરુવાચનોપગત હૈ । હસતરહ
વહ સાધુ આદિ વાચના સે પૂછનાસે પરિવર્તના (આવૃત્તિ)સે ઓર ધર્મકથા સે હસમેં
વર્તમાન હૈં પરન્તુ ઉપયોગ સે વર્તમાન નહીં હૈં, અતઃ ઉપયોગ સે રહિત હં ને કે
કારણ વહ સાધુ આગમ કો આશ્રિત કર કે દ્રવ્યશ્રુત માના ગયા હૈ । (કમ્હા)
ક્યોંકિ (અણુવઓગો દ્રવ્યમિતિ કહું) એસા આગમ વા વચન હૈં કિ જો
ઉપયોગ સે રહિત હોતા હૈં વહ દ્રવ્ય માના જાતા હૈ । સકી વ્યાખ્યા ૧૪ વેં
સૂત્રકે સમાન જાનનીં ચાહિયે । સૂત્ર ॥ ૩૪ ॥

ઉત્તર—(આગમઓ દ્રવ્યસુયં) આગમનો આશ્રય કરીને દ્રવ્યશ્રુતમ્ આ
પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—

(જસ્સ ણં સુણતિ પયં સિવિત્થયં ઠિયં જિયં જાવ ણો અણુપ્પેહાણ) જે
સાધુ આદિને શ્રુતપદ શિક્ષિત છે, સ્થિત છે, જિત છે, મિત છે, પરિજિત છે,
નામસમ છે, ધોષસમ છે, અહીનાક્ષર છે, અનત્યક્ષર છે, અવ્યાવિદ્ધાક્ષર અસ્વલિત
છે, અમિલિત છે, અવ્યત્યાગ્રેડિત છે, પરિપૂર્ણ ધોષમુક્ત છે, ડંઠોષ વિપ્રમુક્ત છે,
અને શુરુવાચનોપગત છે, આ રીતે તે સાધુ આદિ વાચનાથી, પરિવર્તનાથી મુક્ત
નથી, પરિવર્તનાથી અને ધર્મકથાથી તેમાં વર્તમાન છે, પરન્તુ ઉપયોગ પરિણામથી
તેમાં વર્તમાન (પ્રવૃત્ત) નથી, અને તેથી ઉપયોગથી રહિત હોવાને કારણે તે સાધુને
આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યશ્રુત માનવામાં આવે છે; (કમ્હા) કારણ કે (અણુવઓગો
દ્રવ્યમિતિ કહું) આગમનું એવું વચન છે કે જે ઉપયોગથી રહિત હોય છે—
અનુપયુક્ત પરિણામવાળો હોય છે તેને દ્રવ્યરૂપ માનવો જોઈએ. આ સૂત્રમાં
વપરાયેલાં પદોનો ભાવાર્થ ૧૪ માં સૂત્રમાં આપ્યા પ્રમાણે સમજવો. ॥ ૨૦૩૪ ॥

અનુસોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂ. ૩૫ નોઆગમતો દ્રવ્યશ્રુતનિરૂપણમ્

૧૮૭

હાથા—અથ કિં તદ્ નો આગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્ ? નો આગમતો દ્રવ્યશ્રુતં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞસ્ય તદ્ધથા—જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્, ભવ્યશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્, જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરદ્વ્યતિરિક્તં દ્રવ્યશ્રુતમ્ ॥સૂ. ૩૫॥

ટીકા—‘સે કિં તં નોઆગમઓ દવ્વસુયં’ ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યા પૂર્વવત્ ॥સૂ. ૩૫॥
અથ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં જાણયસરીરદવ્વસુયં ? જાણયસરીરદવ્વસુયં સુયત્તિપયથાહિગારજાણયસ્સ જં સરીરયં વવગયચુયચાવિય-
ચત્તદેહં તં ચેવ પુઠ્ઠભણિયં ભાણિયઠ્ઠં જાવ સે તં જાણયસરીર-
દવ્વસુયં ॥ સૂ. ૩૬ ॥

અવ સૂત્રકાર નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યશ્રુત કા કયન કરતે હૈં—

“સે કિં તં નોઆગમઓ દવ્વસુયં” ઇત્યાદિ । સૂત્ર ૩૫ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં) હે મદન્ત ! નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યશ્રુત કો કયા સ્વરૂપ હૈં ? (નોઆગમઓ દવ્વસુયં) નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યશ્રુત (તિવિહં પળ્ણત્તં) ૩ તીન પ્રમાર કા કહા હૈં । (તં જહા) વે પ્રકાર ચે હૈં—(જાણ-
યસરીરદવ્વસુયં, ભવિયસરીરદવ્વસુયં, જાણયસરીર—ભવિયસરીરવહરિતં દવ્વસુયં)
જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુત, ભવ્યશરીરદ્રવ્યશ્રુત, ઓર જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીર इन दोनों
સે વ્યતિરિતદ્રવ્યશ્રુત । इस सूत्र की व्याख्या पहिले कहे हुए १६ वें सूत्र
की व्याख्या के अनुसार जाननी चाहिये । ॥ सू. ३५ ॥

હવે સૂત્રકાર નોઆગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુતનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નોઆગમઓ દવ્વસુયં?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં) ઇત્યાદિ શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે કે હે ભદન્ત !
નોઆગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(નોઆગમઓ દવ્વસુયં તિવિહં પળ્ણત્તં) નોઆગમને આશ્રિત
કરીને દ્રવ્યશ્રુતના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા તે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે
(જાણયસરીરદવ્વસુયં, ભવિયસરીરદવ્વસુયં, જાણયસરીરવહરિતં દવ્વસુયં)
(૧) જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યશ્રુત, (૨) ભવ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુત, અને (૩) જ્ઞાયક શરીર અને
ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવું દ્રવ્યશ્રુત આ સૂત્રની વ્યાખ્યા આગળ ૧૬ માં સૂત્રની
જે વ્યાખ્યા આપવામાં આવી છે, તે વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥ સૂ. ૩૫ ॥

૧૮૮

અનુયોગસૂત્ર

છાયા--અથ કિં તદ્ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્ ? જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુત-
શ્રુતેતિ પરાર્થાધિકારજ્ઞાયકસ્ય યત્ શરીરકં વ્યપગતચ્યુતચ્યાવિતત્યક્તદેહં તદેવ
પૂર્વભણિતં મણિતવ્યં યાવત્, તદેતત્ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્ ॥સૂં ૩૬॥

ટીકા--‘સે કિં તં જાણયસરીરદ્વસુયં’ इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥सू० ३६॥

જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ--હસ વાત કો સૂત્રકાર સ્પષ્ટ
કરતે હૈ--“સે કિં તં જાણયસરીરદ્વસુયં” इत्यादि ॥सू० ३६॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં જાણયસરીરદ્વસુયં) હે મદન્ત (જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્ય
શ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર--(સુચત્તિપયત્યાહિગારજાણયસ્સ) શ્રુત શબ્દ વાચ્ય આગમ કે
અર્થ રૂપ અધિકાર કે જ્ઞાતા કા એસા (સરીરય) શરીર (જં) જો (વવગયચુય
ચાવિયચત્તદેહં) વ્યપગત--ચૈતન્ય પર્યાય સે રહિત હો ચુકા હૈ, ચ્યુત--દશ પ્રકાર
કે પ્રાણો સે પરિવર્જિત હા ગયા હૈ, ચ્યાવિત--બલિષ્ઠ આયુક્ષય કે કારણો સે
પ્રાણ રહિત હો ગયા હ । ત્યક્તદેહ આહાર પરિણાત જનિત વૃદ્ધિ જિસસે
સર્વથા નિકલ ચુકી હૈ (જાણયસરીરદ્વસુયં) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત હૈ । (તં
ચેવ પુરૂવં મણિયં) યહાં પર ૧૭ વેં સૂત્ર કથિત હસ વિષય સંબન્ધી હસ વ્યપગત
આદિ પાઠ સે આગે (જાવ સે તં જાણયસરીરદ્વસુયં) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત
કા પાઠ (માણિયવં) ગ્રહણ કરલેના ચાહિયે । હસકી (વ્યાખ્યા ૧૭ વેં સૂત્ર
મેં કહી ગઈ હૈં । ॥ સૂત્ર ૩૬ ॥

હવે સૂત્રકાર જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે--

“સે કિં તં જાણયસરીરદ્વસુયં” इत्यादि--

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં જાણયસરીરદ્વસુયં?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન
પૂછે છે કે હે ભગવન્! જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર--(સુચત્તિ પયત્યાહિગારજાણયસ્સ) શ્રુત શબ્દના વાચક એવા આગ-
મના અર્થરૂપ અધિકારના જ્ઞાતાનું (સરીરય) શરીર (જં) કે જે (વવગયચુય
ચાવિયચત્તદેહં) વ્યપગત થઈ ચુક્યું છે ચૈતન્ય પર્યાયથી રહિત થઈ ચુક્યું છે,
ચ્યુત થઈ ચુક્યું છે હસ પ્રકારના પ્રાણોથી રહિત થઈ ચુક્યું છે, ચ્યાવિત થઈ
ચુક્યું છે, બલિષ્ઠ આયુક્ષયના કારણોથી પ્રાણરહિત થઈ ચુક્યું છે, ત્યક્તદેહ થઈ
ચુક્યું છે આહાર પરિણતિ જનિત વૃદ્ધિ જેમાંથી સર્વથા નીકળી ચુકી છે
(જાણયસરીરદ્વસુયં) એવાં શરીરને ‘જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત’ રૂપ કહેવામાં આવે
છે. (તં ચેવ પુરૂવં મણિયં) અહીં ૧૭માં સૂત્રમાં કથિત આ વિષય સંબન્ધી આ
વ્યપગત આદિ પદથી શરૂ કરીને (જાવ સે તં જાણયસરીરદ્વસુયં) જ્ઞાયક-
શરીર દ્રવ્યશ્રુત પર્યન્તનો પાઠ (માણિયવં) ગ્રહણ કરવો જોઈએ. તેની વ્યાખ્યા
૧૭માં સૂત્રની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી જોઈએ. ॥ સૂં ૩૬ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા—પૃ. ૩૭ મધ્યશ્રુતનિરૂપણમ્

૧૮૯

અથ મધ્યશ્રુત નિરૂપયિતુમાહ--

મૂલમ્--સે કિં તં મવિયસરીરદઘ્વસુયં ? મવિયસરીરદઘ્વ-
સુયં જે જીવે જોળી જમ્મણ નિક્કવંતે જહા દઘ્વાવસ્સણ તહા માણિ-
યઠ્ઠવં જાવ, સે તં મવિયસરીરદઘ્વસુયં ॥ સૂ. ૩૭ ॥

છાયા--અથ કિં તદ્ મધ્યશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્ ? મધ્યસરીરદ્રવ્યશ્રુતં યો
જીવો યોનિજન્મનિષ્ક્રાન્તો યથા દ્રવ્યાવશ્યકે તથા મણિતવ્યં યાવત તદેતદ્ મધ્ય-
શરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્ ॥ સૂ. ૩૭ ॥

અથ સૂત્રકાર મધ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુત કા નિરૂપણ કરતે હૈ--

“સે કિં તં મવિયસરીરદઘ્વસુયં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૩૭ ॥

શબ્દાર્થ--(સે) હે મદન્ત ! (તં) પૂર્વપ્રકાન્ત (મવિયસરીરદઘ્વસુયં) મધ્ય-
શરીરદ્રવ્યશ્રુત કા (કિં) કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર--(જે જીવે જો ણીજમ્મણનિક્કવંતે) જો જીવ ઉત્પત્તિસ્થાનરૂપ
યોનિ સે અપના સમય પૂર્ણ કરકે નિકલા હૈ--ગર્ભપાત સે ઉત્પન્ન નહીં હુઆ હૈ
કિન્તુ જન્મા હૈ એસા વહ જીવ ઉસ પ્રાપ્ત શરીર સે જિનોપદિષ્ટભાવ કે અનુ-
સાર શ્રુત શબ્દ વાચ્ય આગમ કે અર્થ કો મવિષ્ય મેં ભીચેગા--વર્તમાનકાલ મેં
સીચ નહીં રહા હૈ એસા શરીર મધ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુત હૈ । (જહા દઘ્વાવસ્સણ તહા
માણિયઠ્ઠવં જાવ સે તં મવિયસરીરદઘ્વસુયં) ઇસ વિષય સે લગતા હુઆ વર્ણન
જિસ પ્રકાર સે દ્રવ્યાવશ્યક કે વર્ણન મેં કિયા ગયા હૈ ઉસી પ્રકારકા વર્ણન
યહાં ભી સમજના ચાહિયે । ઓર યહ વર્ણન યહ “મધ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુત હૈ”

હવે સૂત્રકાર લઘ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુતનું નિરૂપણ કરે છે--

“સે કિં તં મવિયસરીરદઘ્વસુયં” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ--(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (તં) પૂર્વપ્રસ્તુત વિષય-
૩૫ (મવિયસરીરદઘ્વસુયં) લઘ્યશરીરદ્રવ્યશ્રુતનું (કિં) કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર (જે જીવે જોળીજમ્મણનિક્કવંતે) જે જીવ ઉત્પત્તિ સ્થાનરૂપ યોનિ-
માંથી પોતાનો સમય (ગર્ભમાં રહેવાનો સમય) પૂરો કરીને નીકળ્યો છે ગર્ભપા-
તથી ઉત્પન્ન થયા નથી એવો તે જીવ તે પ્રાપ્ત શરીર વડે વર્તમાનકાળે શ્રુત
શબ્દવાચ્ય આગમના અર્થને શીખી રહ્યો નથી પણ લવિષ્યમાં આગમના અર્થને
શીખવાનો છે. એવા તે જીવના શરીરને લઘ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુત ૩૫ ગણવામાં આવે
છે. (જહા દઘ્વાવસ્સણ તહા માણિયઠ્ઠવં જાવ સે તં મવિયસરીરદઘ્વસુયં) ૧૮માં
સૂત્રમાં દ્રવ્યાવશ્યકના વિષયને અનુલક્ષીને જેવું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. એવું
વર્ણન અહીં પણ ગ્રહણ કરવું નોંધવું. “તેને લઘ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુત કહે છે” આ

१६०

अनुयोगद्वारसूत्रे

टीका—“से किं तं भविष्यसरीरद्वयसुयं” इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू० ३७ ॥
अथ—ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतमाह—

मूलम्—से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं ?
जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं पत्तयपोत्थयलिहियं ।

अहवा जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं पंचविहं
पण्णत्तं, तं जहा—अंडयं १ बोंडयं २ कीडयं ३ बोलयं ४ वागयं ५ ।
(तत्थ) अंडयं हंसगवभादि बोंडयं कप्पासमाइ । कीडयं पंचविहं
पण्णत्तं, तं जहा—पट्टे मलए अंसुए चीणंसुए, किमिरागे । बालयं
पंचविहं पण्णत्तं, तं जहा—उण्णिणए, उट्टिणए, मियलोमिणए, कोतवे,
किट्टिसे । वागयं सणमाइ । से तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं
दव्वसुयं । से तं नो आगमओ दव्वसुयं । से तं दव्वसुयं ॥ सू० ३८ ॥

छाया—अथ किं तद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतम् ? ज्ञायक-
शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतं पत्रकपुस्तकलिखितम् ।

यहाँ तक जानना चाहिये । इसकी व्याख्या १४ वें सूत्र के अनुसार ही जाननी चाहिये । ॥ सूत्र ३७ ॥

अथ सूत्रकार ज्ञायकशरीरभव्यशरीर इन दोनों से भिन्न जो तद्व्यतिरिक्त द्रव्यश्रुत हैं इसका स्वरूप कहते हैं—

“से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं” इत्यादि ॥ सूत्र ३८ ॥

शब्दार्थः—(से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं) शिष्य

सूत्रपाठ पर्यन्तं ‘लव्यशरीरं द्रव्यावश्यकं’ सूत्रं समस्तं कथं आह्वीं पण्यं अह्वं कस्सुं जेधं तेनी व्याप्या पण्यं १८मां सूत्रनी व्याप्या प्रभाण्ये जे समजवी ॥ सू० ३७ ॥
ज्ञायकशरीरं अने लव्यशरीरं आ गन्नेथी सिन्नं जेधुं जे ‘तद्व्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतं’ छे तेना स्वप्पणं छे सूत्रकार निप्पण्य करे छे

“से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं” इत्यादि—

शब्दार्थः—(से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं ?) शिष्य

अनुयोगचन्द्रिकाटी १.३८ ज्ञाय शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यश्रुतनिरूपणम् १९१

अथवा-ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यसूत्रं पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-
अण्डजं, बोण्डजं, कीटजं, बालजं, बाल्यलम् । (तत्र) अण्डजं हंसगर्भादि, बोण्डजं
कर्पासादि, कीटजं पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-पटुं, मलयम्, अंशुकं, चीनां-
शुकं, कृमिरागम्, बालजं पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्-तद्यथा और्णिकम् औद्दिकम्, मृगलौ-
मिकम्, कौतवम्, किडुसम् । बाल्यलं शणादि । तदेतद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीर
व्यतिरिक्त द्रव्यश्रुतम् । तदेतद् नोआगमतो द्रव्यश्रुतम् । तदेतद् द्रव्यश्रुतम् ॥ ४०३८ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरितं दव्वसुयं’ इति । अथ किं तद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यश्रुतम् ?
इति । उत्तरमाह—‘जाणयसरीरभवियसरीरवहरितं दव्वसुयं’ इत्यादि । ज्ञायक-
शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यश्रुतम्, पत्रकपुस्तकलिखितम्-पत्रकाणि=पाल-
पत्रादीनि च पुस्तकानि=पत्रसङ्घानरूपाणि च तेषु लिखितम् । यद्वा-‘पत्तयपोतयलिहियं’
इति पाठस्य ‘पत्रकपोतकलिखितम्’ इतिच्छाया । एव-पोतकानि=वस्त्राणि । पत्र-
केषु पुस्तकेषु वस्त्रकेषु च लिखितं ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्यश्रुतम् ।

पूछता है कि हे भदन्त ! ज्ञायकशरीर और भव्यशरीर इन दोनों से भिन्न
जो द्रव्यश्रुत है उसका क्या स्वरूप है ?

उत्तरः—(पत्तयपोतयलिहियं जाणयसरीरभवियसरीरवहरितं दव्वसुयं)
ताडपत्रों और पत्रों के संघातरूप पुस्तकों में लिखा हुआ जो श्रुत हैं वह ज्ञायक
शरीर और भव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यश्रुत हैं ऐसा जानना चाहिये । सूत्रकार
(अहवा) अथवा-पटु से कहते हैं “पत्तयपोतयलिहियं” इस पाठकी संस्कृत
छाया ‘पत्रकपोतकलिखितं’, ऐसी भी होती है इस पक्ष में पोतकशब्द का
अर्थ वस्त्र है, और पत्रक शब्द का अर्थ पुस्तक । इस प्रकार वस्त्रों के ऊपर
और पुस्तकरूप कागजों के ऊपर लिखा गया श्रुत ज्ञायकशरीर और भव्यशरीर

श्रुतने એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીર, આ બંનેથી
ભિન્ન એવું જે દ્રવ્યશ્રુત છે તેનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તરઃ—(પત્તયપોતયલિહિય જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિતં દવ્વસુયં)
તાડપત્રો અને પત્રોના સમૂહરૂપ પુસ્તકોમાં લખેલું જે શ્રુત છે તેને જ્ઞાયકશરીર અને
ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યશ્રુત કહે છે. (અહવા) અથવા “પત્તયપોતયલિહિય”
આ સૂત્રાંશની સંસ્કૃત છાયાની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો આ સૂત્રપાઠનો
નીચે પ્રમાણે અર્થ થશે—

“પોતક” એટલે વસ્ત્ર, અને “પત્રક” એટલે પુસ્તક આ રીતે શબ્દનો અર્થ
ક્ષેપતા દ્રવ્યશ્રુતનો નીચે પ્રમાણે અર્થ પાણ થઈ શકે છે-વસ્ત્રો ઉપર અને પુસ્તક
રૂપ કાગળો પર લખેલા શ્રુતને જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવું દ્રવ્ય-

પત્રકાદિલિખિત-ય અતસ્ય ઉપયોગરહિતતાત્ દ્રવ્યત્વં ચોદ્યમ્ । આગમો હિ જ્ઞાનં, તસ્ય કારણમ્—આત્મા—દેહઃ શબ્દશ્ચેતત્ત્રયં, ત-ભાવાત્ તસ્ય નોઆગમત્વં વિજ્ઞયમ્, અપિ ચ—પત્રકપુસ્તકલિખિતસ્ય અચેતનત્વાદ્ જ્ઞાનરૂપત્ ભાવાદ્ચ નોઆગમત્વમ્ । इह 'सुय' इत्यल्लग्नत्वात् सूत्रमिति छायापक्षे प्राह—'अहवा' इत्यादि । अथवा ज्ञायकशरीरभयशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यसूत्र पञ्चविधं प्रज्ञप्तम् । तद्यथा—अण्डजम्?, बोण्डजम्?, कीटजम्?, बालजम्?, वाक्लजम्?,

તત્ર પઠ્ઠચવિધદ્રવ્યસૂત્રમધ્યે પ્રથમં મેદં પ્રત્યયતિ—'અંડયં હંસગન્ધાદિ' इति । अण्डजं हंसगर्भादि, इह हंसशब्देन चतुरिन्द्रियो जीवविशेषो गृह्यते, तस्य

સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યશ્રુત છે । પત્રક આદિ પર લિખે હુણ શ્રુત મેં ઉપયોગ સે રહિત હોને કે કારણ દ્રવ્યત્વ છે । આગમ નામ જ્ઞાન કા છે । સ્સ કે કારણ આત્મા, દેહ ઓર શબ્દ કારણશ્રુત હોતે હૈ । જનક-અભાવ ક્ષેત્રે નેં ઉસમે નોઆગમતા છે । અપિ ચ—પત્રક પુસ્તક આદિ મેં લિખિત શ્રુત મેં અચેતનતા હોને કે કારણ જ્ઞાનરૂપતા કા અભાવ છે સ્સલિયે મી ઉસમેં નોઆગમતા છે । તથા જબ "સુય" પદ કી છાયા 'સૂત્ર' એસી હોતી છે તજ ઉસ પક્ષ મેં વ્યા સ્સ કા અર્થ હોતા છે સ્સે (જાણયસરીરભવિયસરીરવ્યતિરિત્તં દ્રવ્યસુયં પંચવિદં પજ્જત્તં) વે કહતે હૈં કિ જ્ઞાયક શરીર ઓર ભયશરીર ઇન સે મિન્ન જો દ્રવ્યસૂત્ર છે વહ પાંચ પ્રકાર કા છે—(ત જહા) વે પ્રકાર વે છે (અંડયં, ૧ બોંડયં, ૨, કીડયં, ૩, બાલયં, ૪, વાગયં, ૫,) અણ્ડજ બોણ્ડજ, કીટજ, બાલજ ઓર વાક્લજ । (તત્થ) ઇન મેં (અણ્ડયં) અંડજ કા તાપયં સ્સ પ્રકાર સે હૈં (હંસ

શ્રુત કહે છે." કાગળ આદિ પર લખાયેલા શ્રુતમાં ઉપયોગથી રહિતતા હોવાને કારણે દ્રવ્યત્વ છે. જ્ઞાનને આગમ કહે છે તે આગમરૂપ જ્ઞાનમાં આત્મા, દેહ અને શબ્દ કારણશ્રુત અને છે. તેમના જ્યાં અભાવ હોય ત્યાં આગમતાનો સદ્ભાવ હોતો નથી પણ નોઆગમતાનો સદ્ભાવ રહે છે. તાઉપત્ર પુસ્તક આદિમાં લખેલા શ્રુતમાં અચેતનતા હોવાથી જ્ઞાનરૂપતાનો અભાવ હોય છે, તે કારણે તે શ્રુતમાં નોઆગમતા રહેલી છે.

જ્યારે "સુયં" આ પદની સંસ્કૃત છાયા "સૂત્ર" 'સૂત્ર' થાય છે, ત્યારે તેનો શ્રી અર્થ થાય છે તે હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—(જાણયસરીરભવિયસરીર-વ્યતિરિત્તં દ્રવ્યસુયં પંચવિદં પજ્જત્તં) તેઓ કહે છે કે જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત અને ભવિય-શરીર દ્રવ્યશ્રુતથી બિન્ન એવું જે દ્રવ્યસૂત્ર ('દ્રવ્યસુય')ની સંસ્કૃત છાયા "દ્રવ્ય-સૂત્ર"ને આધારે આ પદ બન્યું છે છે તે પાંચ પ્રકારનું કહ્યું છે— (તંજહા) જે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(અંડયં બોંડયં કીડયં વાગયં) (૧) અંડજ, (૨) બોંડજ, (૩) કીટજ, (૪) બાલજ અને (૫) વાક્લજ (તત્થ અણ્ડયં હંસગન્ધાદિ)

અનુભવમનિકા ટીકા. સ્વ. ૩૮ જ્ઞાનકશરીરમધ્યશરીરવ્યતિરિક્તવ્યથ્રુતનિરૂપણ ૧૯૩

ગર્ભ:=તન્નિર્મિતા કોશિકા 'કોથલી' इति પ્રસિદ્ધા તદુત્પન્ન સૂત્રમણ્ડજમુચ્યતે, 'રેશમી' इति ભાષાપ્રસિદ્ધમ્ । આદિશબ્દચતુરિન્દ્રિયમેદં પ્રદર્શયતિ । નહુ વદિ હંસગર્ભોત્પન્ન સૂત્રમણ્ડજમુચ્યતે તર્હિ 'અંડયં હંસગર્ભાદિ' इति સામાનાધિકરણ્ય નોપપયતે इति ચે દુચ્યતે, કારણે કાર્યોપચારાત્ હંસગર્ભોત્પન્ન સૂત્રમપિ-હંસગર્ભ હંસુત્પન્ન इति નાસ્તિ કોઽપિ દોષઃ ॥૧॥

અથ દ્વિતીયમેદં પ્રરૂપયતિ-‘બોંડયં કપ્પાસમાહ’ इति । ‘બોંડજં કાર્પાસાદિ’ કાર્પાસનિષ્પન્ન સૂત્રં બોંડજં-બોંડં=કાર્પાસક્રોશઃ ફલવિશેષરૂપસ્તજાતં શબ્દાદિ । ‘હંસ’ એક ચતુરિન્દ્રિય જીવ વિશેષ હોતા હૈ । વહ એક કોથલી બનાતા હૈ । હસે ઉત્પન્ન જો સૂત્ર હોતા હૈ ઉસકા નામ અંડજ હૈ । હસે માંપા મેં રેશમી વસ્ત્ર કહતે હૈ । હંસગર્ભ મેં જો આદિ શબ્દ હૈ વહ ચૌરિન્દ્રિયો કે મેદં કા પ્રદર્શક હૈ ।

ટીકા:— યદિ હંસગર્ભ સે ઉત્પન્ન સૂત્ર અંડજ કહલાતા હૈ તો “અંડયં હંસ ગર્ભાદિ” મેં સમાનાધિકરણતા નહીં થન સકતી હૈ, સો ઉસકા ઉત્તર હસ પ્રકાર સે હૈ કિ યહાં પર કારણ મેં કાર્યકા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । હસલિયે હંસ કે ગર્ભ કોથલી સે ઉત્પન્ન હુએ સૂત્રકો મી હંસગર્ભ કે નામ સે કહ દિયા હૈ । હસતરહ કે કથન મેં કોઈ દોષ નહીં હૈ । (બોંડયં કપ્પાસમાહ) કપાસ સે બને હુએ સૂત્રકા નામ બોંડજ હૈ । બોંડ નામ કપાસ કે કોશકી હૈ । કપાસ કા કોશ એક પ્રકારકા ફલ હોતા હૈ । જિસમેં સે કપાસ નિકલતા

પહેલાં તો અંડજનો બાવાથ અતાવવામાં આવે છે. ‘હંસ’ એક ચતુરિન્દ્રિય જીવ વિશેષનું નામ છે. (અહીં હંસ નામનું પક્ષી ગૃહીત થયું નથી પણ પતંગીયા જેવું કેઈ ચતુરિન્દ્રિય જંતુ ગૃહીત થયું છે.) તે એક કોથળી (કોશ) બનાવે છે તેમાંથી જે સૂત્ર ઉત્પન્ન થાય છે તેને ‘અંડજ’ કહે છે. તેને શુદ્ધરાતી બાવામાં રેશમી વસ્ત્ર કહે છે. ‘હંસગર્ભ’ આ પદની પાછળ જે ‘આદિ’ પદ મૂકવામાં આવ્યું છે તે ચૌરિન્દ્રિયોના બેદનું પ્રદર્શક છે.

શંકા—જો હંસગર્ભમાંથી ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રને અંડજ સૂત્ર કહેવામાં આવે તો “અંડયં હંસગર્ભાદિ”માં સમાનાધિકરણતા ધરિત થતી નથી.

ઉત્તર—અહીં કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરવામાં આવ્યો છે. તે કારણે હંસના ગર્ભમાંથી (કોશમાંથી) ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રને પણ અહીં હંસગર્ભના નામે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. આ કારણે આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી. (‘બોંડયં કપ્પાસમાહ’) કપાસ અથવા કાંડમાંથી બનેલા બોંડજ છે. ‘બોંડ’ આ શબ્દ કપાસના કોશરૂપ કાલાને માટે વપરાય છે. આ કપાસમાંથી જે સૂત્ર બને છે તેને બોંડજ કહે છે. (હિન્દીમાં કાલાને ‘બોંડિયા’ કહે છે) અહીં આદિ પદ

બોળજ-સુત્ર તે । રૂપાદિ શબ્દઃ પ્રકારવાચી । ફલસ્ય પ્રકારો મેદઃ કર્પાસ
 રૂપિ વોધયિતુમાદિ શબ્દઃ પ્રયુક્ત ઇતિ । અગ્રાપિ કાર્યો વચારાત્ કર્પાસ
 કોઢકમિતિ સામાનાધિકરણ્યમ્ ।

અથ તૃતીયમેદમાદ-‘કીટયં પંચવિહં પળ્ળાત્’ ઇતિ । કીટજં પઠ્યવિહં
 પ્રજાતમ્-કીટજં=કીટાત્ ચતુરિન્દ્રિયજીવવિશેષાઝાતં ઘનં પચ્ચપ્રકારકં પ્રજાતં=પ્રક-
 વિત્તમ્ । પઠ્યપ્રકારસ્વમેષ સ્પષ્ટયતિ-‘તં જહા’ ઇત્યાદિ । તત્પથા-પટ્ટ=પટ્ટપત્રમ્,
 પટ્ટપત્રોત્તિવિષયે એવં પટ્ટસમપ્રદાયઃ-અરણ્યે નિકુંજમધ્યે માંસચીડાદિરૂપમિષ-
 પુઠ્ઠાઃ સ્થાપ્યન્તે । તેષાં પુઠ્ઠજાનાં પાર્શ્વતો નિમ્ના ઊન્નતાથ સાન્તરા વહવઃ

હૈ । ઇસ કર્પાસ કે બને હુણ સુત્ર કો બોળજ કહા જાતા હૈ । યહાં આદિ
 શબ્દ પ્રકારવાચી હૈ । કર્પાસ સે ફલકા મેદ હૈ । યહ મેદ કર્પાસ હૈ । ઇસ
 વાતકો સમજાને કે લિયે યહાં આદિ શબ્દ પ્રયુક્ત હુઆ હૈ । યહાં મી કારણ
 મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે બોળજ સુત્ર કો કર્પાસ વહ દિયા હૈ । ઇસલિયે સમા-
 નાધિકરણતા ઘનને મેં કોઈ દોષ નહીં હૈ । (કીટયં પંચવિહં પળ્ળાત્) કીટજ
 સહ પાંચ પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । ચૌરિન્દ્રિય જીવ વિશેષ
 કા નામ કીટ હૈ । ઉસ સે ઉત્પન્ન જો સુત્ર હોતા હૈ વહ પાંચ પ્રકાર
 કા હોતા હૈ । (તં જહા) જૈસે-‘પટ્ટે મલય અંસુણ ચીળંસુણ
 કિમિરાને’ પટ્ટ, મલય, અંશુક ચીનાંશુક ઓર કમિરાગ । પટ્ટ સે યહાં પટ્ટ
 સુત્ર લિયા ગયા હૈ । ઇસ પટ્ટપત્ર કી ઉત્પત્તિ કે વિષય મેં વૃદ્ધ પરમ્પરા સે
 પેસી વાત સુનને મેં આતી હૈ-જંગલ મેં એક નિકુંજ લતાપિહિત પ્રદેશ હોતા
 હૈ । ઇસ મેં માંસચીડાદિ રૂપ અમિષપુંજ રચ દિયે જાતે હૈ-।

પ્રકારવાચક છે. કર્પાસ અને કાલા વચ્ચે ભેદ છે. કાલું એક પ્રકારના ફલ રૂપ છે
 જ્યારે કર્પાસ તેમાંથી નીકળતો વસ્તુરૂપ છે. આ વાતને સમજાવવાને માટે અહીં
 આદિ શબ્દ વપરાયો છે. અહીં પણ કહેવામાં આવેલ છે. તેથી સમાનાધિકરણતા થતી
 થવામાં કોઈ દોષ રહેતો નથી.

(કીટયં પંચવિહં પળ્ળાત્) કીટજ સૂત્ર પાંચ પ્રકારના કહ્યાં છે. ચતુરિન્દ્રિય
 જીવવિશેષ (રેશમના કીડા આદિ જીવો)ને કીટ (કીડા કહે છે તેની લાળ આક્રિ-
 માંથી અનેક) જે સૂત્ર કોય છે તેને કીટજ સૂત્ર કહે છે (તં જહા) કીટજ સૂત્રના
 પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે (પટ્ટે, મલય, અંસુણ, ચીળંસુણ, કિમિરાગ) (૧) પટ્ટ
 (૨) મલય, (૩) અંશુક, (૪) ચીનાંશુક અને (૫) કમિરાગ.

‘પટ્ટ’ આ પદથી અહીં પટ્ટપત્ર ગ્રહણ થયું છે. આ પટ્ટ પત્રની ઉત્પત્તિના
 નિષ્પત્તિમાં વૃદ્ધ પરમ્પરાની અપેક્ષાએ આ પ્રકારની વાત પ્રચલિત છે-જંગલમાં કેન્દ્ર
 એક નિકુંજમાં (વૃક્ષ અને લતાઓના સમૂહથી યુક્ત સ્થાનને નિકુંજ કહે છે)

અનુયોગચન્દ્રિકાટીકા ૩૮ જ્ઞાપકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તદ્રવ્યશ્રુતનિરૂપણમ્ ૧૯૫૧

કીલકા નિલ્લખ્યન્તે । માંસલોલુપાઃ પતન્નકીટાઃ માંસચીડાદિકમભિઃ સમાયાન્નિઃ ।
તે હિ કીલકાન્તરેષુ હતસ્તતઃ પરિભ્રમન્તો લાલાઃ પ્રમુઠચન્તિ । તાઽથ કીલકેષુ
લગ્નાઃ પરિગૃહ્યન્તે । તતસ્તાભિઃ પટ્ટસૂત્રં નિર્મીયતે ॥૧॥ મલય' = મલયદેશોત્પન્ન
સૂત્રમ્ ॥૨॥ અંશુકમ્ = ચીનદેશબહિર્ભાગે સમુત્પન્નં સૂત્રમ્ ॥૩॥ ચીનાંશુકમ્ = ચીનદેશ-
મ્યન્તરભાગે સમુત્પન્નં સૂત્રમ્ ॥૪॥ કૃમિરાગં = કૃમિરાગં = કૃમિરાગસૂત્રમ્ । અન્ન
વિષયે એવં શ્રયતે - કસ્મિંશ્ચિદેશે મનુષ્યાદિશોણિતં ગૃહીત્વા કેનાપિ યોગેન યોજયિ-
ત્વા પાત્રે યથાપ્યતે । તત્ત્વ સચ્છિદ્રપાત્રેણાન્નહતે । તત્ર - પુનઃ પ્રભૂતાઃ કૃમયઃ
સમુત્પદ્યન્તે । તે પવનસેવનામિલાપિણઃ પાત્રચ્છિદ્રાન્નિર્ગચ્છન્તિ આસન્નપ્રદેશે પર્યટ-

उन आमिष पुंजों को आजुबाजू में नीचीऊंची कुछ अन्तर से अनेक
कीलें गाढ़ दी जाती हैं। वहां मांस के लोभी अनेक पतंग कीड़े उस मांस
चीड़ादिक की चारों ओर आते हैं।-और उन कीलों के आसपास घूम कर
अपनी लारको छंडते हैं। उनकी लों पर लगी हुई उनकी लारोंको फिर
जैसेम एकाग्रत कर के उनसे पट्टसूत्र बनाते हैं। मलयदेश में उत्पन्न हुए
सूत्रका नाम मलय है। चीनदेश के बाहर उत्पन्न हुए सूत्रका नाम अंशुक हैं।
चीनदेश के भीतर बने हुए सूत्रका नाम चीनांशुक है। कृमिराग सूत्र के
विषय में ऐसी बात सुनी जाती है कि किसी देश में मनुष्य आदिका रक्त
लेकर लोग उसे पात्र में किसी भी तरह जमाते हैं। और फिर उस पात्र
के मुँहको छिद्रोंवाले ढकने से ढक देते हैं। उसमें धीरे कीड़े उत्पन्न
हो जाते हैं। वह जब वायुसेवनकी इच्छा से सच्छिद्रढकन से होकर

માંસ આદિરૂપ આમિષપુંજ પાથરી દેવામાં આવે છે. ત્યાં તે માંસપુંજોની આસ-
પાસ થોડે થોડે અંતરે નીચી ઊંચી અનેક ખીલીઓ બોડી દેવામાં આવે છે.
અનેક પતંગીયાઓ (કીડાઓ) માંસથી આકર્ષિત થઈને તે ખાવાની ઇચ્છાથી તે
માંસપુંજોની આસપાસ તરફ આવે છે. અને માંસનું બહુ કરીને તે ખીલાઓની
આસપાસ ભમીભમીને પોતાની લાળ તે ખીલાઓ પર છોડે છે. તે ખીલાઓ પર
એકત્ર થયેલી લાળને એકત્ર કરી લઈને બોડે। તેમાંથી પટ્ટસૂત્ર બનાવે છે.

મલયદેશમાં ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રને મલયસૂત્ર કહે છે. ચીન દેશની બહારના
પ્રદેશોમાં બનેલા સૂત્રને અંશુક કહે છે. ચીન દેશની અંદરના ભાગોમાં બનેલા
સૂત્રને ચીનાંશુક કહે છે. કૃમિરાગસૂત્ર વિષે આ પ્રકારની માન્યતા પ્રચલિત છે કેઈ
મનુષ્ય આદિના રક્તને એકત્ર કરીને કેઈ એક પાત્રમાં જમાવી દે છે. ત્યાર બાદ
તે પાત્ર પર છિદ્રાણું આચ્છાદન ઢાંકી દે છે. તેમાં ધીરે ધીરે કીટરાશિ ઉત્પન્ન
થઈ જાય છે. તે હવા ખાવાની ઇચ્છાથી તે સચ્છિદ્ર આચ્છાદનમાંથી બહાર નીકળીને

૧૬૬

અનુપાનવાસ્તુ

સ્તસ્તે લાલજાલં મુઠ્ઠચન્તિ । તેન નિષ્પન્નં સૂત્રં કુમિરાગમુઠ્ઠયતે । તત્ત્વ રક્તવર્ણ-
કૃમિસંયુત્ત્વમ્ભવાત્ સ્વામાલિકરક્તવર્ણં ભવતિ ।

અર્થે બાલજસૂત્રવર્ણં ચતુર્થમેદં પ્રરૂપયતિ—‘બાલયં’ ઇત્યાદિ । વાતજં—વાલજં
=સિંમાંણિ બાલેભ્યઃ—ઝરણિકાદિ લોમભ્યો જાતમ્ તત્ પૃથ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્=પ્રરૂપિતમ્,
તથા—ઔર્ણિકમ્—ઝર્ણાન્ન દ્વમૌર્ણિકમ્ મેષ રોમનિષ્પન્નમ્ ॥૧॥ ઔષ્ટ્રિકમ્—ઝડ્ઝા-
નામિત્વમ્, ઔષ્ટ્રિકમ્—ઝડ્ઝરોમનિષ્પન્ન સૂત્રમ્ ॥૨॥ મૃગલૌમિકમ્—મૃગરોમમિર્નિષ્પન્નમ્,
મૃગલૌમિકમ્ । મૃગસદૃશા મૃગેભ્યો હ્રસ્વાકારા આરણ્યજીવવિજ્ઞેષા દ્વહ મૃગ
શબ્દેભ્ય વિવક્ષિતાઃ, તેષાં રોમમિર્નિષ્પન્નં સૂત્રં મૃગલૌમિકમ્ ॥૩॥ વૌતવમ્—ઝડ્ઝ
રોમનિષ્પન્નં સૂત્રમ્ ॥૪॥ કિટ્ઠિસમ્—ઔરણિકાદિસૂત્રનિર્માણાનન્તરં યદવશિષ્ટં

વાજ નિકલતે હૈં તો વહ આસપાસ કે પ્રદેશ મેં ધૂમતે હુઅ વહાં અપની લાર
છેહતે હૈં । इस लार से जो सूत्र बनता है वह कुमिराग सूत्र कहलावा
है। इसकी रक्तवर्णवाले कृमियों से उत्पन्न होने के कारण वर्ण (वर्णमत्तः)
लाल रहता है। (बालयं पंचविहं पणत्तं) भेड आदि के बालों से उत्पन्न
हुवा सूत्रका नाम बालज सूत्र है। यह भी पांच प्रकारका है— (तंजहा)
जैसे—(उणिए) मेष आदि के रोम से उत्पन्न हुआ सूत्र और्णिक (उड्डिए)
ऊट्ट के रोम से उत्पन्न हुआ सूत्र औष्ट्रिक (मियलोमिए) मृग के रोम से उत्पन्न
हुआ सूत्र मृगलोमिक (वौतवे) चूहे के रोम से उत्पन्न हुआ सूत्र वौतव
(किट्टिए) से और्णिक आदि सूत्रों के निर्माण करते समय जो बाल श्वरउपहार
निर्माण होते हैं उसका नाम किट्टिस है। इस किट्टिस से जो सूत्र बनाया

તે પાત્રની આસપાસ લમવા માંડે છે અને તે પાત્ર પર પોતાની લાળ છાડ્યા કરે
છે, તે લાળને લોહો એકત્ર કરી લે છે, અને તેમાંથી જે સૂત્ર બનાવવામાં આવે છે
તેને કુમિરાગસૂત્ર કહે છે. લાલવર્ણવાળા કૃમીઓમાંથી ઉત્પન્ન થવાને કારણે તેના
રંગમાં સ્વાભાવિક રતાશનો સદૃશાવ હોય છે.

(બાલયં પંચવિહં પણત્તં) ઘેટાં આદિના વાળમાંથી ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રનું
નામ ‘બાલજસૂત્ર’ છે. તેના પશુ પાંચ પ્રકાર છે (તંજહા) જેમ કે ઉણિઆ (૧)
ઔષ્ટ્રિક—ઘેટાં આદિના વાળમાંથી બનેલા સૂત્રને ઔષ્ટ્રિક (ઉનતું બનેલું) સૂત્ર કહે
છે. (ઉડ્ડિઆ) (૨) ઔષ્ટ્રિક જેવો વાળમાંથી ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રને ‘ઔષ્ટ્રિકસૂત્ર’
કહે છે (મિયલોમિઆ) મૃગના વાળમાંથી બનાવેલા સૂત્રને ‘મૃગલૌમિકસૂત્ર’ કહે છે.
(વૌતવે) (૪) ઉઠરતી રંવાટીમાંથી બનાવેલા સૂત્રને વૌતવ સૂત્ર કહે છે. (કિટ્ટિઆ)
(૫) આરણ્યિક આદિ સૂત્રોનું નિર્માણ કરતી વખતે જે વાળ ઉડીને આમ તેમ જઈ
પડ્યાં હોય છે તે વાળને ‘કિટ્ટિસ’ કહે છે. કિટ્ટિસમાંથી (વેરટમાંથી જે સૂત્ર બના-

મનુષ્યોગચન્દ્રિકા ટીકા. સુ. ૩૮ જ્ઞાય + શરીર મન્ય શરીર તિરિક્ત વ્યશ્રુત નિરૂપણ મ્ ૧૭

તત્ કિદ્દિસં તન્નિષ્પન્નં સૂત્રમપિ કિદ્દિસમુચ્યતે । યદ્વા-ઔર્ણિકાદીનાં સૂત્રાણાં
દ્વ્યાદિસંયોગેન નિષ્પન્નં સૂત્રં કિદ્દિસમ્ । અથવા-પૂર્વોક્તાતિરિક્તા યેઽશ્વાદયો
જીવાસ્તહોમનિષ્પન્નં સૂત્રં કિદ્દિસમ્ । ૫॥

અથ પઠ્ઠમં ભેદમાહ-‘વાગયં સળમાહ’ ઇતિ । વાલકલં શળાદિ-શળાદિ
નિષ્પન્નં સૂત્રં વાલકલમ્ ।

નતુ શ્રુતપ્રકરણે પ્રસ્તુતે કિમર્થં સૂત્રપ્રરૂપણમ્ ઇતિ ચેદુચ્યતે, પ્રાકૃતે-‘સુય’
શબ્દેન શ્રુતસ્ય, આર્ષત્વાત્સૂત્રસ્ય ચ ગ્રહણાત્ સમાનશબ્દપ્રતિપાદ્યત્વરૂપસામ્યાદિ-
વ્યવસ્થાપિ પ્રરૂપયતીતિ નાસ્તિ કશ્ચિદ્દોષઃ, પ્રસંગતઃ શિષ્યબુદ્ધિવૈશદ્યાર્થં સૂત્રસ્વરૂપં

જાતાં તે વહ કિદ્દિસ સૂત્ર સે । અથવા ઔર્ણિક આદિ સૂત્રો કેા અવ દુહરા
તિહરા- દો તાલાલા તી તારાલા આદિ રૂપમેં કરકે જો સૂત્ર બનાયા જાતા હૈ
સરા નામ કિદ્દિસ હૈ । અપના इन मेव आदि जीवों से अतिरिक्त जो अंश
आदि जीव हैं, उनके रोमों से निष्पन्न हुआ सूत्र किद्विस है । (वागयं सળमाह)
अनं अदि है जो सूत्र बनता है उाका नाम वालकल बल्वन सूत्र हैं ।

શંકા-યહાં તો શ્રુત કો પ્રકરણ પ્રસ્તુત હૈ ફિર કિંતુ કારણ વહી
સૂત્ર કી પ્રરૂપણા સૂત્રકાર ને કી ?

ઉત્તર-આર્ષ હોને કે કારણ પ્રાકૃત મેં ‘સુય’ શબ્દ સે શ્રુત ઔર
સૂત્ર इन दोनों का बोध होता है-क्योंकि इन दोनों अर्थों का प्रतिपदिक
वह ‘सूत्र’ शब्द है । अ : इस दोनों में समान शब्दद्वारा प्रतिपाद्यस्वरूप

વર્ણનાં આવે છે તેને ‘કિદ્દિસસૂત્ર’ કહે છે. અથવા ઔર્ણિક આદિ સૂત્રોને બાંધે
કુપ્ત, ત્રિપટ્ટ, ચોપટ, આદિ રૂપે વણીને તેમાંથી જે સૂત્ર બનાવવામાં આવે છે તેને
કિદ્દિસ કહે છે. અથવા ઉપશુકત ઘેરાં, ઊંટ આદિ છવેા સિવાયના અંશાદિ
છત્રોના વાળમાંથી બનાવેલ સૂત્રને કિદ્દિસસૂત્ર કહે છે. (વાગયં સળમાહ) ૫)
શબ્દ આદિની છાલમાંથી જે સૂત્ર બને છે તેને વલ્કલ સૂત્ર કહે છે.

શંકા-અહીં શ્રુતને અધિકાર આપી રહ્યો છે. છતાં અહીં સૂત્રકારે સૂત્રની
પ્રરૂપણા થા માટે કરી છે ?

ઉત્તર-‘સુય’ આ પ્રાકૃત પદનો અર્થ શ્રુત થાય છે, અને ‘સુય’ની
સંસ્કૃત છાયા ‘સૂત્ર’ થાય છે આ વાત તો આગળ પ્રકટ થઈ ચુકી છે. આ રીતે
‘સુય’ પદ શ્રુત અને સૂત્ર, આ બન્નેના અર્થનું બોધક છે, કારણ કે ‘સુય’
શબ્દ આ બન્ને અર્થોનું પ્રતિપાદન કરે છે. તેથી તે બન્નેમા સમાન શબ્દ દ્વારા
પ્રતિપાદ્યત્વરૂપ સમાનતા હોવાને કારણે સૂત્રકારે અહીં સૂત્રની પણ પ્રરૂપણા કરી

૧૯૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

પ્રરૂપિતમ્ અનેન—‘ભાવશ્રુતે પ્રક્રાન્તે, કથં નામશ્રુતાદિ પ્રરૂપણ ?’ મિતિસન્દેહ-
દસરોઽપિ નિરસ્તઃ, તસ્યાપિ શિષ્યબુદ્ધિવૈશદ્યફલત્વાત્ । કિંચ નામસ્થાપનદ્રવ્ય-
શ્રુતાનાં પ્રરૂપણમન્તરેણ ભાવશ્રુતસ્ય વિશિષ્ટજ્ઞાનં ન ભવતીત્યપિ बोध्यम् ।

ઉક્તમર્થં નિગમયન્નાહ—‘સે તં જાગયસરીરભવિયસરીરવહરિતં દંબ્વસુય’
इति । तदेतद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतम् । नो आगमतो द्रव्य-
श्रुतमपि सर्वं निरूपितमिति प्रकटितुमाह—‘से तं नोआगमओ दंब्वसुयं’ इति । तदे-

समानता होने के कारण सूत्रकारने इसकी भी प्ररूपणा कर दी है ।
अथवा प्रसंग लेकर शिष्यबुद्धि की विशदता के निमित्त सूत्रकारने
सूत्र का स्वरूप यहां प्रकट किया है । इस वर्णन
से इस संदेह को भी नि—‘यहां पर तो भावश्रुत का प्रकरण चल रहा है—
किंतु इस प्रकरण में नामश्रुत नाम आदि का प्ररूपण क्यों किया’ अवसर
नहीं मिलता है । क्योंकि यह वर्णन भी शिष्यजनों की बुद्धि की विशदता
करने रूप फल से सफल है । किंच-नाम स्थापना और द्रव्यश्रुत की प्ररू-
पणा के बिना भावश्रुत का विशिष्टज्ञान नहीं होता है इसलिये यह नाम
श्रुत आदि की प्ररूपणा की गई है ऐसा भी जानना चाहिये । अब सूत्रकार
इस अर्थ का उपसंहार करते हुए कहते हैं कि (से तं जागयसरीरभविय-
सरीरवहरितं दंब्वसुयं) इस प्रकार यह पूर्व प्रक्रान्त ज्ञायकशरीर और भव्य-

इ. એ. તે કારણે આ પ્રકારની પ્રરૂપણા બિદોષ સમજવી જોઇએ. અથવા પ્રસંગ પ્રાપ્ત
આ સૂત્ર પઠની પ્રરૂપણા કરવા પાછળ સૂત્રકારનો આ પ્રકારનો હેતુ પણ સંભવી
શકે છે—“સુય” પઠની સંસ્કૃત છાયા “સૂત્ર” થાય છે. આ સંબંધને અનુસરીને
શિષ્યબુદ્ધિની વિશદતાને નિમિત્તે પણ સૂત્રકારે અહીં સૂત્રના સ્વરૂપની પ્રરૂપણા
કરી છે. વળી અહીં એવી શંકા પણ અસ્થાને છે કે “અહીં તો દ્રવ્ય” પઠની પ્રરૂપણા
આવી રહી છે, છતાં આ પ્રકરણમાં નામ” પઠ આદિની પ્રરૂપણા શા માટે કરવામાં
આવી છે?” આ શંકા ઉચિત ન ગણી શકાય, કારણ કે આ વાણીન પણ શિષ્ય-
જનોની બુદ્ધિની વિશદતાને નિમિત્તે જ કરવામાં આવ્યું છે અને તે પ્રકારની વિશ-
દતા કરવા રૂપ ફલથી સંપન્ન છે. વળી નામશ્રુત, સ્થાપનાશ્રુત આદિની પ્રરૂપણા
કર્યા વિના દ્રવ્યશ્રુતનું વિશિષ્ટજ્ઞાન પ્રાપ્ત થઇ શકતું નથી. તે કારણે આ નામશ્રુત
આદિની પ્રરૂપણા અહીં કરવામાં આવી છે, એમ સમજવું જોઇએ

હવે સૂત્રકાર આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે કે—

(સે તં જાગયસરીરભવિયસરીરવહરિતં દંબ્વસુયં) જાયકશરીર અને ભવ્ય-
શરીરથી જિલ્લ એવા દ્રવ્યશ્રુતનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. (સે તં નોઆગમઓ

અનુભવશાસ્ત્રિકા ટીકા સુત્ર ૩૯ ભાવશ્રુતનિરૂપણમ્

૧૯૯

તદ્ નો આગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્ । દ્રવ્યશ્રુતમપિ સ્વર્ણં નિરૂપિતમિતિ દ્વચયિતુમાહ—
‘સે તં દ્રવ્યસુયં’ इति । तदेतद् द्रव्यश्रुतं वर्णितम् ॥ सू० ३८॥

અમ્ભ ભાવશ્રુત નિરૂપયતિ—

મૂલપ્—સે કિં તં ભાવસુયં ? ભાવસુયં દુવિહં પળ્ણત્તં, તં જહ
આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય ॥સૂ૦ ૩૯॥

છાયા—અય કિં તદ્ ભાવશ્રુતમ્ ? ભાવશ્રુત ઈવિધે પ્રજ્ઞાં, તથા—આગમ-
તથ નોઆગમતથ ॥સૂ૦ ૩૯॥

ટીકા—શિષ્યઃપૂછતિ—સે કિં તં ભાવસુયં’ इति । अयं कितं तद्
‘ભાવશ્રુતમ્ ? इति, उत्तरमाह—‘भावसुयं’ इत्यादि । ‘भावश्रुतम्’—इह श्रुतपदार्था-

ક્ષીર, સે વ્યક્તિરિક્ત દ્રવ્યશ્રુત છે । (સે તં નોઆગમઓ દ્રવ્યસુયં) इस तरह
‘नेआगम’ को आश्रित करके समस्तद्रव्यश्रुत का निरूपण हो चुका । (से तं
‘द्रव्यसुयं’) यही सब द्रव्यश्रुत का स्वरूप है । ॥सूत्र ३८॥

અવ મુત્રકાર—ભાવશ્રુત કા વર્ણન કાતે હૈ—

‘સે કિં તં ભાવસુયં’ इत्यादि । सूत्र ॥ ३९ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હૈ મદન્ત ! પૂર્વ પ્રકાશ્ત ભાવ-
શ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ભાવસુયં) ભાવશ્રુત (દુવિહં પળ્ણત્તં) દો પ્રકાર કા કહા ગયા
હૈ । શ્રુત રૂપ પદાર્થ કે અનુભવ સે યુક્ત જો સાધુ આદિ જીવ હૈ વહ ભાવ
શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ । ભાવ ઔર શ્રુત इन दोनों में अमेद के उपचार से भाव-
श्रुत साध्वादि को कहा गया है । इसतरह भाव जो है वही श्रुत बन जाता है ।

‘દ્રવ્યસુયં’આ રીતે નોઆગમ દ્રવ્યશ્રુતના ત્રણે ભેદોત્તં નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય
છે (સે તં દ્રવ્યસુયં) અને દ્રવ્યશ્રુતના બધાં ભેદોત્તં નિરૂપણ પણ અહીં પૂરું
થાય છે. ॥ સૂ૦ ૩૮ ॥

‘સે કિં તં ભાવસુયં’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવસુયં?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
અમ્ભન ! પૂર્વપ્રસ્તુત ભાવશ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ભાવસુયં દુવિહં પળ્ણત્તં) ભાવશ્રુત બે પ્રકારનું કહ્યું છે. શ્રુતરૂપ પદાર્થ-
ના અનુભવથી યુક્ત બે સાધુ આદિ જીવો હોય છે તેઓ ભાવ શબ્દના વાચ્યાર્થ
ભાવ અને શ્રુત આ બંનેમાં અભેદતા ઉપચારની અપેક્ષાએ સાધુ આદિને
દેવામાં આવેલ છે. આ રીતે બે ભાવ છે એજ શ્રુત બની જાય છે.

૨૦૦

અનુભવપ્રાસન્ને

ભવશ્રુતી યઃ સાધ્વાદિઃ સ માનસઃ, શ્રુતં ચ ગૃહ્યતે । માવશ્રુતયોસ્તદ્વતી-
શ્ચ અભેદોપચારાદ્ ભાવશ્ચાસૌ શ્રુતં ચ માવશ્રુતમ્ । યદ્વા-અર્થાનુભવરૂપં માવ-
માશ્રિત્ય શ્રુતં માવશ્રુતમ્ । યદ્વા-ભાવપ્રધાનં શ્રુતં-માવશ્રુતમ્, તત્ દ્વિવિધ
મુક્તમ્, તં જદ્વા-તદ્વત્ત્વા-આગમઓ ય નોઆગમઓ ય આગમતત્ત્વ નોઆગમતત્ત્વેતિ ॥૩૯॥

તત્ પ્રથમં મેદં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં આગમઓ માવસુયં ? આગમઓ માવસુયં
જાણણ ઉવવત્તે । મે તં આગમઓ માવસુયં સૂ. ૪૦ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ આગમતો માવશ્રુતમ્ ? આગમતો માવશ્રુત ઇત્યર્થ
ઉપયુક્તઃ । તદેતત્ આગમતો માવશ્રુતમ્ । સૂ. ૪૦ ।

ટીકા—શિષ્યઃ પૂછતિ—સે કિં તં આગમઓ માવસુયં ? ઇતિ । અથ
કિં વદ્ આગમતો માવશ્રુતમ્ ? ઉત્તરમાહ—‘આગમઓ માવશ્રુત’ ઇત્યાદિ । આગ-

મઓ માવસ્વ શ્રુત કો આશ્રિત કરકે જો શ્રુત હોતા હૈં વદ્ માવશ્રુત હૈં ।
અથવા માવ પ્રધાન જો શ્રુત હૈં ઉસકા નામ માવશ્રુત હૈં (તંજદ્વા) ઉસ માવશ્રુત કે
વે દો પ્રકાર વે હૈં—(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય) ? એક આગમ માવશ્રુત
ઔર દુસરા નોઆગમ માવશ્રુત । इनमें जो आगम को आश्रित करके माव
श्रुत होता है उसका नाम आगम मावश्रुत और जो नोआगम आश्रित करके माव-
श्रुत होता है वह नोआगम मावश्रुत है । ॥ सूत्र ૩૯ ॥

અથ સૂત્રકાર આગમ માવશ્રુત કા સ્વરૂપ વદતે હૈં—

“સે કિં તં આગમઓ માવસુયં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૪૦ ॥

શબ્દાર્થઃ— (સે કિં તં આગમઓ માવસુયં) હે મદન્ત ! આગમ કો આશ્રિત
કરકે જો માવશ્રુત હોતા હૈં ઉસકા ક્યા સ્વરૂપ હૈં ?

અથવા ભાવરૂપ શ્રુતને આશ્રિત કરીને જે શ્રુત હોય છે તેને ભાવશ્રુત કહે છે.
અથવા ભાવપ્રધાન જે શ્રુત છે તેનું નામ ભાવશ્રુત છે. (તંજદ્વા) તે ભાવશ્રુતના
નીચે પ્રમાણે બે પ્રકારે કહ્યા છે—(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય) (૧) આગમ
ભાવશ્રુત અને (૨) નોઆગમ ભાવશ્રુત આગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવશ્રુત હોય
છે તેને આગમ ભાવશ્રુત કહે છે અને નોઆગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવશ્રુત
હોય છે તેને નોઆગમ ભાવશ્રુત કહે છે. ॥ સૂ. ૩૯ ॥

હવે સૂત્રકાર આગમ ભાવશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં આગમઓ માવસુયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન કરે છે કે હે ભગવન ! (કિં તં
આગમઓ માવસુયં?) આગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવશ્રુત હોય છે તેવું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० ४० आगमो भावश्रुतिरूपम्

२०१

मतो भावश्रुतं ज्ञायक उपयुक्तः—श्रुतपदार्थज्ञः श्रुतपदार्थे उपयोगवांच यः साध्वादिः स आगमतः=आगममाश्रित्य भावश्रुतं भवति । अयं श्रुतोपयोगरूप-परिणामस्य सद्भावात् भावस्वरूपम् । श्रुतार्थज्ञानस्य सद्भावादागमत्वं बोध्यम् । तदेतन्निगमयन्नाह—‘से तं आगमओ भावसुय’ इति । तदेतदागमतो भावश्रुतं वर्णितम्, इति ॥सू० ४०॥

अथ द्वितीयभेदमाह—

मूलम्—से किं तं नो आगमओ भावसुयं ? नोआगमओ भाव-सुयं दुविहं पणत्तं, तं जहा—लोइयं, लोउत्तरिय च ॥सू० ४१॥

छाया—अथकिं तद् नोआगमतो भावश्रुतम् ? नोआगमतो भावश्रुतं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—लौकिकम्, लोकोत्तरिकं च ॥सू० ४१॥

उत्तर—(आगमओ भावसुयं जाणए उवउत्ते) आगम को आश्रित करके भावश्रुत का स्वरूप इस प्रकार से है—जो साध्वादि श्रुत का ज्ञाता है और उसमें उपयोग युक्त है । वह आगम को आश्रित करके भावश्रुत होता है । श्रुत में उपयोगरूप परिणाम के सद्भाव से उस साध्वादि में भावता है, और श्रुत के अर्थज्ञान के सद्भाव से आगमता है । इसतरह (से तं आगमओ भाव-सुयं) यह आगम को लेकर भावश्रुत का स्वरूप है । ॥ सूत्र ४० ॥

नोआगमकी अपेक्षा लेकर भावश्रुत का स्वरूप इस प्रकार से है—

“से किं तं” इत्यादि । ॥ सूत्र ४१ ॥

शब्दार्थः—(से) हे भदन्त ! नोआगम की अपेक्षा लेकर भावश्रुत का क्या स्वरूप है ? (नोआगमओ भावसुयं दुविहं पणत्तं) नोआगम की अपेक्षा लेकर

उत्तर—(आगमओ भावसुयं जाणए उवउत्ते) आगमने आधारि भावश्रुतत्वं आ प्रकारत्वं स्वरूप कहु छे. जे साधु आदि एव श्रुतनो ज्ञाता होय छे अने तेमां उपयोग परिणामथी युक्त होय छे, ते साधु आदिने आगमनी अपेक्षाओ भावश्रुत कहे छे. श्रुतमां उपयोग रूप परिणामना सद्भावने दीधि ते साधु आदिमां भावता होय छे श्रुतना अर्थज्ञानना सद्भावने दीधि ते साधु आदिमां आगमताना पण सद्भाव होय छे. आ प्रकारत्वं (से तं आगमओ भावसुयं) आगमने आश्रित करीने भावश्रुतत्वं स्वरूप छे, ओम समञ्जसुं ॥ सू० ४० ॥

हवे सूत्रकार नोआगम भावश्रुतना स्वरूपत्वं निरूपण करे छे.

“से किं तं नोआगमओ भावसुयं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से) शिष्य गुरुने ओवो प्रश्न पूछे छे के हे भगवन् ! नोआगमने आश्रय दधने भावश्रुतत्वं केवुं स्वरूप कहुं छे—

૨૦૨

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

ટીકા—“સે કિં તં નોઝોગમઓભાવસુયં” ઇત્યાદિ ।

અથવા નિગદસિદ્ધા સૂં ૪૧

ત્વાચ્ચએદં નિરૂપયતિ—

મૂલ્ય—સે કિં તં લોહ્યં નોઆગમઓ ભાવસુયં ? લોહ્યં નોઆગમઓ ભાવસુયં જં ઇમં અળ્ળાણિણ્હિ મિચ્છાદિટ્ટિણ્હિ સચ્છદ્ બુદ્ધિમહ્વિગપ્પિયં, તં જહા—ભારહં રામાયણં મીમાસુસ્કં કોઢિહ્યં ઘોહ્યમુંહં સગહમદિયાઓ કપ્પાસિયં ણામસુહુયં કળગસત્તરી વેસિયં વહસેસિયં બુદ્ધસાસણં કાવિલં લોગાયહ્યં સટ્ઠિતતં માઠરં પુરાણં વાગરણં નાહગાહં, અહવા વાવત્તરિકલાઓ ચત્તારિ વેયા સગોવંગા । સે તં લોહ્યં નો આગમઓ ભાવસુયં ॥ સૂં ૪૨ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ ? લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતં યદિદમજ્ઞાનિકૈઃ મિથ્યાદૃષ્ટિકૈઃ સ્વચ્છન્દબુદ્ધિમતિવિકલ્પિતમ્ તથથા—ભારતં, રામાયણં, મીમાસુસ્કં, કૌટિલ્યકમ્, ઘોટકમુલ્યમ્ શકટમંદ્રકા કાર્પાસિકમ્, નાગવૃક્ષમમ્, કનકસપ્તતિઃ, વૈજેશિકમ્, બુદ્ધશાસનમ્, કપિલં, લોકાયતિવમ્, પઠિતત્ત્રયમ્, માઠરં પુરાણં વ્યાકર નાટકાનિ । અથવા દ્વાસપ્તતિચલાઃ, ચત્વારોવેદાઃ સાઙ્ગોપાઙ્ગાઃ । તદેતદ્ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ ॥ સૂં ૪૨ ॥

ભાવશ્રુત દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) વે પ્રકાર વે હૈ (લોહ્યં લોગુત્તરિયં) ૧ શ્રુત લૌકિક દુસરા લોકોત્તરિક । ઇસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા પહિલે કહી ગઈ વ્યાખ્યા કે અનુસાર જાનની ચાહિયે । ॥ સૂ ૪૧ ॥

અવ સૂત્રકાર નોઆગમકો આશ્રિત કરકે લૌકિક ભાવશ્રુત કા કવન કરતે હૈ—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ । સૂત્ર ૪૨ ॥

શબ્દાર્થ—(સે) હે મદન્ત ! (નોઆગમઓ) નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે (તં)

ઉત્તર—(નોઆગમઓ ભાવમુયં દુવિહ પળ્લત્તં) નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવશ્રુતના એ પ્રકાર કહ્યા છે (તંજહા), તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(લોહ્યં, લોગુત્તરિયં) (૧) લૌકિક અને (૨) લોકોત્તરિક આ સૂત્રની વ્યાખ્યા પહેલાં આવેલ સૂત્રમાં કહ્યા અનુસાર સમજવી. ॥ સૂ. ૪૧ ॥

હવે સૂત્રકાર નોઆગમ લૌકિક ભાવશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન ! (નોઆગ-

અનુયોગચન્દ્રિકાટીકા.૪૨ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતનિરૂપણમ્

૨૦૩

ટીકા—શિષ્યઃપૃચ્છતિ—સે કિં તં લોહ્યં નોઆગમઓ ભાવસુયં' इति।
અથ કિં તદ્ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ ? इति प्रश्नः। उत्तरमाह—'लोह्यं
નો આગમઓ ભાવસુયં' इत्यादि। लौकिकं नोगमतो भावश्रुतम्, यदिदं-वक्ष्य-
माणं भारतादिकम्, अज्ञानिकैः=अल्पज्ञानिभिः—अत्राल्पार्थको नञ् शब्दः,
सम्यग्दृष्टयोऽप्यज्ञानिका भवन्ति इत्यत आह—'मिच्छादिद्विहिं' इति। मिथ्या
दृष्टिभिः स्वच्छन्दबुद्धिमतिविकल्पितम्—स्वच्छन्देन=सर्वज्ञोक्तार्थविरुद्धेन स्वाभि-
प्रायेण बुद्धिमतिभ्यां बुद्धिः=ईहावग्रहरूपा, मतिः=अवायधारणारूपा, ताभ्यां
विकल्पितम्—सर्वज्ञोक्तार्थानुसारिबुद्धिमतिभ्यां विरचितमित्यर्थः। तद् लौकिकं
નોઆગમતો ભાવશ્રુતં વિજ્ઞેયમ્। तदेव नामतो निर्दिशति 'तं जहा' इत्यादिना—
तद्यथा—भारतं, रामायणं, भीमासुरोक्तं=भीमासुरेण रचितं शास्त्रम्, कौटिल्यकम्

પૂર્વપ્રકાશના (લોહ્યં ભાવસુયં) લૌકિક ભાવશ્રુત (કિં) કયા હૈ ?

उत्तरः—(नोआगमओ) नोआगमको आश्रित करके (लोह्यं भावसुयं)
लौकिक भावश्रुत इस प्रकार से है—(जं इमं अण्णाणिएहिं मिच्छादिद्विएहिं
सच्छन्दबुद्धिमद्विगप्पियं) जो यह अज्ञानी मिथ्यादृष्टियों द्वारा अपनी
स्वच्छन्द बुद्धि और मति से रचा गया है। वह लौकिकभावश्रुत है ऐसा
जानना चाहिये। ईहा और अवग्रहरूप विचारधारा का नाम बुद्धि है। तथा
अवाय और धारणरूप विचारधारा का नाम मति है। सर्वज्ञ उक्त अर्थसे
विरुद्ध अभिप्रायवाली बुद्धि और मति से जिन शास्त्रोंका ग्रथन किया गया
है वे सब लौकिक भावश्रुत हैं। (तंजहा) जैसे—(भारतं रामायणं भीमासुरोक्तं

મએ) નોઆગમને આશ્રિત કરીને (તં) પૂર્વપ્રસ્તુત વિષયરૂપ (લોહ્યં ભાવસુયં?)
લોહકક ભાવશ્રુતનું (કિં) કેવું સ્વરૂપ છે ?

উত্তর—(নোআগমओ) নোআগমনে আশ্রিত করীনে (লোহ্যং भावसुयं) लौकिक
भावश्रुतनું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ કહ્યું છે.

(जं इमं अण्णाणिएहिं मिच्छादिद्विएहिं सच्छन्दबुद्धिमद्विगप्पियं) अज्ञानी
मिथ्यादृष्टियों वडे पोतानी स्वच्छन्द बुद्धि अने मतिथी रचेला श्रुतने 'लौकिक
भावश्रुत' कहे छे छेडा अने अवग्रहरूप विचारधारानुं नाम बुद्धि छे, तथा अवाय
अने धारणा रूप विचारधारानुं नाम मति छे. सर्वज्ञ केवणी लगवाने द्वारा कथित
अर्थथी विरुद्ध अभिप्रायवाणी बुद्धि अने मतिथी जे शास्त्रेनुं ग्रथन (रचना रूप
ग्रथन) करायुं छाय छे, ते शास्त्रेने लौकिक भावश्रुत कहे छे (तंजहा) अने लौकिक
भावश्रुतानां नाम नीचे प्रमाणे छे.

(भारतं रामायणं, भीमासुरोक्तं कौटिल्यं घोटयमुहं) महाभारत, रामा-
यण; भीमासुर रचित शास्त्र, कौटिल्य (चाणक्य) रचित अर्थशास्त्र, घोटकमुण

કૌટિલ્યેન=ચાણક્યેન નિર્મિતમ્-અર્થશાસ્ત્રમ્ (ઘોટકમુખમ્,) ઘોટકમુખનામકં શાસ્ત્રમ્,
 શકટભદ્રિકા:=એતન્નામકશાસ્ત્રાણિ, કાર્પાસિકમ્-કાર્પાસિકનામકં શાસ્ત્રમ્, નાગસુક્ષ્મમ્,
 એતન્નામકં શાસ્ત્રમ્, કનકસપ્તતિઃ-કનકસપ્તતિનામકં શાસ્ત્રમ્, વૈશિકમ્-કામશાસ્ત્ર-
 પ્રકરણવિશેષઃ, વૈશેષિકમ્-કાળાદર્શનમ્, બુદ્ધશાસનં-ત્રિપિટકરૂપમ્, કવિલમ્-
 સાંખ્યશાસ્ત્રમ્, લોકાયતિકં=ચાર્વાકદર્શનમ્-સાંખ્યશાસ્ત્રગ્રન્થવિશેષઃ, માઠરં પુરાણં
 વ્યાકરણં નાટકાનિ-માઠરં=માઠરનિર્મિતશાસ્ત્રવિશેષઃ, પુરાણં=વ્યાકરણં, નાટકાનિ=
 દ્રશ્યકાવ્યાનિ, વહુવચનાન્તપદાત્-શ્રવ્યકાવ્યાનિ ચ । એતાનિ પૂર્વોક્તાનિ ભારતા-
 દીનિ લૌકિકં નોશ્રાગમતો ભાવશ્રુતમ્ । પ્રકારાન્તરેણ તદાહ-‘અહવા’ ઇત્યાદિ ।
 અથવા-દ્વાસપ્તતિકલાઃ-કલનાનિ=લૌકિકસ્તુસ્વરૂપપરિજ્ઞાનાનિ કલાઃ, દ્વાસપ્તતિ
 સંખ્યકાઃ કલાઃ-દ્વાસપ્તતિકલાઃ, એતાશ્ચ-સમવાયાજ્ઞાદિસૂત્રેષુ પ્રોક્તાઃ, તથા-ચ-
 ત્વારો વેદાઃ સાંજ્ઞોપાજ્ઞાઃ-અજ્ઞાનિ=શિક્ષાકલ્પવ્યાકરણનિરુક્તછન્દોઽયૌતિષરૂપાણિ

કૌટિલ્યેન ઘોટકમુહ) મહાભારત રામાયણ, મીમાસુરરચિત શાસ્ત્ર, ચાણક્ય
 રચિત અર્થશાસ્ત્ર, ઘોટકમુખનામકશાસ્ત્ર, (સગડભદ્રિકાઓ)
 શકટભદ્રિકા નામકશાસ્ત્ર (કર્પાસિયં) કાર્પાસિક નામકશાસ્ત્ર (નાગસુહુમં) નાગ
 સુક્ષ્મ નામક શાસ્ત્ર (કળગસત્તરી) કનકસપ્તતિ નામક શાસ્ત્ર (વૈસિયં) કામશાસ્ત્ર
 પ્રકરણ વિશેષ (વૈદેસેસિયં) વૈશેષિકશાસ્ત્ર, (બુદ્ધસાસનં) ત્રિપિટકરૂપ બુદ્ધશાસ્ત્ર,
 (કવિલં) સાંખ્યશાસ્ત્ર, (લોગાયહયં) ચાર્વાક દર્શન (સદ્વિતંતં) ષષ્ટિ તંત્ર
 સાંખ્યશાસ્ત્ર ગ્રન્થ વિશેષ, (માઠર) માઠરનિર્મિતશાસ્ત્ર વિશેષ, (પુરાણં) પુરાણ
 (વાગરણં) વ્યાકરણ (નાડગાઈ) દ્રશ્ય વાઘ્ય ઓર શ્રાઘ્ય કાવ્ય । (અહવા)
 અથવા (વાવત્તરિકલાઓ) ૭૨ કલાઈ (સંગેવંગા ચત્તારિવેદા) સાંગેવંગા
 ચારો વેદ । ૭૨ કલાઓં કા વર્ણન સમવાયાજ્ઞ આદિ સૂત્રો મેં હૈ । શિક્ષા, કલ્પ,

નામકું શાસ્ત્ર, (સગડભદ્રિકાઓ) શકટ ભદ્રિકા નામકું શાસ્ત્ર (કર્પાસિકં) કાર્પા-
 સિક નામકું શાસ્ત્ર, (નાગસુહુમં) નાગસુક્ષ્મ નામકું શાસ્ત્ર, (કળગસત્તરી) કનક
 સપ્તતિ નામકું શાસ્ત્ર, (વૈસિયં) કામશાસ્ત્રનું પ્રકરણ વિશેષ, (વૈદેસેસિયં) વૈશેષિક
 શાસ્ત્ર, (બુદ્ધસાસનં) ત્રિપિટક રૂપ બૌદ્ધોનું ધર્મશાસ્ત્ર, (કવિલં) કવિલનું સાંખ્ય-
 દર્શન નામકું શાસ્ત્ર, (લોગાયહયં) ચાર્વાક દર્શન, (સદ્વિતંતં) ષષ્ટિતંત્ર સાંખ્ય
 શાસ્ત્રનો અર્થવિશેષ, (માઠર) માઠર નિર્મિત શાસ્ત્ર વિશેષ, (પુરાણં) પુરાણ (વાગરણં)
 વ્યાકરણ, (નાડગાઈ) દ્રશ્યકાવ્ય અને શ્રાવ્યકાવ્ય, (અહવા) અથવા (વાવત્તરિકલાઓ
 ૭૨ કલાઓ, (સંગેવંગા ચત્તારિ વેદા) અંગ અને ઉપાંગયુક્ત ચારે વેદ આ
 બધાને લૌકિકભાવશ્રુત કહે છે. ૭૨ કલાઓનું વર્ણન સમવાયાંગ આદિ સૂત્રોમાં કર-
 વાયાં આવ્યું છે. વેદોના છ અંગ નીચે પ્રમાણે છે (શિક્ષા, કલ્પ, વ્યાકરણ, નિરુ-
 ક્ત છન્દ અને યૌતિષ અને તેમની વ્યાખ્યા રૂપ જે અર્થો છે તેમને ઉપાંગ કહે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા—પૃ. ૪૨ લૌકિક નોઆગમભાવશ્રુતનિરૂપણમ્

૨૦૫

ષટ્, ઉપાજ્ઞાનિ=તદ્વ્યાખ્યારૂપાણિ. તૈઃ સહિતા ક્રમ્યજુઃસામર્થ્યલક્ષણાશ્રત્વારો વેદાઃ, લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ । આનંદરામ યજ્ઞાદીનાં લેકે આગમત્વેન પ્રસિદ્ધત્વાદાગમત્વેડપિ તદુક્તક્રિયાયા અનાગમત્વાત્ નોઆગમત્વમ્, લોકપ્રસિદ્ધૈવ ટુત્ત્વમપિ તેષાં । તદુપયોગ એવ ભવિતુમર્હતિ, ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપ ઇતિવચનાત્ । તદેતત્ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતં વર્ણિતમ્ । ઇતિ ॥ સૂ.૦૪૨॥

વ્યાકરણ નિરુક્ત, છંદ. જ્યૌનિષ, યે છઠ્ઠ વેદોં કે અંગ હૈં । ઔર ઉનકી વ્યાખ્યા રૂપ જો ગ્રન્થ હૈં વે ઉપાંગ હૈં । ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ, ઔર અથર્વવેદ યે ચાર વેદ હૈં । યે સર્વ લૌકિક ભાવશ્રુત હૈં । લોક મેં ભારત રામાયણ આદિ આગમ શાસ્ત્રરૂપ સે માને જાતે હૈં, ઇસલિયે ઇનમેં આગમતા હૈં ઔર ઇનમેં જો ક્રિયાઈ વર્ણિત હૈં, વે આચારરૂપ નહીં હોને સે અનાગમરૂપ હૈં । ઇસપ્રકાર ભારત આદિકોં મેં તદુક્ત ક્રિયાઓંકી અપેક્ષા નોઆગમતા આ જાતિ હૈં । લોક પ્રસિદ્ધિ સે હી ઇનમેં શ્રુતતા હૈં । ઇસલિયે યે નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે લૌકિક ભાવશ્રુત હૈં । ઇનમેં જો સૂત્રકારને ભાવશ્રુતતા પ્રકટ કરી હૈં વહ ઇનકે સંલગ્ન ઉપયોગ કી અપેક્ષા સે હી પ્રકટ કરી ગઈ જાનની ચાહિયે । શબ્દાત્મક જો ભારત, રામાયણ આદિક હૈં વે તો ભાવશ્રુત હો હીં નહીં સકતે હૈં કયોંકિ “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપઃ” ઉપયોગ કો હી ભાવનિક્ષેપ કહા હૈં એસા આત્મવચન હૈં । (સે તં લોહ્યં નોઆગમઓ ભાવસૂચ્યં) ઇસ પ્રકાર નોઆગમકી અપેક્ષા યહ લૌકિક ભાવશ્રુતકા વર્ણન કિયા ।—

છે. ચાર વેદના નામ આ પ્રમાણે છે ઋગ્વેદ, સામવેદ, યજુર્વેદ અને અથર્વવેદ લોકમાં મહાભારત, રામાયણ આદિને આગમ-શાસ્ત્ર રૂપે માનવામાં આવે છે, તેથી તેમાં આગમતાનો સદ્ભાવ છે, અને તે શાસ્ત્રોમાં જે ક્રિયાઓનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે ક્રિયાઓ આચારરૂપ નહીં હોવાથી અનાગમરૂપ છે. આ રીતે મહાભારત આદિ ગ્રન્થોમાં તદુક્ત ક્રિયાઓની અપેક્ષાએ નોઆગમતા આવી બાધ છે. લોકપ્રસિદ્ધિની અપેક્ષાએ તે ગ્રન્થોમાં શ્રુતતાનો સદ્ભાવ છે. તેથી તે શાસ્ત્રોને નોઆગમ લૌકિક ભાવશ્રુત રૂપ કહેવામાં આવ્યાં છે તે શાસ્ત્રગ્રન્થોમાં સૂત્રકારે જે ભાવશ્રુતતા પ્રકટ કરી છે તે તેમના તે શ્રુતોમાં ઉપયાગદેય પરિણામની યુક્તતા (સંલગ્નતા)ને કારણે જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે, એમ સમજવું. શબ્દાત્મક જે મહાભારત, રામાયણ આદિ છે, તેમને તો ભાવશ્રુત ગણી શકાય જ નહીં કારણ કે “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપઃ” ઉપયોગને જ ભાવનિક્ષેપ કહે છે. આ પ્રકારનું સિદ્ધાન્તોનું વચન છે. (સે તં લોહ્યં નોઆગમઓ ભાવસૂચ્યં) આ પ્રકારનું નોઆગમ લૌકિક ભાવશ્રુતનું સ્વરૂપ સમજવું.

‘અજ્ઞાનિક’ અજ્ઞાની પદમાં જે “અ” ઉપસર્ગ છે, તે નકારવાચક નથી

२०६

अनुयोगद्वारसूत्रे

अथ लोकोत्तरिकं नोआगमतो भावश्रुतमाह—

मूलम्—से किं तं लोउत्तरियं नोआगमओ भावसुयं ? लोउत्तरियं नोआगमओ भावसुयं जं इमं अरहंतेहि भयवन्तेहि उत्पण्ण-
णाणदंसणधरेहि तीयपच्चुत्पण्णमणाभय जाणएहि सव्वण्णूहि सव्व-
दरिसीहि तिलुक्कवहियमहियपूइएहि अप्पट्टिहयवरनाणदंसणधरेहि
पणीय दुवालसंगं गणिपिट्ठं, तं जहा—आयाओ सुयण्डो ठाणं सम-
वाओ विवाहपण्णत्ती नायाधम्मकहाओ, उवासगदसाओ अंतगड-
दसाओ अणुत्तरोववाइयदसाओ, पण्हावागएणाइं विवागसुयं दिट्ठि-
वाओय । से तं लोउत्तरियं नोआगमओ भावसुयं । से तं आगमओ
भावसुयं । से तं भावसुयं ॥ सू० ४३ ॥

अथ किं तद् लोकोत्तरिकं नोआगमतो भावश्रुतम् ? लोकोत्तरिकं नो-
आगमतो भावश्रुतं यदिदं अर्हति भगवद्विरुक्तत्वात्तदर्थवचनैः प्रतीतप्रत्युत्पन्ना
नागतज्ञायकैः सर्वज्ञैः सर्वदर्शयिः अलोक्यादयोऽस्मिन्महितपूजितैः अप्रतिहतवर-
ज्ञानदर्शनवरैः प्रणीतं द्वादशाङ्गं भणिपिट्ठं, तद्यथा—आचारः, सूत्रकृतं, स्थानं,
समवायः, विवाहप्रकृतिः, ज्ञातधर्मदशाः, उपासकदशाः, अन्तकृतदशाः, अनु-
त्तरोपपातिकदशाः प्रश्नव्याख्याणानि, विपाकश्रुतम्, दृष्टिवादश्च । तदेतत् लोको-
त्तरिकं नोआगमतो भावश्रुतम् । तदेतद् नोआगमतो भावश्रुतम् । तदेतत् आग-
मतो भावश्रुतम् ॥ सू० ४३ ॥

अज्ञानिक पद में जो नञ् समास हुआ है वह अल्पार्थ में हुआ है । अतः
अज्ञानिक का तात्पर्य “अल्पज्ञानवाले” ऐसे होता है । ऐसे अल्पज्ञानी तो
सम्यक् दृष्टि भी होते हैं—अतः इसकी निवृत्ति के लिये मिथ्यादृष्टि पद
सूत्रकार ने प्रयुक्त किया है । ॥ सू० ४२ ॥

अब सूत्रकार नोआगम की अपेक्षा करके लोकोत्तरिक भावश्रुतका वर्णन
पञ्च अल्पार्थक छे, तेथी अज्ञानी अर्थसे अल्पज्ञानवाला, या प्रकारनो अर्थ अही
समझवो अर्थसे अल्पज्ञानी तो सम्यक् दृष्टि छव पण्ण होअ शके छे, तेथी अही
सम्यक्दृष्टि अल्पज्ञानवाणानी निवृत्तिने निमित्तो सूत्रधरे मिथ्यादृष्टि विशेषणुनो पण्ण
प्रयोग कर्यो छे ॥ सू. ४२ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૪૩ લોકોત્તરિકનો આગમતો ભાવશ્રુતનિરૂપણમ્ ૨૦૭

‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તદ્ લોકોત્તરિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ ।

ઉત્તરમાહ—ઉત્પન્નજ્ઞાનદર્શનધરૈઃ, ઉત્પન્ને જ્ઞાનાવરણક્ષપણાદિપ્રકારેણ સંજાતે ન તુ સહજે યે જ્ઞાનદર્શને તથોર્થનાઃ=ધારણાસ્તઃ. સાદિકેવલજ્ઞાનદર્શનોપયોગયુક્તૈ સ્થિત્યર્થઃ, તથા-અતીતપ્રત્યુત્પન્નાનાનાગતજ્ઞાયકૈઃ તત્ર અતીતાઃ=ભૂતકાલિકાઃ, પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકાલિકાઃ, અનાગતાઃ=ભવિષ્યત્કાલિકા અર્થાસ્તેષાં જ્ઞાયકાસ્તૈઃ, તથા—સર્વજ્ઞૈઃ=સર્વદ્રવ્યવર્ચાય જ્ઞાનન્તીતૈ સર્વજ્ઞાસ્તૈઃ, તર્વદર્શિભિઃ=કેવલદર્શનેન એકેન્દ્રિયાદિ સર્વં ત્રસસ્થાવરં જગત્ દ્રષ્ટું શીલં યેષાં તે સર્વદર્શિનાતૈઃ, તથા ટ્રોટોક્યા-

કરતે હૈં—“સે કિં તં લોઉત્તરિયં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૪૩ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈં ત હે મદન્ત ! (નોઆગમઓ) નોઆગમકો આશ્રિત તરકે (તં) પૂર્વપ્રકાન્ત (લોઉત્તરિયં ભાવસુયં કિં) લોકોત્તરિક ભાવશ્રુત ક્યા હૈં ?

ઉત્તર—(નોઆગમઓ) નોઆગમની અપેક્ષા કરકે (લોઉત્તરિયં ભાવસુયં) લોકોત્તરિકભાવશ્રુત. આ પ્રશ્નનો સ્વરૂપ હૈં— (ઉપ્પણનાણદંસણધરેહિં) જ્ઞાનાવરણકર્મ કે ક્ષય સે ઉત્પન્ન હુવે કેવલજ્ઞાન ઓર દર્શનાવરણ કર્મ કે ક્ષય કેવલદર્શનરૂપ ઉપયોગ કો ધારણ કરનેવાલે, (તીયપચ્ચુપ્પણમણાગયજાણઈ) અતીત-ભૂતકાલિકા પ્રત્યુત્પન્ન-વર્તમાન કાલિકા અનાગત-ભવિષ્યત્કાલિકા પદાર્થો કો જ્ઞાનેવાલે (સઽવ્વણૂહિં) સમસ્ત દ્રવ્યો ઓર ઉનકી ત્રિકાલવર્તી પર્યાયોં કે જ્ઞાતા (સઽવ્વદરિસીહિં) કેવલદર્શન સે એકેન્દ્રિયાદિ સમસ્ત ત્રસસ્થાવર રૂપ જગત્ દેખને કે

હવે સૂત્રકાર નોઆગમ લોકોત્તરિક ભાવશ્રુતનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે તં લોઉત્તરિયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થઃ—(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! (નોઆગમઓ) નોઆગમ ભાવશ્રુતતા બીજા લેઠકા (તં) લોઉત્તરિયં ભાવસુયં કિં) પૂર્વપ્રસ્તુત લોકોત્તરિક ભાવશ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નોઆગમઓ) નોઆગમનો આશ્રય લઈને (લોઉત્તરિયં ભાવસુયં) લોકોત્તરિક ભાવશ્રુતનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે.

“ઉપ્પણનાણદંસણધરેહિં” સમસ્તપ્રણના ક્ષયથી ઉત્પન્ન થયેલા કેવલજ્ઞાન અને કેવલદર્શનરૂપ ઉપયોગને ધારણ કરનારા, ‘તીયપચ્ચુપ્પણમણાગયજાણઈ’ અતીત (ભૂતકાલિકા), પ્રત્યુત્પન્ન (વર્તમાન કાલિકા), અને અનાગત (ભવિષ્યત્કાલિકા) પદાર્થોને બાણનારા, (સઽવ્વણૂહિં) સમસ્ત દ્રવ્યો અને તેમની ત્રિકાલવર્તી પર્યાયોના જ્ઞાતા (સઽવ્વદરિસીહિં) કેવલ દર્શનથી એકેન્દ્રિયાદિ સમસ્ત ત્રસ અને સ્થાવરરૂપ

वलोकितमहितपूजितैः—त्रैलोक्येन=त्रिलोकीस्थितेन भवनपतिव्यन्तरनरविद्याधर
वैमानिकादिसमूहेन सूत्रे 'वहिय' इति देशी शब्दः अवलोकितार्थ
वाचक स्तः—अवलोकिताः—अमन्दानन्दाश्रयपरिप्लुतलोचनैर्निरीक्षिताः महिताः=
यथावस्थिताऽसदृशगुणोत्कीर्णलक्षणेन भावस्त्वेन अभिप्लुताः पूजिताः=
वन्दनादिलक्षणया कायिकक्रियाया सत्कृतास्तैः. तथा अप्रतिहतधरज्ञानदर्शनधरैः
अप्रतिहते=समस्तावरणक्षयसम्भूतत्वाद् भूर्त्तभूतेशु समस्तवस्तुषु कटकडयादिभिर-
स्वलिते अविसंवादके वा अतएव क्षायिकत्वाद्वा वरे=श्रेष्ठे ये ज्ञानदर्शने=केवल
ज्ञानकेवलदर्शनरूपे, तयोर्धराः—धारका ये ते तथा तैः, एवंभूतैर्हर्द्धिर्भगवन्निः,
यदिदं द्वादशाङ्गं=अतत्परस्य परमपुरुषस्याङ्गानीव अङ्गानि, द्वादशअङ्गानि—आचारा-
दीनि यत तद् द्वादशाङ्गगणपिटकम् गणोऽस्यास्तीति गणी=आचार्यस्तस्य
पिटकमिष=सर्वस्वाधारमञ्जूषेव प्रणीतं=ग्ररूपितं, तद् लोकोत्तरिकं—लोकोत्तरैः=

स्वभाववाले (तिलुक्कवहियमहियपूइएहिं) तीन लोकवर्ती भवनपति,
व्यन्तर, नर, किन्नर, विद्याधर ज्योतिषिक वैमानिक आदि के समूह से
अवलोकित अमन्द आनन्द के अश्रुओं से परिप्लुत लोचनों द्वारा
निरीक्षित—हुए, महित—यथावस्थित गुणों के कीर्तिरूप भावस्त्व-
से संस्तुत हुए, पूजित—वन्दनादिरूप कायिक क्रिया से सत्कृत हुए
(अप्यडिहयवरनाणदंसणधरेहिं) तथा अप्रतिहत समस्त आवरण के क्षय
से उत्पन्न होने के कारण भूर्त्त और भूत समस्त वस्तुओं में कटकडय (कट-
चट्टाई कुडय—भित्ति) आदि से भी अस्वलित अथवा अविसंवादी ऐसे
श्रेष्ठ के ज्ञान और केवलदर्शन के धारक (अरिहंतेहिं भगवंतेहिं) अर्हन्त
भगवन्तो द्वारा (दुवालसंगं) आचारंगादि द्वादश अंगवाण (जं इमं) जो यह

जगतने जेधं शकवाना स्वभाववाणा, (तिलुक्कवहियमहियपूइएहिं) त्रय लोकवर्ती
भवनपति, व्यन्तर, नर, किन्नर, विद्याधर, ज्योतिषिक, वैमानिक आदिना समूहथी
अवलोकित, अमन्द आनंदाश्रुओंथी परिप्लुत लोचनो द्वारा निरीक्षित
पती महित—यथावस्थित गुणोना कीर्तिरूप भावस्त्वथी संस्तुत (स्तवित)
पतां, पूजतां—वन्दनादिरूप कायिक क्रियावडे सत्कारित थतां, (अप्यडियवरनाणदंसण
धरेहिं) तथा अप्रतिहत समस्त आवरणोना क्षयथी उत्पन्न थयेछुं होवाने कारणे
भूर्त्त अने भूत सङ्ग वस्तुओ कट, कुडय (कट ओटले चट्टाई अने कुडय ओटले
भीति) अप्यडिथी पछु अस्वलित अथवा अविसंवादी ओवा श्रेष्ठ केवणज्ञान अने
केवणदर्शनता धारक (अरिहंतेहिं भगवंतेहिं) अर्हन्त भगवन्तो द्वारा (दुवालसंगं)
आचारंग आदि पारअंगवाणुं (जं इयं) ने आ (गणपिटङं पणीयं) गणपिटक
ग्ररूपित थयुं छे, ते लोकोत्तर तीर्थंकरे द्वारा प्रणीत होवाने कारणे लोकोत्तरिक

અનુયોગચરિત્રકા ટીકા સૂત્ર ૪૩ લોકોત્તરિકનોઆગમતો ભાવશ્રતનિરૂપણમ્ ૨૦૯

તીર્થકૃદ્ધિઃ પ્રણીતત્વાદ્ લોકોત્તરિ ભાવશ્રતમ્ । તત્સ્વરૂપમાહ—‘તં જહા’ ઇત્યાદિના—તથથા—આચારઃ, સૂત્રકૃતં, યાનં, સમવાયો વિવાહપ્રજ્ઞસિઃ, જ્ઞાતાધર્મ-કથાઃ, ઉપાસકદશાઃ, અન્તકૃત શાઃ. અનુત્તરાપપાતિકદશાઃ, પ્રશ્નવ્યાકરણાનિ વિપાકશ્રુતં, દષ્ટિવાદશ્ચ । સર્વજ્ઞપ્રણીતં દ્વાદશાઙ્ગરૂપં યદ્ ગણિપિટકં. તદર્થો પયાગો ભાવશ્રુતં ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપ ઇતિ વચનાત્ । સ ચોપયોગશ્ચરણગુણસમ-ન્વિતશ્ચેત્ તર્હિ નો આગમતો ભાવશ્રતં ભવતિ. ચરણગુણસ્ય ક્રિયારૂપત્વેન આ-નાગમત્વાત્. નો શબ્દસ્ય ચ દેશપ્રતિષેધકત્વેના યજાત્ । ઉપયોગચારિત્રવાન્

(ગણિપિટકં પળીયં) ગણિપિટક પ્રરૂપિત હુઆ હૈ લોકોત્તર તીર્થકરં દ્વારા પ્રણીત હોને કે કારણ લોકોત્તરિક ભાવશ્રત હૈ । ‘તં જહા’ દ્વાદશ અંગાં કે નામ ઇસ પ્રકાર હૈ ।—(આચારો) આચારાંગ (સૂત્રગઢો સૂત્રકૃતંગ (ઝાણ) સ્થાનાંગ (સમવાયો) સમવાયાંગ (વિવાહ પળ્ણતી) વિવાહ પ્રજ્ઞસિ-‘ભગવતી સૂત્ર’ (નાયાધર્મકહાઓ) જ્ઞાતા ધર્મકથા (ઉવાસગદસાઓ) ઉપાસક દર્શાંગ (અંતગઢદસાઓ) અન્તકૃતદર્શાંગ (અણુત્તરોવવાડ્યદસાઓ) અનુત્તરાપપાતિક દર્શાંગ (પળ્હાવાગરણાઈ) પ્રશ્નવ્યાકરણ, (વિવાગસુયં) વિપાકશ્રુત (દિટ્ટિવાઓ ય) આર દષ્ટિવાદ । ઇન બારહ અંગોં કે અર્થ મેં જા ઉપયોગરૂપ પરિણામ હૈ વહ ભાવશ્રુત હૈ “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપ” હૈ, એસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હૈ । યહ ઉપયોગરૂપ પરિણામ યદિ ચરણગુણ—ચારિત્ર ગુણ સે યુક્ત હૈ તો વહ નોઆગમ સે ભાવશ્રુત હૈ ક્યોં કે ચરણ ગુણ ક્રિયારૂપ હૈ ઓર ક્રિયા આગમ નહીં હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર યહાં નોશબ્દ મેં આગમ એકદેશ મેં નિષેધક હાને સે દેશ પ્રતિષેધકતા બન જાતી હૈ । યદ્યપિ ઉપયોગ આર ચારિત્ર ગુણ સે

ભાવશ્રુતરૂપ છે. (૧ જહા) તે દ્વાદશ (બાર) અંગોના નામ નીચે પ્રમાણે છે—(આચારો) (૧) આચારાંગ, (૨) સૂત્રગઢો (૨) સૂત્રકૃતંગ. (ઝાણ) (૩) સ્થાનાંગ, (સમવાયો) (૪) સમવાયાંગ. (વિવાહ પળ્ણતી) (૫) વિવાહ પ્રજ્ઞસિ (ભગવતી સૂત્ર) (નાયા ધર્મકહાઓ) (૬) જ્ઞાતા ધર્મકથા. (ઉવાસગદસાઓ) (૭) ઉપાસકદર્શાંગ. (અંતગઢદસાઓ) (૮) અન્તકૃતદર્શાંગ. (અણુત્તરોવવાડ્યદસાઓ) (૯) અનુત્તરાપપાતિકદર્શાંગ. (પળ્હાવાગરણાઈ) (૧૦) પ્રશ્નવ્યાકરણ. (વિવાગસુયં) (૧૧) વિપાકશ્રુત અને ‘દિટ્ટિવાઓ ય’ (૧૨) દષ્ટિવાદ. આ બારે અંગોના અર્થમાં જે ઉપયોગરૂપ પરિણામ છે તેનું નામ ભાવશ્રુત છે. કારણ કે “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપઃ” આ પ્રકારનું સિદ્ધાન્તનું વચન છે. આ ઉપયોગરૂપ પરિણામ જે ચરણગુણ—ચારિત્રગુણથી યુક્ત હોય તો તે નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવશ્રુત છે, કારણ કે ચરણગુણ ક્રિયારૂપ હોય છે, અને ક્રિયા આગમરૂપ હોતી નથી. આ પ્રકારે અહીં ‘નો’ પદ એકદેશની અપેક્ષાએ આગમનું નિષેધક હોવાથી દેશપ્રતિષેધકતા ઘટિત થઈ નાંચ છે. જે કે ઉપ-

૨૧૦

અનુયોગદ્વારે

સાધ્વાદિ અપેક્ષાદોષાદ્ ભાવશ્રુત ભવિતુમર્હતિ । इह तु चाग्नित्रयसमन्वितो द्वाद-
 શાક્ષોપયોગો નોઆગમતો ભાવશ્રુતમિત્યાશયેન દ્વાદશાક્ષો ગણિપિટકમિત્યુક્તમ્ ।
 અન્યથા શબ્દાત્મકસ્ય દ્વાદશાક્ષસ્યોપયોગરૂપત્વાભાવાદ્ ભાવશ્રુતત્વં નોપપદ્યતે ।
 પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-‘સે તં’ इति । तदेतद् लोकोत्तरिकं नो आगम-
 સર્વં નો આગમતો ભાવશ્રુતં નિરૂપિતમિતિ સૂચયિતુમાહ-‘સે તં’ इति । तदेत-
 આગમતો ભાવશ્રુતમ્ । इत्थं सभेदं भावश्रुतं प्ररूपितमिति सूचयितुमाह-‘से तं
 भावसुयं’ इति । तदेतद् भावश्रुतम् इति । सू० ४३॥

इत्थं भावश्रुतस्वरूपमुत्तवा सम्प्रति तत्पर्यायानाह-

मूलम्—तस्स णं इमे एगट्ठिया णाणाघोसा णाणावंजणा नाम-
 धेज्जा भवंति, तं जहा—

સુચસુત્તગંથસિદ્ધં,—તસાસણે આળાવયગ ઉવણ્ણે ।

પન્નવણ આગમે વિ ય, એગટ્ઠા પજ્જવા સુત્તે ॥

સે તં સુયં ॥સ૦ ૪૪॥

युक्त हुआ साधु आदि भी अभेदोपचार से भावश्रुत हो सकता है, परन्तु यहाँ
 जो द्वादशाङ्गगणिपिटकभो नोआगम से भावश्रुत कहा है वह द्वादशांग के
 चारित्रगुणसमन्वित उपयोग को लेकर ही कहा है ऐसा जानना चाहिये ।
 क्योंकि शब्दात्मक जो द्वादशांग है वह उपयोगरूप नहीं होता है । अतः उसमें
 उपयोगरूपता का अभाव होने के कारण भावश्रुतता नहीं बनती है । (से तं
 नोआगमओ भावसुयं) इस तरह नोआगम को आश्रित करके यह लोकोत्तरिक
 भावश्रुत का स्वरूप है । (से तं भावसुयं) इस प्रकार से सूत्रकारने सभेद
 भावश्रुत की प्ररूपणा यहाँ तक की है । ॥सूत्र ४३॥

યોગ અને ચારિત્રગુણથી યુક્ત થયેલા સાધુ આદિ પણ અભેદોપચારથી ભાવશ્રુત
 હેઇ શકે છે, પરન્તુ અહીં જે દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટકને નોઆગમની અપેક્ષાએ
 ભાવશ્રુત હયું છે તે દ્વાદશાંગના ચારિત્રગુણ સમન્વિત ઉપયોગની અપેક્ષાએ જ
 કહેવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું જોઇએ, કારણ કે શબ્દાત્મક જે દ્વાદશાંગ છે
 તે ઉપયોગરૂપ હોતું નથી. તેથી તેમાં ઉપયોગરૂપતાનો અભાવ હોવાને કારણે
 ભાવશ્રુતતા સંભવી શકતી નથી. (સે તં નોઆગમઓ ભાવસુયં) આ પ્રકારનું
 નોઆગમને આશ્રિત કરીને લોકોત્તરિક ભાવશ્રુત નામના નોઆગમ ભાવશ્રુતતા ધીજ
 લેહનું સ્વરૂપ સમજવું (સે તં ભાવસુયં) આ પ્રકારે સૂત્રકારે ભાવશ્રુતતા લેહોની
 અહીં સુધીમાં પ્રરૂપણા કરી છે આ રીતે ભાવશ્રુતનું વર્ણન અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥સ૦ ૪૪॥

अनुयोगचन्द्रिकाटीका ४४ भावश्रुतपर्यायनिरूपणम्

२११

छाया—तस्य खलु इमानि एकार्थिकानि नानाघोषाणि नानाव्यञ्जनानि नामधेयानि भवन्ति, तद्यथा—

श्रुतसूत्रग्रन्थसिद्धान्त शासनमाज्ञावचनमुपदेशः ।

प्रज्ञापना आगमोऽपि च एकार्थाः पर्यायाः सूत्रे ॥

तदेतत् श्रुतम् ॥ सू० ४४ ॥

टीका—‘तस्स णं’ इत्यादि—

तस्य=भावश्रुतस्य खलु इमानि=वक्ष्यमाणानि एकार्थिकानि=एकार्थविषयाणि नानाघोषाणि=उदात्तानुदात्तादि नानास्वयुक्तानि, नानाव्यञ्जनानि=ककाराद्यनेकव्यञ्जनात्मकानि नामधेयानि=नामानि भवन्ति, तद्यथा—श्रुतसूत्र‘सिद्धान्त’ ग्रन्थशासनम्—तत्र— श्रुतम्—श्रूयते गुरुसमीपे यत्तत्श्रुतम् १, सूत्रम्—अर्थानां सूचकं सूत्रम् २, ग्रन्थः—तीर्थं करकल्पपादवचनप्रसन्नानां ग्रन्थनाद् ग्रन्थः ३, सिद्धान्तः

अब सूत्रकार भावश्रुत के पर्यायवाची शब्दों को कहते हैं ।

‘तस्स णं इमे’ इत्यादि ॥ सू० ४४ ॥

शब्दार्थ—(तस्स णं इमे णाणाघोसा णाणावज्जणा एगट्ठिया नामधेज्जा भवन्ति) उस भावश्रुत के ये उदात्त अनुदात्त आदि नाना स्वरों से युक्त, और ककारआदि अनेक व्यञ्जनोंवाले एकार्थविषयक नाम हैं । (तं जहा) जो इस प्रकार से ह—

(सुयसुत्तगंथसिद्धंतसासणे आणवयणउवएसे पन्नवणआगमे वि य एगट्ठा पज्जवा सुत्ते) गुरु के समीप सुना जाने के कारण भावश्रुत का नाम श्रुत है अर्थों की सूचना इससे होती है इसलिये इसका नाम सूत्र है । तीर्थं कर रूप कल्पवृक्ष के वचन रूप पुष्पों का इसमें ग्रथन रहता है इसलिये इसका

हवे सूत्रकार भावश्रुतना पर्यायवाची शब्दोंको कथन कर छे—

‘तस्सणं इमे’ इत्यादि—

शब्दार्थ—(तस्सणं इमे णाणाघोसा णाणावज्जणा एगट्ठिया नामधेज्जा भवन्ति) ते श्रुतना, उदात्त अनुदात्त आदि विविध स्वराधी युक्त अने ककार आदि अनेकव्यञ्जनाधी युक्त ऐकार्थवाचक नामो छे. (तंजहा) ते नामो नीचे प्रभावे छे—

(सुयसुत्तगंथसिद्धंतसासणे आणवयण उवएसे पन्नवण आगमे वि य एगट्ठा पज्जवा सुत्ते) (१) श्रुत-शुरुनी समीपे तेनुं श्रवणु करवामां आवे छे, ते करवे तेनुं नामश्रुत छे. (२) सूत्र-अर्थोनी सूचना तेना द्वारा भणे छे तेथी तेनुं पीशुं नाम सूत्र छे.

(३) अ-थ-तीर्थं करे ३५ कल्पवृक्षना वचनरूपी पुष्पोनुं तेमां अथन थयेव

સિદ્ધં=પ્રમાણપ્રતિષ્ઠિતમર્થમ્ અન્તં નપતિ=પ્રમાણકોટિમારોહ્યતીતિ સિદ્ધાન્તઃ૪,
 શાસનમ્—મિથ્યાત્વાવિરતિકષાયાદિપ્રવૃત્તજીવાનાં શાસનાત્=શિક્ષણાદ્—શાસનમ્ ૫,
 एषां समाहारः । तथा—आज्ञा—आज्ञाप्यन्ते मोक्षार्थिनः प्राणिनोऽनयेति—आज्ञा६,
 वचनम्—उक्तिः=वाग्योग इत्यर्थः७, उपदेशः—हिताहितप्रवृत्तिनिवृत्त्युपदेशનાત્—
 उपदेशઃ૮, प्रज्ञापना—प्रज्ञाप्यन्ते यथावस्थितजीवादिपदार्थो अनयेति प्रज्ञापना९,
 अपि च आगमःआचार्यपारम्पर्येणागच्छतीति—આગમઃ, આપ્તવચનં વા આગમ૧૦,
 एते सर्वेऽपि सूत्रविषये एकार्थाः पर्यायाः बोद्धव्याः । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—તદેતત્
 શ્રુતમ્—શ્રુતાદિનામભેદૈર્યદુક્તં તત્ શ્રતં વિજ્ઞયમિતિ ॥સુ૦ ૪૪॥

નામ ગ્રન્થ હૈ । પ્રમાણ પ્રતિષ્ઠિત અર્થ કો યહ પ્રમાણ કોટિમેં સ્થાપિત કર દેતા હૈ
 इसलिये इसका नाम सिद्धान्त है, मिथ्यात्व अविरति, और कषाय आदि में
 प्रवृत्त हुए व्यक्तियों का उनसे दूर होनेकी शिक्षा देता है इसलिये इसका
 नाम शासन है । मोक्षामिलापी प्राणी जन इससे आज्ञापित किये जाते हैं,
 इसलिये इसका नाम आज्ञा है । वाणी के द्वारा यह स्पष्ट किया जाता है
 इसलिये इसका नाम वचन है । जीवों को इससे हिन में प्रवृत्त होने की
 शिक्षा (उपदेश) मिलता है इसलिये इसका नाम उपदेश है । इसके द्वारा
 जावादिक समस्त पदार्थ जिस रूप में स्थित है उसी रूप से प्रज्ञापित किये
 जाते हैं इसलिये इसका नाम 'प्रज्ञापना' है । आचार्य परंपरा से यह चला
 आ रहा है इसलिये इसका नाम 'आगम' है । अथवा यह आप्त का वचन है
 इसलिये भी 'आगम' है । ये सब सूत्र के पर्यायवाची शब्द हैं ऐसा जानना

હોવાથી તેનું નામ ગ્રન્થ છે. (૪) સિદ્ધાન્ત પ્રમાણપ્રતિષ્ઠિત અર્થને તે પ્રમાણકો-
 તની કોટિમાં સ્થાપિત કરી દે છે તેથી તેનું નામ સિદ્ધાન્ત છે. (૫) શાસન
 મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય આદિમાં પ્રવૃત્ત થયેલી વ્યક્તિઓને તેનાથી દૂર રહેવાની
 શિક્ષા તે આપે છે, તેથી તેનું પાંચમું નામ શાસન છે (૬) આજ્ઞા-તેના દ્વારા
 મનુષ્ય આદિને અમુક આજ્ઞાઓ આપવામાં આવે છે, તેથી તેનું છઠું નામ આજ્ઞા છે.
 (૭) વચનવાણી દ્વારા તેને સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે, તેથી તેનું નામ વચન છે.
 (૮) ઉપદેશ-તેના દ્વારા જીવોને ઉપદેશોમાં પ્રવૃત્ત થવાની અને અનુપદેશ (હિય
 પદાર્થો)થી નિવૃત્ત થવાની શિક્ષા (ઉપદેશ) મળે છે, તેથી તેનું આઠમું નામ ઉપદેશ છે.
 (૯) પ્રજ્ઞાપના-તેના દ્વારા, જીવાદિક પદાર્થો જે રૂપે વર્તમાનમાં છે એજ રૂપે પ્રજ્ઞા-
 પિત કરવામાં આવે છે એટલે કે જીવાદિક સમસ્ત પદાર્થોના યથાર્થ સ્વરૂપને
 પ્રજ્ઞાપિત કરવામાં આવે છે, તેથી તેનું નામ પ્રજ્ઞાપના છે. (૧૦) આગમ-આચાર્ય
 પરમ્પરાથી તે આદ્યુ આવે છે, તેથી તેનું નામ “આગમ” છે. આ બધા શ્રુતના

અનુયોગચત્રિકા ટીકા.સૂ. ૪૫ સ્કન્ધાધિકારનિરૂપણમ્

૨૧૩

इत्थं श्रुताधिकारमुत्त्वा सम्-ति-‘खंधं निखिखविस्सामि’ इति कथना-
नुसारेण स्कन्धाधिकार उच्यते—

मूलम्—से किं तं खंधे ? खंधे चउव्विहे पणत्ते, तं जहा-
नामखंधे ठवणाखंधे दव्वखंधे भावखंधे ॥ सू० ४५ ॥

छाया—अथ कोऽसौ स्कन्धः ? स्कन्धश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—नामस्क-
न्धः, स्थापनास्कन्धः द्रव्यस्कन्धः, भावस्कन्धः ॥ सू० ४५ ॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अस्य व्याख्या स्पष्टा, नवरं—स्कन्धःपरमाप्त्वादि समुदायः ॥४५॥

चाहिये । (से तं सुयं) इस तरह इन श्रुतादि नामों से यह श्रुत कहा गया है ॥सूत्र४४॥

अब सूत्रकार (खंधं निखिखविस्सामि) इस कथन के अनुसार सान्धाधि-
कार प्रारंभ करते हैं—

शब्दार्थः—(से किं तं खंधे) हे भदन्त ! स्कंधका क्या स्वरूप है ?
(खंधेचउव्विहे पणत्ते)

उत्तरः—स्कंधका स्वरूप प्रकट करने के लिये उस के चार प्रकार प्रज्ञप्त
हुए हैं—(तं जहा) वे इस तरह से हैं—(नामखंधे) नाम स्कंध (ठवणा खंधे)
स्थापना स्कंध (दव्वस्कंधे) द्रव्यस्कंध (भावखंधे) और भावस्कंध । स्कंध
शब्द का अर्थ है पुद्गल परमाणुओं का संश्लेष । इसकी व्याख्या पहिले
की गई व्याख्या की तरह ही जाननी चाहिये ।

પર્યાયવાચી શબ્દો છે, એમ સમજવું જોઈએ. (સે તં સુયં) આ પ્રકારે અહીં
શ્રુતનું નિરૂપણ સમાપ્ત થાય છે. ॥ સૂ. ૪૪ ॥

હવે સૂત્રકાર ‘खंधं निखिखविस्सामि’ આ કથન અનુસાર સ્કન્ધાધિકારનો
પ્રારંભ કરે છે—‘से किं तं खंधे’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં સંધે ?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન !
સ્કન્ધનું કેવું સ્વરૂપ હોય છે ?

ઉત્તર—(સંધે ચઉવ્વિહે પણત્તે) સ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે
તેના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નામસંધે, ઠવણા-
સંધે, દવ્વસંધે, ભાવસંધે) (૧) નામસ્કન્ધ, (૨) સ્થાપનાસ્કન્ધ, (૩) દ્રવ્યસ્કન્ધ
અને (૪) ભાવસ્કન્ધ સ્કન્ધ શબ્દનો અર્થ “પુદ્ગલ પરમાણુઓના સંશ્લેષ” સમ-
જવો આ સૂત્રની વ્યાખ્યા આગળ કહેલી વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી.

ભાવાર્થ:-રૂપ, ગંધ, રસ, ઓર સ્પર્શ જિસમેં પાચે જાતે હૈં ઉસકા નામ પુદ્ગલ હૈ। યહ પુદ્ગલ અણુ ઓર સ્કંધ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ। જિતને હી પ્રકાર કે પુદ્ગલ કયોં ન હોં, વે સબ ઇન દો ભાગોં મેં સમા જાતે હૈં। જો પુદ્ગલદ્રવ્ય અતિસૂક્ષ્મ હૈ-જિસ કા ભેદ નહીં હો સકતા હૈ ઇસી કારણ સે જો સ્વયં અપના હી આદિ અથવા અપના હી અંત ઓર અપના હી મધ્ય હૈ, દો સ્પર્શ એક રસ, એક ગંધ, ઓર એક વર્ણ સે યુક્ત હૈ વહ પરમાણુ હૈ। યદ્યપિ પુદ્ગલ સ્કંધ મેં સ્નિગ્ધ રૂક્ષ મેં સે એક, શીત ઉષ્ણ મેં એક મૃદુ કઠોર મેં સે એક, ઓર લઘુ ગુરુ મેં સે એક, યે ચાર સ્પર્શ હોતે હૈં, જિન્તુ પરમાણુ કે અતિસૂક્ષ્મ હોને કે કારણ ઉસમેં મૃદુ કઠોર લઘુ ઓર ગુરુ, ઇન ચાર સ્પર્શોં કા પ્રશ્ન હી નહીં ઉઠના હૈ। ઇસલિયે ઇસમેં કેવલ દો સ્પર્શ માને ગયે હૈં। ઇસસે અન્ય દ્રવ્યણુક આદિ સ્કંધ બનતે હૈં। ઇસલિયે યહ ઉનકા કારણ હૈ। કાર્ય નહીં।

યદ્યપિ દ્રવ્યણુક આદિ સ્કંધોં કા ભેદ હોને સે પરમાણુ કી ઉત્પત્તિ દેખી જાતી હૈ ઇસલિયે યહ બી કચન્ચિત્ કાર્ય ઠહરતા હૈ પરન્તુ મૌલિક રૂપ મેં યહ પુદ્ગલકી સ્વાભાવિક દશા હૈ ઇસલિયે વસ્તુતઃ યહ કિસી કા કાર્ય નહીં હૈ। ઇસકા જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોં સે નહીં હોતા-કિન્તુ કાર્ય યિજ્ઞ દ્વારા ઇસકા અનુમાન જ્ઞાન

ભાવાર્થ-જેમાં રૂપ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શનો સદ્ભાવ હોય છે, તેનું નામ પુદ્ગલ છે. તે પુદ્ગલના બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) અણુ અને (૨) સ્કંધ બંને બંને તેટલા પ્રકારના પુદ્ગલો હોય પણ તે બંધાનો આ બે ભેદોમાં સમાવેશ થઈ બંધ છે. જે પુદ્ગલ દ્રવ્ય અતિ સૂક્ષ્મ હોય છે, જેના વિભાગ થઈ શકતા નથી, અને તે કારણે જે પોતે જ પોતાના આદિરૂપ, પોતાના અન્તરૂપ અને પોતાના મધ્યરૂપ હોય છે, જે બે સ્પર્શ, એક રસ, એક ગંધ અને એક વર્ણથી યુક્ત હોય છે, એવાં પુદ્ગલ દ્રવ્યને પરમાણુ કહે છે. જો કે પુદ્ગલ સ્કંધમાં સ્નિગ્ધ અને કઠોર આ બે સ્પર્શોંમાંના એક સ્પર્શ, શીત અને ઉષ્ણ, આ બેમાંથી એક, મૃદુ અને કઠોર આ બે સ્પર્શોંમાંથી એક લઘુ અને ગુરુ, આ બેમાંથી એક, એમ ચાર સ્પર્શોંનો સદ્ભાવ હોય છે, પરન્તુ પરમાણુ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાને લીધે તેમાં મૃદુ, કઠોર, લઘુ અને ગુરુ, આ ચાર સ્પર્શોંના સદ્ભાવનો તો પ્રશ્ન જ ઉદ્ભવતો નથી. તેથી તેમાં માત્ર બે સ્પર્શોંનો જ સદ્ભાવ માનવામાં આવ્યો છે. તે પરમાણુમાંથી અન્ય દ્રવ્યણુક (બે અણુવાળા) આદિ સ્કંધ બને છે. તેથી સ્કંધો બનાવવામાં તે કારણભૂત બને છે-કાર્યભૂત બનતું નથી. જો કે દ્રવ્યણુક આદિ સ્કંધોનો વિભાગ થવાથી પરમાણુની ઉત્પત્તિ થતી જોવામાં આવે છે, તેથી તે પણ ક્યારેક કાર્યરૂપ બને છે. પરન્તુ મૌલિક રૂપે પુદ્ગલની તે સ્વાભાવિક દશા છે, તેથી વસ્તુતઃ તે કોઈના કાર્યરૂપ નથી. તે પરમાણુનું જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોથી થતું નથી, પરન્તુ કાર્યલિંગ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૪૬ સ્કન્ધાધિકારનિરૂપણમ્

૨૧૫

મૂલમ્—નામદ્વવળાઓ પુઞ્વમણિયાણુક્રમેણ મણિયવ્વાઓ ॥ સૂ. ૪૬ ॥

છાયા—નામસ્થાપને પૂર્વમણિતાનુક્રમેણ મણિતવ્વે ॥ સૂ. ૪૬ ॥

ટીકા—‘નામદ્વવળાઓ’ इत्यादि—

નામસ્કન્ધઃ સ્થાપનાસ્કન્ધઃ નામઆવશ્યકત્થાનાઽવશ્યક—પ્રતિપાદન
સૂત્રાનુસારેણ વક્તવ્યો । इति ॥ સૂ. ૪૬ ॥

સે સ્થોધ હોતા હૈ । સ્કન્ધ દો યા દો સે અધિક પરમાણુઓં કે સંશ્લેષ સે
બનતા હૈ । દ્વયણુક તો પરમાણુઓં કે સંશ્લેષ સે હી બનતા હૈ—પરંતુ ત્ર્યણુક
આદિ સ્કન્ધ પરમાણુઓં કે સંશ્લેષ સે મી બનતે હૈ તથા પરમાણુ ઓર સ્કન્ધ
કે સંશ્લેષ સે યા વિવિધ સ્કન્ધોં કે સંશ્લેષ સે મી બનતે હૈ । इसलिये अ
न्यस्કन्ध के सिवा शेष सब स्कन्ध परस्पर कार्य भी हैं और कारण भी । जिन
स्कन्धों से बनते हैं उनके कार्य हैं और जिन्हें बनाते हैं उनके कारण भी ॥ सूत्र ४५ ॥

“નામ દ્વવળાઓ પુઞ્વમણિયાણુક્રમેણ મણિય વ્વાઓ” इत्यादि ॥ सूत्र ४६ ॥

શબ્દાર્થ—(નામ મદ્વવળાઓ પુઞ્વમણિયાણુક્રમેણ મણિયવ્વાઓ) નામ
સ્કન્ધ ઓર સ્થાપનાસ્કન્ધ ના સ્વરૂપ નામ આવશ્યક ઓર સ્થાપના આવશ્યક કે
સ્વરૂપ ના પ્રતિપાદન કરનેવાલે સૂત્રોં કે અનુસાર જાનના ચાહિયે । विशेषता
केवल इतनी ही है । कि नाम आवश्यक की जगह नामस्कन्ध और स्थापना आवश्यक
कि जगह स्थापना स्कन्ध लगाकर सूत्रों का अनुगम करना चाहियो ॥ सूत्र ४६ ॥

જેમ તેના અનુમાન જ્ઞાનથી બોધ થાય છે. એ અથવા બેથી વધારે પરમાણુઓના
સંશ્લેષથી સ્કન્ધ બને છે, દ્વયણુક સ્કન્ધ તો પરમાણુઓના સંશ્લેષથી જ બને છે,
પણ ત્ર્યણુક (ત્રણ આણુવાળો) આદિ સ્કન્ધો પરમાણુઓના સંશ્લેષથી પણ બને છે
અથવા વિવિધ સ્કન્ધોના સંશ્લેષથી પણ બને છે. તેથી દ્વયણુક સ્કન્ધ સિવાયના
બાકીના બધાં સ્કન્ધો પરસ્પર કાર્ય પણ છે અને કારણ પણ છે—જે સ્કન્ધોમાંથી
તેઓ બને છે તે સ્કન્ધોના કાર્યરૂપ અને જે સ્કન્ધોને તેઓ બનાવે છે તેમના
કારણરૂપ છે, એમ સમજવું. ॥ સૂ. ૪૫ ॥

“નામદ્વવળાઓ પુઞ્વમણિયાણુક્રમેણ મણિયવ્વાઓ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(નામદ્વવળાઓ પુઞ્વમણિયાણુક્રમેણ મણિયવ્વાઓ) નામસ્કન્ધ
અને સ્થાપનાસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ નામ આવશ્યક અને સ્થાપના આવશ્યકના
સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારાં સૂત્રો પ્રમાણે જ સમજવું નહીં. એટલી જ વિશેષતા
સમજવાની છે કે નામ આવશ્યકને બદલે નામસ્કન્ધ અને સ્થાપના સ્કન્ધ સૂત્રોનું
કથન થવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૪૬ ॥

અથ દ્રવ્યસ્કન્ધં નિરૂપયતિ—

સૂત્ર—(સે કિં તં દ઼વ્વસ્થંધે? દ઼વ્વસ્થંધે દુવિહે પળ્લસે, તં જહા આગમઓ ય નોઆગમઓ ય । સે ક ત આગમઓ દ઼વ્વસ્થંધે? આ મઓ દ઼વ્વસ્થંધે—જસ્સ ણં સ્થંધેત્તિ પ સિલ્લિલ્લયં, સેસં જહા દ ઼ાવસ્સણ તહા માણિયવ્વં । નવર સ્થંધામિલાલો જાવ સે કિં તં જાણયસરીર ભવિયસરીર ઇરિત્તે દ઼વ્વસ્થંધે! જાણયતરીરવ઼રિત્તે દ઼વ્વસ્થંધ તિલ્લિહે પળ્લસે, તં જહા—સલ્લિત્ત અલ્લિ મીસણ ॥સૂ૦ ૪૭॥

છાયા—અથ કોઽસૌ દ્રવ્યસ્કન્ધઃ? દ્રવ્યસ્કન્ધો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા— આગમતથ નોઆગમતથ । અથ કોઽસૌ આગમતો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ? આગમતો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ—યસ્ય લલુ સ્કન્ધેતિ પદં શિક્ષિતમ, શેષં યથા દ્રવ્યાવશ્યકે તથા

અથ સુત્રકાર દ્રવ્યસ્કંધ કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં દ઼વ્વસ્થંધે” ઇત્યાદિ ॥ સૂત્ર ૪૭ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે) હે મદન્ત ! (તં) પૂર્વપ્રક્રાન્ત (દ઼વ્વસ્થંધે) દ્રવ્યસ્કંધ (કિં) કથા હૈ ?

ઉત્તર—(દ઼વ્વસ્થંધે દુવિહે પળ્લસે) દ્રવ્યસ્કંધ દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) જૈસે (આગમઓ ય નોઆગમઓ ય) ? એક આગમ કો લેકર ઓર દુસરા નોઆગમ કો લેકર । (સે કિં તં આગમઓ દ઼વ્વસ્થંધે) આગમ સે દ્રવ્ય સ્કંધકા વપા સ્વરૂપ હૈ ? (આગમઓ દ઼વ્વસ્થંધે જસ્સ ણં સ્થંધેત્તિ પયં

હવે સુત્રકાર દ્રવ્યસ્કંધનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં દ઼વ્વસ્થંધે” ઇત્યાદિ —

શબ્દાર્થઃ—(સે) શિષ્ય ગુરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (તં) પૂર્વ પ્રસ્તુત (દ઼વ્વસ્થંધે) દ્રવ્યસ્કંધનું (કિં) કેવું સ્વરૂપ છે?

ઉત્તર—(દ઼વ્વસ્થંધે દુવિહે પળ્લસે) દ્રવ્યસ્કંધ બે પ્રકારના કહ્યા છે (તંજહા) તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) (આગમઓ ય, નોઆગમઓય) (૧) આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કંધ અને (૨) નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કંધ.

(સે કિં તં આગમઓ દ઼વ્વસ્થંધે?) હે ભગવન્ ! આગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યસ્કંધનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(આગમઓ દ઼વ્વસ્થંધે જસ્સ ણં સ્થંધે તિ પયં સિલ્લિલ્લયં સેસં જહા દ઼઼વાવસ્સણ તહા માણિયવ્વં) આગમની અપેક્ષાએ આગમને આશ્રિત કરીને

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू० ४७ द्रव्यस्कन्धनिरूपणम्

२१७

भाणितवम् । नवरं स्कन्धाभिलाषो यावत्-अथ कोऽसौ ज्ञायकशरीरभव्यशरीर-
व्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धः ? ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धस्त्रिविधः
प्रकृतः, सद्यथा-सचित्तः अचित्तो मिश्रकः ॥ ४७ ॥

टीका—‘से किं त’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा ॥ सू० ४७ ॥

सिद्धिरयं सेसं जहा दन्वास्सए तहा भाणियन्वं) उत्तर-आगम से-आगम को
आश्रित करके— द्रव्यस्कन्ध का स्वरूप इस प्रकार से है, जिस साधु आदि ने
स्कन्ध इस पदके अर्थ को गुरु के मुख से सीख लिया है यहाँ से लेकर “ठियं-
जियं” आदि शेष पदों को यहाँ कहना चाहिये और उनका अर्थ जिस
प्रकार से द्रव्यावश्यक के वर्णन में कहा गया है वैसा ही अर्थ यहाँ पर उस
पाठका लगा लेना चाहिये । इस तरह स्कन्ध संबन्धी आलाप “अथ कोऽसौ
ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धः” यहाँ तक समझलेना चाहिये ।
(जाणयसरीरभविषसरीरवहरित्ते दन्वस्वधे तिविहे पणत्ते) ज्ञायकशरीर भव्य-
शरीर से व्यतिरिक्त द्रव्यस्कन्ध तीन प्रकार का कहा गया है । (तंजहा)
वे प्रकार ये हैं (सचित्तं अचित्तं भीसए) सचित्त, अचित्त और मिश्र ।

भावार्थः—शिष्य ने गुरुमहाराज से पूछा है कि है भदन्त ! द्रव्य स्कन्ध का
क्या स्वरूप है ? तब गुरु महाराज ने उसे समझाने के लिये ऐसा कहा कि
हे शिष्य । द्रव्य स्कन्ध का स्वरूप दो प्रकार से निर्धारित किया गया है—१

द्रव्यस्कन्धतुं स्वइप आ प्रकारतुं छे—“ जे साधुओ ‘स्कन्ध, आ पढना अर्थने गुरुजी
सभीये शीजी लीघो छे,” अहीँथी शरू करीने “ठियं जियं” आदि द्रव्यावश्यक
सूत्रमां आवेला पढोने अहीँ पणु अहणु करवा जेधओ. ते पढोने जे प्रकारने
अर्थ द्रव्यावश्यक सूत्रमां करवामां आव्यो छे, ते प्रकारने अर्थ अहीँ पणु
अहणु थवो जेधओ. आ प्रकारे स्कन्ध संबन्धी “अथ कोऽसौ ज्ञायकशरीर-
भव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धः” अहीँ सुधीतुं अहणु थवुं जेधओ.

(जाणयसरीरभविषसरीरवहरित्ते दन्वस्वधे तिविहे पणत्ते) ज्ञायकशरीर
अने भव्यशरीर व्यतिरिक्त (थी भिन्न) द्रव्यस्कन्ध त्रय प्रकारने कहा छे.
(तंजहा) ते प्रकारे आ प्रमाणे छे—

(सचित्तं अचित्तं भीसए) (१) सचित्त (२) अचित्त अने (३) मिश्र.

भावार्थः—शिष्य गुरु महाराजने ओवे प्रश्न पूछि छे के “हे भगवन ! द्रव्यस्क-
न्धतुं स्वइप केवुं छे ?” तयारे गुरु तेने ते समझववा भाटे लेह प्रलेहपूर्वक तेना
स्वइपतुं नीये प्रमाणे । नइपणु करे छे.

तेओ तेने कहि छे के द्रव्यस्कन्धतुं स्वइप जे प्रकारे निर्धारित करी सकाव छे

આગમ કો આશ્રિત કરકે ઓર દુસરા નાઆગમ કો આશ્રિત કરકે । इनमें आगम को आश्रित करके द्रव्यस्कंध का स्वरूप जैसा पीछे १४ वें सूत्र में आगम को आश्रित करके द्रव्यावश्यक का स्वरूप कहा गया है—वैसा ही जानना चाहिये । जिसका तात्पर्य यह है कि जिस साधु आदि ने स्कंध के स्वरूप को प्रतिपादन करनेवाले शास्त्र को अच्छी तरह से जान तो लिया है परन्तु वह उसमें उपयोग से वर्जित है ऐसा वह साधु आगम की अपेक्षा द्रव्यस्कंध ज्ञायकशरीर द्रव्यस्कंध, अव्यशरीर द्रव्यस्कंध, और इन दोनों से व्यतिरिक्त द्रव्यस्कंध इस तरह से ३ तीन प्रकार का है । इनमें पहिले पदोंका स्वरूप १६, १७, १८, इन तीन सूत्रों द्वारा पीछे स्पष्ट किया गया है । वहां आवश्यक पद की जगह स्कंध पद लगाकर इसे समझलेना चाहिये । इसका सारांश यह है कि स्कंधशास्त्र के ज्ञाता का जो निर्जिव शरीर है वह नोआगम की अपेक्षा ज्ञायकशरीर है । तथा आगे जिस शरीर से स्कंधशास्त्र को वह

(૧) આગમને આશ્રિત કરીને અને (૨) નો આગમને આશ્રિત કરીને.

આગમનો આધાર લઇને દ્રવ્યસ્કન્ધનું જેવું સ્વરૂપ છે તે હવે સમજાવવામાં આવે છે. ૧૪માં સૂત્રમાં આગમનો આધાર લઇને દ્રવ્યાવશ્યકનું જેવું સ્વરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે. એવું જ આગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યસ્કન્ધનું સ્વરૂપ સમજવું. આ કથનનો સંક્ષિપ્ત સારાંશ નીચે પ્રમાણે સમજવો.

જે સાધુ આદિએ સ્કન્ધના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારા શાસ્ત્રને સારી રીતે બાધી લીધું છે, પરન્તુ તે તેમાં ઉપયોગ પરિણામથી રહિત છે, એવો તે સાધુ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપ છે. નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કન્ધના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે (૧) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ, (૨) અવ્યશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ અને (૩) ઉપયુક્ત બનેથી વ્યતિરિક્ત (લિપ્ત એવો) દ્રવ્યસ્કન્ધ આ ત્રણ પ્રકારોમાંના પહેલા બે પ્રકારોનું સ્વરૂપ સૂત્ર ૧૭ ૧૮ અને ૧૯માં સૂત્રમાં કહ્યા અનુસાર જ સમજવું જોઈએ. ત્યાં ‘આવશ્યક’ શબ્દની જગ્યાએ ‘સ્કન્ધ’ શબ્દ મૂકવાથી સ્કન્ધ વિષયક કથન બની જશે. તે સૂત્રોનો સારાંશ નીચે પ્રમાણે છે સ્કન્ધશાસ્ત્રના જ્ઞાતાનું જે નિર્જીવ શરીર છે તે નોઆગમની અપેક્ષાએ જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપ છે, તથા જે જીવ ગૃહીત શરીર દ્વારા ભવિષ્યમાં સ્કન્ધશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા બનવાનો છે, તેના શરીરને નોઆગમ અવ્યશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપ સમજવું.

હવે આ બનેથી વ્યતિરિક્ત (લિપ્ત) જે દ્રવ્યસ્કન્ધ છે, તેનું સ્વરૂપ સમજાવ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૪૮ સચિત્તરૂપં પ્રથમભેદનિરૂપણમ્

૨૧૯

તત્ર સચિત્તરૂપં પ્રથમં ભેદં પ્રરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે ? સચિત્ત દઽવ્વસ્થધે અણેગ-
વિહે પળ્ણત્તે, તં જહા—હયસ્થધે ગયસ્થધે કિન્નરસ્થધે કિંપુરિસ્થધે મહો-
રગસ્થધે ગંધવ્વસ્થધે ઉસમસ્થધે । સે તં સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે ॥સૂ. ૪૮॥

છાયા—અથ કોઽસૌ સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધોઽનેકવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ,
તત્થા—હયસ્કન્ધો ગજસ્કન્ધઃ કિન્નરસ્કન્ધઃ કિમ્પુરુષસ્કન્ધો મહોરગસ્કન્ધો ગન્ધર્વ-
સ્કન્ધઃ વૃષભસ્કન્ધઃ । સ એવ સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥સૂ. ૪૮॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ कोऽसौ सचित्तो
द्रव्यस्कन्धः ? इति । उत्तरमाह—‘सचित्ते दव्वस्वधे’ इत्यादि । चित्तं चेतना-
संज्ञानमुपयोगोऽवधानं मनोविज्ञानमिति पर्यायाः, चित्तेन सह वर्तते सचित्तं,
द्रव्यस्कन्धः अनेकविधः=व्यक्तिभेदात् अनेकप्रकारकः प्रज्ञप्तः, तदथा—हयस्कन्धः
हयः=अश्वः, स एव विशिष्टैकपरिणामपरिणतत्वात् स्कन्धो हयस्कन्धः, एवं
गजस्कन्धः, किन्नरादयो गन्धर्वान्ताः व्यन्तरविशेषाः । वृषभस्कन्धः—वृषभः—

સીંછેગા વહ મવ્યશરીર દ્રવ્યસ્કંધ હૈ ।—અવ્વ એવે તેના નીચે પ્રથમ ભેદ કહ્યા છે (૧) સચિત્ત, (૨) અચિત્ત
હૈ વહ સચિત્ત, અચિત્ત ઓર મિત્ર કે ભેદ સે ૩ ત્રીન પ્રકાર કાહે ॥સૂત્ર ૪૭॥

અવ્વ સૂત્રકાર સચિત્ત રૂપ પ્રથમ ભેદ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે” इत्यादि । ॥ સૂત્ર ૪૮ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે) હે મદન્ત ! પૂર્વપ્રકાન્ત
(પ્રારંભ ક્રિયા હુઆ) સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તરઃ—(સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે અણેગવિહે પળ્ણત્તે) સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ
અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે—(હયસ્થધે, ગયસ્થધે કિન્નર-

વવામાં આવે છે તેના નીચે પ્રથમ ભેદ ત્રણ લેઈ કહ્યા છે (૧) સચિત્ત, (૨) અચિત્ત
અને (૩) મિત્ર. ॥ સૂ. ૪૭ ॥

હવે સૂત્રકાર સચિત્ત રૂપ પહેલા ભેદની પ્રરૂપણા કરે છે.

“સે કિં તં સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે” इत्यादि—

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે)

શિષ્ય ગુરુ મહારાજને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે મદન્ત ! મોઆજમ સાથા
શરીર અને ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કંધના પ્રથમ ભેદ રૂપ સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ
કેવું રૂપ રૂપ કહ્યું છે.

જીતર—(સચિત્તે દઽવ્વસ્થધે અણેગવિહે પળ્ણત્તે) સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ ના
પ્રકારનો કહ્યો છે. (તં જહા) જેમ કે (હયસ્થધે, ગયસ્થધે, કિન્નરસ્થધે, કિંપુરિસ્થધે)

૨૬૬

અનુયોગદ્વારચર

બુદ્ધિવર્દઃ સ એવ સ્કન્ધઃ વૃષભસ્કન્ધઃ । જીવાનાં શરીરૈઃ સહ કથંચિદભેદે સત્યપિ સચિત્તસ્કન્ધાધિકારાત્ જીવાનામેવ ચ પરમાર્થતઃ સચેતનત્વાદિહ હયાદિસમ્બન્ધિનો જીવા એવ વિવક્ષિતા નતુ તદધિષ્ઠિતશરીરાણીતિ બોધ્યમ્ । નતુ જીવાનાં સ્કન્ધ-ત્વં નોપપદ્યતે, પુદ્ગલપ્રચયસ્યૈવ સ્કન્ધત્વાદિતિ ચેન, જીવાનાં પ્રત્યેકમસંસ્થાયે-

સ્થાને, કિંપુરિસસ્થાને, મહોરગસ્થાને, ગંધવ્વસ્થાને, ઉસભસ્થાને) હયસ્કંધ, ગજ-સ્કંધ, કિન્નરસ્કંધ, કિંપુરુષ સ્કંધ, મહોરગસ્કંધ, ગંધર્વસ્કંધ, વૃષભસ્કંધ । ચેતના, સંજ્ઞાન, ઉપયોગ, અવધાન, મન ઓર વિજ્ઞાન યે સર્વ ચિત્ત કે પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ ।

હસ ચિત્ત સે જો યુક્ત હોતા હૈ, ઉસકા નામ સચિત્ત હૈ । યહ સચિત્ત સ્કંધ વ્યક્તિભેદ કી અપેક્ષા અનેક પ્રકાર કા હૈ । હય નામ અશ્વ ષોઢા-કા યહ પુદ્ગલ પરમાણુઓં કી એક વિશિષ્ટ પર્યાય હૈ । અતઃ યહ સ્કંધ રૂપ હૈ । હસી તરહ સે ગજાદિ સ્કંધોં કે વિષય મેં મિ જાનના ચાહિયે । કિન્નર સે લેકર ગંધર્વ તક કે સ્કંધ વ્યન્તરદેવ કે ભેદ હે । વૃષભ નામ બેલ કા હૈ જીવોં કા ગૃહીત શરીર કે સાથ કથંચિત્ અભેદ હૈ તો મ્હી સચિત્તસ્કંધ કા અધિકાર હોને સે યહાં ઉન ૨ પર્યાયોં મેં રહે હુએ જીવોં મેં હી પરમાર્થતઃ સચેતનતા હોને કે કારણ વે હયાદિ સંબન્ધી જીવ હી વિવક્ષિત હુએ હૈ । તદધિષ્ઠિત શરીર નહીં ।

શંકાઃ-યહાં આપ જીવોં મેં સ્કન્ધતા કા કથન કર રહે હૈ-સો યહ

સ્થાને, મહોરગસ્થાને, ગંધવ્વસ્થાને, ઉસભસ્થાને,) હયસ્કન્ધ, ગજસ્કન્ધ, કિન્નરસ્કન્ધ, કિંપુરુષસ્કન્ધ, મહોરગસ્કન્ધ, ગંધર્વસ્કન્ધ, અને વૃષભસ્કન્ધ.

ચેતના, સંજ્ઞાન, ઉપયોગ, અવધાન, મન, અને વિજ્ઞાન આ બધા ચિત્તના પર્યાયવાચી શબ્દો છે. આ ચિત્તથી જે યુક્ત હોય છે તેને સચિત્ત કહે છે. આ સચિત્તસ્કન્ધ વ્યક્તિભેદની અપેક્ષાએ અનેક પ્રકારના છે. હય એટલે ઘોડો તે પુદ્ગલ પરમાણુઓની એક વિશિષ્ટ પર્યાય રૂપ છે. તેથી તે સ્કન્ધરૂપ છે. એજ પ્રમાણે ગજાદિ સ્કન્ધાના વિષયમાં સમજવું.

કિન્નરથી લઇને વ્યન્તર પર્યાયના સ્કન્ધો વ્યન્તર દેવોના ભેદરૂપ છે. વૃષભ એટલે બળદ. જીવોનો ગૃહીત શરીરની સાથે અમુક રૂપે અભેદ છે, છતાં પણ સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધને અધિકાર આલતો હોવાથી અહીં તે તે પર્યાયામાં રહેલા જીવોમાં જે પરમાર્થઃ (સ્વભાવતઃ) સચેતનતા હોવાને લીધે તે હયાદિ સંબન્ધી જીવો જ વિવક્ષિત થયા છે તેમાં અધિષ્ઠિત (તદધિષ્ઠિત) શરીરની વિવક્ષા અહીં થઈ નથી.

શંકા-આપ અહીં જીવોમાં જે સ્કન્ધતાનું પ્રતિપાદન કરતું કથન કરી રહ્યા

અનુયોગચરિત્રકા ટીકા સુત્ર ૪૮ સચિત્તરૂપં પ્રથમભેદનિરૂપણમ્

૨૨૧

પ્રદેશાત્મકત્વેન તેષાં સ્કન્ધત્વસ્ય સુપ્રતીતત્વાત્ । નનુ હ્યસ્કન્ધાદીનામન્યતરેણ
કૈનાપ્યુદાહરણેન સિદ્ધં કિમેતૈર્વહુમિરુદાહરણૈરિતિચેત્ । ઉચ્યતે—આત્માઽદ્વૈતવાદ—
નિરાકર્તું મિશ્નસ્વરૂપવિજાતીયસ્કન્ધવહુન્માશ્રિત્ય ઉદાહરણં પ્રદર્શિતમ્ । અ-
તવાદાદ્વીકારે સિદ્ધસંસારિવ્યવહારોચ્છેદપ્રસંગાત્ । પ્રકૃત્યુપસંહરન્નાહ-સ એષ
સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધ इति ॥૪૮॥

કથન જચતા નહીં છે । ક્યોંકિ જો પુદ્ગલ પ્રચયરૂપ હોય છે તેમાં હી સ્કન્ધતા ઘટિત હોતી છે । જીવ મેં નહીં ક્યોંકિ યહ પુદ્ગલ પ્રચયરૂપ નહીં હૈ ।—

ઉત્તર:—ઠીક હૈ પરન્તુ યહ એકાન્તિક વાત નહીં હૈ, કિ પુદ્ગલપ્રચય મેં હી સ્કન્ધતા ઘટિત હોતી હૈ । હરેક જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈ । ઇસ અપેક્ષા ઉનમેં સ્કન્ધતા સુપ્રતીત હૈ । અતઃ પુદ્ગલપ્રચય રૂપ નહીં હોને પરમી અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મકતા રૂપ પ્રચયવાલા હોને સે જીવ મેં સ્કન્ધતા સુઘટિત હૈ ।

શંકા:—સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધકી સિદ્ધિ હ્યસ્કન્ધ આદિ મેં સે નિસી એક મી ઉદાહરણ સે જબ હો જાતી હૈ । તબ ફિર ઇન અનેક ઉદાહરણોં કો ઘઠાં પ્રકટ કરને કી કયા આવશ્યકતા હુઈ ? ઉત્તર:— આત્મા દ્વૈતવાદ કો નિરાકરણ કરને કે લિયે મિન્ન ૨ સ્વરૂપવાલે વિજાતીય સ્કન્ધોં કી અનેકતા લેકર સૂત્રકારને ઇન ઉદાહરણોં કો દિખલાયા હૈ ।

યદિ કેવલ અદ્વૈતવાદ કો અંગીકાર કિયા જાવે તો સિદ્ધ ઔર સંસારી

તે કથન ઉચિત્ત લાગતું નથી, કારણ કે જે પુદ્ગલપ્રચય રૂપ હોય તેમાં જ સ્કન્ધતા ઘટાવી શકાય છે જીવમાં સ્કન્ધતા ઘટાવી શકાતી નથી કારણ કે તે પુદ્ગલપ્રચય રૂપ નથી.

ઉત્તર “પુદ્ગલપ્રચયમાં જ સ્કન્ધતા ઘટિત થાય છે, એવી કોઈ એકાન્તિક વાત જ અહીં પ્રતિપાદિત થઈ નથી. પ્રત્યેક જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશયુક્ત હોય છે. તે દષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેમાં સ્કન્ધતા સુપ્રતીત થાય છે. તેથી પુદ્ગલપ્રચય રૂપ નહીં હોવા છતાં પણ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મકતા રૂપ પ્રચયવાળો હોવાને કારણે જીવમાં સ્કન્ધતા સુઘટિત જ છે ?

શંકા—હ્યસ્કન્ધ આદિ સ્કન્ધોમાંથી કોઈ પણ એક સ્કન્ધના ઉદાહરણ દ્વારા સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધનું પ્રતિપાદન કરી શકાય એમ છે. છતાં અહીં અનેક ઉદાહરણો આપવા પાછળ સૂત્રકારનો શો હેતુ રહેલો છે.

ઉત્તર—આત્માદ્વૈતવાદનું નિરાકરણ કરવાને માટે ભિન્ન ભિન્ન સ્વરૂપવાળા વિજાતીયસ્કન્ધોની અનેકતાની અપેક્ષાએ સૂત્રકારે આ ઉદાહરણો બતાવ્યા છે. જો માત્ર અદ્વૈતવાદનો જ સ્વીકાર કરવામાં આવે, તો સિદ્ધ અને સંસારીનો જે વ્યવહાર છે તેના ઉચ્છેદનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે.

અચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધ નિરૂપયતિ—

મૂલપ્—સે કિં તં અચિત્તે દઢ્વસ્થં ? અચિત્ત દ ધ્વસ્થં અણેગ-
વિહે પળ્ણત્ત, તં જહા—દુપણ્ણસિણ તિપણ્ણસિણ જાવ દસપણ્ણસિણ સં-
લ્લિજ્જપણ્ણસિણ અસંલ્લિજ્જપણ્ણસિણ અણંતપણ્ણસિણ । સે તં અચિત્તે
દઢ્વસ્થં ॥ સૂ૦ ૪૯ ॥

છાયા—અથ કોઽસાવચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? અચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ—અનેક-
વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—દ્વિપ્રદેશિકઃ ત્રિપ્રદેશિકો યાવત્ દશપ્રદેશિકઃ સંખ્યેય
પ્રદેશિકઃ અસંખ્યેયપ્રદેશિકઃ અનન્તપ્રદેશિકઃ । સ ણ્ણઃ અચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ । ૪૯ ।

કા જો વ્યવહાર હૈં ઉસકે ઉચ્છેદ કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોગા । (સે તં સચિત્તે દઢ્વ-
સ્થં) ઇસ પ્રકાર સે યહ સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ હૈં । ॥ સૂત્ર ૪૮ ॥

અબ સૂત્રકાર અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધોં કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં અચિત્તે દઢ્વસ્થં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૪૯ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં અચિત્તે દઢ્વસ્થં) હે ભદ્રન્ત ! અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ
કા કયા સ્વરૂપ હૈં ? (અચિત્તે દઢ્વસ્થં અણેગવિહે પળ્ણત્તે)
ઉત્તર—અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈં ।
(તં જહા) જૈસે—(દુપણ્ણસિણ તિપણ્ણસિણ જાવ દસપણ્ણસિણ સંલ્લેજ્જપણ્ણસિણ અસંલ્લે-
જ્જપણ્ણસિણ અણંતપણ્ણસિણ) દો પ્રદેશવાલા અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ, ત્રીન પ્રદેશવાલા
અચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધ, યાવત્ દશ પ્રદેશવાલા અચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધ, સંખ્યાત પ્રદેશવાલા
અચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધ, અસંખ્યાત પ્રદેશવાલા અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ, ઓર અનન્તપ્રદેશ-

(સે તં દઢ્વસ્થં) આ પ્રકારે સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધના સ્વરૂપનું વર્ણન અહીં
સમાપ્ત થાય છે ॥ સૂ૦ ૪૮ ॥

હવે સૂત્રકાર અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં અચિત્તે દઢ્વસ્થં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં અચિત્તે દઢ્વસ્થં) શિશ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન કરે છે કે
હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રસ્તુત અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અચિત્તે દઢ્વસ્થં અણેગવિહે પળ્ણત્તે) અચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધ અનેક
પ્રકારનો હોય છે. (તં જહા) જેમ કે...

(દુપણ્ણસિણ, તિપણ્ણસિણ જાવ દસપણ્ણસિણ, સંલ્લેજ્જપણ્ણસિણ, અસંલ્લેજ્જપણ્ણ-
સિણ, અણંતપણ્ણસિણ) જે પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ ત્રણ પ્રદેશવાળો અચિત્ત
દ્રવ્યસ્કન્ધ એજ પ્રમાણે ઇસ સુધીના પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ, સંખ્યાત

અનુયોગચન્દ્રિકાટી ૧ ૪૯ અચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધનિરૂપણમ્

૨૨૩

ટીકા—“સે કિ તં” ઇત્યાદિ—

શિષ્ય: પૃચ્છતિ—અથ કોઽસાવચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? ઉત્તરમાહ—અચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ—અનેકવિધેઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથા—દ્વિપ્રદેશિકઃ—પ્રકૃષ્ટઃ પુદ્ગલાસ્તિકાય-દેશઃ પ્રદેશઃ પ્રદેશઃ પરમાણુરિત્યર્થઃ, ઈ પ્રદેશૌ યત્ર સ દ્વિપ્રદેશિકઃ—સ્કન્ધઃ । એવં યાવત્—અનન્તપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ । સ ણ્ણોઽચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥ સૂ. ૪૯ ॥

જાલા અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ । યદ્ “પ્રકૃષ્ટઃ દેશઃ પ્રદેશઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુ-સાર સર્વ સે અલ્પ પરિમાણવાલા પુદ્ગલાસ્તિકાય કા જો દેશ હૈ ઉસકા નામ પ્રદેશ—પરમાણુ—હૈ । સંઘયાત. અસંઘયાત ઔર અન્ત પ્રદેશવાલા પુદ્ગલાસ્તિકાય કા દેશ સ્થાન મૂલરૂપ મૈં પરમાણુ હૈ ।

અનેક પરમાણુઓં કે મેલ સે જ્યાદિ પ્રદેશો સ્કંધ બનતે હૈ । ૧ પુદ્ગલ પરમાણુ મી અસ્તિકાય હસીલિયે હૈ કિ વહ નાના સ્કંધોં કા ઉત્પાદક હૈ—

ભાવાર્થ—યહાં પર સૂત્રકારને અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ કહા હૈ । ઉસમૈં દો પ્રદેશી સ્કંધે સે લેકર અનન્તપ્રદેશી સ્કંધ તક કે જિતને પુદ્ગલસ્કંધ હૈં વે સર્વ અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ મૈં પરિગણિત હુએ હૈં । દો પરમાણુ મિલકર દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ, ત્રીન પરમાણુ મિલકર ત્રીન પ્રદેશી સ્કંધ યાવત્ અનન્ત પરમાણુ મિલકર અનન્ત પ્રદેશી સ્કંધ બનેં હૈં । યે સર્વ અચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ હૈં । ॥ સૂત્ર ૪૯ ॥

પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ, અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ, અને અનંત પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ ‘પ્રકૃષ્ટઃ દેશઃ પ્રદેશઃ’ આ વ્યુત્પત્તિ અનુ-સાર સૌથી અલ્પ પરિમાણવાળો પુદ્ગલાસ્તિકાયનો જે દેશ છે તેનું નામ પ્રદેશ પરમાણુ છે સંખ્યાત. અસંખ્યાત અને અનન્ત પ્રદેશવાળા પુદ્ગલાસ્તિકાયનો દેશ (અંશ) મૂળરૂપે પરમાણુ છે.

અનેક પરમાણુઓના મેળથી (સંયોગથી) દ્વાદશ પ્રદેશી સ્કન્ધ બને છે. એક પુદ્ગલ પરમાણુ પણ વિવિધ સ્કન્ધોનું ઉત્પાદક હોવાને કારણે અસ્તિકાય રૂપજ છે.

ભાવાર્થ—અહીં સૂત્રકારે અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે. જે પ્રદેશી સ્કન્ધથી લઇને અનંત પ્રદેશી સ્કન્ધ પર્યાન્તના જેટલા પુદ્ગલ સ્કન્ધો છે, તે બધાને અહીં અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપે ગણાવવામાં આવ્યાં છે. જે પરમાણુ મળીને દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ, ત્રણ પરમાણુ મળીને ત્રિપ્રદેશી સ્કન્ધ, અને એજ પ્રમાણે ચાર, પાંચ આદિ અનન્ત પર્યાન્તના પરમાણુ મળીને ચાર પ્રદેશી, પાંચ પ્રદેશી આદિ અનન્ત પ્રદેશી પર્યાન્તના સ્કન્ધો બને છે. તે બધાં સ્કન્ધો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધો છે. ॥ સૂ. ૪૯ ॥

અથ મિશ્રદ્રવ્યસ્કન્ધં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં મીસણ દવ્વલ્લંધે ? મીસણ દવ્વલ્લંધે અણેગ-
વિહે પળ્ણત્ત, તં જહા—મેણાણ અગ્ગિમે લ્લંધે, સેણાણ મજ્ઞિમે લ્લંધે,
સેણાણ પચ્છિમે લ્લંધે, સે તં મીસણ દવ્વલ્લંધે ॥સૂ. ૫૦

છાયા—અથ કોઽસૌ મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ—
અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞેતઃ, તથા—સેનાયા અગ્નિમઃસ્કન્ધઃ સેનાયા મધ્યમઃ—સ્કન્ધઃ,
સેનાયાઃ પશ્ચિમઃ સ્કન્ધઃ । સ ઇષ મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥સૂ. ૫૦॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

અથ કોઽસૌ મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? इति शिष्य प्रश्नः । उत्तरमाह—मिश्रकः—
सचेतनाचेतन संकीर्णो मिश्रः, स एव मिश्रकः, एवंविधो द्रव्यस्कन्धः अनेक

અથ સૂત્રકાર મિશ્રદ્રવ્યસ્કન્ધ કા વર્ણન કરતે હૈં,—

“સે કિં તં મીસણ” इत्यादि । ॥ सूत्र ५०॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વલ્લંધે) હે ભદ્રન્ત । મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધ કા
કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વલ્લંધે અણેગવિહે પળ્ણત્ત) મિશ્રદ્રવ્યસ્કન્ધ અનેક પ્રકાર
કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે—(સેણાણ અગ્ગિમેલ્લંધે, સેણાણ મજ્ઞિમેલ્લંધે
સેણાણ પચ્છિમેલ્લંધે, સે તં મીસણ દવ્વલ્લંધે) સેના કા અગ્નિ સ્કન્ધ, સેના
કા મધ્યમસ્કન્ધ, સેના કા પશ્ચિમસ્કન્ધ) ઇસ પ્રકાર સે યહ મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધ હૈ
સચેતન ઓર અચેતન ઇન દોનોં કા મિશ્રણ જહાં હોતા હૈ ઉસકા નામ મિશ્ર

હવે સૂત્રકાર મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં મીસણ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વલ્લંધે) હે ભદ્રન્ત । મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધનું
સ્વરૂપ કેવું છે.

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વલ્લંધે અણેગવિહે પળ્ણત્ત) મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધના અનેક પ્રકાર
કહ્યા છે. (તંજહા) જેમ કે.....

સેણાણ અગ્ગિમે લ્લંધે, સેણાણ મજ્ઞિમે લ્લંધે, સેણાણ પચ્છિમે લ્લંધે, સે તં
મીસણ દવ્વલ્લંધે) (૧) સેનાનો અગ્નિ સ્કન્ધ, (૨) સેનાનો મધ્યમસ્કન્ધ અને (૩)
સેનાનો પશ્ચિમ (અન્તિમ) સ્કન્ધ આ પ્રકારનું આ મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધનું સ્વરૂપ છે.

અમુલ્યોગચન્દ્રિકા ટીકા—સૂ. ૫૦ મિશ્રદ્રવ્યસ્કન્ધનિરૂપણમ્

૩૨૫

પ્રકારકઃ પ્રરૂપિતઃ, તદ્યથા—સેનાયા અગ્નિમઃ રક્ત્ત્વઃ—હસ્ત્યશ્વસ્થપદાતિકવચ્ચક્ષ્ણ-
કુન્તધાનુર્વાણાં દસમુદાયરૂપાસેના તસ્યા અગ્નિમઃ સ્કન્ધઃ=અગ્રભાગો મિશ્રકઃ
સ્કન્ધઃ । તથા—સેનાયા મધ્યમઃ સ્કન્ધઃ પશ્ચિમઃ=પૃષ્ઠવર્તી સ્કન્ધઃ મિશ્રકઃ=સ્કન્ધઃ ।
હસ્ત્યાદયશ્ચાત્ર સચેતનાઃ, કવચાદયશ્ચાચેતનાઃ । इत्थं सचेतनाचेतनवच्चादत्र मिश्र-
कत्वं बोध्यम् । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—स एष मिश्रको द्रव्यस्कन्ध इति सू० ५० ॥

અથ પ્રકારાન્તરેણ જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તં દ્રવ્યસ્કન્ધં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—અહવા જાગયસરીરભવિયસરીરવદ્દરિત્તે દ્રવ્યસ્કન્ધે તિવિહે
પળળત્તે, તં જહા-કસિળસ્કન્ધે, અકસિળસ્કન્ધે અળેગદવિયસ્કન્ધે । સૂ. ૫૧

છાયા—અથવા જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તો દ્રવ્યસ્કન્ધસ્તિવિધઃ
પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્યથા—કૃત્સ્નસ્કન્ધઃ, અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ, અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥ ૫૧ ॥

ટીકા—‘અહવા’ इत्यादि—व्याख्यानिगदमिद्धा ॥ ५१ ॥

है । सेना इन दोनों की संमिश्रणरूप अवस्था है । इसमें हस्ती, अश्व, स्थ, प्यादे, कवच, तलवार, भाला, धनुष, और वाण आदि का संबन्ध रहना है । इनका समुदाय ही तो सेना है इसमें हस्ती आदि सचेतन पदार्थ हैं । इन दोनों का संमिश्रण इसमें रहता है । इसलिये इसे मिश्र द्रव्यस्कन्ध कहा है । सू. ५० ।

અવ દૃસરી તરહ સ્વરકા જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ
કા નિરૂપણ કરતે હૈ—‘અહવા જાગયસરીરભવિયસરીર’ इत्यादि ॥ सूत्र ५१ ॥

શબ્દાર્થ—(અથવા જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ ત્રીન
પ્રકાર કહા ગયા હૈ । (તં જહા) जैसे कृत्स्नस्कन्ध, अकृत्स्नस्कन्ध और अनेक
द्रव्यस्कन्ध । इसकी व्याख्या पहिले जैसी जाननी चाहिये ॥ सूत्र ५१ ॥

સચેતન અને અચેતન, આ બન્નેનું મિશ્રણ બેમાં થયેલું હોય છે તેને મિશ્ર
કહે છે. સેના આ બન્નેના સંમિશ્રણરૂપ અવસ્થાથી સંપન્ન હોય છે. તેમાં હાથી,
ઘોડા સ્થ, પાયદળ, કવચ, તલવાર, ભાલા, ધનુષ અને વાણ આદિ સચિત્ત અચિત્ત
પદાર્થોનો સમૂહાવ રહે છે, તેના સમુદાયને જ સેના કહે છે. તેમાં હાથી, ઘોડા,
સૈનિકો આદિ સચેતન પદાર્થો હોય છે, અને તલવાર, કવચ, ભાલા આદિ અચે-
તન પદાર્થો પણ હોય છે. તેમાં સચેતન અને અચેતન, બન્નેનું સંમિશ્રણ રહે છે.
તે કારણે તેને મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ. ૫૦ ॥

હવે સ્વરકાર જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવા તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્ય-
સ્કન્ધનું નિરૂપણ બીજી રીતે કરે છે—‘અહવા જાગયસરીરભવિયસરીર’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—અથવા જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવા દ્રવ્યસ્કન્ધના
ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) કૃત્સ્નસ્કન્ધ,
અકૃત્સ્નસ્કન્ધ અને અનેક દ્રવ્યસ્કન્ધ તે ત્રણના સ્વરૂપનું નિરૂપણ હવે પછીના સૂત્રોમાં
કરવામાં આવશે. ॥ સૂ. ૫૧ ॥

૨૨૬

અનુયોગદ્વારસુત્રે

તત્રાગ્રભેદં નિરૂપયતિ—

મૂલ્ય—સે કિં તં કસિણસ્કંધે ? કસિણસ્કંધે સે ચેવ હયસ્કંધે, ગયસ્કંધે । સે ત કસિણસ્કંધે સૂ૦ ૫૨

છાયા--અથ કોઽસૌ કૃત્તનસ્કન્ધઃ ? કૃત્તનસ્કન્ધઃ સ એવ હયસ્કન્ધો ગજસ્કન્ધો યાવદ્ વૃષભસ્કન્ધઃ । સ એષ કૃત્તનસ્કન્ધઃ ॥૫૨॥

ટીકા--શિષ્યઃપૃચ્છતિ--‘સે કિં તં’ इत्यादि ।

અથ કોઽસૌ કૃત્તનસ્કન્ધઃ ? ઉત્તરમાહ--કૃત્તનસ્કન્ધઃ--જીવાપેક્ષયા પ્રદેશાનાં પરિપૂર્ણત્વાત્ કૃત્તનઃ પરિપૂર્ણઃ, સ ચાસૌ સ્કન્ધઃ, અયં તુ સ એવ=પૂર્વોક્ત એવ હયસ્કન્ધો--ગજસ્કન્ધો યાવદ્ વૃષભસ્કન્ધો વિજ્ઞેયઃ ।

નનુ--હયસ્કન્ધાદીનામેનાત્રાપિ ઉદાહરણત્વેન નિર્દિષ્ટત્વાત્ સચિત્તસ્કન્ધસ્યૈવ સંજ્ઞાન્તરેણ પ્રકારાન્તરત્વમુક્તમ્, નત્તત્ર જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્ત

‘સે કિં તં કસિણસ્કંધે’ इत्यादि ॥સુત્ર ૫૨॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં કસિણસ્કંધે) હે ભદ્રન્ત કૃત્તનદ્રવ્યસ્કંધકા કયા સ્વરૂપ હૈ ? (કસિણસ્કંધે સે ચેવ હયસ્કંધે ગયસ્કંધે જાવ ઉસભસ્કંધે) ઉત્તર--હયસ્કંધ ગજસ્કંધ સે લેકર વૃષભસ્કંધ તક જો સચિત્તસ્કંધ ૪૮ વે સૂત્ર મેં પ્રકટ કિયા ગયા હૈ--વહી કૃત્તનસ્કન્ધ હૈ । પરિપૂર્ણસ્કંધ કા નામ કૃત્તનસ્કંધ હૈ । સ્કંધ મેં જીવ કી અપેક્ષા પ્રદેશોં કી પરિપૂર્ણતા રહતી હૈ ।

શંકા--સુત્રકારને સ્કંધ મેં મી હયાદિકોં કો હી ઉદાહરણરૂપ સે નિર્દિષ્ટ કિયા હૈ । ઓર સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ મેં મી ઉન્હેં હી ઉદાહરણરૂપ સે કહા હૈ તો સ્કંધને સ્કંધ સે યહી જ્ઞાત હોતા હૈ કિ સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ હી

‘સે કિં તં કસિણસ્કંધે’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ--(સે કિં કસિણસ્કંધે?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! કૃત્તન દ્રવ્યસ્કંધત્વં સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(કસિણસ્કંધે સે ચેવ હયસ્કંધે ગયસ્કંધે જાવ ઉસભસ્કંધે) હયસ્કન્ધ, ગજસ્કન્ધ આદિ વૃષભસ્કન્ધ પર્યન્તના જે સચિત્ત ૪૮માં સૂત્રમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે, એ સચિત્ત સ્કંધો જ કૃત્તન દ્રવ્યસ્કંધ રૂપ છે પરિપૂર્ણ સ્કંધત્વં નામ કૃત્તન સ્કંધ છે. આ સ્કંધમાં જીવની અપેક્ષાએ પ્રદેશોની પરિપૂર્ણતા રહે છે.

શંકા--સુત્રકારે આ કૃત્તનસ્કંધમાં પણ અશ્વ વિગેરેના ઉદાહરણરૂપથી ખતાવેલ છે, અને અચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધમાં પણ તેમને જ ઉદાહરણરૂપે પ્રકટ કર્યા છે. તેમના આ કથનથી એજ વાત બાજુવા મળે છે કે સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધને જ અહીં

अनुयोगचन्द्रिका टीका सू० ५२ कृत्स्नस्कन्धनिरूपणम्

२२७

द्रव्यस्कन्धस्य भेदा तत्त्वम् अतः कृत्स्नस्कन्धत्वादेना पुनरभिधानमनर्थकमिति चे
दुष्कृते-पूर्वं सचित्त-द्रव्यस्कन्धाधिभात् तथाऽसम्भविनोऽपि बुद्ध्या निष्कृष्य
उक्ता, इहतु जीवतदधिष्ठित शरीरावयववलक्षणः समुदायः कृत्स्नस्कन्धत्वेन विव-
क्षित इत्यतोऽभिधेयभेदात् सिद्धं भेदान्तरत्वम् । अस्त्येवं, तथापि हयस्कन्धस्य
कृत्स्नत्वं नोपपद्यते, तदपेक्षया गजस्कन्धस्य बृहत्तरत्वादिति चे मैवम्, असंख्येय
प्रदेशात्मको जीवस्तदधिष्ठिताश्चशरीरावयवा इत्येवं रूपः समुदायो हयादिस्कन्धत्वेन
विवक्षित इति जीवस्यासंख्येयप्रदेशात्मकत्वेन सर्वत्र तुल्यतया गजादि स्कन्ध
स्य बृहत्तरत्वासिद्धेः । प्रकृतमुपसहरन्नाह—‘से तं’ इति । स एष कृत्स्नस्कन्ध इति ॥५२॥

नामान्तर से प्रकारान्तररूप में बहे गये हैं । अतः इस तरह से कृत्स्नस्कन्ध आदि
रूप से—पुनः कथन करना—सचित्त द्रव्य-कन्ध का विवेचन करना ठीक नहीं है ?

उत्तर सचित्तद्रव्यस्कन्ध में हयादि संबन्धी जीवों की ही उनके शरीर से
उन्हें अपनी बुद्धि द्वारा पृथक् निकालकर विवक्षा हुई हैं—उनके शरीर की नहीं
परन्तु इस कृत्स्नस्कन्ध में जीव और जीवाधिष्ठित शरीरावयव इन दोनों रूप जो
समुदाय है उसकी विवक्षा हुई है । इस तरह अभिधेय के भेद से सचित्त
द्रव्यस्कन्ध में और इस कृत्स्नस्कन्ध में परस्पर में भेद है ।

शंका—इस तरह भेद भले रहें—तो भी हय स्कन्ध में कृत्स्नता नहीं
बनती है । क्यों कि हयस्कन्ध की अपेक्षा गजस्कन्ध बहुत बड़ा होता है ।

उत्तर—ऐसा नहीं है क्योंकि हयादिस्कन्धों में असंख्यातप्रदेश जीव और
इस जीव से अधिष्ठित शरीरावयव इन दोनोंरूप समुदाय विवक्षित है—एक

नामान्तर द्वारा (कृत्स्नस्कन्ध रूप अन्य नाम द्वारा) प्रकट करवाया आवेक छे. तो
सचित्त द्रव्यस्कन्धतुं अही द्विती कृत्स्नद्रव्यस्कन्धने नामे विवेचन करवुं ते योग्य
गणाय नहीं.

उत्तर—सचित्त द्रव्यस्कन्धमां अस्वादि संबन्धी जिवोनी ज तेमना शरीरथी
तेमने पोतानी (सुत्रकारनी) बुद्धि द्वारा पृथक् (अलग) करी नाणीने-विवक्षा थछ
छे—तेमनां शरीरनी विवक्षा थछ नहीं. परन्तु आ कृत्स्नस्कन्धमां जव अने जवा-
धिष्ठित शरीरावयव आ जने रूप जे समुदाय छे. तेनी विवक्षा थछ छे. आ रीते
अभिधेयना लेहनी अपेक्षाये सचित्त द्रव्यस्कन्ध अने अः कृत्स्न द्रव्यस्कन्धमां पर-
स्पर लेह छे.

शंका—आ प्रकारने लेह भले होय, छतां पणु हयस्कन्धमां कृत्स्नता घटित
थती थी, कारण के हयस्कन्ध (अथस्कन्ध) करतां गजस्कन्ध धखो मोटो होय छे.

उत्तर—जोवुं कथन योग्य नहीं, कारण के हयादिस्कन्धमां असंख्यात जव
प्रदेशो अने ते जव वडे अधिष्ठित शरीरावयवो जने रूप समुदाय विवक्षित छे.

અથ—અકુત્સ્નાસ્કંધં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં અકસિણસ્વધે ? અકસિણસ્વધે સો ચેવ દુપલ-
સિયાદ્સ્વધે જાવ અણંતપણસિણસ્વધે । સે તં અકસિણસ્વધે । સૂ. ૫૩ ॥

જીવ મેં અસંખ્યાત પ્રદેશ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અસંખ્યાત પ્રદેશરૂપ સે જીવ
કી સર્વત્ર તુલ્યતા હૈ । અતઃ ગજોદસ્કંધો મેં વૃહત્તરતા કી અસિદ્ધિ હૈ ।
(સે તં કસિણસ્વધે) ઇતરહ યહ કુત્સ્નાસ્કંધ કા સ્વરૂપ હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને ઇસ સૂત્ર દ્વારા દુસરી તરહ સે તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કંધ
કે ખેદોં કા કથન ક્રિયા હૈ । ઇન મેં જો કુત્સ્નાસ્કંધ હૈ ઇસ મેં તત્ ? જીવ ઓર
તત્ત્વ જીવાધિષ્ઠિતશરીરાવયવરૂપસમુદાય વિવક્ષિત હુઆ હૈ । ઇસ તરહ હયસ્કંધ
અપને રૂપ સે ગજાદિસ્કંધ અપને રૂપ સે અપને ૨ મેં પૂર્ણ હૈ । ઇસલિયે યે
સ્કંધ કુત્સ્નાસ્કંધ હૈ । આત્મા કો શાસ્ત્રકારોંને અસંખ્યાત પ્રદેશી કહા હૈ ।
યે પ્રદેશ ચાહે હયસ્કંધ હો ચાહે ગજસ્કંધ હો સબ મેં પૂર્ણ રહતે હૈ । યહી
ઇન્કી અપને-અપને સ્કંધ મેં પૂર્ણતા હૈ । સચિત્તદ્રવ્યસ્કંધ મેં તત્ત્વ જીવાધિ-
ષ્ઠિતશરીર વિવક્ષિત નહી હૈ વહાં તો કેવલ ઇસ શરીર મેં વર્તમાન જીવ હી
વિવક્ષિત હૈ । ઇસ પ્રકાર કુત્સ્નાસ્કંધ મેં ઓર—સચિત્તદ્રવ્યસ્કંધ મેં અન્તર જાનના
ચાહિયે । ॥ સૂ. ૫૨ ॥

એક જીવમાં અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે. આ પ્રકારે અસંખ્યાત પ્રદેશીરૂપે જીવની
સર્વત્ર તુલ્યતા (સમાનતા) છે. તેથી ગજાદિ સ્કંધોમાં અશ્વાદિ સ્કંધો કરતાં
અધિકતા સિદ્ધ થતી નથી. (સે તં કસિણસ્વધે) આ પ્રકારનું સ્કંધનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કંધના લેહોતું બીજી
રીતે કથન કર્યું છે. તેમાંથી જે કુત્સ્નાસ્કંધ છે તેમાં તે તે જીવ અને તે તે (હય,
ગજાદિ) જીવાધિષ્ઠિત શરીરાવયવ રૂપ સમુદાય વિવક્ષિત થયો છે. આવી રીતે હય-
સ્કંધ અને ગજાદિ સ્કંધ પોતપોતાને રૂપે પરિપૂર્ણ છે. તેથી તે સ્કંધને કુત્સ્નાસ્કંધ
કહેવામાં આવેલ છે. આત્માને શાસ્ત્રકારોએ અસંખ્યાત પ્રદેશી કહ્યો છે. તે પ્રદેશ
ભલે હયસ્કંધ હોય અથવા ભલે ગજસ્કંધ હોય બધામાં પૂર્ણ રહે છે એજ તેમની
પોતપોતાના સ્કંધમાં પૂર્ણતા છે. સચિત્તદ્રવ્યસ્કંધમાં તે તે (અશ્વ, ગજ આદિ પ્રત્યેક)
જીવાધિષ્ઠિત શરીર વિવક્ષિત થયું નથી, ત્યાં તો કેવળ તે તે શરીરમાં રહેલા જીવની
જ વિવિધતા થઈ છે. આ પ્રકારનું કુત્સ્નાસ્કંધ અને સચિત્તદ્રવ્યસ્કંધ વચ્ચેનું અંતર
(તદ્વ્યતિ) સમજવું. ॥ સૂ. ૫૨ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકાટીકા. ૫૩ અકૃત્સ્નસ્કન્ધનિરૂપણમ્

૨૨૯

છાયા—અય કોઽપૌ અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ? અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ સ એવ દ્વિપ્રદેશિકાદિસ્કન્ધો યાવત્ અનન્તપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ । સ એવ અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ । ૫૩।

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં ત’ इत्यादि—

અથ કોઽસાવકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरमाह—अकृतस्नस्कन्धः—न कृतस्नः—अकृतस्नः, स चासौ स्कन्धश्चेति, अकृतस्नस्कन्धः—य मादन्योऽपि बृहत्तरः स्कन्धोऽस्ति सोऽपरिपूर्णत्वादकृतस्नस्कन्ध इत्यर्थः, स तु स एव पूर्वोक्त द्विप्रदेशिकादि स्कन्धो યાવત્ અનન્તપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ । દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધાસ્ત્રિપ્રદેશિકાપેક્ષ્યાઃકૃત્સ્નઃ, ત્રિપ્રદેશિકચતુઃપ્રદેશિકાપેક્ષ્યાઃકૃત્ ન ઇયુત્તરોત્તરાપેક્ષ્યા

અવ સૂત્રકાર અકૃત્સ્નસ્કન્ધ કા કયન કરતે હૈ—

“સે કિં ત અકસિણસ્કન્ધે ?” इत्यादि । ॥સૂત્ર ૫૩।

શબ્દાર્થ—(સે કિં ત અકસિણસ્કન્ધે સો ચેવ દુપણસિયાઈસ્કન્ધે જાવ અણંતપણસિણ સ્કન્ધે) અકૃત્સ્નસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—કિ જો દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધ સે લેકર અનન્તપ્રદેશિક તક કે સ્કન્ધ હૈ વે સબ અકૃત્સ્નસ્કન્ધ હૈ । જિસ સ્કન્ધ સે ઓર મી કોઈ દૂસરા બહુત વડા સ્કન્ધ હોતા હૈ—વહ અપરિપૂર્ણ હોને કે કારણ અકૃત્સ્નસ્કન્ધ હૈ । એસે અપરિપૂર્ણ યે સબ દ્વિપ્રદેશવાલે સ્કન્ધ સે લેકર અનન્ત પ્રદેશ તક કે સ્કન્ધ હૈ । હનમેં અપરિપૂર્ણ તા હસ પ્રકાર સે હૈ કિ જો ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધ હોતા હૈ વહ ત્રિપ્રદેશિકસ્કન્ધ કી અપેક્ષા ન્યૂન હોને સે અપરિપૂર્ણ હાતા હૈ, ત્રિપ્રદેશિકસ્કન્ધ ચતુઃપ્રદેશિક સ્કન્ધ કી અપેક્ષા ન્યૂન હોને સે અપરિપૂર્ણ હોતા હૈ । હસ તરહ ઉત્તરોત્તર કી

હવે સૂત્રકાર અકૃત્સ્નસ્કન્ધનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં ત અકસિણસ્કન્ધે” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં ત અકસિણસ્કન્ધે ?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ગુરુમહાશય ! અકૃત્સ્ન સ્કન્ધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અકસિણસ્કન્ધે સો ચેવ દુપણસિયાઈસ્કન્ધે જાવ અણંતપણસિણ સ્કન્ધે) અકૃત્સ્નસ્કન્ધનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે જે દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધોથી લઈને અનન્તપ્રદેશિક પર્યાન્તના સ્કન્ધો છે, તે બધાં અકૃત્સ્નસ્કન્ધો છે. જે સ્કન્ધ કરતાં વધારે મોટો કોઈ બીજો સ્કન્ધ હોઈ શકે છે, તે સ્કન્ધ અપરિપૂર્ણ હોવાને કારણે અકૃત્સ્ન સ્કન્ધ ગણાય છે. દ્વિપ્રદેશીથી લઈને અનન્ત પ્રદેશી પર્યાન્તના સમસ્ત સ્કન્ધો આ રીતે અપરિપૂર્ણ જ હોય છે. તેમાં અપરિપૂર્ણતા આ પ્રકારે સમજાવી બોધાયે છે દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ હોય છે તે ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધ કરતાં ન્યૂન હોવાથી અપરિપૂર્ણ હોય છે, ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધ ચતુઃપ્રદેશિક સ્કન્ધ કરતાં ન્યૂન હોવાથી અપરિપૂર્ણ હોય છે. એજ પ્રમાણે ઉત્તરોત્તર સ્કન્ધો કરતાં પ્રત્યેક પૂર્વના (આગળના) સ્કન્ધમાં ન્યૂન-

પૂર્વપૂર્વોક્તસ્તો બોધ્યો યાવત્કૃત્સ્નતા નાયાતિ ! પૂર્વદ્વિપ્રદેશિકાદિઃ સર્વોક્ષ-
પ્રદેશસ્થ સ્કન્ધાઃ સામાન્યેનાચિન્તયા પ્રોક્તઃ, इह तु सर्वोक्तृष्टस्कन्धादधोवर्त्ति एवा-
चित्तस्कन्धा उत्तरोत्तरोत्तरापेक्षया पूर्वपूर्वतरा अकृत्स्नस्कन्धत्वेनोक्ता इयुषोर्भेदः। ૫૩।

અપેક્ષા સે પૂર્વ ૨ કા સ્કન્ધ અકૃત્સ્ન કન્ધ જાનના ચાહિયે । યહ અકૃત્સ્નતા તથતક ચલતી હૈ કિ જબ તક કૃત્સ્નતા નહીં આતી હૈ ।— દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધ ઓર સમસ્ત ઓર સમસ્ત ઉક્ષ પ્રદેશવાલે સ્કન્ધ પહિલે સામાન્ય રૂપ સે અચિત્ત રહે ગયે હૈ । પરંતુ ઇસ અકૃત્સ્ન દ્રવ્ય કન્ધ કે પ્રવર્ણ મેં સર્વો-
ક્ષ કન્ધ સે પહિલે કે હી કન્ધ ઉત્તરોત્તર કી અપેક્ષા સે અકૃત્સ્ન સ્કન્ધ રૂપ સે કહે ગયે હૈ । યહી ઇન દોનોં મેં ભેદ હૈ —

ભાવાર્થ—સૂત્રવારને ઇસ સૂત્રદ્વારા અકૃત્સ્ન સ્કન્ધ કા વરૂપ ઓર અકૃ-
ત્સ્ન સ્કન્ધ મેં તથા અચિત્ત સ્કન્ધ મેં કયા અન્તર હૈ યહ પ્રવટ કિયા હૈ । આપે-
ક્ષિત અચિત્ત સ્કન્ધોં કી અપરિપૂર્ણતા કા નામ અકૃત્સ્નતા હૈ । યહ અકૃત્સ્નતા
દ્વિપ્રદેશી આદિ સ્કન્ધો મેં ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કન્ધોં કી અપેક્ષા આતી હૈ ।
ઓર યહ આપેક્ષિક અકૃત્સ્નતા તથતક માની જાતી હૈ કિ જબતક અન્ત મેં
કૃત્સ્નતા નહીં આ જાતી હૈ । ઇસકે આતે હી અન્ત કા સ્કન્ધ કૃત્સ્ન હોને સે
ફિર આગે કે લિયે અકૃત્સ્નતા કી દ્વારા રુ જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કૃત્સ્નતા

તાની અપેક્ષાએ તેમાં અપરિપૂર્ણતા સમજવી આ અપરિપૂર્ણતાને કારણે જ તેમને
અકૃત્સ્નસ્કન્ધ કહેવામાં આવ્યા છે. આ અકૃત્સ્નતા ત્યાં સુધી થાતુ રહે છે કે જ્યાં
સુધી કૃત્સ્નતા (પરિપૂર્ણતા) આવતી નથી.

દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધ અને સમસ્ત ઉક્ષ પ્રદેશવાળા સ્કન્ધોને પહેલાં
સામાન્યરૂપે અચિત્ત કહેવામાં આવ્યા છે. પરંતુ આ અકૃત્સ્ન દ્રવ્યસ્કન્ધના પ્રકરણમાં
સર્વોક્ષ ક્ષ ક્ષ સ્કન્ધથી આગળના સ્કન્ધોને ઉત્તરોત્તરની અપેક્ષાએ અકૃત્સ્નસ્કન્ધરૂપે
કહેવામાં આવ્યા છે. એટલે જ અચિત્તસ્કન્ધ અને અકૃત્સ્નસ્કન્ધ વચ્ચે તફાવત છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા અકૃત્સ્નસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે,
તથા અકૃત્સ્નસ્કન્ધ અને અચિત્ત સ્કન્ધ વચ્ચે શો તફાવત છે તે પણ પ્રકટ કર્યું
છે. આપેક્ષિક અચિત્તસ્કન્ધોની અપરિપૂર્ણતાનું નામ જ અકૃત્સ્નતા છે. દ્વિપ્રદેશિક
આદિ સ્કન્ધોમાં ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કન્ધો કરતાં અકૃત્સ્નતા (અપરિપૂર્ણતા) રહેલી
હોય છે. આ આપેક્ષિક અકૃત્સ્નતાને સદ્ભાવ રહે છે કે જ્યાં સુધી અન્તે કૃત્સ્ન-
તા (પરિપૂર્ણતા) આવી જતી નથી. આ પ્રકારે જ્યારે કૃત્સ્નતા આવી જાય છે ત્યારે
અન્તિમ સ્કન્ધ (ઉક્ષ પ્રદેશોવાળો સ્કન્ધ) કૃત્સ્ન સ્કન્ધ થઈ જવાને કારણે ત્યારબાદ
અકૃત્સ્નતાની ધારા અટકી જાય છે. આ રીતે કૃત્સ્નસ્કન્ધો કરતાં પહેલાંના સ્કન્ધો

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા ૫૪ દ્રવ્યસ્કન્ધનિરૂપણમ્

૨૩૧

મૂલમ—સે કિં તં અણેગદવિયસ્વધે ? અણેગદવિયસ્વધે—તસ્સ ચેવ દેસે અવચિણ તસ્સ ચેવ દેસે ઉવચિણ, સે તં અણેગદવિયસ્વધે સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવઙ્ગિરિત્ત દઢ્વસ્વધે, સે તં ની આગમઓ દઢ્વસ્વધે, સે તં દઢ્વસ્વધે ॥ સૂ૦ ૫૪ ॥

છાયા—અથ કોઽસૌ અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ—તસ્યૈવ દેશોઽપચિત્તઃ ત યૈવ દેશોઽપચિત્તઃ । સ ઇષઃ અનેકદ્રવ્ય સ્કન્ધઃ સ ઇષ જ્ઞાયકશરીરમન્વશરીરવ્યત્તિ-રિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ, સ ઇષ ને આગમતો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ । સ ઇષ દ્રવ્યસ્કન્ધઃ । ૫૪॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કાઽમૌ અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ અનેક-દ્રવ્યસ્કન્ધઃ—અનેકદ્રવ્યશ્ચાસૌ સ્કન્ધશ્ચેતિ કર્મધારયઃ, સ તુ યદ્વૈપસ્તથોચ્યતે ‘તસ્સ

સે પહિલે ૨ કે સ્કન્ધો મેં પૂર્વ ૨ કી અપેક્ષા કૃત્સ્નતા ઓર ઉત્તર ૨ કી અપેક્ષા અકૃત્સ્નતા સાપેક્ષિક સધ જાતી હૈ । અન્ત કે કૃત્સ્નસ્કન્ધ મેં કૃત્સ્નતા સાપેક્ષિક નહીં હૈ કિન્તુ સ્વાભાવિક હોતી હૈ । અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ મેં દ્વિ-પ્રદેશી આદિ સમસ્ત અચિત્ત સ્કન્ધો મેં સામાન્યરૂપ સે અચિત્તતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ઓર અકૃત્સ્નસ્કન્ધ મેં સર્વોત્કૃષ્ટ સ્કન્ધ સે પહિલે પહિલે કે સ્કન્ધો મેં અપરિપૂર્ણતા । હમ પ્રકાર હન દોનો મેં અન્તર વહા ગયા હૈ ॥ સૂત્ર ૫૩ ॥

અવ સૂત્રકાર અનેક દ્રવ્યસ્કન્ધ કો કહતે હૈ—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ । ॥મૂત્ર ૫૪॥

માં તેમના પૂર્વ પૂર્વાના (આગળ-આગળના) સ્કન્ધોની કરતાં કૃત્સ્નતા અને ઉત્તરોત્તર (પાછળ-પાછળના) સ્કન્ધોની અપેક્ષા અકૃત્સ્નતા સાપેક્ષિક રીતે ઘટિત થઈ જાય છે. અન્તિમ કૃત્સ્નસ્કન્ધમાં કૃત્સ્નતા સાપેક્ષિક હોતી નથી, પણ સ્વાભાવિક હોય છે, કારણ કે તેના કરતાં મોટો કેઈ સ્કન્ધ જ હોતો નથી, પણ તેના કરતાં નાના તેની આગળના સ્કન્ધો હોય છે.

અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધમાં—દ્વિપ્રદેશી આદિ સમસ્ત અચિત્ત સ્કન્ધોમાં સામાન્યરૂપે અચિત્તતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. અને અકૃત્સ્નસ્કન્ધમાં સર્વોત્કૃષ્ટ સ્કન્ધથી આગળના (પહેલાંના) સ્કન્ધોમાં અપરિપૂર્ણતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. આ પ્રકારતું તે અને વચ્ચેનું અન્તર (તફાવત) કહેવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ૦ ૫૩ ॥

હવે સૂત્રકાર અને દ્રવ્યસ્કન્ધોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે.

‘સે કિં તં અણેગદવિયસ્વધે’ ઇત્યાદિ—

ચેવ' इत्यादिना । तस्यैव=स्कन्धस्यैव यो देशः=नखदन्तकेशादिरूपो भागः अपचितः=जीवप्रदेशविहितो भवति, तथा-तस्यैव=स्कन्धस्यैव यो देशः=पृष्ठोदरकरचणादिरूपो भाग उपचितः=जीवप्रदेशव्याप्तो भवति, सोऽनेकद्रव्यस्कन्धो बोध्यः । अयं भावः-तयोर्व्योक्तदेशयोर्विशिष्टैकरिणामपरिणतयो र्यो देहाख्यः समुदायः सोऽनेकद्रव्यस्कन्धः, सचेतनाचेतनानेकद्रव्यात्मकत्वादिति । अयमनेकद्रव्यस्कन्धः सामर्थ्यात्तुरगादिस्कन्ध एव प्रतीयते ।

નનુ તર્હિ કુત્સ્નસ્કન્ધાદસ્ય ચો વિશેષઃ ? इति चे दुच्यते—कृत्स्नस्कन्धस्तु

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉપેરદદિરસ્થં) હે મદત ! અનેક દ્રવ્યસ્કંધ કા વ્યાપ્ત સ્વરૂપ હૈ । (અણેગદવિયસ્થં) ઉત્તર—અનેક દ્રવ્યસ્કંધ વા સ્વરૂપ જૈસા હૈ—વૈસા—હમ કહતે હૈં (તસસ ચેવ દેસે અવચિણ તસસ ચેવ દેસે ઉવચિણ) સ્કંધ કા જો નખ વેશ દન્ત, આદિરૂપ ભાગ હૈ, વહ અપચિત—જીવપ્રદેશોં સે રહિત—હોતા હૈ, તથા ઉસી સ્કંધ કા જો પૃષ્ઠ, ઉદર, કર, ચરણ આદિરૂપ ભાગ હૈ, વહ ઉપચિત—જીવપ્રદેશોં સે વ્યાપ્ત રહતા હૈ (સે તં અણેગદવિયસ્થં) વહ અનેક દ્રવ્યસ્કંધ હૈ । હસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિં હન દોનોં ભાગોં કા કિં જો ઇક વિશિષ્ટ આકાર મેં પરિણત રહતે હૈં. દેહરૂપ સમુદાય અનેક દ્રવ્યસ્કંધ હૈ ।

કયોંકિ યહ સમુદાય સચેતન ઔર અચેતનરૂપ અનેક દ્રવ્યાત્મક હૈ । યહ અનેક દ્રવ્યદ્રુસ્કંધ સામર્થ્ય સે તુરગાદિસ્કંધ—હયાદિસ્કંધ હી પ્રતીત હે તાં । શંકા—જવ યહ અનેક દ્રવ્યસ્કંધ હયાદિસ્કંધરૂપ પ્રતીત હોતા હૈ તો

શબ્દાર્થ (સે કિં તં અણેગદવિયસ્થં ?) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન કરે છે કે હે શુર મહારાજ ! અનેક દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણેગદવિયસ્થં) અનંત દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું કહ્યું છે—(તસસ ચેવ દેસે અવચિણ તસસ ચેવ દેસે ઉવચિણ) સ્કંધનો જે નખ, કેશ, દાંત આદિરૂપ ભાગ હોય છે તે અપચિત—જીવપ્રદેશોમાંથી રહિત—હોય છે, તથા એજ સ્કંધના જે પૃષ્ઠ, ઉદર, હાથ, પગ આદિરૂપ ભાગો છે તેઓ ઉપચિત—જીવપ્રદેશોથી વ્યાપ્ત—રહે છે. (સે તં અણેગદવિયસ્થં) આ પ્રકારનું અનેક દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે તે બન્ને ભાગો (અપચિત અને ઉપચિત ભાગો) કે જે એક વિશિષ્ટ આકારે પરિણત થઈને તેમનો જે દેહરૂપ સમુદાય બને છે તેને અનેકદ્રવ્યસ્કંધ કહેવામાં આવે છે કારણ કે તે સમુદાય સચેતનરૂપ અને અચેતનરૂપ અનેક દ્રવ્યાત્મક હોય છે. આ અનેક દ્રવ્યસ્કંધ તુરગાદિસ્કંધ (અશ્વાદિસ્કંધ) સમાન જ ભાગે છે.

અનુયાગચન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૫૪ અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધનિરૂપણમ્

૨૩૩

જીવપ્રદેશાનુગતો યાવાન્ દેશસ્તાવાનેવ વિવસિતો ન તુ જીવપ્રદેશાવ્યાપ્તનસ્વાદિ સહિતઃ, અત્ર તુ નસ્વાદિ સહિતોઽપિ અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધત્વેન વિવક્ષિતઃ।

નનુ પૂર્વોક્તમિશ્રસ્કન્ધાદસ્ય કો વિશેષઃ ? इति चेदुच्यते—પૂર્વે પ્રથમપૃથ-ગવસ્થિતાનાં સચેતનાનાં હસ્ત્યાદીનામચેતનાનાં કવચાદીનાં ચ સમૂહત્વેન પરિ-કલ્પનયા મિશ્રસ્કન્ધત્વમ્, અત્ર તુ વિશિષ્ટ પરિણામ પરિણતાનાં સચેતનાચેતનદ્રવ્યાણા-મનેકદ્રવ્યસ્કન્ધત્વમ્, इत्यनयोर्विशेषः। મૂલે 'તસ્સ' શબ્દેનાત્ર પ્રકરણસ્વારસ્યાત્ સન્ધમાત્રં વિવક્ષિતમ્। સમ્પ્રતિ પ્રકૃતમુપસંહર્ષુમાહ—'સે તં' इत्यादि। स एषः

ફિર કૃત્સ્નસ્કંધ સે હસમેં અંતર કયા હૈ ?

ઉત્તર—કૃત્સ્નસ્કંધ મેં તો જીવ કે પ્રદેશોં સે વ્યાપ્ત જિતના શરીરાવયવરૂપ દેશ હૈ વહી વિવક્ષિત હુઆ હૈ, જીવપ્રદેશોં સે અવ્યાપ્ત નસ્વાદિ સહિત પ્રદેશ નહીં। પરન્તુ હસ અનેક દ્રવ્યસ્કંધ મેં નસ્વાદિ સહિત મી દેશ અનેકદ્રવ્ય-સ્કંધરૂપ સે વિવક્ષિત હુઆ હૈ।

શંકા—તો ફિર મિશ્રદ્રવ્યસ્કન્ધ સે હસમેં વયા વિશેષતા આઈ ? ઉત્તર—મિશ્રદ્રવ્યસ્કન્ધ મેં પૃથક્ક અને અપૃથક્કરૂપ સે વ્યવસ્થિત હુએ હસ્તી આદિકો કે સમુદાય કો મિશ્રસ્કંધરૂપ સે કહા ગયા હૈ, પરન્તુ હસ અનેક દ્રવ્યસ્કંધ મેં વિશિષ્ટ પરિણામરૂપ સે પરિણત હુએ સચેતન અચેતન દ્રવ્યોં કો અનેક દ્રવ્યસ્કંધરૂપ સે કથિત કિયા ગયા હૈ। યહી હન દોનાં મેં વિશેષતા હૈ। મૂલમેં “તસ્સ” શબ્દ યહાં પર પ્રકરણ ની સ્વરસતા સે સ્કંધ માત્ર વિવક્ષિત હુઆ હૈ। અવ હસ પ્રકરણ કા ઉપસંહાર કરને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈ

શંકા—એ આ અનેક દ્રવ્યસ્કન્ધ હયાદિસ્કંધરૂપ જ પ્રતીત થાય છે, તો તેમાં કૃત્સ્નસ્કન્ધ કરતાં શી વિશિષ્ટતા છે ?

ઉત્તર—કૃત્સ્નસ્કન્ધમાં તો જીવના પ્રદેશોથી વ્યાપ્ત એટલો શરીરાવયવરૂપ દેશ (અંશ—ભાગ) છે; તેની જ વિવક્ષા થઈ છે, જીવપ્રદેશોથી અવ્યાપ્ત નખાદિ સહિત ના પ્રદેશોની વિવક્ષા થઈ નથી. પરન્તુ આ અનેક દ્રવ્યસ્કન્ધમાં તો નખાદિ સહિત જીવપ્રદેશોથી વ્યાપ્ત શરીરાવયવરૂપ દેશની અનેક દ્રવ્યસ્કન્ધરૂપે વિવક્ષા થઈ છે,

શંકા—મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધ કરતાં અનેક દ્રવ્યસ્કન્ધમાં શી વિશિષ્ટતા છે ?

ઉત્તર—મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધમાં પૃથક્ અને અપૃથક્રૂપે વ્યવસ્થિત થયેલા હાથી આદિ સચેતન પદાર્થોના અને કવચ, તલવાર આદિ અચેતન પદાર્થોના સમુદાયને મિશ્રસ્કન્ધરૂપ કહેવામાં આવ્યો છે. પરન્તુ આ અનેક દ્રવ્યસ્કન્ધમાં વિશિષ્ટ પરિણામ રૂપે પરિણત થયેલા સચેતન અચેતન દ્રવ્યોને અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. એટલો જ એ બંને વચ્ચે તફાવત છે. મૂળમાં “તસ્સ” શબ્દ વડે અહીં પ્રકરણની સ્વરસતાની અપેક્ષાએ સ્કંધ માત્ર વિવક્ષિત થયેલ છે. હવે આ પ્રકરણનો

૨૩૪

અનુયોગશાસ્ત્રે

અનેકવિધો દ્રવ્યસ્કન્ધ इति । ज्ञायकशरीरभविष्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धो निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष ज्ञायकशरीरभविष्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्ध इति । नो आगमतो द्रव्यस्कन्धो निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष नोआगमतो द्रव्यस्कन्ध इति । द्रव्यस्कन्धोऽपि निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष द्रव्यस्कन्ध इति ॥ ५४ ॥

अथ भावस्कन्धं निरूपयितुमाह—

इति—से किं तं भावस्वंधे ? भावस्वंधे दुविहे पणत्ते, तं जहा आगमओ य नोआगमओ य ॥ सू० ५५ ॥

જોયા—અથ કોણસૌ ભાવસ્કન્ધઃ ? ભાવસ્કન્ધો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞાતઃ, તદ્વથા આગમઠંથ નોઆગમઠંથ ॥ ૫૫ ॥

कि (से तं अणोदवियस्वंधे) इस प्रकार यह अनेकविध द्रव्य स्कंध है । (से तं जाणयसरीरभविष्यसरीरवहरित्ते दवस्वंधे—से तं नो आगमओ दवस्वंधे, से तं दवस्वंधे) इस प्रकार से ज्ञायकशरीरभविष्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यस्कंधका निरूपण समाप्त हुआ—और इसकी समाप्ति से नोआगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यस्कंध का कथन भी पूर्ण हुआ इसकी पूर्णता से द्रव्यस्कंध निक्षेप का स्वरूप विषयक वर्णन भी पूर्ण हो चुका । ॥सूत्र ५४॥

अब सूत्रकार भावस्कंध का निरूपण करते हैं—

“से किं तं भावस्वंधे” । इत्यादि ॥सूत्र ५५॥

સંદર્ભ—(સે કિં તં ભાવસ્વંધે) હે મદન્ત । ભાવસ્કંધ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉપસંહાર કરવા નિમિત્તે સૂત્રકાર કહે છે કે—(સે તં અણોદવિયસ્વંધે) આ પ્રકારેનું અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધનું સ્વરૂપ છે. (સે તં જાણયસરીર, ભવિષ્યસરીરવહરિત્તે દવસ્વંધે—સે તં નોઆગમઓ દવસ્વંધે, સે તં દવસ્વંધે) આ પ્રકારે જ્ઞાયકશરીર અને ભવિષ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કન્ધનું નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય છે. તેના નિરૂપણની સમાપ્તિ થવાથી નોઆગમદ્રવ્યસ્કન્ધના બધા લેદોના નિરૂપણની પણ અહીં સમાપ્તિ થઈ જાય છે, આ રીતે નોઆગમદ્રવ્યસ્કન્ધનું નિરૂપણ સમાપ્ત થઈ જવાથી દ્રવ્યસ્કન્ધનિક્ષેપના સ્વરૂપ વિષયક કથન પણ અહીં પૂરું થઈ જાય છે. ॥સૂ૦ ૫૪॥

હવે સૂત્રકાર ભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

સે કિં તં ભાવસ્વંધે ?” ઇત્યાદિ—

અર્થ—(ત કિં તં ભાવસ્વંધે ?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે શ્રુતમહારાજ ! ભાવસ્કન્ધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

અનુયોગચન્દ્રિકાટીકા ૫૬ આગમતો ભાવસ્કન્ધનિરૂપણમ્

૨૩૬

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—व्याख्या निगदसिद्धा ॥५५॥

अथ—आगमतो भावस्कन्धमाह—

मूलम्—से किं तं आगमओ भावखंधे ? आगमओ भावखंधे
जाणए उवउत्ते । से तं आगमओ भावखंधे ॥सू० ५६॥

છાયા—અથ કોઽસૌ આગમતો ભાવસ્કન્ધઃ ? આગમતો ભાવસ્કન્ધો જ્ઞાયક
ઉપયુક્તઃ । સ એષ આગમતો ભાવસ્કન્ધઃ ॥૫૬॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा ॥५६॥

उत्तर—(भावखंधे दुविहे पणत्ते) भावस्कंध दो प्रकार का है (तं जहा)
वे प्रकार ये हैं—(आगमओ य नोआगमओ य) एक आगम भावस्कंध और
दूसरा नोआगम भावस्कंध । इसकी व्याख्या आगम भावस्कंध की व्याख्या
जैसी ही जाननी चाहिये । ॥सू० ५५॥

अथ सूत्रकार आगमभावस्कंध का कथन करते हैं—

“से किं तं आगमओ” इत्यादि । ॥ सूत्र ५६ ॥

शब्दार्थ—(સે કિં તં આગમઓ ભાવખંધે ?) હે મદંત ! આગમ કો
આશ્રિત કરકે જાયમાન આગમભાવસ્કંધ કા કથા સ્વરૂપ હૈ ? (આગમઓ ભાવ-
ખંધે જાણે ઉવઉત્તે) ઉત્તર—આગમ નો આશ્રિત કરકે સ્કંધ પદાર્થ કા ઉપયુક્ત
જ્ઞાતા આગમ ભાવસ્કંધ હૈ । (સે તં આગમઓ ભાવખંધે) યહ આગમ કો

उत्तर—(भावखंधे दुविहे पणत्ते) भावस्कंधना ये प्रकार कथा छे. (तं जहा)
ते प्रकारे नीचे प्रमाणे छे—(आगमओ य नोआगमओ य) (१) आगमभावस्कंध
अने (२) नोआगमभावस्कंध भावस्कंधनी व्याख्या भावभावस्थकनी व्याख्या लेवी
व समजवी ॥ सू० ५५ ॥

હવે સૂત્રકાર આગમભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં આગમઓ ભાવખંધે ?” इत्यादि—

शब्दार्थ—(સે કિં તં આગમઓ ભાવખંધે ?) શિષ્ય ગુરુને એવા પ્રશ્ન પૂછે
છે કે ગુરુ મહારાજ ! આગમને આશ્રિત કરીને જાયમાન એવા આગમભાવસ્કન્ધનું
કેવું સ્વરૂપ છે ?

उत्तर (आगमओ भावखंधे जाणए उवउत्ते) आगमने आधारे स्कंधपदार्थना
उपयुक्त (उपयोग परिष्ठाम युक्त) ज्ञाताने आगम भावस्कंध कहे छे. (से तं
आगमओ भावखंधे) आ प्रकारतुं आगमने आश्रित करीने आगमभावस्कंधतुं

અથ નો આગમતો ભાવસ્કન્ધમાહ--

મૂળ—સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્કન્ધે? નોઆગમઓ ભાવ-
સ્કન્ધે ઇંસિં ચેવ સામાઈયમાઈયાણં છળ્હં અજ્ઞયણાણં સમુદય-
સમિહસમાગમેણં આવસ્સયસુયસ્થં ભાવસ્થંતિ લભ્મહિ । સે તં
નોઆગમઓ ભાવસ્થં, સે તં ભાવસ્થં ॥સૂ૦ ૫૭॥

છાયા—અથ કોઝસૌ નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધઃ ? નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધઃ
એતેષામેવ સામાયિકાદીનાં ષણ્ણામધ્યયનાનાં સમુદયસમિતિસમાગમેન આવશ્યક-
શ્રુતસ્કન્ધો ભાવસ્કન્ધ ઇતિ લભ્યતે । સ ઇષ નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધઃ । સ ઇવ
ભાવસ્કન્ધઃ ॥૫૭॥

ટીકા--શિષ્યઃ પૃચ્છતિ--‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ--અથ કોઝસૌ નોઆગમતો
ભાવસ્કન્ધઃ ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ--નો આગમતો ભાવસ્કન્ધ એવં વિજ્ઞેયઃ--એતેષાં=
પ્રસ્તુતાનામેવ સામાયિકાદીનાં ષણ્ણામ્ અધ્યયનાનાં સમુદયસમિતિસમાગમેન-

આશ્રિત કરકે આગમ ભાવસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ હૈ । ઇસકી વ્યાખ્યા આગમભાવા-
વશ્યક પ્રતિપાદક સૂત્ર કી વ્યાખ્યા જૈસી જાનની ચાહિયે । ॥સૂત્ર ૫૫॥

અવ સૂત્રકાર નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ કહતે હૈ--

‘સે કિં તં નોઆગમઓ ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૫૭॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્થં) હે મદન્ત । નોઆગમ સે
ભાવસ્કન્ધ કયા હૈ । (નો આગમઓ ભાવસ્થં) નો આગમ સે ભાવસ્કન્ધ એસા
હૈ--(ઈંસિં ચેવ સામાઈયમાઈયાણં છળ્હં અજ્ઞયણાણં સમુદયસમિહં સમાગમેણં

સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા આગમભાવાવશ્યકત્વં પ્રતિપાદન કરનારા સૂત્રની વ્યાખ્યા
પ્રમાણે જ સમજવી. ॥સૂ૦ ૫૬॥

હવે સૂત્રકાર નોઆગમ ભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે--

‘સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્થં’ ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્થં ?) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન
પૂછે છે કે હે શુર મહારાજ ! નોઆગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવસ્કન્ધ કહ્યો છે
તે નોઆગમભાવસ્કન્ધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(નોઆગમઓ ભાવસ્થં) નોઆગમભાવસ્કન્ધનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે.

(ઈંસિં ચેવ સામાઈયમાઈયાણં છળ્હં અજ્ઞયણાણં સમુદયસમિહં સમા-
ગમેણં અવસ્સયસુયસ્થં ભાવસ્થં તિ લભ્મહિ) ૫૨૨૫૨ પ્રસ્તુત થયેલા સામા-

અનુયોગચત્રિકાટીકા. ૫૭ નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધનિરૂપણમ્

૨૩૭

સમુદયસ્ય=આવશ્યકાદિ ષડધ્યયનસમુદાયસ્ય યા સમિતિઃ=નૈરતર્યેણ મીલનં તત્ત્યાઃ સમાગમઃ=પરસ્પરં સંબદ્ધતયા એકોપયોગસ્તેન નિષ્પન્નો ય આવશ્યક-શ્રુતસ્કન્ધઃ સ ભાવસ્કન્ધ ઇતિ લભ્યતે=ભવતિ । અયં ભાવઃ—પરસ્પરસમ્બદ્ધસામાયિકાદિષડધ્યયનસમૂહનિષ્પન્નઆવશ્યકશ્રુતસ્કન્ધઃ સદોરકમુલવલ્લિકા રજોહરણાદિવ્યાપારલક્ષણક્રિયાયુક્તતયા વિવક્ષિતો નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધઃ । સ્કન્ધપદાર્થ જ્ઞાનસ્વાગમઃ । તદુપયોગો ભાવઃ, ક્રિયા નોઆગમઃ । ક્રિયાલક્ષણસ્ય દેશત્યાનાગમત્વાદ્ નો શબ્દોઽત્ર દેશનિષેધપરો બોદ્યવ્ય ઇતિ । પૃથગ્ભૂતાનામપિ સામાયિકાદિ ષડધ્યયનાનાં સ્કન્ધઃ સ્યાદત્ત ઉક્તમ્—‘સમુદયસમિદ્’ ઇતિ । સમુદયસમિ-

અવસ્સય સુઘર્ષધે ભાવર્ષધે તિલભ્મઃ) આત્મા મેં પરસ્પર પ્રસ્તુત હુએ સામાયિક આદિ છહ અધ્યયનોં કે નિરન્તર સેવન સે જો આત્મા મેં એક ઉપયોગરૂપ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઉસ પરિણામ સે નિષ્પન્ન આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધ-ભાવસ્કન્ધ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ—પરસ્પર મેં સંબદ્ધ હુએ સામાયિક આદિ છહ અધ્યયનોં કે સમૂહ સે નિષ્પન્ન હુઆ આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધ, સદોરકમુલવલ્લિકા રજોહરણ આદિ વ્યાપારરૂપ ક્રિયા સે સહિત જબ વિવક્ષિત હોતા હૈ—તવ વહ નોઆગમસ્કન્ધ હૈ । સ્કન્ધ પદાર્થ કા જ્ઞાન આગમ હૈ । ઓર ઉસ આગમ મેં હુઆ જ્ઞાતા કા ઉપયોગ ભાવ હૈ । તથા રજોહરણ આદિરૂપ જો ક્રિયા હૈ, વહ નોઆગમ હૈ । ઇસ તરહ ક્રિયારૂપ એકદેશ મેં અનાગમતા હોને સે નો શબ્દ યહાં દેશનિષેધ પરક જાનના ચાહિયે । સૂત્રકાર “સમુદયસમિદ્” પદ કા “આવશ્યક આદિ છહ અધ્યયનોં કે સમૂહ કા નિરન્તર મિલના” યહ અર્થ હૈ તથા “સમાગમ” કા ષટ્પ્રદેશીસ્કન્ધ કી તરહ આવશ્યકશ્રુતસ્કન્ધ કા

યિક આદિ છ અધ્યયનોના નિરંતર સેવનથી આત્મામાં જે એક ઉપયોગરૂપ પરિણામ નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન) થાય છે, તે પરિણામથી નિષ્પન્ન (નિષ્પાન્ન) આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધનું નામ ભાવસ્કન્ધ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—પરસ્પરની સાથે સંબદ્ધ થયેલા એવા સામાયિક આદિ છ અધ્યયનોના સમૂહથી નિષ્પન્ન થયેલો આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધ, સદોરક મુહુર્તી રજોહરણ આદિ વ્યાપારરૂપ ક્રિયા સહિત જ્યારે વિવક્ષિત થાય છે, ત્યારે તે નોઆગમભાવસ્કન્ધરૂપ બની જાય છે. સ્કન્ધપદાર્થના જ્ઞાનને આગમરૂપે, તથા તે આગમમાં જ્ઞાતાના ઉપયોગરૂપ પરિણામને ભાવરૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. તથા રજોહરણ આદિરૂપ જે ક્રિયા છે તેને નોઆગમ કહી છે. આ રીતે ક્રિયારૂપ એક દેશમાં અનાગમતા હોવાથી “નો” શબ્દ અહીં દેશનિષેધનું સૂચન કરે છે, એમ સમજવું. આ સૂત્રમાં “સમુદય સમીદ્” આ પદનો “સામાયિક આદિ છ અધ્યયનોનું નિરન્તર મળવું” એવો અર્થ થાય છે, તથા “સમાગમ” આ પદનો “છ પ્રદેશી સ્કન્ધની જેમ આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધનું

તિસ્તુ નૈરન્તર્યત્વસ્થાપિતલોહશલાકાનામિવ પરસ્પરનિરપેક્ષાણામપિ સ્યાદત આહ—
'સમાગમ' इति । पट्टप्रदेशिकस्कन्धवत् एकीभूतोयमावश्यकश्रुतस्कन्धः । प्रकृत-
मुपसंहरन्नाह—सोऽसौ नोआगमतो भावस्कन्धः, इति । भावस्कन्धः सर्वतोऽपि
निरूपित इहि सूचयितुमाह—सोऽसौ भावस्कन्धः, इति ॥सू० ५७

આત્મા મેં એકરૂપ હોના' યહ હૈ । इस तरह सूत्रकारने इस समागमपद से
यह स्पष्ट किया है कि नैरन्तर्यरूप में अवस्थापित लोह शलाकाओं के समान
परस्पर निरपेक्ष सामायिक आदि षड् आवश्यकों की समुदयसमिति नोआगम
से भावस्कंध नहीं है । (से तं नोआगमओ भावस्कंधे) इस तरह यह नो-
आगम से भावस्कंध है । (से तं भावस्कंधे) इस प्रकार भावस्कंध का वर्णन किया ।

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा नोआगम को आश्रित परस्पर भव-
स्कंध का स्वरूप प्रकट किया है । इसमें उन्होंने यह कहा है कि परस्पर
संश्लिष्ट सामायिक आदि छह अध्ययनों के निरन्तर सेवन करने से जो
आत्मा में तल्लीनता होनेरूप उपयोग परिणाम होता है और उस परिणाम
से जो आवश्यकश्रुतस्कंध निष्पन्न होता है उसका नाम भावस्कंध है । यही
भावस्कंध जब सदोक्तमुखश्लिका आदि व्यापाररूप क्रिया से विवक्षित किया
जाता है । तब वह नोआगम भावस्कंध है । स्कंध पदार्थ का ज्ञान आगम
उसमें ज्ञाता का उपयोग भाव और जो रजोहरण आदि द्वारा कि

આત્મામાં એકરૂપ થવું", એવો અર્થ થાય છે. આ રીતે સૂત્રકારે આ સમાગમ
પદના પ્રયોગ દ્વારા એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે નૈરન્તર્ય રૂપે અવસ્થાપિત લોહશલા-
કાઓની (લોહાની સળીઓની) જેમ પરસ્પર નિરપેક્ષ સામાયિક આદિ છ આવશ્ય-
કોની સમુદયસમિતિ નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવસ્કન્ધ નથી. (સે તં નોઆગમજો
ભાવસ્કન્ધે) નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવસ્કન્ધત્વં આ પ્રકારતું સ્વરૂપ છે. (સે તં
ભાવસ્કન્ધે) આ રીતે ભાવસ્કન્ધતા બનને લેદોતું વર્ણન અહીં સમાપ્ત થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા નોઆગમને આશ્રિત કરીને ભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપતું
નિરૂપણ કર્યું છે. તેમાં તેઓએ એ વાત પ્રતિપાદિત કરી છે કે પરસ્પર સંશ્લિષ્ટ
(સંબંધ) સામાયિક આદિ ૬ અધ્યયનોના નિરન્તર સેવનથી આત્મામાં જે તત્લીન
તા થવા રૂપ ઉપયોગ પરિણામ થાય છે અને તે પરિણામથી જે આવશ્યકશ્રુત
સ્કન્ધ નિષ્પન્ન થાય છે, તેનું નામ ભાવસ્કન્ધ છે. એજ ભાવસ્કન્ધને જ્યારે સદો-
ક્ત મુહુર્તી રજોહરણ આદિ વ્યાપારરૂપ ક્રિયાથી વિવક્ષિત કરવામાં આવે છે, ત્યારે
તે નોઆગમભાવસ્કન્ધ કહેવાય છે. સ્કન્ધ પદાર્થના જ્ઞાનતું નામ આગમ છે, તેમાં
જ્ઞાતાના ઉપયોગ પરિણામતું નામ ભાવ છે, અને જે રજોહરણ આદિનંદ થતી ક્રિયા

અનુયોગચત્રિકા ટીકા.સૂ. ૫૮ સ્કન્ધપર્યાયનિરૂપણમ્

૨૩૯

इदानीं स्कन्धस्य पर्यायान् विवक्षुराह—

मूलम्—तस्स णं इमे एगट्ठिया णाणाघोसा णाणावज्जणा
एगट्ठिया नामधेज्जा भवन्ति, तं जहा—गणकाएय निकाए, खंधे वग्गे
तहेव रासी य । पुंजे पिंडे निगरे, संघाए आउलसमूह ॥१॥ से
तं खंधे ॥ सू० ५८ ॥

છ.યા—ત.ય સ્વલુ હમાનિ એકાર્થિકાનિ નાનાઘોષાણિ નાનાવજ્જનાનિ
એકાર્થિકાનિ નામધેયાનિ ભવન્તિ, તથા—ગણઃકાયશ્ચ નિકાયઃ સ્કન્ધો વર્ગસ્તથૈવ
રાશિશ્ચ । પુન્જઃપિન્ડો નિકરઃ સંઘાત આકુલઃ સમૂહઃ ॥૧॥ સ એષ સ્કન્ધઃ ॥૫૮॥

જાનેવાલી પ્રમાર્જના આદિ ક્રિયાएँ हैं वे नोआगम हैं ।
यहां नो शब्द सर्वथा आगमभाव का निषेधक नहीं हैं किन्तु
एकदेश आगम का निषेधक है ? स्कंध पदार्थ का ज्ञान आगम और क्रिया
अनागम नोआगम है । यह नोआगम को लेकर भावस्कंध का स्वरूप है ॥सूत्र ५७॥

अब सूत्रकार स्कंध की पर्यायों का कथन करते हैं—

तस्सणं इमे एगट्ठिया इत्यादि ! ॥सूत्र ५८॥

शब्दार्थ—(तस्स) इस स्कंध के (इमे) ये (णाणाघोसा) उदान आदि
नाना घोषवाले (णाणावज्जणा) ककारआदि अनेक व्यंजनावाले (एगट्ठिया)—
एकार्थिक पर्यायवाची (नामधेज्जा भवन्ति) नाम हैं । (तं जहा) जो इस प्रकार
से हैं—(गणकाए य निकाए खंधे, वग्गे तहेव रासी य पुंजे पिंडे निगरे संघाए
आउलसमूहे ॥१॥ से तं खंधे) गणकाय, निकाय, स्कंध, वर्ग, राशि, पुंज,

આ છે તે નોઆગમ છે. અહીં 'નો' શબ્દ સર્વથા આગમભાવનો નિષેધક નથી,
પરંતુ એક દેશતઃ આગમનો નિષેધક છે. સ્કન્ધ પદાર્થનું જ્ઞાન આગમરૂપ છે અને
ક્રિયા અનાગમ-નોઆગમરૂપ છે. નોઆગમભાવસ્કન્ધનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ. ૫૭॥
હવે સૂત્રકાર સ્કન્ધના પર્યાયવાચી શબ્દોનું કથન કરે છે—

“तस्स णं इमे एगट्ठिया” इत्यादि—

शब्दार्थ—(तस्स) ते स्कन्धना (इमे) आ (णाणा घोसा) उदात्त आदि विविध
घोषवाणां (णाणावज्जणा) ककार आदि अनेक व्यंजनेवाणां (एगट्ठिया) ऐकार्थिक-
पर्यायवाची (नामधेज्जा भवन्ति) नामो कहां છે. (तं जहा) જે નામો નીચે પ્રમાણે છે—
(गणकाए य निकाए खंधे, वग्गे तहेव रासीय पुंजे पिंडे निगरे, संघाए आउल
समूहे ॥१॥ से तं खंधे) गण, काय, निकाय, स्कंध, वर्ग, राशि, पुंज, पिंड,

ટીકા—‘તસ્ય ગં’ इत्यादि—

तस्य=स्कन्धस्य खलु इमानि=वक्ष्यमाणानि एकार्थिकानि नानाधाषाण
नानाव्यञ्जनानि नामधेयानि भवन्ति । तथा-गणः=मल्लादिगणवद् गणः, कायः=
पृथिवीकायादिवत्कायः, निकायः=षट्जीवनिकायवन्निकायः, स्कन्धः=द्विप्रदेशिका
दिस्कन्धवत् स्कन्धः, वर्गः=गोवर्गवद् वर्गः, राशिः=शालिधान्यादिवद्राशिः, पुञ्जः=
विग्रकीर्णपुञ्जीकृतधान्यादिवत् पुञ्जः, पिण्डः=गुडादि पिण्डवत् पिण्डः, हिरण्य-
व्यादिनिकरवद् निकरः, सङ्घातः=महोत्सवादि सम्मिलितजनसङ्घातवत् सङ्घातः,

પિણ્ડ, નિકર, સંઘાત, આકુલ ઓર સમૂહ ! યે જો ગણ સે લેકર સમૂહ તક
કે શ્વદ્દ હૈ, વે ભાવસ્કંધ કે વાચક પર્યાય હૈ । એસા જાનનાં ચાહિયે । એકાર્થિક
આદિ પદોં કી વ્યાસ્યા પહિલે કી તરહ જાનની ચાહિયે । હસ પ્રકાર સે
યહાં તક સ્કંધ કે સ્વરૂપ કા વર્ણન સૂત્રકારને કિયા હૈ ।

જિસ પ્રકાર મલ્લ આદિકોં કા ગણ હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે સ્કંધ
બીં અનેક પરમાણુઓં કા સંશ્લિષ્ટરૂપ એક પરિણામ હોતા હૈ હસલિયે હસ
કા નામ ગણ હૈ । પૃથિવીકાય આદિ કે સમાન યહ સ્કંધ કાય હૈ । ષટ્જીવ
નિકાય કી તરહ યહ સ્કંધ નિકાય હૈ । દ્વિપ્રદેશિક આદિસ્કંધ કેજેસા યહસ્કંધ
હૈ । ગોવર્ગ કી તરહ યહ વર્ગરૂપ હૈ । શાલિધાન્ય આદિ કી તરહ યહ રાશિ-
રૂપ હૈ ।—ફેલાકર હકદે કિયે ગયે ધાન્યાદી કી તરહ યહ પુંજરૂપ હૈ । ગુડ
આદિ કે પિણ્ડ કી તરહ યહ પિંડરૂપ હૈ । ચાંદી આદિ કે સમૂહ કી તરહ

નિકર, સંઘાત, આકુલ અને સમૂહ. આ જે ગણથી લઈને સમૂહ પર્વતના શબ્દો
છે તે ભાવસ્કંધના વાચક છે, એમ સમજવું. એકાર્થિક આદિ પદોની વ્યાખ્યા
આગળ દેહ્યા અનુસાર સમજવી આ પ્રકારે સૂત્રકારે અહીં સુધી સ્કંધના સ્વરૂપ
વર્ણન કર્યું છે. અહીં સ્કંધનું વર્ણન પૂરું થાય છે.

હવે આ ગણ આદિ પદોનો અર્થ સમજાવવામાં આવે છે—

“ગણ”-જેમ મલ્લ આદિનું ગણ હોય છે એમ પ્રમાણે સ્કંધ પણ અનેક
પરમાણુઓના એક સંશ્લિષ્ટ પરિણામરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ ગણ પડ્યું છે.

“કાય”-પૃથ્વીકાય આદિની જેમ આ સ્કંધ કાયરૂપ છે.

“નિકાય”-ષટ્જીવનિકાયની જેમ આ સ્કંધ નિકાયરૂપ છે.

“સ્કંધ”-દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધની જેમ તે સ્કંધરૂપ છે.

“વર્ગ”-ગો વર્ગની જેમ તે સ્કંધરૂપ છે.

“રાશિ” શાલિધાન્ય (ચોખા) આદિની જેમ તે રાશિરૂપ છે.

“પુંજ” એકત્ર કરેલા ધાન્યપુંજની જેમ તે પુંજરૂપ છે.

“પિંડ” ગોળ આદિના પિંડની જેમ તે પિંડરૂપ હોય છે.

અનુયોગચન્દ્રિકાટીકા ૫૯ આવશ્યકસ્ય પદધ્યયનનિરૂપણમ્

૨૪૧

આકુલઃ=રાજગૃહાગ્નજનાકુલવદાકુલઃ, સમૂહઃ=પુરાદિજનસમૂહવત્ સમૂહઃ । એતે ગણાદિ સમૂહાન્તાઃ શબ્દા ભાવસ્કન્ધસ્ય વાચકા બોધ્યાઃ । એવાર્થિકાદિપદાનાં વ્યાખ્યા પૂર્વવદ્ બોધ્યા । સમ્પ્રતિ સ્કન્ધમુપસંહરન્નાહ—સ એષ સ્કન્ધ ઇતિ॥૪૫૮॥
 ઇત્યં સ્કન્ધાધિકાર ઉક્તઃ, સમ્પ્રતિ આવશ્યકસ્ય પદધ્યયનનિરૂપણમ્—

મૂલમ્—આવસ્સગસ્સ ણં ઇમે અત્થાહિગારા ભવંતિ, તં જહા-
 સાવજ્જોગવિરેદં, ઉક્કિત્તણ ગુણવઓ ય પઢિવત્તી ।

સ્વલિયસ્સ નિંદનાવળચિગિચ્છા ગુણધારણા ચેવ । ૧ । ॥સૂ૦ ૫૯॥

છાયા—આવશ્યકસ્ય સ્વલુ ઇમે અર્થાધિકારા ભવન્તિ, તદ્વથા—

સાવજ્ઞયોગવિરતિઃ ઉત્કીર્તનં ગુણવ્રતશ્ચ પ્રતિપત્તિઃ ।

સ્વલિતસ્ય નિંદના વ્રણચિકિત્સા ગુણધારણા ચેવ । સૂ૦ ૫૯॥

યહ નિકરરૂપ હૈ । મહોત્સવ આદિ મેં સમ્મિલિત જનસમુદાય કે સમાન યહ સંઘાતરૂપ હૈ । રાજગૃહ કે આંગન મે હુણ વ્યાસ જનસમૂહરૂપ યહ આકુલ હૈ । પુર આદિ કે જન-સમૂહ કી તાહ યહ સમૂહરૂપ હૈ ॥મૂત્ર ૫૮॥

સ્કન્ધાધિકાર કા કથનકર અબ સૂત્રકાર આવશ્યક કે છહ અધ્યયનોં કા વિવેચન કાતે હૈ—‘આવસ્સગસ્સ’ ઇત્યાદિ । ॥મૂત્ર ૫૯॥

શબ્દાર્થ—હે મદન્ત ! આવશ્યક સંવન્ધી છહ અધ્યયન કૌન ૨ સે હૈ ?

ઇસ પ્રકાર સે પૂછે જાને પર સૂત્રકાર અર્થાધિકાર કો આશ્રિત કરકે ઉન અધ્યયનોં કો કહતે હૈ—(આવસ્સગસ્સ ઇત્યાદિ) (આવસ્સગસ્સ ણં ઇમે

“નિકર” ચાંદી આદિના સમૂહની જેમ તે નિકરરૂપ છે.

“સંઘાત” મહોત્સવ આદિમાં એકત્ર થયેલા જનસમુદાયની જેમ તે સંઘાતરૂપ છે.

“આકુલ” રાજગૃહ આદિના આંગણમાં જગા થયેલા વ્યાસ જનસમૂહની જેમ તે આકુલરૂપ છે.

“સમૂહ” પુર આદિના જનસમૂહની જેમ તે સમૂહરૂપ છે. ॥ સૂ૦ ૫૮ ॥

સ્કન્ધાધિકારણં વર્ણન પૂરું થયું, હવે સૂત્રકાર આવશ્યકતા ૬ અધ્યયનોનું

વિવેચન કરે છે—આવસ્સગસ્સ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે શુરુ મહારાજ ! આવશ્ય-
 કતા કયા કયા છ અધ્યયન છે ?

ઉત્તર—આ પ્રકારના પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે સૂત્રકાર અર્થાધિકારને આશ્રય લઈને તે અધ્યયનો કહે છે—(આવસ્સગસ્સ ણં ઇમે અત્થાહિગારા ભવંતિ) અર્થાધિકારને—

ટીકા—‘આવસગસ્ત ણ’ં’ ઇત્યાદિ—

આવશ્યકસમ્બન્ધીનિ પડવ્યવનાનિ કાનિ? ઇતિ તાન્યર્થાધિકારમાશ્રિયો-
ચ્ચન્તે—આવસગસ્ત’ ઇત્યાદિના । આવશ્યકાય સ્વલુ ઇમે=વક્ષ્યમાણા અર્થાધિ-
વાગાઃ—અર્થેન અધિકારાઃ—અર્થમાશ્રિત્ય પ્રડતાથા ભવન્તિ, તદ્યથા—સાવધયોગ
વિરતિઃ=સામાયિકલક્ષણો પ્રથમેઽધ્યયને પ્રાણાતિપાતાદિ સર્વસાવધયોગવિરતિર-
ર્થાધિકારઃ? ઉત્કીર્તનમ=દ્વિતીયે ચતુર્વિંશતિસ્તવાધ્યયને કર્મક્ષયપ્રધાનકારણ-
ત્વાત્ લબ્ધબોધિવિશુદ્ધિહેતુત્વાત્ પુનર્બોધિલાભફલત્વાત્ સાવધયોગવિરત્યુપદેશ-
કત્વેનોપકારિત્વાચ્ચ તીર્થકૃતાં ગુણોત્કીર્તનરૂપોઽર્થાધિકારઃ ૨ । તૃતીયે વન્દના-
ધ્યયને ગુણવ્રતશ્ચ પ્રતિપત્તિઃ—ગુણાઃ=મૂલોત્તરગુણરૂપા વ્રતપિણ્ડવિશુદ્ધિદાદયો વિદ્યન્તે

અત્યાદિગારા ભવંતિ) આવશ્યક કે જે વક્ષ્યમાણ અર્થાધિકાર-અર્થ કો આશ્રિત
કરકે વ્યથન હૈં । (તં જહા) જો ઇસ પ્રકાર સે હૈં—

(સાવજ્જજોગવિરઈ ઉવિકત્તણં ગુણવઓ ય પડિવત્તી । સ્વલિયસ્સ નિદ્દના
વળતિપિચ્છા ગુણધારણા ચેવ) સામાયિકરૂપ પ્રથમ અધ્યયન મેં, પ્રાણાતિપાત
આદિરૂપ સર્વ સાવધયોગ સે વિરતિ હેના યહ અર્થાધિકાર હૈ । દ્વિતીય ચતુ-
ર્વિંશતિસ્તવરૂપ અધ્યયન મેં કર્મોં કે ક્ષય વરને મેં પ્રધાનકારણ હોને સે લબ્ધ-
બોધિની વિશુદ્ધિ સે હેતુ હોને સે, તથા પુનર્બોધિ કે લાભરૂપ ફલ કી પ્રાપ્તિ
મેં કારણભૂત હોને સે ઓર સાવધયોગ સે વિરતિ કે ઉપદેશક હોને કે કારણ
અત્યંત ઉપકારી હોને સે, તીર્થકરોં કે ગુણોં કા ઉત્કીર્તનરૂપ અર્થાધિકાર
હૈ, તૃતીય વન્દનાધ્યયન મેં મૂલગુણ ઓર ઉત્તર ગુણરૂપ વ્રત, પિણ્ડવિશુદ્ધિ

અર્થને આશ્રિત કરીને આવશ્યકનું નીચે પ્રમાણે કથન છે. (તંજહા) તે છ અધ્યય-
નોમાં આ પ્રકારના અર્થની (વિષયની) પ્રસ્પષ્ટા કરી છે—

(સાવજ્જજોગવિરઈ ઉવિકત્તણગુણવઓ ય પડિવત્તી । સ્વલિયસ્સ નિદ્દ-
નાવળતિપિચ્છા ગુણધારણા ચેવ) સામાયિકરૂપ પહેલા અધ્યયનમાં આદિરૂપ સાવધ-
યોગોની વિરતિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. બીજા ચતુર્વિંશતિસ્તવરૂપ (૨૪
તીર્થકરોના કીર્તનસ્તવનરૂપ) જે અધ્યયન છે તેમાં તીર્થકરોની સ્તુતિ ગુણોના
ઉત્કીર્તનરૂપ અર્થાધિકાર છે તે તીર્થકરોની સ્તુતિ કરવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—
કર્મોના ક્ષય કરવામાં પ્રધાન કારણભૂત હોવાથી, લબ્ધબોધિની વિશુદ્ધિમાં કારણભૂત
હોવાથી અને પુનર્બોધિના લાભરૂપ ફળની પ્રાપ્તિમાં કારણભૂત હોવાથી, સાવધ-
યોગોમાંથી વિરતિના ઉપદેશક હોવાને કારણે અત્યંત ઉપકારી હોવાથી તીર્થકરોના
ગુણોની સ્તુતિ થવી જ જોઈએ. ૨૪ તીર્થકરોના ગુણોના ઉત્કીર્તનરૂપ અર્થથી સંપન્ન
આ બીજું અધ્યયન છે. ત્રીજા વન્દના અધ્યયનમાં ૨૫ ગુણ અને ૬ રગુણરૂપ વ્રત

अनुयोगचन्द्रिकाटीका. ५९. आवश्यकस्य षडध्ययननिरूपणम्

२४३

यस्य स गुणवांस्तस्य प्रतिपत्तिः=वन्दनादिका कर्त्तव्या, -एरूपोऽर्थाधिकारः ।
च शब्दः पुनरर्थे ३। तथा-चतुर्थे प्रतिक्रमणाध्ययने-स्वलितस्य=साधुकृत्यस्वलितस्य निन्दना=निन्दा कर्त्तव्या । अयं भावः-मूलोत्तरगुणेषु प्रमादाचीर्णस्य प्रत्यागतसंवेगस्य जन्तोर्विशुध्यमानाध्यवसायस्य अकार्यमिदं-मित्येवं रूपेण निन्दा-रूपोऽर्थाधिकारः ४। तथा षष्ठ्यमे कार्योत्सर्गाध्ययने-व्रणचिकित्सा-व्रणस्य चिकित्सा=भेषज्यम् । अयं भावः-चारित्ररूपपुरुषस्य योऽयमतिचाररूपो भाव-व्रणस्तस्य दशविधप्रायश्चित्तरूपा चिकित्सा कर्त्तव्येति, एवरूपोऽर्थाधिकारः प्रोच्यते ५। तथा-षष्ठे प्रत्याख्यानाध्ययने-गुणधारणां-गुणानां=मूलोत्तरगुणानां

आदि गुण जिसमें है ऐसे गुणवान् साधुको वन्दना आदि करनेरूप अर्थाधिकार है । चौथे प्रतिक्रमण अध्ययन में साधुकृत्य से स्वलित हुए की निन्दाकारने-अर्थात् अतिचारों की निग्रहणा करने आदिरूप अर्थाधिकार है । इसका भाव यह है कि जो साधु मूलगुणों एवं उत्तरगुणों में प्रमाद पतित हो रहा है, परन्तु बैराग्यभाव उसका नष्ट नहीं हुआ है, और परिणामा में जिसको विशुद्धि बढ़ती रहती है-ऐसे उस साधु को "यह काम करने योग्य नहीं है" इस प्रकार का निन्दारूप अर्थाधिकार है ।—

पाँचवां जो कार्योत्सर्ग नामका अध्ययन है उसमें व्रण (फाड़ा) चिकित्सारूप अर्थाधिकार है तापर्य इसका यह है कि चारित्ररूप पुरुष का जो अतिचाररूप भावव्रण है उसकी दश प्रकार प्रायश्चित्तरूप चिकित्साकरनी चाहिये ऐसा उसमें अर्थाधिकार है । तथा छठा प्रत्याख्यान नाम का जो

पिंड विशुद्धि आदिथी संपन्न होय એવા ગુણવાન્ સાધુને વંદણા આદિ કરવારૂપ અધિકાર છે. એવા પ્રતિક્રમણ અધ્યયનમાં સાધુકૃત્યથી રૂપલિત થયેલાની નિન્દા કરવાનો એટલે કે પોતાના દ્વારા જે આત્મચારોનું સેવન થઈ ગયું હોય તેની નિગ્રહણા આદિ કરવારૂપ અર્થાધિકાર છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જે સાધુ મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોની આરાધના કરવામાં પ્રમાદને કારણે દોષો કરતો હોય છે, પરન્તુ તેનો વૈરાગ્યભાવ નષ્ટ થયો નથી અને જેના પારણાઓમાં વિશુદ્ધિની વૃદ્ધિ જ થતી રહે છે, એવા સાધુ દ્વારા પોતાના દોષની આ પ્રકારે નિન્દા કરાય છે. "આ કામ કરવા યોગ્ય નથી, છતાં પ્રમાદને કારણે મારાથી એવું થઈ ગયું." આ પ્રકારની નિન્દારૂપ અધિકારથી યુક્ત સાધુ અધ્યયન છે. (૫) પાંચમું કાર્યોત્સર્ગ નામનું અધ્યયન છે, તેમાં વ્રણચિકિત્સારૂપ અર્થાધિકારનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. એટલે કે ચારિત્રરૂપ પુરુષનો અતિચારરૂપ જે ભાવવ્રણ છે તેની દસ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્ત રૂપ ધલાને વડે ચિકિત્સા કરવી એમએ, એ વિષયનું તેમાં પ્રતિપાદન કર્યું છે. છઠું પ્રત્યાખ્યાન નામનું અધ્યાય છે. તેમાં મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોને ધારણ કરવા

ધારણા=પ્રતિપત્તિઃ, એવરૂપોઽર્થાધિકારઃ પ્રરૂપયિષ્યતે । મૂલોત્તરગુણાનાં નિરત્તિ ચારં સન્ધારણં યથા ભવાંત તથા પ્રત્યાખ્યાનાધ્યયને પ્રરૂપયિષ્યતે इत्यर्थः । 'ચેવ' इति 'च' शब्दादन्येऽप्यवान्तरार्थाधिकारा विज्ञेयाः । 'एव' शब्दाऽवधारणे बोध्यः ।

અધ્યયન હૈ । उसमें मूलगुण और उत्तरगुणों को धारण करनेरूप अर्थाधिकार है । मूलगुण उत्तरगुणों को अतिचार रहित अच्छी तरह धारण करता है वैसी प्ररूपणा सूत्रकार प्रत्याख्यान अध्ययन में करेंगे । “च” शब्द से सूत्रकारने यह प्रकट किया है कि आवश्यक के और अवान्तर अर्थाधिकार हैं । “एव” शब्द अवधारण अर्थ में आया है ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને इस सूत्रद्वारा आवश्यक के छ अर्थाधिकारों को वर्णन किया है। (१) सामायिक (२) चतुर्विंशतिस्तव, (३) वंदना, (४) प्रतिक्रमण, (५) वायोत्सर्ग और (६) प्रत्याख्यान । इन सर्व सावययोगों से विरक्त होना सामायिक अध्ययन में, चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति करना द्वितीय चतुर्विंशतिस्तव अध्ययन में, गुणवान साधु को वन्दना आदि करना वन्दनाध्ययन में साधुकृत्य से स्वयंनित हुए साधु को अपनी निंदा करना प्रतिक्रमण अध्ययन में, चारित्र में लगे हुए अतिचारों की दशविष प्रायश्चित से शुद्धि करना वायोत्सर्ग अध्ययन में, मूलगुण और उत्तरगुणों को धारण करना प्रत्याख्यान अध्ययन में अर्थाधिकार हैं ।

રૂપ અર્થાધિકાર છે. પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા તે મૂળગુણ અને ઉત્તરગુણોને અતિચાર રહિત સમ્યકરૂપે ધારણ કરે છે, એવી પ્રરૂપણા સૂત્રકાર આગળ જતાં પ્રત્યાખ્યાન અધ્યયનમાં કરશે. ‘ચ’ શબ્દ દ્વારા સૂત્રકારે એ પ્રકટ કર્યું છે કે આવશ્યકતા આ સિવાયના બીજાં પણ અવાન્તર અર્થાધિકાર છે. ‘‘એવ’’ આ પદ અવધારણ અર્થમાં વપરાયું છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા આવશ્યકતા છ અર્થાધિકારોનું વર્ણન કર્યું છે—(૧) સામાયિક (૨) ચતુર્વિંશતિસ્તવ (૨૪ તીર્થંકરોની સ્તુતિ), (૩) વંદના, (૪) પ્રતિક્રમણ, (૫) કાયોત્સર્ગ અને (૬) પ્રત્યાખ્યાન.

પહેલા અધ્યયનમાં સમસ્ત સાવધ યોગોથી વિરક્ત થવાનો, બીજા અધ્યયનમાં ૨૪ તીર્થંકરોની સ્તુતિ કરવાનો, ત્રીજા વંદના અધ્યયનમાં ગુણવાન સાધુને વંદણા આદિ કરવાનો, ચોથા પ્રતિક્રમણ અધ્યયનમાં સાધુકૃત્યથી રજાલિત થયેલા સાધુએ પોતાની નિન્દા કરવાનો, પાંચમાં કાયોત્સર્ગ અધ્યયનમાં ચારિત્રમાં લાગેલા અતિચારોની દસ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્તોથી શુદ્ધિ કરવાનો અને છઠ્ઠા પ્રતિક્રમણ અધ્યયનમાં મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોને ધારણ કરવાનો અર્થાધિકાર છે. આગળ સૂત્રકારે આ પ્રમાણે કથન કર્યું હતું—

अनुयोगचन्द्रिका टीका.सू० ५९ आवश्यकस्य षडध्ययननिरूपणम्

२४६

पूर्वम् 'आवस्ययं निखिविस्सामि, सुयं निखिविस्सामि, खंधं निखिविस्सामि, अज्झयणं निखिविस्सामि' इत्युक्तम् । तत्र-आवश्यकदीनि त्रीणि पदानि निक्षिप्तानि । अध्ययनस्य निक्षेपः सम्प्रति क्रमप्राप्तोऽपि न क्रियते । यतस्तस्य निक्षेपः वक्ष्यमाणनिक्षेपानुयोगद्वारे ओषनिष्पन्ननिक्षेपे करिष्यते।सू०५९।

७।धुनाऽऽवश्यकस्य यद् व्याख्यातं, यच्च व्याख्येयं तदुभयमुपदर्शयन्नाह—

मूलम्—आवस्ययस्स एसो पिण्डत्थो वणिणओ समासेणं ।

एत्तो एक्केकं पुण, अज्झयणं कित्तइस्सामि ॥१॥

तं जहा—सामाइयं, चउवीसत्थओ वन्दणयं पडिक्कमणं काउ-
स्सगो पच्चक्खाणं । तत्थ पढमं अज्झयणं सामाइयं, तस्स णं इमे

पूर्व में आवश्यकं निखिविस्सामि, सुयं निखिविस्सामि, खंधं निखिविस्सामि अज्झयणं निखिविस्सामि" ऐसा सूत्रकारने कहा है। सो इनमें से आवश्यक आदि तीन पद तो सूत्रकार द्वारा निक्षिप्त किये जा चुके । अब अध्ययन का निक्षेप क्रम प्राप्त है—सो क्रम प्राप्त होने पर भी उसका निक्षेप सूत्रकार यहां नहीं कर रहे हैं क्यों कि वक्ष्यमाण निक्षेपानुयोगद्वार में आवनिष्पन्न निक्षेप में वे उसका निक्षेप करेंगे । ॥ सूत्र ५९ ॥

अब सूत्रकार आवश्यक का जो विषय—व्याख्यात हो चुका है तथा आगे जो विषय व्याख्यात हो चुका है यह दिखलाते हैं:—

आवस्ययस्स एसो इत्यादि । ॥ सूत्र ६० ॥

शब्दार्थ—(आवस्ययस्स) आवश्यक इसनाम से प्रसिद्ध शास्त्र का (एसा) यह पूर्वोक्तरूप (पिण्डत्थो) पिण्डार्थ (समासेणं) संक्षेपसे (वणिणओ) कहा है ।

“आवस्ययं निखिविस्सामि, सुयं निखिविस्सामि,
खंधं निखिविस्सामि, अज्झयणं निखिविस्सामि”

आ कथन अनुसार आवश्यक, श्रुत અને સ્કન્ધ આ ત્રણનો નિક્ષેપ તો થઈ ચુક્યો છે હવે અનુક્રમ પ્રમાણે અધ્યયનનો નિક્ષેપ થવો જોઈએ. છતાં પણ સૂત્રકાર અહીં ક્રમ પ્રાપ્ત અધ્યયનનો નિક્ષેપ કરતા નથી, કારણ કે આ વિષયનો નિક્ષેપ અનુ-યોગ દ્વારમાં—ઓષનિષ્પન્ન નિક્ષેપમાં તેઓ તેનો નિક્ષેપ કરશે. ॥ સૂ ૫૯ ॥

હવે સૂત્રકાર આવશ્યકનો જે વિષય વ્યાખ્યાત થઈ ચુક્યો છે અને આગળ જે વિષય વ્યાખ્યાત થવાનો છે, તે બતાવે છે. “આવસ્યયસ્સ એસો” ઇત્યાદિ—

૨૪૬

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

ચત્તારિ અણુઓગદારા ભવંતિ, તં જહા—ઉવક્રમે ૧, નિવ્વેવે ૨, અણુગમે ૩, નણ ૪ ॥૬૦॥

છાયા—આવશ્યકસ્ય એષ પિણ્ડાર્થો વર્ણિતઃ સમાસેન ।

અતઃ એકૈકં પુનરધ્યયનં કીર્ત્તયિષ્યામિ ॥૧॥

તથા—સામાયિકં ચતુર્વિંશતિસ્તવો વન્દનકં પ્રતિક્રમણં કાયોત્સર્ગઃ પ્રત્યાખ્યાનમ્ । તત્ર પ્રથમમધ્યયનં સામાયિકમ્ । તસ્ય ચત્તારિ અણુઓગદારાણિ ભવંતિ, તથા—ઉવક્રમો નિશ્લેષઃ અણુગમો નયઃ ॥૬૦॥

તાત્પર્યે વહેને કા યહ હૈ—ઈસ શાસ્ત્ર કા આવશ્યકશ્રુતસ્કંધ એસા નામ સાર્થક હૈ । અતઃ સાર્થક નામ હોને સે અવશ્ય કરણીય સાવધયોગવિરતિ આદિ કા પ્રતિપાદન સૂત્રકાર આગે કરેગે । (એતો) ઇસલિયે આવશ્યક કા સંક્ષેપ સે સમુદાય અર્થ વર્ણન કરને કે બાદ (પુણ) પુનઃ (એકૈકં અજ્ઞયણં) એક એક અધ્યયન કા (કિત્તઃસ્સામિ) કથન મેં કરૂંગા । (તં જહા) વે અધ્યયન ક્ષણ પ્રકાર સે હૈ—(સામાઈયં ચતુર્વીસત્થઓવન્દણયં પટિકક્રમણં, કાઉસગ્ગો પચ્ચક્કાણં) ૧ સામાયિક, ૨ ચતુર્વિંશતિસ્તવ, ૩ વન્દનક, ૪ પ્રતિક્રમણ ૫ કાયોત્સર્ગ ૬, પ્રત્યાખ્યાન । (તત્થ પદમં અજ્ઞયણં સામાઈયં) ઇન ૬ અધ્યયનો મેં સે ૧ પહેલા અધ્યયન સામાયિક હૈ । સમઃ આયઃ—સમાયઃ સમાયઃ પ્રયોજનમસ્યેતિ સામાયિકમ્ ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર રાગદ્રેષ સે રહિત એસા આત્મા કા—

શબ્દાર્થ—(આવશ્યસયસ્સ) આવશ્યક આ નામે પ્રસન્નિ એવા શાસ્ત્રનો (એતો) આ પૂર્વોક્ત પ્રકારનો (પિંડત્યો) પિંડાર્થ (સમાસેન) સંક્ષિપ્તમાં (વર્ણિતો) કહેવામાં આવ્યો છે. આ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—આ શાસ્ત્રનું આવશ્યક શ્રુત સ્કંધ એવું નામ સાર્થક છે. આ રીતે આ શાસ્ત્રનું નામ સાર્થક હોવાથી, અવશ્ય કરણીય સાવધયોગ વિરતિ આદિનું પ્રતિપાદન સૂત્રકાર આગળ કરવાના છે. (એતો) તેથી આવશ્યકના સમુદાય અર્થનું સંક્ષિપ્તમાં વર્ણન કરીને (પુણ) હવે (એકૈકં અજ્ઞયણં) એક એક અધ્યયનનું (કિત્તઃસ્સામિ) વર્ણન હું કરીશ, એવું સૂત્રકાર વચન આપે છે. (તંજહા) આવશ્યકના તે અધ્યયનોનાં નામ આ પ્રમાણે છે (સામાઈયં, ચતુર્વીસત્થઓ વન્દણયં પટિકક્રમણં, કાઉસગ્ગો પચ્ચક્કાણં) (૧) સામાયિક, (૨) ચતુર્વિંશતિસ્તવ (૨૪ તીર્થકરોની રતુતિ). (૩) વન્દનક, (૪) પ્રાતક્રમણ, (૫) કાયોત્સર્ગ અને (૬) પ્રત્યાખ્યાન. (તત્થ પદમં અજ્ઞયણં સામાઈયં) આ છ અધ્યયનોમાં પહેલું સામાયિક નામનું અધ્યયન છે. જેના દ્વારા યોધ આદિકોના અધિક અધિક પ્રાપ્તિ થતી રહે તેનું નામ અધ્યયન છે. “સમઃ આયઃ=સમાયઃ સમાયઃ પ્રયોજનમસ્યેતિ

મુખ્યમંત્રિકા ટીકાસૂત્ર ૬૦ આવસ્યકસ્ય વશસ્થાનં વશસ્થેયસ્ય ચ નિરૂપણમ્ ૨૪૭

ટીકા—‘આવસ્યસ્ય’ इत्यादि—

आवश्यकस्य=आवश्यकेति नाम्ना प्रसिद्धस्य शास्त्रस्य एव=पूर्वोक्तरूपः
पिण्डार्थः=समुदायार्थः समासेन=संक्षेपेण वर्णितः=वर्णितः । अस्य शास्त्रस्यावश्यक
श्रुतस्कन्ध इति-अवर्थनाम । नाम्नोऽन्वर्थत्वात् अवश्यं करणीयं सावद्ययोगविर-
त्यादिकं प्रतिपादयिते, इति-अभिप्रायः । उत्तरार्धं गाथाऽर्थमाह-अतः=आव-
श्यकस्य संक्षेपेण समुदायार्थं वर्णनानन्तरं पुनः=भूयः एकैकम् अध्ययनं कीर्त्त-
यिष्यामि=कथयिष्यामीति ।

एकैकमध्ययनं कीर्त्तयिष्यामीति प्रतिज्ञानुसारेण तन्निरूपयितुमाह—
‘त जहा’ इत्यादि । तद्यथा-सामायिकं चतुर्विंशतिस्तथो वन्दनकं प्रतिक्रमणं
कायोत्सर्गः प्रत्याख्यानम् । तत्र-तेषु षट्सु अध्ययनेषु प्रथमम्=आद्यम् अध्ययनम्-
अधि-अधिकम् अयनं=प्रापणं बोधादेर्येन तदध्ययनम्, सामायिकम्-समः=सम-
द्वेषवियुक्तः स्वात्मवत्सर्वभूतेषु दृष्टिसम्पन्नरतस्य आयः=प्रतिक्षणं ज्ञानादि-गुणोत्क-

સમવાચરૂપ પરિણામ તિ જો સર્વભૂતોં મેં સ્વા-મવત્ દ્રષ્ટે સે સંપન્ન હોતાહૈ
ઉસકા નામ સમ હૈ । ઇસ સમ કી જો આય પ્રાપ્તિ હૈ-જ્ઞાનાદિગુણોત્કર્ષ કે
સાથ લાભ હૈ-ઉસકા નામ સમાય હૈ । યહ સમ પ્રતિક્ષણ અપૂર્વ ભવાટવી મેં
ભ્રમણ કરાને કે કારણભૂત સંકલેશ ભાવ કે વિચ્છેદક ઔર નિરૂપમ સુખ કે
હેતુ એસે જ્ઞાન, દર્શન ઔર ચારિત્રરૂપ પર્યાયોં સે જો સંયુક્ત હો જાતા હૈ
ઉસકા નામ સમાય હૈ યહ સમાયશ્બ્દ વા નિષ્કર્ષાર્થિ હૈ । યહ સમાયહી
જિસ જ્ઞાન ક્રિયારૂપ અધ્યયન કા પ્રયોજન હૈ ઉસકા નામ સામાયિક હૈ । અથવા
સમાય એવ સામાયિકમ્” સમાય હી સામાયિક હૈ । ઇસકા જો સર્વસે પહિલે
કથન કિયા હૈ-ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ યહ સામાયિક સમસ્ત ચારિત્રાદિ
ગુણોં વા આધાર હોને કે કાળ મુક્તિ કા પ્રધાન હેતુ હૈ । વહા હૈ-જૈસે સર્વ

સામાયિકમ્” આ વ્યુત્પત્તિ રાશદ્વેષથી રહિત એવા આત્માનું સમભાવરૂપ પરિણામ
કે જે સર્વભૂતોમાં સ્વાત્મવત્ દ્રષ્ટિથી સંપન્ન હોય છે, તેનું નામ ‘સમ’ છે. તે
સમની જે આય (પ્રાપ્તિ) છે-જ્ઞાનાદિ ગુણોત્કર્ષ રૂપ જે લાભ છે, તેનું નામ સમાય
છે પ્રતિક્ષણ અપૂર્વ ભવાટવીમાં ભ્રમણ કરાવવાને કારણભૂત સંકલેશ ભાવના વિચ્છેદક
અને અનુપમ સુખના હેતુ એવાં જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રરૂપ પર્યાયોં જે સંયુ-
ક્ત (સંપન્ન) થઈ બંધ છે તેનું નામ સમાય છે. આ પ્રકારનો ‘સમાય’ પદનો
નિષ્કર્ષાર્થ થાય છે. આ સમાય જ જે જ્ઞાન ક્રિયારૂપ અધ્યયનનું પ્રયાજન છે,
તેનું નામ સામાયિક છે. અથવા-“સમાય એવ સામાયિકમ્” સમાય જ સામાયિકરૂપ
છે આ સામાયિકનું સાથી પ્રથમ કથન કરવાનું કારણ એ છે કે આ સામાયિક
સમસ્ત ચારિત્રાદિ ગુણોના આધારરૂપ હોવાથી મુક્તિપ્રાપ્તિના પ્રધાન કારણરૂપ છે.

પંપ્રાપ્તિ:—સમાય: , સમો હિ પ્રતિષ્ઠનમપૂર્વે: જ્ઞાનદર્શનચરણપર્યાયેર્મવાટવીશ્રમણહેતુ-
સંક્રેશવિચ્છેદકૈર્નિરૂપમસુખહેતુભિઃ સંયુજ્યતે ઇતિ ભાવઃ, સમાયઃ પ્રયોજનમય
જ્ઞાનક્રિયામુદાયરૂપસ્વાધ્યયમસ્યેતિ સામાયિકમ્ । યદ્વા-સમાય એવ સામાયિક-
મ્ । સમસ્તચરણાદિગુણાધારત્વેન પ્રધાનમુક્તિકારણત્વાદસ્ય પ્રથમમુખ્યાસઃ । ઉક્તં ચ
“સામાયિકં ગુણાનામાધારઃ, સ્વમિવ સર્વભાવાનામ્ ।

નહિ સામાયિકા હીનાશ્રયણાદિ ગુણાન્વિતા યેન ॥૧॥

તન્માજ્ઞગાદ ભગવાન્ સામાયિકમેવ નિરૂપમાપાયમ્ ।

શારીરમાનસાનેકદુઃસ્વાનાશસ્ય મોક્ષસ્ય ॥૨॥” ઇતિ ॥

તસ્યૈવંભૂતસ્ય સામાયિકસ્ય સ્વલુ ઇમાનિ વક્ષ્યમાણાનિ ચત્તારિ અનુ-
યોગદ્વારણિ—અનુયોગઃ=અધ્યયનાર્થકથનવિધિસ્તસ્ય દ્વારાણીવ દ્વારાણિ—મહા-
પુરસ્યેવ સામાયિકસ્યાનુયોગાર્થ=વ્યાખ્યાનાર્થ દ્વારાણિ=પ્રવેશમાર્ગા ભવન્તિ ।
મહાનગરદૃશાન્તઃ પૂર્વે સપ્તપચ્ચ ઉપદર્શિતસ્તત એવ વિજ્ઞેયઃ ।

માર્ગોંં કા આધાર આત્મા હોતા હૈંં ઉસી તરહ સમસ્ત ગુણોંં કા આધાર સામાયિક
હૈંં—સામાયિક રહિત પુરુષ ચારિત્રાદિગુણોંં સે યુક્ત નહીંં હો સક્તે હૈંં । ઇસલિયે
ભગવાન્ને શારીરિક માનસિક અનેક દુઃસ્વો કે નાશવાલે મોક્ષ કા નિરૂપમ
ઉપાય સામાયિકકો હી કહા હૈંં । (તસર્ણંં ઇમે ચત્તારિ અણુઓગદારા હવંતિ)
ઉસ સામાયિક કે વે ચાર અનુયોગદ્વાર હૈંં । જિસ પ્રકાર પ્રવેશ કે ચાર પ્રધાન
દ્વાર હોતે હૈંં । ઉસી પ્રકાર પ્રવેશ કે ચાર પ્રધાન દ્વાર હોતે હૈંં । ઉન્હીંં કા
નામ અનુયોગ દ્વાર અધ્યયન કે અર્થ કે વહને કી વિધિ યા નામ અનુયોગ હૈંં ।
મહાનગર કા દૃશાન્ત પ્રથમ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કરને કે પહિલે કહદિયા હૈંં—
અતઃ વહાંં સે ઉસે જાન લેના ચાહિયે ।—

કહ્મુંં છે કે—જેમ સત્તસ્ત ભાવેનો આધાર આત્મા હોય છે, તેમ સમસ્ત શુભોનો
આધાર સામાયિક છે.” સામાયિકરહિત પુરુષ ચારિત્ર આદિ શુભોથી સંપન્ન હોઈ
શક્તિ નથી. તેથી જ ભગવાને શારીરિક અને માનસિક દુઃખોનો નાશકર્તા મોક્ષ
પ્રાપ્તિનો શ્રેષ્ઠ ઉપાય સામાયિક જ કહ્યો છે. (તસર્ણંં ઇમે ચત્તારિ અણુઓગદારા
હવંતિ) તે સામાયિકના આ ચાર અનુયોગ દ્વાર છે જેમ કોઈ મહાનગરમાં પ્રવેશ
કરવાને માટે ચારે દિશામાં ચાર મુખ્ય દરવાજા હોય છે, એજ પ્રમાણે આ મહા-
નગરરૂપ સામાયિકના અનુયોગને (વ્યાખ્યાનને) માટે ચાર દ્વાર કહે છે. અધ્યયનના
અર્થને (વિષયને) કહેવાની વિધિનું નામ અનુયોગ છે મહાનગરના દ્વારોનું દૃશાન્ત
પ્રથમ સૂત્રની વ્યાખ્યા કરતાં, પહેલાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે તેો તે દૃશાન્ત પહેલા
સૂત્રમાંથી વાંચી લેવું જોઈએ.

અનુયોગ ચન્દ્રિકાટી ૧.૫.૬૦ આવક્રમકય વ્યાખ્યાનં વ્યાખ્યેયસ્ય ચ નિરૂપણમ્ ૨૪૧

તાનિ અનુયોગદ્વારાણિ દર્શયતિ—‘તં જહા’ इत्यादि । तद्यथा उपक्रमः-
उपक्रमणम्-उपक्रमः-दूरस्थस्य वस्तुनस्तस्तैः प्रतिपादनप्रकारैः समीपमासीत्
निक्षेपयोग्यताकरणमित्यर्थः । उपक्रान्तं हि उपक्रमान्तर्गतमेदैर्विचारितं स
निक्षिप्यते नाम्न्यथेति भावः । यथा-उपक्रम्यते=निक्षेपयोग्यं क्रियतेऽनेन गुरु-
वाग्योगेनेत्युपक्रमः । अथवा-उपक्रम्यतेऽस्मिन् शिष्यश्रवणभावे सति गुरुष्वेत्युपक्रमः,
किंवा-उपक्रम्यतेऽस्माद् विनीतविनयेविनयादिष्वुपक्रमः । एवं विप्रश्नभेदेन कर्णा-
धिकरणं पादानकारकैर्गुरुवाग्योगादयोऽर्थ उक्ताः । यदि त्वेशोऽप्यन्तरीर्षः
करणादिकारकवाच्यत्वेन विवक्ष्यते तथापि न दोषः ।

(તં જહા) સૂત્રકારે ઉન્હીં અનુયોગદ્વારોં કો કહતે હૈં—(અવક્રમે, નિક્ષેપે,
અણુગમે, નય) ૧ ઉપક્રમ, નિક્ષેપ, અનુગમ, ઓર નય । દૂરસ્થવસ્તુ કો ડન ૨
પ્રતિપાદન પ્રકારોં સે સમીપ મેં લાકરકે નિક્ષેપ કી યોગ્યતાવાલી સ્નાત્ક
હસકા નામ ઉપક્રમ હૈ । ઉપક્રાન્ત વસ્તુ હી ઉપક્રમાન્તર્ગત મેદોં સે વિચારિત
હોતી હુઈ નિશ્ચિત યોગ્ય હોતી હૈ । અન્યથા નહીં । અથવા—જિસ ગુરુ કે વચન
કે વ્યાપાર સે વસ્તુ નિક્ષેપ યોગ્ય કી જાતી હૈં ઉસકા નામ ઉપક્રમ હૈ ।
શિષ્યજનોં કો સુનને કા ભાવ હોને પર વસ્તુ જિસમેં નિક્ષેપયોગ્ય કી જાતી
હૈં ઉસકા નામ ઉપક્રમ હૈ । જિસ વિનીત-વિનયશીલ શિષ્ય કે વિનયાદિ
ગુણોં સે વસ્તુ નિક્ષેપ યોગ્ય કી જાતી હૈં ઉસકા નામ ઉપક્રમ હૈ । ઇસ
પ્રકાર વિવક્ષા કે ભેદ સે ઇન પૂર્વોક્ત કરણ અધિકરણ અપાદાન આદિ ત્રણ
ગુરુવાગ્યોગ આદિ અર્થ ઉપક્રમ કા કોઈ એક ભી અર્થકરણ આદિ દ્વારા
વાચ્યત્વેન વિવક્ષિત હુઆ લિયા જાય તો ભી ડસમેં કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

(તંજહા) તે અનુયોગદ્વારો નીચે પ્રમાણે છે—

(અવક્રમે, નિક્ષેપે, અણુગમે, નય) (૧) ઉપક્રમ, (૨) નિક્ષેપ, (૩) અનુગમ
અને (૪) નય.

દૂરની વસ્તુઓને આ પ્રતિપાદન પ્રકારોની સમીપમાં લાવીને નિક્ષેપને યોગ્ય
બનાવવી તેનું નામ ઉપક્રમ છે. ઉપક્રાન્ત વસ્તુ જ ઉપક્રમાન્ત થતી હોય તો વિચારાતો
વિચારાતો નિક્ષિપયોગ્ય થાય છે—અન્ય પ્રકારે નિક્ષેપયોગ્ય થતી નથી.

અથવા—જે ગુરુના વચનના વ્યાપારથી વસ્તુને નિષ્ક્રિય કરાય છે, તેનું
નામ ઉપક્રમ છે. શિષ્યોને સંભળવાનો ભાવ થાય ત્યારે વસ્તુ તેમાં નિક્ષેપયોગ્ય
કરાય છે તેનું નામ ઉપક્રમ છે. જે વિનીત શિષ્યના વિનયાદિ ગુણોથી વસ્તુને
નિક્ષેપયોગ્ય કરાય છે તેનું નામ ઉપક્રમ છે. આ પ્રમાણે વિવક્ષાના સ્વરૂપો આ
પૂર્વોક્ત કરણ, અધિકરણ, અપાદાન આદિદ્વારા ગુરુવાગ્યોગ આદિ ઉપક્રમના અર્થ
કહેવામાં આવ્યા છે. જે આ બધામાંથી ઉપક્રમના કોઈ એક પણ અર્થકરણ આદિ
દ્વારા જ વત્કરણે જે વિવક્ષિત થયો છે તે હેતુમાં આવે, તે પણ તેમાં કોઈ ભેદ નથી.

નિક્ષેપઃ=નિક્ષેપણં નિક્ષેપઃ-નામસ્થાપનાપિ ભેદઃ શાસ્ત્રાદેર્ન્યસનં વ્યવસ્થાપ-
નમિતિ યાવત્ । નિક્ષિપ્યતેઽનેનાગ્નિન્ અસ્માદિતિ વા નિક્ષેપઃ । શુભવાગ્યોઽગાર્થ
અત્રાપિ પૂજ્યવ્ બોધ્યાઃ ।

અનુગમઃ-અનુગમનમ, અનુગમઃ-૧ પ્રાતુકૂલાર્થકથનમ્ । અનુગમ્યતે-વ્યા-
સ્યાયતે સૂત્રમનેનાગ્નિન્ યામાદેતિ-અનુગમઃ । વાચ્યાર્થવિવક્ષા પૂર્વસ્વ બોધ્યા ।
નયઃ-નયત્વં નયઃ, નીયતે=પરિચ્છિન્નતે નિર્ણયતે વસ્તુસ્વરૂપમ્-અનેનાગ્નિન્
અસ્માદેતિ નયઃ । અનન્તધર્માધ્યાસિતે વસ્તુનિ એકાંશપ્રમાણકો બોધ ઇત્યર્થઃ ।
અયમેવાર્થો ભાવભાધને વરણાદિ સાધને ચાપિ બોધ્યઃ । દ્વદમત્ર બોધ્યમ્-ઉપ-

રચને કા નામ નિક્ષેપ હૈ-નામ સ્થાપના આદિ કે ભેદ સે શાસ્ત્ર આદિ
કા ન્યાસ-વ્યવસ્થાપન કરના હસકા નામ નિક્ષેપ હૈ । જિમકે દ્વારા અથવા
જિમમેં અથવા જિસસે વસ્તુ નિક્ષેપકી જાતી-સમજાઈ જાતી હૈં હસકા નામ નિક્ષેપ
હૈ । શુભવાગ્યોગ આદિ અર્થ યહાં પર મી પહિલે કી તરહ કરણ આદિ સાધનોદ્વારા
કિયે ગયે જાનના ચાહિયે । સૂત્ર કે અનુકૂલ અર્થ કહના હસકા નામ અનુગમ હૈ ।
જિસકે દ્વારોં સૂત્રકા વ્યાખ્યાન કિયા જાવે અથવા જિસમેં સૂત્રકા વ્યાખ્યાન કિયા
જાય અથવા જિસસે સૂત્રકા વ્યાખ્યાન કિયા જાવે હસકા નામ અનુગમ હૈ । યહાં
પર મી કરણાદિકર કોં દ્વારા વાચ્ય અર્થ કી વિવક્ષા પહિલે કી તરહ જાન લેની ચાહિયે
જિસકે દ્વારા, અથવા જિસમેં, અથવા જિસસે વસ્તુ કા સ્વરૂપ જાના જાવે
હસકા નામ નય હૈ । હસકા તાત્પર્ય યહ કિ વસ્તુ મેં અનન્ત ધર્મ હૈ-
હસમેં સે કિસી એક અંશ કા ગ્રહણ કરનેવા જો બોધ હૈ હસકા નામ નય

રાણવું અથવા સ્થાપન કરવું તેનું નામ નિ ૫ છે. એટલે કે નામ, સ્થાપના
આદિના લેહો દ્વારા શાસ્ત્ર ન્યાસ (વ્યવસ્થાપન) કરવો તેનું નામ નિ ૫ છે. જેના
દ્વારા અથવા જેમાં અથવા જેના વડે વસ્તુ નિ ૫ કરાય છે-વસ્તુનું પ્રતિષ્ઠાન
કરાય છે-વસ્તુનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવે છે તેનું નામ નિ ૫ છે. શુભવાગ્યોગ
આદિ અર્થ પશુ અહીં પહેલાંના જેવાંજ કરણ આદિ સાધને દ્વારા કરવામાં આવ્યા
છે, એમ સમજવું. સૂત્રને અનુકૂળ એવો અર્થ કહેવો તે નામ અનુગમ છે.
જેના દ્વારા ત્ર્યું વ્યાખ્યાન કરવામાં આવે, અથવા જેમાં ત્ર્યું વ્યાખ્યાન કર-
વામાં આવે, અથવા જે વડે સૂત્રનું વ્યાખ્યાન કરવામાં આવે, તેનું નામ અનુગમ
છે. અહીં પશુ કરણ આદિ સાધનો દ્વારા વાચ્ય અર્થની વિવક્ષા પહેલાંની જેમજ સમજવી.
જેના દ્વારા અથવા જેનાથી વસ્તુનું સ્વરૂપ જાણવામાં આવે છે તેનું નામ
નય છે. તેનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-વસ્તુમાં અનન્ત ધર્મ છે. તેમાંથી કોઈ
એક અંશનો ગ્રહણ કરનારો જે બોધ હોય છે તેનું નામ નય છે. નયનો આ

अनुयोगचन्द्रिकाटी ॥ सू. ६१ लौकिकमुपक्रमनिरूपणम्

२५१

क्रान्तमेव=निक्षेपयोग्यतामानीतमेव वस्तु निक्षिप्यते, अत आदावुपक्रममभिधाय पश्चाद् निक्षेप उक्तः नामादिभेदेर्निक्षिप्तमेव अनुगमविषयं भवति, अतो निक्षेपानन्तरमनुगम उच्यते । अनुगम्यमानमेव च नयैर्विचार्यते नान्यथोक्तं तदनन्तरं नय उक्तः ॥ सू० ६० ॥

तत्र-उपक्रमो द्विविधः शास्त्रीयो लौकिकश्च । तत्र लौकिकमुपक्रममाह—

मूलम्—से किं तं उवक्रमे? उवक्रमे छविहे पणत्ते, तं जहाणामोवक्रमे ठवणोवक्रमे दव्वोवक्रमे खेतोवक्रमे कालोवक्रमे भावोवक्रमे । नामठवणाओ गयाओ । से किं तं दव्वोवक्रमे? दव्वोवक्रमे दुविहे पणत्ते, तं जहा—आगमओ य नो आगमो य जाव जाणयसरीरभवियसरीर षड्दरित्ते दव्वोवक्रमे तिविहे पणत्ते तं जहा—सच्चित्ते अच्चित्ते मीसए ॥ सू० ६१ ॥

है । नय का यही अर्थ भावसाधन में और करण आदि साधनों में भी जानना चाहिये । यहां इस प्रकार समझना चाहिये उपक्रान्त ही—निक्षेप की योग्यता में आई हुई ही वस्तु निक्षेप होती है, इसलिये सब से पहिले उपक्रम को कह करके पश्चात् सूत्रकारने निक्षेप का पाठ किया है । नाम आदि भेदों से निक्षेप हुई वस्तु ही अनुगम की विषयभूत बनती है—इसलिये निक्षेप के अनन्तर अनुगम कहा है । अनुगम से युक्त हुई ही वस्तु नयों द्वारा विचार कोटि में आती है, अन्यथा नहीं इसलिये अनुगम के बाद नय का पाठ किया है । ॥ सूत्र ६० ॥

अर्थ ७ लावसाधनमां अने करण आदि साधनमां पणु समजये। जेधजे. अही आ प्रमाणे समजयुं जेधजे. उपक्रान्त ७-निक्षेपनी योग्यतामां आवेली वस्तु ७ निक्षिप्त थाय छे, तेथी सूत्रकारे सौथी पडेलीं उपक्रमुं कथन करीने थारणाद निक्षेपनुं कथन कयुं छे.

नाम आदि जेदोथी जेना निक्षेप करवामां आव्यो होय ओवी वस्तु ७ अनुगम करवाने योग्य जने छे. तेथी निक्षेपनुं कथन कयां आद सूत्रकारे अनुगमनुं कथन कयुं छे. अनुगमधी युक्त ओवी वस्तु ७ नये द्वारा विचारणीय जने छे, तेथी अनुगमना स्वप्ननुं कथन कयां आद सूत्रकारे नयना स्वप्ननुं कथन कयुं छे. ॥ सू. ६० ॥

૨૫૨

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

છાયા—અથ કોઽસૌ ઉપક્રમઃ ? ઉપક્રમઃ પર્વિર્વિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથથા—નામોપ-
ક્રમઃ સ્થાપનોપક્રમઃ દ્રવ્યોપક્રમઃ ક્ષેત્રોપક્રમઃ કાલોપક્રમો ભાવોપક્રમઃ નામસ્થાપને
ગતૈ । અથ કોઽસૌ દ્રવ્યોપક્રમઃ ? દ્રવ્યોપક્રમો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથથા—આગમતથ
નોઆગમતથ મવ્યશરીરવ્યતિરિક્તો દ્રવ્યોપક્રમસ્ત્રિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ તથથા—સચિત્તઃ,
અચિત્તઃ મિશ્રકઃ ॥૬૧॥

ઉપક્રમ શાસ્ત્રીય ઉપક્રમ ઓર લૌકિક ઉપક્રમ કે ભેદ સે દો પ્રકાર
કા હૈ—इनमें लौकिक उपक्रम का या स्वरूप है यह सूत्रकार प्रकट करते हैं—

“સે કિં તં ઉવક્રમે” ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૬૧॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉવક્રમે) હે મદન્ત ! ઉપક્રમ કા કયા તાત્પર્ય હૈ ?

ઉત્તર—(ઉવક્રમે છવિહે પળ્ણ) ઉપક્રમ છ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ ।
(તંજહા) જૈસે (નામોવક્રમે, ઠવ્ણોવક્રમે, દવ્વોવક્રમે, સેત્તોવક્રમે, કાલોવ-
ક્રમે, ભાવોવક્રમે) નામ ઉપક્રમ, સ્થાપના ઉપક્રમ દ્રવ્ય ઉપક્રમ, ક્ષેત્ર ઉપક્રમ, કાલ-
ઉપક્રમ ઓર ભાવ ઉપક્રમ । (નામઠવ્ણાઓ ગયાઓ) નામ ઉપક્રમ ઓર સ્થાપના
ઉપક્રમ કા સ્વરૂપ નામ આવશ્યક ઓર સ્થાન આવશ્યક કે સમાન જાનના
ચાહિયે । (સે કિં તં દવ્વોવક્રમે) હે મદન્ત । દ્રવ્યોપક્રમે કા કયા સ્વરૂપ
હૈ ? (દવ્વોવક્રમે દુવિહે પળ્ણત્તે) દ્રવ્યોપક્રમે દો પ્રકાર કા કહા ગયા
હૈ । (તં જહા) જૈસે (આગમઓ ય નોઆગમઓ ય જાવ જાણયસરીર મવિયસરીર-

ઉપક્રમના શાસ્ત્રીય ઉપક્રમ અને લૌકિક ઉપક્રમ નામના જે ભેદ કહ્યા છે.
તેમાંથી લૌકિકઉપક્રમનું સૂત્રકાર હવે નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઉવક્રમે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉવક્રમે ?) શિષ્યે શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
શુરુમહારાજ ! ઉપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઉવક્રમે છવિહે પળ્ણત્તે) ઉપક્રમ ૬ પ્રકારનો કહ્યો છે—(તંજહા)
તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે.

(નામોવક્રમે, ઠવ્ણોવક્રમે, દવ્વોવક્રમે, સેત્તોવક્રમે, કાલોવક્રમે, ભાવોવક્રમે)
(૧) નામ ઉપક્રમ, સ્થાપના ઉપક્રમ, (૩) દ્રવ્યઉપક્રમ, (૪) ક્ષેત્રઉપક્રમ (૫) કાળ-
ઉપક્રમ અને (૬) ભાવઉપક્રમ. (નામઠવ્ણાઓ ગયાઓ) નામઉપક્રમ અને સ્થાપના
ઉપક્રમનું સ્વરૂપ નામ આવશ્યક અને સ્થાપના આવશ્યક જેવું સમજવું.

(સે કિં તં દવ્વોવક્રમે ?) પ્રશ્ન—હે શુરુમહારાજ ! દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(દવ્વોવક્રમે દુવિહે પળ્ણત્તે) દ્રવ્યોપક્રમ જે પ્રકારનો કહ્યો છે. (તં જહા)
જેનકે....(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય જાવ જાણયસરીર મવિયસરીરવરિત્તે દવ્વો-

अनुयागचन्द्रिका टीका सूत्र ६? लौकिकमुपक्रमनिरूपणम्

२५३

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि—अथ कोऽसौ उपक्रमः ? इति ।
 उत्तरमाह—उपक्रमः षां द्वयः प्रज्ञप्तः—नामोपक्रमोपक्रमादिरूपः । तत्र नामोप-
 क्रमस्थापनोपक्रमौ नामावश्यकथापनावश्यकवद् विज्ञेयौ । सम्प्रति द्रव्योपक्रमं
 प्रश्नपूर्वकं प्रस्तौति—अथ कोऽसौ द्रव्योपक्रमः ? द्रव्योपक्रमो द्विविधः प्रज्ञप्तः,
 तद् यथा—आगततश्च नो आगततश्च, यावत् ज्ञायकशरीरं भव्यशरीरव्यतिरिक्तो
 द्रव्योपक्रमः । इह यावच्छब्देन द्रव्यावश्यकवद् द्रव्योपक्रमव्याख्या बोध्या ।
 तत्र ज्ञायकशरीरं भव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्योपक्रमस्त्रिविधः प्रज्ञप्तः । तद्
 यथा—सचित्तः, अचित्तः, मिश्रकः । तत्र सचित्तद्रव्यविषयः सचित्तः,
 अचित्तद्रव्यविषयोऽचित्तः, मिश्रद्रव्यविषयो मिश्रकः ॥ सू० ६१॥

वहरितं द्रव्योपक्रमे तिविहे पण्णत्ते—तं जहा—सचित्ते अचित्ते मीसए) आगत
 द्रव्योपक्रम—नोआगत द्रव्योपक्रम । नोआगत द्रव्योपक्रम ३ तीन प्रकार का है—
 ज्ञायकशरीर द्रव्योपक्रम, भव्यशरीर द्रव्योपक्रम और ज्ञायकशरीर भव्यशरीर
 व्यतिरिक्त द्रव्योपक्रम । इनमें ज्ञायक शरीर, भव्यशरीर से व्यतिरिक्त जो-
 द्रव्योपक्रम है वह तीन प्रकार का है । सचित्त, अचित्त और मिश्र । जिस
 उपक्रम का विषय सचित्त द्रव्य है वह तद्व्यतिरिक्त सचित्तद्रव्योपक्रम है ।
 जिस उपक्रम का विषय अचित्त द्रव्य है वह तद्व्यतिरिक्त अचित्तद्रव्योपक्रम
 है । और जिसका विषय सचित्त अचित्त दोनों प्रकार का द्रव्य है । वह
 तद्व्यतिरिक्त मिश्र द्रव्योपक्रम है । इस द्रव्योपक्रम की व्याख्या द्रव्यावश्यक
 की तरह जाननी चाहिये ।

भावार्थ—सूत्रकारने यहां पर उपक्रम के दमेदों को प्रकट करते हुए

वक्रमे तिविहे पण्णत्ते—तं जहा—सचित्ते, अचित्ते मीसए)

(१) ज्ञायकशरीर द्रव्योपक्रम अने (२) नोआगतद्रव्योपक्रम. नोआगतद्रव्यो-
 पक्रम नीचे प्रमाणे त्रणु प्रकारने कहा छे—(१) ज्ञायकशरीर द्रव्योपक्रम, (२) भव्य-
 शरीर द्रव्योपक्रम अने (३) ज्ञायकशरीर अने भव्यशरीर व्यतिरिक्त (बिन्न)
 द्रव्योपक्रम तेमाने के ज्ञायकशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्योपक्रम छे तेना नीचे
 प्रमाणे त्रणु प्रकार छे. (१) सचित्त, (२) अचित्त अने (३) मिश्र के उपक्रमने
 विषय सचित्त द्रव्य छे, तेने तद्व्यतिरिक्त सचित्तद्रव्योपक्रम कहे छे. के उपक्रमने
 विषय अचित्तद्रव्य छे ते उपक्रमने तद्व्यतिरिक्त अचित्त द्रव्योपक्रम कहे छे. अने
 केनो विषय सचित्त अचित्त पाने प्रकारनुं द्रव्य छे. ते उपक्रमने तद्व्यतिरिक्त मिश्र
 द्रव्योपक्रम कहे छे. आ द्रव्योपक्रमने व्याख्या द्रव्यावश्यकना लेवी के समझवी.

भावार्थ—सूत्रकारे आ सूत्रमां उपक्रमना दमेदोने प्रकट कया छे. तेमांथी

૨૫૪

અનુયોગશાસ્ત્ર

અથ સચિત્તં દ્રવ્યોપક્રમં નિરૂપયતિ—

મુચ્ચ—સે કિં તં સચિ । દઢવોવક્રમે ? સચિ દઢવોવક્રમે તિ-
વિહે પળણત્ત, તં જહા—દુપણ ચ્ચઉપ્પણ અપણ । એકિ પુળ દુવિહે
પળણત્તે, તં જહા—પરિક્રમે ય વત્થુવિણાસે ય ॥ સૂ૦ ૬૨ ॥

નામ સ્થાપના ઓર દ્રવ્ય કા ઉપક્રમ કા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા હૈ । હસમેં કિસી ચેતન અચેતન પદાર્થ કા ઉપક્રમ એસા નામ રલ્લ લેના યહ નામ ઉપક્રમ હૈ । કિસી પદાર્થ મેં ઉપક્રમ કા આરોપ કરના યહ સ્થાપના ઉપક્રમ હૈ । ભૂત મેં હુઈ અથવા ભવિષ્યત્ કાલ મેં હોનેવાલી ઉપક્રમ કી પર્યાય કો વર્ત-
માન મેં ઉપક્રમરૂપ સે હના યહ દ્રવ્ય ઉપક્રમ હૈ । હસકે આગમ ઓર નો આગમ કો આશ્રિત કરકે દો ભેદ હૈ । ઉપક્રમશાસ્ત્ર કા અનુપયુક્ત જ્ઞાતા આગમ-
કી અપેક્ષા સે દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યોપક્રમ કે ૩ ભેદ હૈ—જ્ઞાયકશરીર, ભવ્યશરીર ઓર હન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યોપક્રમ ।
હનમેં ઉપક્રમ શાસ્ત્ર કે અનુપયુક્ત જ્ઞાતા કા નિર્જીવ શરીર નોઆગમ સે જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । જિસ પ્રાપ્ત શરીર સે જીવ આગે ઉપક્રમ શાસ્ત્ર કો સીંલેગા વહ ભવ્યશરીર દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । હન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત જો નો-
આગમદ્રવ્યોપક્રમ હૈ વહ સચિત્ત, અચિત્ત ઓર મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમ કે ભેદ સે ત્રીન ૩ પ્રકાર કા હૈ । ॥મુત્ર ૬૧॥

નામ, સ્થાપના અને દ્રવ્યોપક્રમનું નિરૂપણ આ સૂત્રમાં કયું છે. કોઈ ચેતન-અચે-
તન પદાર્થનું ‘ઉપક્રમ’ એવું નામ રાખવું તે ‘નામઉપક્રમ’ છે. કોઈ પદાર્થમાં
ઉપક્રમનો આરોપ કરવો તેનું નામ સ્થાપના ઉપક્રમ છે. ભૂતકાળમાં પ્રાપ્ત થયેલી
અથવા ભવિષ્યમાં થનારી ઉપક્રમની પર્યાયને વર્તમાનમાં ઉપક્રમરૂપે કહેવી તેનું
નામ દ્રવ્યઉપક્રમ છે. તેના આગમ અને નોઆગમને આશ્રિત કરીને ત્રે ભેદ છે.
ઉપક્રમશાસ્ત્રનો અનુપયુક્ત જ્ઞાતા આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યોપક્રમ છે, નોઆગમને
આશ્રિત કરીને દ્રવ્યોપક્રમના ત્રણ ભેદ પડે છે. (૧) જ્ઞાયકશરીર, (૨) ભવ્યશરીર
અને (૩) તે બન્નેથી ભિન્ન એવો તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યોપક્રમ.

ઉપક્રમશાસ્ત્રના અનુપયુક્ત જ્ઞાતાના નિર્જીવ શરીરને નોઆગમની અપેક્ષાએ
જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. જે પ્રાપ્ત શરીરથી જીવ આગમ જતાં ઉપક્રમશાસ્ત્ર
થી અશે, તેનું નામ ભવ્યશરીર દ્રવ્યોપક્રમ છે. આ બન્નેથી ભિન્ન એવો જે નો-
આગમ દ્રવ્યોપક્રમ છે, તે અચિત્ત, અચિત્ત, અને મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમના ભેદથી ત્રણ
પ્રકારનો કહેલો છે. ॥ સૂ. ૬૧ ॥

અનુયોગનન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૬૨ સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમનિરૂપણમ્

૨૫૬

જાયા—અથ યોજસૌ સચિત્તો દ્રવ્યોપક્રમઃ ? સચિત્તો દ્રવ્યોપક્રમસ્ત્રિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—દ્વિપદચતુષ્પદોપદઃ । એકૈકઃ પુનર્દિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—પરિકર્મણિ ચ વતુવિનાશે ચ ॥ સૂત્ર ૬૨ ॥

અથ સુત્રકાર સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ ના સ્વરૂપ પ્રકટ કરતે હૈ—

“સે કિં તં સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૬૨ ॥

અર્થ—(સે કિં તં સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે) હે મદન્ત ! સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ ના ન્યા સ્વરૂપ હૈ ?

(સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે તિવિદે પળ્ણતે) ઉત્તર—સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ રૂતીન પ્રકાર ના કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે (દુપ્પ, ચુપ્પ, અપ્પ) દ્વિપદ, ચતુષ્પદ ઓર અપ્પ । ઇન મેં સે નટ નત્તંક આદિરૂપ દ્વિપદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । હસ્તી અથ આદિરૂપ ચતુષ્પદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । તથા આત્માદિ-વૃક્ષરૂપ અપ્પ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । (પકિકે પુળ દુવિદે પળ્ણતે) ઇનમે મી એક એક દો ૨ પ્રકારના કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે—(પરિકર્મમે ય વત્થુ-વિનાસે ય) પરિકર્મ મેં ઓર વતુ વિનાશ મેં અવસ્થિત વસ્તુ મેં ગુણ વિશેષ ના આધન વરના પરિકર્મ હૈ । ઇસ પરિકર્મ મેં પરિકર્મ વિષયવાલા દ્રવ્યોપકાર હોતા હૈ । દ્વિપદવાલે નટ-નત્તંક આદિ જન ધૂત આદિ દ્રવ્ય ને ઉપયોગ સે જો અપને બલ આદિ ની વૃદ્ધિ કરતે હૈ અથવા ઓર અનેક સાધનો સે કર્ણ એવં સ્કન્ધો નો બઢાતે હૈ વહ પરિકર્મ નો આશ્રિત કરકે સચિત્ત દ્રવ્યો

હવે સુત્રકાર સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે” ઇત્યાદિ—

અર્થ—(સે કિં તં સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે ?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે તિવિદે પળ્ણતે) સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ ત્રણ પ્રકારનો હશે છે. (તં જહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે.

(દુપ્પ, ચુપ્પ, અપ્પ) (૧) દ્વિપદ, (૨) ચતુષ્પદ અને (૩) અપદ નટ, નત્તંક આદિરૂપ દ્વિપદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે, ગજ, અથ આદિરૂપ ચતુષ્પદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે, તથા આત્માદિ વૃક્ષરૂપ અપદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે.

(પકિકે પુળ દુવિદે પળ્ણતે) એ પ્રત્યેકના પશુ જળ્ણમે પ્રકાર કહ્યા છે. (તં જહા) જેમકે (પરિકર્મમે ય વત્થુવિનાસે ય) (૧) પરિકર્મનો આશ્રિત કરીને શુભવિશેષનું આધાન કરવું તેનું નામ પરિકર્મ છે. આ પરિકર્મમાં પરિકર્મવિષયવાળો દ્રવ્યોપક્રમ છે. દ્વિપદવાળા (એ પગવાળા) નટ, નત્તંક આદિજન થી આદિદ્રવ્યના ઉપયોગથી પોતાના બળ આદિની જે વૃદ્ધિ કરે છે, અથવા બીજા અનેક સાધનોથી કષ્ટ અને સ્કન્ધોને

ટીકા—શિષ્ય: પૂછતિ—‘સે કિં ત’ इत्यादि—

अथ कोऽसौ सचित्तो द्रव्योपक्रमः ? इति । उत्तरमाह—सचित्तो द्रव्यो-
पक्रमस्त्रिविधः प्रज्ञप्तः । तद्यथा—द्विपदः, चतुष्पदः, अपद इति । तत्र-द्विपदः=
नटनर्तकादिरूपः, चतुष्पदः=हस्त्यश्वादिरूपः, अपदः=आम्रादिबृक्षरूपः । तत्र
द्विपदादिषु पुनरेकैका द्विविधः—परिकर्मणि च वस्तुविनाशे च । तत्रावस्थितस्यैव
वस्तुनो गुणविशेषाभावापरिकर्म, तत्र परिकर्मणि—परिकर्मविषयो द्रव्योपक्रमः ।

પક્રમ છે । કહા મી છે કિ ક્રિયા સે વસ્તુઓં કા જા ગુણ વિશેષરૂપ પરિણામ છે—
ઉસકા નામ પરિકર્મ છે । વસ્તુ કે વિનાશ કો વિષય કરનેવાલા દ્રવ્યોપક્રમ
તવ હોતકા છે કિ જલ્લ ઉપાય વિશેષોં સે વસ્તુ કે વિનાશ કા હી ઉપક્રમ હોતકા છે ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને इस सूत्रद्वारा सचित्त द्रव्योपक्रम को ३ रूप में
विभक्त किया है । १ द्विपद २ चतुष्पद और तीसरा अपद । द्विपद दो
चरणवाले प्राणी चतुष्पद—चार चरणवाले जानवर, अपद—जिनके चरण नहीं
ऐसे एकेन्द्रिय वृक्ष आदि अपद हैं । इन सब में जी । होने से ये सब सचित्त
हैं । इन तीनों प्रकार के सचित्तों के विषय में परिकर्म और विनाश को
लेकर द्विपदादि द्रव्योपक्रम दो २-२ प्रकार का और होता है । वृत्त आदि
शक्तिवर्धक पदार्थों के सेवन से जो ये द्विपद आदि अपने में बल आदि
की वृद्धि करते हैं वह परिकर्म विषयवाला, और उपाय विशेषों से वस्तु को
विनाश करनेवाला जो उपक्रम किया जाता है वह विनाश विषयवाला द्रव्यो

(ખલાઓને) વૃદ્ધિયુક્ત કરે છે, તે પરિકર્મને આશ્રિત કરીને જે ઉપક્રમ છે તેનું નામ
સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમ છે. કહ્યું પણ છે કે કિયાની અપેક્ષાએ વસ્તુઓનું જે શુભવિશેષ-
રૂપ પરિણામ છે તેનું નામ પરિકર્મ છે. વસ્તુના વિનાશને વિષય કરનારો યોગ-
ક્રમ ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે ઉપાયવિશેષો દ્વારા વસ્તુના વિનાશનો જ ઉપક્રમ થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર રા સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના ત્રણ ભેદો બતાવ્યા છે.
(૧) દ્વિપદ, (૨) ચતુષ્પદ અને (૩) અપદદ્વિપદ એટલે જે પગવાળા જીવો, ચતુષ્પદ
એટલે ચાર પગવાળા જાનવરો અને અપદ એટલે જેને પગ નથી એવા એકેન્દ્રિય
વૃક્ષાદિને શ્રદ્ધા કરવા ભેદીએ. આ બધામાં જીવ હોવાથી તેઓ સચિત્ત છે. આ
ત્રણે પ્રકારના સચિત્તોના વિષયમાં પરિકર્મ અને વિનાશની અપેક્ષાએ દ્વિપદાદિ પ્રત્યેક
દ્રવ્યોપક્રમના બળે પ્રકાર પડે છે. ઘી આદિ શક્તિવર્ધક પદાર્થોના સેવનથી જે
આ દ્વિપદ આદિ સચિત્ત જીવો પોતાના બળ આદિની વૃદ્ધિ કરે છે, તે પરિકર્મ
વિષયવાળો દ્રવ્યોપક્રમ છે, અને ઉપાયવિશેષો દ્વારા વસ્તુનો વિનાશ કરનારો જે
ઉપક્રમ કરવામાં આવે છે તે વિનાશ વિષયવાળો દ્રવ્યોપક્રમ છે, આ કથનનો

अनुयागचंद्रिका टीका सूत्र ६३ द्विपद उपक्रमनिरूपणम्

२५७

द्विपदानां नटनत्तंकादीनां घृताद्युपयोगेन यद् बलवर्णादिवरणं वर्णरक्तधवर्धना-
दिक्रिया वा स सचित्तद्रव्योपक्रमः । उक्तं च—

“परिकर्मं किरिया वस्तूनां गुणविसेस परिणामो” ।

छाया—परिकर्मं किं या वस्तूनां गुणविशेषपरिणामः ॥ इति ॥

वस्तुविनाशविषया द्रव्योपक्रमश्च—यदा उपायविशेषैर्वस्तुनो विनाश एवो
पक्रम्यते तदा भवति ॥ सू० ६२ ॥

द्विविधमप्येतमुपक्रमं वस्तुमुपक्रमते—

मूलम्—से किं तं दुपए उवक्कमे ? दुपए उवक्कमे नडाणं नच्च
गाणं जल्लाणं मल्लाणं मुट्ठियाणं बेलंबगाणं वहगाणं पवगाणं लास
गाणं आइक्खगाणं लंखाणं मंखाणं तूणइल्लाणं तुंबवीणियाणं का
वडियाणं मागहाणं । से तं दुपए उवक्कमे ॥ सू० ६३ ॥

छाया—अथ कोऽसौ द्विपद उपक्रमः ? द्विपद उपक्रमो नटानां नर्त्तकानां
जल्लानां मल्लानां मौष्टिकानां विडम्बकानां कथकानां प्लवकानां लासकानाम्

पक्रम हैं । तात्पर्य कहने का यह है कि सचित्त द्विपदों चतुष्पदों और अपदों
कों परिकर्म और विनाश को लेकर जो घृतादिद्रव्यों का उपक्रम आयोजन
सेवन किया जाता हैं वह परिकर्म और विनाशविषयवाला सचित्त द्विपदादि
द्रव्योपक्रम हैं । ॥ सू० ६२ ॥

इसी विषय को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं—

“से किं तं दुपए उवक्कमे” इत्यादि ॥ सूत्र ६३ ॥

शब्दार्थ—(से किं तं दुपए उवक्कमे) हे भदन्त ! द्विपद सबन्धी द्रव्यो-
पक्रम का क्या स्वरूप है । ? (दुपए उवक्कमे नडाणं नच्चगाणं जल्लाणं

आवायं એ છે કે દ્વિપદો, ચતુષ્પદો અને અપદોના પરિકર્મ અને વિનાશની અપે-
ક્ષાએ જે ધી આદિ દ્રવ્યોનો ઉપક્રમ (આયોજન-સેવન) કરવામાં આવે છે, તે પરિ-
કર્મ અને વિનાશરૂપ વિષયવાળો સચિત્ત દ્વિપદાદિ દ્રવ્યોપક્રમ છે. ॥ સૂ० ૬૨ ॥

આ દ્વિપદ સંબંધી દ્રવ્યોપક્રમના વિષયમાં સૂત્રકાર વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—

“સે કિં તં દુપએ ઉવક્કમે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં દુપએ ઉવક્કમે ?) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
ભગવન્ ! દ્વિપદ સંબંધી દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

आख्यायकानां लङ्घानां मङ्घानां तूणिकानां तुम्बवीणिकानां कावडिकानां माग-
धानाम् । स एष िपद उपक्रमः ॥५०॥ ६३॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं त’ इत्यादि । अथ कोऽसौ द्विपद-
उपक्रमः ? उत्तरमाह—यद् नटानां नाट्यकर्तृणां, नर्तकाणां नृत्यविधायिनां,
जल्लानां—जल्लाः—वस्त्रमादाय क्रीडाकारकाः, विरुदावली वा, तेषाम्, मल्लानां=
मल्लाः प्रसिद्धास्तेषां, मुष्टिकानां मुष्टिभिर्योद्धारो मल्लविशेषो मौष्टिकार्षतेषाम्,
विदूषकानाम्=नानादेवधारिणां विदूषकानाम्, कथकानाम्=कथकाः=वथाकारका-
रतेषाम्, प्लवकानां=प्लवः ते ये ते प्लवकाः=गर्त्ताद्दृष्टव्यतारो नद्यादितारका
वा तेषाम्, लासकानाम्=रासकान् गायन्ति ये ते लासकाः, जयशब्द प्रयोक्तारो
मण्डारा, तेषाम्, आख्यायकानाम्=अख्यायकाः=शुभाशुभाख्यायिन-
स्तेषाम् लङ्घानाम्=महतो वंशयात्रभागं ये धिरे हति ते लङ्घारतेषाम्, मङ्घानाम्
ये चित्रपटादिहरता भिक्षा चरन्ति ते मङ्गारतेषाम्, तूणिकानाम्=तूणवाद्यवादिनाम्,

मल्लानां मुष्टियाणं बेलंबगाणं वहगाणं पवगाणं लासगाणं आइक्खगाणं लंखाणं
मंखाणं तूणइल्लाणं तुंबवीणियाणं कावडियाणं मागहाणं) नाट्य करनेवाले नटों
का नृत्यकरनेवालों का, वस्त्र को एकड़कर क्रीडा करनेवाले जल्लों का, अथवा
विरुदावली पढ़नेवालों का पहलवानों का, मुष्टियों से युद्धकरनेवाले मल्लविशेषों
का, अनेक मेषों का धारण करनेवाले विदूषकों का, कथाओं को कहनेवालों
का, गर्त्त आदि को लांघने की अथवा नदी से पार उतारने की क्रिया में
अभ्यस्त बने हुए प्लवकों का रासलीला करनेवालों का अथवा जयशब्द का
प्रयोग करनेवाले मण्डों का शुभ और अशुभ को कहनेवाले अख्यायकों का,
बड़े भारी वांस के अग्रभाग पर आरोहण करनेवाले लंखों का, चित्रपट आदि
को हाथ में लेकर भीख मांगनेवाले मंखों का, तूणवाद्य को बजानेवाले तूणिकों

उत्तर—(दुपए उवकमे नडाणं नच्चगाणं जल्लाणं मल्लाणं, मुष्टियाणं बेलंबगाणं
वहगाणं पवगाणं लासगाणं आइक्खगाणं, लंखाणं मंखाणं, तूणइल्लाणं तुंबवीणि-
याणं कावडियाणं मागहाणं) नाटके करना नटोंने, नृत्य करना नर्तकोंने, वस्त्रने
पकड़ने क्रीडा करना जल्लोंने अथवा विरुदावली बोलना मल्लोंने, पहेलवा-
नोंने, मुष्टिकोंने (मुष्टीओं पडे लडना मल्लविशेषोंने), अनेक वेषो धारण करना
विदूषकोंने, कथाकारोंने, गर्त्त आदिने पार करवानी अथवा नदीने पार कराववानी
क्रियाओं अभ्यस्त रहते थे प्लवकोंने, रासलीला करना मण्डोंने अथवा जय शब्दनुं
उच्चारण करना मण्डोंने, शुभ अने अशुभने कहनेवाले अख्यायकोंने, धनु मीटा
वांस पर आरोहण करना लंखोंने (गजखुरियाओंने), चित्रपट आदिने हाथमें
लधने तेनी मद्धथी लीप भागता मंखोंने, तंतूवाद्यने बजावना तूणिकोंने,

अनुयोगचंद्रिका टीका पृष्ठ ६३ द्विपद उपक्रमने व्यापम्

२५९

तुम्बवीणिकानाम् तुम्बनिर्मिता या वीणा सा तुम्बवीणा, तद्वादनं शिल्पं येषां तुम्बवीणिकास्तेषाम्, कावडिकानाम्—‘कावडि’ इति भाषाप्रसिद्धभारवाहकानाम् मागधानाम्—मागधाः=मङ्गल पाठ्यास्तेषाम्, एषां सर्वेषामपि घृताद्युपयोगेन बलवर्णादिकरणं कर्णरन्धादिवर्द्धनं वा स द्विपद उपक्रमः । एष परिकर्मविषयः सचित्तो द्विपद उपक्रमः यस्तु नटादीनां खङ्गादिभिर्नाश एवोपक्रम्यते—सम्प्राप्ते स वस्तुविनाशविषयः सचित्तो द्विपदो द्रव्योपक्रमः इति वाक्यमपि प्रकरणवशादोक्षेप्तव्यम् । स एष द्विपद उपक्रमः ॥सू० ६३॥

का, तुंबडी की वीणा बनाकर उसे बजानेवाले तुंबवीणियों का, कावड से भार होनेवालों कावडिकों का, और मंगल पाठकों का जो अपने शरीर में घृतादिक द्रव्य के सेवन से शक्ति आदि के संबर्द्धन करने का उपक्रम किया जाता है, अथवा जिन २ और साधनों से बाणों को और स्कंधों को बढ़ाया एवं बलिष्ठ किया जाता है वह सब प्रयत्न द्विपद संबन्धी उपक्रम है । यह जो द्विपदों का उपक्रम है वह परिकर्म को विषय करनेवाला है इसलिये यह सचित्त द्विपद उपक्रम है । तथा उन्हीं नट आदिकों का जो खङ्गादि से विनाश करने का उपक्रम किया जाता है वह वस्तु के विनाश से संबन्धित होने के कारण वस्तु विनाश विषयवाला सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रम है । इस तरह का वस्तु विनाश विषयक सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रम का पाठ सूत्र में नहीं आया है—तो भी प्रकरण के वश से उसे यहां समझ लेना चाहिये । इस प्रकार से यह द्विपद उपक्रम संबन्धी कथन है ।

तुम्बवीणी वीणा बनावीने तेने वगाडनारा तुम्बवीणिकेने, कावडणी भट्टथी भार वहन करनार कावडीयाओने अने मंगलपाठकेने जे पोताना शरीरमां धी आदिना सेवन वडे शक्ति आदिना संबर्द्धनने जे उपक्रम करवामां आवे छे, अथवा जे जे भीजां साधने । रा कछुने अने भजाने वृद्धियुक्त अने बलिष्ठ करवामां आवे छे, ते अथां प्रयत्नने द्विपद विषयक उपक्रम कहे छे, आ जे द्विपदोने उपक्रम छे ते परिकर्मने विषय करनारे छे, तेही ते सचित्त द्विपद उपक्रम छे, तथा ओज नट आदिकेने तलवार आदिथी जे विनाश करवाने उपक्रम करवामां आवे छे, ते वस्तुना विनाशरूप विषयवाणे सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रम छे, आ प्रकारने वस्तु-विनाश विषयक सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रमने पाठ सूत्रमां आव्यो नथी, तो भबु आ प्रकरणमां तेने सभावेश करवानुं जरूरी लागवाथी, तेहुं कथन अह्नी थनुं ओधओ, आ प्रकारतुं द्विपद सचित्त उपक्रमनुं स्वरूप समजवुं.

૨૬૦

અનુયોગદ્વારમ્

અથ ચતુષ્પદવિષયં દ્વિવિધમપ્યુપક્રમં વર્ણયતિ-

મૂલમ્--સે કિં તં ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ? ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ચઉપ્પ-
યાણં આસાણં હત્થીણં ઇચ્છાઈ । સે તં ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ॥સૂ૦ ૬૪॥

છાયા--અથ કોડસૌ ચતુષ્પદ ઉપક્રમઃ ? ચતુષ્પદ ઉપક્રમશ્ચતુષ્પદાનામ્
અશ્વાનાં હસ્તિનામ્, ઇત્યાદિ । સ એષ ચતુષ્પદ ઉપક્રમઃ ॥ ॥૫૦ ૬૪॥

ભાવાર્થ--સૂત્રકારને જો સચિત્ત કે ભેદરૂપ દ્વિપદ આદિ કા પરિકર્મ
ઔર વિનાશ વિષયક દ્રવ્યોપક્રમ કહા હૈ-ઉસી કે દ્વિપદરૂપ આઘમેદ કે
સ્વરૂપ કા વર્ણન સંક્ષેપ મેં ઇસ સૂત્રદ્વારા કિયા ગયા હૈ-નટ, નર્તક આદિજનોં
કા જો અપને મેં શક્તિ બઢાને વાલે ઘૃત આદિ પદાર્થ હૈં ઉન પદાર્થોં કે
સેવન આદિ કરને કા જો ઉનકા ઉપક્રમ પ્રયત્ન-હૈં વહ પરિકર્મ વિષયક
દ્વિપદ ઉપક્રમ હૈ । તથા વિનાશ કે સાધનભૂત તલવાર આદિ સે જો ઇનકે
વિનાશકર દિયે જાને કા ઉપક્રમ હોતા હૈ, વહ વિનાશ વિષયક દ્વિપદ
ઉપક્રમ હૈ । ॥મૂ૦ ૬૩॥

અથ ચતુષ્પદ વિષયક દોનોં પ્રકાર કે ઉપક્રમ કા વર્ણન સૂત્રકાર કરતે હૈં-

“સે કિં તં ચઉપ્પણ” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૬૪॥

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં ચઉપ્પણ ઉવક્રમે) હે ભદન્ત ! ચતુષ્પદ ઉપક્રમ
કા કયા સ્વરૂપ હૈં-(ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ચઉપ્પયાણં આસાણં હત્થીણં ઇચ્છાઈ)
ચતુષ્પદ અશ્વ, ગજ આદિ જાનવરોં કો અછ્છી ચાલચલને આદિ કી શિક્ષા

ભાવાર્થ--સૂત્રકારે જે સચિત્તના ભેદરૂપ દ્વિપદ આદિના પરિકર્મ અને વિનાશ
વિષયક દ્રવ્યોપક્રમ કહ્યો છે, તેના જે દ્વિપદરૂપ પ્રથમ ભેદના સ્વરૂપનું વર્ણન અહીં
અક્ષિપ્તમાં કરવામાં આવ્યું છે.--

નટ, નર્તક આદિજનો પોતાની શક્તિ વધારવાને ધી આદિ પદાર્થોનું સેવન
કરવાનો જે ઉપક્રમ-પ્રયત્ન કરે છે તેને પરિકર્મ વિષયક દ્વિપદ ઉપક્રમ કહે છે. તથા
તલવાર આદિ સાધનો વડે તે નટ, નર્તક આદિજનોના વિનાશ કરી નાખવાનો જે
ઉપક્રમ (પ્રયત્ન) થાય છે તેને વિનાશ વિષયક દ્વિપદ ઉપક્રમ કહે છે. ॥ સૂ૦ ૬૩ ॥

હવે સૂત્રકાર ચતુષ્પદ વિષયક બન્ને પ્રકારતા ઉપક્રમનું વિષયકનું નિરૂપણ કરે છે-

“સે કિં તં ચઉપ્પણ” ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
હે ભગવન્ ! ચતુષ્પદ ઉપક્રમનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર--(ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ચઉપ્પયાણં આસાણં હત્થીણં ઇચ્છાઈ) ચોપમાં અશ્વ,
ગજ આદિ જાનવરોને સારી ચાલ ચલાવવા આદિ શિક્ષા દેવારૂપે જે ઉપક્રમ છે.

अनुये टिका टीका सूत्र ६५ अपदविषयमुपक्रमनिरूपणम्

२६१

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । अथ कोऽसौ चतुष्पदानाम् अध्वानां हस्तनामित्यादि—अध्वगजप्रभृति चतुष्पदजीवानां शिक्षागुणविशेषकरण-परिकर्मणि—सचित्तद्रव्योपक्रमः, स्वर्गादिभिस्त्वेषां विनाशकरणं च, वस्तुविनाशे सचित्तद्रव्योपक्रमः, इति वाक्यशेषः । एतन्निगमयन्नाह—स एष उपक्रम इति ॥ सू. ६४ ॥

अथापदविषयं द्विविधमप्युपक्रममाह—

म्—‘से किं तं अपए उवक्रमे ? अपए उणक्रमे अपयाणं अंवाणं अवाडगाणं इच्छाह । से तं अपओवक्रमे । से तं सचित्त-द्रव्योवक्रमे ॥ सू. ६५ ॥

छाया—अथ कोऽसौ अपद उपक्रमः ? अपद उपक्रमः—अपदानाम् आभ्राणाम् आभ्रा-तकानाम् इत्यादि । स एष अपदोपक्रमः । स एष सचित्तद्रव्योपक्रमः ॥ ६४ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । अथ कोऽसौ अपद उपक्रमः ? इति । उत्तरमाह—अपद उपक्रमो हि—अपदानां=स्थावरनामकर्मो-दयात् चवनक्रियावर्जितानाम् आभ्राणाम्=आभ्रवृक्षाणाम्, तत्फलानां च, तथा—

देना यह परिकर्म की अपेक्षा सचित्त द्रव्योपक्रम है । तथा इन्हीं जानवरों की तलवार आदि से मार डालना यह विनाश की अपेक्षा सचित्त द्रव्योपक्रम है । इस प्रकार यह सचित्त के भेदरूप चतुष्पद का दोनों प्रकार के द्रव्योपक्रम का कथन है । ॥ सूत्र ६४ ॥

अब सूत्रकार अपद विषयक दोनों प्रकार के उपक्रम का कथन करते हैं—
‘से किं तं अपए’ इत्यादि । ॥ सूत्र ६५ ॥

शब्दार्थ—(से किं तं अपए उवक्रमे) हे भदन्त ! अपद—जो आभ्र एवं आभ्रातक आदि वृक्ष और उन के फल हैं कि जिनमें स्थावर नामकर्म के

ते परिक्रमणी अपेक्षाओं सचित्त द्रव्योपक्रम छे, तथा ओण जानवरोंने तलवार आदि वडे मारी नाणवाने ओ उपक्रम छे, तेने विनाशनी अपेक्षाओं सचित्त द्रव्यो-पक्रम कहे छे, आ प्रकारे सचित्तना लेहइय चतुष्पदना जन्ने प्रकारना द्रव्योपक्रमहुं अही वणुंन करवाभां आंयुं छे, ॥ सू. ६४ ॥

हुवे सूत्रकार अपद (यरणु निडीन ओवे) विषयक जन्ने प्रकारना उपक्रमहुं निइयणु करे छे, ‘से किं तं अपए उवक्रमे’ इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं अपए उवक्रमे ?) शिष्य गुरुने ओवे। प्रश्न पूछे छे के हे भगवन् ! अपद उपक्रमहुं स्वइय केवुं होय छे ?

૨૬૨

અનુયોગદ્વારમુત્રે

આપ્રાતકાનામ્—આપ્રાતકદૃષ્ટાણાં તત્કલાનાં ચ, ઇત્યાદિ । અયં ભાવઃ—આપ્રાદિ-
વૃક્ષાણાં દૃક્ષાયુર્વેદોક્તપદ્ધત્યા વૃદ્ધિકરણં, તત્કલાનાં ચ ગતે પલાલાદૌ સ્થાપ-
નાદિના શ્લટિતિ પત્રવાવસ્થાપાદનં તત્ પરિકર્મવિષયઃ અપદ ઉપક્રમઃ । શસ્ત્રાદિના
ચ યદેષાં વિનાશકરણં તદ્ વસ્તુ વિનાશવિષયઃ અપદ ઉપક્રમ ઇતિ । સ એષઃ
અપદોપક્રમઃ । સ એષ સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમ ઇતિ ॥મૂ० ૬૫॥

અથ—અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમં નિરૂપયતિ—

મૂલપ્—સે કિં તં અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમે ? અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમે
સ્વંડાઈણં ગુડાઈણં મચ્છંડીણં । સે તં અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમે ॥ સૂ० ૬૬॥

છાયા—અથ કોઽસૌ અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમઃ ? અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમઃ સ્વંડા-
દીનાં ગુડાદીનાં મત્સ્યઙ્ડીનામ્ । સ એષઃ અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમઃ ॥૬૬॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—અથ કોઽસૌ અચિત્ત-
દ્રવ્યોપક્રમઃ ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ—અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમઃ—સ્વંડાદીનાં=‘સ્વંડ’ ઇતિ

ઉદય સે સ્વયં ચલન ક્રિયા નહીં હોતી હૈં ઉનકી વૃક્ષાયુર્વેદોક્ત પદ્ધતિ સે
વૃદ્ધિ કરના—આત આદે ડાઝકર ઉન્હેં વઢાને કા ઉપક્રમ કરના ઉનકે ફલોં
કો સ્વંડો આદિ મેં ભાકર પલાલ આદિ સે ઉન્હેં દવાકર કે જલ્દી વકા લેના
યહ સર્વ પરિકર્મ કો વિષય કરનેવાલા અપદ ઉપક્રમ હૈં । તથા શસ્ત્ર આદિ
સે ઉનકા વિનાશ કરના યહ વસ્તુ વિનાશ વિષયક અપદ ઉપક્રમ હૈં । ઇત્યપ્રકાર
યહ દોનોં પ્રકારકા ઉપક્રમ અપદ કા દ્રવ્યોપક્રમ હૈં । ઇત્તરહ યહાં તક યહ
સચિત્ત દ્રવ્ય સંબન્ધી ઉપક્રમ કા કથન હૈં । ॥મૂ० ૬૫॥

ઉત્તર—આમ્ર (આખો) આદિ જે વૃક્ષો અને તેમનાં જે જે ફળો છે, જેમના
સ્થાવર નામ કર્મના ઉદયને લીધે જેઓ ચલન ક્રિયાથી રહિત હોય છે, તેમની
વૃક્ષાયુર્વેદોક્ત પદ્ધતિથી વૃદ્ધિ કરવી—આતર આદિ નાખીને તેમની સારી રીતે વૃદ્ધિ
થાય એવો પ્રયત્ન કરવો, તેમના ફળોને ખાડા આદિમાં ભરીને તેના પર પરાળ
આદિ ઢખાવીને તેમને જલ્દી પકાવવાનો પ્રયત્ન કરવો, તેને પરિકર્મની અપેક્ષાએ
અપદ ઊપક્રમ કહેવાય છે. તથા શસ્ત્ર આદિ વડે તે વૃક્ષાદિને વિનાશ કરવો તેને
વસ્તુ વિનાશવિષયક અપદ ઊપક્રમ કહે છે. આ પ્રકારે બન્ને પ્રકારના અપદ ઊપ-
ક્રમનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે, અને સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના બધાં લેહોનું વર્ણન
પણ અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ. ૬૫॥

અનુયોગચંદ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૬૬ અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમનિરૂપણમ્

૨૬૩

ભાષાપ્રસિદ્ધપ્રમૃતીનાં, ગુહાદીનાં=ગુહપ્રમૃતીનાં, મત્સ્યઙ્ગીનામ્--પ્રતલગુહાદીનાં, 'રાવ' इति भाषाप्रसिद्धानां विज्ञेयः । अयं भावः—अचित्तानां खण्डगुह मत्स्य-
ङ्गीनां द्रव्याणामुपाय—विशेषण यन्माधुर्याधिक्यकरणं तत् परिकर्मविषयः अचित्त-
द्रव्योपक्रमः । एषामेव यः सर्वथा विनाशकरणं तद् वस्तुविनाशविषयः अचित्त
द्रव्योपक्रमः । एतन्निगमरत्नाह—'से तं' इत्यादि । स एष अचित्त द्रव्योप-
क्रम इति ॥सू० ६६॥

અથ મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમમાહ—

મૂલમ્--સે કિં તં મીસણ દઢ્વોવક્રમે ? મીસણ દઢ્વોવક્રમે સે
ચેવ થાસગ આયંસગાઈનંડિણ આસાઈ । સે તં મીસણ દઢ્વોવક્રમે ।
સે તં જાણયસરોર ભવિયસરીર વહરિત્તે દઢ્વોવક્રમે । સ તં નોઆગમઓ
દઢ્વોવક્રમે । સે કિં તં દઢ્વોવક્રમે સૂ૦૬૭॥

અથ સૂત્રકાર અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ કા કથન કરતે હૈં—

“સે કિં તં અચિત્ત દઢ્વોવક્રમે” ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૬૬॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અચિત્તદઢ્વોવક્રમે) હે મદત ! અચિત્ત દ્રવ્યોપ-
ક્રમ કા કયા સ્વરૂપ હૈં ?

ઉત્તર—(ખંડાદીનાં ગુહાદીનાં મચ્છંડીણં, અચિત્તદઢ્વોવક્રમે) ખાંડ, ગુહ
ઔર राव इन पदार्थों में उपाय विशेष से जो मधुरता की अधिकता करदी
जाती है वह परिकर्म विषयवाला अचित्त द्रव्योपक्रम है तथा इन्हीं पदार्थों
का जो सर्वथा विनाश करदिया जाता है, वह विनाश विषयक अचित्तद्रव्योपक्रम
है । (से तं अचित्तदध्वोवकमे) इस तरह से अचित्त द्रव्योपक्रम का यह
स्वरूप है । ॥सूत्र ६६॥

હવે સૂત્રકાર અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં અચિત્તદઢ્વોવક્રમે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અચિત્તદઢ્વોવક્રમે?) શિષ્ય શરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
હે ભગવન્ ! અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ખંડાદીનાં ગુહાદીનાં મચ્છંડીણં અચિત્તદઢ્વોવક્રમે) ખાંડ, ગોળ,
ઇત્યાદિ પદાર્થોમાં ઉપાય વિશેષો દ્વારા મધુરતાની વૃદ્ધિ કરવા રૂપ જે ઉપક્રમ
થાય છે, તેને પરિકર્મ વિષયનો અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. તથા એજ પદાર્થોના
જે સર્વથા વિનાશ કરી નાખવા રૂપ ઉપક્રમ થાય છે તેને વિનાશ વિષયક અચિત્ત
દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. (સે તં અચિત્તે દઢ્વોવક્રમે) આ પ્રકારનું અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમનું
સ્વરૂપ છે. ॥ સૂ. ૬૬ ॥

૨૬૪

અનુયોગદ્વાર સૂત્રે

છાયા—અથ કોડસૌ મિશ્રકો દ્રવ્યોપક્રમઃ સ એવ સ્થાસકાદર્શકાદિ-
મણ્ડિતઃ અશ્વાદિઃ । સ એવ મિશ્રકો દ્રવ્યોપક્રમઃ । સ એવ જ્ઞાયકશરીરમવ્યકશરીર-
વ્યતિરિક્તોદ્રવ્યોપક્રમઃ । સ એવ આગમતો દ્રવ્યોપક્રમઃ । સ એવ દ્રવ્યોપક્રમ ॥મુ. ૬૭॥

ટીકા—શિષ્ય પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ वेऽसौ मिश्रको
द्रव्योपक्रमः ? इति । उत्तरमाह मिश्रकः=सच्चित्ताचित्तात्मको द्रव्योपक्रमः—स्थास-
कादर्शकादि मण्डितः—स्थासकः=अश्वाभरणविशेषः, आदर्शः=हृदयश्रीवाभरण
विशेषः, आदि शब्दात् वहुमादयः, एषां समासः, तैर्मण्डितः=भूषितः अश्वा-

અવ સૂત્રકાર મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ કા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે” इत्यादि । ॥મુ. ૬૭॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે) હે મદન્ત ! મિશ્ર દ્રવ્યોપ-
ક્રમ વ્યા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વોવક્રમે સે ચેવ થાસગઆયંસગાહમંડિણ આસાઈ—સે તં
મીસણ દવ્વોવક્રમે) સચિત્તાત્મક—મિશ્ર—દ્રવ્યોપક્રમ કા સ્વરૂપ. इस प्रकार से
है—कि अचित्त स्थासक और आदर्श आदि से विभूषित हुए घोड़े से लेकर
बैल तक के जानवरों में जो शिक्षा आदि गुण की विशेषता करने का उपक्रम
किया जाता है वह परिष्कृत विषयक मिश्रद्रव्योपक्रम है । स्थासक यह घोड़े
का आभरण विशेष है । आदर्श यह बैल का आभरण विशेष है । एडक शब्द
का अर्थ मेष हैं । स्थासक—आदर्श और आदि पद से गृहीत कुंकुम का लेप

હવે સૂત્રકાર મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે” इत्यादि

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે
—કે હે ભગવાન ! મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વોવક્રમે સે ચેવ થાસગઆયંસગાહમંડિણ આસાઈ—સે
તં મીસણ દવ્વોવક્રમે)

સચિત્તાત્મક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે— અચિત્ત સ્થાસક,
દર્પણ આદિની વિભૂષિત થયેલા ઘોડાથી લઈને બળદ પર્યાન્તના જાનવરોમાં જે
શિક્ષા આદિ શુભની વિશેષતા કરવાનો ઉપક્રમ કરવામાં આવે છે, તેને પરિકર્મ
વિષયક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. ‘સ્થાસક’ આ ઘોડાનું એક ખાસ આભરણ છે
અને દર્પણની ખાસ બળદનું આભરણ વિશેષ છે. ‘એડક’ આ શબ્દ મેષ (ધે.)
નો વાચક છે. સ્થાસક, દર્પણ, કુંકુમનો લેપ આદિ અચિત્ત દ્રવ્યો છે તથા અશ્વ,

અનુયોગચત્રિકા ટીકા સૂત્ર ૬૭ મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમનિરૂપણમ્

૨૬૫

દિઃ=અશ્વપ્રભૃત્યેકાન્તો વિજ્ઞેયઃ । અયં માનઃ—સ્થાસકાદર્શકાદિ ભૂષિતાનાં કૃત
કુર્માનાં તેષામશ્વાઘેકાન્તાનાં યચ્છિક્ષાદિ ગુણવિશેષવર્ણનં પરિવર્તનવિષયઃ
મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમઃ । તેષાં રુક્ષાદિભિર્વિનાશસ્તુ વસ્તુવિનાશવિષયો મિશ્રદ્રવ્યો-
પક્રમ ઇતિ । અત્ર—અશ્વાદી નાં સચેતનત્વાત્ સ્થાસકાદીનામ્ અચેતનત્વાત્ મિશ્ર
દ્રવ્યત્વં बोध्यम् । एतदुपसंहरन्नाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष मिश्रका द्रव्यो-
पक्रम इति । ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्योपक्रमः रुक्लोऽपि निरूपित
इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो
द्रव्योपक्रम इति । नोआगमतः सर्वोऽपि द्रव्योपक्रमो निरूपित इति सूचयितुमाह—
‘से तं’ इत्यादि । स एष नोआगमतो द्रव्योपक्रम इति । द्रव्योपक्रमः सर्वो
निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष द्रव्योपक्रम इति । सू० ६७।

ये सब अचित्त द्रव्य है । तथा अश्व वगैरह सचित्त द्रव्य है । इन से जब इन
सचित्त पदार्थों को विभूषित किया जाता है—तब ये मिश्र द्रव्य कहलाते हैं । इन
में जो शिक्षा गुण से विशेषता का आपादन होता है यही मिश्र द्रव्योपक्रम
का स्वरूप परिकर्म की अपेक्षा लेकर कहा गया है । तथा जब इनका खड्ग
आदि विनाशक कारणों से विनाश हो जाता है तब वह विनाश को लेकर
मिश्र द्रव्योपक्रम का स्वरूप कहा जाता है । यही मिश्रद्रव्योपक्रम
है । (से तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरितं द्रव्योपक्रमे) इस
प्रकार ज्ञायकशरीर द्रव्योपक्रम और भव्यशरीर द्रव्योपक्रम से व्यतिरिक्त द्रव्यो-
पक्रम का स्वरूप कहा है । (से तं नोआगमओ द्रव्योवक्क्रमे—से तं द्रव्योव-
क्क्रमे) नोआगम की अपेक्षा लेकर यह द्रव्योपक्रम का स्वरूप पूर्णरूप से निरूपित

બળદ, ઘેટાં આદિ સચિત્ત દ્રવ્યો છે. આ સચિત્ત અર્થ આદિ જનનવરોને બ્યારે
ઉપયુક્ત સ્થાસક, દર્પણ આદિ અચિત્ત દ્રવ્યો વડે વભૂષત કરવામાં આવે છે,
ત્યારે તેઓ મિશ્ર દ્રવ્ય રૂપ બની જાય છે. એવાં મિશ્ર દ્રવ્ય રૂપ સ્થાસકથી
વિભૂષિત અશ્વાદિમાં જે શિક્ષા આદિ ગુણની વિશેષતા કરવાનો ઉપક્રમ થાય છે
તેનું નામ જ પરિકર્મ વિષયક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ છે. અને તેમનો તલવાર આદિ
શસ્ત્રો વડે વિનાશ કરવાનો જે ઉપક્રમ થાય છે, તે ઉપક્રમને વિનાશ વિષયક મિશ્ર
દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. આ પ્રકારનું મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ છે.

(સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિતં દ્રવ્યોવક્કમે)

આ પ્રકારે જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યોપક્રમ અને ભવ્યશરીર દ્રવ્યોપક્રમથી વ્યતિરિક્ત
(લિન્ન) એવા દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે. (સે તં નો
આગમઓ દ્રવ્યોવક્કમે સે તં દ્રવ્યોવક્કમે) આ રીતે નોઆગમ દ્રવ્યોપક્રમના બધા

અથ ક્ષેત્રોપક્રમ નિરૂપણતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં ચેત્તોવક્કમે ? ચેત્તોવક્કમ જળ્લં હલકુલિયા-
ઈહિં ચેત્તાઈં ઉવક્કમિજ્જંતિ । સ તં ચેત્તોવક્કમ ॥સૂ૦ ૬૮॥

છાયા—અથ કોઽસૌ ક્ષેત્રોપક્રમઃ ? ક્ષેત્રોપક્રમો યત્સ્વલુ હલકુલિકાદિભિઃ
ક્ષેત્રાણ્યુપક્રમ્યન્તે । સ એષ ક્ષેત્રં પક્રમઃ ॥૬૮॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—સે કિં તં ? इत्यादि । अथ कोऽसौ क्षेत्रोपक्रमः ? इति ।

उत्तरमाह—क्षेत्रोपक्रमः-क्षेत्राणामुपक्रमः-क्षेत्रसम्बन्धुपक्रमः यत्स्वल् हल-

હો છુકા । इसके निरूपण होने से द्रव्योपक्रम का समस्त स्वरूप भी निरूपित
हो गया ऐसा जानना चाहिये ।

ભાવાર્થ—સચિત્તાચિત્ત દ્રવ્ય મેં જો વિશેષતા કા આપાદન કિયા જાતા
હૈ વહ પરિકર્મ વિષયવાલા મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ હૈં ઓર સચિત્તાચિત્તરૂપ મિશ્ર
દ્રવ્ય યા જો સ્વજ્ઞાદિ વિનાશક કારણોં સે વિનાશ કિયા જાતા હૈ, વહ વિનાશ વિષયક
સચિત્તાચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈં—ઇસ પ્રકાર યહાં તક દ્રવ્યોપક્રમ સે સંબંધિત જિતના
મા વર્ણન હૈ વહ સબ સૂત્રકાર ને કર દિયા હૈ । ॥સૂત્ર ૬૭॥

અથ સૂત્રકાર ક્ષેત્રોપક્રમ કા સ્વરૂપ પ્રશ્ન કરતે હૈ—

“સે કિં તં ચેત્તોવક્કમે” इत्यादि । सूत्र ॥६८॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ચેત્તોવક્કમે) હૈ મદન્ત ! ક્ષેત્રોપક્રમ કા વ્યા
સ્વરૂપ હૈ ?

उत्तर—(चेत्तोवक्कमे जल्लं हलकुलियाईहिं चेत्ताईं उवक्कमिज्जंति—से

લેહોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહિં સંપૂર્ણ થાય છે, અને તેનું નિરૂપણ થઈ જવાને લીધે
દ્રવ્યોપક્રમના બધા લેહો અને પ્રલેહોનું નિરૂપણ પણ સંપૂર્ણ થઈ જાય છે એમ સમજવું.

ભાવાર્થ—સચિત્તાચિત્ત દ્રવ્યમાં (મિશ્ર દ્રવ્યમાં) જે વિશેષતાનું આપાદન
કરવામાં આવે છે, તે પરિકર્મ વિષયક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ છે, અને સચિત્તાચિત્ત
રૂપ મિશ્ર દ્રવ્યોને જે શસ્ત્રાદિ રૂપ વિનાશક કારણો વડે વિનાશ કરવામાં આવે છે,
તેને વિનાશ વિષયક મિ દ્રવ્યોપક્રમ કહેવાય છે. આ રીતે અહીં સુધીમાં દ્રવ્યો-
પક્રમ સાથે સંબંધ રાખનાર એવું સમસ્ત વર્ણન સૂત્રકારે સમાપ્ત કર્યું છે. ॥ સૂ૦ ૬૭॥

હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“(સે કિં તં ચેત્તોવક્કમે)” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—“સે કિં તં ચેત્તોવક્કમે” હૈ ભગવન્ ક્ષેત્રોપક્રમનું શું સ્વરૂપ
છે ? (ચેત્તોવક્કમે જળ્લં હલકુલિયાઈહિં ચેત્તો ઉવક્કમિજ્જંતિ સે તં

अनुयोगचन्द्रिक टीका. सू. ६८ क्षेत्रोपक्रमनिरूपणम्

२६७

कुलिकादिभिः—हलं प्रसिद्धम्, कुलिकं=हलविशेषः तत् लघुतरं काष्ठं खलु तृणादि-
च्छेदकार्येषुपयुज्यते । तदादिभिः क्षेत्राणि उपक्रम्यन्ते—बीजवपनयोग्यानि क्रियन्ते।
अयं भावः—हलकुलिकादिभिः क्षेत्राणां यद्बीजवपनयोग्यता रणं तत्परिकर्मविषयः
क्षेत्रोपक्रमः । तथा—गजवपनादिभिर्मित् क्षेत्राणि उपक्रम्यन्ते=विनाश्यन्ते, तद् वस्तु
विनाशविषयः क्षेत्रोपक्रमः । गजमूत्रपुरिषदिना क्षेत्रगतबीजप्ररोहणशक्ति विनाशयते,
इति विनाशानि क्षेत्राण्युच्यन्ते । इत्थं द्विविधः क्षेत्रोपक्रमो बोध्य इति ।

ननु क्षेत्रगत पृथिव्यादि द्रव्याणामेव एतौ परिकर्मविनाशौ । इत्थं च

तं खेतोवक्रम्ये) क्षेत्रोपक्रम का स्वप्न इस प्रकार से है कि जो हल एवं कुलिका—
तृणादिको खेत में से दूर करने के लिये काम में लिये गये एक प्रकार का हल
जैसा लघुतर काष्ठ—आदि से जोतकर खा बीज वपन (बोने) के योग्य बनाये जाते
हैं वह क्षेत्रोपक्रम का स्वरूप है। यह क्षेत्रोपक्रम परिकर्म और विनाश
को लेकर दो प्रकार का है—इसमें जो हल आदि से जोतकर क्षेत्र को
बीजोत्पादन की योग्यतावाला बनाना यह परिकर्म विषयक क्षेत्रोपक्रम है
तथा खेतों में हाथी आदि कों को बांधकर उन्हें बीजवपन (बोने) के अयोग्य
बना देना यह वस्तु विनाश विषयक क्षेत्रोपक्रम है। हाथी की सूत्र और
लिङों से खा में बीजोत्पादन करने की शक्ति का नाश हो जाता है। इस
प्रकार यह दोनों प्रकार का क्षेत्रोपक्रम जानना चाहिये ।

शंका—परिकर्म और विनाश जो होते हैं वे क्षेत्रगत पृथिवी आदि
द्रव्यों के ही होते हैं—

खेतोवक्रम्ये) क्षेत्रोपक्रमानुं स्वरूप आ प्रकारानुं छे जे हल अने कुलिक (जेतरभांथी
तृणादिकोने हूर करवाने माटे ओक प्रकारानुं हल जेवुं लघुतर काष्ठ विशेष वपराय
छे तेनुं नाम कुलिक छे) आदि वडे जेडीने जेतरने भीज वाचवाने योग्य बनाववानुं
कार्य थाय छे तेने क्षेत्रोपक्रम कहे छे. ते क्षेत्रोपक्रमना परिकर्म अने विनाशनी
अपेक्षाये जे लेद पडे छे. हल आदि वडे जेडीने जेतरने जे भीजेत्पादननी योग्य-
तावानुं बनाववानो उपक्रम (प्रयत्न) थाय छे, तेने परिकर्म विषयक क्षेत्रोपक्रम कहे
छे. तथा जेतरभां हाथी आदिने बांधीने तेने भीजेत्पादनने माटे अयोग्य बनाव-
वानो जे उपक्रम थाय छे तेने विनाश विषयक क्षेत्रोपक्रम कहे छे. जेवुं मानवामां
आवे छे छे हाथीना सूत्र, भण आदि जे जेतरभां पडथुं छाय ते जेतरनी भीजे-
त्पादन शक्तियो नाश थय जाय छे आ प्रकारे अहो जेने प्रकारानुं क्षेत्रपरिकर्मनुं
स्वरूप प्रकट करवामां आठ्युं छे.

शंका—परिकर्म अने विनाश जे थाय छे ते तो क्षेत्रगत पृथ्वी आदि
द्रव्योंको जे थाय छे. तेथी तेने क्षेत्रोपक्रम कहेवाने अहो द्रव्योपक्रम जे कहेवो

૨૬૮

અનુયોગદ્વારક્રમે

દ્રવ્યોપક્રમ એવાયં ન તુ ક્ષેત્રોપક્રમઃ, તર્હિ કથં ક્ષેત્રોપક્રમઃ ? इति चेत्, उच्यते—
ક્ષેત્રં हि आकाशमुच्यते, तस्य चामूर्त्तत्वात्तदुपक्रमो न संभवति, तथापि तदा-
धेयत्वेन स्थितानां पृथिव्यादि द्रव्याणां य उपक्रमः स क्षेत्रोऽप्युपचर्यते । लोक-
ेऽपि यथा ‘मञ्चाः क्रोशन्ती’—त्यादौ आधेयतधर्माणामाधारे उपचारो भवति । उत्तंचापि
“खेत्तमरूवं निचं, न तस्स परिकम्मणं न य विणासे ।

આહેયગયવસેણ ઉ, કરણવિણાસોવયારો ઉ” ॥ ૧ ॥

इसलिये यह क्षेत्रोपक्रम न होकर द्रव्योपक्रम ही हुआ फिर इसे क्षेत्रोप-
क्रम कैसे कहा—

उत्तर—क्षेत्र शब्द का अर्थ आकाश है । और यह आकाशरूप क्षेत्र
अमूर्त है—अतः इसका उपक्रम नहीं होसकता है । फिर भी इस में आधेय
रूप से वर्तमान जो पृथिविव्यादि द्रव्य है, उनका तो उपक्रम होता है इसलिये
उनका उपक्रम आधाररूप आकाश में उपचरितकर लिया जाता है । इसलिये
क्षेत्रोपक्रम बन जाता है । लोक में भी जैसे “मञ्चाः क्रोशन्ति” मंचबोलते हैं ।
खेत रक्षा के लिये खेत के लिये खेत के पाली पर जो घरविशेष बनाते हैं
उसको मंच कहते हैं, मंच बोलते हैं ऐसा जो कह दिया जाता है—वह आधेय
रूप पुरुषादिकों के धर्मों के आधार में उपचरित करके ही कहा जाता
है—कहा भी है—‘खेत्तमरूवे’ इत्यादि—उस का अर्थ यही है—कि क्षेत्र तो
अरूपी और नित्य है । उसका न परिकर्म हो सकता है और न विनाश,

જોઇએ. છતાં અહીં તેને ક્ષેત્રોપક્રમ રૂપે શા માટે પ્રતિષ્ઠાપિત કરવામાં આવ્યો છે?

ઉત્તર—ક્ષેત્ર શબ્દનો અર્થ આકાશ થાય છે, અને આ આકાશરૂપ ક્ષેત્ર
અમૂર્ત છે તેથી તેનો ઉપક્રમ થઇ શકતો નથી. છતાં પણ તેમાં આધેય રૂપે વર્ત-
માન જે પૃથ્વી આદિ દ્રવ્ય છે તેમનો તો ઉપક્રમ થાય છે. તેથી તેમનો ઉપક્રમ
આધાર રૂપ આકાશમાં ઉપચરિત કરી લેવામાં આવે છે. તેથી ક્ષેત્રોપક્રમ ઘટિત થઇ
જાય છે. લોકોમાં પણ “મજ્જાઃ ક્રોશન્તિ” “મંચ બોલે છે,” એવું કહેવામાં
આવતું હોય છે. ખેતરની રક્ષા માટે એક માંચડો બનાવ્યો હોય છે. ત્યાં બેઠો
બેઠો કોઇ પુરુષ ખેતરની રખવાળી કરે છે મંચ પર બેઠેલો પુરુષ બોલતો હોય
ત્યારે કેટલીક વખત “મંચ બોલે છે,” આ પ્રકારનો પણ વ્યવહાર થતો જોવામાં
આવે છે. આધેય રૂપ પુરૂષના ધર્મોને આધાર રૂપ મંચમાં ઉપચરિત કરીને આ
પ્રમાણે કહેવામાં આવે છે. કહ્યું પણ છે કે “ખેત્તમરૂવે” ઇત્યાદિ—આ સૂત્રપા-
ઠને પણ એવો જ અર્થ છે કે ક્ષેત્ર તો અરૂપી અને નિત્ય છે. તેનું પરિકર્મ

अनुयोगचन्द्रिकाटीका सू. ६९ कालोपक्रमनिरूपणम्

२६९

छ.या—क्षेत्रमरूपं नित्यं न तस्य परिहर्म्म न च विनाशः ।

आधेयगतवशेनैव करणविनाशोपचारोऽत्र ॥ इति ।

इत्थं च 'क्षेत्रोपक्रमः' उक्ताऽपि न दोषः । सम्प्रति प्रकृतमुपसंहरन्नाह—
'से तं' इत्यादि । स एष क्षेत्रोपक्रम इति ॥सू० ६८॥

अथ कालोपक्रमं निरूपयति—

मूलम्—से किं तं कालोवक्कमे ? कालोवक्कमे जण्णं नालियाईहिं
कालस्सोवक्कमणं कीरइ । से तं कालोवक्कमे ॥ सू० ६९ ॥

छाया—अथ कोऽसौ कालोपक्रमः ? कालोपक्रमो यत्खलु नालिकादिभिः कालस्यो-
पक्रमणं त्रियते । स एष कालोपक्रमः ॥६९॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—'से किं तं' इत्यादि ? इति । उत्तरमाह—
कालोपक्रमो हि स भवति, यत्खलु नालिकादिभिः—नालिया=ताम्रादिमय घटिका,

परन्तु क्षेत्र में जो करण और विनाश का व्यवहार होता है वह आधेयगत-
वस्तु के वरण और विनाश के उपचार से होता है । इस प्रकार क्षेत्रोपक्रम
कहने में कोई दोष नहीं है । इस तरह यह क्षेत्रोपक्रम का स्वरूप है ॥सू०६८॥

अब सूत्रकार कालोपक्रम को स्वरूप प्रकट करते हैं—

"से किं तं कालोवक्कमे" इत्यादि । ॥सूत्र ६९॥

शब्दार्थ—(से किं तं कालोवक्कमे) हे भदन्त ! कालोपक्रम का क्या स्वरूप है ?

(कालोवक्कमे जण्णं नालियाई हिं कालस्सोवक्कमणं कीरइ । से तं
कालोवक्कमे) कालोपक्रम का स्वरूप इस प्रकार से है—जो नालिका
तथा घटी आदि से कालका यथावत् स्वरूप परिज्ञात हो
जाता है—वह कालोपक्रम है । ताम्रआदि का एक छोटी सी घटी

पणु थछ शकतुं नथी अने तेना विनाश पणु थछ शकता नथी. परन्तु क्षेत्रमां जे
करण अने विनाशना व्यवहार थाय छ. ते आधेयगत वस्तुना करण अने विना-
शना उपचारनी अपेक्षाये थाय छ. आ प्रकारे तेने क्षेत्रोपक्रम कहिवामां कोछ दोष
नथी. आ प्रकारतुं 'क्षेत्रोपक्रमतुं' स्वइय छ ॥ सू० ६८ ॥

"से किं तं कालोवक्कमे" इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं कालोवक्कमे?) शिष्य शुरुने अवे। प्रश्न पूछ छ के के
लगवन् ! कालोपक्रमतुं स्वइय केतुं छ ?

उत्तर—(कालोवक्कमे जण्णं नालियाई हिं कालस्सोवक्कमणं कीरइ—से तं
कालोवक्कमे) कालोपक्रमतुं स्वइय आ प्रकारे कहुं छ—नालिका आदि वडे काणना
यथावत् स्वइयतुं जे परिज्ञात थाय छ तेतुं नाम कालोपक्रम छ. ताम्र आदिनी

इयं हि दाडिमपुष्पाकाराश्चच्छिद्रा भवति। अभश्छिद्रेण नालिका मध्ये जलं प्रविशति। जलेन भृतायां नालिकायां कालमानो निश्चीयते। आदि पदात् शंकुच्छाया नक्षत्रचारादपि बोध्याः। एभिरपि कालो मीयते। एतैः—कालमापकसाधनैः कालस्योपक्रमं क्रियते। अयं भावः—नालिकाशंकुच्छायानक्षत्रचारादिभिर्वत् 'एतावान् पौरुष्यादिकालोऽतिक्रान्तः' इति परिज्ञायते स परिकर्मविषयः कालोपक्रमः। अत्र कालस्य यथावत्परिज्ञानमेव परिकर्म बोध्यम्। तथा—नक्षत्रादि चारैः कालस्य यद् विनाशनं स वस्तुविनाशविषयः कालोपक्रमः। श्रूयते हि लोके

बनाई जाती है। उसका आकार दाडिम—प्रनालके पुष्प जैसा होता है? इसके नीचे एक छेद होता है? नीचे के छेद से इसमें जल प्रविष्ट होता है। जब यह जल से भर जाती है तो इससे काल का मान निश्चित किया जाता है। यहां पर आदि, पर से शंकुच्छाया और नक्षत्रों की चाल आदि ग्रहण हुई है। इन से भी काल का मान जाना जाता है। इस तरह इन कालमापक साधनों से काल का उपक्रम किया जाता है।

तात्पर्य कहने का यह है कि इन नालिका—शंकुच्छाया और नक्षत्रचाल आदि से जो “इतना पौरुषी आदिकाल व्यतीत हो चुका” सा जाना जाता है वह परिकर्म विषयवाला कालोपक्रम है। काल का यथावत् परिज्ञान होना ही यहां परिकर्म जानना चाहिये। तथा नक्षत्र आदियों की चाल से जो काल का विनाश होता है वह वस्तुविनाश विषयक कालोपक्रम है। लोक में ऐसा

એક નાની સરખી ઘડિયાળ બનાવવામાં આવે છે. તેનો આકાર દાડમના પુષ્પ જેવો હોય છે. તેની નીચે એક છિદ્ર હોય છે. આ સાધનને પાણીથી ભરેલા કોઈ પાત્રમાં મૂકવામાં આવે છે. તે છિદ્ર દ્વારા તેમાં પાણી દાખલ થવા માંડે છે. જ્યારે તે સાધન (નાલિકા) જગઘડી પાણીથી ભરાઈ જાય છે ત્યારે તેની મઠકથી કાળનું માપ નિશ્ચિત કરવામાં આવે છે. અહીં ‘આદિ’ પદ વડે શંકુરચાયા અને નક્ષત્રોની ચાલ આદિ ગ્રહણ થયેલ છે. તેમની મઠકથી પણ કાળનું માપ નીકળી શકે છે. આ પ્રકારે આદિ કાલમાપક સાધનો વડે કાળનો ઉપક્રમ કરવામાં આવેલ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે આ નાલિકા (જગઘડી) શંકુરચાયા (સૂર્ય ઘડી) અને નક્ષત્રોની ચાલ આદિ દ્વારા “આટલા પહોર આટલી ઘડી આદિ વ્યતીત થઈ ગયા આ પ્રકારનું કાળવિષયક જે જ્ઞાન થાય છે તેને પરિકર્મ કાલોપક્રમ કહે છે. કાળનું યથાવત્ પરિજ્ઞાન થવું તેનું નામ અહીં પરિકર્મ સમજવું. તથા નક્ષત્ર આદિકોની ચાલથી કાળનો જે વિનાશ થાય છે, તે વસ્તુવિનાશવિષયક કાલોપક્રમ સમજવો. લોકોમાં એવી વાત થતી સાંભળ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા. સૂ. ૬૨ સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમનિરૂપણમ્

૨૭૧

‘અનેન ગ્રહનક્ષત્રાદિચારેણ કલો વિનાશિતઃ, ન ભવિષ્યન્ત્યધુના ધાન્યાનિ’—
ઇતિ । ઉક્તં ચ—

“છાયાઽ નાલિયાઽ, વ પરિકર્મ” સે જહત્યં વિન્નાણે ।

રિક્ત્વાઇચારે હિ ય, તસ્મ વિનાસો વિવજ્ઞાસો ॥૧॥

છાયા—છાયયા નાલિકયા વા પરિકર્મ તસ્ય યથાર્થવિજ્ઞાનમ્ ।

ઋક્ષાદિકચારૈશ્ચ, તસ્ય વિનાશો વિપરીતઃ ॥૧॥

ઇત્યં વસ્તુ વિનાશવિષયઃ કાલોપક્રમો बोध्यः । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ—‘સે
તં’ ઇતિ । સ એકાલોપક્રમ ઇતિ ॥૬૯॥

અથ ભાવોપક્રમં નિરૂપયતિ—

મૂલ—સે કિં તં ભાવોવક્રમે ? ભાવોવક્રમે દુવિહે પળણત્ત,
તં જહા આગમઓ ય નોઆગમઓ ય । આગમઓ ભાવોવક્રમો
નાળણ ઉવવત્તે । નોઆગમઓ ભાવોવક્રમે દુવિહે પળણત્ત, તં જહા
પસત્થે, ય અપસત્થે ય । તત્થ અપસત્થે ડોહિણિગણિયા અમચ્ચા-
ઈણં । પસત્થે ગુરુમાઈણં । સે તં નોઆગમઓ ભાવોવક્રમે । સે તં
ભાવોવક્રમ । સે તં ઉવક્રમ ॥સૂ. ૭૦॥

સુના જાતા હૈ કિં ઇસ ગ્રહ નક્ષત્ર આદિ કી ચાલ સે કાલ નષ્ટ હો ગયા—
અવ અનાજ પૈદા નહીં હોગા । વહા મી હૈ—‘છાયા’ ઇત્યાદિ ઉસકા અર્થ
ઇસ પ્રકાર સે હૈં કિં છાયા સે અથવા નાલિકા સે જો કાલ કા યથાર્થ પરિ-
જ્ઞાન હૈ વહ પરિકર્મ હૈ । તથા નક્ષત્રાદિકોં કી ગતિ સે ઉસમેં જો વિપરીત
તા હૈ વહ કાલ વા યહ વસ્તુ વિનાશ વિષયક કાલોપક્રમ હૈ । ઇસ તરહ સે
યહ કાલોપક્રમ કા સ્વરૂપ વર્ણન હૈ । ॥પૃ. ૬૯॥

વામાં આવે છે કે આ નક્ષત્રની આલ આદિથી કાળ નષ્ટ થઈ ગયો—હવે અનાજ
પેદા નહીં થાય. કહ્યું પણ છે કે—“છાયા” ઇત્યાદિ—આ સૂત્રપાઠનો ભાવાર્થ નીચે
પ્રમાણે છે—છાયાથી અથવા નાલિકા આદિથી જે કાળનું યથાર્થ પરિજ્ઞાન થાય છે
તેનું નામ પરિકર્મ છે, તથા નક્ષત્રાદિકોની ગતિથી તેમાં જે વિપરીતતા આવે છે,
તે કાળના વિનાશરૂપ છે. આ પ્રકારના કાળના વસ્તુવિનાશ વિષયક આ કાલોપક્રમ
છે. આ પ્રકારે કાલોપક્રમના વિષયનું નિરૂપણ અહીં સંપૂર્ણ થાય છે. ॥ સૂ. ૬૯ ॥

છાયા--અથ કોઽસૌ ભાવોપક્રમઃ ? ભાવોપક્રમો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્વથા--
આગમતથ નોઆગમતથ । આગમતો ભાવોપક્રમો જ્ઞાયક ઉપયુક્તઃ । નોઆગમતો
ભાવોપક્રમો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્વથા--પ્રજ્ઞસ્તથાપ્રજ્ઞસ્તથ । તત્ર-અપ્રજ્ઞસ્તો હોહિણિ
ગણિકાઽમાત્યાદીનામ્ । પ્રજ્ઞતો ગુર્વાદીનામ્ । સ ઇષ નોઆગમતો ભાવોપક્રમઃ ।
સ ઇષ ભાવોપક્રમઃ । સ ઇષ ઉપક્રમઃ ॥૭૦॥

ટીકા--શિષ્યઃ પૃચ્છતિ--‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ कोऽसौ भावोपक्रमः
? इति । उत्तरमाह--भावोपक्रमो द्विविधः प्रज्ञसः, तद् यथा--आगमतथ नोआगम-
तथ । तत्र--आगमतः । आगममाश्रित्य उपक्रमो हि ज्ञायकः=उपक्रम
शब्दार्थज्ञः उपयुक्त=उपक्रमे उपयोगर्वांश्च बोध्यः । अयं भावः--उपक्रम--

અવ સૂત્રકાર ભાવોપક્રમ કા નિરૂપણ કરતે હૈં--

“સે કિં તં ભાવોપક્રમે इत्यादि । ॥૭૦ ॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં ભાવોપક્રમે) હે મહન્ત ! ભાવોપક્રમ કા કયા
સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર--(ભાવોપક્રમે દુવિહે પળ્ળત્તે) ભાવોપક્રમ દો પ્રકાર કા કહા ગા
હૈ । (તં જહા) ઉસકે વે પ્રકાર વે હૈ--(આગમઓ ય નોઆગમઓ ય) ? આગમ
કો આશ્રિત કરકે ભાવોપક્રમ હોતા હૈ ઓર દુસરા નોઆગમકો આશ્રિત કરકે
ભાવોપક્રમ હોતા હૈ. (જાણે ઉવઉત્તે આગમઓ ભાવોપક્રમે) જો ઉપક્રમ
શબ્દ કે અર્થ કો જાનતા હૈ ઓર ઉસમેં ઉપયોગ સે યુક્ત હૈ વહ આગમ સે
ભાવોપક્રમ હૈ ।-

હવે સૂત્રકાર ભાવોપક્રમનું નિરૂપણ કહે છે--

“સે કિં તં ભાવોપક્રમે” इत्यादि--

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં ભાવોપક્રમે?) શિષ્ય ગુરુને એનો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
હે ભગવન્ ! ભાવોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(ભાવોપક્રમે દુવિહે પળ્ળત્તે) ભાવોપક્રમના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તં જહા)
તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે.

(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય) (૧) આગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવોપક્રમ
થાય છે તેને ‘આગમ ભાવોપક્રમ’ કહે છે. (૨) નોઆગમનો આશ્રિત કરીને થતા
ભાવોપક્રમને--‘નોઆગમ ભાવોપક્રમ’ કહે છે. (જાણે ઉવઉત્તે આગમઓ ભાવોપક્રમે)
જે ઉપક્રમ શબ્દના અર્થને જાણે છે અને તેમાં ઉપયોગથી જુદા છે, તે આગમની
અપેક્ષાએ ભાવોપક્રમ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે--ઉપક્રમ અને ઉપાય,
આ બન્ને એકાર્થક શબ્દો છે. ભગવાન તીર્થંકર દ્વારા કથિત અનુશાસનના જ્ઞાનના

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૭૦ નોઆગમતો ભાવોપક્રમનિરૂપણમ્

૨૭૩

ઉપાયઃ, સ ચેહ—ભગવદનુશાસનજ્ઞાનસાધનરૂપો ગ્રાહ્યઃ । ઉક્તં ચ—

“સોચ્છા ભગવાણુભાસણં, સચ્ચે તત્થ કરેજ્ઞુવકમ્ ॥”

છાયા—શ્રુત્વા ભગવદનુશાસનં સત્યં તત્ર કુર્યાદુપક્રમમ્—ઈતિ—

વ્યાખ્યા—સત્યં=યથાર્થં ભગવતા તીર્થં કરેણ પ્રોક્તમનુશાસનં શ્રુત્વા તત્ર=અનુશાસને ઉપક્રમં=તત્પ્રાપ્ત્યુપાયં કુર્યાત્—ઈત્યર્થઃ ।

ઈત્યં ચ ભગવદુક્તાનુશાસનપ્રાપ્ત્યુપાયઃસ્તત્રોપક્રમે ઉપયુક્તશ્ચ આગમતો ભાવોપક્રમ ઇતિ ।

નોઆગમતો ભાવોપક્રમોઽપિ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । તદ્ યથા પ્રશસ્તશ્ચ, અપ્રશસ્તશ્ચ । इह भावशब्दः—अभिप्रायारूपो जीवद्रव्यपर्यायोऽभिमतः । उक्तं च—भावाभिख्याः पञ्च स्वभावसत्ताऽऽत्मयोन्यभिभाषा इति । ततश्च—भावस्य

इसका भाव यह है कि उपक्रम और उपाय ये एकार्थक शब्द हैं—भगवान् तीर्थं कर द्वारा कथित अनुशासन के ज्ञान का साधनरूप वह उपक्रम यहां ग्राह्य हुआ है । अन्यत्र ऐसा ही कहा है—(सोच्छा) इत्यादि । कि भगवान् के द्वारा कथित अनुशासन बिल्कुल सत्य है—उसे श्रवणकर श्रोता का कर्तव्य है कि वह उसकी प्राप्ति का उपाय करें । इस प्रकार भगवदुक्त अनुशासन की प्राप्ति का उपाय जानने वाला ज्ञाता उस उपक्रम में उपयुक्त होता हुआ आगम से भावोपक्रम है । (नोआगमओ भावोपक्रमे दुविहे पण्णत्ते—तं जहा) नो आगमको आश्रित करके भावोपक्रम दो प्रकारका कहा गया है । जैसे (पसत्थे य अपसत्थे य) एक प्रशस्त और दूसरा अप्रशस्त । यहां पर भाव शब्द का अर्थ अभिप्राय है और यह जीव द्रव्य का पर्यायरूप से माना गया है । कहा भी है (भावाभिख्याः) भावके पांच नाम हैं स्वभाव १, सत्ता २, आत्मा ३, योनि ४, और अभिप्राय ५ । इस तरह

સાધનરૂપ તે ઉપક્રમ અહીં ગ્રાહ્ય થયો છે. અન્યત્ર પણ એવું જ કહ્યું છે કે ‘સોચ્છા’ ઇત્યાદિ—તીર્થં કર ભગવાન દ્વારા કથિત અનુશાસન સર્વથા સત્ય છે. તેને શ્રવણ કરનાર શ્રાવકત્વં તેની પ્રાપ્તિનો ઉપાય કરવાનું કર્તવ્ય થઈ પડે છે. આ પ્રકારે ભગવદુક્ત અનુશાસનની પ્રાપ્તિનો ઉપાય બાણનાર જ્ઞાતા તે ઉપક્રમમાં ઉપયુક્ત (ઉપયોગ પરિણામથી યુક્ત) હોવાને કારણે આગમની અપેક્ષાએ ભાવોપક્રમરૂપ હોય છે.

(નોઆગમઓ ભાવોપક્રમે દુવિહે પણ્ણત્તે) નોઆગમ ભાવોપક્રમ બે પ્રકારનો કહ્યો છે. (તં જહા) તે બે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે— (પસત્થે ય અપસત્થે ય) (૧) પ્રશસ્ત અને (૨) અપ્રશસ્ત અહીં ભાવ શબ્દનો અર્થ અભિપ્રાય છે, અને તે જીવ દ્રવ્યનો પર્યાયરૂપ માનવામાં આવ્યો છે. કહ્યું પણ છે કે “ભાવાભિખ્યાઃ” ભાવના પાંચ નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) સ્વભાવ, (૨) સત્તા, (૩) આત્મા, (૪) યોનિ

૨૭૪

અનુયોગદ્વારમ્ત્રે

પરકીયાભિપ્રાયસ્ય ઉપક્રમણં=યથાવત્પરિજ્ઞાન ભાવોપક્રમ ઇતિ । તત્ર=દ્વિવિધે નોઆગમતો ભાવોપક્રમે, અપ્રશસ્તા ભાવોપક્રમ:-ડોડિણિ ગણિકાઽમાત્યાદીનાં બોધઃ । અયમાશય:-ડોડિણિનામ્ન્યા બ્રાહ્મણ્યા ગણિક્યા અમાત્યેન ચ યત્ પરાભિપ્રાયરૂપસ્ય ભાવસ્ય યથોવત્ ઉપક્રમ:-પરિજ્ઞાન કૃતં તદ્ નોઆગમતો-ઽપ્રશસ્ત ભાવોપક્રમઃ । અપ્રશસ્તત્વં ચાસ્ય સંસારફલત્વાત્, ઇતિ । ડોડિણ્યાદિ મિથ્યા પરાભિપ્રાયઃ પરિજ્ઞાતઃ પ્રસન્નવશાત્તદુચ્યતે—

આસીત્કાઽપિ ડોડિણિ નામ્ની બ્રાહ્મણી । તસ્યા આસંસ્તિસ્ત્રો દુહિતરઃ । સા તાઃ પરિનાયૈવં ચિન્તિતવતી-જામાતૃભ્રમભિપ્રાયં પરિજ્ઞાય દુહિતરઃ શિશ્વણીયોઃ

પરકીય ભવ અભિપ્રાયકા યથાવત્ પરિજ્ઞાન હોના હસ કા નામ ભાવોપક્રમ હૈ । (તત્થ) નોઆગમ કી અપેક્ષા સે દ્વિવિધ હુવ ભાવો-પક્રમ મેં જો અપ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ હૈ—વહ ડોડિણિ બ્રાહ્મણી ગણિકા, ઔર અમાત્ય આદિ કોં મેં જાનના ચાહિયે । ડોડિણિ નામ કી બ્રાહ્મણી એક વેશ્યા ઔર એક અમાત્ય થા સવ પર કે અભિપ્રાય કા જો યથાવત્ પરિજ્ઞાત કર લિયા કરતે થે વહ ઉનકા નોઆગમ સે અપ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ થા । અપ્રશસ્તતા હસ મેં હસલિયે હૈ કિ યહ સંસારરૂપ ફલ કા જનક હોતા હૈ—ડોડિણિ આદિ ને જિસ પ્રકાર સે પર કા અભિપ્રાય જાના—પ્રસંગવશ ઉસે યહાં દર્શાયા જાતાહૈ—

એક કોઈ ડોડિણી નામકી બ્રાહ્મણી થી । ઉસકી ૩ ત્રીન લડકિયા થી । ઉનકા ઉસને વિવાહ કરદિયા ! વિવાહ કરને કે બાદ ઉસને સોચા કિ મેં જામાતાઓં કે અભિપ્રાય કો જ્ઞાત કર અપની હન પુત્રિયોં કો શિક્ષિત કર

અને (ય) અભિપ્રાય. આ રીતે પરકીય ભાવતુ' (અભિપ્રાયતુ) યથાર્થ પરિજ્ઞાન થવું તેનું નામ ભાવોપક્રમ છે. (તત્થ) નોઆગમભાવોપક્રમના જે જે પ્રકારે કહેવામાં આવ્યા તેમાંના જે અપ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ કહ્યો છે તેનો સદ્ભાવ ડોડિણિ બ્રાહ્મણી, ગણિકા અને અમાત્ય વગેરેમાં જાણવો. હવે આ ડોડિણિ બ્રાહ્મણી આદિના અપ્રશસ્ત ભાવોપક્રમને સમજાવવાને માટે અહીં તેમની કથા આપવામાં આવી છે. તે ત્રણે બધાંના અભિપ્રાયને પરિજ્ઞાત કરવાને સમર્થ હતા. તેમનો તે ભાવોપક્રમ નો-આગમની અપેક્ષાએ અપ્રશસ્ત ભાવોપક્રમરૂપ હતો. તેમનો ભાવોપક્રમ અપ્રશસ્ત તે કારણે હતો કે તે સંસારરૂપ ફલનો જનક હતો. ડોડિણિ આદિએ જે પ્રકારે અન્યનો અભિપ્રાય જાણ્યો હતો તે પ્રકારનું અહીં પ્રસંગવશ કથન કરવામાં આવે છે—કોઈ એક ગામમાં ડોડિણી નામની એક બ્રાહ્મણી રહેતી હતી. તેને ત્રણ પુત્રીઓ હતી. તેણે તે ત્રણેના વિવાહ કરી નાખ્યા. પુત્રીઓનો વિવાહ કર્યા બાદ તેને એવો વિચાર આવ્યો કે ત્રણે જમાઈઓનો અભિપ્રાય (સ્વભાવ) જાણી લઈને મારે મારી પુત્રીઓને એવા પ્રકારની શિક્ષા આપવી જોઈએ કે તે શિક્ષાને અનુરૂપ જીવન

अनुयोगचन्द्रिका टीका. सू. ७० नोआगमतो भावोपक्रमनिरूपणम्

२७५

यथैताः सुखिताः स्युः इति विचिन्त्य तथा सर्वा दुहितर एवमुक्ताः=युष्माकं पतयो
यदा स्व स्व शयनागारे समागच्छेयुस्तदा युष्माभिः—कंचि दोष मुद्गाव्य स्व स्वपतिः
शिरसि पादप्रहारेण ताडनीयः । तदा युष्मत्पतयो यत्कुर्युस्तन्मह्यं निवेदयत ।
एवं जनन्या प्रोक्ते सति ताः सर्वाः पुत्रिकाः स्व शयनागारे स्वीयं स्वीयं पतिं
प्रतीक्षमाणाः स्थिताः ।

अथ ज्वेष्ठायाः पतिः शयनागारे समागतः ततः सा कमपि दोषमुद्गाव्य
तच्छिरसि चरणेन प्रहृतवती । प्रहारसमनन्तरमेव तस्याः पतिस्तदीयं चरणं
हस्तेन गृहीत्वा सस्नेहमिदमब्रवीत्—अयि प्रिये ! पाषाणादपि कठोरे मम शिरसि
त्वया चरणः पातितः । मन्ये केतकीकुसुमादपि कोमलतरस्त्वदीयश्चरणः पीडितो

हूँ कि जिससे इन का जीवन सुखी बन सके । इस प्रकार विचार करके
उसने अपनी ३ तीनों पुत्रियों से कहा कि देखों जब तुम्हारे पति अपने
२ शयन भवन में आवे तब तुम लोग किसी दोष को कल्पित कर उन्हें
लातें मारना । जब वे तुम लोगों से इसके प्रतिकार स्वरूप में जो कुछ करें
वह हम से कहना । इस प्रकार माता के कहने पर उन सब पुत्रियों ने वैसा
ही किया । वे सब अपने २ शयनागार में चली गईं और वहाँ अपने २
पतिओं की प्रतीक्षा करतीं हुई बैठ गईं । इतने में बड़ी लडकी का पति
आगया । पति के आने पर उसने उसे दोष दिखाकर एक लात शिर में
जमा दी । लात के लगते ही उसने उसके उसी पग को पकड़कर बड़े भारी
स्नेह के साथ कहा अयि प्रिये ! पाषाण से भी कठोरतर मेरे शिर पर तुमने
अपने चरण को रखा है—तो मैं समझता हूँ कि केतकी के कुसुम से भी

लुवीने तेजो पोताना लुवनने सुणी जनानी शके. आ प्रकारने विचार करीने
तेणे पोतानी त्रणे पुत्रीज्योने ओलावीने आ प्रभाणु सलाह आणी—

“आणे ज्यारे तमारा पति तमारा शयनभंडमां आवे त्यारे तमारे कंठ
कल्पित दोष जतावीने तेमना भस्तक पर लातो मारवी. त्यारे प्रतिकाररूपे तेजो
तमने जे कंठ कडे अथवा जे कंठ करे ते सवारमां भने कडेवानुं छे.”

ते त्रणे पुत्रीज्योने मातानी सलाह प्रभाणु जे कथुं—तेजो पोतपोताना शयन-
भंडमां यात्री गछं अने पोतपोताना पतिनी प्रतीक्षा करवा लागी. सोथी मोठी
पुत्रीने पति ज्यारे शयनभंडमां आव्यो, त्यारे तेणे तेना पर कंठ दोषनुं आदेश-
पणु करीने तेना भस्तक पर जेक लात लगावी दीधी. लात पोतानी साथे जे तेना
पतिजे तेना पग पकडीने तेने आ प्रभाणु कथुं—“प्रिये ! पथररथी पणु कठोर
ज्येवां मारा भस्तकपर तजे केतकीना पुष्पसमान कोमल पग वडे जे लात मारी छे

जातः। एवं ब्रुवाणः स तस्याश्चरणसंवाहनमकरोत्। प्रभाते सा सर्वं वृत्तं मात्रं निवेदितवती। सहर्षया मात्रा सा प्रोक्ता—वत्से ! त्वया स्वगृहे यथेच्छं कर्तव्यम्, तव पतिः स्त्वदाज्ञावर्ती भविष्यति। अथ द्वितीययाऽपि तथैव स्वपत्युःशिरसि चरणप्रहारः कृतः। तयाः पतिः किञ्चिद्रोषमुपदर्शयन्नुवाच—कुलवधूनामनुचितोऽयं व्यवहारः। इत्युक्त्वा कोपान्निवृत्तः। प्रभाते साऽपि मात्रे सर्वं वृत्तं निवेदितवती। ततः सा मात्रा सहर्षं प्रोक्ता—वत्से ! त्वमपि स्वगृहे यथेच्छ-

अधिक सुकुमार यह तुम्हारा चरण दुखने लगा होगा। इस प्रकार कहने के साथ ही उसने उसके उस चरण को दाबना प्रारंभ कर दिया। प्रातःकाल उस लड़की ने यह सब कृत्य अपनी माता से कह दिया। माता को इसे सुनकर बड़ा हर्ष हुआ। उसने पुत्री से कहा—वत्से ! तुम अपने घर में जो कुछ करना चाहो सो कर सकती हो—क्योंकि पति के इस व्यवहार से यह पता पड़ता है कि वह तुम्हारा आज्ञावशवर्ती रहेगा।

दूसरी पुत्री ने भी अपने पति के साथ ऐसा ही व्यवहार किया—उसके शयनागार में पति के आने पर उसने उसके मस्तक पर ज्यों ही चरण प्रहार किया कि उसे कुछ रोष आ गया। अपना रोष प्रकट करते हुए उसने उससे कहा यह व्यवहार कुलवधुओं के योग्य नहीं है—जो तुमने मेरे साथ किया है। ऐसा कहकर वह फिर शांत हो गया। प्रातःकाल उस पुत्री ने रात्रि के पति के इस व्यवहार को माता से प्रकट किया। तब उसकी माताने हर्षित

तेने दीधे तभारा नाब्बुके यरषु दुब्बवा भांडया हसे,” आ प्रभावे कहीने तेणे तेना ते पगने दाबवा भांडये, भीजे दिवसे ते मोटी पुत्रीजे आ सभस्त बात तेनी माताने कही संभजावी. ते बात सांभजीने माताने (डाडिणी आदाखीने) धणे न आनंठ धये. न माधना आ प्रकारना वर्तनधी तेना स्वभावने ते सभल गछ. तेणे तेनी मोटी पुत्रीने आ प्रभावे सदाह आपी. “तुं तारा घरमां जे करवा धारे ते करी शकीश, करषु के तारा पतिना आ व्यवहारधी जेवुं लागे छे के ते तारी आज्ञाने अधीन रहेथे.”

भील पुत्रीजे पणु पोताना पति साथे न जेवे न वर्ताव जाताये—जेवे ते शयनभंडमां प्रवेशथे के तुरत न केछि होषनुं आरे। पणु करीने तेणे तेना मस्तक पर जेक दात लगावी दीधी. त्यारे तेना पतिने थोडा शप ठपज्यो. तेणे पोताने शप मात्र आ शण्डो द्वारा न प्रकट कथे—“भारी साथे ते न वर्ताव कथे छे, ते भुणवधुज्योने योग्य वर्ताव न गणाय तारे आवुं करवुं नोछे नही” आ प्रभावे कहीने ते शान्त धर गयो. प्रातःकाजे भील पुत्रीजे पणु आ अधी बात संभजावी

अनुबोधवन्धिकाटीका सू. ७० नोआगमतोभावोपक्रमनिरूपणम्

२७७

कुरु रुष्टोऽपि पतिः क्षणमात्रेण तुष्टो भविष्यति ! अथ तृतीययाऽपि स्व-
पति स्तथैव प्रहृतः ततः स क्रोधाध्मातचित्तो रोषारुणलोचन उच्चैः स्वरेण तां
निर्मत्स्यनेवमुवाच-अयि दुष्टे ! कुलकन्याकानुचितमिदं कृत्यं कथं त्वया कृतम् ?
इत्युक्त्वा मुष्ट्यादिभिस्तां ताडयित्वा गृहान्निष्कासितवान् । ततः सा मातुः समीपे
गत्वा सर्वं वृत्तं निवेदितवती । जामातुः स्वभावमवगत्य सा ब्राह्मणी तत्स-
मीपे गत्वा तत्क्रोधमुपसान्त्वयितुं मधुरया गिरा प्रोवाच-वत्स । अस्मत्कुलाचा-
रोऽयं यत् प्रथमसमागमे बध्वा वरस्य शिरसि चरणप्रहारः कर्तव्य इति, अतो मम

होफर उसे कहा कि हे बेटी ! तुमभी अपने घर में अपनी इच्छानुसार सब
कुछ करो ! तुम्हारे व्यवहार से रुष्ट भी तुम्हारापति क्षणमात्र में तुष्ट हो
जावेगा । जब तीसरी लडकी का पति अपने शयनागार में आया—तो उसने
भी अपनी माता के कहे अनुसार वैसा ही व्यवहार अपने पति के साथ किया ।
तब वह क्रोध से भर गया और रोष से लाल २ आँखें करके बड़े जोर से
उससे डाटकर बहने लगा—अयि दुष्टे ! कुलकन्या के अयोग्य यह कृत्य तूने
मेरे साथ क्यों किया ? ऐसा कहकर उसने उसे खूब मुक्कों से मारा पीटा
और मार पीट कर फिर उसे घर से बाहिर निकाल दिया । तब वह अपने
माता के पास गई और सब वृत्तान्त कहने लगी । पुत्री के कथनानुसार वह
अपने जामाता के स्वभाव का जानकर उसके पास गई—और जाकरके मीठी
रवाणी से उसके क्रोध को शांत करती हुई कहने लगी—वत्स ! यह हमारे
कुल का आचार है कि सुहागरात में प्रथम समागम के समय बधू अपने पति

त्यारे तेनी माताये संतोष पाभीने तेने आ प्रभाण्डे कछुं—“जेटी ! तुं पछु तारा
घरमां तारी छच्छा प्रभाण्डे वर्ताव करी शके छे. तारा पतिने स्वभाव ओवे
छे के ते अमे तेठले- इष्ट थये होय तो पछु क्षणमात्रमां तुष्ट थछ अथ ओवेछे.”

त्रील पुत्रीये पछु डोछ डोषहुं आशेपछु करीने तेना पतिने भस्तक पर
लात लगावी दीधी. त्यारे तेना ओधने पारी धणो ढाँछो यडी गयो, तेनी आंओ
ओधथी लात थछ गछ अने तेछे तेने आ प्रभाण्डे कछुं, “अरे नीच ! कुलकन्याये
न करवा योग्य आ प्रकारनुं कार्य तें था माटे क्युं ?” आ प्रभाण्डे कहीने तेछे
तेने गडडा, पाटु आदि भारी भारीने घरमांथी धक्को भारीने अडार कडी भुकी. त्यारे
ते पुत्री तेनी माता पासे गछ अने तेमने सर्व हकीकत कही संजणावी. पुत्रीनी
आ वात द्वारा डाडिछी आडाछीने तेनी त्रील पुत्रीना पतिना स्वभावने पछु ज्ञात
आवी गयो. तुरत न ते तेनी (त्रील पुत्रीना पतिनी) पासे पडोअी गछ अने भीठी
पाछी द्वारा तेना ओधने शान्त पाडवाने प्रयत्न करवा लागी. तेछे तेने आ प्रभाण्डे
कछुं—“जभाछराज ! अमारा दुणमां सुहागराते प्रथम समागम वअते पतिना

૨૭૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

પુત્ર્યા ભવાંસ્તાહિતો ન તુ દૌર્જન્યેન । અતો ભવાન્ સ્વરોષં નિવર્તયતુ । શ્વશ્રૂ
વચનં નિશ્ચમ્ય સ રોષાન્નિવૃત્તઃ । સા સ્વપુત્રીયુક્તાન્-વત્સે ! દુરારાધ્યસ્તે પતિ
અતોઽયં ત્વયા પરમગાવધાનતયા મહતા પ્રયત્નેન સમારાધનીયઃ । इत्थं डोडिणि
ब्राह्मण्या स्व जामातृणामभिप्रायो ज्ञातः । १)

અથ ગણિકયા યથા પરાભિપ્રાયો જ્ઞાતસ્તથોચ્યતે

આસીત્ કર્મશિશ્નનગરે ચતુષ્પષ્ટિકલાચતુરા વિલાસિની નામ ગણિકા ।
તયા હિ પરાભિપ્રાયપરિજ્ઞાનાર્થં રતિભવનભિતૌ સ્વ સ્વ ક્રિયાં કુર્વન્તો રાજપુત્રા
દયશ્ચિત્રિતાઃ । તથા ગૃહે યજ્ઞાતીયો જનઃ સમાયાતિ સ સ્વજાતીયોચિત્ર-
કે મસ્તકપર ષરણ પ્રહાર કરે ।

इसी बात से भेरी पुत्री ने तुम्हें ताड़ित
क्रिया है—दुर्जनता से नहीं । इसलिये आप अपने रोष की शक्ति करलें ।
इस प्रकार से साश्रु के वचन को सुनकर उसने क्रोध छोड़ दिया । तब
डोडिणि ने अपनी पुत्री से कहा—वत्स । तेरा पति दुराराध्य है । इसलिये
तू इसकी बड़ी सारधानी के साथ बहुत ही यत्न पूर्वक सेवा करना । इस
प्रकार डोडिणि ब्राह्मणी ने अपने जामाताओं का अभिप्राय जान लिया ।

અવ ગણિકા ને જિસ પ્રહાર સે પર કા અભિપ્રય જાના વહ કહા જાતા
હૈ—કિસી નગર મેં ૬૪ કલાઓ મેં નિપુણ વિલાસવતી નામ કી એક ગણિકા
રહતી થી । ઉસને દૂસરોં કે જામિપાય કો જાનને કે નિમિત્ત અપને રતિ-
ભવન કી દીવાલ પર અપની ૨ ક્રિયાઓં કો કરતે હુઅ રાજપુત્ર આદિકોં

મસ્તક પર ચરણપ્રહાર કરવાનો આચાર આવ્યો આવે છે. તે કારણે મારી પુત્રીએ
તમારી સાથે એવો વ્યવહાર કર્યો છે, દુષ્ટતાને કારણે એવું કરવામાં આવ્યું નથી.
માટે આપે ક્રોધ છેડીને તેના વર્તન માટે તેને માફી આપવી જોઈએ.” સાસુના
આ પ્રકારના વચનો સાંભળીને તેના ગુસ્સો ઉતરી ગયો. ત્યારબાદ તે ડોડિણી
બ્રાહ્મણીએ તેની ત્રીજી પુત્રીને આ પ્રમાણે સલાહ આપી—“બેટી ! તારા પતિ દુરા-
રાધ્ય છે. માટે તારે તેમની આજ્ઞાનું બરાબર પાલન કરવું અને ખૂબ જ સાવધાની
પૂર્વક તેમની સેવા કરવી.

આ પ્રકારે ડોડિણી બ્રાહ્મણીએ પોતાના જમાઈઓના અભિપ્રાયને ઉપર
દર્શાવેલી યુક્તિ વડે બાણી લીધી.

હવે પરનો અભિપ્રાય બાણ્યવાને સમર્થ એવી એક વિલાસવતી નામની શુશ્રુકાનું
દૃષ્ટાંત આપવામાં આવે છે. કેઈ એક નગરમાં કેઈ એક ગણિકા રહેતી હતી. તે
૬૪ કલાઓમાં નિપુણ હતી. તેણે પરનો અભિપ્રાય બાણ્યવાને માટે આ પ્રકારની
પદ્ધતિ અપનાવી હતી. તેણે પોતાના રતિભવનની બીંતો પર બુંદા બુંદા પ્રકારની
ક્રિયાઓ કરતાં વિવિધ ભતિના પુરૂષોનાં ચિત્રો દોરાવ્યાં હતાં. જે પુરૂષ

अनुयोगचित्रिका टीका सूत्र ७० नोआगमतो भावोपत्रमनिरूपणम्

२७९

दर्शने समासज्जेते । ततः सा तं परिचित्वा हृदुचितव्यवहारेण तं सत्कुरुते । तस्या व्यवहारेण संतुष्टा जनारतस्यै यथेष्टमर्थं जातं प्रयच्छन्ति । इत्थं गणिकया पराभिप्रायो-ज्ञातः । २)

अथाऽमात्येन यथा पराभिप्रायो ज्ञातस्तथोच्यते—

आसीत् कस्मिंश्चिन्नगरे भद्रबाहुर्नाम राजा । तस्यासीन्नीति-शास्त्रचतुरो ह्यटिति पराभिप्रायसंवादनशीलः सुशीलो नामाऽमात्यः । अथैकदा स राजाऽमात्येन सहाश्ववाहनिकायां गतः । पथि गच्छता राजतुरङ्गमेण काऽपि स्त्रिलप्रदेशे (विनजोता-पडतल प्रदेश) स्थित्वा मूर्त्रितम् । तच्च मूर्त्रं बहुतरकालपर्यन्तं तत्र

के चिर्गों को अंकित कर दिया । उसके घरमें जिस जाति का मनुष्य आता वह अपने जातीयोचित चित्र के देखने में तल्लीन हो जाता । इस तरह उसे पहिचान कर उसके योग्य व्यवहार से उसका सत्कार करने लगती । इस प्रकार उसके व्यवहार से संतुष्ट हुए मनुष्य उसे इच्छानुकूल पैसा दे दिया करते ।

अमात्य जिस पद्धति से पर का अभिप्राय जान लेता वह बात यहाँ प्रकट की जाती है—

किसी नगर में भद्रबाहु नामक राजा था । उसके अमात्य का नाम सुशील था । वह नीतिशास्त्र में बड़ा चतुर था, पर के अभिप्राय को जल्दी से जल्दी जान लेता था । एक दिन की बात है कि राजा अमात्यके साथ अश्वक्रीडा करने के लिये बाहर निकला-मार्ग में चलते हुए राजा के घोड़े ने किसी पडतल प्रदेश में खड़े होकर पेशाबकर दिया पेशाब वहीं पर

त्यां आवतो, ते पोताना जतीयेचित् चित्रतुं निरीक्षणं कर्वाभां तन्मयं यथं जते । तेना आ प्रकारना वर्तनथी तेनी जति, स्वभाव, रुचि आदिने ते विदासवती सभल जती हती अने ते पुष्पनी साथे तेनी जति इत्थि आदिने योग्य वर्ताव जतावीने तेने सत्कार आदि द्वारा पुशपुश करी नाजती । तेना वर्तत आदिथी पुश यधने तेने त्यां जनारा पुष्पे भुम धन आपीने पोताना संतोष प्रकट करता हता ।

इवे अमात्यनुं ह्यान्त आपवाभां आवे छे अने ओ वात प्रकट कर्वाभां आवे छे के ते अमात्य केवी रीते अन्यना अभिप्रायने जल्ली देतो हतो—

कोई ओक नगरमां भद्रबाहु नामे राजा राज्य करतो हतो । तेने सुशील नामे ओक अमात्य हतो । ते नीतिशास्त्रमां धल्लो ज नियुक्त हतो । परना अभिप्रायने धल्लो ज ऊपथी जल्लो देवाने ते सभर्थ हतो । इवे ओक दिवस ते राजा ते अमात्यने साथे लधने अश्वक्रीडा करवा निमित्ते नगरनी जहार निकला पडयो । यावतां यावतां मार्गना कोई ओक पडतर (जेती न थती होय ओवे प्रदेश) पर जला रहिने बोडाओ पेशाब कर्यो । ते पेशाब सूकाधं गयो नही पशु त्यां ते जमीनमां

स्थितमेवासीत् । निवर्तमानेन राज्ञाऽश्वमूत्रं तथैवावस्थितं दृष्टम् । ततो राज्ञा चिन्तितम् यद्यत्र सरो भवेत्तर्हि तदगाधजलं भवेत्, न कदापि परिशुष्येत् । इत्थं चिन्तयन् राजा तं भूभागं चिरं निरीक्षितवान् । ततोऽमात्येन सह राजा स्वभवनं समागतः । राज्ञो मनोगतमावं परिज्ञाय तेनामात्येन तदनु तत्र महत्सरः कारितम्, परितः सरोवरपालिषु च सर्वसुकुसुमफला विविध जातीया वृक्षाः समारोपिताः । ततोऽन्यथाऽमात्येन सह तत्र प्रदेशे गच्छता तेन राज्ञा तरुगजिशोभितं तत् सरोवरं विलोक्य पृष्टम्—अहो ! केनेदमति रमणीयं सरः कारितम् ? आमात्येनोक्तम्—भवद्भिरेव, ततो विस्मितमना राजा

भरा रहा—सूखा नहीं जब अश्वक्रीडा करके राजा वापिस लौटा तो उसने उस घोंडे के पेशाब को वहीं पर भरा हुआ देखा—तब राजाने मन में विचार किया—कि यदि यहाँ पर तालाब खुदवाया जावे तो वह अगाध जल से भरा रहेगा । कभी भी सूखेगा नहीं । इस प्रकार विचार करते २ उस राजा ने बहुत समय तक उस भूभाग को देखा इसके बाद वह राजा अमात्य के साथ राजमहल में आगया । राजा के मनोगत भाव को जानने वाले उस अमात्यने कुछ समय बाद वहाँ एक बड़ा भारी तालाब खुदवा दिया । उसके चारों ओर उसने तट पर सब ऋतुओं के कुसुम और फलवाले अनेक जाति के वृक्ष लगा दिये । किसी समय अमात्य के साथ राजा उसी मार्ग से होकर निकले । वृक्षके झुण्डों से शोभित उस सरोवर को देखकर उन्होंने मंत्री से पूछा अहो ! यह अति रमणीय तालाब यहाँ किसने बनवाया है ?

એમને એમ પડ્યો રહ્યો. થોડીવાર પછી રાજા અને અમાત્ય એજ રસ્તેથી પાછાં ફર્યા. તે પડતર જગ્યામાં ઘોડાના પેશાબને હજી પણ વિના સૂકાયેલા એમને રાજાના મનમાં આ પ્રકારનો વિચાર આવ્યો—“જે આ જગ્યાએ તળાવ ખોદાવવામાં આવે, તો તે તળાવ કાયમ અગાધ જળથી ભરપૂર રહેશે. તેનું પાણી સૂકાશે નહીં આ પ્રકારનો વિચાર કરતો કરતો તે રાજા તે ભૂમિભાગ સાથે ઘણીવાર સુધી તાકી રહ્યો. ત્યારબાદ તે રાજા તે અમાત્યની સાથે રાજમહેલ તરફ રવાના થઈ ગયો. તે થતુર અમાત્ય તે રાજાના મનોગત ભાવને બરાબર સમજી ગયો. તેણે રાજાને પૂછ્યા વિના જ તે જગ્યાએ એક વિશાળ તળાવ ‘ખોદાવ્યું’ અને તેના કિનારે વિવિધ પ્રકારના અને વિવિધ ઋતુઓનાં ફલ-ફૂલથી સંપન્ન વૃક્ષો રોપાવી દીધાં. ત્યારબાદ ફરી કોઈ દિવસે તે રાજા તે અમાત્યની સાથે એજ રસ્તે થઈને ફરવા નીકળ્યો. પેલી જગ્યાએ વૃક્ષોના ઝુંડોથી સુશોભિત તે જળાશયને એમને રાજાએ તે અમાત્યને પૂછ્યું—અરે ! આ અતિશય રમણીય જળાશય અહીં કોણે ખંધાવ્યું છે ?

અનુયોગચત્રિકા ટીકા. સૂ. ૭૦ નોઆગમતો ભાવોપક્રમનિરૂપણમ્ ૨૮૧

પૃષ્ઠવાન—મયા કદા કારિતમ્ ? इति नो स्मरामि । एवं नृपेणोक्तोऽमात्यः सर्वं वृत्तं कथितवान् । राजाऽपि सचिवस्य परचित्ताभिप्रायज्ञानशक्तिं विलोक्य तं प्रशस्य तज्जीविकां वर्द्धयामास । इत्थममात्येन पराभिप्रायो ज्ञातः । ॥३॥

एतेषां सर्वेषां भावोपक्रमणां संसारफलत्वाऽप्रशस्तत्वम् । नो आगमतः प्रशस्तो भावोपक्रमश्च गुर्वादीनाम् । श्रुतादिपरिज्ञानार्थं यद् गुर्वादीनां भावोप-

તથ અમાત્ય ને કહા મહારાજ ! આપને હી વનવાયા હૈ, તવ રાજા કે મન મેં વડા આશ્ચર્ય હુઆ ઔર ઉસને મંત્રી સે પૂછા મૈને યહ કરવાયા હૈં ? ઇસ વાત કી તો મુજે યાદ હી નહીં હૈ । ઇસ પ્રકાર રાજા સે કહે ગયે અમાત્ય ને સવ યથા સ્થિતવૃત્તાન્ત ઉનસે કહ દિયા ! રાજા ને તવ મંત્રા કી પરકે ચિત્ત કે અભિપ્રાય કો જાનને કી શક્તિ દેસ્ત્રકર ઉસકી વડી પ્રશંસા કી ઔર ઉસકે વેતનકી વૃદ્ધિ કરદી ઔર ઉનકા પદ વડા દિયા ઇસ પ્રકાર યહ પરચિત્ત કે અભિપ્રાય કો જાનનેવાળે અમાત્ય કી વથા હૈ । કિ જિસમેં ઇસ પ્રકાર સે અમાત્ય ને પરચિત્તાભિપ્રાય કો જાના યહ કહા ગયા હૈં । ઇન સવ ભાવોપક્રમણોં મેં સંસારરૂપ ફલ જનકતા હોને કે કારણ અપ્રશસ્તતા હૈ । (પસત્યે ગુરુમાઈણં) ગુરુ આદિકોં કે અભિપ્રાય કો યથાવત્ જાનના યહ નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ હૈ । અર્થાત્ શ્રુત આદિકોં કે પરિજ્ઞાન કે

ત્યારે અમાત્યે જવાબ આપ્યો—“હિ મહારાજા આપે પોતે જ આ જગાશય બંધાવ્યું છે.” ત્યારે રાજાના આશ્ચર્યને પાર ન રહ્યો. તેણે અમાત્યને કહ્યું, “આ જગાશય શું મેં બંધાવ્યું છે ? આ જગાશય બંધાવવાનો કોઈ આદેશ કર્યાનું મને યાદ નથી !” ત્યારે અમાત્યે આ પ્રમાણે ખુલાસો કર્યો—“હિ મહારાજા ! ઘણા સમય સુધી આ જગ્યાએ ઘોડાના મૂત્રને વિના સૂકાથે પડ્યું રહેલું જોઈને આપે આ જગ્યાએ જગાશય બંધાવવાનો વિચાર કરેલો. આપે માનેલું કે આ જગ્યાએ જગાશય ખેદાવવાથી તેમાં પાણી કદી સૂકાશે નહીં. આપના આ મનોગત વિચારને આપ અસ્વીકીકા કરીને પાછા ફરતી વખતે જે દૃષ્ટિથી તે અસ્વીમૂત્રની સામે નિરખી રહ્યા હતા—તે દૃષ્ટિ દ્વારા જાણી જોઈને મેં આ જગાશય અહીં બંધાવ્યું છે.” પરના ચિત્તને સમજવાની પોતાના અમાત્યની તે શક્તિ જોઈને રાજાને ઘણો હર્ષ થયો તેણે તેની ખૂબ પ્રશંસા કરી અને તેનું વેતન અને હોદ્દો વધારી દઈને તેની કદર કરી. આ પ્રકારની અન્યના મનોગત લાવોને જાણનાર તે અમાત્યની કથા છે. આ ત્રણે લાવોપક્રમણનાં દૃષ્ટાન્તો છે. આ ભાવોપક્રમણમાં સંસારરૂપ ફલજનકતાનો સદ્ભાવ હોવાથી તેમને અપ્રશસ્ત કહેવામાં આવેલ છે.

(પસત્યે ગુરુમાઈણં) શુરૂ આદિનાં અભિપ્રાયને યથાર્થરૂપે જાણવા તે પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ છે. એટલે કે શ્રુત આદિનું પરિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા ઇચ્છતા શિષ્યાદિકાને

૨૮૨

અનુયોગદ્વારસ્ત્રોત્રે

ક્રમણં સ પ્રશસ્તભાવોપક્રમઃ ।તત્પર્યઃ । નન્વત્રાનુયોગદ્વારવિચારઃ પ્રકૃતઃ, અનુ-
યોગશ્ચ વ્યાખ્યાનમ્, એવં ચ યદેવાનુયોગદ્વારવ્યાખ્યાનોપયોગિ તદેવાત્ર વક્તવ્યમ્ ।
ગુરુભાવોપક્રમસ્તુ વ્યાખ્યાનાનુપયોગિત્વાદવક્તવ્ય એવેતિ ચે દુચ્યતે
વ્યાખ્યાનં હિ ગુર્વાયસ્તં ભવતિ । અતો વ્યાખ્યાનોપલબ્ધયે
શિષ્યાણાં ગુરોરભિપ્રાયજ્ઞાનં પરમાવશ્યકમ્ । ગુર્વભિપ્રાયજ્ઞો હિ તદનુકૂલાચરણેન
ગુરુ પ્રસાદયતિ, પ્રસાદિતો ગુરુસ્તત્ત્મૈ સ્વરહસ્યં શાસ્ત્રં પ્રરૂપયતિ । એવં ગુરુભાવો
પક્રમોઽપિ વ્યાખ્યાનસ્યાજ્ઞમેવ, અતો ગુરુભાવોપક્રમ ઉચિત એવ । ઉક્તં ચ—
“ગુર્વાયત્તા યસ્માદ્દ્વાસ્ત્રારમ્ભા ભવન્તિ સર્વેઽપિ ।

તસ્માદ્ ગુર્વારાધનપરેણ હિતકાઙ્ક્ષિણા ભાવ્યમ્ ॥૧૧॥

લિયે જો શિષ્યાદિકો ગુરુ આદિ કોં કે ભાવ કા યથાવત્ પરિજ્ઞાન હોતા
હૈ—વહ પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ હૈ ।

શંકા—યહાં તો અનુયોગદ્વારકા વિચાર ચલ રહા હૈ । અનુયોગ કા
અર્થ વ્યાખ્યાન હૈ । ઇસલિયે જો અનુયોગદ્વાર કે વ્યાખ્યાન કરને મેં ઉપયોગી
હો વહી યહાં કહના चाहिये । ગુરુ ભાવોપક્રમ તો વ્યાખ્યાન મેં અનુપયોગી
હૈ । ઇસલિયે ઉસે યહાં નહી કહના चाहिये ।—

ઉત્તર—વ્યાખ્યાન ગુરુ કે આધીન હોતા હૈ । અતઃ ઉસ વ્યાખ્યાન કી
પ્રાપ્તિ કે લિયે ગુરુ કે અભિપ્રાય કા જ્ઞાન કરના શિષ્યોં કો પરમ આવશ્યક
હૈ । ગુરુ કે અભિપ્રાય કો જાનને ચાલા શિષ્ય ઉનકો અપને ઉપર અનુકૂલ
આચરણ સે પ્રસન્ન કરતા હૈં ઓર પ્રસાદિત હુએ વે ગુરુજન ઉસકે લિયે રહસ્ય
યુક્ત શાસ્ત્ર કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ગુરુકે ભાવકા શિષ્ય કો યથાવત્
પરિજ્ઞાન હોના યહ મી વ્યાખ્યાન કા અંગ હી હૈ । ઇમલિયે ઉસકા કથન
યહાં ઉચિત હી હૈ । કહા મી હૈ (ગુર્વાયત્તા) ઇત્યાદિ । શાસ્ત્રોં કા પઢનાદિ-

ગુરુઆદિકોના ભાવનું જે યથાર્થ પરિજ્ઞાન થાય છે, તેનું નામ નો
આગમની અપેક્ષાએ પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ છે.

શંકા—અહીં તો અનુયોગદ્વારની પ્રરૂપણા ચાલી રહી છે. અનુયોગનો અર્થ
વ્યાખ્યાન થાય છે. તેથી અનુયોગદ્વારનું વ્યાખ્યાન કરવામાં ઉપયુક્ત હોય તેમનું
જ કથન અહીં થવું જોઈએ. ગુરુભાવોપક્રમ તો વ્યાખ્યાનમાં અનુપયોગી છે, તેથી
અહીં તેનું કથન થવું જોઈએ નહીં.

ઉત્તર—વ્યાખ્યાન ગુરુને આધીન હોય છે. તેથી તે વ્યાખ્યાનની પ્રાપ્તિને
માટે ગુરુના અભિપ્રાયને બહુ લેવાનું જ્ઞાન શિષ્યોને માટે પરમ આવશ્યક ગણાય
છે. ગુરુના અભિપ્રાયને બહુનારો શિષ્ય તેમને અનુકૂળ થઈ પડે એવા પોતાના
આચરણથી તેમને ખુશ કરે છે, અને તેના વર્તનથી સંતુષ્ટ થયેલા તે ગુરુ તેની
સમક્ષ રહસ્યયુક્ત શાસ્ત્રની પ્રરૂપણા કરે છે. આ રીતે ગુરુના ભાવનું શિષ્યને યથા-
વત્ પરિજ્ઞાન થવું એ પણ વ્યાખ્યાનના એક અંગરૂપ જ છે. તે કારણે સૂત્રકારનું
ઉપયુક્ત કથન ઉચિત જ છે. કહું પણ છે કે—(ગુર્વાયત્તાઇત્યાદિ) શાસ્ત્રોનું પઢન.

અનુયોગવન્દિકા ટીકા સ્ત્ર ૭૦ નોઆગમતો મ્હાવોપક્રમનિરૂપણમ્

૨૮૩

અન્યચ્ચ—“જુત્તં ગુરુમગગહણં નાઝ્ઞણ તયં જહદ્વિયં તત્તો ।

જહ હોઈ સુપ્પસન્નં, તહ જહ્યવ્વં ગુણત્થીહિ” ॥૧॥

છાયા—યુક્તં ગુરુમનોગ્રહણં, જ્ઞાત્વા તદા યથાસ્થિતં તતઃ ।

યથા ભવતિ સુપ્રસન્નં, તથા યતિતવ્યં ગુણાર્થિભિઃ ॥૧॥

પુનઃ

“ગુરુચિતાયત્તોઈ”, વસ્સાણંગાઈ જેણ સવ્વાઈ ।

તેણ સહ સુપ્પસન્નં, હોઈ તયં તં સહા કુઝ્ઞા” ॥૨॥

છાયા—ગુરુચિતાયત્તાનિ, વ્યાખ્યાનાઙ્ગાનિ યેન સર્વાણિ ।

તેન યથા સુપ્રસન્નં, ભવતિ તદા તત્ તથા કુર્યાત્ ॥૨॥

રૂપ સમસ્ત અધ્યયન ગુરુ મહારાજ કે સમીપ મેં હી હોતા હૈં इसलिये समस्त शास्त्रारम्भ गुरुमहाराज के आधीन है । अतः अपने हित की अभिलाषा रखने वाले शिष्य का कर्तव्य है कि वह गुरु महाराज की आराधना करने में सत्पर रहे ।

१॥—और भी गुरुमहाराज के मनका-अभिप्राय-शिष्य को जानना उचित है । तब ही वह उनसे यथार्थ में शास्त्र का रहस्य ज्ञात कर सकता है । इसलिये गुणाधी-विनीत शिष्य को चाहिये कि जिस प्रकार से गुरु महाराज सुप्रसन्न रहें ऐसा यत्न उसे करते रहना चाहिये ।

२॥—फिर भी कहा है ‘गुरु चित्ताइ’ इत्यादि । व्याख्यान के समस्त अंग गुरु महाराज के चित्ताधीन रहा करते हैं । इसलिये जिस प्रकार से वे सुप्रसन्न रहें वैसा सब काम शिष्य को अवश्य कर्तव्य है । ३॥—और भी

આદિરૂપ સમસ્ત અધ્યયન ગુરુ મહારાજની સમીપે જ થાય છે, તેથી સમસ્ત શાસ્ત્રારંભ ગુરુને આધીન છે. તેથી પોતાના હિતની ખેવના રાખનાર શિષ્યનું એ કર્તવ્ય થઈ પડે છે કે તેણે ગુરુમહારાજની આરાધના કરવાના કાર્યમાં તત્પર રહેવું જોઈએ.

(૧) ગુરુમહારાજના મનોભાવને (અભિપ્રાયને) બાણી લેવો તે શિષ્યને માટે અતિ આવશ્યક છે. ત્યારબાદ જ તે તેમની પાસેથી શાસ્ત્રના યથાર્થ રહસ્યને બાણી શકે છે. તેથી જ પ્રકારે ગુરુ રાજી રહે એ પ્રકારનો પ્રયત્ન ગુણાધી-વિનીત શિષ્યે કરવો જોઈએ.

(૨) કહ્યું છે કે-“ગુરુચિત્તાઈ” ઇત્યાદિ-વ્યાખ્યાનના સમસ્ત અંગો ગુરુ મહારાજના ચિત્તાધીન રહે છે. તેથી જ પ્રકારે તેઓ પ્રસન્ન રહે એ પ્રકારના કાર્યો શિષ્યોએ અવશ્ય કરવા જોઈએ.

પુનઃ

“આગારિગિયકુસલં, જહ સેયં વાયસં વણ પુજ્ઞા ।

તહવિ ય સે નવિ કૂઢે, વિરહમ્મિ ય કારણં પુચ્છે” ॥૩॥

છાયા—આકારેક્ષિતકુસલં (શિષ્યં) યદિ શ્વેતં વાયસં વદેયુઃ પૂજ્યાઃ

તથાપિ ચ તેષાં (વચનં) નાપિ કૂટયેત્, વિરહે ચ કારણં પૂચ્છે ॥૩॥

તેષાં પૂજ્યાનાં વચનં નાપિ કૂટયેત્=અસત્યં ન કુર્યાત્, તથેતિ કુર્યાદિત્યર્થઃ
વિરહે=વિજને એકાન્તે इत्यर्थः, કારણં=શ્વેતવાયસકથનપ્રયોજનં પૂચ્છેત્ શેષં સુગમમ્ ॥

સ એષ નોઆગમતો ભાવોપક્રમઃ । સ એષ ભાવોપક્રમઃ । સ એષ
ઉપક્રમઃ ॥સૂ૦ ૭૦॥

‘ગુરુભાઈણં’ इत्यत्रादिशब्देन सूचितं शास्त्रभावापक्रमं निरूपयितुमाह—

મૂલમ્—અહવા—ઉવક્રમે છઠ્ઠિવહે પળળત્તે, તંજહા—આણુપુઠ્ઠી૧,

નામં૨, પળામં૩ વત્તઠ્ઠવયા૪ અત્થાહિગારે૫ સમોયારે૬ ॥સૂ૦ ૭૧॥

કહા હૈ ‘આગારિગિયકુસલં, इत्यादि आकार और इंगित (अभिप्राय) के जानने में कुशल शिष्य यदि पूज्य गुरुमहाराज काले कौवे को यदि सफेद कौवा भी कह दें, तो भी गुरुजन के वचन को उसे बिना किसी तर्क के स्वीकार कर लेना चाहिये । बाद में एकान्त में काले कौवे को सफेद कहने के प्रयोजन—का कारण पूछना चाहिये । (से तं नोआगमओ भावोवकमे—से तं भावोवकमे—से तं उवकमे) वह यह नोआगमको आश्रित करके भावोपक्रम है । इस्-तरह आगम और नोआगमको आश्रित करके भावोपक्रम का यहाँ तक स्वरूप वर्णन किया । इस स्वरूप से उपक्रम का स्वरूप ज्ञात हो जाता है । सूत्र ७० ।

(૩) કહ્યું પશુ છે કે “આગારિગિયકુસલં” ઇત્યાદિ—આકાર અને ઇંગિતને જાણવામાં નિપુણ એવો શિષ્ય ગુરૂનાં વચનને તર્ક અથવા દલીલ કર્યા વિના સ્વીકારી લે છે. ધારે કે ગુરૂ કહે કે “કાગડાનો વણુ ધોળો હોય છે,” તો તેમના તે કથનને પશુ તે શિષ્ય દલીલ કર્યા વિના સ્વીકારી લે છે. ત્યારબાદ એકાન્તમાં તેણે ગુરૂને પૂછ્યું એઈએ કે “આપ કાગડાનો વણુ ધોળો કહેો છો તેનું કારણ કૃપા કરીને સમજાવો.”

(સે તં નોઆગમઓ ભાવોવકમે) આ નોઆગમને આશ્રિત કરીને ભાવો-પક્રમનું સ્વરૂપ સમજવું. (સે તં ભાવોવકમે) આગમ ભાવોપક્રમ અને નો-આગમ ભાવોપક્રમરૂપ ભાવોપક્રમના બંને બેદોનું નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય છે. (સે તં ઉવક્રમે) આ રીતે ઉપક્રમના સમસ્ત બેદોનું વણુન અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ૦ ૭૦॥

અનુમેઃ મવન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૭૧ શાસ્ત્રભાવોપક્રમનિરૂપણમ્

૨૮૫

છાયા--અથવા-ઉપક્રમઃ વર્ધિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથા-આનુપૂર્વી ૧, નામ ૨, પ્રમાણ ૩, વક્તવ્યતા ૪, અર્થાધિકાર ૫, સમવતાર ૬ ॥મુ ૭૧॥

ટીકા--અહવા ઇત્યાદિ--

પૂર્વે ગુરુભાવોપક્રમઃ પ્રદર્શિતઃ સંપ્રતિ શાસ્ત્રભાવોપક્રમઃ પ્રરૂપ્યતે-‘અથવે’-તિ, અથવા-અનન્તરં=ગુરુભાવોપક્રમવર્ણનાનન્તરમ્ ઉપક્રમઃ-શાસ્ત્રભાવોપક્રમઃ વર્ધિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । ‘તં જહા’ ઇત્યાદિ, તથા-પથા તસ્ય ભાવોપક્રમસ્ય વર્ધિધર્ત્વે તદુચ્યતે ‘આણુપુર્વી’ ઇત્યાદિના । તત્ર પ્રથમ ઉપક્રમ આનુપૂર્વી ૧, દ્વિતીયો નામ ૨, તૃતીયઃ પ્રમાણમ્ ૩, ચતુર્થો વક્તવ્યતા ૪, પચ્ચમઃ-અર્થાધિકારઃ ૬, ષષ્ઠઃ સમવતારઃ ૬ ઇતિ । ॥મુ ૭૧॥

અવ સૂત્રકાર “ગુરુમાર્દણ” હસ પદ મેં આદિ પદ સે સૂચિત શાસ્ત્રભાવોપક્રમ કા નિરૂપણ કરને કે લિયે “અહવા” ઇત્યાદિ સૂત્ર કહતે હેઃ -

“અહવા ઉવક્રમે છવ્વિહે” ઇત્યાદિ । ॥મુત્ર ૭૧॥

શબ્દાર્થ--(અહવા) અથવા (ઉવક્રમે) ઉપક્રમ (છવ્વિહે) છહ મકાર કા (પણ્ણત્તે) કહા ગયા હૈ । (તંજહા) વે મકાર ચે હૈ--(આણુપુર્વી ૧, નામ ૨, પળામં ૩, વક્તવ્યતા ૪, અત્યાહિગારે ૫, સમોયારે ૬,) આનુપૂર્વી ૧, નામ ૨, પ્રમાણ ૩, વક્તવ્યતા ૪, અર્થાધિકાર ૫, ઓર સમવતાર ૬, પહિલે ગુરુભાવોપક્રમ કા કથન સૂત્રકારને કરદિયા હૈ । અવ વે આદિપદ સે સૂચિત શાસ્ત્ર ભાવોપક્રમ કા નિરૂપણ કરતે હૈ--પહાં ઉપક્રમ પદ સે શાસ્ત્રભાવોપક્રમ લિયા ગયા હૈ । અતઃશાસ્ત્રોક્ત ભાવોપક્રમ પૂર્વોક્તરૂપ સે ૬ પ્રકાર કા હૈ એસા સૂત્ર કા સંક્ષિપ્તાર્થ હૈ । ॥મુત્ર ૭૧॥

હવે સૂત્રકાર “ગુરુમાર્દણ” આ પદમાં આદિ પદથી સૂચિત શાસ્ત્રભાવોપક્રમનું નિરૂપણ કરવાને માટે “અહવા” ઇત્યાદિ સૂત્રોત્તં કથન કરે છે--

“અહવા ઉવક્રમે છવ્વિહે”--ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ--(અહવા) અથવા (ઉવક્રમે) છવ્વિહે (પણ્ણત્તે) ઉપક્રમ છ પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) તે છ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે--(આણુપુર્વી, નામ, પળામં, વક્તવ્યતા, અત્યાહિગારે, સમોયારે) (૧) આણુપૂર્વી, (૨) નામ, (૩) પ્રમાણ, (૪) વક્તવ્યતા (૫) અર્થાધિકાર અને ૬ સમવતાર.

પહેલાં ગુરુભાવોપક્રમનું પ્રતિપાદન સૂત્રકારે કરી લીધું. હવે તેઓ આદિપદથી સૂચિત શાસ્ત્રભાવોપક્રમનું નિરૂપણ કરે છે-- આ વાત “અહવા” અથવા પદથી સૂચિત થાય છે. અહીં ઉપક્રમ પદથી શાસ્ત્રભાવોપક્રમ ગૃહીત થયો છે. તેથી શાસ્ત્રોક્તભાવોપક્રમ પૂર્વોક્તરૂપે છ પ્રકારનો હોય છે, એવો આ સૂત્રનો સંક્ષિપ્તાર્થ છે. પ્રસ. ૩૧.

અથાનુપૂર્વાદીનાં સ્વરૂપં મિરૂપયિતુમાહ,

મૂલમ્—સે કિં તં આણપુઠ્ઠી૧, આણપુઠ્ઠી દસવિહા, પળ્ણત્તા, તંજહા નામાણપુઠ્ઠી૧, ઠવળાણપુઠ્ઠી૨, દઢ્વાણપુઠ્ઠી૩, સેત્તાણપુઠ્ઠી૪, કાલાણપુઠ્ઠી૫, ઉક્કિત્તણાણપુઠ્ઠી૬, ગળળાણપુઠ્ઠી૭, સંઠાણાણપુઠ્ઠી૮, સામાયારીઆણપુઠ્ઠી૯, માવાણપુઠ્ઠી૧૦ ॥સૂ. ૭૨॥

અર્થ—અથ કાઝો આનુપૂર્વી ? આનુપૂર્વી દશવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા—નામાનુપૂર્વી૧, સ્થાપનાનુપૂર્વી૨, દ્રવ્યાનુપૂર્વી૩, ક્ષેત્રાનુપૂર્વી૪, કાલાનુપૂર્વી૫, ઉત્કીર્ત્તાનુપૂર્વી૬, ગળળાનુપૂર્વી૭, સંસ્થાનાનુપૂર્વી૮, સામાચાર્યાનુપૂર્વી૯, માવાનુપૂર્વી૧૦ ॥સૂ. ૭૨॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ कौऽसौ आनुपूर्वी ? इति । उत्तरमाह—आनुपूर्वी—इह हि पूर्वं प्रथमम् आदिः इति पर्यायाः । पूर्वस्य—अनु=

અવ સૂત્રકાર આનુપૂર્વી આદિ કોં કે સ્વરૂપ કા કથન પ્રારંભ કરતે હૈં—
इस में सब से प्रथम वे आनुपूर्वी कितने प्रकार की है यह स्पष्ट करते हैं—
“से किं तं” इत्यादि । ॥सूत्र ७२॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આણપુઠ્ઠી) હે મદન્ત ! પૂર્વ પ્રકાન્ત આનુપૂર્વી કયા હૈ—(આણપુઠ્ઠી દસવિહા પળ્ણત્તા) ઉત્તર—આનુપૂર્વી દસ પ્રકાર કી વહી ગઈ હૈ । (તં જહા) જો હસ પ્રકાર સે હૈ—(નામાણપુઠ્ઠી) એક નામાનુપૂર્વી (ઠવળાણપુઠ્ઠી) દસરી સ્થાપનાનુપૂર્વી (દઢ્વાણપુઠ્ઠી) તીસરી દ્રવ્યાનુપૂર્વી (સેત્તાણપુઠ્ઠી) ચોથી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી (કાલાણપુઠ્ઠી) પાંચવી કાલાનુપૂર્વી (ઉક્કિત્તણાણપુઠ્ઠી) છઠી ઉત્કીર્ત્તાનુપુર્વી (ગળળાણપુઠ્ઠી) સાતવીં ગળળાનુપૂર્વી (સંઠાણાણપુઠ્ઠી) આઠવીં—સંસ્થાનાનુપૂર્વી (સામાયારીઅન) નવવીં સમાચાર્યાનુપૂર્વી (માવાણપુઠ્ઠી) ઓર દશમી માવાનુપૂર્વી । પૂર્વ, પ્રથમ ઓર આદિ યે સબ પર્યાય

હવે સૂત્રકાર આનુપૂર્વી આદિકોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવાનો પ્રારંભ કરે છે. તેમાં સૌથી પહેલાં તે એ વાત પ્રકટ કરે છે કે આનુપૂર્વી કેટલા પ્રકારની છે ?

“સે કિં તં આણપુઠ્ઠી” इत्यादि—

અર્થ—(સે કિં તં આણપુઠ્ઠી) શિષ્યે અરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે મદન્ત ! પૂર્વપ્રકાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુત) આનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—આણપુઠ્ઠી દસવિહા પળ્ણત્તા—તંજહા) આનુપૂર્વીના નીચે પ્રમાણે દશ પ્રકાર કયા છે—

(નામાણપુઠ્ઠી) (૧) નામાનુપૂર્વી, (ઠવળાણપુઠ્ઠી) (૨) સ્થાપનાનુપૂર્વી, (દઢ્વાણપુઠ્ઠી) (૩) દ્રવ્યાનુપૂર્વી, (સેત્તાણપુઠ્ઠી) (૪) ક્ષેત્રાનુપૂર્વી, (કાલાણપુઠ્ઠી) (૫)

અનુયોગચત્રિકા ટીકા સુત્ર ૭૩ નામાધાનુપૂર્વી નિરૂપણમ્

૨૮૭

પશ્ચાત્-અનુપૂર્વ, તસ્ય ભાવઃ આનુપૂર્વી-ત્ર્યાદિવસ્તુ સંહતિઃ, આનુપૂર્વી-અનુક્રમઃ પરિપાટીત્યેતે શબ્દાઃ સમાનાર્થકાઃ । ત્ર્યાદિવસ્તુ સંહતિરૂપા પદ્માઽનુપૂર્વી નામાનુપૂર્વ્યાદિભેદૈર્દશવિધા વિભેજ્યેતિ ॥સૂ. ૭૨॥

સમ્પ્રતિ નામાધાનુપૂર્વી નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—નામ ઠવળાઓ ગયાઓ ।

સે કિં તં દઢ્વાળુપુઢ્વી ? દઢ્વાળુપુઢ્વી ઢુવિહા પળ્ળત્તા, તં જહા—આગમઓ ય નોઆગમઓ ય ।

સે કિં તં આગમઓ દઢ્વાળુપુઢ્વી જસસ ણં આળુપુઢ્વિત્તિ પયં સિવિલ્લયં ઠિયં જિયં મિયં પરિજિયં જાવ નો અળુપ્પેહામ્, કમ્હા ? અળુવઓગો દઢ્વમિત્તિ કઢ્ઢુ । ણેગમસસ ણં ઇગો અળુવઉત્તો આગમ-ઓ ઇગા દઢ્વાળુપુઢ્વી જાવ કમ્હા ? જઢ્ઢુ જાળળ અળુવઉત્તે ન ભવઢ્ઢુ જઢ્ઢુ અળુવઉત્તે જાળળ ન ભવઢ્ઢુ તમ્હા ણત્થિઆગમઓ દઢ્વાળુપુઢ્વી । સે તં આગમઓ દઢ્વાળુપુઢ્વી ।

વાચી શબ્દ હૈં । પૂર્વસ્ય અનુ અનુપૂર્વ—પૂર્વ કે પીછે ઇસા અનુપૂર્વ શબ્દ કા અર્થ હોતા હૈં । અનુપૂર્વ કા જો ભાવ હૈં વહ આનુપૂર્વી હૈં । અર્થાત્ ત્રીન આદિ વસ્તુઓં કા જો સમુદાય હૈં વહ આનુપૂર્વી હૈં । આનુપૂર્વી અનુક્રમ, પરિપાટી યે સર્વ આનુપૂર્વી કે પર્યાયવાચી શબ્દ હૈં । ત્રીન આદિ વસ્તુઓં કી સંહતિ રૂપ યહ આનુપૂર્વી પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે દશ ભેદવાલી હૈં ઇસા જાનના ચાહિયે । ॥સુત્ર૭૨॥

કાલાનુપૂર્વી, (ઉક્તિજ્ઞાનુપુઢ્વી) (૬) ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી, (ગળ્ળાળુપુઢ્વી) (૭) ળ્ણનાનુપૂર્વી, (સંઠાળાનુપુઢ્વી) (૮) સંસ્થાનાનુપૂર્વી (સામાચારી આળુપુઢ્વી) (૯) સમાચાર્યાનુપૂર્વી અને (ભાવાળુપુઢ્વી) (૧૦) ભાવાનુપૂર્વી.

પૂર્વ, પ્રથમ અને આદિ આ ત્રણે પર્યાયવાચી શબ્દો છે. “પૂર્વસ્ય અનુ અનુપૂર્વ” “પૂર્વ (પ્રથમ)ની પાછળ”, એવો અનુપૂર્વ શબ્દનો અર્થ થાય છે. આ અનુપૂર્વનો જે ભાવ છે તેનું નામ અનુપૂર્વી છે. એટલે કે આદિ વસ્તુઓનો જે સમુદાય છે તેનું નામ આનુપૂર્વી છે. આનુપૂર્વી, અનુક્રમ અને પરિપાટી, આ ત્રણે આનુપૂર્વીના પર્યાયવાચી શબ્દો છે. ત્રણ આદિ વસ્તુઓના સમૂહરૂપ આ આનુપૂર્વી પૂર્વોક્ત દસ ભેદવાળી કહી છે, એમ સમજવું. ॥સુ. ૭૨॥

૨૮૮

અનુયોગદ્વારણે

સે કિં તં નો આગમઓ દ્વાણુપુઁવી ? નો આગમઓ દ્વાણુ-
પુઁવી તિવિહા પળ્ળત્તા, તં જહા—જાળયસરીરદ્વાણુપુઁવી, ભવિય-
સરીરદ્વાણુપુઁવી, જાળયસરીરભવિયસરીરવઙ્ગરિત્તા દ્વાણુપુઁવી ।
સે કિં તં જાળયસરીરદ્વાણુપુઁવી ? જાળયસરીરદ્વાણુપુઁવી
આણુપુઁવી પયત્થાહિગારજાળયસ્સ જં સરીરયં વવગયચુયચાવિયચત્ત-
દેહં સેસં જહા દ્વાવસ્સણ જાવ સે તં જાળયસરીરદ્વાણુપુઁવી ।
સે કિં તં ભવિયસરીરદ્વાણુપુઁવી ? ભવિયસરીરદ્વાણુપુઁવી જે
જીવે જોણીજમ્મણિવલ્લંસે મેસં જહા દ્વાવસ્સણ જાવ સે તં
ભવિયસરીરદ્વાણુપુઁવી ।

સે કિં તં જાળયસરીરભવિયસરીરવઙ્ગરિત્તા દ્વાણુપુઁવી ?
જાળયસરીરભવિયસરીરવઙ્ગરિત્તા દ્વાણુપુઁવી દુવિહા પળ્ળત્તા,
તં જહા—ઓવણિહિયા ય અળોવણિહિયા ય । તત્થ ણં જા સા
ઓવણિહિયા સો ઠપા । તત્થ ણં જા સા અળોવણિહિયા સા દુવિહા
પળ્ળત્તા, તં જહા—નેગમવવહારાણં, સંગહસ્સ ય ॥સૂ. ૭૩॥

છાયા—નામસ્થાપને ગતે ।

અથ કાઽસૌ દ્રવ્યાનુપૂર્વી ? દ્રવ્યાનુપૂર્વી દિવિધા પ્રજ્ઞમા, તથા—આગમતથ
નોઆગમતથ ।

અવ સુત્રકાર નામાનુપૂર્વી કો નિરૂપણ કરતે હૈં—

“નામ ઠવ્ણાઓ ગયાઓ” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૭૨॥

શબ્દાર્થ—(નામઠવ્ણાઓ ગયાઓ) નામાનુપૂર્વી ઓર સ્થાપનાનુપૂર્વી કા
સ્વરૂપ નામાવશ્યક ઓર સ્થાપનાવશ્યક કે જૈસા જ્ઞાનનાં ચાહિયે । (સે કિં

હવે સુત્રકાર નામાનુપૂર્વી નિરૂપણ કરે છે—

“નામઠવ્ણાઓ ગયાઓ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નામઠવ્ણાઓ ગયાઓ) નામાનુપૂર્વી અને સ્થાપનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ
નામાવશ્યક અને સ્થાપના આવશ્યકના પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ અનુસાર જ સમજવું (સે કિં
તં દ્વાણુપુઁવી ?) કે ભગવન ! દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

अनुयोगचन्द्रिकाटीका सूत्र ७३ नामानुपूर्वीनिरूपणम्

२६१

अथ काऽसौ आगतो द्रव्यानुपूर्वी? आगतो द्रव्यानुपूर्वी यस्य खलु चानुपूर्वीति पदं शिसितं स्थितं जितं मितं परिजितं यावद् नोअनुपेक्षया, कस्मात्? अनुपयोगो द्रव्यमिति कृत्वा । नैगमस्य खलु एकोऽनुपयुक्तः आगत एका द्रव्यानुपूर्वी यावत्, कस्मात्? यदि ज्ञायकः अनुपयुक्तो न भवति, यदि अनुपयुक्तो ज्ञायको न भवति, तस्माद् नास्ति आगतो द्रव्यानुपूर्वी । सैषा आगतो द्रव्यानुपूर्वी ।

अथ काऽसौ नोआगतो द्रव्यानुपूर्वी? नोआगतो द्रव्यानुपूर्वी त्रिविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी, भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी, ज्ञायकशरीर-भव्यशरीरव्यतिरिक्ता द्रव्यानुपूर्वी । अथ काऽसौ ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी? ज्ञायक-शरीरद्रव्यानुपूर्वी—आनुपूर्वीपदार्थाधिकारज्ञायकस्य यत् शरीरकं व्यपगतच्युतव्या-वितत्यक्तदेहं शेषं यथा द्रव्यावश्यके तथा भणितव्यम्, यावत् सैषा ज्ञायक-शरीरद्रव्यानुपूर्वी ।

अथ का सा भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी? भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी—यो जीवो योनि-जन्मनिष्क्रान्तः शेषं यथा द्रव्यावश्यके० यावत् सैषा भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी । अथ काऽसौ ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्ता, द्रव्यानुपूर्वी? ज्ञायकशरीरभव्यशरीर-व्यतिरिक्ता, द्रव्यानुपूर्वी द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—औपनिधिकी च अनौपनिधिकी च । तत्र खलु या सा औपनिधिकी सा स्थापया । तत्र खलु या सा अनौपनिधिकी सा द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—नैगमव्यवहारयोः, संग्रहस्य च ॥सू० ७३॥

टीका—‘नाम ठवणाओ’ इत्यादि—

नामस्थापने=नामानुपूर्वी-स्थापनानुपूर्वी गते=गत=गतप्राये उक्तप्राये इत्यर्थः । अयं भावः—नामानुपूर्वी स्थापनानुपूर्वी चैतद्वयं नामावश्यकवत् स्थापनावश्यकवद् विज्ञेयमिति ।

अथ द्रव्यानुपूर्वी निरूपयितुमाह—‘से किं तं’ इत्यादि ।

अथ काऽसौ द्रव्यानुपूर्वी? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरमाह—‘द्रव्यानुपूर्वी’ इत्यादि । द्रव्यानुपूर्वी द्विविधा प्रज्ञप्ता । तद् यथा—आगततश्च, नोआगततश्च । तं द्रव्यानुपूर्वी हे भदन्त ! द्रव्यानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ? (द्रव्यानु-पूर्वी दुविधा पणत्ता) उत्तर—द्रव्यानुपूर्वी दो प्रकार की कही गई है (तंजहा) वे प्रकार ये हैं (आगतभोय नोआगतभोय) एक आगत से

उत्तर—(द्रव्यानुपूर्वी दुविधा पणत्ता—तंजहा) द्रव्यानुपूर्वीना नीचे प्रमाणे दो प्रकार कहे छे. (आगतओ य नोआगतओ य) (१) आगतनी अपेक्षाओ अने (२) नोआगतनी अपेक्षाओ आगतने। आश्रित करिने ओ द्रव्यानुपूर्वी

તત્ર-આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વીં यस્ય સાધોઃ સ્વલુ આનુપૂર્વીંતિ પદં શિક્ષિતં સ્થિતં
જિતં મિતં પરિજિતં યાવત્-રહ યાવચ્છન્દાત્-નામસમં ઘોષસમમ્ અહીનાક્ષરમ્
અત્યક્ષરમ્ અવ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્ અસ્વલિતમ્ અમિલિતમ્ અવ્યત્યાગ્રેહિતં મતિપૂર્ણં મતિ-

ઔર દૂસરી નોઆગમ સે । આગમ કો આશ્રિત કરકે જો દ્રવ્ય આનુપૂર્વીં
હોતી હૈ વહ આગમ દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હૈ । (સે કિં તં આગમઓ દ્રવ્યાણુપુર્વ્વી)
હૈ અદન્ત । આગમ કો આશ્રિત કરકે જો દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હોતી હૈ ? ઉસકો
કયા સ્વરૂપ હૈ ? (આગમઓ દ્રવ્યાણુપુર્વ્વી) આગમ કો આશ્રિત કરકે જો
દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હોતી હૈ ઉસકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ-(જસ્સ ણં આણુ-
પુર્વ્વિસિ પયં સિવ્વિજયં) જિસ સાધુ આદિને આનુપૂર્વીં હસ પદ વાચ્ય
અર્થ કો વિનયપૂર્વક ગુરુમુલ્લ સે સીલ્લ લિયા હૈ (ઠિયં) ઉસે અચ્છી
તરહ સે અપને સ્મૃતિ પથ મેં ઉતાર લિયા હૈ (જિયં) શબ્દ ઔર અર્થ
કી અપેક્ષા સે જિસને ઉસે ભલિ ભાંતિ જાન લિયા હૈ (મિયં) ઉસકે
પદાદિકોં કી સંખ્યા કા પરિમાણ જિસને ભલી પ્રકાર સે અભ્યાસ કર
લિયા હૈ । (પરિજિયં) જિસને ઉસે સબ તરફ સે ઔર સબ પ્રકાર સે પરા-
વર્તિત કરલિયા હૈ । વહ આગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હૈ ।
યહાં યાવત્ શબ્દ સે “ નામસમ, ઘોષસમ અહીનાક્ષર અત્યક્ષર અવ્યા-
વિદ્ધાક્ષર, અસ્વલિત, અમિલિત, અવ્યત્યાગ્રેહિત, પ્રતિપૂર્ણ પ્રતિપૂર્ણઘોષ

થાય છે તેનું નામ આગમદ્રવ્યાનુપૂર્વીં છે અને નો આગમને આશ્રિત કરીને
જે આનુપૂર્વીં થાય છે તેનું નામ નોઆગમદ્રવ્યાનુપૂર્વીં છે. (સે કિં તં આગ-
મઓ દ્રવ્યાણુપુર્વ્વી) ? હે ભગવન્ ! આગમનો આશ્રિત કરીને જે અનુપૂર્વીં છે
તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

(આગમઓ દ્રવ્યાણુપુર્વ્વી) આગમને આશ્રિત કરીને જે દ્રવ્યાનુપૂર્વીં થાય
છે તેનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-

(જસ્સ ણં આણુપુર્વ્વીતિ પયં સિવ્વિજયં) જે સાધુ આદિએ “ આનુપૂર્વીં ”
આ પદના વાચ્યાર્થને વિનયપૂર્વક શુદ્ધને મુખેથી સારી રીતે શીખી લીધો છે,
(ઠિયં) તેને સારી રીતે પોતાના સ્મૃતિપટલ પર ઉતારી લીધો છે, (જિયં)
શબ્દ અને અર્થની અપેક્ષાએ જેણે તેને સારી રીતે જાણી લીધેલ છે, (મિયં)
તેના પદાદિકોની સંખ્યાનું પરિજ્ઞાન જેણે સારી રીતે સમજી લીધું છે,
(પરિજિયં) જેણે તેને બધી તરફથી અને બધા પ્રકારે પરાવર્તિત કરી લીધું
છે, તે આગમનો આશ્રિત કરીને દ્રવ્યાનુપૂર્વીં છે. અહીં ‘ યાવત્ ’ પદથી
“ નામસમ, ઘોષસમ, અહીનાક્ષર, અત્યક્ષર, અવ્યાવિદ્ધાક્ષર, અસ્વલિત,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૨ નામાધાનુપૂર્વનિરૂપણમ્

૨૨૧

પૂર્ણઘોષં કઠોષ્ઠવિપ્રમુક્તં ગુરુવાચનોપગતં મવતિ । સ સ્વલ્લ તત્ત્વ-આનુપૂર્વીતિપર્વા
વાચનયા પ્રચ્છનયા પરિવર્તનયા ધર્મકથયા ચ વર્તમાનો મવતિ, ન તુ અનુપ્રેક્ષય
વર્તમાનો મવતિ । एवंविधः स साधुरागमतो द्रव्यानुपूर्वी पदेऽनुप्रेक्षयाऽवर्तमानः
साधुः आगमतो द्रव्यानुपूर्वी कथं भवतीत्याह-‘कम्हा’ इत्यादिना-कस्मात्
कठोष्ठविप्रमुक्तः गुरुवाचनोपगतः ” इन पदों का संग्रह किया गया है ।
इन पदों का अर्थ १४ वें सूत्र में स्पष्ट कर दिया है । ऐसा वह व्यक्ति
“आनुपूर्वी” इस पद में वाचना पृच्छना, परिवर्तना और धर्मकथा
इन से वर्तमान माना जाता है । परन्तु अनुप्रेक्षा से वर्तमान-नहीं माना
जाता है । इस प्रकार का वह साधु व्यक्ति आगम से द्रव्यानुपूर्वी
जानना चाहिये ।

શંકા-(કમ્હા) આનુપૂર્વી પદ મેં અનુપ્રેક્ષા સે અવર્તમાન સાધુ
આગમ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી કેસે માના જાતા હૈ ?

उत्तर-“अनुपयोगो द्रव्यमिति कृत्वा” अनुपयोग-जीव जिसके
द्वारा वस्तु का परिच्छेद करता है उसका नाम उपयोग है । इस उप-
योगका अभाव अनुपयोग है । इस से युक्त होने के कारण आनुपूर्वी
का वह ज्ञाता आगम से द्रव्यानुपूर्वी माना जाता है । ऐसा शास्त्र का
वचन है । तात्पर्य कहने का यह है कि जिस साधुने आनुपूर्वी को

અભિક્ષિત, અવ્યત્યાગ્રેહિત, પ્રતિપૂર્ણ, પ્રતિપૂર્ણઘોષ, કઠોષ્ઠવિપ્રમુક્ત. ગુરુવા-
ચનોપગત” આ પદોને ગૃહ્ય કરવામાં આવ્યા છે. તે પદોનો અર્થ ૧૪માં
સૂત્રમાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. આ બધાં વિશેષણોથી યુક્ત સાધુ આદિને
‘આનુપૂર્વી’ આ પદમાં વાચના, પૃચ્છના, પરિવર્તના અને ધર્મકથા દ્વારા
વર્તમાન માનવામાં આવે છે, પરન્તુ અનુપ્રેક્ષા દ્વારા વર્તમાન માનતો નથી.
આ પ્રકારના તે સાધુને આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી સમજવો.

શંકા-(કમ્હા) આનુપૂર્વી પદમાં અનુપ્રેક્ષા દ્વારા અવર્તમાન સાધુ આગ-
મની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કેવી રીતે મનાય છે ?

उत्तर-“अनुपयोगो द्रव्यमिति कृत्वा” एवं चेना द्वारा वस्तुनो परि-
च्छेद (आध) करे છે તેનું નામ ઉપયોગ છે. તે ઉપયોગના અભાવનું નામ
અનુપયોગ છે. આ અનુપયોગથી યુક્ત હોવાને કારણે અનુપૂર્વીનો તે જ્ઞાતા
આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી મનાય છે, એવું શાસ્ત્રનું વચન છે. આ
કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે-જે સાધુએ આનુપૂર્વીને સારી રીતે બહી લીધી
છે-શીખી લીધી છે-એટલે કે તે તેનો પરિપૂર્ણરૂપે જ્ઞાતા થઈ ગયો છે, તે

અનુમેક્ષયા વર્તમાનઃ સાધુરાગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી ભવતિ? ઉત્તરયતિ-અણુવઓગો દ્વવમિતિકદ્દુ' અનુપયોગો દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા । અનુપયોગો હિ દ્રવ્યં ભવતિ, અતોઽનુ-મેક્ષયાઽવર્તમાનઃ સાધુરાગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી ભવતિ ।

નૈગમાદિ ભેદેન દ્રવ્યાનુપૂર્વી ભેદાસ્ત્વેવં વિજ્ઞેયાઃ-નૈગમસ્ય સ્વલુ ઈકોઽનુપયુક્ત આગમત્ત ઈકા દ્રવ્યાનુપૂર્વી, યાવત્ યાવચ્છન્દાત્ દ્વાવનુપયુક્તો આગમતો દ્વે આનુ-પૂર્વ્યો । ત્રયોઽનુપયુક્ત આગમતસ્તિત્ત્વો દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યઃ । ઈવમેવ વ્યવહારસ્યાપિ ।

સમ્યક્ પ્રકાર સે જાન લિયા હૈ-સીલ્લ લિયા હૈ-લ્હ ઉસકા પૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાતા લન લુકા હૈ, અતઃ લ્હ સાધુ ઉસ આનુપૂર્વી મેં લાલના પૃચ્છના આદિ સે લર્તમાન હોને પર ધી ઉસમેં ઉપયોગ સે રહિત હોને કે કારણ લ્હ આગમ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી કહલાતા હૈ । (જેગમસ્સ જં ઈગો અણુલઉત્તો આગમઓ ઈગાં દલ્લાણુપુલ્લી, જાલ કમ્હા? જહ જાણે અણુલઉત્તે ન ભલહ, જહ અણુલઉત્તે જાણે ન ભલહ, તમ્હા જલ્થિ આગમઓ દલ્લા-ણુપુલ્લી સે તં આગમઓ દલ્લાણુપુલ્લી)

અલ સૂત્રકાર નૈગમનય આદિ કે ભેદ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે ભેદોં કો કહલે હૈ-જન મેં નૈગમનય કી દૃષ્ટિ સે ઈક અનુપયુક્ત આત્મા-સાધુ આગમ સે ઈક દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ । યહાં યાલત્ શન્દ સે ઈસા જાનના લાહિલે-કિ દો અનુપયુક્ત સાધુ આગમ સે દો દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ । તીમ અનુપયુક્ત સાધુ, આગમ સે તીન દ્રવ્યાપૂર્વી હૈ । હસ પ્રકાર જિતને અનુ-પયુક્ત સાધુ હૈ આગમ સે ઉતની હી દ્રવ્યાનુપૂર્વીયાં હૈ । હસી પ્રકાર સે વ્યલહારનય કી દૃષ્ટિ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં ઈકલ્લ અનેકલ્લ કા કથન

સાધુ આનુપૂર્વીમાં લાલના, પૃચ્છના, આદિ લડે લર્તમાન હેલા છતાં પણ તેમાં ઉપયોગથી રહિત હેલાને કારણે આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કહેલાય છે.

(જેગમસ્સ જં ઈગો અણુલઉત્તો આગમઓ ઈગાં દલ્લાણુપુલ્લી જાલ કમ્હા? જહ જાણે અણુલઉત્તે ન ભલહ, જહ અણુલઉત્તે જાણે ન ભલહ, તમ્હા જલ્થિ આગમઓ દલ્લાણુપુલ્લી-સે તં આગમઓ દલ્લાણુપુલ્લી)

હલે સૂત્રકાર નૈગમનય આદિના લેદથી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના લેદેલું કથન કરે છે-નૈગમ નયની દૃષ્ટિએ ઈક અનુપયુક્ત આત્મા (સાધુ) આગમની અપેક્ષાએ ઈક દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. અહીં “યાલત્” પદથી નીચેનો પૂલોક્ત સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરલો.

નૈગમનયની દૃષ્ટિએ જે અનુપયુક્ત સાધુ આગમની અપેક્ષાએ જે દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે, તણ અનુપયુક્ત સાધુ આગમની અપેક્ષાએ તણ દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. ઈજ પ્રમાણે જેટલા અનુપયુક્ત સાધુ છે એટલા જ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. ઈજ પ્રમાણે વ્યલહારનયની અપેક્ષાએ પણ દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં

વિનયોપવિનયિકા ટીકા સ્વ ૭૩ નામાંધાનુપૂર્વીનિકરણમ્

૨૫૧

સંગ્રહસ્ય સ્વલુ ઇકોઽનુપયુક્તઃ, અનેકેવાઽનુપયુક્તા આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી દ્રવ્યાનુપૂર્વો વા ઇકૈવ દ્રવ્યાનુપૂર્વી બોધ્યા । ઋજુસૂત્રસ્ય ઇકોઽનુપયુક્ત આગમત્ત ઇકા દ્રવ્યાનુપૂર્વી, પૃથક્ત્વં નેચ્છતિ । ત્રયાણાં શબ્દનયાનાં જ્ઞાયકોઽનુપયુક્તોઽવસ્તુ, કસ્માત્ ? યદિ જ્ઞાયકઃ, અનુપયુક્તો ન ભવતિ, યદિ અનુપયુક્તઃ, જ્ઞાયકો ન ભવતિ તસ્માદ્ નાસ્તિ તન્મતે આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી । અત્રોક્તાનાં શિક્ષિતાદિ પદાનાં વ્યાખ્યા પૂર્વવદ્ બોધ્યા । ઇતદુપસંહરન્નાહ-સૈવાઽઽગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ ।

જાનના ચાહિયે સંગ્રહનય કી એસી માન્યતા હૈ કિ એક દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ । નૈગમ ઓર વ્યવહાર નય કી માન્યતા કે અનુસાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી જો એક ઓર અનેકરૂપ હૈ-સો યહ નય એસા કથન કરતા હૈ કિ સામાન્યતરવ કે આધાર પર સમસ્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વિયાં એક હી હૈ-મિન્ન ૨ અનેક નહીં । ઋજુસૂત્રનય કી માન્યતાનુસાર વર્તમાન ક્ષણ મેં એક અનુપયુક્ત સાધુ આગમ કી અપેક્ષા એક આનુપૂર્વી હૈ । યહ નય આનુપૂર્વી મેં મિન્નતા-અનેકતા નહીં માનતા હૈ । ત્રીન શબ્દનય કી માન્યતાનુસાર-જ્ઞાયક હોકર બી જો અનુપયુક્ત હોતા હૈ વહ અવસ્તુ સ્વરૂપ હૈ । વયોં કિ જો જ્ઞાયક હોગા વહ અનુપયુક્ત નહીં હોગા, જો અનુપયુક્ત હોગા વહ જ્ઞાયક નહીં હોગા । ઇસલિયે આગમ કી અપેક્ષા લેકર જો દ્રવ્યાનુપૂર્વી બનતી હૈ વહ નહીં હૈ । યહાં પર જો શિક્ષિત આદિ પદ આવે હૈં ઉનકી વ્યાખ્યા પહિલે કી વ્યાખ્યા કે સમાન સમજની

એકત્વ અનેકત્વનું કથન સમજવું જોઈએ. સંગ્રહનયની એવી માન્યતા છે કે એક જ દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. નૈગમનય અને વ્યવહાર નયની માન્યતા અનુસાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી એ એક અને અનેકરૂપ છે તેનું કારણ એ છે કે આ નય એવું કથન કરે છે કે સામાન્ય તરવના આધાર પર સમસ્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વીઓ એક જ છે-ભિન્ન ભિન્ન અનેક-નથી. ઋજુસૂત્ર નયની માન્યતા અનુસાર વર્તમાન ક્ષણે એક અનુપયુક્ત સાધુ આગમની અપેક્ષાએ એક આનુપૂર્વી છે. આ નય આનુપૂર્વીમાં ભિન્નતા (અનેકતા)ને માનતો નથી. ત્રણે શબ્દનયોની માન્યતા અનુસાર જ્ઞાયક હોવા છતાં પણ જે અનુપયુક્ત હોય છે તે અવસ્તુસ્વરૂપ છે. કારણ કે જે જ્ઞાયક હશે તે અનુપયુક્ત અહીં હોય અને જે અનુપયુક્ત હશે તે જ્ઞાયક નહીં હોય, આ પ્રકારની તે ત્રણે શબ્દ નયોની માન્યતા છે. તેથી આગમની અપેક્ષાએ જે દ્રવ્યાનુપૂર્વી અને છે તેનો આ ત્રણે શબ્દનયોની માન્યતા અનુસાર સફાવ જ હોતો નથી. અહીં જે શિક્ષિત આદિ પદો આવ્યાં છે તેમની વ્યાખ્યા આગળ આપ્યા પ્રમાણે જ સમજવી. આ પ્રકારનું આગમ દ્રવ્યાનુપૂર્વી સ્વરૂપ છે.

અથ નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિજિજ્ઞાસયા શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-‘સે કિં તં’
 इत्यादि । अथ काऽसौ नोआगमतो द्रव्यानुपूर्वी ? इति । उत्तरयति-‘नोआगमओ
 द्रव्यानुपुर्वी’ इत्यादि । नोआगमतो द्रव्यानुपूर्वी त्रिविधा प्रज्ञप्ता-ज्ञायकशरीर-
 द्रव्यानुपूर्वी^१ भव्यशरीर-द्रव्यानुपूर्वी^२ ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्या-
 नुपूर्वी^३ । ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी जिज्ञासमानः शिष्यः पृच्छति-अथ काऽसौ
 ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी ? उत्तरयति-‘जाणयसरीर’ इत्यादि । ज्ञायकशरीरद्रव्यानु-
 पूर्वी हि-आनुपूर्वी पदार्थाधिकारज्ञायकस्य यत् शरीरकं व्यपगतच्युतव्यावितत्य-
 क्तदेहं जीवविप्रसृक्तं शय्यागतं वा संस्तारगतं वा सिद्धशिलातलगतं वा दृष्ट्वा खलु

चाहिये । इस प्रकार यह आगम से द्रव्यानुपूर्वी का स्वरूप है । (से किं
 तं नोआगमओ द्रव्यानुपुर्वी) हे भदन्त ! नो आगम को आश्रित करके
 द्रव्यानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ? (नोआगमओ द्रव्यानुपुर्वी त्रिविहा
 पणज्जा) नोआगम को आश्रित करके होनेवाली द्रव्यानुपूर्वी तीन
 प्रकार की कही गई है । (तं जहा) जैसे-(जाणयसरीरद्रव्यानुपुर्वी,
 भवियसरीरद्रव्यानुपुर्वी, जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्ता द्रव्यानुपुर्वी)
 ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी, भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी और ज्ञायकशरीर
 भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी । (से किं तं जाणयसरीरद्रव्यानु-
 पुर्वी) हे भदन्त ! पूर्वप्रक्रान्त ज्ञायशरीर द्रव्यानुपूर्वी क्या है ?

(जाणयसरीरद्रव्यानुपुर्वी) ज्ञायकशरीर द्रव्यानुपूर्वी इस प्रकार से
 है । (आनुपुर्वीपयत्थाहिगारजाणयस्स जं सरीरं ववगयच्युव्वावियचत्त-

(સે કિં તં નોઆગમઓ દ્રવ્યાનુપુર્વી ?) હે ભગવન ! નોઆગમને આશ્રિત
 કરીને દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(નોઆગમઓ દ્રવ્યાનુપુર્વી ત્રિવિહા પણજ્જા) નોઆગમને આશ્રિત
 કરીને બાધમાન દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે-(તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો
 નીચે પ્રમાણે છે-

(જાણયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી, ભવિયસરીર દ્રવ્યાનુપુર્વી જાણયસરીરભવિયસરીર-
 વહરિત્તા દ્રવ્યાનુપુર્વી) (૧) જાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી, (૨) ભવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી
 અને (૩) જાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન-સે કિં તં જાણયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી ? હે ભગવાન ! પૂર્વ પ્રક્રાન્ત
 (પૂર્વ પ્રસ્તુત) જાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(જાણયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી) જાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ
 પ્રકારનું છે-(આનુપુર્વી પયત્થાહિગારજાણયસ્સ જં સરીરં વવગયચ્યુવ્વાવિય
 ચત્તવેહ) ‘આનુપૂર્વી’ આ પદના અર્થાધિકારને બાધુનાર સાધુનું હસે પ્રાણેયી

અનુબોધબોધિકા ટીકા સૂત્ર ૭૩ મામાયાનુપૂર્વીનિક્ષણમ્

૨૧૫

કોઽપિ મળેત્ અહો! સ્વલ્પ અનેન શરીરસમુચ્છયેણ જિનદૃષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિ પદમ્ આગૃહીતં પ્રજ્ઞાપિતં પ્રરૂપિતં દર્શિતં નિદર્શિતમ્। યથા કોઽન્ન દૃષ્ટાન્તઃ? અયં મધુકુમ્ભ આસીદિતિ। ‘જીવ વિપ્રમુક્તમ્’ इत्यारभ्य एतत्पर्यन्तः पाठः ‘शेषं यथा द्रव्यावश्यकं तथा भणितव्यं यावत्’ इत्यनेन संग्राह्यः एषां पदानां व्याख्या द्रव्यावश्यकं द्रष्टव्या। एतन्निगमयन्नाह—सैषा ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वीति।

દેહં) આનુપૂર્વી' હસ પદ કે અર્થાધિકાર કો જાનને વાલે સાધુ કા જો વ્યપગત ચ્યુત, વ્યાવિત ઓર સ્વકત દેહવાળું શરીર અર્થાત્ આહાર પરિણતિ જનિત વૃદ્ધિ સે રહિત શરીર હૈ વહ જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી' હૈ। (સેસં જહા દવ્વાવસ્સૈ જાવ સે તં જાણયસરીરદવ્વાનુપુર્વી) યહાં પર "જીવવિપ્રમુક્તં શર્યાગતં વા સંસ્તારગતં વા નૈષેધિકીગતં વા, સિદ્ધં શિલાતલગતં વા દૃષ્ટ્વા સ્વલ્પ કોઽપિ મળેત્ અહો! સ્વલ્પ અનેન શરીરસમુચ્છયેણ જિનદૃષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિ પદં આગૃહીતં, પ્રજ્ઞાપિતં, પ્રરૂપિતં, દર્શિતં, નિદર્શિતં। યથા કોઽન્ન દૃષ્ટાન્તઃ? અયં મધુકુમ્ભ-આસીત્ અયં ઘૃતકુમ્ભ આસીત્" યહ (સેસં) અવશિષ્ટ પાઠ (જહા દવ્વાવસ્સૈ જાવ) જૈસા દ્રવ્યાવશ્યક મેં કહા હૈ વૈસા લગા લેના ચાહિયે। હન સમસ્ત પદોં કી વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યક કે પ્રકરણ મેં કહ દી ગઈ હૈ—અતઃ વહાં સે જાન લેની ચાહિયે। હસ પ્રકાર નોઆગમ કી અપેક્ષા સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી' કા સ્વરૂપ હૈ।

રહિત ચ્યુત, વ્યાવિત અને ત્યકત દેહવાળું જે નિર્જીવ શરીર છે—એટલે કે આહાર પરિણતિ જનિત વૃદ્ધિથી રહિત જે શરીર છે તે જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી' છે. (વ્યપગત, ચ્યુત, વ્યાવિત આદિ પદોનો ભાવર્થ આગળ આવી ગયો છે.)

(સેસં જહા દવ્વાવસ્સૈ જાવ સે તં જાણયસરીરદવ્વાનુપુર્વી) અહીં “જીવવિપ્રમુક્તં શર્યાગતં વા, નૈષેધિકીગતં વા, સિદ્ધશિલાતલગતં વા દૃષ્ટ્વા સ્વલ્પ કોઽપિ મળેત્ અહો! સ્વલ્પ અનેન શરીરસમુચ્છયેણ જિનદૃષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિ પદં આગૃહીતં, પ્રજ્ઞાપિતં, પ્રરૂપિતં, દર્શિતં, નિદર્શિતં યથા કોઽન્ન દૃષ્ટાન્તઃ? અયં મધુકુમ્ભ આસીત્, અયં ઘૃતકુમ્ભ આસીત્” આ (સેસં) બાકીનો સૂત્રપાઠ (જહા દવ્વાવસ્સૈ જાવ) દ્રવ્યાવશ્યકમાં કશા અનુસાર અલ્પ કરવો જોઈએ. આ સઘળાં પદોની વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યકના પ્રકરણમાં આપવામાં આવી છે. તેથી નિશ્ચય પાઠકોએ તે ત્યાંથી વાંચી લેવી. આ પ્રકારનું નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી'નું સ્વરૂપ છે.

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ काऽसौ भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी ? भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी हि-यो जीवो योमि जन्मनिष्क्रान्तोऽनेनैव आत्तकेन शरीर-समुच्छ्रयेण जिनोपदिष्टेन भावेन आनुपूर्वीति पदम् आगामिकाळे शिक्षिष्यते, न तावत् शिक्षते । यथा को दृष्टान्तः ? अयं मधुकुम्भो भविष्यति, अयं घृतकुम्भो भविष्यतीति अनेनैव आत्तकेन’ इत्यारभ्य एतत्पर्यन्तः पाठः शेषं यथा द्रव्या-वश्यकं यावत्’ इत्यनेन संग्राहः । व्याख्या च द्रव्यावश्यकं द्रष्टव्या । सम्प्रत्येतदुप-संहरन्नाह-सैषा भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वीति ।

(સે કિં સં ભવિયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી) હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત ભવ્ય-શરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

उत्तर-(भवियसरीरद्रव्यानुपुर्वी) भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी का स्वरूप इस प्रकार से है-(जे जीवे जोणीजम्मणणिक्खंते सेसं जहा द्वावस्सए जाव-से तं भवियसरीरद्रव्यानुपुर्वी) जो जीव जन्मकाल में अपना पूर्ण नौमास का समय समाप्तकर उत्पन्न हुआ-बीचमें नहीं, ऐसा मनुष्य उस प्राप्त शरीर से जो भविष्यत्कालमें आनुपूर्वी का अनुपयुक्त ज्ञाना बनेगा उसका वह प्राप्त शरीर नोआगमसे भव्यशरीर द्रव्यानुपूर्वी है । यहां पर “अनेनैव आत्तकेन” इस पाठ से लेकर “शरीरसमुच्छ्रयेण जिनोपदिष्टेन भावेन आनुपूर्वीतिपदं आगामिकाळे शिक्षिष्यते न तावत् शिक्षते । यथा को दृष्टान्तः अयं मधुकुम्भो भविष्यति अयं घृतकुम्भो भविष्यति” यहाँ तक का पाठ “शेषं यथा द्रव्यावश्यकं यावत्” इस पाठ से ग्रहण करलेना चाहिये । इस

પ્રશ્ન-સે કિં તં ભવિયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી ? હે ભગવન્ ! ભવ્યશરીર દ્રવ્યા-નુપૂર્વીતું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર-(જે જીવે જોણિજમ્મણણિક્ખંતે સેસં જહા દ્વાવસ્સए जाव से तं भवियसरीरद्रव्यानुपुर्वी) જે જીવ માતાના ગર્ભમાં પૂરાં નવ માસ રહીને એટલે કે પૂર્ણકાળ વ્યતીત કરીને ઉત્પન્ન થયો છે-અપૂર્ણ કાળ વ્યતીત ઉત્પન્ન થયો નથી. એવો જીવ ભવિષ્યકાળમાં અનુપૂર્વીને અનુભવયુક્ત બનશે-વત્-માનકાળે તો અનુપૂર્વીને જાણે નથી, તો એ જીવને તે પ્રાપ્ત શરીર નોઆગમની અપેક્ષાએ ભવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. અહીં “અનેનૈવ આત્તકેન” આ સૂત્રપાઠથી લઇને “શરીરસમુચ્છ્રયેણ જિનોપદિષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિપદં આગામિ કાલે શિક્ષિષ્યતે ન તાવત્ શિક્ષતે । યથા કો દૃષ્ટાન્તઃ ? અયં મધુકુમ્ભો ભવિષ્યતિ અયં ઘૃતકુમ્ભો ભવિષ્યતિ” અહીં મુખીને સૂત્રપાઠ દ્રવ્યાવશ્યક સૂત્રમાં કહ્યા અનુસાર ગ્રહણ કરવાનું સૂચકારે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૩ નામાચાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૨૧૭

શિષ્ય: પૃચ્છતિ-‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કાઽસૌ જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીર-
વ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ-‘જાણયસરીર’ ઇત્યાદિ । જ્ઞાયક-
શરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી હિ દ્વિવિધા પ્રજ્ઞાતા, તથા-ઔપનિધિકી
ચ અનૌપનિધિકી ચ । તન્ન-ભેદદ્વયમધ્યે યા સા ઔપનિધિકી ઇદં નિધિશબ્દસ્ય
નિક્ષેપોઽર્થઃ, નિધાનં, નિધિઃ નિક્ષેપઃ, ન્યાસઃ, સ્થાપનેતિ શબ્દાઃ પર્યાયાઃ । ઉપ-
સામીપ્યેન નિધિઃ-ઉપનિધિઃ-एकस्मिन् विविक्षितेऽर्थे पूर्वं व्यवस्थापिते तत्समीपे
पाठ की शंकासमाधान पूर्वक जैसी व्याख्या द्रव्यावश्यक के स्वरूपको
निरूपण करते समय की है वैसी ही व्याख्या इसकी जाननी चाहिये ।
इस प्रकार यह नोआगम को लेकर द्रव्यानुपूर्वी का स्वरूप है । (से किं
तं जाणयसरीरभाविषसरीरवहरित्ता द्रव्यानुपूर्वी) हे भदन्त ! पूर्वोक्त
ज्ञायक शरीर भव्य शरीर इन दोनों से व्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी
का क्या स्वरूप है ?

उत्तर-(जाणयसरीरभविषसरीरवहरित्ता द्रव्यानुपूर्वी दुविहा
पण्णत्ता) ज्ञायकशरीर भव्यशरीर इन दोनों से भिन्न द्रव्यानुपूर्वी दो
प्रकार की कही है (तंजहा) जैसे (ओवणिहिया, य अणोवणिहिया य)
औपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी और अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी । (तत्थ णं
जा सा ओवणिहिया सा ठप्पा) इनमें जो औपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी है
वह स्थाप्य है । क्योंकि अल्प विषयवाली होने से वह इस समय
व्याख्या करने योग्य नहीं है । निधिशब्द का अर्थ यहां निक्षेप है ।

સૂચન કયું છે દ્રવ્યાવશ્યકતા પ્રકરણમાં શંકાઓના સમાધાન પૂર્વક ભવ્ય-
શરીર દ્રવ્યાવશ્યકતા સ્વરૂપનું જેવું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે એવું જ
અહીં ભવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ થવું જોઈએ આ પ્રકારનું નોઆગ-
મની અપેક્ષાએ ભવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ સમજવું.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં જાણયસરીરભવિષસરીરવહરિત્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ?) કે
અગવન્ ! પૂર્વપ્રકાન્ત જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીર આ બન્નેથી ભિન્ન એવી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(જાણયસરીરભવિષસરીરવહરિત્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી દુવિહા પણ્ણત્તા)
જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવી દ્રવ્યાનુપૂર્વી બે પ્રકારની કહી છે.
(તંજહા) તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે-ઓવણિહિયા ય અણોવણિહિયા ય) (૧)
ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી અને (૨) અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી (તત્થણં જા
સા ઓવણિહિયા સા ઠપ્પા) તેમાં જે ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી છે તે સ્થાપ્ય

પ્રવાપરાપરસ્ય વક્ષ્યમાણપૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિક્રમેણ યન્નિષ્કેપણં સ ઉપનિધિરિત્યર્થઃ
 ઉપનિધિઃ પ્રયોજનં યસ્યા આનુપૂર્વ્યાઃ સા-ઔપનિધિકી । સામાયિકાદિ-વહ્ધ્ય-
 ચનાનાં પૂર્વા પૂર્વ્યાદિના નિષ્કેપ એવ ઉપનિધિઃ સ પ્રયોજનં યસ્યાઃ આનુપૂર્વ્યાઃ
 સા, ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી સ્થાપ્યા=સંપ્રતિ ન વ્યાખ્યાતવ્યા-અલ્પવિષયત્વે-
 નાત્ર નોચ્યતે, કિંતુચ્છે વક્ષ્યતે ઇતિ ભાવઃ । સમ્પ્રતિ બહુવક્તવ્યત્વેન પશ્ચાન્નિર્દિષ્ટા-
 ઽપિ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યેવ વ્યાખ્યાયતે । તત્ર સ્વલુ યા સા અનૌપનિધિકી
 નિધાન, નિધિ નિષ્કેપ, ન્યાસ સ્થાપના એ સઘ નિધિશબ્દ કે પર્યાય
 વાચી શબ્દ હૈં । ઉપશબ્દકા અર્થ સમીપ હૈં ઔર નિધિ શબ્દકા અર્થ
 રક્ષના હૈં । એક કોઈ વિવક્ષિત પદાર્થ પહિલે વ્યવસ્થાપિત કર દેને પર
 ફિર ઉસકે પાસ હી ઔર ૨ દુસરે પદાર્થોં કે વક્ષ્યમાણ પૂર્વાનુપૂર્વી કે
 ક્રમ સે જો રક્ષા જાતા હૈં ઉસકા નામ ઉપનિધિ હૈં । યહ ઉપનિધિ જિસ
 આનુપૂર્વી કા પ્રયોજન હો વહ ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી હૈં । ઇસમેં સામા-
 યિક આદિ હહ અધ્યયનોં કા પૂર્વાનુપૂર્વી સે નિષ્કેપ કિયા જાતા હૈં ।
 ઇનકા યહ નિષ્કેપ હી ઉપનિધિ હૈં । ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી મેં યહ ઉપ-
 નિધિ હી પ્રયોજનમૂત હોતી હૈં । અલ્પ વિષય વાલી હોને સે જો યહાં
 ઉસે વ્યાખ્યાતવ્ય નહીં કહા ગયા હૈં ઉસકા તાત્પર્ય યહ નહીં હૈં કિ
 હસ સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ઉસકા કથન નહીં કરેગે । કિન્તુ આગે લે ઉસે
 કહેગે-અમી યહાં નહીં । અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી કા જો સૂત્રકાર

છે, કારણકે અલ્પ વિષયવાળી હોવાના કારણે અત્યાદે અહીં તેનું પ્રતિપાદન
 કરવાની જરૂર નથી ‘નિધિ’ પદનો અર્થ અહીં ‘નિષ્કેપ’ સમજવો નિધાન,
 નિધિ, નિષ્કેપ, ન્યાસ અને સ્થાપના આ બધા નિધિશબ્દના પર્યાયવાચી
 શબ્દો છે. ‘ઉપ’ શબ્દનો અર્થ ‘સમીપ’ થાય છે. અને ‘નિધિ’ શબ્દ
 ‘રાખવાના અર્થનો સૂચક છે હવે ઉપનિધિ શબ્દનો આ પ્રમાણે અર્થ
 થાય છે-કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થને પહેલાં વ્યવસ્થાપિત કરી દીધાં પછી
 તેની પાસે જ અન્ય પદાર્થોને પૂર્વાનુપૂર્વીના ક્રમથી જો રાખવામાં (સ્થાપિત
 કરવામાં) આવે છે તેનું નામ ઉપનિધિ છે. ” આ ઉપનિધિ જે અનુપૂર્વીનું
 પ્રયોજન છે તે આનુપૂર્વીને ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી કહે છે તેમાં સામાયિક
 આદિ ૧ અધ્યયનોના પૂર્વાનુપૂર્વીથી નિષ્કેપ કરવામાં આવે છે. તેમનો આ
 નિષ્કેપ જ ઉપનિધિ રૂપ છે. ઔપનિધિકી આનુપૂર્વીમાં આ ઉપનિધિ જ
 પ્રયોજનમૂત હોય છે. અલ્પવિષયવાળી હોવાને કારણે તેને અહીં વ્યાખ્યાત
 કરવા યોગ્ય નહીં કહેવાનું તાત્પર્ય એવું નથી કે આ સૂત્રમાં સૂત્રકાર

અનુયોગચંદ્રિકા દીકા સૂત્ર-૭૩]નામાઘાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૨૧૨

દ્રવ્યાનુપૂર્વી સા દ્વિવિધા મહત્તા । ‘અનૌપનિધિકી’ इत्यस्यायमर्थः अनुपनिधिः= वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्वादिक्रमेण अनिक्षेपः-अव्यवस्थापनं, स प्रयोजनं यस्याः सा अनौपनिधिका । पूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण व्यवस्थापनं न क्रियते सा ज्यादि परमाणु-निष्पन्नस्कन्धविषया आनुपूर्वी अनौपनिधिकीत्युच्यते इति भावः ।

औपनिधिकी आनुपूर्वी के पहिले यहीं विवेचन कर रहे हैं । उसका कारण यह है कि उस आनुपूर्वी के विषय में वक्तव्यता बहुत है । (तत्स्थणं जा सा अणोवणिहिया सा दुविहा) इन औपनिधिकी अनौपनिधिकी आनुपूर्वी में जो यह दूसरी अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है वह दो प्रकार की है । (तंजहा) जैसे (नेगमववहाराणं संगहस्सय) एक नेगम व्यवहार नय संमत और दूसरी संग्रह नय संमत । “अनौपनिधिकी” इसका अर्थ इस प्रकार से है कि वक्ष्यमाण पूर्वानुपूर्वी क्रम से जहां पदार्थों की स्थापना नहीं होती है—उसका नाम अनुपनिधि है यह अनुपनिधि जिस आनुपूर्वी का विषय है उसका नाम अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है । जिस आनुपूर्वी में पूर्वानुपूर्वी आदि के क्रम से पदार्थों की स्थापना व्यवस्था न हो और जो ज्यादिपरमाणु से निष्पन्न हुए स्कंध को विषय करती हो ऐसी आनुपूर्वी अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है ।

તેનું નિરૂપણ કરવા માગતા નથી તેઓ અહીં તેનું નિરૂપણ કરવાના નથી પણ આ અન્યમાં (સૂત્રમાં) જ તેનું નિરૂપણ આગળ કરવામાં આવશે.

અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વીનું અહીં સૂત્રકારે ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી પહેલાં જે વિવેચન કર્યું છે તેનું કારણ એ છે કે અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી વિષેની વક્તવ્યતા ઘણી જ ઊંચી છે. (તત્થણં જા સા અણોવણિહિયા સા દુવિહા) આ બંને પ્રકારની આનુપૂર્વીઓમાંની જે અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી છે તે એ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે એ પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(નેગમ વવહારાણં સંગહસ્સય) (૧) નેગમ અને વ્યવહાર નય સંમત અને (૨) સંગ્રહનય સંમત “અનૌપનિધિકી” આ પદનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે વક્ષ્યમાણ પૂર્વાપૂર્વીના ક્રમે જ્યાં પદાર્થોની સ્થાપના થતી નથી તેનું નામ અનુપનિધિ છે. આ અનુપનિધિ જે આનુપૂર્વીનો વિષય છે તે આનુપૂર્વીનું નામ અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી છે. આનુપૂર્વીમાં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિના ક્રમપૂર્વક પદાર્થોની સ્થાપના વ્યવસ્થા ન હોય અને જે ત્રણ આદિ પરમાણુથી નિષ્પન્ન થયેલા (ઉત્પન્ન થયેલા) સ્કન્ધને વિષય કરતી હોય (સ્કંધનું) પ્રતિપાન કરતી હોય) એવી આનુપૂર્વીનું નામ અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી છે.

નચ સ્કન્ધવિષયેઽનૌપનિધિકીત્વં નોપપદ્યતે, યતઃ કથિત્ સ્કન્ધસ્ત્રિપ્રદેશિકઃ, કથિચ્ચતુઃપ્રદેશિકઃ કથિત્ પ્રશ્નપ્રદેશિકઃ, ઇત્યુત્તરોત્તરં સર્વે સ્કન્ધાઃ ક્રમપૂર્વકમેવ ભવન્તિ તત્તથ પૂર્વાનુપૂર્વા વ્યવસ્થાપનસ્ય સદ્ભાવાદનૌપનિધિકીત્વમેવ તત્રાસ્તિ, નત્ત્વનૌપનિધિકીત્વં તત્ર સંભવતીતિ ચેત્.

અત્રોચ્યતે-તત્ર કસ્યચિત્ સ્કન્ધસ્ય પૂર્વાનુપૂર્વાદિ ક્રમેણ વ્યવસ્થાપનં નાન્યેન કેનચિત્ ક્રિયતે, સર્વેષાં સ્કન્ધાનાં વિસસાપરિણામપરિણતત્વાત્ અતઃ સ્કન્ધવિષયે-ઽનૌપનિધિકીત્વમુપપદ્યતે। યત્ર તુ તીર્થંકરાદિના પૂર્વાનુપૂર્વાદિક્રમેણ વસ્તૂનાં

શંકા-સ્કંધ મેં અનૌપનિધિ કી પના નહીં યનતા હૈ। ક્યોંકિ કોઈ સ્કંધ ત્રીન પ્રદેશ વાલા હોતા હૈ, કોઈ ચાર પ્રદેશવાલા હોતા હૈ, કોઈ પાંચ પ્રદેશવાલા હોતા હૈ। હસ પ્રકાર ઉત્તરોત્તર સમસ્ત સ્કંધ ક્રમ પૂર્વક હી હોતે હૈં હસ પ્રકાર હનમેં પૂર્વાનુપૂર્વી કે ક્રમ સે સ્થાપના કી વ્યવસ્થા કા સદ્ભાવ આને સે ઔપનિધિ કી પના હી આતા હૈ, અનૌપનિધિકીપના નહીં।

ઉત્તર-સ્કંધો મેં જો ત્રિપ્રદેશિકતા આદિ હૈ વહ કિસી કે દ્વારા વહાં કી હુઈ નહીં હૈ-અર્થાત્ એસા નહીં હૈ કિ ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ હૈ ઉસે કિસી ને ત્રીન પરમાણુ પૂર્વાનુપૂર્વી ક્રમ સે રચ્ચકર બનાયા હો। ઉસમેં ત્રિપ્રદેશિકતા તો સ્વભાવ સે હી હૈ। ક્યોંકિ જિતને બી સ્કંધ હૈં વે સબ સ્વાભાવિક પરિણામ સે પરિણત હોતે રહતે હૈં। હસલિચે સ્કંધ મેં અનૌપનિધિકીપના હી આતા હૈ। જહાં પર તીર્થંકર આદિકોં દ્વારા પૂર્વા-

શંકા-સ્કંધમાં અનૌપનિધિકીપણું સંભવી શકતું નથી, કારણ કે કોઈ સ્કંધ ત્રણ પ્રદેશવાળો હોય છે, કોઈ ચાર પ્રદેશવાળો હોય છે, કોઈ પાંચ પ્રદેશવાળો હોય છે. આ પ્રકારે ઉત્તરોત્તર સમસ્ત સ્કંધ ક્રમપૂર્વક જ હોય છે. તેથી તેમાં પૂર્વાનુપૂર્વીના ક્રમપૂર્વક સ્થાપનાની વ્યવસ્થાનો સદ્ભાવ હોવાથી ઔપનિધિકી પણું હોઈ શકતું નથી.

ઉત્તર-સ્કંધોમાં જે ત્રિપ્રદેશિકતા આદિ છે તે કોઈના દ્વારા ત્યાં કરાયેલ નથી એટલે કે એવી કોઈ વાત નથી કે ત્રિપ્રદેશી જે સ્કંધ છે તેને કોઈએ ત્રણ પરમાણુ પૂર્વાનુપૂર્વી ક્રમપૂર્વક રાખીને બનાવ્યો છે. તેમાં તો સ્વાભાવિક જ ત્રિપ્રદેશિકતા હોય છે, કારણ કે એટલાં સ્કંધ છે તે બધાં સ્વાભાવિક પરિણામ દ્વારા જ પરિણત થતા રહે છે. તેથી સ્કંધમાં અનૌપનિધિપણું જ ધરાવી શકાય છે જ્યાં તીર્થંકર આદિકો દ્વારા પૂર્વાનુપૂર્વી આદિના ક્રમથી વસ્તુ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૨ નામાધાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૩૦૧

વ્યવસ્થાપનં ભવતિ, તત્રોપનિધિકી આનુપૂર્વી, યથા-ધર્માધર્માદિષદ્રવ્યેષુ, સામાયિકાદિ ષડધ્યયનેષુ ચ ।

નન્વેવં પૂર્વાનુપૂર્વાદિક્રમેણ વ્યવસ્થાપનં યત્ર નાસ્તિ તત્રાનૌપનિધિકીતિ સ્વીકારે આનુપૂર્વોત્તમેવ નોપપદ્યતે, પૂર્વાનુપૂર્વાદિક્રમસ્યેવાનુપૂર્વીરૂપત્વાત્, પૂર્વાનુપૂર્વાદિ ક્રમેણ વ્યવસ્થાપનસ્યાઽભાવે આનુપૂર્વા એવ નાસ્તિ સંભવઃ? ઇતિચેત્ .

અત્રોચ્યતે-પદ્યપિ સ્કન્ધગતઞ્ચાદિ પરમાણુનાં સ્કન્ધરૂપેણ ત્રિશિષ્ટીકપરિણામપરિણતત્વાત્, તથાપિ-યોગ્યતામાશ્રિત્યાનુપૂર્વીત્વં સંભવતિ । તથાહિ-ઞ્ચાદિ-પરમાણુનામાદિમધ્યાવસાનમાત્રેણ નિયતક્રમેણ વ્યવસ્થાપનયોગ્યતાઽસ્તીત્યતસ્તાં યોગ્યતામાશ્રિત્યાત્રાપ્યાનુપૂર્વીત્વં ન વિરમ્યતે ।

નુપૂર્વી આદિ કે ક્રમ સે વસ્તુઓં કી વ્યવસ્થા હોતી હૈ વહાં પર ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી હોતી હૈ । જૈસે ધર્મ અધર્મ આદિ ૬ દ્રવ્યોં મેં ઔર સામાયિક આદિ ૬ અધ્યયનોં મેં હૈ ।—

શંકા-યદિ એસા હી સ્વીકાર કિયા જાવે કિ જહાં પર પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કે ક્રમ સે વ્યવસ્થાપન નહીં હૈ વહાં અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી હૈ સો હસ કથન મેં-એસી માન્યતા મેં-આનુપૂર્વીપના હી નહીં આતા હૈ । ક્યોં કિ પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કે ક્રમમેંહી આનુપૂર્વી રૂપતા હૈ । જહાં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કે ક્રમ સે વ્યવસ્થાપન કા અભાવ હૈ વહાં આનુપૂર્વી કા હી સંભવ નહીં હોતા હૈ ।

ઉત્તર-યદ્યપિ સ્કન્ધગત ત્રીન આદિ પરમાણુઓં કા નિયતક્રમ નહીં હૈ ક્યોં કિ વે પરમાણુઓં સ્કન્ધરૂપસે ત્રિશિષ્ટૈક પરિણામ મેં પરિણત રહા કરતે હૈ । તો બી યોગ્યતા કો આશ્રિત કરકે ડનમેં આનુપૂર્વીપના

એાની વ્યવસ્થા થાય છે, ત્યાં ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી થાય છે. જેમ કે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય આદિ ૬ દ્રવ્યોમાં અને સામાયિક આદિ ૬ અધ્યયનોમાં શંકા-જે એવું જ માની લેવામાં આવે કે જ્યાં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિના ક્રમથી વ્યવસ્થાપન નથી પણ અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વીના ક્રમથી વ્યવસ્થાપન છે, તો એ પ્રકારની માન્યતામાં તો આનુપૂર્વીતા જ સંભવી શકતી નથી, કારણ કે પૂર્વાનુપૂર્વી આદિના ક્રમમાં જ આનુપૂર્વીરૂપતા છે. જ્યાં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિના ક્રમપૂર્વક વ્યવસ્થાપનનો અભાવ છે, ત્યાં આનુપૂર્વીનો સંભવ જ હોતો નથી.

ઉત્તર-જે કે સ્કન્ધગત ત્રણ આદિ પરમાણુઓનો નિયતક્રમ હોતો નથી, કારણ કે તે પરમાણુઓ સ્કન્ધરૂપે એક ત્રિશિષ્ટ પરિણામમાં પરિણત થયા કરે છે. છતાં પણ યોગ્યતાને આશ્રિત કરીને આનુપૂર્વીતા આ પ્રકારે

સમ્પતિ અસ્યા દ્વૈવિધ્યમાહ-તદ્વથા-નૈગમવ્યવહારયોઃ, સંગ્રહસ્ય ચ । નૈગમ-
વ્યવહારસંમતા સંગ્રહસંમતા ચેતિ દ્વિવિધાઽનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીત્યર્થઃ । इदमत्र
बोधम्-ओघनो हि नैगमसंग्रहव्यवहारः ऋजुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूताः सप्त नया
भवन्ति एतेषां हि द्रव्यार्थिकपर्यायार्थिकरक्षणे नयद्वयेऽन्तर्भावो भवति ।
'द्रव्यमेव परमार्थतोऽस्ति न पर्यायाः' इत्यभ्युपगमपरो नयो द्रव्यार्थिक-
नयः, 'पर्याया एव वस्तुतः सन्ति न द्रव्य'-मित्यभ्युपगमपरो नयः पर्याया-
र्थिकनयः । तत्र नयेषु-नैगमसंग्रहव्यवहारा द्रव्यार्थिकनयाः, ऋजुसूत्रशब्दसमभि-

माना गया है । और वहां इस प्रकार से-कि-तीन आदि परमाणुओं में
आदि मध्य और अवसानभावरूप जो नियतक्रम है उस क्रम से व्यव-
स्थापनकी योग्यता है । इसलिये उस योग्यता को आश्रित करके उन
तीन आदि परमाणुओं में भी आनुपूर्वीपन विरुद्ध नहीं होता ।

અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વીમાં જો દ્વિવિધતા કહી गई है उसका
अभिप्राय यह है कि सामान्य से नय सात हैं, नैगम, संग्रह, व्यवहार,
ऋजुसूत्र शब्द, समभिरूढ और एवंभूत । इन सातों का द्रव्यार्थिक
और पर्यायार्थिक, इन दो नयों में अन्तर्भाव हो जाता है । द्रव्य ही पर-
मार्थतः-वास्तविक रूप से-हैं पर्यायें नहीं-इस प्रकार द्रव्य को ही स्वीकार
करने वाला नय द्रव्यार्थिक नय है । और पर्यायें ही वास्तविक सत् हैं
द्रव्य नहीं इस प्रकार पर्यायों को ही वास्तविक रूप में मानने वाला नय
पर्यायार्थिक नय है । नैगम, संग्रह, और व्यवहार ये तीन द्रव्य को ही

માનવામાં આવી છે-ત્રણ આદિ પરમાણુઓમાં આદિ, મધ્ય અને અવસાન
(અન્ત) ભાવરૂપ જે નિયતક્રમ છે તે ક્રમની અપેક્ષાએ વ્યવસ્થાપનની યોગ્યતા
છે. તેથી તે યોગ્યતાની અપેક્ષાએ તે ત્રણ આદિ પરમાણુઓમાં આનુપૂર્વી-
તાનો સદ્ભાવ માનવામાં કોઈ વાંધો રહેતો નથી.

અનૌપનિધિકી અનુપૂર્વીમાં જે દ્વિવિધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે
તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે-સામાન્ય રીતે તો આ સાત નય છે-નૈગમ,
સંગ્રહ, વ્યવહાર, ઋજુસૂત્ર, શબ્દ, સમભિરૂઢ અને એવંભૂત તે સાતે નયને
મુખ્ય બે પ્રકારમાં વહેંચી શકાય છે-(૧) દ્રવ્યાર્થિક અને (૨) પર્યાયાર્થિક
દ્રવ્ય જ પરમાર્થતઃ (વાસ્તવિક રૂપે) છે-પર્યાયો નથી, આ રીતે દ્રવ્યને
જ સ્વીકાર કરનારા નયોને દ્રવ્યાર્થિક નય કહે છે.

પર્યાયો જ વાસ્તવિક સત્ છે-દ્રવ્ય વાસ્તવિક સત્ (વિદ્યમાન વસ્તુ)
નથી, આ રીતે પર્યાયોને જ વાસ્તવિક રૂપે સ્વીકારનારા નયોને પર્યાયાર્થિક
નય કહેવામાં આવે છે. નૈગમ નય, સંગ્રહ નય અને વ્યવહાર નય, આ ત્રણે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૩ નામાચાતુર્ણીનિરૂપણમ્

૩૦૩

હૃદયેવંભૂતાશ્ચત્વારઃ પર્યાયાર્થિકનયાઃ । તત્ર દ્રવ્યાર્થિકો હિ સામાન્યતો દ્વિવિધો
ભવતિ-વિશુદ્ધોઽવિશુદ્ધશ્ચ । તત્ર નૈગમવ્યવહારરૂપઃ-અવિશુદ્ધઃ । સંગ્રહરૂપસ્તુ વિશુદ્ધઃ ।
નૈગમવ્યવહારૌ હિ અનન્તપરમાણ્વનન્તદ્વયણુકાઘનેક વ્યત્તયાત્મકં કૃષ્ણાઘનેકગુણા-
ધારં ત્રિકાલવિષયં વા અવિશુદ્ધં દ્રવ્યં વિષયીકુરુતઃ, ઇતિ હેતોરનયોરવિશુદ્ધત્વમ્ ।
સંગ્રહશ્ચ પરમાણ્વાદિકં પરમાણ્વાદિ સામ્યાદેકં તિરોભૂતગુણકલાપમવિદ્યમાનપૂર્વાપર-
શ્ચિમાગં નિત્યં સામાન્યમેવ દ્રવ્યં વિષયીકુરુતે । સામાન્યં ચ-અનેકત્વાદિ દોષ-
ર્જિતત્વાત્ શુદ્ધમ્ । તત્થ સામાન્યરૂપશુદ્ધદ્રવ્યાભ્યુપગમપરત્વાદયં સંગ્રહનયઃ શુદ્ધઃ ।

વિષય કરને વાળે હોને સે દ્રવ્યાર્થિક નય હૈં । ઋજુ સૂત્ર, શબ્દ, સમભિ-
રૂદ્ધ ઓર એવંભૂત યે ચાર નય પર્યાયોં કો હી વિષય કરને વાળે હોને સે
પર્યાયાર્થિક નય હૈં । સામાન્ય સે દ્રવ્યાર્થિક નય દો પ્રકાર કા હોતા હૈ
એક વિશુદ્ધ ઓર દૂસરા અવિશુદ્ધ । નૈગમ ઓર વ્યવહાર યે દો નય
અવિશુદ્ધ હૈં । સંગ્રહ નય વિશુદ્ધ હૈ । નૈગમ ઓર વ્યવહાર યે દો નય
અનન્ત પરમાણુ, અનન્ત દ્વયણુક આદિ અનેક વ્યક્તિસ્વરૂપ, ઓર કૃષ્ણ
આદિ અનેક ગુણોં કે આધારભૂત અથવા ત્રિકાલવર્તી એસે અવિરૂદ્ધ
દ્રવ્ય કો વિષય કરતે હૈં । ઇસલિયે યે અવિશુદ્ધ હૈં । તથા સંગ્રહ નય
જાતિકો અપેક્ષા સે પરમાણુ આદિ એક સામાન્ય રૂપ દ્રવ્ય કો હી વિષય
કરતા હૈં ઉસકી દૃષ્ટિ મેં અનેક ભિન્ન ૨ પરમાણુ ભી પરમાણુ આદિ રૂપ
સે સમાનતા વાળે હોને કે કારણ એક હૈં । ગુણ સમૂહ પર ઉસકી

નયો દ્રવ્યનુ' જ પ્રતિપાદન કરનારા હોવાથી દ્રવ્યાર્થિક નયમાં તેમને સમાવી
લેવામાં આવ્યા છે ઋજુસૂત્રનય, શબ્દનય, સમભિરૂદ્ધ નય અને એવંભૂત નય,
આ ચારે નયો પર્યાયોનુ' જ પ્રતિપાદન કરનારા હોવાથી તેમને પર્યાયાર્થિક
નયમાં સમાવી શકાય છે. સામાન્ય રૂપે દ્રવ્યાર્થિક નય બે પ્રકારેનો છે-(૧)
વિશુદ્ધ અને (૨) અવિશુદ્ધ નૈગમ અને વ્યવહાર, આ બન્ને નય અવિશુદ્ધ
છે અને સંગ્રહનય વિશુદ્ધ છે. નૈગમ અને વ્યવહાર નય અનન્ત પરમાણુ,
અનન્તદ્વયણુક આદિ અનેક વ્યક્તિસ્વરૂપ (વસ્તુસ્વરૂપ) અને કૃષ્ણ આદિ અનેક
શુદ્ધોના આધારભૂત અથવા ત્રિકાલવર્તી એવા અવિશુદ્ધ દ્રવ્યને વિષય કરે
છે (પ્રતિપાદન કરે છે) તેથી તે બન્ને નયને અવિશુદ્ધ કહ્યા છે. સંગ્રહનયને
વિશુદ્ધ કહેવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે સંગ્રહનય જાતિની અપેક્ષાએ પર-
માણુ આદિ એક સામાન્ય રૂપ દ્રવ્યને જ વિષય કરે છે તે નયની માન્યતા
અનુસાર તો અનેક ભિન્ન ભિન્ન પરમાણુઓ પણ પરમાણુ આદિ રૂપ સમા-
નતાવાળા હોવાને લીધે એક જ છે. શુદ્ધસમૂહ તરફ તેની દૃષ્ટિ જતી નથી,

૩૦૪

અનુયોગદ્વારસૂત્ર

અત્ર ચ દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યાઃ પ્રક્રાન્તત્વાત્ દ્રવ્યાર્થિકમતેનૈવ તસ્યાઃ શુદ્ધાઽશુદ્ધસ્વરૂપં દર્શયિષ્યતે, ન તુ પર્યાયાર્થિકમતેન, પર્યાયવિચારસ્યાપ્રક્રાન્તત્વાદિતિ ॥સૂ૦૭૩॥

સમ્પતિ નૈગમવ્યવહારસમ્પતામનોપનિધિકીં દ્રવ્યાનુપૂર્વીં દર્શયતિ-

મૂલમ્—સે કિં તં નૈગમવવહારાણં અળોવણિહિયા દ઼વાણુ-
પુ઼ર્વી ? નૈગમવવહારાણં અળોવણિહિયા દ઼વાણુપુ઼ર્વી પંચવિહા
પળ્ળત્તા, તં જહા—અઢપયપરૂવળયા૧, મંગસમુક્તિતળયા૨, મંગો-
વદંસળયા૩, સમોચારે૪, અળ્ળમે૫ ॥સૂ૦૭૪॥

દૃષ્ટિ નહીં જાતી હૈ। ક્યોંકિ ગુણ મો ઇક પ્રકાર કી પર્યાય હૈ। ઓર યહ વસ્તુ કી સહભાવી પર્યાય હૈ દ્રવ્યગત પૂર્વાપરવિભાગ કો મી યહ નહીં માનતા હૈ। અતઃ ઇન સ્વથાતોં કો ગૌણ કરકે વહ નય સિર્ફ ઇક નિત્ય સામાન્ય ધર્માત્મક વિશુદ્ધ દ્રવ્ય કો હી વિષય કરનેવાલા હોને સે વિશુદ્ધ માના ગયા હૈ। ક્યોંકિ ઇસ નય કા વિષય અનેકત્વઆદિ નહીં હૈ। સામાન્ય રૂપ દ્રવ્યત્વ મેં અનેકત્વઆદિ તો ડસકી દૃષ્ટિ મેં દૂષળ હૈ। અતઃ અનેકત્વઆદિ દોષોં સે વર્જિત સામાન્યરૂપ શુદ્ધ દ્રવ્ય કો વિષય કરને કે કારણ યહ નય વિશુદ્ધ હૈ। યહાં પર દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા પ્રકરણ ચલ રહા હૈ ઇસલિયે દ્રવ્યાર્થિકનય કે મત સે હી ડસ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા શુદ્ધ અશુદ્ધ સ્વરૂપ સૂત્રકાર દિસલા-
વેમે પર્યાયાર્થિકનય કે મત સે નહીં। ॥સૂ૦૭૩॥

કારણ કે શુણ્ણ પણ્ણ ઁક પ્રકારની પર્યાય જ છે. દ્રવ્યગત પૂર્વાપર વિભાગને પણ્ણ તે માનતો નથી તેથી આ બધી બાબતોને ગૌણરૂપ ગણીને તે નય માત્ર નિત્ય સામાન્ય ધર્માત્મક વિશુદ્ધ દ્રવ્યનું જ પ્રતિપાદન કરનારો હોવાથી તેને વિશુદ્ધનય માનવામાં આવ્યો છે, કારણ કે આ નયનો વિષય અનેકત્વ આદિ નથી સામાન્યરૂપ દ્રવ્યત્વમાં અનેકત્વ આદિ તો તે નયની માન્યતા પ્રમાણે દૂષણરૂપ છે. તેથી અનેકત્વ આદિ દોષોથી વિહીન સામાન્યરૂપ શુદ્ધ દ્રવ્યનું પ્રતિપાદન કરનારો હોવાને કારણે સંબ્રહ્મનયને વિશુદ્ધ નય કહેવામાં આવ્યો છે અહીં દ્રવ્યાનુપૂર્વીના અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી સૂત્રકાર અહીં દ્રવ્યાર્થિક નયની માન્યતા અનુસાર જ દ્રવ્યાનુપૂર્વીના શુદ્ધ અશુદ્ધ સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરશે—પર્યાયાર્થિક નયના મત અનુસાર અહીં તેનું નિરૂપણ કરશે નહીં ॥સૂ૦૭૩॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૪ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૩૦૫

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? નૈગમ-વ્યવહારયોઃ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પશ્ચવિધા પ્રજ્ઞા, તથા અર્થપદપ્રરૂપણતા, મંગ્લસમુત્કીર્તનતા, મંગ્લોપદર્શનતા, સમવતાર, અનુગમ: ૧ ॥મૂ.૦૭૪॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ. ઉત્તરમાહ—‘નૈગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ. નૈગમવ્યવહારયોરનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પશ્ચવિધા પ્રજ્ઞતા. તદ્ યથા—અર્થપદપ્રરૂપણતા—અર્થઃ=અણુકસ્કન્ધ-દિરૂપસ્તદ્વ્યુત્તં તદ્વિષયં વા પદમ્=આનુભૂત્યાદિકમ્—અર્થપદમ્, તસ્ય પ્રરૂપણં=કથનં

અથ સૂત્ર કા નૈગમ-વ્યવહાર નય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કો પ્રકટ કરતે હૈ—‘સે કિં તં ઇત્યાદિ’.

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુત્ત્વી?) હે ભદ્રન્ત. નૈગમ ઓર વ્યવહાર ઇન દો નયોં કો સંમત જો અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર:—(નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુત્ત્વી પંચવિહા પણ્ણસા) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારકી કહી હુઈ હૈ. (તંજહા) વે પ્રકાર વે હૈ—(અટ્ઠપયપરૂવણયા, મંગ-સમુક્ષિત્તણયા, મંગોવદંસણયા, સમોચારે અણુગમે) અર્થપદપ્રરૂપણતા, મંગસમુત્કીર્તનતા, મંગોપદર્શનતા, સમવતાર, ઓર અનુગમ, ૧. અર્થપદપ્રરૂપણતા—અણુકસ્કન્ધ આદિરૂપ અર્થ સે યુક્ત અથવા—અણુકસ્કન્ધ ત્રીન પરમાણુવાલા સ્કન્ધ આદિરૂપ અર્થ કો વિષય કરનેવાલા જો પદ હૈ

હવે સૂત્રકાર નૈગમ અને વ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરે છે—“સે કિં તં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુત્ત્વી?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવાન! નૈગમ અને વ્યવહાર, આ બે નયોને સંમત જે અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુત્ત્વી પંચવિહા પણ્ણસા) નૈગમ અને વ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(અટ્ઠપયપરૂવણયા, મંગ સમુક્ષિત્તણયા, મંગોવદંસણયા, સમોચારે અણુગમે) (૧) અર્થપદ પ્રરૂપણતા, (૨) મંગ-સમુત્કીર્તનતા, (૩) મંગોપદર્શનતા, (૪) સમવતાર અને (૫) અનુગમ અર્થપદપ્રરૂપણતા—અણુક (ત્રણ પરમાણુવાળો) સ્કન્ધ આદિ રૂપ અર્થથી યુક્ત અથવા અણુકસ્કન્ધ આદિરૂપ અર્થને વિષય કરવાવાળું જે પદ છે તેનું નામ

તદેવ, અર્થપદપ્રરૂપણતા । આનુપૂર્વાદિકા સંજ્ઞા, તદ્વાચ્યસ્વરૂપણકાદિરર્થઃ સંજ્ઞી । સંજ્ઞાસંક્લિસમ્બન્ધકથનમાત્રં પ્રથમં કર્તવ્યમિતિ ભાવઃ । इति प्रथमो भेदः १ । અત્ર સ્વાર્થે તત્ત્વ પ્રત્યયો બોધ્યઃ । તથા-ભક્તસમુત્કીર્તનતા-મગ્યન્તે=વિકલ્પ્યન્તે । इति भङ्गाः=तेषामेव आनुपूर्वादिपदानां समुदितानां वक्ष्यमाणन्यायेन संभविनो विकल्पाः, तेषां समुत्कीर्तनं=समुच्चारेणं, तदेव, भक्तसमुत्कीर्तनता, आनुपूर्वादि-पदनिष्पन्नानां प्रत्येकभङ्गानां द्वयादिसंयोगभङ्गानां च समुच्चारणमित्यर्थः । इति द्वितीयो भेदः २ । તથા-ભક્તોપદર્શનતા-તેષામેવ સૂત્રમાત્રતયાડનન્તરસમુત્કીર્તિતાનાં ભક્તોનાં પ્રત્યેકં સ્થાભિધેયેન વ્યણકાચર્યેન સહ ઉપદર્શનમ્-ભક્તોપદર્શનં, તદેવ ભક્તોપદર્શનતા । इति तृतीयोभेदः ३ ।

उसका नाम अर्थपद है । इस अर्थपद की प्ररूपणा करना यही अर्थपद प्ररूपणता है । आनुपूर्वी आदि यह संज्ञा है-नाम है । इन नाम का वाच्यार्थ जो व्यणुक आदि है वह संज्ञी है । संज्ञा संज्ञी के संबन्धका कथन मात्र सब से प्रथम करना यही अर्थपद प्ररूपणता है । तथा-भंग समुत्कीर्तनता-जो सेदरूप हो उसका नाम भंग है । समुदित उन्हीं आनुपूर्वी आदि पदों के संभवित विकल्पों-भेदों-का अच्छी प्रकार से उरुचरण करना अर्थात् आनुपूर्वी आदि के पदों से निष्पन्न हुए प्रत्येक भंगों का और संयोगज दो आदि भंगों का बोलना यही भंग समुत्कीर्तनता है । भंगोपदर्शनता-सूत्र मात्र होने के कारण अनन्तररूप से उरुचरित हुए उन्हीं-भंगों में से प्रत्येक भंग का अपने अभिधेयरूप कथन व्यणुकादि अर्थ के साथ जो उपदर्शन-बोलना है-वही भंगोपदर्शनता है ।

અર્થપદ છે. આ અર્થપદની પ્રરૂપણા કરવી તેનું નામ જ 'અર્થપદ પ્રરૂપણતા' છે. આનુપૂર્વી આદિ આ સંજ્ઞા (નામ) છે. આ નામોનો જે ત્રિઅણુક આદિ વાચ્યાર્થ છે સંજ્ઞી છે. સંજ્ઞા સંજ્ઞીના સંબંધનું કથન જ સૌથી પહેલાં કરવું એજ અર્થપદપ્રરૂપણતા છે.

ભંગસમુત્કીર્તનતા-જે ભેદ રૂપ હોય તેનું નામ ભંગ છે. સમુદિત એજ આનુપૂર્વી આદિ પદોના સંભવિત ભેદોનું (વિકલ્પોનું) સારી રીતે ઉચ્ચારણ કરવું એટલે કે આનુપૂર્વી આદિના પદો વડે નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન) થયેલા પ્રત્યેક ભંગોનું અને સંયોગજનિત ઐ આદિ ભંગોનું કથ કરવું તેનું નામ જ ભંગસમુત્કીર્તનતા છે.

ભંગોપદર્શનતા-સૂત્રમાત્ર હોવાને કારણે અનન્તરરૂપે ઉચ્ચરિત થયેલા એજ ભંગોમાંથી પ્રત્યેક ભંગનું પોતાના અભિધેય રૂપ ત્રિઅણુક આદિ અર્થની સાથે જે ઉપદર્શન (ઉચ્ચારણ) કરવું તેનું નામ જ ભંગોપદર્શનતા છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૪ અનૌપનિધિકીદ્રવ્યાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૩૦૭

નનુ મજ્જસમુત્તકીર્તનમજ્જોપદર્શનયોઃ કો ભેદઃ ? इति चेत् उच्यते—मज्जसमु-
त्तकीर्तने मज्जविषयकं सूत्रमेवोच्चारणीयम् । मज्જોपદર્શने तु तदेव स्वविषयभूतेना-
र्येन सहोच्चारयितव्यमिति । तथा-समवतारः=तेषामेवानुपूर्व्यादि द्रव्याणां
स्वस्थानपरस्थानान्तर्भावचिन्तनप्रकारः । इति चतुर्थो भेदः ४ । तथा-अनुगमः-
अनुगमनम् , अनुगमः=तेषामेवानुपूर्व्यादिद्रव्याणां सत्पदप्ररूपणादिभिरनुयोग-
द्वारैर्विचारणम् । इति पञ्चमोभेदः ५ । एभिः पञ्चभिप्रकारैर्नैगमव्यवहारनयमतेन
अनौपनिधिक्याः द्रव्यानुपूर्व्याः स्वरूपं निरूप्यत इति भावः ॥सू० ७४॥

તત્ર પ્રથમં ભેદમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નેગમવવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા ? નેગમ-
વવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા—તિપણસિણ આણુપુઠ્ઠી, ચઉપ્પણ-
સિણ આણુપુઠ્ઠી જાવ દસપણસિણ આણુપુઠ્ઠી, સંઘેજ્જપણસિણ

શંકાઃ—મંગસમુત્તકીર્તન ઓર મંગોપદર્શન દન દોનોં મેં કયા ભેદ
હે ? મંગસમુત્તકીર્તન મેં મંગ વિષયક સૂત્ર કા હી કેવલ ઉચ્ચારણ કરના
હોતા હે ઓર મંગોપદર્શન મેં વહી સૂત્ર અપને વિષયભૂત અર્થ કે સાથ
બોલા જાતા હે । ઉન્હીં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કા સ્વસ્થાન ઓર પરસ્થાન
મેં અન્તર્ભાવ હોને કે વિચારોં કા જો પ્રકાર હે ઉત્તકા નામ સમવતાર
હે । ઉન્હીં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કા જો સત્પદકી પ્રરૂપણા આદિ વાલે
અનુયોગદ્વારોં સે વિચાર કરના હોના હે વહ અનુગમ હે । દન પાંચ
પ્રકારોં સે નેગમવ્યવહાર નય કે મત સે માન્ય અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુ-
પૂર્વીકા સ્વરૂપ નિરૂપિત હોતા હે । ॥સૂ० ૭૪॥

શંકા-ભંગ સમુત્તકીર્તન અને ભંગોપદર્શન વચ્ચે શો ભેદ છે ?

ઉત્તર-ભંગ સમુત્તકીર્તનમાં ભંગવિષયક સૂત્રનું જ કેવળ ઉચ્ચારણ કર-
વાનું હોય છે. પરંતુ ભંગોપદર્શનમાં એજ સૂત્ર પોતાના વિષયભૂત અર્થની
સાથે ઉચ્ચારિત થાય છે.

સમવતાર-એજ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનેા સ્વસ્થાન અને પરસ્થાનમાં
અન્તર્ભાવ થવાના વિચારોનેા જે પ્રકાર છે તેનું નામ ‘સમવતાર’ છે.

અનુગમ-એજ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના જેને સત્પદની પ્રરૂપણા આદિ-
વાળા અનુયોગ દ્વારેથી વિચાર કરાય છે તેનું નામ અનુગમ છે.

આ પાંચ પ્રકારે નેગમ અને વ્યવહાર નયના મતસંમત અનૌપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ નિરૂપિત થાય છે, ॥સૂ० ૭૪॥

૩૦૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

આણુપુઘ્વી, અસંખિજ્ઞપણસિણ આણુપુઘ્વી, અણંતપણસિણ આણુ-
પુઘ્વી, પરમાણુપોગલે અણાણુપુઘ્વી, દુપણસિણ અવત્તવણ, તિપ-
ણસિયા આણુપુઘ્વીઓ જાવ અણંતપણસિયાઓ આણુપુઘ્વીઓ,
પરમાણુપોગલા અણાણુપુઘ્વીઓ, દુપણસિયાઈ અવત્તવયાઈ। સે
તં નેગમવવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા ॥સૂ૦ ૭૧॥

હાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અષ્ટપદપ્રરૂપણતા ? નૈગમવ્યવહારયોઃ
અષ્ટપદપ્રરૂપણતા—ત્રિપદેશિક આનુપૂર્વી, ચતુષ્પદેશિક આનુપૂર્વી, યાવદ્ દશપદે-
શિક આનુપૂર્વી, સંખ્યેયપદેશિક આનુપૂર્વી, અસંખ્યેયપદેશિક આનુપૂર્વી, અનન્ત-
પદેશિક આનુપૂર્વી, પરમાણુપુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી, દ્વિપદેશિકઃ અવત્તવ્યકઃ। ત્રિપદે-
શિકા આનુપૂર્વ્યો યાવત્ અનન્તપદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ। પરમાણુપુદ્ગલાઃ અનાનુપૂર્વ્યઃ।
દ્વિપદેશિકાદીનિ અવત્તવ્યકાનિ। સૈવા નૈગમવ્યવહારયો અર્થપદપ્રરૂપણા ॥સૂ૦ ૭૫॥

ટીકા—શિષ્ય : પૃચ્છતિ—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા અર્થપદપ્રરૂપણ-
તારૂપાઽઽનુપૂર્વી ? इति। उत्तरमाह—नैगमव्यवहारसम्मतार्थपदप्ररूपणतारूपा-
ऽऽनूपूर्वी एवं विज्ञेया, तथाहि—त्रिपदेशिकः—त्रयःपदेशाः=परमाणुलक्षणा विभागा
यस्मिन् स त्रिपदेशिकः=प्रदेशत्रयात्मकः स्कन्धः आनुपूर्वी बोध्या। एवं चतुष्पदे-

અથ સૂત્રકાર પ્રથમ ભેદકા વર્ણન કરતે હૈં—

‘સે કિં તં નેગમવવહારાણં ઇત્યાદિ’।

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં નેગમવવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા) હે અદન્ત !
પૂર્વકથિત નૈગમ વ્યવહારનયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતારૂપ આનુપૂર્વી કા
કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તરઃ—(નેગમવવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા) નૈગમ વ્યવહારનય
સંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતારૂપ આનુપૂર્વીકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ (તિ-
પણસિણ આણુપુઘ્વી, ચત્તપણસિણ આણુપુઘ્વી, જાવ દસપણસિણ આણુ-

હવે સૂત્રકાર પ્રથમ ભેદનું વર્ણન કરે છે—

“ સે કિં તં નેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નેગમવવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા ?) હે ભગવન્ !
પૂર્વકથિત નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતા રૂપ આનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેનું છે ?

ઉત્તર—(તિપણસિણ આણુપુઘ્વી, ચત્તપણસિણ આણુપુઘ્વી, જાવ દસપણસિણ

અનુયોગચંદ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૫ અનૌપનિધિકીદ્રવ્યાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૩૦૯

શિકઃસ્કન્ધો યાવત્ દશમદેશિકઃ આનુપૂર્વી બોધ્યા યાવત્ સંખ્યાતપ્રદેશિક આનુપૂર્વી, અસંખ્યાતપ્રદેશિકઃ આનુપૂર્વી, અનન્તપ્રદેશિકઃ આનુપૂર્વી બોધ્યા ।

પરમાણુપુદ્ગલઃ=૧કઃ પરમાણુસ્તુ અનાનુપૂર્વી બોધ્યા । પરમાણ્વન્તરા-સંસ્પૃષ્ટત્વાત્, દ્વિપ્રદેશિકઃ=પરમાણુદ્વયવિભાગવાન્ સ્કન્ધસ્તુ આનુપૂર્વિતયા અનાનુપૂર્વિતયા વા વક્તુમશક્યઃ, અતઃ સોડવક્તવ્યકઃ । યસ્માદેવં તસ્માત્-ત્રિપ્રદેશિકાઃ સર્વેઽપિ સ્કન્ધા આનુપૂર્વ્યો ભવન્તિ, યાવત્ અનન્તપ્રદેશિકાઃ સર્વેઽપિ સ્કન્ધા આનુપૂર્વ્યો ભવન્તિ ।

પુઞ્વી સંલેઙ્ગપણિય આણુપુઞ્વી, અસંલેઙ્ગપણિય આણુપુઞ્વી, અણંત-પણિય આણુપુઞ્વી) ત્રીણ પ્રદેશોવાળા ત્રણુક સ્કંધ આનુપૂર્વી છે ચાર પ્રદેશોવાળા ચતુષ્પ્રદેશિક સ્કંધ આનુપૂર્વી છે । યાવત્ દશ પ્રદેશોવાળા સ્કંધ આનુપૂર્વી છે યાવત્ સંખ્યાતપ્રદેશોવાળા સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, અસંખ્ય પ્રદેશોવાળા સ્કંધ આનુપૂર્વી છે । એસા જાનનાં ચાહિયે ।

(પરમાણુપોગલે આણાણુપુઞ્વી, દુપણિય અવત્તવ્વણે) પરંતુ જો ૧ક પરમાણુ છે વહ આનુપૂર્વી નહીં છે । કયોંકિ વહ ઓર કિસી દુસરે પરમાણુ સે સંસ્પૃષ્ટ નહીં છે । દ્વિપ્રદેશવાળા જો સ્કંધ છે વહ આનુપૂર્વીરૂપ સે ઓર અનાનુપૂર્વીરૂપ સે વક્તું અશક્ય છે હસલિયે વહ અવત્તવ્વ છે । જબ એસી વાત છે તો (તિપણિયા આણુપુઞ્વીઓ જાવ અણંતપણિયાઓ આણુપુઞ્વીઓ) ત્રીણ પ્રદેશવાળે સમસ્તસ્કંધ આનુપૂર્વી છે-યાવત્ અનન્ત પ્રદેશવાળે જિતને બી સ્કંધ છે વે સબ આનુપૂર્વીયાં છે । (પરમાણુ

આણુપુઞ્વી, સંલેઙ્ગપણિય આણુપુઞ્વી, અસંલેઙ્ગપણિય આણુપુઞ્વી, અણંત પણિય આણુપુઞ્વી) ત્રણ પ્રદેશોવાળો ત્રણુક સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, ચાર પ્રદેશોવાળો ચતુષ્પ્રદેશિક સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, દસ પર્યંતના પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, સંખ્યાત પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે અને અનંત પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, એમ સમજવું

(પરમાણુપોગલે અણાણુપુઞ્વી, દુપણિય અવત્તવ્વણે) પરંતુ જે કેવળ એક પરમાણુ છે તે આનુપૂર્વી રૂપ નથી, કારણ કે તે કોઈ બીજા પરમાણુ વડે સંસ્પૃષ્ટ હોતું નથી જે પ્રદેશોવાળો જે સ્કંધ છે તે આનુપૂર્વી રૂપે અને અનાનુપૂર્વી રૂપે વ્યક્ત થવો અશક્ય છે તેથી તે અવકતવ્ય છે. જો એવી વાત છે તો (તિપણિયા આણુપુઞ્વીઓ જાવ અણંતપણિયાઓ આણુપુઞ્વીઓ) ત્રણ પ્રદેશોવાળા સમસ્ત સ્કંધો આનુપૂર્વીઓ રૂપે છે, અને અનંત પર્યંતના પ્રદેશોવાળા જેટલા સ્કંધો છે તેઓ પણ આનુપૂર્વીઓ રૂપે છે.

પરમાણુપુદ્ગલારતુ અનાનુપૂર્વો ભવન્તિ । દ્વિપ્રદેશિકાનિ=દ્વચણુકસ્કન્ધદ્રવ્યાણિ આનુપૂર્વિતયાऽનાનુપૂર્વિતયા વા અવક્તવ્યકાનિ ભવન્તિ ।

અત્રેદં બોધપૂ-આનુપૂર્વી પરિપાટીત્યુચ્યતે । સા ચ યત્રૈવાદિ મધ્યાન્તલક્ષણઃ સમ્પૂર્ણો ગણનાનુક્રમોઽસ્તિ તત્રૈવોપપદ્યતે, નાન્યત્ર । एवं च यत्र स्कन्ध आदिर्मध्योऽन्तश्च भवति स स्कन्ध आनुपूर्वीत्युच्यते । आदिश्च यस्मात्परमस्ति पूर्वं नास्ति स बोध्यः । मध्यश्च यस्मात् पूर्वमस्ति परमस्यस्ति स बोध्यः । अन्तश्च यस्मात्पूर्वमस्ति परं नास्ति स बोध्यः । एतत्त्रितयं तु त्रिપ્રદેશિકાઘનન્તમેદેશિકાન્તેષુ

પોગમલા અણાણુપુઢ્વીઓ, દુપણિયાઈ(અવક્તવ્યયાઈ) જો ભિન્ન ૨ અસંબદ્ધ અવસ્થાવાલે-પુદ્ગલ પરમાણુ હૈં વે આનુપૂર્વિયાં નહીં હૈં । (દુપણિયાઈ અવક્તવ્યયાઈ) ઓર જો દો પ્રદેશવાલે પુદ્ગલ સ્કંધ હૈં વે આનુપૂર્વીરૂપ સે ઓર અનાનુપૂર્વી રૂપ સે વક્તવ્ય નહીં હોને કે કારણ અવક્તવ્ય હૈં ।

यहां यह समझना चाहिये-कि आनुपूर्वी नाम परिपाटी का है । यह परिपाटीरूप आनुपूर्वी वहीं पर होती है कि जहां पर आदि मध्य और अन्त रूप गणना का संपूर्ण अनुक्रम होता है । अन्यत्र नहीं होती । इस प्रकार जहां स्कंध में आदि, मध्य और अंत होता है । वह स्कंध आनुपूर्वी ऐसा कहलाता है । जिससे पर है और पूर्व नहीं है वह आदि शब्द का वाच्यार्थ-पदका अर्थ है । जिससे पूर्व है और पर भी है वह मध्य शब्द का वाच्यार्थ है । और जिससे पूर्व है परन्तु पर नहीं है-वह अन्त

(પરમાણુપોગમલા અણાણુપુઢ્વીઓ, દુપણિયાઈ અવક્તવ્યયાઈ) જે ભિન્ન બિન્ન-અસંબદ્ધ અવસ્થાવાળા પુદ્ગલ પરમાણુઓ છે તેઓ આનુપૂર્વીઓ રૂપ નથી, અને જે જે પ્રદેશોવાળા પુદ્ગલસ્કંધો છે તેમને આનુપૂર્વી રૂપે અને અનાનુપૂર્વી રૂપે વ્યક્ત કરી શકાય એવાં ન હોવાથી અવકતવ્ય છે.

અહીં આનુપૂર્વીનો અર્થ પરિપાટી સમજવો તે પરિપાટી રૂપ આનુપૂર્વીનો ત્યાં જ સફરભાવ હોય છે કે જ્યાં આદિ, મધ્ય અને અન્ત રૂપ ગણનાનો સંપૂર્ણ અનુક્રમ શક્ય હોય છે-જ્યાં આ અનુક્રમ સંભવિત હોતો નથી ત્યાં આનુપૂર્વી પણ સંભરી શકતી નથી આ પ્રકારે જે સ્કંધમાં આદિ, મધ્ય અને અન્ત હોય છે, તે સ્કંધને આનુપૂર્વીરૂપ કહી શકાય છે. જેની પૂર્વે કંઈ ન હોય પણ પછી કંઈક હોય, એવો 'આદિ' પદનો વાચ્યાર્થ છે. જેની પૂર્વે કંઈક હોય અને પછી પણ કંઈક હોય, એવો 'મધ્ય' પદનો વાચ્યાર્થ છે. જેની પૂર્વે કંઈક હોય પણ પછી કંઈ પણ ન હોય, એવો

સ્કન્ધેષ્વસ્તિ, અતસ્તેષુ પ્રત્યેકં સ્કન્ધઃ આનુપૂર્વી ભવતિ । પરમાણુપુદ્ગલે તુ એત-
ત્તિતયં નાસ્તિ, અતઃ સોડનાનુપૂર્વી બોધ્યઃ । દ્વિપ્રદેશિકસ્તુ અવક્તવ્યકો ભવતિ ।
યદ્યપિ તત્ત પરમાણુદ્વયસ્ય સદ્ભાવાદન્યોડન્યાપેક્ષયા પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવોડસ્તિ, અતસ્તત્ર
પૂર્વસ્ય અનુ-અનુપૂર્વ તસ્ય ભાવ આનુપૂર્વી इत्येवंरूपाऽऽनुपूर्वी सुतरां सिध्यति, तथापि
मध्याभावात् सम्पूर्णगणनानुक्रमो नास्ति, अतः स आनुपूर्वीत्वेन वक्तुमशक्यः ।

નનુ માડસ્તુ સમ્પૂર્ણગણનાનુક્રમસ્તથાપિ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવરૂપાયા આનુપૂર્વ્યા
વિદ્યમાનત્વાદયમાનુપૂર્વી ભવિતુ મર્હતિ ? इति चेदुच्यते, यथा मेरुपर्वतादौ क्वचित्

શબ્દ કા વાચ્યાર્થ છે । એ ત્રીનો આદિ મધ્ય ઓર અન્ત ત્રિપ્રદેશિક
આદિ સ્કંધ સે લેકર અનન્ત પ્રદેશતક કે સ્કંધો મેં હોતે હેં । इसलिये
इतमें प्रत्येक स्कंध आनुपूर्वीरूप होता है । परन्तु जो एक परमाणु है
उसमें ये तीनों नहीं होते हैं । इसलिये वह आनुपूर्वी नहीं होता है ।
द्विप्रदेशिक पुद्गलस्કંધ અવક્તવ્ય હોતા છે । यद्यपि द्विप्रदेशिक स्कंध में दो
परमाणु संश्लिष्ट रहते हैं इसलिये वहां अन्योन्यापेक्षा से पूर्व पश्चाद्भाव
है । अतः पूर्वस्य अनु-पूर्व के पीछे-अनुपूर्व है और इस अनुपूर्व का जो
भाव है वह आनुपूर्वी है । इत्येवं रूपा आनुपूर्वी सुतरां वहां सिद्ध हो
जाती है, तो भी मध्य का अभाव होने से सम्पूर्ण गणनानुक्रम वहां
नहीं बनता है । इसलिये वह गणनानुक्रम आनुपूर्वी रूप से वक्तुं अशक्य है ।

‘અન્ત’ પદનો વાચ્યાર્થ છે. આ ત્રણેનો (આદિ, મધ્ય અને અન્તનો)
સદ્ભાવ ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધથી લઈને અન્ત પ્રદેશિક પર્યન્તના સ્કંધોમાં
હોય છે. તેથી તે પ્રત્યેક સ્કંધ આનુપૂર્વી” રૂપ હોય છે. પરન્તુ જે એક
પરમાણુ છે તેમાં આદિ, મધ્ય અને અન્ત, આ ત્રણેનો અભાવ હોય છે,
તેથી એક પરમાણુ આનુપૂર્વી” રૂપ હોતુ નથી દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધને આનુપૂર્વી”
રૂપે અથવા તો અનાનુપૂર્વી” રૂપે વ્યક્ત કરી શકતો નથી તેથી તેને અવ-
ક્તવ્ય કહ્યો છે જે કે દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધમાં જે પરમાણુ સંશ્લિષ્ટ રહે છે, તે
કારણે તેમાં અન્યોન્યની અપેક્ષાએ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવનો (આદિ અને અન્તનો)
સદ્ભાવ હોય છે, પરન્તુ ત્યાં મધ્યનો સદ્ભાવ હોતો નથી અનુપૂર્વની
વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે-“ પૂર્વસ્ય અનુ અનુપૂર્વઃ ” “ પૂર્વની પાછળનું
એટલે અનુપૂર્વ ” આ અનુપૂર્વનો જે ભાવ છે તેનું નામ આનુપૂર્વી” છે. આ
પ્રકારની આનુપૂર્વી” તો અહીં (દ્વિપ્રદેશી સ્કંધમાં) સરળતાથી સિદ્ધ થઈ જાય
છે, છતાં પણ મધ્યનો અભાવ હોવાથી ત્યાં સંપૂર્ણ ગણનાનુક્રમ સંભવી
શકતો નથી તેથી તે ગણનાનુક્રમ આનુપૂર્વી” રૂપે વ્યક્ત થવો અશક્ય છે.

કમપિ પદાર્થ મધ્યત્વેનાવધીકૃત્ય પૂર્વાદિવિભાગો લોકૈઃ ક્રિયતે, તથૈવાડ્રાપિ યદિ સ્વાત્તર્દિં સ્યાદેવમ્ । નચૈવમસ્તિ । અત્ર તુ મધ્યે કોડપિ નાસ્તિ, યમબધી-કૃત્યાડ્રાક્ષ્યેણ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવઃ પરસ્પરાનપેક્ષયા સંભવેત્ । અર્થાત્-યત્રાઘચરમપર-માણ્વોર્મ્યેડન્યઃ પરમાણુર્ચિયતે, તત્ર-મધ્યગતં પરમાણુમાશ્રિય યઃ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવો ભવતિ સ પ્વાનુપૂર્વી ભવતિ, નાન્યઃ અતોડયમાનુપૂર્વીત્વેન વક્તુમશક્યઃ ।

શંકાઃ-સંપૂર્ણ ગણનાક્રમ ભલે ન હો-પરંતુ પૂર્વ પશ્ચાદ્ભાવરૂપ આનુ-પૂર્વી કે વિચ્છિન્ન હોને સે યહ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વી હો સકતા હૈ ।

ઉત્તરઃ-જિસ પ્રકાર મેરુ પર્વત આદિ મેં કિસી સ્થલ પર કિસી બી પદાર્થ કો મધ્યરૂપ સે મર્યાદિત કરકે લોગ ઉસસે પૂર્વ પશ્ચિમપર કા વિભાગ કરતે હૈ, ઉસી પ્રકાર યહાં પર બી-દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ મેં બી યદિ એસા હોતા તો એસા હો સકતા અર્થાત્ આનુપૂર્વિત્વ આ સકતા । પરંતુ એસા તો હૈ નહીં । કયોં કિ યહાં દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ મેં મધ્ય મેં કોઈ બી નહીં હૈ કિ જિસે મર્યાદિત કરકે ઉસ સ્કંધ મેં પૂર્વ પર ભાવ પરસ્પર કી અનપેક્ષા કે સમગ્ર ભાવ સે બન જાવે । તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ જહાં પર આદિ અંતકે દો પરમાણુઓં કે બીચ મેં એક તીસરા પરમાણુ મૌજૂદ રહતા હૈ વહાં પર મધ્ય ગત પરમાણુ કો અવધિભૂત માન કર જો પૂર્વ પશ્ચાદ્ભાવ હોતા હૈ વહી આનુપૂર્વી હોતા હૈ । અન્ય દૂસરા નહીં । ઇસલિયે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વીરૂપ સે વક્તું અશક્ય હૈ ।

શંકા-સંપૂર્ણ ગણનાક્રમ ભલે ન હોય પણ આદિ અને અન્તરૂપ-પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ રૂપ આનુપૂર્વી વિચ્છિન્ન હોવાથી આ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુ-પૂર્વી રૂપ સંભવી શકે છે તો તેને આનુપૂર્વી રૂપ કહેવામાં શો વાંધો નડે છે?

ઉત્તર-જે રીતે મેરુ પર્વત આદિ સ્થળની મધ્યમાં આવેલા કોઈ પદાર્થને મધ્યભાગ રૂપે મર્યાદિત કરીને લોકો તેના પૂર્વ પશ્ચિમ રૂપ વિભાગ પાડે છે અને મધ્યસ્થ સ્થળની પૂર્વે આવેલા ભાગોને પૂર્વના ભાગો રૂપે અને પશ્ચિમે આવેલા સ્થળોને પશ્ચિમના ભાગો રૂપે ઓળખે છે, એજ પ્રમણે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધમાં પણ મધ્યભાગનો સદ્ભાવ હોતો એવું થઈ શકત બનત-તેના પૂર્વ-પશ્ચિમરૂપ વિભાગ પડી શકત-અને તો તેમાં આનુપૂર્વીત્વ સંભવી શકત, પરંતુ એવું તો તેમાં શક્ય નથી, કારણ કે દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધમાં મધ્યમાં એવું કંઈ પણ નથી કે જેને મર્યાદિત કરીને તે સ્કંધમાં પૂર્વ પર ભાવ પરસ્પરની અનપેક્ષા પૂર્વક સમગ્રરૂપે શક્ય અને આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે જ્યાં આદિ અને અન્તના બે પરમાણુઓની વચ્ચે એક ત્રીજું પરમાણુ મૌજૂદ હોય છે, ત્યાં મધ્યના પરમાણુને અવધિભૂત (મર્યાદારૂપ) માનીને પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ શક્ય અને છે અને ત્યારે જ આનુપૂર્વી સંભવી શકે છે-તે સિવાય આનુપૂર્વીત્વ શક્ય બનતું નથી. તે કારણે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધને આનુપૂર્વીરૂપે વ્યક્ત કરી શકતો નથી.

અનુયોગચન્નિકા ટીકા સુત્ર ૭૫ અનોવનિચિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનિકપણમ્ ૩૧૧

નનુ તર્હિ પરમાણુપુદ્ગલવત્ અનાનુપૂર્વીત્વેન કયં નોચ્યતે ? इति चेदाह-
परस्परापेक्षया पूर्वपश्चाद्भावमात्रस्य संज्ञावादयमनानुपूर्वीत्वेनापि वक्तुं न शक्यते ।
इत्यमानुपूर्वीत्वेन अनानुपूर्वीत्वेन च वक्तुमशक्यत्वादवक्तव्यक एव द्वयणुकस्कन्धः ।
अनेन चेदमायातं-यत् त्रिप्रदेशिकादौ आदिमध्यान्तभावस्य विद्यमानतयाऽसा-
ङ्ग्येण पूर्वपश्चाद्भावस्य सत्त्वात् त्रिप्रदेशिकादिः स्कन्ध एवानुपूर्वी, परमाणुपुद्गल-
स्कनानुपूर्वी, द्वयणुकस्कन्धवक्तव्यक इति । एवं चात्र संज्ञासंज्ञिसम्बन्धकथनरूपाऽ-
र्थपदप्ररूपणा कृता भवति ।

શંકા-જબ યહ ત્રિપ્રદેશિકસ્કંધ આનુપૂર્વીરૂપ સે નહીં કહા જા
સકતા હૈ તો ફિર હસે પુદ્ગલપરમાણુ કી તરહ અનાનુપૂર્વીરૂપ સે કયો
નહીં કહ દેતે હૈ ?

ઉત્તર-પરસ્પર કી અપેક્ષા સે હસમેં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ માત્ર કા જબ
સંજ્ઞા હૈ તો ફિર હસે અનાનુપૂર્વીરૂપ સે બી કૈસે કહા જા સકતા હૈ ? । હસ
પ્રકાર આનુપૂર્વી ઓર અનાનુપૂર્વીરૂપ સે યહ ત્રિપ્રદેશિકસ્કંધ વક્તું અશ-
ક્ય હોને સે અવક્તવ્ય કોટિ મેં માનલિયા ગયા હૈ । હસ કથન સે યહ
બાત આઈ કિ ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ મેં આદિ, મધ્ય ઓર અન્ત-ભાવ
કી વિદ્યમાનતા હોને સે સમગ્ર રૂપમેં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ મૌજુદ હૈ । યહ
ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ હી આનુપૂર્વી હૈ । ઓર પરમાણુ પુદ્ગલ અનાનુ-
પૂર્વી હૈ તથા દ્વયણુકસ્કંધ અવક્તવ્ય હૈ । હસ પ્રકાર યહાં પર સંજ્ઞાસંજ્ઞિ
સમ્બન્ધરૂપ અર્થ પદ કી પ્રરૂપણા હો જાતી હૈ ।

શંકા-જે ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વીં રૂપ કહી શકાતા નથી, તે તેને
પુદ્ગલ પરમાણુની જેમ અનાનુપૂર્વીં રૂપ કહેવામાં શો વાંધો છે ?

ઉત્તર-પરસ્પરની અપેક્ષાએ તેમાં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ માત્રનો જ જો સંજ્ઞા-
ભાવ છે તે તેને અનાનુપૂર્વીં રૂપ પણ કેવી રીતે કહી શકાય ? આ રીતે
આ ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વીં રૂપ પણ કહી શકાય તેમ નથી અને અનાનુ-
પૂર્વીં રૂપ પણ કહી શકાય તેમ નથી, તે કારણે તેને અવક્તવ્ય કોટિમાં
ગણાવવામાં આવ્યો છે. આ કથન દ્વારા જોઈ વાત સિદ્ધ થાય છે કે ત્રિપ્ર-
દેશિક આદિ, સ્કંધમાં આદિ મધ્ય અને અન્ત ભાવની વિદ્યમાનતા હોવાથી તેમાં
સમગ્રરૂપે પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ મૌજુદ છે. તેથી આ ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધજ
આનુપૂર્વીં રૂપ છે, અને પરમાણુ પુદ્ગલ અનાનુપૂર્વીં રૂપ છે તથા ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ
અવક્તવ્ય કોટિનો છે. આ પ્રકારે અહીં સંજ્ઞા સંજ્ઞી સંબંધ રૂપ
અર્થપદની પ્રરૂપણા થઈ ગય છે.

નનુ ‘ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી’ ઇત્યાદ્યેકવચનપ્રદર્શનેનૈવ સંજ્ઞાસંજ્ઞીસમ્બન્ધ-
કથનં સિદ્ધમ્, કથં પુનસ્ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ ઇત્યાદિ બહુવચનાન્તનિર્દેશઃ
કુતઃ ? ઇતિ ચેદુત્પત્તે-આનુપૂર્વ્યાદિ દ્રવ્યાણાં પ્રતિમેદમનન્તવ્યક્તિરૂપાપનાર્થ
નૈગમવ્યવહારયોરિત્યંભૂતાઽમ્યુપગમપ્રદર્શનાર્થ ચ બહુવચનાન્તત્વેન નિર્દેશઃ કુત ઇતિ
નાસ્તિ કશ્ચિદ્ દોષઃ ।

શંકા-“ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી” ઇત્યાદિ એકવચન કે કથન સે
હી સંજ્ઞા સંજ્ઞી સમ્બન્ધકા કથન જબ સિદ્ધ હો જાતા હૈ તબ ફિર કયો
સૂત્રકાર ને “ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ” ત્રીન ઇત્યાદિ બહુવચનાન્ત
પદ કા નિર્દેશ કિયા ?

ઉત્તર-આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કા હરેક મેદ અનન્ત વ્યક્તિરૂપ હૈ
હસ ઘાત કો રૂપાપનકરને કે લિયે ઔર નૈગમ ંવં વ્યવહાર નય કા
એસા સિદ્ધાન્ત હૈ હસ ઘાત કો પ્રદર્શિત કરને કે લિયે બહુવચનકા
પ્રયોગ કિયા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ “ત્રિપ્રદેશા આનુપૂર્વ્યઃ”
એસા જો સૂત્રકારને કથન કિયા હૈ ડસસે વે યહ કહના યાહતે હૈ કિ
ત્રિપ્રદેશિક એક દ્રવ્યરૂપ એક હી આનુપૂર્વી નહીં હૈ કિન્તુ ત્રિપ્રદેશિક
દ્રવ્ય અનન્ત હૈ-અતઃ અનન્ત આનુપૂર્વિયાં હૈ । હસલિયે ત્રિપ્રદેશિકરૂપ
મિન્ન ૨ અનન્ત આનુપૂર્વિયોં કી સત્તા સૂચિત કરનેકે લિયે “ત્રિપ્રદે-
શિકા આનુપૂર્વ્યઃ” એસા બહુવચનાન્ત પદ કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ ।

શંકા-‘ત્રિપ્રદેશિક ઇત્યાદિ એક વચનના કથન દ્વારા જ સંજ્ઞા સંજ્ઞી
સંબંધનું કથન ને સિદ્ધ થઈ જાય છે તે સૂત્રકારે “ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ”
‘ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વીઓ’ ઇત્યાદિ બહુવચનાન્ત પદનો નિર્દેશ શા
કારણે કર્યો છે ?

ઉત્તર-‘આનુપૂર્વી’ આદિ દ્રવ્યોનો પ્રત્યેક એક અનન્ત વ્યક્તિરૂપ
(પદાર્થરૂપ) છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે અને નૈગમ તથા
વ્યવહાર નયનો એવો સિદ્ધાન્ત છે એ વાતને પ્રદર્શિત કરવા માટે બહુવચ-
નનો પ્રયોગ પણ કરવામાં આવ્યો છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે “ત્રિપ્ર-
દેશાઃ આનુપૂર્વ્યઃ” આ પ્રકારનું સૂત્રકારે જે કથન કર્યું છે તેના દ્વારા તેઓ
એ વાત પ્રકટ કરવા માગે છે કે ત્રિપ્રદેશિક એક દ્રવ્યરૂપ એક જ આનુપૂર્વી
નથી પરન્તુ ત્રિપ્રદેશિક દ્રવ્ય અનન્ત હોવાને લીધે અનન્ત આનુપૂર્વીઓ છે.
તેથી ત્રિપ્રદેશિક રૂપ જુદી જુદી અનન્ત આનુપૂર્વીઓની સત્તા (અસ્તિત્વ)
સૂચિત કરવાને માટે “ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ” “ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વીઓ”
એવાં બહુવચનાન્ત પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. એજ પ્રમાણે આ

અનુયોગવર્ત્તિકા ટીકા સ્ત્ર ૭૫ અનાપનિધિકા દ્રવ્યાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૩૨૫

નનુ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમેકેન પરમાણુના નિષ્પદ્યતે, અવક્તવ્યક દ્રવ્યં તુ પરમાણુ-
દ્રવ્યેન, આનુપૂર્વીદ્રવ્યં તુ જઘન્યતોઽપિ પરમાણુત્રયેન, एवं દ્રવ્યવૃદ્ધ્યા પૂર્વાનુપૂર્વી-
ક્રમમાશ્રિત્ય પ્રથમમાનુપૂર્વીદ્રવ્યં વક્તવ્યમ્, તતોઽવક્તવ્યકદ્રવ્યમ્, તતથાનુપૂર્વી-
દ્રવ્યમ્। પશ્ચાનુપૂર્વીક્રમમાશ્રિત્ય તુ પ્રથમમાનુપૂર્વી દ્રવ્યં વક્તવ્યમ્, તતોઽવક્તવ્યક-
દ્રવ્યમ્, તતથાનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્। અત્ર પુનઃ ક્રમદ્વયમુલ્લક્ષ્ય નિર્દેશઃ કથં કૃતઃ ?
इति चेदुच्यते-

इसी प्रकार से चार प्रदेशोंवाला एक स्कंध एक आनुपूर्वी है-इस प्रकार
से चार प्रदेशोंवाले स्कंध भी अनन्त हैं अतः वे अनन्तानुपूर्वियां हैं।
अन्यत्र भी इसी प्रकार से उद्भावित कर लेना चाहिये।

शंका-अनानुपूर्वी जो द्रव्य है वह एक परमाणु से निष्पन्न होता
है अर्थात् एक परमाणु अनानुपूर्वी है, और अवक्तव्य द्रव्य परमाणुद्रव्य
के सम्बन्ध से निष्पन्न होता है। अर्थात् संश्लिष्ट परमाणुद्रव्यस्कंध
अवक्तव्य है, तथा कम से कम भी आनुपूर्वी द्रव्य परमाणुत्रय से निष्पन्न
होता है, अर्थात् परमाणुत्रय के संश्लेष से सब से जघन्य आनुपूर्वी
निष्पन्न होती है इस प्रकार द्रव्य की वृद्धि से पूर्वानुपूर्वी क्रम को लेकर
सूत्रकार को चाहिये था कि वे पहिले अनानुपूर्वी द्रव्य का कथन करते,
इसके बाद अवक्तव्य द्रव्यका कथन करते और इसके बाद आनुपूर्वी द्रव्य
का कथनकरते हैं। यदि पश्चानुपूर्वी के क्रम को लेकर उन्हें कथन करना

પ્રદેશોવાળો એક સ્કંધ એક આનુપૂર્વી રૂપ છે અને ચાર પ્રદેશોવાળા એ
અનંત સ્કંધો છે તેઓ અનંત આનુપૂર્વી રૂપ છે એજ પ્રમાણે અનંત પ્રદેશી
પર્યન્તના સ્કંધો વિશે પણ સમજી શકેલું.

શંકા-અનાનુપૂર્વી એ દ્રવ્ય છે તે એક પરમાણુમાંથી નિષ્પન્ન થાય છે-
એટલે કે એક પરમાણુ અનાનુપૂર્વી રૂપ છે, અને અવક્તવ્ય દ્રવ્ય એ પરમા-
ણુના સંબંધથી નિષ્પન્ન થાય છે-એટલે કે સંશ્લિષ્ટ પરમાણુ દ્વયસ્કંધ અવ-
ક્તવ્ય છે-એટલે કે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વી રૂપ પણ નથી અને અનાનુ-
પૂર્વી રૂપ પણ નથી આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ઓછામાં ઓછા ત્રણ પરમાણુ વડે
નિષ્પન્ન થાય છે એટલે કે ત્રણ પરમાણુના સંશ્લેષથી જઘન્યમાં જઘન્ય રૂપ
આનુપૂર્વી નિષ્પન્ન થાય છે. આ રીતે દ્રવ્યની વૃદ્ધિ દ્વારા પૂર્વાનુપૂર્વી ક્રમની
અપેક્ષાએ સૂત્રકારે પહેલાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું ત્યાર
પછી અવક્તવ્ય દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું અને ત્યાર બાદ આનુપૂર્વી
દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું એ પશ્ચાત્પૂર્વીના ક્રમથી કથન કરવું હોય

આનુપૂર્વીદ્રવ્યાપેક્ષયાઽનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અલ્પાનિ, અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાપેક્ષયાઽ-
વ્યક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ અલ્પેતરાણિ, इत्येव' द्रव्यहान्या पूर्वाणुपूर्वीक्रमनिर्देश एवात्र
क्रीते, इति नास्ति कश्चिदोषः । सम्मति प्रकृतमुपसंहरन्नाह-सैषा नेगमव्यवहार-
सम्मताऽर्थपदप्ररूपणतारूपाऽनौपनिधिकी आनुपूर्वी ॥सू० ७५॥

થા તો-પહિલે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા કથન કરતે વાદ મેં અવસ્તવ્ય દ્રવ્ય
કા કથન કરતે ઓર ફિર વાદ મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા કથન કરતે।
પરંતુ ઉન્હોને इन दोनों क्रमों का उल्लंघन कर निर्देश किया है सो
इसका क्या कारण ?

ઉત્તર-સૂત્રકાર કો इस प्रकार के निर्देश से यह बतलाना इष्ट
है कि आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा अनानુपूर्वी द्रव्य थोड़े हैं, और अना-
नुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा अवस्तव्यक द्रव्य और भी कम हैं। इस प्रकार
द्रव्य की हानि से सूत्रकारने यहां पूर्वानुपूर्विक्रम को लेकर उसी का
निर्देश वक्तव्यरूप से इष्ट किया है। अतः इस प्रकार निर्देश में कोई
दोष नहीं है। (से तं नेगमव्यवहाराणं अद्वयपयस्वरूपणया) इस प्रकार से
नेगम व्यवहारनय संमत यह पूर्वप्रकान्त अर्थ पदप्ररूपणतारूप का
अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है।

भावार्थ-सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा अर्थपद प्ररूपणा का क्या स्वरूप
है यह विषय स्पष्ट किया है। त्रयणुकास्कंध से लेकर अनन्त प्रदेशवाले

તો પહેલાં આનુપૂર્વીદ્રવ્યનું, ત્યાર બાદ અવ્યક્ત દ્રવ્યનું અને ત્યાર બાદ
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું. પરંતુ આ બે ક્રમમાંથી એક
થણુ ક્રમને અનુસરવાને બદલે તેમણે પહેલાં આનુપૂર્વીદ્રવ્યનું, ત્યાર બાદ
અનાનુપૂર્વીનું દ્રવ્યનું અને છેલ્લે અવ્યક્તવ્ય દ્રવ્યનું કથન કર્યું છે. તો આમ
કરવાનું શું કારણ હશે ?

ઉત્તર-સૂત્રકાર આ પ્રકારના ક્રમ દ્વારા એ બતાવવા માગે છે આનુપૂ-
ર્વીદ્રવ્ય કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય થોડું છે, અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કરતાં
અવ્યક્તવ્ય થોડું છે આ રીતે સૂત્રકારે અહીં દ્રવ્યની હાનિની અપેક્ષાએ પૂર્વા-
નુપૂર્વી ક્રમનો આધાર લઈને ઉપયુક્ત ક્રમે તેની પ્રરૂપણા કરી છે. તેથી
આ પ્રકારના નિર્દેશમાં કોઈ દોષ નથી.

(સે તં નેગમવ્યવહારાણં અદ્વયપયસ્વરૂપણયા) આ પ્રકારનું નેગમ અને
અવ્યક્તવ્ય સંમત પૂર્વપ્રસ્તુત અર્થપદ પ્રરૂપણતા રૂપ અનૌપનિધિકી
આનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા અર્થપદ પ્રરૂપણાનું કેવું સ્વરૂપ છે તે
વિષયને સ્પષ્ટ કર્યો છે. ત્રણ અણુવાળા (ત્રપ્રદેશી) સ્કંધથી લઈને અનંત

સંયુગ્મચન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૭૬ નૈગમવ્યવહારાર્થપદપ્રરૂપણા

૩૧૭

અસ્યાઃ પ્રયોજનં કિમ્ ? इति दर्शयितुमाह-

મૂલમ્—અસ્યા ઇતિ નૈગમવ્યવહારાર્થ અટ્ટપયપરૂવણયાદ કિં
પ્રયોજનં? આયાદ ઇતિ નૈગમવ્યવહારાર્થ અટ્ટપયપરૂવણયાદ ભંગ-
સમુક્તિત્વત્વાદ કલ્પજ ॥સૂ૦ ૭૬॥

જિતને મી સ્કંધ હૈં વે સબ યહાં “ અર્થ ” શબ્દ સે ગૃહીત હુએ હૈં । હસ અર્થ સે યુક્ત અથવા હસ અર્થ કો વિષય કરનેવાલા જો પદ હૈં ઉસકા વામ અર્થપદ હૈં । હસકી પ્રરૂપણા કા નામ અર્થ પદ પ્રરૂપણા હૈં । હસ પ્રરૂપણા મૈં પુદ્ગલ પરમાણુ ઓર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વર્જિત હો જાતે હૈં । ક્યોં કિ—એકપુદ્ગલપરમાણુ આનુપૂર્વીરૂપ નહીં હૈં ઓર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ અવક્તવ્ય હૈં । સબ સે જઘન્ય આનુપૂર્વી કા પ્રારંભ ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ સે હોતા હૈં । ક્યોં કિ યહીં સે ક્રમ કી સંપૂર્ણ ગણના ચલતી હૈં । ગણના કી તાત્પર્ય ગિનતી સે હૈં । આદિ મધ્ય ઓર અંત હસ પ્રકાર સે ગણના જહાં હોતી હૈં વહીં પર આનુપૂર્વીરૂપ પરિપાટી મૌજૂદ રહતી હૈં । યહ અર્થ પદ પ્રરૂપણારૂપ આનુપૂર્વી નૈગમનય ઓર વ્યવહારનય હન દોનોં નયોં કો સંમત હૈં । યે અર્થ પદ પ્રરૂપણારૂપ આનુપૂર્વીયાં એક સે લેકર અનન્ત હૈં । હસકા કારણ યહ હૈં કિ ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કંધ સે લેકર અનન્ત-પ્રદેશી સ્કંધ તક કે જિતને મી સ્કંધ હૈં વે સબ અનન્ત હૈં । ॥સૂ૦ ૭૫॥

પર્યન્તના પ્રદેશવાળા જેટલા સ્કંધ છે, તે બધાંને લઈને અહીં “ અર્થ ” પદથી શરૂ કરવામાં આવેલ છે. આ અર્થથી યુક્ત અથવા આ અર્થનું પ્રતિપાદન કરનાર જે પદ છે તેનું નામ ‘ અર્થપદ ’ છે. તેની પ્રરૂપણાનું નામ ‘ અર્થપદ પ્રરૂપણા ’ છે. આ પ્રરૂપણામાં પુદ્ગલ પરમાણુ અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વર્જિત થઈ જાય છે—જેટલે કે તેમની પ્રરૂપણા થતી નથી, કારણ કે એક પુદ્ગલ પરમાણુ આનુપૂર્વી રૂપ નથી અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ અવક્તવ્ય છે. જઘન્યમાં જઘન્ય આનુપૂર્વીના પ્રારંભ ત્રિપ્રદેશી સ્કંધથી થાય છે, કારણ કે ત્યાંથી જ કમની સંપૂર્ણ ગણના થાણુ થાય છે. (ગણના જેટલે ગણતરી) આદિ, મધ્ય અને અન્ત, આ પ્રકારની ગણના અર્થ સંલગ્નિત હોય છે, ત્યાં જ આનુપૂર્વી રૂપ પરિપાટી મૌજૂદ રહે છે. આ અર્થપદ પ્રરૂપણા રૂપ આનુપૂર્વી નૈગમનય અને વ્યવહારનય, આ બંને નયો દ્વારા સંમત (માન્ય) છે. આ અર્થપદ પ્રરૂપણારૂપ આનુપૂર્વીએ એકથી લઈને અનંત પર્યન્તની છે, કારણ કે ત્રિપ્રદેશીથી લઈને અનંત પ્રદેશી સુધીના જેટલા સ્કંધ છે, તે બધાં અનંત છે. ॥સૂ૦ ૭૫॥

૩૧૮

અનુયોગદ્વારે

છાયા—અત્યા સ્વલુ નૈગમવ્યવહારયોર્યપદપ્રરૂપણતયા કિં પ્રયોજનમ્ ?
અત્યા સ્વલુ નૈગમવ્યવહારયોર્યપદપ્રરૂપણતયા મંગ્ગસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે ॥મૂ.૦૭૬॥

ટીકા—‘અયાઅ યં’ ઇત્યાદિ—

અત્યા નૈગમવ્યવહારસમ્મતયા અર્થપદપ્રરૂપણતયા કિં પ્રયોજનમ્=કિં કલ્પમ્ ?
ઈતિ સ્ત્રિવ્યઃ પૃચ્છતિ । અથ—ઉચ્ચરયતિ—અત્યા નૈગમવ્યવહારસમ્મતયાઅર્થપદપ્રરૂ-
પણતયા મંગ્ગસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે । અયં ભાવઃ—અર્થપદપ્રરૂપણતાયાં સંજ્ઞાસંજ્ઞિ-
વ્યવહારો નિરૂપિતઃ । સંજ્ઞાસંજ્ઞિવ્યવહારે સત્યેવ મંગ્ગકાઃ સમુત્કીર્તયિતું શક્યન્તે,
નાન્યથા, સંજ્ઞામંતરેણ નિર્વિષયાણાં મંગ્ગાનાં પ્રરૂપણાયા અસંભવાત્ । તસ્માદ્

इसका प्रयोजन क्या है ? इस बात को सूत्रकार अब प्रदर्शित करते हैं—‘अयाएणं’ इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—હે ભદ્રન્ત ! (અયાઅ યં નૈગમવ્યવહારાણં અદુપયપ્રરૂપણ-
યાઅ કિં પ્રયોજનં) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત ઇસ અર્થ પદ પ્રરૂપણતા
રૂપ આનુપૂર્વી સે વમ્ગ પ્રયોજન સધના—નિકલતા—હે ।

ઉત્તર—(અયાઅ નૈગમવ્યવહારાણં અદુપયપ્રરૂપણયાઅ મંગસમુ-
ક્તિષ્ણયા કજ્જહ) ઇસ નૈગમવ્યવહારનય સંમત અર્થ પદ પ્રરૂપણતારૂપ
આનુપૂર્વી સે મંગ સમુત્કીર્તનતા કી જાતી હે । તાત્પર્ય યહ કિ પ્રહિલે
જો યહ કહા ગયા હે કિ અર્થ પદ પ્રરૂપણતા મેં સંજ્ઞા સંજ્ઞિ વ્યવહાર
નિહિત હે । કયોં કિ ઉસી સે સંજ્ઞા સંજ્ઞિ વ્યવહાર ચલતા હે । ઓર ઇસ
વ્યવહાર કે હોને પર હી મંગોં કા સમુત્કીર્તન (ઉત્પત્તિ) હો સકતા હે ।
અન્યથા નહીં હો સકતા હે । કારણ—સંજ્ઞા—નામ—કે વિના નિર્વિષય હુઅ

હવે આ અર્થપદ પ્રરૂપણા રૂપ આનુપૂર્વીયું પ્રયોજન પ્રકટ કરવા
નિમિત્તે સૂત્રકાર કહે છે કે—“અયાઅ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—હે ભગવન ! (અયાઅ નૈગમવ્યવહારાણં અદુપયપ્રરૂપણ-
યાઅ કિં પ્રયોજનં ?) નૈગમ અને વ્યવહારનય સંમત આ અર્થપદ પ્રરૂપણતા
રૂપ આનુપૂર્વી દ્વારા કયું પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે ?

ઉત્તર—(અયાઅ નૈગમવ્યવહારાણં અદુપયપ્રરૂપણયાઅ મંગસમુક્તિષ્ણયા
કજ્જહ) આ નૈગમનય અને વ્યવહારનય સંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતા રૂપ
આનુપૂર્વી વડે ભંગસમુત્કીર્તનતા કરાય છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—

પહેલાં એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે અર્થપદ પ્રરૂપણતામાં સંજ્ઞા સંજ્ઞિ
વ્યવહાર ચાલે છે, અને તે વ્યવહારનો સદ્ભાવ હોય તો જ ભંગોનું
સમુત્કીર્તન (ભંગોની ઉત્પત્તિ) થઈ શકે છે—તેનો અભાવ હોય તો થઈ
શકતું નથી. કારણ કે સંજ્ઞા (નામ) વિના નિર્વિષય થયેલા ભંગો (વિકલ્પો,

મુદ્ધયોગબન્ધિકાદીકા સુત્ર ૭૬ મંગલસમુત્કીર્તનતાનિરૂપણમ્

૩૧૯

મંગલસમુત્કીર્તનતૈવ એતસ્યા નેગમન્યવહારસમ્મતાયા અર્થપદમરૂપણતાયાઃ ફલં
બોધ્યમિતિ ॥સુ. ૭૬॥

અથાનોપનિષિવયા દ્વિતીયમેદરૂપામર્થપદમરૂપણતાયાઃ ફલયૂતાં મંગલસમુત્કી-
ર્તનતાં નિરૂપયતિ-

મૂલ્મ-સે કિં તં નેગમવવહારાણં મંગલસમુક્ષિત્તણયા ?
નેગમવવહારાણં મંગલસમુસમુક્ષિત્તણયા અત્થિ આણુપુઠ્વી૧,
અત્થિ અણાણુપુઠ્વી૨, અત્થિ અવત્તવ્વપ્ ૩, અત્થિ આણુપુઠ્વીઓ૪,
અત્થિ અણાણુપુઠ્વીઓ૫, અત્થિ અવત્તવ્વયાઈં ૬, । અહવા-અત્થિ
આણુપુઠ્વી ય અણાણુપુઠ્વી ય ૧ । અહવા-અત્થિ આણુપુઠ્વીય
અણાણુપુઠ્વીઓ૧ । અહવા અત્થિ આણુપુઠ્વીઓ ય અણાણુપુઠ્વીઓ
ય૨ । અહવા-અત્થિ આણુપુઠ્વીઓ ય અણાણુપુઠ્વીઓ ય૩ । અહવા-
અત્થિ અણાણુપુઠ્વી ય અવત્તવ્વપ્ ય ૪ । અહવા-અત્થિ આણુ-
પુઠ્વીઓ ય અવત્તવ્વયાઈં ય ૫ । અહવા-અત્થિ આણુપુઠ્વીઓ ય
અવત્તવ્વપ્ ય ૬ । અહવા-અત્થિ આણુપુઠ્વીઓ ય અવત્તવ્વયાઈં
ય ૭ । અહવા-અત્થિ આણુપુઠ્વીઓ ય અવત્તવ્વયાઈં
ય ૮ । અહવા-અત્થિ અણાણુપુઠ્વી ય અવત્તવ્વપ્ ય ૯ । અહવા
અત્થિ અણાણુપુઠ્વી ય અવત્તવ્વયાઈં ય ૧૦ । અહવા-અત્થિ
અણાણુપુઠ્વીઓ ય અવત્તવ્વપ્ ય ૧૧ । અહવા-અત્થિ અણાણુ-

લંગોં કી પ્રરૂપણા કા હોના મસંમત્ત હૈ । ફસલિયે મંગ સમુત્કીર્તનતા
હી ફસ નેગમ વ્યવહાર સંમત અર્થપદમરૂપણતા કા ફલ હૈ । એસા
ઝામના વાહિયે । ॥સુ. ૭૬॥

ભાંગાઓની પ્રરૂપણા કરવાનું કામ જ અસંભવિત બની જાય છે તેથી સંમ-
તસુત્કીર્તનતા જ આ નેગમવ્યવહારનય સંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું ફલ છે
જોમ સમજવું જોઈએ. ॥સુ. ૭૬॥

६२०

संयुक्तयोगद्वारद्वयं

पुष्पीओ य अवत्तवयाइं य १२। अहवा-अत्थि आणुपुष्पी य
 अणाणुपुष्पी य अवत्तवय य १। अहवा-अत्थि आणुपुष्पी य
 अणाणुपुष्पी य अवत्तयाइं य २। अहवा-अत्थि आणुपुष्पी य
 अणाणुपुष्पीओ य अवत्तवय य ३। अहवा-अत्थि आणुपुष्पी य
 अणाणुपुष्पीओ य अवत्तवयाइं य ४। अहवा-अत्थि आणु-
 पुष्पीओ य अणाणुपुष्पी य अवत्तवय य ५। अहवा-अत्थि
 आणुपुष्पीओ य अणाणुपुष्पी य अवत्तवयाइं य ६। अहवा-अत्थि
 आणुपुष्पीओ य अणाणुपुष्पीओ य अवत्तवय य ७। अहवा-अत्थि
 आणुपुष्पीओ य अणाणुपुष्पीओ य अवत्तवयाइं य ८ एए अह
 भंगा। एवं सव्वे वि छव्वीसं भंगा। से तं नेगमववहारणं
 भंगसमुत्तिणया ॥सू० ७७॥

छाया—अथ का सा नैगमव्यवहारयोर्भङ्गसमुत्कीर्तनता? नैगमव्यवहारयो-
 र्भङ्गसमुत्कीर्तनता-अस्ति आनुपूर्वी १, अस्ति अनानुपूर्वी २, अस्ति अवक्तव्यकम् ३,
 सन्ति आनुपूर्व्यः ४, सन्ति अनानुपूर्व्यः ५, सन्ति अवक्तव्यकानि ६।

अथवा-स्तः आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च १, अथवा सन्ति आनुपूर्वी च अनानु-
 पूर्व्यश्च २, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अनानुपूर्वी च ३, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च
 अनानुपूर्व्यश्च ४, अथवा स्तः आनुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ५, अथवा सन्ति आनु-
 पूर्वी च अवक्तव्यकानि च ६, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकं च ७, अथवा
 सन्ति आनुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकानि च ८, अथवा स्तः अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ९
 अथवा सन्ति अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च १०, अथवा सन्ति अनानुपूर्व्यश्च
 अवक्तव्यकं च ११, अथवा सन्ति अनानुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकानि च १२।

अथवा-सन्ति आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च १, अथवा सन्ति
 आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च २, अथवा सन्ति आनुपूर्वी च अनानु-
 पूर्व्यश्च अवक्तव्यकं च ३, अथवा सन्ति आनुपूर्वी च अनानुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकानि
 च ४, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ५, अथवा सन्ति आनु-
 पूर्व्यश्च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च ६, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अनानुपूर्व्यश्च

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૭ મહાસમુત્કીર્તનતાનિરૂપણમ્

૩૨૧

અવક્તવ્યકં ચ૭, અથવા સન્તિ આનુપૂર્વીશ્ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ૮, એતેઽષ્ટૌ મજ્ઞાઃ । एवं सर्वेऽपि बहुविशतिर्भङ्गाः । सैषा नेगमव्यवहारयोर्भङ्गसमुत्कीर्तनता ॥ सू० ७७ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા નેગમવ્યવહારસમ્પત્તા મહાસમુત્કીર્તનતા ? ઇતિ શિષ્ય મત્તઃ । ઉત્તરયતિ—નેગમવ્યવહારસમ્પત્તા મહાસમુત્કીર્તનતા एवं વિજ્ઞેયા, તથા—અસ્તિ આનુપૂર્વી, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવક્તવ્યકમિત્યાદિ । અસ્ય સૂત્રસ્ય વ્યાખ્યા સ્પષ્ટા । એવંદં બોધ્યમ્—પ્રત્યેકચનાન્તેન આનુપૂર્વાદિપદત્રયેણ ત્રયો મજ્ઞા, बहुवच-

અથ સૂત્રકાર ઇમા મંગ સમુત્કીર્તનતા કા કિં જો અનોપનિધિકી અર્થપદપરુપણતાની ફલભૂત છે નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં નેગમવ્યવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નેગમવ્યવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા) હે મદન્ત ! નેગમ વ્યવહારનય સંમત એવી વહ મંગસમુત્કીર્તનતા કયા છે ?

ઉત્તર—(નેગમવ્યવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા) નેગમ વ્યવહારનય સંમત વહ મંગસમુત્કીર્તનતા હસ પ્રકાર સે છે (અસ્થિ આણુ-પુર્વી) આનુપૂર્વી છે (અસ્થિ અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી છે (અસ્થિ અવ-ક્તવ્ય) અવક્તવ્ય છે (અસ્થિ આણુપુર્વીઓ) આનુપૂર્વીયાં હૈં । (અસ્થિ અણાણુપુર્વીઓ) અનાનુપૂર્વીયાં હૈં (અસ્થિ અવક્તવ્યયાઈ) અવક્તવ્યક હૈં ઇત્યાદિ । હસ સૂત્ર કી વ્યખ્યા સ્પષ્ટ છે । યહાં હસ પ્રકાર સે જાનના વાહિયે—કિં જો યે આનુપૂર્વી આદિ તૌન પદ પદ્યચનાન્ત હૈં હન સે

હવે સૂત્રકાર અનોપનિધિકી અર્થપદ પ્રરૂપણતાના બે ફલરૂપ છે એવી મંગ સમુત્કીર્તનતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નેગમવ્યવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નેગમવ્યવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા) હે મદન્ત ! નેગમવ્યવહારનય સંમત એવી તે મંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નેગમવ્યવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા) નેગમનય અને વ્યવહારનય-સંમત તે મંગસમુત્કીર્તનતા આ પ્રકારની છે (અસ્થિ આણુપુર્વી) આનુપૂર્વી છે, (અસ્થિ અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી છે, (અસ્થિ અવક્તવ્ય) અવક્તવ્યક છે, (અસ્થિ આણુપુર્વીઓ) આનુપૂર્વીઓ છે, (અસ્થિ અણાણુપુર્વીઓ) અનાનુપૂર્વીઓ છે, (અસ્થિ અવક્તવ્યયાઈ) અને અવક્તવ્યક છે, ઇત્યાદિ રૂપ મંગોની સમુત્કીર્તનતા (ઉત્પત્તિ) સમજવી.

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે. અહીં ભાંગાઓની રચના આ પ્રમાણે સમજવી. આનુપૂર્વી આદિના બે ત્રણ પદો એકચનાન્ત છે, તેમજ ત્રણ

૩૨૨

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

નાત્તેન ચ પ્રયો મજ્ઞાઃ, इत्येवमसंयोगपक्षे षड् मज्ञा भवन्ति६। संयोगपक्षे तु पद-
त्रयस्यास्य त्रयो द्विसंयोगाः। एकैकस्मिन्स्तु द्विसंयोगे एकवचन-बहुवचनाभ्यां
चतुर्भङ्ग्याः सङ्गानाद् त्रिष्वपि द्विकयोगेषु द्वादश मज्ञाः सम्पद्यन्ते। १२।
त्रिकयोगस्त्वत्र एक एव। तत्र च एकवचनबहुवचनाभ्यामष्टौ मज्ञा भवन्ति।
सर्वेऽप्यमी षड्विंशतिः। २६। मज्ञानां स्थापना चैवम्—

। षड्विंशतिमज्ञानां कोष्ठकमिदम्।

અસંયોગે મજ્ઞાઃ ૬	દ્વિકસંયોગે પ્રથમા ચતુર્મજ્ઞી ૧	ત્રિકસંયોગે મજ્ઞાઃ ૮
*આનુપૂર્વી ૧	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી ૧	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૧
અનાનુપૂર્વી ૨	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વ્યઃ ૨	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકાઃ ૨
અવક્તવ્યકઃ ૩	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી ૩	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૩

ત્રીન ભંગ બનતે હૈં ઓર જો આનુપૂર્વી આદિ ત્રીન પદ બહુવચનાન્ત હૈં
उनसे भी ३ भंग बनते हैं। इस प्रकार असंयोग पक्षमें ये छह ६ भंग
हो जाते हैं ६। और संयोग पक्षमें इन त्रीन पदों के द्विसंयोगी भंग ३
होते हैं। इन में एक एक भंग में दो दो का संयोग होने पर एकवचन
और बहुवचन को लेकर चार २ भंग हो जाते हैं इस प्रकार त्रीन भंग
के द्विक संयोगी भंग चार २ होने से ये १२ भंग बन जाते हैं। तथा त्रिक
संयोग में एक वचन और बहुवचन को लेकर ८ भंग बनते हैं। इस प्रकार
सब भंग मिलकर २६ भंग होते हैं। इन भंगोंका क्रम इस प्रकार से है—

આનુપૂર્વી ૧, અનાનુપૂર્વી ૨, અવક્તવ્યક ૩, એ ત્રીન ભંગ એક વચ-
નાન્ત હૈં। આનુપૂર્વિયાં ૧, અનાનુપૂર્વિયાં ૨, ઓર અનેક અવક્તવ્યક ૩,
ये ३ भंग बहुवचनान्त है, ऐसे असंयोगी भंग हुए ६। दो के संयोग
से तीनचतुर्भङ्गियां बनती हैं, उनमें प्रथम चतुर्भङ्गी इस प्रकार
से बनती है—आनुपૂર્वी अनानुपूर्वी १, आनुपૂर्वी अनानुपूर्विद्यां २,

ભાંગા બને છે અને એ આનુપૂર્વી આદિના ત્રણ પદો બહુવચનાન્ત છે
तेभना पक्ष त्रण भांगाओ बने छे. आ रीते कुल ६ असंयोगी भांगाओ
बने छे. आ त्रण पदोना (आनुपૂર્वी, अनानुपૂર્वी અને અવક્તવ્યકના) દ્વિક-
સંયોગી ભાંગા ત્રણ થાય છે. પ્રત્યેક ભાંગામાં બંબનેના સંયોગ થવાથી એક વચન
અને બહુવચનની અપેક્ષાએ પ્રત્યેક પદની સાથે ચાર-ચાર ભાંગા બને છે. આ
રીતે ત્રણ પદોની સાથે કુલ ૧૨ દ્વિકસંયોગી ભાંગા બને છે. ત્રિકસંયોગી
કુલ ૮ ભાંગા બને છે. આ રીતે બધા મળીને ૬+૧૨+૮=૨૬ ભાંગા બને છે.
આ ૨૬ ભાંગાઓનો ક્રમ આ પ્રમાણે સમજવો—(૧) આનુપૂર્વી, (૨)
અનાનુપૂર્વી, (૩) અવક્તવ્યક, આ ત્રણ ભાંગા એકવચનાન્ત છે.

(૧) આનુપૂર્વીઓ, (૨) અનાનુપૂર્વીઓ (૩) અનેક અવક્તવ્યકો, આ
ત્રણ ભાંગા બહુવચનાન્ત છે. એવી રીતે અસંયોગી ૬ ભાંગા થયા ૬

* એકવચનાભ્યઃ,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૭ મજ્જસમુત્તીર્તનતાનિકરુપણમ્

૩૨૩

<p>બહુવચનાન્તા- સ્થયઃ આનુપૂર્વ્યઃ ૧ અનાનુપૂર્વ્યઃ ૨ અવક્તવ્યકાઃ ૩ અસંયોગે ૫૬ મજ્જાઃ ૬</p>	<p>આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વ્યઃ ૪ દ્વિકસંયોગે દ્વિતીયા ચતુર્મજ્જી ૨ આનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૧ આનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકાઃ ૨ આનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૩ આનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકાઃ ૪ દ્વિકસંયોગે તૃતીયા ચતુર્મજ્જી ૩ અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૧ અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકાઃ ૨ અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૩ અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકાઃ ૪ પતેદ્વિકસંયોગે દ્વાદશ મજ્જાઃ ૧૨</p>	<p>આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૪ આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૫ આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકાઃ ૬ આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૭ આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકાઃ ૮ પતે દ્વિકસંયોગે અષ્ટો મજ્જાઃ ૮</p>
---	--	--

આનુપૂર્વિયાં અનાનુપૂર્વી ૩, આનુપૂર્વિયાં અનાનુપૂર્વિયાં ૪ । દ્વિતીય ચતુર્મજ્જી
હસ પ્રકાર સે હૈ—

આનુપૂર્વી, અવક્તવ્યક ૧, એક આનુપૂર્વી બહુ અવક્તવ્યક ૨, આનુપૂર્વી
એક અવક્તવ્યક, ૩, આનુપૂર્વિયાં બહુ અવક્તવ્યક ૪ । તૃતીય ચતુર્મજ્જી હસ
પ્રકાર સે હૈ—અનાનુપૂર્વી અવક્તવ્યક ૧, અનાનુપૂર્વી બહુ અવક્તવ્યક
૨, અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક ૩ અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્ત-
વ્યક ૪ । इन तीन चतुर्भगियोंको मिलानेसे द्विकसंयोगी बारह भंग होते
हैं १२ । तीन तीनके संयोग से जो आठभंग बनते हैं—वे इस प्रकार
से हैं—एक आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी एक अवक्तव्यक १, एक आनुपूर्वी
एक अनानुपूर्वी અનેક અવક્તવ્યક ૨, એક આનુપૂર્વી અનેક અનાનુ-

એ પદોના સંયોગથી ત્રણ ચતુર્ભંગીઓ બને છે, તેમાં પ્રથમ ચતુર્ભંગી
આ પ્રમાણે બને છે—(૧) આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી, (૨) આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વીઓ,
(૩) આનુપૂર્વીઓ-અનાનુપૂર્વી (૪) આનુપૂર્વીઓ અનાનુપૂર્વીઓ.

બીજી દ્વિકસંયોગી ચતુર્ભંગી આ પ્રમાણે ત્રણ ચતુર્ભંગીઓ બને છે. તેમાં
બને છે—(૧) આનુપૂર્વી-એક અવક્તવ્યક, (૨) આનુપૂર્વી-બહુ અવક્તવ્યકો,
(૩) આનુપૂર્વીઓ-એક અવક્તવ્યક, (૪) આનુપૂર્વીઓ બહુ અવક્તવ્યકો.

ત્રીજી ચતુર્ભંગી આ પ્રમાણે બને છે—(૧) અનાનુપૂર્વી-એક અવક્ત-
વ્યક, (૨) અનાનુપૂર્વી-બહુ અવક્તવ્યકો (૩) અનાનુપૂર્વીઓ-એક અવક્ત-
વ્યક અને (૪) અનાનુપૂર્વીઓ-અનેક અવક્તવ્યકો. આ ત્રણ ચતુર્ભંગીઓને
મેળવવાથી દ્વિકસંયોગી બાર ભંગ બને છે. ૧૨

ત્રણ પદોના સંયોગથી નીચે પ્રમાણે આઠ ભંગા બને છે—(૧) એક
આનુપૂર્વી, એક અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક (૨) એક આનુપૂર્વી, એક
અનાનુપૂર્વી, અનેક અવક્તવ્યક (૩) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ,

एवमेते षड्विंशतिर्भेदा विज्ञेयाः। ननु किमर्थं भङ्गकसमुत्कीर्तनं क्रियते? इति चेदु-
च्यते—इहैकवचनान्तबहुवचनान्तैरानुपूर्व्यादिभिस्त्रिभिः पदैरसंयोगपक्षे संयोगपक्षे
च भिन्निताः षड्विंशतिर्भेदाः संगवन्ति । तेषु च मध्ये येन केनचिद् भङ्गेन वक्ता

पूर्वियां एक अवक्तव्यक ૩, एक आनुपूर्वी अनेक अनानुपूर्वियां, अनेक
अवक्तव्यक ૪, अनेक आनुपूर्वियां एक अनानुपूर्वी एक अवक्तव्यक ૫,
अनेक आनुपूर्वियां एक अनानुपूर्वी अनेक अवक्तव्यક ૬, अनेક આનુ-
પૂર્વિયાં અનેક અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક ૭, અનેક આનુપૂર્વિયાં
અનેક અનાનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્તવ્યક, ૮. એસે ત્રિકસંયોગી આઠ ભંગ
હોતે હૈં ૮. હસ પ્રકાર યે સ્વતન્ત્ર રૂપ સે વિના સંયોગ કે એક વચન
ઝોર બહુવચન, કો લેકર ૬, તથા હન છઠ્ઠો કે દો દો કે સંયોગ સે
૧૨, ઝોર ત્રીન ૨ કે સંયોગ સે ૮ ભંગ હો જાતે હૈં. એસે સબ મિલકર
કુલ છાઈસ ભંગ હોતે હૈં.

શંકા— ભંગોં કા સમુત્કીર્તન વર્ણન કિસ લિયે ક્રિયા ગયા હૈ?

ઉત્તર—યહાં પર એકવચનન્ત ઝોર બહુવચનન્ત જો આનુપૂર્વી
આદિ ત્રીન ૨ પદ હૈં કિ જિનકે અસંયોગ પક્ષ સે ૬ ઝોર સંયોગ પક્ષમૈં
૨૦ હસ તરહ ૨૬ ભંગ બન જાતે હૈં—

એક અવક્તવ્યક. (૪) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ, અનેક અવ-
ક્તવ્યકો. (૫) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી, એક અવક્તવ્યક.
(૬) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી, અનેક અવક્તવ્યકો. (૭)
અનેક આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ, એક અવક્તવ્યક. (૮) અનેક
આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ, અનેક અવક્તવ્યકો. આ રીતે ત્રિક
સંયોગી આઠ ભંગ બને છે. આ રીતે સ્વતન્ત્ર ૩૧—વિના સંયોગવાળા ૬
ભાંગા એક વચન અને બહુવચનવાળાં પદોથી બને છે. તથા તે છએના
દ્વિકસંયોગથી ૧૨ ભાંગા બને છે, અને ત્રણ ત્રણના સંયોગથી ત્રિકસંયોગી
૮ ભાંગા બને છે. આ રીતે કુલ ભાંગા $૬ \times ૧૨ \times ૮ = ૨૬$ થઈ જાય છે.

મત્ર-ભંગોનું (ભાંગાઓનું) સમુત્કીર્તન (ઉત્પત્તિ) શા માટે કરવામાં આવ્યું છે?

ઉત્તર—અહીં જે એકવચનન્ત અને બહુવચનન્ત જે આનુપૂર્વી, અના-
નુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક, આ ત્રણ ત્રણ પદો છે તેમના અસંયોગ પક્ષે ૬,
અને સંયોગપક્ષે (દ્વિકસંયોગ અને ત્રિકસંયોગની અપેક્ષાએ) ૨૦ ભાંગા
બને છે. આ રીતે કુલ ૨૬ ભાંગા બને છે, આ સઘળા ભાંગાઓમાંથી વક્તા

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૮ મહ્નસમુત્કીર્તનતાયાઃકારણનિરૂપણમ્ ૩૨૫

દ્રવ્યં વિવક્ષતે, તેન મજ્જેન વક્તા વિવક્ષિતદ્રવ્યં વદતુ इति हेतो नैगमव्यवहारनया-
भ्युरंगणेन सर्वानपि भङ्गान् प्रतिपादयितुं मङ्गसमुत्कीर्तनं कृतमिति। सम्प्रति
मङ्गनमुासंहरन्नाह—सैषा मङ्गसमुत्कीर्तनतेति ॥सू०७७॥

अस्याः प्रयोजनं किम्? इति प्रश्नपूर्वकं कारणं प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—एयाए णं नेगमववहाराणं भंगसमुक्त्तिणयाए किं
पयोयणं? एयाए णं नेगमववहाराणं भंगसमुक्त्तिणयाए भंगो-
वदंसणया कीरइ ॥सू०७८॥

छाया—एतया खलु नैगमव्यवहारयो मङ्गसमुत्कीर्तनतया किं प्रयोजनम्?
एतया खलु नैगमव्यवहारयोः मङ्गसमुत्कीर्तनतया मङ्गोपदर्शनता क्रियते ॥सू०७८॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૂછતિ—‘एयाए णं’ इत्यादि—एतया नैगमव्यवहारसम्मतया
मङ्गसमुत्कीर्तनतया किं प्रयोजनं-फलं किम्? इति। उत्तरयति—एतया नैगमव्यव-

उनके बीच में वक्ता जिस किसी भंग से द्रव्य की विवक्षा करना
चाहता है, वह उस भंग से विवक्षित द्रव्य को कहे इस कारण नैगम
और व्यवहारनय संमत समस्त भी भंगों को कहने के लिये सूत्रकार
ने इन भंगों का समुत्कीर्तन किया है। (से तं नेगमववहाराणं भंग
समुक्त्तिणया) इस प्रकार यह पूर्व प्रकान्त नैगम व्यवहारनय संमत
भंग समुत्कीर्तनता है। ॥सू० ७७॥

इसका क्या प्रयोजन है इस बात को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं

“एयाएणं नेगमववहाराणं भंगसमुक्त्तिणयाए किं पयोयणं” इत्यादि।

शब्दार्थ— हे भदन्त ! नैगम व्यवहारनय संमत इस भंग समुत्की-
र्तनता का क्या प्रयोजन है ?

જે કોઈ ભાંગા (વિકલ્પ)ની અપેક્ષાએ દ્રવ્યની વિવક્ષા (પ્રતિપાદન) કરવા
માગતા હોય, તે ભાંગાની અપેક્ષાએ વિવક્ષિત દ્રવ્યનું પ્રતિપાદન કરે, તે
હેતુને ધ્યાનમાં લઈને નૈગમ અને વ્યવહારનય સંમત સમસ્ત ભાંગાઓનું
ઠ્ઠથન કરવાને માટે સૂત્રકારે આ ભાંગાઓનું સમુત્કીર્તન (રચના) કર્યું છે.
(સે તં નૈગમવવહારાણં ભંગસમુક્તિણયા) આ પ્રકારનું નૈગમ અને વ્યવહાર-
નય સંમત પૂર્વોક્ત ભંગ સમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ૦૭૭॥

હવે સૂત્રકાર નૈગમવ્યવહાર નયસંમત ભંગસમુત્કીર્તનતાનું શું પ્રયોજન
છે તે પ્રકટ કરે છે—“एयाएणं नेगमववहाराणं भंगसमुक्त्तिणयाए किं पयोयणं” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—હે ભગવાન ! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આ ભંગસમુત્કી-
ર્તનતાનું શું પ્રયોજન છે ?

હારસમ્પતયા મજ્ઞસમુત્કીર્તનતયા મજ્ઞોપદર્શનતા ક્રિયતે इति મજ્ઞોપદર્શનતૈવ મજ્ઞ-સમુત્કીર્તનતાયાઃ પ્રયોજનમિતિ। અર્થે ભાવઃ—મજ્ઞસમુત્કીર્તનતાયાં મજ્ઞ સમુત્કીર્તનતાયાં તસ્યૈવ વાચ્યં ડ્યણુકસ્કન્ધાદિકં વક્ષ્યતે, તચ્ચ મજ્ઞકમૂત્રે સમુત્કીર્તિતે સત્યેવ વક્તું શક્યતે। વાચકકથનમત્તરેણ વાચ્યકથનસ્ય સર્વથૈવાસમ્ભવાત્, અતો મજ્ઞોપદર્શનતૈવ મજ્ઞસમુત્કીર્તનતાયાઃ ફલં बोध्यम्।

ઉત્તર—(एयाएण नेगमववहाराणं भंगसमुक्त्तिस्त्तणयाए भंगोवदंसणया कीरइ) નૈગમ વ્યવહારનય સંપન્ન હસ ભંગ સમુત્કીર્તનતા સે ભંગો કો દિશ્વાયા જાતા હૈં ઉનકી પ્રરૂપણા કી જાતી હૈં। इसलिये भंगसमुत्कीर्तनता का भंगो को दिखलाना प्रयोजन है। इसका तात्पर्य यह है भंगो की समुत्कीर्तनता में भंगों को कहने वाला उनकी प्ररूपणता करने वाला सूत्र कहा गया है और भंगोपदर्शनता में उसी के वाच्य ड्यणुक स्કન્ધઆદિ પ્રદર્શિત ક્રિયે જાશેંગે કહે-જાશેંગે।

સો ડ્યણુક સ્કન્ધ આદિકોં કા યહ પ્રદર્શનરૂપ કથન જય તક ભંગોં કોદિશ્વાને વાલા સૂત્ર નહીં કહા જાશેંગા-તય તક નહીં હો સકના હૈં ઉસી પ્રદર્શક સૂત્ર કે સમુત્કીર્તન હોનેપર હી વહ વક્તું શક્ય હો સકતા હૈં। વ્યોં કિ યહ નિયમ હૈં કિ વાચક સૂત્ર-કે કથન કે વિના વાચ્યરૂપ અર્થ કા કથન કરના સર્વથા અસંભવ હૈં। इसलिये भंगोपदर्शनता ही भंगसमुत्कीर्तनता का फल है—ऐसा जानना चाहिये।

ઉત્તર—(एयाएणं नेगमववहाराणं भंगसमुक्त्तिस्त्तणयाए भंगोवदंसणया कीरइ) નૈગમવ્યવહાર નયસંપન્ન આ ભંગસમુત્કીર્તનતા વડે ભંગો (ભાંગાએ) બતાવવામાં આવે છે-તેમની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે તેથી ભાંગાને બતાવવાનું જ ભંગસમુત્કીર્તનતાનું પ્રયોજન છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—ભંગોની સમુત્કીર્તનતામાં ભંગોને કહેનારા તેમની પ્રરૂપણા કરનારા-ભંગોને પ્રકટ કરનારાં સૂત્રેનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, અને ભંગોપદર્શનતામાં તેના જ વાચ્ય એમાં ડ્યણુક (ત્રિપ્રદેશી-ત્રણુ આણુવાળા) સ્કન્ધ આદિ પ્રદર્શિત કરવામાં આવશે.

જ્યાં સુધી ભંગોને પ્રકટ કરનારું સૂત્ર કહેવામાં ન આવે, ત્યાં સુધી ત્રિઆણુક સ્કન્ધ અદિકોના પ્રદર્શન રૂપ કથન થઈ શકતું નથી એજ પ્રદર્શક સૂત્રનું સમુત્કીર્તન થતાં જ તે કથન કરવું શક્ય બને છે, કારણ કે એવો નિયમ છે કે વાચક સૂત્રનું કથન કર્યા વિના વાચ્યરૂપ અર્થનું કથન કરવાનું કાર્ય સર્વથા અસંભવિત હોય છે. તેથી ભંગોપદર્શનતા (ભંગોને પ્રકટ કરવા તે) જ ભંગ સમુત્કીર્તનતાના ફલસ્વરૂપ છે એમ સમજવું જોઈએ.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૮ મજ્જસમુત્તકીર્તનતાયાઃકારણનિરૂપણમ્ ૩૨૭

નનુ મજ્જોપદર્શનતાયાં વાચ્યસ્ય ડ્યણુકસ્કન્ધાદેઃ કથનકાલે આનુપૂર્વ્યાદિ-
સૂત્રં પુનરપ્યુત્તકીર્તયિષ્યતે, તત્કથં પુનર્મજ્જસમુત્તકીર્તનં ક્રિયતે? इति चेदुच्यते—
यथा हि—

संहिया य पयं चेव, पयत्थो पयविग्गहो ।

चालणा य पसिद्धी य छव्विहं विद्धि लक्खणं ॥१॥

छाया—संहिता च पदं चैव, पदार्थः पदसंग्रहः ।

चालना च प्रसिद्धिश्च, पञ्चविधं विद्धि लक्षणम् ॥१॥

इति व्याख्याक्रमे संहिताया व्याख्यानकालે સૂત્રંસમુચ્ચારિતમપિ પદાર્થકથન-
કાલે પુનરપ્યર્થકથનાર્થં તદુચ્ચાર્યતે, તદ્વદ્વાડપિ મજ્જસમુત્તકીર્તનતાસિદ્ધસ્યૈવ સૂત્ર-
સ્ય મજ્જોપદર્શનતાયાં વાચ્યવાચકભાવસુત્રપ્રતિપત્યર્થ પ્રમજ્જતઃ પુનરપિ સમુત્તકીર્તનં
કરિષ્યતે ન મુખ્યતયેતિ ન કશ્ચિદ્ દોષ इति ॥મુ. ૭૮॥

શંકા—અંગોપદર્શનતામે વાચ્ય જો ડ્યણુક સ્કન્ધ આદિ હૈં અનેક
કથન કાલ મેં આનુપૂર્વી—આદિ પ્રદર્શક સૂત્ર સૂત્રકાર—ફોર કહેમે—તો
ફિર યહ કથન કેસે સંગત હો સકતા કિ પહિલે અંગસમુત્તકીર્તન કિયા
જાતા હૈં વાદ મેં અંગો પદર્શન ?

ઉત્તર—“સંહિયા ય પયં ચેવ પયત્થો પયવિગ્ગહો, ચાલણા ય
પસિદ્ધી ય છવ્વિહં વિદ્ધિ લક્ષણ” હસ પ્રકાર વ્યાખ્યાન કે સમય મેં
સૂત્ર સમુચ્ચારિત હોતા હુઆ મી પદાર્થ કથન કે અવસર પર હસકા
પુનઃ મી અર્થપ્રતિપાદન કે લિયે ઉચ્ચારણ કિયા જાતા હૈં । ડસી પ્રકાર
સે યહાં પર મી અંગસમુત્તકીર્તનતા સે સિદ્ધ હુવ હી સૂત્ર કા અંગોપદ-
ર્શનતા મેં વાચ્યવાચક ભાવ કી સુલ્પૂર્વક પ્રતિપત્તિ કે નિમિત્ત

શંકા-અંગોપદર્શનતામાં વાચ્ય જે ત્રિઅણુક આદિ સ્કંધ છે તેમના
કથનકાળે (તેમનું કથન કરતી વખતે) આનુપૂર્વી આદિ પ્રદર્શક સૂત્ર સૂત્રકાર
ફરી કહેશે તો આ કથન કેવી રીતે સંગત બની શકશે કે પહેલાં અંગસ-
મુત્તકીર્તન કરાય છે અને ત્યાર બાદ અંગોપદર્શન કરાય છે ?

ઉત્તર—“સંહિયા ય પયં ચેવ પયત્થો પયવિગ્ગહો । ચાલણા ય પસિદ્ધી ય
છવ્વિહં વિદ્ધિ લક્ષણ” આ સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણેનો વ્યાખ્યાનો ક્રમ છે.
જેમ સંહિતાના વ્યાખ્યાનકાળે સૂત્ર સમુચ્ચારિત થયેલું હોવા છતાં પણ
પદાર્થકથનને અવસરે અર્થનું પ્રતિપાદન કરવા નિમિત્તે ફરીથી પણ તેનું
ઉચ્ચારણ કરવામાં આવે છે, જેજ પ્રમાણે અહીં પણ અંગસમુત્તકીર્તનતાથી
સિદ્ધ થયેલા સૂત્રનું જ અંગોપદર્શનતામાં વાચ્યવાચક ભાવની સુલ્પૂર્વક પ્રતિ-

अथ भङ्गोपदर्शनतां प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—से किं तं नेगमववहाराणं भंगोवदंसणया? नेगम-
ववहाराणं भंगोवदंसणया—तिपएसिष आणुपुव्वी१, परमाणु-
पोग्गले अणाणुपुव्वी२, दुप्पएसिष अवत्तव्वष ३। अहवा तिप-
सिया आणुपुव्वीओ१, परमाणुपोग्गला अणाणुपुव्वीओ२, दुप्प-
एसिया अवत्तव्वयाइं ३।

अहवा तिप्पसिप्पस्य परमाणुपुग्गलेस्य आणुपुव्वीस्य
अणाणुपुव्वीस्य चउभंगो । अहवा-तिप्पसिप्पस्य दुप्पसिप्पस्य
आणुपुव्वीस्य अवत्तवणस्य चउभंगो । अहवा परमाणुपुग्गले
प्रसंगवश फिर से भी समुत्कीर्त्तन क्रिया जावेगा मुख्य रूप से नहीं ।
अतः उस में कोई दोष नहीं है ।

भावार्थ—भंगसमुत्कीर्तनता का क्या प्रयोजन है यह बात सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा स्पष्ट की है। वे कह रहे हैं कि भंगसमुत्कीर्तनता का फल भंगोपदर्शनता है। भंगसमुत्कीर्तनता में भंगों का नाम निर्देश किया जाता है। तथा भंग कितने होते हैं, यह प्रकट किया जाता है। भंगोपदर्शनता में जो भंग कहे गये हैं उनका वाच्यार्थ 'यह है' यह प्रकट किया जाता है। इस प्रकार भंगसमुत्कीर्तनता में कथित भंगों का भंगोपदर्शनता-भंगों का दिखाने का वाच्यार्थ यह है यह प्रकट किया गया होने से भंगसमुत्कीर्तनता का फल भंगोपदर्शनता है यह बात बन जाती है। पृ० ७८।

પત્તિ (અહણુ-ગોધ) કરાવવાને માટે પ્રસંગવદ્ય ફરીથી પણ સમુત્કીર્તન કરવામાં આવશે-મુખ્ય રૂપે નહીં તેથી તેમાં કોઈ હોષની સંભાવના નથી.

ભાવાર્થ—ભંગસમુત્પત્તિર્નતાનું શું પ્રયોજન છે, એ વાતનું સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે—તેમણે એ વાત આપી સમજાવી છે કે ભંગસમુત્પત્તિર્નતાનું ફલ ભંગોપદર્શનતા છે. ભંગસમુત્પત્તિર્નતામાં ભંગોનો વાચ્યાર્થ પ્રકટ કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે ભંગસમુત્પત્તિર્નતામાં જે જે ભંગો દહેવામાં આવ્યા હોય તે તે ભંગોનો વાચ્યાર્થ પ્રકટ કરવાનું કાર્ય ભંગોપદર્શનતામાં કરવામાં આવે છે તે કારણે ભંગસમુત્પત્તિર્નતાનું ફલ ભંગોપદર્શનતા છે, એ વાત સિદ્ધ થઈ ગય છે. ॥સૂ.૦૭૮।

मनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ७९ भङ्गोपदर्शननिरूपणम्

३२९

य दुष्पएसि ए य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्व ए य चउभंगो १२। अहवा तिप्पएसि ए य परमाणुपोग्गले य दुष्पएसि ए य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्व ए य १। अहवा तिप्पएसि ए य परमाणुपोग्गले य दुष्पएसिया य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं च २। अहवा तिप्पएसि ए य परमाणुपुगला य दुष्पएसि ए य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्व ए य ३। अहवा तिप्पएसि ए य परमाणुपोग्गला य दुष्पएसिया य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं च ४। अहवा तिप्पएसिया य परमाणुपोग्गले य दुष्पएसि ए य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्व ए य ५। अहवा तिप्पएसिया य परमाणुपोग्गले य दुष्पएसिया य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं च ६। अहवा तिप्पएसिया य परमाणुपोग्गला य दुष्पएसि ए य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्व ए य ७। अहवा तिप्पएसिया य परमाणुपोग्गला य दुष्पएसिया य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं च ८। से तं नेगमव्वहाराणं भंगोवदंसणया॥सू० ७९॥

छाया—अथ का सा नैगमव्यवहारयोः भङ्गोपदर्शनता ? नैगमव्यवहारयोः भङ्गोपदर्शनता—त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वी १ परमाणुपुद्गलः अनानुपूर्वी २ द्विप्रदेशिकः अवक्तव्यम् ३, अथवा त्रिप्रदेशिका आनुपूर्व्यः परमाणुपुद्गला अनानुपूर्व्यः द्विप्रदेशिकाः अवक्तव्यकानि ३। अथवा त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलश्च आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च ४ चत्वारो भङ्गाः, अथवा त्रिप्रदेशिकश्च द्विप्रदेशिकश्च आनुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ४, चत्वारो भङ्गाः, अथवा परमाणुपुद्गलश्च, द्विप्रदेशिकश्च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ४ चत्वारो भङ्गाः १२। अथवा त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलश्च द्विप्रदेशिकश्च आनुपूर्वी च अनानुपूर्वीश्च य अवक्तव्यकं च १, अथवा त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलश्च द्विप्रदेशिकाश्च आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च २, अथवा त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलाश्च द्विप्रदे-

શિક્ષ આનુપૂર્વીં ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકં ચ ૩, અથવા ત્રિપ્રદેશિકશ્ચ પરમાણુ-
પુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વીં ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ ૪, અથવા
ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકશ્ચ આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુપૂર્વીં ચ અવક્તવ્યકં
ચ ૫, અથવા ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુ-
પૂર્વીં ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ ૬। અથવા ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકશ્ચ
આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકં ચ ૭, અથવા ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ
દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ ૮ સૈવા નૈગમવ્યવહાર-
સ્યોઃ મજ્ઞોપદર્શનતા ॥૬૦ ૭૯॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ। અથ કા સા નૈગમવ્યવહાર-
સમ્મતા મજ્ઞોપદર્શનતા? ઇતિ। ઉત્તરયતિ—નૈગમવ્યવહારસમ્મતા મજ્ઞોપદર્શનતા
एवं विज्ञेया, तथाहि त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वीं—त्रिप्रदेशिकोऽर्थ आनुपूर्वीत्युच्यते—
त्रिप्रदेशिकस्कन्धलक्षणेनार्थानानुपूर्वीति प्रथमो मज्झको निवर्तते इत्यर्थः१। पर-

अव सूत्रकार उसी भंगोपदर्शनता का प्रतिपादन करते हैं—

“से किं तं नैगमव्यवहाराणं” इत्यादि।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા?) હે મદન્ત
નૈગમ વ્યવહારનય સંમત વહ ભંગોપદર્શનતા કયા હૈ? (નૈગમવ્યવહાર-
રાણં ભંગોવદંસણયા)

ઉત્તર—નૈગમવ્યવહારનય સંમત વહ ભંગોપદર્શનતા હસ પ્રકાર
સે હૈ। (તિપ્પણસિણ આણુપુઠ્વી ૧ પરમાણુપુદ્ગલે અણાણુપુઠ્વી ૨,
દુષ્પણસિણે અવક્તવ્ય ૩) ત્રિપ્રદેશિકસ્કંધરૂપ પદાર્થ આનુપૂર્વીં હસ
શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ—અર્થાન્ ત્રીન પ્રદેશ વાલા પદાર્થ આનુપૂર્વીં હસ
નામ સે કહા જાના હૈ હસલિણ ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપ અર્થ સે આનુપૂર્વીં

હવે સૂત્રકાર એજ ભંગોપદર્શનતાનું પ્રતિપાદન કરે છે—

“સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા?) હે ભગવન્!
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત તે ભંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(નૈગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત તે
ભંગોપદર્શનતાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—(તિપ્પણસિણ આણુપુઠ્વી ૧, પરમા-
ણુપુદ્ગલે અણાણુપુઠ્વી ૨, દુષ્પણસિણ અવક્તવ્ય ૩,) ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપ
પદાર્થ આનુપૂર્વીં શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે. એટલે કે ત્રણ પ્રદેશવાળા સ્કંધ રૂપ
પદાર્થને ‘આનુપૂર્વીં’ આ નામે ઓળખાય છે. તેથી ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપ
અર્થ (પદાર્થ) વડે ‘આનુપૂર્વીં’ આ પ્રથમ ભંગ બને છે. પરમાણુ પુદ્ગલ

અનુયોગચંદ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૭૯ મજ્ઞોપદર્શનનિરૂપણમ્

૩૩૧

માણુપુદ્ગલઃ અનાનુપૂર્વી પરમાણુપુદ્ગલલક્ષણોઽર્થઃ અનાનુપૂર્વીન્યુચ્યતે, ઇતિ દ્વિતીયો મજ્ઞઃ । દ્વિપ્રદેશિકઃ અવક્તવ્યકમ્-દ્વિપ્રદેશિકસ્કન્ધલક્ષણોઽર્થોઽવક્તવ્યકમ્યુચ્યતે । ઇતિ તૃતીયો મજ્ઞઃ ૩ । એકવચનપક્ષે ત્રયો મજ્ઞા ઉક્તાઃ ૩ । एवं बहुवचनप्रदेशिकस्कन्ध-लक्षणा अर्था आनुपूर्व्यः, वहसः परमाणुपुद्गलरूपा अर्था अनानुपूर्व्यः बहुवो द्वि-प्रदेशिकस्कन्धरूपा अर्था अवक्तव्यकानि । इति बहुवचनपक्षे त्रयो मज्जाः ६ । इत्यमसंयोगपक्षे पण्णां मज्जानानर्थक्यनं बोधवम् । एवं संयोगपक्षे प्रथमद्विक-

યહ પ્રથમ ભંગ બનના છે । પરમાણુપુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી અર્થાત્ પરમાણુ પુદ્ગલ રૂપ અર્થ અનાનુપૂર્વી કહલાતા છે—ઇસલિયે પુદ્ગલ પરમાણુ અર્થ સે અનાનુપૂર્વી યહ દ્વિતીય ભંગ બનના છે । દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અવક્તવ્યક ઇસ શબ્દ કા વાચ્યાર્થ છે—અર્થાત્ દ્વિપ્રદેશવાલા પદાર્થ અવક્તવ્યક ઇસ નામ સે કહા જાતા છે ઇસલિયે વહ અવક્તવ્યક કહલાતા છે । યહ તીસરાભંગ છે એ ૩ ભંગ એક વચન પક્ષ મે કહે છે । (અહવા તિપ્પ-પસિયા આણુપુઘ્વીઓ ૧, પરમાણુયોગલા અણાણુપુઘ્વીઓ ૨, દુષ્પપસિયા અવક્તવ્યકાઈ ૩,) ઇસી પ્રકાર બહુત ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધરૂપ પદાર્થ આનુપૂર્વીયાં છે । બહુત ૧ પરમાણુ પુદ્ગલ રૂપ પદાર્થ અનાનુપૂર્વીયાં છે । બહુતદ્વિપ્રદેશ-ક સ્કન્ધ રૂપ પદાર્થ બહુત અવક્તવ્યક છે । ઇસ પ્રકાર બહુવચન પક્ષમેં એ ૩ ત્રીન ભંગ છે । ઇસ પ્રકાર સે અસંયોગ પક્ષ મેં ઉક્ત ૬ ભંગો કા યહ અર્થ

અનાનુપૂર્વી ૩૫ છે—એટલે કે પરમાણુ પુદ્ગલ ૩૫ અર્થ (પદાર્થ) ને અનાનુ-પૂર્વી કહે છે. તેથી પુદ્ગલપરમાણુ ૩૫ પદાર્થથી “અનાનુપૂર્વી” આ નામનો બીજો ભાગ (ભાગો) અને છે દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ ‘અવક્તવ્યક’ ૩૫ શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે. (દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ આનુપૂર્વી ૩૫ પક્ષ વ્યક્ત થઈ શકતો નથી અને અનાનુપૂર્વી ૩૫ પક્ષ વ્યક્ત થઈ શકતો નથી, તે કારણે તેને અવક્તવ્યક કહ્યો છે) એટલે કે દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધને “અવક્તવ્યક” આ નામે ઓળખવામાં આવે છે, તે કારણે તેને ‘અવક્તવ્યક’ આ નામના ત્રીજા ભાગ ૩૫ ગણવે છે આ ત્રણે ભાગ એકવચનાન્ત પદની અપેક્ષાએ બનાવવામાં આવ્યા છે.

(અહવા-તિપ્પપસિયા આણુપુઘ્વીઓ ૧, પરમાણુયોગલા અણાણુપુઘ્વીઓ ૨, દુષ્પપસિયા અવક્તવ્યકાઈ ૩,) એજ પ્રમાણે ઘણા ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધ ૩૫ પદાર્થ આનુપૂર્વીઓ ૩૫ છે, અને ઘણા પરમાણુ પુદ્ગલ ૩૫ પદાર્થો અનાનુપૂ-ર્વીઓ ૩૫ છે, અને ઘણા દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ પદાર્થો ઘણા અવક્તવ્યક ૩૫ છે. આ રીતે બહુવચન પક્ષમાં આ ત્રણ ભાગો અને છે આ પ્રકારનું અસંયોગ પક્ષમાં ભાગોઓનું કથન સમજવું એટલે કે અસંયોગી કુલ ૬ ભાગો અને

સંયોગેઽપિ ત્રિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચાનુપૂર્વ્યનાનુપૂર્વીત્વેનોચ્યતે । એત-
દેવ દર્શયતિ-અથવા ત્રિપ્રદેશિકશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ આનુપૂર્વીવ અનાનુપૂર્વી ચ
ચત્વારો મજ્ઞાઃ ૪ । અયં ભાવઃ-યદા ત્રિપ્રદેશિકસ્કન્ધઃ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ પ્રતિ-
પાદયિતુમર્મીષ્ટો ભવતિ, તદા 'અત્થિ આણુપુઠ્વી ય અણાણુપુઠ્વી ય' इत्येवं મજ્ઞો
નિષ્પન્નતે । એવમન્યેઽપિ ત્રયો મજ્ઞા અર્થકથનપુરસ્સરા વક્તવ્યાઃ । इत्थं प्रथम-

કથન જનનાં चाहिये । संयोग पक्षमें-एकवचन और बहुवचन संबन्धी
प्रथम और द्वितीय भंग को संयुक्त करने पर त्रिप्रदेशिक- एक स्कंध
एक आनुपूर्वी और एक परमाणुपुद्गल एक अनानुपूर्वी का
वाच्यार्थ जानना चाहिये । यही बात (अहवा तिप्पसिए य परमाणुपुग्गले
य आणुपुठ्ठी य अणानुपुठ्ठी य चउभंगो) इन पदों द्वारा स्पष्ट की गई
है । यह प्रथम चतुर्भंगी का प्रथम भंग है । “आनुपूर्वी अनानु-
पूर्व्यः” इस द्वितीय भंग में त्रिप्रदेश वाला १, एक स्कंध और एक
प्रदेश वाले अनेक पुद्गलपरमाणु वाच्यार्थरूप से विवक्षित हुए हैं ।
“आनुपूर्व्यः अनानुपूर्वी”, इस तृतीय भंग में तीन आदि प्रदेश वाले
बहुत स्कंध और १ एक प्रदेशवाला १ एक पुद्गलपरमाणु विवक्षित हुआ
है । “आनुपूर्व्यः अनानुपूर्व्यः ” इस चतुर्थ भंग में अनेक व्यादि प्रदेश
वाले स्कंध और अनेक एक प्रदेश वाले पुद्गल परमाणु वाच्यार्थरूप से
विवक्षित हुए हैं । इस प्रकार से यह दो भंगों के संयोग से उत्पन्न हुई

છે, એમ સમજવું સંયોગપક્ષમાં એકવચન અને બહુવચન સંબંધી પહેલા
અને બીજા ભાંગાને સંયુક્ત કરવાથી ત્રિપ્રદેશિક એક સ્કંધ એક આનુપૂર્વી
રૂપ અને એક પરમાણુપુદ્ગલ એક અનાનુપૂર્વીના વાચ્યાર્થ રૂપ સમજવે ।
એકએ એક વાત “અહવા તિપ્પસિયે ય પરમાણુપુગલે ય આણુપુઠ્ઠી ય
અણાણુપુઠ્ઠી ય ચઉભંગો ” આ સૂત્રપાઠ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. આ
પહેલી ચતુર્ભંગીના પહેલા ભાંગે છે. “આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વ્યઃ ” આ બીજા
ભાંગામાં ત્રિપ્રદેશવાળો એક સ્કંધ અને એક પ્રદેશવાળા અંદેક પુદ્ગલપર-
માણુ વાચ્યાર્થ રૂપે વિવક્ષિત થયા છે. “આનુપૂર્વ્યઃ અનાનુપૂર્વી” આ ત્રીજા
ભાંગામાં ત્રણ આદિ પ્રદેશવાળા ઘણા સ્કંધો અને એક પ્રદેશવાળું એક
પુદ્ગલ પરમાણુ વિવક્ષિત થયેલ છે. “આનુપૂર્વ્યઃ અનાનુપૂર્વ્યઃ ” આ ચોથા
ભાંગામાં અંદેક ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કંધો અને અંદેક એક પ્રદેશવાળા પુદ્ગ-
લપરમાણુ વાચ્યાર્થ રૂપે વિવક્ષિત થયા છે. આ પ્રકારની એ ભાંગો
(ભાંગાઓના) ના સંયોગથી ઉત્પન્ન થયેલી આ પહેલી ચતુર્ભંગી છે. તેમાં

अथ क्रमपात्रं समवतारं प्ररूपयति-

मूलम्—से किं तं समोयारे? समोयारे—नेगमववहाराणं
आणुपुव्वीदवाइं कहिं समोयरंति? किं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति?
अणाणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति? अवत्तव्वयदव्वेहिं समोयरंति?
नेगमववहाराणं आणुपुव्वीदवाइं अणाणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति
नो आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति णो अवत्तव्वयदव्वेहिं
समोयरंति । नेगमववहाराणं अणाणुपुव्वीदवाइं कहिं
समोयरंति? किं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति? अणाणुपुव्वी
दव्वेहिं समोयरंति? अवत्तव्वयदव्वेहिं समोयरंति?, नो आणु-
पुव्वीदव्वेहिं समोयरंति अणाणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति, नो अव-
त्तव्वयदव्वेहिं समोयरंति । नेगमववहाराणं अवत्तव्वयदवाइं कहिं
समोयरंति? किं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति? अणाणुपुव्वीदव्वेहिं
समोयरंति? अवत्तव्वयदव्वेहिं समोयरंति? नो आणुपुव्वीदव्वेहिं
समोयरंति, णो अणाणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति अवत्तव्वयदव्वेहिं
समोयरंति । से तं समोयारे ॥सू०८०॥

छाया—अथ कोऽसौ समवतारः? समवतारः—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वी-
द्रव्याणि कुत्र समवतरन्ति?, किम् आनुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति? अनानुपूर्वीद्रव्येषु
समवतरन्ति? अवक्तव्यकद्रव्येषु समवतरन्ति? नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणि
आनुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति, नो अनानुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति, नो अवक्तव्यक-
द्रव्येषु समवतरन्ति । नैगमव्यवहारयोः अनानुपूर्वीद्रव्याणि कुत्र समवतरन्ति?

व्याख्यामें स्पष्ट की गई है । अर्थात् प्ररूपणता में केवल अर्थपदरूप पदार्थ
का कथन है—तब कि इसमें भिन्न २ रूपसे कथित 'संगोका' अर्थ है ।
हसलिए पुनरुक्ति दोष के लिये यहां स्थान नहीं है । सू० ७९॥

तो केवल अर्थपद रूप पदार्थ'तु' अ कथन थयु' छे, परन्तु ल'गे।पदार्थ'नतामां
तो भिन्न भिन्न रूपे कथित ल'गे।ता अर्थ'तु' कथन थयु' छे तेथी अ'ली'
पुनरुक्ति दोषनो संभव नथी, ॥ सू०७९॥

કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અવક્તવ્યક દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? નો આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, નો અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોઃ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ ? કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? નો આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, નો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ । સ एष સમવતારઃ ॥૨૦૮૦॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કોડસૌ સમવતારઃ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—સમવતારઃ—સમવતરણં સમવતારઃ=સમાવેશઃ તેષામેવાનુપૂર્વીદિદ્રવ્યાણાં સ્વસ્થાનપરસ્થાનાન્તર્ભાવચિન્તનપ્રકારઃ, સ एष વિજ્ઞેયઃ—તદ્વત્તા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ ? નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કુત્ર સમાવિશન્તિ ? કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? કિમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ ? કિવાડવક્તવ્યક દ્રવ્યેષુ ?

અથ સૂત્રકાર સમવતાર કો પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

“સે કિં તં સમોયારે” ઇત્યાદિ ।

(સે કિંતં સમોયારે)હે ભદ્રંત! પૂર્વ પ્રકાન્ત સમવતાર કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સમોયારે) પૂર્વ પ્રકાન્ત સમવતાર કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—સમવતાર કા તાત્પર્ય સમાવેશ હૈ—અર્થાત્ અનેક આનુપૂર્વી આદિ જો દ્રવ્ય હૈં હન કા અન્તર્ભાવ સ્વસ્થાન મેં હોતા હૈ યા પરસ્થાન મેં હોતા હૈ હસ પ્રકાર કે ચિન્તન પ્રકાર કા - વિચાર કા જો ઉત્તર હૈ વહી સમાવેશ - યા સમવતાર હૈ । યહ વિચાર હસ પ્રકાર સે હોતા હૈ કિં—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઢ્વી દઢ્વાઈ—કહિં સમોયરંતિ, કિં આણુપુઢ્વી દઢ્વેહિં સમોયરંતિ અણાણુપુઢ્વી દઢ્વેહિં સમોયરંતિ ?)

હવે સૂત્રકાર સમવતારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં સમોયારે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સમોયારે ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વ પ્રસ્તુત સમવતારનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સમોયારે) સમવતારનું સ્વરૂપ નીચે પ્રમાણે છે—સમવતાર એટલે સમાવેશ એટલે કે અનેક આનુપૂર્વી આદિ જે દ્રવ્યો છે તેમનો અંતર્ભાવ સ્વસ્થાનમાં થાય છે કે પરસ્થાનમાં થાય છે, આ પ્રકારના ચિન્તનનો—વિચારનો જે ઉત્તર છે તેને જ સમવતાર અથવા સમાવેશ કહે છે તે વિચાર આ પ્રમાણે થાય છે—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઢ્વી દઢ્વાઈ કહિં સમોયરંતિ ? કિં આણુપુઢ્વી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૦ સમવતારસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૩૭

इति त्रिविधः प्रश्नः। उत्तरमाह—‘नेगमव्यवहारणं’ इत्यादि। नेगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि आनुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति, नो अनानुपूर्वीद्रव्येषु, न वाऽवक्तव्यकद्रव्येषु। अयं भावः—आनुपूर्वीद्रव्याणि आनुपूर्वीद्रव्यलक्षणायां स्वजातावेव वर्तन्ते, न ततोऽन्यत्र। यतः समवतारः—सम्यगविरोधेन अवतरणं=वर्तनम्—अविरोधवृत्तिता प्रोच्यते। अविरोधवृत्तिता च स्वजातावेव स्यात्, न तु परजातौ। तस्याः परजातिवृत्तित्वे विरोधात्। ततश्च नानादेशवृत्तीनि सर्वाण्य-
नेगम और व्यवहारनय-संमत जो आनुपूर्वी द्रव्य है वे कहां समाविष्ट होते हैं? क्या आनुपूर्वी द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं या अनानुपूर्वी द्रव्यों में? या (अवक्तव्यदब्बेहिं समोयरंति) अवक्तव्यक द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं? (नेगमव्यवहारणं आणुपुण्वी दब्बाइं अणाणुपुण्वी दब्बेहिं समोयरंति)

उत्तर— नेगम व्यवहारनय संमत जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे आनुपूर्वी द्रव्यों में ही समाविष्ट होते हैं (नो अणाणुपुण्वीदब्बेहिं समोयरंति नो अवक्तव्यदब्बेहिं समोयरंति) अनानुपूर्वी द्रव्यों में समाविष्ट नहीं है और न अवक्तव्यक द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं। इसका भाव यह है—कि समस्त आनुपूर्वी द्रव्य, बिना किसी विरोध के अपनी जाति में ही रहते हैं। दूसरी जाति में नहीं। बिना विरोध के अपनी जाति में रहना इसी का नाम समवतार समावेश, अविरोधवृत्तिता है। यह

દ્બેહિં સમોયરંતિ, અણાણુપુણ્વી દ્બેહિં સમોયરંતિ) નેગમ અને વ્યવહાર નયસંમત જે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમનો કયાં સમાવેશ થાય છે? શું આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવેશ થાય છે, કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવેશ થાય છે? અથવા (અવક્તવ્યદબ્બેહિં સમોયરંતિ) અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવેશ થાય છે? (નેગમવ્યવહારણં આણુપુણ્વીદબ્બાઈં આણુપુણ્વીદબ્બેહિં સમોયરંતિ) ઉત્તર—નેગમ અને વ્યવહાર નયસંમત જે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે, તેમનો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં જ સમાવેશ થાય છે, (નો અણાણુપુણ્વી દબ્બેહિં સમોયરંતિ, નો અવક્તવ્યદબ્બેહિં સમોયરંતિ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવેશ પણ થતો નથી અને અવક્તવ્ય દ્રવ્યોમાં પણ સમાવેશ થતો નથી આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—

સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કોઈ પણ જાતના વિરોધ (અવરોધ) વિના પોતાની જાતિમાં રહે છે—ખીજ જાતિમાં રહેતા નથી કોઈ પણ પ્રકારના વિરોધ વિના પોતાની જાતિમાં રહેવા તેનું જ નામ સમવતાર અથવા સમા-

For Private and Personal Use Only

अनुयोगवन्त्रिका टीका सूत्र ८१ अनुगमस्वरूपनिरूपणम्

३३९

प्यानुपूर्वीद्रव्याणि आनुपूर्वीद्रव्येष्वेव वर्तन्ते नान्यत्रेति । एवं नैगमव्यवहारसम्मतानि अनानुपूर्वी द्रव्याणि अनानुपूर्वीद्रव्येष्वेव वर्तन्ते, नैगमव्यवहारसम्मतानि अवक्तव्यकद्रव्याणि च अवक्तव्यकद्रव्येष्वेव वर्तन्ते, इत्यपि भावनीयम् । प्रकृत-
मुपसंहरन्नाह—स एष समवतार इति ॥सू० ८०॥

अथानुगमं निरूपयितुमाह—

मूकम्—से किं तं अणुगमे? अणुगमे नवविहे पणत्ते? तं जहा संतपयपरूवणया? दव्वप्पमाणं २ च खित्त ३ फुसणा य ४। कालो य ५ अंतरं ६ भाग ७ भाव ८ अप्पावहुं ९ चेव ॥१॥
से तं अणुगमे ॥सू० ८१॥

छाया—अथ कोऽसौ अनुगमः? अनुगमो नवविधः प्रज्ञा, तद्यथा—सत्पद-
परूपणता १ द्रव्यप्रमाणं च २ क्षेत्रं ३ स्पर्शना च ४। कालश्च ५ अन्तरं ६ भागो ७
भावः ८ अल्पबहुत्वं चैव ॥१॥ स एषोऽनुगमः ॥सू० ८१॥

व्यक्त द्रव्य हैं वे सष अपनी जातिरूप अवक्तव्यक द्रव्यों में ही रहते हैं।
ऐसा अर्थ अवशिष्ट पाठ को लगा लेना चाहिये। इस प्रकार यह
समवतार का स्वरूप है?

भावार्थ—आनुपूर्वी अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक जितने भी द्रव्य
हैं उनके विषय में ये तीन प्रश्न हो सकते हैं—कि आनुपूर्वी आदि समस्त
द्रव्य कहां रहते हैं? अपनी जाति वालों में ही रहते हैं—या भिन्न जाति
वालों में रहते हैं। इनका ही समाधान सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा किया है।
उसमें यह कहा गया है कि नैगमव्यवहारसंमत समस्त आनुपूर्वी आदि
द्रव्य अपनी २ जाति में ही रहते हैं—भिन्न जाति में नहीं। ॥सू० ८०॥

પણ પોતાની જાતિ રૂપ અવકતવ્યક દ્રવ્યોમાં જ રહે છે; એવો અર્થ
બાકીના પાઠના વિષયમાં સમજી લેવો જોઈએ આ પ્રકારનું સમવતારનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક રૂપ જેટલાં દ્રવ્યો
છે, તેમને વિષે આ ત્રણ પ્રશ્ન સંભવી શકે છે—આનુપૂર્વી આદિ સમસ્ત
દ્રવ્ય કયાં રહે છે? શું તેઓ પોતાની જાતિવાળામાં જ રહે છે, કે ભિન્ન
જાતિવાળામાં રહે છે? સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં આ પ્રશ્નોનું જ સમાધાન કર્યું
છે. તેમણે આ સૂત્રમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે નૈગમવ્યવહારસંમત
સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય પોતપોતાની જાતિમાં જ રહે છે—ભિન્ન
જાતિમાં રહેતાં નથી. ॥સૂ० ૮૦॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃછતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કોઽસૌ અનુગમ ? ઇતિ । અનુગમઃ—સૂત્રાર્થસ્ય અનુકૂલમ્ અનુરૂપં વા ગમનં=વ્યાખ્યાનમ્—અનુગમઃ । સ નવવિધઃ=નવપ્રકારકઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ=પ્રરૂપિતઃ, તથા—સત્પદપ્રરૂપણતા—સન્ વિધમાનો યોઽર્થઃ=ભાવસ્તદ્વિષયં પદં સત્પદં તસ્ય પ્રરૂપણં=પ્રજ્ઞાપનં તદેવ સત્પદપ્રરૂપણતા પ્રથમં કર્તવ્યમ્ । અયં ભાવઃ—સ્તમ્ભકુસ્માદીનિ પદાનિ સદર્થવિષયાણિ દૃશ્યન્તે, શશશ્ચક્રગગનકુસુમાદીનિ પદાનિ ત્વસદર્થવિષયાણિ દૃશ્યન્તે । તન્નાનુ-

અથ સૂત્રકાર અનુગમ કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં અણુગમે ?” । ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે ?) હે ભદ્રન્ત ! અનુગમ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—(અણુગમે નવવિદ્દે પળ્લણ્ણત્તે) અનુગમ નૌ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે—(સંતપ્પયપરૂવળ્ણયા) ૧ સત્પદ—પ્રરૂપણતા (દવ્વપ્પમાણં ચ) ૨ દ્રવ્યપ્રમાણ (સ્થિત્ત ૩ ફુલ્લણા ૪) ૩ ક્ષેત્ર ૪ સ્પર્શન (કાલોય, અંતર, ભાગ ભાવ અપ્પાઘહું ચેવ) ૫ કાલ ૬ અન્તર, ૭ ભાગ ૮ ભાવ ઓર ૯ અલ્પબહુત્વ । (સે તં અણુગમે) હસ પ્રકાર યહ અનુગમ કા સ્વરૂપ હૈ । સૂત્ર કે અનુકૂલ અથવા અનુરૂપ વ્યાખ્યાન કરના હસકા નામ અનુગમ હૈ । યહ પૂર્વોક્ત રૂપ સે નૌ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । સત્પદ-પ્રરૂપણતારૂપ ૧ પ્રથમ અનુગમ કે ભેદ મેં યહ પ્રરૂપિત કિયા જાતા હૈ કિ જિસ પ્રકાર સે શશશ્ચક્ર આદિ પદ અસદર્થ કો વિષય કરને વાલે

હવે સૂત્રકાર અનુગમનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં અણુગમે ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રસ્તુત અનુગમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણુગમે નવવિદ્દે પળ્લણ્ણત્તે—તં જહા) અનુગમના નીચે પ્રમાણે નવ પ્રકાર કહ્યા છે—(સંતપ્પયપરૂવળ્ણયા) (૧) સત્પદ પ્રરૂપણતા, (દવ્વપ્પમાણં ચ) (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (સ્થિત્ત ૩ ફુલ્લણા ચ ૪) (૩) ક્ષેત્ર, (૪) સ્પર્શન, (કાલોય, અંતર, ભાગ, ભાવ, અપ્પાઘહુંચેવ) (૫) કાળ, (૬) અન્તર, (૭) ભાગ, (૮) ભાવ, અને (૯) અલ્પબહુત્વ.

(સે તં અણુગમે) આ પ્રકારનું અનુગમનું સ્વરૂપ છે સૂત્રને અનુકૂળ અથવા અનુરૂપ વ્યાખ્યાન કરવું તેનું નામ અનુગમ છે તેના ઉપર મુજબ નવ પ્રકાર કહ્યા છે. સત્પદપ્રરૂપણતા રૂપ અનુગમના પ્રથમ ભેદમાં વિદ્યમાન પદાર્થવિષયક પદની પ્રરૂપણ કરવામાં આવે છે સસલાને શિંગડાં હોવાની

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૧ અનુગમસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૪૧

પૂર્વપાદિપદાનિ સ્તમ્ભાદિ પદાનીચ સદર્થવિષયાણિ, કિંવા શશંગ્ગાદિપદાનીચ અસદર્થવિષયાણિ ? इति पर्यालोचनीयमिति । १। तथा-द्रव्यप्रमाणम्=आनुपूर्व्यादि-पदवाच्यानां द्रव्याणां प्रमाणं=संख्यास्वरूपं पर्यालोचनीयम् । २। च पुनः क्षेत्रम्=आनुपूर्व्यादिपदवाच्यद्रव्याणाम् आधारस्वरूपं वक्तव्यम् । कियति क्षेत्रे तानि भवन्तीति चिन्तनीयमिति भावः । ३। तथा-स्पर्शना च पर्यालोचनीया । तानि द्रव्याणि कियत् क्षेत्रं स्पृशन्तीति चिन्तनीयमिति भावः । ४। तथा-कालश्च वक्तव्यः-

होते हैं, उस प्रकार से ये आनुपूर्वी आदि पद असदर्थ विषयक नहीं हैं किन्तु जिस प्रकार स्तम्भ आदि पद स्तम्भ आदिरूप अपने वास्तविक अर्थ को विषय करने वाले होते हैं उसी प्रकार से आनुपूर्वी आदि पद यथार्थरूपसे अपने सदर्थ को विषय करने वाले हैं । इस प्रकार विद्यमान पदार्थ विषयकपદ की પ્રરૂપણા का नाम सत्पदप्ररूपणता है । यह सत्पदप्ररूपणा अनुगम करते समय प्रथम कर्तव्य होनी है । इसलिये उसे अनुगम के भेदों में प्रथम स्थान दिया गया है । द्रव्य प्रमाण में आनुपूर्वी आदि पदों के द्वारा जिन द्रव्यों को कहा जाता है उनकी संख्या कितनी है इसका विचार होता है ? क्षेत्र में-आनुपूर्वी आदि पदों द्वारा कथित द्रव्यों का आधाररूप क्षेत्र विचारित होता है-अर्थात् ये आनुपूर्वी आदि द्रव्य कितने प्रमाण क्षेत्र में होते हैं ऐसा विचार किया जाता है । स्पर्शन में ये आनुपूर्वी आदि द्रव्य कितने क्षेत्र को स्पर्श करते हैं

પરૂપણા કરવી તે અસદર્થ પ્રરૂપણા છે, કારણ કે તેને શિંગડાં જ હોતાં નથી પરંતુ આનુપૂર્વી આદિ પદ અસદર્થ વિષયક હોતા નથી પણ સદર્થ વિષયક હોય છે. જેવી રીતે સ્તમ્ભ આદિ પદ સ્તમ્ભ આદિ રૂપ યોતાના વાસ્તવિક અર્થને વિષય કરનારા (પ્રતિપાદન કરનારા) હોય છે, એજ પ્રમાણે આનુપૂર્વી આદિ પદ યથાર્થ રૂપે યોતાના સદર્થને વિષય કરનારા હોય છે. આ રીતે વિદ્યમાન પદાર્થવિષયક પદની પ્રરૂપણાનું નામ ‘સત્પદપ્રરૂપણતા’ છે, આ સત્પદપ્રરૂપણા અનુગમ કરતી વખતે પહેલાં કરવા યોગ્ય હોય છે. તેથી તેને અનુગમના ભેદોમાં પહેલું સ્થાન આપવામાં આવ્યું છે. ૧

દ્રવ્યપ્રમાણમાં એ વિચાર કરવામાં આવે છે કે આનુપૂર્વી આદિ પદો દ્વારા જે દ્રવ્યોનું કથન કરવામાં આવે છે તેમની સંખ્યા કેટલી છે. ૨

ક્ષેત્રમાં-આનુપૂર્વી આદિ પદો દ્વારા કથિત દ્રવ્યોના આધાર રૂપક્ષેત્રનો વિચાર કરવામાં આવે છે-એટલે કે એ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય કેટલા પ્રમાણવાળા ક્ષેત્રમાં હોય છે, એવો વિચાર કરવામાં આવે છે. ૩

તેષાં દ્રવ્યાણાં સ્થિતિલક્ષણઃ કાલશ્ચ પ્રરૂપણીયઃ ॥૧॥ તથા-અન્તરં વક્તવ્યમ્ । વિવક્ષિતસ્વભાવપરિત્યાગે સતિ પુનસ્તદ્ભાવપ્રાપ્તિવિરહલક્ષણમન્તરં પ્રરૂપણીયમિતિ ભાવઃ । દ્રવ્યસ્ય વિવક્ષિતસ્વભાવપરિત્યાગે સતિ પુનસ્તદ્ભાવપ્રાપ્તૌ ચ મધ્યે યઃ કાલઃ સોઽન્તરમુચ્યતે, ઇતિ बोध्यम् ॥૬॥ તથા-ભાગશ્ચ વક્તવ્યઃ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાણાં કસ્મિન્ ભાગે વર્તન્તે, ઇત્યેવં ભાગઃ પ્રરૂપણીય ઇતિ ભાવઃ ॥૭॥ તથા ભાવઃ પ્રરૂપણીયઃ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કસ્મિન્ ભાવે વર્તન્તે ઇત્યેવં રૂપો ભાવો વક્તવ્ય ઇત્યર્થઃ ॥૮॥ તથા-અલ્પબહુત્વં ચૈવ=ચાપિ વક્તવ્યમ્ । આનુપૂર્વ્યાદિદ્રવ્યાણાં

ऐसी पर्यालोचना होती है । क्षेत्र में केवल आधारभूत आकाश ही लिया जाता है और स्पर्शनता में आधार क्षेत्र के चारों तरफ के आकाश प्रदेश जो आधेय के द्वारा छुये गये हों वे भी लिये जाते हैं । आनुपूर्वी आदि द्रव्यों की स्थिति का विचार यह काल है । अनुगम में आनुपूर्वी आदि द्रव्यों की स्थिति कितनी है इस बात की पर्यालोचना की जाती है अन्तर नाम विरह काल का है । विवक्षित पर्याय के परित्याग हो जाने पर पुनः उसी पर्याय की प्राप्ति होने में जो बीच में अन्तर पड़ता है उसका नाम विरह काल है । अनुगम में इस अन्तर की प्ररूपणा करना आवश्यकीय माना गया है । आनुपूर्वी द्रव्यशेष द्रव्यों के किस भाग में रहते हैं इस प्रकार के भाग की भी प्ररूपणा अनुगम में कर्तव्य होती है आनुपूर्वी आदि द्रव्य किस भाव में रहते हैं इस प्रकार की प्ररूपणा का नाम भाव है । न्यूनाधिकता

સ્પર્શન અનુગમમાં એવો વિચાર કરવામાં આવે છે કે તે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય કેટલા ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરે છે ક્ષેત્રમાં કેવળ આધારભૂત આકાશ જ લેવામાં આવે છે અને સ્પર્શનામાં આધાર ક્ષેત્રની ચારે તરફના જે આકાશ પ્રદેશો આધેય દ્વારા સ્પૃષ્ટ થયા હોય, તેમને પણ લેવામાં આવે છે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોની સ્થિતિનો વિચાર કરવો તેનું નામ 'કાળઅનુગમ' છે. કાળઅનુગમમાં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોની સ્થિતિ કેટલી છે, એ વાતની પર્યાયોચના (વિચારણા) કરવામાં આવે છે વિરહકાળને અન્તર કહે છે. વિવક્ષિત (અમુક) પર્યાયનો પરિત્યાગ થઈ ગયા બાદ ફરીથી એજ પર્યાયની પ્રાપ્તિ થવામાં વચ્ચે જેટલું અન્તર પડે છે તેટલા અન્તરને વિરહકાળ કહે છે. અનુગમમાં આ અન્તરની પણ પ્રરૂપણા કરવાનું આવશ્યક ગણાય છે.

આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શેષ (બાકીના) દ્રવ્યોના કયા ભાગમાં રહે છે, તે પ્રકારના ભાગની પણ પ્રરૂપણા અનુગમમાં કરવી પડે છે. ૭ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કયા ભાવમાં રહે છે, તે પ્રકારની પ્રરૂપણાનું નામ ભાવઅનુગમ છે. ન્યૂનાધિકતાનું નામ અલ્પબહુત્વ છે દ્રવ્યાર્થિક નયને આધારે, પ્રદેશાર્થતાને

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ८२ सत्पदप्ररूपणानिरूपणम्

३४३

द्रव्यार्थताऽऽश्रयणेन प्रदेशार्थताऽऽश्रयणेन तदुभयार्थताऽऽश्रयणेन च परस्परं
स्तोकबहुत्वचिन्तालक्षणम् अल्पबहुत्वं चाऽपि प्ररूपणीयमिति भावः ॥९॥ प्रकृत-
मुपसंहरन्नाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष अनुगम इति ॥सू० ८१॥

इत्थं संक्षेपतोऽर्थमभिधाय विस्तरेणार्थमभिधातुकामः सूत्रकारोऽनुगमस्य नवसु
भेदेषु सत्पदप्ररूपणारूपं प्रथमं भेदमाह—

मूलम्—नेगमववहाराणं आणुपुर्वीदव्वाइं किं अत्थि नत्थि ?
णियमा अत्थि, नेगमववहाराणं अण्णपुर्वीदव्वाइं किं अत्थि
णत्थि?, णियमा अत्थि, नेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं किं
अत्थि णत्थि ? णियमा अत्थि ॥सू० ८२॥

का नाम अल्पबहुत्व है । द्रव्यार्थिकनय के आश्रय से प्रदेशार्थता के
आश्रय से और तदुभय—द्रव्यार्थिक प्रदेशार्थिक इन दोनों के आश्रय
से इन आनुपूर्वी आदि द्रव्यों में जो स्तोक बहुत का विचार है वही अल्प-
बहुत्व है । अनुगम में इस अल्पबहुत्व की भी प्ररूपणा कर्तव्य होती
है । (से तं अणुगमे) इस प्रकार यह अनुगम का स्वरूप है ।

भावार्थ—सूत्रार्थ के अनुकूल अथवा अनुरूप व्याख्यान का नाम
अनुगम है । इस अनुगम में इन नौ ९, विषयों का विचार किया जाता
है । इसलिये वह अनुगम सत्पद प्ररूपणा आदि के भेद से नौ प्रकार
का कहा गया है । इन सत्पद प्ररूपणता आदि का क्या स्वरूप है इसे
स्वयं सूत्रकार विस्तार से आगे सूत्रों द्वारा स्पष्ट करते हैं । ॥ सू० ८१॥

આધારે અને તદુભય (તે બન્ને)—દ્રવ્યાર્થિક અને પ્રદેશાર્થિક એ બન્નેને
આધારે આ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોમાં જે અલ્પત્વ અને બહુત્વનો વિચાર
કરવામાં આવે છે તેનું નામ જ અલ્પબહુત્વ છે અનુગમમાં આ અલ્પબહુ-
ત્વની પ્રરૂપણા પણ કરવા યોગ્ય ગણાય છે (સે તં અણુગમે) આ પ્રકારનું
અનુગમનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રાર્થને અનુકૂળ અથવા અનુરૂપ વ્યાખ્યાનનું નામ અનુગમ
છે. તે અનુગમમાં ઉપયુક્ત નવ વિષયોનો વિચાર કરવામાં આવે છે, તેથી
તે અનુગમમાં સત્પદ પ્રરૂપણા આદિ નવ ભેદ કહ્યા છે આ સત્પદ પ્રરૂપણા
આદિના સ્વરૂપનું વિસ્તાર પૂર્વકનું નિરૂપણ સૂત્રકાર પોતે જ આગળના સૂત્રોમાં
કરવાના છે, તેથી અહીં તેનો ભાવાર્થ સંક્ષિપ્તમાં આપવામાં આવ્યો છે. ॥સૂ० ૮૧॥

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્ સન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોઃ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્ સન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોઃ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્ સન્તિ ॥ સૂ. ૦૮૨ ॥

ટીકા—‘ નૈગમવ્યવહારાણં ’ ઇત્યાદિ । વ્યાख्या નિગદસિદ્ધા ॥ સૂ. ૦૮૨ ॥

હસ પ્રકાર સંક્ષેપ સે સત્પદપ્રરૂપણા આદિ કા અર્થ કહકર અથ સૂત્રકાર વિસ્તાર સે ઉનકા અર્થ કહને કી ઇચ્છા સે અનુગમ કે નૌ ભેદોં કા કથન કરતે હૈ—‘ નૈગમવ્યવહારાણં ’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વીદ્વાઈ કિં અસ્થિ નસ્થિ ?) નૈગમવ્યવહારનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કયા હૈ યા નહીં હૈ ?

(ગિયમા અસ્થિ) ઉત્તર—અવશ્ય હૈ । (નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઘ્વી દ્વાઈ કિં અસ્થિ ણસ્થિ ?) નૈગમ વ્યવહારનયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ યા નહીં હૈ ? ઉત્તર—(ગિયમા અસ્થિ) નિયમ સે હૈ—અવશ્ય ૨ હૈ—(નૈગમવ્યવહારાણં અવક્તવ્યાગદ્વાઈ કિં અસ્થિ ? ણસ્થિ ?—ગિયમા અસ્થિ) નૈગમ વ્યવહારાનય સંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈ યા નહીં હૈ ?

ઉત્તર—નિયમતઃ હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્રદ્વારા નૈગમ વ્યવહારનય સંમત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય હૈ ? યહ વાત નિયમપદ સે જોર કે સાથ પ્રકટ કી હૈ

આ પ્રમાણે અનુગમના સત્પદપ્રરૂપણા આદિ ભેદોના અર્થ સંક્ષિપ્તમાં સમજાવીને હવે સૂત્રકાર તે નવે ભેદોના અર્થ વિસ્તારપૂર્વક સમજાવવા માગે છે. તેથી તેઓ સત્પદપ્રરૂપણાતઃ ૩૫ તેના પ્રથમ ભેદનું નીચેના સૂત્ર દ્વારા નિરૂપણ કરે છે—“ નૈગમવ્યવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વી દ્વાઈ કિં અસ્થિ નસ્થિ ?) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે કે નથી ?

ઉત્તર—(ગિયમા અસ્થિ) અવશ્ય છે જ.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઘ્વી દ્વાઈ કિં અસ્થિ ણસ્થિ ?) નૈગમ વ્યવહારનયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું છે કે નથી ?

ઉત્તર—(ગિયમા અસ્થિ) નિયમથી જ એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ પણ અવશ્ય છે જ.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ કોવાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. “ તેમનું અસ્તિત્વ નિયમથી જ છે, ” આ પ્રકારના કથન દ્વારા તેમણે આ વાતને બારપૂર્વક

નૈગમવ્યવહાર ટીકા સૂત્ર ૮૩ દ્રવ્યપ્રમાણનિરૂપણમ્

૩૪૫

અથ દ્રવ્યપ્રમાણરૂપં દ્વિતીયભેદમાદ—

મૂલ્ય—નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વીદઘ્વાઈંં કિં સંસ્થિજ્ઞાઈંં
અસંસ્થિજ્ઞાઈંં અણંતાઈંં ? નો સંસ્થિજ્ઞાઈંં નો અસંસ્થિજ્ઞાઈંં અણંતાઈંં ।
एव् अणाणुपुठ्ठीदघ्वाइं अवत्तवगदघ्वाइं च अणंताइं भाणि
यद्वाइं ॥सू०८३॥

છાયા—નેગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કિં સંસ્થેયાનિ અસંસ્થેયાનિ
અનન્તાનિ ? નો સંસ્થેયાનિ નો અસંસ્થેયાનિ અનન્તાનિ । एवम् अनानुपूर्वी
द्रव्याणि अवक्तव्यकद्रव्याणि च अनन्तानि भणितव्यानि ॥सू०८३॥

ટીકા—‘નેગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ ।

નેગમવ્યવહારસમ્પત્તાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સંસ્થેયાનિ સન્તિ ? કિમં-
સંસ્થેયાનિ સન્તિ ? કિંવાઅનન્તાનિ સન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—આનુપૂર્વી-
દ્રવ્યાણિ નો સંસ્થેયાનિ સન્તિ, નો અસંસ્થેયાનિ સન્તિ । અપિતુ અનન્તાનિ સન્તિ ।

अर्थात् वे जोर देकर यह कह रहे हैं कि ये आनुपूर्वी आदि द्रव्य सत्ता
विशिष्ट हैं । ऐसे नहीं हैं, कि ये नहीं हैं । ॥ सूत्र० ८२ ॥

‘નેગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વી દઘ્વાઈંં કિં સંસ્થિજ્ઞાઈંં અસં-
સ્થિજ્ઞાઈંં અણંતાઈંં ?) નેગમવ્યવહારનય સંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-
સંખ્યાત છે ? યા અસંખ્યાત છે ? યા અનન્ત છે ?

ઉત્તર—(નો સંસ્થિજ્ઞાઈંં નો અસંસ્થિજ્ઞાઈંં) નેગમવ્યવહારનય સંમત
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ન સંખ્યાત છે ઓર ન અસંખ્યાત છે કિન્તુ (અણંતાઈંં)

પ્રકટ કરી છે એટલે કે તેઓ આનુપૂર્વક એવું કહે છે કે આનુપૂર્વી આદિ
દ્રવ્યો સત્તાવિશિષ્ટ છે—તે દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ અવશ્ય છે. જ. તેઓ અવિ-
ધમાન નથી એમ સમજવું ॥ સૂ.૦૮૨ ॥

“નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વી દઘ્વાઈંં કિં સંસ્થિજ્ઞાઈંં, અસંસ્થિ-
જ્ઞાઈંં અણંતાઈંં ?) નેગમવ્યવહાર નય સંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો
સંખ્યાત છે, કે અસંખ્યાત છે, કે અનન્ત છે ?

ઉત્તર—(નો સંસ્થિજ્ઞાઈંં નો અસંસ્થિજ્ઞાઈંં, અણંતાઈંં) નેગમ-અનેકવ્યવહાર-
નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સંખ્યાત પણ નથી, અસંખ્યાત પણ નથી,

અં ૪૪

પરમ્ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ ચ અનન્તાનિ વિજ્ઞેયાનિ । इदमत्र बोध्यम्—इहानुपूर्व्येनानुपूर्व्यवक्तव्यरुद्रव्येषु प्रत्येकमनन्ताभ्यनन्तानि एकैकस्मिन्-
 स्रव्याकाशप्रदेशे लभ्यन्ते, किं पुनः सर्वलोके । अतः संख्येयासंख्येयप्रकारद्वयं निषिष्य त्रिष्वपि स्थानेष्वानन्त्यमेवोच्यते । असंख्येये लोके कथमनन्तानि द्रव्याणि तिष्ठन्तीति न शङ्कनीयम् ? पुद्गलपरिणामस्य अविन्यत्वाद्, दृश्यते हि—एक
 प्रदीपप्रभा परमाणुव्याप्त्येषु एकगृहान्तर्वर्त्याकाशप्रदेशेषु अनेकापरप्रदीपप्रभा-
 अनन्तहैं । (एवं अणुपुष्पीदव्याहं अवस्तव्वगदव्याहं च अणंताहं भाणि-
 यव्याहं) इसी प्रकार से यह भी जानना चाहिये कि अनानुपूर्वी द्रव्य और
 अवक्तव्यकद्रव्य भी अनन्त हैं । संख्यात-असंख्यात नहीं हैं । इस कथन
 का यह भाव है कि आनुपूर्वी और अवक्तव्यक इन द्रव्यों में प्रत्येक आनु-
 पूर्वी आदि द्रव्य अनन्त २ हैं । और प्रत्येक ये एक २ थी आकाश के प्रदेश
 में अनन्त अनन्त पाये जाते हैं । सर्वलोक की तो बात ही क्या है ।
 इसलिये ये न संख्यात हैं और न असंख्यात हैं इसलिये इन तीनों में
 दोनों प्रकारता का निषेध कर अनन्तता की स्थापना की गई है । यहां
 ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये कि असंख्यात प्रदेशी आकाश रूप क्षेत्र
 में अनन्त आनुपूर्वी आदिद्रव्य कैसे ठहर सकते हैं क्यों कि पुद्गल का
 परिणामन अविन्य होता है । यह तो हम अपनी आंखों से देखते हैं कि
 एक प्रदीप की प्रभा से व्याप्त एक गृहान्तर्वर्ती-आकाश के प्रदेशों में

પર-નુ અનંત છે. (એવં અણુપુષ્પીદવ્યાહં અવસ્તવ્વગદવ્યાહં ચ અણંતાહં
 ભાણિયવ્યાહં) એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ અનંત છે અને અવક્ત-
 વ્યક દ્રવ્યો પણ અનંત છે, એમ સમજવું જોઈએ તે બંને પ્રકારના દ્રવ્યો
 સંખ્યાત પણ નથી અને અસંખ્યાત પણ નથી આ કથનનો ભાવાર્થ' એ છે
 કે આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક આ દ્રવ્યોમાંના આનુપૂર્વી આદિ
 દ્રવ્યો અનંત-અનંત છે. તે પ્રત્યેકનો એક એક આકાશપ્રદેશમાં પણ
 અનંત અનંત રૂપે સદ્ભાવ હોય છે. તે પછી સર્વલોકની તો વાત જ શી
 કરવી ! તે કારણે તેઓને સંખ્યાત પણ કહ્યા નથી અને અસંખ્યાત પણ
 કહ્યા નથી આ રીતે ત્રણેમાં બંને પ્રકારતાનો નિષેધ કરીને અનંતતાનું જ
 પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

અહીં એવી શંકા કરવી ન જોઈએ કે અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશ રૂપ ક્ષેત્રમાં
 અનંત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કેવી રીતે રહી શકે છે, કારણ કે 'પુદ્ગલવત્'
 પરિણમન અવિન્ય હોય છે. એ તો આપણે આપણી આંખો વડે જોઈ શકીએ
 છીએ કે એક પ્રદીપ (દીપક) ની પ્રભાથી વ્યાપ્ત એક ગૃહાન્તર્વર્તી—(પરની આંકર)

પરમાણુનામવ્યવસ્થાનમ્ । ન ચાક્ષિદ્દંટેડપ્યર્થેડનુપપત્તિઃ, અતિપ્રસંગાત્ । અત આનુપૂર્વાદિ દ્રવ્યાણામાનન્ત્યે ન કથિદ્ દોષ इति ॥સૂ૦૮૩॥

દૂસરે ઓર મી અનેક પ્રદીપોં કી પ્રભા કે પરમાણુઓં કા અવસ્થાન હો જાતા હૈ । આંઓં દેલ્હે હુયે અર્થ મેં શંકા કરને જૈસી કોઈ વાત હી નહીં હોતી હૈ । નહીં તો, અતિપ્રસંગ નામ કા દોષ આતા હૈ । હસલિયે આનુપૂર્વી આદિ અનન્ત દ્રવ્યોં કો અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશ મેં અવસ્થિત હોને મેં કોઈ વાધા નહીં આતી હૈ । ઓર ન આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કો અનન્ત માનને મેં કોઈ આપત્તિ આતી હૈ ।

ભાવાર્થ- સૂત્રકાર ને અનુગમ કા દ્વિતીય ભેદ જો દ્રવ્ય પ્રમાણ હૈ ઉસકે વિષય મેં યહ નિર્ણય ક્રિયા હૈ ઉસમેં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કા પ્રમાણ અનન્ત હૈ એસા નિર્દેશ કર એસા સ્પષ્ટ ક્રિયા હૈ કિ અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશ લોકાકાશ-મેં હનકા અવગાહન વાચિત નહીં હો સકતા હૈ કયોંકિ પૌદ્ગલિક પરિણામ અચિન્ત્ય હોવા હૈ । એકહી ઘર કે મીતર મેં રહે હુયે આકાશ મેં હમ દેલ્હેતે હૈં કિ અનેક પ્રદીપ પ્રભા કે પરમાણુ સમા જાતે હૈં । હસી પ્રકાર સે અવગાહન શક્તિ કે યોગ સે ઓર પરિણમન કી વિચિત્રતા સે એક મી આકાશ કે પ્રદેશ મેં અનન્ત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કા અવગાહન વાચિત નહીં હોતા હૈ । ॥સૂ૦ ૮૩॥

રહેલ આકાશના પ્રદેશોમાં બીજાં પણ અનેક પ્રદીપોની પ્રભાના પરમાણુઓનું અવસ્થાન (નિવાસ) થઈ જાય છે. આંઓ વડે જોયેલા વિષયમાં શંકાનો કોઈ અવકાશ જ રહેતો નથી નહીં તો, અતિપ્રસંગ નામનો દોષ આવે છે. તેથી આનુપૂર્વી આદિ અનન્ત દ્રવ્યોનું અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશમાં અવસ્થાન થવામાં કોઈ વાધા (મુશ્કેલી, અવરોધ) રહેતી નથી અને આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોને અનન્ત માનવામાં પણ કોઈ વાધો સંભવતો નથી.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે અનુગમના દ્રવ્યપ્રમાણ નામના બીજા લેહનું આ સૂત્ર દ્વારા નિરૂપણ કર્યું છે. તેમાં એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો અનન્ત છે. આ પ્રકારનું પ્રતિપાદન કરીને એવી સ્પષ્ટતા કરવામાં આવી છે કે અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશમાં-લોકાકાશમાં તેમની અવગાહના હોવાની વાત સ્વીકારવામાં કોઈ પણ પ્રકારનો વાધો સંભવી શકતો નથી, કારણ કે પૌદ્ગલિક પરિણામ અચિન્ત્ય હોય છે. એક જ ઘરની અંદર રહેલા આકાશમાં (અવકાશમાં) અનેક પ્રદીપોની પ્રભાના પરમાણુઓનો સમાવેશ થઈ જાય છે, એ વાત તો આપણે આપણી આંખો વડે જ જોઈ શકીએ છીએ. એજ પ્રમાણે અવગાહનશક્તિના યોગથી અને પરિણમનની વિચિત્રતાથી આકાશનાં એક પ્રદેશમાં પણ અનન્ત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનું અવગાહન (સમાવેશ) માનવામાં કોઈ આપત્તિ સંભવી શકતી નથી. ॥સૂ૦૮૩॥

सम्पत्ति क्षेत्ररूपं तृतीयभेदमाह—

मूलम्—नेगमव्यवहाराणं आणुपुर्वी दब्बाइं लोगस्स किं संखि-
ज्जइभागे होज्जा, असंखिज्जइभागे होज्जा, संखेज्जेसु भागेसु
होज्जा, असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, सब्बलोए होज्जा? एगं
दब्बं पडुच्च संखेज्जइभागे वा होज्जा, असंखेज्जइभागे वा
होज्जा संखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा, असंखिज्जेसु भागेसु वा
होज्जा, सब्बलोए वा होज्जा। णाणादब्बाइं पडुच्च नियमा सब्ब-
लोए होज्जा। नेगमव्यवहाराणं अणानुपुर्वीदब्बाइं किं लोयस्स
संखिज्जइभागे होज्जा जाव सब्बलोए वा होज्जा? एगं दब्बं
पडुच्च नो संखेज्जइ भागे होज्जा असंखिज्जइभागे होज्जा नो
संखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो
सब्बलोए होज्जा। एवं अवत्तव्वगदब्बाइं भाणियव्वाइं ॥सू०८४॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य किं संख्येयतमभागे
भवन्ति, असंख्येयतमभागे भवन्ति, संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, सर्वलोके भवन्ति?
एकं द्रव्यं प्रतीत्य संख्येयेषु भागेषु वा भवन्ति, असंख्येयतमभागे वा भवन्ति,
संख्येयेषु भागेषु वा भवन्ति, असंख्येयेषु वा भवन्ति, सर्वलोके वा भवन्ति। नाना-
द्रव्याणि प्रतीत्य नियमात् सर्वलोके भवन्ति। नैगमव्यवहारयोः अनानुपूर्वीद्रव्याणि
किं लोकस्य संख्येयतमभागे भवन्ति यावत् सर्वलोके वा भवन्ति? एकं द्रव्यं
प्रतीत्य नो संख्येयतमभागे भवन्ति असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असंख्येयेषु
भागेषु भवन्ति, नो सर्वलोके भवन्ति, नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नियमात् सर्वलोके
भवन्ति। एवमवक्तव्यकद्रव्याणि भणितव्यानि ॥सू०८४॥

टीका—‘नेगमव्यवहाराणं’ इत्यादि—

अब सूत्रकार—तृतीय भेद के विषय से कहते हैं—

“नेगम व्यवहाराणं” इत्यादि।

इसे सूत्रकार अनुगमना त्रीन लेख ३५ क्षेत्रता विषयभा नीचे
प्रमाणे कथन करे छे—“नेगमव्यवहाराणं” इत्यदि—

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૪ ક્ષેત્રનિકરણમ્

૩૬૨

નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં લોકસ્ય એકસ્મિન્ સંખ્યેય-
તમે ભાગે ભવન્તિ=અવગાહન્તે? ૧ કિં વા એકસ્મિન્ અસંખ્યેયતમે ભાગેડવગાહન્તે? ૨
અથવા-કિં સંખ્યેયભાગેષુ ભવન્તિ અવગાહન્તે? ૩ કિમસંખ્યેયભાગેષુ ભવન્તિ-
અવગાહન્તે? ૪ અથવા-કિં સર્વલોકે ભવન્તિ? ૫ इति पञ्चमश्नाः। उत्तरमाह-
आनुपूर्वीद्रव्याणि=व्यणुक्स्कन्धादीनि अनन्ताणुक्स्कन्धान्तानि, तत्र-एकं द्रव्यं
प्रतीत्य=सामान्यत एकं द्रव्यमाश्रित्य किमपि लोकस्य संख्येयतमभागे भवति,

શબ્દાર્થ—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદ્રવ્યાઈ) નૈગમ વ્યવહાર નય
સંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (લોગસ્સ) લોક કે (કિં) વ્યા (સંલિ-
જ્જહાગે) ૧ સંખ્યાતવે ભાગ મેં (હોજ્જા) અવગાહિત હેં ? વા
(અસંલિજ્જહાગે હોજ્જા ૨) અસંખ્યાતવે ભાગ મેં અવગાહિત હેં ?
(સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) વા ૩ સંખ્યાત ભાગો મેં અવગાહિત
હેં ? વા ૪ (અસંલેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અસંખ્યાત ભાગો મેં અવ-
ગાહિત હેં ? વા (સર્વલોપ હોજ્જા ?) ૫ સમ્પૂર્ણ લોકમેં અવગાહિત હેં ?

ઉત્તર—(એગં દવ્વં પહુરુચ સંલેજ્જહાગે વા હોજ્જા, અસંલેજ્જહા
ભાગે વા હોજ્જા સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ વા હોજ્જા; અસંલેજ્જેસુ ભાગેસુ
વા હોજ્જા સર્વલોપ વા હોજ્જા) વ્યણુકાદિ અનન્તાણુ સ્કન્ધો મેં સે
સામાન્ય રૂપ સે કિસી એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા કરકે કોઈ એક આનુપૂર્વી
લોક કે સંખ્યાતવે ભાગ મેં તથા કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે
અસંખ્યાતવે ભાગ મેં રહતા હૈ તથા કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકકે

શબ્દાર્થ—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદ્રવ્યાઈ) નૈગમ અને વ્યવહાર-
નયસંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (લોગસ્સ કિં સંલિજ્જહા ભાગે હોજ્જા) શું
લોકના સંખ્યાતમાં લાગમાં અવગાહિત છે ? કે લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં
અવગાહિત છે, કે (અસંલિજ્જહા ભાગે હોજ્જા ૨) લોકના અસંખ્યાતમાં લાગમાં
અવગાહિત છે, કે (સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ૩) સંખ્યાત ભાગોમાં અવગાહિત
છે, કે (સર્વલોપ હોજ્જા ?) સંપૂર્ણ લોકમાં અવગાહિત હોય છે ?

ઉત્તર—(એગં દવ્વં પહુરુચ સંલેજ્જહા ભાગે વા હોજ્જા, અસંલેજ્જહા ભાગે
વા હોજ્જા, સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ વા હોજ્જા, અસંલિજ્જેસુ ભાગેસુ વા હોજ્જા, સર્વ-
લોપ વા હોજ્જા) ત્રણ પરમાણુત્રાણા (ત્રિપ્રદેશી) થી અનંત પર્યંતનાં અણુવાણા
સ્કન્ધો (અનંત પ્રદેશી સ્કન્ધો) માંથી સામાન્ય રૂપે કોઈ એક દ્રવ્યની અપે-
ક્ષાએ કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં લાગમાં અવગાહિત
અથવા રહે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં લાગમાં રહે

૬૫૦

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

લોકસ્ય સંખ્યાતતતમભાગમવગાહ્ય તિષ્ઠતીત્યર્થઃ ૧ । તથા—કિમપિ લોકસ્ય અસં-
ખ્યેયતમે ભાગે ભવતિ—તિષ્ઠતિ ૨ । તથા—કિમપિ તુ લોકસ્ય સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ
ભવતિ ૩ । તથા—લોકસ્યાઽસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવતિ ૪ । તથા કિમપિ સર્વલોકે
ભવતિ=સર્વલોકમવગાહ્ય તિષ્ઠતિ ।

અર્થ ભાવઃ—અનંતાનંતપરમાણુપ્રચયનિષ્પન્નમચિત્તમહાસ્કન્ધલક્ષણમ્ આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્યમેકં સમયં સકલલોકમવગાહતે । નતુ કથમયમચિત્તમહારક્કન્ધઃ સકલ-
લોકમવગાહતે ? હતિ ચેદાહ—યથા—સમુદ્ઘાતવર્તિકેવલી સકલલોકમવગાહતે
તથૈવાચિત્તમહાસ્કન્ધોઽપિ । તથાદિ—લોકમધ્યવ્યવસ્થિતઃ સમુદ્ઘાતવર્તિકેવલી
પ્રથમસમયે તિર્યગ્સંખ્યાતયોજનવિસ્તરં સંખ્યાતવિસ્તરં વા ઝઘ્વાધિસ્તુ ચતુર્દશર-

સંખ્યાત ભાગોં મેં તથા કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય, લોક કે અસંખ્યાત
ભાગોં મેં ઓર કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોક મેં અવગાહિત
હોકર રહતા હૈ । જૈસે કિ અનંતાનંત પુદ્ગલ પરમાણુઓં કે સમૂહ સે
નિષ્પન્ન હુઆ અચિત્ત મહાસ્કન્ધ । યહ અચિત્ત મહા સ્કન્ધરૂપ આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય એક સમય મેં સકલ લોક કો અવગાહિત કરતા રહતા હૈ ।

શંકા—યહ અચિત્ત મહારક્કન્ધ સકલલોક મેં કેસે અવગાહિત
હો જાતા હૈ ?

ઉત્તર—જૈસે સમુદ્ઘાતવર્તી કેવલી સકલ લોક મેં સમા જાતે હૈ—
ઉસી પ્રકાર સે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સી સકલ લોક મેં અવગાહિત હો-
જાતા હૈ— સમા જાતા હૈ । અર્થાત્ લોક કે મધ્ય મેં વ્યવસ્થિત હુઆ
કેવલી જય સમુદ્ઘાત કરતા હૈ તો વહ પ્રથમ સમય મેં આત્મા કે પ્રદેશોં
કો દણ્ડાકાર રૂપ મેં પરિણમાતા હૈ । યહ દણ્ડાકાર રૂપ પરિણમન

છે, તથા કેઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે,
કેઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે, અને કેઈ
એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોકમાં અવગાહિત થઈને રહે છે જેમ કે
અનંતાનંત પુદ્ગલ પરમાણુઓના સમૂહમાંથી નિષ્પન્ન થયેલા અચિત્ત
મહાસ્કન્ધ તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ રૂપ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક સમયમાં સકળ
લોકને અવગાહિત કરી શકે છે.

પ્રશ્ન—તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સકલ લોકમાં કેવી રીતે અવગાહિત થઈ જાય છે.

ઉત્તર—જેવી રીતે સમુદ્ઘાતવર્તી કેવલી સકળ લોકમાં સમાઈ જાય છે—
અવગાહિત થઈ જાય છે, એજ પ્રમાણે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ પણ સકલ લોકમાં
અવગાહિત થઈ જાય છે—સમાઈ જાય છે એટલે કે લોકની મધ્યમાં રહેલા
કેવળી બ્યારે સમુદ્ઘાત કરે છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે આત્મપ્રદેશે ને દંડાકાર

અનુયોગશ્ચન્દ્રિકાટોકા સ્વ ૮૪ સ્ત્રોતનિકૃપણમ્

૩૨૧

જ્ઞાયતં વિશ્રસાપરિણામેન વૃત્તં ઢણં કરોતિ, દ્વિતીયે કપાટં કરોતિ, તૃતીયે મન્થાનં કરોતિ, ચતુર્થેઽન્તરાલપૂરણેન સકલલોકવ્યાપ્તિં કરોતિ, પચ્ચમેઽન્તરાણિ સંહરતિ, ષષ્ઠે મન્થાનં, સપ્તમે કપાટમ્, અષ્ટમે પુનર્દણં સંહરતિ । તતઃ સ્થાવસ્થાં પ્રતિપદ્યતે । એવમચિત્તમહાસ્કન્ધોઽપિ સમયમેકં સકલલોકમવગાહતે इति ।

તથા-નાનાદ્રવ્યાણિ=આનુપૂર્વીપરિણામયુક્તાનિ અનન્તાનિ દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય= આશ્રિત્ય દ્રવ્યાણિ નિયમાત્=નિયમતઃ સર્વલોકે ભવન્તિ=સકલલોકમવગાહન્તે ।

उनका तिर्यक् में संख्यात योजन तक अथवा असंख्यात योजन तक विस्तृत होता है । तथा ऊर्ध्व और नीचे में १४राजु प्रमाण लंबा होता है । आत्मप्रदेशों का यह दण्डाकार रूप परिणामन स्वाभाविक होता है द्वितीय समय में उनके वे आत्मप्रदेश कपाट के आकार में परिणम जाते हैं । तृतीय समय में मन्थान रूप हो जाते हैं । और चौथे समय में अन्तराल की पूर्ति कर वे सकल लोक में व्याप्त होजाते हैं पांचवें समय में अंतरालों को संकुचित कर छठवें समय में मन्थान का सातवें समय में कपाट का आठवें समय में दण्ड का संकोच कर अपने आप में समाजाते हैं- पूर्वावस्थापन्न हो जाते हैं । इसी प्रकार अचित्त महा-स्कन्ध भी एक समय में सकल लोक को व्याप्त कर लेता है । (जाणाद्ववाहं पञ्चन नियमा सव्वलोप होज्जा) तथा आनुपूर्वी परिणाम युक्त अनंतद्रव्यों को आश्रित करके वे द्रव्य नियम से सर्वलोक में

રૂપે પરિણમીએ છે. તેમનું આ ઢંડાકાર રૂપ પરિણમન તિર્યક લોકમાં સંખ્યાત યોજન સુધી અથવા અસંખ્યાત યોજન સુધી વિસ્તૃત થયેલું હોય છે, તથા ઉર્ધ્વ અને અધોભાગમાં ૧૪ ચૌડ રાજુપ્રમાણ લાંબું હોય છે. આત્મ-પ્રદેશોનું આ ઢંડાકાર રૂપ પરિણમન સ્વાભાવિક હોય છે. બીજા સમયમાં તેમના તે આત્મપ્રદેશો કપાટના આકારમાં પરિણમન પામે છે ત્રીજા સમયમાં મંથાનરૂપ થઈ જાય છે, અને ચોથા સમયમાં અન્તરાલની પૂર્તિ કરીને સકળ લોકમાં વ્યાપ્ત થઈ જાય છે. પાંચમા સમયમાં અંતરાલોને સંકુચિત કરીને છઠ્ઠા સમયમાં મંથાનને સંકુચિત કરીને, સાતમાં સમયમાં કપાટને અને આઠમાં સમયમાં ઢંડને સંકુચિત કરીને પોતાના શરીરમાં જ સમાઈ જાય છે એટલે કે પૂર્વાવસ્થામાં આવી જાય છે એજ પ્રમાણે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ પણ એક સમયમાં સકળ લોકને વ્યાપ્ત કરી લે છે. (જાણાદ્વવાહં પજ્જન નિયમા સવ્વલોપ હોજ્જા) તથા આનુપૂર્વી પરિણામ યુક્ત અનંત દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે દ્રવ્યો સમસ્ત લોકમાં અવગાહિત છે. આ કથનનું

અર્થે માન:-સર્વલોકાકાશસ્ય નાસ્તિ કોઽપિ પ્રદેશો યત્ર સૂક્ષ્મપરિણામપરિણતાચિ અનન્તાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ ન સન્તિ, કિન્તુ સર્વત્ર સન્તિ। નસ્ત્વેતાનિ નાનાદ્રવ્યાણિ સંઘયેયતમાદિપ્રદેશેષુ સન્તીતિ। एवं नैगमव्यवहारसम्मताऽनानु-पूर्ववक्तव्यकद्रव्यविषयेऽपि पञ्च पञ्च प्रश्नाः। उत्तरस्त्वेवं विज्ञेय:-एकं द्रव्य माश्रित्यानानुपूर्वीद्रव्यम् अवक्तव्यकद्रव्यं च लोकस्य असंख्येयतमभागे भवति,

અવગાહિત હૈં । તાત્પર્યે- હમકા યહ હૈ-કિ સમસ્ત લોકાકાશ કા કોઈ બી પ્રદેશ એમા નહીં હૈ કિ જહાં પર સૂક્ષ્મ પરિણામ સે પરિણત હુએ અનંત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ન હો । અર્થાત્ લોક મેં સર્વત્ર આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ । યે આનુપૂર્વી અનેક દ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાતમે અથવા અસંખ્યાતમે ભાગ મેં નહીં હૈ । इसी प्रकार से नैगम और व्यवहारनय संमत अनानु-पूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय में भी पांच २ प्रश्न होते हैं जो (नैगमव्यवहाराणं अणाणुपुट्वी दब्बाइ किं लोयस्स संखिज्जइ भागे, होज्जा जाव सव्वलोए वा होज्जा?) इन पदों द्वारा व्यक्त किये गये हैं । इन प्रश्नों का उत्तर भी (एगं दब्बं पडुच्च नो संखेज्जइ भागे, होज्जा, असंखिज्जइ भागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो सव्वलोए होज्जा) इनमुत्रांशों द्वारा इसप्रकार दिया गया है-कि एक द्रव्य को आश्रित करके अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्यक द्रव्य लोक के असंख्यातमे भाग में अवगहित

તાત્પર્ય એ છે કે સમસ્ત લોકાકાશનો કોઈ પણ પ્રદેશ એવો નથી કે જ્યાં સૂક્ષ્મ પરિણામથી પરિણત થયેલાં અનંત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો ન હોય એટલે કે લોકમાં સર્વત્ર આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ છે તે અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો લોકના સંખ્યાતમાં અથવા અસંખ્યાતમાં ભાગમાં નથી પણ સમસ્ત લોકમાં છે. એમ સમજવું એજ પ્રમાણે નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ પાંચ-પાંચ પ્રશ્નો પૂછી શકાય છે. જે પ્રશ્નો નીચેના સૂત્ર દ્વારા પૂછવામાં આવ્યા છે. (નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુટ્વી દબ્બાઈ કિં લોયસ્સ સંખિજ્જઈભાગે હોજ્જા, જાવ સવ્વલોએ વા હોજ્જા?) નૈગમ અને વ્યવહાર નય સંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું? લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં, કે સંખ્યાત ભાગોમાં કે અસંખ્યાત ભાગોમાં કે સમસ્ત લોકમાં અવગાહિત થઈને રહે છે?

ઉત્તર-“एगं दब्बं पडुच्च नो संखेज्जइ भागे, होज्जा, असंखेज्जइ भागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा. नो सव्वलोए होज्जा” जे ऐक द्रव्यनी अपेक्षाये विचार करवामा आवे तो अना-नुपूर्वी द्रव्य અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ અવ-ગાહિત થઈને રહે છે, સંખ્યાતમાં ભાગમાં, સંખ્યાત ભાગોમાં, અસંખ્યાત

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ८४ क्षेत्रनिरूपणम्

३५३

न तु संख्येयतमभागे । अनानुपूर्वीद्रव्यं हि परमाणुरुच्यते स चैकैकाकाशप्रदेशा-
वगाढ एव भवति, अवक्तव्यद्रव्यं च द्रव्यणुकस्कन्धः, स चैकप्रदेशावगाढो द्वि-
प्रदेशावगाढो वा स्यादित्यनयोरसंख्येयभागवृत्तित्वमेव । नानाद्रव्याणि प्रतीत्य
नियमात्सर्वलोकावगाहना पूर्ववद् बोध्या ॥ सू० ८४ ॥

होकर रहते हैं । संख्यातवे' भाग में नहीं । परमाणु अनानुपूर्वी द्रव्य
है । वह आकाश के एकप्रदेश में ही अवगाहित- होकर रहता है ।
क्यों कि वह स्वयं एकप्रदेशी है । द्रव्यणुक जो स्कन्ध है । वह अवक्त-
व्यक द्रव्य है । वह लोकाकाश के एक प्रदेश में भी रहता है और दो
प्रदेश में भी रहता है । इस प्रकार इन दोनों की वृत्ति लोक के असं-
ख्यातवे' भाग में ही है, नाना अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों को
आश्रित करके नाना अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्यक नियम से समस्त
लोकाकाश में रहते हैं । क्यों कि आकाश का कोई प्रदेश ऐसा नहीं है
कि जहां पर इनका सद्भाव न हो ।

भावार्थ-सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा आनुपूर्वी आदि द्रव्यों के रहने के
विषय में किये गये पांच प्रश्नों का उत्तर एक और नाना द्रव्यों को लेकर
दिया गया है-ये पांच प्रश्न इस प्रकार से हैं-१ अनानुपूर्वी द्रव्य क्या
लोक के संख्यातवे' भाग में रहते हैं ? २ या असंख्यातवे' भाग में
रहते हैं ३ या लोक के संख्यात भागों में रहते हैं ? या ४ असंख्यात

भागों में के सर्वलोकों में अवगाहित यद्यपि रहता नही परमाणु अनानुपूर्वी
द्रव्यरूप है, ते आकाशना एक प्रदेशों में अवगाहित यद्यपि रहे है न
अणुवाणो के स्कन्ध है ते अवक्तव्यक द्रव्यरूप है, ते लोकाकाशना एक
प्रदेशों में पणु रहे है अने के प्रदेशों में पणु रहे है आ सीते ते अनेनी
अवगाहना लोकना असंख्यातभां भागों में है, विविध अनानुपूर्वी द्रव्यो
अने अवक्तव्यक द्रव्योनी अपेक्षाये विचार करवाभां आवे तो तेयो समस्त
लोकाकाशों में रहे है, ओम समस्तुं नेछये, कारण के आकाशने ठाई पणु
प्रदेश ओयो नही के जयां तेमने सद्भाव न होय.

भावार्थ-सूत्रकारे आ सूत्र द्वारा आनुपूर्वी आदि द्रव्योंनी अवगाहना
विषे पूछवाभां आवेला पांच प्रश्नोना उत्तर एक द्रव्य अने अनेक द्रव्योंने
अनुलक्षणे आय्ये है ते पांच प्रश्नो नीचे प्रमाणे छे-(१) आनुपूर्वी
द्रव्यो शुं लोकना संख्यातभां भागों में रहे है ? अथवा (२) असंख्यातभां
अ० ४५

ભાગોં મેં રહતે હૈં ૪ યા સમસ્ત લોક મેં રહતે હૈં ? ૫

ઉત્તર-પુદ્ગલ દ્રવ્યના આધાર યથાપિ સામાન્ય રૂપ સે લોકાકાશ હી નિયત હૈ તથાપિ-વિશેષ રૂપ સે ભિન્ન ૨ પુદ્ગલ દ્રવ્ય ને આધાર ક્ષેત્ર ને પરિમાણ મેં અન્તર હોતા હૈ, વહી અન્તર હસ ઉત્તર મેં પ્રકટ કિયા ગયા હૈ- કયોંકિ ભિન્ન ૨ વ્યક્તિ હોતે હુપ બી પુદ્ગલોં ને પરિમાણ મેં વિવિધતા હૈ એક રૂપતા નહોં હૈ । હસલિયે યહાં ઉનકે આધાર ના પરિમાણ અનેક રૂપ સે કહા ગયા હૈ-સારાંશ યહ હૈ કિ આધાર ભૂત ક્ષેત્ર ને પ્રદેશોં ની સંખ્યા આધેયભૂત પુદ્ગલ દ્રવ્ય ને પરમાણુઓં ની સંખ્યા સે ન્યૂન યા ઉસકે બરાબર હો સકતી હૈ અધિક નહોં । હસલિયે એક પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વો દ્રવ્ય આકાશ ને એકહી પ્રદેશ મેં સ્થિત રહતા હૈ । પર દ્રવ્યનુક એક પ્રદેશ મેં બી ઠહર સકતા હૈ ઓર દો પ્રદેશ મેં બી । હસી પ્રકાર ઉત્તરોત્તર સંખ્યા બઢતે બઢતે ઘણુક, ચતુરણુક, યાવત્ સંખ્યાતાણુક સ્કન્ધ એક પ્રદેશ, દો પ્રદેશ, ત્રીન પ્રદેશ યાવત્ સંખ્યાત પ્રદેશ ક્ષેત્ર મેં ઠહર સકતે હૈં । સંખ્યાતાણુ દ્રવ્ય ની સ્થિતિ ને લિયે અસંખ્યાત પ્રદેશ વાલે ક્ષેત્ર ની આવશ્યકતા નહોં-પડતી ।

ભાગમાં રહે છે ? (૩) અથવા શું લોકના સંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે ? (૪) અથવા શું લોકના અસંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે ? (૫) અથવા શું સમસ્ત લોકમાં રહે છે.

ઉત્તર-પુદ્ગલ દ્રવ્યોના આધાર ને કે સામાન્ય રૂપે લોકાકાશ ન નિયત છે, છતાં પણ વિશેષ રૂપે ભિન્ન ભિન્ન પુદ્ગલદ્રવ્યના આધારક્ષેત્રના પરિમાણમાં અન્તર હોય છે, એજ અન્તર આ ઉત્તરમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે-કારણ કે ભિન્ન ભિન્ન પદાર્થ હોવા છતાં પણ પુદ્ગલોના પરિમાણમાં વિવિધતા છે, એકરૂપતા નથી તેથી અહીં તેમના આધારનું પરિમાણ (પ્રમાણ) અનેક રૂપે કહેવામાં આવ્યું છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે આધારભૂત ક્ષેત્રના પ્રદેશોની સંખ્યા આધેયભૂત પુદ્ગલદ્રવ્યના પરમાણુઓની સંખ્યા કરતાં ન્યૂન અથવા તેના જેટલી જ હોઈ શકે છે, પણ અધિક હોઈ શકતી નથી તેથી એક પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વો દ્રવ્ય આકાશના એક જ પ્રદેશમાં રહે છે, પણ બે અણુવાળું અવકાશીયક દ્રવ્ય આકાશના એક પ્રદેશમાં પણ રહી શકે છે અને બે પ્રદેશમાં પણ રહી શકે છે. આ રીતે ઉત્તરોત્તર પરમાણુઓની અથવા પ્રદેશોની વૃદ્ધિ થતાં થતાં ત્રણઅણુવાળા, ચાર અણુવાળા યાવત્ સંખ્યાતાણુક સ્કન્ધ એક પ્રદેશમાં, બે પ્રદેશમાં, ત્રણ પ્રદેશમાં યાવત્ સંખ્યાત પ્રદેશ રૂપ ક્ષેત્રમાં રહી શકે છે. સંખ્યાત અણુવાળા

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ८५ स्पर्शनाद्वारनिरूपणम्

३५५

सम्पत्ति स्पर्शनाद्वाररूपं चतुर्थभेदमाह-

मूलम्-नेगमववहाराणं आणुपुर्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखे-
ज्जइभागं फुसंति? असंखेज्जइभागं फुसंति? संखेज्जे भागे
फुसंति? असंखेज्जे भागे फुसंति? सव्वलोगं फुसंति?। एगं
दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइभागं वा फुसइ जाव सव्वलोगं वा
फुसइ। णाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोगं फुसंति। नेगम-
ववहाराणं अणानुपुर्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखिज्जइभागं फुसंति
असंख्याताणुक स्कंध एक प्रदेश से लेकर अधिक से अधिक अपने बरा-
बर की असंख्यात संख्यावाले प्रदेशों के क्षेत्र में ठहर सकता है।
अनंताणुक और अनंतानंताणुक स्कंध भी एक प्रदेश, दो प्रदेश इत्यादि
क्रम से बढ़ते २ संख्यात प्रदेश और असंख्यात प्रदेश वाले क्षेत्र में
ठहर सकते हैं उनकी स्थिति के लिये अनन्त प्रदेशात्मक क्षेत्र की जरू-
रत नहीं है। पुगदल द्रव्य का सबसे बड़ा स्कंध जिसे अचित्त महास्कंध
कहते हैं और जो अनंतानंत अणुओं का बना हुआ होता है वह भी
असंख्यात प्रदेश लोकाकाश में ही ठहर जाता है। इस प्रकार आनु-
पूर्वी आदि एक द्रव्य की अपेक्षा इस कथन को हृदय में धारण करके
इस सूत्र को लगाना चाहिये। नाना द्रव्य की अपेक्षा इन समस्त द्रव्यों
का अवगाहन समस्त लोकाकाश में है ॥ सू० ८४ ॥

द्रव्यने रडेवा भाटे असंख्यात प्रदेशोवाणा क्षेत्रनी जर पडती नथी असं-
ख्यात अणुवाणो स्कंध ओक प्रदेशथी लधने वधारेमां वधारे पोताना नेटली
असंख्यात संख्यावाणा प्रदेशोना क्षेत्रमां रडी शके छे अनंत अणुवाणो
अथवा अनंतानंत अणुवाणो स्कंध पणु ओकथी लधने संख्यात पर्यन्तना
प्रदेशवाणा अने असंख्यात प्रदेशोवाणा क्षेत्रमां रडी शके छे, तेने रडेवाने
भाटे अनंत प्रदेशोवाणा क्षेत्रनी आवश्यकता रडेती नथी पुद्गल द्रव्यने
सौधी मोटे स्कंध के जेने अचित्त महास्कंध छे छे अने जे अनंतानंत
अणुओने अनेलो छे छे, ते पणु लोकाकाशना असंख्यात प्रदेशोमां
रडी शके छे, आ प्रमाणे अनानुपूर्वी आदि स्कंधद्रव्यनी अपेक्षाओ आ
कथनने हृदयमां धारण करीने आ सूत्रने अर्थ समजवे जेधओ विविध द्रव्योनी
अपेक्षाओ आ समस्त द्रव्योनु अवगाहन समस्त लोकाकाशमां छे ॥सू० ८४॥

३५६

अनुयोगद्वारसूत्रे

जाव सव्वलोगं फुसंति ? एगं दव्वं पडुच्च नो संखिज्जइ भागं फुसइ, असंखिज्जइ भागं फुसइ नो संखिज्जे भागे फुसइ, नो असंखिज्जे भागे फुसइ, नो सव्वलोयं फुसइ । नाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोयं फुसंति । एवं अवत्तव्वगदव्वाइं भाणियव्वाइं ॥सू० ८५॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीं द्रव्याणि लोकस्य किं संख्येयतमभागं स्पृशन्ति ? असंख्येयतमभागं स्पृशन्ति ? संख्येयान् भागान् स्पृशन्ति ? असंख्येयान् भागान् स्पृशन्ति ? सर्वलोकं स्पृशन्ति ? । एकं द्रव्यं प्रतीत्य लोकस्य संख्ये-

अब सूत्रकार स्पर्शनाद्वार नामक चतुर्थ भेद का कथन करते हैं—

“नैगमव्यवहाराणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(नैगमव्यवहाराणं आणुपुन्वी दव्वाइं लोगस्य किं संखेज्जइ भागं फुसंति ?) नैगमव्यवहारनय संमत अनेक आनुपूर्वीं द्रव्य क्या लोक के संख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं ? (असंखेज्जइ भागं फुसंति) या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं ? (संखेज्जे भागे फुसंति) या संख्यात भागों का स्पर्श करते हैं ? (असंखेज्जे भागे फुसंति) या असंख्यात भागों का स्पर्श करते हैं ? (सव्वलोगं फुसंति) समस्त लोक का स्पर्श करते हैं ?

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइ भागं वा फुसइ जाव सव्व लोगं वा फुसइ) त्रिअणुक् स्कंध से लेकर अनन्ताणु स्कंध

हवे सूत्रकार अनुगमना स्पर्शना नामना बोधा द्वारतुं निरूपणु करे छे—

“नैगमव्यवहाराणं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(नैगमव्यवहाराणं आणुपुन्वी दव्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइ भागं फुसंति ?) नैगम अने व्यवहार नयसंमत अनेक आनुपूर्वीं द्रव्ये शुद्धादिना सांख्यातभां लागेना स्पर्श करे छे ? (असंखेज्जइ भागं फुसंति ?) के असंख्यातभां लागेना स्पर्श करे छे ? (संखेज्जे भागे फुसंति ?) के सांख्यात भागेना स्पर्श करे छे ? (असंखेज्जे भागे फुसंति ?) के असंख्यात भागेना स्पर्श करे छे ? (सव्वलोगं फुसंति ?) के समस्त लोकना स्पर्श करे छे ?

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइ भागं वा फुसइ जाव सव्वलोगं वा फुसइ) त्रिअणुक् स्कंधी लईने अनन्ताणु स्कंध पर्यन्तना आनु-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૫ સ્પર્શનાદ્વારનિરૂપણમ્

૩૬૭

યતમભાગં વા સ્પૃશતિ યાવત્ સર્વલોકં વા સ્પૃશતિ । નાના દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિય-
માત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ । નૈગમવ્યવહારધોરનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યે-
યતમભાગં સ્પૃશન્તિ । યાવત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય નો સંખ્યેય-
તમભાગં સ્પૃશતિ, અસંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશતિ, નો સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ સ્પૃશતિ, નો
અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ સ્પૃશતિ, નો સર્વલોકં સ્પૃશતિ । નાના દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય
નિયમાત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ । એવમ્ અવક્તવ્યક દ્રવ્યાણિ મણિતવ્યાનિ ॥૬૦૮૫॥

તક કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં સે સામાન્યતઃ કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-
લોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ કી કોઈ એક લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કી
કોઈ એક સંખ્યાત ભાગોં કી કોઈ એક અસંખ્યાત ભાગોં કી ઓર કોઈ
એક સર્વ લોક કી સ્પર્શના કરતે હૈં (જાણા દવ્વાઈં પહુચ્ચ નિયમા સવ્વ-
લોગં ફુસંતિ) તથા નના આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-અનન્ત આનુપૂર્વી પરિણામયુક્ત
દ્રવ્ય નિયમ સે સર્વલોક કી સ્પર્શના કરતે હૈં । (જેગમવવહારાણં અજા-
ણુપુચ્વી દવ્વાઈં લોગસ્સ કિં સંલેજ્જહ ભાગં ફુસંતિ, જાવ સવ્વલોગં
ફુસંતિ ?) નૈગમ વ્યવહાર નય સંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં કોઈ
એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કયાલોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ કી સ્પર્શના કરતે હૈં ?

ઉત્તર- (એગં દવ્વં પહુચ્ચ નો સંલિજ્જહ ભાગં ફુસહ, અસંલિ
જ્જહ ભાગં ફુસહ નો સંલિજ્જે ભાગે ફુસહ, નો અસંલિજ્જે ભાગે
ફુસહ, નો સવ્વલોગં ફુસહ) એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લેકર અનાનુપૂર્વી

પૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
લોકના સંખ્યાત ભાગોને, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાત
ભાગોને અને કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોકને સ્પર્શ કરે છે.
(જાણા દવ્વાઈં પહુચ્ચ નિયમા સવ્વલોગં ફુસંતિ) તથા વિવિધ આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય-અનન્ત આનુપૂર્વી પરિણામયુક્ત દ્રવ્ય નિયમથી સર્વલોકની સ્પર્શના કરે છે.

(જેગમવવહારાણં અજાણુપુચ્વી દવ્વાઈં લોગસ્સ કિં સંલેજ્જહ ભાગં
ફુસંતિ, જાવ સવ્વલોગં ફુસંતિ ?) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંનું કોઈ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય શું લોકના સંખ્યાતમાં
ભાગની કે અસંખ્યાતમાં ભાગની, કે સંખ્યાત ભાગોની, કે અસંખ્યાત
ભાગોની કે સમસ્ત લોકની સ્પર્શના કરે છે ?

ઉત્તર- (એગં દવ્વં પહુચ્ચ નો સંલિજ્જહ ભાગં ફુસહ, અસંલિજ્જહ
ભાગં ફુસહ, નો સંલિજ્જે ભાગે ફુસહ, નો અસંલિજ્જે ભાગે ફુસહ, નો સવ્વ-

ટીકા—‘નેગમવ્વહારાણં’ इत्यादि ।

ક્ષેત્રદ્વારવત્ અગ્રાઽપિ પ્રશ્નોત્તરપ્રકારો बोध्यः । ક્ષેત્રસ્પર્શનયો સ્ત્વયં विशेषः । પરમાણુદ્રવ્યસ્યાવગાહના-एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे भवति तत् क्षेत्रम्, स्पर्शना तु परमाणुद्रव्यस्य सप्तसु प्रदेशेषु, षड् दिग्बन्धवस्थितान् षट्प्रदेशान् यत्र च स्वाव-गाहना तमपि प्रदेशं स्पृशति परमाणुद्रव्यम् ।

દ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાત ભાગ કી સ્પર્શનતા નહીં કરતા હૈ । કિન્તુ અસં-
ખ્યાત ભાગ કી હી સ્પર્શના કરતા હૈ । લોક કે સંખ્યાત ભાગોં કી
વહ સ્પર્શના નહીં કરતા હૈ, અસંખ્યાત ભાગોં કી વહ સ્પર્શના નહીં
કરતા હૈ ઓર ન વહ સર્વલોક કી સ્પર્શના કરતા હૈ । (નાણા દ્રવ્વાઈ
પઙ્કુચ્ચ નિયમા સર્વલોયં ફુસંતિ) નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા વે અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય નિયમતઃ સમસ્ત લોક કી સ્પર્શના કરતે હૈ । (एवं अवस्त-
व्यवद्वाहं भाणियद्वाहं) હસી પ્રકાર સે નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે
વિષય મેં બી જાનના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ- ક્ષેત્રદ્વાર કી તરહ યહાં પર બી પ્રશ્નોત્તર કા પ્રકાર
જાનના ચાહિયે । ક્ષેત્ર કે સ્પર્શન મેં યહ ભેદ હૈ કિ પરમાણુદ્રવ્ય કી જો
અવગાહના એક આકાશ પ્રદેશ મેં હોતી હૈ વહ ક્ષેત્ર હૈ, તથા પરમાણુ
કી જો નિવાસસ્થાન રૂપ આકાશ કે ચારોં ઓર કે પ્રદેશોં કો છૂના
હોતા હૈ વહ સ્પર્શના હૈ યહ ઉત્કૃષ્ટ સ્પર્શ-છૂના પરમાણુ કા આકાશ

ભોગં ફુસદ્) એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો
આ પ્રમાણે કથન સમજવું-એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં
ભાગની સ્પર્શના કરતું નથી, સંખ્યાત ભાગોની સ્પર્શના પણ કરતું નથી,
અસંખ્યાત ભાગોની સ્પર્શના પણ કરતું નથી, અને સમસ્ત લોકની પણ
સ્પર્શના કરતું નથી, પણ અસંખ્યાતમાં ભાગની જ સ્પર્શના કરે છે.
(નાણાદ્રવ્વાઈ પઙ્કુચ્ચ નિયમા સર્વલોયં ફુસંતિ) વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ
વિચાર કરવામાં આવે તો તે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો નિયમથી જ સમસ્ત લોકની
સ્પર્શના કરે છે. (एवं अवस्तव्यवद्वाहं भाणियद्वाहं) એજ પ્રમાણે અવ-
કતબ્ધક દ્રવ્યોની સ્પર્શના વિષે પણ સમજવું.

ભાવાર્થ-ક્ષેત્રદ્વારના જેવા જ અહીં પણ પ્રશ્નોત્તરના પ્રકાર સમજવા
ક્ષેત્ર અને સ્પર્શનમાં એ ભેદ છે કે પરમાણુદ્રવ્યની અવગાહના જે એક
આકાશપ્રદેશમાં થાય છે તે ક્ષેત્રરૂપ છે, તથા પરમાણુ વડે તેના નિવાસસ્થાન
રૂપ આકાશના ચારે તરફના પ્રદેશોનો જે સ્પર્શ થાય છે તેનું નામ સ્પર્શના
છે. પરમાણુનો તે ઉત્કૃષ્ટ સ્પર્શ આકાશના સાત પ્રદેશોમાં થાય છે. તે સાત

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૫ સ્પર્શનાસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૩૬૬

યતુ સૌગતાઃ-પરમાણુદ્રવ્યમાદિમધ્યાન્ત્યાદિવિભાગરહિતં નિરંશમેકસ્વરૂપ-
મિચ્યતે તસ્ય પરમાણુદ્રવ્યસ્ય પદ્ધતિક્સ્પર્શનાઽભ્યુપગમે તદેકત્વસિદ્ધાન્તો
નોપપદ્યતે-યદિ યેનૈવ સ્વરૂપેણ પરમાણુઃ પૂર્વાઘન્યતરદિશયા સમ્બદ્ધસ્તેનૈવાન્ય-
દિગ્ભિરિત્યુચ્યતે, તર્હિ-અયં પૂર્વદિકસમ્બદ્ધઃ, અયં ચાપરદિકસમ્બદ્ધ ઇત્યાદિ
વિમાગો ન સ્યાત્, એકસ્વરૂપત્વાત્, યદિ વિભાગાભાવ એક ઇષ્ટ ઇત્યુચ્યતે, તર્હિ

કે સાત પ્રદેશોં મેં હોતા હૈ ચારોં દિશાઓં કે ચાર પ્રદેશ ઓર ઝપર
નીચે કે દો એં જહાં હસકી અપની અવગાહના હૈ એક વહ પ્રદેશ હસ
પ્રકાર યે સાત પ્રદેશ હૈ । ‘હસ સ્પર્શના કે વિષય મેં જો બૌદ્ધોં કા
એસા કહના હૈ કિ પરમાણુ દ્રવ્ય તો આદિ મધ્ય, ઓર અન્ત આદિ કે
વિભાગ સે નિરંશ એક રૂપ હૈ । ફિર વહ છહ દિશાઓં કો સ્પર્શ કરતા
હૈ, એસા સ્વીકાર કેસે કિયા જા સકતા હૈ? યદિ એસા સ્વીકાર કિયા જાવે
તો હસમેં એકત્વ કા સિદ્ધાન્ત ઘટિત નહીં હો સકતા હૈ ક્યોં કિ જિસ-
સ્વરૂપ સે પરમાણુ પૂર્વઆદિ કિસી એક દિશા સે સમ્બધ હૈ યદિ વહ
હસી સ્વરૂપ સે અન્ય દિશાઓં સે બી સમ્બદ્ધ હૈ તો હસ માન્યતા મેં
ફિર એસા વિભાગ નહીં બન સકતા કિ યહ પરમાણુ કા પૂર્વ દિગ્ સબદ્ધ
પ્રદેશ હૈ યહ અપર દિક્સંબદ્ધ પ્રદેશ હૈ । ક્યોં કિ વહ એકરૂપ સ્વીકાર
કિયા ગયા હૈ । અતઃ યહ માનના ચાહિયે કિ પરમાણુ જબ સસ પ્રદેશોં
કો છૂતા હૈ તો હસમેં વિવિધ રૂપતા હોને સે વહ એક રૂપ નહીં હો

પ્રદેશ નીચે પ્રમાણે છે-ચારે દિશાઓના ચાર પ્રદેશ, ઉપરનો એક પ્રદેશ, અને
નીચેનો એક પ્રદેશ અને બ્યાં તેની પોતાની અવગાહના છે તે એક પ્રદેશ-
આ રીતે તે વધારેમાં વધારે સાત આકાશપ્રદેશોનો સ્પર્શ કરે છે. આ
સ્પર્શના વિષયમાં બૌદ્ધોની એવી જો માન્યતા છે કે પરમાણુ દ્રવ્ય તો આદિ,
મધ્ય અને અન્ત આદિના વિભાગથી રહિત નિરંશ (અંશ રહિત)-એકરૂપ
જ છે તો પછી એવો સ્વીકાર કેવી રીતે કરી શકાય કે તે છ દિશાઓનો
સ્પર્શ કરે છે? જો એવો સિદ્ધાંત સ્વીકારવામાં આવે તો તેમાં એકત્વનો
સિદ્ધાંત ઘટિત થઈ શકતો નથી, કારણ કે સ્વરૂપે પરમાણુ પૂર્વાદિ કોઈ એક
દિશામાં સંબદ્ધ છે, એવાં જ સ્વરૂપે જો તે અન્ય દિશાઓ સાથે પણ
સંબધ હોય, તો આ માન્યતામાં એવો વિભાગ સંભવી શકતો નથી કે
પરમાણુનો આ પ્રદેશ પૂર્વદિગ્ભાગ સાથે સંબદ્ધ છે અને આ પ્રદેશ પશ્ચિમ
દિગ્ભાગ સાથે સંબદ્ધ છે, કારણ કે તેને તો નિરંશ રૂપે (એક રૂપે) સ્વીકાર-
વામાં આવ્યો છે. તેથી એવું માનવું જોઈએ કે પરમાણુ સાત પ્રદેશોનો
સ્પર્શ કરતું હોવાથી તેમાં વિવિધ રૂપતા હોવાથી તે એકરૂપ હોઈ શકતું

૩૧૦

અનુયોગદ્વારસ્ત્રોત્ર

પદ્ધતિકસમ્બન્ધકથનં વિરુદ્ધયતે, યદિ યેન સ્વરૂપેણ પરમાણુઃ પૂર્વાધન્યતરદિશયા સમ્બદ્ધસ્તદ્વિભિન્નસ્વરૂપેણાપરદિગ્ધિઃ સંબદ્ધયતે ઇત્યુચ્યતે તર્હિ પરમાણોઃ પદ્ સ્વરૂપાપન્ન્યા એકત્વં હીયતે, ઇતિ વદન્તિ તન્ન સમ્યક્.

પરમાણુદ્રવ્યતયા નિરંશ એવ, એક એવ, તથાપિ પરમાણોઃ પરિણામશક્તિ-રચિન્ત્યાઽસ્તીતિ તથાવિધપરિણામસદ્ભાવાદ્ દિક્પદ્ધકેન સદ્ નૈત્તત્તર્યેણાવસ્થાનં સંભવતીતિ તસ્ય સપ્તસુ પ્રદેશેષુ સ્પર્શના કથનં નાનુપપન્નમિતિ ॥ સૂ૦ ૮૫ ॥

સકતા છે. યદિ એક રૂપના માનને કે ઝિયે વિવિધ રૂપતારૂપ વિભાગ કા અભાવ હી હૃષ્ટ રાખા જાવે તો ફિર ઉસમેં પદ્ધતિક છ દિશાઓંકા સંબંધ કથન વિરુદ્ધ પડના છે. તાત્પર્યે હસકા યહ છે કિ પરમાણુ જિસ સ્વરૂપ સે પૂર્વ આદિ કિસી એક દિશા કે સાથ સંબદ્ધ છે ઉસકા વહ નિજરૂપ ભિન્ન છે ઓર અપર આદિ દિશાઓં કે સાથ સંબદ્ધ સ્વરૂપ ભિન્ન છે તો ફિર હસ પ્રકાર સ્વરૂપ મેં ભિન્નતા આને કે કારણ-છહ સ્વરૂપતા કી આપસિ કા પ્રસંગ હો જાને કે કારણ-ઉસમેં એકત્વ કી હીનતા હી આતી છે.

અતઃ બૌદ્ધોં કા એસા કથન ઠીક નહીં છે- ક્યોં કિ પરમાણુ દ્રવ્ય-રૂપ હોને કે કારણ નિરંશ હી છે એક હી છે ફિરભી પરમાણુ કી પરિમાણ શક્તિ અચિન્ત્ય છે હસકા કારણ ઉસ પ્રકાર કે પરિણામ કે સદ્ભાવ સે છહ દિશાઓં કે સાથ ઉસકા નિરંતર રૂપ અવસ્થાન સંભવિત છે. હસલિયે સાત પ્રદેશોં મેં સ્પર્શ ના કથન અઘટિત નહીં છે ॥ સૂ૦ ૮૫ ॥

નથી એ એકરૂપતા માનવાને માટે વિવિધ રૂપતા રૂપ વિભાગનો અભાવ જ ઇષ્ટ માનવામાં આવે, તો તેમાં છ દિશાઓ સાથે સંબદ્ધ હોવાનું કથન વિરુદ્ધ પડે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે પરમાણુ એ સ્વરૂપે પૂર્વોદિ કોઈ એક દિશાની સાથે સંબદ્ધ છે, તેનું તે નિજરૂપ ભિન્ન છે અને પશ્ચિમ આદિ દિશાઓની સાથે સંબદ્ધ સ્વરૂપ પણ ભિન્ન હોય તો આ રીતે સ્વરૂપમાં ભિન્નતા આવવાને કારણે છ પ્રકારના સ્વરૂપો માનવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે અને તે કારણે તેમાં એકત્વનો અભાવ આવવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે.

તેથી બૌદ્ધોની એ પ્રકારની માન્યતા સાચી નથી, કારણ કે પરમાણુ દ્રવ્ય રૂપ હોવાને કારણે નિરંશ જ છે-એક જ છે, છતાં પણ પરમાણુની પરિણામશક્તિ અચિન્ત્ય છે. તે કારણે તે પ્રકારના પરિણામના સદ્ભાવમાં છ દિશાઓની સાથે તેનું નિરંતર રૂપ અવસ્થાન સંભવિત છે. તેથી સાત દિશાઓમાં તેના સ્પર્શનું કથન અઘટિત (અનુચિત) નથી. ॥સૂ૦ ૮૫॥

સ્પર્શનાદ્વારમ્, રૂદાનોં પચ્ચમં કાલદ્વારમાદ-

મૂલમ્—નેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈં કાલઑ કૈવ-
ચ્ચિરં હોઈં? ઇગં દઢ્ઠ્ઠં પઢુચ્ચ જહ્ણણેણં ઇગં સમયં ઉક્કોસેણં
અસંસેજ્જં કાલં, ણાણાદઢ્ઠ્ઠાઈં પઢુચ્ચ ણિયમા સઢ્ઠ્ઠ્ઠા । અણા-
ણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈં અવત્તઢ્ઠ્ઠવગ દઢ્ઠ્ઠાઈં ચ ઇવંસેવ ભાણિયઢ્ઠ્ઠાઈં । સૂ. ૮૬ ।

જાયા—નેગમવવહારયોરાણુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ? ઇકં
દ્રવ્યં પ્રતીત્ય ઇધ્ધન્તેન ઇતં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંસેયેયં કાલમ્ । નાના દ્રવ્યાણિ
મહોત્થ નિયમાત્ સર્જાદા । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિઅવત્તઢ્ઠ્ઠવ્યક દ્રવ્યાણિ ચ ઇવમેવ
મણિતઢ્ઠ્ઠ્યાનિ ॥ ૪૦ ૮૬ ॥

સ્પર્શના દ્વાર કો કહ કર અચ સૂત્રકાર પાંચવેં કાલદ્વાર કા કથન
કરતે હૈં—“નેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(નેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈં) નેગમ ઓર વ્યવ-
હાર ઇન દો નય સંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (કાલઑ) કાલ કી અપેક્ષા સે
(કૈવચ્ચિરં) કિતને કાલ તક (હોઈ) આનુપૂર્વી રૂપ સે રહતે હૈં? (ઇગં
દઢ્ઠ્ઠં પઢુચ્ચ જહ્ણણેણં ઇગં સમયં)

ઉત્તર—આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઇક આનુપૂર્વી કી અપેક્ષા કો લેકર કમ
સે-કમ ઇક સમય ઓર (ઉક્કોસેણં અસંસેજ્જં કાલં) અધિક સે
અધિક અસંસેજ્જાત કાલ તક આનુપૂર્વી રૂપ સે રહતા હૈ । (ણાણા-
દઢ્ઠ્ઠાઈં પઢુચ્ચ ણિયમા સઢ્ઠ્ઠ્ઠા) તથા નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપે-

સ્પર્શનાદ્વારનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર અનુગમના પાંચમાં એક
૪૫ કાળદ્વારનું કથન કરે છે—

“નેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈં) નેગમ અને વ્યવહાર,
આ એ નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો (કાલઑ) કાળની અપેક્ષાએ (કૈવચ્ચિરં)
કેટલા કાળ સુધી (હોઈ) આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે ?

ઉત્તર—(ઇગં દઢ્ઠ્ઠં પઢુચ્ચ જહ્ણણેણં ઇગં સમયં) એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની
અપેક્ષાએ વિચારવામાં આવે તો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછા એક
સમય સુધી અને (ઉક્કોસેણં અસંસેજ્જં કાલં) વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળ
સુધી આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે, (ણાણાદઢ્ઠ્ઠાઈં પઢુચ્ચ ણિયમા સઢ્ઠ્ઠ્ઠા) તથા વિવિધ
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અનેક આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોની સ્થિતિ સર્વકાળની હોય છે આ કથનનો જાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે.

ટીકા—‘ જોગમવવહારાણં ’ ઇત્યાદિ—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ=કાલમાશ્રિત્ય ક્રિયચિરં=ક્રિયન્તં કાલં ભવન્તિ? । આનુપૂર્વીત્વપર્યાયેણ ક્રિયત્કાલમ્ અવતિષ્ઠન્તે? ઇતિ મણ્ડુરાશયઃ । સૂત્રે ‘હોઈ’ ઇત્યેકવચનમાર્પત્વાત્ ઉત્તરમાદ્—આનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય=આશ્રિત્ય જઘન્યત એકં સમયમવતિષ્ઠતે, રૂપકર્ષતઃ અસંખ્યેયં કાલ-મવતિષ્ઠતે । નાનાદ્રવ્યાણિ=બહુનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય=આશ્રિત્ય તુ નિયમત્ત્વેણ એવાં સર્વાદ્વા=સાર્વકાલિકી સ્થિતિર્ભવતિ । અયં માત્રઃ—પરમાણુદ્વયાદૌ અપરૈકાદિપરમાણુમીલને સતિ અર્પ્યં કિંચિદાનુપૂર્વીદ્રવ્યમુત્પદ્યતે, તતઃ સમયાદૃષ્વં પુનરપ્યે-ક્ષા લેકર અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી સ્થિતિ સાર્વકાલિકી હૈ તાત્પર્યં ઇસકા યહ હૈ કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ મેં રહને કા જો એક સમય રૂપ કાલ કહા ગયા હૈ, વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ કિ—પર-માણુદ્વય આદિ મેં દૂસરે એક આદિ પરમાણુઓં કે મિલને પર એક કોઈ અર્પ્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ બાદ મેં એક સમય કે અનન્તર ઉસમેં સે એક આદિ પરમાણુ કે છૂટ જાને પર વહ આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય ઉસ રૂપ સે અપગત (નષ્ટ) હો જાતા હૈ । ઇસલિયે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી, અપેક્ષા સે આનુપૂર્વી રૂપ મેં રહને કા કાલ જઘન્ય સે એક સમય કહા ગયા હૈ । ઓર જબ વહી એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અસંખ્યાત કાલ તક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ મેં રહકર એક આદિ પરમાણુ સે વિયુક્ત હોના હૈ તબ ઉસકી અવસ્થિતિકા ઉકૃષ્ટ સમય અસંખ્યાત કા કહા ગયા હૈ । અવસ્થિતિઠાલ કિસી બી એક

આનુપૂર્વી દ્રવ્યનેા આનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપે રહેવાનેા જે એક સમય રૂપ કાળ કહો છે તે આ પ્રકારે કહો છે—

પરમાણુ દ્વયણુઆદિમાં (જે પરમાણુમાં) કોઈ એક આદિ અન્ય પરમાણુ મળવાથી કોઈ એક અર્પ્ય દ્રવ્ય ઉત્પન્ન થઈ જાય છે ત્યાર બાદ એક સમય પછી તેમાંથી એક આદિ પરમાણુ વિયુક્ત (અલગ) થઈ જવાથી તે આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય તે રૂપમાંથી અપગત (નષ્ટ) થઈ જાય છે એટલે કે તે રૂપે રહેતું નથી તે કારણે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી રૂપે રહેવાનેા કાળ ઓછામાં ઓછો એક સમયનેા કહો છે. અને જ્યારે એજ એક આનુ-પૂર્વીદ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી આનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપે રહીને એક આદિ પર-માણુ રૂપે વિયુક્ત (અલગ) થઈ જાય છે ત્યારે તેની અવસ્થિતિનેા ઉકૃષ્ટ સમય અસંખ્યાત કાળનેા કહો છે. કોઈ પણ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યનેા અવ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૬ કાલદ્વારનિરૂપણમ્

૩૬૩

કાઘણી વિયુક્તે સતિ તદાનુપૂર્વીદ્રવ્યમપગતં ભવતિ, અતઃ એકમાનુપૂર્વીદ્રવ્યમધિકૃત્ય જઘન્યતઃ એકઃ સમયોઽવસ્થિતિકાલઃ । યદા તુ તદેવૈકમાનુપૂર્વીદ્રવ્યમસંસ્ખ્યાતકાલં તદ્ભાવેન સ્થિત્વાઽનન્તરોક્તસ્વરૂપેણ વિયુજ્યતે, તદા તસ્ય ઉત્કૃષ્ટતો ઽસંખ્યેયોઽવસ્થિતિકાલઃ, નત્વનન્તોઽવસ્થિતિકાલઃ, ઉત્કૃષ્ટાયા ધર્મિ પુદ્ગલસંયોગસ્થિતેરસંખ્યેયકાલત્વાત્ । બહુનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ આશ્રિત્ય તુ ણમાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં નિયમતઃ સર્વાદ્વા સ્થિતિર્બોધ્યા । યતો નાસ્તિ કથિત્તાદૃશઃ કાલો યત્ર કાલેઽયં લોક આનુપૂર્વીદ્રવ્યરહિતો ભવેદિતિ ।

આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા આનુપૂર્વીરૂપ મેં રહને કા કાલ અનન્ત નહીં હોતા હૈ । ક્યોંકિ ઉત્કૃષ્ટ મી પુદ્ગલ સંયોગસ્થિતિ અસંખ્યાત કાલ કી હી હોની હૈ । અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા તો ઇન આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી સ્થિતિ નિયમતઃ સર્વ કાલકી હૈ । ક્યોંકિ લોક મેં એસા કોઈ કાલ નહીં હૈ કિ જિસમેં યે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નહીં હોં । (અણાણુપુવ્વી દ્વ્વાહં અવસ્તવ્વગદ્વ્વાહં ચ એવં ચેવ માણિયવ્વાહં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યાં મેં મી જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ રૂપ કાલ એક દ્રવ્ય ઓર અનેક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા લેકર પૂર્વોક્ત રૂપસે હી જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ કોઈ એક પરમાણુ એક સમય તક અકેલા રહકર ઘાદ મેં કિસી દૂસરે પરમાણુ સે સંશ્લિષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસ-લિયે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે ડસ અનાનુપૂર્વી રૂપ એક દ્રવ્ય કા અવસ્થિતિ કાલ જઘન્ય સે એક સમય કા ઓર જબ ઘી એક પરમાણુ

સ્થિતિકાળ (આનુપૂર્વીં રૂપે રહેવાનો કાળ) અનંત હોતો નથી, કારણ કે ઉત્કૃષ્ટ પુદ્ગલસંયોગ સ્થિતિ પણ અપ્રાપ્યતા કાળની જ હોય છે. અનેક આનુપૂર્વીં દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તો તે આનુપૂર્વીં દ્રવ્યોની સ્થિતિ નિયમથી જ સર્વકાલીન હોય છે, કારણ કે હોડમાં એવો કોઈ કાળ નથી કે જ્યારે આનુપૂર્વીં દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ જ ન હોય.

(અણાણુપુવ્વીદ્વ્વાહં અવસ્તવ્વગદ્વ્વાહં ચ એવં ચેવ માણિયવ્વ) અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્યોમાં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં પણ એક દ્રવ્ય અને અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ પૂર્વોક્ત જઘન્ય કાળ અને ઉત્કૃષ્ટ કાળ સમજી લેવો. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે. કેઈ એક પરમાણુ એક સમય સુધી એકજ રહીને ત્યાર બાદ કેઈ બીજા પરમાણુ સાથે સંશ્લિષ્ટ થઈ જાય છે. તેથી એક અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્યનો અવસ્થિતિકાળ (અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્ય રૂપે રહેવાનો કાળ) ઓછામાં ઓછો એક સમયનો કહ્યો છે, અને જ્યારે એજ એક પરમાણુ

एवमेव—अनानुपूर्वीद्रव्याणि अवक्तव्यकद्रव्याणि च वक्तव्यानि । अनु-
पूर्वीद्रव्येषु अवक्तव्यद्रव्येषु च जघन्यत उत्कृष्टतश्चापि पूर्वोक्त एवावस्थानकालः ।

અર્થે ભાવઃ—કશ્ચિત્પરમાણુરેકં સમયમેકાકી સ્થિત્વા તતોડન્યેન પરમાણુવા
સંશ્લિષ્ટો ભવતિ । અતઃ એકમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમધિકૃત્ય જઘન્યત એકઃ સમયોડવસ્થિતિ-
કાલઃ । સ એવૈકઃ પરમાણુ યદા અસંખ્યાત કાલં તદ્વાલેન રિથત્વાડન્યેન પરમાણુવા
સંશ્લિષ્યતિ, તદા ઉત્કૃષ્ટતોડસંખ્યેયોડવસ્થિતિકાલો ભવતિ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્યા
તુ પૂર્વવદેવ સર્વોદ્ધા સ્થિતિર્બોધ્યા ।

પરમાણુદ્વયલક્ષણમવતઃવ્યકદ્રવ્યમપિ યદા સમયમેકં સંયુક્તં સ્થિત્વા તદ્દો
વિયુજ્યતે, તદવસ્થમેવ વા પુનરન્યેન પરમાણુના સંયુજ્યતે, તદા તસ્યાવક્તવ્યક
દ્રવ્યતયા, એકમયલક્ષણઃ કાલસ્તસ્ય જઘન્યતોડવસ્થિતિકાલો બોધ્યઃ । યદા તુ

અસંખ્યાત કાલ તક અકેલે રહને કી સ્થિતિ મેં રહકર યાદ મેં કિસી
દૂસરે પરમાણુ સે સંશ્લિષ્ટ હો જાતા હૈ તબ ઉસકા અવસ્થિતિકાલ
ઉત્કૃષ્ટ સે અસંખ્યાત કાલ માના જાતા હૈ નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા
સે इन अनानु पूर्वी द्रव्यों की अवस्थिति का समय सर्वकाल माना
गया है क्योंकि लोक में ऐसा कोईसामी समय नहीं है कि जिसमें
ये अनानुपूर्वी द्रव्य न हों । एक परमाणुरूप द्रवरूप अवक्तव्यक द्रव्य
भी जब एक समय तक संयुक्त रह कर फिर वियुक्त हो जाता है तब
उसका अवस्थिति काल जघन्य से एक समय माना गया है, अथवा
जब वह उसी स्थिति में एक समय तक रहते हुए किसी और दूसरे
परमाणु से संयुक्त हो जाता है तब उसका अवस्थितिकाल जघन्य से एक
समय का माना गया है । और जब वही अवक्तव्यक द्रव्य असंख्यात

અસંખ્યાત કાળ સુધી એકતું રહીને ત્યાર બાદ કોઈ બીજા પરમાણુની સાથે
સંશ્લિષ્ટ થઈ જાય છે, ત્યારે તેનો અવસ્થિતિ કાળ અધિકમાં અધિક અસં-
ખ્યાત કાળનો મનાય છે વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચારવામાં આવે તો
તે અનુપૂર્વી દ્રવ્યોનો અવસ્થિતિકાળ સર્વકાલીન માનવામાં આવ્યો છે,
કારણ કે લોકમાં એવો કોઈ સમય નથી કે જ્યારે આ અનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું
અસ્તિત્વ જ ન હોય.

એ પરમાણુ રૂપ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પણ જ્યારે એક સમય સુધી
સંયુક્ત રહીને ત્યાર બાદ વિલક્ત થઈ જાય છે, ત્યારે તેનો જઘન્ય અવસ્થિતિ
કાળ એક સમયનો માનવામાં આવે છે અથવા જ્યારે તે એજ સ્થિતિમાં
એક સમય સુધી રહીને ત્યાર બાદ કોઈ એક બીજા પરમાણુ સાથે સંશ્લિષ્ટ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૭ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૩૬૫

જ્યેષ્ઠાવક્તવ્યકદ્રવ્ય અસંખ્યાત કાલં તદ્વાવેન સ્થિત્વા વિઘટતે, તદવસ્થમેત્ત્વા પુનરન્યેન પરમાણુના સંશ્લિષ્યતિ, તદા ઉત્કૃષ્ટતો અવક્તવ્યકદ્રવ્યત્વા અસંખ્યાત-કાલસ્તદવસ્થિતિકાલો बोध्यः। नानाद्रव्याण्याश्रित्य तु पूर्ववत् सर्वादाऽव-स्थितिकालो बोध्यः ॥सू० ८६॥

સમ્પત્તિ ષષ્ઠમન્તરદ્વારમાહ—

મૂલમ્—જેગમવવહારાણં આણુપુર્વીદઘ્વાણં અંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ? એગં દઘ્વં પડુચ્ચ જહન્નેણં એગં સમયં ઉક્કોસેણં અણંતં કાલં, નાનાદઘ્વાઈં પડુચ્ચ ણત્થિ અંતરં। જેગમવવહારાણં અણાણુપુર્વીદઘ્વાણં અંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ? એગં દઘ્વં પડુચ્ચ જહણેણં એગં સમયં ઉક્કોસેણં અસંખેજં કાલં, નાનાદઘ્વાઈં પડુચ્ચ ણત્થિ અંતરં। જેગમવવહારાણં અવત્તગ-

કાલ તક તદ્વાવ સે સ્થિત રહકર ફિર વિઘટિત હો જાતા હૈ, અથવા જ્ય વહ ઉસી સ્થિતિ મેં અસંખ્યાત કાલ તક રહતા હુઆ બાદ મેં કિસી દૂસરે પરમાણુ સે સંશ્લિષ્ટ હો જાતા હૈ તવ ઉત્કૃષ્ટ સે ઉત્કા અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ સે અવસ્થિતિ કાલ અસંખ્યાત કાલ પ્રમાણ માના જાતા હૈ। નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા હન અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કા અવસ્થિતિ કાલ સર્વકાલિક માના ગયા હૈ। કયોંકિ લોક મેં એસા કોઈં બી સમય નહીં હૈ કિ જિસમેં હનકી અવસ્થિતિ ન હો ॥સૂ० ૮૬॥

થઈ બાધ છે ત્યારે તેનો અવસ્થિતિ કાળ બદલ્યની અપેક્ષાએ એક સમયનો ગણાય છે, અને ત્યારે તે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી એજ સ્થિતિમાં રહીને ત્યાર બાદ વિઘટિત (વિલક્ષ્ણ) થઈ બાધ છે, એટલે કે ત્યારે તે એજ સ્થિતિમાં અસંખ્યાત કાળ સુધી રહે છે અને ત્યાર બાદ કોઈ બીજા પરમાણુ સાથે સંશ્લિષ્ટ (સંયુક્ત) થઈ બાધ છે, ત્યારે તેનો અવક્તવ્યક દ્રવ્યરૂપે રહેવાનો કાળ (અવસ્થિતિ કાળ) અધિકમાં અધિક અસંખ્યાત કાળ-પ્રમાણ માનવામાં આવ્યો છે.

વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનો અવસ્થિતિ કાળ (અવક્તવ્યક દ્રવ્યરૂપે રહેવાનો સમય) સર્વકાલીન ઠહ્યો છે, એટલે કે એવો કોઈ પણ સમય નથી કે ત્યારે તેમની અવસ્થિતિ (અસ્તિત્વ) જ ન હોય. ॥ સૂ० ૮૬ ॥

૩૬૬

અનુયોગદ્વારસૂત્ર

દઢ્વાણં અંતરં કાલઑ કેવચ્ચિરં હોઈ? એગં દઢ્વં પઢુચ્ચં જહન્નેણં એગં સમયં ઉક્કોસેણં અણંતં કાલં, નાણાદઢ્વાઈ પઢુચ્ચં નાથિ અંતરં ॥સૂ૦ ૮૭॥

છાયા — નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણામન્તરં કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવતિ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અનન્તં કાલમ્, નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નાસ્તિ અન્તરમ્ । નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામ્ અન્તરં કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવતિ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં

અથ સૂત્રકાર અન્તરદ્વારકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં

“જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(જેગમવવહારાણં આણુપુલ્વીદઢ્વાણં અંતરં કાલઑ કેવચ્ચિરં હોઈ)

પ્રશ્ન-નૈગમ વ્યવહારનય સંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા વ્યવધાન કાલ કી અપેક્ષા કિતને કાલ કા હોના હૈ? અર્થાત્ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય આનુપૂર્વી સ્વરૂપ કા પરિત્યાગ કરકે પુનઃ ઉસ આનુપૂર્વી સ્વરૂપ કો જિતને કાલ કે વ્યવધાન સે પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઉસ કાલ વ્યવધાન કા નામ અર્થાત્ વિરહ કાલ કા નામ અંતર હૈ । યહાં અંતર યહ કાલ કી અપેક્ષા સે શિષ્ય ને પૂછા હૈ । ક્યોંકિ અંતર ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે બી હોતા હૈ । ઇસીલિયે યહાં ઉસ ક્ષેત્ર ગત અંતર કે પરિહારાર્થ કાલ પદ કા પ્રયોગ સૂત્રકાર ને કિયા હૈ ।

હવે સૂત્રકાર અન્તરદ્વારની પ્રશ્નપણા કરે છે-“જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ-

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(જેગમવવહારાણં આણુપુલ્વીદઢ્વાણં અંતરં કાલઑ કેવચ્ચિરં હોઈ?) નૈગમ અને વ્યવહાર, આ બન્ને નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યનું વ્યવધાન (અંતરવિરહકાળ) કાળની અપેક્ષાએ કેટલા કાળનું હોય છે? આનુપૂર્વી દ્રવ્ય આનુપૂર્વી સ્વરૂપનો ત્યાગ કર્યા બાદ ફરીથી તે આનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપ સ્વરૂપને બેટલા કાળના વ્યવધાન (અંતર) બાદ પ્રાપ્ત કરે છે, તે વ્યવધાન કાળનું નામ અથવા વિરહકાળનું નામ અંતર છે. અહીં શિષ્યે કાળની અપેક્ષાએ તે અંતરના વિષયમાં પ્રશ્ન પૂછ્યો છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ અંતર હોઈ શકે છે, પણ અહીં ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અંતર પૂછ્યું નથી અહીં તો કાળની અપેક્ષાએ અંતર પૂછ્યું છે. તેથી જ અહીં “કાલઑ કેવચ્ચિરં” આ સૂત્રપાઠ મૂક્યો છે.

अनुबोधवर्धिका टीका सूत्र ८७ अन्तरद्वारनिरूपणम्

३६७

कालम्, नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । नैगमव्यवहारयोरवक्तव्यकद्रव्या-
णाम् अन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ? एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येन एकं समयम्,
उत्कर्षेण अनन्तं कालम्, नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् ॥ सू० ८७ ॥

टीका—‘नेगमव्यवहाराणं’ इत्यादि—

नैगमव्यवहारसम्मतानाम् आनुपूर्वीद्रव्याणाम् अन्तरं=व्यवधानं कालतः=
कालमाश्रित्य कियच्चिरं=कियत्कालावधि भवति ? । क्षेत्रतोऽप्यन्तरं भवत्यतस्त-
द्व्यवच्छेदाय प्राह—‘कालो केवच्चिरं’ इति । आनुपूर्वीद्रव्याणाम् आनुपूर्वी
स्वरूपतां परित्यज्य पुनस्तत्प्राप्ति र्थावता कालेन भवति स किं परिमाणः कालो
भवतीति प्रश्नः । उत्तरमाह—एकं द्रव्यं प्रतीत्य=आश्रित्य जघन्यत एकं समयमन्त-
रम्, उत्कर्षतस्तु अनन्तं कालमन्तरम् । नानाद्रव्याणि प्रतीत्य तु अन्तरं नास्ति ।
अयं भावः—त्र्यणुकचतुरणुकादीनां मध्ये किमप्यानुपूर्वीद्रव्यं विश्रसापरिणामात्
प्रयोगपरिणामाद् वा खण्डशो वियुज्य परित्यक्तानुपूर्वीभावं संजातम् । पुनस्तत्
एकसमयादूर्ध्वं विश्रसादिपरिणामात् पुनस्तैरेव परमाणुभिस्तथैव निष्पन्नम् । इत्थं

उत्तर—(एकं द्रव्यं पञ्चुच्च जहण्णेणं एकं समयं, उक्कोसेणं अणंतं-
कालं) एक आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा जघन्य अंतर एक समय का
और उत्कृष्ट अंतर अनंत काल का है (नाणा दब्बाइं पञ्चुच्च णत्थि
अंतरं) तथा नाना द्रव्यों की अपेक्षा अंतर नहीं है । इस कथन का
भाव यह है कि त्र्यणुक, चतुरणुक आदि आनुपूर्वी द्रव्य में से कोई
एक आनुपूर्वी द्रव्य स्वाभाविक अथवा प्रायोगिक परिणमन से खंड
खंड होकर आनुपूर्वी पर्याय से रहित हो गया अब पुनः वही द्रव्य
एक समय के बाद स्वाभाविक आदि परिणाम के निमित्त से उन्हीं

उत्तर—(एकं द्रव्यं पञ्चुच्च जहण्णेणं एकं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं)
એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઓછામાં ઓછું અંતર (વિરહકાળ) એક
સમયનું અને વધારેમાં વધારે અંતર અનંત કાળનું હોય છે. (નાના દબ્બાઈ
પણ્ણુચ્ચ ણત્થિ અંતરં) તથા વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચારવામાં આવે તો
એવા અંતરનો સદ્ભાવ જ નથી. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—
ત્રણ અણુવાળું, ચાર અણુવાળું આદિ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંથી કોઈ એક આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય સ્વાભાવિક અથવા પ્રાયોગિક પરિણમન વડે ખંડ ખંડ થઈ જઈને
આનુપૂર્વી પર્યાયથી રહિત થઈ ગયેલું હવે એજ દ્રવ્ય એક સમય બાદ ફરીથી
સ્વાભાવિક આદિ પરિણમન દ્વારા એજ પરમાણુઓના સંયોગથી એજ આનુપૂર્વી

ચ એક દ્રવ્યમાશ્રિત્યાનુપૂર્વોત્કૃષ્ટસ્ય પરિત્યાગે પુનર્ભાવે ચ સતિ મધ્યે યોજન્તરઃ સ જયન્ત્યત્ એકસમયાત્મકો બોધ્યઃ, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ અન્તરમનન્તકાલં ભવતિ। તથાહિ તદેવ ત્રિવક્ષિતં કિમપ્યાનુપૂર્વોદ્રવ્યં પૂર્વવદેવ ભિન્નમ્, તતસ્તે પરમાણ્વોજ્ઞેષુ પરમાણુદ્વયણુત્રયણુરુપભૃતિષુ અનન્તાણુસ્કન્ધપર્યન્તેષુ પ્રતિસ્થાનમુત્કૃષ્ટાં સ્થિતિમનુભવન્તઃ પર્યટન્તિ। इत्थं पर्यटनं कृत्वा कालस्पादनन्तत्वाद् विश्रसादिपरिणामतः पुनर्यदा तैरेव परमाणुभिस्तदेव त्रिवक्षितमानुपूर्वीद्रव्यं जायते तदा उत्कृष्टतोऽनन्त

પરમાણુઓ કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હો ગયા-વિવક્ષિત આનુપૂર્વી રૂપ બન ગયા। इस प्रकार एक आनुपूर्वी द्रव्य को आश्रित करके आनुपूर्वी स्वरूप के परित्याग हो जाने पर और पुनः उसी स्वरूप में आने पर बीच में जो अन्तर पड़ा वह जघन्य से एक समय का पड़ा-इस प्रकार यह एक समय का अन्तर जानना चाहिये। तथा उत्कृष्ट से अन्तर अनंत काल का, इस प्रकार से अजाता है कि कोई एक विवक्षित आनुपूर्वी द्रव्य पूर्वोक्त रूप से आनुपूर्वी पर्याय से रहित हो गया। इस प्रकार निर्गत वे परमाणु अन्य द्वयणुक त्रयणुक आदि से लेकर अनन्त स्कन्ध पर्यन्त रूप अनन्त स्थानों में प्रत्येक उत्कृष्ट काल की स्थिति का अनुभव करते हुए संश्लिष्ट रहे। इस प्रकार प्रत्येक द्वयणुक आदि अनन्त स्थानों में अनंत काल तक संश्लिष्ट होते २ अनन्त काल समाप्त होने पर जब उन्हीं परमाणुओं द्वारा वही विवक्षित आनुपूर्वी द्रव्य पुनः निष्पन्न हो जावे तब यह अनंत काल का उत्कृष्ट अंतर

રૂપ બની જાય છે. આ રીતે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યના આનુપૂર્વી સ્વરૂપનો પરિત્યાગ થઈ ગયા બાદ ફરીથી એજ સ્વરૂપમાં આવી જવામાં જે કાળનો આંતરો પડે છે તે કાળના આંતરો રૂપ જઘન્ય અંતર એક સમયનું સમજવું ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ જે અનંત કાળનું અંતર કહ્યું છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-ધારો કે કોઈ એક વિવક્ષિત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પૂર્વોક્ત રૂપે આનુપૂર્વી પર્યાયથી રહિત થઈ ગયું છે. આ રીતે વિભક્ત થયેલાં તે પરમાણુઓ અન્ય જે અણુવાળા, ત્રણ અણુવાળા વગેરેથી લઈને અનંત પર્યન્તના અણુવાળા સ્કન્ધ રૂપ અનંત સ્થાનોમાંની પ્રત્યેક સ્થાનમાં ઉત્કૃષ્ટ કાળની સ્થિતિનો અનુભવ કરતાં થકા સંશ્લિષ્ટ રહ્યા. આ પ્રમાણે પ્રત્યેક દ્વયણુક આદિ અનંત સ્થાનોમાં અનંત કાળ સુધી સંશ્લિષ્ટ રહ્યા બાદ એટલે કે એ સ્વરૂપમાં રહેતાં રહેતાં અનંત કાળ વ્યતીત થઈ ગયા બાદ એજ પરમાણુઓ દ્વારા બ્યારે વિવક્ષિત આનુપૂર્વી દ્રવ્યનું ફરીથી નિર્માણ થઈ જાય છે, ત્યારે એમ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૭ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૩૬૨

કાલમન્તરં ભવતિ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય ત્વન્તરં ન ભવતિ । યતો નાસ્તિ કશ્ચિત્
સ કાલો યત્ર સર્વાણ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ યુગપદાનુપૂર્વીભાવં પરિત્યજન્તિ, લોકેઽનન્તા-
નન્તાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સર્વદશ વિદ્યમાનત્વાત્, અતો નાનાદ્રવ્યાપેક્ષયાઽન્તરં નાસ્તીતિ ।

તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં કાલતઃ કિયચ્ચિરમન્તરં
ભવતીતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-‘એગં દવ્વં’ ઇત્યાદિ । એકં દ્રવ્યમાશ્રિત્ય જયન્યત એકં
સમયમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામન્તરં ભવતિ, ઉત્કર્પતોઽસંખ્યેયં કાલમન્તરં ભવતિ । નાના-

હોતા હૈ । નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા જો કાલ કા અન્તર નહીં
કહા ગયા હૈ, સો વ્તલકા કારણ યહ હૈ કિ લોક મેં એસા કોઈ સા મી
કાલ નહીં કિ જિસ મેં સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અપને આનુપૂર્વી સ્વભાવ
કા એક સાથ પરિત્યાગ કહ દેતે હો । કયોં કિ લોક મેં અનંતાન્ત
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વદશ વિદ્યમાન રહતે હૈ । ફલિતિ નાના આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે અન્તર નહીં આ સકતા હૈ । (જેગમવ્યવહારણ અણા
પુપુવ્વીદ્રવ્યાણ અન્તરં કાલમો કેવચ્ચિરં હોઈ ?)

પ્રશ્ન- નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા વ્યવધાન
કાલ કી અપેક્ષા કિતને કાલ કા હોતા હૈ ?

ઉત્તર-(એગં દવ્વં પહુચ્ચ જહ્ણણેણં એગં સમયં, ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં
કાલં નાણાદ્વાઈં પહુચ્ચ નત્થિ અંતરં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા ચિરહ
કાલ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે જયન્ય એક સમય કા ઓર

થવામાં અન્ત કાળનું ઉત્કુષ્ટ અંતર પડી જાય છે. એટલે કે આનુપૂર્વી
પર્યાયનો પરિત્યાગ કર્યા બાદ ફરી આનુપૂર્વી પર્યાયમાં આવી જવામાં અન્ત
કાળનું વ્યવધાન (અંતર) પડી જાય છે. “વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ કાળનું
અંતર છે જ નહીં,” આ પ્રકારના કથનનું કારણ એ છે કે ઢોકમાં એવો
કોઈ પણ સમય નથી કે જ્યારે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પોતાના આનુપૂર્વી
સ્વભાવનો એક સાથે પરિત્યાગ કરી દેતાં હોય, કારણ કે ઢોકમાં અન્તાન્ત
આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સર્વદશ વિદ્યમાન રહે છે, તેથી વિવિધ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની
અપેક્ષાએ કાળનો અંતરો જ પડી શકતો નથી.

પ્રશ્ન-(જેગમવ્યવહારણ અણાપુપુવ્વી દ્રવ્યાણં અંતરં કાલમો કેવચ્ચિરં હોઈ ?)
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું વ્યવધાન (અંતર-ચિરહ-
કાળ) કાળની અપેક્ષાએ કેટલા કાળનું હોય છે ?

ઉત્તર-(એગં દવ્વં પહુચ્ચ જહ્ણણેણં એગં સમયં ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં
નાણાદ્વાઈં પહુચ્ચ નત્થિ અંતરં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનો ચિરહકાળ એક

દ્રવ્યાભ્યાશ્રિત્ય તુ નાસ્તિ અન્તરમિતિ । અયમાશયઃ—યદા પરમાણુસ્વરૂપં કિમપ્ય-
નાનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્, અન્યેન પરમાણુના દ્વચણુકત્ર્યણુકાદિના વા એકં સમયં સંશ્લિષ્ય
સમયાદૃર્ધ્વં પુનર્વિશ્લિષ્ટં ભવતિ, તદૈક દ્રવ્યાપેક્ષયા જઘન્યત એકં સમયમન્તરં ભવતિ ।
યદા તુ તદેવાનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં પરમાણુદ્વચણુકત્ર્યણુકાદિના કેનચિદ્ દ્રવ્યેણ સહ
સંયુજ્યતે, સંયુક્તં ચાસંખ્યેયં કાલં સ્થિત્વા તતો વિયુજ્ય પુનઃ પૂર્વવદનાનુપૂર્વીત્વં
લભતે । इत्थमेकं द्रव्यमाश्रित्य उत्कृष्टतोऽसंख्येयकालमन्तरं भवतीति ।

ઉત્કૃષ્ટ અન્તર અસંખ્યાત કાલ કા હોતા હૈ । નાના અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
કી અપેક્ષા સે કોઈ અન્તર નહીં હૈ । તાત્પર્ય હસકા હસ પ્રકાર સે હૈ કિ
જબ કોઈ બી પરમાણુરૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અન્ય કિસી દૂસરે પરમાણુ
કે સાથ અથવા દ્વચણુક ત્ર્યણુક આદિ કે સાથ એક સમય તક સંશ્લિષ્ટ
હોકર બાદ મેં ઉસસે વિયુક્ત વિશ્લિષ્ટ-હો જાતા હૈ તબ એક અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા જઘન્ય એક સમય કા અન્તર હોતા હૈ । ઓર જબ
વહી અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ પરમાણુ કિસી દ્વચણુક ત્ર્યણુક આદિ કે સાથ
સંયુક્ત હો જાતા હૈ ઓર અસંખ્યાત કાલ તક સંયુક્ત રહ કર ફિર
ઉસસે વિયુક્ત હોતા હૈ, તો હસ પ્રકાર પુનઃ ઉસે અનાનુપૂર્વી રૂપ મેં આને
પર યહ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા ઉત્કૃષ્ટ અસંખ્યાત કાલ કા અન્તર હોતા હૈ ।

અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઓછામાં ઓછા એક સમયનો અને વધારેમાં
વધારે અસંખ્યાત કાળનો હોય છે વિવિધ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ
વિચાર કરવામાં આવે તો વ્યવધાન (વિરહકાળ-અંતર)નો સદ્ભાવ જ નથી.
આ કથનનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—જ્યારે કોઈ પરમાણુ રૂપ અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય કોઈ બીજા પરમાણુની સાથે અથવા દ્વચણુક, ત્રિચણુક આદિ
સ્કંધોની સાથે એક સમય સુધી સંશ્લિષ્ટ (સંયુક્ત) રહીને તેનાથી વિયુક્ત
(અલગ) થઈ જાય છે ત્યારે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઓછામાં
ઓછા સમયનું અંતર (વ્યવધાન) પડી જાય છે. અને એજ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય
રૂપ પરમાણુ જ્યારે કોઈ દ્વચણુક, ત્રિચણુક આદિ સ્કંધોની સાથે સંશ્લિષ્ટ
થઈને અસંખ્યાત કાળ સુધી એજ સ્થિતિમાં રહીને ફરીથી તેમાંથી વિયુક્ત
(વિલક્ષ્ણ) થઈ જાય છે, અને ફરીથી અનાનુપૂર્વી રૂપે નિષ્પન્ન થઈ જાય છે,
તો આ પ્રકારે અનાનુપૂર્વીના પરિત્યાગથી લઈને અનાનુપૂર્વીના પુનઃ નિર્મા-
ણમાં વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળનું અંતર પડે છે. આ ઉત્કૃષ્ટ અંતર
એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કહ્યું છે, એમ સમજવું.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૭ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૩૭૧

નનુ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં યદાઽનન્તાનન્તપરમાણુપચિતસ્કન્ધેન સહ સંયુજ્યતે, તત્સંયુક્તં ચાસંખ્યેયં કાલમવતિષ્ઠતે, તતોઽસી સ્કન્ધોભિદ્યતે । મિન્ને ચ તસ્મિન્ સ્કન્ધે યસ્તસ્માલ્લઘુઃસ્કન્ધો ભવતિ, તેનાપિ સહ સંયુક્તમસંખ્યાતં કાલમવતિષ્ઠતે, પુનસ્તસ્મિન્નપિ સ્કન્ધે ભિદ્યમાને યસ્તસ્માલ્લઘુતરઃ સ્કન્ધો ભવતિ તેનાપિ લઘુતરેણ સ્કન્ધેન સહ સંયુક્તમસંખ્યેયં કાલમવતિષ્ઠતે, इत्येवं क्रमेण पुनस्तस्मिन्नपि भिद्यमाने स्कन्धे यस्तस्માल્લઘુતમઃ સ્કન્ધો ભવતિ, તેનાપિ સંયુક્તમસંખ્યેયં કાલમવતિષ્ઠતે, इत्येवं तत्र भिद्यमाने क्रमेण कदाविदनन्ता अपि स्कन्धा संभ-

શંકા-જય એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનંતાનંત પરમાણુઓ કે પ્રચય રૂપ સે સંયુક્ત હોતા હૈ ઓર વહ ઉસકે સાથ સંયુક્ત અવસ્થા મેં અસંખ્યાત કાલ તક રહતા હૈ ઓર વાદ મેં જય વહ સ્કંધ ભેદ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ-અર્થાત્ દ્રુટતા હૈ-તથ ઉસસે જો લઘુસ્કંધ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઉસકે સાથ ખી વહ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાલ તક સંયુક્ત રહતા હૈ । વાદ મેં જય વહ ખી સ્કંધ ભેદ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ-તથ ઉસસે ખી એક લઘુતર સ્કંધ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । ઓર ઉસ લઘુતર સ્કંધ કે સાથ ખી વહ અસંખ્યાત કાલ તક સંયુક્ત રહતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે ક્રમ સે જય વહ લઘુતર સ્કંધ ખી ભેદ પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ-તથ ઉસસે ખી એક લઘુતમ સ્કંધ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । ઓર વહ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉસ લઘુતર સ્કંધ કે સાથ ખી અસંખ્યાત કાલ

શંકા-જ્યારે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનંતાનંત પરમાણુઓના પ્રચય રૂપ સ્કંધ સાથે સંયુક્ત થાય છે અને તે તેની સાથે સંયુક્ત અવસ્થામાં અસંખ્યાત કાળ સુધી રહ્યા બાદ જ્યારે તે સ્કંધ વિલકત થઈ જાય છે ત્યારે તેમાંથી કોઈ લઘુસ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. તે લઘુસ્કંધની સાથે પણ તે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી સંયુક્ત રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે તે સ્કંધ પણ વિલકત થઈ જાય છે ત્યારે તેમાંથી કોઈ લઘુસ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે તે લઘુસ્કંધની સાથે પણ તે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી સંયુક્ત રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે તે સ્કંધ પણ વિલકત થઈ જાય છે ત્યારે તેમાંથી પણ એક લઘુતર સ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, અને તે લઘુતર સ્કંધ સાથે પણ તે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી સંયુક્ત રહે છે ત્યારબાદ તે લઘુતર સ્કંધ પણ વિલકત થઈ જાય છે અને તેમાંથી પણ એક લઘુતમ સ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. આ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય તે લઘુતમ સ્કંધની સાથે પણ અસંખ્યાત કાળ સુધી સંલિપ્ત (સંયુક્ત) રહે

વેયુઃ, તત્ર પ્રત્યેકસ્મિન્ સ્કન્ધે સંયુક્તમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં યદા યથોક્તામસંસ્થાયેયકાલં સ્થિતિમનુભૂય એકાકિ ભવતિ, તદા તસ્ય યથોક્તાનન્તસ્કન્ધસ્થિત્યપેક્ષયાઽનન્તમપિ કાલમન્તરં ભવતિ । તતઃ કથમુક્તમસંસ્થેયં કાલમેવાન્તરમ્ ? इति चेत्, उच्यते—

यदि संयुक्तः परमाणुरनन्तं कालं तिष्ठेत्तदा भवदुक्तमुचिषं स्यात्, परन्तवेवं नास्ति, एतत्सूत्रपामाण्यात् व्याख्यामङ्गत्वादि सूत्रपामाण्याच्च परमाणुसंगो-

તક સંશ્લિષ્ટ રહતા હૈ । હસ પ્રકાર ક્રમ ૨ સે ડઝ સ્કંધોં કૈ ઢૂટને પર કદાચિત અનંત મી સ્કંધ સંભવિત હોતૈ હૈ—હસ પ્રકાર અનંત સ્કંધોં મૈ સૈ પ્રત્યેક સ્કંધ કૈ સાથ સંયુક્ત વહ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય, જવ અસંસ્થાત કાલ કી અપની સ્થિતિ કી સમાસ કર એકાકી રુપ મૈ આ જાતા હૈ—અર્થાત્ પૂર્વ કી અનાનુપૂર્વી રુપ એક પરમાણુ અવસ્થા કી પ્રાપ્તકર લેતા હૈ—તવ ડસકા હન પૂર્વોક્ત અનન્ત સ્કંધોં મૈ રહને રુપ સ્થિતિ કી અપેક્ષા સૈ અનન્ત કાલ કા મી અન્તર હો જાતા હૈ । તવ ફિર સૂત્રકાર નૈ યહાં પર એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યકા કાલ કી અપેક્ષા લેકર અસંસ્થાત કાલ કા હી અન્તરવ્યોં કહા હૈ ?

ઉત્તર—યહ શંકાકાર કૈ દ્વારા પ્રદર્શિત અનન્ત કાલ કા અન્તરતવ સંગત થૈટ સકતા હૈ કિ જવ પરમાણુ સંયુક્ત હોકર અનન્ત કાલ તક દ્રવ્યુકાદિ અનંત સ્કંધોં કૈ સાથ રહતા હો । પરન્તુ હસ સૂત્ર કી પ્રમા-

છે આ રીતે કમે કમે તે તે સ્કંધો વિમુક્ત થતા રહે છે. આ પ્રકારે તો ક્યારેક અનંત સ્કંધ પણ સંભવી શકે છે આ અનંત સ્કંધોમાંના પ્રત્યેક સ્કંધની સાથે અસંખ્યાત-અસંખ્યાત કાળ સુધી સંયુક્ત રહીને જ્યારે તે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય પૂર્વની પોતાની સ્થિતિમાં આવી જાય છે—એટલે કે અનાનુપૂર્વી રૂપ પરમાણુ અવસ્થાને ફરી પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે તો પૂર્વોક્ત અનંત સ્કંધોમાં રહેલા રૂપ સ્થિતિની અપેક્ષાએ તો અનંત કાળનું અંતર પણ પડી જાય છે છતાં સૂત્રકારે અહીં શા માટે એવું કથન કર્યું છે કે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનો વિરહકાળ અસંખ્યાત કાળનો હોય છે ? એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ અવસ્થાને ત્યાગ કર્યા બદ ફરી એજ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરવામાં અસંખ્યાત કાળનું અંતર પડે છે એમ શા માટે કહ્યું છે ? અનંત કાળનું અંતર પડે છે, એવું કેમ કહ્યું નથી ?

ઉત્તર—શંકાકર્તા દ્વારા પ્રદર્શિત અનંત કાળનું અંતર ત્યારે જ સંગત બની શકે કે જ્યારે તે પરમાણુ દ્રવ્યુકાદિ અનંત સ્કંધોની સાથે સંયુક્ત થઈને અનંત કાળ સુધી રહેતું હોય, પરન્તુ આ સૂત્રની પ્રમાણુતાથી અને

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૭ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૩૭૩

સ્થિતેરુત્કુષ્ટતોડસંરૂપેયકાલત્વાવગમાત્, અતોડસંખ્યેયં કાલમન્તરં बोध्यम् ।
नानाद्रव्याण्याश्रित्य तु अन्तरं न भवतीति ।

તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તાનાં દ્વિપ્રદેશિકસ્કન્ધરૂપાણામવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં
કાલતઃ કિયત્ચિરમન્તરં ભવતીતિ પ્રશ્નઃ ।

ઉત્તરમાદ-‘एगं दव्वं’ इत्यादि। एकं द्रव्यमाश्रित्य जघन्यत एकं
समयमन्ताम्, उत्कृष्टतोऽनन्तं कालमन्तरं भवति। नानाद्रव्याण्याश्रित्य तु
अन्तरं नास्तीति ।

ળતા સે ઓર વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસિ આદિ સૂત્રોં કી પ્રમાણતા સે પરમાણુ કી
સંયુક્ત અવસ્થા કી સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ રૂપ સે અસંખ્યાત કાલ તક કી હી
કહી ગઈ હૈ । અતઃ સૂત્ર કથિત અસંખ્યાત કાલ કા હી ઉત્કૃષ્ટ અન્તર
જાનના ચાહિયે । તથા નાના અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અન્તર નહીં
હોતા હૈ । ક્યોં કિ લોક મે એસા કોઈં મી કાલ નહીં હૈ કિ જિસ કાલ
મેં કોઈં ન કોઈં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ન રહે । ‘ નૈગમવ્યવહારાણં અવત્તમ-
દ્રવ્યાણં અંતરં કાલઔ કેવત્ચિરં હોઈ ? ’

પ્રશ્ન- નૈગમવ્યવહારનયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં અપની અવક્ત-
વ્યક અવસ્થા કા પરિત્યાગ કરદેનેપર ઓર પુનઃ ડસી સ્થિતિ મેં આને
પર કાલકી અપેક્ષા કિતના ચિરહ કાલ હૈ । ?

ઉત્તર-(एगं दव्वं पटुच्च जहन्नेण एगं समयं उकोसेण अणंतं कालं

व्याख्याप्रज्ञसि आदि सूत्रेनी प्रमाणताशी परमाणुनी संयुक्त अवस्थाभां
रहेयानी उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात काण पर्यन्तनी न कही छे तेथी सूत्रक-
थित असंख्यात काणतुं न उत्कृष्ट अंतर समजतुं लेधये.

“ विविध अनानुपूर्वी” द्रव्येनी अपेक्षाये अंतर होतुं नथी, ”
આ પ્રકારના કથનતું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

લેકમાં એવો કોઈ પણ કાળ નથી કે જે કાળે કોઇને કોઈ અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્યતું અસ્તિત્વ ન ન હોય એટલે કે કોઇને કોઈ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યતું
અસ્તિત્વ તો લોકમાં સદા કાળ રહે છે ન.

પ્રશ્ન-(નૈગમવ્યવહારાણં અવત્તમદ્રવ્યાણં અંતરં કાલઔ કેવત્ચિરં હોઈ ?)
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યેને પોતાની તે અવક્તવ્યક
અવસ્થાનો પરિત્યાગ કર્યા બાદ ફરીથી અવક્તવ્યક અવસ્થામાં આવી જવામાં
કેટલા કાળતું અંતર પડે છે ? એટલે કે દ્રવ્યલુક સ્કન્ધ રૂપ અવક્તવ્યક
દ્રવ્યેનો વિરહકાળ કાળની અપેક્ષાએ કેટલો કહ્યો છે ?

ઉત્તર-(एगं दव्वं पटुच्च जहन्नेण एगं समयं, उकोसेण अणंतं कालं,

અર્થ ભાવ:-દ્વિપ્રદેશિકસ્કન્ધરૂપમવક્તવ્યકદ્રવ્યં વિઘટિતં સ્વતન્ત્રં પરમાણુદ્વયં જાતમ્ । સમયમેકં વિઘટિતમેવ સ્થિત્વા પુનઃ એતદેવ પરમાણુદ્વયં પરસ્પરં મિલિત્વા દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધો જાતઃ । યદ્વા-વિઘટિત એવ દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ સ્વતન્ત્ર પરમાણુરૂપતાં પ્રાપ્ય, અન્યેન પરમાણ્વાદિના સમયમેકં સંયુજ્ય-સમયાદૃધ્વં તતો વિયુજ્ય પુનસ્તદેવ પરમાણુદ્વયં પરસ્પરં મિલિત્વા દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધો નિષ્પન્નઃ, ઇત્યમવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં જન્યન્ત એકં સમયમન્તરં બોધ્યમ્,

નાણાદન્વાઈ પડુચ્ચળથિ અંતરં) એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા જન્ય અંતર એક સમય કા, ઓર ઉત્કૃષ્ટ અંતર અનંત કાલ કા હૈ । તથા નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અંતર નહીં હૈ । હસ કથન કા તાત્પર્ય હસ પ્રકાર સે હૈ-કિ એક દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ દ્રવ્ય વિઘટિત હો ગયા ઓર વહ સ્વતંત્રરૂપ સે દો પરમાણુ રૂપ બન ગયા । અથ વે દો પરમાણુ એક સમય તક પરસ્પર જૂદે ર રહે । ફિર એક સમય વાદ આપસ મેં સંશ્લિષ્ટ હો ગયે ઓર ડનકે શ્લેષ સે વહી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ પુનઃ ઉત્પન્ન હો ગયા । અથવા-દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત હો ગયા ઓર ડસસે દો પરમાણુ ઉત્પન્ન હો ગયે । વે પરમાણુ અન્ય પરમાણુ આદિ કે સાથ એક સમય તક સંયુક્ત રહે ઓર વાદ મેં ડસસે વિઘટિત હોકર વે હી પરમાણુ પરસ્પર મિલકર ડસી દ્વિપ્રદેશીક સ્કંધ રૂપ મેં પરિણત હો

નાણાદન્વાઈ પડુચ્ચળથિ અંતરં) એક અવક્તવ્યક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જન્ય (એ છામાં એછું) અંતર એક સમયનું અને ઉત્કૃષ્ટ (વધારેમાં વધારે) અંતર અનંત કાળનું છે, તથા વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતરોના સદ્ભાવ જ નથી આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-કોઈ એક દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ રૂપ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ધારે કે વિઘટિત (વિભક્ત) થઈને બે સ્વતંત્ર પરમાણુ રૂપ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે છે. ત્યાર બાદ એાછામાં એાછા એક સમય સુધી તે તે બન્ને પરમાણુ એક બીજાથી અલગ જ રહે છે, પણ ત્યાર બાદ તેઓ એક બીજાની સાથે સંશ્લિષ્ટ (સંયુક્ત) થઈ જઈને ફરીથી દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ રૂપ બની જાય છે. અથવા-દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત થઈ જઈને તેમાંથી બે પરમાણુ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. તે પરમાણુઓ અન્ય પરમાણુ આદિની સાથે એક સમય સુધી સંશ્લિષ્ટ રહે છે, પણ ત્યાર બાદ તેઓ તેનાથી વિયુક્ત થઈને પરસ્પરની સાથે સંયુક્ત થઈ થઈને ફરીથી દ્વિપ્રદેશીક સ્કંધ રૂપે પરિણત થઈ જાય છે. આ રીતે એજ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધનું તેમના દ્વારા નિર્માણ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ અવસ્થાનો

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૭ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૩૫૫

યદા ચ તદેવ વિઘટિતં સ્વતન્ત્રં પરમાણુભિરનન્તૈર્દ્વયણુકવ્યણુક યાવદનન્તા-
ણુકસ્કન્ધૈઃ સહ ક્રમેણ સંયોગમાસાદ્ય પ્રત્યેકસ્મિન્ સ્કન્ધેઽસકુદુત્કૃષ્ટાં સ્થિતિમનુ-
શ્ય કાલસ્યાનન્ત્યાત્પુનરપિ તથૈવ દ્વયણુકસન્ધતયા પરિણતં ભવતિ, તદાઽવક્ત-
વ્યકદ્રવ્યત્વં પ્રતિપદ્યતે । इत्थं वियोगानन्तरं पूर्वस्वरूपप्राप्तौ अनन्तकालः प्राप्यते,
મયે-હસ પ્રકાર વહી પ્રથમ સ્કંધ ઘન ગયા । હસ પ્રકાર દ્વિપ્રદેશી
સ્કંધ અવસ્થા વિઘટિત હોને સે પુનઃ વહી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ ઘનને કે
બીજા મેં યહ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કા એક સમય કા અન્તર જઘન્ય જનના
બોધિયે । તથા જબ વહી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત હોતે હી દોં પરમાણુ
રૂપ મેં આજાતા હૈ ઓર વે પરમાણુ સ્વતંત્ર રૂપ સે અનંત પરમાણુઓ
કે સાથ અનંત દ્વયણુકોં, વ્યણુકોં યાવત્ અનન્તાણુક સ્કંધોં કે સાથ ક્રમ
સે સંયોગ કો પ્રાપ્ત કરકે, જબ પ્રત્યેક સ્કંધ મેં ચાર ૨ અપની ઉત્કૃષ્ટ
સ્થિતિ કો સમાપ્ત કર દેતે હૈં તો હસ પ્રકાર કાલ કી અનંતતા કે બાદ
જબ વે અપની ડસી પૂર્વ અવસ્થા રૂપ દ્વિપ્રદેશીક સ્કંધ રૂપ મેં પરિણત
હો જાતે હૈં, તો હસકે બીજા મેં યહ અનંત કાલ કા ઉત્કૃષ્ટ સમય
નિકલ આતા હૈ । નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કાલ કા અંતર
નહીં હૈ એસા જો કહા ગયા હૈ ડસકા ભાવ યહ હૈ કિ લોક મેં એસા

પરિત્યાગ કરીને-દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ અવસ્થામાંથી વિઘટિત થઈને ફરીથી
એજ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરવામાં એક સમયપ્રમાણ કાળનું
જઘન્ય અંતર પડે છે. તેથી જ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ અવસ્થા પુનઃ પ્રાપ્ત
કરવામાં તેને ઓછામાં ઓછો એક સમય લાગતો હોવાથી જઘન્ય અંતર
એક સમયનું કહ્યું છે.

ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ તે અંતર અનંતકાળનું કેવી રીતે થાય છે ? તે હવે
સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે-

એજ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત થઈને બે પરમાણુ રૂપ બની જાય છે તે
બન્ને પરમાણુ સ્વતંત્ર રૂપે અનંત પરમાણુઓની સાથે અનંત દ્વયણુક સ્કંધો,
ત્રિઅણુક સ્કંધો આદિ અનંત અણુક પર્યાન્તતા સ્કંધો સાથે ક્રમે ક્રમે સંયોગ
પ્રાપ્ત કરીને ન્યારે પ્રત્યેક સ્કંધમાં વારંવાર પોતાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સમાપ્ત
કરી નાખે છે, અને આ રીતે અનંત કાળ બાદ ન્યારે તે પોતાની એજ પૂર્વ
અવસ્થા રૂપ દ્વિપ્રદેશીક સ્કંધ રૂપે પરિણત થઈ જાય છે, તો આમ થવામાં
અનંત કાળનો ઉત્કૃષ્ટ સમય વ્યતીત થઈ જાય છે આ રીતે ઉત્કૃષ્ટ અંતર
(વિરહકાળ) અનંત કાળનો થાય છે.

૧૭૬

અનુયોગદ્વારસ્ત્રી

અતઃ ઉત્કૃષ્ટતોડનન્તં કાલમન્તરં ભવતિ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય પૂર્વોક્તદેવાન્તરં
વ ભવતીતિ ॥સૂ૦ ૮૭॥

અથ સપ્તમં માગદ્વારમાહ—

મૂળ—નેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદદ્વાઈં સેસદદ્વાણં કદ્-
ભાગે હોજા ? કિં સંસ્થિજ્જદ્ભાગે હોજા ? અસંસ્થિજ્જદ્ભાગે
હોજા ? સંસ્થિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા ? અસંસ્થિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા ?
નો સંસ્થિજ્જદ્ભાગે હોજા, નો અસંસ્થિજ્જદ્ભાગે હોજા, નો
સંસ્થિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા, નિયમા અસંસ્થિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા ।
નેગમવ્યવહારાણં અણુપુર્વી દદ્વાઈં સેસદદ્વાણં કદ્ભાગે
હોજા ? કિં સંસ્થિજ્જદ્ભાગે હોજા ? અસંસ્થિજ્જદ્ભાગે હોજા ?
સંસ્થિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા ? અસંસ્થિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા ? નો
સંસ્થિજ્જદ્ભાગે હોજા, અસંસ્થિજ્જદ્ભાગે હોજા, નો સંસ્થિજ્જેસુ
ભાગેસુ હોજા, નો અસંસ્થિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા । એવં અવત્ત-
દ્વગદદ્વાણિ વિ ભાણિયદ્વાણિ ॥સૂ૦ ૮૮॥

છાયા—નેગમવ્યવહારયોરાણુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાણાં કિયદ્ભાગે ભવન્તિ ?

કોઈ સામી સમય નહીં હૈ કિ જિસમેં કોઈ ન કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય
કી સત્તા ન બની રહતી હો । ॥ સૂ૦ ૮૭ ॥

અથ સપ્તમં ભાગ નામક દ્વાર કા સૂત્રકાર કથન કરતે હૈ—

“નેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં) નેગમવ્યવહારનય સંમત સમસ્ત આનુ-

“વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ કાળતુ અંતર નથી,” આ
કથનનો ભાવાર્થ એવો છે કે લોકમાં એવો કોઈ પણ સમય હોતો નથી કે
જ્યારે લોકમાં કોઈને કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય વિદ્યમાન ન હોય એટલે કે
કોઈને કોઈ અવક્તવ્ય દ્રવ્ય તો લોકમાં સર્વદા વિદ્યમાન હોય છે જ. ॥સૂ૦ ૮૭॥

હવે સૂત્રકાર અનુગમના ભાગદ્વાર નામના સાતમાં ભેતુ નિરૂપણકરે છે.

“નેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં) નેગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૯૯ ભાગદ્વારનિકરૂપણમ્

૨૭૭

કિં સંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? અસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? નો સંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ, નો અસંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ, નો સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ, નિયમાત્ અસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોરનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાણાં કિયદ્ભાગે ભવન્તિ ? કિં સંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ

પૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદ્વાણં) શેષ દ્રવ્યોં મેં (કહ્ભાગે) કિતને ભાગ મેં (હોજ્જા) હૈ । (કિં) કયા (સંખેજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા) સંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ ? (સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અથવા સંખ્યાત ભાગો મેં હૈ ? અથવા (અસંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા) યા અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ (અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) યા સંખ્યાત ભાગો મેં હૈ ? (નો સંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા નો અસંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા) ન સંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ ન અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ (નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) ઓર ન સંખ્યાત ભાગો મેં હૈ, કિન્તુ (નિયમા) નિયમ સે વે (અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અસંખ્યાત ભાગો મેં હૈ । (નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઠ્ઠી દ્વાહં) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદ્વાણં કહ્ભાગે હોજ્જા) શેષ દ્રવ્યોં કી કિતને ભાગ મેં હૈ ? (કિં) કયા (સંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા) સંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ ?

આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદ્વાણં) આક્રીના દ્રવ્યોના (કહ્ભાગે હોજ્જા ?) કેટલા ભાગમાં છે ? (કિં સંખેજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા ?) શું સંખ્યાતમાં ભાગમાં છે ? (અસંખેજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા) કે અસંખ્યાતમાં ભાગમાં છે ? (સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) કે સંખ્યાત ભાગોમાં છે ? (અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ?) કે અસંખ્યાત ભાગોમાં છે ?

ઉત્તર- (નો સંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા, નો અસંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા, નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય આક્રીના દ્રવ્યોના સંખ્યાતમાં ભાગમાં પણ હોતું નથી, અસંખ્યાતમાં ભાગમાં પણ હોતું નથી, સંખ્યાત ભાગોમાં પણ હોતું નથી, પરન્તુ (નિયમા અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) નિયમથી જ તે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો આક્રીના દ્રવ્યોના અસંખ્યાત ભાગોમાં હોય છે.

(નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઠ્ઠી દ્વાહં) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદ્વાણં કહ્ભાગે હોજ્જા ?) આક્રીના દ્રવ્યોના કેટલામાં ભાગતું હોય છે ? (કિં સંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા) શું સંખ્યાતમાં ભાગમાં હોય છે ? (અસંખિજ્જહ્ ભાગે હોજ્જા) કે અસંખ્યાતમાં

૩૨૮

અનુયોગદ્વારજ્ઞે

भवन्ति ? असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ? नो संख्येयतमभागे भवन्ति, असंख्येय-
तमभागे भवन्ति, नो संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ।
एवमवक्तव्यकद्रव्याण्यपि भणितव्यानि ॥मू० ८८॥

टीका—‘ नेगमववहाराणं ’ इत्यादि—

नेगमववहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि=अणुकસ્કન્ધમभृत्यनन्ताणुकસ્ક-
न्धपर्यन्तानि सर्वाण्यपि आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणाम्=अनानुपूर्व्यवक्तव्यक-
द्रव्यलक्षणानां कियति भागे भवन्ति ? किं संख्येयतमभागे भवन्ति, यथा—अस-
या(असंखिज्जइभागे होज्जा) असंख्यातवे' भाग में हैं ? या (संखे-
ज्जेसु भागेषु होज्जा) संख्यात भागों में हैं ? या (असंखेज्जेसु भागेषु
होज्जा) असंख्यात भागों में हैं !

उत्तर—(नो संखेज्जइभागे होज्जा) संख्यातवे' भाग में नहीं
है—(असंखेज्जइभागे होज्जा) किन्तु असंख्यातवे' भाग में हैं । (नो
संखेज्जेसु भागेषु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा) संख्यात
भागों में नहीं हैं ' और न असंख्यात भागों में हैं । (एवं अवत्तव्वग-
दव्वाणि वि भाणियव्वाइ') इसी प्रकार से अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय
में भी ऐसा ही कथन जानना चाहिये

भावार्थ—अणुक स्कंध आदि से लेकर अनन्त परमाणु स्कंध पर्य-
न्त जितने भी स्कंध हैं वे सब आनुपूर्वीद्रव्य हैं । अनन्त एक २ परमा-
णु और अनन्त द्व्यणुक स्कंध क्रमशः अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य
हैं । पूछने वाले का यह अभिप्राय है कि आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी और

ભાગમાં હોય છે ? (સંખિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) કે સંખ્યાત ભાગોમાં હોય છે ?
(અસંખિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) કે અસંખ્યાત ભાગોમાં હોય છે ?

ઉત્તર—(નો સંખિજ્જઇ ભાગે હોજ્જા, અસંખેજ્જઇ ભાગે હોજ્જા) સંખ્યા-
તમાં ભાગમાં નથી, પણ અસંખ્યાતમાં ભાગમાં છે, (નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા,
નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) સંખ્યાત ભાગોમાં પણ નથી અને અસંખ્યાત
ભાગોમાં પણ નથી. (एवं अवत्तव्वगदव्वाणि वि भाणियव्वाइ') अवक्तव्यक
द्रव्योंના विषयમાં પણ अनानुपूर्वी द्रव्योंના जेवुं જ કથન
અહીં ગ્રહણ કરવું જોઈએ.

ભાવાર્થ—અણુથી લઇને અનંત પરમાણુવાળા જેટલા સ્કંધો છે, તેમને
આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કહે છે જે અનંત એક એક સ્વતંત્ર પરમાણુ છે તેમને અના-
નુપૂર્વી દ્રવ્ય કહે છે. એ પરમાણુવાળા જે અનંત સ્કંધો છે તેમને અનાનુપૂર્વી અને
અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કહે છે આ સૂત્રમાં પ્રશ્નકર્તા એ પ્રશ્ન પૂછે છે કે આનુપૂર્વી

મંત્રીયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૮ માર્ગદર્શનરૂપજનમ્

૩૭૧

સ્કલ્પનયા શતસ્ય વિવૃત્તિમિતાઃ?, કિમસંખ્યાતતમે ભાગે ભવન્તિ, યથા શતસ્યૈવ દશ?, કિં સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ, યથા શતસ્યૈવ ચત્વારિંશત્ પૃષ્ઠિર્વા?, કિમ-સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ, યથા શતસ્યૈવ અશીતિઃ?, इति प्रश्नः। उत्तरमाह—
आनुपूर्वीद्रव्याणि अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया हीनानि न भवन्ति, प्रत्युत
अधिकान्येव भवन्ति, अधिकत्वं चाप्येषां नो संख्येयतमभागेन, नो असंख्येयत-
मभागेन, नापि संख्येयैर्भागैः, अपि तु असंख्येयैर्भागैरधिकानि भवन्तीति बोध्यम्,

અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં સે અધિક હેં યા કમ ? તથ સિદ્ધાન્તકારોં ને હસકા
ઉત્તર અધિક રૂપ મેં દિયા હેં । તવ પુનઃ શંકાકાર ને પૂછા કિ યદિ ચે
શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અધિક હેં, તો ડનકે કિસ ભાગ સે અધિક હેં ।
કયા સંખ્યાતવેં ભાગ સે અધિક હેં ? યા અસંખ્યાતવેં ભાગ સે અધિક
હેં ? યા સંખ્યાત અસંખ્યાત ભાગોં સે અધિક હેં ? તથ સૂત્રકાર ને હસે
કમજ્ઞાયા કિ ચે શેષ દ્રવ્યોં કે અસંખ્યાત ભાગોં સે હી અધિક હેં હતર
તોન ભાગોં સે નહીં । ક્યોંકિ ચે આનુપૂર્વોદ્રવ્ય અનાનુપૂર્વીં ઓર અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા હીન નહીં હેં । કિન્તુ અધિક હી હેં । યહ
અધિકતા હનમેં શેષ દ્રવ્યોં કે સંખ્યાતવેં અસંખ્યાતવેં ઇવં સંખ્યાત
ભાગોં સે માની ગઈ હેં । હસકા તાત્પર્ય યહ હેં કિ સર્વ આનુપૂર્વીં-
દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વીં ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાત

દ્રવ્ય, અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્ય અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કરતાં અધિક પ્રમાણમાં છે કે
અલ્પપ્રમાણમાં છે? ત્યારે તેના ઉત્તર રૂપે સિદ્ધાન્તકારોએ કહ્યું છે કે આનુપૂર્વીં
દ્રવ્ય, અનાનુપૂર્વીં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કરતાં અધિક પ્રમાણમાં છે.

વળી પ્રશ્નકર્તા એવો પ્રશ્ન કરે છે કે જો તે આનુપૂર્વીં દ્રવ્ય ઓકીના
દ્રવ્યો કરતાં અધિક છે, તો કેટલામાં ભાગ જેટલું અધિક છે? શું સંખ્યા-
તમાં ભાગ જેટલું અધિક છે? કે સંખ્યાત ભાગો જેટલું અધિક છે? કે
અસંખ્યાત ભાગો જેટલું અધિક છે?

ત્યારે સૂત્રકારે તેનો એવો ઉત્તર આપ્યો છે કે આનુપૂર્વીં દ્રવ્ય ઓકીના
દ્રવ્યોના અસંખ્યાત ભાગો પ્રમાણ જ અધિક છે, સંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ
અધિક નથી, કારણ કે તે આનુપૂર્વીં દ્રવ્યો, અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્યો અને અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં ન્યૂન પ્રમાણમાં હોતાં નથી—પણ અધિક પ્રમાણમાં જ
હોય છે તે આનુપૂર્વીં દ્રવ્યોમાં આ અધિકતા ઓકીના દ્રવ્યોના સંખ્યાતમાં
ભાગપ્રમાણ પણ કહી નથી, અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ પણ કહી નથી,
સંખ્યાત ભાગોપ્રમાણ પણ કહી નથી, પરંતુ અસંખ્યાત ભાગો પ્રમાણ જ

અર્થે માત્ર:—આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાપેક્ષ્યા અસંખ્યેયગુણાનિ સન્તિ, યથા જ્ઞતર્યાઽશીતિઃ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ, અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ, અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ, પુતત્રયમસત્કલ્પનયા જ્ઞતસ્વરૂપં, તન્નાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ-અશીતિસંખ્યાતુલ્યાનિ, શેષદ્રવ્યાણિ=અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકરૂપાણિ પ્રત્યેકં દશ-દશ ગણનયા વિજ્ઞતિસંખ્યાતુલ્યાનીતિ ।

નનુ શેષદ્રવ્યાપેક્ષ્યાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ સ્તોકાન્યપિ ભવન્તુ, કા હાનિઃ ? इति चेदुच्यते-अनानुपूर्वीद्रव्याणि परमाणुरूपाण्येव, अवक्तव्यकद्रव्याणि तु द्व्यणुक-

ગુણે-અધિક-હે । જૈસે માન લિયા જાવે કિ ચે તીનોં દ્રવ્ય ૧૦૦, સંખ્યા કેસ્થાનાપન્ન હૈ । इनमें अस्सी संख्या के तुल्य आनुपूर्वी द्रव्य हैं । और शेष संख्या २०, बीस के तुल्य अर्थात् १०-१० दस संख्या के बराबर-अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य हैं । शेष द्रव्यों के संख्यातवे अસં-ખ્યાતવે ભાગ સે અથવા સંખ્યાત ભાગોં કી અપેક્ષા આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કો અધિક માનને પર उनमें असंख्यात गुणी अधिकता नहीं आसकने से हीनता आती है ।

શંકા-यदि शेष द्रव्यों की अपेक्षा समस्त आनुपूर्वी द्रव्यस्तोक-अल्प कम भी मानलिये जावे तो इसमें क्या हानि है ?

કહી છે એટલે કે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં વધારે છે. ધારે કે આ ત્રણે દ્રવ્યો મળીને ૧૦૦નું પ્રમાણ થાય છે, તેમાંથી ૮૦ ભાગ પ્રમાણ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો હોય અને ૧૦-૧૦ ભાગ પ્રમાણ અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો હોય તો બાકીના દ્રવ્યો ૨૦ ભાગપ્રમાણ હોવાથી તેમના કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ચાર ગણું હોવાથી તેમાં અસંખ્યાતગણી અધિકતા ગણી શકાય નહીં પરન્તુ સૂત્રકારે તેમાં અસંખ્યાતગણી અધિકતા કહી છે તેથી આ પ્રકારનું કથન કરવામાં અસંખ્યાત ગણી અધિકતા નહીં આવી શકવાને કારણે હીનતા આવી જાય છે. કારણ કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને બાકીના દ્રવ્યો કરતાં સંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ પણ કહ્યા નથી, અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ પણ કહ્યા નથી, સંખ્યાત ભાગપ્રમાણ (સંખ્યાત ગણાં) પણ કહ્યાં નથી, પણ અસંખ્યાત ભાગપ્રમાણ (અસંખ્યાત ગણાં જ) કહ્યાં છે.

શંકા-જો બાકીનાં દ્રવ્યો કરતાં સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યને અલ્પ માનવામાં આવે તો તેમાં શી હરકત છે ?

જેનુયોગચન્દ્રિકાટીકા સૂત્ર ૮૮ ભાગદ્વારનિરૂપણમ્

૩૮૧

રૂપાણ્યેવ, આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ તુ ડ્યણુકચતુરણુકપ્રમૃત્યનન્તાણુકપર્યન્તાનિ, અતઃ શેષદ્રવ્યાપેક્ષયાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અસંખ્યેયભાગૈરધિકાનિ બોધ્યાનિ । ઉક્તં ચાર્ધિ—

“एएसि णं भंते । परमाणुपोगलाणं संखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपएसियाणं अणंतपएसियाणं अणंतपएसियाणं य खंधाणं कयरे कयरेहितो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा त्रिसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थो वा अणंतपएसिया खंधा, परमाणुपोगला अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा असंखेज्जगुणा ”

છાયા-एतेषां खलु भदन्त ! परमाणुपुद्गलानां संख्येयप्रदेशिकानाम् असंख्येयप्रदेशिकानाम् अनन्तप्रदेशिकानां च स्कन्धानां के केभ्योऽस्या वा बहुका वा तुल्या वा विशेषाधिका वा ?, गौतम ! सर्वस्तोका अनन्तप्रदेशिकाः स्कन्धाः,

ઉત્તર—अनानुपूर्वी द्रव्य परमाणुरूप ही है और अवक्तव्यक द्रव्य द्रव्यणुक रूप ही है । तथा आनुपूर्वी द्रव्य ङणुक आदि स्कंध से लेकर अनन्ताणुक स्कंध पर्यन्त है—इसलिये ये आनुपूर्वी द्रव्य शेष द्रव्यों की अपेक्षा असंख्यातभागों से अधिक है ऐसा जानना चाहिये । अन्यत्र भी इसी बात को यों कहा है—हे भदन्त ! परमाणु रूप पुद्गलों में संख्यात प्रदेश वाले स्कंधों में, असंख्यात प्रदेश वाले स्कंधों में और अनन्त प्रदेश वाले स्कंधों में कौन किनसे अल्प है ? कौन किनसे-बहुत है ? कौन किनसे तुल्य है ? अथवा कौन किनसे विशेष अधिक है ?

ઉત્તર—हे गौतम सबसे कम अनन्तप्रदेशी स्कंध है, परमाणु पुद्गल इनसे अनन्त गुणित है संख्यात प्रदेशी स्कंध संख्यात गुणित है ।

ઉત્તર—अनानुपूर्वी द्रव्य परमाणु ३५ ७ છે અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય દ્રવ્યણુક સ્કંધ ૩૫ ૭ છે પરંતુ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ત્રિઆણુક, આદિ અનંત આણુક પર્યન્તના સ્કંધ ૩૫ છે. તે કારણે તે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય બાકીના દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણું વધારે હોય છે, તે કારણે તેને બાકીના દ્રવ્યો કરતાં અલ્પ કહી શકાય નહીં વળી અન્યત્ર પણ એવું ૭ કહ્યું છે કે—“ હે ભગવન ! પરમાણુ૩૫ પુદ્ગલો, સંખ્યાત પ્રદેશોવાળા સ્કંધો, અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા સ્કંધો અને અનંત પ્રદેશોવાળા સ્કંધોમાં કોણ કોનાથી અલ્પ છે, કોણ કોનાથી અધિક છે, કોણ કોની બરાબર છે અને કોણ કોના કરતાં વિશેષાધિક છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! અનંતપ્રદેશી સ્કંધ સૌથી અલ્પપરમાણુમાં છે, પરમાણુપુદ્ગલ તેમનાં કરતાં અનંત ગણાં છે, સંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ

પરમાણુપુદ્ગલા અનન્તગુણાઃ, સંસ્થેયમદેશિકાઃ સ્કન્ધાઃ સંસ્થેયગુણાઃ, અસંસ્થેય-
મદેશિકાઃ સ્કન્ધા અસંસ્થેયગુણાઃ, ઇતિ ।

અત્ર સૂત્રે સર્વસ્યા અપિ પુદ્ગલજાતેરપેક્ષયાઽસંસ્થયાતપ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધા અસં-
સ્થયાતગુણા ઉક્તાઃ । અસંસ્થયાતપ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધાસ્તુ આનુપૂર્વ્યામેવાન્તર્ભવન્તિ,
અતસ્તદપેક્ષયા આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષસમસ્તદ્રવ્યેભ્યોઽપિ અસંસ્થયાતગુણાનિ કિં
પુનરનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યમાત્રાત્ । ‘અધિકાની’તિ અર્થસ્વારસ્યાદાક્ષિપ્યતે ।

તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ=પરમાણુરૂપાણિ દ્રવ્યાણિ
શેષદ્રવ્યાણામ્=આનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણામપેક્ષયા કિયતિભાગે ભવન્તિ ? કિંસંસ્થે-
યેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? કિમસંસ્થેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-નો
સંસ્થેયતમભાગે ભવન્તિ, કિંતુ અસંસ્થેયતમભાગે ભવન્તિ, નો સંસ્થેયેષુ ભાગેષુ
ભવન્તિ, નો અસંસ્થેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ-શેષદ્રવ્યાણામ્

ઔર અસંસ્થયાત પ્રદેશી સ્કંધ અસંસ્થયાત ગુણિત હૈ । હસ સૂત્ર મૈં સમ-
સ્ત પુદ્ગલ જાતિ કી અપેક્ષા સે ઉસકે અસંસ્થયાત પ્રદેશી સ્કંધ અસં-
સ્થયાત ગુણે કહેં હૈં । સો યે અસંસ્થયાત પ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વી મૈં હી
અન્તર્ભૂત હો જાતે હૈં । હસલિયે હસ અપેક્ષા સે સબ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
શેષ સમસ્ત દ્રવ્યોં સે ખી જબ અસંસ્થયાત ગુણિત હૈં તો કિ અનાનુપૂર્વી
ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે યે અસંસ્થયાત ગુણે હૈં હસમૈં તો
કહના હી ક્યા હૈ । સૂત્ર મૈં “અધિક” પદ નહીં કહા ગયા હૈ કિહ
ખી યહાં ઉસકા આક્ષિપ્ત અર્થે કે અનુસાર કિયા ગયા હૈ । તથા
નૈગમવ્યવહારનય સંમત જો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય-પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય હૈં હે
આનુપૂર્વી ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે ઉનકે અસંસ્થયાતમૈં

અસંસ્થયાત ગણાં છે. અને અસંસ્થયાત પ્રદેશી સ્કંધ અસંસ્થયાતગણા છે.
આ સૂત્રમાં સમસ્ત પુદ્ગલ જાતિની અપેક્ષાએ તેના અસંસ્થયાત પ્રદેશી સ્કંધો
અસંસ્થયાત ગણાં કહ્યા છે. તે અસંસ્થયાત પ્રદેશી સ્કંધોનો આનુપૂર્વીમાં જ
સમાવેશ થઈ બંધ છે આ રીતે વિચાર કરતાં, જો સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
ખાકીના સમસ્ત દ્રવ્યો કરતાં પણ અસંસ્થયાત ગણાં છે, તો અનાનુપૂર્વી અને
અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં તો તે અસંસ્થયાત ગણાં હોય એમાં શંકા કરવા
જેવું જ નથી. સૂત્રમાં “અધિક” પદ વાપર્યું નથી, છતાં પણ અહીં તેના
અર્થનો સ્પષ્ટ ખ્યાલ આપવા માટે તે પદનો પ્રયોગ કર્યો છે.

તથા નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત જે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (પરમાણુ
દ્રવ્ય) છે તે આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંસ્થયાતમાં ભાગ-
પ્રમાણ છે. તે ખાકીના દ્રવ્યોના સંસ્થયાતમાં ભાગપ્રમાણ નથી, સંસ્થયાત

असंख्येयतममागे टीका सूत्र ८९ भावद्वारनिरूपणम्

३८३

असंख्येयतममागे भवन्ति-सन्ति, न तु शेषभागेषु त्रिषु । असत्कल्पनया यथा शतस्य दश, भवन्ति । न तु शेषेषु त्रिषु भागेषु भवन्ति । तदेवाह-‘एवं अवत्तव्यगदव्याणि वि’ इति । एवमवत्तव्यकद्रव्याण्यपि भणितव्यानि=अवत्तव्यकद्रव्याण्यपि अनानुपूर्वीवदेव शतस्य दशवद् विज्ञेयानि ॥सू० ८८॥

अथाष्टमं भावद्वारमाह—

मूलम्—गेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं कतरम्मि भावे होज्जा ? किं उदइए भावे होज्जा ? उवसमिए भावे होज्जा ? खइए भावे होज्जा ? खओवसमिए भावे होज्जा पारिणामिए भावे होज्जा ? संनिवाइए भावे होज्जा ? णियमा साइपारिणामिए भावे होज्जा । अणाणुपुव्वीदव्वाणि अवत्तव्यगदव्याणि य एवं चेव भाणियव्वाणि ॥सू० ८९॥

छाया—नैगमव्यवहारयोरानुपूर्वीद्रव्याणि कतमस्मिन् भावे भवन्ति ? किमौदयिके भावे भवन्ति ? औपशमिके भावे भवन्ति ? क्षायिके भावे भवन्ति ?

भाग हैं । शेष तीन भागों से अधिक नहीं हैं । जैसे मान लिया जावे कि ये तीनों द्रव्य १०० संख्यात रूप में हैं—इनमें शेष द्रव्यों की अपेक्षा से आनुपूर्वी द्रव्य ८० और अनानुपूर्वी द्रव्य १०, दश है । इसी प्रकार अवत्तव्यक द्रव्य भी आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा सौ के दश की तरह उनके असंख्यातवे भाग जानना चाहिये शेष तीन भागों से नहीं । ॥ सू० ८८ ॥

गल्लुं पल्लुं नथी अने असंख्यात गल्लुं पल्लुं नथी. धारे के आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी अने अवत्तव्यक, आ त्रल्लुं द्रव्यो भणीने १०० सो नी संख्या इपे छे. तेमां आझीना द्रव्योनी अपेक्षाके आनुपूर्वी द्रव्य ८० अने अनानुपूर्वी द्रव्य दशनी संख्या इप छे अने प्रमाणे अवत्तव्यक द्रव्य पल्लु आनुपूर्वी अने अनानुपूर्वी द्रव्योनी अपेक्षाके १०मांथी १०० नी जेम तेमना असंख्यातमां आगइप न समजवुं तेने तेमना संख्यातमां आगइप अथवा तेमना कर्ता संख्यात गल्लुं के असंख्यात गल्लुं समजवुं लेधके नही. ॥सू० ८८॥

૬૪૪

અનુયોગદ્વારણ

ક્ષાયોપશમિકે ભાવે ભવન્તિ? પારિણામિકે ભાવે ભવન્તિ? સાન્નિપાતિકે ભાવે ભવન્તિ? નિયમાત્ સાદિ પારિણામિકે ભાવે ભવન્તિ । અનાનુપૂર્વદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ ચ એવમેવ ભણિતવ્યાનિ ॥૬૪૦ ૮૯॥

અથ સૂત્રકાર અષ્ટમ જો ભાવદ્વાર છે—ઉસકા કથન કરતે છે—

“જેગમવવહારાણ” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણ આણુપુલ્લીદવાઈ કતરમ્મિ ભાવે હોજ્જા)

પ્રશ્ન—જેગમવવહારનય સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કિસ ભાવ મેં વર્તતે છે? (કિં ઉદ્દિય ભાવે હોજ્જા?) કયા ઔદયિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (ઉવસમિયે ભાવે હોજ્જા) યા ઔપશમિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (સ્વદિય ભાવે હોજ્જા?) યા ક્ષાયિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (સ્વઔવસમિયે ભાવે હોજ્જા?) યા ક્ષાયોપશમિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (પારિણામિયે ભાવે હોજ્જા) યા પારિણામિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (સંનિવાદિયે ભાવે હોજ્જા) યા સાન્નિપાતિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (નિયમા સાદિ પારિણામિયે ભાવે હોજ્જા)

સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નિયમ સે સાદિ પારિણામિક ભાવ મેં વર્તતે છે । દ્રવ્ય કા ઉસ-ઉસ રૂપસે જો પરિણમન હોતા છે ઉસકા નામ પરિણામ છે । હસ પરિણામ કા નામ હી પારિણામિક છે । અથવા પરિણામ હોતા હો યા પરિણામ સે જો બનતા હો ઉસકા નામ પારિણામિક છે ।

હવે સૂત્રકાર અનુગમના અઠમાં લેદ રૂપ ભાવદ્વારનું કથન કરે છે—

“જેગમવવહારાણ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણ આણુપુલ્લી દવાઈ કતરમ્મિ ભાવે હોજ્જા?)

પ્રશ્ન—જેગમ અને વ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કયા ભાવમાં રહે છે? (કિં ઉદ્દિય ભાવે હોજ્જા) શું ઔદયિક ભાવમાં રહે છે? (ઉવસમિયે ભાવે હોજ્જા?) કે ઔપશમિક ભાવમાં રહે છે? (સ્વદિય ભાવે હોજ્જા?) કે ક્ષાયિક ભાવમાં રહે છે? (સ્વઔવસમિયે ભાવે હોજ્જા?) કે ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં રહે છે? (પારિણામિયે ભાવે હોજ્જા?) કે પારિણામિક ભાવમાં રહે છે? (સંનિવાદિયે ભાવે હોજ્જા?) કે સાન્નિપાતિક ભાવમાં રહે છે?

ઉત્તર—(નિયમા સાદિપારિણામિયે ભાવે હોજ્જા) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નિયમથી જ સાદિપારિણામિક ભાવમાં રહે છે દ્રવ્યનું તે તે રૂપે બે પરિણમન થાય છે તેનું નામ પરિણામ છે એ પરિણામનું નામ જ પારિણામિક

અનુલોગચંદ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૮૯ ભાવદ્વારનિરૂપણમ્

૩૮૫

યહ પરિણામ દો પ્રકાર કા હોના હૈ—એક સાદિ ઓર દૂસરા અનાદિ । ધર્માસ્તિકાચ આદિ જો અરૂપી દ્રવ્ય હૈં' ઉસકા જો ઉસ—ઉસ રૂપ સે સ્વાભાવિક પરિણમન હૈ વહ અનાદિ પરિણામ હૈ । ક્યોં કિ અનાદિ કાલ સે હી इन દ્રવ્યોં કા પરિણમન હસી રૂપ સે હોતા ચલા આરહાહૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ इन દ્રવ્યોં કા જો સ્વાભાવિક સ્વરૂપ પરિણમન હૈં' વહી અનાદિ પરિણામ હૈ । પરંતુ જો રૂપી દ્રવ્ય—પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈ' ઉનકા ઉસ ઉસ પ્રકાર કા જો પરિણમન હોતા હૈ વહ સાદિ પરિણામ હૈ । ક્યોંકિ અન્ન, હન્દ્રધનુષ આદિ પૌદ્ગલિક દ્રવ્યોં કે ઉસ ઉસ પ્રકાર કે પરિણમન મેં અનાદિતા હોતી હૈ । હસલિયે સમસ્ત આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય સાદિ પારિણામિક ભાવ મેં વર્નતે હૈં । અર્થાત્ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં જો આનુપૂર્વી રૂપ વિશિષ્ટ પરિણામ હૈ વહ અનાદિ કાલીન નહીં હૈ । કારણ—પુદ્ગલોં કા જો એક વિશિષ્ટ રૂપ સે પરિણામ હોતા હૈ વહ ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા અસંરૂપાત કાલતક હી સ્થાયી માના ગયા હૈ । હસી પ્રકાર સે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઓર સમસ્ત અવક્તવ્ય બી સાદિ પરિણામિક ભાવ મેં હી રહતે હૈં । ઔદયિક ભાવોં કી વ્યાખ્યા આગે કી જાવે બી હસલિયે યહાં નહીં કી ગઈ હૈ ।

છે. તે પરિણામ બે પ્રકારનું હોય છે—(૧) સાદિ પરિણામ, (૨) અનાદિ પરિણામ ધર્માસ્તિકાચ આદિ જે અરૂપી દ્રવ્યો છે તેમનું તે તે રૂપે જે સ્વાભાવિક પરિણમન થાય છે તેનું નામ અનાદિ પરિણામ છે, કારણ કે અનાદિ કાળથી જે તે દ્રવ્યોનું આ રૂપે પરિણમન થતું આવે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે આ દ્રવ્યોનું જે સ્વાભાવિક સ્વરૂપ પરિણમન છે, એજ અનાદિ પરિણામ છે. પરંતુ જે રૂપી દ્રવ્ય (પુદ્ગલ દ્રવ્ય) છે તેમનું તે તે પ્રકારનું જે પરિણમન થાય છે તે સાદિ પરિણામ છે, કારણ કે વાદળાં, મેઘધનુષ આદિ પૌદ્ગલિક દ્રવ્યોના તે તે પ્રકારના પરિણમનમાં અનાદિતા હોતી નથી તેથી એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સાદિપરિણામિક ભાવમાં રહે છે. એટલે કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં જે આનુપૂર્વી રૂપ વિશિષ્ટ પરિણામ છે તે અનાદિ કાલિન નથી કારણ કે પુદ્ગલોં જે એક વિશિષ્ટ રૂપે પરિણમન થાય છે તે વધારેમાં વધારે અસંરૂપાત કાળ સુધી જે સ્થાયી રહે છે, એમ માનવામાં આવે છે. એજ પ્રમાણે સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અને સમસ્ત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પણ સાદિપરિણામિક ભાવમાં જે રહે છે ઔદયિક આદિ ભાવોનું સ્પષ્ટીકરણ આગળ કરવામાં આવશે.

ટીકા—‘યોગમવવહારાણં’ इत्यादि—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કતમસ્મિન્ ભાવે ભવન્તિ ?
 इति सामान्यतः पृष्ट्वा विशेषतः पृच्छति—किमौदयिके भावे भवन्ति ?
 किमौपशमिके भावे भवन्ति ? क्षાયिके भावे भवन्ति क्षायोपशमिके
 भावे भवन्ति ? पारिणामिके भावे भवन्ति ?, सांनिपातिके भावे भवन्ति ? इति
 उत्तरमाह—नियमात्=भवत्यतया—आनુपૂર્વીદ્રવ્યાણિ સાદિપારિણામિકે—ભાવે—
 ભવન્તિ । તત્ર—પરિણમનં દ્રવ્યસ્ય તેન તેન રૂપેણ ભવનં પરિણામઃ, સ એવ પારિણા-
 મિકઃ, પરિણામે ભવઃ, પરિણામેન નિર્વૃત્ત इति वा पारिणामिकः । स च द्विविधः—
 सादिरनादिश्च तत्र—धर्मास्तिकायावरूपिद्रव्याणामनादिः परिणामः । अनादिकाच्चात्
 तत्तद्रव्यत्वेन तेषां परिणतत्वात् । रूपिद्रव्याणां तु सादिः परिणामः, अभ्यन्तद्रव्यनुरा-
 दीनां तथा परिणामस्यानादित्वाभावात् । सादिश्चासौ पारिणामिकश्च सादि पारि-

भावार्थ— આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય કોન સે ભાવ વાલે હૈં यह यहाँ
 प्रश्न किया गया है तब इसका उत्तर सूत्रकार ने यों दिया है कि ये
 सब आनुपूर्वी आदि पौद्गलिक द्रव्य सादि पारिमाणिक भाव वाले हैं ।
 पारिमाणिक भाव द्रव्य का वह परिणाम है जो सिर्फ द्रव्य के अस्तित्व
 से आप ही आप हुआ है । औपशमिक भाव कर्मों के उपशम से
 होता है । जैसे मल के नीचे बैठ जाने पर जलमें स्वच्छता होती है ।
 क्षायिक भाव कर्मों के क्षय से पैदा होता है । जैसे कीचड़ के सर्वथा
 नष्ट हो जाने पर जल में स्वच्छता आती है । क्षय और उपशम इन दोनों
 के संबन्ध से जो भाव उत्पन्न होते हैं वे क्षायोपशमिक भाव हैं—जैसे
 कोढ़ों-कोढ़कमें घोने पर कुछ मादक शक्ति नष्ट हो जाती है और कुछ

ભાવાર્થ—આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કયા ભાવવાળાં હોય છે, એવો અહીં
 પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે આ પ્રશ્નનો સૂત્રકારે એવો ઉત્તર આપ્યો છે કે
 સમસ્ત આનુપૂર્વી આદિ પૌદ્ગલિક દ્રવ્યો સાદિપારિણામિક ભાવવાળાં હોય
 છે. પારિણામિક ભાવદ્રવ્યનું એ પરિણામ છે કે જે માત્ર દ્રવ્યના અસ્તિ-
 ત્વમાં જ આપો આપ થયા કરે છે. ઔપશમિક ભાવ કર્મોના ઉપશમથી
 ઉત્પન્ન થાય છે. જેમ પાણીમાં રહેલો કચરો નીચે ખેંચી જઈને પાણી
 સ્વચ્છ થાય છે એજ પ્રમાણે કર્મોના ઉપશમથી ઔપશમિક ભાવ પેદા થાય
 છે. કર્મોના ક્ષયથી ક્ષાયિક ભાવ પેદા થાય છે જેમ કાદવો સર્વથા નાશ
 થઈ જવાથી પાણી સ્વચ્છ બની જાય છે એજ પ્રમાણે કર્મોના ક્ષય થવાથી
 ક્ષાયિક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે. ક્ષય અને ઉપશમ, આ બંનેના સંબંધથી જે
 ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તેમને ક્ષાયોપશમિક ભાવ કહે છે. જેમ કોદરોને
 પાણીમાં ઘેવાથી તેની થોડી માદકશક્તિ નષ્ટ થઈ જાય છે અને થોડી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦ અલ્પબહુત્વદ્વારનિરૂપણમ્

૩૮૭

નામિકઃ, તસ્મિન્ ભાવે ભવન્તિ, આનુપૂર્વોદ્ભવાણામાનુપૂર્વત્વેન પરિણામસ્યાના-
વિત્વાઽસંભવાત્, ઉત્કર્ષતો ત્રિશિષ્ટૈકપરિણામેન પુદ્ગલાનામસંલ્લેયકાલમેવાવસ્યા-
નાત્ । એવમનાનુપૂર્વોદ્ભવાણિ અવક્તવ્યકદ્ભવાણિ ચ સાદિપારિણામિકે ભાવે એવ
ભવન્તિ । ઔદયિકાદીનાં વ્યાસ્યાઽત્ર ન કૃતા, અગ્રે કરિણ્યમાણત્વાત્ ॥સૂ૦ ૮૯॥

મૂલ્ય-એસિ ણં મંતે ! જેગમવવહારાણં આણુપુવીદવાણં
અણાણુપુવીદવાણં અવત્તવગદવાણં ચ દવટ્ટયાણ પપસટ્ટયાણ
દવટ્ટપપસટ્ટયાણ કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા બહુયા વા તુલ્લા વા
વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા ! સવ્વત્થોવાઈં જેગમવવહારાણં અવત્ત-
વગદવાઈં દવટ્ટયાણ, અણાણુપુવીદવાઈં દવટ્ટયાણ વિસેસાહિયાઈં,
આણુપુવીદવાઈં દવટ્ટયાણ અસંખેજ્જગુણાઈં ૧ । પપસટ્ટયાણ સવ્વ-
ત્થોવાઈં જેગમવવહારાણં અણાણુપુવીદવાઈં અપપસટ્ટયાણ ।
અવત્તવગદવાઈં પપસટ્ટયાણ વિસેસાહિયાઈં । આણુપુવીદવાઈં
પપસટ્ટયાણ અણંતગુણાઈં ૨ । દવટ્ટપપસટ્ટયાણ સવ્વત્થોવાઈં જેગ-
મવવહારાણં અવત્તવગદવાઈં દવટ્ટયાણ । અણાણુપુવીદવાઈં દવ-

શેષ બચી રહતી હૈ । કર્મોં કે ઉદય સે હોને વાલે ભાવ ઔદયિક ભાવ
હૈ । જૈસે કીચડ કે સંબન્ધ સે જલમૈં મલિનતા હોતી હૈ । પારિણામિક
ભાવ કે દો ભેદ હૈ ૧ એક સાદિ પારિણામિક ભાવ ઔર-દૂસરા અનાદિ
પારિણામિક ભાવ । અનાદિ પારિણામિક ભાવ ધર્મોસ્તિકાયાદિક અસ્તુ-
ર્ત પદાર્થોં મૈં હોતા હૈ । ઔર સૂર્ત પૌદ્ગલિક દ્રવ્યોં મૈં સાદિ પારિણામિક
ભાવ હોતા હૈ । ॥ સૂ૦ ૮૯ ॥

ખાડી રહી જાય છે એજ પ્રમાણે ક્ષય અને ઉપશમને કારણે પણ કર્મોના
સ્થિતિ થાય છે કર્મોના ઉદયથી ઉત્પન્ન થતાં ભાવને ઔદયિક ભાવ કહે છે
એમ કાઢવને લીધે પાણી મલિન બને છે, એજ પ્રમાણે કર્મોના ઉદયથી
આત્મા પર કર્મોરૂપી મેલ જામે છે પારિણામિક ભાવના નીચે પ્રમાણે બે
ભેદ છે-(૧) સાદિ પારિણામિક ભાવનો સદ્ભાવ ધર્માસ્તિકાયા આદિ અમૂર્ત
દ્રવ્યોમાં હોય છે અને મૂર્ત પૌદ્ગલિક દ્રવ્યોમાં સાદિપારિણામિક ભાવનો
સદ્ભાવ હોય છે. ॥સૂ૦ ૮૬॥

૩૮૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

દ્વયાપ અપસદ્વયાપ વિસેસાહિયાઈં । અવત્તવ્વગદ્વાઈં પપસદ્વયાપ
વિસેસાહિયાઈં । આણુપુઘીદ્વાઈં દ્વદ્વદ્વયાપ અસંત્વેજ્જગુણાઈં,
તાઈં ચેવ પપસદ્વયાપ અણંતગુણાઈં ૩ । સે તં અણુગમે, સે તં
નેગમવ્વહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુઘી ॥સૂ૦ ૧૦॥

છાયા—એતેષાં સ્વલ્પ ભદન્ત ! નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામનાનુપૂર્વી-
દ્રવ્યાણામવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં ચ દ્રવ્યાર્થતયા પ્રદેશાર્થતયા દ્રવ્યાર્થપ્રદેશાર્થતયા
કાનિ કેમ્બોડલ્પાનિ વા બહુકાનિ વા તુલ્યાનિ વા વિશેષાધિકાનિ વા ? ગૌતમ !
સર્વસ્તોકાનિ નૈગમવ્યવહારયોરવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા, અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ

અથ સૂત્રકાર નવવેં અલ્પ બહુત્વ દ્વાર કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

“एएसिं णं भंते !” इत्यादि

શબ્દાર્થ—(મંતે ! જોગમવ્યવહારાણં એસિં આણુપુઘી દ્વાણં અણાણુ-
પુઘીદ્વાણં અવત્તવ્વગદ્વાણં ય દ્વદ્વદ્વયાપ પપસદ્વયાપ, દ્વદ્વદ્વપ-
સદ્વયાપ કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા બહુયા વા તુલ્લા વા વિસેસા-
હિયા વા ?) હે ભદન્ત ! નૈગમ વ્યવહારનય સંમત હન આનુપૂર્વી દ્રવ્યો
કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કે, ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કે ધીચ મેં દ્રવ્યાર્થતા
પ્રદેશાર્થતા ઓર દ્રવ્યાર્થ પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા કરકે કૌન ૨ દ્રવ્ય
કિન ૨ દ્રવ્યો સે અલ્પ હૈં ? કૌન ૨ દ્રવ્યો સે અધિક હૈં ? કૌન ૨ કિન-
૨ કે સમાન હૈં ? કૌન ૨ કિન ૨ દ્રવ્યો સે વિશેષ અધિક હૈં ?

હવે સૂત્રકાર નવમાં અલ્પબહુત્વ દ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“ एएसिं णं भंते ! ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(મંતે ! જોગમવ્યવહારાણં એસિં આણુપુઘીદ્વાણં અણાણુપુઘી
દ્વાણં અવત્તવ્વગદ્વાણં ય દ્વદ્વદ્વયાપ પપસદ્વયાપ, દ્વદ્વદ્વપપસદ્વયાપ કયરે
કયરેહિંતો અપ્પા વા બહુયા વા તુલ્લા વા વિસેસાહિયા વા ?) હે ભગવન્ !
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત આ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની દ્રવ્યાર્થતા, પ્રદેશાર્થતા અને દ્રવ્યાર્થપ્રદેશાર્થ-
તાની અપેક્ષાએ સરખામણી કરવમાં આવે, તો કયા કયા દ્રવ્યો કરતાં ન્યૂન
છે ? કયા કયા દ્રવ્યો કયા કયા દ્રવ્યો કરતાં અધિક છે ? કયા કયા દ્રવ્યો
કયા કયા દ્રવ્યોની બરાબર છે ? અને કયા કયા દ્રવ્યો કયા કયા દ્રવ્યોથી
વિશેષાધિક છે ?

દ્રવ્યાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા અસંખ્યેયગુણાનિ ।
પ્રદેશાર્થતયા સર્વસ્તોકાનિ નૈગમવ્યવહારયોઃ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અપ્રદેશાર્થતયા

ઉત્તર- (ગોયમા દંઢ્વદ્વ્યાપ ળેગમવવહારાણં અવત્તવ્વમદંઢ્વાઈ સવ્વથોવાઈ) હે ગૌતમ ! દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય સર્વસ્તોક હૈં—અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો સે ખી અલ્પ હૈં । (અણાણુપુઢ્વી દંઢ્વાઈ દંઢ્વદ્વ્યાપ વિસેસાહિયાઈ) તથા અનાનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે વિસેષાધિક હૈં—અવક્તવ્યક દ્રવ્યો સે કુછ અધિક હૈં । વિસેષાધિકતા ઇનમૈં વસ્તુસ્થિતિ કે સ્વભાવ સે હૈ । “તદુક્તમ્” ઇન પરમાણુ પુદ્ગલોં કે ઓર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધોં કે બીચ મૈં કૌન કિસસે અધિક હૈ ? ગૌતમ ! દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધોં સે પરમાણુ પુદ્ગલ-અધિક હૈં । ઇસ કથન કે અનુસાર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા પર-માણુરૂપ પુદ્ગલ અધિક પ્રમાણિત હોતે હૈં । (દંઢ્વદ્વ્યાપ આણુપુઢ્વી દંઢ્વા-ઈ અસંખેજ્જગુણાઈ) તથા દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અસં-ખ્યાત ગુણિત હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈં ડનમૈં પરમાણુરૂપ ઇક ઇક હી સ્થાન લભ્ય હૈ, ઇવં જો અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં ડનમૈં ખી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ ઇક ઇક સ્થાન હી લભ્ય હૈં પરંતુ જો

ઉત્તર-(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (દંઢ્વદ્વ્યાપ ળેગમવવહારાણં અવત્તવ્વમ-દંઢ્વાઈ સવ્વથોવાઈ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ નૈગમ અને વ્યવહાર નય-સંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય સૌથી અલ્પ છે-એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોથી પણ તે અલ્પપ્રમાણમાં હોય છે. (અણાણુપુઢ્વીદંઢ્વાઈ, દંઢ્વદ્વ્યાપ વિસેસાહિયાઈ) તથા દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો વિશેષાધિક છે. તેમાં આ વિશેષાધિકતા વસ્તુસ્થિતિના સ્વભાવની અપેક્ષાએ સમજવી. “તદુક્તમ્” કહ્યું પણ છે કે “હે ભગવન ! પરમાણુ પુદ્ગલો અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો, આ બન્નેમાંથી કોણ કોના કરતાં અધિક છે? ઉત્તર-હે ગૌતમ ! દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો કરતાં પરમાણુ પુદ્ગલો અધિક હોય છે.” આ કથન અનુસાર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો રૂપ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં પરમાણુ-પુદ્ગલ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અધિક છે, એ વાત પ્રમાણિત થાય છે. (દંઢ્વદ્વ્યાપ આણુપુઢ્વીદંઢ્વાઈ અસંખેજ્જગુણાઈ) તથા દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં છે. આ કથનનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે જે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમાં પરમાણુ રૂપ એક એક સ્થાન જ લભ્ય હોય છે, અને જે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો છે તેમાં પણ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ એક એક જ સ્થાન લભ્ય હોય છે. પરંતુ જે

અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા-
 ઽનન્તગુણાનિ ૨ । દ્રવ્યાર્થપ્રદેશાર્થતયા સર્વસ્તોકાનિ નૈગમવ્યવહારયોરવક્તવ્યદ્રવ્યાણિ
 દ્રવ્યાર્થતયા । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા, અપ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । અવ-
 ક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા
 અસંરુપ્યગુણાનિ, તાન્યેવ પ્રદેશાર્થતયા અનન્તગુણાનિ । સ ષ્ષોઽનુગમ । સૈવા
 નૈગમવ્યવહારયોઃ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી ॥૬૦ ૧૦॥

આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈં उनमें अणुक स्कंध से लगाकर एकोत्तर वृद्धि से एक
 एक प्रदेश की उत्तरोत्तर वृद्धि होने से अनन्ताणुक स्कंध पर्यन्त अन-
 न्त स्थान हैं । इसलिये स्थान की बहुत विवक्षा से आनुपूर्वी द्रव्य अनानु-
 पूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा असंख्यातगुणे कहे गये हैं ।

શંકા— यदि आनुपूर्वी द्रव्यों के स्थान पूर्व की अपेक्षा अनन्त हैं
 इसलिये आनुपूर्वी द्रव्य असंख्यात गुणों पूर्व की अपेक्षा लेकर के कहे
 गये हैं, सो ये कहना ठीक नहीं है क्योंकि इस प्रकार के कथन से तो
 उन आनुपूर्वी द्रव्यों में उनकी अपेक्षा असंख्यातगुणता न आकर
 अनन्त गुणता ही आती है ?

उत्तर—अनन्ताणुक जो स्कंध हैं वे तो अनानुपूर्वीद्रव्यों की अपेक्षा से
 अनन्त भागवर्ती होने के कारण स्वभावतः ही स्तोक-कम-हैं । इसलिये
 अनन्ताणुक स्कंधों को लेकर आनुपूर्वी द्रव्यों में-आनुपूर्वी के स्थानों में
 कुछ वृद्धि नहीं होती है । इसलिये यथार्थरूप में उनमें-आनुपूर्वीद्रव्यों

આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમાં તે ત્રિઆણુક સ્કંધથી લઇને ક્રમે ક્રમે એક એક
 પ્રદેશની ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ થતાં થતાં અનન્તાણુક સ્કંધ પર્યન્તના અનન્ત
 સ્થાન હોય છે તેથી સ્થાનના બહુવની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુ-
 પૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં કહેવામાં આવ્યાં છે.

શંકા—જો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના સ્થાન અનન્ત હોય, અને અનાનુપૂર્વી
 દ્રવ્યોના તથા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનાં સ્થાન એક એક હોય તો અહીં આનુપૂર્વી
 દ્રવ્યોને અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનન્ત ગણાં કહેવા
 જોઈતા હતાં છતાં અહીં તેમને અસંખ્યાત ગણાં શા કારણે કહ્યાં છે ?

ઉત્તર—અનન્તાણુક જે સ્કંધો છે તેઓ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અન-
 તમાં ભાગપ્રમાણ હોવાને કારણે સ્વાભાવિક રીતે જ સ્તોક (ઓછાં, ન્યૂન)
 છે. તેથી અનન્તાણુક સ્કંધોને લીધે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં-આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનાં
 સ્થાનોમાં ખાસ કોઈ વૃદ્ધિ થતી નથી. તેથી યથાર્થ રૂપે તો તે આનુપૂર્વી

ટીકા—‘एएसि णं’ इत्यादि-

हे भदन्त ! नैगमव्यवहारसम्मतानामेतेषामानुपूर्वीद्रव्याणामनानुपूर्वी द्रव्याणामवक्तव्यकद्रव्याणां च मध्ये द्रव्यार्थतया=द्रव्यमेवार्थो द्रव्यार्थस्तस्यभावो द्रव्यार्थता तथा, द्रव्यत्वेनेत्यर्थः, द्रव्यत्वमपेक्ष्य, प्रदेशार्थतया=प्रदेशत्वमपेक्ष्य, द्रव्यार्थप्रदेशार्थतया=द्रव्यत्वं प्रदेशत्वं चापेक्ष्य कानि केभ्यः अल्पानि विशेषहीनत्वादिना स्तोकीनि वा भवन्ति ? बहुकानि=असंख्येयगुणत्वादिनाधिकानि वा भवन्ति ? तुल्यानि=समसंख्यत्वेन समानि वा, किंचिदाधिक्येन विशेषाधिकानि वा भवन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—हे गौतम ! द्रव्यार्थतया=द्रव्यार्थत्वमपेक्ष्य नैगमव्यवहारसम्मतानि अवक्तव्यकद्रव्याणि सर्वस्तोकानि=अनानुपूर्वीद्रव्येभ्य आनुपूर्वीद्रव्येभ्यश्च अल्पानि । अनानुपूर्वीद्रव्याणि तु द्रव्यार्थतया विशेषाधिकानि=अवक्तव्यकद्रव्येभ्यः किंचिदधिकानि । विशेषाधिक्यं त्वस्य वस्तुस्थितिस्वभावात् । तदुक्तम्—

‘एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं दुप्पएसियाणं खंधाणं कयरे कयरेहिंते बहुया ? गोयमा ! दुप्पएसिएहिंते खंधेहिंते परमाणुपोग्गला बहुया ॥

छाया—एतेषां खलु भदन्त ! परमाणुपुद्गलानां द्विप्रदेशिकानां स्कन्धानां मध्ये के केभ्यो बहुकाः; ३ गौतम ! द्विप्रदेशिकेभ्यः स्कन्धेभ्यः परमाणुपुद्गला बहुकाः ० ३ इति ।

મે- અસંખ્યાત ગુણિત હી સ્થાન ધનતે હૈં ઓર ઊન્હીં સ્થાનોં કો લેકર ઊનમેં અસંખ્યાત ગુણતા આતી હૈ । અનંતગુણતા નહીં । યહ સબ વિષય અનુગમકે ભાગ નામ કે સસપ્રદાર મેં કથિત “एएसि णं भंते !” इत्यादि सूत्रपाठ से जान लेना चाहिये ॥ इस प्रकार द्रव्यार्थता की अपेक्षा लेकर बहुत्व का कथन करके अब सूत्रकार प्रदेशत्व की अपेक्षा से आनुपूर्वी आदि

દ્રવ્યોમાં અસંખ્યાત ગણાં જ સ્થાન ધને છે, અને એજ સ્થાનોની અપેક્ષાએ તેમનામાં (આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં) અસંખ્યાત ગુણિતતા જ સંભવી શકે છે- અનંત ગુણિતા સંભવી શકતી નથી. ૮૮માં સૂત્રમાં અનુગમના ભાગદ્વાર નામના સાતમાં લેહનું પ્રતિપાદન કરતી વખતે સૂત્રકરે “एएसि णं” इत्यादि सूत्रपाठ द्वारा આ વિષયનું વિશેષ વર્ણન કર્યું છે. તે તે સૂત્રમાંથી તે વાંચી લેવું. આ રીતે દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો આદિની અલ્પબહુતાનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર પ્રદેશત્વની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના અલ્પબહુત્વનું કથન કરે છે-

તથા-દ્રવ્યાર્થતયા આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અસંસ્થયેયગુણાનિ ।

અર્થે ભાવઃ-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ પરમાણુલક્ષણં સ્થાનમેકૈકમેવ લભ્યતે, અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ દ્રવ્યણુકસ્કન્ધલક્ષણં સ્થાનમેકૈકમેવલભ્યતે । આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ તુ વ્યણુકસ્કન્ધમમૃતીનિ ઇકોત્તરવૃદ્ધ્યાઽનન્તાણુકસ્કન્ધપર્યન્તાનિ અનન્તાનિ સ્થાનાનિ

દ્રવ્યોં મેં અલ્પ વહુત્વ કા કથન કરકે અવ સૂત્રકાર પ્રદેશત્વ કી અપેક્ષા સે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં મેં અલ્પ વહુત્વકા કથન કરતે હેં-(જેગમવવહારાણં અણાણુપુઞ્ચીદઢ્વાઈં પપસદૃયાપ સઢ્વત્થોવાઈં) નેગમ વ્યવહારનય સંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય પ્રદેશત્વ કી અપેક્ષા કરકે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં સે ણં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે અલ્પ હેં । કયોં કિ (અપપસદૃયાપ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં પ્રદેશરૂપ અર્થકા અભાવ હેં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હેં કિ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં બી યદિ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશ હોં તો દ્રવ્યાર્થતા કી તરહ પ્રદેશાર્થતા મેં બી અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે ડનકી અધિકતા હોં જાવે પરન્તુ ઇસા તો હેં નહીં કયોં કિ પરમાણુ અપ્રદેશી હોતા હેં-ઇસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હેં । ઇસલિયે પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા સે યે આનુપૂર્વી-દ્રવ્ય સર્વસ્તોક-થોડે કહે ગયે હેં । નિર્કર્ણર્થ ઇસકા યહ હેં કિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા લેકર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં સે કુછ અધિક કહે ગયે હેં ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ઇનસે કમ । સો યદિ પરમાણુરૂપ ઇન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં બી યદિ દ્વિતીયાદિક પ્રદેશ માન લિયે જાવેં

(જેગમવવહારાણં અણાણુપુઞ્ચીદઢ્વાઈં પપસદૃયાપ સઢ્વત્થોવાઈં) નેગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો પ્રદેશત્વની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અને આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અલ્પ હોય છે, કારણ કે (અપપસદૃયાપ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં પ્રદેશ રૂપ અર્થનો અભાવ હોય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે જો પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં પણ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશોનો સદ્ભાવ હોત તો દ્રવ્યાર્થતાની જેમ પ્રદેશાર્થતામાં પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં તેમની અધિકતા જ હોત પરન્તુ એવી કોઈ વાતનો તો સદ્ભાવ જ નથી, કારણ કે પરમાણુ અપ્રદેશી હોય છે, એવું સિદ્ધાંતનું વચન છે. તે કારણે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને સૌથી અલ્પ કહેવામાં આવેલ છે આ સમસ્ત કથનનો ભાવર્થ એ છે કે દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક કહેવામાં આવેલ છે. એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અવક્તવ્યક-દ્રવ્યો અલ્પ કહેવામાં આવ્યાં છે. પણ પ્રદેશત્વની અપેક્ષાએ તો આનુપૂર્વી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦ અવ્યવહૃત્વદ્વારનિરૂપણમ્

૩૨૩

પાપ્યન્તે, અતઃ સ્થાનબહુત્વાત્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેભ્યોઽવક્તવ્યક-
દ્રવ્યેભ્યઃસંસ્તવ્યેયગુણાનિ ।

નનુ-આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સ્થાનાનિ યદ્યનન્તાનિ, તર્હિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ
પૂર્વોપેક્ષયાઽનન્તગુણાનિ ભવન્તીતિવક્તવ્યમ્, કથનમસંસ્તવાતગુણાનીત્યુક્તમ્ ? इति
चेत्, उच्यते-अनन्ताणुकस्कन्धास्तु अनानुपूर्व्यपेक्षयाऽनन्तभागवसित्त्वात् स्व-
भावादेव स्तोका इति-अनन्ताणुकस्कन्धैरानुपूर्वीद्रव्येषु न किंचिद् वर्धते, अतो
वस्तुवृत्त्या असंख्यातान्येव तेषु स्थानानि प्राप्यन्ते । तदपेक्षया तु असंख्यात-
गुणान्येव तानि भवन्ति, नन्वनन्तगुणानीति । एतच्चानुगमस्य सप्तमे भागनामके द्वारे
प्रदर्शितात्-‘एषसि णं भंने’ इत्यादिकान् सूत्रपाठान् सर्वभावनीयम् १ । इत्थं
द्रव्यार्थतयाऽव्यवहृत्त्वप्रमिधाय सम्प्रति प्रदेशार्थतया तदाह-‘एषसद्वयाए, इत्यादि ।
नैगमव्यवहारसम्प्रतानि अनानुपूर्वीद्रव्याणि प्रदेशार्थतया=प्रदेशत्वमपेक्ष्य सर्वस्तो-
कानि=अवक्तव्यद्रव्येभ्य आनुपूर्वीद्रव्येभ्यश्चात्पानि । एषां सर्वस्तोकत्वे हेतुमाह-
‘अपएसद्वयाए’ इति । अप्रदेशार्थतया=अप्रदेशार्थत्वात्, अनानुपूर्वी દ્રવ્યેષુ પ્રદે-
શરૂપસ્યાર્થસ્ય અભાવાત્ । અર્થ ભાવઃ-યદિ હિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષ્વપિ પ્રદેશઃ સ્યુ-
સ્તદા દ્રવ્યાર્થતાયામિત્ર પ્રદેશાર્થતાયામપિ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાપેક્ષયા તેષામાધિક્યં
સ્યાત્, નચૈતદસ્તિ, ‘પરમાણુપ્રદેશઃ’ इति वचनात्, अतः सर्वस्तोकानि एतानि ।

નનુ યદ્યનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ પ્રદેશાર્થતા નાસ્તિ, તર્હિ અથ તસ્યા વિચારોઽનુપયુક્ત
એવે? ति चेत्, उच्यते-‘प्रदेश’ शब्दस्य मकृष्टः-सर्वसूक्ष्मः देशः=पुद्गलस्थित-

તો પ્રદેશાર્થતા સે ખી ઉત્તરી અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અધિકતા
માની જાની જાહિયે । પરન્તુ એતા નહીં હૈ । કયોંકિ પરમાણુ અપ્રદેશી
હૈ । અતઃ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વસ્તોક હૈ યહી સિદ્ધાન્ત યુક્તિયુક્ત હૈ ।

શંકા-યદિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં પ્રદેશાર્થતા નહીં હૈ, તો યહાં પર
પ્રદેશાર્થતા કો લેકર ઉત્તરી વિચાર કરના અનુપયુક્ત હી હૈ ?

દ્રવ્યોને અવક્તવ્ય દ્રવ્યો કરતાં પણ અલ્પ માનવામાં આવેલ છે, કારણ કે
પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અપ્રદેશી હોય છે ને આ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી
દ્રવ્યોમાં પણ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશોનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે, તો
પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની
અધિકતા સંભવી શકે છે. પરન્તુ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને સર્વસ્તોક
(સૌથી અલ્પ) માનવાનો સિદ્ધાન્ત જ યુક્તિયુક્ત લાગે છે.

શંકા-ને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં પ્રદેશાર્થતાનો સદ્ભાવ જ ન હોય, તો
અહીં પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ તેમનો વિચાર કરવો એ બાત જ શું
અનુચિત લાગતી નથી ?

કાયસ્ય નિરંશો ભાગઃ, ઇતિ વ્યુત્પત્ત્યા પરમાણુદ્રવ્યેઽપિ પ્રદેશત્વમસ્ત્યેવ, અતઃ પ્રદેશાર્થતયા एषां विचारो नानुपयुक्त इति । तथा—अवक्तव्यकद्रव्याणि प्रदेशार्थ- तयाऽनानुपूर्वीद्रव्येभ्यो विशेषाधिकानि अवक्तव्यकद्रव्येषु एकैकस्य द्विप्रदेशत्वात् । अनानुपूर्वीद्रव्यापेक्षयाऽवक्तव्यकद्रव्याणां प्रदेशार्थत्वमाश्रित्य विशेषाधिक्यं बोध्यमिति । आनुपूर्वीद्रव्याणि तु प्रदेशार्थतया अवक्तव्यकद्रव्येभ्योऽनन्तगुणानि ।

उत्तर—ऐसा नहीं है—क्योंकि ‘प्रकृष्टदेशः प्रदेशः’ इस व्युत्पत्ति के अनुसार सर्व सूक्ष्मदेश का नाम प्रदेश, अर्थात् पुत्रलास्तिकाय का निरं- श भाग है वह प्रदेश है । ऐसा प्रदेशपन परमाणु द्रव्य है ही । इस- लिये प्रदेशार्थता की अपेक्षा इनका विचार अनुपयुक्त नहीं है तथा— (अवस्तव्वगदव्वाहं पएसद्वयाए विसेसाहियाहं) अवक्तव्यक द्रव्य प्रदे- शार्थता की अपेक्षा अनानुपूर्वी द्रव्यों से विशेषाधिक—कुछ अधिक— हैं । अर्थात् अवक्तव्यक द्रव्यों में एक २ अवक्तव्यकद्रव्य द्विप्रदेशवाला होता है और अनानुपूर्वी द्रव्यों में एक एक अनानुपूर्वीद्रव्य एक प्रदेश वाला होता है इसी कारण अनानुपूर्वी द्रव्यों से अवक्तव्यक द्रव्य प्रदे- शार्थता को लेकर कुछ अधिक कहे गये हैं । (आणुपुन्वीदव्वाहं पएस- द्वयाए अणंतगुणाहं) जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा अनंतगुणे हैं । क्यों कि इनके प्रदेश अवक्तव्यकद्रव्यों के प्रदेशों

ઉત્તર—એ વાત બરાબર નથી, કારણ કે “ પ્રકૃષ્ટદેશઃ પ્રદેશઃ ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર સૌથી સૂક્ષ્મ દેશનું નામ પ્રદેશ છે એટલે કે પુત્રલાસ્તિ- કાયના એ નિરંશ ભાગ છે તે પ્રદેશરૂપ જ છે. એવું પ્રદેશત્વ તો પરમાણુ દ્રવ્યમાં જ હોય છે. તેથી પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ તેમનો વિચાર કરવામાં અનુપયુક્તતા જણાતી નથી.

તથા—(અવસ્તવ્વગદવ્વાહં પેસદ્વયાએ વિસેસાહિયાહં) અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રદેશાર્થત્વની અપેક્ષાથી વિશેષાધિક હોય છે. એટલે કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાના પ્રત્યેક અવક્તવ્યકદ્રવ્ય બળે પ્રદેશવાળાં હોય છે, અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંનું પ્રત્યેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક એક પ્રદેશવાળું હોય છે. તે કારણે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને વિશેષાધિક (અમુક પ્રમાણમાં વધારે) કહ્યાં છે.

(આણુપુન્વીદવ્વાહં પેસદ્વયાએ અણંતગુણાહં) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનંત ગણાં હોય છે, કારણ કે

અનુરોગવન્દિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦ અલ્પબહુત્વદ્વારનિરૂપણમ્

૩૨૫

દ્રવ્યાર્થતયાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેભ્યોઽવક્તવ્યકદ્રવ્યેભ્યઃશ્ચાઽસંખ્યાત-
ગુણાન્યુક્તાનિ, તદપેક્ષયાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્કન્ધાનામસંખ્યાતગુણત્વાત્ । પ્રદેશાર્થતાઽ-
પેક્ષયા તુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણ્યનન્તગુણાનિ સન્તિ, તત્પ્રદેશાનાં પૂર્વાપેક્ષયાઽનન્તશુંભ-
ત્વાદિતિ ૨ । इत्थं प्रदेशार्थतयाऽल्पबहुत्वमुक्त्वा, इदानीं भूमयार्थतामाश्रित्य तद्वत्त्वे-
'द्ववद्वपएसद्वयाए' इत्यादि । नैगमव्यवहारसम्मतानि अवक्तव्यकद्रव्याणि द्रव्यार्थ-
प्रदेशार्थतया सर्वस्तोकानि, सर्वस्तोकत्वे हेतुमाह—'द्ववद्वयाए' इति । अवक्तव्यक-
द्रव्याणां—द्रव्यार्थतया—द्रव्यार्थत्वात् सर्वस्तोकत्वं बोध्यम् । तथा अनानुपूर्वीद्रव्याणि
से अनन्त गुणे हैं । यह पहिले कहा जा चुका है कि आनुपूर्वीद्रव्या-
र्थता को आश्रित करके अनानुपूर्वी द्रव्यों से अवक्तव्यकद्रव्यों से असं-
ख्यातगुणे हैं क्योंकि इनकी अपेक्षा आनुपूर्वी द्रव्य स्कंध असंख्यात
गुणे होते हैं । परन्तु प्रदेशों की अपेक्षा आनुपूर्वी द्रव्य अनन्त गुणे हैं ।
क्यों कि इनके प्रदेश पूर्व की अपेक्षा अनन्तगुणे कहे गये हैं । इस प्रकार
प्रदेशार्थता की अपेक्षा अल्प बहुत्व का कथन करके अब सूत्रकार उभ-
यार्थता की अपेक्षा लेकर अल्प बहुत्व का कथन करते हैं—

(नैगमव्यवहाराणं अवसन्वगद्ववाइं द्ववद्वपएसद्वयाए सव्वत्थो-
वाइं) नैगमव्यवहारनय संमत अवक्तव्यक द्रव्य द्रव्यार्थता और प्रदे-
शार्थता रूप उभयार्थता की अपेक्षा लेकर सर्वस्तोक हैं । क्योंकि (द्वव-
द्वयाए) अवक्तव्यक द्रव्यों में द्रव्यार्थता की अपेक्षा लेकरके पहिले सर्व-

તેમના પ્રદેશો અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના પ્રદેશો કરતાં અનંત ગણાં હોય છે.
પહેલાં એ વાત તો પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અસંખ્યાત
ગણાં છે, કારણ કે તેમના કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યસ્કંધ અસંખ્યાત ગણાં હોય
છે પરન્તુ પ્રદેશોની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનંત ગણાં છે, કારણ કે
તેમના પ્રદેશો અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના પ્રદેશો કરતાં અનંત ગણાં હોય છે આ
રીતે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના અલ્પ-બહુત્વનું કથન
કરીને હવે સૂત્રકાર ઉભયાર્થતા (દ્રવ્યાર્થતા અને પ્રદેશાર્થતા)ની અપેક્ષાએ
તેમના અલ્પબહુત્વનું કથન કરે છે—(નૈગમવ્યવહારાણં અવસન્વગદ્વવાઈં દ્વવદ્વ-
પસદ્વયાએ સવ્વત્થોવાઈં) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય
દ્રવ્યાર્થતા અને પ્રદેશાર્થતા રૂપ ઉભયાર્થતાની અપેક્ષાએ સર્વસ્તોક સૌથી ઓછું—
છે, કારણ કે (દ્વવદ્વયાએ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સર્વસ્તોક-
તાનું પ્રતિપાદન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે, તથા (અગાણુપુન્ની દ્વવાઈં) દ્વવદ્વયાએ

ઉભયાર્થસ્વમાશ્રિત્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યાપેક્ષયા વિશેષાધિકાનિ બોધ્યાનિ। અત્ર હેતુમાહ—
 ‘દવ્વદ્વયાપ અપપસદ્ધયાપ’ ઇતિ। દ્રવ્યાર્થતયા પ્રદેશાર્થતયા ચ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યા-
 નામવક્તવ્યકદ્રવ્યાપેક્ષયા વિશેષાધિક્યં બોધ્યમ્। ‘અવત્તવ્વગદ્વ્વાઈ’ ઇત્યાદિ,
 અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં ત્વિહ પ્રત્યેકં દ્વિપ્રદેશત્વાદ્વિગુણિતાનાં તેષામન્યેભ્યઃ=અનાનુ-
 પૂર્વીદ્રવ્યેભ્યઃ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકરત્વં બોધ્યમ્। ઉભયાર્થસ્વમાશ્રિત્યાનુપૂર્વી
 દ્રવ્યાણિ અસંખ્યેયગુણાન્યનન્તગુણાનિ ચ સન્તીતિ સૂચયિતુમાહ—‘આણુપુઠ્ઠીદ્વ્વાઈ’
 ઇત્યાદિ। આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા અસંખ્યેયગુણાનિ બોધ્યાનિ, ચ=પુનઃ
 તાન્યેવ=આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણ્યેવ પ્રદેશાર્થતયા અનન્તગુણાનિ બોધ્યાનિ। પ્રત્યેકચિન્તા-
 સ્તોકતા કહી ગઈ છે। તથા “અણાણુપુઠ્ઠીદ્વ્વાઈ દવ્વદ્વયાપ અપપસદ્ધ-
 યાપ વિસેસાહિયાઈ”) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉભયાર્થસ્વ કો આશ્રિત કરકે
 અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે કુછ અધિક હૈં। યહાં કુછ અધિકતા
 દ્રવ્યાર્થતા ઓર અપ્રદેશાર્થતા સે જાનની ચાહિયે। (અવત્તવ્વગદ્વ્વાઈ
 પપસદ્ધયાપ વિસેસાહિયાઈ) તથા અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રદેશાર્થતા કી અપે-
 ક્ષા લેકર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે વિશેષાધિક હૈ। સો યહ વિશેષાધિકતા
 હનમેં પ્રત્યેક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય દ્વિપ્રદેશી હોને કે કારણ જાનની ચાહિયે।
 ક્યોં કિ યે પ્રત્યેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે પ્રદેશોં કી અપેક્ષા દ્વિગુણિત
 પ્રદેશવાલે હૈં। તથા કિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં પ્રદેશ એક એક હૈ। હસ
 પ્રકાર હનમેં દ્વિગુણિતા જાનના ચાહિયે। (આણુપુઠ્ઠીદ્વ્વાઈ દવ્વદ્વયાપ
 અસંખેજ્જગુણાઈ તાઈ ચેવ પપસદ્ધયાપ અણંતગુણાઈ) ઉભયાર્થતા
 કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત

અપપસદ્ધયાપ વિસેસાહિયાઈ”) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉભયાર્થસ્વની અપેક્ષાએ અવ-
 ક્તવ્યક દ્રવ્ય કરતાં વિશેષાધિક હોય છે અહીં દ્રવ્યાર્થતા અને અપ્રદેશાર્થ-
 તાની અપેક્ષાએ આ અધિકતા સમજવી. (અવત્તવ્વગદ્વ્વાઈ પપસદ્ધયાપ
 વિસેસાહિયાઈ) તથા અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી
 દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. તેમની આ વિશેષાધિકતા પ્રત્યેક અવક્તવ્યક
 દ્રવ્ય દ્વિપ્રદેશી હોવાને કારણે સમજવી, કારણ કે પ્રત્યેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય
 કરતાં પ્રત્યેક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય બમણા પ્રદેશવાળું હોય છે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય
 એક એક પ્રદેશવાળું હોય છે અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય બમણે પ્રદેશવાળું હોય
 છે, તે કારણે અવક્તવ્યક દ્રવ્યને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કરતાં બમણા પ્રદેશવાળું કહ્યું છે.

(આણુપુઠ્ઠીદ્વ્વાઈ દવ્વદ્વયાપ અસંખેજ્જગુણાઈ તાઈ ચેવ પપસદ્ધયાપ
 અણંતગુણાઈ) ઉભયાર્થતાની અપેક્ષાએ હવે તેમના અવપમહુત્વને વિચાર

અનુચોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦ અલ્પબહુત્વદ્વારનિરૂપણમ્

૧૨૭

વક્ષાદુભયાર્થતયા ચિન્તાયામયમેવ વિશેષઃ—અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતામાશ્રિત્ય
અવક્તવ્યકદ્રવ્યાપેક્ષયા વિશેષાધિકાનિ ભવન્તિ, તત્ર પ્રદેશરહિતસ્વાત્ પ્રદેશાર્થતાયા
અસંભવાત્ સર્વસ્તોકત્વં ન ગૃહીતમ્ । પ્રત્યેકચિન્તાયાં તુ પ્રદેશાર્થતાપક્ષે તદપિ
ગૃહીતમ્ । एतदर्थमेव उभयार्थता पक्षोपादानम् । इत्थं नवविधमनुगममुक्त्वा सम्प्रति
प्रकरणमुपसंहरन्नाह—‘ से तं ’ इत्यादि । स एषोऽनुगमः । सैषा नैगमव्यवहार-
योरनीपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वीति ॥ ૧૦ ॥

શુભે હૈં ઓર પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા કરકે આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અનન્તગુણા હૈં ।
હસ પ્રકાર પ્રત્યેક પક્ષ સે વિચાર કરને કી અપેક્ષા જો યહ ઉભયાર્થ
પક્ષ કી અપેક્ષા લેકર વિચાર કરને મેં આયા હૈં ઉસમેં યહી વિશેષતા
હૈં —કિ જૈસે હસ પક્ષ મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય, દ્રવ્યાર્થતા કો આશ્રિત
કરકે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કી અપેક્ષા વિશેષાધિક કહે ગયે હૈં । વૈસે જે
પ્રદેશ હોને કે—કારણ સર્વસ્તોક પ્રદેશાર્થતા અસંભવતા સે નહીં
છાયે ગયે હૈં । પરન્તુ જબ પ્રત્યેક પક્ષકો લેકર હનકા વિચાર હોતા હૈં
તબ યહ સર્વસ્તોકતા ખી ઉનમેં પ્રકટ કી જાતી હૈં । હસી નિમિત્ત સે
જહાં યહ તૃતીય પક્ષરૂપ ઉભયાર્થતા ગૃહીત કી ગઈ હૈં । હસ પ્રકાર નવ-
વિધ અનુગમ કહ કરકે અબ સૂત્રકાર હસ પ્રકરણ કા ઉપસંહાર કર-
ને કે અભિપ્રાય સે (સે તં અણુગમે, સે તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિ-
દિયા વદવાનુપુલ્બી) હન પદોં દ્વારા યહ પ્રકટ કર રહે હૈં કિ હસ પ્રકાર

કરવામાં આવે છે—દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત ગણું
અને પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનન્ત ગણું છે. આ પ્રકારે
પ્રત્યેક પક્ષને અનુલક્ષીને વિચાર કરવાની અપેક્ષાએ જે અહીં ઉભયાર્થપક્ષની
અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તેમાં જોજ વિશેષતા છે કે—જેમ
દ્રવ્યાર્થકતાની દૃષ્ટિએ વિચાર કરીને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવક્તવ્યક દ્રવ્યો
કરતાં વિશેષાધિક પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે, એ પ્રમાણે પ્રદેશાર્થતાની અપે-
ક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને વિશેષાધિક અતાવવામાં આવ્યા નથી, કારણ કે
તેઓ પ્રદેશરહિત હોવાને કારણે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અલ્પપ્રમાણવાળા છે.
પરન્તુ જે પ્રત્યેક પક્ષની અપેક્ષાએ તેમના વિચાર કરવામાં આવે તો આ
સર્વસ્તોકતા (સૌ કરતાં અલ્પપ્રમાણતા) પણ તેમનામાં પ્રકટ કરી શકાય છે.
જોજ નિમિત્તને લીધે અહીં તૃતીય પક્ષ રૂપ ઉભયાર્થતા ગૃહીત કરવામાં
આવી છે આ પ્રમાણે નવ પ્રકારના અનુગમનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર
આ પ્રકરણને ઉપસંહાર કરતા કહે છે કે—(સે તં અણુગમે સે તં નૈગમવ્યવ-
હારાણં અણોવણિદિયા વદવાનુપુલ્બી) અનુગમનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ

૩૬૮

અનોપનિધિકી

इत्थं नैगमव्यवहारनयमतेन अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी व्याख्याय संमत-
नयमतेन सम्प्रति तामेव व्याख्यातुमाह—

मूलम्—से किं तं संग्रहस्त अणोवणिहिया दवाणुपुत्री ?
संग्रहस्त अणोवणिहिया दवाणुपुत्री पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा-
अट्ठपयपरुवणया१, भंगसमुक्कित्तणया२ भंगोवदंसणया३ समो-
यारे४ अणुगमे५॥सू० ९१॥

छाया—अथ का सा संग्रहस्य अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी ? संग्रहस्य अनौ-
पनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी पञ्चविधा प्रहृत्ता, तद्यथा—अर्थपदप्ररूपणता१, भङ्गसमुक्ती-
र्णता२, भङ्गोपदर्शनता३, समवतारः४, अनुगमः५ ॥सू० ९१॥

टीका—‘ से किं तं ’ इत्यादि—

व्याख्या निगद सिद्धा ॥सू० ९१॥

સે યહ અનુગમ કા સ્વરૂપ હૈ । હસ પ્રકાર યહાં તક નૈગમ વ્યવહારનય
સંમત અનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન કિયા ॥ સૂ० ૯૦ ॥

અથ સૂત્રકાર સંગ્રહનય કે મતાનુસાર હસ અનોપનિધિ કી દ્રવ્ય-
નુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—હે ભદ્રન્ત ! (સે કિં તં સંગ્રહસ્ત અણોવણિહિયા દવાણુ
પુત્રી) ‘સંગ્રહનય સંમત અનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સંગ્રહસ્ત અણોવણિહિયા દવાણુપુત્રી પંચવિહા પણ્ણત્તા)
સંગ્રહનય સંમત અનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકાર કહી ગઈ હૈ । (તં
જહા) ઉસકે વે પ્રકાર વે હૈ— (અટ્ઠપયરૂપવણયા ૧ ભંગસમુક્કિત્તણયા ૫
ભંગોવદંસણયા ૩ સમોયારે ૪, અણુગમે ૫,) અર્થપદ પ્રરૂપણતા ૧, ભંગ

પ્રકારે અહીં સુધીમાં સૂત્રકારે નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનોપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે. ॥સૂ० ૯૦॥

હવે સૂત્રકાર સંગ્રહનયના મતાનુસાર આ અનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના
સ્વરૂપનું કથન કરે છે—“ સે કિં તં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં સંગ્રહસ્ત અણોવણિહિયા દવાણુપુત્રી) કે
અંગવન ! સંગ્રહનયસંમત અનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સંગ્રહસ્ત અણોવણિહિયા દવાણુપુત્રી પંચવિહા પણ્ણત્તા) સંગ્રહ-
નયસંમત અનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા)
તેપ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(અર્થપયપરૂવણયા ૧, ભંગસમુક્કિત્તણયા ૨, ભંગોવદંસ-
ણયા ૩, સમોયારે ૪ અણુગમે ૫) (૧) અર્થપદપરૂપણતા, (૨) ભંગસમુક્કિત્તર્ણતા

અથ સંગ્રહનયેનાર્થપદપ્રરૂપણતામાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં સંગ્રહસ્સ અદ્વપયપરૂવણયા ? સંગ્રહસ્સ અદ્વ-
પયપરૂવણયા તિપ્પણસિણ આણુપુઢ્વી ચડપ્પણસિણ આણુપુઢ્વી
જાવ દસપણસિણ આણુપુઢ્વી સંલિજ્જપણસિણ આણુપુઢ્વી અસં-
લિજ્જપણસિણ આણુપુઢ્વી અણંતપણસિણ આણુપુઢ્વી પરમાણુ
પોગલે અણાણુપુઢ્વી, દુપ્પણસિણ અવત્તઢવણ. સે તં સંગ્રહસ્સ
અદ્વપયપરૂવણયા ॥સૂ. ૧૨॥

ઢાયા—અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા ? સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્રિપ-
દેશિક આનુપૂર્વી ચતુષ્પદેશિક આનુપૂર્વી યાત્રદ દસપ્રદેશિક આનુપૂર્વી સંલ્લેયપ્રદેશિક

સૂત્રકીર્તનતા ૨ ભંગોપદર્શનતા ૩ સમવતાર ૪ ઓર અનુગમ ૫. હસ સૂત્ર
કી વ્યાખ્યા ૭૪ વેં સૂત્રકીર્તનતા કે અનુસાર જાનની ચાહિયે ॥સૂ. ૦૧॥

સંગ્રહનય કે મતાનુસાર અર્થપદપ્રરૂપણતા કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? હસ
જ્ઞાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં. “સે કિં તં સંગ્રહસ્સ” હત્યાદિ

શબ્દાર્થ—હે મદન્ત ! (સે કિં તં સંગ્રહસ્સ અદ્વપયપરૂવણયા) પૂર્વ પ્રકાન્ત
જ્ઞાત સંગ્રહનય માન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સંગ્રહસ્સ અદ્વપયપરૂવણયા) સંગ્રહનય માન્ય અર્થપદ
પ્રરૂવણતા કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈં—(તિપ્પણસિણ આણુપુઢ્વી ચડપ્પ-
ણસિણ આણુપુઢ્વી, જાવ દસપણસિણ આણુપુઢ્વી સંલિજ્જપણસિણ

(૩) ભંગોપદર્શનતા, (૪) સમવતાર અને (૫) અનુગમ આ સૂત્રની
વ્યાખ્યા ૭૪ માં સૂત્રની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥સૂ. ૦૬॥

સંઘ્રહનયના મતાનુસાર અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે તે
કેવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—“સે કિં તં સંગ્રહસ્સ” હત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં સંગ્રહસ્સ અત્વપયપરૂવણયા ?) હે ભગવન્ !
પૂર્વપ્રસ્તુત સંઘ્રહનયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું હશે ?

ઉત્તર—(સંગ્રહસ્સ અત્વપયપરૂવણયા) સંઘ્રહનયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું
સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(તિપ્પણસિણ આણુપુઢ્વી, ચડપ્પણસિણ આણુપુઢ્વી, જાવ હસ પણસિણ
આણુપુઢ્વી, સંલિજ્જપણસિણ આણુપુઢ્વી, અસંલિજ્જપણસિણ આણુપુઢ્વી, અણંતપ-

ક આનુપૂર્વી અસંસ્થિજ્ઞપણસિદ્ધિ આનુપૂર્વી, અનંતપ્રદેશિક આનુપૂર્વી પરમાણુપુદ્ગલઃ
અનાનુપૂર્વી, દ્વિપ્રદેશિકઃ અવક્તવ્યકમ્ । સૈવા સંગ્રહસ્ય અર્થપદમરૂપણતા ॥૬૦૯૨॥

આણુપુઠ્ઠી અસંસ્થિજ્ઞપણસિદ્ધિ આણુપુઠ્ઠી, અનંતપણસિદ્ધિ આણુપુઠ્ઠી,
પરમાણુપુદ્ગલે અણાણુપુઠ્ઠી; દુષ્પણસિદ્ધિ અવક્તવ્યક) ત્રિપ્રદેશવાલા સ્કંધ
આનુપૂર્વી છે, ચાર પ્રદેશવાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, યાવત્ દશ પ્રદેશવાલા
સ્કંધ આનુપૂર્વી છે' સંખ્યાત પ્રદેશવાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, અસંખ્યાત
પ્રદેશ વાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, અનંત પ્રદેશ વાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી છે,
પરમાણુપુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે, દ્વિપ્રદેશ વાલા સ્કંધ અવક્તવ્યક
દ્રવ્ય છે યહી સંગ્રહનય માન્ય અર્થપદ મરૂપણતા કા સ્વરૂપ છે । તાત્પર્ય
હસકા યહ છે કિ પહિલે નૈગમ ઓર વ્યવહાર નયકી અપેક્ષા કરકે
એક ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે, અનેક ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ
અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે હસ પ્રકાર આનુપૂર્વી મેં એકત્વ ઓર અને-
કત્વ કા નિર્દેશ કિયા ગયા છે । પરંતુ સામાન્યત્વવાદી હોને કે કારણ
હસ સંગ્રહનય કે મતાનુસાર સમસ્ત ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ એક હી આનુ-
પૂર્વી છે । હસ નય કી માન્યતા હસ વિષય મેં એસી છે કિ જિતને ઓ
ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ છે વે યદિ અપને ત્રિપ્રદેશિકત્વ રૂપ સામાન્ય સે ભિન્ન
છે તો દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ કી તરહ વે ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ હી નહીં

અર્થે આણુપુઠ્ઠી, પરમાણુપુદ્ગલે અણાણુપુઠ્ઠી, દુષ્પણસિદ્ધિ અવક્તવ્યક) ત્રણ
પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, ચાર પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, એક
પ્રમાણે હસ પચાંતના પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, સંખ્યાત પ્રદેશવાળો
સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે અને અનંત
પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે. પરમાણુ પુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે અને
એ પ્રદેશવાળો સ્કંધ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે. સંગ્રહનય દ્વારા માન્ય અર્થપદ
પ્રકરણતાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-
નૈગમ અને વ્યવહાર નયની માન્યતાને આધાર પહેલાં એવું કથન કરવામાં
આવ્યું છે કે એક ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ છે, અને અનેક
ત્રિપ્રદેશી સ્કંધો અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો રૂપ છે. આ રીતે આનુપૂર્વીમાં
એકત્વ અને અનેકત્વનો ત્યાં નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે. પરંતુ સામાન્ય
તત્ત્વવાદી હોવાને કારણે આ સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસાર સમસ્ત ત્રિપ્ર-
દેશી સ્કંધ એક જ આનુપૂર્વી રૂપ છે. આ વિષયને અનુલક્ષીને આ નયની

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ९२ अर्थपदप्ररूपणानिरूपणम्

४०१

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ का सा संग्रहनयसम्भता अर्थप्ररूपणता? इति प्रश्नः। उत्तरमाह—संग्रह-
नयसम्भता अर्थपदप्ररूपणता तु त्रिप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी चतुष्प्रदेशिकः
स्कन्ध आनुपूर्वी यावद् दशप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी, संख्येयप्रदेशिकः स्कन्ध
आनुपूर्वी, असंख्येयप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी, अनन्तप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी,
परमाणुपुद्गलः आनुपूर्वी, द्विप्रदेशिकः स्कन्धः अवक्तव्यकमिति। अत्रेदं बोध्यम्—
पूर्वत्र नैगमन्यवहारनयावपेक्ष्य ‘त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वी—त्रिप्रदेशिका आनुपूर्वः’
इत्येवमेकत्वेन बहुत्वेन च निर्देशः कृतः। संग्रहनये तु संग्रहस्य सामान्यवादित्वात्
सर्वेऽपि त्रिप्रदेशिकाः स्कन्धा एकैकानुपूर्वी। अत्र को हेतुः?—त्रिप्रदेशिकाः स्क-
न्धाः त्रिप्रदेशिकत्वसामान्याद् भिन्नाः, अभिन्ना वा?। यदि भिन्नास्तर्हि त्रिप्र-
देशिकाः स्कन्धास्त्रिप्रदेशिका एव न स्युः, द्विप्रदेशिकादिवत्। अथऽभिन्नास्तर्हि
संवन्तस्त्रिप्रदेशिकाः सन्ति, ते सर्वेऽप्येक स्वरूपा एव च सर्वेऽपि त्रिप्रदेशिकाः
स्कन्धा एकैकानुपूर्वी। तथा चतुष्प्रदेशिकतया सर्वेऽपि चतुष्प्रदेशिकाः स्कन्धा
एकैकानुपूर्वी। एवं पञ्चप्रदेशिकादयः स्कन्धा अपि एका-एका आनुपूर्वी बोध्या।
इदं च अविशुद्धसंग्रहनयमतेन बोध्यम्। विशुद्धसंग्रहनयमतेन तु सर्वेषां त्रिप्रदे-

कहला सकते हैं। यदि त्रिप्रदेशिकत्व रूप सामान्य से वे अभिन्न हैं, तो
हेतुसब त्रिप्रदेशिक स्कंध एक स्वरूप ही हैं। इस प्रकार सब भी त्रिप्र-
देशिक स्कंध एक ही आनुपूर्वी हैं अनेक आनुपूर्वी नहीं। इसी प्रकार
चतुष्प्रदेशिकत्व रूप सामान्य की अपेक्षा समस्त चतुष्प्रदेशिक स्कंध
एक ही आनुपूर्वी हैं। इसी प्रकार से पञ्च प्रदेशिक आदि स्कंध भी एक
एक आनुपूर्वी हैं ऐसा जानना चाहिये। यह कथन अविशुद्ध संग्रहनय
के मत से हैं। परन्तु जो विशुद्ध संग्रहनय हैं उसके मतानुसार तो

भान्यता ओवी છે કે જેટલા ત્રિપ્રદેશી સ્કંધો છે તેઓ એ પોતાના ત્રિપ્રદે-
શિકત્વ રૂપ સામાન્યથી કિલ્લ ડોચ તો તેમને ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધો જ કહી
શકાય નહીં એ તેઓ ત્રિપ્રદેશિકત્વ રૂપ સામાન્યથી અકિલ્લ ડોચ, તો તે
બધા ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધો એક રૂપ જ છે. આ રીતે બધા ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધો
એક જ આનુપૂર્વી રૂપ છે—અનેક આનુપૂર્વી રૂપ નથી એજ પ્રમાણે ચતુષ્પ્ર-
દેશિકત્વ રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ સમસ્ત ચતુષ્પ્રદેશિક સ્કંધ એક જ
આનુપૂર્વી રૂપ છે, એજ પ્રમાણે પાંચ આદિ પ્રદેશોવાળા સ્કંધો પણ એક
એક આનુપૂર્વી રૂપ છે, એમ સમજવું આ કથન તો અવિશુદ્ધ સંગ્રહનયની
માન્યતા પ્રકટ કરે છે. પરન્તુ વિશુદ્ધ સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસાર તો

શિકાઘનન્તપ્રદેશિકપર્યન્તાનાં સ્કન્ધાનામ્ આનુપૂર્વીત્વસામાન્યાઽમેદાત્ સર્વા-
ઽપ્યાનુપૂર્વીં એકૈવ । એવમનાનુપૂર્વીત્વસામાન્યાવ્યતિરેકાત્ સર્વેઽપિ પરમાણુપુદ્ગલા
એકૈવાનાનુપૂર્વીં, અવક્તવ્યકત્વરૂપસામાન્યાવ્યતિરેકાત્ સર્વે દ્વિપ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધા
અપિ એકમેવાવક્તવ્યકમ્, અતોઽન્ન-‘તિપ્પણિણ આણુપુઠ્ઠી’ इत्यादि एकत्वेनैव
निर्दिष्टम्, न तु बहुत्वेनेति । प्रकृतमुपसंहरन्नाह-‘से तं’ इत्यादि । सैषा संग्रह-
नवसम्भताऽर्थपदप्ररूपणतेति ॥ सू० ९२ ॥

સમસ્ત ત્રિપ્રદેશિકાદિ સ્કંધ સે લેકર અનંત પ્રદેશિક સ્કંધ પર્યન્ત કે
સ્કંધોં કી જીતની બી આનુપૂર્વિયાં હૈં વે સબ આનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્ય
સે અભિન્ન હોને કે કારણ એકહી અનાનુપૂર્વીરૂપ હૈ । હસી પ્રકાર અનાનુ-
પૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્ય સે અભિન્ન હોને કે કારણ સમસ્ત પરમાણુ પુદ્ગલ
રૂપ અનાનુપૂર્વીયાં એકહી અનાનુપૂર્વી રૂપ હૈ । હસી પ્રકાર સે અવક્તવ્યક
ત્વરૂપ સામાન્ય સે અવ્યતિરિક્ત હોને કે કારણ સમસ્ત ત્રિપ્રદેશિક
સ્કંધ બી એકહી અવક્તવ્યકરૂપ હૈ । હસલિયે યહાં સૂત્ર મેં “તિપ્પણિણ
આણુપુઠ્ઠી” इत्यादि रूप से एकत्व का निर्देश सूत्रकारने किया है ।
बहुत्व का नहीं । (से तं संग्रहस्त अद्वयपररूपणया) इस प्रकार यह
संग्रहनय मान्य अर्थपद प्ररूपणता का स्वरूप है ।

ભાવાર્થ—સંગ્રહનય દો પ્રકાર કા હૈ- ૧ અવિશુદ્ધ સંગ્રહનય ઔર
દુસરા વિશુદ્ધ સંગ્રહનય । અવિશુદ્ધ સંગ્રહનય કી માન્યતાનુસાર જિતને
બી ત્રિપ્રદેશિક બાલે સ્કંધ હૈં વે એક આનુપૂર્વી હૈં તથા જિતને બી

સમસ્ત ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધથી લઈને અનંત પ્રદેશિક પર્યન્તના સ્કંધોની
બેટલી આનુપૂર્વીઓ છે, તે બધી આનુપૂર્વીઓ પણ આનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામા-
ન્યની અપેક્ષાએ અભિન્ન હોવાથી એક જ આનુપૂર્વી રૂપ છે. એજ પ્રમાણે
અનાનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ અભિન્ન હોવાને કારણે સમસ્ત
પરમાણુ પુદ્ગલરૂપ અનાનુપૂર્વીઓ પણ એક જ અનાનુપૂર્વી રૂપ છે. એજ
પ્રમાણે અવક્તવ્યક રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ અભિન્ન હોવાને કારણે સમસ્ત
ત્રિપ્રદેશી સ્કંધો પણ એક જ અવક્તવ્યક રૂપ છે. તેથી જ સૂત્રકાર આ
સૂત્રમાં “તિપ્પણિણ આણુપુઠ્ઠી” ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી ઇત્યાદિ રૂપે એકત્વને
નિર્દેશ કર્યો છે, પણ બહુત્વને નિર્દેશ કર્યો નથી. (સે તં સંગ્રહસ્ત અત્વપર-
રૂપણયા) આ પ્રકારનું સંગ્રહનયસંભત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સંગ્રહનય બે પ્રકારનો છે-(૧) અવિશુદ્ધ સંગ્રહનય અને (૨)
વિશુદ્ધ સંગ્રહનય અવિશુદ્ધ સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસાર સમસ્ત ત્રિપ્રદેશી
સ્કંધો એક આનુપૂર્વી રૂપ છે, એજ પ્રમાણે બેટલી ચાર પ્રદેશીથી લઈને

अनुयोगवन्दिका टीका सूत्र ९३ भंगसमुत्कीर्तनानिरूपणम्

४०३

सम्प्रति भंगसमुत्कीर्तनां निरूपयति—

मूलम्—एयाए णं संगहस्स अट्ठपयपरूवणयाए किं पओयणं?
 एयाएणं संगहस्स अट्ठपयपरूवणयाए संगहस्स भंगसमुत्कीर्त-
 णया कज्झइ। से किं तं संगहस्स भंगसमुत्कीर्तणया? संगहस्स
 भंगसमुत्कीर्तणया—अत्थि आणुपुव्वी १ अत्थि अणाणुपुव्वी २
 अत्थि अवत्तव्वए ३, अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी
 य ४, अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ५, अहवा अत्थि
 अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ६, अहवा अत्थि आणुपुव्वी य

चतुष्प्रदेशिक यावत् अनन्ताणुक स्कंध हैं वे सब स्वतंत्र २ भिन्न २
 चतुष्प्रदेशी आदि आनुपूर्वियां हैं। परन्तु विशुद्ध संग्रहनय की मान्य-
 तानुसार ये सब जुड़ी २ अनेक आनुपूर्वियां भी एक आनुपूर्वित्व रूप
 सामान्य की अपेक्षा से एक ही हैं। इसी बात को प्रदर्शित करने के लिये
 सूत्रकार ने इस सूत्र में त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वी आदि पदों में एकवचन
 का प्रयोग किया है। त्र्यणुक स्कंध आदिरूप अर्थ से युक्त अथवा त्र्यणुक
 स्कंध आदि रूप अर्थ को विषय करने वाले पद की प्ररूपणा करना यही
 अर्थपदप्ररूपणता है। नैगम और व्यवहारनय मान्य अनेकत्व का यह
 नय आनुपूर्वी में निषेध करके एकत्व स्थापन करता है। ॥सू० ९२॥

अनंत प्रदेशी पर्यान्तना स्कंधा ए ते प्रत्येक पञ्च ऐक ऐक स्वतंत्र अतु-
 ष्प्रदेशी, पंचप्रदेशी आदि आनुपूर्वी ३५ ए. विशुद्ध संग्रहनयनी मान्यता
 अनुसार तो त्रिप्रदेशिक स्कंध ३५ आनुपूर्वी थी लक्षणे अनंत प्रदेशिक स्कंध
 ३५ आनुपूर्वी पर्यान्तनी समस्त आनुपूर्वीओ। पञ्च आनुपूर्वीत्व ३५
 सामान्यनी अपेक्षाओ ऐक न आनुपूर्वी ३५ ए. आ बातने प्रदर्शित
 करवाने भाटे सूत्रकारे त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वी आदि पदोभां ऐकवचनने
 प्रयोग क्योँ ए. त्रिअणुक स्कंध आदि ३५ अर्थथीमुक्त त्रिअणुक स्कंध आदि
 ३५ अर्थतुं प्रतिपादन करनारा पदनी प्ररूपणा करनी तेनुं न नाम अर्थपद
 प्ररूपणता ए. नैगम अने व्यवहार नयसंमत अनेकत्वने आ नय (संग्रह-
 नय) आनुपूर्वीओभां निषेध करी ऐकत्वतुं प्रतिपादन करे ए. ॥सू० ९२॥

અણાણુપુઠ્ઠી ય અવત્તવ્વણ ૭। એવં સત્ત મંગા। સે તં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા ॥સૂ૦ ૧૩॥

છાયા—એતયા ત્વહુ સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતયા કિં પ્રયોજનમ્? એતયા ત્વહુ સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતયા સંગ્રહસ્ય મહ્નસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે। અથ કા સા સંગ્રહસ્ય મહ્નસમુત્કીર્તનતા? સંગ્રહસ્ય મહ્નસમુત્કીર્તનતા-અસ્તિ આનુપૂર્વી ૧, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી ૨ અસ્તિ અવક્તવ્યકમ્ ૩, અથવા-અસ્તિ આનુપૂર્વી ચ અનાનુ-

અથ સૂત્રકાર સસમંગસમુત્કીર્તનતા કા નિરૂપણ કરતે હૈં-

“એયાણં સંગહસ્સ” ઇત્યાદિ।

શબ્દાર્થ-(એયાણં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયાએ કિં પઓચણં?) હે મહન્ત! સંગ્રહનય માન્ય હસ અર્થપદપ્રરૂપણતા સે કૌનસા પ્રયોજન સિદ્ધ હોતા હૈ?

ઉત્તર-(એયાણં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયાએ સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા કહ્જહ) સંગ્રહનય માન્ય હસ અર્થપદ પ્રરૂપણતા સે સંગ્રહનય માન્ય મંગસમુત્કીર્તનતા કી જાતી હૈ। “સે કિં તં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા?” સંગ્રહનય માન્ય વહ મંગસમુત્કીર્તનતા વ્યા હૈ?

ઉત્તર-(સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા) સંગ્રહનય માન્ય વહ મંગસમુત્કીર્તનતા હસ પ્રકાર સે હૈ-(અત્થિ આણુપુઠ્ઠી અત્થિ અણાણુપુઠ્ઠી) ૧ એક આનુપૂર્વી હૈ ૨ દસરા અનાનુપૂર્વી હૈ (અત્થિ અવત્તવ્વણ) તીસરા અવક્તવ્યક હૈ (અહવા અત્થિ આણુપુઠ્ઠીય અણાણુપુઠ્ઠીય) ચૌથા

હવે સૂત્રકાર સાતમા ભંગ, ભંગસમુત્કીર્તનતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“એયાણં સંગહસ્સ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ-(એયાણં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયાએ કિં પઓચણં?) હે ભગવન્! સંગ્રહનયમાન્ય આ અર્થપદપ્રરૂપણતા વડે કયું પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે?

ઉત્તર-(એયાણં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયાએ સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા કહ્જહ) સંગ્રહનય સંમત આ અર્થપદપ્રરૂપણતા વડે સંગ્રહનયમાન્ય ભંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ બાહ્યી શકાય છે.

“સે કિં તં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા” સંગ્રહનય માન્ય ભંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર-(સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા) સંગ્રહનયસંમત તે ભંગસમુત્કીર્તનતા આ પ્રકારની કહી છે—

(અત્થિ આણુપુઠ્ઠી, અત્થિ અણાણુપુઠ્ઠી) (૧) એક આનુપૂર્વી છે. (૨) એક અનાનુપૂર્વી છે, (અત્થિ અવત્તવ્વણ) (૩) એક અવક્તવ્યક છે. (અહવા-અત્થિ આણુપુઠ્ઠી ય, અણાણુપુઠ્ઠી ય) (૪) આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩ મહસમુત્કીર્તનતાનિરૂપણમ્

૪૦૫

પૂર્વી ચ ૪, અથવા-અસ્તિ આનુપૂર્વી ચ અવક્તવ્યકં ચ ૧, અથવા-અસ્તિ અનાનુ-
પૂર્વી ચ અવક્તવ્યકં ચ ૬, અથવા-અસ્તિ આનુપૂર્વી ચ અનાનુપૂર્વી ચ અવક્તવ્યકં
ચ ૭। एवं सप्त भङ्गाः। सैषा संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता ॥सू० १३॥

આનુપૂર્વી છે. અનાનુપૂર્વી છે (અહવા-અત્થિઆણુપુઢ્વીય અવસ્તવ્વણ્ય)
અથવા ૫ આનુપૂર્વી છે અવક્તવ્યક છે (અહવા-અત્થિ અણાણુપુઢ્વીય
અવસ્તવ્વણ્ય) અથવા-૬ અનાનુપૂર્વી છે અવક્તવ્યક છે, (અહવા-
અત્થિ આણુપુઢ્વીય અણાણુપુઢ્વી અવસ્તવ્વણ્ય) અથવા ૭ આનુપૂર્વી છે
અનાનુપૂર્વી છે અવક્તવ્યક છે । (एवं सप्त भङ्गा) इस प्रकार ये सात
भङ्ग हैं । (से तं संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता) इस प्रकार संग्रहनय
मान्य भङ्गसमुत्कीर्तनता है ।

ભાવાર્થ-સંગ્રહનય માન્ય અર્થપદ પ્રરૂપણતા સે કયા પ્રયોજન સધતા
હૈ? यह बात सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा स्पष्ट की है। इसमें उन्होंने ने भङ्ग
समुत्कीर्तनता का प्रयोजन कहा है, इस भङ्गसमुत्कीर्तनता में मूल में
३ पद हैं? आनुपूर्वी, २ अनानुपूर्वी और तीसरा अवक्तव्यक।
आनुपूर्वी का वाच्यार्थ क्या है? यह सब पहिले स्पष्ट कर दिया गया है।

(અહવા-અત્થિઆણુપુઢ્વીય અવસ્તવ્વણ્ય) અથવા (૫) આનુપૂર્વી છે. અવ-
ક્તવ્યક છે. (અહવા-અત્થિ અણાણુપુઢ્વીય અવસ્તવ્વણ્ય) અથવા (૬) અના-
નુપૂર્વી છે, અવક્તવ્યક છે. (અહવા-અત્થિ આણુપુઢ્વીય, અણાણુપુઢ્વીય,
અવસ્તવ્વણ્ય) અથવા (૭) આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે અને અવક્તવ્યક
છે. (एवं सप्त भङ्गा) આ પ્રકારે અહીં સાત ભંગા (વિકલ્પો) બને છે. (से तं
संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता) આ પ્રકારનું સંગ્રહનયસંમત ભંગસમુત્કી-
ર્તનતાનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ-સંગ્રહનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું પ્રયોજન આ સૂત્રદ્વારા
સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યું છે. તેમણે આ સૂત્રમાં એવું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે
અર્થપદ પ્રરૂપણતા વડે ભંગસમુત્કીર્તનતા રૂપ પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે.
આ ભંગસમુત્કીર્તનામાં મૂળ ત્રણ પદ છે. તે ત્રણ પદ આ પ્રમાણે છે-
(૧) આનુપૂર્વી, (૨) અનાનુપૂર્વી અને (૩) અવક્તવ્યક આનુપૂર્વી આદિનો
વાચ્યાર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. આ ત્રણે પદોને સ્વતંત્ર રૂપે

ટીકા—‘ एयाएणं ’ इत्यादि—

अत्र—एकपदमाश्रित्य त्रयो भङ्गाः, पदद्वयसंयोगमाश्रित्य त्रयो भङ्गाः, पदत्रय-
संयोगमाश्रित्य एको भङ्गः । इत्थं सप्त भङ्गा बोद्धव्याः । भङ्गस्थापना मूलोक्तक्रमे-
णैव बोध्या । अस्य सूत्रस्य व्याख्या कृतमाया ॥सू० ९३॥

भङ्गोपदर्शनतां प्रदर्शयति—

मूलम्—एयाए णं संगहस्स भंगसमुक्कित्तणयाए किं पओ-
यणं? एयाए णं संगहस्स भंगसमुक्कित्तणयाए संगहस्स भंगो-
वदंसणया कीरइ । से किं तं संगहस्स भंगोवदंसणया? संगहस्स
भंगोवदंसणया-तिप्पएसिया आणुपुव्वी? परमाणुपोग्गला अणा-
णुपुव्वी? दुप्पएसिया अवत्तव्वए? । अहवा तिप्पएसिया य पर-
माणुपोग्गला य आणुपुव्वી य अणाणुपुव्वી य ४ । अहवा तिप्प-
एसिया य दुप्पएसिया य आणुपुव्वી य अवत्तव्वए य ५ । अहवा
परमाणुपोग्गला य दुप्पएसिया य अणाणुपुव्वી य अवत्तव्वए य ६ ।
अहवा—तिप्पएसिया य परमाणुपोग्गला य दुप्पएसिया य आणु-
पुव्वી य अणाणुपुव्वી य अवत्तव्वए य ७ । से तं संगहस्स
भंगोवदंसणया ॥सू० ९४॥

इनमें १ एक आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी और तीसरा अवक्तव्यक इन
तीन पदों को स्वतंत्ररूप से आश्रित हो करके ३ भंग हो जाते हैं । तथा
आनुपूर्वी अनानुपूर्वी, आनुपूर्वी अवक्तव्यक और अनानुपूर्वी अवक्त-
व्यक ये तीन भंग दो दो पदों के संयोग को लेकर बने हैं । और आनु-
पूर्वी, अनानुपूर्वी अवक्तव्यक यह सातवां भाग। तीन पदों के संयोग
से बना है । इस प्रकार तीन पदों के स्वतंत्रता और संयोग से ये ७
भंग बने हुए हैं । ॥ सू० ९३ ॥

લક્ષ્મી ત્રણ ભાંગા બને છે. દ્વિસંયોગી ત્રણ ભાંગા નીચેના બળે પહેના
સંયોગથી બને છે—આનુપૂર્વી અને અનાનુપૂર્વી, આનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક
અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી, અને અવકતવ્યક,
ત્રણ પહેના સંયોગી સાતમા ભાંગા બને છે. આ રીતે ત્રણ પહેના અસં-
યોગી ત્રણ ભાંગા, દ્વિસંયોગી ત્રણ ભાંગા અને ત્રિસંયોગી એક ભાંગે
મળીને કુલ સાત ભાંગા બને છે. ॥સૂ० ૯૩॥

૪૦૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

માણુપુદ્ગલાશ્ચ આનુપૂર્વીં ચ અનાનુપૂર્વીં ચ ૪ । અથવા-ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વીં ચ અવક્તવ્યકં ચ ૫ । અથવા-પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ અનાનુપૂર્વીં ચ અવક્તવ્યકં ચ ૬ । અથવા-ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વીં ચ અનાનુપૂર્વીં ચ અવક્તવ્યકં ચ ૭ । સૈવા સંગ્રહસ્ય મજ્ઞોપદર્શનતા ॥ સૂ. ૦૯૪ ॥

ટીકા—‘एयाएणं’ इत्यादि ।

અત્રાપિ સત્ત મજ્ઞા વોધ્યાઃ । અસ્ય સૂત્રસ્ય વ્યાખ્યાકૃતપ્રાયા ૩ ॥ સૂ. ૦૯૪ ॥

અથ સમવતારં પ્રદર્શયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં સંગહસ્સ સમોયારે ? સંગહસ્સ સમોયારે—સંગહસ્સ આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં વ.હિં સમોયરંતિ ? કિં આણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ ? અણાણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ ? અવક્તવ્યગદઘ્વેહિં સમોયરંતિ ? સંગહસ્સ આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં આણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ નો અણાણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ નો

અનાનુપૂર્વીં હસ શબ્દ કે વાચ્યાર્થ સે યાવન્માત્ર પરમાણુ પુદ્ગલ હૈં વે સઘ અનાનુપૂર્વીં હસ એક પદ સે સંગૃહીત હો જાતે હૈં । (દુપ્પણિયા અવક્તવ્યક) હસી પ્રકાર યાવન્માત્ર ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ હૈં વે એક અવક્તવ્યક હૈં હસ પ્રકાર અવક્તવ્યક હસ શબ્દ કે વાચ્યાર્થ સે યાવન્માત્ર ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ હૈં વે સઘ અવક્તવ્યક હસ એક શબ્દ સે સંગૃહીત હો જાતે હૈં । હસી પ્રકાર સે ત્રિસંયોગી ત્રીજ વર્તોંકા ઓર ત્રિસંયોગી ? એક પદ કા બી વાચ્યાર્થ સમસ્ટ હેત્તા ચાહિયે । હસી વિષય કો સૂત્રકાર ને ‘અહવા’ આદિ વર્તોંકા દ્વારા કહા હૈં હન સમસ્ત વર્તોંકા કી વ્યાખ્યા પહિલે કી જા ચુકી હૈં । ॥ સૂ. ૦૯૪ ॥

પુઘ્વી) જેટલાં પરમાણુ પુદ્ગલો છે, તેઓ એક અનાનુપૂર્વીં રૂપ છે. આ રીતે સમસ્ત પરમાણુ પુદ્ગલોને અહીં અનાનુપૂર્વીં પદના વાચ્યાર્થ રૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. (દુપ્પણિયા અવક્તવ્યક) જેટલાં દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો છે, તેઓ એક અવક્તવ્યક રૂપ છે. આ રીતે “અવક્તવ્યક” આ પદનો વાચ્યાર્થ સમસ્ત દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો છે તેથી “અવક્તવ્યક” આ એક પદના પ્રયોગ દ્વારા સમસ્ત દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો ગ્રહણ થઈ બચ છે. એજ પ્રમાણે ત્રિસંયોગી ત્રણ ભાગાઓનો અને ત્રિસંયોગી એક ભાગાનો વાચ્યાર્થ પણ સમસ્ટ હેતો જોઈએ. આ વિષયનું સૂત્રકારે “અહવા” આદિ પૂર્વોક્ત પદો દ્વારા કહ્યું છે. આ બધા પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં આપવામાં આવી ચુકી છે. ॥ સૂ. ૦૯૪ ॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫ સમવતારસ્વરૂપનિકરૂપણ

૪૦૯

અવત્તઽવગદઽવેહિં સમોયરંતિ । एवं दोत्रि वि सट्टाणे सट्टाणे
સમોયરંતિ । સે તં સમોયારે ॥સૂ૦ ૧૫॥

જાયા—અથ કઃ સ સંગ્રહસ્ય સમવતારઃ? સંગ્રહસ્ય સમવતારઃ—સંગ્રહસ્ય
આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ? કિમાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? અનાનુપૂર્વી-
દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? અવત્તઽવગદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? સંગ્રહસ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ

અથ સૂત્રકાર સંગ્રહનય માન્ય સમવતાર કા સ્વરૂપ કહતે છે—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગ્રહસ્સ સમોયારે) હે ભદન્ત સંગ્રહનય માન્ય
સમવતાર કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર— (સંગ્રહસ્સ સમોયારે) સંગ્રહનય માન્ય સમવતાર કા સ્વ-
રૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ સમવતાર કા અર્થ સમાવેશ—મિલના હૈ । અર્થાત્
આનુપૂર્વી આદિ જો દ્રવ્ય હૈ ઊનકા અન્તર્ભાવ મિલના સ્વસ્થાન મેં હોતા
હૈ યા પરસ્થાન મેં હોતા હૈ ? હસ પ્રકાર ચિન્તન પ્રકાર કા જો ઉત્તર
હૈ વહ સમાવેશ હૈ । યહ વિચાર પ્રકાર હસ પ્રકાર સે હોતા હૈ કિ સંગ્રહ
નય સંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કહાંપર સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ? (કિં આણુપુઽવેહિં
સમોયરંતિ ? અણાણુપુઽવેહિં—સમોયરંતિ, અવત્તઽવગદઽવેહિં સમોય-
રંતિ ?) કયા આનુપૂર્વી દ્રવ્યો મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ? યા અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યો
મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ યા અવત્તઽવગદ્રવ્યો મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ।

હવે સૂત્રકાર સંગ્રહનયસંમત સમવતારના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગ્રહસ્સ સમોયારે ?) હે ભગવન્ ! સંગ્રહનય
સંમત સમવતારનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—“સંગ્રહસ્સ સમોયારે” સંગ્રહનયમાન્ય સમવતારનું સ્વરૂપ
આ પ્રકારનું છે—(સમવતાર એટલે સમાવેશ અથવા મિલન) એટલે કે
“આનુપૂર્વી આદિ જે દ્રવ્યો છે તેમના અન્તર્ભાવ (સમાવેશ) સ્વસ્થાનમાં
થાય છે કે પરસ્થાનમાં થાય છે ?” આ પ્રકારની વિચારધારાનો જે ઉત્તર
છે, તેનું નામ સમવતાર છે અ. વિચારધારા આ પ્રમાણે ચાલે છે—સંગ્રહનયસંમત
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના કયાં સમાવેશ થાય છે ? (કિં આણુપુઽવેહિં સમોયરંતિ ?
અણાણુપુઽવેહિં સમોયરંતિ ? અવત્તઽવગદઽવેહિં સમોયરંતિ ?) શું આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે—મળી જાય છે ? કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં
સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે ? કે અવત્તઽવગદ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે.

અ૦ ૫૨

४१०

अनुयोगद्वारसूत्रे

आनुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति, नो अनानुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति नो अवक्तव्यक-
द्रव्येषु समवतरन्ति। एवं द्वावपि स्वस्थाने स्वस्थाने समवतरतः। स एष
समवतारः ॥सू० ९५॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अस्य सूत्रस्य व्याख्या कृतमायैवेति ४ ॥सू० ९५॥

अथ पञ्चमं भेदमनुगमं निरूपयति—

मूलम्—से किं तं अनुगमे? अनुगमे अट्टविहे पण्णत्ते, तं
जहा—‘संतपयपरुवणया, दव्वप्पमाणं च खित्तं फुसणा य। कालो
य अंतरं भाग भावे अप्पशवहुं नत्थि ॥१॥’ संगहस्स आणुपुव्वी-
दव्वाइं किं अत्थि णत्थि? नियमा अत्थि, एवं दोन्नि वि ॥१॥
संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं किं संखिज्जाइं असंखिज्जाइं अणंताइं?
नो संखिज्जाइं नो असंखिज्जाइं नो अणंताइं, नियमा एगो

उत्तर—संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति, नो
अणानुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति, नो अवत्तव्वगदव्वेहिं समोयरंति) संग्रह-
नय संमत समस्त आनुपूर्वीद्रव्य स्वस्थान रूप आनुपूर्वीद्रव्यों में ही
समाविष्ट होते हैं। परस्थान रूप अनानुपूर्वीद्रव्यों में या अवक्तव्यक
द्रव्यों में समाविष्ट नहीं होते हैं। (एवं दोन्नि वि सट्ठाणे सट्ठाणे समोय-
रंति) इसी प्रकार से संग्रहनय संमत अनानुपूर्वीद्रव्य और अवक्तव्यक
द्रव्य भी क्रमशः अपने अपने स्थानरूप अनानुपूर्वीद्रव्यों में और अव-
क्तव्यकद्रव्यों में समाविष्ट होते हैं। इसकी व्याख्या ८० सूत्र के समा-
नजाननी चाहिये ॥ सू० ९५ ॥

उत्तर—(संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति, नो
अवत्तगदव्वेहिं समोयरंति नो अणानुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति) संश्रद्धनयसंमत
समस्त आनुपूर्वी द्रव्ये स्वस्थान इय आनुपूर्वी द्रव्येमां न समाविष्ट थाय
छे, परस्थान इय अनानुपूर्वी द्रव्येमां के अवक्तव्यक द्रव्येमां समाविष्ट
यतां नथी. (एवं दोन्नि वि सट्ठाणे सट्ठाणे समोयरंति) अथ प्रभाषे संश्र-
द्धनयसंमत अनानुपूर्वी द्रव्य अने अवक्तव्यक द्रव्य पण्ण अनुक्रमे चोत्तपो-
त्ताना स्थानइय अनानुपूर्वी द्रव्येमां अने अवक्तव्यक द्रव्येमां समाविष्ट
थाय छे. तेनुं स्पष्टीकरण ८०मां सूत्रमां कथा प्रभाषे समञ्जसु. ॥सू० ९५॥

अनुयोगबन्धिका टीका सूत्र १६ अनुगमस्वकपत्रिकवर्णनम्

४११

रासी, एवं दोन्नि वि ॥२॥ संगहस्स आणुपुब्बीदद्वाइं लोगस्स कइभागे होज्जा ? किं संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा संखेज्जेसु भागेषु होज्जा असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा ? सब्वलोए होज्जा ? नो संखेज्जइभागे होज्जा नो असंखेज्जइभागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेषु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा, नियमा सब्वलोए होज्जा, एवं दोन्नि वि ॥३॥ संगहस्स आणुपुब्बीदद्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइभागं फुसंति ? असंखेज्जइभागं फुसंति ? संखेज्जे भागे फुसंति ? असंखेज्जे भागे फुसंति ? सब्वलोगे फुसंति ? नो संखेज्जइभागं फुसंति जाव नियमा सब्वलोगं फुसंति । एवं दोन्नि वि ॥४॥ संगहस्स आणुपुब्बीदद्वाइं कालओ केवच्चिरं होति ? सब्वद्धा । एवं दोण्णि वि ॥५॥ संगहस्स आणुपुब्बीदद्वाणं कालओ केवच्चिरं अंतरं होई ? नत्थि अंतरं, एवं दोण्णि वि ॥६॥ संगहस्स आणुपुब्बीदद्वाइं सेसदद्वाणं कइभागे होज्जा ? किं संखेज्जइभागे होज्जा ? असंखेज्जइभागे होज्जा ? संखेज्जेसु भागेषु होज्जा ? असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा ? नो संखेज्जइभागे होज्जा, नो असंखेज्जइभागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेषु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा, नियमा तिभागे होज्जा । एवं दोन्नि वि ॥७॥ संगहस्स आणुपुब्बीदद्वाइं कयरंमि भावे होज्जा ? नियमा साइ-पारिणामिए भावे होज्जा । एवं दोन्नि वि ॥८॥ अप्पाबहुं नत्थि । से तं अणुगमे । से तं संगहस्स अणोवणिहिया दद्वाणुपुब्बी । से तं अणोवणिहिया दद्वाणुपुब्बी ॥सू० १६॥

जाया—अथ कोऽपि अनुगमः ? अनुगमः षष्टविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—‘सत्पद-
प्ररूपणता द्रव्यप्रमाणं च क्षेत्रं स्पर्शना च । कालश्च अन्तरं भागो भावः, अल्प-
बहुत्वं नास्ति ॥१॥’ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि किं सन्ति न सन्ति ? नियमात्
सन्ति । एवं द्वे अपि ॥१॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि किं संख्येयानि असंख्येयानि
अनन्तानि ? नो संख्येयानि नो असंख्येयानि नो अनन्तानि । नियमात् एको
राशिः । एवं द्वे अपि ॥२॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य कतिभागे भवन्ति ?
किं संख्येयतमभागे भवन्ति ? असंख्येयतमभागे भवन्ति ? संख्येयेषु भागेषु
भवन्ति ? असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ? सर्वलोके भवन्ति ? नो संख्येयतमभागे,
भवन्ति नो असंख्येयतमभागे भवन्ति, नो संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असं-
ख्येयेषु भागेषु भवन्ति । नियमात् सर्वलोकं भवन्ति । एवं द्वे अपि ॥३॥ संग्रहस्य
आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य किं संख्येयतमभागं स्पृशन्ति ? असंख्येयतमभागं स्पृ-
शन्ति ? संख्येयान् भागान् स्पृशन्ति ? असंख्येयान् भागान् स्पृशन्ति ? सर्वलोकं
स्पृशन्ति ? नो संख्येयतमभागं स्पृशन्ति यावत् नियमात् सर्वलोकं स्पृशन्ति । एवं
द्वे अपि ॥४॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? सर्वदा ।
एवं द्वे अपि ॥५॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणां कालतः कियच्चिरमन्तरं भवति ?
नास्ति अन्तरम् । एवं द्वे अपि ॥६॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणां कति-
भागे भवन्ति ? किं संख्येयतमभागे भवन्ति ? असंख्येयतमभागे भवन्ति ? संख्येयेषु
भागेषु भवन्ति ? असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ? नो संख्येयतमभागे भवन्ति, नो असं-
ख्येयतमभागे भवन्ति नो संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति,
नियमात् त्रिभागे भवन्ति । एवं द्वे अपि ॥७॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि कतर-
स्मिन् भावे भवन्ति ? नियमाम् सादिपारिणामिके भावे भवन्ति । एवं द्वे अपि ॥८॥
अल्पबहुत्वं नास्ति । स एवोऽनुगमः । सैवाऽनीपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी ॥सू० ९६॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ कोऽसौ अनुगमः ?=संग्रहनयसम्मतोऽनुगमः कः ? इति प्रश्नः । उत्तर-
माह—अनुगमोऽष्टविधः प्रज्ञप्तः । तद्यथा—सत्पदप्ररूपणता, द्रव्यप्रमाणं क्षेत्रं स्पर्शना-

अथ सूत्रकार पांचवे भेद अनुगम का निरूपण करते हैं—

“से किं तं अणुगमे” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं अणुगमे) हे भदन्त ! संग्रहनय संमत अनु-
गम का क्या स्वरूप है ?

इसे सूत्रकार संग्रहनय संमत अनुगमना स्वरूपतुं निरूपण करे छे—

“से किं तं अणुगमे” इत्यादि

शब्दार्थ—(से किं तं अणुगमे ?) हे भगवन् ! संग्रहनयभान्य अनुगमनु
स्वरूप केवुं कछु छे ?

અનુયોગજનિકાદીકા સૂત્ર ૧૬ અનુગમસ્વરૂપનિરૂપણય

૪૧૧

કાલઃ અન્તરં માગો ભાવચ્ચેતિ । અલ્પબહુત્વરૂપોઽનુગમસ્તુ સંગ્રહનયમતે નાસ્તિ,
અસ્ય નયસ્ય સામાન્યવાદિત્વાત્ । સમ્પ્રતિ સત્પદપ્રરૂપણતાં પ્રરૂપયતિ—‘ સંગ્રહસ્સ
આણુપુઙ્વી દઙ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ’ इत्यादि । संग्रहसम्मत्तानि आनुपूर्वीद्रव्याणि

ઉત્તર—(અણુગમે અદ્વિવિદ્ધે પળગત્તે) અનુગમ આઠ પ્રકાર કા કહા
ગયા હૈ (તં જહા) વે પ્રકાર ચે હૈ—(સંતપયપરુવળયા દઙ્વપમાણં ચ
ચિત્તં કુસળા ય, કાલોય અંતરં ભાગ ભાવે અપ્પાબહું નત્થિ) સત્પ-
દપ્રરૂપણતા ૧, દ્રવ્યપ્રમાણ ૨, ક્ષેત્ર ૩, સ્પર્શના ૪, કાલ ૫, અન્તર ૬,
માગ ૭ ઓર ભાવ ૮ અલ્પબહુત્વ અનુગમ કા પ્રકાર યહાં નહીં હૈ ક્યોકિ
સંગ્રહનય સામાન્યવાદી હૈ । “સંગ્રહસ્સઆણુપુઙ્વી દઙ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ
નિયમા અત્થિ एवं दोन्नि वि” સત્પદપ્રરૂપણતા કે નિમિત્ત સૂત્રકાર
કહતે હૈ કિ હસ સત્પદ પ્રરૂપણા મૈં યહ પ્રરૂપિત કિયા જાતા હૈ કિ
જિસ પ્રકાર સે શશશ્રૃંગ આદિપદ અસદર્થ કો વિષય કરને વાલે હોતે
હૈ ઉસ પ્રકાર સે ચે આનુપૂર્વી આદિ પદ અસદર્થ વિષયક નહીં હૈ, કિન્તુ
જેસે સ્તંભઆદિ પદ સ્તંભ રૂપ અપને વાસ્તવિક અર્થ કો વિષય કરતે
હૈ ઉસી પ્રકાર સે ચે આનુપૂર્વી આદિપદ ભી વાસ્તવિક આનુપૂર્વી આદિ
કો વિષયક કરતે હૈ, હસલિયે (સંગ્રહસ્સ આણુપુઙ્વીદઙ્વાઈં કિં અત્થિ ન-

ઉત્તર—(અણુગમે અદ્વિવિદ્ધે પળગત્તે) અનુગમ આઠ પ્રકારનો કહ્યો છે.
(તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—

(સંતપયપરુવળયા, દઙ્વપમાણં ચ ચિત્તં કુસળા ય, કાલો ય અંતરં ભાગ ભાવે
અપ્પાબહું નત્થિ) (૧) સત્પદપ્રરૂપણતા, (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (૩) ક્ષેત્ર, (૪)
સ્પર્શના, (૫) કાળ, (૬) અન્તર, (૭) ભાગ અને (૮) ભાવ. અલ્પબહુત્વ
રૂપ અનુગમનો પ્રકાર અહીં નથી, કારણ કે સંગ્રહનય સામાન્યવાદી છે.
(સંગ્રહસ્સ આણુપુઙ્વીદઙ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ? નિયમા અત્થિ एवं दोन्नि वि)
હવે સૂત્રકાર સત્પદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ સમજાવે છે— સત્પદપ્રરૂપણતામાં એ
વાતની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે કે જે પ્રકારે શશશ્રૃંગ (સસલાના શિંગડા)
આદિ પદ અસદર્થ (અવિદ્યમાન પદાર્થ)નું પ્રતિપાદન કરનારા હોય છે, એ
પ્રકારે આ આનુપૂર્વી આદિ પદો અસદર્થનું પ્રતિપાદન કરનારા નથી પરંતુ
એમ સ્તંભ આદિ પદો સ્તંભરૂપ ચોતાના વાસ્તવિક અર્થને પ્રતિપાદિત કરે
છે, એજ પ્રમાણે આનુપૂર્વી આદિ પદ પણ વાસ્તવિક આનુપૂર્વી આદિ
સદર્થનું (વિદ્યમાન પદાર્થનું) પ્રતિપાદન કરે છે. તેથી (સંગ્રહસ્સ આણુપુઙ્વી
દઙ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ?) “ સંગ્રહનયસમ્મત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે કે નહીં ? ”

૭૫

અનુયોગહારસુત્ર

કિં સન્તિ ? ન વા સન્તિ ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह—नियमात् सन्ति=आनुपूर्वी-द्रव्याणां सद्भावः संग्रहनयमतेऽस्त्येवेत्यर्थः ।

નનુ સંગ્રહવિચારે પ્રકાન્તે 'આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ' इति बहुत्वेन निर्देशोऽनुपपन्नः, संग्रहनयमते आनुपूर्वीसामान्यस्यैवाऽभ्युपगमादिति चेत्, उच्यते—संग्रहनयमते मुख्यतया सामान्यमेवाभ्युपगम्यते, तथापि गौणरीत्या व्यवहारनयमते द्रव्यबहुत्वमपेक्ष्य बहुत्वेन निर्देशः कृत इति नास्ति कश्चिद् दोषः । एवं संग्रहनयमते द्रव्यो-रानुपूर्व्यवक्तव्यकयोर्विषयेऽपि बोध्यम् । अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्याणां सद्भावो नियमादस्तीत्यर्थः । अथ द्रव्यप्रमाणनिरूपयितुमाह—'संग्रहस्त आणुपुर्वीदव्वाइ' किं संखिज्जाइ' इत्यादि—संग्रहनयसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि किं संख्येयानि सन्ति ? किमसंख्येयानि सन्ति ? किंवा—अनन्तानि सन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह—

अथ "संग्रहनय संमत आनुपूर्वी द्रव्य हैं या नहीं हैं, इस प्रकार की शंका का समाधान यह है कि ये (नियमा अर्थात्) नियम से हैं । इसी प्रकार से अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय में भी यही समझना चाहिये कि ये दोनों द्रव्य नियम से हैं । द्रव्यप्रमाण में आनुपूर्वी आदि पदों द्वारा जिन द्रव्यों को कहा गया है उनकी संख्या का निर्धारण होता है—जैसे (संग्रहस्त आणुपुर्वीदव्वाइ किं संखिज्जाइ असंखि-उजाइ अणंताइ ?) संग्रहनय संमत आनुपूर्वीद्रव्य क्या संख्यात हैं या असंख्यात या अनंत हैं ?

उत्तर (नो संखिज्जाइ नो असंखिज्जाइ नो अणंताइ) न संख्यात हैं न असंख्यात हैं, और न अनंत हैं किन्तु (नियमा एगो रासी) नियम से एक राशिरूप हैं

આ પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે ઉત્તર આપી શકાય. (નિયમા અર્થિ) “આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવશ્ય છે જ એજ પ્રમાણે અનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ એવું સમજવું જોઈએ કે એ બંને દ્રવ્યો પણ અવશ્ય વિદ્યમાન છે.

દ્રવ્યપ્રમાણમાં એ વાતનો વિચાર કરવામાં આવે છે કે આનુપૂર્વી આદિ પદો દ્વારા જે દ્રવ્યોનું કથન કરવામાં આવે છે તે દ્રવ્યોની સંખ્યા કેટલી છે. જેમ કે (સંગ્રહસ્ત આણુપુર્વીદવ્વાઈ કિં સંખિજ્જાઈ અસંખિજ્જાઈ અણંતાઈ ?) હે ભગવન! સંગ્રહનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું સંખ્યાત છે, કે અસંખ્યાત છે કે અનંત છે ?

ઉત્તર—(નો સંખિજ્જાઈ, નો અસંખિજ્જાઈ નો અણંતાઈ) સંગ્રહનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સંખ્યાત પણ નથી, અસંખ્યાત પણ નથી અને અનંત પણ નથી, પરંતુ (નિયમા એગો રાસી) નિયમથી એક જ રાશિરૂપ છે.

અનુયોગશાસ્ત્રિકા ટીકા સુત્ર ૧૨ અનુગમનસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૧૫

સંગ્રહનયે આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ નો સંખ્યેયાનિ નો અસંખ્યેયાનિ નો અનન્તાનિ સન્તિ ।
કિન્તુ નિયમાત્ ઇકો રાશિરસ્તિ ।

નનુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સંખ્યેયાદિત્વાભાવાદેકરાશિત્વમપિ નોપપદ્યતે, દ્રવ્ય-
બાહુલ્યે સત્યેવ તસ્યોપપદ્યમાનત્વાત્, દૃશ્યતે ચ લોકે વ્રીહિબાહુલ્યે ‘વ્રીહિરાશિઃ’
ઇતિ વ્યવહારઃ, ? ઇતિચેત્, ઉચ્યતે—સંખ્યેયાદિત્વાભાવેऽપિ સ્વ સ્વરૂપાત્ આનુપૂર્વી-
દ્રવ્યબાહુલ્યં ત્રિધતે । તેષામાનુપૂર્વીત્વસામાન્યમાશ્રિત્ય યદેકત્વં તદપેક્ષ્યા એક-
રાશિત્વમિતિ ‘એકોરાશિઃ’ ઇત્યસ્યાભિપ્રાયઃ, ઇતિ નાસ્તિકશ્ચિદ્ દોષઃ । યદ્વા—

શંકા—જબ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય સંખ્યાત આદિરૂપ નહીં હૈં તો ડનમેં એક-
રાશિ રૂપતા ખો કેસે બનસકતી હૈ ? ક્યોંકિ યહ રાશિરૂપતા દ્રવ્ય બહુ-
લતા મેં હી હોની હૈ । લોક મેં ખી એસા હી દેખા જાતા હૈ કી જબ ધાન્ય
બહુત હોતા હૈ તબ “યહ વ્રીહિરાશિ” હૈ એસા વ્યવહાર હોતા હૈ ।

ઉત્તર—સંખ્યાત આદિ રૂપતા કે અભાવ મેં ખી અપને સ્વરૂપ કો
હેકર આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં મેં બહુલતા હૈ । અતઃ આનુપૂર્વીત્વ સામાન્ય કા
આશ્રય કરકે ડનમેં જો એકતા હૈ ડસકી અપેક્ષા યે એક રાશિરૂપ હૈ
એસા કહને કા અભિપ્રાય સૂત્રકાર કા હૈ । ઇસમેં કોઈ દોષ નહીં હૈ ।
તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ ત્રિપ્રદેશિક એક આનુપૂર્વી હૈ, ચતુષ્પ્રદે-
શિક એક આનુપૂર્વી હૈ પંચપ્રદેશિક એક આનુપૂર્વી હૈ ઇત્યાદિ અનંત
પ્રદેશિક એક આનુપૂર્વી હૈ । ઇસ પ્રકાર સે સષ આનુપૂર્વિયોં કે સ્વરૂપ

શંકા—એ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સંખ્યાત આદિ રૂપ ન હોય તો તેમાં એક
રાશિરૂપતા કેવી રીતે સંભવી શકે છે ? કારણ કે આ રાશિરૂપતા તો દ્રવ્યની
બહુલતામાં જ સંભવી શકે છે. લોકમાં પણ એવું જ એવામાં આવે છે
કે બ્યારે ધાન્ય બહુ જ હોય છે ત્યારે એમ કહેવામાં આવે છે કે “આ
ચોખાનો હગલો (રાશિ) છે.

ઉત્તર—સંખ્યાત આદિ રૂપતાનો અભાવ હોવા છતાં પણ ચોખાના
સ્વરૂપની દૃષ્ટિએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં બહુલતા (વિપુલતા) છે. તેથી આનુ-
પૂર્વીત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે દ્રવ્યોમાં જે એકતા છે તે એકતાને અનુ-
લક્ષીને સૂત્રકારે અહીં એવું કહ્યું છે કે “આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં એકરાશિરૂ-
પતા છે.” તેથી આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી આ કથનનું તાત્પર્ય
એ છે કે ત્રિપ્રદેશિક એક આનુપૂર્વી ચાર પ્રદેશિક એક આનુપૂર્વી છે, પાંચ
પ્રદેશિક પચાનંતના રક ધોની એક એક આનુપૂર્વી છે. આ પ્રકારે બધી
આનુપૂર્વીઓના સ્વરૂપ બિન્ન બિન્ન છે, પરંતુ તે સઘળી આનુપૂર્વીઓમાં

યથા-યથા વિશિષ્ટૈકપરિણામપરિણતે સ્કન્ધે તદારમ્ભકપરમાર્ણનાં બાહુલ્યેઽપિ તદ્ગતૈકત્વમેવ મુખ્યતયા વિવક્ષ્યતે, તથૈવાત્માઽપિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યબાહુલ્યેઽપિ એક-માનુપૂર્વીત્વસામાન્યમાશ્રિત્ય એકત્વમેવ મુખ્યતયા વિવક્ષિતમ્, અતો મુખ્યમેકત્વ-માશ્રિત્યૈવ સંખ્યેયત્વાદયો નિવિધ્યતે । ગુણભૂતાનિ દ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ રાશિત્વમપિ ન વિરુદ્ધ્યતે ઇતિ ન કશ્ચિદ્ દોષઃ । એવમનાનુપૂર્વ્યવત્કવ્યકદ્રવ્યવિષયેઽપિ बोध्यम् ।

મિન્ન ૨ હૈ-સો હન સચ મેં આનુપૂર્વીત્વરૂપ સામાન્ય કી અપેક્ષા કરકે એકતા માન લી જાતી હૈ-હસ અપેક્ષા હનમેં એકરાશિરૂપતા માની ગઈ હૈ ? અથવા-જૈસે વિશિષ્ટ એક પરિણામ સ્કન્ધ દ્રવ્ય મેં તદારમ્ભક પર-માણુઓં કી બહુલતા હોને પર ખી તદ્ગત એકતા હી મુખ્ય રૂપ સે વિવ-ક્ષિત રૂપ સે હોતી હૈ, ડસી પ્રકાર યહાંપર ખી રાશિરૂપતા મેં ખી આનુ-પૂર્વીદ્રવ્યોં કી બહુલતા હોને પર ખી એક આનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્ય કી આશ્રિત કરકે એકત્વ હી મુખ્યતયા વિવક્ષિત હુઆ હૈ । ઓર હસી કારણ હસ મુખ્ય એકત્વ કો લેકર કે સંખ્યેયત્વ આદિ નિષિદ્દ હુએ હૈ । અતઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય મેં એક રાશિરૂપતા વિરુદ્ધ નહીં હૈ । તથા ગોણ હુએ વ્યક્તિરૂપ દ્રવ્યોં કો આશ્રિત કરકે એક રાશિપના ખી વિરુદ્ધ નહીં હોતા હૈ । (એવં દોભિવિ) હસી પ્રકાર સે આનુપૂર્વી ઓર અવત્કવ્યક દ્રવ્ય મેં ખી એકરાશિતા કા ઉદ્ભવન કર લેના ચાહિયે ।

આનુપૂર્વીત્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકતા માની લેવામાં આવી છે. તેથી તે અપેક્ષાએ આનુપૂર્વીઓમાં એકરાશિરૂપતા માની લેવામાં આવી છે. અથવા:-જેમ કોઈ એક વિશિષ્ટ પરિણામ સ્કન્ધદ્રવ્યમાં તદારમ્ભક (તેનો આરંભ કરનાર) પરમાણુઓની બહુતા હોવા છતાં પણ તદ્ગત એકતા જ મુખ્ય રૂપે વિવક્ષિત થાય છે, એજ પ્રમાણે અહીં પણ-રાશિરૂપતામાં પણ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની બહુતા હોવા છતાં પણ એક આનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્યને આધારે એકત્વ જ મુખ્યત્વે વિવક્ષિત થયું છે, અને એજ કારણે આ મુખ્ય એકત્વને લીધે સંખ્યેયત્વ, અસંખ્યેયત્વ આદિનો નિષેધ થયો છે. તેથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં એકરાશિરૂપતા માનવામાં કોઈ હોય નથી. તથા ગોણે યથાર્થ રૂપ દ્રવ્યોને આશ્રિત કરીને એકરાશિત્વ પણ વિરુદ્ધ પડતું નથી. (એવં દોભિવિ) એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં પણ એકરાશિત્વ અદ્ય ક્ષણે એકત્વને અને અવત્કવ્યક દ્રવ્યમાં પણ એકરાશિત્વ અમલ લેવું એકત્વને હવે સૂત્રકાર અંતઃકલ્પસંમત ક્ષેત્રનું નિરૂપણ કરે છે—

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ९६ अनुगमस्वरूपनिरूपणम्

४१७

अथ क्षेत्रं निरूपयितुमाह—‘संगहस्त आणुपुर्वीदब्बाहं’ लोमस्त कहभागे होज्जा ?’ इत्यादि—संगहनयसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य कतिभागे=कियद्भागे भवन्ति ? किं संख्येयतमभागे भवन्ति ? किमसंख्येयतमभागे भवन्ति ? किं संख्ये-येषु भागेषु भवन्ति ? किमसंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ? किं सर्वलोके भवन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह—संगहनयसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य संख्येयतमभागे नो भवन्ति, असंख्येयतमभागे नो भवन्ति, संख्येयेषु भागेषु नो भवन्ति, असंख्ये-येषु भागेषु चापि नो भवन्ति, किन्तु नियमात् सर्वलोके भवन्ति । आनुपूर्वी-सामान्यस्यैकत्वात् सर्वलोकाप्यपित्याच्च नियमात् सर्वलोके तत्सत्ता बोध्या ।

अब सूत्रकार क्षेत्र का निरूपण करते हैं—

प्रश्न—(संगहस्त आणुपुर्वी दब्बाहं’ लोमस्त कहभागे होज्जा ?) संगहनय संमत समस्त आनुपूर्वीद्रव्य लोक के कितने भाग में हैं ? (किं संखेज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे होज्जा, संखेज्जेसु भा-गेसु होज्जा ? असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा ? सब्वलोए होज्जा ?) क्या लोक के संख्यातवे भाग में हैं ? या लोक के असंख्यातवे भाग में हैं ? या लोक के संख्यात भागों में हैं ? या लोक के असंख्यात भागों में हैं ? या सर्वलोक में हैं ?

उत्तर—(नो संखेज्जइभागे होज्जा, नो असंखेज्जइभागे होज्जा, नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, निय-मा सब्वलोए होज्जा, एवं दोन्निवि) समस्त आनुपूर्वी द्रव्य लोक के न संख्यातवे भाग में हैं न असंख्यातवे भाग में हैं, न संख्यात भागों में हैं और न असंख्यात भागों में हैं किन्तु नियम से समस्त लोक में हैं ।

प्रश्न—(संगहस्त आणुपुर्वीदब्बाहं’ लोमस्त कहभागे होज्जा ?) के भाग-वन् । संगहनयमान्य आनुपूर्वी द्रव्यो लोकना केटला भागभां छे ? (किं संखे-ज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे होज्जा, संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, असं-खेज्जेसु भागेसु होज्जा, सब्वलोए होज्जा ?) थुं लोकना स’ज्यातभां भागभां छे ? के अस’ज्यातभां भागभां छे ? के लोकना स’ज्यातभागेभां छे ? के लोकना अस’ज्यात भागेभां छे ? के सर्व लोकभां छे ?

उत्तर—(नो संखेज्जइभागे होज्जा, नो असंखेज्जइभागे होज्जा, नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नियमा सब्वलोए होज्जा, एवं दोन्नि वि) समस्त आनुपूर्वी द्रव्य लोकना स’ज्यातभां भागभां पषु नथी, अस’ज्यातभां भागभां पषु नथी, स’ज्यात भागेभां पषु नथी, अस’ज्यात भागेभां पषु नथी, परन्तु नियमथी न समस्त लोकभां छे, कारण के आनु-

અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યવિષયેऽપ્યેવમેવ બોધ્યમ્ । સ્પર્શનાદ્વારેऽપિ એવમેવ બોધ્યમ્ ।
કાલદ્વારે તુ—કાલતઃ આનુપૂર્વીત્વાનાનુપૂર્વીત્વાવક્તવ્યત્વાનામવ્યવચ્છિન્નત્વેન
સર્વદાઽવસ્યાયિત્વાત્ કાલત્રયેઽપ્યેષાં સર્વાદ્ધાઽવસ્થાનં બોધ્યમ્ । અત એવૈષાં કાલ-
તોઽન્તરમપિ ન ભવતિ, આનુપૂર્વીત્વાદીનાં કાલત્રયેઽપિ સત્ત્વેન વ્યવચ્છેદાભાવાત્ ।
इत्यन्तरद्वारे भावनीयम् । भागद्वारे त्वेवं विज्ञेयम्—आनुपूर्वीद्रव्येषु प्रत्येकद्रव्याणि=

કર્થોંકિ આનુપૂર્વીત્વરૂપ સામાન્ય એક છે અને તે સર્વલોક વ્યાપી છે
इसलिये नियमतः आनुपूर्वीद्रव्य की सत्ता सर्वलोक में हैं । इसी प्रकार
સે અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષયમેં इसी प्रकार का कथन
જાનનાં યાહિયે । તથા સ્પર્શના દ્વારમેં બી એસા હી મંતવ્ય જાનના
યાહિયે । અર્થાત્ આનુપૂર્વી આદિ સમસ્ત દ્રવ્ય સર્વલોક કા નિયમ સે
स्पर्श करते हैं । यही विषय प्रश्नोत्तर पूर्वक (संगहस्त आणुपुष्वीद-
व्वाइं लोगस्त किं संखेज्जइभागं कुसंति ? असंखेज्जइभागं कुसंति
સંખેજ્જે ભાગે કુસંતિ, અસંખેજ્જે ભાગે કુસંતિ ? સવ્વલોગ કુસંતિ ।
નો સંખેજ્જે ભાગં કુસંતિ, જાવ નિયમા સવ્વલોગં કુસંતિ, એવં દો-
भिबि) સૂત્રકાર ને ઇન પદોં દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા છે । (સંગહસ્ત આણુપુષ્વી-
दव्वाइं कालभो केवच्चिरं होनि ? सव्वद्धा एवं दोभिबि)

પ્રશ્ન— સંગ્રહનય માન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કાલ કો આશ્રિત
करके कितने समय तक आनुपूर्वी रूप से रहते हैं ।

પૂર્વીત્વ ઇપ સામાન્ય એક છે અને તે સર્વલોકવ્યાપી છે, તેથી નિયમથી જ
આનુપૂર્વી દ્રવ્યની સત્તા (અસ્તિત્વ) સર્વ લોકમાં છે. આ પ્રકારનું કથન
અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય વિષે પણ સમજવું એટલે કે તે બન્નેનું
અસ્તિત્વ પણ નિયમથી જ સમસ્ત લોકમાં છે. સ્પર્શનાને અનુલક્ષીને
પણ એવું જ કથન સમજી લેવું. એટલે કે આનુપૂર્વી આદિ સમસ્ત દ્રવ્ય
નિયમથી જ સર્વલોકનો સ્પર્શ કરે છે. એજ વિષયનું સૂત્રકારે નીચેના
પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે—

(સંગહસ્ત આણુપુષ્વીદવ્વાઈં લોગસ્ત કિં સંખેજ્જે ભાગં કુસંતિ ? અસંખેજ્જે
भागं कुसंति, संखेज्जे भागे कुसंति, असंखेज्जे भागे कुसंति, सव्वलोगं कुसंति ?
નો સંખેજ્જે ભાગં કુસંતિ, જાવ નિયમા સવ્વલોગં કુસંતિ, એવં દોભિ વિ.)

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! સંગ્રહનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં શું લોકના સંખ્યા-
તમાં ભાગને સ્પર્શે છે કે, અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શે છે, કે સમસ્ત
લોકને સ્પર્શે છે ?

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬ અનુગમસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૧૯

ત્રિપદેશિકચતુષ્પદેશિકાદીનિ-અનન્તપ્રદેશિકપર્યન્તાનિ, નિયમાત્ શેષદ્રવ્યાણામ્= અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં ત્રિભાગે=ત્રયાણાં રાશીનામેકો રાશિરૂપો ભાગસ્ત્રિ-ભાગસ્તસ્મિન્ મવન્તિ । અયમર્થઃ-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સર્વેષાં સંકલનેન યાવત્

ઉત્તર-આનુપૂર્વીત્વ અનાનુપૂર્વીત્વ ઔર અવક્તવ્યકત્વ સામાન્ય કા કમ્પી મી વિચ્છેદ નહીં હોતા હૈ હસલિયે હનકા અવસ્થાન સર્વાદ્વા-સાર્વ કાલિક- હૈ । હસીલિય કાલ કો અપેક્ષા હનકા વિરહ કાલ મી નહીં હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ આનુપૂર્વીત્વ આદિકોં કા કાલ-ત્રય મેં મી સત્વ હોને કે કારણ વ્યવચ્છેદ નહીં હોતા હૈ, હસ કારણ હનમેં અન્તર નહીં માના જાતા હૈ એસા વિચાર અન્તરદ્વાર મેં કિયા ગયા જાનના ચાહિયે । યહી યાત સૂત્રકારને (સંગહસ્સ આનુપૂર્વીદ્વા-ણ કાલઓ કેવચ્ચિરં અંતરં હોઈ ? નત્થિ અંતરં) હન પદોં દ્વારા કહી ગઈ હૈ (સંગહસ્સ આનુપૂર્વી દ્વાહં સેસદ્વાણં કહ્મભાગે હોજ્જા)

પ્રશ્ન-સંગ્રહનયમાન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય શેષ દ્રવ્યોં કે કૌન સે ભાગ મેં હૈ ? (કિં સંખેજ્જહભાગે હોજ્જા ? અસંખેજ્જહભાગે હોજ્જા

ઉત્તર-આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોકને જ સ્પર્શે છે, લોકના સંખ્યા-તમાં ભાગને, અસંખ્યાતમાં ભાગને, સંખ્યાત ભાગોને કે અસંખ્યાત ભાગોને સ્પર્શતું નથી આ પ્રકારનું કથન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની સ્પર્શના વિષે પણ સમજવું.

(સંગહસ્સ આનુપૂર્વીદ્વાહં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોતિ ? સંવદ્ધા, એવં હોન્તિ વિ) પ્રશ્ન-હે લગવન્ ! સંગ્રહનયમાન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમય સુધી આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે ?

ઉત્તર-આનુપૂર્વીત્વ, અનાનુપૂર્વીત્વ અને અવક્તવ્યકત્વસામાન્યનો કહિ પણ વિચ્છેદ યતો નથી તેથી તેમનું અવસ્થાન (અસ્તિત્વ) સાર્વકાલિક હોય છે તે કારણે કાળની અપેક્ષાએ તેમનો વિરહકાળ પણ નથી. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આનુપૂર્વી આદિનો ત્રણે કાળમાં સદ્ભાવ હોવાને કારણે વ્યવચ્છેદ (વિનાશ) સંભવી શકતો નથી. તે કારણે કાળની અપેક્ષાએ તેમના અન્તર (વિરહકાળ) નો પણ સદ્ભાવ હોતો નથી. આ પ્રકારે સૂત્રકારે અંતરદ્વારની પ્રશ્નપૂછા કરી છે, એમ સમજવું એજ યાત સૂત્રકારે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા વ્યક્ત કરી છે—

(સંગહસ્સ આનુપૂર્વીદ્વાણં કાલઓ કેવચ્ચિરં અંતરં હોઈ ? નત્થિ અંતરં) આ સૂત્રપાઠનો ભાવાર્થ ઉપર આપ્યા પ્રમાણે સમજવો.

હવે ભાગદ્વારનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે—(સંગહસ્સ આનુપૂર્વીદ્વાહં

રાશિર્ભવતિ તસ્ય ભાગત્રયકરણેન યસ્તૃતીયો ભાગઃ સંપદ્યતે તત્સંખ્યકાનિ આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્યાણાં પ્રત્યેકદ્રવ્યાણિ ભવન્તિ, સંગ્રહસ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કસ્મિન્ ભાવે
ભવન્તિ ?, इति प्रश्नः । उत्तरमाह-नियमात् सादिपारिणामिके भावे भवन्ति ।

સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ? અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ?) કયા સંખ્યાતવે
ભાગ મેં હૈં યા અસંખ્યાતવે ભાગ મેં હૈં ?-યા સંખ્યાત ભાગોં મેં હૈં ? યા
અસંખ્યાત ભાગોં મેં હૈં ? —

ઉત્તર-(નો સંખેજ્જહાભાગે હોજ્જા, નો અસંખેજ્જહા ભાગે હોજ્જા,
નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નિયમા
તિભાગે હોજ્જા) સંગ્રહનય માન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં સે પ્રત્યેક
આનુપૂર્વીદ્રવ્ય-ત્રિપ્રદેશિક, ચતુષ્પ્રદેશિક આદિ અનન્ત પ્રદેશિક દ્રવ્ય-
નિયમ સે શેષ દ્રવ્યોં કે ત્રિભાગ મેં હૈં । અર્થાત્ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં ઔર
અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં કો મિલાકર જો રાશિ ઉત્પન્ન હો ઉસ રાશિ કે ૩
ભાગ કરો-इनमें जो तृतीय भाग आवे तत्प्रमाण आनुपूर्वी द्रव्यों में
प्रत्येक आनुपूर्वी द्रव्य हैं । (एवं दोन्निवि)-हसी प्रकार आनुपूर्वी और
अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय में जानना चाहिये । (संग्रहस्त आणुपुर्वी

સેષદ્રવાણં કદ્ધમાગે હોજ્જા ?) પ્રશ્ન-હે ભગવાન્ ! સંગ્રહનયસંમત સમસ્ત
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય બાકીના દ્રવ્યોના કેટલામાં ભાગપ્રમાણ હોય છે ? (કિં સંખે-
જ્જહાભાગે હોજ્જા ? અસંખેજ્જહાભાગે હોજ્જા ? સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ? અસં-
ખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ?) શુ' સંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ છે ? કે અસંખ્યાતમાં
ભાગપ્રમાણ છે ? કે સંખ્યાત ભાગપ્રમાણ સંખ્યાત ગણુ' છે ? કે અસંખ્યાત
ભાગપ્રમાણ-અસંખ્યાત ગણુ' છે ?

ઉત્તર-(નો સંખેજ્જહાભાગે હોજ્જા, નો અસંખેજ્જહાભાગે હોજ્જા, નો
સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નિયમા તિભાગે હોજ્જા)
સંગ્રહનયમાન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંથી પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-ત્રિપ્રદે-
શિક ચતુષ્પ્રદેશિક પંચપ્રદેશિક આદિ અનન્ત પ્રદેશિક પર્યન્તના પ્રત્યેક આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય-નિયમથી જ બાકીના દ્રવ્યોના ત્રીજા ભાગ પ્રમાણ જ હોય છે.
એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને એકત્ર કરવાથી જે
રાશિ બને છે તે રાશિના બે ત્રણ ભાગ કરવામાં આવે તો તે પ્રત્યેક
ભાગપ્રમાણ (તે બાકીના દ્રવ્યોની રાશિના રાશિના ત્રીજા ભાગપ્રમાણ)
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંના પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હોય છે. (एवं दोन्निवि) એજ
પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ સમજવું.

द्ववाइं कयरंमि भावे होज्जा ?) संग्रहनय मान्य आनुपूर्वी द्रव्य किस भाव वाले हैं ?

उत्तर- (नियमा साहपारिणामए भावे होज्जा) संग्रहनय मान्य आनुपूर्वीद्रव्य नियम से सादिपारिणामिक भाववाले हैं । (एवं दोन्निवि) इसीप्रकार से दोनों आनुपूर्वी और अवक्तव्यकद्रव्यों के विषय में जानना चाहिये । (अप्पा बहुनत्थि) राशिगत द्रव्यों में अल्प बहुत्व नहीं माना गया है । क्योंकि इस संग्रहनय में राशिगत द्रव्यों का अस्तित्व व्यवहारनयरूप कल्पना मात्र से ही मान्य हुआ है । तात्पर्य कहने का यह है कि संग्रहनय की दृष्टि आनुपूर्वी द्रव्यों में अनेकत्व काल्पनिक है । क्यों कि व्यवहारनय इस बात को स्वीकार करता है कि आनुपूर्वी द्रव्य प्रत्येक अनेक हैं । इसलिये यह अनेकत्व सामान्यरूप आनुपूर्वीत्व की दृष्टि में विलीन के कारण है ही नहीं ।

शंका-यदि यही बात है तो फिर सूत्रकार ने इस संग्रहनय मान्य अनुगमके प्रकरण में “संग्रहस्य आनुपूर्वी द्रव्याणि किं संख्येयानि ” आदि बहुवचनान्त पद में आनुपूर्वीद्रव्य को क्यों रखा है ? “आनुपूर्वी-

प्रश्न-(संग्रहस्य आणुपुक्वी द्ववाइं कयरंमि भावे होज्जा ?) संग्रहनय-मान्य आनुपूर्वी द्रव्यो क्या भावथी युक्त होय छे ?

उत्तर-नियमा साहपारिणामिए भावे होज्जा) संग्रहनयसंमत आनुपूर्वी द्रव्यो नियमथी न सादिपारिणामिक भाववाणां होय छे. (एवं दोन्नि वि) ओन प्रमाणे संग्रहनयसंमत आनुपूर्वी द्रव्यो अने अवक्तव्यक द्रव्यो पणु नियमथी न सादिपारिणामिक भाववाणां होय छे (अप्पा बहुं नत्थि) राशिगत द्रव्योमां अल्पबहुत्व मानवामां आणुं नथी, कारण के आ संग्रहनयमां राशिगत द्रव्योतुं अस्तित्व व्यवहार नयइप कल्पना मात्रथी न मान्य थयुं छे. आ कथनतुं तात्पर्य ओ छे के संग्रहनयनी दृष्टिओ आनुपूर्वी द्रव्योमां अनेकत्व काल्पनिक छे, कारण के व्यवहार नय ओ बातनो स्वीकार करे छे, के प्रत्येक आनुपूर्वी द्रव्य अनेक छे. अने ते अनेकत्व सामान्य रूप आनुपूर्वीत्वनी दृष्टिमां विलीन थछे जवाने कारणे छे न नही.

शंका-जे ओनी उहीकत होय तो सूत्रकारे आ संग्रहनयमान्य अनुगमना प्रकरणमां “संग्रहस्य आनुपूर्वी द्रव्याणि किं संख्येयानि ” इत्यादि बहुवचनान्त पदमां आनुपूर्वी द्रव्यने केम भूकयुं छे ? “आनुपूर्वी द्रव्य”

૪૨૨

અનુગમદ્વારસૂત્રે

અન્યદ્ દ્રવ્યમપિ પૂર્વવદ્ બોધ્યમ્ । રાશિગતદ્રવ્યાણાં પૂર્વોક્તપરુપવદ્ભુત્વમત્ર નાશી-
યતે, દ્રવ્યાણાં પ્રસ્તુતનયે વ્યવહારસંવૃત્તિમાત્રેણૈવ સત્ત્વાદિતિ । એવમનાનુપૂર્વ્યવક્ત-
વ્યકદ્રવ્યવિપદેઽપિ બોધ્યમ્ । અનુગમં સમાપયન્નાહ-‘ સે તં અણુગમે ’ ઇતિ । સ

દ્રવ્યમ્” એસા એક વચનાન્ત પદ પ્રયુક્ત કરના ચાહિયે । કયોંકિ સંગ્રહનય
મુખ્યતથા સામાન્યત્વ હી માનતા હૈ ।

ઉત્તર-શંકા ઠીક હૈ-પરન્તુ સૂત્રકાર ને જો બહુવચનાન્ત આનુપૂર્વી
પદ કો રખા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ વે યહ પ્રકટ કરના ચાહતે હૈ
વ્યવહારનય સે દ્રવ્યબહુત્વ ખી હૈ । હસી ઘાત કી અપેક્ષા કરકે ઉન્હોંને
યહાં આનુપૂર્વી મેં બહુવચન કા નિર્દેશ કિયા હૈ ।

શંકા-વ્યવહારનય કી અપેક્ષા સૂત્રકારને જથ નૈગમ વ્યવહારસંમત
અનુગમ કા પ્રકરણ પ્રારંભ કિયા હૈ તથ વહાં દ્રવ્યબહુત્વ દિલ્લા હી
દિયા હૈ ફિર હસે યહાં હસ એકત્વ કે પ્રકરણ મેં પ્રદર્શિત કરને કી કયા
આવશ્યકતા થી ?

ઉત્તર-ઠીક હૈ-નહીં દિલ્લાના ચાહિયે, પરન્તુ જો શિષ્ય વિસ્મરણ
શીલ હૈ ઉન્હે હસ વિષય કો પુનઃ સ્મૃત કરાના કોઈ પુનરુક્તિ દોષ કી
ઘાત નહીં હૈ । અતઃ સૂત્રકારને એસા કિયા હૈ । શિષ્યજન જિસ પ્રકાર સે
વસ્તુ કા સ્વરૂપ સમજ સકે ઉસી પ્રકાર સે ઉન્હે સમજાના ગુરુકા કર્ત-

આ એક વચનાન્ત પદનો પ્રયોગ કેમ કર્યો નથી ? સંગ્રહનય મુખ્યત્વે
સામાન્યત્વને જ માને છે તેથી અહીં એકવચનના પદનો પ્રયોગ
થવો જોઈતો હતો.

ઉત્તર-શંકાકર્તાની શંકા બ્યાજખી છે. પરંતુ સૂત્રકારે જે બહુવચનાન્ત
પદનો પ્રયોગ કર્યો છે-‘ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો ’ એવો પ્રયોગ કર્યો છે-તેનું કારણ
એ છે કે તેઓ એ વાત પ્રકટ કરવા માગે છે કે વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ
દ્રવ્યબહુત્વ પણ છે. એજ વાતને અનુલક્ષીને સૂત્રકારે અહીં આનુપૂર્વી પદમાં
બહુવચનનો નિર્દેશ કર્યો છે.

શંકા-નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનુગમના પ્રકરણમાં જ સૂત્રકારે વ્યવ-
હારનયની અપેક્ષાએ દ્રવ્યબહુત્વ પ્રકટ કર્યું છે. છતાં અહીં ફરીથી તેને
એકત્વના પ્રકરણમાં પ્રદર્શિત કરવાની શી આવશ્યકતા હતી ?

ઉત્તર-વિસ્મરણશીલ શિષ્યને આ વિષયનું ફરી સ્મરણ કરાવવા માટે
સૂત્રકારે અહીં તેનો ફરી ઉલ્લેખ કર્યો છે તેથી આ પ્રમાણે કરવામાં પુન-
રુક્તિ દોષની સંભાવના રહેતી નથી શિષ્યો જે પ્રકારે વસ્તુના સ્વરૂપને
સમજી શકે એ પ્રકારે તેમને સમજાવવાનું તો શુરુનું દર્શન્ય થઈ પડે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬ અનુગમસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૪૨૩.

પૃષ્ઠોડનુગમઃ । इत्थं संग्रहसम्भताऽनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह—
'से तं संग्रहस्त' इत्यादि । सैषा संग्रहसम्भताऽनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी । अनौप-
निधिकी द्रव्यानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह—'से तं अणोवणिहिया' इत्यादि—
सैषाऽनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वीति ॥ सू० १६ ॥

इत्थमनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी निरूप्य सम्प्रति प्राङ्निर्दिष्टामौपनिधिकीं
द्रव्यानुपूर्वीं प्राह—

मूलम्—से किं तं ओवणिहिया दव्वाणुपुव्वी ? ओवणिहिया
दव्वाणुपुव्वी तिविहा पणत्ता, तं जहा—पुव्वाणुपुव्वी१, पच्छा-
णुपुव्वी२, अणाणुपुव्वीय३ ॥ सू० १७ ॥

વ્ય હો જાતા હૈ । (સે તં અણુગમે । સે તં સંગ્રહસ્ત અણોવણિહિયા
દવ્વાણુપુવ્વી, સે તં અણોવણિહિયા દવ્વાણુપુવ્વી) હસ પ્રકાર અનુગમ કે
પ્રકરણ કો સમાસ કરતે હુયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ યહ પૂર્વોક્તરૂપ સે
સંગ્રહનય માન્ય અનુગમ કા સ્વરૂપ હૈ । હસકી સમાસિ મેં સંગ્રહનય
સંમત અનૌપનિધિ કી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન સમાસ હો ચુકા । યહી પ્ર-
ક્રાન્ત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હૈ । હસકા વિશેષરૂપ સે
સ્વલ્પાશા અર્થ નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનુગમ કે પ્રકરણ મેં લિખા
જા ચુકા હૈ । ॥ સૂ૦ ૧૬ ॥

હસ પ્રકાર સે અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા નિરૂપણ કરકે અથ
સૂત્રકાર પૂર્વ કથિત ઔપનિધિ કી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં

(સે તં અણુગમે । સે તં સંગ્રહસ્ત અણોવણિહિયા દવ્વાણુપુવ્વી, સે તં
અણોવણિહિયા દવ્વાણુપુવ્વી) હવે અનુગમના પ્રકરણનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્ર-
કાર કહે છે કે આ પ્રકારનું (ઉપર વર્ણવ્યા પ્રમાણેનું) સંગ્રહનયમાન્ય અનુ-
ગમનું સ્વરૂપ છે. અનુગમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ થઈ જવાથી સંગ્રહનયમાન્ય
અનુગમનું સ્વરૂપ છે. અનુગમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ થઈ જવાથી સંગ્રહનય-
સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું કથન અહીં પૂરું થાય છે. આ પ્રકારનું
પૂર્વપ્રસ્તુત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. તેનો વિશેષ ખુલાસો
નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનુગમના પ્રકરણમાં આપવામાં આવેલો છે, ॥ સૂ૬૬ ॥

આ પ્રમાણે અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર
પૂર્વકથિત ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

૪૨૪

અનુયોગદ્વારસ્ત્રોત્ર

જાયા—અથ કા સા ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞા, તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી રેવ ॥મૂ૦ ૧૭॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ। ઉત્તરમાહ—ઔપનિધિકી=ઉપનિધિ=સ્થાપનં નિર્માણમિત્યર્થઃ, સ પ્રયોજનમસ્યા સા, દ્રવ્યાનુપૂર્વી=દ્રવ્યવિષયાડડનુપૂર્વી ત્રિપ્રકારા પ્રોક્તા। તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી=વિવક્ષિત-ધર્માસ્તિકાયાદિદ્રવ્યવિશેષસમુદાયે યઃ પૂર્વઃ=પ્રથમસ્તસ્માદારભ્ય યા આનુપૂર્વી=અનુક્રમઃ પરિપાટી વા નિશ્ચિપ્યતે સા પૂર્વાનુપૂર્વી?। પશ્ચાનુપૂર્વી—તત્રૈવ દ્રવ્યવિશેષ-

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—સે કિં તં ઓવણિહિયા દ્રવ્યાણુપુઠ્ઠી) હે ભદ્રન્ત ! ઔપનિધિ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ઓવણિહિયા દ્રવ્યાણુપુઠ્ઠી તિવિહા પળ્ળત્તા) ઔપનિધિ દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તંજહા) હે ઉસકે ૩ પ્રકાર હે હૈ—(પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી ૧, પઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી ૨, અણાણુપુઠ્ઠી ૩ ય) ૧ પૂર્વાનુપૂર્વી ૨ પશ્ચાનુપૂર્વી ઔર ૩,અનાનુપૂર્વી ઉપનિધિ કા અર્થ સ્થાપન યા નિર્માણ હૈ । યહ જિસકા પ્રયોજન હો ઉસકા નામ ઔપનિધિકી હૈ । યહ દ્રવ્ય વિષયક ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી—પૂર્વોક્તરૂપ સે ૩ત્રીન પ્રકાર કી હૈ । વિવક્ષિત ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્ય વિશેષ કે સમુદાય મેં જો પૂર્વ પ્રથમ દ્રવ્ય હૈ ઉસસે લેકર જો આનુપૂર્વી—અનુક્રમ—પરિપાટી નિશ્ચિત્ત કી

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઓવણિહિયા દ્રવ્યાણુપુઠ્ઠી ?) હે ભગવન્ ! ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઓવણિહિયા દ્રવ્યાણુપુઠ્ઠી તિવિહા પળ્ળત્તા) ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી, પઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી, અણાણુપુઠ્ઠી ય) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી, અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

ઉપનિધિ એટલે સ્થાપના અથવા નિર્માણ તે સ્થાપના અથવા નિર્માણ હેતુ પ્રયોજન હોય છે તેને ઔપનિધિકી કહે છે. આ દ્રવ્યવિષયક ઔપનિધિકીના ઉપર મુજબ ત્રણ પ્રકાર છે. વિવક્ષિત ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યવિશેષના સમુદાયમાં જે પૂર્વ (પ્રથમ દ્રવ્ય) છે ત્યાંથી શરૂ કરીને જે આનુપૂર્વી (અનુક્રમ, પરિપાટી) નિશ્ચિત્ત કરવામાં આવે છે—રાખવામાં આવે છે

અનુયોગશબ્દિકા ટીકા સૂત્ર ૧૮ પૂર્વાનુપૂર્વાદિભેદત્રયનિરૂપણમ્

૪૨૫

સમુદાયે યઃ પાશ્ચાત્યઃ=અન્તિમસ્તસ્માદારમ્ય વ્યતિક્રમેણ યા ઽઽનુપૂર્વીનિક્ષિપતે
સા પશ્ચાનુપૂર્વી૨। અનાનુપૂર્વી-પૂર્વાનુપૂર્વીપશ્ચાનુપૂર્વીભ્યાં મિન્નસ્વરૂપા યાઽઽનુ
પૂર્વી સાઽનાનુપૂર્વી ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

પૂર્વાનુપૂર્વાદિભેદત્રયં નિરૂપયિતુમાહ—

પ્રથમ—સે કિં તં પુઠ્ઠાનુપુઠ્ઠી ? પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી—ધમ્મત્થિકાયે
અધમ્મત્થિકાયે, આગાસત્થિકાયે, જીવત્થિકાયે, પોગ્ગલત્થિ-
કાયે, અદ્ધાસમયે । સે તં પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી । સે કિં તં પચ્છાણુ-
પુઠ્ઠી ? પચ્છાણુપુઠ્ઠી—અદ્ધાસમય, પોગ્ગલત્થિકાણ, જીવત્થિ-
કાણ, આગાસત્થિકાણ, અહમ્મત્થિકાણ, ધમ્મત્થિકાણ । સે તં
પચ્છાણુપુઠ્ઠી । સે કિં તં અણાણુપુઠ્ઠી ? અણાણુપુઠ્ઠી—પયાણ
એવ પગાહયાણ પગુત્તરિયાણ છગચ્છગયાણ સેઢીણ અણમણ્ણ-
કમાસો દુરુવૂણો । સે તં અણાણુપુઠ્ઠી ॥સૂ૦ ૧૮॥

છાયા—અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-ધર્માસ્તિકાયઃ અધર્માસ્તિ-
કાયઃ આકાશસ્તિકાયો જીવાસ્તિકાયઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ અદ્ધાસમયઃ । સૈષા પૂર્વા-

ની જાતી છે—રહી જાતી છે વહ પૂર્વાનુપૂર્વી છે । તથા ડસી દ્રવ્ય વિશેષ
કે સમુદાય મેં જો પાશ્ચોત્ય-અંતિમદ્રવ્ય છે—ડસસે લેકર વ્યત્તિક્રમ સે
જો આનુપૂર્વી નિક્ષિપ્ત ની જાતી છે વહ પ્રશ્ચાનુપૂર્વી છે । પૂર્વાનુપૂર્વી એવં
પશ્ચાનુપૂર્વી ઇન ડોનોં સે મિન્ન સ્વરૂપ વાલી જો આનુપૂર્વી છે વહ
અનાનુપૂર્વી છે । ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ જો ત્રીન ભેદ હેં ડનકા સ્વરૂપ કયા છે ઇસ વાત
કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હેં—“સે કિં તં પુઠ્ઠાનુપુઠ્ઠી” ઇત્યાદિ ।

તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. તથા એજ દ્રવ્યવિશેષના સમુદાયમાં જે પાશ્ચાત્ય-
અતિમ દ્રવ્ય છે, ત્યાંથી શરૂ કરીને એટલે કે ઉઠતા ક્રમથી જે આનુપૂર્વી
રાખવામાં આવે છે તેને પશ્ચાનુપૂર્વી કહે છે. પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, આ
બન્નેથી બિન્ન સ્વરૂપવાળી જે આનુપૂર્વી છે તેને અનાનુપૂર્વી કહે છે. ॥સૂ૦ ૧૭॥

હવે સૂત્રકાર પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ ત્રણ ભેદોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં પુઠ્ઠાનુપુઠ્ઠી” ઇત્યાદિ—

અ૦ ૫૪

૪૨૬

અનુપ્રોક્તસમય

પૂર્વી. અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી? પશ્ચાનુપૂર્વી-અદ્વાસમયઃ, પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ, જીવાસ્તિકાયઃ, આકાશાસ્તિકાયઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ, ધર્માસ્તિકાયઃ. સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી. અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયાં વજ્રગચ્છતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યાશ્વાસો દ્વિરુપોનઃ. સૈવાનાનુપૂર્વી. (સૂ. ૧૮.)

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ. ઉત્તરમાહ—‘પુવ્વાણુપુવ્વી’ ઇત્યાદિ. પૂર્વાનુપૂર્વી-ધર્માસ્તિકાયઃ, ૧, અધર્માસ્તિકાયઃ, ૨, આકાશાસ્તિકાયઃ, ૩, જીવાસ્તિકાયઃ, ૪, પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ, ૫, અદ્વાસમયઃ, ૬. ધર્માસ્તિકાયાદીનાં વ્યા-
રૂપાંડચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય પ્રથમશ્રુતસ્કન્ધે મસ્કૃતાચારચિન્તામણિટીકાયાં દ્રષ્ટવ્યા. તથા-અદ્વાસમયઃ-અદ્વારૂપઃ સમય ઇતિ સમાસઃ. અદ્વાશબ્દઃ કાલવાચકઃ.

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી?) હે અદન્ત. પૂર્વાનુપૂર્વી કય કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—(ધર્મસ્થિકાયે, અધર્મસ્થિકાયે, આગાસ્થિકાયે જીવસ્થિકાયે, પોગલસ્થિકાયે’ અદ્વાસમયે) ૧ ધર્માસ્તિકાય, ૨ અધર્માસ્તિકાય, ૩ આકાશાસ્તિકાય, ૪ જીવાસ્તિકાય ૫ પુદ્ગલાસ્તિકાય ઓર ૬ અદ્વા સમય હસ પ્રકાર કી પરિપાટી સે હન છહ દ્રવ્યોં કા નિક્ષેપણ કરના યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ. હન ધર્માસ્તિકાય આદિ કોં કા કયા સ્વરૂપ હૈ હસ વાત કો જાનને કે લિયે આચારાઙ્ગ-સૂત્ર કે પ્રથમ સ્કંધ મેં મસ્કૃત આચારચિન્તામણિ ટીકા દેખની જાહિ-યે. અદ્વારૂપ જો સમય હૈ ઉસકા નામ અદ્વા સમય હૈ. અદ્વા શબ્દ

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી?) હે અગવન્. પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે. (ધર્મસ્થિકાયે, અધર્મસ્થિકાયે, આગાસ્થિકાયે, જીવસ્થિકાયે, પોગલસ્થિકાયે, અદ્વાસમયે) (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય, (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય અને (૬) અદ્વાસમય (કાળ), આ પ્રકારની પરિપાટીથી (અનુક્રમથી) છ દ્રવ્યોનું નિક્ષેપણ કરવું તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

આચારાઙ્ગ સૂત્રની આચારચિન્તામણિ નામની મેં જે ટીકા લખી છે તેના પહેલા સ્કંધમાં ધર્માસ્તિકાય આદિના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તે જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ ત્યાંથી તે વાંચી લેવું. અદ્વા રૂપ જે સમય છે તેનું નામ અદ્વાસમય છે, અદ્વા શબ્દ કાળવાચક છે, અને સમય શબ્દ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૮ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિમેવત્રયનિરૂપણમ્

૪૨૭

સમયશબ્દોડનેકાર્થકઃ શપથાદિષ્વપિ વર્તતે, અતઃ કાલમર્થે बोधयितुम्-‘અદ્વા’
 इति विशेषणोपादानम् । पट्टसाटिकादिपाटनदृष्टान्तसिद्धः सर्वसूक्ष्मः पूर्वापरकोटि-
 विमण्डितो वर्तमानः एकः कालांश इति ‘अद्वासमय’ शब्दार्थो बोध्यः, अत एवान्न
 अस्तिकायत्वाभावः, बहुप्रदेशवति द्रव्य एव तस्य सद्भावात् । इह तु नास्ति प्रदे-
 शबाहुल्यम्, -अतीतानागतयोर्विनष्टानुत्पन्नत्वेन एकमात्रस्य वर्तमानरूपस्य
 समवेस्य प्रदेशस्य सद्भावात् । ननु समयबहुत्वाभावे ‘समया वलियमुहुत्ता

કાલ વાચક છે ઓર સમય શબ્દ અનેકાર્થક છે । ક્યોંકિ સમય શબ્દ
 का प्रयोग शपथ आदि अनेक अर्थों में भी होता है । अतः कालरूपार्थ
 का वह यहाँ बोधक है, इस बात को बोध कराने के निमित्त सूत्रकार ने
 उसका विशेष अद्वापद रखा है । वर्तमान एक कालांश का नाम अद्वा
 समय है । यह अत्यंत सूक्ष्म है । पूर्व और अपर कोटि से यह रहित
 होता है । इसकी सिद्धि पट्ट साटिकादि के फाड़ने रूप दृष्टान्त से होती है ।
 यथात् सर्व सूक्ष्मातिसूक्ष्म जो वर्तमान कालांश है वही अद्वा समय
 का वाच्यार्थ है । इसे अस्तिकाय में परिगणित नहीं किया गया है । क्यो
 कि इसमें बहुप्रदेशत्व का अभाव है । जो बहुप्रदेश वाले-होते हैं
 उन्हें ही अस्तिकाय कहा गया है । अतीतकाल विनष्ट हो जाने के और
 भविष्यत् काल अनुत्पन्न होने के कारण एकमात्र वर्तमानरूपसमय
 प्रदेश का सद्भाव है इसलिये उसमें प्रदेशबाहुल्य नहीं है ।

શંકા-સમય કી બહુતા કે આભાવ મેં “સમયાવલિયમુહુત્તા વિ-

અનેકાર્થક છે, કારણ કે સમય શબ્દનો પ્રયોગ શપથ આદિ અનેક અર્થમાં
 પણ થાય છે. તેથી તે પદ અહીં કાળરૂપ અર્થનું બોધક છે, તે વાતને
 સમજાવવાને માટે સૂત્રકારે તેનું વિશેષ અદ્વાપદ રાખ્યું છે. વર્તમાન એક
 સમયનું નામ અદ્વાસમય છે. તે અત્યંત સૂક્ષ્મ છે. પૂર્વ અને અપર
 કોટિથી તે રહિત હોય છે. તેની સિદ્ધિને માટે પટ્ટ સાટિકા આદિ ફાડવાનું
 દૃષ્ટાન્ત આપવામાં આવે છે એટલે કે સર્વસૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ જે વર્તમાન કાલાંશ
 છે એજ અદ્વાસમયના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. તેને અસ્તિકાયમાં ગણાવવામાં
 આવેલ નથી કારણ કે તેમાં બહુ પ્રદેશત્વનો અભાવ છે. જે બહુ પ્રદેશવાળાં
 હોય છે તેમને જ અસ્તિકાય કહેવાય છે. અતીતકાળ (વ્યતીત યર્થ ગયેલો
 કાળ) વિનષ્ટ થઈ જવાને કારણે અને ભવિષ્યકાળ અનુત્પન્ન હોવાને કારણે એક
 માત્ર વર્તમાન રૂપ સમયપ્રદેશનો જ સદ્ભાવ છે, તેથી તેમાં પ્રદેશબાહુલ્ય નથી.

શંકા-સમયની બહુતાનો જે અભાવ માનવામાં આવે, તે “સમયાવ-

દિવસમહોરત્તપક્ષમાસાય' इत्यागमसिद्ध आवलिकादिकालः कथमुपपद्येत ? इति चेत्, उच्यते-व्यवहारनयमाश्रित्य-आवलिकादिसत्ता स्वीक्रियते । निश्चय-नयमते तु तदसत्त्वमेव । नहि पुद्गलस्कन्धे परमाणुसङ्घात इवावलिकादिषु समय-सङ्घातः कश्चिदशस्थितोऽस्ति, अतो व्यवहारनयमतेन तत्कथनमस्तीति न कश्चिद् दोष इति । तदेतदुपसंहरन्नाह-‘से तं’ इत्यादि, सैषा पूर्वानुपूर्वीति । अथ पश्चानुपूर्वीं निरूपयितुमाह-‘से किं तं’ इत्यादि । अथ का सा पश्चानुपूर्वी ? इति शिष्य प्रश्नः । उत्तरमाह-‘पच्छानुपुर्वी’ इत्यादिना । पश्चानुपूर्वीहि-‘अद्वासमयः, पुद्गलास्तिकायः, जीवास्तिकायः, आकाशास्तिकायः, अवर्मास्ति-

स महोरत्तपक्ષमासाय” इत्यादि आवलिकारूप काल जो कि आगम सिद्ध है कैसे संगत माना जा सकता है ?

उत्तर—व्यवहारनय को लेकर ही आवलिकारूप की सत्ता स्वी-
कृत हुई है । निश्चयनय के मत को लेकर नहीं । क्योंकि इस मत में
तो आवलिकादि रूप कालका सत्त्व नहीं माना गया है । जिस प्रकार से
पुद्गलस्कंध में परमाणुओं का संघात अवस्थित है उस प्रकार से आव-
लिकादिकों में कोई समय संघात अवस्थित नहीं है । इसलिये मानना
चाहिये यह आवलिकारूप काल का कथन व्यवहारनय के मत से है ।
इसलिये इसमें कोई दोष नहीं है । (से तं पुंव्वानुपुर्वी) इस प्रकार यह
पूर्वानुपूर्वी का स्वरूप है । “से किं तं पच्छानुपुर्वी” पश्चानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर—(पच्छानुपुर्वी) पश्चानुपूर्वी इस प्रकार से हैं—(अद्वासमय

હિયમુદ્ધતા દિવસમહોરત્તપક્ષમાસા ય” આવલિકા, સુદૂર્ત, દિવસ, રાત,
પક્ષ, માસ આદિ રૂપ કાળ કે જે આગમ દ્વારા સિદ્ધ થયેલ છે, તેને કેવી
રીતે સંગત માની શકાય ?

ઉત્તર—વ્યવહાર નયની દૃષ્ટિએ જ આવલિકાદિ રૂપ કાળની સત્તા
(સમયનું અસ્તિત્વ) સ્વીકૃત થઇ છે—નિશ્ચયનયની માન્યતા અનુસાર તો આવ-
લિકા આદિ રૂપ કાળનું અસ્તિત્વ જ સ્વીકારવામાં આવ્યું નથી જે પ્રકારે
પુદ્ગલસ્કંધમાં પરમાણુઓનો સંઘાત (સંયોગ) અવસ્થિત (વિદ્યમાન) છે,
જે પ્રમાણે આવલિકાદિકોમાં કોઈ સમયનો સંઘાત અવસ્થિત નથી તેથી
એવું માનવું જોઈએ કે આ આવલિકાદિ રૂપ કાળનું કથન વ્યવહાર નયના
મતાનુસારનું કથન છે. તે કારણે આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી.
(સે તં પુવ્વાનુપુર્વી) આ પ્રકારનું પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(પચ્છાનુપુર્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની ઠીક છે—(અદ્વાસમય,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૮ પૂર્વાનુપૂર્વાદિમેદત્રયનિરૂપણમ્

૪૨૧

કાયઃ, ધર્માસ્તિકાયઃ, इति व्युत्क्रमेण निर्दिष्टा । तदेतदुपसंहरन्नाह-‘से तं’
 इत्यादि, सैषा पश्चानुपूर्वीति । अथानानुपूर्वीं निरूपयति-‘से किं तं’ इत्यादिना ।
 अथ का सा अनानुपूर्वी?—न विद्यते आनुपूर्वी=पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वीद्वयरूपा
 यस्यां सा तथा विवक्षितपदानामनन्तरोक्तक्रमद्वयमुमुल्लङ्घ्य परस्परसादृशैः
 सम्बन्धिर्मन्त्रैर्यस्यां विरचना क्रियते साऽनानुपूर्वीत्यर्थः । सा हि—एतस्याम्=अम-
 न्तराधिकृतधर्मास्तिकायादिसम्बन्धिन्याम्, एकादिकायाम्=एक आदिर्यस्यां सा
 तथा तस्याम्, पुनः—एकोत्तरिकायाम्—एकैक उत्तरः प्रवर्धमानो यस्यां सा तथा
 पोगलस्थिकाए, जीवस्थिकाए आगासस्थिकाए, अहमस्थिकाए धम्मस्थि-
 काए) अद्धासमय, पुद्गलास्तિકાય, जीवास्तિકाय, आकाशास्तિકाय, अध-
 र्मास्तિકाय, धर्मास्तિકाय । इस प्रकार जो धर्मादिक દ્રવ્યોં का व्युत्क्रम
 से निर्देश है (से तं पच्छाणुपुव्वी) वह पश्चानुपूर्वी है । (से किं अणाणु-
 पुव्वी) हे भदन्त ! अनानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ? (अणाणुपुव्वो)

उत्तर— अनानुपूर्वी का स्वरूप इस प्रकार है— (एयाए वेव एगाइ-
 याए एगुत्तरियाए छ गच्छगयाए सेदीए अणमणव्वासो दूखूणो) जिस
 में पूर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी ये दोनों नहीं हैं उसका नाम अनानुपूर्वी
 है । इसमें विवक्षित धर्मादिक पदों के अनन्तरोक्त क्रमद्वय को उल्लं-
 घन करके परस्पर सम्बन्धित भागों से उन पदों की विरचना की जाती है
 इस अनानुपूर्वी में जो श्रेणी स्थापित की जाती है उसमें सबसे पहिले
 एक संख्या रखी जाती हैं । बाद में एक एक की उत्तरोत्तर वृद्धि

पागलस्थिकाए, जीवस्थिकाए, आगासस्थिकाए, अहमस्थिकाए, धम्मस्थिकाए)
 अद्धासमय (કાળ), પુદ્ગલાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, અધર્મા-
 સ્તિકાય અને ધર્માસ્તિકાય, આ પ્રકારે ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોના જે
 ઉલ્લાંઘનપૂર્વક નિર્દેશ થાય છે, (સે તં પચ્છાણુપુવ્વી) તેનું નામ પશ્ચાતુર્પૂર્વી છે ?

પ્રશ્ન—(સે કિં અણાણુપુવ્વી) હે ભગવન્ ! અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણાણુપુવ્વી) અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(એયા એવ
 એગાઇયા એગુત્તરિયા એછગચ્છગયા એસેદી એ અણમણવ્વાસો દૂખૂણો) જેમાં
 પૂર્વાનુપૂર્વી અને પશ્ચાતુર્પૂર્વી એ બંને નથી, તેનું નામ અનાનુપૂર્વી છે.
 તેમાં ધર્માસ્તિકાય આદિ પદોના ઉપયુક્ત બંને ક્રમનું ઉલ્લાંઘન કરીને
 પરસ્પર સંબંધિત ભાગો વડે તે પદોની વિરચના કરાય છે. આ અનાનુપૂ-
 ર્વીમાં જે શ્રેણી સ્થાપિત કરવામાં આવે છે તેમાં સૌથી પહેલાં એક સંખ્યા
 રાખવામાં આવે છે, ત્યાર બાદ છ સંખ્યા સુધી ઉત્તરોત્તર એકની વૃદ્ધિ

૪૨૦

અનુયોગદ્રોશ્ત્ર

કેસામ્, પુનઃ-૧૬ગચ્છગતાયામ્-વર્ણાં ગચ્છઃ=સમુદાયઃ-૧૬ગચ્છસ્તં ગતામ્-માતા
 ગચ્છગતા તસ્યા-ધર્માસ્તિકાયાદિદ્રવ્યષટ્કવિષયાયાં, શ્રેણ્યાં=૧૬૬૦ અન્યોન્યા-
 મ્યાસઃ-અન્યોઽન્યં પરસ્પરમ્-અભ્યાસો=ગુણનમ્, અન્યોઽન્યામ્યાસઃ-પરસ્પરગુણ-
 ન્નરૂપા, તથા-દ્વિરૂપોનઃ=આદ્યન્તચિત્સારહિતઃ, સ્વરૂપાઽનાનુપૂર્વીં બોધવા।
 અથમમિમાયઃ-પ્રથમં વ્યવસ્થાપિતૈકકાયા અન્તે ચ સ્થાપિતષટ્સંખ્યાયોઃ
 (૧-૨-૩-૪-૫-૬) ધર્માસ્તિકાયાદિ દ્રવ્યષટ્કવિષયાયાઃ ૧૬૬૦ યાં પરસ્પર-
 ગુણને મજ્જકસંખ્યા મરતિ, સા આન્તમજ્જકદ્વયરહિતા અનાનુપૂર્વીં બોધ્યેતિ।
 અથ સૂત્રસ્યેદં તાત્પર્યમ્-પૂર્વાનુપૂર્વીં ઠિ-પ્રથમં તાવદ્ ધર્માસ્તિકાયઃ સ્થાપચિ-
 ક્ત્યઃ, તદનુ-અધર્માસ્તિકાયઃ તત્ આકાશાસ્તિકાયઃ, ઇત્યેવં ક્રમેણ 'અદ્દાસમયઃ'
 ઇત્યેવત્પર્યન્તં સ્થાપના કર્તવ્યા। પશ્ચાનુપૂર્વીં તુ પ્રથમમ્ અદ્દાસમયો વ્યવસ્થાપનીયઃ,
 ક્ષણ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ, તતો જીવાસ્તિકાયઃ, ઇત્યેવં વ્યુત્ક્રમેણ 'ધર્માસ્તિકાયઃ'

છઠ્ઠ સંખ્યા તક હોતી ચલી જાતી હૈ, જૈસે ૧-૨-૩-૪-૫-૬, ફિર હનમિં
 પરસ્પર મેં ગુણા ક્રિયા જાતા હૈ જૈસે $1 \times 2 = 2 \times 3 = 6$, $6 \times 4 = 24$, $24 \times 5 = 120$,
 $120 \times 6 = 720$, હસ પ્રકાર અન્યોન્યામ્યસ્તરાશિ બન જાતી હૈ। હસમેં લે
 આદિ અન્ત કે દો ભંગ કરને પર અનાનુપૂર્વીં બન જાતી હૈ હસ સૂત્ર કા
 તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પૂર્વાનુપૂર્વીં મેં પહિલે ધર્માસ્તિકાય સ્થાપિત હો જાતા
 હૈ, ઉસકે બાદ અધર્માસ્તિકાય, ઉસકે બાદ આકાશાસ્તિકાય' ઉસકે
 બાદ જીવાસ્તિકાય, ફિર પુદ્ગલાસ્તિકાય ઓર ફિર અદ્દા સમય। હસ
 ક્રમસે યહાં છઠ્ઠ દ્રવ્યોં કા સ્થાપન હોના હૈ। તથા પશ્ચાનુપૂર્વીં મેં પહિલે અદ્દા
 સમય 'ફિર પુદ્ગલાસ્તિકાય, બાદ મેં જીવાસ્તિકાય, ફિર અકાશાસ્તિકાય

ભેટી રહે છે, જેમ કે ૧-૨-૩-૪-૫-૬ ત્યાર બાદ તેમાં પરસ્પરને ગુણાકાર
 કરવામાં આવે છે. જેમ કે $1 \times 2 = 2$, $2 \times 3 = 6$, $6 \times 4 = 24$, $24 \times 5 = 120$,
 $120 \times 6 = 720$ આ રીતે અન્યોન્યામ્યસ્ત રાશિ બની જાય છે. તેમાંથી શરૂ-
 આંતને એક ભંગ અને અન્ય એક ભંગ એકો કરી નાખવાથી અનાનુ-
 પૂર્વીં બની જાય છે આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

પૂર્વાનુપૂર્વીંમાં પહેલાં ધર્માસ્તિકાય સ્થાપિત થાય છે, ત્યાર બાદ
 અધર્માસ્તિકાય, ત્યારબાદ આકાશાસ્તિકાય, ત્યાર બાદ જીવાસ્તિકાય, ત્યાર
 બાદ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને ત્યાર બાદ અદ્દાસમય (કાળ) સ્થાપિત થાય છે.
 આ ક્રમે છ દ્રવ્યોં પૂર્વાનુપૂર્વીંમાં સ્થાપન થાય છે.

પશ્ચાનુપૂર્વીંમાં પહેલાં અદ્દા સમય, ત્યાર બાદ પુદ્ગલાસ્તિકાય, ત્યાર
 બાદ જીવાસ્તિકાય, ત્યાર બાદ આકાશાસ્તિકાય, ત્યાર બાદ અધર્માસ્તિકાય

ખર્માસ્તિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧ પુદ્ગલાસ્તિકાયમધિકૃત્ય દ્રવ્યત્રયનિરૂપણમ્ ૪૨૩

इत्थेतत्पर्यन्तं स्थापना कर्तव्या । अनानुपूर्व्यां तु पूर्वानुपूर्वीपश्चानुपूर्वीत्यक्रम-
व्युत्क्रमोभयं परित्यज्य यथारुचि स्थापनाकर्तव्येति । परतुतसूत्रमुपसंहरन्नाह-
'से तं' इत्यादि । सैषाऽनानुपूर्वीति ॥सू० ९८॥

इत्थं धर्मास्तिकायादीनि षडपि द्रव्याणि पूर्वानुपूर्वादित्वेनोदाहृतानि ।
संक्षेपेण पुद્गलास्तिकायमधिकृत्याह—

મૂળમ્—અહવા ઓવણિહિયા દવ્વાણુપુઘ્વી તિવિહા પળ્ણત્તા,
તં જહા—પુઘ્વાણુપુઘ્વી પચ્છાણુપુઘ્વી અણાણુપુઘ્વી । સે કિં તં
પુઘ્વાણુપુઘ્વી ? પુઘ્વાણુપુઘ્વી પરમાણુપોમ્મલે દુપ્પણ્ણસિણ તિપ્પ-
ણ્ણસિણ જાવ દસપણ્ણસિણ સંઘિજ્જપણ્ણસિણ અસંઘિજ્જપણ્ણસિણ
અણંતપણ્ણસિણ । સે તં પુઘ્વાણુપુઘ્વી । સે કિં તં પચ્છાણુપુઘ્વી ?
પચ્છાણુપુઘ્વી અણંતપણ્ણસિણ અસંઘિજ્જપણ્ણસિણ સંઘિજ્જપણ્ણસિણ
જાવ દસપણ્ણસિણ જાવ તિપ્પણ્ણસિણ દુપ્પણ્ણસિણ પરમાણુપોમ્મલે ।
સે તં પચ્છાણુપુઘ્વી । સે કિં તં અણાણુપુઘ્વી ? અણાણુપુઘ્વી ણ્યાણ
ચેવ ણ્ણાહ્યાણ ણ્ણુત્તરિયાણ અણંતગચ્છગયાણ સેટ્ઠીણ અળ્ણ-
મળ્ણભાસો દુરુવ્વણો । સે તં અણાણુપુઘ્વી । સે તં ઓવણિહિયા
દવ્વાણુપુઘ્વી । સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિત્તા

बाद अधर्मास्तिकाय और फिर धर्मास्तिकाय इस व्युत्क्रम से ६ द्रव्यों
का स्थापन किया जाता है । परन्तु अनानुपूर्वी में इन दोनों प्रकार के
पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वीरूपक्रम व्युत्क्रम का परित्यागकर यथारुचि ६ द्रव्य
स्थापित किये जाते हैं । (से तं अणाणुपुव्वी) इस प्रकार यह अनानुपूर्वी
का स्वरूप है । ॥ सू० ९८ ॥

અને ત્યાર બાદ ધર્માસ્તિકાય, આ પ્રકારના ઉદા ક્રમથી ૬ દ્રવ્યોનું સ્થાપન
કરાય છે પરન્તુ અનાનુપૂર્વીમાં તે પૂર્વાનુપૂર્વીની જેમ છ દ્રવ્યોના સીધા
ક્રમને અને પશ્ચાનુપૂર્વીની જેમ તેમના ઉદા ક્રમને અને યથારુચિ
(મનને ગમે તે રીતે) છ દ્રવ્યોનું સ્થાપન કરવામાં આવે છે (સે તં અણાણુ-
પુઘ્વી) આ પ્રકારનું અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ૦૬૮॥

દ્રવ્યાણુપુર્વી । સે તં નો આગમઓ દ્રવ્યાણુપુર્વી । સે તં
દ્રવ્યાણુપુર્વી ॥સૂ૦ ૧૧॥

જાયા—અથવા—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાણુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞા, તથા—પૂર્વાણુ-
પૂર્વી પશ્ચાણુપૂર્વી અનાણુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાણુપૂર્વી ? પૂર્વાણુપૂર્વી—પરમાણુ-
પુદ્ગલો દ્વિપ્રદેશિકઃ ત્રિપ્રદેશિકો યાવત્ દશપ્રદેશિકઃ સંખ્યેયપ્રદેશિકઃ અસંખ્યેય-
પ્રદેશિકઃ અનંતપ્રદેશિકઃ । સૈવા પૂર્વાણુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાણુપૂર્વી ? પશ્ચાણુ-

અથ સૂત્રકાર એક પુદ્ગલાસ્તિકાયા કે ઉપર ત્રીનોની ઘટના કરતે હૈ—
“અહવા ઓવણિહિયા” રૂપાદિ ।

શબ્દાર્થ—(અહવા) અથવા—(ઓવણિહિયા દ્રવ્યાણુપુર્વી) ઔપનિધિકી
કી દ્રવ્યાણુપૂર્વી (ત્રિવિદ્યા પળજ્ઞા) ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તં જહા)
સે પ્રકાર સે હૈ—(પુર્વાણુપુર્વી) પૂર્વાણુપૂર્વી (પચ્છાણુપુર્વી) પશ્ચાણુપૂર્વી
(અણાણુપુર્વી) ઓર અનાણુપૂર્વી । (સે કિં તં પુર્વાણુપુર્વી ?) હે મદન્ત ।
પૂર્વ પ્રકાન્ત પૂર્વાણુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? (પુર્વાણુપુર્વી)

ઉત્તર—પૂર્વાણુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—(પરમાણુપુર્વાલે દુષ્પણિય તિષ્પ-
ણિય જાવ દસપણિય સંખિજ્જપણિય અસંખિજ્જપણિય અણંત-
પણિય) પરમાણુપુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશી, ત્રિપ્રદેશી યાવત્ દશપ્રદેશી, સંખ્યા-
તપ્રદેશી, અસંખ્યાત પ્રદેશી, અનંતપ્રદેશી સ્કંધ—હસ ક્રમસે યહ પુદ્ગલ-

હવે સૂત્રકાર એક પુદ્ગલાસ્તિકાયા ઉપર આ ત્રણેની ઘટના (સ્થાપના) કરે છે—

“અહવા ઓવણિહિયા” રૂપાદિ—

શબ્દાર્થ—(અહવા) અથવા (ઓવણિહિયા દ્રવ્યાણુપુર્વી) ઔપનિધિકી
દ્રવ્યાણુપૂર્વી (ત્રિવિદ્યા પળજ્ઞા) ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકારની
સે પ્રમાણે છે—(પુર્વાણુપુર્વી, પચ્છાણુપુર્વી અણાણુપુર્વી) (૧) પૂર્વાણુપૂર્વી (૨)
પશ્ચાણુપૂર્વી (૩) અનાણુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુર્વાણુપુર્વી ?) હે ભગવન્ । પૂર્વાણુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પુર્વાણુપુર્વી) પૂર્વાણુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું પણ કહ્યું છે—
(પરમાણુપુર્વાલે, દુષ્પણિય તિષ્પણિય જાવ દસપણિય, સંખિજ્જપણિય, અસંખિ-
જ્જપણિય, અણંતપણિય) પરમાણુ પુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશીસ્કંધ, ત્રિપ્રદેશીસ્કંધ,
દશ પ્રદેશી પચન્તના સ્કંધ, સંખ્યાત પ્રદેશીસ્કંધ, અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ
અને અનંત પ્રદેશી સ્કંધ આ ક્રમપૂર્વકની પુદ્ગલાસ્તિકાયા સંબંધી જે આણુ-
પૂર્વી છે, (સે તં પુર્વાણુપુર્વી) તેને પૂર્વાણુપૂર્વી કહે છે.

નિર્ણયિગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧ પુદ્ગલાસ્તિકાયમધિકૃત્ય દ્રવ્યજન્યનિરૂપણમ્ ૪૩૩

પૂર્વી-અનન્તપ્રદેશિકઃ અસંખ્યેયપ્રદેશિકઃ સંખ્યેયપ્રદેશિકો યાવદ્ દશપ્રદેશિકો યાવદ્ ત્રિપ્રદેશિકો દ્વિપ્રદેશિકઃ પરમાણુપુદ્ગલઃ । સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયામનન્તગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામ્ અન્યોઽન્યાભ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ । સૈષાઽનાનુપૂર્વી । સૈષા ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી । સૈષા જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી । સૈષા નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી । સૈષા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ॥સૂ. ૧૧॥

ટીકા—‘અહવા’ इत्यादि—

અથવા=પુનઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયમાશ્રિત્ય ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વ્યાનાનુપૂર્વી મેદૈસ્ત્રિવિધા પ્રજ્ઞાતા । તત્ર-પરમાણુપુદ્ગલો દ્વિપ્રદેશિક इत्यादિક्रमेण—‘અનન્તપ્રદેશિકઃ’ इति पर्यन्तं પૂર્વાનુપૂર્વી । તથા-વ્યુત્ક્રમેण ‘અનન્તપ્રદેશિકઃ’ इत्यारभ्य ‘परमाणुपुद्गलः’ इति पर्यन्तं पश्चानुपूર્વી । અનાનુ-સ્તિકાય સંબંધી (સે તં પુઞ્છાણુપુઞ્ઘી) પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં પચ્છા-ણુપુઞ્ઘી) હે ભદન્ત ! પશ્ચાનુપૂર્વી કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(પચ્છાણુપુઞ્ઘી) પશ્ચાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—(અણંતપણસિ-અસંખિજ્જપણસિ, સંખિજ્જપણસિ, જાવ દસપણસિ, જાવ તિપ્પણસિ-દુપ્પણસિ, પરમાણુગોગલે) જથ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત પ્રદેશિક, અસંખ્યાત પ્રદેશિક, સંખ્યાત પ્રદેશિક, યાવત્ દશપ્રદેશિક યાવત્ ત્રિપ્રદેશિક ત્રિપ્રદેશિક ઓર પરમાણુપુદ્ગલ હસ વ્યુત્ક્રમ સે પરિગણિત હો તથા (સે તં પચ્છાણુપુઞ્ઘી) વહ પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુ-ઞ્ઘી) હે ભદન્ત ! અનાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(અણાણુપુઞ્ઘી) અનાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—(પચાએવેવ ણા-હયાણુ પગુત્તરિયાણુ અણંતગચ્છગયાણુ સેદીણુ-અણમણ્ણભાસો દુરુ-

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્ઘી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પચ્છાણુપુઞ્ઘી) પશ્ચાનુપૂર્વીનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—(અણંત-પણસિ, અસંખિજ્જપણસિ, સંખિજ્જપણસિ, જાવ દસપણસિ, જાવ તિપ્પણસિ, દુપ્પણસિ, પરમાણુગોગલે) ત્યારે પુદ્ગલાસ્તિકાયને અનંત પ્રદેશિક, અસં-ખ્યાત પ્રદેશિક, સંખ્યાતપ્રદેશિક, દસપ્રદેશિક, નવપ્રદેશિક આદિ ત્રણ પ્રદેશિક પર્યન્તના સ્કન્ધરૂપે અને દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અને પરમાણુ પુદ્ગલ, આ પ્રકારે ઉદ્ભાવે ક્રમથી પરિગણિત થાય છે, ત્યારે (સે તં પચ્છાણુપુઞ્ઘી) તેને પશ્ચાનુ-પૂર્વી કહેવાય છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અણાણુપુઞ્ઘી?) હે ભગવન્ ! અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(અણાણુપુઞ્ઘી) અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(પચાએવેવ

પૂર્વી તુ એકાદિકાયમેકોત્તરિકાયમ્ અનન્તગચ્છગતાયમ્-એકોત્તરવૃદ્ધિમત્સ્કન્ધાનામનન્તત્વાત્ સ્કન્ધા અનન્તાસ્તેષાં ગચ્છઃ સમુદાયસ્તં ગતા=પાતા તસ્યાં તથાભૂતાયમ્ એતસ્યાં=પરમાણુપુદ્ગલાદારમ્ય અનન્તપ્રદેશપર્યન્તાયમેવ શ્રેણ્યાં=પંક્તી, સા અન્યોઽન્યાધ્યાસઃ=પરસ્પરગુણરૂપા દ્વિરૂપોનઃ=આદ્યન્તસ્થમજ્જદ્ય-રહિતા ચ બોધ્યા ।

નુ યથૈકઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિત્વેનોદાહૃતઃ, તથૈવાન્યેઽપિ કથં નોદાહૃતાઃ ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે-ઇહ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિવિચારે પરમાણ્વાદિદ્રવ્યાણાં

વૃણો) જિસમેં પુર્વાનુપૂર્વીં ઓર પશ્ચાનુપૂર્વીં યે દોનોં નહીં હૈં ઉસકા નામ અનાનુપૂર્વીં હૈ યહ્ વાત પહિલે કહ્ દી ગઈ હૈ । ઇસમેં વિવક્ષિત પદોં કે અનન્તરોક્ત ક્રમદ્વય કો ઉલંઘન કરકે પરસ્પર સંબંધિત ભંગાં સે ઉન પદોં કી વિરચના કી જાતી હૈ । ઉસમેં સબસે પહિલે એકપ્રદેશી પરમાણુપુદ્ગલ કી સ્થાપના કી જાતી હૈ । ફિર બાદમેં દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિ કી । ઇસ પ્રકાર એક એક ૨ પ્રદેશ કી વૃદ્ધિ કરતે ૨ જબ અનન્ત પ્રદેશી સ્કંધતક સ્થાપના હો ચુકતી હૈ-તબ્બ ઇન સબકી શ્રેણી બન જાતી હૈ । ઇસ શ્રેણી-પંક્તિ મેં એકોત્તર વૃદ્ધિવાલે સ્કંધ અનન્ત હો જાતે હૈ । ફિર ઇનમેં પરસ્પર મેં ગુણા કિયા જાતા હૈ । જો મહારાશિરૂપ સંખ્યા આતી હૈ ઉસમેં આદિ ઓર અન્ત કે દો ભંગ કરનેપર અનાનુપૂર્વીં બન જાતી હૈ ।

શંકા-જૈસે એક પુગદ્લાસ્તિકાય પૂર્વાનુપૂર્વીં આદિ રૂપસે ઉદાહૃતઃ

એગાદ્યાય એગુત્તરિયાય અણંતગચ્છગયાય સેદોય અણમણન્માણો દુરૂવૃણો) જેમાં પૂર્વાનુપૂર્વીં અને પશ્ચાનુપૂર્વીં, એ બન્ને નથી, તેનું નામ અનાનુપૂર્વીં છે, એ વાત પહેલાં પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે તેમાં વિવક્ષિત પદોના (પરમાણુ પુદ્ગલ આદિના) ઉપયુક્ત બન્ને ક્રમનો પરિત્યાગ કરીને પરસ્પર સંબંધિત ભંગો વડે તે પદોની વિરચના કરવામાં આવે છે. તેમાં સૌથી પહેલાં એક પ્રદેશી પરમાણુ પુદ્ગલની સ્થાપના કરવામાં આવે છે અને ત્યારબાદ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિની સ્થાપના કરાય છે. આ રીતે એક એક પ્રદેશની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં ન્યાયે અનન્ત પ્રદેશી સ્કંધ સુધીની સ્થાપના થઈ જાય છે, ત્યારે તે બધાની એક શ્રેણી બની જાય છે. આ શ્રેણી-પંક્તિમાં ઉત્તરોત્તર એકની વૃદ્ધિવાળા સ્કંધ અનેક થઈ જાય છે. ત્યારબાદ પરસ્પરનો ગુણાકાર કરવામાં આવે છે. આ આ રીતે જે મહારાશિ રૂપ સંખ્યા આવે છે તેમાંથી પહેલો અને છેલ્લો, એ બે ભંગ કરી કરવાથી અનાનુપૂર્વીં બની જાય છે.

પ્રશ્ન-જે રીતે એક પુદ્ગલાસ્તિકાયને ઉદાહરણ રૂપે લઈને તેની પૂર્વા-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧ પુદ્ગલાસ્તિકાયમધિકૃત્ય મેવત્રયનિરૂપણમ્ ૪૩૫

પરિપાટ્યાદિલક્ષણઃ ક્રમઃ પ્રક્રાન્તઃ । સ ચ દ્રવ્યબાહુલ્યે સત્યેવ સંભવતિ । ન
ચાસ્તિ ધર્માસ્તિકાયે, અધર્માસ્તિકાયે, આકાશાસ્તિકાયે ચ પુદ્ગલાસ્તિકાયવદ્
દ્રવ્યબાહુલ્યમ્, એકૈકદ્રવ્યત્વાત્તેષામ્ । જીવાસ્તિકાયે ત્વનન્તજીવદ્રવ્યાણાં સત્ત્વાદ
યદ્યપ્યસ્તિ દ્રવ્યબાહુલ્યમ્, તથાપિ પરમાણુદ્વિપ્રદેશિકાદિષુ યથા પૂર્વાનુપૂર્વીત્વા-
દિદેહુઃ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવો વિદ્યતે, ન તથા જીવદ્રવ્યેષુ, પ્રત્યેકજીવસ્યાસંસ્થયેયપ્રદેશ-
શ્ચત્વેન સર્વજીવાનાં તુલ્યપ્રદેશત્વાત્ । પરમાણુદ્વિપ્રદેશિકાદિદ્રવ્યાણાં તુ વિષમ-
પ્રદેશિકત્વાત્ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવો વિદ્યતે । તથા—અદ્દાસમયસ્યાપિ એકસમયરૂપત્વાદેવ

હુઆ હૈ—ઉદાહરણ સે ઉપસ્થિત કિયા ગયા—હૈ વૈસે હી અન્ય ધર્માસ્તિ
કાય આદિ દ્રવ્ય કયોં નહીં ઉદાહૃત કિયે ગયે હૈ ।

ઉત્તર—યહાં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કે વિચાર મેં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોંકા
પરિપાટીરૂપક્રમ પ્રક્રાન્ત કથન મેં ચલરહા—હૈ, સો વહ ક્રમ દ્રવ્યકી બહુ-
લતા મે સંભવિત હોતા હૈ—બન સકતા હૈ ધર્માસ્તિકાય મેં, અધર્માસ્તિ-
કાય મેં ઓર આકાશાસ્તિકાય મેં પુદ્ગલાસ્તિકાય કી તરહ યહ દ્રવ્યબા-
હુલ્ય નહીં હૈ કયોંકિ સબ એકએક દ્રવ્યરૂપ માને ગયે હૈ । યહ યથાપિ જીવા-
સ્તિકાય મેં અનંત જીવદ્રવ્યોં કી સત્તા હોને કે કારણ દ્રવ્યબાહુલ્ય
હૈ, પરન્તુ ફિરમી પરમાણુઓં મેં એવં દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિકોં મેં જૈસા
પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કારણભૂત પૂર્વ પશ્ચાદ્ભાવ વિદ્યમાન હૈ વૈસા જીવ-
દ્રવ્યોં મેં નહીં હૈ । કયોંકિ પ્રત્યેક જીવ અસંસ્થાત પ્રદેશવાલા હૈ । ઇસ-
લિયે સમસ્ત જીવોં મેં તુલ્ય પ્રદેશતા હૈ પરમાણુઓં એવં દ્વિપ્રદેશિક

નુપૂર્વી આદિતુ' નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય
આદિ અન્ય દ્રવ્યોને ઉદાહરણરૂપે કેમ લેવામાં આવ્યાં નથી ?

ઉત્તર—અહીં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિનો વિચાર કરતાં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોનો
પરિપાટી રૂપ ક્રમ (અનુક્રમ) પ્રસ્તુત કથનમાં પ્રતિપાદિત થઈ રહ્યો છે. તેથી આ
કથન દ્રવ્યની બહુતામાં જ સંભવી શકે છે. ધર્માસ્તિકાય અધર્માસ્તિકાય અને
આકાશાસ્તિકાયમાં પુદ્ગલાસ્તિકાયની જેમ આ દ્રવ્યબાહુલ્યનો સદ્ભાવ નથી.
કારણ કે તેમને તો એક એક દ્રવ્યરૂપ માનવમાં આવેલ છે. જો કે જીવા-
સ્તિકાયમાં અનંત જીવદ્રવ્યોની સત્તા (અસ્તિત્વ) હોવાને કારણે દ્રવ્યબાહુલ્ય
છે, પરન્તુ પરમાણુઓમાં અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિકોમાં જેવો પૂર્વાનુપૂર્વી
આદિના કારણભૂત પૂર્વપશ્ચાત્ ભાવ વિદ્યમાન છે, એવો જીવ દ્રવ્યોમાં નથી,
કારણ કે પ્રત્યેક જીવ અસંસ્થાત પ્રદેશવાળો છે તેથી સમસ્ત જીવોમાં તુલ્ય
(સમાન) પ્રદેશતા છે. પરમાણુઓ અને દ્વિપ્રદેશિક આદિ દ્રવ્યોમાં તો વિષમ

૪૩૬

અનુષોગદ્વારસૂત્રે

પૂર્વાનુપૂર્વીત્વાચસંભવઃ, અતોડત્ર પુદ્ગલાસ્તિકાય એવ પૂર્વાનુપૂર્વીત્વાદિકોદાહતઃ, નત્વન્યે ધર્માસ્તિકાયાદય ઇતિ ।

તદેતદુપસંહરઆહ-‘સે તં’ ઇત્યાદિ । સૈવા અનાનુપૂર્વીતિ । ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી સમ્પૂર્ણેતિ સૂચયિતુમાહ-‘સે તં ઓવણિહિયા’ ઇત્યાદિ । સૈવા ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ । જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વીસમ્પૂર્ણેતિ સૂચયિતુમાહ-‘સે તં જાણયસરીરભવિયસરીર વહરિતા’ ઇત્યાદિ-સૈવા જ્ઞાયક-

આદિ દ્રવ્યોં મેં તો વિષમપ્રદેશિકતા હૈ । ફસલિયે વહાં પૂર્વપશ્ચાદ્ગ્રાવ હૈ । તથા જો અદ્ધાસમય હૈ વહ એકસમયરૂપ હૈ । ફસલિયે ડસમેં ખી પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ સંભવિત નહીં હૈ । ફસલિયે પુગદ્લાસ્તિકાય હી પૂર્વાનુપૂર્વી આદિરૂપ સે ડદાહત કિયે ગયે હૈં અન્ય ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્ય નહીં । (સે તં અણાણુપુઁવ્વી) ફસ પ્રકાર વહ અનાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં ઓવણિહિયા દવ્વાણુપુઁવ્વી) યહાંતક પૂર્વ પ્રક્રાન્ત ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન કિયા ગયા હૈ । (સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિતા દવ્વાણુપુઁવ્વી) ફસ પ્રકાર ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન સમાસ હોતે હી જ્ઞાયક શરીર ભવ્ય શરીરવ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વી સમાસ હો જાતી હૈ । (સે તં નો આગમઓ દવ્વાણુપુઁવ્વી-સે તં દવ્વાણુપુઁવ્વી) ફસ કથન કી સમાસિ હોતે હી નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે જાયમાત્ર દ્રવ્યાનુપૂર્વીકા સ્વરૂપ સમાસ હો જાતા હૈ । ફસપ્રકાર વહ દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ ।

પ્રદેશિકતા છે, તેથી ત્યાં પૂર્વપશ્ચાદ્ગ્રાવ છે. તથા જે અદ્ધા સમય સંભવિત નથી તેથી પુદ્ગલાસ્તિકાયનું જ પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ રૂપે ઉદાહરણ આપવામાં આવ્યું છે, અન્ય ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોનું તે પ્રકારે ઉદાહરણ આપવામાં આવ્યું નથી. (સે તં અણાણુપુઁવ્વી) આ પ્રકારનું અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. (સે તં ઓવણિહિયા દવ્વાણુપુઁવ્વી) અહીં સુધીમાં પૂર્વપ્રસ્તુત ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું કથન કરવામાં આવ્યું છે. (સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિતા દવ્વાણુપુઁવ્વી) આ રીતે ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું કથન પૂરું થતાં જ, જ્ઞાયક શરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું વર્ણન પણ અહીં સમાપ્ત થાય છે.

(સે તં નોઆગમઓ દવ્વાણુપુઁવ્વી-સે તં દવ્વાણુપુઁવ્વી) આ કથનની સમાપ્તિ થઈ જવાથી નોઆગમને આધારે જે દ્રવ્યાનુપૂર્વી અને છે તેના સ્વરૂપના નિરૂપણની પણ સમાપ્તિ થઈ જાય છે. આ પ્રકારનું આ દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

ત્રિવિધયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૯ પુદ્ગલાસ્તિકાયમધિકૃત્ય મેદવ્યનિરૂપણમ્ ૪૩૬

શરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ । નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી સંપૂર્ણેત્રિ
સૂચયિતુમાહ—‘ સે તં નો આગમતો ’ इत्यादि—सैषा नो आगमतो द्रव्यानुपूर्वीति ।
द्रव्यानुपूर्वी संपूर्णेति सूचयितुमाह—‘ सै तं ’ इत्यादि—सैषा द्रव्यानुपूर्वीति ॥ सू. १९५४

ભાવાર્થ—હસ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારને પુદ્ગલ દ્રવ્ય કો લક્ષ્ય કરકે ઓપનિ-
ષિકી દ્રવ્યાનુ પૂર્વી કી ત્રિવિધતા ઉસપર ઘટિત કી હૈ । યહ તો પહિછે સૈ
હી જ્ઞાત હો ચુકા હૈ કિ વિવક્ષિત દ્રવ્ય વિશેષ કે સમુદાય મેં જો પ્રથમ
દ્રવ્ય હૈ ઉસસે લેકર ક્રમશઃ અન્તિમ દ્રવ્યતક જો પરિપાટી સ્થાપિત કી
જાતી હૈ વહ આનુપૂર્વી હૈ । યહાં પુદ્ગલદ્રવ્ય કે ઊપર સૂત્રકાર કો યહ
ઘટિત કરની હૈ, અતઃ વે ઉસકે એકપ્રદેશ સે લેકર ક્રમશઃ અનન્ત
પ્રદેશી સ્કંધ તક બનાતે હૈ । હસ પ્રકાર એકપ્રદેશી પુદ્ગલપરમાણુ યહ
પુદ્ગલાસ્તિકાય દ્રવ્ય કા પ્રથમ દ્રવ્ય જાનના ચાહિયે । હસકે બાદ
એક પ્રદેશોસર વૃદ્ધિ કરતે ચલા જાના ચાહિયે । હસસે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ
ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ, ચતુષ્પ્રદેશી સ્કંધ પંચ પ્રદેશી સ્કંધ, આદિ અનન્ત પ્રદે-
શી સ્કંધ તક અનન્ત પૌદ્ગલિક સ્કંધ બન જાતે હૈ । તબ હનકી સ્થાપના
હસ પ્રકાર સે કી જાતી હૈ—એક પ્રદેશી પરમાણુ પુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ
ત્રિપ્રદેશી ત્રિપ્રદેશી ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ ચતુષ્પ્રદેશી સ્કંધ ચતુરણુક इत्यादि । હસ
પ્રકાર કી યથાક્રમ કી ગઈ યહ સ્થાપના પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । તથા હસી સ્થાપના

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે પુદ્ગલ દ્રવ્યને અનુલક્ષીને ઓપનિષિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીની ત્રિવિધતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે એ વાત તો પહેલાં પ્રકટ
થઈ ચુકી છે કે વિવક્ષિત દ્રવ્યસમુદાયમાં જે પહેલું દ્રવ્ય હોય તે દ્રવ્યથી
શરૂ કરીને અનુક્રમે છેલ્લા દ્રવ્ય સુધીની જે પરિપાટી (અનુક્રમ) સ્થાપિત
કરવામાં આવે છે, તેનું નામ આનુપૂર્વી છે. અહીં પુદ્ગલ દ્રવ્ય સાથે સૂત્રકાર
તે આનુપૂર્વીને ઘટાવવા માગે છે તેથી તેમણે તેના એક પ્રદેશથી લઈને
અનન્તપ્રદેશ સુધીના અનન્ત સ્કંધ બતાવ્યા છે. આ રીતે એક પ્રદેશી
પુદ્ગલ પરમાણુને પુદ્ગલાસ્તિકાયનું પ્રથમ દ્રવ્ય સમજવું જોઈએ ત્યાર બાદ
એક એક પ્રદેશની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં આગળ વધવું જોઈએ. આ રીતે દ્વિપ્ર-
દેશી સ્કંધ, ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ, ચાર પ્રદેશી સ્કંધ, પાંચ પ્રદેશી સ્કંધ આદિ
અનન્ત પ્રદેશી પરમાણુના અનન્ત પૌદ્ગલિક સ્કંધ બની જાય છે. ત્યારે તેમની
સ્થાપના આ પ્રમાણે કરવામાં આવે છે—એક પ્રદેશીપરમાણુ પુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશી
સ્કંધ દ્વિપ્રદેશી, ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ ત્રિપ્રદેશી, ચતુષ્પ્રદેશી સ્કંધ ચતુરણુક, इत्यादि.

આ પ્રકારના સીધા ક્રમપૂર્વક જે સ્થાપના કરવામાં આવે છે તેનું નામ
પૂર્વાનુપૂર્વી છે. એજ સ્થાપનામાં છેલ્લા દ્રવ્યને (અનન્તપ્રદેશી સ્કંધને) પહેલો

મેં જય અન્તિમાદિ દ્રવ્ય કો પ્રાથમિક રૂપ દેકર વ્યુત્ક્રમ સે સ્થાપિત કિયા જાતા હૈ તો વહી પચ્ચાનુપૂર્વી કહલાતી હૈ તથા સ્વેચ્છાનુસાર ક્રમ-વ્યુત્ક્રમ કા ઉત્તલંબન કરકે પુદ્ગલાસ્તિકાય કે દ્રવ્યોં કા જો સ્થાપના કરના હોતા હૈ વહ અનાનુપૂર્વી હૈ । જૈસે હસે યોં સમજના ચાહિયે કિ ચતુરણુક કે બાદ એકપ્રદેશીપુદ્ગલ પરમાણુ કા, હસકે બાદ ચત્ત્રપ્રદે-શી પુદ્ગલસ્કંધ કા હસકે બાદ અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ આદિ કા સ્થા-પન કરના આદિ । જ્ઞાયકશરીરભગ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વી પહિલે દો પ્રકાર કી સૂત્રકાર ને કહી હૈ હસમેં અનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે વિષય મેં સૂત્રકાર ને બહુત અધિક વિસ્તૃત વિવેચન કિયા હૈ । ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કે મેદ સે યહ ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । એક પુદ્ગલાસ્તિકાય કે ઉપર જો પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કી ઘટના સૂત્રકાર ને કહી હૈ હસકા કારણ યહ હૈ કિ હનમેં હી દ્રવ્યબહુ-લતા હૈ । “આકાશાદેકદ્રવ્યાણિ” અર્થાત્-આકાશ પર્યન્તકે ત્રીન દ્રવ્ય-અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, ઓર આકાશાસ્તિકાય યે ત્રીનોં દ્રવ્ય એક દ્રવ્ય વાલે હોસે હૈ, તદનુસાર ધર્માસ્તિકાય આદિ ત્રીન

મૂકીને ઉઠટા કમથી બ્યારે દ્રવ્યોને સ્થાપિત કરવામાં આવે છે, ત્યારે તેને પચ્ચાનુપૂર્વી કહે છે તથા ઉપરના બન્ને કમતું ઉલ્લંઘન કરીને પોતાની ઇચ્છાનુસાર પુદ્ગલાસ્તિકાયના દ્રવ્યોની જે સ્થાપના કરવામાં આવે છે તેને અનાનુપૂર્વી કહે છે. જેમ કે ચતુરણુક સ્કંધની પહેલાં સ્થાપના કરવી, ત્યાર બાદ એક પ્રદેશી પુદ્ગલ પરમાણુની, ત્યાર બાદ છ પ્રદેશી પુદ્ગલ સ્કંધની સ્થાપના કરવી, ત્યાર બાદ અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ આદિની સ્થાપના કરવી તેનું નામ અનાનુપૂર્વી છે. જ્ઞાયક શરીર અને ભગ્યશરીરથી ભિન્ન એવા દ્રવ્યાનુપૂર્વીના સૂત્રકારે જે પ્રકાર પહેલાં પ્રકટ કર્યા છે. તેમાંના અનોપનિ-ધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી નામના બીજા પ્રકારનું તો ખૂબજ વિસ્તારપૂર્વક પહેલાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ ત્રણ ભેદોનું નિરૂપણ પણ પહેલાં સૂત્રોમાં કરવામાં આવ્યું છે. ત્યાર બાદ સૂત્રકારે એક પુદ્ગલાસ્તિકાયના પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ સ્વરૂપોનું નિરૂપણ કર્યું છે, પણ ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોમાં જે પ્રમાણે કરવામાં આવ્યું નથી, કારણ કે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં જ દ્રવ્યબહુલ્યનો સદ્ભાવ-ધર્માસ્તિકાય આદિમાં દ્રવ્યબહુલ્ય નથી. “આકાશાદેકદ્રવ્યાણિ” આ કથન અનુસાર ધર્માસ્તિકાય આદિ ત્રણ દ્રવ્યોમાં

इत्थं द्रव्यानुपूर्वीमुक्त्वा सम्प्रति क्षेत्रानुपूर्वीमाह—

મૂલ્ય-સે કિં તં ચેત્તાણુપુઠ્વી ? ચેત્તાણુપુઠ્વી દુવિહા પળ્લ-
ત્તા, તં જહા-ઓવણિહિયા ય અળોવણિહિયા ય । તત્થ ણં જા સા
ઓવણિહિયા સા ઠપ્પા । તત્થ ણં જા સા અળોવણિહિયા સા દુવિહા
પળ્લત્તા, તં જહા-ળેગમવવહારાણં ૧, સંગહસ્સ ૨ ય ॥સૂ. ૧૦૦॥

છાયા-અથ કા સા ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ? ક્ષેત્રાનુપૂર્વી દ્વિવિધા પ્રજ્ઞા, તથા-
ઔપનિધિકી ચ અનૌપનિધિકી ચ । તત્ર ચલ્લ યા સા ઔપનિધિકી સા સ્થાપ્યા ।

દ્રવ્યોં મેં દ્રવ્ય બહુલતા નહીં હૈ । જીવાસ્તિકાય મેં યદ્યપિ દ્રવ્ય બાહુલ્ય હૈ-
પરન્તુ પુદ્ગલ કી તરહ વહ દ્રવ્ય બાહુલ્ય એક ૨ જીવ દ્રવ્ય મેં ક્રમશઃ નહીં
હૈ, ક્યોંકિ પ્રત્યેક જીવદ્રવ્ય અસંખ્યાત પ્રદેશી હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇસ કથન
કે સમાપ્ત હોતે હી નો આગમ કી અપેક્ષા લેકર દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ
કથન સમાપ્ત હો જાતા હૈ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

अथ सूत्रकार क्षेत्रानुपूर्वी का कथन करते हैं—

“से किं तं खेत्ताणुपुठ्ठी” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ- (સે કિં તં ચેત્તાણુપુઠ્વી) હે અદન્ત ! ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા
કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર-(ચેત્તાણુપુઠ્વી દુવિહા પળ્લત્તા) ક્ષેત્રાનુપૂર્વી દો પ્રકાર કી કહી
નહીં હૈ । (તં જહા) જૈસે (ઓવણિહિયા ય અળોવણિહિયા ય) ? ઔપનિધિકી

દ્રવ્યબાહુલ્યનો અભાવ છે. જીવાસ્તિકાયમાં એ કે દ્રવ્યબાહુલ્ય છે ખરું,
પરન્તુ પુદ્ગલની જેમ તે દ્રવ્યબાહુલ્ય એક એક જીવદ્રવ્યમાં ક્રમશઃ નથી,
કારણ કે જીવદ્રવ્ય અસંખ્યાત પ્રદેશી છે. આ રીતે આ કથન
સમાપ્ત થઈ જતા નો આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું કથન
સમાપ્ત થઈ ગય છે. ॥સૂ.૬૬॥

इवे सूत्रकार क्षेत्रानुपूर्वीतुं निरूपणं કરે છે—

“સે કિં તં ચેત્તાણુપુઠ્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં ચેત્તાણુપુઠ્વી ?) હે અદન્ત ! ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ચેત્તાણુપુઠ્વી દુવિહા પળ્લત્તા) ક્ષેત્રાનુપૂર્વી બે પ્રકારની કહી છે-
(તં જહા) તે બે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે-(ઓવણિહિયા ય અળોવણિહિયા) (૧)

તત્ર સ્વલુ યા સા અનૌપનિધિકી સા દ્વિવિધા મજ્જતાં, તથા-નૈગમ્યવહારોઃ ૧, સંગ્રહસ્ત્ર ૨ ચ ॥સૂ૦ ૧૦૦॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ-

વ્યાખ્યા પૂર્વવદ્ બોધ્યા ॥સૂ૦ ૧૦૦॥

ક્ષેત્રાનુપૂર્વી, દ્વિતીય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી (તત્થ ણં જા સા ઓવણિ-
હિયાસા ઠપ્પા) इनमें जो औपनिधि की क्षेत्रानुपूर्वी है वह अल्प विषय-
वाली होने के कारण अर्थात् उसका विषय विशेष विवेचना करने के योग्य
न होने से-इस समय व्याख्या नहीं की जाती है। तात्पर्य कहने का यह
है कि प्रथम नंबर की होने के कारण सूत्रकार को सबसे पहिले औप-
निधि की क्षेत्रानुपूर्वी का विवेचन करना कर्तव्य है। परन्तु ऐसा न
करके वे पहिले अनौपनिधि की क्षेत्रानुपूर्वी का जो विवेचन करेंगे
उसका कारण यह है कि औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी का विषय विशेष
वक्तव्य के योग्य नहीं है। क्योंकि उसका विषय अल्प है। इसलिये
(तत्थ णं जा सा अणोवणिहिया सा दुविहा पणत्ता) इन दोनों आनुपूर्वियों
में जो अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी है उसका विस्तृत विवेचन करने के
अभिप्राय से सूत्रकार कहते हैं कि वह दो प्रकार की कही गई है। (तं
जहा) वे उसके प्रकार ये हैं-(नैगम्यवहाराणं १ संग्रहस्त्र २) एक

औપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી, અને (૨) અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી (તત્થ ણં જા
સા ઓવણિહિયા સા ઠપ્પા) તેમાંથી જે ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી છે તે અલ્પ
વિષયવાળી હોવાને કારણે એટલે કે તેનો વિષય, વિશેષ વિવેચન કરવા યોગ્ય
નહીં હોવાને કારણે, તેનું નિરૂપણ સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં કરશે નહીં પણ
ખાછળનાં સૂત્રમાં કરશે એ કે ક્રમ અનુસાર તો તે પહેલી હોવાથી તેનું નિરૂપણ
પહેલાં થવું જોઈએ પરન્તુ સૂત્રકારે અહીં અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું
નિરૂપણ પહેલાં કર્યું છે કારણ કે ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો વિષય અલ્પ
હોવાથી તેનું વિશેષ વક્તવ્ય કરવાનું નથી, પરન્તુ અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂ-
ર્વીનો વિષય વિસ્તૃત વિવેચન કરવા યોગ્ય છે. તેથી સૂત્રકાર અહીં પહેલાં
અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે કે-(તત્થ ણં જા સા અણોવણિ-
હિયા સા દુવિહા પણત્તા) તે બન્ને આનુપૂર્વીઓમાંની જે અનૌપનિધિકી
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી છે તેના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-
(નૈગમ્યવહારાણં, સંગ્રહસ્ત્ર) (૧) નૈગમ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રા-

નૈગમવ્યવહાર સમ્મતા ટીકા સૂત્ર ૧૦૧ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૪૪૧

તત્ર નૈગમવ્યવહારસમ્મતાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા સ્વેત્તાણુ-
પુઘી? નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા સ્વેત્તાણુપુઘી પંચવિહા
પણ્ણત્તા, તંજહા—અત્થપયપરુવણયા ૧, મંગસમુક્કિત્તણયા ૨, મંગો-
વદંસણયા ૩, સમોયારે ૪, અણુગમે ॥સૂ. ૧૦૧॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી? નૈગમ-
વ્યવહારયોઃ અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પંચવિધા મહ્મતા, તદ્ધયા—અર્થપદમરૂપ-
ણતા ૧, મંગસમુક્તોત્તનતા ૨, મંગોપદર્શનતા ૩, સમવતારઃ ૪, અનુગમઃ ૫ ॥સૂ. ૧૦૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી? इति शिष्य
प्रश्नः । उत्तरमाह—‘नैगमव्यवहारणं अणोवणिहिया’ इत्यादि । नैगमव्यवहारयोः

नैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी और दूसरी
संग्रहनयसंमत अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी । इस सूत्र की व्याख्या
पहिले की तरह जाननी चाहिये ॥ सू. १०० ॥

अब नैगमव्यवहारनयसंमत क्षेत्रानुपूर्वी का कथन सूत्रकार करते हैं—
“से किं तं नैगमव्यवहारणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ—हे भदन्त ! नैगम और व्यवहारनय संमत अनौपनिधि-
की क्षेत्रानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(अणोवणिहिया स्वेत्ताणुपुઘી) अनौपનિધિકી ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વીકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—(પંચવિહા પળ્ણત્તા) યહ નૈગમવ્યવ-
હારનયસંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ ।
(તં જહા) યે પ્રકાર યે હૈ—(અત્થપયપરુવણયા ૧ મંગસમુક્કિત્તણયા

નુપૂર્વી (૨) સંગ્રહનયસંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી આ સૂત્રની વ્યાખ્યા
આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥સૂ. ૧૦૦॥

હવે સૂત્રકાર નૈગમવ્યવહારસંમત ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નૈગમવ્યવહારણં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનોપનિ-
ધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણોવણિહિયા સ્વેત્તાણુપુઘી) અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ
આ પ્રકારનું છે—(પંચવિહા પળ્ણત્તા) આ નૈગમ અને વ્યવહારનયસંમત
અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે પ્રકારની બીજી
પ્રમાણે છે—(અત્થપયપરુવણયા, મંગસમુક્કિત્તણયા, મંગોવદંસણયા, સમોયારે, અણુ-

૧૫૨

નનુયોગહારણ

અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીન્નિષેષવિવચનમ્ આનુપૂર્વીં પચ્ચવિવા પ્રશ્નસા, તથા—અર્થ-
પદપ્રરૂપણતા ૧, ભંગસમુત્કીર્તનતા ૨, ભંગોપદર્શનતા ૩, સમાવતારઃ ૪, અનુ-
ગમ ૫, રિતિ ॥સૂ૦ ૧૦૧॥

શ્લોક—સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અત્યપયપરૂવણયા ? નૈગમ-
વ્યવહારાણં અત્યપયપરૂવણયા તિપ્પણસોગાદે આણુપુઠ્વી જાવ
દસપણસોગાદે આણુપુઠ્વી જાવ સંલિજ્જપણસોગાદે આણુપુઠ્વી
અસંલિજ્જપણસોગાદે આણુપુઠ્વી । પગપણસોગાદે અણાણુપુઠ્વી ।
દુપ્પણસોગાદે અવત્તવ્વણ તિપ્પણસોગાદા આણુપુઠ્વીઓ જાવ
દસપણસોગાદા આણુપુઠ્વીઓ જાવ અસંલિજ્જપણસોગાદા આણુ-
પુઠ્વીઓ । પગપણસોગાદા અણાણુપુઠ્વીઓ । દુપ્પણસોગાદા અવત્ત-
વ્વયાહં । સે તં નૈગમવ્યવહારાણં અત્યપયપરૂવણયા ॥સૂ૦ ૧૦૨॥

કાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારાણામ્ અર્થપદપ્રરૂપણતા ? નૈગમવ્યવહાર-
ણામ્ અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્રિપ્રદેશવગાદ આનુપૂર્વીં યાવદ્ દશપ્રદેશવગાદ આનુ-
૨, ભંગોપદર્શનતા ૩, સમાવતાર ૪, અનુગમે) અર્થપદપ્રરૂપણતા ભંગસ-
સમુત્કીર્તનતા, ભંગોપદર્શનતા, સમાવતાર ઓર અનુગમ રન સલ શલ્લો
કો વ્યાખ્યા પીછે ૭૪ લેં સૂત્રલેં કો જા શુકી હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦૧ ॥

અથ સૂત્રકાર નૈગમવ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં કા
જો પ્રથમ ભેદ અર્થપદપ્રરૂપણતા હૈ ઉસકા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં” રિત્યાહિ ।

શબ્દાર્થ—‘સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અત્યપયપરૂવણયા ?’ હૈ ભલ્લત્ ।
નૈગમવ્યવહારનય સંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ગમે (૧) અર્થપદ પ્રરૂપણતા, (૨) ભંગસમુત્કીર્તનતા, (૩) ભંગોપદર્શનતા,
(૪) સમાવતાર, અને (૫) અનુગમ આ પાંચે શબ્દોની વ્યાખ્યા આગળ ૭૪માં
સૂત્રમાં આપવામાં આવી છે તો ત્યાંથી લાંચી લેવી. ॥સૂ૦ ૧૦૧॥

હવે સૂત્રકાર નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીંના
અર્થપદપ્રરૂપણતા નામના પહેલા લેહનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં” રિત્યાહિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અત્યપયપરૂવણયા ?) હૈ ભગવન્ ।
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

અનુસોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦૨ અર્થપદપ્રરૂપણા

૪૪૩

પૂર્વી યાવત્સંખ્યેયપ્રદેશાવગાઠઃ-આનુપૂર્વી અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી । એક-
પ્રદેશાવગાઠઃ અનાનુપૂર્વી । દ્વિપ્રદેશાવગાઠઃ અવક્તવ્યકથ્ । ત્રિપ્રદેશાવગાઠા આનુ-
પૂર્વ્યો યાવદ્ દશપ્રદેશાવગાઠા આનુપૂર્વ્યો યાવદ્ અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઠા આનુપૂર્વ્યઃ ॥

(જોગમઘવહારાણં અસ્થપયપરૂવણયા)

ઉત્તર-જોગમઘવહારાણં અસ્થપયપરૂવણયા અર્થપદ પ્રરૂપણતાંકા સ્વરૂપે હસ પ્રકાર સે હૈ-(તિપ્પણસોગાઠે આણુપુઠ્વી, જાવ દસપણસોગાઠે આણુપુઠ્વી જાવ સંલિજ્જપણસોગાઠે આણુપુઠ્વી, અસંલિજ્જપણસોગાઠે આણુપુઠ્વી) ત્રણુક સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થ સે યુક્ત અથવા ત્રણુક સ્કંધ આદિરૂપ અર્થ કો વિષય કરનેવાલા જો પદ હૈ ઉસકા નામ અર્થ-પદ હૈ । હસ અર્થકી પ્રરૂપણતાં કરને કા નામ અર્થપદપ્રરૂપણા હૈ । ત્રીન આકાશ પ્રદેશ મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ । યાવત્ દશ આકાશ પ્રદેશો મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ યાવત્ સંખ્યાત આકાશ પ્રદેશો મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ । અસંખ્યાત આકાશ પ્રદેશો મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ । (એગપણસોગાઠે અણાણુપુઠ્વી, દુપ્પણસોગાઠે-અવક્તવ્ય) એક પ્રદેશ મેં સ્થિત પરમાણુ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી હૈ । દો પ્રદેશ મેં સ્થિત ત્રણુક સ્કંધ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈ । (તિપ્પણસોગાઠા આણુપુઠ્વી-ઓ જાવ દસપણસોગાઠા આણુપુઠ્વીઓ જાવ અસંલિજ્જપણસોગાઠા આણુપુઠ્વીઓ) ત્રીન આકાશ પ્રદેશો મેં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધ ત્રીન

ઉત્તર-(જોગમઘવહારાણં અસ્થપયપરૂવણયા) જોગમઘવહાર નયસંમત અર્થ-પદપ્રરૂપણાનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(તિપ્પણસોગાઠે આણુપુઠ્વી, જાવ દસપણસોગાઠે આણુપુઠ્વી જાવ સંલિજ્જ-પણસોગાઠે આણુપુઠ્વી, અસંલિજ્જપણસોગાઠે આણુપુઠ્વી) ત્રિઅણુક સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થ (વિષય) થી યુક્ત અથવા ત્રિઅણુક સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થનું પ્રતિ-પાદન કરનાર જે પદ છે તેનું નામ અર્થપદપ્રરૂપણતા છે. ત્રણુ આકાશ પ્રદેશોમાં રહેલો દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી રૂપ છે. એજ પ્રમાણે દશ પર્યંતના, સંખ્યાત પર્યંતના અને અસંખ્યાત પર્યંતના આકાશપ્રદેશોમાં રહેલ દ્રવ્ય-સ્કંધ પણ આનુપૂર્વી રૂપ છે. (એગપણસોગાઠે અણાણુપુઠ્વી, દુપ્પણસોગાઠે અવક્ત-વ્ય) એક આકાશપ્રદેશોમાં સ્થિત પરમાણુ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ છે. બે આકાશપ્રદેશોમાં સ્થિત પરમાણુ સ્કંધ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ છે.

(તિપ્પણસોગાઠા આણુપુઠ્વી જાવ દસપણસોગાઠા આણુપુઠ્વીઓ, જાવ અસં-લિજ્જપણસોગાઠા આણુપુઠ્વીઓ) ત્રણુ આકાશપ્રદેશોમાં રહેલા સમસ્ત દ્રવ્ય-

૭૪૪

અનુયોગદ્વારસ્થ

અકપ્રદેશાવગાઠા અનાનુપૂર્વ્યઃ । દ્વિપ્રદેશાવગાઠા અવક્તવ્યકાનિ । સૈવા નૈગમવ્યવ-
હારયોઃ અર્થપદમરૂપણતા ॥સૂ૦ ૧૦૨॥

ટીકા-તત્ત્વાર્થપદમરૂપણતાં નિરૂપયિતુમાહ-‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ-અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતાઽર્થપદમરૂપણતા ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ-‘જેગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ । નૈગમવ્યવહારયોરર્થપદમરૂપણતા-‘ત્રિપ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી યાવદ્ દશપ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી’ ઇત્યારમ્બ ‘દ્વિપ્રદેશાવગાઠા અવક્તવ્યકાનિ’ ઇત્યન્તા યોધ્યા । દ્રવ્યાનુપૂર્વીવદત્રાપિ વ્યાખ્યા વિજ્ઞેયા । અયમત્ર વિશેષઃ-ત્રિપ્રદેશાવગાઠઃ= ત્રિષુ નભઃ પ્રદેશેષુ અવગાઠઃ=સ્થિતઃ, ત્રિપ્રદેશાવગાઠઃ-ત્રિપ્રદેશાવગાહી દ્રવ્યસ્કન્ધઃ । સ ધ્યણુકાદિકોઽનન્તાણુકપર્યન્તો દ્રવ્યસ્કન્ધ આનુપૂર્વી ।

નન્તુ યદિ દ્રવ્યસ્કન્ધ એવાનુપૂર્વી, કથં તર્હિ તસ્ય ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્વમ્ ? ઇતિ ચેત, ઉચ્યતે-ક્ષેત્રપ્રદેશત્રયાવગાહપર્યાયવિશિષ્ટોઽસૌ દ્રવ્યસ્કન્ધો ગૃહ્યતે, ન હુ આનુપૂર્વી હૈ । યાવત્ દશ પ્રદેશોં મેં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધ દશ આનુ-
પૂર્વિયાં હેં । યાવત્ અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ અસંખ્યાત આનુપૂર્વિયાં હેં । (એગપ્પસોગાઠા અણાણુપુલ્લીઓ ! દુપ્પપ્પસોગાઠા અવક્તવ્યયાહં) આકાશ કે એક ૨ પ્રદેશ મેં સ્થિત એક પુદ્ગલપરમાણુ સંઘા-
ત આદિ અનાનુપૂર્વિયાં હેં । દો પ્રદેશ મેં સ્થિત દ્વયણુક દ્રવ્યસ્કંધ આદિ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હેં । યહ સૂત્રપદોં કા અર્થ હેં ઇનકી વ્યાખ્યા કે લિચે દેલો ૭૫ વાં સૂત્ર ।

શંકા-ત્રિપ્રદેશાવગાહી દ્રવ્યસ્કંધ સે લેકર અનન્તાણુક પર્યન્ત સ્કંધ-
દ્રવ્ય આદિ અનાનુપૂર્વી રૂપ હૈ તો ઉસમેં ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપતા કેસે બન

સ્કંધો ત્રણ આનુપૂર્વીઓ ૩૫ હોય છે, એજ પ્રમાણે દસ પર્યન્તના પ્રદેશોમાં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધો દશ પર્યન્તની આનુપૂર્વીઓ ૩૫ હોય છે, સંખ્યાત પ્રદેશોમાં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધો સંખ્યાત આનુપૂર્વીઓ ૩૫ અને અસંખ્યાત આકાશપ્રદેશોમાં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધો અસંખ્યાત આનુપૂર્વીઓ ૩૫ હોય છે. (એગપ્પસોગાઠા અણાણુપુલ્લીઓ, દુપ્પપ્પસોગાઠા અવ-
ક્તવ્યયાહં) આકાશના એક એક પ્રદેશમાં સ્થિત પ્રત્યેક પુદ્ગલપરમાણુ ૩૫ સમુદાય અનાનુપૂર્વીઓ ૩૫ છે. બે આકાશપ્રદેશોમાં રહેલા દ્વયણુક દ્રવ્ય સ્કંધો અવક્તવ્યક દ્રવ્યો ૩૫ છે. આ પ્રકારનો સૂત્રપદોનો અર્થ થાય છે. તેમની વ્યાખ્યા ૭૫માં સૂત્રમાં આપી છે.

શંકા-ત્રિપ્રદેશાવગાહી દ્રવ્યસ્કંધથી લઇને અનન્તાણુક પર્યન્તના દ્રવ્ય-
સ્કંધો આનુપૂર્વી ૩૫ હોય તો તેમાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ૩૫તા કેવી રીતે સંભવી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦૨ અર્થપદ્મરૂપણા

૪૪૫

તદવિશિષ્ટઃ, અતોઽન્ન ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યધિકારાત્ ક્ષેત્રાવગાહપર્યાયસ્ય પ્રાધાન્યાત્ સોઽપિ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીતિ ન દોષઃ । અયં ભાવઃ-ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યધિકારાદેવાન્ન પ્રદેશત્રયલક્ષણસ્ય ક્ષેત્રસ્યૈવ મુલ્યં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્વમ્ । एवं च तदवगाढं द्रव्यमपि तत्पर्यायस्य प्राधान्येन विवक्षितत्वात् क्षेत्रानुपूर्वीत्वेन न विरुध्यते, इति ।

સકતી છે ? ક્યોંકિ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપતા તો પ્રદેશ ડ્યાદિરૂપ ક્ષેત્રકે સાથ સંબન્ધ રાખતી છે ડ્યણુકાદિ પુદ્ગલ સ્કંધોં કે સાથ નહોં । શંકાકાર કા અભિપ્રાય યહ છે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીકા જઘ યહાં પ્રકરણ ચલરહા છે તો ઉસમેં પુદ્ગલ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે વિચાર કરને કી ક્યા આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર-યહાં જો ત્રિપ્રદેશાવગાહ દ્રવ્યસ્કંધ કો અનાનુપૂર્વી કહા છે । સો ઉસકા તાત્પર્ય આકાશ કે ત્રીન પ્રદેશોં મેં અવગાહરૂપ પર્યાય સે વિશિષ્ટ દ્રવ્યસ્કંધ સે છે । ત્રીન પુદ્ગલપરમાણુવાલે દ્રવ્યસ્કંધ અકાશરૂપ ક્ષેત્ર કે ત્રીન પ્રદેશોં કો રોક કર રહતે છે । અતઃ આકાશકે ત્રીન પ્રદેશ-મેં અવગાહી દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી છે, એસા જાનના ચાહિયે । વૈસે તો ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા અધિકાર ચલા આરહા છે ઇસલિયે મુલ્ય રૂપ સે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી તો ત્રીન પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર હી છે । ઇસ પ્રકાર મુલ્યરૂપ સે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપતા ત્રીન પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર મેં વિવક્ષિત હોને પર ભી જો તદવગાહ-ત્રીન પ્રદેશ રૂપ ક્ષેત્રાવગાહી-દ્રવ્ય કો ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કહા છે વહ ક્ષેત્રાવગાહ રૂપ પર્યાય

શકે છે ? ક્ષેત્રાનુપૂર્વીરૂપતા તો પ્રદેશત્રયાદિરૂપ ક્ષેત્રની સાથે સંબંધ રાખે છે-ત્રિઅણુક પુદ્ગલસ્કંધોની સાથે સંબંધ રાખતી નથી શંકાકર્તાને એવો અભિપ્રાય છે કે અહીં બ્યારે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, ત્યારે પુદ્ગલ દ્રવ્યાનુપૂર્વીનો વિચાર કરવાની શી આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર-અહીં જે ત્રણ પ્રદેશની અવગાહનાવાળા દ્રવ્યસ્કંધને આનુપૂર્વીરૂપ કહેવામાં આવ્યો છે, તેનો અર્થ અહીં આ પ્રમાણે સમજવો જોઈએ-ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહના રૂપ પર્યાયથી યુક્ત દ્રવ્યસ્કંધને અહીં આનુપૂર્વીરૂપ કહેલ છે-ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુવાળા દ્રવ્યસ્કંધને નહીં તે ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુવાળા દ્રવ્યસ્કંધો આકાશ રૂપ ક્ષેત્રના ત્રણ પ્રદેશોને દર્શાવે રહે છે. તેથી આકાશના ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહી (રહેલો) દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વીરૂપ છે, એમ સમજવું. જો કે અત્યારે તો અહીં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, અને મુખ્યત્વે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી તો ત્રણ પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર જ છે. આ રીતે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીરૂપતા મુખ્યત્વે ત્રણ પ્રદેશ રૂપ ક્ષેત્રમાં વિવક્ષિત હોવા છતાં પણ જે ત્રણ પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્રાવગાહી દ્રવ્યને ક્ષેત્રાનુપૂર્વીરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે, તે

૪૪૬

અનુચિતશાસ્ત્ર

નનુ યદિ ક્ષેત્રસ્યૈવ મુખ્યં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્વં તર્હિ કથં તત્ પરિત્યજ્ય તદવગાદ-
દ્રવ્યસ્યાનુપૂર્વીત્વાદિકં ચિન્ત્યતે ? इति चेत्, उच्यते—‘संतपयपरूषणया’ इत्यत्र
वक्ष्यमाणबहुतरविचारविषयत्वेन द्रव्यस्य शिष्यमतिव्युत्पादनार्थत्वात्, क्षेत्रस्य
तु नित्यत्वेन सदावस्थितमानत्वादचलत्वाच्च प्रायस्तत्रानुपूर्व्यादिकल्पनाकरणे
शिष्यबुद्धेः सम्यक् प्रवेशाभावात् तत्रानुपूर्वीत्वादिकं न चिन्त्यते, अतोऽत्र क्षेत्राव-
गादद्रव्यमेव क्षेत्रानुपूर्वीत्वेनोक्तमिति नास्ति कश्चिद् दोषः । एवं चतुष्पददेशाऽव-
गादद्रव्यादिष्वपि बोध्यम् । ‘असंख्येयप्रदेशावगाद आनुपूर्वी’ इत्यस्य असंख्येय-

को प्रधानता से विक्षिप्त होनेके कारण से कहा है । अतः द्रव्य में भी
उपचार से क्षेत्रानुपूर्वी रूपता विकट नहीं पड़ती है ।

शंका—जब क्षेत्र में ही मुख्य रूप से क्षेत्रानुपूर्वी रूपता है तो फिर
क्या ऐसा कारण है जो इस मुख्य रूपता का परित्याग कर उपचार को
धारण करके तदवगाही द्रव्य में क्षेत्रानुपूर्वी का विचार किया जा रहा है ?

उत्तर (संतपयपरूषणया) आदि रूप वक्ष्यमाण बहुतर विचार का
विषय द्रव्य होता है और इसी के विचार से शिष्यों की मति व्युत्पन्न
बनती है । क्षेत्र तो नित्य है तथा सदा अवस्थित है अचल है इसलिये
प्रायः करके उसमें आनुपूर्वी आदि की कल्पना करने में शिष्यजन की
बुद्धिका अच्छी तरह प्रवेश नहीं हो सकता है । इसलिये वहां पर आनु-
पूर्वी आदि का विचार नहीं किया है । अतः यहाँ पर क्षेत्रावगाही द्रव्य

ક્ષેત્રાવગાદી રૂપ પર્યાય મુખ્યત્વે વિવક્ષિત હોવાને કારણે ઠહું છે. તેથી દ્રવ્યમાં
પણ ઔપચારિક રૂપે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપતા વિકટ પડતી નથી.

શંકા—જો ક્ષેત્રમાં જ મુખ્યત્વે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીતાનો સદ્ભાવ હોય તો શા
કારણે આ મુખ્યરૂપતાનો પરિત્યાગ કરીને ઔપચારિકતાનો આધાર લઈને
તદવગાહી (તેમાં અવગાહિત થયેલા-રહેલા) દ્રવ્યમાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો વિચાર
કરવામાં આવી રહ્યો છે ?

ઉત્તર—સંતપયપરૂષણતા આદિ રૂપ નીચે કથાવેલા ધણા વિચારોનો
વિષય દ્રવ્ય હોય છે, અને તેના જ વિચારથી શિષ્યોની મતિ વ્યુત્પન્ન બને
છે. ક્ષેત્ર તો નિત્ય છે તથા સદા અવસ્થિત છે, અને અચલ છે. તેથી સામા-
ન્યતા: તેમાં આનુપૂર્વી આદિની કલ્પના કરવાથી એ વાત શિષ્યોના મનમાં
સારી રીતે ઉતરી શકતી નથી તેથી તેને અનુલક્ષીને આદિનો વિચાર કરવામાં
આવ્યો નથી. અહીં તો ક્ષેત્રાવગાહી દ્રવ્યને ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપે પ્રકટ કરવામાં

અનુષંગિકાનિષ્કાં ટીકા સુત્ર ૧૦૨ અર્થપદપ્રરૂપણા

૪૪૭

પ્રદેસેષુ અવગાદોઽસંસ્થેયાણુકોઽનન્તાણુકો વા દ્રવ્યસ્કન્ધઃ, इत्यर्थो बोध्यः ।
 अनेदं बोध्यम्—एकः परमाणुः आकाशस्य एकस्मिन्नेव प्रदेशेऽवगाहते, द्विप्रदेशिका-
 द्वाभौऽसंख्यातप्रदेशिकान्तास्तु स्कन्धाः प्रत्येकं जघन्यत एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे-
 ऽवगाहन्ते, उत्कृष्टतस्तु यत्र स्कन्धे बाधन्तः परमाणवो भवन्ति स स्कन्धस्ता-
 त्वेष्वेव नमः प्रदेशेष्ववगाहते । अनन्ताणुस्कन्धोऽपि जघन्यत एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे-
 ऽवगाहते, उत्कृष्टतस्तु—असंस्थेयेष्वेव आकाशप्रदेशेष्ववगाहते, नत्वनन्तेषु,
 लोकाकाशस्यासंस्थेयप्रदेशत्वाद्, अलोकाकाशे च द्रव्यस्यावगाहाभावोदिति । तथा

ही क्षेत्रानुपूर्वी से कहा है । इसमें कोई दोष नहीं है । इसी प्रकार से
 अनुप्रदेशावगाह द्रव्य आदिकों के विषयमें भी ऐसा ही जानना चाहिये ।

“असंस्थेयप्रदेशावगाह आनुपूर्वी” इस पद का अर्थ आकाश के
 असंख्यात प्रदेशों में असंख्यात अणुवाला अथवा अनन्त अणुवाला द्रव्य-
 स्कन्ध आनुपूर्वी है ऐसा जानना चाहिये । तात्पर्य इसका यह है कि एक
 पुद्गलपरमाणु आकाश के एकही प्रदेश में अवगाही होता है । परन्तु दो
 प्रदेशवाले पुद्गलस्कन्ध से लेकर असंख्यात प्रदेशवाले जो पुद्गलस्कन्ध
 है उनमें प्रत्येक पुद्गल स्कन्ध कमसे कम एक आकाश प्रदेश में रहता
 है और अधिक से अधिक जिस स्कन्ध में जितने प्रदेश हैं—जितने परमा-
 णुओं का बना हुआ है—वह उतने ही आकाश के प्रदेशों में ठहरता है ।
 अनन्त आकाश प्रदेशों में नहीं । क्योंकि द्रव्यों का अवगाह असंख्यात
 प्रदेशवाले लोकाकाश में ही है । अनन्त प्रदेश वाले अलोकाकाश में

આવેલ છે તેથી તે ક્યનમાં કોઈ દોષ નથી એજ પ્રમાણે ચાર પ્રદેશાવગાહ-
 દ્રવ્ય વગેરેના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું જોઈએ.

“અસંખ્ય પ્રદેશાવગાહ આનુપૂર્વી” આ પદનો અર્થ નીચે પ્રમાણે
 સમજવો—આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અસંખ્યાત અણુવાળો અથવા
 અનંત અણુવાળો દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી છે એમ સમજવું આ ક્યનનો
 ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—એક પુદ્ગલપરમાણુ આકાશના એક જ પ્રદેશમાં
 અવગાહી હોય છે, પરંતુ જે પ્રદેશવાળા પુદ્ગલસ્કંધથી લઇને અસંખ્યાત
 પ્રદેશવાળા જે પુદ્ગલ સ્કંધ છે, તેમાંના પ્રત્યેક પુદ્ગલ સ્કંધ જોછામાં
 જોછા એક આકાશપ્રદેશમાં રહે છે અને વધારેમાં વધારે તે સ્કંધના જેટલા
 પ્રદેશો હોય—જેટલા પરમાણુઓના તે સ્કંધ બનેલા હોય—એટલાજ આકાશ-
 પ્રદેશોમાં તે રહે છે, અનંત આકાશપ્રદેશોમાં તે રહેતો નથી, કારણ કે
 દ્રવ્યોનો અવગાહ અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા લોકાકાશમાં જ છે—અનંત પ્રદેશ-

एकप्रदेशावगाढः—एकस्मिन्नेव नभःप्रदेशे अवगाढः=स्थितः परमाणुसंख्यातः स्कन्धसंख्यातश्च क्षेत्रतोऽनानुपूर्वीति । तथा—द्विप्रदेशावगाढः—आकाशस्य प्रदेशद्वयेऽवगाढः=स्थितो द्विप्रदेशिकादिस्कन्धः क्षेत्रतोऽवक्तव्यकमिति । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—‘ से तं ’ इत्यादि । सैषा नैगमव्यवहारधोरर्थप्ररूपणतेति ॥ सू० १८२ ॥

नहीं । तात्पर्य यह है कि आधारभूत क्षेत्र के प्रदेशों कि संख्या आधेय-पुद्गल द्रव्य के परमाणुओं की संख्या से न्यून या उसके बराबर हो सकती है, अधिक नहीं । इसलिये एक परमाणु एकही आकाश प्रदेश स्थित रहता है पर द्रव्यणुक एक प्रदेश में भी ठहर सकता है और दो में भी इसी प्रकार उत्तरोत्तर संख्या बढ़ते २ द्रव्यणुक चतुरणुक—यावत् संख्याताणुक स्कंध एक प्रदेश दो प्रदेश तीन प्रदेश यावत् संख्यात प्रदेश क्षेत्र में ठहर सकते हैं संख्याताणुक द्रव्य की स्थिति के लिए असंख्यात प्रदेश वाले क्षेत्र की आवश्यकता नहीं पड़ती । असंख्याताणुक स्कंध एक प्रदेश से लेकर अधिक से अधिक अपने बराबर की अधिक संख्यावाले प्रदेश के क्षेत्र में ठहर सकता है । अनन्ताणुक और अनंतान्ताणुक स्कंध भी एकप्रदेश दो प्रदेश इत्यादि क्रम से बढ़ते २ संख्यात प्रदेश और असंख्यात प्रदेशवाले क्षेत्र में ठहर सकते हैं, उनकी स्थिति के लिये अनंत प्रदेशात्मक क्षेत्र जरूरी नहीं है । तथा एकही आकाश-

વાળા અલોકાકાશમાં નથી આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આધારભૂત ક્ષેત્રના પ્રદેશોની સંખ્યા આધેયભૂત પુદ્ગલદ્રવ્યના પરમાણુઓની સંખ્યા કરતાં ઓછી પણ હોઈ શકે છે અને બરાબર પણ હોઈ શકે છે, પરંતુ અધિક હોઈ શકતી નથી તેથી એક પરમાણુ એક જ આકાશપ્રદેશમાં રહી શકે છે પણ બે અણુવાળો સ્કંધ એક આકાશપ્રદેશમાં પણ રહી શકે છે અને બે આકાશપ્રદેશોમાં પણ રહી શકે છે એજ પ્રમાણે ઉત્તરોત્તર અણુઓની સંખ્યા વધતાં વધતાં બે ત્રિઅણુક, ચતુરણુક આદિ સંખ્યાતાણુક પદ્યન્તના સ્કંધો પણ એક પ્રદેશમાં, બે પ્રદેશમાં, ત્રણપ્રદેશમાં અને સંખ્યાત સુધીના આકાશપ્રદેશોમાં રહી શકે છે. સંખ્યાતાણુક દ્રવ્યને રહેવાને માટે અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા ક્ષેત્રની જરૂર પડતી નથી અસંખ્યાતાણુક સ્કંધ એક પ્રદેશથી લઈને વધારેમાં વધારે પોતાના બરાબરની અધિક સંખ્યાવાળા પ્રદેશના ક્ષેત્રમાં રહી શકે છે. અનંતાણુક સ્કંધ અને અનંતાનતાણુક સ્કંધ પણ એક પ્રદેશમાં, બે પ્રદેશમાં, ત્રણ પ્રદેશમાં અને એજ ક્રમે વધતાં વધતાં સંખ્યાત પ્રદેશવાળા ક્ષેત્રમાં રહી શકે છે. તેમની સ્થિતિને માટે (તેમને રહેવાને માટે) અનંત પ્રદેશવાળા ક્ષેત્રની જરૂર પડતી નથી તથા એક જ આકાશપ્રદેશમાં

મનુષ્યોગચરિત્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦૩ અર્થપદપ્રરૂપણતાપ્રયોજનનિરૂપણમ્ ૪૪૧

પૂઢમ્—(પ્યાણ ણં ળેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાણં કિં પઓયણં?) (પ્યાણ ણં ળેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાણં ળેગમ-વવહારાણં ંગસમુક્કિત્તણયા કજ્જહ ॥સૂ૦ ૧૦૩॥

છાયા—(પતયા સ્થલુ નૈગમવ્યવહારયોઃ અર્થપદપ્રરૂપણતાયા કિં પ્રયોજનમ્? (પતયા સ્થલુ નૈગમવ્યવહારયોરર્થપદપ્રરૂપણતાયા નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે ॥સૂ૦ ૧૦૩॥

ટીકા—‘પ્યાણ ણં’ ઇત્યાદિ—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતયા (પતયા અર્થપદપ્રરૂપણતાયા કિં પ્રયોજનમ્? ઇતિ પ્રશ્નઃ । (પતયા હિ મજ્જસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે ઇત્યુત્તરમ્ ॥સૂ૦ ૧૦૩॥

પ્રદેશ મેં સ્થિત પરમાણુ સંઘાત ઓર સ્કંધ સંઘાત ક્ષેત્રકી અપેક્ષા અનાનુપૂર્વી હૈ તથા દ્વિપ્રદેશાગાઢ-આકાશકે દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત-દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અવક્તવ્યક હૈ । હસ પ્રકાર યહ નૈગમવ્યવહારનય સંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતા હૈ ॥સૂ૦ ૧૦૨॥

“પ્યાણં ળેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(પ્યાણં ળેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાણં કિં પઓયણં?) હૈ મદન્ત! નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે પ્રથમ ભેદ રૂપ હસ અર્થપદપ્રરૂપણતા સે કયા પ્રયોજન સિદ્ધ હોતા હૈ ?

ઉત્તર—(પ્યાણં ળેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાણં ળેગમવવહારાણં ંગસમુક્કિત્તણયા કજ્જહ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે પ્રથમ ભેદ રૂપ હસ અર્થપદ પ્રરૂપણતા સે ંગ-

સ્થિત પરમાણુ સંઘાત અને સ્કંધ સંઘાતક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી છે તથા દ્વિપ્રદેશાગાઢ (આકાશના બે પ્રદેશોમાં રહેલા) દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક છે, એમ સમજવું નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ૦ ૧૦૨॥

“પ્યાણં ળેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(પ્યાણં ળેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાણં કિં પઓયણં?) હૈ અગવન્! નૈગમ વ્યવહારનયસંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રથમ ભેદ રૂપ આ અર્થપદપ્રરૂપણતાથી કયું પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે ?

ઉત્તર—(પ્યાણં ળેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાણં ળેગમવવહારાણં ંગસમુક્કિત્તણયા કજ્જહ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રથમ ભેદ રૂપ આ અર્થપદપ્રરૂપણતા વડે અંગસમુત્કીર્તનતા રૂપ પ્રયોજન

મૂલ્ય-સે કિં તં જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિજ્ઞયા ? જેગ-
મવવહારાણં મંગસમુક્તિજ્ઞયા-અત્થિ આણુપુઘ્વી, અત્થિ અણા-
ણુપુઘ્વી, અત્થિ અવત્તવ્વણ. એવં દઘ્વાણુપુઘ્વિગમેણં જેતાણુપુઘ્વીણ
વિ તે જેવ છઠ્ઠીસં મંગા માણિયઘ્વા, જાવ સે તં મંગસમુક્તિ-
જ્ઞયા ॥સૂ.૦ ૧૦૪॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જસમુત્કીર્તનતા ? નૈગમવ્યવહારયોઃ
મજ્જસમુત્કીર્તનતા-અસ્તિ આનુપૂર્વી, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવત્તવ્યકમ્ ।
એવં દ્રઘ્યાનુપૂર્વીગમેન ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામપિ ત એવ વહ્વિસતિર્મજ્જા મણિતવ્યાઃ, યાવત્
સૈષા નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જોપદર્શનતા ॥સૂ.૦ ૧૦૪॥

ટીકા—અથ મજ્જસમુત્કીર્તનતાં પ્રરૂપયિતુમાહ-‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ । અથ
કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા મજ્જસમુત્કીર્તનતા ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘જેગમ-
વવહારાણં’ ઇત્યાદિ । નૈગમવ્યવહારસમ્મતા મજ્જસમુત્કીર્તનતા-અસ્તિ આનુપૂર્વી,

સમુત્કીર્તનતા રૂપ પ્રયોજન સિદ્ધ હોતા હૈ । હસકે માવાર્થ કે લિયે પીછે
૭૬ વેં સૂત્ર કે માવાર્થ કો દેસો । ॥ ૧૦૩ ॥

અથ સૂત્રકાર હસી મંગસમુત્કીર્તનતા કા નિરૂપણ કરતે હૈ-
“સે કિં તં જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ- (સે કિં તં જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિજ્ઞયા ?) હૈ
મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનયસંમત વહ મંગ સમુત્કીર્તનતા કયા હૈ ?

ઉત્તર-(જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિજ્ઞયા અત્થિ આણુપુઘ્વી અત્થિ
અણાણુપુઘ્વી, અત્થિ અવત્તવ્વણ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત વહ મંગ-
સમુત્કીર્તનતા હસ પ્રકાર સે હૈ-આનુપૂર્વી હૈ, અનાનુપૂર્વી હૈ અવત્ત-

સિદ્ધ થાય છે આ પદના માવાર્થ માટે આગળના ૭૬માં સૂત્રને
માવાર્થ વાંચી જવો. ॥સૂ.૦ ૧૦૩॥

હવે સૂત્રકાર એજ મંગસમુત્કીર્તનતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“ સે કિં તં જેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

ઉત્તર—(જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિજ્ઞયા અત્થિ આણુપુઘ્વી, અત્થિ
અણાણુપુઘ્વી, અત્થિ અવત્તવ્વણ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત તે મંગસમુત્કીર્તનતાનું
આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે-આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે, અને અવત્તવ્યક છે.

नैगमयोगचन्द्रिकाटीका सूत्र १०५ भंगसमुत्कीर्तनताप्रयोजननिरूपणम् ४५१

अस्ति अनानुपूर्वी, अस्ति अवक्तव्यकम् । एवं द्रव्यानुपूर्वीगमेन=द्रव्यानुपूर्वीपाठवत् क्षेत्रानुपूर्वीमपि त एव=द्रव्यानुपूर्वीप्रकरणे ७७-७८ सूत्रे प्रोक्ता एव, षड्विंशति भङ्गा भणितव्याः । किमपि भणितव्याः ? इत्याह—‘जाव से तं’ इत्यादि । यावत् सैषा नैगमव्यवहारसम्मतता भङ्गसमुत्कीर्तनतेति ॥ सू० १०४ ॥

मूळम्—एयाएणं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए किं पओयणं ? एयाएणं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए णेगमववहाराणं भंगोवदंसणया कज्जइ ॥ सू० १०५ ॥

छाया—एतया खलु नैगमव्यवहारयोः भङ्गसमुत्कीर्तनतया किं प्रयोजनम् ? एतया खलु नैगमव्यवहारयोः भङ्गसमुत्कीर्तनतया नैगमव्यवहारयो भङ्गोपदर्शनता क्रियते ॥ सू० १०५ ॥

व्यक्त है। (एवं द्रव्याणुपुर्व्विगमेणं क्षेत्राणुपुर्व्वीए वि ते चेव छव्वीसं भंगा भाणियव्वा अस्थि से तं भंगसमुत्कीर्तणया) इस प्रकार द्रव्यानुपूर्वी के पाठ की तरह क्षेत्रानुपूर्वी में भी द्रव्यानुपूर्वी के प्रकरण में कहे गये २६ भंग जानना चाहिये। इन भंगों के विषय को स्पष्ट करनेवाला पाठ ७७-७८ सूत्रों में पीछे कहा गया है—सो वहांतक इस भंग विषयक पाठ को ग्रहण करना चाहिये। यह पाठ “से तं भंगसमुत्कीर्तणया” यही तक है। इस सूत्र की व्याख्या के लिये इन्हीं सूत्रों की व्याख्या को देखनी चाहिये। ॥ सू० १०४ ॥

अब सूत्रकार इस भंगसमुत्कीर्तनता का क्या प्रयोजन है ? इस बात को स्पष्ट करते हैं—‘एयाए णं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए’ इत्यादि।

शब्दार्थ—(एयाए णं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए किं पओ-

(एवं द्रव्याणुपुर्व्विगमेणं क्षेत्राणुपुर्व्वीए वि ते चेव छव्वीसं भंगा भाणियव्वा जाव से तं भंगसमुत्कीर्तणया) आ प्रकारे द्रव्यानुपूर्वीना पाठनी नेम क्षेत्रानुपूर्वीभां पञ्च द्रव्यानुपूर्वीना अकरणुभां कडेवाभां आवेला २६ भांगाओ कडेवा जेधओ. आ भंगोना (भांगाओना) विषयनी स्पष्टता ७७ तथा ७८ भां सूत्रोभां करवाभां आवी युकी छे, “से तं भंगसमुत्कीर्तणया” आ सूत्रपाठ पथन्ताने सूत्रपाठ त्यांथी अडुअ करवे जेधओ. आ सूत्रनी व्याख्याने माटे उपयुक्त अन्ने सूत्रोनी व्याख्या वांछी लेवी. ॥ सू० १०४ ॥

“एयाए णं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए” इत्यादि—

शब्दार्थ—(एयाए णं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए किं पओयणं ? छे अगवन् ! नैगम अने व्यवहारनयसंमत आ भंगसमुत्कीर्तनतानुं शुं प्रयोजन छे ?

ટીકા-‘एयाए णं’ इत्यादि । व्याख्या सुगमा सा अष्ट सप्ततितम ७८ सूत्रे विलोकनीया ॥सू. १०५॥

मूल्य-से किं तं जेगमववहाराणं भंगोवदंसणया ? जेगमववहाराणं भंगोवदंसणया तिप्पएसोगाढे आणुपुवी, एगपएसोमाढे अणाणुपुवी, दुप्पएसोगाढे अवत्तव्वए, तिप्पएसोगाढा आणुपुवीओ, एगपएसोगाढा अणाणुपुवीओ, दुप्पएसोगाढा अवत्तव्वयाइं ॥सू० १०६॥

छाया-अथ का सा नैगमव्यवहारयोः भङ्गोपदर्शनता ? नैगमव्यवहारयोर्भङ्गोपदर्शनता-त्रिमदेशावगाढ आनुपूर्वी, एकमदेशावगाढः अनानुपूर्वी, द्विमदेशावगाढः यणं ? हे भदन्त ! नैगमव्यवहारनय संमत इह भंगसमुत्कीर्तनता का कया प्रयोजन है ?

उत्तर-(एयाएणं जेगमववहाराणं भंगसमुक्किस्सणयाए जेगमववहाराणं भंगोवदंसणया कज्जइ)नैगमव्यवहारनय संमत इह भंगसमुत्कीर्तनता से नैगमव्यवहारनय संमत भंगों को दिखाया जाता है-अर्थात् उनकी प्रकृषणा की जाती है । इसलिये भंगसमुत्कीर्तनताका भंगों को दिखलाना यही प्रयोजन है । इसकी व्याख्या के लिये पीछे का ७८ अठहत्तर वां सूत्र देखो । ॥ सू० १०५ ॥

“से किं तं जेगमववहाराणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ-(से किं तं जेगमववहाराणं भंगोवदंसणया) हे भदन्त ! नैगमव्यवहारनय संमत वह भंगोपदर्शनता कया है ?

उत्तर-(जेगमववहाराणं भंगोवदंसणया) नैगमव्यवहारनय संमत

ઉત્તર-(एयाएणं णं जेगमववहाराणं भंगसमुक्किस्सणयाए जेगमववहाराणं भंगोवदंसणया कज्जइ) नैगमव्यवहारनयसंमत आ भंगसमुत्कीर्तनता पडे नैगमव्यवहारनयसंमत ભાંગાઓ બતાવવામાં આવે છે, એટલે કે તેમની પ્રકૃષણ કરવામાં આવે છે. તેથી ભંગોને (ભાંગાઓને) પ્રકટ કરવાનું જ પ્રયોજન છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યાને માટે આગળનું ૭૮મું સૂત્ર વાંચી જવું. ॥સૂ૦૧૦૫॥

“से किं तं जेगमववहाराणं” इत्यादि—

शब्दार्थ-(से किं तं जेगमववहाराणं भंगोवदंसणया?) हे भगवन् ! नैगमव्यवहार नयसंमत ते भंगोपदर्शनतातुं स्वરूप કેલું છે?

ઉત્તર-(જેગમવવહારાણં ભંગોવદંસણયા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત ભંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

અનુયોગચંદ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦૬ મહોપદર્શનતાનિરૂપણય

૪૫૬

અવક્તવ્યકમ્ । ત્રિપ્રદેશાવગાઢા આનુપૂર્વ્યઃ, એકપ્રદેશાવગાઢા અનાનુપૂર્વ્યઃ, દ્વિપ્રદેશાવગાઢા અવક્તવ્યકાનિ ॥સૂ૦ ૧૦૬॥

ટીકા—સમ્પતિ મહોપદર્શનતાં નિરૂપયિતુમાહ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । ટીકા સુગમા ॥સૂ૦ ૧૦૬॥

મહોપદર્શનતા હસ પ્રકાર સે હૈ—(તિષ્પસોગાઢે ઓણુપુઢ્વી એગપસોગાઢે અણાણુપુઢ્વી દુષ્પસોગાઢે અવત્તવ્વય) આકાશ કે ત્રીન પ્રદેશોં મેં રહા હુઆ ઝણુક આદિ સ્કંધ આનુપૂર્વી હસ શબ્દકા વાચ્યાર્થ હૈ । એકપ્રદેશ મેં સ્થિત પરમાણુ સંઘાત, ઓર સ્કંધ સંઘાત ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અનાનુપૂર્વી હૈ તથા આકાશ કે દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અવક્તવ્યક હૈ । (તિષ્પસોગાઢા ઓણુપુઢ્વીઓ, એગપસોગાઢા અણાણુપુઢ્વીઓ, દુષ્પસોગાઢા અવત્તવ્વયાઈ) આકાશ કે ત્રીન પ્રદેશોં મેં રહે હુએ ઘટ્ટત સે ઝણુક આદિ સ્કંધ આનુપૂર્વીયાં હસ ઘટ્ટવચનાન્ત શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈ । આકાશકે એક પ્રદેશ મેં રહે હુએ અનૈક પરમાણુ સંઘાત આદિ દ્રવ્ય, અનાનુપૂર્વીયાં હસ શબ્દકે વાચ્યાર્થ હૈ । તથા દ્વિપ્રદેશ મેં સ્થિત અનૈક દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ અવક્તવ્યક હસ ઘટ્ટવચનાન્ત શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈ । હસકી વ્યાખ્યા કે લિયે પીછે ૭૯ વેં સૂત્ર કી વ્યાખ્યા દેખની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૦૬ ॥

(તિષ્પસોગાઢે ઓણુપુઢ્વી એગપસોગાઢે અણાણુપુઢ્વી દુષ્પસોગાઢે અવત્તવ્વય) આકાશના ત્રણ પ્રદેશોમાં રહેલા ત્રણુક (ત્રણુ અણુવાળા) આદિ સ્કંધ ‘આનુપૂર્વી’ આ શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. એકપ્રદેશમાં સ્થિત પરમાણુ સંઘાત, અને સ્કંધ સંઘાત ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી છે. તથા આકાશના બે પ્રદેશોમાં રહેલ દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક છે. (તિષ્પસોગાઢા ઓણુપુઢ્વીઓ એગપસોગાઢા અણાણુપુઢ્વીઓ, દુષ્પસોગાઢા અવત્તવ્વયાઈ) ઘણાં જ ત્રિઅણુક આદિ સ્કંધો “આનુપૂર્વીઓ” આ ઘટ્ટવચનાન્ત શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. આકાશના એક પ્રદેશમાં રહેલા અનેક પરમાણુ સંઘાત આદિ દ્રવ્યો “અનાનુપૂર્વીઓ” આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. બે પ્રદેશોમાં સ્થિત અનેક દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધો “અવક્તવ્યકો” આ ઘટ્ટવચનાન્ત પદના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સમજવા માટે ૭૯ માં સૂત્રની વ્યાખ્યા વાંચી લેવી. ॥ સૂ. ૧૦૬ ॥

મૂલ્મ—અહવા તિપ્પણસોગાદે ય ઇગપણસોગાદે ય આણુપુઘ્વી
ય અણાણુપુઘ્વી ય, एवं तथा चैव द्रव्याणुपुष्पिगमेणं छवीसं भंगा
भाणियत्वा जात्र से तं णेगमव्यवहाराणं भंगोवदंसणया ॥सू० १०७॥

છાયા—અથવા-ત્રિપ્રદેશાવગાદશ્ચ એકપ્રદેશાવગાદશ્ચ આનુપૂર્વી ચ અનાનુપૂર્વી
ચ । एवं तथा चैव द्रव्याणुपुष्पिगमेन षड्विंशतिर्भङ्गा भणितव्या यावत् सैषा
नैगमव्यवहारयोः भङ्गोपदर्शनता ॥सू० १०७॥

ટીકા—‘અહવા’ इत्यादि । व्याख्या सुगमा ॥सू० १०७॥

“અહવા તિપ્પણસોગાદે ય” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(અહવા તિપ્પણસોગાદે ય ઇગપણસોગાદે ય આણુપુઘ્વીય)
અણાણુપુઘ્વીય) અથવા-ત્રિપ્રદેશાવગાદ શ્કંધ ઓર એકપ્રદેશાવગાદ
શ્કંધ એક આનુપૂર્વી ઓર એક અનાનુપૂર્વી હૈ । (एवं तथाचैव द्रव्याणुपु-
ष्पिगमेणं छवीसं भंगा भाणियत्वा जात्र से तं णेगमव्यवहाराणं भंगोव-
दंसणया) इस तरह द्रव्याणुपुष्पी के पाठ की तरह २६, भंग समझ लेना
चाहिये । इस प्रकार यह नैगम व्यवहारनयसंमत भंगोपदर्शनता है ।

સૂત્રકારને यह बात पहिले द्रव्याणुपुष्पी के प्रकरण में स्पष्ट करदी
है कि एकवचनान्त और बहुवचनान्त आनुपूर्वी आदि-३-३ पदों के
असंयोग और संयोगपक्ष में २६, भंग किस प्रकार से बनते हैं और इन
सबका वाच्यार्थ क्या २ है । उस द्रव्याणुपुष्पी के प्रकरणगत आनुपूर्वी,

“અહવા તિપ્પણસોગાદે” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(અહવા તિપ્પણસોગાદે ય ઇગપણસોગાદે ય આણુપુઘ્વી ય અણા-
ણુપુઘ્વી ય) અથવા-ત્રિપ્રદેશાવગાદ શ્કંધ (આકાશના ત્રણ પ્રદેશોમાં રહેલો
શ્કંધ) અને એક પ્રદેશાવગાદ શ્કંધ એક આનુપૂર્વી અને એક અનાનુપૂર્વી છે.
(एवं तथाचैव द्रव्याणुपुष्पिगमेणं छवीसं भंगा भाणियत्वा जात्र से तं णेगम-
व्यवहाराणं भंगोवदंसणया) એજ પ્રમાણે દ્રવ્યાણુપૂર્વીના પાઠની જેમ ૨૬
ભાંગાઓ સમજી લેવા એકએ.

આ પ્રકારનું નૈગમવ્યવહાર નયસંમત ભાંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ છે.

સૂત્રકારે પહેલાં દ્રવ્યાણુપૂર્વીના પ્રકરણમાં એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે એકવચ-
નાન્ત અને બહુવચનાન્ત આનુપૂર્વી આદિ ત્રણ-ત્રણ પદોના અસંયોગ અને
સંયોગ પક્ષે ૨૬ ભાંગાઓ કેવી રીતે બને છે, અને તેમનો વાચ્યાર્થ શોધાય છે.

તે દ્રવ્યાણુપૂર્વીના પ્રકરણમાં બતાવેલાં આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને
અવક્રાન્તક આદિ પદોના વાચ્યાર્થમાં ત્રિપ્રદેશિક આદિ શ્કંધ, એક પ્રદેશી

અનુયોગચર્ચાના ટીકા સુત્ર ૧૦૬ અંગોપદર્શનતાનિરૂપણ

૪૫૫

અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક આદિ પદો કે શાબ્દ્યાર્થ મેં ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ એક પ્રદેશી પુદ્ગલ પરમાણુ અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિ આવે છે । તથા કે આ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે પ્રકરણ ગત અંગોપદર્શનતા મેં આકાશ કે ત્રિન પ્રદેશો મેં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ હી આનુપૂર્વી શબ્દ કે શાબ્દ્યાર્થ માને ગયે છે । એક દો આકાશ કે પ્રદેશો મેં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આનુપૂર્વી શબ્દકે શાબ્દ્યાર્થ નહીં માને ગયે છે । કયોંકિ યહ પહિલે કહા જા ચુકા છે કે ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આકાશકે એકપ્રદેશ મેં બી અવગાહી હો સકતા છે, દો પ્રદેશ મેં બી અવગાહી હો સકતા છે અને ત્રિન પ્રદેશો મેં બી ઠહર સકતા છે । ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ કે લિયે આકાશ કે ચાર પ્રદેશો કી ઠહરને કે લિયે આવશ્યકતા નહીં છે । હસી પ્રકાર જો ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ હોગા ઉસે અપને કો અવગાહિત હોને કે લિયે આકાશ કે એક દો, ત્રિન, એવં ચાર પ્રદેશ અપેક્ષિક હોંગે । પાંચ પ્રદેશ નહીં । હસલિયે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં યદિ ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આકાશ કે એક પ્રદેશ મેં અથવા દો પ્રદેશ મેં સ્થિત છે, તો વહ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક શબ્દ કા શાબ્દ્યાર્થ હોગા । ક્ષેત્રકી અપેક્ષા આનુપૂર્વી ત્રિનપ્રદેશ સે હી પ્રારંભ હોતી છે । હસી તરહ જો અસંખ્યાત પ્રદે-

પુદ્ગલપરમાણુ અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિ આવે છે. પરંતુ આ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રકરણગત અંગોપદર્શનતામાં આકાશના ત્રણ પ્રદેશોમાં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ જ આનુપૂર્વી શબ્દના શાબ્દ્યાર્થ રૂપે માનવામાં આવેલ છે. એક પ્રદેશમાં કે બે પ્રદેશોમાં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધને અહીં આનુપૂર્વી શબ્દના શાબ્દ્યાર્થ રૂપે માનવામાં આવેલ નથી, કારણ કે એ વાત તો આગળ પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ આકાશના એકપ્રદેશમાં પણ અવગાહી થઈ શકે છે-રહી શકે છે, બે પ્રદેશોમાં પણ અવગાહી થઈ શકે છે અને ત્રણ પ્રદેશોમાં પણ અવગાહી થઈ શકે છે. ત્રિપ્રદેશી સ્કંધને રહેવા માટે આકાશના ચાર પ્રદેશોની આવશ્યકતા રહેતી નથી. એજ પ્રમાણે ચાર પ્રદેશિક સ્કંધને રહેવા માટે આકાશના એક બે, ત્રણ અથવા ચાર પ્રદેશોની આવશ્યકતા રહે છે. તેને રહેવા માટે પાંચ પ્રદેશોની જરૂર પડતી નથી. તેથી જ એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે 'બે ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આકાશના એક પ્રદેશમાં અથવા બે પ્રદેશોમાં રહેલો હોય, તો ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેને અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક શબ્દના શાબ્દ્યાર્થ રૂપે જ ગણવે. બેઈએ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વીનો પ્રારંભ ત્રણ પ્રદેશોથી જ થાય છે, એજ પ્રમાણે બે

૪૫૬

અનુબોધદ્વારજ્ઞે

પૂર્ણ—સે કિં તં સમોચારે? સમોચારે ણેગમવવહારાણં
આણુપુઘ્વીદદ્વાઈં કહિં સમોચરંતિ? કિં આણુપુઘ્વીદદ્વેહિં સમો-
ચરંતિ અણાણુપુઘ્વીદદ્વેહિં સમોચરંતિ? અવત્તવગદદ્વેહિં સમોચ-
રંતિ?, આણુપુઘ્વીદદ્વાઈં આણુપુઘ્વીદદ્વેહિં સમોચરંતિ નો અણાણુ-
પુઘ્વીદદ્વેહિં નો અવત્તવચ્ચદદ્વેહિં સમોચરંતિ । એવં તિણિણ વિ
સટ્ઠાણે સમોચરંતિત્તિ ભાણિયવં । સે તં સમોચારે ॥સૂ૦ ૧૦૮॥

છાયા—અથ કોઝસૌ સમવતાર: ? સમવતારો નૈગમવવહારયોઃ આનુપૂર્વી
દ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ ? કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ

શબાલા—સ્કંધ હોગા—વહુ બી આકાશકે એક, દો, ત્રીન આદિ પ્રદેશોં મેં
અવગાહી હો સકતા હૈં ઓર અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં બી અવગાહી હો સ-
કતા હૈં । અતઃ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા યહ અસંખ્યાતાણુક સ્કંધ બી એકપ્રદેશ
મેં સ્થિત હોનેપર અનાનુપૂર્વી ઓર દો પ્રદેશ મેં અવત્તવચ્ચક અવગાહિત
હોને પર માના જાવેગા । તથા ત્રીન આદિ અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં સ્થિત
હોનેપર આનુપૂર્વી માના જાવેગા । હસ પ્રકાર સે ચિત્તમેં અવધારિત કર
૨૬ ભંગોં કા વાચ્યાર્થ ક્ષેત્રકી અપેક્ષા આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી ઓર અવત્ત-
વચ્ચક હન એકવચ્ચનાન્ત બહુવચ્ચનાન્ત પદોં કે અસંયોગ ઓર સંયોગ પક્ષ મેં
દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે ભંગોપદર્શન કી તરહ કર લેના ચાહિયે । ॥સૂ૦ ૧૦૭॥

અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો સ્કંધ હશે તે પણ આકાશના એક, બે, ત્રણ આદિ
પ્રદેશોમાં પણ અવગાહી હોઈ શકે છે, અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં પણ
અવગાહી હોઈ શકે છે, જ્યારે તે અસંખ્યાતાણુક સ્કંધ આકાશના એક જ
પ્રદેશમાં રહેલો હોય ત્યારે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેને અનાનુપૂર્વી રૂપ ગણવો
જોઈએ, પરંતુ જ્યારે તે ત્રણથી વધુને અસંખ્યાત પર્યાન્તના આકાશના
પ્રદેશોમાં રહેલો હોય ત્યારે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેને આનુપૂર્વી રૂપ ગણવો
જોઈએ, આ પ્રકારનો અર્થ મનમાં ધારણ કરીને ૨૬ ભંગોનો વાચ્યાર્થ
સમજ લેવો જોઈએ, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવ-
ત્તવચ્ચક આ એકવચ્ચનાન્ત અને બહુવચ્ચનાન્ત પદોના અસંયોગ અને સંયોગ
પક્ષે દ્રવ્યાનુપૂર્વીના ભંગોપદર્શનની જેમ અહીં પણ ૨૬ ભંગોએ
સમજ લેવા જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૧૦૭ ॥

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૦૮ સમવતારનિરૂપણમ્

૪૫૭

સમવતરન્તિ ? અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, નો અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ નો અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ । एवं श्रीण्यपि स्वस्थाने समवतरन्तीति भणितव्यम् । स एष समवतारः ॥सू० १०८॥

ટીકા — અથ સમવતારં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કોઽસૌ સમવતારઃ ? ઇત્યારભ્ય ‘સ એષ સમવતારઃ’ ઇતિ પર્યન્તસ્ય પાઠસ્ય વ્યાખ્યા અશીતિસૂત્રવદ્ દ્રવ્યાનુપૂર્વીવદ્ बोध्या ॥સૂ० ૧૦૮॥

अथ सूत्रकार समवतार की प्ररूपणा करते हैं—

“से किं तं समोयारे ?” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—હે અદન્ત ! (સે કિં તં સમોયારે) પૂર્વપ્રકાન્ત સમવતાર કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

उत्तर—(समोयारे) पूर्वप्रकान्त समवतार का स्वरूप इस प्रकार से है—(नेगमव्यवहाराणं आणुपुन्वीदव्वाइं कहिं समोयरंति?) शिष्य पूछता है कि नेगमव्यवहारनयसंमत आनुपूर्वी द्रव्य कहां समाविष्ट होते हैं (किं आणुपुन्वी दव्वेहिं समोयरंति? अणाणुपुन्वीदव्वेहिं समोयरंति) क्या आनुपूर्वी द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं ? या अनानुपूर्वी द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं ? या (अवक्तव्यगदव्वेहिं समोयरंति) अवक्तव्यक-द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं ?

उत्तर—(आणुपुन्वीदव्वाइं आणुपुन्वीदव्वेहिं समोयरंति) नेगमव्य-हारनय संमत आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्यों में ही समाविष्ट होते हैं ।

હવે સૂત્રકાર સમવતારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં સમોયારે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સમોયારે ?) હે અગવન્ ! આમણ ને સમવતાર નામનો પ્રકાર કયો છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સમોયારે) સમવતારનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુન્વી દવ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ ?)

શિષ્યનો પ્રશ્ન—નેગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કયાં સમાવિષ્ટ થાય છે ? (કિં આણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ ? અણાણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ, અવક્તવ્યગદવ્વેહિં સમોયરંતિ ?) શું આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે ? કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે ? કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે ?

ઉત્તર—(આણુપુન્વીદવ્વાઈં આણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ) નેગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં જ સમાવિષ્ટ થાય છે, (નો

મૂલ્ય—સે કિં તં અણુગમે? અણુગમે નવવિદે પળ્લસે, તં જહા—સંતપયપરુવળયા જાવ અપ્પાવહું ચેવ ॥સૂ૦ ૧૦૯॥

છાયા—અથ કોડસી અનુગમઃ? અનુગમો નવવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—સત્પદ-પરુપળતા યાવત્ અલ્પબહુત્વં ચૈવ ॥સૂ૦ ૧૦૯॥

ટીકા—અથ અનુગમં પરુપયિતું પ્રાહ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કોડસી અનુગમઃ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । અનુગમો નવવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—સત્પદપરુપળતા, ,

(નો અણાણુપુઠ્ઠીદંવેહિં નો અવત્તવગદંવેહિં સમોયરંતિ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં એવં અવત્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં સમાવિષ્ટ નહીં હોતે હૈં । (એવં તિણ્ણિ વિ સઢ્ઢાણે સમોયરંતિ ત્તિમાણિયવ્વં—સે તં સમોયારે) ઇસી પ્રકાર સે યહ સમજના ચાહિયે કિ અવત્તવ્યક ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય મી આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કી તરહ અપની ૫ જાતિરુપ કી અવત્તવ્યક ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યરુપ સ્વસ્થાન મેં હી અન્તર્ભૂત હોતે હૈં ઇસ પ્રકાર સે યે તીનોં હી સ્વ સ્વ સ્થાન મેં હી સમાવિષ્ટ હોતે હૈં, પરસ્થાન મેં નહીં યહી સમવતાર કા સ્વરુપ હૈ ઇસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા પહિલે ૮૦ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કી તરહ જાનની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૦૮ ॥

અથ સૂત્રકાર અનૌપનિધિ કી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે પંચમ ભેદરુપ અનુગમ કે સ્વરુપ કા કથન કરતે હૈં—“સે કિં તં અણુગમે? ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે?) હે ભદન્ત ! અનુગમ કા કયા સ્વરુપ હૈ ?

ઉત્તર—(અણુગમે નવવિદે પળ્લસે) અનુગમ નૌ પ્રકાર કહા હૈ (તંજ-

અણાણુપુઠ્ઠી દંવેહિં, નો અવત્તવગદંવેહિં સમોયરંતિ) પણ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં અને અવકતવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી. (એવં તિણ્ણિ વિ સઢ્ઢાણે સમોયરંતિ ત્તિ માણિયવ્વં—સે તં સમોયારે) એજ પ્રમાણે અવકતવ્યક અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ પોતપોતાની ભતિતા દ્રવ્યોમાં જ (અનુક્રમે અવકતવ્યક અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો રૂપ સ્વસ્થાનમાં જ) અંતર્ભૂત થાય છે. અન્ય સ્થાનમાં અંતર્ભૂત થતાં નથી આ પ્રકારનું સમવતારનું સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા ૮૦ માં સૂત્રની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥સૂ૦ ૧૦૮॥

હવે સૂત્રકાર અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પાંચમાં ભેદ રૂપ અનુગમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—“સે કિં તં અણુગમે? ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે?) હે ભગવન્ ! અનુગમનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(અણુગમે નવવિદે પળ્લસે) અનુગમના નવ પ્રકાર કહ્યા છે,

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १०९ अनुगमनिरूपणम्

४५९

यावत् अल्पबहुत्वं चैवेति । इह—यावच्छब्देन—द्रव्यप्रमाणं २, क्षेत्रं ३, स्पर्शना ४, कालः ५, अन्तरं ६, भागः ७, भावः ८ इति बोध्यम् । व्याख्या एकाशीति सूत्रवत् द्रव्यानुपूर्वी इति बोध्या ॥सू० १०९॥

मूलम्—जेगमववहाराणं आणुपुव्वोदव्वाइं किं अत्थि णत्थि ?
णियमा अत्थि । एवं दुण्णि वि ॥सू० ११०॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणि किं सन्ति न सन्ति ? नियमात् सन्ति । एवं द्वे अपि ॥सू० ११०॥

टीका—सर्व-सत्पदप्ररूपणताद्वारं प्ररूपयति—‘ जेगमववहाराणं ’ इत्यादि । अस्य द्वारस्य व्याख्या द्वयतीति सूत्रवत् द्रव्यानुपूर्वीवद् बोध्या ॥सू० ११०॥

हा) जैसे—(संतपयपरूपणया जाव अप्पाबहुं चैव) सत्पदप्ररूपणता यावत् अल्प बहुत्व , यहां यावत् शब्द से इस अनुक्तपाठका संग्रह हुआ है—“द्रव्यप्रमाणं खित्त, कुसणा, कालोय, अंतरं, भाग, भाव,” द्रव्य प्रमाण क्षेत्र स्पर्शना, काल, अंतर, भाग और भाव, इस सूत्र की व्याख्या के लिये देखो पीछेका ८१, वां सूत्र ॥ १०९ ॥

अब सूत्रकार अनौपनिषिकी क्षेत्रानुपूर्वी के अनुगम के भेदरूप प्रथम सत्पदप्ररूपणता का कथन करते हैं—

“जेगमववहाराणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(जेगमववहाराणं आणुपुव्वोदव्वाइं किं अत्थि णत्थि ? नियमा अत्थि । एवं दुण्णि वि) नैगमव्यवहारनय संमत आनुपूर्वीद्रव्य हैं या नहीं ?

(संज्ञा) ते प्रकारे नीचे प्रमाणों छे—(संतपयपरूपणया जाव अप्पाबहुं चैव) सत्पदप्ररूपणताथी लक्ष्मिने अल्पबहुत्व पर्यन्तता नव प्रकारे अच्छी पर्यन्त पद द्वारा “द्रव्यप्रमाणं खित्त, कुसणा, कालोय, अंतरं, भाग, भाव” द्रव्य-प्रमाण, क्षेत्र, स्पर्शना, काल, अंतर, भाग अने भाव, आ सात प्रकारे अच्छे करवायां आया छे. आ सूत्रनी व्याख्या साठे ८१अं सूत्र वांशी ७अं ॥सू० १०८॥

इसे सूत्रकार अनौपनिषिकी क्षेत्रानुपूर्वीना अनुगमना प्रथम छेद रूप सत्पदप्ररूपणतानुं निरूपण करे छे—

“जेगमववहाराणं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(जेगमववहाराणं आणुपुव्वोदव्वाइं किं अत्थि णत्थि ? नियमा अत्थि, एवं दुण्णि वि)

प्रश्न—नैगमव्यवहार नयसंमत आनुपूर्वी द्रव्यो छे के नहीं ?

મૂલ્ય—નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં કિં સંસ્થિજ્જાઈં
અસંસ્થિજ્જાઈં અણંતાઈં ? નો સંસ્થિજ્જાઈં અસંસ્થિજ્જાઈં નો અણં-
તાઈં । એવં દુણિં વિ ॥સૂ૦ ૧૧૧॥

છાયા—નેગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સંસ્થિયેયાનિ અસંસ્થિયેયાનિ
અનન્તાનિ ? નો સંસ્થિયેયાનિ, અસંસ્થિયેયાનિ, નો અનન્તાનિ । એવં દ્વે અપિ ॥સૂ૦ ૧૧૧॥

ટીકા—અથ દ્રવ્યપ્રમાણદ્વારં પરુપયિતુમાહ ‘નેગમવ્યવહારાણં’ इत्यादि ।
નેગમવ્યવહારસમ્પત્તાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સંસ્થિયેયાનિ ભવન્તિ ? કિં વા અસં-
સ્થિયેયાનિ ભવન્તિ ? ઉત વા અનન્તાનિ ભવન્તિ ? इति त्रिविधः प्रश्नः । उत्तरमाह—
‘નો સંસ્થિજ્જાઈં’ इत्यादि । नो संस्थियेयानि भवन्ति, नो अनन्तानि भवन्ति, अपि
तु असंस्थियेयानि भवन्तीत्यर्थः । इति । अयं भावः—त्रिप्रदेशावगाढादीनि द्रव्याणि

उत्तर-नियमतः हैं । इसी प्रकार नैगमव्यवहारनयसंमत अनानु-
पूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य भी नियम से हैं । इस सूत्र की व्याख्या
के लिये देखो पीछे का ८२, वां ॥सू० ११०॥

“નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં કિં સંસ્થિજ્જાઈં, અસં-
સ્થિજ્જાઈં, અણંતાઈં ?) હે ભદ્રન્ત ! નેગમવ્યવહારનયસંમત આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય કયા સંસ્થિયાત હૈં ? વા અસંસ્થિયાત હૈં ? વા અનંત હૈં ?

ઉત્તર—(નો સંસ્થિજ્જાઈં, અસંસ્થિજ્જાઈં, નો અણંતાઈં । એવં દુણિં વિ)
નેગમવ્યવહારનય સંમત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ન સંસ્થિયાત હૈં ન અનંત હૈં કિન્તુ
અસંસ્થિયાત હૈં । इसका तात्पर्य यह है—आकाश के तीन प्रदेश में स्थित

ઉત્તર—અવશ્ય છે જ એજ પ્રમાણે નેગમવ્યવહાર નયસંમત આનુ-
પૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યો પણ અવશ્ય છે જ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સમ-
જવા માટે ૮૨માં સૂત્રની વ્યાખ્યા વાંચી લેવી. ॥સૂ૦ ૧૧૦॥

“નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં કિં સંસ્થિજ્જાઈં, અસંસ્થિ-
જ્જાઈં, અણંતાઈં ?) હે ભગવન્ ! નેગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો
શું સંસ્થિયાત છે, કે અસંસ્થિયાત છે, કે અનંત છે ?

ઉત્તર—(નો સંસ્થિજ્જાઈં અસંસ્થિજ્જાઈં, નો અણંતાઈં, એવં દુણિં વિ)
નેગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સંસ્થિયાત પણ નથી, અનંત
પણ નથી, પરન્તુ અસંસ્થિયાત જ છે.

अनुयोगवन्त्रिका टीका सूत्र १११ द्रव्यप्रमाणद्वारनिरूपणम्

४६१

क्षेत्रत आनुपूर्वीत्वेन निर्दिष्टानि, त्रिप्रदेशादि स्कन्धाधारभूताः क्षेत्रविभागाश्च असंख्येयप्रदेशात्मके लोकेऽसंख्याता भवन्ति, अतो द्रव्यतया बहूनामप्यानुपूर्वी-द्रव्याणां क्षेत्रावगाहमपेक्ष्य क्षेत्रैक्यमाश्रित्य तुल्यप्रदेशावगाढानामेकत्वात् क्षेत्रानुपूर्व्यामसंख्यातान्येवानुपूर्वी द्रव्याणि भवन्तीति। अथानानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यविषये प्राह—‘एवं’ इत्यादि। एवम्=आनुपूर्वीद्रव्यवत् द्वे अपि=अनानुपूर्व्यवक्तव्यक-द्रव्याणि असंख्येयानि बोध्यानि। अयं भावः—एकैकप्रदेशावगाढं बहूपि द्रव्यं क्षेत्रत एकैवानुपूर्वी। लोकस्य प्रदेशा असंख्याताः सन्ति, अतस्तत्तुल्यमसंख्य-

हुए द्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा आनुपूर्वीरूप से कहे गए हैं। तीन आदि प्रदेशवाले रङ्गों के आधारभूत क्षेत्र विभाग असंख्यात प्रदेशी लोक में असंख्यात हैं। इसलिये द्रव्य की अपेक्षा बहुत भी आनुपूर्वीद्रव्य तुल्य प्रदेशवाले क्षेत्र में अवगाह की अपेक्षा करके एक मान लिये जाते हैं—अर्थात् आकाशरूप क्षेत्र के तीन प्रदेशों में त्रिप्रदेशवाले, चार प्रदेशवाले, पांच प्रदेशवाले छह आदि अनंत प्रदेशवाले अनेक आनुपूर्वीद्रव्य अवगाहित होकर रहते हैं। परन्तु ये सब द्रव्य तुल्यप्रदेशावगाही होने के कारण एक हैं। क्षेत्रानुपूर्वी में लोक के ऐसे त्रिप्रदेशात्मक विभाग असंख्यात हैं। इसलिये आनुपूर्वीद्रव्य भी तत्तुल्य संख्यावाले होने के कारण असंख्यात होते ही हैं। इसी प्रकार—आनुपूर्वी द्रव्य की तरह—अनानुपूर्वी, अवक्तव्यक द्रव्य भी असंख्यात ही हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि लोक के एक एक प्रदेश में अवगाही अनेक द्रव्य क्षेत्र की

આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—આકાશના ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં રહેલા દ્રવ્યોને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી રૂપ કહેવામાં આવે છે. ત્રણ આદિ પ્રદેશોવાળા રકષેના આધારભૂત ક્ષેત્રવિભાગો અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકમાં અસંખ્યાત છે. તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઘણાં જ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને તુલ્ય-પ્રદેશવાળા ક્ષેત્રમાં અવગાહની અપેક્ષાએ એક માનવામાં આવેલ છે એટલે કે આકાશરૂપ ક્ષેત્રના ત્રણ પ્રદેશોમાં ત્રણ પ્રદેશવાળાં, ચાર પ્રદેશવાળાં, પાંચ પ્રદેશવાળાં અને છ આદિ અનંત પ્રદેશવાળાં અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવગાહિત થઈને રહે છે, પરંતુ તે સઘળાં દ્રવ્યો તુલ્યપ્રદેશાવગાહી હોવાને કારણે એક છે. ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં લોકના એવાં ત્રિપ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત છે. આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ તેના એટલી જ સંખ્યાવાળા હોવાથી અસંખ્યાત જ હોય છે. એજ પ્રમાણે (આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની જેમ) અનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત જ છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે લોકના એક એક પ્રદેશમાં અવગાહી અનેક દ્રવ્યો પણ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ

ત્વાદનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણ્યપિ અસંખ્યયાનિ ભવન્તિ । તથા-પ્રદેશદ્વયેઽવગાઠં બહુપિ દ્રવ્યં
ક્ષેત્રતઃ એકમેવાવક્તવ્યકદ્રવ્યમ્ । લોકસ્ય દ્વિપ્રદેશાત્મકા વિભાગા અસંખ્યાતાઃ સન્તિ,
અતો દ્વિપ્રદેશાત્મકાન્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણ્યપ્યસંખ્યાતાનિ ભવન્તીતિ ॥૪૦ ૧૧૧॥

અપેક્ષા એક હી અનાનુપૂર્વીરૂપ હૈં । યે અસંખ્યાત હસલિએ માને ગયે હૈં
કિ હસ પ્રકાર સે અસંખ્યાત પ્રદેશવાલે લોક મેં એક એક પ્રદેશ મેં યે
એક ર રહતે હૈં । તથા આકાશ કે દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત બહુત ઓ દ્રવ્ય
ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા એક હી અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં । આકાશ કે દો પ્રદેશ
રૂપ વિભાગ અસંખ્યાત હોતે હૈં હસલિયે તદવગાહીદ્રવ્ય ઓ અસંખ્યાત હૈં ।

ભાવાર્થ-નૈગમવ્યવહારનય સંમત આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી ઓર અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્ય કિતને હૈં ? સૂત્રકારને હસ સૂત્રદ્વારા હન પ્રશ્નોં કા સમા-
ધાન કિયા હૈં । ઉન્હોંને કહા હૈં કિ-આકાશ કે ત્રિપ્રદેશાત્મક,
દ્વિપ્રદેશાત્મક ઓર એકપ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત હૈં । ક્યોંકિ
આકાશ સ્વયં અસંખ્યાત પ્રદેશ વાલા હૈં । યદ્યપિ આકાશ કે પ્રદેશ
અલોકાકાશ કી અપેક્ષા અનંત કહે ગયે હૈં, ફિર ઓ હસ અનંત અલો-
કાકાશ મેં કોઈ દ્રવ્ય નહીં રહતો હૈં । અસંખ્યાત પ્રદેશવાલે લોકા-
કાશ-મેં હી દ્રવ્યોંકા અવગાહ હૈં । લોકાકાશકે હન વિભાગોં મેં આનુ-
પૂર્વી, અનાનુપૂર્વી, ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રત્યેક અસંખ્યાત ર રહતે હૈં ।

એક જ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે. તેમને અસંખ્યાત માનવાનું કારણ એ છે કે
આ પ્રકારે અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા લોકના એક એક પ્રદેશમાં એક એક
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રહે છે. તથા આકાશના એ પ્રદેશોમાં સ્થિત ઘણાં દ્રવ્યો
પણ કોઈની અપેક્ષાએ એક જ અવક્તવ્ય દ્રવ્ય દ્રવ્ય છે. આકાશના એ પ્રદેશ
દ્રવ્ય વિભાગ અસંખ્યાત હોય છે, તે કારણે તેમાં અવગાહી દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ પ્રશ્નનું સમાધાન કર્યું છે કે
નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો
કેટલાં છે. સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે આકાશના
ત્રિપ્રદેશાત્મક, દ્વિપ્રદેશાત્મક અને એક પ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત છે,
કારણ કે આકાશ પોતે જ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળું છે. જો કે અલોકાકાશની
અપેક્ષાએ આકાશના પ્રદેશો અનંત કહ્યા છે, પરંતુ આ અનંત અલોકાકા-
શમાં તો કોઈ પણ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ જ નથી અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા લોકા-
કાશમાં જ દ્રવ્યોનો અવગાહ છે. લોકાકાશના તે વિભાગોમાં અસંખ્યાત
આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અસંખ્યાત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અસંખ્યાત અવક્તવ્યક

કર્ણોંકિ યહાંપર ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા-આનુપૂર્વી આદિ કા વિચાર ચલ રહા હૈ । અતઃ એક પ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોં મેં એક એક વિભાગોં મેં એક ૨ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય રહતા હૈ । યચપિ એક પ્રદેશ મેં દ્રવ્ય કી અપેક્ષા અનેક આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય રહતે હૈ-પરન્તુ બે સબ એક પ્રદેશ મેં આધારભૂત હોને કે કારણ એક માને જાતે હૈ । અતઃ હસ પ્રકાર સે એક પ્રદેશરૂપ વિભાગ મેં રહે હુએ યે અનેક દ્રવ્ય એક પ્રદેશરૂપ આધાર કી અપેક્ષા એક પ્રદેશાવગાહી હોને કે કારણ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ પડતે હૈ । હસ પ્રકાર લોક કે એકપ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોં મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત હી હો જાતે હૈ । હસી પ્રકાર સે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય બી અસંખ્યાત સઘ જાતે હૈ । કર્ણોંકિ લોક કે દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગ જબ અસંખ્યાત હૈ તો હનમેં જિતને બી દ્વિપ્રદેશી આદિ દ્રવ્ય રહેંગે બે સબ દ્વિપ્રદેશાવગાહી હોને કે કારણ એક દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગ મેં એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ સે સ્વીકૃત માને જાવેંગે । હસ દ્વિપ્રદેશાત્મક એક વિભાગ મેં જબ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રહતા હૈ તો દ્વિપ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોં મેં અસંખ્યાત હી અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રહેંગે ।

દ્રવ્યો રહે છે. અહીં ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી આદિનો વિચાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી એકપ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોમાંના પ્રત્યેક વિભાગમાં એક એક આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય રહે છે. એ કે પ્રત્યેક પ્રદેશમાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનેક આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો રહે છે, પરન્તુ તેઓ બધાં એક પ્રદેશમાં આધારભૂત હોવાને કારણે તેમને એક માનવામાં આવેલ છે. આ રીતે એકપ્રદેશ રૂપ વિભાગમાં રહેલાં અનેક દ્રવ્યો એક પ્રદેશરૂપ આધારની અપેક્ષાએ એક પ્રદેશાવગાહી હોવાને કારણે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ ગણવાને યોગ્ય બને છે. આ રીતે લોકના એક પ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોમાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અસંખ્યાત હોવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે. એજ પ્રમાણે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો અને આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત હોવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે, કારણ કે લોકના દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત હોવાથી તેમાં જેટલા દ્વિપ્રદેશી આદિ દ્રવ્યો રહેશે તે સૌ પણ દ્વિપ્રદેશાવગાહી હોવાને કારણે એક દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગમાં એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપે સ્વીકૃત થયેલાં માની શકાશે. આ દ્વિપ્રદેશાત્મક એક વિભાગમાં જો એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રહેતું હોય, તો દ્વિપ્રદેશાત્મ અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અસંખ્યાત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો રહી શકે, એ વાત પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે. આ રીતે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો અસંખ્યાત હોવાનું કથન પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે.

मूलम्—णोगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखिज्जइभागे होज्जा ? असंखिज्जइभागे होज्जा ? जाव सव्वलोए होज्जा ? एगं दव्वं पडुच्च लोगस्स संखिज्जइभागे वा होज्जा, असंखिज्जइभागे वा होज्जा, संखेज्जेसु भागेषु वा होज्जा, असंखेज्जेसु भागेषु वा होज्जा, देसूणे वा लोए होज्जा । नाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए होज्जा । णोगमववहाराणं अणाणुपुव्वीदव्वाणं पुच्छा एगदव्वं पडुच्च नो संखेज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे होज्जा, नो संखेज्जेसु भागेषु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा नो सव्वलोए होज्जा, नाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए होज्जा । एवं अवत्तव्वगदव्वाणि वि भाणियव्वाणि ॥सू० ११२॥

इसी प्रकार अवत्तव्वकद्रव्य भी असंख्यात-संघजाते हैं । इसी प्रकार से लोक के जब त्रिप्रदेशात्मक विभाग असंख्यात हैं तो इनमें जितने भी त्रिप्रदेशी आदि द्रव्य रहेंगे वे सब त्रिप्रदेशावगाही होने के कारण एक त्रिप्रदेशात्मक विभाग में एक आनुपूर्वी द्रव्यरूप से स्वीकृत हुए माने जावेंगे । इस त्रिप्रदेशात्मक एक विभाग में जब एक आनुपूर्वी-द्रव्य रहता है तो लोक के त्रिप्रदेशात्मक असंख्यात विभागों में द्रव्य कितने आनुपूर्वी रहेंगे । इस प्रकार गणना के अनुसार आनुपूर्वी द्रव्य असंख्यात संघ जाते हैं ॥ सू० १११ ॥

अथ प्रमाणे लोकना त्रिप्रदेशी विभागो पथु ने असंख्यात होय तो तेमां नेटलां त्रिप्रदेशी आदि द्रव्यो रडेसे तेमां अथां पथु त्रिप्रदेशावगाही होवाने कारणे ओक त्रिप्रदेशात्मक विभागमां ओक आनुपूर्वी द्रव्य इये स्वीकृत थयेला भनासे आ त्रिप्रदेशात्मक ओक विभागमां ने ओक आनुपूर्वी द्रव्य रडेता होय, तो लोकना त्रिप्रदेशात्मक असंख्यात विभागोमां असंख्यात आनुपूर्वी द्रव्यो रडेता हसे आ प्रकारे आनुपूर्वी द्रव्योनी संख्या पथु असंख्यात होवानी बात सिद्ध थय अथ छे ॥सू० १११॥

નૈગમયોગવ્યવહાર ટીકા સૂત્ર ૧૧૨ ક્ષેત્રપ્રમાણદ્વારનિરૂપણમ્

૪૬૫

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોઃ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયતમમાગે ભવન્તિ ? અસંખ્યેયમાગે ભવન્તિ યાવત્ સર્વલોકે ભવન્તિ ? । એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય લોકસ્ય સંખ્યેયતમમાગે વા ભવતિ, અસંખ્યેયતમમાગે વા ભવતિ, સંખ્યેયેષુ માગેષુ વા ભવતિ, અસંખ્યેયેષુ માગેષુ વા ભવતિ, દેશોને વા લોકે ભવતિ । નાના દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોઃ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં પૃચ્છા-ચામેકદ્રવ્યં પ્રતીત્ય નો સંખ્યેયતમમાગે ભવતિ, અસંખ્યેયતમમાગે ભવતિ, નો સંખ્યેયેષુ માગેષુ ભવતિ, નો સર્વલોકે ભવતિ । નાના દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ । એવમ્ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણ્યપિ મણિતવ્યાનિ ॥સૂ. ૧૧૨॥

ટીકા—અથ ક્ષેત્રદ્વારં નિરૂપયિતુમાહ—‘ જોગમવવહારાણં ’ ઇત્યાદિ ।

નૈગમવ્યવહારસમ્પ્રત્તાનિ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયતમમાગે ભવન્તિ ? અસંખ્યેયતમમાગે ભવન્તિ ? યાવત્ સર્વલોકે ભવન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યં લોકસ્ય સંખ્યેયતમમાગે વા ભવતિ, અસંખ્યેય-તમમાગે વા ભવતિ, સંખ્યેયેષુ વા માગેષુ ભવતિ, અસંખ્યેયેષુ વા માગેષુ ભવતિ ।

(જોગમવવહારાણં સ્વેત્તાણુપુઢ્વી) ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં સ્વેત્તાણુપુઢ્વી—દઢ્વાઈ લોગસસ કિં સંખિ-જજઈમાગે હોજ્જા ?)

પ્રશ્ન—નૈગમવ્યવહારનય સંમત ક્ષેત્રાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કયા લોક કે સં-સ્થાતવે ભાગ મેં હોતે હેં ? (અસંખિજજઈમાગે હોજ્જા ?) યા અસંસ્થાતવે ભાગમેં રહતે હેં ? (જાચ સઢ્વલોઈ હોજ્જા) યાવત્ સમસ્ત લોકમેં હોતે હેં ?

ઉત્તર—(એકં દઢ્વં પઢ્વુચ્ચ લોગસસ સંખિજજઈમાગે વા હોજ્જા અસં-સ્વેજજઈમાગે વા હોજ્જા સંસ્વેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા, અસંસ્વેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા દેસૂળે વા લોઈ હોજ્જા) એકદ્રવ્યકી અપેક્ષા લેકર આનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે સંસ્થાતવે ભાગ મેં ખી રહતા હૈ અસંસ્થાતવે

“ જોગમવવહારાણં સ્વેત્તાણુપુઢ્વી ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં સ્વેત્તાણુપુઢ્વીદઢ્વાઈ લોગસસ કિં સંખિજજઈ માગે હોજ્જા) હે ભગવન્ ! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત ક્ષેત્રાનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં છે ? હે (અસંખિજજઈમાગે હોજ્જા ?) અસંખ્યા-તમાં ભાગમાં હોય છે ? (જાચ સઢ્વલોઈ હોજ્જા ?) હે સમસ્ત લોકમાં હોય છે ?

ઉત્તર—(એકં દઢ્વં પઢ્વુચ્ચ લોગસસ સંખિજજઈમાગે વા હોજ્જા, અસંખિ-જજઈમાગે વા હોજ્જા, સંસ્વેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા, અસંસ્વેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા, દેસૂળે વા લોઈ હોજ્જા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં પણ રહે છે, અસંખ્યાતમાં

સ્કન્ધદ્રવ્યાણાં વિચિત્રપરિણમનશક્તિમત્વાત્ સંખ્યેયાદિપ્રદેશાવગાહિત્વં बोध्यम्।
વિશિષ્ટક્ષેત્રાવગાહોપલક્ષિતાનાં સ્કન્ધદ્રવ્યાણામેવ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્વેનોક્તત્વાત્। તથા
એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય દેશેને વા લોકે આનુપૂર્વીદ્રવ્યં ભવતિ।

નનુ-અચિત્તમહાસ્કન્ધસ્ય સર્વલોકવ્યાપકત્વં પૂર્વમુક્તમ્। તસ્ય ચ સમસ્ત-
લોકવર્ત્યસંખ્યેયપ્રદેશલક્ષણાયાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામવગાહત્વાત્ પરિપૂર્ણસ્યાપિ ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વીત્વેન કિંચિદ્ વિરુદ્ધયતે, અતસ્તદપેક્ષયા ક્ષેત્રતોડ્વ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યં સર્વલોકવ્યાપિ
ભાગ મેં મી રહતા હૈ, સંખ્યાત ભાગોં મેં મી રહતા હૈ અસંખ્યાત ભાગોં
મેં મી રહતા હૈ। વર્થોકિ સ્કંધ દ્રવ્યોં કી પરિણમન શક્તિ વિચિત્ર
પ્રકાર કી હૈ। અતઃ વિચિત્રપ્રકાર કી પરિણમન શક્તિવાલે હોને કે
કારણ સ્કંધ દ્રવ્યોંકા અવગાહલોક કે સંખ્યાતર્થે આદિ ભાગોં મેં હોતા
હૈ। વર્થો કિ વિશિષ્ટ ક્ષેત્ર મેં અવગાહ સે ઉપલક્ષિત હુઅ સ્કન્ધ દ્રવ્યોં
કો હી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીરૂપ સે કહામયા હૈ। તથા એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લેકર
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કુછ કમ-દેશોન લોક મેં મી અવગાહિત હોતા હૈ।

શંકા-પહિલે દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં અચિત્ત મહાસ્કંધ, કિ જો પુદ્ગલદ્રવ્ય
સવસે ઘડા સ્કંધ હોતા હૈ ઓર જો અનંતાનંત પરમાણુઓં સે નિષ્પન્ન
હોતા હૈ। સર્વ લોક વ્યાપી કહા હૈ। ઇસ પ્રકાર અચિત્ત મહાસ્કંધ કી
અપેક્ષા એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોક મેં વ્યાપક હોકર જબ રહતા
હૈ-તથ યહ વાત આપકી કૈસે માની જા સક્તી હૈ કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય

ભાગમાં પણ રહે છે, સંખ્યાત ભાગોમાં પણ રહે છે, અસંખ્યાત ભાગોમાં
પણ રહે છે, કારણ કે સ્કંધ દ્રવ્યોની પરિણમનશક્તિ વિચિત્ર હોય છે.
વિચિત્ર પ્રકારની પરિણમનશક્તિવાળા હોવાને કારણે સ્કંધ દ્રવ્યોનો અવગાહ
લોકના સંખ્યાતમાં આદિ ભાગોમાં હોય છે. કારણ કે વિશિષ્ટ ક્ષેત્રમાં
અવગાહથી ઉપલક્ષિત થયેલાં સ્કંધદ્રવ્યોને જ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપે ગણવામાં
આવે છે. તથા એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય અમુક ન્યૂન દેશપ્રમાણ-દેશોન-લોકમાં પણ અવગાહિત હોય છે.

શંકા-દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરતાં પહેલાં આપે એવું કહ્યું છે કે
“પુદ્ગલ દ્રવ્યનો સૌથી મોટો સ્કંધ કે જે અનંતાનંત પરમાણુઓમાંથી બને
છે, અને જેને અચિત્ત મહાસ્કંધ કહેવામાં આવે છે, તે સર્વલોકવ્યાપી છે.”
આ પ્રકારે આ અચિત્ત મહાસ્કંધની અપેક્ષાએ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય જે
સમસ્ત લોકમાં વ્યાપક હોય તો આપની એ વાત કેવી રીતે માની શકાય
કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે
અમુક દેશોન (દેશ ન્યૂન) લોકમાં વ્યાપીને રહે છે? કારણ કે સમસ્ત લોક-

પ્રાપ્યતે, કથં તર્હિ દેશોનલોકવ્યાપિતા પ્રોચ્યતે ? इति चेत्, उच्यते—अयं लोकं आनुपूर्व्यनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यैः सर्वदैवाशून्य एव भवतीति सिद्धान्तः । यदिचात्राऽऽनुपूर्व्याः सर्वलोकव्यापिता निर्दिश्येत, तदाऽनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्याणां निरवकाशतयाऽभावः प्रतीयेत, अतश्च—अचित्तमहास्कन्धपूरितेऽपि लोके जघन्यतोऽप्येकः प्रदेशोऽनानुपूर्वीविषयत्वेन विवक्षितः । प्रदेशद्वयं चावक्तव्यकद्रव्यविषय-

एक द्रव्य की अपेक्षा करके कुछ कम लोक में व्यापक होकर रहता है । क्योंकि समस्त लोकवर्ती असंख्यात प्रदेशरूप क्षेत्रानुपूर्वी है सो उसमें अवगाढ-अवगाही होने से- परिपूर्ण अचित्त महास्कन्ध का क्षेत्रानुपूर्वीपना भी कुछ भी विरुद्ध नहीं पड़ता है । इसलिये आनुपूर्वी द्रव्य में एक आनुपूर्वी, द्रव्य की अपेक्षा करके जो देशोन लोक में अवगाहिता प्रकट की है वह ठीक नहीं है ।

उत्तर-यह सिद्धान्त है कि यह लोक आनुपूर्वी अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों से सदा ही अशून्य है । यदि आनुपूर्वी द्रव्य को-सर्वलोक व्यापी माना जावे तो फिर अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों को ठहरने के लिये स्थान न होने के कारण उनका अभाव प्रसक्त होगा । और जब देशोन लोक में एक आनुपूर्वीद्रव्य व्यापक होकर रहता है । ऐसा माना जाता है तो इस प्रकार से अचित्त महास्कन्ध से पूरित हुए भी लोक में कम से कम एक प्रदेश ऐसा भी आजाता है कि जो अनानुपूर्वीद्रव्य का विषय रूप से विवक्षित हो जाता है । तथा दो प्रदेश

વર્તી અસંખ્યાત પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી છે, અને તેમાં અવગાહી (રહેલો) હોવાથી પરિપૂર્ણ અચિત્ત મહાસ્કન્ધમાં પણ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્વ માનવામાં કોઈ પણ વાંધો જણાતો નથી.

ઉત્તર-એવો સિદ્ધાંત છે કે આ લોક આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોથી રહિત કદી હોતો નથી જો આનુપૂર્વી દ્રવ્યને સર્વલોકવ્યાપી માનવામાં આવે, તો અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવાનું સ્થાન જ બાકી ન રહે ! અને તે કારણે તેમનો અભાવ જ માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે જો એવું માનવામાં આવે કે દેશોન (દેશ ન્યૂન) લોકમાં એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય વ્યાપીને રહે છે, તો અચિત્ત મહાસ્કન્ધ વડે પૂરિત થયેલા લોકમાં પણ ઓછામાં ઓછો એક પ્રદેશ એવો પણ બાકી રહેશે કે જેમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો સદ્ભાવ હોઈ શકે, તથા તે લોકમાં બે પ્રદેશ એવા

૪૬૮

અનુયાગદ્વારંચત્રે

ત્વેન વિવક્ષિતમ્, આનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય તત્ર સર્વેઽપિ તસ્યાઽપ્રાધાન્યેન વિવક્ષણાત્, અનાનુ-
પૂર્વ્યવક્તવ્યકયોસ્તુ પ્રાધાન્યેન વિવક્ષણાદિતિ, અનોઽત્ર દેશોનો લોકોઽત્ર વિવક્ષિતઽતિ।
ઉક્તં ચ—

“મહાલંઘાપુણે વિ ય અવક્તવ્યગણાણુપુન્વિદન્વાઈં।

જદેસોગાઢાઈં તદેસેણં સ લોગૂળો ” ॥૧॥

છાયા—મહાસ્કન્ધાઽઽપૂર્ણેઽપિ ચ અવક્તવ્યકાઽનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ ।

યદેશાવગાઢાનિ તદેશેન સ લોકોનઃ ॥૩૮૧॥

નતુ યદ્યેવં તર્હિ દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યામપિ સર્વલોકવ્યાપિત્વમાનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય યદુક્તં
તદ્ વિરુદ્ધયતે, અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણામનવકાશત્વેન તત્રાપ્યભાવ પ્રતીતિ-
એસે ખી આ જાતે હૈં કિ જો અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે વિષયરૂપ સે વિવ-
ક્ષિત હો જાતે હૈં । ઇન એક ઓર દો પ્રદેશોં મેં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા ખી
સદ્ભાવ રહતા હૈં તો ખી અપ્રધાન હોને સે ડસકી વહાં વિવક્ષા નહીં
હોતી હૈં । અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક ઇન દ્રવ્યોં કી હી પ્રધાનતા હોને
સે વિવક્ષા કી જાતી હૈં । ઇસલિયે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
કી અપેક્ષા સે દેશોન લોક મેં અવગાહિત કહા ગયા હૈં । યહી બાત ઉક્તંચ-
“મહાલંઘા પુણેવિય ઇત્યાદિ” કરકે ઇસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈં ।

શંકા—યદિ યહી બાત હૈં કિ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં
દેશોન લોક વ્યાપી હૈં ફિર દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં યહી બાત માનની ચાહિયે-
પરંતુ વહાં એસી બાત નહીં માની ગઈ હૈં વહાં તો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કો સર્વ
લોક વ્યાપી કહા ગયા હૈં । ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કો સર્વ-

પણુ બાકી રહેશે કે જોમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યનો અવગહ સંભવી શકશે તે
એક અને બે પ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો પણ સદ્ભાવ રહે છે, છતાં પણ
તે ત્યાં અપ્રધાન હોવાને કારણે તેની વિવક્ષા અહીં કરી નથી અનાનુપૂર્વી
અને અવક્તવ્યક, આ બે દ્રવ્યોની જ ત્યાં પ્રધાનતા હોવાથી તેમની જ
વિવક્ષા કરવામાં આવી છે. તેથી જ એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યનો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેની
અવગાહના દેશોન લોકમાં છે. એજ વાતને “મહાલંઘા પુણેવિય”
ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા અહીં પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

શંકા—જો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં દેશોન (દેશ ન્યૂન)
લોકોવ્યાપી હોય, તો દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં પણ એવી જ વાતનો સ્વીકાર થવો
જોઈએ પરંતુ દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં એવી વાતનો સ્વીકાર કરવાને બદલે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યને સર્વલોકોવ્યાપી કહેવામાં આવેલ છે. ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યને

मसङ्गात्, सर्वकालं च तेषामप्यवस्थितिप्रतिपादना? दिति चेत्? उच्यते-
द्रव्यानुपूर्व्यां हि द्रव्याणामेवानुपूर्व्यादिभाव उक्तः, न तु क्षेत्रस्य, तस्य तत्रानधि-
कृतत्वात्। आनुपूर्व्यादिद्रव्याणां परस्परभेदेऽपि एकस्मिन्नपि क्षेत्रे तदवस्थानं न
किञ्चिद् विरुध्यते, यथा एकापवरकान्तर्गतानेक प्रदीपप्रमाणामवस्थितिर्न विरुध्यते।
इत्थं च द्रव्यानुपूर्व्यामानुपूर्वीद्रव्याणां समस्तलोके विद्यमानत्वेऽपि न तत्र कस्या

लोक व्यापी मानने में जो आपने अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यको
ठहरने के लिये स्थान होने के कारण उनमें अभाव के प्रसंग प्राप्त होने
का कथन किया है, सो वही अभाव के प्रसंग प्राप्त होने के कारण उन
अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों के लिये द्रव्यानुपूर्वी में भी आनुपूर्वी
द्रव्य को सर्वलोकव्यापी मानने पर उपस्थित होता है। परन्तु ऐसा तो
है नहीं-क्योंकि सर्वकाल उन दोनों का भी अवस्थान माना गया है।

उत्तर-द्रव्यानुपूर्वी में द्रव्यों के ही आनुपूर्वी आदि भाव का कथन
किया गया है। आकाश रूप क्षेत्र को आनुपूर्वी आदि भाव का नहीं।
क्योंकि वहाँ पर द्रव्यानुपूर्वी में-आकाश रूप क्षेत्र का विचार अधिकृत
नहीं है। आनुपूर्वी आदि द्रव्यों का परस्पर में भेद होने पर भी उनका
अवस्थान एक ही आकाश प्रदेश रूप क्षेत्र में थोड़ा सा भी विरुद्ध नहीं
पड़ता है, जैसे एक कोठे के अन्तर्गत अनेक प्रदीप प्रभाओं की अवस्थिति
में कोई विरोध नहीं होता है। इस प्रकार द्रव्यानुपूर्वी में आनुपूर्वीद्रव्यों

सर्वलोकव्यापी मानवामां आवे ज्ये प्रसंग प्राप्त थवाने लय भताये छे
के जे प्रकारनी मान्यताने स्वीकार करवामां आवे तो अनानुपूर्वीं अने
अवक्तव्यक द्रव्य ने रडेवाना स्थानने ज अभाव रडेवाने कारणे ते द्रव्येने
अभाव मनवाने प्रसंग प्राप्त थये- तो आनुपूर्वीं द्रव्यने सर्वलोकव्यापी
मानवामां आवे तो अनानुपूर्वीं अने अवक्तव्यक द्रव्येने पण अभाव
मानवानुं कारणे अही पण उपस्थित थये परन्तु जेवी बात तो संलक्षित
नथी, कारणे के ते भन्नेने सहभाव सहा मानवामां आवेले ज छे.

उत्तर-द्रव्यानुपूर्वींमां द्रव्येना ज आनुपूर्वीं आदि लावनुं कथन करवामां
आण्युं छे-आकाशरूप क्षेत्रना आनुपूर्वीं आदि लावनुं कथक थयुं नथी,
कारण के द्रव्यानुपूर्वींमां आकाश रूप क्षेत्रने विचार अधिकृत नथी. आनु-
पूर्वीं आदि द्रव्येने परस्परमां भेद होवा छतां पण तेमनुं अवस्थान जेक
पण आकाशप्रदेश रूप क्षेत्रमां सहेज पण विरुद्ध पडतुं नथी जेवी रीते
जेक ठाठानी अंदर प्रदीपो (दीवा) नी प्रभाजोनी अवस्थितिमां केछ विशेष
पडते नथी, जेज प्रभाजुं द्रव्यानुपूर्वींमां आनुपूर्वीं द्रव्येने समस्त लोकमां

અનરકાશ્વ ઇતિ, ન કશ્ચિદ્ દોષઃ । ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યાં તુ દ્રવ્યાણામૌપચારિકાં એવાનું પૂર્વ્યાદિભાવા, મુલ્યતસ્તુ ક્ષેત્રસ્યેવાનુપૂર્વ્યાદિભાવો વિવક્ષિતઃ, તસ્યેવાનાધિકારાત્ । તસ્માદત્ર યદિ સર્વેઽપિ લોકપ્રદેશા આનુપૂર્વ્યાં વ્યાપ્તા ભવેયુસ્તર્હિ અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકતયા કિમન્યત્ર ક્ષેત્રં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્યાત્ ? । યેષુ નમઃપ્રદેશેષ્વાનુપૂર્વ્યસ્તેષ્વેવાનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યયથોરપિ સદ્ભાવ સ્થાદિતિ તુ ન વક્તું શક્યતે, દ્રવ્યાવગાહભેદેન

કો સમસ્ત લોક મેં વ્યાપક માનને પર મી વહાં અનાનુપૂર્વી ઝોર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે ઠહરને મેં અનચકાશ રૂપ દોષ કી આપત્તિ કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત થોડા મી નહીં હોતા હૈ । પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં જો દ્રવ્યોં કા આનુપૂર્વી આદિ ભાવ કહા ગયા હૈ વહ તો ઔપચારિક હી હૈ । ક્યોંકિ હસ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં ક્ષેત્ર મેં, હી આનુપૂર્વી આદિ રૂપ ભાવ મુખ્ય રૂપ સે વિવક્ષિત હુ આ હૈ, હસકા કારણ યહ હૈ કિ ઉસકા યહાં અધિકાર ચલ રહા હૈ, હસલિયે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં યદિ સબ મી લોક કે પ્રદેશ આનુપૂર્વી સે વ્યાપ્ત હો જાવે તો ફિર અનાનુપૂર્વી ઝોર અવક્તવ્યક રૂપ સે ઝોર કૌન સે દુસરે પ્રદેશરૂપી ક્ષેત્ર ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપ સે વ્યવહત હોંગે કિ જિસસે જિન આકાશ કે પ્રદેશોં મેં આનુપૂર્વીયોં કા સદ્ભાવ હૈ ઉન્હીંમેં અનાનુપૂર્વી ઝોર અવક્તવ્યકોં કા સદ્ભાવ હો સકે ? નહીં હો સકેગા । અતઃ ફિર યહ કેસે કહા જા સકતા હૈ, કિ જિન આકાશ પ્રદેશોં મેં આનુપૂર્વી કા સદ્ભાવ હૈ ઉન્હીંમેં અનાનુપૂર્વીયોં ઝોર અવક્તવ્યકોં કા મી સદ્ભાવ હૈ । યદિ હસપર યોં કહા જાવે કિ હસ પ્રકાર સે માનને મેં કિ જિન આકાશ

વ્યાપક માનવા છતાં પણ ત્યાં અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવામાં અવકાશ રૂપ હોવાની આપત્તિનો પ્રસંગ બિનકુલ પ્રાપ્ત થયો નથી. પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં દ્રવ્યોના જે આનુપૂર્વી આદિ ભાવ કહેવામાં આવ્યા છે તે તો ઔપચારિક જ છે, કારણ કે આ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં ક્ષેત્રમાં જ આનુપૂર્વી આદિ રૂપ ભાવ મુખ્ય રૂપે વિવક્ષિત થયા છે તેનું કારણ એ છે કે તેનો જ અધિકાર અહીં ચાલી રહ્યો છે તેથી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં જે લોકના સમસ્ત પ્રદેશો આનુપૂર્વી વડે વ્યપ્ત થઈ ગયે, તે અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનો જેમાં સદ્ભાવ હોય એવાં અન્ય પ્રદેશો રૂપ ક્ષેત્રોના સદ્ભાવ જ કયાથી રહે । આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં એવું કેવી રીતે કહી શકાય કે જે આકાશપ્રદેશોમાં આનુપૂર્વીઓના સદ્ભાવ છે, એજ આકાશપ્રદેશોમાં અનાનુપૂર્વીઓ અને અવક્તવ્યકોના પણ સદ્ભાવ છે । એ આ બાબતને અનુલ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૨ ક્ષેત્રપ્રમાણદ્વારનિકૂપણમ્

૪૭૬

ક્ષેત્રમેદસ્ય વિવક્ષણાત્ । તસ્માદનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકયો વિષયં પ્રદેશત્રયં વિહાય શેષ-
પ્રદેશા एवानુપૂર્વ્યા વિષયો ભવતીતિ પ્રદેશત્રયલક્ષणेन देशेन लोकस्योनता विव-
क्षिता, अतः क्षेत्रानुपूर्व्यामेकं द्रव्यं प्रतीत्य आनुपूर्वीद्रव्यं देखोने लोके भवति ।

પ્રદેશોં મેં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અવગાહિત હોતે હેં, ઉન્હીં પ્રદેશોં મેં શેષ દો
દ્રવ્ય બી અવગાહિત હોતે હેં । અતઃ અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં
સે અધિષ્ઠિત વે કુછ પ્રદેશ અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક રૂપ સે કહે
જાવેંગે । સો એસા કહના બી ઠીક નહીં હૈ કારણ હત પ્રકાર કે કથન
સે દ્રવ્ય કે અવગાહ કી ભિન્નતા સે ક્ષેત્ર મેં મેદ આજાતા હૈ । જિસકી
યહાં વિવક્ષા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોં કા સમસ્ત લોક મેં અવસ્થાન ન હોને પર બી અનાનુપૂર્વી ઓર
અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે અવસ્થાન હોનેપર વહાં કોઈ દોષ નહીં આતા હૈ ।
પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં યદિ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો સમસ્ત લોક વ્યાપી માના
જાવે અર્થાત્ લોક કે સમસ્ત પ્રદેશ આનુપૂર્વી રૂપ માન લિયે જાવેં તો
હસ સ્થિતિ મેં અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક પ્રદેશ કૌનસે માને જાવેંગે
કિ જિનમેં અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ઠહર સકે । અતઃ યહ
માનના ચાહિયે કિ હસ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં એક પ્રદેશ અનાનુપૂર્વી ક્ષેત્રાનુ-
નુપૂર્વી કા વિષય હૈ ઓર દો પ્રદેશ અવક્તવ્યક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે વિષય

ક્ષીને એવી દલીલ કરવામાં આવે કે “ જે આકાશપ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો
અવગાહિત હોય છે, એજ પ્રદેશોમાં બાકીના બન્ને દ્રવ્યો અવગાહિત હોય
છે, અને તે કારણને લીધે અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોથી અધિષ્ઠિત
એવાં એજ અમુક પ્રદેશોને અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક રૂપે કહી શકાશે. ”
આ પ્રકારની માન્યતા પણ ખરાબર નથી, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતાનો
સ્વીકાર કરવાથી દ્રવ્યના અવગાહની ભિન્નતાને લીધે ક્ષેત્રમાં પણ ભિન્નતા
આવી જાય છે. તેની જ અહીં વિવક્ષા ચાલી રહી છે આ સમસ્ત કથનનું
તાત્પર્ય એ છે કે દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું સમસ્ત લોકમાં અવસ્થાન
હોવા છતાં પણ અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનું ત્યાં અવસ્થાન
માનવામાં કોઈ દોષ નથી પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં જે આનુપૂર્વી સમસ્ત લોક-
વ્યાપી માનવામાં આવે એટલે કે લોકના સમસ્ત પ્રદેશોને જે આનુપૂર્વી રૂપ
માનવામાં આવે, તો અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો જેમાં અવગાહિત
થઈ શકે એવાં અનાનુપૂર્વી પ્રદેશો કેને માનવા ? તેથી એવું જ માનવું
પડશે કે આ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં એકપ્રદેશ અનાનુપૂર્વી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો
વિષય છે અને બે પ્રદેશ અવક્તવ્યક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો વિષય છે. આ

તથા-નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ ।
 ય્યાદિપ્રદેશાવગાદ મેદતો નાનાવિધૈઃ=ત્રિભિન્નપ્રકારૈરાનુપૂર્વીદ્રવ્યૈઃ સર્વેઽપિ
 લોકો વ્યાપ્ત ઇતિ ભાવઃ ।

હૈં । હસ પ્રકાર અનાનુપૂર્વીં ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કો ઠહરને કે લિયે યે
 ત્રીન પ્રદેશ લોક કે હૈં । હન પ્રદેશોં મેં યદાપિ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ભી અવગા-
 હિત હોકર રહતા હૈ-પરંતુ ડસકી યહાં ગોળતા હૈ, ઓર શેષ દો દ્રવ્યોં
 કી મુલ્યતા હૈ, હસ પ્રકાર અવગાહિયોં કે ભેદ સે અવગાહરૂપ આકાશ
 મેં ભેદ આજાતા હૈ । અતઃ અનાનુપૂર્વીં ઓર અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં કે વિષય-
 મૂલ પ્રદેશત્રય કો છોડ કર ઘાકી કે સમસ્ત પ્રદેશલોક કે આનુપૂર્વી
 રૂપ હૈં । તથા ઇકપ્રદેશ અનાનુપૂર્વીં ઓર દો પ્રદેશ અવક્તવ્યક હૈં ।
 હસી કારણ ત્રીન પ્રદેશરૂપ દેશરૂપ દેશ સે ન્યૂનતા લોક મેં વિવક્ષિત કી
 ગઈ હૈ । અર્થાત્ લોક કે યે ૩ પ્રદેશ આનુપૂર્વીં નહીં હૈં ઓર ઘાકી કે
 સમસ્ત પ્રદેશ આનુપૂર્વીરૂપ હૈં । હસ પ્રકાર ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં મેં ઇક આનુપૂર્વીં
 દ્રવ્ય કો આશ્રિત કરકે ત્રીન પ્રદેશ ન્યૂન સમસ્ત લોક મેં આનુપૂર્વીં
 દ્રવ્ય અવગાહી હૈં । યહ કથન સિદ્ધ હો જાતા હૈ । તથા (નાનાદઢ્વાઈ
 પહુચ્ચ નિયમા) નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા લેકર સમસ્ત આનુપૂર્વીં દ્રવ્ય
 નિયમ સે સર્વલોક મેં અવગાહી હૈ । અર્થાત્ લોક કે ય્યાદિપ્રદેશોં મેં

રીતે અનાનુપૂર્વીં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવા માટે લોકના આ ત્રણ
 પ્રદેશો છે. તે પ્રદેશોમાં એ કે આનુપૂર્વીં દ્રવ્ય પણ અવગાહિત થઇને
 રહે છે, પરંતુ તેની ત્યાં ગોળતા છે અને બાકીના બે દ્રવ્યોની
 પ્રધાનતા છે. આ પ્રકારે અવગાહિત દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અવગાહરૂપ આકા-
 શમાં પણ લેહ આવી જાય છે. તેથી અનાનુપૂર્વીં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના
 વિષય રૂપ ત્રણ પ્રદેશો સિવાયના લોકના બાકીના સમસ્ત પ્રદેશો આનુપૂર્વીંરૂપ
 છે. તથા એક પ્રદેશ અનાનુપૂર્વીં રૂપ અને બે પ્રદેશો અવક્તવ્યક રૂપ છે.
 આ કારણે ત્રણ પ્રદેશરૂપ દેશની અપેક્ષાએ લોકમાં ન્યૂનતા પ્રકટ કરવામાં
 આવી છે. એટલે કે લોકના તે ત્રણ પ્રદેશો આનુપૂર્વીં રૂપ નથી અને બાકીના
 સમસ્ત પ્રદેશો આનુપૂર્વીં રૂપ છે. આ રીતે એ કથન સિદ્ધ થાય છે કે
 ક્ષેત્રાનુપૂર્વીંમાં એક અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્યને આશ્રિત કરીને ત્રણ પ્રદેશ ન્યૂન
 સમસ્ત લોકમાં આનુપૂર્વીં દ્રવ્યની અવગાહના છે.

તથા (નાનાદઢ્વાઈ પહુચ્ચ નિયમા) વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર
 કરવામાં આવે તો સમસ્ત આનુપૂર્વીં દ્રવ્ય નિયમથી જ સર્વલોકમાં અવગાહી

તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તાનામ્ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં પૃચ્છાર્યામશ્ને તુ एवं
 વિજ્ઞેયમ્-एकं द्रव्यं प्रतीत्य अनानुपूर्वीद्रव्यं नो संख्येयतमभागे भवति, नो संख्ये-
 येषु भागेषु भवति, नो असंख्येयेषु भागेषु भवति, नापि च सर्वलोके भवति,
 किन्तु-असंख्येयतमभागे भवति। अयं भावः-एकं द्रव्यमाश्रित्यानानुपूर्वीद्रव्यं

સ્થિત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે ભેદ સે વિભિન્ન પ્રકાર કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે
 સમસ્ત લોક વ્યાપ્ત હૈં । (નેગમવ્યવહારાણં) નેગમ વ્યવહારનયસંમત
 (અણાણુપુત્વીદ્વાહં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે (પુચ્છાણ) પ્રશ્નોં મેં તો
 હસ પ્રકાર સમસ્તના ચાહિયે (ઇમં દ્વન્) એક દ્રવ્ય કી (પદુચ્ચ) પ્રતીતિ
 કરકે અર્થાત્ એક અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કી અપેક્ષા કરકે-(નો સંસ્થેજ્જહમાગે
 હોજ્જા) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે સંસ્થાતવેં ભાગ મેં અવગાહી નહીં હૈં
 (નો સંસ્થેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, સંસ્થાત ભાગોં મેં અવગાહી નહીં હૈં)(નો-
 અસંસ્થેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા)અસંસ્થાત ભાગોં મેં અવગાહી નહીં હૈં(નો
 સર્વલોહ હોજ્જા)ઔર ન સર્વલોક મે અવગાહી હૈં કિન્તુ (અસંસ્થેજ્જહ
 ભાગે હોજ્જા) લોક કે અસંસ્થાતવેં ભાગ મેં અવગાહી હૈં । અયં ભાવ:-એક
 આનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો લેકર જય યહ વિચાર કિયા જાતા હૈ કિ અનાનુ-
 પૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે કૌન સે ભાગ મેં અવગાહિત હૈ ? તથ યહ ઉત્તર મિલતા
 હૈ કિ અસંસ્થાતવેં ભાગ મેં હી અવગાહી હૈ । ક્યૌંકિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય

(રહેલુ) છે. એટલે કે લોકના પ્રજુ આદિ પ્રદેશોમાં રહેલા આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના
 લેદથી વિભિન્ન પ્રકારના આનુપૂર્વી દ્રવ્યો વડે સમસ્ત લોક વ્યાપ્ત છે. (નેગમ-
 વ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અણાણુપુત્વી દ્વાહણં) અનાનુપૂર્વી
 દ્રવ્યોના (પુચ્છાણ) પ્રશ્નોમાં (વિષયમાં) તો આ પ્રમાણે સમજવું બેધએ-
 (ઇમં દ્વન્ પદુચ્ચ) એ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં
 આવે, તો (નો સંસ્થિજ્જહમાગે હોજ્જા) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં
 ભાગમાં અવગાહી નથી, (નો સંસ્થેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા), લોકના સંખ્યાત
 ભાગોમાં પણ અવગાહી નથી, (નો અસંસ્થેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અસંખ્યાત
 ભાગોમાં પણ અવગાહી નથી, (નો સર્વલોહ હોજ્જા) અને સમસ્ત લોકમાં
 પણ અવગાહી નથી, પરંતુ (અસંસ્થેજ્જહમાગે હોજ્જા) લોકના અસંખ્યાતમાં
 ભાગમાં અવગાહી છે. આ સઘળા કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે એક અનાનુ-
 પૂર્વી દ્રવ્યની આખતમાં એવો વિચાર કરવામાં આવે કે “એક અનાનુપૂર્વી
 દ્રવ્ય લોકના કેટલા ભાગમાં અવગાહી છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર એ છે કે તે
 લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ અવગાહી છે. કારણ કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય

લોકસ્ય સંખ્યેયતમે ભાગ એવ વર્તતે, એકપ્રદેશાવગાદસ્યૈવાનાનુપૂર્વીત્વેન વિવક્ષનાત્, એકપ્રદેશસ્ય ચ લોકાઃસંખ્યેયભાગવર્તિત્વાદિતિ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ સર્વલોકવ્યાપીનિ ભવન્તિ, એકૈકપ્રદેશાવગાદદ્રવ્યભેદાનાં સમસ્તલોકવ્યાપિત્વાદિતિ ભાવઃ ।

એવમ્=અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યવત્ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણ્યપિ મણિતવ્યાનિ=વક્તવ્યાનિ ।
અર્થ ભાવઃ—એકં દ્રવ્યમાશ્રિત્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યમપિ અસંખ્યેયતમમાગે એવ ભવતિ, દ્વિપ્રદેશાવગાદસ્યૈવાવક્તવ્યકદ્રવ્યત્વેનાભિધાનાત્ પ્રદેશદ્વયસ્ય ચ લોકાસંખ્યેય-રૂપ સે વહી દ્રવ્ય વિવક્ષિત હુઆ હૈ, જો લોક કે એકપ્રદેશ મેં હી-અવગાદ હોતા હૈ । લોક કા એકપ્રદેશ લોક કે અસંખ્યાતવે ભાગ મેં રહને વાલા હૈ । ફસલિયે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે અસંખ્યાતવે ભાગ મેં હી અવગાહી માના ગયા હૈ । (નાનાદ્રવ્યાઈ) નાના અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી (પડુચ્ચ) અપેક્ષા લેકર અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (ણિયમા) નિયમ સે (સવ્વલોપ હોજ્જા) સર્વલોક વ્યાપી માને ગયે હૈં । ક્યોંકિ એક એકપ્રદેશ મેં અવગાદ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કે ભેદ સમસ્ત લોક કો વ્યાપ કિયે હુપ રહતે હૈં । (એવં અવક્તવ્યગદ્વાણિ વિ ભાણિયદ્વાણિ) ફસી પ્રકાર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી તરહ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય મેં બી જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે એક અવક્તવ્યકદ્રવ્ય બી લોક કે અસંખ્યાતવે ભાગ મેં હી અવગાહી રહતા હૈ, ક્યોંકિ લોક કે પ્રદેશદ્વય મેં અવગાદહુપ દ્રવ્ય કો અવક્ત-

રૂપે એજ દ્રવ્ય વિવક્ષિત થયું છે કે જે લોકના એક પ્રદેશમાં જ રહેલું હોય છે. લોકના એક પ્રદેશ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહેલો હોય છે. તે કારણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યને લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ અવગાહી માનવામાં આવ્યું છે.

(નાનાદ્રવ્યાઈ પડુચ્ચ) વિવિધ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (ણિયમા સવ્વલોપ હોજ્જા) તો તેમને નિયમથી જ સર્વલોકવ્યાપી માનવામાં આવેલ છે, કારણ કે એક એક પ્રદેશમાં અવગાદ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોના લેદો સમસ્ત લોકને વ્યાપ કરીને રહેલાં હોય છે. (એવં અવક્તવ્યગદ્વાણિ વિ ભાણિયદ્વાણિ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોના જેવું જ કથન અવક્તવ્યક દ્રવ્યો વિષે પણ અહીં પ્રહણ કરવું બેઈએ એટલે કે એક અવક્તવ્યક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો એમ કહેવું બેઈએ કે એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ અવગાહી હોય છે, કારણ કે લોકના એ પ્રદેશોમાં જ અવગાદિત થયેલા દ્રવ્યને અવક્તવ્યક

भागवर्तित्वात्। नानाद्रव्याण्याश्रित्य तु अवक्तव्यकद्रव्याणि सर्वलोके सन्ति, नाना-
द्रव्यापेक्षया द्विप्रदेशावगाहानामवक्तव्यकद्रव्याणां समस्तलोकव्यापित्वादिति भावः।

ननु-आनुपूर्व्यादीनि त्रीण्यपि द्रव्याणि सर्वलोकव्यापीनि प्रोच्यन्ते, इत्थं च
येष्वाकाशप्रदेशेषु आनुपूर्वी, तेष्वेवाकाशप्रदेशेषु अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्ययोरपि
सद्भावः प्रतिपादितो भवति, एवं च कथमेकस्यैव क्षेत्रस्य परस्परविरुद्धं भिन्न-
विषयम् आनुपूर्व्यादिव्यपदेशत्रयं स्यात्? इति चेत्, अत्रोच्यते-व्यादिप्रदेशाव-

व्यक द्रव्यरूप से कहा गया है। लोक के असंख्यात प्रदेशों की अपेक्षा
से असंख्यातवे' भाग रूप पड़ते हैं। इसलिये अवक्तव्यक द्रव्य को लोक
के असंख्यातवे' भागवर्ती माना गया है। तथा नाना अवक्तव्यकद्रव्यों
की अपेक्षा से जितने भी अवक्तव्यक द्रव्य हैं, वे सब लोक के दो २
प्रदेशों में व्यापक रहने के कारण सर्वलोकव्यापी माने गये हैं।

शंका-आनुपूर्वी आदि जो द्रव्य हैं वे सब ही लोकव्यापी हैं ऐसा
आप कहते हैं। सो जिन आकाश प्रदेशों में आनुपूर्वी द्रव्य रहते हैं।
उन्हीं आकाश प्रदेशों में इतर दो अनानुपूर्वी अवक्तव्यक द्रव्य भी रहते
हैं। यही बात इस कथन से प्रतिपादित होती है। अतः इस प्रकार के
कथन से एक ही क्षेत्र में परस्पर विरुद्ध आनुपूर्वी आदि व्यपदेशत्रय
जो कि भिन्न भिन्न विषय से संबंधित है, कैसे संगत हो सकता है?

द्रव્ય કહેવામાં આવે છે. લોકના તે બે પ્રદેશોને લોકના અસંખ્યાત પ્રદેશોની
સાથે સરખાવવામાં આવે તો લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગની બરાબર જ હોય
છે. તે કારણે જ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્યને લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ
રહેલું માનવામાં આવ્યું છે. વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર-
વામાં આવે તો તે સઘળાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યો લોકના બધાં પ્રદેશોમાં વ્યાપ
હોવાને કારણે તેમને સર્વલોકવ્યાપી માનવામાં આવ્યાં છે.

શંકા—આપે અહીં એવું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે આનુપૂર્વી આદિ બે
દ્રવ્યો છે તેઓ સમસ્ત લોકવ્યાપી છે. આપના આ કથન વડે તો એવું
પ્રતિપાદિત થાય છે કે જે આકાશપ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો રહે છે, એજ
પ્રદેશોમાં અનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ રહે છે, આ પ્રકારનું
કથન સંગત લાગતું નથી, કારણ કે એક જ ક્ષેત્રમાં પરસ્પરથી વિરુદ્ધ એવાં
આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનો અવગાહ કેવી રીતે સંભવી શકે? ભિન્ન ભિન્ન
વિષયો સાથે સંબંધિત આ ત્રણેનો એક જ ક્ષેત્રમાં કેવી રીતે સદ્ભાવ હોઈ

ગાઠાદ્ દ્રવ્યાદ્ ભિન્નમેવ તાવદેકપ્રદેશાવગાઠમ્, તાભ્યાં ચ ભિન્નં દ્વિપ્રદેશાવગાઠમ્ । इत्थं च आधेयस्यावगाहकद्रव्यस्य भेदादाधारस्याप्यवगाहस्य क्षेत्रस्य भेदः

શંકાકાર કી હસ શંકા કા ભાવ યહ હૈ કિ એકહી ક્ષેત્ર મેં આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક હન તીનોં કી સંગતિ કૈસે હો સકતી હૈ? ક્યોંકિ યહ આનુપૂર્વી આદિકા ભાવ એક દૂસરે સે સર્વથા વિરુદ્ધ હૈ । ક્યોંકિ હનકા વિષય અપના ૨ ભિન્ન ૨ હૈ । યદિ યે તીનોં વ્યાપ્ત રૂપ હોતે તો એક ક્ષેત્ર મેં વટિત ખી હો જાતે-પરંતુ એસે તો યે-નહીં હૈ । યે તો તીનોં વ્યાપક દ્રવ્ય હૈ । હસ પ્રકાર જો આકાશપ્રદેશ આનુપૂર્વી રૂપ સે કહેં જાવેગેં વે હી અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યકરૂપ સે કૈસે વ્યપદિષ્ટ હો સકતે હૈ? હસલિયે અનાનુપૂર્વી આદિભાવ કો વ્યાપક માનને પર એક હી આકાશરૂપ ક્ષેત્ર મેં આનુપૂર્વી આદિ વ્યપદેશ ભિન્ન વિષયવાળા હોને કે કારણ પરસ્પર વિરુદ્ધ પડતા હૈ ।

ઉત્તર-આકાશરૂપ ક્ષેત્ર યદિ એકહી માના જાતા તો હસ પ્રકાર કી શંકા સંગત હો સકતી-પરંતુ એસાં નહીં હૈ । ક્યોંકિ ત્ર્યાદિપ્રદેશોં મેં અવગાઠ જો આનુપૂર્વીદ્રવ્ય હૈ ઉસસે એક પ્રદેશાગાઠ દ્રવ્ય ભિન્ન હૈ, ઓર હન દોનોં સે દ્વિપ્રદેશાવગાઠ દ્રવ્ય ભિન્ન હૈ । હસ પ્રકાર આધેય રૂપ જો

શકે? શંકાકારની શંકાનો ભાવાર્થ એવો છે કે આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ એક જ ક્ષેત્રમાં કેવી રીતે સંભવી શકે? આ આનુપૂર્વી આદિ ભાવો પરસ્પરથી ભિન્નકુલ વિરૂદ્ધ શુદ્ધધર્મો ધરાવે છે, તે પ્રત્યેકનો વિષય પરસ્પરથી ભિન્ન ભિન્ન છે, છતાં તેમને આપ સર્વલોક વ્યાપી કેવી રીતે કહો છો? જો તે ત્રણે વ્યાપ્ય રૂપ હોત તો એક ક્ષેત્રમાં તેમનો સદ્ભાવ માની શકાત, પરંતુ તેઓ વ્યાપ્ય રૂપ નથી તે ત્રણે વ્યાપક દ્રવ્ય રૂપ છે. આ પરિસ્થિતિમાં જો આકાશપ્રદેશોને આનુપૂર્વી રૂપે ઓળખવામાં આવશે, એજ આકાશપ્રદેશોને આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક રૂપે કેવી રીતે કહી શકાશે? તેથી અનાનુપૂર્વી આદિ ભાવોને વ્યાપક માનવામાં આવે તો એક જ આકાશરૂપ ક્ષેત્રમાં આનુપૂર્વી આદિ વ્યપદેશ ભિન્ન વિષયવાળો હોવાને કારણે પરસ્પરથી વિરૂદ્ધ પડે છે.

ઉત્તર—આકાશ રૂપ ક્ષેત્ર જો એકજ માનવામાં આવ્યું હોત તો આ પ્રકારની શંકા સંગત ગણી શકાત, પરંતુ એકું નથી કારણ કે ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાઠ જે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે, તેના કરતાં એક પ્રદેશાવગાઠ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ભિન્ન છે અને તે બન્ને કરતાં દ્વિપ્રદેશાવગાઠ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ભિન્ન છે. આ રીતે આધેય રૂપ જે અવગાઠક દ્રવ્ય છે, તેના ભેદથી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૩ સ્પર્શનાદ્વારનિરૂપણમ્

૪૭૭

સ્યાદેવ । તથા ચ વ્યપદેશમેદો યુક્ત એવ । દૃશ્યતે ચાનન્તધર્માધ્યાસિતે વસ્તૂનિ તત્તસહકારિ સન્નિધાનાત્તત્તદ્ધર્માભિવ્યક્તૌ સમકાલં વ્યપદેશમેદઃ, યથા લઙ્ગકુન્ત-કવચાદિયુક્તે દેવદત્તે લઙ્ગી કુન્તી કવચીત્યાદિવ્યપદેશમેદ ઇતિ નાસ્તિ કશ્ચિદ્ દોષઃ । ઇતિ ક્ષેત્રદ્વારમ્ ॥સૂ૦ ૧૧૨॥

અથ સ્પર્શનાદ્વારં પ્રરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—જેગમવવહારાણં આણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં લોગસ્સ કિં સંખે-
જ્જહ્મભાગં ફુસંતિ ? અસંખિજ્જહ્મભાગં ફુસંતિ ? સંખેજ્જે ભાગે
ફુસંતિ જાવ સઘ્વલોયં ફુસંતિ ? ઇગં દઘં પહુચ્ચ સંખિજ્જહ્મભાગં
વા ફુસહ્મ, અસંખિજ્જહ્મભાગં વા સંખેજ્જે ભાગે વા અસંખેજ્જે
ભાગે વા દેસૂણં વા લોગં ફુસહ્મ । નાણાદઘ્વાઈં પહુચ્ચ ણિયમા
સઘ્વલોયં ફુસંતિ । અણાણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં અવત્તઘ્વગદઘ્વાઈં ચ
જહ્મ સ્વેત્તં નવરં ફુસણા માણિયઘ્વા ॥સૂ૦ ૧૧૩॥

અવગાહકદ્રવ્ય હૈં ઉસકે મેદ સે આધારરૂપ અવગાહ્ય ક્ષેત્રમેં મેદ હો જાતા હી હૈં । હસપ્રકાર હોને સે વ્યપદેશ મેદ વહાં હોના યુક્ત હી હૈં । અસંગત નહીં । મિન્ન ૨ સહકારિયોં કી સન્નિધાનતા સે તત્તદ્ધર્મ કી અભિવ્યક્તિ હોનેપર અનન્ત ધર્માત્મક એક હી વસ્તુ મેં યુગપત્ વ્યપદેશ મેદ હોના દેખા જાતા હૈં । જૈસે લઙ્ગ, કુન્ત, કવચ, આદિ સે યુક્ત એક હી-દેવદત્ત વ્યક્તિ મેં લઙ્ગી, કુન્તી કવચી ઇત્યાદિ વ્યપદેશ મેદ દેખા જાતા હૈં । અતઃ અનાનુપૂર્વી આદિ ભાવ કો એક ક્ષેત્ર મેં વ્યાપક માનનેપર ઉસમેં આનુપૂર્વી આદિરૂપ સે વ્યપદેશ નિર્દોષ હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૧૨ ॥

આધારરૂપ અવગાહ્ય ક્ષેત્રમાં ભેદ આવી જાય છે. આ પ્રમાણે થવાથી ત્યાં વ્યપદેશ ભેદ થવો તે યુક્ત જ લાગે છે—અસંગત લાગતો નથી. જુદા જુદા સહકારીઓની સન્નિધાનતા વડે તે તે ધર્મની અભિવ્યક્તિ થાય ત્યારે અનન્ત ધર્માત્મક એક જ વસ્તુમાં યુગપત્ (એક સાથે) વ્યપદેશ ભેદ થતો જોવામાં આવે છે, જેમકે ખડ્ગ, કુન્ત, કવચ આદિ વડે યુક્ત એક જ દેવદત્ત આદિ વ્યક્તિમાં ખડ્ગી, કુન્તી, કવચી ઇત્યાદિ વ્યપદેશ—ભેદ જોવામાં આવે છે. તેથી અનાનુપૂર્વી આદિ ભાવોને એક ક્ષેત્રમાં વ્યાપક માનવામાં આવે તો તેમાં આનુપૂર્વી આદિ રૂપે વ્યપદેશ નિર્દોષ છે. ॥ સૂ૦ ૧૧૨ ॥

છાયા — નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશન્તિ ? સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ સ્પૃશન્તિ ? યાવત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય સંખ્યેયતમભાગં વા સ્પૃશતિ, અસંખ્યેયતમ-ભાગં વા સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ વા અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ વા દેશોનં વા લોકં સ્પૃશતિ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્ય-કદ્રવ્યાણિ ચ યથાક્ષેત્રં નવરં સ્પર્શના મણિતવ્યા ॥૨૦૦ ૧૧૩॥

ટોકા — ‘નેગમવ્યવહારાણં’ इत्यादि । नैगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि किं लोकस्य संख्येयतमभागं स्पृशन्ति ? असंख्येयतमभागं स्पृशन्ति ? इत्येवं पूर्व-वदेव मग्ना विज्ञेयाः । उत्तरमाह — ‘एगं द्रव्यं’ इत्यादि । एकं द्रव्यं प्रतीत्य आनुपूर्वीं द्रव्यं संख्येयतमभागं वा स्पृशति, असंख्येयतमभागं वा स्पृशति, संख्येयान् वा भागान्, असंख्येयान् वा भागान् स्पृशति, देशोनं वा

અવ સૂત્રકાર સ્પર્શનાદ્વાર કી પ્રપરુણા કરતે હૈં

“નેગમવ્યવહારાણં” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વી દ્રવ્યાં લોગસ્ય કિં સંખેયજહભાગં ફુસંતિ ?) નૈગમવ્યવહારનય સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કયા લોક કે સંખ્યાતવે ભાગ કા સ્પર્શ કરતે હૈં ? (અસંખેયજહભાગં ફુસંતિ ?) યા અસંખ્યાતવે ભાગ કા સ્પર્શ કરતે હૈં ? (સંખેયજેભાગે ફુસંતિ) યા સંખ્યાત ભાગોં કા સ્પર્શ કરતે હૈં ? (જાવ સવ્વલોયં ફુસ-તિ) યા યાવત્ સર્વલોક કા સ્પર્શ કરતે હૈં ? (એગં દ્રવ્યં પહુલ્લ)

ઉત્તર-એક દ્રવ્ય કો આશ્રિત કરકે (સંખિજજહભાગં વા) આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાતવે ભાગ કો (ફુસહ) સ્પર્શ કરતા હૈ— (અસંખિજજહભાગં વા) અસંખ્યાતવે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ (સંખિજજે

હવે સૂત્રકાર સ્પર્શનાદ્વારની પ્રપરુણા કરે છે—

“નેગમવ્યવહારાણં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદ્રવ્યાં લોગસ્ય કિં સંખેયજહ ભાગં ફુસંતિ, અસંખિજજહભાગં ફુસંતિ, સંખેયજે ભાગે ફુસંતિ, જાવ સવ્વલોયં ફુસંતિ ?) નૈગમવ્યવહારનયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું લોકના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે સમસ્ત લોકનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર-(એગં દ્રવ્યં પહુલ્લ) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (સંખિજજહભાગં વા ફુસહ) આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગનો પણ સ્પર્શ કરે છે, (અસંખિજજહભાગં વા) અસંખ્યાતમાં ભાગનો પણ

अनुयोगवन्धिका टीका सूत्र ११३ स्पर्शनाद्वारनिरूपणम्

४७९

लोकं स्पृशति । अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्योर्निरवकाशताप्रसङ्गात् पूर्ववत् लोकस्य देशोनानुपूर्वीद्रव्यस्पर्शना बोध्येति भावः । नानाद्रव्याण्याश्रित्य तु आनुपूर्वीद्रव्याणि नियमात् सर्वलोकं स्पृशन्ति । अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्याणां स्पर्शना तु अवैवाव्यवहितपूर्वोक्तक्षेत्रद्वारवद् बोध्या । इति स्पर्शनाद्वारम् ॥ सू० ११३ ॥

भागो वा असंखेज्जे भागे वा) संख्यात भागों को स्पर्श करता है, असंख्यात भागों को स्पर्श करता है' (देसूणं वा लोगं फुसइ) देशोन लोक का भी स्पर्श करता है । (नाणादव्वाइं पडुच्च गियमा सव्वल्लोयं फुसंति) नाना द्रव्यों की अपेक्षा करके तो आनुपूर्वीद्रव्य नियम से सर्वलोक का स्पर्श करते हैं (अणाणुपुव्वीदव्वाइं अवत्तव्वगदव्वाइं च जहा खेत्तं नवरं फुसणा भाणियव्वा) अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों की स्पर्शना तो यहीं पर अव्यवहित पूर्वोक्त क्षेत्रद्वार की तरह जानना चाहिये ।

भावार्थ—नैगमव्यवहारनय संमत आनुपूर्वी द्रव्य लोक के संख्यातवे भाग की कोई एक लोक के असंख्यातवे भाग की कोई एक लोक के संख्यात भागों की, कोई एक असंख्यात भागों की, और कोई एक देशोन सर्वलोक की स्पर्शना करते हैं । यहां पर जो कोई एक आनुपूर्वी द्रव्य को देशोन लोक की स्पर्शना करने का कथन किया है सो उसका कारण यह है कि यदि आनुपूर्वी द्रव्य समस्त लोक की स्पर्शना करें तो अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों को अवकाश प्राप्ति का अभाव होगा ।

स्पर्शं करे छे, (संखेज्जे भागे वा, असंखेज्जे भागे वा) स'ख्यात भागोनो पध्धु स्पर्शं करे छे, अस'ख्यात भागोनो पध्धु स्पर्शं करे छे, (देसूणं वा लोगं फुसइ) अने देशोन लोकनो पध्धु स्पर्शं करे छे. (नाणादव्वाइं पडुच्च गियमा सव्वल्लोयं फुसंति) विविध द्रव्योनी अपेक्षाये विचार करवाभां आवे, तो आनुपूर्वी द्रव्यो नियमथी सर्वलोकनो स्पर्शं करे छे. (अणाणुपुव्वीदव्वाइं अवत्तव्वगदव्वाइं च जहा खेत्तं नवरं फुसणा भाणियव्वा) अनानुपूर्वी अने अवक्तव्यक द्रव्योनी स्पर्शना विषेनु कथन पूर्वोक्त क्षेत्रद्वारना कथन सुज्ज ७ समज्जु जेधमे.

भावार्थ—नैगमव्यवहार नयसंमत आनुपूर्वी द्रव्योभांतुं केधं जेक आनुपूर्वी द्रव्य लोकना स'ख्यातभां भागनी, केधं जेक आनुपूर्वी द्रव्य लोकना स'ख्यात भागोनी, केधं जेक आनुपूर्वी द्रव्य लोकना अस'ख्यात भागोनी अने केधं जेक आनुपूर्वी द्रव्य देशोन सर्वलोकनी स्पर्शना करे छे. अही “जेक आनुपूर्वी द्रव्य देशोन सर्वलोकनी स्पर्शना करे छे.” आ प्रकारनुं जे कथन थयुं छे तेनुं कारण जे छे के जे जेक आनुपूर्वी द्रव्य समस्त लोकनी स्पर्शना करतुं होय, तो अनानुपूर्वी अने अवक्तव्यक

અથ કાલદ્વારપ્રરૂપયતિ—

પૂર્વમ્—જેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદ્વાઈં કાલઓ કેવચ્ચિરં
હોઈં ? એગં દદ્ધં પહુચ્ચ જહન્નેણં એગં સમયં ઉક્કોસેણં અસં-
ચિજ્જં કાલં । નાણાદદ્વાઈં પહુચ્ચ ણિયમા સવ્વદ્ધા । એવં
દોણિણ વિ ॥સૂ૦ ૧૧૪॥

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ।
એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્તર્કેણ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાના
દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વાદ્ધા । એવં દ્વે અપિ ॥સૂ૦ ૧૧૪॥

ટીકા—‘જેગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ ।

નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ? ઇતિ
પ્રશ્નઃ । ક્ષેત્રાવગાહપર્યાયસ્ય પ્રાધાન્યવિવક્ષયા ત્ર્યાદિપ્રદેશાવગાદ્રવ્યાણામેવાનુ-
અતઃ । ઇન દોનોં દ્રવ્યોં કો ખી અવકાશ પ્રાપ્ત હો ઇસલિયે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
કી સ્પર્શના દેશોન લોક કી કહી ગઈ હૈ । નાનો દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા યે
તીનોં હી દ્રવ્ય નિયમ સે સર્વલોક કી સ્પર્શના કરતે હૈ ॥સૂ૦ ૧૧૩॥

અથ સૂત્રકાર કાલદ્વાર કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

‘જેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વી’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહારનયસંમત (આણુપુર્વી-
દ્વાઈં) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (કાલઓ) કાલકી અપેક્ષા (કેવચ્ચિરં
હોઈં) કિતને સમયતક આનુપૂર્વી રૂપ સે રહતે હૈ ? પૂછને વાલે કા યહ
આશય હૈ કિ અનાનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કા ક્ષેત્ર મેં ત્ર્યાદિ પ્રદેશોં મેં અવ-

દ્રવ્યોને સ્પર્શના કરવા માટેના સ્થાનને અવકાશ જ ન રહે, તે બન્ને દ્રવ્યની
સ્પર્શના પણ અવકાશ મળી રહે તે માટે આનુપૂર્વી દ્રવ્યની સ્પર્શના સમસ્ત
લોકમાં કહેવાને બદલે દેશોન લોકમાં કહી છે. વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ
વિચાર કરવામાં આવે, તો આનુપૂર્વી આદિ ત્રણે દ્રવ્યો નિયમથી જ
સર્વલોકની સ્પર્શના કરે છે. ॥સૂ૦ ૧૧૩॥

હવે સૂત્રકાર કાળદ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે—

‘જેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વી’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (આણુપુર્વીદ્વાઈં)
સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો (કાલઓ) કાળની અપેક્ષાએ (કેવચ્ચિરં હોઈં ?) કેટલા
સમય સુધી આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે ? એટલે કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને ક્ષેત્રમાં—
ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈને રહેવાનો કાળ કેટલો છે ? કારણ કે

પૂર્વાદિભાવઃ પૂર્વમુક્તઃ, તેષામાનુપૂર્વાદિદ્રવ્યાણામવગાહસ્યતિકાલઃ કિયાન ભવતીતિ મધુરાશયઃ । ઉત્તરમાદ-‘एगं द्रव्यं’ इत्यादि । एकं द्रव्यं प्रतीत्य कालतः= कालमाश्रित्य आनुपूर्वीद्रव्यं जघन्येन एकं समयं वर्तते । इह द्विप्रदेशावगादस्य वा एक प्रदेशावगादस्य वा द्रव्यस्य परिणामवैचित्र्यात् प्रदेशत्रयाद्यवगाहभवने आनु पूर्वीद्रव्यप्रदेशः संजातः । एकं समयं तद्भावेन स्थित्वा पुनः पूर्ववदेव द्विप्रदेशाव- गादमेकप्रदेशावगादं वा तद् द्रव्यं संजातम्, अतो जघन्यत आनुपूर्वीद्रव्याणामेकं समयमवस्थिति बोध्येति भावः । तथा-उत्कर्षेण असंख्येयं कालं भवति । अयं

ગાહ રૂપ સે રહને કા સમય કિતના હૈ ? ક્યોં કિ યહ પહિલે કહા જા ચુકા હૈ કિ ક્ષેત્ર મેં અવગાહ પર્યાય કી પ્રધાનતા રૂપ સે વિવક્ષા હૈ । ઓર ફસલિયે ડ્વાદિ પ્રદેશોમેં અવગાહ હુઅ દ્રવ્યોમેં હી આનુપૂર્વી આદિ ભાવ કા કથન ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં કિયા ગયા હૈ । અતઃ પૂછને વાલે ને યહાં યહ પૂછા હૈ કિ વે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય ડ્વાદિ પ્રદેશ રૂપ ક્ષેત્રમેં કિતને સમય તક આનુપૂર્વી આદિ રૂપ સે અવગાહિત રહતે હૈ ?

ઉત્તર-(एगं) एक द्रव्य की (पङ्क्त) अपेक्षा लेकर (जहन्नेण) कम से कम (एगं समयं) एकसमय तक और (उक्कोसेण) उत्कृष्ट-व्यादा से ज्यादा (असंखिज्जं कालं) असंख्यात काल तक एक आनुपूर्वीद्रव्य क्षेत्र में अवगाहित रहता है । तात्पर्य कहने का यह है कि द्विप्रदेश में अव- गाहित या एक प्रदेश में अवगाहित हुआ द्रव्य परिणमन की विचि- त्रता से जब प्रदेश आदि में अवगाहित होता है उस समय उसमें आ-

એ વાત તો પહેલાં જ પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે ક્ષેત્રમાં અવગાહ પર્યાયની પ્રધાન રૂપે વિવક્ષા છે. અને તેથી જ ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવ- ગાહિત થયેલાં દ્રવ્યોમાં જ આનુપૂર્વી આદિ આવનું કથન ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં કરવામાં આવ્યું છે. તેથી અહીં પ્રશ્નકર્તાનો એવો પ્રશ્ન છે કે તે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય ત્રણ આદિ પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્રમાં કેટલા સમય સુધી આનુપૂર્વી આદિ રૂપે અવગાહિત રહે છે ?

ઉત્તર-(एगं द्रव्यं पङ्क्त) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (जहन्नेण एगं समयं) એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને (उक्कोसेण असंखिज्जं कालं) વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળ સુધી ક્ષેત્રમાં અવગાહિત રહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે પ્રદેશોમાં અવગાહિત થયેલું અથવા એક પ્રદેશમાં અવગાહિત થયેલું દ્રવ્ય પરિણમનની વિચિત્રતાથી જ્યારે ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થાય છે,

માવઃ—પદા તદેવ દ્રવ્યમસંસ્થયેયં કાલં તદ્વાવેન સ્થિત્વા પુનસ્તથૈવ દ્વિપ્રદેશાવગાદમેકમદેશાવગાદં વા જાયતે તદાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય ઉત્કર્ષતોઽસંસ્થયેયં કાલં સ્થિતિર્ભવતિ । અનન્તં કાલં તુ સ્થિતિર્ ન ભવતિ, એકમદેશાવગાદસ્યૈકદ્રવ્યસ્ય ઉત્કર્ષતોઽસંસ્થયેયકાલમેવાવસ્થાનાત્ । તથાનાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ તત્ત્વાદ્વા=સર્વકાલમેવ ભવન્તિ-વર્તન્તે इत्यर्थः । ય્યાદિપ્રદેશાવગાદદ્રવ્ય-

નુપૂર્વી એસા વ્યપદેશ હો જાતા હૈ । સો વહ દ્રવ્ય એક સમય તક આનુ-પૂર્વી રૂપ સે વહાં અવગાહિત રહકર વાદ મેં પહિલે કી તરહ હી યા તો દ્વિપ્રદેશ મેં અવગાહિત હો જાતા હૈ યા એક પ્રદેશ મેં અવગાહિત હો જાતા હૈ इसलिये आनुपूर्वी द्रव्यों की ज्यादि प्रदेशों में रहने की स्थिति एक समय की कही गई है । इसी प्रकार से जब आनुपूर्वी द्रव्य—असंख्यात काल तक तद्वाच से स्थित रहकर पुनः द्विप्रदेशावगाही बन जाता है तब आनुपूर्वी द्रव्य की उत्कृष्ट रूप से असंख्यात काल की स्थिति होती है ऐसा जानना चाहिये । अनन्त काल तक वहाँ पर रहने की, उसकी स्थिति नहीं होती है । क्योंकि एक अवगाहमे एक द्रव्य असं-ख्यात काल तक ही ज्यादा से ज्यादा रह सकता है । तथा (णाणा-द्व्वाइ' पडुच्च) अनेक आनुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा से आनुपूर्वी द्रव्यों का अवस्थान (नियमा सव्वद्धा) नियम से सार्वकालिक है । अर्थात्

ત્યારે તેમાં 'આનુપૂર્વી' પદનો વ્યપદેશ થાય છે-તેને આનુપૂર્વી રૂપે કહી શકાય છે. તે દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછું એક સમય સુધી ત્યાં આનુપૂર્વી રૂપે અવગાહિત રહીને ત્યાર બાદ પહેલાની જેમ જ બે પ્રદેશોમાં કે એક પ્રદેશમાં અવગાહિત થઈ જાય છે. તેથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં રહેવાની જઘન્ય સ્થિતિ એક સમયની કહી છે. એજ પ્રમાણે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે અવગાહિત રહીને ત્યાર બાદ બે પ્રદેશાવગાહી કે એક પ્રદેશાવગાહી બની જાય છે. આ પ્રકારે આનુપૂર્વી દ્રવ્યની આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે રહેવાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અસંખ્યાત કાળની થઈ જાય છે. તે અનન્ત કાળ સુધી ત્યાં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે રહી શકતું નથી, કારણ કે એક દ્રવ્ય એક અવગાહમાં વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળ સુધી જ રહી શકે છે.

તથા (નાણાદ્વાઈ' પડુચ્ચ) અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની આનુપૂર્વી દ્રવ્યો રૂપે રહે-વાની સ્થિતિ (નિયમા સવ્વદ્ધા) નિયમથી સાર્વકાલિક કહી છે. એટલે કે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૪ કાલદ્વારનિરૂપણમ્

૪૮૩

ભેદાનાં સર્વદૈવાવસ્થાનાત્ । एवं द्वे अपि । अयं भावः—यदा एकं द्रव्यमेकस्मिन् प्रदेशेऽवगाढमेकं समयं स्थित्वा ततो द्रयादिप्रदेशावगाढं भवति, तदा अनानुपूर्वी-द्रव्यस्य जघन्यत एकं समयं स्थितिः । यदा तु तदेवासंख्यातं कालं तद्रूपेण स्थित्वा ततो द्रयादिप्रदेशावगाढं भवति, तदा—उत्कर्षतोऽसंख्येयोऽवगाहस्थितिकालः ।

ગ્યાદિપ્રદેશોં મેં અવગાહ આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કે જો ભેદ હેં ઉનકા અવસ્થાન સર્વદા હી રહતા હે । (અંવં દોળિણવિ) હસી પ્રકાર સે જય એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક પ્રદેશ મેં એક સમય તક અવગાહ રહકર બાદ મેં દ્રયાદિપ્રદેશોં મેં અવગાહ હો જાતા હે તથા ઉસ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી જઘન્ય સે એક સમય કી સ્થિતિ માની જાતી હે । તથા જય વહી અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય અસં-ખ્યાત સમય તક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપ સે એક પ્રદેશ મેં અવગાહ રહકર બાદ મેં દ્રયાદિ પ્રદેશોં મેં અવગાહ-સ્થિત-હો જાતા હે તથા ઉત્કૃષ્ટ સે અસંખ્યાત કાલ તક હી ઉસ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યકી ઉસ એક પ્રદેશ મેં રહને કી સ્થિતિ માની જાતી હે, તથા અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોંકી અપેક્ષા અના-નુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી સ્થિતિ કા કાલ એકપ્રદેશ મેં અવગાહ હુએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યકે ભેદોં કા સર્વદા હી સદ્ભાવ હોને સે સાર્વકાલિક માના ગયા હે । દ્વિપ્રદેશ મેં અવગાહ અવક્તવ્યકદ્રવ્ય કા એક સમય કે બાદ એક પ્રદેશ મેં અથવા ગ્યાદિ પ્રદેશોં મેં અવગાહિત હો જાને પર જઘન્ય સે અવગાહ

ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત જે અનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ભેદો છે તેમનું અસ્તિત્વ સદા રહે છે જ (અંવં દોળિણ વિ) એજ પ્રમાણે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની જઘન્ય સ્થિતિ પણ એક સમયની કહી છે. એટલે કે એક અનાનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછું એક સમય સુધી એક પ્રદેશમાં અવગાહિત રહીને ત્યાર બાદ બે આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ જાય છે. તેથી જ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની જઘન્ય સ્થિતિ એક સમયની કહી છે. પરંતુ બ્યારે એજ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત સમય સુધી એક પ્રદેશમાં અવગાહિત રહીને ત્યાર બાદ બે આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહ (સ્થિત) થઈ જાય છે, ત્યારે તે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની તે એક પ્રદેશમાં રહેવાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અસંખ્યાત કાળની મનાય છે. જે અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સ્થિતિનો કાળ એક પ્રદેશમાં અવગાહિત થયેલા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યના ભેદોનો સર્વદા સદ્ભાવ હોવાથી સાર્વકાલિક માનવામાં આવ્યો છે.

બે પ્રદેશોમાં અવગાહ (સ્થિત) અવક્તવ્યક દ્રવ્ય એક સમય પછી એક પ્રદેશમાં અથવા ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ જાય, તો જઘન્યની

નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ સર્વકાલમ્, એક પ્રદેશાવગાહદ્રવ્યભેદાનાં સર્વદૈવ સદ્ભાવાત્ ।

અવક્તવ્યકદ્રવ્યસ્ય તુ દ્વિપ્રદેશાવગાહસ્ય સમયાદૂર્ધ્વમેકસ્મિન્ પ્રદેશે વ્યાદિષુ વા પ્રદેશેષ્વવગાહમતિપત્તૌ જઘન્યત એકઃ સમયોઽવગાહસ્થિતિકાલઃ અસંખ્યેય-કાલાદૂર્ધ્વ દ્વિપ્રદેશાવગાહં પરિત્યજતરતસ્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યસ્ય ઉત્કર્ષતોઽસંખ્યેયો-ઽવગાહસ્થિતિકાલઃ સિધ્યતિ । નાના દ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ સર્વકાલં, દ્વિપ્રદેશાવગાહ-દ્રવ્યભેદાનાં સદૈવ સદ્ભાવાદિતિ । સમાનશક્તવ્યત્વાદાહ-‘એવં દોષિણિ વિ’-ત્તિ-એવં દ્વે અપિ बोध्ये ॥સૂ. ૧૧૪॥

સ્થિતિકા કાલ એક સમય છે । તથા અસંખ્યાત કાલ કે બાદ દ્વિપ્રદેશોં મેં અપને અવગાહ કો છોડને વાલે ઉસ અવક્તવ્યકદ્રવ્ય કા ઉત્કૃષ્ટ રૂપ સે અવગાહ સ્થિતિકા કાલ અસંખ્યાતકાલ હેં । તથા નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા દ્વિપ્રદેશ મેં અવગાહ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે ભેદોં કા સર્વદા હી સદ્ભાવ રહને કે કારણ ઉનકા અવગાહ-સ્થિતિકા કાલ સર્વ-કાલ માના ગયા છે । હસપ્રકાર આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી તરહ હન દોનોં દ્રવ્ય કી અવગાહ-સ્થિતિકા સમય જાનના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ-હસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને યહ સ્પષ્ટ કિયા છે કિ આનુ-પૂર્વી આદિ દ્રવ્ય વ્યાદિ પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર મેં અપને ૨ રૂપ મેં કથ તક સ્થિત રહતે હેં । હન વાતોં કા ઉત્તર ઉન્હોંને એક દ્રવ્ય ઓર અનેક દ્રવ્ય કો આશ્રિત કરકે દિયા છે । જિસકા નિષ્કર્ષાર્થ યહ છે કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય વ્યાદિ પ્રદેશોં મેં એક સમય તક સ્થિત રહકર યદિ એક યા દ્વિપ્રદેશ

અપેક્ષાએ તેની અવગાહસ્થિતિનો કાળ એક સમયનો કહ્યો છે. તથા અસં-ખ્યાત કાળ બાદ બે પ્રદેશોમાંના પોતાના અવગાહને છોડનારા તે અવક્ત-વ્યક દ્રવ્યની વધારેમાં વધારે અવગાહસ્થિતિ અસંખ્યાતકાળની કહી છે. તથા અનેક અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તે બે પ્રદે-શોમાં અવગાહ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના લેહોને સર્વદા સદ્ભાવ જ રહેવાને કારણે તેમની અવગાહસ્થિતિ સાર્વકાલિક માનવામાં આવી છે. આ પ્રકારે આ બન્ને દ્રવ્યોની અવગાહસ્થિતિનો કાળ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અવગાહસ્થિતિ કાળ પ્રમાણે જ સમજવો જોઈએ.

ભાવાર્થ-આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો ત્રણ આદિ પ્રદેશોરૂપ ક્ષેત્રમાં પોતપોતાના મૂળ રૂપે કેટલા કાળ સુધી અસ્તિત્વમાં રહે છે ? આ વાતનો ઉત્તર સૂત્રકારે એક દ્રવ્ય અને અનેક દ્રવ્યોને અનુલક્ષીને આપ્યો છે. આ સમસ્ત સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં એક સમય સુધી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-

अनुयोगवन्दिका टीका सूत्र ११५ अन्तरद्वारनिरूपणम्

४८५

अथान्तरद्वारं प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—गेगमववहाराणं आणुपुर्वीद्वानमंतरं कालओ केवच्चिरं
होई? तिणहंपि एगं दठवं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं
असंखेजं कालं, नाणादव्वाइं पडुच्च णरिथि अंतरं ॥सू० ११५॥

में अवगाहित हो जाता है तो वहाँ पर एक अनानुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा
आनुपूर्वी द्रव्य का स्थिति काल माना जाता है। और यही एक आनुपू-
र्वीद्रव्य उन व्यादि प्रदेशों में असंख्यात काल तक अवगाहित रहकर
बाद में एकप्रदेश या दो प्रदेश में अवगाहित हो जाता है तो इस स्थिति
में इसका समय असंख्यात काल का माना जाता है। यह संख्यात
काल का समय उत्कृष्ट है। और एक समय का काल जघन्य है, नाना
आनुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा से यह समय सर्वदा का है क्योंकि व्यादि
में ऐसा कोई सा भी समय नहीं है कि जिसमें कोई न कोई आनुपूर्वी
द्रव्य का भेद अवगाहित न हो। इसी प्रकार से अनानुपूर्वी और
अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय में भी ऐसा ही वक्तव्य निर्धारित
कर लेना चाहिये ॥ सू० ११४ ॥

इपे स्थित रहीने जे ओक प्रदेशमां अथवा जे प्रदेशोमां अवगाहित यर्ध
जाय छे, ते ओ परिस्थितिमां ओक आनुपूर्वी द्रव्यनी अपेक्षाओ आनुपूर्वी
द्रव्यनो स्थितिकाण ओक समयनो गणाय छे. परन्तु ओज आनुपूर्वी द्रव्य
जे ते त्रलु आदि प्रदेशोमां असंख्यात काण सुधी अवगाहित रहीने तयार
भाह ओक प्रदेशमां अथवा जे प्रदेशोमां अवगाहित यर्ध जाय, ते ओवी
परिस्थितिमां तेनो स्थितिकाण असंख्यातकाणनो भानवामां आवे छे. आ
असंख्यातकाणना समयने तेनो उकृष्ट काण समजवो. अने ओक समयना
पूरेकित काणने तेनो जघन्य काण समजवो. अनेक आनुपूर्वी द्रव्योनी
अपेक्षाओ विचार करवामां आवे तो ते समय सार्वकालिक छे, कारण के
त्रलु आदि प्रदेशोमां ओवो कोर्ध पलु समय नथी के जेमां कोर्धने कोर्ध
आनुपूर्वी द्रव्यनो लेह अवगाहित न होय अनानुपूर्वी अने अवक्तव्यक
द्रव्योना ओक अने जे प्रदेशोमां रहेवाना काणना संअधमां पलु आनुपूर्वी
द्रव्योना काणना जेवुं ज कथन समजवुं ॥सू० ११४॥

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામન્તરં કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવતિ ? ત્રયાણામપિ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નાસ્તિ અન્તરમ્ ॥મૂ૦ ૧૧૫॥

ટીકા—‘જેગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ । નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામ્ અન્તરં કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવતિ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘તિહં પિ’ ઇત્યાદિ । ત્રયાણામ્=આનુપૂર્વ્યનાનુપૂર્વ્યવ્યક્તદ્રવ્યાણામ્ એકં સમયં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમન્તરમ્ । ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમન્તરમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ નાસ્તિ અન્તરમ્ । પ્રશ્નકોટી આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય પ્રશ્નઃ કિયતે

અથ સૂત્રકાર અન્તરદ્વાર કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં—

“જેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જેગમવ્યવહારાણં) નૈગમ વ્યવહારસંમત (આણુપુત્રી-દ્રવ્યાણં) આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા (અંતરં) અન્તર-વ્યવધાન-(કાલઓ) કાલકી અપેક્ષા (કિયચ્ચિરં હોઈ) કિતને સમય કા હોતા હૈ ?

ઉત્તર—(તિહં પિ એગં દવ્વં પહુચ્ચ) આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી, ઓર અવ્યક્તવ્યક્ત ઇન દ્રવ્યોં કે એક સમય કો આશ્રિત કરકે (જહન્ને ણં) જઘન્ય સે (એકં સમયં) એક સમયકા અંતર હૈ (ઉક્કોસેણં) ઉત્કૃષ્ટ સે (અસંખેજ્જં કાલં) અસંખ્યાતકાલ કા અંતર હૈ । (નાણા દવ્વાઈં પહુચ્ચ) તથા નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે (ણત્થિ અંતરં) કોઈ અન્તર નહીં હૈ ।

શંકા—પ્રશ્ન કોટિ મેં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કો આશ્રિત કરકે પ્રશ્ન કિયા ગયા

હવે સૂત્રકાર અન્તરદ્વારતું નિરૂપણ કરે છે—

“જેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (આણુપુત્રી દ્રવ્યાણં) આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં (અન્તરં) અન્તર (વ્યવધાન, આંતરે) (કાલઓ કિયચ્ચિરં હોઈ) કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમયનું હોય છે ?

ઉત્તર—(તિહં પિ એગં દવ્વં પહુચ્ચ) આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવ્યક્તવ્યક્ત આ ત્રણેના એક એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (જહન્નેણં એકં સમયં) એછામાં એછું એક સમયનું અને (ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં) ઉત્કૃષ્ટથી અસંખ્યાત કાળનું અંતર હોય છે. (નાણાદવ્વાઈં પહુચ્ચ) અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (ણત્થિ અંતરં) કોઈ અન્તર નથી.

શંકા—પ્રશ્નમાં તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યો વિષે પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે.

849.

For Private and Personal Use Only

દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યામિવ અનન્ત કાલમન્તરં ભવતિ, યતો દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યાં વિવક્ષિતદ્રવ્યાદન્યે દ્રવ્યવિશેષા અનન્તા ભવન્તિ । તૈશ્વ સદ્ ક્રમેણ તસ્ય સંયોગે પુનઃસ્વરૂપપ્રાપ્તૌ અનન્તં કાલમન્તરં ભવતિ । અત્ર તુ વિવક્ષિતાવગાહક્ષેત્રાદન્યત્ ક્ષેત્રમસંખ્યેયમેવ । પ્રતિસ્થાનં ચ અવગાહનામાશ્રિત્ય અસંખ્યેયકાલં સંયોગસ્થિતિઃ । તતશ્ચાસંખ્યેયે ક્ષેત્રે પરિભ્રમદ્ દ્રવ્યં પુનરપિ કેવલમ્, અન્યસંયુક્તં વાઽસંખ્યેયકાલાનન્તરં તસ્મિન્ વિવક્ષિત-પ્રદેશ એવાવગાહનાં કુર્યાત્ ।

કાલ કા માના જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર દ્રવ્યાનુપૂર્વીં મેં ચિરહકાલ માના ગયા હૈ ઉસ પ્રકાર સે યહાં ચિરહકાલ અનન્ત કાલકા નહીં માના ગયા હૈ । કયોં કિ દ્રવ્યાનુપૂર્વીં મેં વિવક્ષિત દ્રવ્ય સે દૂસરે જો દ્રવ્ય હૈ વે અનન્ત હૈ । અતઃ ઉનકે સાથ ક્રમ ક્રમ સે ઉસકા સંયોગ હોને પર ફિર સે અપને સ્વરૂપ કી પ્રાપ્તિ મેં ઉસે અનન્ત કાલ લગ્ગ જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પુનઃ સ્વરૂપ પ્રાપ્તિ મેં અન્તર અનંત કાલ કા સધ જાતા હૈ । પરન્તુ યહાં વિવક્ષિત-અવગાહ ક્ષેત્ર સે અન્ય ક્ષેત્ર અસંખ્યાતપ્રદેશ પ્રમાણ હી હૈ, અનંત પ્રદેશ પ્રમાણ નહીં । ઇસલિયે પ્રતિસ્થાન મેં, અવગાહના કો આશ્રિત કરકે જો ઉસકી સંયોગ સ્થિતિ હૈ વહ અસંખ્યાતકાલ કી હૈ । અતઃ વિવક્ષિત પ્રદેશ સે અન્ય અસંખ્યાત ક્ષેત્ર મેં પરિભ્રમણ કરતા હુઆ દ્રવ્ય પુનઃ ઉસી વિવક્ષિત પ્રદેશ મેં અન્ય દ્રવ્ય સે સંયુક્ત હોકર યા ઇકાકી હી અસંખ્યાતકાલ કે બાદ અવગાહિત હો જાતા હૈ ।

છે. અહીં એ વાત ધ્યાનમાં રાખવા જેવી છે કે દ્રવ્યાનુપૂર્વીંમાં ઉત્કૃષ્ટ (વધારેમાં વધારે) અનન્ત કાળનો વિરહકાળ કહ્યો છે, પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીંમાં ઉત્કૃષ્ટ વિરહકાળ અનન્તકાળનો કહેવાને બદલે અસંખ્યાતકાળનો કહ્યો છે. તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

દ્રવ્યાનુપૂર્વીંમાં વિવક્ષિત દ્રવ્ય સિવાયના જે અન્ય દ્રવ્યો છે તે અનન્ત છે. તેથી તેમની સાથે તેનો ક્રમશઃ સંયોગ થઈને ફરીથી પોતાના સ્વરૂપની પ્રાપ્તિ થવામાં તેને અનન્તકાળનું અન્તર પડી જાય છે. આ પ્રકારે પુનઃ સ્વરૂપ પ્રાપ્તિમાં અનન્તકાળનું અન્તર પડવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે. પરન્તુ અહીં (ક્ષેત્રાનુપૂર્વીંમાં) વિવક્ષિત અવગાહક્ષેત્ર સિવાયનાં અન્યક્ષેત્રો તો અસંખ્યાતપ્રદેશ પ્રમાણે જ છે—અનન્ત પ્રદેશપ્રમાણ નથી તેથી પ્રત્યેક સ્થાનમાં અવગાહનાને આશ્રિત કરીને જે તેની સંયોગસ્થિતિ છે, તે અસંખ્યાતકાળની જ છે તેથી કોઈ વિવક્ષિત પ્રદેશમાંથી નીકળીને અન્ય અસંખ્યાત ક્ષેત્રોમાં પરિભ્રમણ કરીને તે દ્રવ્ય પોતે એકલું અથવા અન્ય દ્રવ્યની સાથે સંયુક્ત થઈને તે વિવક્ષિત પ્રદેશમાં અસંખ્યાતકાળ બીતીય થયા બાદ જ અવગાહિત થઈ જાય છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૫ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૪૮૯

નનુ મવત્વસંખ્યેયઃ પ્રદેશઃ, પરન્તુ તત્રૈવ પ્રદેશે દ્રવ્યસ્ય પુનઃ પુનઃ પરિભ્રમણેન અનન્તકાલાન્તર્યમપિ પ્રાપ્યતે, તદેશ કથમનન્તકાલમન્તરં નોચ્યતે ? इति चेत्, उच्यते, विवक्षितप्रदेशादसंख्येयप्रदेशे क्षेत्रेऽसंख्येयकालमेव द्रव्यं परिभ्रमति, तदनन्तरं पुनर्विवक्षितक्षेत्रे एव तद् द्रव्यं नियमादागच्छति, वस्तुस्थितिस्वभाव्यादिति । अतो नास्ति कश्चिद्विषयः । यद्वा ज्यादि प्रदेशलक्षणाद् विवक्षितक्षेत्रात् तदानुपूर्वीद्रव्यमन्यत्रगतं, ततस्तत् क्षेत्रम् असंख्येयकालाद्ध्वं स्वभावादेव तेनैव आनुपूर्वीद्रव्येण, वर्णगन्धरसस्पर्शसंख्यादिधर्मैः सर्वथा तुल्येन अन्येन वा आनुपूर्वी-

શંકા—અવગાહના ક્ષેત્ર સે અન્યક્ષેત્ર ખલે હી અસંખ્યાતપ્રદેશ-ચાલા હો-ઇસ મેં કોઈ વાધા નહીં હૈ। પરન્તુ ઇસી પ્રદેશોં મેં બાર ૨ પરિભ્રમણ કરને સે દ્રવ્ય કો ઇસ પરિભ્રમણ મેં અનન્ત કાલ કા બી અન્તર લગ સકતા હૈ। અતઃ સૂત્રકારને યહાં અનન્તકાલ કા અન્તર કયોં નહીં કહા ?

ઉત્તર—વિવક્ષિત પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર સે અન્ય અસંખ્યાત પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર મેં દ્રવ્ય કા પરિભ્રમણ અસંખ્યાતકાલ તક હી હોતા હૈ। ઇસકે બાદ વહ દ્રવ્ય નિયમ સે ફિર વિવક્ષિત ક્ષેત્ર મેં હી આજાતા હૈ। કયોં કિ એસા હી વસ્તુસ્થિતિ કા સ્વભાવ હૈ। અથવા—જબ જ્યાદિ પ્રદેશરૂપ વિવક્ષિત ક્ષેત્ર સે વહ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અન્ય પ્રદેશ મેં ચલા જાતા હૈ’ બાદ મેં વહ ક્ષેત્ર સ્વભાવ સે હી અસંખ્યાતકાલ કે પચાત્ ઇસી આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય સે યા વર્ણ, ગંધ, રસ, સ્પર્શ, एवं संख्या आदि धर्मों से

શંકા—અવગાહના ક્ષેત્ર સિવાયનું જે અન્ય ક્ષેત્ર છે તે કહે અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળું કહેય તે વાત માનવામાં અમને કોઈ વાંધો નથી પરન્તુ જોજ પ્રદેશોમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરવામાં તે દ્રવ્યને અનન્તકાળનું અન્તર પણ લાગી શકે છે. છતાં સૂત્રકારે અહીં અનન્તકાળના અન્તરને બહેલે અસંખ્યાતકાળનું અન્તર શા માટે કહ્યું છે ?

ઉત્તર—વિવક્ષિત પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્રમાંથી નીકળીને અન્ય અસંખ્યાત પ્રદેશ રૂપ ક્ષેત્રમાં દ્રવ્યનું પરિભ્રમણ અસંખ્યાત કાળ સુધી જ થાય છે. ત્યાર બાદ તે દ્રવ્ય નિયમથી જ તે વિવક્ષિત ક્ષેત્રમાં જ આવી જાય છે, કારણ કે તેના જોવો જ સ્વભાવ છે.

અથવા—ત્રણ આદિ પ્રદેશો રૂપ કોઈ વિવક્ષિત ક્ષેત્રમાંથી નીકળીને તે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અન્ય પ્રદેશમાં ચાલ્યું જાય છે, અને ત્યારબાદ તે ક્ષેત્ર સ્વભાવથી જ અસંખ્યાતકાળ બાદ જોજ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સાથે, અથવા વજ્ર,

૪૯૦

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

દ્રવ્યેણ સંયુજ્યતે इति नियमात् असंख्येयकाकोत्तरं तथाविधानुपूर्वीद्रव्येण तत्क्षेत्रं
 संयुज्यते एवेति असंख्येयकात्मैव अन्तरं भवतीति नास्ति कश्चिद् दोषः । तथा-
 नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । व्यादिप्रदेशावगादानि सर्वाण्यपि आनु-
 पूर्वीद्रव्याणि युगपत् स्वभावं विहाय पुनस्तथैव जायन्ते इति तु न कदाचिदपि संभ-
 वति, असंख्येयानां तेषां सर्वदैव विद्यमानत्वादिति नानाद्रव्याश्रयपक्षे नास्ति अन्तर-
 मिति भावः । एवमनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यविषयेऽपि अन्तरभावना कर्त्तव्या । सू. ११५।

उसी के तुल्य किसी दूसरे आनुपूर्वी द्रव्य से संयुक्त हो जाता है। ऐसा नियम है। इस नियम के अनुसार असंख्यात काल का ही अन्तर होता है। नाना द्रव्यों की अपेक्षा से अन्तर नहीं है ऐसा जो कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि व्यादिप्रदेशों में अवगाह हुए समस्त भी आनुपूर्वी द्रव्य एक साथ अपने स्वभाव को छोड़कर पुनः उन्हीं व्यादि-प्रदेशों में अवगाहित हो जाते हैं ऐसी बात किसी भी समय में संभवित नहीं होती है। क्योंकि असंख्यात आनुपूर्वी द्रव्य सदा ही विद्यमान रहते हैं। इसलिये नाना द्रव्यों की अपेक्षा अन्तर नहीं है। इसी प्रकार से अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य के विषय में भी अन्तर भावना जाननी चाहिये ॥सू० ११५॥

ગાંધ, રમ, સ્પર્શ અને સંખ્યા આદિ ધર્મોની અપેક્ષાએ તેના બેમાં જ કોઈ બીજા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સાથે સંયુક્ત થઈ જાય છે એવો નિયમ છે. આ નિયમ પ્રમાણે અસંખ્યાતકાળનું અન્તર વ્યતીત થયા બાદ તે પ્રકારના આનુપૂર્વી દ્રવ્ય વડે તે ક્ષેત્ર અવશ્ય સંયુક્ત થઈ જાય છે. આ રીતે અસંખ્યાતકાળનું જ અન્તર પડવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે.

અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો કાળની અપેક્ષાએ કોઈ અન્તર જ પડતું નથી, આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થયેલાં સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો એક સાથે પોતાના સ્વભાવને છોડીને ફરી એજ ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ જતાં હોય એવી વાત કોઈ પણ સમયે સંભવી શકતી નથી, કારણ કે અસંખ્યાત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સદા વિદ્યમાન રહે જ છે. તે કારણે અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અન્તરનો અભાવ ઠહો છે. એજ પ્રમાણે અનનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ અન્તર (વિરહકાળ)નું કથન સમજી લેવું જોઈએ. ॥સૂ. ૧૧૫॥

इत्थमन्तरद्वारं व्याख्याय सम्पत्ति भागद्वारं व्याख्यातुमाह—

मूलम्—नेगमव्यवहाराणं आणुपुर्वीद्व्याणं सेसद्व्याणं कह-
भागे होज्जा ? तिणिण वि जहा दव्वाणुपुर्वीए ॥सू० ११६॥

छाया—नेगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणां कियद् भागे
भवन्ति ? त्रीण्यपि यथा द्रव्यानुपूर्व्याम् ॥सू० ११६॥

टीका—‘नेगमव्यवहाराणं’ इत्यादि—

नेगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणाम्=अनानुपूर्व्यवक्तव्यक
द्रव्याणां कतिभागे=कियति भागे भवन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—त्रीण्यपि यथा
द्रव्यानुपूर्व्याम् । यथा द्रव्यानुपूर्व्यां भागद्वारे प्रतिपादितं तथैवात्रापि त्रयाणामपि
द्रव्याणां विषये बोध्यम् । अयं भावः—आनुपूर्वीद्रव्याणि अनानुपूर्व्यवक्तव्यकरूप-
शेषद्रव्येभ्योऽसंख्येयैर्भागैरधिकानि । शेषद्रव्याणि तु तेषामसंख्येयभागे वर्धन्ते ।

अथ सूत्रकार भागद्वार का व्याख्यान करते हैं—

“नेगम व्यवहाराणं इत्यादि”

शब्दार्थ— (नेगमव्यवहाराणं) नेगमव्यवहारनय संमत (आणुपुर्वी-
द्व्याणं) समस्त आनुपूर्वीद्रव्य (सेसद्व्याणं) शेष द्रव्यों के—अनानुपूर्वी
और अवक्तव्यक द्रव्यों के (कहभागे) कितने भागों में हैं ? (तिणिणवि-
जहा दव्वाणुपुर्वीए)

उत्तर—जिस प्रकार द्रव्यानुपूर्वी में भागद्वार में प्रतिपादन किया है
उसी प्रकार से यहां पर तीनों ही द्रव्यों के विषय में जानना चाहिये ।
इसका भाव यह है—अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा
आनुपूर्वी द्रव्य उनके असंख्यात भागों से अधिक है । तथा शेष द्रव्य
आनुपूर्वीद्रव्यों के असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

इसे सूत्रकार भागद्वारनुं निरूपण करे छे—

(नेगमव्यवहाराणं) नेगमव्यवहार नयसंमत (आणुपुर्वीद्व्याणं) समस्त
आनुपूर्वी द्रव्यो (सेसद्व्याणं) आधीनां द्रव्येना (अनानुपूर्वी) अने अवक्त-
व्यक द्रव्येना (कहभागे) केद्वारभां भागप्रमाण डोय छे ?

उत्तर—(तिणिण वि जहा दव्वाणुपुर्वीए) द्रव्यानुपूर्वी भाग द्वारभां जेवुं
प्रतिपादन करवामां आवुं छे, जेवुं ज कथन अही पणु त्रणे द्रव्यो विषे
समजवुं ओटले के अनानुपूर्वी अने अवक्तव्यक द्रव्यो करतां आनुपूर्वी
द्रव्य तेमना असंख्यातभां भागप्रमाण वधारे छे तथा आधीना द्रव्यो आनु-
पूर्वी द्रव्यो करतां असंख्यातभां भागप्रमाण छे.

નનુ 'વ્યાપિપદેશાવગાદાનિ દ્રવ્યાણિ આનુપૂર્વ્યઃ, એકેકપ્રદેશાવગાદાનિ દ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વ્યઃ, દ્વિ દ્વિ પ્રદેશાવગાદાનિ દ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યકાનિ' इति पूर्व प्रतिपादितम् । तान्येतानि त्रिविधान्यपि द्रव्याणि सर्वलोकव्यापीनि । तेषां मध्ये युत्तया विचारणायां कृतायामानुपूर्वीद्रव्याणां सर्वस्तोकता प्राप्यते । तथाहि-लोके किल असत्कल्पनया त्रिंशत्प्रदेशाः कल्प्यन्ते । तेषु त्रिंशत्प्रदेशेषु अनानुपूर्वीद्रव्याणि त्रिंशत्संख्यकानि भवन्ति एकैकप्रदेशावगाढत्वात् । अवक्तव्यकद्रव्याणि तु पञ्चदश, द्वि द्वि प्रदेशावगाढत्वात् । आनुपूर्वीद्रव्याणि तु यदि त्रिप्रदेशनिष्पन्नान्येव गण्यन्ते

શંકા-યહ પહિલે હી કહા જા ચુકા હૈ । કિ વ્યાપિપ્રદેશોં મેં સ્થિત દ્રવ્ય આનુપૂર્વીં હૈં એક એક પ્રદેશોં મેં સ્થિત અનાનુપૂર્વીં હૈં, ઔર દો દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત દ્રવ્ય અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં । યે તીનોં હી દ્રવ્ય સર્વલોક વ્યાપી હૈં । इनके बीच में, युक्ति से विचारणा होने पर आनुपूर्वी द्रव्य सबसे थोड़े आते हैं । इसका खुलासा इस प्रकार से है- “लोक असंख्यात प्रदेशी है-सो असंख्यात प्रदेश को असत्कल्पना से ३०, मानकर उनप्रदेशों के स्थानपर ३०, तीस रखलेना चाहिये-इन ३०, प्रदेशों में एक एक प्रदेश पर अनानुपूर्वी द्रव्य अवगाहित हैं इसलिये अनानुपूर्वीद्रव्य ३० हो जाते हैं । तथा अवक्तव्यक द्रव्य लोक के दो दो प्रदेशों में एक-एक अवगाढ होने के कारण १५, आते हैं । तथा आनुपूर्वीद्रव्य लोक के ३-३ तीन २ प्रदेशों में अवगाढ हैं इसलिये उनकी संख्या १०

શંકા-આગળ એવું' પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે ત્રણ, ચાર આદિ પ્રદેશોમાં સ્થિત દ્રવ્યને આનુપૂર્વી' કહે છે, એક એક પ્રદેશમાં સ્થિત દ્રવ્યને અનાનુપૂર્વી' કહે છે અને બીજા પ્રદેશોમાં સ્થિત દ્રવ્યને અવક્તવ્યક કહે છે. આ ત્રણે દ્રવ્ય સર્વલોક વ્યાપી છે એ બુદ્ધિપૂર્વક વિચાર કરવામાં આવે તો તે ત્રણે દ્રવ્યોમાંથી આનુપૂર્વી' દ્રવ્યનું પ્રમાણ સૌથી ઓછું હોવું જોઈએ તેના ખુલાસો આ પ્રમાણે છે-“લોક અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળો છે.” હવે અહીં અસત્કલ્પનાનો આધાર લઈને એવું માની લઈએ કે લોકના ૩૦ પ્રદેશો છે. આ ૩૦ પ્રદેશોમાંના પ્રત્યેક પ્રદેશ પર અનાનુપૂર્વી' દ્રવ્ય અવગાહિત છે. તેથી ૩૦ પ્રદેશોમાં ૩૦ અનાનુપૂર્વી' દ્રવ્યોની અવગાહના માની લઈએ. લોકના બીજા પ્રદેશોમાં એક એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય અવગાહિત હોવાથી ૩૦ પ્રદેશોમાં અવગાહિત અવક્તવ્ય દ્રવ્યોની સંખ્યા ૧૫ માની લઈએ તથા આનુપૂર્વી' દ્રવ્ય લોકના ઓછામાં ઓછા ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહિત હોવાથી ૩૦ પ્રદેશોમાં અવગાહિત આનુપૂર્વી' દ્રવ્યોની

તાનિ દશસંખ્યકાન્યેવ ભવન્તિ ત્રિપ્રદેશાવગાઢત્વાત્ । અત એવ તાનિ સર્વસ્તોકા-
ન્યેવ શાચ્ચાનિ । इति चेदाह—यदि ये नमःप्रदेशा एकस्मिन्ननुपूर्वीद्रव्ये उपयुक्ता
भान्ति ते यत्रस्मिन्नोपयुक्त भवेयुस्तदैवं स्यात्, नचैवमस्ति, यतः त्रिभिःप्रदेशैः
सम्पद्यमाने एकस्मिन् आनुपूर्वीद्रव्ये ये त्रयः प्रदेशा उपयुक्ता भवन्ति, त एव त्रयः
प्रदेशा अन्यान्यरूपतया परिणतैरन्यैरप्यानुपूर्वीद्रव्यैरुपयुज्यन्ते । अत एकैकः प्रदे-
शोऽनेकेषां त्रिक संयोगानामानुपूर्वीद्रव्याणामाधारो भवति । एवं चतुष्कसंयोग-
पञ्चकसंयोग यावदसंख्येयसंयोगानुपूर्वीद्रव्यविषयेऽपि बोध्यम् । ततश्च एकैको नमः

આતી છે । આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ત્રીનપ્રદેશોં સે પ્રારંભ હોકર નિષ્પન્ન હોતે છે ।
इसलिये इन्हे त्रिप्रदेशावगाढ माना गया है । इस प्रकार ये अनानुपूर्वी
और अवक्तव्यकद्रव्यों की अपेक्षा पूर्वोक्तरीति से विचार करनेपर कम
ही आते हैं" यदि कोई इस प्रकार से कहे तो इसका उत्तर इस प्रकार
से हैं कि जो आकाशप्रदेश एक आनुपूर्वीद्रव्य में उपयुक्त होते हैं, वे यदि
अन्य आनुपूर्वी द्रव्य में उपयुक्त नहीं होते तो ऐसा कहना बन सकता
था परन्तु ऐसा नहीं है । क्योंकि तीन प्रदेशों से जायमान एक आनुपू-
र्वीद्रव्य में जो तीनप्रदेश उपयुक्त होते हैं, वे ही तीन प्रदेश अन्य अन्य
रूप से परिणत हुए अन्य आनुपूर्वी द्रव्यों द्वारा भी अपने २ उपयोग में
लाये जाते हैं । इसलिये लोक का एक २ प्रदेश अनेक त्रिक संयोगी
आनुपूर्वी द्रव्यों का आधार होता है । इसी प्रकार से चतुष्क संयोगी
यावत् असंख्यात संयोगी आनुपूर्वी द्रव्यों के विषय में भी जानना

સંખ્યા ૧૦ માની લઈએ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ત્રણથી લઈને અસંખ્યાત પર્યન્તના
પ્રદેશોમાંથી નિષ્પન્ન થાય છે. તેથી અહીં તેને ત્રિપ્રદેશાવગાઢ માનીને ઉપર
પ્રમાણેની ગણતરી કરવામાં આવી છે. આ રીતે વિચાર કરવામાં આવે તો
અનુપૂર્વી અને અવદ્રતવ્યક દ્રવ્યો કરતાં તેનું પ્રમાણ ઓછું દેખાય છે.

આ પ્રકારની માન્યતા બરાબર નથી તે હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—
જે આકાશપ્રદેશો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં ઉપયુક્ત થાય છે તેઓ જો અન્ય
આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં ઉપયુક્ત થતા ન હોત તો એવું બની શકત, પરન્તુ એવું
તો બનતું નથી કારણ કે ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહિત એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં
જે ત્રણ પ્રદેશો ઉપયુક્ત થાય છે, એજ ત્રણ પ્રદેશો અન્ય અન્ય રૂપે
પરિણત થયેલા અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યો દ્વારા પણ પોતપોતાના ઉપયોગમાં
લેવામાં આવે છે. આ રીતે લોકોના પ્રત્યેક પ્રદેશ અનેક ત્રિકસંયોગી આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્યોનો આધાર થાય છે, એજ પ્રમાણે ચતુષ્ક સંયોગીથી લઈને

પ્રદેશઃ અનેકેષુ ય્યાદિ સંયોગાત્મકેષુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ ઉપયુજ્યતે । इत्थं च य्यादि संयोगात्मकानुपूर्वीद्रव्यरूपाधेयभेदेन प्रतिप्रदेशरूपाधारस्यापि भेदो विवक्षितो भवति । नहि नभःप्रदेशा येन स्वरूपेणैकस्मिन् आधेये उपयुक्ता भवन्ति, तेनैव स्वरूपेण आधेयान्तरेऽपि । तथा सत्येकस्मिन् आधारस्वरूपे तदवगाહनाद् आधेयानाम् एकता प्रसज्येत, घटे तत्स्वरूपवत् । ततश्च असंख्येयप्रदेशात्मके स्वस्थित्या व्यवस्थिते लोके यावन्तत्त्विकसंयोगाद्यसंख्येयसंयोगपर्यन्ता संयोगा जायन्ते तावन्त्यानुपूर्वीद्रव्याणि भवन्ति । तानि च य्यादि संयोगानां बहुत्वाद् बहुसंख्य-

चाहिये । इस प्रकार एक २ आकाश प्रदेश અનેક ય્યાદિ સંયોગાત્મક આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં મેં ઉપયુક્ત હોતા હૈ । અતઃ ય્યાદિ સંયોગાત્મક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ આધેય કે ભેદ સે, હર એક પ્રદેશ રૂપ આધાર કા બી ભેદ, વિવક્ષિત હો જાતા હૈ । ક્યોંકિ આકાશ પ્રદેશ જિસ સ્વરૂપ સે એક આધેય મે ઉપયુક્ત હોતે હૈ । उसी स्वरूप से वे दूसरे आधेय में उपयुक्त नहीं होते हैं । यदि ऐसी ही बात मानी जावे कि आकाश प्रदेश जिस स्वरूप से एक आधेय में उपयुक्त होते हैं उसी स्वरूप से वे अन्य आधेय में भी उपयुक्त होते हैं तो एक आधार स्वरूप में उनकी अवगाहना होने से उन અનેક આધેયોં મેં ઘટ મેં ઘટ કે સ્વરૂપ કી તરહ એકતા પ્રસક્ત હોગી । इसलिये अपने स्वरूप की अपेक्षा से असंख्यात प्रदेशी लोक में जितने भी त्रिक संयोगादि रूप असंख्यात संयोग पर्यन्त तक के संयोग हैं उतनेही आनुपूर्वीद्रव्य हैं । ये આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ય્યાદિસંયોગોં

અસંખ્યાત સંયોગી પર્યન્તના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ સમજવું આ પ્રકારે પ્રત્યેક આકાશપ્રદેશ અનેક ત્રિઆદિ સંયોગાત્મક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં ઉપયુક્ત થાય છે. તેથી ત્રિઆદિ સંયોગાત્મક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ આધેયના ભેદને લીધે દરેક પ્રદેશ રૂપ આધારનો પણ ભેદ પડી જાય છે. કારણ કે જે સ્વરૂપે આકાશપ્રદેશો એક આધેયમાં ઉપયુક્ત થાય છે, એજ સ્વરૂપે તેઓ બીજા આધેયમાં પણ ઉપયુક્ત થતા નથી જો એવી વાત માનવામાં આવે કે આકાશપ્રદેશો જે સ્વરૂપે એક આધેયમાં ઉપયુક્ત થાય છે એજ સ્વરૂપે તેઓ અન્ય આધેય વસ્તુમાં પણ ઉપયુક્ત થાય છે, તો એક આધારસ્વરૂપમાં તેમની અવગાહના હોવાથી તે અનેક આધેયોમાં પણ ઘટમાં ઘટના સ્વરૂપની જેમ એકતા માનવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે, તેથી ચોતાના સ્વરૂપની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકમાં ત્રિકસંયોગથી લઈને અસંખ્યાત સંયોગ પર્યન્તના જેટલા સંયોગો છે એટલા જ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે ત્રિ


અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૬ ભાગદ્વારનિકરૂપણમ્

૪૨૫

કાનિ બોધ્યાનિ । અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ તુ દ્વિકસંયોગાનાં સ્તોકત્વાત્ સ્તોકાનિ ।
અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણ્યપિ લોકપ્રદેશસંખ્યાસમાનસંખ્યત્વાત્ સ્તોકાન્યેવ । અન્ન
મુલ્કેનાવબોધાર્થં કિંચિન્નિર્દિશ્યતે । તથાદિ-લોકે કિંચ પચ્ચાકાશપ્રદેશઃ કલ્પ્યન્તે,
તથથા— ::::: इति । अत्र अनानुपूर्वीद्रव्याणि तावत् पञ्चैव भवन्ति ।

यथा— ::::: इति ।

अवक्तव्यकદ્રव્યાણિ તુ અષ્ટી, અષ્ટાનામેવ દ્વિકસંયોગાનામિદામ્યુપગમાત્ ।

યથા-  ઇતિ ।

આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ તુ ષોડશ સંભવન્તિ । તત્ર-દશત્રિકસંયોગાઃ, પચ્ચ ચતુષ્કસંયોગાઃ,
કો વહુત હોને કે કારણ વહુસંખ્યક હૈં । ઓર જો અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં
વે દ્વિક સંયોગોં કે કમ હોને કે કારણ કમ હૈં । તથા જો અનાનુપૂર્વી
દ્રવ્ય હૈં । વે બી લોક પ્રદેશોં કી સંખ્યા કે બરાબર હોને કે કારણ-
કમ હી હૈં । યહ બાત અચ્છી તરહ સે સમજ્ઞ મેં આ જાવે હસલિયે યો
સમજ્ઞના ચાહિયે-લોક મેં પાંચ આકાશપ્રદેશ કલ્પિત કરો, ઓર ઉસકા
આકાર ::::: इस प्रकार से करो । प्रत्येक आकाश प्रदेश में एक अनानुपूर्वी
द्रव्य है इसलिये इस हिसाब से पांच अनानुपूर्वी द्रव्य हैं । ऐसा मान
लो तथा द्विप्रदेश संयोगी जो अवक्तव्यक द्रव्य हैं वे द्विकप्रदेश संयोगों
को यहां आठ ही होनेसे आठ आते हैं । जैसे-संस्कृत टीका में आकार
देकर कहा गया है । आनुपूर्वीद्रव्य १६, संभवित होते हैं-वे इसप्रकार
से १०, त्रिक प्रदेश संयोग के १०, ५ चतुष्प्रदेश संयोग के पांच, और


આદિ સંયોગો ધણુ હોવાને કારણે તે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો બહુસંખ્યક છે, અને
દ્વિકસંયોગો ઓછાં હોવાને કારણે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો તેના કરતાં અલ્પ
સંખ્યામાં છે. તથા જે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેઓ પણ લોકના પ્રદેશોની
સંખ્યાની બરાબર હોવાથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અલ્પ સંખ્યામાં છે. આ
વાતને સ્પષ્ટ રીતે સમજવા માટે આ પ્રમાણેની કલ્પના કરો-ધારો કે
આકાશપ્રદેશો પાંચ છે અને તેમનો આકાર આ પ્રમાણે છે- ::::: प्रत्येक
प्रदेशमा एक एक अनानुपूर्वी द्रव्यो रही शके छे. तेथी पांच प्रदेशोमा पांच
अनानुपूर्वी द्रव्यो रही शके छेभ भानी हो.


તથા દ્વિપ્રદેશ સંયોગી જે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો છે, તેમની સંખ્યા અહીં
આઠની આવે છે, કારણ કે અહીં દ્વિકપ્રદેશ સંયોગો આઠ આવે છે તે વાત
ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે.

આ પાંચ પ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો ૧૬ સંખ્યા શકે છે. તેનો
દ્વિસાથ આ પ્રમાણે સમજવો-ત્રિકપ્રદેશ સંયોગના ૧૦, ચતુષ્પ્રદેશ સંયોગના


૪૨૬


અનુચોદાદ્વારસૂત્રે

પચ્ચકસંયોગસ્ત્વેક ઇતિ પોહસ । તત્ર દશત્રિકસંયોગા એવં बोध्याः—षट् तावत्त्रिक-
સંયોગા મધ્યવ્યવસ્થાપિતેન સહ લખ્યન્તે, યથા—  ઇતિ ।

તથા મધ્યનિરપેક્ષદિગ્વ્યવસ્થાપિતૈશ્ચતુર્ભિશ્ચત્વારસ્રિકસંયોગાઃ, યથા—  ઇતિ ।

ઇતિ । ઇત્યં દશ ત્રિકસંયોગા ભવન્તિ ।

પચ્ચ ચ ચતુષ્કસંયોગા એવં વિજ્ઞેયાઃ—ચત્વારસ્તાવન્મધ્યવ્યવસ્થાપિતેન સહ લખન્તિ,
યથા—  ઇતિ ।


એકસ્તુ ચતુષ્કસંયોગો મધ્યનિરપેક્ષદિગ્વ્યવસ્થાપિતૈશ્ચતુર્ભિઃ, યથા—  ઇતિ । ઇત્યં પચ્ચ ચતુષ્કસંયોગા ભવન્તિ ।

એક પાંચ પ્રદેશ સંયોગકા એક । इनमें त्रिकप्रदेश संयोग जो दस हैं—
वे इस प्रकार हैं—मध्य में जो प्रदेश व्यवस्थापित है, उसके साथ त्रिकप्रदेश
संयोग ६ आते हैं—जैसे टीका में आकार देकर कहे गये हैं—तथा मध्य
प्रदेश निरपेक्ष जो दिग्ब्यवस्थापित चारप्रदेश हैं उनके साथ त्रिकप्रदेश
संयोग ४ चार आते हैं जो टीका में दिये हुए चित्र द्वारा स्पष्ट किये गये
हैं इस प्रकार से तीन २ प्रदेशों के संयोग दश होते हैं—ये तीन तीन
प्रदेशों के संयोग ही १० अनानुपूर्वीद्रव्यों के आधार क्षेत्र हैं । तथा
चार २ प्रदेशों के संयोग ५ इसप्रकार हैं—मध्य में जो प्रदेश व्यवस्थापित
है उसके साथ चतुष्क संयोगचार होते हैं, ये चतुष्क संयोग ही चार
आनुपूर्वी द्रव्यों के आधाररूप क्षेत्र हैं । जो टीका में दिये हुये चित्र
द्वारा कहे गये हैं । तथा मध्य प्रदेश निरपेक्ष जो चार दिग्ब्यवस्थापित
चारप्रदेश हैं उनसे एक चतुष्कसंयोगरूप आधार चारप्रदेशी आनुपूर्वी
द्रव्य निष्पन्न होता है । जो संस्कृत टीका में दिया हुआ चित्रद्वारा स्पष्ट

૫, અને પાંચપ્રદેશ સંયોગાનું ૧, આ રીતે કુલ ૧૧ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો થાય તથા
છે. તેમના બે ૧૦ ત્રિકપ્રદેશ સંયોગ કહ્યા છે તે નીચે પ્રમાણે સમજવા—મધ્યમાં
બે પ્રદેશ વ્યવસ્થાપિત (રહેલો) છે, તેની સાથે ત્રિકપ્રદેશ સંયોગ ૬ આવે
છે. જોઈ વાત ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિદ્વારા સમજાવવામાં આવી છે.
મધ્યપ્રદેશ સિવાયના બે ચાર પ્રદેશો ચાર દિશામાં આવેલા છે. તેમની સાથે
ત્રિકપ્રદેશસંયોગ ચાર આવે છે તેમને પણ આ આકૃતિ દ્વારા સ્પષ્ટ કર-
વામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે આ ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોના સંયોગ ૧૦ થાય છે
આ ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોના સંયોગ બ ૧૦ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના આધારક્ષેત્રો છે.
તથા ચાર ચાર પ્રદેશોના પાંચ સંયોગ આ પ્રમાણે થાય છે—મધ્યમાં બે
પ્રદેશ વ્યવસ્થાપિત છે તેની સાથે ચતુષ્કસંયોગ ચાર થાય છે. તે ચતુષ્કસં-
યોગ બ ચાર આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના આધારરૂપ ક્ષેત્રો છે. તેમને સંસ્કૃત ટીકામાં
આપવામાં આવેલ આકૃતિ દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે તથા મધ્યપ્રદેશ
સિવાયના ચાર દિશામાં વ્યવસ્થાપિત બે ચાર પ્રદેશો છે તેમના દ્વારા ચાર

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૬ ભાગદ્વારનિરૂપણમ્

૪૯૭

પञ्चકસંયોગસ્તુ સુગમ एव यथा—  इति

इत्थं पञ्चप्रदेशमस्तारेऽप्यानुपूर्वीद्रव्याणाम् अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया बाहुल्यं दृश्यते । ततः स्वस्थित्या व्यवस्थितेऽसंख्येयप्रदेशात्मके लोके आनुपूर्वी-द्रव्याणाम् अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यापेक्षयाऽसंख्यातगुणत्वं स्पष्टमेवेति ॥मू० ११६॥

કિયા ગયા છે । હસ પ્રકાર ચતુષ્કસંયોગ રૂપ આધાર ક્ષેત્ર કે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પાંચ હોતે હૈ । તથા હન પાંચ પ્રદેશો કે સંયોગ સે જાયમાન એક પાંચ પ્રદેશી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા સમજના સુગમ હૈ । જો સંસ્કૃત ટીકા મેં દિયા હુવા ચિત્ર મેં સમજાયા ગયા હૈ । હસ પ્રકાર સે પાંચ પ્રદેશો કે પ્રસ્તાર મેં મી હન આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કા અનાનુપૂર્વી ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કી અપેક્ષા બાહુલ્ય દેખા જાતા હૈ । તથા હસસે અપની સ્થિતિ કે અનુસાર સુવ્યવસ્થિત હસ અસંખ્યાત પ્રદેશવાલે લોક મેં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો મેં અનાનુપૂર્વી ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કી અપેક્ષા સે અસંખ્યાત-ગુણતા સ્પષ્ટ હી હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને હસ સૂત્રદ્વારા યહ સમજાયા હૈ કિ નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ગુણે અધિક હૈ ઔર શેષ દ્રવ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યો કે અસંખ્યાતવે ભાગ પ્રમાણ હૈ । હસ ચાત કો સુનતે હી કિસી શંકાકાર ને હસ-

પ્રદેશી આનુપૂર્વી દ્રવ્યના એક ચતુષ્કસંયોગ રૂપ આધાર નિષ્પન્ન થાય છે, તેને પશ્ચ સંસ્કૃત ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે ચતુષ્કસંયોગ રૂપ આધાર ક્ષેત્રના આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પાંચ થાય છે. તથા તે પાંચ પ્રદેશના સંયોગથી નિષ્પન્ન પાંચપ્રદેશી એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યને સમજવું સુગમ છે. ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિમાં તેને સમજાવવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે પાંચ પ્રદેશોના પ્રસ્તારમાં પશ્ચ અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અધિકતા જોવામાં આવે છે, તે પછી અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા લોકમાં અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અસંખ્યાત ગણાં હોય એમાં નવાઈ પામવા જેવું શું છે ?

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે એ વાતનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનેક ગણાં વધારે છે. અને આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સિવાયના દ્રવ્યો આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ છે. સૂત્રકારના આ કથન સામે કોઈ વ્યક્તિ એવી શંકા પ્રકટ કરે કે આપનું આ કથન બુદ્ધિગમ્ય

પર શંકા કી-કિ આપકા યહ કથન યુક્તિ સે સંગત નહીં બૈઠતા હૈ-
કારણ અસંખ્યાત પ્રદેશી હસ લોક મેં સવસે અધિક સંખ્યા આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોં કી હી આતી હૈ બાદ મેં હનસે કમ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી ઓર
હનસે ખી કમ આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી । હસ બાત કો હમ હસપ્રકાર સે સમ-
જ્ઞા સકતે હૈં । લોક અસંખ્યાતપ્રદેશી માના ગયા હૈ-સો લોકકે અસં-
ખ્યાત પ્રદેશોં કે સ્થાન મેં ૩૦ સંખ્યા રમ્ભ લો-યે ૩૦ હી અસંખ્યાત
પ્રદેશ હૈં । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોકાકાશ કે એક ૨ પ્રદેશ રૂપ આધાર પર
અવગાહિત હૈં હસ અપેક્ષા સે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી સંખ્યા ૩૦ આતી
હૈ । ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય જો દ્વિપ્રદેશી હોતા હૈ, વહ દો દો પ્રદેશોં મેં
અવગાહિત હોતા હૈ-હસલિયે ઉસકી સંખ્યા ૧૫ આતી હૈ । તથા આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય ત્રિપ્રદેશાવગાહ હોતા હૈ । હસલિયે હનકી સંખ્યા દશ આતી
હૈ । તથા સિદ્ધાન્તકાર ને હસ શંકા કા ઉત્તર બહુન સુન્દરરીતિ સે કિયા
હૈ-ઉન્હોંને ઉસે સમજાયા કિ જૈસા તુમ કહ રહે હો વૈસા નહીં હૈ ।
કયોંકિ આકાશકા એક ૨ પ્રદેશ બિન્ન ૨ રૂપસે પરિણત અનેક ઋણુકાદિ
રૂપ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કા આધારસ્થલ હૈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય મેં આકાશ

લાગતુ' નથી પોતાની શંકાના સમર્થનમાં તે એવી દલીલ કરે કે-અસં-
ખ્યાત પ્રદેશોવાળા આ લોકમાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા સૌથી વધારે
છે, અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની સંખ્યા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં ઓછી છે અને
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા તો અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં પણ ઓછી છે.
નીચેની કલ્પના દ્વારા તે પોતાની આ માન્યતાનું સમર્થન કરે છે. લોકના
અસંખ્યાત પ્રદેશો માનવામાં આવ્યા છે. પારે કે લોકના ૩૦ પ્રદેશો છે
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકાકાશના એક એક પ્રદેશ ૩૫ આધાર પર અવગાહિત છે.
તેથી ૩૦ પ્રદેશોમાં અવગાહિત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા ૩૦ ત્રીસ થાય
છે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે જે એપ્રદેશી હોય છે તે લોકાકાશના અબ્બે પ્રદેશોમાં
અવગાહિત હોય છે. તેથી તેમની સંખ્યા ૧૫ ની થાય છે. તથા આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય લોકાકાશના ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહિત હોવાથી ૩૦ પ્રદેશોમાં
અવગાહ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા બાકીના બંને દ્રવ્યો કરતાં ઓછી
થવા છતાં આપ શા કારણે એવું કહો છો કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો બાકીના બંને
દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં હોય છે ?

આ શંકાનું અહીં નીચે પ્રમાણે સમાધાન કરવામાં આવ્યું છે-તમે
કહો છો એવી વાત નથી, કારણ કે આકાશનો એક એક પ્રદેશ બિન્ન બિન્ન
રૂપે પરિણત થયેલ અનેક ત્રણ આદિ અણુરૂપ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું આધાર-
સ્થાન છે. એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં આકાશના જે ત્રણ પ્રદેશો ઉપયુક્ત થાય

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૬ ભાગદ્વારનિરૂપણમ્

૪૯૯

કે જો ત્રણ પ્રદેશ ઉપયુક્ત હોતે હૈં વે યદિ અન્ય અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે ઉપયોગ મેં ન આતે, તો યહ વાત બન ખી જાતી કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા વહુત કમ હૈં, પરન્તુ જો આકાશ કે ત્ર્યાદિ પ્રદેશ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય મેં કામ આતે હૈં, વે હી અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે ખી ઉપયોગ મેં આતે હૈં । જો આકાશ કે ૩ પ્રદેશ જિસ સ્વભાવ સે ય્યણુક રૂપ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કે ઉપયોગ મેં આતે હૈં । વે ત્રણ પ્રદેશ ડસી સ્વભાવ સે ય્યણુકાદિ એવં ચતુષ્પ્રદેશિક આદિ અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે ઉપયોગ મેં નહીં આતે હૈં । ડનેકે સ્વભાવ સે ભિન્નતા આજાતી હૈ । હસલિયે આકાશ કો સ્વભાવ કી ભિન્નતા કે કારણ અસંખ્યાત પ્રદેશી માના ગયા હૈ । ય્યણુકાદિરૂપ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ખી તો એક ૨ કી હી સંખ્યા મેં નહીં હૈં કિન્તુ એક ૨ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનેક હૈં । તખી તો યે સમસ્ત આનુપૂર્વિયાં લોકવ્યાપી હૈં । અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ખી હસી પ્રકાર સે હૈં । ડનમેં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હી ડન દો દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ગુણા હૈ । ક્યોંકિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કે લિયે એકપ્રદેશ રૂપ આધાર કી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે લિયે દો પ્રદેશરૂપ આધાર કી હી

હે, તે ત્રણ પ્રદેશો જે અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ઉપયોગમાં આવી શકતા ન હોત તો એવી વાત સંભવી શકત કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો બાકીના બંને દ્રવ્યો કરતાં બહુ જ અલ્પ સંખ્યામાં છે. પરન્તુ પરિસ્થિતિ એવી છે કે આકાશના જે ત્રણ આદિ પ્રદેશો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યના કામમાં આવે છે, એજ પ્રદેશો અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ઉપયોગમાં પણ આવે છે. જે આકાશના ત્રણ પ્રદેશો જે સ્વભાવને લીધે ત્રણ અણુવાળી એક આનુપૂર્વીના ઉપયોગમાં આવ્યા છે, તે ત્રણ પ્રદેશો એજ સ્વભાવથી ત્રણ અણુવાળાં, અને ચાર પ્રદેશવાળાં આદિ અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ઉપયોગમાં આવતાં નથી. તેમના સ્વભાવમાં આધેયની ભિન્નતાને લીધે ભિન્નતા આવી જાય છે. તેથી આકાશને સ્વભાવની ભિન્નતાને કારણે અસંખ્યાત પ્રદેશી માનવામાં આવેલ છે. ત્રિ અણુક આદિ ૩૫ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ એક એકની સંખ્યામાં જ નથી, પરન્તુ પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનેક હોય છે. -ત્રિ અણુક આદિ પ્રત્યેક આનુપૂર્વી અનેક હોય છે-અને તેથી જ તે સમસ્ત આનુપૂર્વીઓ લોકવ્યાપી છે. અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ લોકવ્યાપી છે આ ત્રણેમાંથી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય જ તે બંને દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણું છે, કારણ કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યને માટે એક પ્રદેશ ૩૫ આધારની અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યને

આવશ્યકતા પડતી હૈ, તથા કિ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કૈ લિયૈ ઁક દો તીન આદિ સમસ્ત રૂપ આધાર કી અપેક્ષા પડતી હૈ-તથા ઁક ૨ પ્રદેશ મૈ ઁી અનૈક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અવગાહિત હૈં । તથા કિ અનૈક અનાનુપૂર્વી ઁર અનૈક અવક્તવ્યકદ્રવ્ય ઁક પ્રદેશ ઁર દો દો પ્રદેશોં મૈ હી અવગાહિત હૈં । હસી વિષય કો લોક મૈ પાંચપ્રદેશોં કી કલ્પના કર નિર્ણય કિયા ગયો હૈ । હનમૈ ચારોં દિશાઁોં મૈ ચાર પ્રદેશ સ્થાપિત- કરના ચાહિયૈ ઁર ઁક પ્રદેશ ઘીચ મૈ । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય જૈસા કી કહા ગયા હૈ, કિ ઁક પ્રદેશાવગાહી હોતા હૈ હસલિયૈ ઁક ૨ પ્રદેશ મૈ ઁક ઁક રહનૈ કૈ કારણ પાંચપ્રદેશ રૂપ આધાર સંબન્ધી ઘે ૫ હી જ્ઞાત હોતૈ હૈં । ન્યૂન ઁર અધિક નહીં । હન પાંચ પ્રદેશોં મૈ જથ દો ૨ પ્રદેશોં કા સંયોગ-કિયા જાતા હૈ તો ઘે દ્વિક સંયોગ ઘહાં આઠ ઘનતૈ હૈં-જૈસૈ ટીકામૈ દિયા હુઘા ચિત્ર મૈ પ્રદર્શિત કિયૈ ગયૈ હૈં । ઘહાં જો ઁક દો આદિ અંક-લિખૈ હુપ હૈં ઘે દો દો પ્રદેશોં કૈ સંયોગ કૈ પ્રદર્શક હૈં । હસ પ્રકાર ઘે દો દો પ્રદેશોં કૈ સંયોગરૂપ જો આધાર હૈં ઘે ઉતનૈ હી અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કૈ આધાર હૈં ।

માટે ઁ પ્રદેશ ૩પ આધારની આવશ્યકતા પડે છે, પરન્તુ આનુપૂર્વી દ્રવ્યને માટે ઁક, ઁ, ત્રણ આદિ સમસ્ત પ્રદેશ ૩પ આધારની આવશ્યકતા રહે છે. તથા ઁક ઁક પ્રદેશમાં પણ અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવગાહિત છે, જ્યારે અનેક અનાનુપૂર્વી અને અનેક અવક્તવ્યક દ્રવ્યો તો અનુક્રમે ઁક ઁક પ્રદેશમાં અને ઁખ્રમે પ્રદેશોમાં જ અવગાહિત છે. હવે સૂત્રકાર લોકના પાંચ પ્રદેશો હોવાની કલ્પના કરીને આ વિષયનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-ચાર દિશા-ઁમાં ચાર પ્રદેશની અને વચ્ચે ઁક પ્રદેશની સ્થાપના કરવી જોઈઁ. તેની આકૃતિ આ પ્રમાણે બનશે-૦૦૦

અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઁક પ્રદેશાવગાહી હોય છે, તેથી ઁક ઁક પ્રદેશમાં ઁક ઁક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હોવાને કારણે પાંચ પ્રદેશ ૩પ આધારમાં પાંચ જ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો સંભવી શકે છે. તેથી ઁછાં કૈ વધારે સંભવી શકતાં નથી. આ પાંચ પ્રદેશોમાં જો ઁખ્રમે પ્રદેશોનો સંયોગ કરવામાં આવે, તો ઁવાં દ્વિકસંયોગ અહીં આઠ બને છે તે ઉપરની સંસ્કૃત ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિમાં બતાવવામાં આવેલ છે-

આ આકૃતિમાં જો ઁક, ઁ આદિ અંકો લખ્યા છે, તે ઁખ્રમે પ્રદેશોના સંયોગના પ્રદર્શક છે. આ રીતે તે ઁખ્રમે પ્રદેશોના સંયોગ ૩પ જો આધાર છે, તેઁ ઁટલાં જ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના આધાર ૩પ છે આ રીતે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૭ ભાવદ્વારનિરૂપણમ્

૫૦૧

इत्थं भागद्वारमभिधाय सम्प्रति भावद्वारमाह—

मूलम्—जेगमव्यवहाराणं आणुपुर्व्वीदद्वाइं कयरमि भावे
होज्जा? णियमा साइपारिणामिण् भावे होज्जा। एवं
दोणिण वि ॥सू० ११७॥

છાયા—જેગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કતરસ્મિન્ ભાવે ભરન્તિ ? નિય-
માત્ સાદિપારિણામિકે ભાવે ભવન્તિ । એવં દ્વયોરપિ ॥સૂ० ૧૧૭॥

इस प्रकार से यहां द्विकप्रदेश संयोगरूप आधारवर्ती ८ अवक्तव्यकद्रव्य हैं । यह बोध हो जाता है । क्योंकि जितने आधार हैं उतने ही वहां अनानुपूर्वी आदि द्रव्य हैं ऐसा यहां कहा गया है । आनुपूर्वी द्रव्य इन पांच प्रदेशों के संयोग रूप आधार १६ होने से १६ होते हैं । चतुष्क-संयोग पांच और पांच प्रदेशों का एक संयोग यहां होता है । इन चतुष्क (चार) संयोग रूप पांच आधारों में पांच आनुपूर्वी द्रव्य और पांच प्रदेशों के संयोगरूप एक आधार में एक पांच प्रदेशवाला आनुपूर्वी द्रव्य रहता है । पांच प्रदेशों में दो दो प्रदेशों के संयोग ८, तीन तीन प्रदेशों के संयोग १०, चार चार प्रदेशों के संयोग—से पांच बनते हैं । और पांच प्रदेशोंका संयोग एक ये सब द्विकादि संयोगरूप आधार कैसे बने यह सब संस्कृत टीकामें दिया हुआ चित्रोंद्वारा स्पष्ट किया गया है ॥सू. ११६॥

અહીં દ્વિકપ્રદેશ સંયોગરૂપ આધારવર્તી આઠ અવકતવ્યક દ્રવ્યો હોવાનો બોધ થઈ જાય છે, કારણ કે એટલા આધાર છે એટલા જ ત્યાં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો છે એવું અહીં કહેવામાં આવ્યું છે.

આ પાંચ પ્રદેશોના સંયોગરૂપ આધાર ૧૬ હોવાથી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અહીં ૧૬ હોય છે. ચતુષ્કસંયોગ પાંચ અને પાંચ પ્રદેશોના એક સંયોગ અહીં થાય છે. આ ચતુષ્કસંયોગ રૂપ પાંચ આધારોમાં પાંચ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને પાંચ પ્રદેશોના સંયોગ રૂપ એક આધારમાં પાંચ પ્રદેશવાળું એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રહે છે. પાંચ પ્રદેશોમાં બીજા પ્રદેશોના સંયોગ આઠ, ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોના સંયોગ ૧૦, ચાર ચાર પ્રદેશોના સંયોગ પાંચ અને પાંચ પ્રદેશોના સંયોગ એક અને છે, આ બધાં દ્વિકાદિ સંયોગ રૂપ આધાર કેવી રીતે બને છે, તે બધું સૂત્રાર્થમાં આકૃતિઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યું છે ॥સૂ૦ ૧૧૬॥

ટીકા—‘ જોગમવવહારાણં ’ ઇત્યાદિ—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કતરસ્મિન્ ભાવે ભવન્તિ ? इति
શિષ્ય પ્રશ્નઃ । उत्तरयति—आनुपूर्वीद्रव्याणि नियमात् सादिपारिणामिके भावे भवन्ति।
एवं द्वे अपि—अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्याण्यपि सादिपारिणामिके भावे भवन्तीति ।
अयं भावः—अदिप्रदेशावगाहपरिणामस्य एकप्रदेशावगाहपरिणामस्य द्विप्रदेशा-
वगाहपरिणामस्य चेति त्रयाणामपि द्रव्याणां सादिपारिणामिकत्वात् सादिपारि-
णामिकभाववर्तित्वं बोध्यमिति ॥सू० ११७॥

અથ સૂત્રકાર ભાવદ્વાર કા કથન કરતે હૈં—

“ જોગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈ) નૈગમ વ્યવહારનય-
સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય—(કયરંમિ ભાવે હોજ્જા) કૌન સે ભાવ
મૈં વર્તતે હૈં ।

ઉત્તર—(નિયમા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
નિયમ સે (સાદિપારિણામિ ભાવે હોજ્જા) સાદિ પારિણામિક ભાવ મૈં-
વર્તતે હૈં । (એવં દોણિવિ) હસી પ્રકાર સે અનાનુપૂર્વી ઔર અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય મૈં ભી—જાનનાં ચાહિયે । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ
કિ વ્યાદિ પ્રદેશોં મૈં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા અવગાહ, પરિણામ એક પ્રદેશ
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા અવગાહ પરિણામ ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કા
દ્વિપ્રદેશોં મૈં અવગાહ પરિણામ સાદિ હૈ । હસલિયે—યે સબ દ્રવ્ય સાદિ
પારિણામિક ભાવવર્તી— હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૧૭ ॥

હવે ભાવદ્વારનું કથન કરવામાં આવે છે.—

“ જોગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠી દઢ્ઠ્ઠાઈ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત
સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો (કયરંમિ ભાવે હોજ્જા ?) કયા ભાવમાં વર્તમાન
હોય છે ? ઉત્તર—(નિયમા સાદિપારિણામિ ભાવે હોજ્જા) નૈગમવ્યવહાર નયસં-
મત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો નિયમથી જ સાદિપારિણામિક ભાવવર્તી હોય
છે. (એવં દોણિવિ) એવું જ કથન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ સમજવું આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—
ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અવગાહપરિણામ, એક પ્રદેશમાં
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અવગાહપરિણામ અને બે પ્રદેશોમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનું
અવગાહપરિણામ સાદિ (આદિ સહિત) હોય છે. તેથી જ આ ત્રણે દ્રવ્યોને
સાદિપારિણામિક ભાવવર્તી કહ્યાં છે. ॥સૂ૦ ૧૧૭॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ११८ अल्पबहुत्वद्वारनिरूपणम्

५०३

इत्थं भावद्वारमभिधाय अल्पबहुत्वद्वारं प्ररूपयति—

मूलम्—एषसि णं भन्ते ! णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाणं अणा-
णुपुव्वीदव्वाणं अवत्तव्वगदव्वाणं य दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्व-
ट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुगा वा तुल्ला वा विसे-
साहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं अवत्तव्वग-
दव्वाइं दव्वट्ठयाए, अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए विसेसाहियाइं,
आणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं । पएसट्ठयाए
सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं अपएसट्ठयाए ।
अवत्तव्वगदव्वाइं पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं । आणुपुव्वीदव्वाइं
पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं । दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवाइं
णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए । अणाणुपुव्वी-
दव्वाइं दव्वट्ठयाए अपएसट्ठयाए विसेसाहियाइं । अवत्तव्वगदव्वाइं
पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं । आणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखे-
ज्जगुणाइं ताइं षेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं । से तं अणुगमे ।
से तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी ॥सू० ११८॥

छाया—एतेषां खलु भदन्त ! नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणाम् अनानु-
पूर्वीद्रव्याणाम् अवक्तव्यकद्रव्याणां च द्रव्यार्थतया प्रदेशार्थतया कानि केभ्यः
अल्पानि वा बहुकानि वा तुर्यानि वा विशेषाधिकानि वा ? । गौतम ! सर्वस्तो-
कानि नैगमव्यवहारयोः अवक्तव्यकद्रव्याणि द्रव्यार्थतया । अनानुपूर्वीद्रव्याणि
द्रव्यार्थतया विशेषाधिकानि । आनुपूर्वी द्रव्याणि द्रव्यार्थतया असंख्येयगुणानि ।
प्रदेशार्थतया—सर्वस्तोकानि नैगमव्यवहारयोः अनानुपूर्वीद्रव्याणि अप्रदेशार्थतया ।
अवक्तव्यकद्रव्याणि प्रदेशार्थतया विशेषाधिकानि । आनुपूर्वीद्रव्याणि प्रदेशार्थतया
असंख्येयगुणानि । द्रव्यार्थप्रदेशार्थतया सर्वस्तोकानि नैगमव्यवहारयोः अवक्तव्यक
द्रव्याणि द्रव्यार्थतया । अनानुपूर्वी—द्रव्याणि द्रव्यार्थतया अप्रदेशार्थतया

૫૦૪

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

વિશેષાધિકાનિ । અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા ડસંખ્યેયગુણાનિ તાન્યેવ પ્રદેશાર્થતયા અસંખ્યેયગુણાનિ । સ ણ્ણોડનુગમઃ । સૈષા નૈગમવ્યવહારયોઃ અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ॥મૂ૦ ૧૧૮॥

ટીકા—‘ ણ્ણસિ ણં ’ ઇત્યાદિ ।

હે ભદન્ત ! ણ્ણેષાં સ્વલુ નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામ્ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામ્ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં મધ્યે કાનિ દ્રવ્યાણિ કતરેભ્યો દ્રવ્યેભ્યો દ્રવ્યાર્થતયા પ્રદેશાર્થતયા દ્રવ્યાર્થપ્રદેશાર્થતયા ચ અલ્પાનિ વા બહુકાનિ વા તુલ્યાનિ વા વિશેષાધિકાનિ વા ભવન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિના । અસ્ય વ્યાખ્યા નવતિતમસંખ્યકસૂત્રવદ્ બોધ્યા ।

અથ સૂત્રકાર અલ્પ બહુત્વ દ્વાર કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

“ ણ્ણસિ ણં ભંતે ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(ભંતે) હે ભદન્ત ! (નેગમવ્યવહારાણં ણ્ણસિ આણુપુલ્લી દ્રવ્વાણં) નૈગમવ્યવહારનય—સંમત ઇન આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે (અણાણુપુલ્લી દ્રવ્વાણં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે (ય) ઓર (અવક્તવ્યગદ્રવ્વાણં) અવક્તવ્યકદ્રવ્ય કે થીચ (કયરે કયરેહિંતો) કૌન કૌન સે દ્રવ્યોં સે (દલ્લદુયાણ, ણ્ણસદુયાણ, દલ્લદુપ્ણસદુયાણ) દ્રવ્યાર્થતા, પ્રદેશાર્થતા ઓર દ્રવ્યાર્થતા પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા (અપ્પાવા ઘટ્ટુગાવા તુલ્લાવા વિસેસાહિયાવા) અલ્પ હૈં—કૌન ૨ કિન ૨ દ્રવ્યોં સે ઘટ્ટુત હૈં કૌન ૨ કિન ૨—કે સમાન હૈં ઓર કૌન ૨ કિન ૨ દ્રવ્યોં સે વિસેષ અધિક હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (નેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહારનય સંમત (અવક્તવ્યગદ્રવ્વાણં) અવક્તવ્યક

હે સૂત્રકાર અલ્પબહુત્વ દ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“ ણ્ણસિ ણં ભંતે ! ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(ભંતે !) હે ભગવન્ ! (નેગમવ્યવહારાણં ણ્ણસિ આણુપુલ્લીદ્રવ્વાણં અણાણુપુલ્લીદ્રવ્વાણં, અવક્તવ્યગદ્રવ્વાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાંનાં (કયરે કયરેહિંતો) કે યઃ કે યા દ્રવ્યો (દલ્લદુયાણ, ણ્ણસદુયાણ, દલ્લદુપ્ણસદુયાણ) દ્રવ્યાર્થતા, પ્રદેશાર્થતા અને દ્રવ્યાર્થતા પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ (અપ્પા વા ઘટ્ટુગા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ?) કે યા કે યા દ્રવ્યો કરતાં અલ્પ પ્રમાણુ છે ? કે યા કે યા દ્રવ્યો કે યા કે યા દ્રવ્યો કરતાં અધિક છે, કે યા કે યા દ્રવ્યો કે યા કે યા દ્રવ્યોના જેટલાં જ છે અને કે યા કે યા દ્રવ્યો કે યા કે યા દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (નેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અવક્તવ્યગદ્રવ્વાણં) અવક્તવ્યક દ્રવ્યો (દલ્લદુયાણ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૮ અલ્પબહુત્વદ્વારનિરૂપણમ્

૧૦૫

દ્રવ્ય (દ્વવદ્વયાઈ) દ્રવ્યાર્થતા કી- અપેક્ષા (સવ્વત્થોવાઈ) સર્વસ્તોક હૈં । (અણાણુપુવ્વીદ્વવાઈ) અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય (દ્વવદ્વયાઈ) દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા (વિસેસોહિઆઈ) વિશેષ અધિક હૈં । (આણુપુવ્વીદ્વવાઈ) આનુપૂર્વી- દ્રવ્ય (દ્વવદ્વયાઈ) દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા (અસંલેજ્જગુણાઈ) અસંલ્યાત ગુણે હૈં । (પપસદ્વયાઈ) પ્રદેશાર્થતાકી અપેક્ષા (જેગમવવહારાણં) જૈગમ- વ્યવહારનય સંમત (અણાણુપુવ્વી દ્વવાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સવ્વત્થો- વાઈ) સર્વસ્તોક હૈં । કયોંકિ (અપપસદ્વયાઈ) અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય મેં પ્રદેશરૂપ અર્થ કા અભાવ હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈં, કિ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં બી યદિ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશ હો તો દ્રવ્યાર્થતા કી તરહ પ્રદેશાર્થતા મેં બી અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે ડનકી અધિકતા હો જાતી । પરંતુ એસા તો હૈં નહીં, કયોંકિ પરમાણુ અપ્રદેશી હોતા હૈં । એસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હૈં હસલિયે પ્રદેશતા કી અપેક્ષા સે યે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય સર્વસ્તોક કહે ગયે હૈં । (અવત્તગદ્વવાઈ) અવક્તવ્યક દ્રવ્ય (પપસદ્વ- યાઈ) પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા (વિસેસાહિયાઈ) વિશેષ અધિક હૈં । (આણુ પુવ્વી દ્વવાઈ) આનુપૂર્વીદ્રવ્ય (પપસદ્વયાઈ) પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા (અસં- લેજ્જગુણાઈ) અસંલ્યાત ગુણે હૈં । (દ્વવદ્વપપસદ્વયાઈ) દ્રવ્યાર્થતા ઓર-

(સવ્વત્થોવાઈ) સૌથી અલ્પ પ્રમાણમાં છે. (અણાણુપુવ્વી દ્વવાઈ દ્વવદ્વયાઈ વિસેસાહિયાઈ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. (આણુપુવ્વીદ્વવાઈ દ્વવદ્વયાઈ અસંલેજ્જગુણાઈ) અને દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં પણ અત્રંખ્યાત ગણ્યાં છે. (પપસદ્વયાઈ) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (જેગમવવહારાણં) જૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અણા- ણુપુવ્વીદ્વવાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો. (સવ્વત્થોવાઈ) સૌથી આછાં છે, કારણ કે (અપપસદ્વયાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં પ્રદેશરૂપ અર્થનો અભાવ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં પણ જો બે આદિ પ્રદે- શોનો સદ્ભાવ હોત તો દ્રવ્યાર્થતાની જેમ પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અધિકતા જ અંભવી શકત, પરંતુ એવી વાતનો તો અહીં અવકાશ નથી, કારણ કે પરમાણુ અપ્રદેશી હોય છે, એવું સિદ્ધાન્તનું વચન છે. તેથી જ પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યને સર્વસ્તોક (સૌથી અલ્પ પ્રમાણ) કહ્યું છે. (અવત્તગદ્વવાઈ) અવક્તવ્યક દ્રવ્યો (પપસદ્વયાઈ) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. (આણુપુવ્વીદ્વવાઈ પપસદ્વયાઈ અસંલેજ્જગુણાઈ) પ્રદે-

પ્રદેશાર્થતા હન દોનોં કી અપેક્ષા સે (જૈગમવવહારાણં) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત—(અવત્તવ્વગદ્વાઈ) અવત્તવ્વક દ્રવ્ય (સવ્વત્થોવોઈ) સર્વસ્તોક હૈં । વયોંકિ (દવ્વટ્ટયાપ) અવત્તવ્વક દ્રવ્યોં મેં દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા પહિલે—સર્વસ્તોકતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ । (અણાણુપુવ્વી દ્વાઈ દવ્વટ્ટયાપ અપપ—સટ્ટયાપ વિસેસાહિયાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતા સે ઓર અપ્રદેશાર્થતા સે અવત્તવ્વક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા કુછ અધિક હૈં । (અવત્તવ્વગદ્વાઈ પપસટ્ટયાપ વિસેસાહિયાઈ ।) અવત્તવ્વક દ્રવ્ય પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા—અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે કુછ અધિક હૈં । (આણુપુવ્વી દ્વાઈ દવ્વટ્ટયાપ અસંલેજ્જગુણાઈ) ડમયાર્થતા કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંલ્યાત ગુણેં હૈં ઓર (પપસટ્ટયાપ) પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા સે ભી (તાઈંચેવ) વે હી આનુપૂર્વીદ્રવ્ય (અસંલેજ્જગુણાઈ) અસંલ્યાત ગુણેં હૈં (સે તં અણુગમે) હસ પ્રકાર યહ અનુગમ કા સ્વરૂપ હૈ (સે તં જૈગમવવહારાણં અણોવણિહિયા લેત્તાણુપુવ્વી) હસ પ્રકાર યહાં તક નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં કે સ્વરૂપ કા કથન કિયા । સૂત્ર પદોં કા યહ અર્થ હૈ । હસકી વ્યાખ્યા ૧૦ વેં સૂત્ર કે

શાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વીં દ્રવ્યો અવકતવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં છે. (દવ્વટ્ટપપસટ્ટયાપ) દ્રવ્યાર્થતા અને પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (જૈગમવવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અવત્તવ્વગદ્વાઈ) અવકતવ્યક દ્રવ્યો સૌથી ઓછાં છે, કારણ કે (દવ્વટ્ટયાપ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ અવકતવ્યક દ્રવ્યોમાં પહેલાં સર્વસ્તોકતા (સૌથી અધ્ય પ્રમાણ) બતાવવામાં આવેલ છે. (અણાણુપુવ્વીદ્વાઈ દવ્વટ્ટયાપ અપપસટ્ટયાપ વિસેસાહિયાઈ) દ્રવ્યાર્થતા અને અપ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્યો અવકતવ્યક દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. (આણુપુવ્વીદ્વાઈ દવ્વટ્ટયાપ અસંલેજ્જગુણાઈ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો આનુપૂર્વીં દ્રવ્યો અસંખ્યાત ગણાં છે. (પપસટ્ટયાપ) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (તાઈંચેવ) તે આનુપૂર્વીં દ્રવ્યો જ (અસંલેજ્જગુણાઈ) અસંખ્યાત ગણાં છે. (સે તં અણુગમે) આ પ્રકારનું અનુગમનું સ્વરૂપ છે. (સે તં જૈગમવવહારાણં અણોવણિહિયા લેત્તાણુપુવ્વી) આ રીતે અહીં સુધીનાં સૂત્રોમાં નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીંના સ્વરૂપનું કથન કરવામાં આવ્યું છે. સૂત્રપટ્ટોનો આ અર્થ છે તેની વ્યાખ્યા ૬૦માં સૂત્ર પ્રમાણે સમજવી.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૮ અલ્પબહુત્વદ્વારનિરૂપણમ્

૫૦૭

અત્રેદં બોધ્યમ્-દ્રવ્યગણનં દ્રવ્યાર્થતા, પ્રદેશગણનં પ્રદેશાર્થતા, ઉભય-ગણનં તૂભ્યાર્થતા। તન્નાનુપૂર્વાં વિશિષ્ટદ્રવ્યાવગાહોપલક્ષિતાસ્ત્યાદિનમઃ-પ્રદેશસમુદાયા દ્રવ્યાણિ, સમુદાયારમ્ભકાસ્તુ પ્રદેશાઃ। અનાનુપૂર્વાં તુ एकैक-પ્રદેશાવગાહિદ્રવ્યોપલક્ષિતાઃ સકલનમઃપ્રદેશાઃ પ્રત્યેકં દ્રવ્યાણિ, પ્રદેશા-સ્ત્વત્ર ન સંભવન્તિ, एकैकપ્રદેશદ્રવ્યે હિ પ્રદેશાન્તરાયોગાત્। અવક્તવ્યકેષુ તુ

સમાન જાનનીં ચાહ્યે। “અત્રેદં બોધ્યં-દ્રવ્યોં કી ગિનતી કરના હસકા નામ દ્રવ્યાર્થતા હૈ। પ્રદેશોં કી ગિનતી કરના હસકા નામ પ્રદેશાર્થતા હૈ। દ્રવ્યોં ઓર પ્રદેશોં કી દોનોં કી ગિનતી-ગણના કરના ઉભયાર્થતા હૈ। આનુપૂર્વીં મેં વિશિષ્ટ દ્રવ્યોં કે અવગાહ સે ઉપલક્ષિત હુઅ જો નમઃ-પ્રદેશ હૈં ઉન નમઃપ્રદેશોં કે યહ ત્રીન નમઃપ્રદેશોં કા સમુદાય હૈં યહ ચાર નમઃપ્રદેશોં કા સમુદાય હૈં “હત્યાદિ જો સમુદાય હૈં-વે સમસ્ત ય્યાદિ નમઃપ્રદેશ સમુદાય દ્રવ્ય હૈં। ઓર હસ સમુદાયોં કે જો આરં-ભક હૈં વે પ્રદેશ હૈં। અનાનુપૂર્વીં મેં, એક એકપ્રદેશ અવગાહી હુઅ દ્રવ્ય સે ઉપલક્ષિત જો સકલ આકાશપ્રદેશ હૈં વે અલગ ૨ પ્રત્યેક દ્રવ્ય હૈં। પ્રદેશ યહાં સંભવિત નહીં હૈં। ક્યોંકિ એક ૨ પ્રદેશ રૂપ દ્રવ્ય મેં અન્ય પ્રદેશોં કા રહના અસંભવ હૈં અવક્તવ્યકોં મેં લોક મેં જિતને દ્વિક-દો દો પ્રદેશોં કે યોગ હૈં ઉતને વે પ્રત્યેક દ્રવ્ય હૈં। ઓર હન દ્વિક યોગોં કો

“અત્રેદં બોધ્યં” અહીં એવું સમજવાનું છે કે દ્રવ્યોની ગણતરી કરવી તેનું નામ દ્રવ્યાર્થતા છે અને પ્રદેશોની ગણતરી કરવી તેનું નામ પ્રદેશાર્થતા છે. દ્રવ્યોની અને પ્રદેશોની (ઉભયની) ગણતરી કરવી તેનું નામ ઉભયાર્થતા છે. આનુપૂર્વીંમાં, વિશિષ્ટ દ્રવ્યોના અવગાહથી ઉપલક્ષિત (યુક્ત) એવાં બે આકાશપ્રદેશોના “આ ત્રણ આકાશપ્રદેશોનો સમુદાય છે, આ ચાર આકા-શપ્રદેશોનો સમુદાય છે,” છત્યાદિ રૂપ બે સમુદાયો છે તે સમસ્ત ત્રણ આદિ આકાશપ્રદેશોમાં રહેલાં દ્રવ્યસમુદાયો આવી જાય છે. અને તે સમુદાયોના બે આરંભકો છે તેમનું નામ પ્રદેશ છે.

અનાનુપૂર્વીંમાં, એક એક પ્રદેશમાં અવગાહિત થયેલા દ્રવ્યથી ઉપલક્ષિત બે સમસ્ત આકાશપ્રદેશો છે તેઓ અલગ અલગ પ્રત્યેક દ્રવ્ય છે અહીં પ્રદેશ સંલવિત નથી, કારણ કે એક એક પ્રદેશ રૂપ દ્રવ્યમાં અન્ય પ્રદેશોનું અસ્તિત્વ અસંલવિત છે. અવક્તવ્યકોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો લોકમાં બેટલાં દ્વિયોગ (બન્ને પ્રદેશોના યોગ) છે, એટલાં તે પ્રત્યેક દ્રવ્ય છે, અને તે દ્વિયોગોનો આરંભ કરનારા પ્રદેશો છે.

યાવન્તો લોકે દ્વિકયોગાઃ સંભવન્તિ તાવન્તિ પ્રત્યેકં દ્રવ્યાણિ, તદારમ્મ-
કાસ્તુ પ્રદેશા इति। किंच 'संवत्थोवाइं णेगमववहारणं अवत्तव्वगदव्वाइं
इत्यादि यदुक्तं तत्रोच्यते-ननु यदा पूर्वोक्तयुक्त्या एकैको नभःप्रदेशोऽनेकेषु
द्विकसंयोगेषूपयुज्यते, तदा अनानुपूर्वी द्रव्येभ्योऽवक्तव्यकद्रव्याणामेव बाहुल्य-
सुपलभ्यते, पञ्चप्रदेशनभःकल्पनायामपि पञ्चसंख्यकेभ्योऽनानुपूर्वीद्रव्येभ्योऽष्ट-
संख्यकानामवक्तव्यकद्रव्याणामेव आधिक्यदर्शनात्, तत् कथमिदोक्तं 'संवत्थो-
वाइं णेगमववहारणं अवत्तव्वगदव्वाइं' इति ? अत्रोच्यते-लोकमध्यमात्रमाश्रित्य
अवक्तव्यकद्रव्याणामाधिक्यमुक्तम्। परन्तु लोकपर्यन्तस्थितनिष्कुटगता ये कण्ड-

आरંભ કરને વાંછે પ્રદેશ હૈં । કિંચ- “ સવ્વત્થોવાઈં ણેગમવવહારણં
અવત્તવ્વગદવ્વાઈં ” इत्यादि जो कहा है उसके विषय में शंकाकार का
ऐसा कहना है कि पहिले प्रदर्शित युक्तिके अनुसार जब एक एक
अकाशप्रदेश अनेक द्विक संयोगों में उपयुक्त होता है तब
अनानुपूर्वी द्रव्यों से अवक्तव्यक द्रव्यों की ही बहुलता मालूम
देनी है जैसा पहिले कहा गया है कि आकाश के कल्पित पांच
प्रदेशों में एक २ प्रदेश पर अनानुपूर्वी द्रव्य रहता है और आठ अवक्त-
व्यक द्रव्य रहते हैं। अतः इस कथन से अनानुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा
अवक्तव्यक द्रव्यों की बहुलता पाई जाती है। तो फिर यहां ऐसे कैसे
कहा कि नैगमव्यवहारनय संमत अवक्तव्यक द्रव्य सर्वस्तोक हैं ?

उत्तर-लोकके मध्यभाग मात्र को आश्रित करके अवक्तव्यक द्रव्यों
में अधिकता कही गई है। परन्तु जो एक २ प्रदेश लोक के अन्त तक

શંકા-“ સવ્વત્થોવાઈં ણેગમવવહારણં અવત્તવ્વગદવ્વાઈં ” આપે એવું
જે કહ્યું છે કે નેગમવ્યવહારનય સંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો સૌથી ઓછાં છે,
પરન્તુ આપનું આ કથન બરાબર લાગતું નથી પહેલાં આપે જ એ વાતનું
પ્રતિપાદન કર્યું છે કે એક એક આકાશપ્રદેશ અनेक द्विक संयोगોમાં ઉપયુક્ત
થાય છે, અને તેથી જ અનानુपूर्वी દ્રવ્યો કરતાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની જ
અધિકતા હોવી જોઈએ આપે પહેલાં એવું કહ્યું છે કે લોકના પાંચ પ્રદેશો
હોય તો દરેક પ્રદેશમાં એક એક અનानુपूर्वी દ્રવ્યની અવગાહના હોય તો
પાંચ પ્રદેશોમાં પાંચ અનानુपूर्वी દ્રવ્યો હોઈ શકે અને તે પાંચ પ્રદેશોમાં
આઠ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો રહી શકે આપના પૂર્વોક્ત આ કથન દ્વારા તો અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્યો અનानુपूर्વી દ્રવ્યો કરતાં અધિક હોવાની વાતને જ પુષ્ટિ
મળે છે. છતાં અહીં આપે શા કારણે એવું કથન કર્યું છે કે નેગમવ્યવહાર
નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો સર્વસ્તોક છે ?

ઉત્તર-લોકના મધ્યભાગ માત્રને અનુલક્ષીને અવક્તવ્ય દ્રવ્યોની અધિ-
કતા બતાવવામાં આવી છે. પરન્તુ જે એક એક પ્રદેશ લોકના અન્ત પર્યન્ત

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ११८ अवक्तव्यत्वद्वारनिरूपणम्

५०६

काकृतयो विश्रेण्या निर्गता एकाकिनः प्रदेशास्ते विश्रेणिव्यवस्थितत्वादवक्तव्यक-
त्वादवक्तव्यकत्वायोग्या इति तेषामनानुपूर्वीसंख्यायामेवान्तर्भावो भवति । अतो
लोकमध्यस्थितां निष्कुटगतां च अनानुपूर्वीद्रव्यसंख्यां मीलयित्वा यदा केवली
निर्दिशति, तदाऽवक्तव्यकद्रव्याण्येव स्तोकानि, अनानुपूर्वीद्रव्याणि तु ततो विशे-
षाधिकानि । अत्र निष्कुटस्थापना ४४४ इति । अत्र विश्रेणिलिखितौ द्वौ अव-
क्तव्यकायोग्यौ द्रष्टव्यौ । इत्थम्भूताश्रमी सर्वलोकपर्यन्तेषु तु बहवः सन्ति,
इत्थनानुपूर्वीद्रव्याणाम् अवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया बाहुल्यं बोध्यम् । अतएवोक्तम्-
'सर्वस्थोवाइं जोगमवहारणं अवक्तव्यगदवाइं' इति । अनानुपूर्वीद्रव्याणां तु तेभ्यो-

स्थित एवं निष्कुट स्थान में हैं और जिनका आकार कण्टक जैसा है,
श्रेणि से जो निकले हुए नहीं हैं, ऐसे वे प्रदेश विश्रेणि में व्यवस्थित
होने के कारण अवक्तव्यक के योग्य नहीं माने गये हैं । अतः इनका
अन्तर्भाव अनानुपूर्वी की संख्या में ही हुआ है । इसलिये लोक के
मध्य में स्थित और निष्कुट जो अनानुपूर्वी द्रव्यों की संख्या है उसको
मिलाकर जिस समय-केवली भगवान् इसका कथन करते हैं । तब वे-
ऐसा ही कहते हैं कि अवक्तव्यक द्रव्यही स्तोक हैं और अनानुपूर्वीद्रव्य
उनसे कुछ अधिक हैं । निष्कुट की स्थापना यहां ४ ४ ४ इस प्रकार से
है । इसमें विश्रेणि लिखित दो अवक्तव्यक के अयोग्य हैं । इस प्रकार के
तो ये समस्त लोक के अन्त तक बहुत हैं । इसलिये अवक्तव्यक द्रव्यों
की अपेक्षा अनानुपूर्वी द्रव्यों की अधिकता जाननी चाहिये ?

स्थित (रहेले) છે અને નિષ્કુટસ્થાનમાં છે અને જેનો આકાર કંટક (કાંટા) જેવો
છે, શ્રેણિમાંથી જેઓ નીકળેલા નથી, એવા તે પ્રદેશો વિશ્રેણિમાં व्यवस्थित
હોવાને કારણે તેમને अवक्तव्यक કહેવાને योग्य ગણ્યા નથી તેથી તેમનો
સમાवेश अनानुपूर्वीની સંખ્યામાં જ થયો છે. તેથી હોકની મધ્યમાં स्थित
अनानुपूर्वी द्रव्यો અને निष्कुटगत अनानुपूर्वी द्रव्योंની संख्याનો सरवाणो
કરીને જ્યારે કેવલીભગવાન તેમનું કથન કરે છે ત્યારે તેઓ એવું જ કહે
છે કે अवक्तव्यक द्रव्यो જ એમાં છે અને अनानुपूर्वी द्रव्यो તેમના કરતાં
विशेषाधिक છે નિષ્કુટની स्थापना (आकृति) अही आ प्रमाणे છે-‘४४४’
તેમાં વિશ્રેણિ લિખિત બે अवक्तव्यकને योग्य નથી. આમ તો તેઓ સમસ્ત
હોકના અન્ત સુધીમાં ઘણાં જ છે. આ પ્રકારની परिस्थितिને કારણે જ
अवक्तव्यक द्रव्यो કરતાં अनानुपूर्वी द्रव्योंની अधिकता समझવી જોઇએ.

ડાંડાતપૂર્ણતામુકતેવ । વિશેષસ્ત્ર-ઉમયાર્થતાવિચારે આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ સ્વદ્રવ્યે-
ભ્યઃ પ્રદેશાર્થતયાડસંખ્યેયગુણાનિ, એકેકસ્ય તાવદ્ દ્રવ્યસ્ય વ્યાદિભિરસંખ્યેયૈર્નમઃ
પ્રદેશૈરાવધત્વાત્, નમઃપ્રદેશાનાં ચ સંમિલિતાનામપિ અસંખ્યેયત્વાદિતિ । પ્રસ્તુત-
વિષયમુપસંહરન્નાહ-“સે તં” इत्यादि स एषोऽनुगमः-अनुगमविषयोऽत्रसम्पूर्णः ।
तत्समाप्तौ नैगमव्यवहारसम्मतोऽनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी उपसंहृतेति तदुपसंहार-
माह-“से तं जेगम०” इत्यादि-सैषा नैगमव्यवहारसम्मतोऽनौपनिधिकी क्षेत्रानु-
पूर्वी सम्पूर्णा ॥सू० ११८॥

इसलिये अब सूत्रकारने “सत्त्वत्थोवाहं जेगमव्यवहाराणं अवत्तव-
गदव्वाहं” ऐसा कहा है । अनानुपूर्वी द्रव्य उनसे असंख्यात गुणे हैं
यह बात पहिले स्पष्ट की जा चुकी है । यहां इतनी विशेषता और है
कि जिस प्रकार आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी द्रव्यों से असंख्यात गुणे
हैं । उसी प्रकार वे उभयार्थता से विचरित होने पर प्रदेशार्थता की
अपेक्षा अपने २ द्रव्यों से भी असंख्यात गुणे हैं । क्योंकि एक २ आनु-
पूर्वी द्रव्य तीन आदि असंख्यात नमः प्रदेशों (आकाश) से निष्पन्न
होता है और संमिलित हुए भी वे नमःप्रदेश असंख्यात ही होते हैं ।
इस प्रकार अनुगम का विषय समाप्त होते ही नैगमव्यवहारनयसंमत
अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी का कथन समाप्त हो गया-इस विषय की
सूचना “से तं”, इत्यादि पदों द्वारा सूत्रकार ने दी है ॥ सू० ११८ ॥

તેથી જ સૂત્રકારે એવું કહ્યું છે કે “ સત્ત્વત્થોવાહં જેગમવ્યવહારાણં અવ-
ત્તવગદ્વાહં ” “ નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અવકતવ્યક દ્રવ્યો સૌથી ઓછાં
છે. ” અનુપૂર્વી દ્રવ્યો તેમના કરતાં (અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કરતાં) અસંખ્યાત
ગણાં છે, એ વાત તો પહેલાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવી ચુકી છે. અહીં એટલી
વધુ વિશેષતા છે કે જે પ્રકારે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં
અસંખ્યાત ગણાં છે, એજ પ્રમાણે ઉભયાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં
આવે તો પણ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં
જ છે કારણ કે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ પણ એજ પ્રકારની પરિસ્થિતિ છે
કારણ કે પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ત્રણ આદિ અસંખ્યાત આકાશપ્રદેશો વડે
નિષ્પન્ન થાય છે, અને તે આકાશપ્રદેશોની એકંદર સંખ્યા પણ અસંખ્યાત
જ થાય છે. આ પ્રકારે અનુગમનું વિષય નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય છે.
અને અનુગમનું વર્ણન સમાપ્ત થવાથી નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિધિકી
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન પણ પૂરું થાય છે. “ સે તં ” ઇત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે
એજ વાત સૂચિત કરી છે. ॥સૂ० ૧૧૮॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र ११९ अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वीनिरूपणम् ५११

इत्थं नैगमव्यवहारसम्मतानौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमुक्त्वा सम्प्रति संग्रहणय
संमतानौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमाह—

मूलम्—से किं तं संगहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी ?
संगहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा
अत्थपयपरूवणया१, भंगसमुक्कित्तणया२, भंगोवदंसणया३, समो-
यारे४, अणुगमे५। से किं तं संगहस्स अत्थपयपरूवणया?,
संगहस्स अत्थपयपरूवणया—तिप्पएसोगाढे आणुपुव्वी, चउप्पए-
सोगाढे आणुपुव्वी, जाव दसपएसोगाढे आणुपुव्वी, संखिज्ज-
पएसोगाढे आणुपुव्वी, असंखिज्जपएसोगाढे आणुपुव्वी,
एगपएसोगाढे अणाणुपुव्वी, दुप्पएसोगाढे अवत्तव्वए। से तं
संगहस्स अत्थपयपरूवणया। एयाए णं संगहस्स अत्थपयपरूव-
णयाए किं पओयणं?, संगहस्स अत्थपयपरूवणयाए संगहस्स
भंगसमुक्कित्तणया कज्जइ। से किं तं संगहस्स भंगसमुक्कित्त-
णया?, संगहस्स भंगसमुक्कित्तणया अत्थि आणुपुव्वी, अत्थि
अणाणुपुव्वी अत्थि अवत्तव्वए। अहवा अत्थि आणुपुव्वी
अणाणुपुव्वी य, एवं जहा दव्वाणुपुव्वीए संगहस्स तहा भाणि-
यव्वं जाव से तं संगहस्स भंगसमुक्कित्तणया। एयाए णं संग-
हस्स भंगसमुक्कित्तणयाए किं पओयणं? एयाए णं संगहस्स
भंगसमुक्कित्तणयाए संगहस्स भंगोवदंसणया कज्जइ। से किं
तं संगहस्स भंगोवदंसणया?, संगहस्स भंगोवदंसणया—तिप्पए-
सोगाढे आणुपुव्वी, एगपएसोगाढे अणाणुपुव्वी, दुप्पएसोगाढे
अवत्तव्वए। अहवा तिप्पएसोगाढे य एगपएसोगाढे य आणु-

પુઘ્વી ય અણાણુપુઘ્વી ય, એવં જહા દઘ્વાણુપુઘ્વીએ સંગહસ્સ તહા છેત્તાણુપુઘ્વીએ વિ ભાણિયઘ્વં જાવ સે તં સંગહસ્સ મંગો-વદંસણયા। સે કિં તં સમોયારે? સમોયારે—સંગહસ્સ આણુ-પુઘ્વીદઘ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ? કિં આણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોય-રંતિ? અણાણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં? અવત્તઘ્વગદઘ્વેહિં? તિણિવિ સઘ્ઢાણે સમોયરંતિ। સે તં સમોયારે। સે કિં તં અણુગમે? અણુ-ગમે અઘ્ઢવિહે પળ્ણત્તે, તં જહા—સંતપ્પપરૂવણયા જાવ અપ્પા-વઠું નત્થિ। સંગહસ્સ આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ? ણિયમા અત્થિ। એવં તિણિ વિ। સેસગદારાઈં જહા દઘ્વાણુ-પુઘ્વીએ સંગહસ્સ તહા છેત્તાણુપુઘ્વીએ વિ ભાણિયઘ્વાઈં જાવ સે તં અણુગમે। સે તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી। સે તં અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી ॥સૂ. ૧૧૯॥

જાણા—અથ કા તા સંગ્રહસ્ય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી? સંગ્રહસ્ય અનૌપ-નિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પશ્ચવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા—અર્થપદમરૂપણતા ૧, મંગસમુત્કીર્ત-

હસ પ્રકાર નૈગમઘ્વ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરકે અથ સૂત્રકાર સંગ્રહનય માન્ય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં—સે કિં તં ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી?)

પ્રશ્ન—હે મદન્ત! પૂર્વપ્રકાન્ત પહિલે પ્રારંભ કી હુઈ ઉસ સંગ્રહનય માન્ય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

આ પ્રકારે નૈગમઘ્વ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂ-પણ કરીને હવે સૂત્રકાર સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—“સે કિં તં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી?) હે ભગવન્! પૂર્વપ્રકાન્ત-પહેલાં જેનો પ્રારંભ થઈ ચુકયો છે એવી—સંગ્રહનયસંમત અનૌ-પનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૧૯ અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૫૧૩

મતાર, મંગોપદર્શનતા, સમવતાર, ૪, અનુગમ: ૫ । અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અર્થપદ-
પ્રરૂપણતા ? સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા-ત્રિપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી, ચતુષ્પ્રદેશાવગાઢ-
આનુપૂર્વી, યાષદ્ દશપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી, સંસ્થાયપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી,

ઉત્તર-(સંગ્રહસ્ત અળોવણિહિયા લેસાણુપુઢ્વી પંચવિહા પળ્ણતા) સંગ્રહનયમાન્ય અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકાર કી કહી ગઈ છે । (તં જહા) ઉસકે લે પ્રકાર લે હૈં-(અત્થપયપરૂવળયા) ૧ અર્થપદપ્રરૂપ-
ણતા (મંગસમુક્ષિતળયા) ૨ મંગસમુત્કીર્તનતા (મંગોવદંસળયા) ૩ મંગોપદર્શનતા (સમોચારે) ૪ સમવતાર (અનુગમે) ઓર અનુગમ ।

પ્રશ્ન-(સે કિં તં સંગ્રહસ્ત અત્થપયપરૂવળયા) સંગ્રહનય માન્ય અર્થ-
પદપ્રરૂપણતા કયા હૈ ?

ઉત્તર (સંગ્રહસ્ત અત્થપયપરૂવળયા) સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા
હસ પ્રકાર સે હૈં-(તિપ્પણસોગાઢે આણુપુઢ્વી) ત્રીન પ્રદેશ મેં અવગાઢ-
સ્થિત-જ્યણુક આદિ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈ (ચલ્પણસોગાઢે આણુપુઢ્વી)
ચાર પ્રદેશો મેં અવગાઢ ચતુરણુક આદિ આનુપૂર્વી હૈ-

(જાલ દસપણસોગાઢે આણુપુઢ્વી) યાષદ્ દશપ્રદેશાવગાઢ દ્રવ્ય
આનુપૂર્વી હૈ (સંલ્લિજ્જપણસોગાઢે આણુપુઢ્વી) સંસ્થાત પ્રદેશાવગાઢ
દ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈ । (અસંલ્લિજ્જપણસોગાઢે આણુપુઢ્વી) અસંસ્થાત પ્રદે-

ઉત્તર-(સંગ્રહસ્ત અળોવણિહિયા લેસાણુપુઢ્વી પંચવિહા પળ્ણતા) સંઘઠનય-
સંમત અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની ઠહી છે. (તંજહા) તે પ્રકાર
નીથે પ્રમાણે છે-(અત્થપયપરૂવળયા) (૧) અર્થપદપ્રરૂપણતા, (મંગસમુક્ષિતળયા)
(૨) મંગસમુત્કીર્તનતા, (મંગોવદંસળયા) (૩) મંગોપદર્શનતા, (સમોચારે)
(૪) સમવતાર અને (અનુગમે) (૫) અનુગમ.

પ્રશ્ન-(સંગ્રહસ્ત અત્થપયપરૂવળયા) સંઘઠનયમાન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતાનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(સંગ્રહસ્ત અત્થપયપરૂવળયા) સંઘઠનયમાન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા આ
પ્રકારની છે-(તિપ્પણસોગાઢે આણુપુઢ્વી) ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાઢ (રહેલું) ત્રણ
અણુવાળું દ્રવ્ય આનુપૂર્વી રૂપ છે, (ચલ્પણસોગાઢે આણુપુઢ્વી) ચાર પ્રદેશોમાં
અવગાઢ ચાર અણુવાળું દ્રવ્ય પણ આનુપૂર્વી છે, (જાલ દસપણસોગાઢે આણુ-
પુઢ્વી) દશ પદ્યંતના પ્રદેશોમાં અવગાઢ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી છે, (સંલ્લિજ્જપણ-
સોગાઢે આણુપુઢ્વી) સંસ્થાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી છે, (અસં-
લ્લિજ્જપણસોગાઢે આણુપુઢ્વી) અને અસંસ્થાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ દ્રવ્ય પણ

અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાદ આનુપૂર્વી, એકપ્રદેશાવગાદ અનાનુપૂર્વી, દ્વિપ્રદેશાવગાદઃ અવક્તવ્યકમ્ । સૈવા સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા । एतस्याः खलु संग्रहस्य अर्थ-प्ररूपणतायाः किं प्रयोजनम् ? संग्रहस्य अर्थपरूपणतया संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता क्रियते । कोऽसौ संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता ? भङ्गसमुत्कीर्तनता अस्ति आनुपूर्वी, अस्ति अनाનુपूर्वी, अस्ति अवक्तव्यकम् । अथवा अस्ति आनुपूर्वी च अनानુपूर्वी च ।

શાવગાદ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી છે । (एगपएसोगादे अणानुपुञ्ची) એક પ્રદેશાવગાદ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી છે । (दुप्पएसोगादे अवक्तव्यए) दो प्रदेशावगाद द्रव्य अवक्तव्यक है । (से तं संगहस्स अत्थपयपरूवणया) इस प्रकार यह संग्रहनय मान्य अर्थपदप्ररूपणता है । (एयाएणं संगहस्स अत्थपयपरूवणयाए किं पओयणं) इस संग्रहनयमान्य अर्थपदप्ररूपणता से क्या प्रयोजन सिद्ध होता है ? (संगहस्स अत्थपयपरूवणयाए संगहस्स भंगसमुत्किस्सणया कज्जई)

ઉત્તર-इस संग्रहनयमान्य अर्थपदप्ररूपणता से संग्रहनयमान्य भंगसमुत्कीर्तनता की जानी है । यही इसका प्रयोजन है (से किं तं संगहस्स भंगसमुत्किस्सणया) हे भदन्त ! संग्रहनय मान्य यह भंगसमुत्कीर्तनता क्या है ? (संगहस्स भंगसमुत्किस्सणया अत्थि आणुपुञ्ची अत्थि अणानुपुञ्ची अत्थि अवक्तव्यए) संग्रहनय मान्य भंगसमुत्कीर्तनता ऐसी है कि आनुपूर्वी है अनानुपूर्वी है अवक्तव्यक द्रव्य है । (अहवा अत्थि आणु

આનુપૂર્વી છે. (एगपएसोगादे अणानुपुञ्ची) એક પ્રદેશામાં અવગાદ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ છે, (दुप्पएसोगादे अवक्तव्यए) दो प्रदेशोंमें अवगाद द्रव्य अवक्तव्यक છે. (से तं संगहस्स अत्थपयपरूवणया) संग्रहनयमान्य अर्थपदप्ररूपणताનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન-(एयाएणं संगहस्स अत्थपयपरूवणयाए किं पओयणं?) આ संग્રહનયમાન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા વડે કયા પ્રયોજનની સિદ્ધિ થાય છે ?

ઉત્તર-(संगहस्स अत्थपयपरूवणयाए संगहस्स भंगसमुत्किस्सणया कज्जई) આ संग્રહનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા દ્વારા संग्रहनयमान्य भंगसमुत्कीर्तनता કરવામાં આવે છે. એટલું જ તેનું પ્રયોજન છે.

પ્રશ્ન-(से किं तं संगहस्स भंगसमुत्किस्सणया ?) હે ભગવન્ ! संग्रहनयसंમત તે भंगसमुत्कीर्तनताનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(संगहस्स भंगसमुत्किस्सणया अत्थि आणुपुञ्ची, अत्थि अणानुपुञ्ची अत्थि अवक्तव्यए) संग्रहनयसंमत भंगसमुत्कीर्तनता આ પ્રકારની છે-આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે. (अहवा अत्थि आणुपुञ्ची,

अनुयोगबन्धिका टीका सूत्र ११९ अनौपनिषिती क्षेत्रानुपूर्वीनिरूपणम् ५१५

एवंयथा द्रव्यानुपूर्व्याः संग्रहस्य तथा भणितव्यं यावत् सैषा संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता । एतस्याः खलु संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनतायाः किं प्रयोजनम् ? एतया खलु संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनतया संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता क्रियते । अथ काऽसौ संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता ? संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता—त्रिप्रदेशावगाढः

पुर्व्वी, अणानुपुर्व्वीय एवं जहा द्रव्याणुपुर्व्वीय संग्रहस्स तहा भाणियव्वं जाव से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया) अथवा-आनुपूर्वी है अनानुपूर्वी है इस प्रकार जिस रीति से द्रव्यानुपूर्वी के प्रकरण में संग्रहनय मान्य भंगसमुत्कीर्तनता का स्वरूप कहा गया है, उसी प्रकार से इस क्षेत्रानुपूर्वी में भी संग्रहनयमान्य भंगसमुत्कीर्तनता का स्वरूप जानना चाहिये । यह स्वरूप कथन का संग्रह “ से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया ” इसपाठ तक करना चाहिये । (एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए किं पओयणं ? कज्जइ) इस संग्रहनय मान्य भंगसमुत्कीर्तनता को क्या प्रयोजन है ?

उत्तर—(एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए संग्रहस्स भंगोवदंसणया कज्जइ) इस संग्रहनय मान्य भंगसमुत्कीर्तनता से संग्रहनय मान्य भंगोपदर्शनता की जाती है । (से किं तं संग्रहस्स भंगोवदंसणया ?) हे भदन्त ! संग्रहनय मान्य वह भंगोपदर्शनता क्या है ?

अणानुपुर्व्वी य, एवं जहा द्रव्याणुपुर्व्वीय संग्रहस्स तहा भाणियव्वं जाव से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया) अथवा “ आनुपूर्वी” छे, अनानुपूर्वी” छे ” धियादि जे प्रकारतुं कथन द्रव्यानुपूर्वीना प्रकरणुमां स'अङ्गनयस'भत अ'गस-मुत्कीर्तनता विषयमां करवामां आ'नु' छे अज प्रकारतुं कथन आ क्षेत्रानु-पूर्वीमां पणु स'अङ्गनयमान्य अ'गसमुत्कीर्तनताना विषयमां पणु समणु' जेधअ आ कथन “ से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया ” आ सूत्रपाठ पर्थन्त करवु' जेधअ.

प्रश्न—(एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए किं पओयणं ?) आ स'अङ्गन-यमान्य अ'गसमुत्कीर्तनतानुं प्रयोजन थुं छे ?

उत्तर—(एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए संग्रहस्स भंगोवदंसणया कज्जइ) आ स'अङ्गनयमान्य अ'गसमुत्कीर्तनता वडे स'अङ्गनयमान्य अ'गोपद-र्शनता करवामां आवे छे.

प्रश्न—(से किं तं संग्रहस्स भंगोवदंसणया ?) छे अजवन ! स'अङ्गनयस'भत ते अ'गोपदर्शनतानुं स्वप्प-डेवुं छे ?

આનુપૂર્વી, એકપદેશાવગાઠઃ આનુપૂર્વી દ્વિપદેશાવગાઠઃ અવક્તવ્યકમ્ ।
 અથવા—ત્રિપદેશાવગાઠશ્ચ એકપદેશાવગાઠશ્ચ આનુપૂર્વી ચ અનાનુપૂર્વી
 ચ, एवं यथा द्रव्यानुपूर्व्यां संग्रहस्य तथा क्षेत्रानुपूर्व्यामपि भणितव्यं
 યાવત્ સૈષા સંગ્રહસ્ય મજ્જોપદર્શનતા । અથ કોઽસૌ સમવતારઃ ? સમવતારઃ—
 સંગ્રહસ્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ ? કિમાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ?
 અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ ? અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ ? ત્રીણ્યપિ સ્વસ્થાને સમવતરન્તિ, સોઽસૌ
 સમવતારઃ । અથ કોઽસાવનુગમઃ ? અનુગમઃ અષ્ટવિધઃ પ્રજ્ઞમઃ, તદ્યથા—યાવત્
 અલ્પબહુત્વં નાસ્તિ । સંગ્રહસ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્
 સન્તિ । एवं ત્રીણ્યપિ । શેષકદ્વારાણિ યથા દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યાં સંગ્રહસ્ય તથા ક્ષેત્રાનુ-
 પૂર્વ્યામપિ ભણિતવ્યાનિ યાવત્ સ ઇષોઽનુગમઃ । સૈષા સંગ્રહસ્ય અનૌપનિધિકી
 ક્ષેત્રાનુપૂર્વી । સૈષા અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ॥ સૂ૦ ૧૧૯ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । संग्रहनयामिमत्त द्रव्यानुपूर्वीवदेव प्राय इदमपि
 सूत्रम् । अतो व्याख्यातमायमेव, अस्य व्याख्या चतुर्नवतितमसूत्रादारभ्य सप्त-
 नवतिपर्यन्तसूत्रे विलोकनीया ॥ सू० ११९ ॥

इत्थमनौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमभिधाय सम्प्रत्यौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमाह—

मूळम्—से किं तं ओवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी? ओवणिहिया
 खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पणत्ता, तं जहा, पुव्वाणुपुव्वी, पच्छाणु-
 पुव्वी, अणाणुपुव्वी । से किं तं पुव्वानुपुव्वी? पुव्वानुपुव्वी—
 अहोलोए तिरियलोए उड्डलोए । से तं पुव्वानुपुव्वी । से किं तं

उत्तर—(संग्रहस्य भंगोवर्दसणया) संग्रहनय मान्य भंगोपदर्श-
 नता इस प्रकार से है—(तिप्पएसोगाढे आणुपुव्वी) त्रिपदशावगाढ आनु-
 पूर्वी इत्यादि आगेके समस्त पदों का अर्थ संग्रहनय मान्य द्रव्यानुपूर्वी
 में कथित भंगसमुत्कीर्तनता आदि के सूत्रों की व्याख्या के अनुसार ही
 है । इसलिये इनमें पदों की व्याख्या के लिये पिछे ९४ वें सूत्र से लेकर
 ९७ वें तक के सूत्रों को देखना चाहिये ॥ सू० ११९ ॥

ઉત્તર—(સંગ્રહસ્ય ભંગોવર્દસણયા) સંગ્રહનયમાન્ય ભંગોપદર્શનતાનું
 સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(તિપ્પસોગાઢે આણુપુવ્વો) ત્રિપદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી ઇત્યાદિ પૂર્વોક્ત
 સમસ્ત પદોનો અર્થ સંગ્રહનયમાન્ય દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં કહેવામાં
 આવેલ ભંગસમુત્કીર્તનતા આદિના સૂત્રોની વ્યાખ્યા પ્રમાણે જ છે. તેથી
 તેમાં જે પદો આવે છે તેમની વ્યાખ્યા જાણવા માટે ૯૪ થી ૯૭ સુધીના
 સૂત્રો વાંચી જવાની જાણામણ કરવામાં આવે છે. ॥સૂ૦ ૧૧૯॥

અનુયોગધ્વનિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૦ ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૫૧૭

પચ્છાણુપુવ્વી? પચ્છાણુપુવ્વી ઉઢ્ઢલોષ તિરિણ્લોષ અહોલોષ ।
સે તં પચ્છાણુપુવ્વી । સે કિં તં અણાણુપુવ્વી? અણાણુપુવ્વી
પયાણ્ણેવ પગાઢયાણ્ણ પગુત્તરિયાણ્ણ તિગચ્છગયાણ્ણ સેઢીણ્ણ
અન્નમન્નભાસો દુરૂવ્ણો । સે તં અણાણુપુવ્વી ॥સૂ૦ ૧૨૦॥

છાયા—અથ કા સા ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી? ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી
ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુ-
પૂર્વી? પૂર્વાનુપૂર્વી—અધોલોક, તિર્યગ્લોક, ઉર્ધ્વલોક । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા

હસ પ્રકાર અનૌપનિધિ કી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરકે અથ સૂત્ર-
કાર ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઓવણિહિયા લેક્ષાણુપુવ્વી?) હે અદન્ત !
સંપ્રહનય માન્ય ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ?—

ઉત્તર—(ઓવણિહિયા લેક્ષાણુપુવ્વી ત્રિવિધા પળ્ણતા) ઔપનિધિકી
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ—(તં જહો) લે ઉસકે પ્રકાર લે
હૈ—(પુવ્વાણુપુવ્વી, પચ્છાણુપુવ્વી અણાણુપુવ્વી) ૧ પૂર્વાનુપૂર્વી ૨ પશ્ચાનુ-
પૂર્વી (૩) અનાનુપૂર્વી (સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—(અહો લોષ,
તિરિણ્ણલોષ, ઉઢ્ઢલોષ) અધોલોક તિર્યગ્લોક ઉર્ધ્વલોક । (સે તં પુવ્વાણુ-
પુવ્વી) યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં પચ્છાણુપુવ્વી) પચ્છાણુપૂર્વી કયા હૈ?

આ પ્રમાણે અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર
ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન કરે છે—“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઓવણિહિયા લેક્ષાણુપુવ્વી?) હે અદન્ત ! સંપ્રહ-
નયમાન્ય ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(ઓવણિહિયા લેક્ષાણુપુવ્વી ત્રિવિધા પળ્ણતા) ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વી ત્રણ પ્રકારની ઠહી છે. (તંજહો) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(પુવ્વાણુ-
પુવ્વી, પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી એટલે શું?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(અહોલોષ,
તિરિણ્ણલોષ, ઉઢ્ઢલોષ) અધોલોક, તિર્યગ્લોક અને ઉર્ધ્વલોક, (સે તં પુવ્વાણુપુવ્વી)
આ કમે કહેલું તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

૫૧૮

અનુયોગદ્વારસૂત્ર

સા પશ્ચાનુપૂર્વી-પશ્ચાનુપૂર્વી ઉર્ધ્વલોકઃ, તિર્યગ્લોકઃ, અધોલોકઃ। સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વીઃ।
અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-एतस्यामेव एकादिकायामेकोत्तरिकायां
त्रिगच्छगतायां श्रेण्यामन्योन्याभ्यासो द्विरूपन्यूनः। सैवा अनानुपूर्वी ॥सू० १२०॥

टीका—‘સે કિં તં’ હત્યાદિ। વ્યાખ્યાકૃતપાયા। ઉર્ધ્વલોકાદિ લોકત્રય-
વિષયે કિંચિદુચ્યતે-ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીપ્રસ્તાવે દ્રવ્યાનુપૂર્વધિકારાદ્ ધર્મા-

उत्तर-(पञ्चाणुपुर्वी) पश्चानुपूर्वी इसप्रकार से है-उड्डलोए तिरि-
यलोए अहोलोए) उर्ध्वलोक, तिर्यग्लोक, अधोलोक, (से सं पञ्चा-
णुपुर्वी) यह पश्चानुपूर्वी है। (से किं तं अणाणुपुर्वी) अनानुपूर्वी क्या है?

(अणाणुपुर्वी) अनानुपूर्वी इस प्रकार से हैं। (एयाएचेव एगइयाए एगु-
त्तरियाए त्रिगच्छगयाए सेढीए अणमणमभासो दुरुवणो-से तं अणा-
णुपुर्वी) जिसमें पूर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी ये दोनों नहीं हैं उसका नाम
अनानुपूर्वी है इसमें विवक्षित अधोलोक आदि क्रमव्य को उल्लंघनकरके
परस्पर संभवित भांगों से उन पदों की विरचना की जाती है। इस अनानु-
पूर्वी में जो श्रेणी स्थापित की जाती है, उसमें सब से पहिले १ एक संख्या
स्थापित की जाती है-बाद में एक २ की उत्तरोत्तर वृद्धि तीन संख्या-
तक होती चली जाती है। फिर इनमें परस्पर में गुणा किया जाता है।
इस प्रकार अन्योन्याभ्यस्त राशि बन जाती है। इसमें से आदि अंत के

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પન્ચાણુપુર્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી કોને કહે છે ?

ઉત્તર-(પન્ચાણુપુર્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે-(ઉડ્ડલોય, તિરિ-
યલોય, અહોલોય) ઉર્ધ્વલોક, તિર્યગ્લોક અને અધોલોક, આ પ્રમાણે ઊલટા
ક્રમે કહેવું (સે તં પન્ચાણુપુર્વી?) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી એટલે શું ?

ઉત્તર-(અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે-(એયાએ ચેવ
એગાઇયાએ એગુત્તરિયાએ ત્રિગચ્છગયાએ સેઢીએ અણમણમભાસો દુરુવણો-સે તં અણા-
ણુપુર્વી) જેમાં પૂર્વાનુપૂર્વી અને પશ્ચાનુપૂર્વી એ બન્નેનો અભાવ હોય છે,
એવા ક્રમપૂર્વક કથન કરવું તેનું નામ અનાનુપૂર્વી છે. તેમાં ઉપયુક્ત બન્ને
ક્રમનું ઉલ્લંઘન કરીને પરસ્પરની સાથે સંભવિત ભાંગો (ભાંગાઓ) વડે તે
પહોની વિરચના કરવામાં આવે છે. આ અનાનુપૂર્વીમાં જે શ્રેણી સ્થાપિત
કરવામાં આવે છે, ત્યાર બાદ ત્રણ સંખ્યા સુધી ઉત્તરોત્તર એક એક
સંખ્યાની વૃદ્ધિ થતી રહે છે. ત્યાર બાદ તેમનો પરસ્પરમાં ગુણાકાર કરાય છે.
આ પ્રકારે અન્યોન્ય અભ્યસ્ત રાશિ બની જાય છે તેમાંથી આદિ અને

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૦ ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૫૧૬

સ્તિકાયાદીનિ દ્રવ્યાણિ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિત્વેન ૯૮ અષ્ટનવતિ સુત્રે ઉદાહરતાનિ ।
અત્ર તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યાઃ મસ્તાવાત્ અધોલોકાદયઃ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિત્વેનોક્તાઃ । અધો-
લોકાદિવિભાગાસ્તુ-ઊર્ધ્વાધશ્ચતુર્દશરજ્જવાયતસ્ય અનિયતવિસ્તારસ્ય પચ્ચાસ્તિ-

દો ભંગ કમ કર ને પર અનાનુપૂર્વી બન જાતી હૈ । યહી અનાનુપૂર્વી હૈ ।
ઇસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કે લિયે ૯૮ વાં સૂત્ર દેલો । ઊર્ધ્વલોક આદિ જો
ત્રીન લોક હૈ, ઉનકે વિષય મેં યહાં કુછ-કહા જાતા હૈ ।-ઔપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે પ્રકરણ મેં દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા અધિકાર હોને સે વહાં ધર્મા-
સ્તિકાયા આદિ દ્રવ્યોં કો પૂર્વાનુપૂર્વી આદિરૂપ સે ઉદાહરત ક્રિયા ગયા
હૈ । પરન્તુ યહાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા પ્રકરણ ચલ રહા હૈ ઇસલિયે અધોલોક
આદિ પૂર્વાનુપૂર્વી આદિરૂપ સે ઉદાહરત હુપ હૈ । લોક કે યે જો ઊર્ધ્વ-
લોક અધોલોક આદિ ત્રીન વિભાગ ક્રિયે ગયે હૈ સો ઉસકા કારણ
યહ હૈ કિ મધ્યલોક કે બીચોંબીચ મેરુ પર્વત હૈ । ઇસકે નીચે કા ભાગ
અધોલોક ઓર ઉપર કા ભાગ ઊર્ધ્વલોક હૈ । તથા બરાબર રેખા મેં
તિરછા ફેલા હુઆ મધ્યલોક હૈ । મધ્યલોક કા તિરછા વિસ્તાર અધિક
હૈ ઇસલિયે ઇસે તિર્યગ્લોક બી કહતે હૈ । લોક ઉપર સે નીચેતક-
લંબાઈ મેં ૧૪ રાજૂ હૈ । વિસ્તાર ઇસકા અનિયત હૈ । યહ પાંચ અસ્તિ-

અન્તના બે ભાગે ઓછાં કરી નાખવાથી અનાનુપૂર્વી ખની બચ છે. અના-
નુપૂર્વીનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સમજવા માટે ૯૮મું
સૂત્ર વાંચી જવું.

ઉર્ધ્વલોક આદિ જે ત્રણ લોક છે તેમના વિષે હવે અહીં થોડું
કથન કરવામાં આવે છે-

ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં દ્રવ્યાનુપૂર્વીનો અધિકાર હોવાથી
ત્યાં ધર્માસ્તિકાયા આદિ દ્રવ્યોનું પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ રૂપે કથન કરવામાં આવ્યું
હતું. પરન્તુ અહીં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે તેથી અહીં
અધોલોક આદિ ક્ષેત્રોનું પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ રૂપે કથન કરવામાં આવ્યું છે. લોકના
ઉર્ધ્વલોક અધોલોક (તિર્યગ્લોક) આદિ જે ત્રણ વિભાગ કરવામાં આવ્યા છે તેનું
કારણ એ છે કે મધ્યલોકની વચ્ચેવચ્ચ મેરુપર્વત છે, તેની નીચેના ભાગને
અધોલોક અને ઉપરના ભાગને ઉર્ધ્વલોક કહે છે તથા બરાબર રેખામાં
તિરછો ફેલાયેલો મધ્યલોક છે. મધ્યલોકને તિરછો વિસ્તાર અધિક હોવાને
કારણે તેને તિર્યગ્લોક પણ કહે છે લોકની ઉપરથી નીચે સુધીની લંબાઈ
૧૪ રાજૂપ્રમાણ છે. અને તેનો વિસ્તાર અનિયત છે તે પાંચ અસ્તિકાચેથી

કાયમયસ્ય ત્રિધા પરિકલ્પનયા સમ્પદ્યન્તે । તત્રાસ્યાં રત્નપ્રભાયાં બહુસમભૂભાગે
મેરુમધ્યે નમઃપ્રદેશદ્વયેઽષ્ટપ્રદેશે રુચકોઽસ્તિ । તસ્ય પ્રતરદ્વયસ્ય મધ્યે એકસ્મા-
દધસ્તનપતરાદારભ્યાધોઽભિમુખં નવ યોજનશતાનિ પરિહૃત્ય પરતઃ સાતિરેકસપ્ત-
રજ્જ્વાયતોઽધોલોકઃ । અથવા-અધઃ શબ્દોઽશુભાર્થકઃ તત્ર ચ ક્ષેત્રપ્રભાવાદ્ બાહુ-
લ્યેનાશુભાએવ દ્રવ્યાણાં પરિણામો ભવતિ । અશુભપરિણામિદ્રવ્યવસ્થાદેવ સ લોકઃ
અધોલોક इत्युच्यते । ઉક્તં ચ-

‘અહવ અહોપરિણામો સ્વેત્તાણુભાવેન જોગ ઓસણં પ્રાયઃ ।

પ્રમુખો અહોતિ મણિખો દ્વ્યાણં તેજઃહોલોગો ॥’

છાયા-અથવા અધઃ પરિણામઃ ક્ષેત્રાણુભાવેન યેનોત્સન્નમ્ ।

અશુભોઽધ इति મણિવો દ્રવ્યાણાં તેનાધોલોકઃ ॥૩૮૮॥

કાર્યોં સે વ્યાસ હૈ લોક કે અધઃ મધ્ય ઓર ઊર્ધ્વ હસ પ્રકાર સે યે
ત્રીન વિભાગ હૈં । હસ રત્નપ્રભા પૃથિવીપર બહુ સમભૂભાગવાલે મેરુ
પર્વત કે મધ્ય મેં આકાશ કે દોપ્રતરોં મેં અર્થાત્ દો દો પ્રદેશોં કે વર્ગ મેં
આઠ રુચક પ્રદેશ હૈં । ઉસ પ્રતરદ્વય મેં સે એક અધસ્તન પ્રતર સે લે
કર નીચે કી નૌ સૌ યોજન કી ગહરાઈ કો છોડકર ઉસકે આગેનીચે
કુછ અધિક સાત રાજૂ વિસ્તારવાલા અધોલોક હૈ । અથવા-અધઃ શબ્દ
અશુભ અર્થ કા વાચક હૈ । ઉસ અધોલોક મેં ક્ષેત્ર કે પ્રભાવ સે અધિ-
કતર અશુભ હી દ્રવ્યોં કા પરિણામ હોતા હૈ । હસલિયે અશુભ પરિ-
ણામવાલે દ્રવ્યોં સે યુક્ત હોને સે કહા જાતા હૈ યહી વાત ઉક્તંચ કરકે
“અહવ અહો પરિણામો” હર્યાદિ ગાથા દ્વારા નિર્દિષ્ટ કી ગઈ હૈ ।
તથા ઉસી પ્રકાર દ્રવ્યમેં સે એક ઉપરિતન પ્રતર સે લેકર ઊંચે નૌ સૌ

વ્યાસ છે. લોકના ત્રણ વિભાગ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) અધઃ (૨) મધ્ય અને
(૩) ઊર્ધ્વ આ રત્નપ્રભા પૃથ્વી પર બહુસમભૂભાગવાળા મેરુ પર્વતના મધ્યમાં
આકાશના બે પ્રતરોમાં-એટલે કે બન્ને પ્રદેશોના વર્ગમાં આઠ રુચકપ્રદેશ
છે. તે બે પ્રતરોમાંના એક અધસ્તન પ્રતરથી લઈને નીચે ૬૦૦ યોજનની
ઊંડાઈને પાર કરવાથી સાત રાજૂ કરતાં અધિક વિસ્તારવાળો અધોલોક આવે
છે અથવા ‘અધઃ’ પદ અશુભ અર્થનું વાચક છે. તે અધોલોકમાં ક્ષેત્રના
પ્રભાવને લીધે અધિકતર અશુભ દ્રવ્યપરિણામ જ હોય છે. આ રીતે અશુભ
પરિણામવાળાં દ્રવ્યોથી યુક્ત હોવાને કારણે તે લોકને અધોલોકને નામે
જોળખવામાં આવે છે. જોજ વાત સૂચકારે “અહવ અહો પરિણામો”
હર્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ થઈ છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૦ ઔપનિષિકી ક્ષોણુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૫૨૧

તથાચ-તસ્યૈવ રુચકમતરદ્વયસ્ય મધ્યે એકસ્માદુપરિતનમતરાદારમ્બોર્ધ્વ નવ યોજન
શતાનિ પરિહૃત્ય પરતઃ કિંચિન્નૂનસપ્તરજ્જવાયતઞ્ઞર્ધ્વલોકઃ । ઞ્ઞર્ધ્વમ્-ઉપરિ
વ્યવસ્થાપિતો લોક ઞ્ઞર્ધ્વલોકઃ । અથવા-ઞ્ઞર્ધ્વશબ્દઃ શુભપર્યાયઃ । તત્ર ક્ષેત્રમમા
વાદ્ દ્રવ્યાણાં પ્રાયઃ શુભાએવ પરિણામા ભવન્તિ । અતઃ શુભપરિણામિ દ્રવ્યયો
ગાદ્ઞર્ધ્વઃ શુભો લોકઃ-

ઉક્તંચ-‘ ઉઢુંતિ ઉવરિ જંચિય સુમક્ષિત્તં સેત્તઓ ય દવ્વગુણા ।

ઉપ્પજ્જંતિ સુમા વા તેણ તઓ ઉઢુલોગોત્તિ ॥ ’

છાયા-ઞ્ઞર્ધ્વમિતિ ઉપરિ યદેવ શુભં ક્ષેત્રં ક્ષેત્રતશ્ચ દ્રવ્યગુણાઃ ।

ઉત્પદ્યન્તે શુમા વા તેન સ ઞ્ઞર્ધ્વલોક ઇતિ ॥ ઇતિ ।

તથાચ-પૂર્વોક્તયોરધોલોકોઞ્ઞર્ધ્વલોકયોરન્તરાલેષ્ટાદશ યોજનશતાનિ તિર્યગ્લોકઃ
સમયપરિભાષયા તિર્યગ્ મધ્યે વ્યવસ્થિતો લોકઃ તિર્યગ્લોકઃ । અથવા-તિર્યગ્શબ્દો
યોજન છોઢકર ડસકે આગેડપર કુછ કમ સાત રાજૂ લંબા ઞ્ઞર્ધ્વલોક
હૈ । ડપર રહા હુમા જો લોક હૈ ડસકા નામ ઞ્ઞર્ધ્વલોક હૈ । અથવા-
ઞ્ઞર્ધ્વશબ્દ યહાં શુભ અર્થ કા વાચક હૈ । ડસ ઞ્ઞર્ધ્વલોક મેં ક્ષેત્ર કે
પ્રમાવ સે દ્રવ્યોં કે પરિણામ પ્રાયઃ શુભ હી હોતે હૈં હસલિયે શુભ
પરિણામવાલે દ્રવ્યોં કે સંવન્ધ સે શુભલોક કા નામ ઞ્ઞર્ધ્વલોક હૈ ।
યહી બાત યહા ઉક્તંચ કરકે “ ઉઢુંતિ ઉવરિ ” હત્યાદિ ગાથા દ્વારા
પ્રકટ કી ગઈ હૈ । હન પૂર્વોક્ત અધોલોક ઓર ઞ્ઞર્ધ્વલોક કે બીચ મેં ૧૮
સૌ યોજન પ્રમાણવાલા તિર્યગ્લોક-મધ્યલોક હૈ । સિદ્ધાન્ત કી પરિ-
ભાષા કે અનુસાર યહાં તિર્યગ્ શબ્દ કા અર્થ મધ્ય હૈ । હસલિયે મધ્ય
મેં વ્યવસ્થિત હુએ લોક કા નામ તિર્યગ્ મધ્ય-લોક હૈ । અથવા-તિર્યગ્

ઉપર જે બે પ્રતરની વાત કરી છે તેમાંના એક ઉપરિતન પ્રતરથી લઈને
૬૦૦ યોજન ઊંચે જવાથી સાત રાજૂ કરતાં સહેજ ઓછા વિસ્તારવાળો
ઞ્ઞર્ધ્વલોક આવે છે. તે લોક ઊંચે આવેલો હોવાથી તેનું નામ ઞ્ઞર્ધ્વલોક
છે. અથવા ‘ ઞ્ઞર્ધ્વ ’ શબ્દ અહીં શુભ અર્થનો વાચક છે તે ઞ્ઞર્ધ્વલોકમાં
ક્ષેત્રના પ્રમાણથી દ્રવ્યોનું પરિણામ સામાન્ય રીતે શુભ જ હોય છે આ
રીતે શુભ પરિણામવાળાં દ્રવ્યોથી યુક્ત હોવાને કારણે તે લોકનું નામ
ઞ્ઞર્ધ્વલોક પડ્યું છે. એજ વાત સૂત્રકારે નીચેની ગાથા દ્વારા વ્યક્ત કરી છે-
“ ઉઢુંતિ ઉવરિ ” ઇત્યાદિ આ પૂર્વોક્ત અધોલોક અને ઞ્ઞર્ધ્વલોકની વચ્ચે
૧૮ સો યોજનના પ્રમાણવાળો તિર્યગ્લોક-મધ્યલોક છે. સિદ્ધાન્તની પરિભાષા
પ્રમાણે અહીં ‘ તિર્યગ્ ’ પદનો અર્થ ‘ મધ્ય ’ થાય છે. તેથી મધ્યમાં રહેલા
લોકનું નામ તિર્યગ્ (મધ્ય) લોક પડ્યું છે અથવા ‘ તિર્યગ્ ’ આ પદ

મધ્યમપર્યાયઃ । તત્ર ચ ક્ષેત્રમભાવાત્ પ્રાપો મધ્યમપરિણામવન્ત્યેવ દ્રવ્યાણિ સંજાયન્તે, અતસ્તદ્યોગાત્ તિર્યક્-મધ્યમો લોકસ્તિર્યગ્લોકઃ । યદ્વાઽસ્ય લોકસ્ય ઊર્ધ્વાધો-માગાપેક્ષ્યા તિર્યગ્લોક એવ વિશાલતયા પ્રધાનમ્ । ‘પ્રાધાન્યેન વ્યપદેશા ભવન્તિ’ । ઇતિ ન્યાયમનુસૂત્યાયં લોકોઽપિ ‘તિર્યગ્લોકઃ’ ઇત્યુચ્યતે । ઉક્તંચ-

“મજ્જણુભાવં સ્વેત્તં જં તં તિરિયંતિ વચણપજ્જઓ ।

મણ્ણહ તિરિયં વિસાલં અતો ચ તં તિરિયલોગોત્તિ ॥”

છાયા-મધ્યાનુભાવં ક્ષેત્રં યત્ તત્તિર્યગિતિ વચનપર્યવાત્ ।

મળ્યતે તિર્યગ્ વિશાલમતો વા સ તિર્યગ્લોક ઇતિ ॥ ઇતિ ।

અત્ર જઘન્યપરિણામિ દ્રવ્યયોગાત્ જઘન્યતયા ચતુર્દશગુણસ્થાનકેષુ મિધ્યાદૃષ્ટે-રિવ આદાવેવ અધોલોકસ્યોપન્યાસઃ । તતો મધ્યમપરિણામિ દ્રવ્યયોગાન્મધ્યમત્વેન

શબ્દ યહાં મધ્યમ પર્યાય કા વાચક હૈ । હસ મધ્યલોક મેં ક્ષેત્ર કે પ્રભાવ સે પ્રાયઃ મધ્ય પરિણામવાલે હી દ્રવ્ય હોતે હૈં । હસલિયે હન મધ્યમ પરિણામવાલે દ્રવ્યોં કે સંયોગ સે તિર્યગ્-મધ્યમ-જો લોક હૈં ઉસકા નામ તિર્યગ્લોક હૈં । અથવા-હસ લોક મેં અપને ઊર્ધ્વ ઓર અધો ભાગ કી અપેક્ષા સે તિર્યક્ લોક હી વિશાલ હૈં હસલિયે વિશાલતા કી અપેક્ષા વહી પ્રધાન હૈં । ઓર એસા ન્યોય હૈં કિ જો પ્રધાન હોતા હૈં ઉસી કે અનુસાર વ્યપદેશ-નામ ચલતા હૈં । હસલિયે હસ લોક કો તિર્યગ્લોક હસ નામ સે કહ દિયા ગયા હૈં । ઉક્તંચ કરકે યહી વાત “મજ્જણુભાવં ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈં । યહાં જો સૂત્ર મેં સર્વપ્રથમ અધો-લોક કા ઉપન્યાસ કિયા ગયા હૈં સો ઉસકા કારણ યહ હૈં કિ વહાંપર પ્રાયઃ જઘન્ય પરિણામ વાલે દ્રવ્યોં કા હો સંબંધ રહા કરતા-હૈં । હસલિયે

મધ્યમપર્યાયનું વાચક છે આ મધ્યલોકમાં ક્ષેત્રના પ્રભાવથી સામાન્ય રીતે મધ્યમ પરિણામવાળાં દ્રવ્યો જ હોય છે. આ મધ્યમ પરિણામવાળાં દ્રવ્યોથી યુક્ત હોવાને કારણે તિર્યક્-મધ્યમ જે લોક છે તેનું નામ તિર્યગ્લોક પડ્યું છે. અથવા આ લોકના ઉર્ધ્વ અને અધોભાગ કરતાં તિર્યગ્લોક જ વધારે વિશાળ છે તે કારણે તિર્યગ્લોકને જ મુખ્ય ગણી શકાય એવો નિયમ છે કે જે પ્રધાન હોય તેને નામે જ વ્યવહાર ચાલે છે. તેથી આ લોકને “તિર્ય-ગ્લોક” આ પ્રકારનું નામ આપવામાં આવ્યું છે. સૂત્રકારે “મજ્જણુ ભાવં” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા એજ વાત વ્યક્ત કરી છે.

અહીં સૂત્રકારે સૌથી પહેલાં અધોલોકનું કથન કર્યું છે, કારણ કે અધોલોકમાં સામાન્યતઃ જઘન્ય પરિણામવાળાં દ્રવ્યોનો જ સદ્ભાવ રહે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૧ અધોલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૫૨૩

તિર્યંગ્લોકસ્યોપન્યાસઃ । તતથ ઉત્કૃષ્ટ દ્રવ્યવત્ત્વાદુર્ધ્વલોકસ્યોપન્યાસઃ, इति
પૂર્વાનુપૂર્વ્યાઃ ક્રમો बोध्यः । पश्चानुपूर्व्यां तु पूर्वानुपूर्व्या व्युत्क्रमो बोध्यः ।
अनानुपूर्व्यां तु पदत्रयस्य षड्भङ्गा भवन्ति, ते च पूर्व दर्शिता एव । शेषभावना
स्विह माग्बदेव बोध्या ॥ सू० १२०॥

સમ્પતિ શિષ્યબુદ્ધિવૈશ્વધાર્યમ્ અધોલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યાદિ દર્શયિતુમાહ-

મૂલમ્-અહોલોઅં સ્વેત્તાણુપુઠ્વી તિવિહા પળ્ળત્તા, તં જહા-
પુઠ્વાણુપુઠ્વી પચ્છાણુપુઠ્વી અણાણુપુઠ્વી । સે કિં તં પુઠ્વાણુપુઠ્વી !
પુઠ્વાણુપુઠ્વી-રયળપ્પમા સત્તકરપ્પમા વાલુઅપ્પમા પંકપ્પમા
ધૂમપ્પમા તમપ્પમા તમતમપ્પમા । સે તં પુઠ્વાણુપુઠ્વી ?
સે કિં તં પચ્છાણુપુઠ્વી ! પચ્છાણુપુઠ્વી-તમતમા જાવ

जिस प्रकार चौदह गुण स्थानों में जघन्य होने से मिथ्यादृष्टि गुणस्थान
का सर्व प्रथम उपन्यास करने में आया है इसीप्रकार यहांपर भी जघ-
न्य होने से अधोलोक का उपन्यास करने में आया है । तथा मध्यम
परिणाम वाले द्रव्यों के संबंध को लेकर मध्यम होने के कारण तिर्यंग्
लोक का और उत्कृष्ट द्रव्यवाला होने के कारण ऊर्ध्वलोक का क्रमशः
उपन्यास किया गया है यह पूर्वानुपूर्वी का क्रम है । और जो पश्चानुपूर्वी
है उसमें पूर्वानुपूर्वी का व्युत्क्रम रहा करता है । तथा अनानुपूर्वी में इन
तीन पदों के ६ भंग होते हैं ये पहिले दिखला ही दिये गये हैं । शेष
भावना यहां पहिले की तरह ही जाननी चाहिये ॥ सू० १२०॥

જેવી રીતે ૧૪ ગુણસ્થાનોનું વર્ણન કરતી વખતે જઘન્ય એવાં મિથ્યાદૃષ્ટિ
ગુણસ્થાનનું વર્ણન સૌથી પહેલાં કરવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે જઘન્ય હોવાને
કારણે અધોલોકનું વર્ણન પણ સૌથી પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. મધ્ય પરિ-
ણામવાળાં દ્રવ્યોથી યુક્ત હોવાને કારણે તિર્યંગ્લોકનો ઉપન્યાસ (વર્ણન) ત્યાર બાદ
કરવામાં આવ્યો છે, અને ઉત્કૃષ્ટ દ્રવ્યપરિણામવાળા ઉર્ધ્વલોકનો ઉપન્યાસ (વર્ણન)
ત્યાર બાદ કરવામાં આવ્યો છે. આ પૂર્વાનુપૂર્વીનો ક્રમ છે પશ્ચાનુપૂર્વીમાં
પૂર્વાનુપૂર્વી કરતાં ઉલટો ક્રમ રહે છે, તથા અનાનુપૂર્વીમાં આ ત્રણ પદોના
૬ ભંગ (વિકલ્પો) થાય છે, તે ભંગો પહેલા બતાવવામાં આવ્યા છે
બાકીનું કથન પહેલાના કથન પ્રમાણે જ અહીં સમજવું જોઈએ. ॥સૂ० ૧૨૦॥

રચણપ્પમા । સે તં પચ્છાણુપુવ્વી । સે કિં તં અણાણુપુવ્વી ?
અણાણુપુવ્વી યયાણ ચેવ યમાડયાણ ઇગુત્તરિયાણ સત્તગચ્છગયાણ
સેઢીણ અન્નમન્નભાસો દુરૂવૂળો । સે તં અણાણુપુવ્વી ॥સૂ૦ ૧૨૧॥

છાયા—અધોલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રિવિધા મજ્જતા, તથા-પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચા-
નુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-રત્નમમા શર્કરામમા
વાલુકામમા પંકુપ્રમા ધૂમપ્રમા તમઃપ્રમા તમસ્તમઃપ્રમા । અથ કા સા પશ્ચાનુ-
પૂર્વી ? પશ્ચાનુપૂર્વી-તમસ્તમા યાવદ્ રત્નમમા સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અના-
નુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી એતસ્યામેવ એકાદિકાયમેકોત્તરિકાયાં સપ્તગચ્છગતાયાં
શ્રેણ્યામ્ અન્યોઽન્યામ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ ॥સૂ૦ ૧૨૧॥

અથ સૂત્રકાર શિષ્યજનોં કી વુદ્ધિ કી વિશદતા કે નિમિત્ત અધોલોક
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી આદિ કો દિશ્વ લાતે હૈ—‘અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી ત્રિવિધા પળ્લતા) અધોલોક
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ—(તંજહા) જૈસે (પુવ્વાણુપુવ્વી,
પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી ઓર અનાનુપૂર્વી
(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી) હે મદન્ત ! પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર હૈ—(રચણ-
પ્પમા, સવ્કરપ્પમા, વાલુકાપ્પમા, પંકપ્રમા, ધૂમપ્પમા, તમપ્પમા,
તમ તમપ્પમા) રત્નપ્રમા, શર્કરાપ્રમા, વાલુકાપ્રમા, પંકપ્રમા, ધૂમ-
પ્રમા, તમઃપ્રમા, ઓર તમસ્તમઃપ્રમા, હનમે જો પહિલી નરક પૃથ્વી

શિષ્યોને આ વાત બરાબર સમજાય તે ઉદ્દેશથી સૂત્રકાર હવે અધોલોક
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી આદિનું નિરૂપણ કરે છે—“અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી ત્રિવિધા પળ્લતા) અધોલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી
ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(પુવ્વાણુપુવ્વી,
પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અને અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી?) હે ભગવન્ ! અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી કેવી છે?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે—(રચણપ્પમા
સવ્કરપ્પમા, વાલુકાપ્પમા, પંકપ્પમા, ધૂમપ્પમા, તમપ્પમા, તમતમપ્પમા) રત્નપ્રમા,
શર્કરાપ્રમા, વાલુકાપ્રમા, પંકપ્રમા, ધૂમપ્રમા, તમઃપ્રમા તમસ્તમઃપ્રમા, આ
ક્રમે સાતે પૃથ્વીઓનો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી છે.
પહેલી નરકપૃથ્વીનું નામ રત્નપ્રમા પડ્યાવું કારણ એ છે કે ત્યાં નારકોનાં

अनुयोगवन्दिका टीका सूत्र १२१ अधोलोक क्षेत्रानुपूर्वीनिरूपणम्

५२५

टीका — 'अहोकोअस्सेत्ताणुपुव्वी' इत्यादि ।

अधोलोक क्षेत्रानुपूर्वी हि-पूर्वानुपूर्व्यादि भेदेस्त्रिविधा भवति । तत्र पूर्वानु-
पूर्वी-नारकजीवनिवासस्थानातिरिक्तस्थानेषु इन्द्रनीलादि बहुविधरत्नानां प्रभायाः
सत्त्वात् प्रथमा नरकपृथिवी रत्नप्रभेत्युच्यते । द्वितीया शर्कराप्रभा । इयं हि शर्क-
रणासू-उपलखण्डानां प्रभावत् प्रभावत्वेन शर्कराप्रभेत्युच्यते । तृतीया-वालुकाप्रभा ।
वालुकायाः-सिकतायाः प्रभावत् प्रभावत्वेनैषा वालुकाप्रभेत्युच्यते । एवमेव-
पङ्कस्य='कीचड' इति लोकप्रसिद्धस्य, धूमस्य='धूमा' इति लोकप्रसिद्धस्य,
तमसः=अन्धकारस्य कृष्णद्रव्यस्य, तमस्तमसः=महान्धकारस्य-निविडकृष्णवर्ण-
द्रव्यस्य च प्रभावत् प्रभावत्वेन तत्तत्पृथिवी पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा, तम-

है उसका नाम रत्नप्रभा इसलिये हुआ है कि नारक जीवों के निवास
स्थानों के अतिरिक्त स्थानों में वहाँ इन्द्रनील आदि अनेक प्रकार के
रत्नों की कान्तिका सजाव है । शर्कराप्रभा, नाम की जो द्वितीय भूमि
है उसकी प्रभा शर्करों-पाषाण खंडों की प्रभा जैसी है । वालुकाप्रभा
नाम की जो तृतीय भूमि है उसकी कान्ति रेत की प्रभा के समान है ।
पङ्कप्रभा नाम की चौथी भूमि है उसकी प्रभा कीचड़ की प्रभा के समा-
न है । धूमप्रभा नाम की पाँचवी भूमि की प्रभा धूमाँ की प्रभा जैसी
है । तमः प्रभा नामकी छठी भूमि की प्रभा कृष्ण द्रव्यरूप जो अंधकार
है उसकी प्रभा के जैसी है । और जो सातवीं भूमि तमस्तमःप्रभा है,
उसकी कान्तिगाढ़ कृष्ण द्रव्यरूप जो महांधकार है उसकी कान्ति जैसी
है इस प्रकार पूर्वानुपूर्वी में रत्नप्रभा शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्क

निवासस्थाने सिवायनां स्थानेभ्यो इन्द्रनील आदि अनेक प्रकारानां रत्नेषु
कान्तिनां सङ्ग्राह्यं छे । त्रीण नरकपृथ्वीनी कान्ति शर्कराप्रभा कान्ति
जेवी होवाथी तेनुं नाम शर्कराप्रभा छे । त्रीण नरकपृथ्वीनी कान्ति रेतनी
कान्तिना जेवी होवाथी तेनुं नाम वालुकाप्रभा छे । चोथी पृथ्वीनी प्रभा
पङ्क (काच)ना जेवी होवाथी तेनुं नाम पङ्कप्रभा पड्युं छे । पांचमी पृथ्वीनी
प्रभा धुमाडाना जेवी होवाथी तेनुं नाम धूमप्रभा पड्युं छे । छठी पृथ्वीनी
प्रभा कृष्णद्रव्य रूप अंधकारना जेवी होवाथी तेनुं नाम तमःप्रभा छे । सातमी
पृथ्वीनी कान्ति गाढ़-अतिशय कृष्णद्रव्य रूप महांधकारनी कान्ति जेवी
होवाथी तेनुं नाम तमस्तमःप्रभा छे आनुपूर्वीभां आ ऊँसे साते पृथ्वीभानो
उप-यास बाय छे ।

સ્તમઃ—પ્રમેતિ ક્રમેણ નામ્ના વ્યપદિશ્યતે । एषा पूर्वानुपूर्वी । पश्चानुपूर्व्या तु तमस्तमा इत्यारभ्य रत्नप्रमेत्यन्तं व्युत्क्रमेण व्यवस्थापना बोध्या । अनानुपूर्व्या तु एषां सप्तानां पदानामन्योन्याभ्यासे चत्वारिंशदधिकाः पञ्चसहस्रसंख्यकाः पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वीरूपाऽऽयन्तभङ्गद्वयविवक्षारहिता भङ्गा बोध्याः ॥ सू० १२१ ॥

મૂળમ્—તિરિયલોય છેતાણુપુઠ્ઠી તિવિહા પળગત્તા, તં જહા-પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી પઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી અણાણુપુઠ્ઠી । સેકિં તં પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી ? પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી—“જંબુદીવે લવળે, ધાયઈ કાલોય પુઠ્ઠવરે વરુળે । સ્તીર ઘય સોય નંદી, અરુળવરે કુંડલે રુઝગે ॥૧॥ આભરણવત્થ-ગંધે, ઉપ્પલતિલ્લ ય પુઠ્ઠવિનિહિરયળે । વાસહરદહનઈઓ, વિજયાવક્કારકપ્પિપદા ॥૨॥ કુરુમંદર આવાસા, કૂડા નક્કલ્લ-

પ્રમા, ધૂમપ્રમા, તમઃપ્રમા ઓર તમસ્તમઃ પ્રમા, હસ પ્રકાર હન સાત ભૂમિયોં કા ઉપન્યાસ હોતા હૈ । તથા પશ્ચાનુપૂર્વીં મેં તમસ્તમઃપ્રમા સે હેકર રત્નપ્રમા તક વ્યુત્ક્રમ સે હન ભૂમિયોં કા ઉપન્યાસ કિયા જાતા હૈ । અનાનુપૂર્વીં મેં હન સાત પદોં કા ૧-૨-૩-૪-૫-૬-૭ હસ રુપ સે ઉપન્યાસ કિયા જાતા હૈ । ફિર ષાદ મેં ઓપસ મેં હનકા ગુણા કિયા જાતા હૈ । હસ પ્રકાર ગુણા કરને પર જો રાશિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ ઉસમેં સે આદિ અન્ત દો ભંગ કર દિયે જાતે હૈ । હન સાત પદોં કા પરસ્પર ગુણા હોને પર ૫૦૪૦ ભંગ હોતે હૈ । હનમેં સે પૂર્વાનુપૂર્વીં ઓર પશ્ચાનુપૂર્વીરૂપ દો આદિ અન્ત કે ભંગ કમ કર દિયે જાતે હૈ । હસ પ્રકાર યહ અધો-લોક સંબંધી અનાનુપૂર્વીં હૈ । ॥ સૂ૦ ૧૨૧ ॥

પશ્ચાનુપૂર્વીંમાં તમસ્તમઃપ્રમાથી લઈને રત્નપ્રમા સુધીના ઊલટા ક્રમે સાતે પૃથ્વીઓનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવે છે. અનાનુપૂર્વીંમાં આ સાત પદોનો ૧, ૨, ૩, ૪, ૫, ૬, ૭ આ રૂપે વર્ણન કરવામાં આવે છે, ત્યાર બાદ પરસ્પરમાં તેમનાં ગણાં કરવામાં આવે છે આ પ્રમાણે ગણાં કરવાથી જે રાશિ ઉત્પન્ન થાય છે તેમાંથી આદિ અને અન્તના જે ભંગો (વિકલ્પો) બાદ કરવામાં આવે છે આ સાત પદોનો પરસ્પર ગુણાકાર થવાથી ૫૦૪૦ ભંગ થાય છે તેમાંથી પૂર્વાનુપૂર્વીં અને પશ્ચાનુપૂર્વીં રૂપ આદિ અન્તના જે ભંગ ઓછાં કરવામાં આવે છે. અધોલોક સંબંધી અનાનુપૂર્વીં આ પ્રકારની છે. ॥સૂ૦ ૧૨૧॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૨ તિર્યગ્લોકક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૫૨૭

ચંદસૂરાય । દેવે નાગે જક્ષ્વે મૂળેય સયંમૂરમણેય ॥૩॥ સે તં
પુન્વાણુપુન્વી । સે કિં તં પચ્છાણુપુન્વી ? પચ્છાણુપુન્વી-સયંમૂ-
રમણેય જાવ જંબુદ્વીપે । સે તં પચ્છાણુપુન્વી । સે કિં તં અણાણુ-
પુન્વી ? અણાણુપુન્વી ઇયાણ ચેવ ઇગાઙ્યાણ ઇગુત્તરિયાણ અસં-
સ્થેજગચ્છગયાણ સેઢીણ અણમણ્ણભાસો દુરુવૂળો । સે તં
અણાણુપુન્વી ॥સૂ૦ ૧૨૨॥

છાયા—તિર્યગ્લોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચા-
નુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી જંબુદ્વીપો લવણો ધાતકી
કાલોદઃ પુષ્કરઃ વરુણઃ । સ્તીરઃ ઘૃતઃ સ્તોદઃ નન્દી અરુણવરઃ કુંડલઃ રુચકઃ ।
આમરણવત્થગંધાઃ ઉત્પલતિલકં ચ પૃથિવીનિહિરત્નમ્ । વર્ષધરહ્નદ્યો વિજયા

“તિરિયલોયલેક્ષાણુપુન્વી” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(તિરિયલોયલેક્ષાણુપુન્વી ત્રિવિધા પળ્ણતા) તિર્યગ્લોકક્ષેત્રા-
નુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તં જઠા) વે પ્રકાર યે હૈ—(પુન્વાણુ-
પુન્વી, પચ્છાણુપુન્વી, અણાણુપુન્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી ઓર અનાનુ-
પૂર્વી । (સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી ?) હે અદન્ત ! પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ ?
(પુન્વાણુ પુન્વી)

ઉત્તર—પૂર્વાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—જંબુદ્વીપે લવણે, ધાયઈ કાલોય
પુષ્કરે વરુણે । સ્તીર-ઘય-સ્તોય નન્દી-અરુણવરે કુંડલે રુચકે ॥ ૧ ॥

“આમરણવત્થગંધે, ઉત્પલતિલેય પુદ્બિ નિહિરયણે । વાસહરદહ-
નઈઓ, વિજયા વક્ષારકર્પિદા ॥ ૨ ॥ જંબુદ્વીપ, લવણસમુદ્ર ધાતકી

“ તિરિયલોયલેક્ષાણુપુન્વી ” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(તિરિયલોયલેક્ષાણુપુન્વી ત્રિવિધા પળ્ણતા) તિર્યગ્લોક ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તંજઠા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(પુન્વાણુ-
પુન્વી પચ્છાણુપુન્વી, અણાણુપુન્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી અને અનાનુપૂર્વી.
પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી ?) હે અગવન ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?
ઉત્તર—(પુન્વાણુપુન્વી) તિર્યગ્લોક સંબંધી પૂર્વાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે—
(જંબુદ્વીપે લવણે, ધાયઈ કાલોય પુષ્કરે વરુણે ।

સ્તીર-ઘયસ્તોય-નન્દી-અરુણવરે કુંડલે રુચકે ॥ ૧ ॥

આમરણવત્થગંધે, ઉત્પલતિલેય પુદ્બિનિહિરયણે ।

વાસહરદહનઈઓ, વિજયાવક્ષારકર્પિદા ॥ ૨ ॥

જંબુદ્વીપ, લવણસમુદ્ર, ધાતકી ખંડ, કાલોદસમુદ્ર, પુષ્કરદ્વીપ,

વક્ષસ્કારકલ્પેન્દ્રાઃ । કુરુમન્દરભાવાસા કૂટા નક્ષત્રવન્દ્રસૂર્યાશ્ચ । દેવો નાગો યક્ષો
 ભૂતશ્ચ સ્વયંભૂરમણશ્ચ । સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી-
 સ્વયંભૂરમણશ્ચ યાવજ્જમ્બૂદ્વીપઃ । સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ?
 અનાનુપૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયામસંસ્થેયગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યા
 મન્યોન્યામ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ । સૈષા અનાનુપૂર્વી ॥મૂ० ૧૨૨॥

ટીકા — ‘તિરિયલોઅ’ इत्यादि ।

તિર્યંગ્લોકક્ષેત્રાનુપૂર્વી અપિ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિભેદેન ત્રિવિધા વિજ્ઞેયા । તથા
 જમ્બૂદ્વીપેત્યારભ્ય સ્વયંભૂરમણેત્યન્તં પૂર્વાનુપૂર્વી બોધ્યા । તત્ર-જમ્બૂદ્વીપો જમ્બૂ-
 વૃક્ષોપલક્ષિતો દ્વીપો બોધ્યઃ તતસ્તં પરિવેષ્ટય સ્થિતો લવણરસવજ્જલ-
 પૂરિતો લવણસમુદ્રઃ । લવણસમુદ્રં પરિવેષ્ટય ધાતકીવૃક્ષોપલક્ષિતો ધાતકી-
 દ્વીપઃ । તતસ્તં પરિવેષ્ટય શુદ્ધજલરસાસ્વાદવાન કાલોદઃ સમુદ્રઃ । તં પરિ-
 વેષ્ટય સ્થિતઃ પુષ્કરેરુપલક્ષિતઃ પુષ્કરદ્વીપઃ । પુષ્કરદ્વીપં પરિવેષ્ટય સ્થિતઃ શુદ્ધ
 જલરસાસ્વાદવાન પુષ્કરોદઃ સમુદ્રઃ । તં પરિવેષ્ટય સ્થિતો વરુણો દ્વીપઃ । તત્તો
 વારુણીરસાસ્વાદો વારુણોદઃ સમુદ્રઃ । તતઃ ક્ષીરદ્વીપઃ । તતશ્ચ ક્ષીરોદઃ સમુદ્રઃ ।
 તતશ્ચ ઘૃતદ્વીપઃ । તતો ઘૃતોદઃ સમુદ્રઃ । તત ઇશ્વરીપઃ । તતશ્ચ ઇશ્વરસાસ્વાદ ઇશ્વ-
 રસોદઃ સમુદ્રઃ । તતો નન્દી-નન્દીશ્વરદ્વીપઃ । તતો નન્દીશ્વરસમુદ્રઃ । તતોઽરુણવરો

સ્વંડ, કાલોદસમુદ્ર પુષ્કરદ્વીપ, પુષ્કરોદસમુદ્ર, વરુણદ્વીપ, વારુણોદસમુદ્ર,
 ક્ષીરદ્વીપ, ક્ષીરોદસમુદ્ર, ઘૃતદ્વીપ, ઘૃતોદસમુદ્ર, ઇશ્વરીપ, ઇશ્વરસોદ-
 સમુદ્ર, નન્દીદ્વીપ નન્દીસમુદ્ર અરુણવરદ્વીપ અરુણવરસમુદ્ર કુણ્ડલદ્વીપ,
 કુન્ડલસમુદ્ર, રુચકદ્વીપ, રુચકસમુદ્ર, । इसके बाद असंख्यातद्वीप
 और असंख्यात समुद्र हैं । सब से अन्तिम द्वीप स्वयंभूर-
 मण द्वीप और सबसे अन्तिमसमुद्र स्वयंभूरमण समुद्र हैं । अनुक्त इन
 द्वीपसमुद्रों के नाम आभरण, वस्त्र, गंध, उत्पल तिलक आदि से उप-
 लक्षित हैं अर्थात् स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त जो और द्वीप और समुद्र

પુષ્કરોદસમુદ્ર, વરુણદ્વીપ, વારુણોદસમુદ્ર, ક્ષીરદ્વીપ, ક્ષીરોદસમુદ્ર, ઘૃત-
 દ્વીપ, ઘૃતોદસમુદ્ર, ઇશ્વરીપ, ઇશ્વરસોદસમુદ્ર, નન્દીદ્વીપ, નન્દીસમુદ્ર, અરુ-
 ણવરદ્વીપ, અરુણવરસમુદ્ર, કુંડલદ્વીપ, કુંડલસમુદ્ર, રુચકદ્વીપ, રુચકસમુદ્ર,
 ત્યાર બાદ અસંખ્યાત દ્વીપો અને અસંખ્યાત સમુદ્રો છે. સૌથી છેલ્લો દ્વીપ
 સ્વયંભૂરમણદ્વીપ, અને સૌથી છેલ્લો સમુદ્ર સ્વયંભૂરમણસમુદ્ર છે. અનુક્ત
 (જેનાં નામો અહીં કહ્યાં નથી એવા) દ્વીપસમુદ્રોનાં નામ આભરણ, વસ્ત્ર,
 ગંધ, ઉત્પલ, તિલક આદિથી ઉપલક્ષિત છે. એટલે કે રુચકસમુદ્રથી લઈને
 સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર સુધીમાં અનુક્રમે આભરણદ્વીપ, આભરણસમુદ્ર, વસ્ત્રદ્વીપ,
 વસ્ત્રસમુદ્ર, ગંધદ્વીપ, ગંધસમુદ્ર, ઉત્પલદ્વીપ, ઉત્પલસમુદ્ર, તિલકદ્વીપ, તિલક-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૨ તિર્યગ્લોકસંપ્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૫૨૯

દ્વીપઃ । તતશ્ચારુણવરસમુદ્રઃ । તતઃ કુણ્ડલદ્વીપઃ । તતશ્ચ કુણ્ડલસમુદ્રઃ । તતો રુચક-
દ્વીપઃ । તતશ્ચ રુચકસમુદ્રઃ । તથા-અસંખ્યેયાનામ્ અસંખ્યેયાનામ્ દ્વીપાનામન્તે
આભરણવસ્ત્રગન્ધોત્પલતિલકાનુપલક્ષિતાઃ આભરણવસ્ત્રગન્ધોત્પલતિલકાદિ સ્વયમ્ભૂ-
રમણાન્તાઃ દ્વીપાઃ, તત્તન્નામાનઃ સમુદ્રાશ્ચ સન્તિ । સ્વયમ્ભૂરમણસમુદ્રઃ-શુદ્ધોદક-
રસાસ્વાદઃ । મૂલે પુષ્કરાધારમ્ય સ્વયમ્ભૂરમણાન્તાઃ શબ્દા દ્વીપસમુદ્રોભયવાચકા

હैं उनके नाम आभरण आदिके ऊपर हैं । जो द्वीप का नाम है वही नाम बेटे हुए समुद्र का है । स्वयंभूरमण समुद्र के जलका स्वाद शुद्धो-
दक रसास्वाद जैसा है मूल में-पुष्कर से लेकर स्वयंभूरमण तक के
शब्द द्वीप और समुद्र के वाचक हैं । तात्पर्य कहनेका यह है । कि रुचक-
द्वीप और रुचकसमुद्र के आगे आभरण द्वीप और आभरणसमुद्र
है । इसके बाद-वस्त्र द्वीप और वस्त्र समुद्र है । इसके आगे गंध द्वीप
और गंध समुद्र है इसी प्रकार से उत्पल, तिलक पृथिवी निधि, रत्न वर्ष-
धर, हृद, नदी, विजय वक्षस्कार, कल्पेन्द्र (कुरु मंदर आवासा कूडा-
नक्खत्तचंदसूरा य देवे नागे जक्खे भूए य सयंभूरमणे य २) कुरु, मन्दर
आवासकूट, नक्षत्र, चन्द्र सूर्य देव, नाग यक्ष भूत, और स्वयंभूरमण इन
नामों वाले असंख्यात द्वीप और असंख्यात समुद्र हैं । जंबूद्वीप नाम का
जो द्वीप है, वह जंबूवृक्ष से युक्त है । इसलिये इसका नाम जंबूद्वीपहुआ है ।
इस जंबूद्वीप को वेष्टित हुए गोल चूड़ी के आकार के आकार जैसा लवण-

સમુદ્ર આદિ અસંખ્યાત દ્વીપસમુદ્રો આવેલા છે. દ્વીપોનાં જે નામો છે,
એજ નામો તેમને વીંટળાયેલા સમુદ્રોના માટે પણ વપરાયાં છે.

સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રનું પાણી શુદ્ધ પાણીના જેવાં સ્વાદવાળું છે. પુષ્કરથી
લઈને સ્વયંભૂરમણ પર્યન્તના શબ્દો દ્વીપો અને સમુદ્રો-બન્નેનાં વાચક છે
એમ સમજવું આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે રુચકદ્વીપ અને રુચકસમુદ્રથી
આગળ જતાં આભરણદ્વીપ અને આભરણસમુદ્ર આવે છે, ત્યાર બાદ વસ્ત્રદ્વીપ
અને વસ્ત્રસમુદ્ર આવે છે, ત્યાર બાદ ગંધદ્વીપ અને ગંધસમુદ્ર આવે છે,
ત્યાર બાદ ઉત્પલ, તિલક, પૃથ્વીનિધિ, રત્નવર્ષધર, હૃદનદી, વિજયવક્ષસ્કાર,
કલ્પેન્દ્ર (કુરુમંદર આવાસા કૂડાનક્કલ્લત્તચંદસૂરા ય, દેવે નાગે જક્કલે ભૂપ ય
સયંભૂરમણે ય ॥૩॥) કુરુ, મન્દર, આવાસકૂટ, નક્ષત્ર, ચન્દ્ર, સૂર્ય, દેવ,
નાગ, યક્ષ, ભૂત અને સ્વયંભૂરમણ આ નામોવાળાં અસંખ્યાત દ્વીપો અને
અસંખ્યાત સમુદ્રો આવે છે. જંબૂદ્વીપ નામનો જે દ્વીપ છે તે જંબૂવૃક્ષથી
યુક્ત હોવાને કારણે તેનું નામ જંબૂદ્વીપ છે. આ જંબૂદ્વીપને ઘેરીને વલ્લયાના

બોધ્યાઃ નનુ મૂલે અસંખ્યેયાનસંખ્યેયાન દ્વીપસમુદ્રાનુલ્લંઘ્ય યે યે દ્વીપસમુદ્રાદયઃ સન્તિ, તેષાં નામાનિ નિર્દિષ્ટાનિ, કિન્ત્વન્તરાલસ્થિતા અતિક્રમ્યમાણા યે દ્વીપા ઉક્તાસ્તે કિં નામકાઃ ? इति चेदाह—लंके पदार्थानां शङ्खध्वजकलशसंस्तिक

સમુદ્ર હૈં, હસ સમુદ્ર કા જલ લવણ કે સ્વાદ જૈસા સ્વારા હૈ । લવણસમુદ્ર કો ઘેરે હુયે ધાતકી લંકાદ્વીપ હૈ । યહ ધાતકી વૃક્ષ સે ઉપલક્ષિત હૈ । હસ ધાતકી દ્વીપ કો ઘેરે હુયે કાલોદસમુદ્ર હૈ । હસ જલ કા સ્વાદ શુદ્ધ જલ કે સ્વાદ જૈસા હૈ, સ્વારા નહીં હૈ । હસ સમુદ્ર કો ઘેર કર પુષ્કર-દ્વીપ હૈ । યહ પુષ્કરદ્વીપ કો ઘેર કર ઉમ કી ચારોં ઓર પુષ્કરોદ-સમુદ્ર હૈ । હસકે જલ કા સ્વાદ શુદ્ધ જલ કે સ્વાદ જૈસા હૈ । હસ સમુદ્ર કો વેષ્ટિતહુયે વરુણદ્વીપ હૈ । વરુણદ્વીપ કો ઘેરકર સ્થિત હુઆ વોરુણોદ સમુદ્ર હૈ । હસકે જલકા સ્વાદ વારુણી રસ કે આસ્વાદ જૈસા હૈ । હસકે બાદ ક્ષીરદ્વીપ હૈ, ક્ષીરસમુદ્ર કો ઘેરે હુયે ધૃતદ્વીપ હૈ । હસકે બાદ ધૃતોદ-સમુદ્ર હૈ । ધૃતોદસમુદ્ર કો ઘેરે હુયે ઇશુ-દ્વીપ હૈ । હસકે બાદ ઇશુરસોદ સમુદ્ર હૈ । ઇશુરસોદ સમુદ્ર કે બાદ નન્દીશ્વર દ્વીપ હૈ । ઓર ઉમ દ્વીપ કો ઘેરે હુયે નન્દીશ્વરસમુદ્ર હૈ । ફિર અરુણવરદ્વીપ ઓર અરુણવરસમુદ્ર હૈ । ફિર કુન્ડલદ્વીપ ઓર કુન્ડલ સમુદ્ર હૈ । બાદ મેં રુચક દ્વીપ ઓર રુચક સમુદ્ર હૈ । હસ પ્રકાર સે આભરણ વસ્ત્ર આદિ-શુભનામ વાલે અસંખ્યાત દ્વીપ ઓર અસંખ્યાત સમુદ્ર સ્વયંમૂરખણ સમુદ્ર પર્યન્ત-તક હૈ ।—

આકારનો લવણસમુદ્ર આવેલો છે તે સમુદ્રનું પાણી લવણ (મીઠા)ના જેવાં ખારા સ્વાદવાળું છે. લવણસમુદ્રને ઘેરીને ધાતકીખંડ દ્વીપ આવેલો છે તે ધાતકીદ્વીપ ધાતકી નામના વૃક્ષની યુક્ત હોવાને કારણે તેનું નામ ધાતકીદ્વીપ પડ્યું છે. આ ધાતકીદ્વીપને ઘેરીને કાલોદસમુદ્ર રહેલો છે. તેનું પાણી ખાદું નથી પણ શુદ્ધ જળ જેવા સ્વાદવાળું છે. લવણસમુદ્રને ઘેરીને પુષ્કર-દ્વીપ આવેલો છે. પુષ્કરોથી યુક્ત હોવાને કારણે તેનું નામ પુષ્કરદ્વીપ પડ્યું છે. પુષ્કરદ્વીપને ઘેરીને તેની ચારે તરફ પુષ્કરોદસમુદ્ર આવેલો છે. તેના જળનો સ્વાદ શુદ્ધ જળના સ્વાદ જેવો છે આ સમુદ્રને ઘેરીને વરુણદ્વીપ રહેલો છે અને વરુણદ્વીપને ઘેરીને વારુણોદ સમુદ્ર આવેલો છે. તેના જળનો સ્વાદ વારુણીરસના સ્વાદ જેવો છે. ત્યાર બાદ ક્ષીરદ્વીપ છે, તેને ઘેરીને ક્ષીરોદસમુદ્ર આવેલો છે. ક્ષીરસમુદ્રને ઘેરીને ધૃતદ્વીપ આવેલો છે અને ધૃતદ્વીપને ઘેરીને ધૃતોદ સમુદ્ર રહેલો છે. ત્યાર બાદ ધૃતોદ સમુદ્રને ઘેરીને ઇશુદ્વીપ આવેલો છે અને ઇશુદ્વીપને ઘેરીને ઇશુરસોદ સમુદ્ર આવેલો છે. ઇશુરસોદ સમુદ્રને ઘેરીને નન્દીશ્વર દ્વીપ રહેલો છે અને નન્દીશ્વર દ્વીપની ચોમેર નન્દીશ્વર સમુદ્ર રહેલો છે ત્યાર બાદ અરુણવરદ્વીપ અને અરુણવર સમુદ્ર આવે છે. ત્યાર બાદ કુંડલદ્વીપ અને કુંડલસમુદ્ર આવે છે ત્યાર બાદ રુચકદ્વીપ અને રુચક સમુદ્ર આવે છે ત્યાર બાદ આભરણ દ્વીપ, આભરણ-

શ્રીવત્સાદીનિ યાવન્તિ શુભનામાનિ સન્તિ તૈઃ સર્વૈરુપલક્ષિતા અન્તરાલસ્થિતા દ્વીપસમુદ્રાઃ સન્તિ ।

ઉક્તંચ—“દીવસમુદાળં મંતે । કેવદ્યા નામધિજેહિં પળ્ણત્તા ? ગોયમા ! જાવ-
દ્યા લોણ સુમા નામા સુમા રુવા સુમા ગંધા સુમા રસા સુમા ફાસા એવદ્યા ણં
દીવસમુદા નામધિજેહિં પળ્ણત્તા । ” (જીવા. ૩ પ્ર. ૪ ઉ.)

છાયા-દ્વીપસમુદ્રાઃ સ્વલુ મદન્ત ! કિયન્તો નામધેયૈઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? ગૌતમ ! યાવન્તિ
લોકે શુમાનિ નામાનિ શુમાનિ રૂપાણિ શુમાઃ ગન્ધાઃ શુમા રસાઃ શુમાઃ સ્પર્શાઃ
ઇયન્તો દ્વીપસમુદ્રા નામધેયૈઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । ઇતિ । એતે દિ-અસંલ્પેયસંલ્પકાઃ અનુપદ-
વક્ષ્યમાણગાથયા પ્રતિપાદિતા દ્રષ્ટવ્યાઃ ।

શંકા-મૂલ મેં અસંલ્પ્યાત ૨ દ્વીપ-સમુદ્રોં કો ઉત્તલંબન કરકે જો જો
દ્વીપ ઓર સમુદ્ર આદિ હૈં ઉનકે નામ તો કહે હૈં પરન્તુ જો અન્તરાલ
મેં સ્થિત દ્વીપ કહે હૈં ઉનકે કયા નામ હૈં ?

ઉત્તર-લોક મેં પદાર્થોંકે શંખ, ધ્વજ, કલશ સ્વતિક, શ્રીવત્સ આદિ
જિતને શુભ નામ હૈં-ઉન સવસે ઉપલક્ષિત અન્તરાલ મેં સ્થિત હુણ દ્વીપ
ઓર સમુદ્ર હૈં । ઉક્તંચ કરકે “દીવસમુદાળં ઇત્યાદિ” જો સૂત્ર પાઠ
દિયા ગયા હૈં ઉસકા યહી ભાવ હૈં-ઇસમેં યહી કહા ગયા હૈં કિ લોક
મેં જિતને શુભ નામ હૈં જિતને શુભ રૂપ હૈં, જિતને શુભ ગંધ હૈં જિતને
શુભ રસ હૈં ઓર જિતને શુભ સ્પર્શ હૈં જિતને હી દ્વીપ સમુદ્ર જિતને હી

સમુદ્ર, વસ્ત્રદ્વીપ, વસ્ત્રસમુદ્ર, આદિ શુભનામવાળા અસંખ્યાત દ્વીપો અને
સમુદ્રો આવે છે છેવટે લવણદ્વીપ અને લવણસમુદ્ર આવે છે.

પ્રશ્ન-મૂળમાં અસંખ્યાત સમુદ્રોને પાર કરિને આગળ વધતાં છેવટે
સ્વયંભૂરમણુ દ્વીપ અને સ્વયંભૂરમણુ સમુદ્ર આવે છે, એલું કહેવામાં આવ્યું
છે તેમાંથી કેટલાક દ્વીપો અને સમુદ્રોનાં નામ આપે આ સૂત્રમાં પ્રગટ કર્યાં
છે. પરન્તુ ત્યાર પછીના સ્વયંભૂરમણુદ્વીપ પર્યન્તમાં જે દ્વીપસમુદ્રો છે તેમનાં
નામો આપે અહીં પ્રગટ કર્યાં નથી તેમના નામો જણાવવા કૃપા કરશે ?

ઉત્તર-લોકમાં પડાર્થોનાં શંખ, ધ્વજ, કલશ, સ્વસ્તિક, શ્રીવત્સ આદિ
જેટલાં શુભ નામો છે, એ સધળાં નામોથી ઉપલક્ષિત (ઓળખાતાં) તે અન્ત-
રાલમાં રહેલા દ્વીપો અને સમુદ્રો છે. કહ્યું પણ છેકે-“દીવસમુદાળં”
ઇત્યાદિ આ સૂત્રપાઠ દ્વારા એ વાત પ્રગટ કરવામાં આવી છે કે લોકમાં
જેટલા શુભ નામ છે, જેટલાં શુભ રૂપ છે, જેટલા શુભ ગંધો છે, જેટલાં
શુભ સ્પર્શ છે, તેમનાં વડે આ દ્વીપસમુદ્રો ઉપલક્ષિત છે. તેઓ અસંખ્યાત
હોવાને કારણે પ્રત્યેકનાં નામ અહીં આપી શકાય એમ નથી દ્વીપસમુદ્રો

।યાદિ-“ઉદ્ધારસાગરાણં અદ્વાદ્જ્ઞાણ જત્તિયા સમયા ।

દુગુણાદુગુણપવિત્થર દોવોદદિ રજ્જુ એવશ્યા ॥”

છાયા—ઉદ્ધારસાગરાણામર્ધવૃત્તીયાનાં યાવન્તઃ સમયાઃ ।

દ્વિગુણદ્વિગુણપવિસ્તારાઃ દ્વીપોદધયો રજ્જ્વામિયન્તઃ ॥ ઇતિ

તદેવા પૂર્વાનુપૂર્વી । પશ્ચાનુપૂર્વી તુ વ્યુત્ક્રમેણ બોધ્યા । અનાનુપૂર્વી તુ-અમીષામ-સંત્લેયેયાનાં પદાનામન્યોઽન્યામ્યાસે યે ડસંત્લેયેયા મજ્ઞા ભવન્તિ, તત આદ્યન્ત વિવક્ષારહિતા મજ્ઞા બોધ્યાઃ ॥સૂ૦ ૧૨૨ ॥

નામ વાલે હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ દ્વીપ ઓર સમુદ્ર અસંખ્યાત સંખ્યા વાલે હૈં । દ્વીપ સમુદ્ર કિતને હૈં ? હસકા ઉત્તર, ઉદ્ધારસાગરાણં” ગાથા દ્વારા દિયા ગયા હૈ જિસકા ભાવાર્થ એસા હૈ કિ અદ્વાદ્ ઉદ્ધાર સાગરોં કે જિતને સમય હોતે હૈં ઉતને એક દૂસરે સે દૂને વિસ્તાર વાલે દ્વીપ ઓર સમુદ્ર હૈં । હસ પ્રકાર જંબૂદ્વીપ આદિ કે ક્રમ સે સ્વયંભૂ-રમણ દ્વીપ ઓર સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર પર્યન્ત દ્વીપ સમુદ્રોં કા ઉપન્યાસ કરના સો પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । તથા હન્હીં દ્વીપસમુદ્રોં કા વ્યુત્ક્રમ સે અર્થાત્ સ્વયંભૂરમણ સે પ્રારંભ કર જંબૂદ્વીપ તક-ન્યાસ-ઉપન્યાસ-કરના સો પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । ઓર હન્હીં અસંખ્યાત પદોંકા સ્થાપન કરકે ફિર ઉનકા પરસ્પર મેં ગુણા કરના ઓર પ્રાપ્ત ગુણન રાશિ મેં સે આદિ અન્ત કે દો ભંગ કમ કર-દેના હસ પ્રકાર કરને સે અસંખ્યાત ભંગ-હોતે હૈં વહ અનાનુપૂર્વી હૈ । ॥ સૂ૦ ૧૨૨ ॥

કેટલાં છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર નીચેની ગાથા દ્વારા આપવામાં આવ્યો છે- “ઉદ્ધાર સાગરાણં” ઇત્યાદિ- આ ગાથાનો ભાવાર્થ એવો છે કે “અહીં ઉદ્ધાર સાગરોના જેટલા સમય થાય છે એટલા એક બીજાથી બમણાંબમણાં વિસ્તારવાળા દ્વીપો અને સમુદ્રો છે.” આ પ્રકારે જંબૂદ્વીપથી શરૂ કરીને સ્વયંભૂરમણ દ્વીપ અને સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર પર્યન્તના દ્વીપો અને સમુદ્રોનો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ તિર્થંગ્રોહક સંબંધી પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

ઉપર્યુક્ત દ્વીપસમુદ્રોનો ઊલટા ક્રમમાં એટલે કે સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રથી લઈને જંબૂદ્વીપ પર્યન્તના પદોનો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે. અને એજ અસંખ્યાત પદોનું સ્થાપન કરીને તેમનો પરસ્પરની સાથે ગુણાકાર કરવો અને એ રીતે જે ગુણનરાશિ (ગુણાકાર) પ્રાપ્ત થાય તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે ભંગોને કાઢી નાખવા આ પ્રમાણે કરવાથી જે અસંખ્યાત ભંગો થાય છે તેમને અનાનુપૂર્વી રૂપ સમજવો. ॥સૂ૦ ૧૨૨ ॥

सम्पत्ति ऊर्ध्वलोकक्षेत्रानुपूर्वीं निरूपयति—

मूलम्—उड्डलोयखेत्ताणुपुष्पी तिविहा पणत्ता, तं जहा-पुष्पाणुपुष्पी पच्छाणुपुष्पी अणाणुपुष्पी । से किं तं पुष्पाणुपुष्पी ? पुष्पाणुपुष्पी सोहम्मे१, ईसाणे२, सणकुमारे३, माहिंदे४, बंभलोए५, लंतए६, महासुके७, सहस्सारे८, आणए९, पाणए१०, आरणे११ अचुए१२, गेवेज्जगविमाणे१३, अणुत्तरविमाणे१४, ईसिपब्भारा१५, से तं पुष्पाणुपुष्पी । से किं तं पच्छाणुपुष्पी ? पच्छाणुपुष्पी ईसिपब्भारा जाव सोहम्मे । से तं पच्छाणुपुष्पी । से किं तं अणाणुपुष्पी ? अणाणुपुष्पी—एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए पन्नरसगच्छ-गयाए सेढीए अन्नमन्नब्भसो दुरुवूणो । से णं अणाणुपुष्पी । अहवा ओवणिहिया खेत्ताणुपुष्पी तिविहा पणत्ता, तं जहा—पुष्पाणुपुष्पी, पच्छाणुपुष्पी, अणाणुपुष्पी । से किं तं पुष्पाणुपुष्पी ? पुष्पाणुपुष्पी—एगपएसोगाढे, दुप्पएसोगाढे, दसपएसोगाढे संखि-ज्जपएसोगाढे जाव असंखिज्जपएसोगाढे । से तं पुष्पाणुपुष्पी । से किं तं पच्छाणुपुष्पी ? पच्छाणुपुष्पी—असंखिज्जपएसोगाढे संखिज्जपएसोगाढे जाव एगपएसोगाढे । से तं पच्छाणुपुष्पी । से किं तं अणाणुपुष्पी ? अणाणुपुष्पी—एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भसो दुरु-वूणो । से तं अणाणुपुष्पी से तं ओवणिहिया खेत्ताणुपुष्पी से तं खेत्ताणुपुष्पी ॥सू० १२३॥

छाया—ऊर्ध्वलोकक्षेत्रानुपूर्वीं त्रिविधा मज्झमा, तथा—पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी, अनानुपूर्वी । अथ का सा पूर्वानुपूर्वी ? पूर्वानुपूर्वी—सौधर्मः१, ईशानः२, सनत्कु-मारो३, माहेन्द्रो४, ब्रह्मलोकोः५, छान्तको६, महाशुको७, सहस्रारो८, आनतः९,

૫૩૪

અનુયોગહારસૂત્રે

પ્રાણતઃ ૧૦, આરણઃ ૧૧, અચ્યુતો ૨, ગ્રેવેયકવિમાનઃ ૩, અનુત્તર્ગવિમાનઃ ૪, ઈષન્માગમારા ૧૫, સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી. અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી? પશ્ચાનુપૂર્વી-ઈષન્માગમારા યાવત્સૌધર્મઃ. સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી. અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયાં પશ્ચદશગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યાભ્યાસો દ્વિરુપોનઃ. સૈવા અનાનુપૂર્વી. અથવા-ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી. અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી? પૂર્વાનુપૂર્વી-એકપદેશાવગાદો દ્વિપદેશાવગાદો દશપદેશાવગાદઃ સંખ્યેયપદેશાવગાદો યાવત્ અસંખ્યેયપદેશાવગાદઃ. સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી. અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી? પશ્ચાનુપૂર્વી-અસંખ્યેયપદેશાવગાદઃ સંખ્યેયપદેશાવગાદો યાવત્ એકપદેશાવગાદઃ. સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી? અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયામસંખ્યેયગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોડન્યાભ્યાસો દ્વિરુપોનઃ. સૈવા અનાનુપૂર્વી. સૈવા ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી સૈવા ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ॥મૂ. ૧૨૩॥

ટીકા—‘ઉદ્ઘૃલોયલેક્ષા’ ઇત્યાદિ.

ઊર્ધ્વલોકક્ષેત્રાનુપૂર્વી હિ પૂર્વાનુપૂર્વાદિમેદંત્રિવિધા ત્રિજ્ઞેયા. તત્ર-પૂર્વાનુપૂર્વી સૌધર્મીદીપ્તમાગમારાન્તા. પ્રજ્ઞાપકપ્રત્યાસત્ત્વા પ્રથમં સૌધર્મોપન્યાસઃ. તતસ્તત્

અવ સૂત્રકાર ઊર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા-નિરૂપણ કરતે હૈઃ—

“ઉદ્ઘૃલોયલેક્ષાણુપુન્ઘ્વી” ઇત્યાદિ.

શબ્દાર્થ (ઉદ્ઘૃલોયલેક્ષાણુપુન્ઘ્વી ત્રિવિધા પળ્ળતા) ઊર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ. (તં જહા) જૈસે—(પુન્ઘ્વાણુપુન્ઘ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી (પચ્છાણુપુન્ઘ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી (અગાણુપુન્ઘ્વી) ઔર અનાનુપૂર્વી (સે કિં તં પુન્ઘ્વાણુપુન્ઘ્વી?) હૈ ભદન્ત. પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ?

(પુન્ઘ્વાણુપુન્ઘ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સં હૈ. (સોહમ્મે ૧) સૌધર્મ ૧ ઈસાણે ૨, સળંકુમારે ૩, માહિંદે ૪, બંમલોપ ૫, લંતપ ૬, મહાસુ-

હવે સૂત્રકાર ઉર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“ઉદ્ઘૃલોયલેક્ષાણુપુન્ઘ્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(ઉદ્ઘૃલોયલેક્ષાણુપુન્ઘ્વી ત્રિવિધા પળ્ળતા) ઉર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકારની નીચે પ્રમાણે છે—(પુન્ઘ્વાણુપુન્ઘ્વી, પચ્છાણુપુન્ઘ્વી, અગાણુપુન્ઘ્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુન્ઘ્વાણુપુન્ઘ્વી?) હે ભગવન! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે?

ઉત્તર—ઉર્ધ્વલોક સંબંધી પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે (સોહમ્મે) (૧) સૌધર્મ, ઈસાણે, સળંકુમારે, માહિંદે, બંમલોપ, લંતપ, મહાસુક, સહસ્તાર,

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૩ ઝઘ્વેલોકક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૫૩૫

લોકપ્રત્યાસત્યા તત્ત્વલોકોપન્યાસઃ । સૌધર્મનામકં વિમાનં હિ તઃક્ષેત્રવિમાનેષુ
 સર્વાઃ શ્રેષ્ઠત્વ, અતઃ સઃ લોકઃ સૌધર્મેનિ વ્યપદિશ્યતે । એવમેવ ઈશાનાદ્યચ્યુત-
 વિમાનાનાં તત્ત્વલોકે શ્રેષ્ઠત્વમતસ્તત્ત્વભ્રામ્નાસ સ લોકો વ્યપદિશ્યતે । લોકપુરુષસ્ય
 ગ્રીવાવિભાગે ભવાનિ વિમાનાનિ ગ્રૈવેયકવિમાનાનીત્યુચ્યન્તે । અનુત્તરવિમાનસ્ય-
 લોકાપેક્ષ્યાગ્ન્યાનિ ઉત્તરાણિ વિમાનાનિ ન સન્તીતિ તાનિ વિમાનાનિ અનુત્તર-

વક્રે ૭, સહસ્ત્રારે ૮, આણ ૯, પાણ ૧૦, આરણે ૧૧, અચ્ચુ ૧૨,
 ગેવેજ્જગવિમાણે ૧૩, અણુત્તરવિમાણે ૧૪, ઈન્દ્રિપન્મારા ૧૫) ઈશાન ૨
 સનત્કુમાર ૩, માહેદ્ર ૪, બ્રહ્મલોક ૫, લાન્તક ૬, મહાશુક ૭, સહસ્ત્રાર-
 ૮, આનત ૯, પ્રાણત ૧૦, આરણ ૧૧ અચ્યુત ૧૨, ગ્રૈવેયકવિમાન
 ૧૩, અનુત્તરવિમાન ૧૪, ઔર ઈષ્ટપ્રાગ્ભારા ૧૫ (સે તં પુઘ્વાણુપુઘ્વી)
 યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । યહાં પર પ્રજાપત્ત-કી પ્રત્યાસત્તિસે સબસે પઢિલે
 સૌધર્મ કા ઉપન્યાસ કિયા ગયા હૈ । યાદ મેં તત્ત્વ લોક કી પ્રત્યાસત્તિ
 સે ઉન ૫ લોગોં કા ઉપન્યાસ હુત્તા હૈ । સૌધર્મ નામ કા વિમાન હૈ ।
 યહ વિમાન તત્ત્વેત્ર સબન્ધી વિમાનોં મેં સર્વશ્રેષ્ઠ હૈ હમલિયે ઉસકે
 સંબન્ધ સે ઉસ લોક કા નામ સૌધર્મલોક હુત્તા હૈ । હમી પ્રકાર ઈશાન
 સે લેકર અચ્યુત તક કે વિમાનોં મેં ઉન ૨ લોકોં મેં શ્રેષ્ઠતા હૈ । હમ-
 લિયે ઉસ ૨ નામ સે યહ ૨ લોક કહા ગયા હૈ । લોક રૂપ પુરુષ કી
 ગ્રીવા કે સ્થાનાપન જો વિમાન હૈ વે ગ્રૈવેયક વિમાન કહલાતે હૈ ।

આણ, પાણ, આરણે, અચ્ચુ (૨) ઈશાન, (૩) સનત્કુમાર, (૪) માહેદ્ર,
 (૫) બ્રહ્મલોક, (૬) લાન્તક, (૭) મહાશુક, (૮) સહસ્ત્રાર, (૯) આનત, (૧૦)
 પ્રાણત, (૧૧) આરણ, (૧૨) અચ્યુત (ગેવેજ્જગવિમાણે, અણુત્તરવિમાણે ઈન્દ્રિ-
 પન્મારા) (૧૩) ગ્રૈવેયક વિમાનો, (૧૪) ઈષ્ટપ્રાગ્ભારા. (સે તં પુઘ્વાણુપુઘ્વી) આ
 ક્રમે ઉઘ્વલોકગત ક્ષેત્રોનો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. અહીં
 પ્રજાપત્તની વધારે નજીકમાં આવેલા ઈશાનકલ્પનો ઉપન્યાસ પહેલાં કરવામાં
 આવ્યો છે. ત્યાર બાદ ત્યાંથી વધારેને વધારે દૂર આવેલાં ક્ષેત્રોનો ઉપન્યાસ
 અનુક્રમે કરવામાં આવ્યો છે. સૌધર્મ કલ્પમાં જે વિમાનો છે તેમાં શ્રવશ્રેષ્ઠ
 સૌધર્મ નામનું વિમાન હોવાથી તે દેવલોકનું નામ સૌધર્મકલ્પ પડ્યું છે.
 એજ પ્રમાણે ઈશાનથી લઈને અચ્યુત પર્યન્તના કલ્પોમાં પણ એજ નામનાં
 (ઈશાન, સનત્કુમાર) વિમાનોની શ્રેષ્ઠતા છે, એમ સમજવું કે કારણે તેમનાં
 નામો પણ તે વિમાનો જેવાં જ રાખવામાં આવ્યાં છે. લોકરૂપ પુરુષની
 ગ્રીવાના સ્થાનમાં જે વિમાનો રહેલાં છે તેમને ગ્રૈવેયક વિમાનો કહે છે.

વિમાનાન્યુચ્યન્તે । ઈષત્પ્રાગ્ભારા-ભારાક્રાન્તપુરુષવદીષન્નતસ્વાત્ એષા ઈષત્પ્રાગ્ભારે-
ત્યુચ્યતે । इयं सौधर्मादीषन्प्राग्भारान्ता पूर्वानुपूर्वी । तथा इषत्प्राग्भारा यावत्
सौधर्म इति पश्चानुपूर्वी । तथा-अनानुपूर्व्या तु सौधर्मादिपञ्चदशपदानामन्योऽन्या-
अनुत्तरविमानस्थ लोका की-अपेक्षा और दूसरे विमान-उत्तर-श्रेष्ठ
नहीं है-हसलिये वे विमान अनुत्तर विमान कहे गये हैं । भार आक्रान्त
पुरुष की तरह कुछ झूसी हुई होने-से यह इषत्प्राग्भारा इस नाम से
कही गई है । सौधर्म से लेकर इषत् प्राग्भारा भूमितक पूर्वानुपूर्वी है ।
(से किं तं पच्छाणुपूर्वी) हे भदन्त पश्चानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर-(पच्छाणुपूर्वी) पश्चानुपूर्वी इस प्रकार हैं-(ईसिपन्भारा जाव
सोहम्मे) इषत् प्राग्भारा भूमि से लेकर जो सौधर्म देवलोक तक व्यु-
त्क्रम से गणना है । (से तं पच्छाणुपूर्वी) वह पश्चानुपूर्वी है । (से किं
तं अणानुपूर्वी ?) हे भदन्त ऊर्ध्वलोक सन्धी अनानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर-(अणानुपूर्वी) ऊर्ध्वलोक सन्धी अनानુपूर्વી इस प्रकार
से हैं । (एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए पन्नरसगच्छगयाए
सेटीए अन्न मन्न व्मासो दूरूव्णो) इस अनानુपूर्વી में जो ઐળી સ્થા-

અનુત્તર વિમાનસ્થ લોકના કરતાં અન્ય કોઈ પણ વિમાન શ્રેષ્ઠ નથી તે
કારણે તે શ્રેષ્ઠ વિમાનોને અનુત્તર વિમાનો કહ્યાં છે. જેમ કે બારને વહન
કરતો પુરુષ સહેજ ઝૂકી બચ છે એજ પ્રમાણે આ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી
પણ સહેજ ઝૂકેલી હોવાને કારણે તેનું નામ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પડ્યું છે. સૌધ-
ર્મથી લઈને ઈષત્પ્રાગ્ભારા પર્યન્તનાં પદોનો ક્રમપૂર્વક ઉપન્યાસ કરવો તેનું
નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પચ્છાણુપુર્વી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુર્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે-(ઈસિપન્ભારા જાવ
સોહમ્મે) ઈષત્પ્રાગ્ભારા ભૂમિથી શરૂ કરીને સૌધર્મકદમ પર્યન્તના ક્ષેત્રોનો
ઊલટા ક્રમમાં જે ઉપન્યાસ કરવામાં આવે છે-ગણતરી કરવામાં આવે છે
(સે તં પચ્છાણુપુર્વી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુર્વી?) ઉર્ધ્વલોક સંબંધી અનાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અણાણુપુર્વી) ઉર્ધ્વલોક સંબંધી અનાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે-
(એયાએ ચેવ એગાઇયાએ એગુત્તરિયાએ પન્નરસગચ્છગયાએ સેટીએ અન્નમન્નવ્માસો
દૂરૂવ્ણો) આ અનાનુપૂર્વીમાં જે ઐળી સ્થાપિત કરવામાં આવે છે તેમાં સૌથી

મ્યાસે યાવન્તો મજ્જકા મવન્તિ, તે આદ્યન્તવિચસારહિતા મજ્જા વોધ્યાઃ સમ્પ્રતિ-
 ઔપનિધિકીં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં પ્રકારત્રયેણ મદર્શયિતુમાહ--‘અહવા’ ઇત્યાદિ । અથવા-
 ઔપનિધિકીક્ષેત્રાનુપૂર્વીં પૂર્વાનુપૂર્વાદિભેદૈસ્ત્રિવિધા વિજ્ઞેયા । તત્ર-પૂર્વાનુપૂર્વીં

પ્રિત કી જાતી હૈ ઉસમેં સબસે પ્રથમ મેં ૧ સંખ્યા રાખી જાતી હૈ બાદ મેં
 એક ૨ કી ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ હોતી ચલી જાતી હૈસ પ્રકાર કી વૃદ્ધિ યહાં
 ૧૫ સંખ્યા તક હોતી હૈ । ફિર इनमें परस्पर में गुणा किया जाता है ।
 जो गुणन फल आता है उसमें आदि अन्त के दो भंग कम कर दिये
 जाते हैं । क्योंकि आदिका भङ्ग आनुपूर्वी में आजाता है और अन्तका
 भङ्ग पश्चानुपूर्वी में आजाता है । इसलिये अनानुपूर्वी में आदि अन्त के
 दो भंग छोड़ने को कहा है । इस प्रकार (से णं अणाणुपुव्वी) यह
 ऊर्ध्वलोक संबन्धी अनानुपूर्वी बन जाती है । (अहवा) अथवा-ओव-
 णिहिया-खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पण्णत्ता) औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी-तीन
 प्रकार की प्रज्ञप्त हुई है । (तं जहा) जैसा-(पुव्वाणुपुव्वी, पच्छाणुपुव्वी,
 अणाणुपुव्वी) पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी और अनानुपूर्वी (से किं तं
 पुव्वाणुपुव्वी) पूर्वानुपूर्वी क्या है ?

ઉત્તર-(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીં હસ પ્રકાર સે હૈ-(एगपएसोगादे
 हुप्पएसोगादे दसपएसोगादे संखिज्जपएसोगादे जाव असंखिज्जपएसो

પહેલાં એક સંખ્યા રાખવામાં આવે છે, ત્યારબાદ ઉત્તરોત્તર એક
 એકની વૃદ્ધિ થતી જાય છે. આ પ્રકારની વૃદ્ધિ અહીં ૧૫ સંખ્યા સુધી
 કરાય છે. ત્યાર બાદ તેમાં પરસ્પરનો ગુણકાર આવે છે, જે ગુણનફળ
 આવે તેમાંથી આદિનો એક અને અન્તનો એક એમ બે ભંગ બાદ કર-
 વામાં આવે છે. કેમકે-આદિનો ભંગ આનુપૂર્વીમાં આવી જાય છે, અને
 અન્તનો ભંગ પશ્ચાનુપૂર્વીમાં આવી જાય છે. તેથી અનાનુપૂર્વીમાં આદિ અને
 અન્તનો એમ બે ભંગો છોડવાનું કહ્યું છે. (સે ણં અણાણુપુવ્વી) આ પ્રકારે
 ઉર્ધ્વલોક સંબંધી અનાનુપૂર્વી બની જાય છે. (અહવા) અથવા-(ओवणिहिया-
 खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पण्णत्ता) ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે.
 (તંજહા) તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે-(पुव्वाणुपुव्वी, पच्छाणुपुव्वी, अणाणुपुव्वी)
 (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે. (एगपएसोगादे, हुप्प-
 एसोगादे, दसपएसोगादे, संखिज्जपएसोगादे जाव असंखिज्जपएसोगादे) એક

એકપ્રદેશાવગાદાદારમ્ભ્યાસંસ્ખ્યેયપ્રદેશાવગાદાન્તા બોધ્યા । પશ્ચાનુપૂર્વી તુ અસંસ્ખ્યે-
યપ્રદેશાવગાદમારમ્ભ્ય એકપ્રદેશાવગાદાન્તા બોધ્યા । અનાનુપૂર્વી તુ-એકપ્રદેશાવ-
ગાદાધારમ્ભ્ય અસંસ્ખ્યેયપ્રદેશાવગાદાનામન્યોઽન્યામ્ભ્યાસેઽસંસ્ખ્યેયા મહ્ના ભવન્તિ ।
તેષુ આઘન્તવિવક્ષા નાસ્તિ, ઔપનિધિકોક્ષેત્રાનુપૂર્વી સમાપ્તેતિ સૂચયિતુમાહ-
ગાદે) એક પ્રદેશાવગાદ, દો પ્રદેશાવગાદ, દશપણસાવગાદ સંસ્ખ્યાત પ્રદે-
શાવગાદ યાવત્ અસંસ્ખ્યાત પ્રદેશાવગાદ (સે કિં તં પચ્છાણુપુવ્વી)
પશ્ચાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુવ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ । (અસંસ્ખિજ્જ
પણસોગાદે સંસ્ખિજ્જપણસોગાદે જાવ ણપણસોગાદે) અસંસ્ખ્યાતપ્રદે-
શાવગાદ, સંસ્ખ્યાત પ્રદેશાવગાદ યાવત્ એકપ્રદેશાવગાદ (સે તં પચ્છા-
ણુપુવ્વી) હસ પ્રકાર યહ પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુવ્વી) હે
ભદન્ત । અનાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર-(અણાણુપુવ્વી) અણાણુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—(ણાણ ચેવ
ણાણ્યાણ ણુત્તરિયાણ સંસ્ખિજ્જગચ્છગયાણ સેદીયે અન્નમન્નન્માસો
દુલ્લૂણો) હન પદોં કા અર્થ પહ્લે દિયા ગયા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
યહાં જો શ્રેણી માંડી જાવેગી વહ એક સે પ્રારંભ કર એક કી વૃદ્ધિ હોતે
૨ અસંસ્ખ્યાત તક હોતી જાવેગી ફિર ડન સબકા પરસ્પર મેં ગુણા કરને
પર જો અસંસ્ખ્યાત ભંગ રૂપ મહારાશિ ઉત્પન્ન હોગી ડસમેં સે આદિ

પ્રદેશાવગાદ, બે પ્રદેશાવગાદ, હસ પર્યન્તના પ્રદેશાવગાદ, સંખ્યાત પ્રદેશા-
વગાદ અને અસંખ્યાત પ્રદેશાવગાદ (સે તં પુવ્વાણુપુવ્વી) આ ક્રમની બે
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી છે તેને પૂર્વાનુપૂર્વી કહે છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પચ્છાણુપુવ્વી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વી કેવી હોય છે?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુવ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે-(અસંસ્ખિજ્જપ-
ણસોગાદે, સંસ્ખિજ્જપણસોગાદે જાવ ણપણસોગાદે) અસંખ્યાત પ્રદેશાવગાદ,
સંખ્યાત પ્રદેશાવગાદ અને એજ પ્રકારના ઉલ્ટા ક્રમમાં એકપ્રદેશાવગાદ પર્ય-
ન્તના પદોનો ઉપન્યાસ કરવો (સે તં પચ્છાણુપુવ્વી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુવ્વી) અનાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે-(ણાણ
ચેવ ણાણ્યાણ ણુત્તરિયાણ અસંસ્ખિજ્જગચ્છગયાણ સેદીયે અન્નમન્નન્માસોદુલ્લૂણો)
આ પદોનો અર્થ પહેલાં આપવામાં આવ્યો છે. એટલે કે અહીં બે શ્રેણી
સ્થાપિત કરવામાં આવશે તે એકથી શરૂ કરીને એક એકની વૃદ્ધિ કરતાં
કરતાં અસંખ્યાત પર્યન્તની થઇ જશે ત્યાર બાદ તે સૌનો પરસ્પરની સાથે
ગુણાકાર કરવાથી બે અસંખ્યાત ભંગરૂપ મહારાશિ ઉત્પન્ન થશે તેમાંથી

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १२४ कालानुपूर्वीनिरूपणम्

५३९

‘से तं ओवणिहिया’ इत्यादि। सैषा औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी। इत्थं क्षेत्रानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि। सैषा क्षेत्रानुपूर्वी ॥सू० १२३॥

उक्ता क्षेत्रानुपूर्वी, सम्प्रति पूर्वोद्दिष्टामेव क्रमप्राप्तां कालानुपूर्वीं विवृणोति—

मूलम्—से किं तं कालानुपूर्वी? कालानुपूर्वी दुविहा पणत्ता, तं जहा—ओवणिहिया अणोवणिहियाय ॥सू० १२४॥

छाया—अथ का सा कालानुपूर्वी? कालानुपूर्वी द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—औपनिधिकी अनौपनिधिकी च ॥सू० १२४॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि। व्याख्या स्पष्टा ॥सू० १२४॥

मूलम्—तत्थ णं जा सा ओवणिहिया सा ठप्पा। तत्थ णं जा सा अणोवणिहिया सा दुविहा पणत्ता, तं जहा—णैगम-ववहाराणं संगहस्स य ॥सू० १२५॥

छाया—तत्र खलु या सा औपनिधि सा स्थाप्या। तत्र खलु या सा अनौपनिधिकी सा द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—नैगमव्यवहारयोः संग्रहस्य च ॥सू. १२५॥

टीका—‘तत्थ णं’ इत्यादि। व्याख्यातप्रायमिदं सूत्रम् ॥सू० १२५॥

अंत के दो भग कम कर दिये जावेगे—(से तं अणानुपूर्वी) इस प्रकार से क्षेत्र संबन्धी अनानुपूर्वी बनती है। (से तं ओवणिहिया खेत्ताणु-पुक्की) इस प्रकार औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी है इस प्रकरण के समाप्त-होते ही क्षेत्रानुपूर्वी का स्वरूप समाप्त हो जाता है। ॥ सू० १२३ ॥

अब सूत्रकार पूर्वोद्दिष्ट ही क्रमप्राप्त कालानुपूर्वी का कथन करते हैं—
“से किं तं” इत्यादि।

शब्दार्थ—इस सूत्र की व्याख्या स्पष्ट की है। ॥ सू० १२४ ॥

આદિને એક ભંગ અને અન્તને એક ભંગ એમ બે ભંગ કરી કરવામાં આવશે (સે કિં તં અણાણુપુક્કી) આ પ્રકારે ક્ષેત્રસંબંધી અનાનુપૂર્વી બને છે. (સે તં ઓવણિહિયા ખેત્તાણુપુક્કી) આ પ્રકારે ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. (સે તં ખેત્તાણુપુક્કી) ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન સમાપ્ત થવાથી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે. ॥સૂ० ૧૨૩॥

હવે સૂત્રકાર પૂર્વોદ્દિષ્ટ ક્રમપ્રાપ્ત કાલાનુપૂર્વીનું કથન કરે છે—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે ॥સૂ० ૧૨૪॥

૫૪૭

અનુયોગદ્વારસ્વરૂપે

મૂલ્મ—સે કિં તં જૈગમવવહારાણં અણોવણિહિયા કાલાણુપુઠ્ઠી ?
અણોવણિહિયાકાલાણુપુઠ્ઠી પંચવિહા પળ્લત્તા, તં જહા—અત્થ-
પયપરૂવણયા, મંગસમુક્કિત્તણયા, મંગોવદંસણયા, સમોયારે,
અણુગમે ॥સૂ. ૧૨૬॥

છાયા—અથ કા સા જૈગમવ્યવહારયોરનોપનિધિકી કાલાણુપૂર્વી ? અનોપનિ-
ધિકી કાલાણુપૂર્વી પંચવિહા પ્રજ્ઞા, તથા—અર્થવદ્પ્રરૂપણતા, મજ્જસમુત્તીર્તનતા,
મજ્જોપદર્શનતા, સમવતારઃ, અનુગમઃ ॥સૂ. ૧૨૬॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । व्याख्याऽस्य स्पष्टा ॥सू. १२६॥

‘तत्स्थणं’ इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—इन में जो औपनिधि कालानुपूर्वी है वह अल्पवक्तव्य
विषय वाली होने से स्थाय्य है—अभी उसका विषय प्रतिपादन करने
योग्य नहीं है । तथा जो अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी है वह दो प्रकार की
है । एक जैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी और
दूसरी संग्रहनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी । यह सूत्र पहले
व्याख्यात हो चुका है । ॥ सू. १२५ ॥

“સે કિં તં જૈગમવવહારાણં” इत्यादि ।

(સે કિં તં જૈગમવવહારાણં અણોવણિહિયા કાલાણુપુઠ્ઠી ?) हे
भदन्त ! जैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी क्या है ?
(अणोवणिहिया कालाणुपुठ्ठी पंचविहा पणत्ता)

“ तत्स्थणं ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—तेमां जे औपनिधिकी कालानुपूर्वी छे, ते अल्प वक्तव्यविषय-
वाणी होवाथी स्थाय्य छे—अटले के डभय्वां तेना विषयनुं प्रतिपादन करवुं
ते योग्य नथी तेमांनी जे अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी छे तेना छे प्रकार छे—
(१) जैगमव्यवहार नयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी अने (२) संग्रहन-
यसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी आ सूत्रना विषयनी प्रपञ्चा पहेसां
धरि थुकी छे. ॥सू. १२५॥

“સે કિં તં જૈગમવવહારાણં ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં જૈગમવવહારાણં અણોવણિહિયા કાલાણુપુઠ્ઠી?) हे
भगवन् ! जैगमव्यवहार नयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीनुं स्वरूप केवुं छे?

ઉત્તર—(अणोवणिहिया कालाणुपुठ्ठी पंचविहा पणत्ता) अनौपनिधिकी

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૭ નૈગમવ્યવહારનયસંમતાર્થપદનિરૂપણમ્ ૫૪૧

મૂલ્ય—સે કિં તં જોગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ? જોગમ-
વવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા—તિસમયાટ્ટિફ આણુપુઠ્ઠી જાવ
દસસમયાટ્ટિફ આણુપુઠ્ઠી સંઘિજ્ઞસમયટ્ટિફ આણુપુઠ્ઠી,
અસંઘિજ્ઞસમયટ્ટિફ આણુપુઠ્ઠી। એગસમયટ્ટિફ અણાણુપુઠ્ઠી।
દુસમયટ્ટિફ અવત્તવગં। તિસમયટ્ટિફયાઓ આણુપુઠ્ઠીઓ।
એગસમયટ્ટિફયાઓ અણાણુપુઠ્ઠીઓ। દુસમયટ્ટિફયાઓ અવત્તવ-
ગાઈં। સે તં જોગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા। એયાં જં
જોગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાએ કિં પઓયણં ? એયાં જં
જોગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાએ જોગમવવહારાણં મંગસમુ-
ક્ષિત્તણયા કજ્ઞઈ ॥સૂ૦ ૧૨૭॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અર્થપદપ્રરૂપણતા ? નૈગમવ્યવહારયોઃ
અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્રિસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી યાવદ્ દશસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી,

ઉત્તર—અનૌપનિધિ કી કાલાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકાર કી કહી ગઈ છે ।
(તં જહા) વે પ્રકાર વે હૈ—(અત્થપયપરૂવણયા મંગસમુક્ષિત્તણયા, મંગો
વદંસણયા, સમોચારે અણુગમે) અર્થપદપ્રરૂપણતા મંગસમુક્ષીર્તનતા
સમવતારે ઓર અનુગમ । હસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે । ॥સૂ૦ ૧૨૬॥

“સે કિં તં જોગમવવહારાણં” હત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં જોગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ?) હે મદન્ત !
નૈગમવ્યવહારનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા કયાં છે ? (જોગમવવહારાણં
અત્થપયપરૂવણયા)

કાલાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે
છે—(અત્થપયપરૂવણયા, મંગસમુક્ષિત્તણયા, મંગોવદંસણયા સમોચારે અણુગમે) (૧)
અર્થપદપ્રરૂપણતા, (૨) મંગસમુક્ષીર્તનતા, (૩) મંગોવદંશનતા, (૪) સમવ-
તાર અને (૫) અનુગમ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે. ॥સૂ૦ ૧૨૬॥

“સે કિં તં જોગમવવહારાણં” હત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં જોગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ?) હે ભગવાન !
નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

સંસ્ક્રુએયસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી, અસંસ્ક્રુએયસમયસ્થિતિકઆનુપૂર્વી । એકસમય-
સ્થિતિક અનાનુપૂર્વી । દ્વિસમયસ્થિતિક અવક્તવ્યકમ્ । ત્રિસમયસ્થિતિકા આનુ-
પૂર્વ્યઃ । એકસમયસ્થિતિકા અનાનુપૂર્વ્યઃ । દ્વિસમયસ્થિતિકા અવક્તવ્યકાનિ ।
સૈષા નૈગમવ્યવહારયોઃ અર્થપદપ્રરૂપણતા । એતસ્યાઃ સ્વલ્પ નૈગમવ્યવહારયોઃ
અર્થપદપ્રરૂપણતાયાઃ કિં પ્રયોજનમ્ ? એતસ્યાઃ સ્વલ્પ નૈગમવ્યવહારયોરર્થપદપ્રરૂપણ-
તાયા નૈગમવ્યવહારયોર્મક્લસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે ॥સુ૦ ૧૨૭॥

ટીકા—‘સે કિં તે’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તા અર્થપદપ્રરૂપણતા ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-
ઇત્થં ચ પર્યાયપર્યાયિણોરભેદોપચારમાશ્રિત્ય, તત્ર ચ કાલપર્યાયસ્યૈવ પ્રાધાન્ય-
માશ્રિત્ય કાલપર્યાયવિશિષ્ટસ્ય દ્રવ્યસ્યાપિ કાલાનુપૂર્વીત્વં બોધ્યમ્ । અનન્તસમ-
યાવધિદ્રવ્યસ્ય સ્થિતિઃ સ્વભાવાદેવ ન ભવતિ, અતોડનન્તસમયસ્થિતિકઃ

ઉત્તર=નૈગમવ્યવહારનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા હસ પ્રકાર સે હૈ-
(તિ સમયદ્વિદ્વિ આણુપુઢ્વી, જાવ દસસમયપદ્વિદ્વિ આણુપુઢ્વી) જિસ
દ્રવ્ય વિશેષ કી સ્થિતિ ત્રીન સમય કી હૈ—અર્થાત્ ત્રીન સમય કી સ્થિતિ-
વાલા જો દ્રવ્ય વિશેષ હૈ—વહ ત્રિસમયસ્થિતિક હૈ । એસા ત્રિસમય સ્થિતિ-
ક જો દ્રવ્ય વિશેષ હૈ વહ આનુપૂર્વી હૈ, એસા દ્રવ્ય વિશેષ એકપરમાણુ
બી હો સકતા હૈ દ્વિપરમાણુક સ્કંધ બી હો સકતા ત્રીન પરમાણુ વાલા
સ્કંધ બી હો સકતા હૈ, ચાર પરમાણુ વાલા બી સ્કંધ હો સકતા હૈ,
પાંચ આદિ પરમાણુ વાલે સ્કંધ સે લેકર અનંત પરમાણુઓ વાલા સ્કંધ તક
બી હો સકતા હૈ । હસ પ્રકાર એક પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય સે લેકર દ્વિપરમા-
ણુક ત્રિપરમાણુક આદિ અનન્ત પરમાણુક સ્કંધ પર્યન્ત જિતને બી દ્રવ્ય

ઉત્તર—(નૈગમવ્યવહારાણાં અર્થપદપ્રરૂપણયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થપ-
દપ્રરૂપણતા આ પ્રકારની છે—(તિસમયદ્વિદ્વિ આણુપુઢ્વી, જાવ દસસમયદ્વિદ્વિ
આણુપુઢ્વી) જે દ્રવ્યવિશેષની સ્થિતિ ત્રણ સમયની હોય છે, તે દ્રવ્યવિશેષને
ત્રિસમયસ્થિતિ કહે છે એવું ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું જે દ્રવ્યવિશેષ છે,
તેને અહીં આનુપૂર્વી રૂપ સપન્નવું જોઈએ એવું દ્રવ્યવિશેષ એક પરમાણુ
પણ હોઈ શકે છે, બે પરમાણુવાળો સ્કંધ પણ હોઈ શકે છે, ત્રણ પરમાણુ-
વાળો સ્કંધ પણ હોઈ શકે છે, ચાર પરમાણુવાળો સ્કંધ પણ હોઈ શકે છે,
અને પાંચથી લઈને અનંત સુધીના પરમાણુઓવાળા સ્કંધો પણ હોઈ શકે છે.

આ રીતે એક પરમાણુ રૂપ દ્રવ્યથી લઈને દ્વિપરમાણુક, ત્રિપરમાણુક
અનંત પરમાણુક સ્કંધ પર્યન્તના જેટલાં દ્રવ્યવિશેષ છે, તે ત્રણ સમયની સ્થિતિ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૭ તેગમવ્યવહારનયસંમતાર્થપદનિરૂપણમ્ ૫૪૩

કાલાનુપૂર્વી ન પ્રોક્તા । તથા-એકસમયસ્થિતિકઃ પરમાણ્વાઘનન્તપરમાણુકસ્કન્ધ પર્યન્તો દ્રવ્યવિશેષઃ અનાનુપૂર્વી । દ્વિસમયસ્થિતિકઃ પરમાણ્વાઘનન્તપરમાણુક-સ્કન્ધપર્યન્તો દ્રવ્યવિશેષઃ અવક્તવ્યકમ્ । તથા ત્રિસમયસ્થિતિકાઃ પરમાણ્વાઘનન્ત-પરમાણુકસ્કન્ધાત્મકા દ્રવ્યવિશેષા યાવદસંખ્યેયસમયસ્થિતિકાઃ પૂર્વોક્તદ્રવ્યવિશેષા વિશેષ ત્રીન સમય કી સ્થિતિ વાલે હૈં વે સ્વ અનૌપનિધિકી કાલાનુ-પૂર્વી કે ભેદ રૂપ અર્થપદપ્રરૂપણા કે વિષય ભૂત હૈં । ઓર યે સ્વ એક ૨ અનાનુપૂર્વી હૈં । હસી પ્રકાર સે ચાર સમય કી સ્થિતિ વાલા-જિતના મી દ્રવ્ય હૈં ઉસસે લેકર અસંખ્યાત સમય-કી સ્થિતિ વાલે દ્રવ્યોં તક જિતને દ્રવ્ય વિશેષ હૈં ઉન મેં પ્રત્યેક દ્રવ્યવિશેષ આનુપૂર્વી હૈં ।

શંકા-યદિ દ્રવ્ય વિશેષ કો હી યહાં આનુપૂર્વી પના હૈં તો ફિર કાલાનુપૂર્વી એસા કહના વિરુદ્ધ પડતા હૈં । ક્યોંકિ કાલાનુપૂર્વી મેં કાલ મેં આનુપૂર્વી પના કહના ચાહિયે દ્રવ્ય વિશેષ મેં નહીં । યહાં તો આનુપૂર્વી પના દ્રવ્યવિશેષોં મેં કહા જારહા હૈં ।

ઉત્તર-યહાં જો દ્રવ્ય વિશેષોં મેં આનુપૂર્વી પના કહાં જારહા હૈં સો કેવલ-દ્રવ્યોં મેં નહીં કહા જારહા હૈં કિન્તુ જો-દ્રવ્ય સમ-યત્રય આદિ રૂપ કાલ પર્યાય સે વિશિષ્ટ હૈં ઉસમેં હી કહા જારહા હૈં । હસલિયે-યહાં સમયત્રય આદિરૂપ કાલપર્યાય સે યુક્ત હી દ્રવ્ય ગ્રહણ કિયા ગયા હૈં । હસ પ્રકાર કાલ કી પર્યાય જો સમયત્રય આદિ

વાળાં છે, તે સ્થળા અનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીના ભેદ રૂપ અર્થપદપ્રરૂપણ-તાના વિષયરૂપ છે. અને તેઓ બધાં એક એક અનાનુપૂર્વી રૂપ છે એજ પ્રમાણે ચાર સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યો છે તે દ્રવ્યોથી લઈને અસંખ્યાત પર્યન્તની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યો છે, તેમાંનું પ્રત્યેક દ્રવ્યવિ-શેષ પણ આનુપૂર્વી રૂપ જ છે.

શંકા-જે દ્રવ્યવિશેષમાં જ આનુપૂર્વીતા માનવામાં આવે, તો “કાલા-નુપૂર્વી” આ પ્રકારનું કથન વિરુદ્ધ પડે છે, કારણ કે કાલાનુપૂર્વીના કથનમાં તો કાળમાં આનુપૂર્વીતા કહેવી જોઈએ-દ્રવ્યવિશેષમાં આનુપૂર્વીતા કહેવી જોઈએ નહીં. અહીં તો આપે દ્રવ્યવિશેષોમાં આનુપૂર્વીતા બતાવી છે. તો આ બાબતનો આપ શો ખુલાસો કરો છો ?

ઉત્તર-અહીં જે દ્રવ્યવિશેષોમાં આનુપૂર્વીતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે, તે કેવળ દ્રવ્યોમાં જ પ્રકટ કરવામાં આવી નથી, પરન્તુ જે દ્રવ્ય સમયત્રય આદિ રૂપ કાળપર્યાયથી વિશિષ્ટ (યુક્ત) છે તેમાં જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. તેથી અહીં સમયત્રય આદિ રૂપ કાળપર્યાયથી યુક્ત દ્રવ્ય જ શ્રદ્ધે કર-

પર્યાયી જો તદ્વિશિષ્ટ દ્રવ્ય હૈં સો इन दोनों में अभेद के उपचारका आश्रय करके और कालपर्यायकी ही प्रधानता-मानकर के काल पर्याय विशिष्ट द्रव्य में भी कालानुपूर्वीपना जानना चाहिये। अनन्त समय तक रहनेवाले द्रव्य की स्थिति स्वभाव से ही नहीं होती है। अर्थात् कोई भी द्रव्य ऐसा नहीं है कि जिसकी स्थिति स्वभाव से अनन्त समयवाली हो। इसीलिये अनन्त समय की स्थितिवाली कालानुपूर्वी नहीं कही है। (संखिज्जसमयद्विहए आणुपुव्वी असंखिज्जसमयद्विहए आणुपुव्वी) इन पदोंका अर्थ विषयक खुलासा भी इसी कथन में हो चुका है। (एगसमयद्विहए अणानुपुव्वी) तथा जो परमाणुरूप द्रव्य, द्रव्यणुक द्रव्य, व्यणुकद्रव्य यावत् संख्याताणुक द्रव्य, असंख्याताणुक और अनंताणुक द्रव्य एक समय की स्थितिवाला है वह अनानुपूर्वी है। (दुसमयद्विहए अवत्तव्वगं) तथा जो दो समयकी स्थितिवाला परमाणुरूप द्रव्य, द्रव्यणुक द्रव्य व्यणुक द्रव्य यावत् संख्याताणुक द्रव्य, असंख्याताणुक द्रव्य और अनंताणुक पर्यन्त तक का द्रव्य है वह सब अवत्तव्यक द्रव्य है। (तिसमयद्विहयाओ आणुपुव्वीओ) तीन समयकी

વામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે કાળની ત્રણ પર્યાયો અને તે ત્રણપર્યાયોવાળા દ્રવ્યમાં અભેદનો ઉપચાર કરીને અને કાળપર્યાયની જ પ્રધાનતા માનીને કાળપર્યાયવિશિષ્ટ દ્રવ્યમાં પણ કાલાનુપૂર્વીતા સમજવી ભેદભ્રે દ્રવ્યની અનન્ત સમય મુદ્દી રહેવાની સ્થિતિ સ્વભાવથી જ હોતી નથી એટલે કે કોઈ પણ દ્રવ્ય એવું નથી કે જેની સ્થિતિ સ્વભાવથી જ અનન્ત સમયની હોય તેથી જ અનન્ત સમયની સ્થિતિવાળી કાલાનુપૂર્વી હોતી નથી તે કારણે અનન્ત સમયની સ્થિતિવાળી કાલાનુપૂર્વી અહીં પ્રકટ કરવામાં આવી નથી.

(સંખિજ્જસમયદ્વિહए आणुपुव्वी असंखिज्जसमयद्विहए आणुपुव्वी) આ સૂત્રપાઠનો અર્થ પણ ઉપર્યુક્ત કથનમાં સ્પષ્ટ થઇ ચુકયો છે.

(एगसमयद्विहए अणानुपुव्वी) तथा જે પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય, બે અણુવાળું દ્રવ્ય, ત્રણ અણુવાળું દ્રવ્ય, ચારથી લઇને સંખ્યાત પર્યન્તના અણુવાળું દ્રવ્ય, અસંખ્યાત અણુક દ્રવ્ય અને અનંતાણુક દ્રવ્ય એક સમયની સ્થિતિવાળું હોય છે, તેને અનાનુપૂર્વી રૂપ સમજવું. (दुसमयद्विहए अवत्तव्वगं) तथा બે સમયની સ્થિતિવાળું જે પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય, બે અણુવાળું દ્રવ્ય, ત્રણથી લઇને સંખ્યાત પર્યન્તના અણુવાળું દ્રવ્ય, અસંખ્યાત અણુક દ્રવ્ય અને અનંત અણુક દ્રવ્ય હોય છે તેને અવત્તવ્યક દ્રવ્યરૂપ સમજવું.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૭ નૈગમવ્યવહારસંમતાર્થપદનિરૂપણમ્

૫૪૧

આનુપૂર્વ્યઃ । એકસમયસ્થિતિકા અનાનુપૂર્વ્યઃ । દ્વિસમયસ્થિતિકા અવક્તવ્યકાનિ ।
સૈવા નૈગમવ્યવહારસંમતા—અર્થપદપ્રરૂપણતા । એતસ્યાઃ સ્વલુ નૈગમવ્યવહારયોરર્થ
પ્રરૂપણતાયાઃ કિં પ્રયોજનમ્ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—એતયા સ્વલુ નૈગમવ્યવહાર-
સંમતયાડ્યપ્રરૂપણતયા નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જસદ્ધુત્કીર્તનતા ક્રિયતે ॥મૂ. ૧૨૭॥

સ્થિતિવાલે જિતને મી પરમાણુ આદિ સે લેકર અનંતાણુક પર્યંત તક કે
સ્કંધાત્મક દ્રવ્ય વિશેષ હૈં વે તથા સંસ્થાત અસંસ્થાતસમયકી સ્થિતિ-
વાલે પરમાણુરૂપ દ્રવ્ય સે લેકર અનંતાણુક પર્યંત તક કે જિતને મી
દ્રવ્ય વિશેષ હૈં વે સવ બહુવચનાન્ત આનુપૂર્વી શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈં ।
(એગસમયદ્વિદ્યાઓ અણાણુપુઞ્વીઓ) તથા જિતને મી એક પરમાણુરૂપ
દ્રવ્ય સે લેકર અનંતાણુક પર્યંત તક કે દ્રવ્ય વિશેષ એક સમય કી
સ્થિતિવાલે હૈં વે સવ બહુવચનાન્ત અનાનુપૂર્વી શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈં ।
(દુસમયદ્વિદ્યાઓ અવક્તવ્યગાઈ) તથા દો સમય કી સ્થિતિવાલે જિતને
મી યે પૂર્વોક્ત દ્રવ્ય હૈં વે સવ બહુવચનાન્ત અવક્તવ્યક શબ્દ કે વાચ્યાર્થ
હૈં, (સે તં નૈગમવ્યવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા) ઇસ પ્રકાર નૈગમવ્યવહાર-
નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા હૈં । (એવાએણં નૈગમવ્યવહારાણં અત્થપયપરૂવ-
ણાપ કિં પઓયણં)

પ્રશ્ન—ઇસ નૈગમવ્યવહારનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા કા કયા પ્રયોજન હૈં ?

(તિ સમયદ્વિદ્યાઓ આણુપુઞ્વીઓ) તથા સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં
પરમાણુ આદિથી લઇને અનંતાણુક પર્યંતના સ્કંધાત્મક દ્રવ્યવિશેષો છે,
તેમને તથા સંસ્થાત, અસંસ્થાત સમયની સ્થિતિવાળા પરમાણુરૂપ દ્રવ્યથી
લઇને અનંતાણુક પર્યંતના બેટલાં દ્રવ્યવિશેષો છે તેઓ બહુવચનાન્ત
આનુપૂર્વી શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે.

(એગ સમયદ્વિદ્યાઓ અણાણુપુઞ્વીઓ) તથા એક પરમાણુરૂપ દ્રવ્યથી
લઇને અનંતાણુક પર્યંતના બેટલાં દ્રવ્યવિશેષો એક સમયની સ્થિતિવાળા
છે, તેઓ બધાં બહુવચનાન્ત અનાનુપૂર્વી શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે.

(દુસમયદ્વિદ્યાઓ અવક્તવ્યગાઈ) તથા બે સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં
પૂર્વોક્ત દ્રવ્યો છે, તેઓ બધાં બહુવચનાન્ત અવક્તવ્યક શબ્દના વાચ્યાર્થ
રૂપ છે. (સે તં નૈગમવ્યવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત
અર્થપદપ્રરૂપણતાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(એવાએણં નૈગમવ્યવહારાણં અત્થપયપરૂવણાપ કિં પઓયણં ?) આ નૈગમ-
વ્યવહાર નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું પ્રયોજન શું છે ?

મ. ૬૧

ઉત્તર-एयाएणं णेगमववहाराणं अर्थपयपरूवणाए णेगमववहाराणं भंगसमुक्त्तिस्तणया कज्जह) नैगमव्यवहारनयसंमत इस् अर्थपदप्ररू-
पणता से नैगमव्यवहारनयसंमत भंगसमुक्तीर्तनता की जाती है।

भावार्थ-सूत्रकार यहां कालानुपूर्वी का कथन कर रहे हैं। अतः उस विषयका सांगोपांग वर्णन करने के लिये उन्होंने इस आनुपूर्वी को औपनिधिकी और अनौपनिधिकी इस प्रकार के दो विभागों में विभक्त किया है। इन का शब्दार्थ क्या है? यह सब पीछे द्रव्यानुपूर्वी के प्रकरणमें स्पष्ट कर दिया गया है। औपनिधिकी आनुपूर्वी के स्वरूप आदिका कथन सूत्रकार अनौपनिधिकी आनुपूर्वी के कथन करने के बाद करेंगे। अतः उसे पहिले न कहकर वे अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी का सर्व प्रथम विवेचन करने के अभिप्राय से उसे नैगम-व्यवहारनय संमत अनौपनिधिकी और संग्रहनय संमत अनौपनिधिकी इन दो विभागों में विभक्त कर रहे हैं। इन में जो नैगमव्यवहारनय संमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी है वह अर्थपदप्ररूपणता, भंगसमु-क्तीर्तनता, भंगोपदर्शनता, समवतार और अनुगम के भेद से ५ पांच प्रकार की है। अर्थपदप्ररूपणता में तीन समय से लेकर असंख्यात

ઉત્તર-(एयाएणं णेगमववहाराणं अर्थपयपरूवणाए णेगमववहाराणं भंगसमु-
क्त्तिस्तणया कज्जह) नैगमव्यवहारनयसंमत आ अर्थपद प्ररूपणताने आधारे
नैगमव्यवहार नयसंमत भंगसमुक्तीर्तनता कराय छे.

भावार्थ-सूत्रकारे आ सूत्रभां कालानुपूर्वीनुं कथन कयुं छे. आ विषयनुं
सांगोपांग वखुंन करवाने माटे सूत्रकारे कालानुपूर्वीना औपनिधिकी अने
अनौपनिधिकी नामना छे विभाग पाउयां छे. आ अन्नेने अर्थ द्रव्यानुपू-
र्वीना प्रकरणभां पछेलां अतावी देवामां आवेल छे अनौपनिधिकी आनुपू-
र्वीना स्वરૂપनुं कथन कयां आठ सूत्रकार औपनिधिकी आनुपूर्वीना स्वરૂપनुं
कथन करशे आ प्रकारे सूत्रकार पछेलां तो अनौपनिधिकी आनुपूर्वीनुं निरू-
पण करे छे-ते माटे तेमछे अनौपनिधिकी आनुपूर्वीने नीचेना छे विभागोभां
विभक्त करी नाणी छे-(१) नैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी अने
(२) संग्रहनयसंमत अनौपनिधिकी तेमांनी छे नैगमव्यवहारनयसंमत
अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी छे तेना नीचे प्रमाणे पांच लेख पडे छे-(१)
अर्थपद प्ररूपणता, (२) भंगसमुक्तीर्तनता, (३) भंगोपदर्शनता, (४) सम-
वतार अने (५) अनुगम.

અનુયોગચન્દ્રિકા દીકા સૂત્ર ૧૨૭ નૈગમધ્યવહારસંમતાર્થપદનિરૂપણમ્ ૫૪૭

સમય તક કી સ્થિતિવાલા જિતના ખી એક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈ-
વહ સબ આનુપૂર્વી શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ । ક્યોંકિ યહાં કાલાનુપૂર્વીકા
પ્રકરણ હૈ इसलिये तीन आदि समयों में रहनेवाले द्रव्य को ही आनु-
पूर्वी माना गया है । एक परमाणु भी तीन समयकी स्थितिवाला होता
है, दो आदि परमाणुवाला द्रव्य भी तीन समय की स्थितिवाला होता
है । अतः ये सब आनुपूर्वी शब्द के वाच्य हैं । इसी प्रकार से चार आदि
समयों से लेकर संख्यात समय और असंख्यात समय तक की भी
स्थितिवाले ये पूर्वोक्त द्रव्य होते हैं । इसलिये ये सब स्वतंत्र आनुपूर्वी
हैं । एक समयकी स्थितिवाला एक पुद्गलपरमाणु द्रव्य और द्रव्यणुक
आदि अनंत परमाणुक पर्यन्त तक का द्रव्य अनानुपूर्वी है । दो समयकी
स्थितिवाला एक पुद्गलपरमाणुरूप द्रव्य और द्रव्यणुक आदि अनंत
परमाणु युक्त तकका द्रव्य अवक्तव्यक द्रव्य हैं । यहां एक वचनान्त और
बहुवचनान्त जो आनुपूर्वी आदिपद सूत्रकारने कहे हैं उन का
कारण यह है कि तीन आदि समयों की स्थितिवाले आनुपूर्वी द्रव्य
एक २ व्यक्तिरूप भी है और अनेक अनंत-व्यक्तिरूप भी हैं । इसी

અર્થપદ પ્રરૂપણતામાં ત્રણ સમયથી લઈને અસંખ્યાત સમય પર્યન્તની
સ્થિતિવાળાં બેટલાં એક પરમાણુથી લઈને અનંત પર્યન્તના પરમાણુવાળાં
દ્રવ્યો છે, તે બધા દ્રવ્યોને આનુપૂર્વી રૂપ ગણવામાં આવે છે, કારણ કે અહીં
કાલાનુપૂર્વીનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે તેથી ત્રણ આદિ સમયોની સ્થિતિ-
વાળાં દ્રવ્યોને જ આનુપૂર્વી રૂપ માનવામાં આવ્યાં છે. એક પરમાણુ પણ
ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું હોઈ શકે છે, બે આદિ પરમાણુવાળું દ્રવ્ય પણ
ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું હોઈ શકે છે. તેથી એવાં ત્રણ સમયની સ્થિતિ-
વાળાં દ્રવ્યો આનુપૂર્વી રૂપ છે એજ પ્રમાણે ચારથી લઈને સંખ્યાત સમયો,
અને અસંખ્યાત પર્યન્તના સમયોની સ્થિતિવાળાં એક પરમાણુવાળાં, અને
બેથી લઈને અનંત પર્યન્તના પરમાણુવાળાં દ્રવ્યો પણ હોઈ શકે છે એવાં
બધાં દ્રવ્યો પણ સ્વતંત્ર આનુપૂર્વી રૂપ જ ગણાય છે. એક સમયની સ્થિતિ-
વાળું એક પુદ્ગલ પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય અને બે અણુકથી લઈને અનંત અણુક
પર્યન્તનું દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ ગણાય છે. બે સમયની સ્થિતિવાળું એક
પુદ્ગલપરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય અને બે અણુવાળાથી લઈને અનંત પર્યન્તના
અણુવાળું દ્રવ્ય અવક્તવ્યક રૂપ ગણાય છે. અહીં સૂત્રકારે જે એકવચન-
અને બહુવચન-આનુપૂર્વી આદિ પદ બતાવ્યાં છે તેનું કારણ એ છે કે
ત્રણ આદિ સમયોની સ્થિતિવાળાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો એક એક વ્યક્તિ (પદાર્થ)

મૂલ્ય-સે કિં તં નેગમવવહારાણં ભંગસમુક્તિત્તળયા ?
 નેગમવવહારાણં ભંગસમુક્તિત્તળયા-અત્થિ આણુપુઠ્ઠી, અત્થિ
 અણાણુપુઠ્ઠી, અત્થિ અવત્તઠ્ઠવગં। એવં દઠ્ઠવાણુપુઠ્ઠીગમેણં કાલા-
 ણુપુઠ્ઠીણ વિ તે ચેવ છઠ્ઠીસં ભંગા ભાણિયઠ્ઠવા જાવ સે તં
 નેગમવવહારાણં ભંગસમુક્તિત્તળયા। ઇયાણં નેગમવવહારાણં
 ભંગસમુક્તિત્તળયાઈકિં પઓયણં? ઇયાણં નેગમવવહારાણં ભંગ-
 સમુક્તિત્તળયાઈ નેગમવવહારાણં ભંગોવદંસળયા કઙ્ઠઈ॥સૂ૦૧૨૮॥

પ્રકાર સે અવત્તઠ્ઠવક ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે વિષય મેં મી જાનના
 યાહિયે। હસકે યુલાસા કે લિયે દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે પ્રકરણમેં નેગમવવ-
 હારનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતારૂપ આનુપૂર્વીં કા અર્થ દેલના યાહિયે।
 વહાં દ્રવ્યાનુપૂર્વીં કા પ્રકરણ હોને સે તીન આદિ પ્રદેશવાલે દ્રવ્ય કો
 આનુપૂર્વીં, એક પ્રદેશવાલે દ્રવ્ય કો અનાનુપૂર્વીં ઓર દો પ્રદેશવાલે
 દ્રવ્ય કો અવત્તઠ્ઠવક દ્રવ્ય કહા હૈ। તથ કિં યહાં કાલાનુપૂર્વીં કે સબન્ધ
 સે તીન આદિ સમય સ્થિત દ્રવ્યકો આનુપૂર્વીં, એક સમય સ્થિત દ્રવ્ય
 કો અનાનુપૂર્વીં ઓર દો સમયસ્થિત દ્રવ્ય કો અવત્તઠ્ઠવક દ્રવ્ય કહા હૈ।
 હસ એક વચનાન્ત ઓર બહુવચનાન્ત આનુપૂર્વીં આદિ અર્થપદ પ્રરૂપણતા
 કા પ્રયોજન કયા હૈ? હસ યાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ ॥સૂ૦ ૧૨૭॥

૩૫ પશુ હોય છે. એજ પ્રમાણે અવક્રાન્ત્યક અને અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્યોના
 વિષયમાં પશુ સમજણું તેના કપટીકરણ માટે દ્રવ્યાનુપૂર્વીંના પ્રકરણમાં નેગ-
 મવવહાર નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણ ૩૫ આનુપૂર્વીંનું પ્રકરણ વાંચી જવાની
 ભક્ષામણ કરવામાં આવે છે. તે પ્રકરણમાં દ્રવ્યાનુપૂર્વીંનું નિરૂપણ કરેલું હોવાથી,
 ત્રણ આદિ પ્રદેશોવાળાં દ્રવ્યોને આનુપૂર્વીં ૩૫, એક પ્રદેશવાળા દ્રવ્યને
 અનાનુપૂર્વીં ૩૫ અને બે પ્રદેશવાળા દ્રવ્યને અવક્રાન્ત્યક ૩૫ કહેવામાં આવેલ
 છે. પરન્તુ અહીં કાલાનુપૂર્વીંનું કથન ચાલતું હોવાથી ત્રણ આદિ સમયની
 સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને આનુપૂર્વીં ૩૫, એક સમયની સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને અના-
 નુપૂર્વીં ૩૫ અને બે સમયની સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને અવક્રાન્ત્યક ૩૫ કહેવામાં
 આવેલ છે. આ એકવચનાન્ત અને બહુવચનાન્ત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું
 પ્રયોજન શું છે? તે હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે. ॥સૂ૦ ૧૨૭॥

અનુયોગવન્દિકા ટોકા સૂત્ર ૧૨૮ નૈગમવ્યવહારનયસંમતભંગસમુત્કીર્તનનિ. ૫૪૯

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયો મેઙ્ગસમુત્કીર્તનતા? નૈગમવ્યવહારયો મેઙ્ગસમુત્કીર્તનતા—અસ્તિ આનુપૂર્વી, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવક્તવ્યકમ્। એવં સસસત્તિધ્વત્રોક્તદ્રવ્યાનુપૂર્વીગમેન કાલાનુપૂર્વીમપિ ત એવ પદ્ધર્વિશતિર્મજ્ઞા ભણિતવ્યા યાવત્ સૈવા નૈગમવ્યવહારયોમેઙ્ગસમુત્કીર્તનતા। એતસ્યાઃ સ્વલુ મજ્ઞ-

“સે કિં તં ણેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ।

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં ણેગમવ્યવહારાણં મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયા?) હે ભદ્રન્ત! નૈગમવ્યવહારનયસંમત વહ મેઙ્ગસમુત્કીર્તનતા કયા હૈ?

ઉત્તરઃ—(મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત મેઙ્ગસમુત્કીર્તનતા હસ પ્રકાર સે હૈ—(અસ્થિ આણુપુઢ્વી, અસ્થિ અણાણુપુઢ્વી અસ્થિ અવક્તવ્યગં) આનુપૂર્વી હૈ, અનાનુપૂર્વી હૈ, અવક્તવ્યક હૈ (એવં દઢ્વાણુપુઢ્વીગમેણં કાલાણુપુઢ્વીએ વિ તે ચેવ છઢ્વીસં મેઙ્ગા ભાણિયઢ્વા) હસ પ્રકાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં કથિત મેઙ્ગસમુત્કીર્તનતા કે અનુરૂપ હસ કાલાપૂર્વી મેં બી વે હી ૨૬ મેઙ્ગ બના લેના ચાહિયે। ઓર—હસ પાઠ કો “સે તં ણેગમવ્યવહારાણં મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયા” હસ પાઠ તક સમાસ હુઆ જાનના ચાહિયે। (એયાએ ણં ણેગમવ્યવહારાણં મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયાએ કિં પઓયણં?) નૈગમવ્યવહારનયસંમત હસ મેઙ્ગસમુત્કીર્તનતા કા કયા પ્રયોજન હૈ?

“સે કિં તં ણેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં ણેગમવ્યવહારાણં મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયા?) હે ભગવન્! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત તે ભંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત ભંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(અસ્થિ આણુપુઢ્વી, અસ્થિ અણાણુપુઢ્વી, અસ્થિ અવક્તવ્યગં) આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે અને અવક્તવ્યક છે, (એવં દઢ્વાણુપુઢ્વીગમેણં કાલાણુપુઢ્વીએ વિ તે ચેવ છઢ્વીસં મેઙ્ગા ભાણિયઢ્વા) આ પ્રકારે દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં જેવાં ૨૬ ભંગ (ભાંગાઓ) કહેવામાં આયા છે, એવાં જ ૨૬ ભાંગાઓ આ કાલાનુપૂર્વીના વિષયમાં પણ કહેવા જોઈએ. “સે તં ણેગમવ્યવહારાણં મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયા” આ સૂત્રપાઠ પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં પણ કરવું જોઈએ.

પ્રશ્ન—(એયાએ ણેગમવ્યવહારાણં મેઙ્ગસમુક્તિજ્ઞાનયાએ કિં પઓયણં?) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આ ભંગસમુત્કીર્તનતાનું શું પ્રયોજન છે?

સમુત્કીર્તનતાયાઃ કિં પ્રયોજનમ્? एतया खलु नैगमव्यवहारयोः भङ्गसमुत्कीर्तन-
तया नैगमव्यवहारयोर्भङ्गोपदर्शनता क्रियते ॥सू० १२८॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि। व्याख्याऽस्य स्पष्टा ॥सू० १२८॥

उत्तर-(एयाए णं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए णेगमव-
वहाराणं भंगोवदंसणया कज्जइ) इस नैगमव्यवहारनयसंमत भंगसमु-
त्कीर्तनता से नैगमव्यवहारनयसंमत भंगोपदर्शनता की जाती है।
इस सूत्र की व्याख्या स्पष्ट है।—

भावार्थ:-यहां इस प्रकार से जानना चाहिये-कि जो ये आनुपूर्वी
आदि तीन पद एकवचनान्त हैं उनसे तीन भंग बनते हैं। और जो
आनुपूर्वी आदि तीन पद बहुवचनान्त हैं उनसे भी तीन भंग बनते हैं।
इस प्रकार असंयोग पक्ष में ये जुदे २ छ भंग हो जाते हैं। और
संयोग पक्ष में इन तीन पदों के द्विसंयोगी भंग तीन होते हैं। इनमें
एक २ भंग में दो दो का संयोग होने पर एकवचन और बहुवचन को
लेकर चार चार भंग हो जाते हैं। इस प्रकार तीन भंग के द्विकसंयोगी
भंग चार २ होने से ये १२ बन जाते हैं। तथा त्रिकसंयोग में एकवचन
और बहुवचन को लेकर ८ भंग बनते हैं। इस प्रकार सब भंग मिलकर
२६ भंग होते हैं। इन भंगों की स्थापना के लिये द्रव्यानुपूर्वी के प्रकरण
का ७७वां सूत्र देखना चाहिये ॥सू० १२८॥

उत्तर-(एयाएणं णेगमववहाराणं भंगसमुत्कीर्तणयाए णेगमववहाराणं भंगोव-
दंसणया कज्जइ) आ नैगमव्यवहार नयसंमत भंगसमुत्कीर्तनताने आधारे
नैगमव्यवहार नयसंमत भंगोपदर्शनता કરવામાં આવે છે. આ સૂત્રની
વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે.

ભાવાર્થ-અહીં ૨૬ ભંગ કેવી રીતે બને છે, તે હવે સમજાવવામાં
આવે છે-આનુપૂર્વી આદિ ત્રણ એકવચનનાંત પદોના ત્રણ ભંગ (ભાંગા)
બને છે. અને જે આનુપૂર્વી આદિ બહુવચનનાંત ત્રણ પદો છે તેમના ત્રણ
ત્રણ ભંગ બને છે આ રીતે કુલ ૬ ભંગ અસંયોગ પક્ષમાં થાય છે.

સંયોગ પક્ષમાં આ ત્રણ પદના દ્વિસંયોગી ભંગ ત્રણ થાય છે. તેમાં
પ્રત્યેક ભંગમાં બળ્લોને સંયોગ થવાથી એકવચન અને બહુવચનવાળા
ચાર ચાર ભંગ બને છે. આ રીતે ત્રણ ભંગોના દ્વિસંયોગી ચાર ચાર ભંગ
થતા હોવાથી કુલ દ્વિકસંયોગી ભંગ ૧૨ થાય છે. અને ત્રિકસંયોગમાં એક-
વચન અને બહુવચનનાંત પદોનાં કુલ ૮ ભંગ થાય છે. આ પ્રકારે કુલ ૨૬
ભંગ થઈ જાય છે આ ભંગોની રચના સ્પષ્ટ રીતે સમજવા માટે દ્રવ્યાનુ-
પૂર્વીના પ્રકરણનું ૭૭મું સૂત્ર વાંચી લેવાની ભલામણ કરવામાં આવે છે. ॥સૂ० ૧૨૮॥

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૯ નૈગમવ્યવહારનયસંમત મંજોપદર્શનનિ. ૫૫૧

મૂલ્ય—સે કિં તં ળેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા? ળેગમમં
મંગોવદંસણયા—તિસમયટ્ટિહિણ આણુપુઘ્વી, ળેગસમયટ્ટિહિણ અણા-
ણુપુઘ્વી, દુસમયટ્ટિહિણ અવત્તવ્વગં। તિસમયટ્ટિહિણ અણાણુપુઘ્વીઓ
ણેગસમયટ્ટિહિણ અણાણુપુઘ્વીઓ, દુસમયટ્ટિહિણ અવત્તવ્વયાઈં,
અહવા—તિસમયટ્ટિહિણ ય ળેગસમયટ્ટિહિણ ય આણુપુઘ્વી ય અણા-
ણુપુઘ્વી ય। ળવં તહા ળેવ દઠ્ઠાણુપુઘ્વી ગમેણં છઠ્ઠીસં મંગા માણિ-
યઠ્ઠા જાવ સે તં ળેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા ॥સૂ. ૧૨૯॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયો મંજોપદર્શનતા? નૈગમ. મંજોપદર્શ-
નતા—ત્રિસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી, ળેકસમયસ્થિતિક અનાનુપૂર્વી, ટ્વિસમયસ્થિતિક
અવત્તવ્વકમ્। ત્રિસમયસ્થિતિકા આનુપૂર્વ્યઃ। ળેકસમયસ્થિતિકા આનુપૂર્વ્યઃ।

“ સે કિં તં ળેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ।

શબ્દાર્થ—(ળેગમવવહારાણં) હે મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનયસંમત
(તં) પૂર્વપ્રકાન્ત (સે) વહ—(મંગોવદંસણયા) મંગોવપદર્શનતા (કિં) કયા હૈ?

ઉત્તર—(ળેગમ. મંગોવદંસણયા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત મંગોવ-
દર્શનતા હસ પ્રકાર સે હૈ—(તિસમયટ્ટિહિણ આણુપુઘ્વી) ત્રીન સમય કી
સ્થિતિવાલા ળેક ળેક પરમાણુ આદિ ટ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈ। (ણેગસમયટ્ટિહિણ
અણાણુપુઘ્વી) ળેક સમય કી સ્થિતિવાલા ળેક પરમાણુ આદિ ટ્રવ્ય
અનાનુપૂર્વી હૈ। (દુસમયટ્ટિહિણ અવત્તવ્વગં) ટો સમય કી સ્થિતિવાલા
ળેક પરમાણુ આદિ ટ્રવ્ય અવત્તવ્વક હૈ। (તિસમયટ્ટિહિણ આણુપુઘ્વીઓ)

“ સે કિં તં ળેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(ળેગમવવહારાણં) હે મગવન્ ! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (તં)
પૂર્વપ્રકાન્ત (સે) ટે (મંગોવદંસણયા) મંગોવપદર્શનતાનુ (કિં) કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(ળેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત મંગો-
વદર્શનતા આ પ્રકારની છે—

(તિસમયટ્ટિહિણ આણુપુઘ્વી) ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું પ્રત્યેક પરમાણુ
આદિ ટ્રવ્ય આનુપૂર્વી રૂપ છે. (ણેગસમયટ્ટિહિણ અણાણુપુઘ્વી) ળેક સમયની
સ્થિતિવાળું ળેક પરમાણુ આદિ ટ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ છે. (દુસમયટ્ટિહિણ
અવત્તવ્વગં) ટે સમયની સ્થિતિવાળું ળેક પરમાણુ આદિ ટ્રવ્ય અવત્તવ્વક
રૂપ છે. (તિસમયટ્ટિહિણ આણુપુઘ્વીઓ) ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળાં અનેક

દ્વિસમયસ્થિતિકા અવક્તવ્યકાનિ । અથવા-ત્રિસમયસ્થિતિકથા એકસમયસ્થિતિકથા આનુપૂર્વીચ અનાનુપૂર્વીચ । एवं तथैव द्रव्यानुपूर्वीगमेन बहुविधतिर्भङ्गा भणितव्याः, यावत् तैषा नैगमव्यवहारयो भङ्गोपदर्शयता ॥ ५० १२९ ॥

टीका-‘से किं तं इत्यादि । व्याख्या द्रव्यानुपूर्वीवदभ्युहनीया । ५० १२९ ॥

ત્રીન સમય કી સ્થિતિવાલે અનેક અપની ૨ એક સી જાતિવાલે પદાર્થ આનુપૂર્વિયાં હૈં । (એગસમયદ્વિદિયા અણાણુપુઁવીઓ) એક સમય મૈં સ્થિતિવાલે અનેક અપની ૨ એક સી જાતિવાલે પદાર્થ અનાનુપૂર્વિયાં હૈં । (દુસમયદ્વિદિયા અવક્તવ્યયાઈ) દો સમય કી સ્થિતિવાલે અનેક અપની ૨ એક સી જાતિવાલે પદાર્થ અવક્તવ્યક હૈં । હસ પ્રકાર યે એકવચનાન્ત બહુવચનાન્ત પક્ષ મૈં ૩-૩ ભંગ હૈં । હસ પ્રકાર સે અસંયોગ પક્ષ મૈં હન છ ભંગોં કા અર્થ કથન હૈ । સંયોગપક્ષ મૈં એકવચન ઓર બહુવચન સંબન્ધી પ્રથમ ઓર દ્વિતીય ભંગ કો સંયુક્ત કરને પર ત્રિસમય કી સ્થિતિવાલા પદાર્થ એક આનુપૂર્વી ઓર એક સમય કી સ્થિતિવાલા પદાર્થ એક અનાનુપૂર્વી કા વાચ્યાર્થ જાનના ચાહિયે । યહી વાત (અહવા તિસમયદ્વિદિય ય એગસમયદ્વિદિય ય આણુપુઁવી ય અણાણુપુઁવી ય) હસ પાઠ દ્વારા સ્પષ્ટ કી ગઈ હૈ । યહ પ્રથમ ચતુર્ભંગી કા પ્રથમ ભંગ હૈ (અંવ તહાચેવ દ્રવ્યાણુપુઁવીગમેણં છઁવીસં ભંગા ભાણિયવ્વા જાવ સે તં જોગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા) હસ પ્રકાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે પાઠ કે

પોતપોતાની એક સરખી જાતિવાળા પદાર્થો અનાનુપૂર્વીઓ ૩૫ છે. (દુસમયદ્વિદિયા અવક્તવ્યયાઈ) બે સમયની સ્થિતિવાળા અનેક પોતપોતાની એક સરખી જાતિવાળા પદાર્થો અવક્તવ્યકો ૩૫ છે. આ પ્રકારે એકવચનાન્ત અસંયોગ પક્ષમાં ત્રણ ભંગ અને બહુવચનાન્ત અસંયોગ પક્ષમાં પણ ત્રણ ભંગ બને છે. આ રીતે અસંયોગપક્ષે કુલ ૬ ભંગ બને છે. સંયોગપક્ષે એકવચન અને બહુવચન સંબન્ધી પ્રથમ અને દ્વિતીય ભંગને સંયુક્ત કરવાથી ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળો પદાર્થ એક આનુપૂર્વી ૩૫ અને એક સમયની સ્થિતિવાળો પદાર્થ એક અનાનુપૂર્વી ૩૫ સમજવો જોઈએ, એજ વાત નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે-

(અહવા તિસમયદ્વિદિય ય એગસમયદ્વિદિય ય આણુપુઁવી ય અણાણુપુઁવી ય) આ પ્રકારે પહેલી ચતુર્ભંગીને પહેલો ભંગ ઉપર પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. (અંવ તહા ચેવ દ્રવ્યાણુપુઁવીગમેણં છઁવીસં ભંગા ભાણિયવ્વા જાવ સે તં જોગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા) આ પ્રકારે દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પાઠમાં દર્શાવ્યા અનુસાર

अनुयागचान्द्रिका टीका सूत्र १२९ नैगमव्यवहारनयसंमतभङ्गोपदर्शनानि. ५५३

अनुसार यहाँ पर “से तं नैगमव्यवहाराणं भङ्गोपदर्शनया” इस पाठ पर्यन्त २६ भंग जानना चाहिये। यही भङ्गोपदर्शनता है। यहाँ २६ भंग इस प्रकार से बनते हैं—

(१) त्रिसमयस्थितिक-एकपरमाणु आदि से लेकर अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्त द्रव्य विशेष आनुपूर्वी, (२) एक समय स्थितिक-एक परमाणु आदि से लेकर अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्त द्रव्यविशेष अनानुपूर्वी (३) त्रिसमयस्थितिक-एकपरमाणु द्रव्य आदि से लेकर अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्त द्रव्य विशेष-अवक्तव्यक ये ३ तीन भंग एकवचनान्त हैं—

(१) त्रिसमयस्थितिक-अनेक एक २ परमाणु आदि से लेकर अनेक अनन्ताणुक स्कन्धद्रव्यविशेष-आनुपूर्वियां, (२) एक समयस्थितिक-अनेक एक २ परमाणु आदि द्रव्य से लेकर अनेक अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्त अनानुपूर्वियां, (३) त्रिसमयस्थितिक-अनेक एक २ परमाणु आदि से लेकर अनेक अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्त समस्त अवक्तव्यक ये तीन भंग बहुवचनान्त हैं।

दो २ भंगों के संयोग से प्रथम चतुर्भङ्गी इस प्रकार से बनती है—

(१) आनुपूर्वी अनानुपूर्वी (२) आनुपूर्वी अनानुपूर्वियां (३) आनुपूर्वियां

रना २६ भंग अर्द्धी पण्य समञ्जसा लेछ्छे. “से तं नैगमव्यवहाराणं भङ्गोपदर्शनया” नैगमव्यवहार नयसंमत भङ्गोपदर्शनतातुं स्वइय आ प्रकारतुं छे, आ सूत्रपाठ पर्यन्ततुं समस्त कथन अर्द्धी भङ्गण करतुं लेछ्छे. आ प्रकारतुं भङ्गोपदर्शनतातुं स्वइय समञ्जसुं अर्द्धी आ प्रकारना २६ भंग भने छे—

अेकवचनान्त त्रण्य भङ्गो—

(१) त्रिसमयस्थितिक-अेक परमाणु द्रव्यथी लछ्छे ने अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्तना द्रव्यविशेषइय-आनुपूर्वी (२) अेक समयस्थितिक अेक परमाणु द्रव्य आदिथी लछ्छे ने अनन्त अणुक स्कन्ध पर्यन्तना द्रव्यविशेष इय आनुपूर्वी (३) अे समयनी स्थितिवाणा अेक परमाणु द्रव्य आदिथी लछ्छे ने अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्तना द्रव्यविशेष इय अवक्तव्यक बहुवचनान्त त्रण्य भङ्गो—

(१) त्रण्य समयनी स्थितिवाणां अनेक अेक अेक परमाणु इय द्रव्योथी लछ्छे ने अनेक अनन्ताणुक स्कन्ध पर्यन्तना द्रव्यविशेष आनुपूर्वीओ छे.

(२) अेक समयनी स्थितिवाणां अेक अेक परमाणु इय द्रव्योथी लछ्छे ने अनेक अनन्ताणुक स्कन्धो पर्यन्तना द्रव्यविशेषो अनानुपूर्वीओ छे.

(३) अे समयनी स्थितिवाणां अनेक अेक अेक परमाणु इय द्रव्योथी लछ्छे ने अनेक अनन्ताणुक स्कन्धो पर्यन्तना द्रव्यविशेषो अवक्तव्यको इय छे. अे पढोना सयोगथी पढेदी यतुभङ्गी (थारभांगा) नीचे प्रमाणे भने छे—

(१) आनुपूर्वी अनानुपूर्वी, (२) आनुपूर्वी अनानुपूर्वीओ, (३) आनु-

અનાનુપૂર્વી, (૪) આનુપૂર્વિયાં અનાનુપૂર્વિયાં । દ્વિતીય ચતુર્ભંગી-હસ પ્રકાર સે હૈ (૧) આનુપૂર્વી અવક્તવ્યક (૨) આનુપૂર્વી ઘણુ અવક્તવ્યક (૩) આનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૪) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્તવ્યક । તૃતીય ચતુર્ભંગી હસ પ્રકાર સે હૈ-(૧) અનાનુપૂર્વી અવક્તવ્યક (૨) અનાનુપૂર્વી ઘણુ અવક્તવ્યક (૩) અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૪) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્તવ્યક । હસ પ્રકાર દો ૨ કે સંયોગ પક્ષ મેં દ્વિસંયોગી ભંગ હન એકવચનાન્ત ઘણુવચનાન્ત આનુપૂર્વી આદિ પદોં કે યે ૧૨ ભંગ હૈં । તીન ૨ કે સંયોગ સે જો આઠ ભંગ ઘનતે હૈં યે હસ પ્રકાર સે હૈં-(૧) એક આનુપૂર્વી એક અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક, (૨) એક આનુપૂર્વી એક અનાનુપૂર્વી અનેક અવક્તવ્યક (૩) એક આનુપૂર્વી અનેક અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૪) એક આનુપૂર્વી અનેક અનાનુપૂર્વી અનેક અવક્તવ્યક (૫) અનેક આનુપૂર્વિયાં એક અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક, (૬) અનેક આનુપૂર્વિયાં એક અનાનુપૂર્વી અનેક અવક્તવ્યક (૭) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૮) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અનાનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્ત-

પૂર્વીઓ અનાનુપૂર્વી અને (૪) આનુપૂર્વીઓ અનાનુપૂર્વીઓ.

એ પદોના સંયોગથી ત્રીજી ચતુર્ભંગી નીચે પ્રમાણે બને છે-

(૧) આનુપૂર્વી અવક્તવ્યક, (૨) આનુપૂર્વી ઘણુ અવક્તવ્યકો, (૩) આનુપૂર્વીઓ એક અવક્તવ્યક, (૪) અનેક આનુપૂર્વીઓ અનેક અવક્તવ્યકો.

એ પદોના સંયોગથી ત્રીજી ચતુર્ભંગી આ પ્રમાણે બને છે-

(૧) એક આનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક, (૨) એક અનાનુપૂર્વી ઘણુ અવક્તવ્યકો, (૩) ઘણી અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક (૪) ઘણી અનાનુપૂર્વીઓ ઘણુ અવક્તવ્યકો.

આ પ્રકારે એકવચનાન્ત અને ઘણુવચનાન્ત આનુપૂર્વી આદિ પદોના સંયોગથી કુલ ૧૨ દ્વિસંયોગી ભંગો થાય છે. હવે ત્રણ પદોના સંયોગથી બે ૮ ભંગો બને છે, તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે,

(૧) એક આનુપૂર્વી એક અનાનુપૂર્વી અને એક અવક્તવ્યક (૨) એક આનુપૂર્વી, એક અનાનુપૂર્વી અને ઘણુ અવક્તવ્યકો (૩) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ અને એક અવક્તવ્યક (૪) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ અને અનેક અવક્તવ્યકો (૫) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી અને એક અવક્તવ્યક (૬) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી અને અનેક અવક્તવ્યકો (૭) અનેક આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ અને એક અવક્તવ્યક (૮) અનેક આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૦ સમવતારસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૫૫૫

મૂલ્ય—સે કિં તં સમોયારે? સમોયારે નેગમવવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ? કિં આણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ? અણાણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ? અવત્તઘ્વગદઘ્વેહિં સમોયરંતિ? એવં તિણિણવિ સઘ્ઘાણે સમોયરંતિ ભાણિયઘ્વં સે તં સમોયારે ॥સૂ૦ ૧૩૦॥

છાયા—અથ કોડસી સમવતાર: ? નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ? કિમાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ વ્યક. | હસ પ્રકાર યે સવ મંગ ૨૬ હો જાતે હૈં. | હનકી વિશેષ જાન-કારી કે લિયે દ્રવ્યાનુપૂર્વી પ્રકરણગત મંગોપદર્શનતા કો દેખના ચાહિયે. | ॥સૂ૦ ૧૨૯॥

“ સે કિં તં સમોયારે ? ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ:—(સે કિં તં સમોયારે) હે મદંત ! પૂર્વપ્રકાન્ત સમવતાર કા કયા સ્વરૂપ હૈં ?—

ઉત્તર—(સમોયારે) પૂર્વપ્રકાન્ત (પહેલે પ્રારંભ કિયા હુવા) સમવતાર કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈં ।—(નેગમવવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત જો અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈં ડનકા અન્તર્ભાવ કહાં હોતા હૈં ? હસ પ્રકાર કે ચિન્તન પ્રકાર કા જો ઉત્તર દેતા હૈં વહી સમવતાર હૈં । યહ વિચાર હસ પ્રકાર સે હોતા હૈં કિ

અને અનેક અવક્રત્યકો આ પ્રકારે અસંયોગી ૬, દ્વિકસંયોગી ૧૨ અને ત્રિકસંયોગી ૮ ભાંગાઓ મળીને કુલ ૨૬ ભાંગા થઈ જાય છે. તેમના વિશે વધુ માહિતી મેળવવી હોય તો દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં જે ભંગોપદર્શનતાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તે વાંચી જવાની ભલામણ કરવામાં આવે છે. ॥સૂ ૧૨૬॥

“ સે કિં તં સમોયારે ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં સમોયારે ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રકાન્ત (અની-પનિધિકી કાલાનુપૂર્વીના એક પ્રકાર ૩૫) સમવતારનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સમોયારે) પૂર્વપ્રકાન્ત સમવતારનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(નેગમવવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત જે અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમનો અન્તર્ભાવ (સમાવેશ) કયાં થાય છે ? શું સ્વસ્થાનમાં તેમનો સમાવેશ થાય છે કે પરસ્થાનમાં થાય છે ? આ પ્રકારની વિચારધારાનો જે ઉત્તર દેવો તેનું નામ સમવતાર છે. અહીં આ

અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? एवं त्रीण्यपि स्वस्थाने समवतरन्ति इति भणित-
व्यम्। स एष समवतारः ॥सू० १३०॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि। अशीतितमसूत्रे द्रव्यानुपूर्वीवदस्य सूत्रस्य
व्याख्या बोध्या ॥सू० १३०॥

નૈગમવ્યવહારનયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (કિં આણુપુઢ્વીદવ્વેહિં
સમોયરંતિ, અણાણુપુઢ્વી દવ્વેહિં-સમોયરંતિ, અવક્તવ્યકદવ્વેહિં સમો-
યરંતિ) ત્રયા આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં અન્તર્ભૂત હોતે હેં ? યા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં
મેં અન્તર્ભૂત હોતે હેં ? યા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં અન્તર્ભૂત હોતે હેં ? (અવ
તિણિગિવિ સદ્દાણે સમોયરંતિ इति भाणियन्व)

ઉત્તર-નૈગમવ્યવહારનયસંમત જો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હેં વે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોં મેં હી સમાવિષ્ટ નહીં હોતે હેં ઓર ન અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં
સમાવિષ્ટ હોતે હેં। इसी प्रकार से जितने भी नैगमव्यवहारनयमान्य
अनानुपूर्वी द्रव्य हैं वे अपनी जाति में अन्तर्भूत होते हैं, भिन्न जाति
में नहीं। नैगमव्यवहारनयसंमत अवक्ताव्यक द्रव्य भी अवक्ताव्यक
द्रव्यों में ही अन्तर्भूत होते हैं अन्य आनुपूर्वी आदि द्रव्यों में नहीं।
इस प्रकार आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी और अवक्ताव्यक ये तीनों भी द्रव्य

પ્રકારની વિચારધારા ચાલે છે-નૈગમવ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય (કિં આણુપુઢ્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ, અણાણુપુઢ્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ, અવક્ત-
વ્યકદવ્વેહિં સમોયરંતિ ?) થુ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંમાં અન્તર્ભૂત થાય છે ? કે અના-
નુપૂર્વી દ્રવ્યોંમાં અન્તર્ભૂત થાય છે ? કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોંમાં અન્તર્ભૂત થાય છે ?

ઉત્તર-(અવ તિણિગિવિ સદ્દાણે સમોયરંતિ इति भाणियन्व) નૈગમવ્યવહાર
નયસંમત જે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં છે તેઓ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંમાં જ સમાવિષ્ટ
થાય છે, તેઓ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોંમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી અને અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોંમાં પણ સમાવિષ્ટ થતાં નથી. એજ પ્રમાણે નૈગમવ્યવહાર નયસંમત
જેટલાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં છે, તેઓ પણ પોતાની જાતિમાં જ (અનાનુપૂર્વી
દ્રવ્યોંમાં જ) સમાવિષ્ટ થાય છે, તેમનાથી ભિન્ન એવાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંમાં
અથવા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોંમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી એજ પ્રમાણે નૈગમવ્યવહાર
નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોંમાં જ સમાવિષ્ટ થાય
છે-અન્ય આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોંમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી આ પ્રકારે આનુ-
પૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક, આ ત્રણે પ્રકારનાં દ્રવ્યોં પોતપોતાના

મૂલમ્—સે કિં તં અણુગમે ? અણુગમે ણવવિહે પળ્લન્તે, તં જહા—સંતપયપરુવણયા જાવ અપ્પાબહું ચેવ । ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઘ્વાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ૩ ? નિયમા તિણિણ વિ અત્થિ । ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઘ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં અસંખિજ્જાઈં અણંતાઈં ૩ ? તિણિણ વિ નો સંખિજ્જાઈં, અસંખિજ્જાઈં, નો અણંતાઈં ॥ સૂ. ૧૩૧ ॥

છાયા—અથ કોઽસાવનુગમઃ ? અનુગમો નવવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથા—સત્પદ-પ્રરૂપણતા યાવદ્વલ્પવહુત્વં ચૈવ । નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્ણીં દ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન અપને ૨ સ્થાન રૂપ જાતિ મેં હીં અન્તર્ભૂત હોતે હેં હિસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કે લિયે દેલો પીઢે કા ૮૦ વાં સૂત્ર ॥ ॥સૂ. ૧૩૦॥

“ સે કિં તં અણુગમે ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે ?) હે મદંત ! અનુગમ કા કયા સ્વરૂપ હે ?

ઉત્તર—(અણુગમે ણવવિહે પળ્લન્તે) અનુગમ નૌ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) જૈસે (સંતપયપરુવણયા, જાવ અપ્પાબહું ચેવ) સંતપદ-પ્રરૂપણતા સે લેકર અલ્પબહુત્વ તક—

અર્થાત્—(૧) સત્પદપ્રરૂપણતા, (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (૩) ક્ષેત્ર (૪) સ્પર્શના (૫) કાલ (૬) અન્તર, (૭) ભાગ (૮) ભાવ (૯) અલ્પબહુત્વ । વિદ્યમાન પદાર્થ વિષયક પદ કી પ્રરૂપણા કા નામ સત્પદપ્રરૂપણતા હૈ । હિસ મેં (ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઘ્વાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ૩) જો

સ્થાન ૩૫ જાતિમાં ૪ અન્તર્ભૂત થાય છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા માટે પાછળ ૮૦મું સૂત્ર વાંચી જવું જોઈએ ॥સૂ. ૧૩૦॥

“ સે કિં તં અણુગમે ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે ?) હે અગવન્ ! અનુગમતું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણુગમે ણવવિહે પળ્લન્તે) અનુગમ નવ પ્રકારનો રહ્યો છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—

(સંતપયપરુવણયા, જાવ અપ્પાબહું ચેવ) સંતપદ પ્રરૂપણતાથી લઈને અલ્પબહુત્વ પર્યન્તના નવ પ્રકારો અહીં ગ્રહણ કરવા જોઈએ. તે નવ પ્રકારો હવે ગણાવવામાં આવે છે—

(૧) સત્પદ પ્રરૂપણતા, (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (૩) ક્ષેત્ર, (૪) સ્પર્શના, (૫) કાળ, (૬) અન્તર, (૭) ભાગ (૮) ભાવ અને (૯) અલ્પબહુત્વ.

વિદ્યમાન પદાર્થવિષયક પદની પ્રરૂપણતાનું નામ સત્પદપ્રરૂપણતા છે. તેમાં (ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઘ્વાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ?) કોઈ એવો પ્રશ્ન

સન્તિ? નિયમાત્ત્રીણ્યપિ સન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કિં સંખ્યે-
યાણિ અસંખ્યેયાણિ અનન્તાનિ? ત્રીણ્યપિ નો સંખ્યેયાણિ, અસંખ્યેયાણિ, નો
અનન્તાનિ ॥સૂ. ૧૩૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કોઽસાવનુગમઃ? इति । उत्तरयति—अनुगमो नवविधः
प्रज्ञप्तः, तद्यथा—सत्पदप्ररूपणतेत्याद्यल्पबहुत्वान्तः । तथाहि—सत्पदप्ररूपणता १,
द्रव्यप्रमाणं २, क्षेत्रं ३, स्पर्शना ४, कालः ५, अन्तरम् ६, भागः ७, भावः ८, अल्प-
बहुत्वं ९ चेति । तत्र—सत्पदप्ररूपणतां निरूपयितुमाह—‘णैगमव्यवहारणं’ इत्यादि-
नैगमव्यवहारसम्मतान्याऽऽनुपूर्वीं द्रव्याणि किं सन्ति? न सन्ति वा? एवमना-
नुपूर्व्यवक्तव्यकविषयेऽपि प्रश्नो बोध्यः । उत्तरयति—नियमात् त्रीण्यपि=आनु-
कोई ऐसा प्रश्न करते हैं कि “नैगमव्यवहारनयसंमत आनुपूर्वीं द्रव्य
हैं या नहीं हैं” इसी प्रकार का प्रश्न अनानुपूर्वीं द्रव्यों और अवक्त-
व्यक द्रव्यों के भी विषय में होता है—तब इसका उत्तर—(णियमा तिणिण
वि अत्थि) “नियमतः ये तीनों द्रव्य हैं” ऐसा दिया जाता है । (णैगमव्यव-
हारणं आणुपुर्व्वी दृक्वाइं किं संखिज्जाइं असंखिज्जाइं अणंताइं ३?)
द्रव्यप्रमाण में आनुपूर्वीं आदि पदों द्वारा जिन द्रव्यों को कहा जाता
है उनकी संख्या कितनी है इसका विचार होता है—जिसे इस पाठ
द्वारा व्यक्त किया गया है—प्रश्नकर्त्ता पूछता है कि नैगमव्यवहार-
नयसंमत आनुपूर्वीं द्रव्य क्या संख्यात हैं, या असंख्यात हैं या
अनंत हैं? इसी प्रकार का प्रश्न प्रश्नकर्त्ता का अनानुपूर्वीं और
अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय में भी है । इसका उत्तर सूत्रकार ने (तिणिण

પૂછે કે “નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે કે નથી? અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્યો છે કે નથી? અવક્તવ્યક દ્રવ્યો છે કે નથી?” તો તે પ્રશ્નનો
ઉત્તર આ પ્રમાણે આપવામાં આવે છે—(ણિયમા તિણિણ વિ અત્થિ) “આ
ત્રણે દ્રવ્યો અવશ્ય વિદ્યમાન છે. આ પ્રકારે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના
અસ્તિત્વ વિષયક જે પ્રશ્નજા કરવામાં આવે છે તેનું નામ સત્પદપ્રશ્નપણતા છે.

હવે દ્રવ્યપ્રમાણનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવે છે—જે દ્રવ્યોને આનુપૂર્વી
આદિ રૂપે ઓળખવામાં આવે છે, તે દ્રવ્યોની સંખ્યાનો દ્રવ્યપ્રમાણમાં
વિચાર કરવામાં આવે છે એજ વાતને નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે—

પ્રશ્ન—(ણેગમવ્યવહારણં આણુપુર્વ્વીદ્ર્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં, અસંખિજ્જાઈં,
અણંતાઈં?) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું સંખ્યાત
છે, અસંખ્યાત છે, કે અનંત છે? આ પ્રકારનો પ્રશ્ન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો વિશે પણ પૂછવો બોધ્યો.

પૂર્વ્યનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકામિધેયાનિ ત્રીણ્યપિ સન્તિ । અથ દ્રવ્યપ્રમાણં નિરૂપયતિ-
‘જોગમવવહારણં’ इत्यादि । नैगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि किं संख्ये-
यानि असंख्येयानि अनन्तानि ? एवमनानुपूर्वीद्रव्यावक्तव्यकद्रव्यविषयेऽपि
प्रश्नो बोध्यः । उत्तरयति-त्रीण्यपि नो संख्येयानि नो अनन्तानि, किन्तु असं-
ख्येयानि । अत्रेदं बोध्यम्-इयादिसमयस्थितिकानि परमाण्वादि द्रव्याणि यद्यपीह
कोके प्रत्येकमनन्तानि, तथापि समयत्रयलक्षणस्थितिरेकैव, कालस्य प्राधान्याद्
द्रव्यबहुत्वस्य गुणीभूतत्वाच्च । एवं च त्रिसमयस्थितिवैरनन्तैरपि एकमेवानुपूर्वी
द्रव्यम् । इत्थमेव चतुःसमयादि स्थितिकानन्तेषु यावद्दशसमयसंख्येयसमया

वि नो संखिज्जाइं, असंखिज्जाइं, नो अणंताइं) यों दिया है । वे कहते हैं
कि ये तीनों ही द्रव्य न संख्यात हैं और न अनंत हैं, किन्तु असं-
ख्यात हैं । तात्पर्य कहने का यह है कि-तीन समय की स्थितिवाले
प्रत्येक परमाणु आदि द्रव्य यद्यपि इसलोक में अनंत हैं तो भी उनकी
समयत्रयरूपस्थिति एक ही है । क्योंकि काल की यहाँ प्रधानता है और
द्रव्यबहुत्व की गौणता है । इसलिये समयत्रय की स्थितिवाले जितने
भी वे परमाणु आदि अनंत द्रव्य हैं वे सब अपनी २ तीन समय की
स्थितिकी अपेक्षा से एक ही आनुपूर्वी द्रव्य रूप हैं । इसी प्रकार से
यद्यपि चार समय आदि की स्थितिवाले प्रत्येक परमाणु आदि द्रव्य
अनंत हैं, यावत् दश समय की स्थितिवाले, संख्यात समय की

ઉત્તર-(તિણિ વિ નો સંખિજ્જાઈ, અસંખિજ્જાઈ, નો અણંતાઈ) આનુપૂર્વી
આદિ ત્રણે પ્રકારના દ્રવ્યો સંખ્યાત પણ નથી, અનંત પણ નથી, પરંતુ
અસંખ્યાત છે. આ ક્યનનો કાવાયં એ છે કે ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળાં
પ્રત્યેક પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો એ કે આ લોકમાં અનંત છે, છતાં પણ તેમની
સમયત્રય રૂપ સ્થિતિ એક જ છે, કારણ કે કાળની અહીં પ્રધાનતા બહુ
કરવાની છે અને દ્રવ્યબહુત્વની ગૌણતા સમજવાની છે તેથી ત્રણ સમયની
સ્થિતિવાળાં જેટલાં પરમાણુથી લઈને અનંત પર્યંતના પુદ્ગલ પરમાણુવાળાં
રુકંધ રૂપ દ્રવ્યો છે, તેઓ બધાં પોતપોતાની ત્રણ સમયની સ્થિતિની
અપેક્ષાએ એક જ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ છે. એજ પ્રમાણે એ કે ચાર આદિ
સમયની સ્થિતિવાળાં પ્રત્યેક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય અનંત છે, इस समय
पर्यन्तની સ્થિતિવાળાં, સંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અને અસંખ્યાત
સમયની સ્થિતિવાળાં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો અનંત છે, છતાં પણ તેઓ
પોતપોતાની ચાર આદિ સમય, इस पर्यन्तના સમય, સંખ્યાત અને અસં-

સંસ્ક્રેયસમયસ્થિતિકાનન્તેષુ एकैकेषामेकैकानुपूर्वीत्वं बोध्यम् । द्रव्यस्यानन्त-
समयस्थितिरेव न भवति तथाविषस्व-भावत्वात् । एवमेव अनानुपूर्वीं द्रव्याणि
अवक्तव्यकद्रव्याणि चाप्यसंख्येयानि बोध्यानि । ननु एकसमयस्थितिकस्य द्रव्यस्य
अनानुपूर्वीत्वं, द्विसमयस्थितिकस्य द्रव्यस्यावक्तव्यकत्वमुच्यते, तत्र यद्यपि लोके
स्थितिवाले, असंख्यात समय की स्थितिवाले परमाणु आदि द्रव्य अनंत
हैं तो भी वे अपनी २ चार आदि समय, दश समय, संख्यात समय,
और असंख्यात समयरूप स्थिति को एक होने की अपेक्षा से एक एक
आनुपूर्वीरूप हैं । अर्थात् चार आदि समय की स्थितिवाले जितने भी
अनन्त परमाणु द्रव्य एवं अनन्त स्कंध द्रव्य हैं वे अपनी चार समय
की स्थिति को एक होने के कारण एक आनु पूर्वी द्रव्य हैं । इसी प्रकार
से दश आदि समयोंकी स्थितिवाले अनंत परमाणु द्रव्य से लेकर अनंत
परमाणुक स्कंधों में भी एक २ को एक २ आनुपूर्वीरूपता अपनी २
स्थितिको एक होने की अपेक्षा से जानना चाहिये । द्रव्य की स्थिति
अनंत समय की नहीं होती है, क्योंकि ऐसा कोई द्रव्य ही नहीं है कि
जिसकी स्थिति अनन्त समय की हो । इसलिये आनुपूर्वी द्रव्यों को
असंख्यात माना गया है । इसी प्रकार से अनानुपूर्वी द्रव्य और अव-
क्तव्यक द्रव्य भी असंख्यात २ हैं ऐसा जानना चाहिये ।

शंका-एक समय की स्थितिवाला द्रव्य अनानुपूर्वी है और दो
समय की स्थितिवाला द्रव्य अवक्तव्यक है । इनमें यद्यपि लोक में एक

ખ્યાત સમય ૩૫ સ્થિતિ એક સરખી હોવાને કારણે એક એક આનુપૂર્વી
૩૫ છે. એટલે કે ચાર સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં અનંત પરમાણુ દ્રવ્યો
અને અનંત સ્કન્ધ દ્રવ્યો છે. તેઓ ચાર સમયની એક સરખી સ્થિતિવાળાં
હોવાને કારણે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય૩૫ છે એજ પ્રમાણે પાંચથી લઈને ૬૪
પર્યન્તના સમયની સ્થિતિવાળાં, સંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અને
અસંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અનંત પરમાણુ દ્રવ્યોથી લઈને અનંત
પરમાણુ સ્કંધોમાં પણ, તે પ્રત્યેકની ચેતચેતાની સ્થિતિની એકરૂપતાને
કારણે તે પ્રત્યેકમાં પણ એક એક આનુપૂર્વી રૂપતા સમજવી જોઈએ દ્રવ્યની
સ્થિતિ અનંત સમયની હોતી નથી-એટલે કે એવું કોઈ પણ દ્રવ્ય નથી
કે જેની સ્થિતિ અનંત સમયની હોય તેથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને અસંખ્યાત
જ માનવામાં આવેલ છે. એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત
જ છે અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત જ છે એમ સમજવું.

શંકા-એક સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી છે, અને બે સમયની
સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અવક્તવ્યક છે એ કે લોકમાં એક સમયની સ્થિતિવાળાં

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૧ અનુગમસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૫૬૧

एकसमयस्थितिकानि द्विसमयस्थितिकानिच परमाण्वादिद्रव्याणि प्रत्येकमनन्तानि सन्ति, तथापि पूर्वोक्तरीत्या एकसमयलक्षणाया द्विसमयलक्षणायाश्च स्थितिरैकैकरूपत्वाद् द्रव्यबाहुल्यस्य च गुणीभूतत्वादेकमेवानानुपूर्वीद्रव्यमेकमेव चावक्तव्यकद्रव्यं वक्तुमुचितं, न तु प्रत्येकमसंख्येयम् । ननु यदि च द्रव्यभेदेन भेदोऽङ्गीक्रियते तर्हि प्रत्येकमनन्तं वक्तुमुचितम्, एकसमयस्थितीनां द्विसमयस्थितीनां च द्रव्याणां

एक समय की स्थितिवाले और दो समय की स्थितिवाले परमाणु आदि प्रत्येक द्रव्य अनन्त हैं, तो भी पूर्वोक्त रीति से एक समय की और दो समय की स्थिति को एक रूप होने से और द्रव्यबाहुल्य को गौण होने से एक ही अनानुपूर्वी द्रव्य और एक ही अवक्तव्यक द्रव्य है ऐसा कथन करना ही उचित है । प्रत्येक असंख्यात है ऐसा कहना उचित नहीं है । शंकाकार का तारपर्य यह है कि कालानुपूर्वी में द्रव्य बाहुल्य गौण माना गया है और काल प्रधान—इसलिये एकसमय की स्थितिवाले जितने द्रव्य होंगे वे सब अपनी अपनी एक २ समय की स्थिति में एकरूपता होने के कारण एक ही अनानुपूर्वी द्रव्य कहे जायेंगे भिन्न २ असंख्यात अनानुपूर्वी द्रव्य नहीं । इस प्रकार जितने भी दो समय की स्थितिवाले द्रव्य होंगे वे सब अपनी २ दो २ समय की स्थिति को एक रूप होने से एक ही अवक्तव्यक द्रव्य माने जायेंगे भिन्न भिन्न असंख्यात अवक्तव्यक द्रव्य नहीं । यदि द्रव्य के भेद से इनमें भेद माना जावे तो फिर

અને બે સમયની સ્થિતિવાળાં પરમાણુ આદિ પ્રત્યેક દ્રવ્ય અનન્ત છે, છતાં પણ પૂર્વોક્ત રીતે એક સમયની અને બે સમયની સ્થિતિની એકરૂપતા હોવાથી અને દ્રવ્યબાહુલ્યની ગૌણતા હોવાથી “ એક જ અનાનુપૂર્વી” દ્રવ્ય અને એક જ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે, ” એવું કથન કરવું ઉચિત બધાત પ્રત્યેક અસંખ્યાત છે, એવું કથન કરવું ઉચિત લાગતું નથી શંકાકરનારના કથનને ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે— કાલ:નુપૂર્વીમાં દ્રવ્યબાહુલ્યને ગૌણ માનવામાં આવ્યું છે અને કાળને પ્રધાન માનવામાં આવેલ છે. તેથી એક સમયની સ્થિતિવાળાં જેટલાં દ્રવ્યો હશે, તેમનામાં એક એક સમયની સ્થિતિ રૂપ એકતા હોવાને કારણે, એક જ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ ગણવા ભેદબિન્ન—ભિન્ન ભિન્ન અસંખ્યાત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો રૂપ ગણવા ભેદબિન્ન નહીં એજ પ્રમાણે બે સમયની સ્થિતિવાળાં જેટલાં દ્રવ્યો હશે તે બધાને પણ, ચેત-ચેતાની બધે સમયની સ્થિતિની એકરૂપતાને કારણે, એક જ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ માનવા પડશે—ભિન્ન ભિન્ન અસંખ્યાત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો રૂપ માની

૫૧૨

અનુયોગદ્વારણ

પ્રત્યેકમાનસ્યાદિતિષ્ઠેદાહ-લોકે હિ અસંખ્યેવા અવગાહમેદાઃ સન્તિ । એવં ચ
 એકસમયસ્થિતિકદ્વિસમયસ્થિતિકયોર્દ્રવ્યયોઃ એકૈકસ્ય અવગાહનામેદેન મિન્ન-
 તયા વિવક્ષિતત્વાત્પ્રત્યેકમસંખ્યેયં બોધ્યમ્ । પ્રત્યવગાહંચ એકસમયસ્થિતિક-
 દ્વિસમયસ્થિતિકાનેકદ્રવ્યસંભવાદનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણામાધારક્ષેત્રમેદાત્પ્રત્યેક-
 મસંખ્યેયત્વં ન વિરુધ્ધ્યતે ॥૩૧॥

હસ-પ્રકાર સે તો હનમેં પ્રત્યેક મેં અસંખ્યાતતા ન કહકર યહાં સૂત્રકાર
 કો અનંતતા પ્રત્યેક મેં કહના ઉચિત થા કયોં કિ એક સમય કી
 સ્થિતિવાલે દ્રવ્યોં મેં ઓર દો સમય કી સ્થિતિવાલેદ્રવ્યોં મેં પ્રત્યેક
 દ્રવ્ય અનંત હૈ ?

ઉત્તર-લોક મેં અવગાહ મેદ અસંખ્યાત હૈં । હસલિયે એક સમય
 કી સ્થિતિવાલે જિતને દ્રવ્ય હૈં ઓર દો સમય કી સ્થિતિવાલે જિતને
 દ્રવ્ય હૈં ડનમેં સે એક ૨ દ્રવ્ય મેં અવગાહના કે મેદ સે મિશ્રતા હૈ ।
 હસ મિશ્રતા કી વિવક્ષા કી વજહ સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અસંખ્યાત હૈ-એસા
 જાનના ચાહિયે । હરએક અવગાહમેં એક સમય કી સ્થિતિવાલે ઓર દો
 સમય કી સ્થિતિવાલે અનેક દ્રવ્યોં કા રહના સંભવિત હોતા હૈ । હસ-
 લિયે અસંખ્ય અવગાહ મેં અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે રહને
 કે કારણ ડનકે આધારભૂત ક્ષેત્ર મેં મેદ હો જાતા હૈ । હસલિયે હનમેં

ચકાશે નહીં જો દ્રવ્યના લેહને લીધે તેમની વચ્ચે લેહ માનવામાં આવે, તો
 તે પ્રત્યેકમાં અસંખ્યાતતા આવવાને બદલે અનંતતા જ આવવાનો પ્રસંગ
 ઉપસ્થિત થશે તેથી સૂત્રકારે અહીં જો અસંખ્યાતતા કહી છે તેને બદલે
 પ્રત્યેકમાં અનંતતા જ કહેવી જોઈતી હતી, કારણ કે એક સમયની સ્થિતિ-
 વાળાં દ્રવ્યોમાં અને બે સમયની સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોમાં-એ પ્રત્યેકમાં-
 અનંતતા જ હોય છે.

ઉત્તર-લોકમાં અવગાહલેહ અસંખ્યાત છે તેથી એક સમયની સ્થિતિ-
 વાળાં જેટલાં દ્રવ્યો છે અને બે સમયની સ્થિતિવાળા જેટલાં દ્રવ્યો છે,
 તેમાંના પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અવગાહનાના લેહને લીધે મિશ્રતા છે. આ મિશ્રતાની
 અપેક્ષાએ પ્રત્યેક દ્રવ્ય અસંખ્યાત છે, એમ સમજવું જોઈએ. દરેક
 અવગાહમાં એક સમયની સ્થિતિવાળાં અને બે સમયની સ્થિતિવાળાં અનેક
 દ્રવ્યોની વિદ્યમાનતા (રહેવાનું) સંભવિત હોય છે. તેથી અસંખ્ય અવગાહમાં
 અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના રહેવાને કારણે તેમના આધારભૂત ક્ષેત્રમાં
 લેહપટ્ટી જાય છે તેથી તે દ્રવ્યોમાં-પ્રત્યેકમાં-અસંખ્યાતતાનું કથન વિરુદ્ધ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૨ ક્ષેત્રદ્વારસ્પર્શનાદ્વારનિરૂપણમ્

૫૬૩

અથ ક્ષેત્રદ્વારં સ્પર્શનાદ્વારં ચ વક્તુમાહ—

મૂલમ્—જેગમવવહારાણં આણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં અણાણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં
અવત્તઠ્ઠવગદઘ્વાઈં લોગસ્સ કિં સંઘિજ્ઞઈંભાગે હોજ્ઞા? અસંઘિ-
જ્ઞઈંભાગે હોજ્ઞા? સંઘેજ્ઞેસુ ભાગેસુ વા હોજ્ઞા? અસંઘેજ્ઞેસુ ભાગેસુ
વા હોજ્ઞા? સઠ્ઠલોષ વા હોજ્ઞા? આણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં ઇમં દઘ્ઠવં
પહુચ્ચ સંઘેજ્ઞઈંભાગે વા હોજ્ઞા, અસંઘેજ્ઞઈં ભાગે વા હોજ્ઞા,
સંઘેજ્ઞેસુ વા, ભાગેસુ હોજ્ઞા, અસંઘેજ્ઞેસુ વા ભાગેસુ હોજ્ઞા,
દેસૂળે વા લોષ હોજ્ઞા? નાણાદઘ્વાઈં પહુચ્ચ નિયમા સઠ્ઠલોષ
હોજ્ઞા। ઇવં અણાણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં। આપસંતરેણ વા સઠ્ઠવપુચ્છાસુ

પ્રત્યેક મેં અસંખ્યાતતા કા કથન ચિરુદ નહીં હૈ। નિર્દોષ હૈ। તાત્પર્ય
કહને કા યહ હૈં કિ લોક મેં ઇક સમય કી સ્થિતિવાલે દ્રવ્યોં કો રહને
કે સ્થાન અસંખ્યાત હૈ ત્ર્યોં કિ લોકાકાશ સ્વયં અસંખ્યાત પ્રદેશી હૈ।
इन द्रव्यों को रहने का एक ही एक प्रदेश रूप या दो प्रदेश रूप आधार
स्थान नहीं है। अतः एक प्रदेश रूप और दो आदि रूप आधार अनेक
होने के कारण उन असंख्यात आधार रूप स्थानों में ये प्रत्येक द्रव्य
असंख्यात रूप में रहते हैं इसलिये ये प्रत्येक असंख्यात ही हैं अतः
भिन्न २ स्थानों में रहे हुए इन एक समय की और दो समय की स्थिति
वाले द्रव्यों में प्रत्येक में असंख्यातता का कथन निर्दोष है। ॥सू० १३१॥

પડતું નથી, પણ નિર્દોષ કથન રૂપ જ ગણી શકાય છે. આ કથનનો ભાવાર્થ
એ છે કે લોકમાં એક સમયની સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોને તથા બે સમયની
સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોને રહેવાનાં સ્થાન અસંખ્યાત છે, કારણ કે લોકાકાશ પોતે
જ અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળું છે આ દ્રવ્યોને રહેવાનું એક જ પ્રદેશ રૂપ
અથવા બે પ્રદેશરૂપ આધારસ્થાન હોતું નથી તેથી એક પ્રદેશરૂપ અને બે
પ્રદેશ આદિ રૂપ આધાર અनेक હોવાને કારણે તે અસંખ્યાત આધાર રૂપ
સ્થાનોમાં તે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અસંખ્યાત રૂપે રહે છે. (તેથી તે પ્રત્યેક અસંખ્યાત
જ છે. આ રીતે ભિન્ન ભિન્ન સ્થાનોમાં રહેલા એક સમયથી અને બે સમયની
સ્થિતિવાળાં તે પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અસંખ્યાતનું કથન રૂપરહિત જ છે) ॥સૂ. ૧૩૧॥

હોજા। એવં અવત્તવગદ્વાણિ વિજહા સ્વેતાણપુઠ્વીપ। ફુસણા
કાલાણપુઠ્વીપ વિ તહા સ્વે માણિયદ્વા। સૂ૦ ૧૩૨।

છાયા— નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યક-
દ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયમાગે ભવન્તિ? અસંખ્યેયમાગે ભવન્તિ? સંખ્યેયેષુ
માગેષુ ત્રા ભવન્તિ? અસંખ્યેયેષુ માગેષુ વા ભવન્તિ? સર્વલોકે વા ભવન્તિ?
આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય સંખ્યેયમાગે વા ભવન્તિ, અસંખ્યેયમાગે
વા ભવન્તિ, સંખ્યેયેષુ વા માગેષુ ભવન્તિ? અસંખ્યેયેષુ વા માગેષુ ભવન્તિ?
દેશોને વા લોકે ભવન્તિ। નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ।
એવમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્। આદેશાન્તરેણ વા સર્વપૃચ્છાસુ ભવન્તિ। એવમવક્તવ્યકદ્રવ્યા-
વ્યપિ યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામ્। સ્પર્શનાકાલાનુપૂર્વ્યામપિ તથૈવ મણિતવ્યા ॥સૂ૦ ૧૩૨॥

ટીકા—‘જેગમવવહારાણં’ ઇત્યાદિ—

નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયમાગે ભવન્તિ=
તિષ્ઠન્તિ? ઇત્યાદિ ૬૩:। ઉત્તરયતિ—‘એગં દવ્વં’ ઇત્યાદિ। આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ એકં

અથ સૂત્રકાર ક્ષેત્રદ્વાર ઓર સ્પર્શનદ્વાર કા કથન કરતે હૈ—

“જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં) નૈગમવ્યવહારનયમાન્ય (આણપુઠ્વી
દ્વાઈ) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (અણાણપુઠ્વી દ્વાઈ) સમસ્ત અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય (અવત્તવગદ્વાઈ) ઓર સમસ્ત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય (લોગસ્સ)
લોક કે (કિં) કયા (સંલિજજહમાગે હોજા) સંખ્યાત માગ મેં રહતે હૈ?
(અસંલિજજહ માગે હોજા) યા અસંખ્યાત માગ મેં રહતે હૈ (સંલેજ્જેસુ-
માગેસુ વા હોજા) યા સંખ્યાત માગોં મેં રહતે હૈ? (અસંલેજ્જેસુ મા-
ગેસુ વા હોજા) યા અસંખ્યાત માગોં મેં રહતે હૈ? (સવ્વલોપ વા હોજા)
યા સમસ્ત લોક મેં રહતે હૈ?

હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રદ્વાર અને સ્પર્શનદ્વારનું કથન કરે છે.—

“જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (આણપુઠ્વીદ્વાઈ)
સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, (અણાણપુઠ્વીદ્વાઈ) સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો,
(અવત્તવગદ્વાઈ) અને સમસ્ત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો (લોગસ્સ કિં સંલિજજહ
માગે હોજા) શું લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં રહે છે, (અસંલિજજહમાગે
હોજા) કે અસંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, (સંલેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજા) કે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૧૩૨ ક્ષેત્રદ્વારસ્પર્શનાદ્વારનિરૂપણમ્

૫૬૫

દ્રવ્યં પ્રતીત્ય=આશ્રિત્ય લોકસ્ય સંસ્ક્રયેયમામે 'હોજ્જા' ભવન્તિ=તિષ્ઠન્તિ, અસં-
સ્ક્રયેયમામે વા તિષ્ઠન્તિ, સંસ્ક્રયેયેષુ મામેષુ વા તિષ્ઠન્તિ, અસંસ્ક્રયેયેષુ મામેષુ વા
તિષ્ઠન્તિ, દેશોને વા લોકે તિષ્ઠન્તિ । અત્ર ય્યાદિસમયસ્થિતિકદ્રવ્યસ્ય સંસ્ક્રે-
યાદિમાગવર્તિત્વં તત્તદવગાહસંભવાદ્ બોધ્યમ્ । તથા-યદા ય્યાદિમમયસ્થિતિકઃ
સૂક્ષ્મપરિણામઃ સ્કન્ધો દેશોને લોકેઽવગાહતે, તદા એકસ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય

ઉત્તર-(આણુપુરુષીદવગાહં એગં દવ્વં પહુચ્ચ સંસ્થેઝજ્જમામે વા
હોજ્જા, અસંસ્થેઝજ્જમામે વા હોજ્જા, સંસ્થેઝજેસુ મામેસુ વા હોજ્જા, અસં-
સ્થેઝજેસુ વા મામેસુ હોજ્જા, દેસૂણે વા લોણ હોજ્જા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષા
કરકે કોઈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે સંસ્ક્રયાત માગ મેં રહતા હૈ, કોઈ
એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે અસંસ્ક્રયાત માગ મેં રહતા હૈ, કોઈ એક આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્યલોકકે સંસ્ક્રયાત માગો મેં રહતા હૈ ઓર કોઈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
લોક કે અસંસ્ક્રયાત માગો મેં રહતા હૈ । તથા કોઈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
દેશોન લોક મેં રહતા હૈ । યહાં પર જો ય્યાદિ સમયની સ્થિતિવાલે દ્રવ્ય
કા લોક કે હન સંસ્ક્રયાત આદિ માગો મેં રહના કહા ગયા હૈ વહ ઉન ૨
માગો મેં અવગાહ ઉનકા સંબંધિત હૈ હસ અપેક્ષા સે કહા ગયા હૈ એસા
જાનના ચાહિયે । તથા-જિસ સમય ય્યાદિ સમયની સ્થિતિવાલા સૂક્ષ્મ
પરિણામ યુક્ત સ્કન્ધ દેશોન લોક મેં અવગાહિત હોતા હૈ-ઠહરતા હૈ ઉસ
સમય એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય દેશોન લોકવર્તી હોતા હૈ એસા સમજના ચાહિયે ।

સંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે, (અસંસ્થેઝજેસુ મામેસુ વા હોજ્જા) કે અસંખ્યાત
ભાગોમાં રહે છે, (સંસ્વલોણ વા હોજ્જા ?) કે સમસ્ત લોકમાં રહે છે ?

ઉત્તર-(આણુપુરુષીદવગાહં એગં દવ્વં પહુચ્ચ સંસ્થેઝજ્જમામે વા હોજ્જા, અસંસ્થે-
ઝજ્જમામે વા હોજ્જા, સંસ્થેઝજેસુ મામેસુ વા હોજ્જા, અસંસ્થેઝજેસુ વા મામેસુ હોજ્જા,
દેસૂણે વા લોણ હોજ્જા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો કોઈ
એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
લોકના અસંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત
ભાગોમાં રહે છે, તથા કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોનલોકમાં રહે છે.

અહીં “ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય) લોકના
સંખ્યાત આદિ ભાગોમાં રહે છે. ” એવું બે કથન કરવામાં આવ્યું છે તેનું
કારણ એ છે કે તે સંખ્યાત આદિ ઉપયુક્ત ભાગોમાં તેની અવગાહના
સંબંધિત હોય છે. તથા બે સમયે ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળો સૂક્ષ્મ
પરિણામયુક્ત સ્કન્ધ દેશોનલોકમાં અવગાહિત થાય છે-રહે છે-તે સમયે
એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોનલોકવર્તી હોય છે, એવું સમજવું જોઈએ.

દેશોનલોકવર્તિત્વં માવનીયમ્ । નનુ સમ્પૂર્ણેઽપિ લોકે કસ્માદિદં ન તિષ્ઠતિ ?
 इति चेदुच्यते-सर्वलोकव्यापी अचित्तमहास्कन्ध एव भवति, स च सर्वलोकव्या-
 पितया एकमेव समयमेव तिष्ठते, ततःपरं तदुपसंहारात् । न चैकसमयस्थितिक-
 मानुपूर्वीद्रव्यं भवति, ज्यादिसमयस्थितिकत्वेनैव तत्संभवात् । तादृशं द्रव्यं तु
 नियमादेकेनापि प्रदेशेनो न एव लोकेऽवगाहते । अतः ज्यादिसमयस्थितिकद्रव्यस्य
 देशोनव्यापित्वं बोध्यम् । ननु-अचित्तमहास्कन्धस्यैकसमयस्थितिकत्वं नोपपद्यते,

શંકા:-આપ જો સૂક્ષ્મ પરિણામ યુક્ત જ્યાદિ સમય કી સ્થિતિવાળે
 स्कंध रूप एक आनुपूर्वीद्रव्य को देशोन लोक व्यापी बनला रहे हो सो
 यह समस्त लोक में क्यों नहीं रहता है ?

उत्तर:-यह तो पहिले ही कहा जा चुका है कि सर्वलोक व्यापी
 अचित्त महास्कंध ही होता है और यह अचित्त महास्कंध सर्वलोक में
 व्यापक रूप से एक ही समय तक रहता है-बाद में उसका संकोच-
 उपसंहार-हो जाता है । एक समय की स्थितिवाला तो आनुपूर्वीद्रव्य
 होता नहीं है । वह तो ज्यादि समय की स्थितिवाला ही होता है । अतः
 ऐसा जो द्रव्य होता है वह नियम से एक प्रदेश ऊन ही लोक में अव-
 गाहित होता है । इसलिये ज्यादि समय की स्थितिवाला जो द्रव्य होता
 है वह देशोनलोक व्यापी होता है ऐसा समझना चाहिये ।

શંકા-આપને જો અચિત્ત મહાસ્કંધ કો એક સમય કી સ્થિતિવાળા
 प्रकट किया है, सो वह एक समय की स्थितिकता उसमें घटित नहीं

શંકા-આપ જે સૂક્ષ્મ પરિણામયુક્ત ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળા
 स्कंध रूप એक आनुपूर्वी द्रव्यને देशोनलोकव्यापी कहो छे, तो अमाश
 प्रश्न छे छे ते समस्त लोकમાં કેम व्यापितो (अवगाहित) नथी ?

उत्तर-એ વાત તો પહેલાં સ્પષ્ટ થઈ ચુકી છે કે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ
 જ સર્વ લોકવ્યાપી હોય છે, અને તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સર્વ લોકમાં
 व्यापक रूपे એक समय सुधी જ રહે છે. ત્યાર બાદ તેનો સંકોચ (उपसं-
 हार) થઈ જાય છે. આનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક સમયની સ્થિતિવાળું હોતું નથી.
 તે તો ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું હોય છે. તેથી એવું જે દ્રવ્ય હોય
 છે તે તો દેશોન લોકમાં (એક પ્રદેશ પ્રમાણ ન્યૂન લોકમાં) જ અવગાહિત
 થાય છે, એવો નિયમ છે. તેથી જ એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે ત્રણ આદિ
 સમયની સ્થિતિવાળું જે દ્રવ્ય હોય છે, તે દ્રવ્ય દેશોન લોકમાં અવગાહિત હોય છે.

શંકા-આપે કહ્યું તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધની સ્થિતિ એક સમયની હોય
 છે, પરંતુ આપનું તે કથન ટોપયુક્ત લાગે છે, કારણ કે કંઈ, કપાઈ, મન્યાન

દળકપાટમન્થાનાઘવસ્થાગણનેન તસ્યાપ્યદટસમયસ્થિતિત્વાત્ । અસૌ દિ-કેવલિ
સમુદ્વાતન્યાયેન વિસ્રસાપરિણામવશાચ્ચતુર્મિઃ સમયૈર્લોકસ્ય પૂરણં કરોતિ । સંહર-
ણમપિ પ્રતિલોમં-તસ્યાચિત્તમહાસ્કન્ધસ્ય તૈરેવ ચતુર્મિઃ સમયૈ દ્રષ્ટવ્યમ્ । एवं च
सत्यष्टौ समयान् कालमानेन भवतीति । एवं चाचित्तमहास्कन्धस्याप्यानुपूर्वीत्वात्
आनुपूर्वीद्रव्यस्यापि सर्वलोकव्यापित्वं वक्तव्यं, न तु देशोलोकव्यापित्वमिति
चेदाह-अत्र हि दण्डकपाटमन्थानाद्यभिज्ञा भिन्ना अवस्थाः । अवस्थाभेदेन
वस्तुनोऽपि भेदः । इत्थं च दण्डकपाटमन्थानाद्यवस्थद्रव्येभ्यो भिन्न एवाचित्त-

होती है । क्योंकि दण्ड, कपाट और मन्थान आदि अवस्था की गणना
से उसमें भी आठ समय की स्थितिकता आती है । यह अचित्त महा-
स्कंध केवलिसमुद्वातन्याय से विस्त्रसापरिणामवशात् चार समयों में
लोक को पूरित करता है । अर्थात् सकल लोक को व्याप्त करलेता है
और चार ही समयों में फिर वह अपना संहार करता है-अर्थात् अपने
आपमें समाजाता है । इस प्रकार इसकी स्थिति आठ समय की कालप्र-
माण से होती है । फिर एक समय की स्थिति आप इसकी कैसे कहते
हो ? तथा यह अचित्त महास्कंध भी आनुपूर्वी रूप है और जब यह
इस प्रकार से सर्वलोक व्यापी है तो आनुपूर्वीद्रव्य को जो आप देशोल-
लोक व्यापी कह रहे हो वह कैसे संगत माना जा सकता है ? अतः
आनुपूर्वी द्रव्य सर्वलोक व्यापी है ऐसा कहना चाहिये ?—

उत्तर-दण्ड, कपाट और मन्थान आदि अवस्थाएँ हैं वे भिन्न २ हैं ।
और अवस्थाओं के भेद से अवस्थावाली वस्तु में भी भेद होना है । इस

આદિ અવસ્થાઓની અચુતરી કરતાં તેની સ્થિતિ આઠ સમયની થાય છે. આ
આ અચિત્ત મહાસ્કન્ધ, કેવલિસમુદ્વાતને ન્યાયે વિસ્રસાપરિણામને લીધે ચાર
સમયોમાં સકળ લોકને વ્યાપ્ત કરી દે છે, અને ત્યાર બાદ ચાર સમયોમાં
જ તે પોતાનો ઉપસંહાર કરે છે એટલે કે પોતાની અંદર જ સમાઈ જાય
છે. આ રીતે કાળપ્રમાણને વિચાર કરવામાં આવે તો તેની સ્થિતિ આઠ
સમયની થાય છે. છતાં આપ તેની સ્થિતિ એક સમયની શા કારણે કહે
છો ? આ અચિત્ત સ્કન્ધ આઠ સમયોની સ્થિતિવાળો હોવાથી આનુપૂર્વી ૩૫
જ છે. જો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ૩૫ આ અચિત્ત સ્કન્ધ સર્વલોકવ્યાપી હોય, તો
આનુપૂર્વી દ્રવ્યને આપ કેવી રીતે દેશોન લોકવ્યાપી બતાવો છો ? આ રીતે
આનુપૂર્વી દ્રવ્યને દેશોન લોકવ્યાપી કહેવું તે સંગત લાગતું નથી. તેને
સર્વલોકવ્યાપી જ કહેવું જોઈએ.

ઉત્તર-દંડ, કપાટ અને મન્થાન આદિ જે અવસ્થાઓ છે તે ભિન્ન ભિન્ન
છે, અને અવસ્થાઓના ભેદને લીધે અવસ્થાવાળી વસ્તુમાં પણ ભિન્નતા આવી

મહાસ્કન્ધઃ । સ ચૈકસમયસ્થિતિક્ષણમ્ । एवं च तस्यानुपूर्वित्वाभावादानुपूर्वी-
द्रव्यस्य देशोनलोकव्यापिरं न विरुध्यते, इति । यद्वा—यथा क्षेत्रानुपूर्वी-
तथाऽत्रापि सर्वलोकव्यापिनोऽप्यचित्तमहास्कन्धस्य विवक्षया एकस्मिन्नभःप्रदेशे-
ऽप्राधान्याश्रयणेन देशोनलोकवर्तित्वं बोध्यम् । तत्र प्रवेशे हि एकसमयस्थितिकस्य

પ્રકાર દણ્ડ, કપાટ ઓર મન્યાન અવસ્થાવાલે દ્રવ્યોં સે બિન્ન હી અચિત્ત મહાસ્કંધ હૈ । એક સમય કી સ્થિતિવાલા દ્રવ્ય આનુપૂર્વી રૂપ નહીં માના ગયા હૈ । અતઃ હમમેં આનુપૂર્વીત્વ કા અભાવ હૈ । હસલિયે જો આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્ય મેં અચિત્ત મહાસ્કંધ કો લક્ષિત કરકે સર્વલોક વ્યાપિતા બન-
લાને કી શંકા ઉઠાઈ હૈ વહ નિર્મૂલ હૈ । અતઃ યહી કથન સત્ય હૈ કિ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય દેશોનલોકવ્યાપી હોતા હૈ યદ્વા-ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કી તરહ
યહાં પર બી સર્વલોક વ્યાપી બી અચિત્ત મહાસ્કંધ કી વિવક્ષા સે એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો એક આકાશ કે પ્રદેશ મેં અપ્રધાનતા કે આશ્રય સે
ઉસે દેશોન લોકવર્તી જાનના ચાહિયે-તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ અચિત્ત મહાસ્કંધ રૂપ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો દેશોન લોકવ્યાપી ન
માનકર યદિ કેવલ સર્વલોકવ્યાપી હી માનો જાવે તો ફિર અનાનુ-
પૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કો ઠહરને કે લિયે સ્થાન ન હોને કે કારણ
ઉનકા અભાવ પ્રસક્ત હોગા ઓર જબ દેશોન લોક મેં અચિત્ત મહા-
સ્કંધ રૂપ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય વ્યાપક હોકર રહતા હૈ એસા માના જાના

બાધ છે. આ પ્રકારે ડંડ, કપાટ અને મન્યાન અવસ્થાવાળાં દ્રવ્યોથી અચિત્ત મહાસ્કન્ધમાં બિન્નતા છે. અને તે એક જ સમયની સ્થિતિવાળો છે. એક સમયની સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને આનુપૂર્વી રૂપ ગણાતું નથી પણ અનાનુપૂર્વી રૂપ જ ગણાય છે. આ પ્રકારે તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધમાં આનુપૂર્વીતાનો અભાવ જ છે તેથી શંકા કર્તાએ એવી જ શંકા ઉઠાવી છે કે “અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સર્વલોકવ્યાપી હોવાથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યને પણ સર્વલોકવ્યાપી કહેવું જોઈએ” તે વાત ઉચિત નથી તે સાબિત થઈ બાધ છે. અચિત્ત મહાસ્કન્ધ અનાનુપૂર્વી રૂપ હોવાથી તેની સર્વલોકવ્યાપિતાનો આધાર લઈને આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં સર્વલોકવ્યાપિતા માની શકાય નહીં. તેથી એજ કથન સત્ય સિદ્ધ થાય છે કે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોનલોકવ્યાપી હોય છે.

અથવા-ક્ષેત્રાનુપૂર્વીની જેમ અહીં પણ સર્વલોકવ્યાપી અચિત્ત મહાસ્કન્ધની વિવક્ષાની અપેક્ષાએ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યને એક આકાશના પ્રદેશમાં અપ્રધાનતાનો આશ્રય લઈને દેશોન લોકવ્યાપી સમજવું જોઈએ. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ રૂપ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યને દેશોન લોકવ્યાપી માનવાને બદલે સર્વ લોકવ્યાપી માનવામાં આવે, તો અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવાનું સ્થાન જ ન રહેવાને કારણે તેમનો અભાવ માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે અને જો એવું માનવામાં આવે કે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ રૂપ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોન લોકમાં વ્યાપ્ત થઈને રહેલું હોય

અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય દ્વિસમયસ્થિતિકર્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યસ્ય ચ પ્રાધાન્યાત્ । એવમ-
ન્યદપિ આગમાવિરોધતો વક્તવ્યમ્ । તથા-નાનાદ્રવ્યાણિ=અનેકાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ
મતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ । ડ્યાદિસમયસ્થિતિકદ્રવ્યાણાં સર્વલોકેડપિ
સત્તાજ્ઞાનાદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ સર્વલોકવ્યાપીનિ ભવન્તીતિ ભાવઃ । એવમેવ મનાનુ-

હૈ તો હસ પ્રકાર સે અચિત્ત મહાસ્કંધ સે પૂરિત હુપ્ બી લોક મેં કમ સે
કમ એકપ્રદેશ એસા બી આજાતા હૈ કિ જિસમેં અનાનુપૂર્વી ઓર અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્ય કો ઠહરને કે લિયે સ્થાન મિલજાતા હૈ યદપિ હસ એક
પ્રદેશ મેં બી આનુપૂર્વીદ્રવ્ય રહતા હૈ-તો બી ઉસકી પ્રધાન રૂપ સે વહાં
ચિવક્ષા નહીં માની જાતી હૈ । વહાં તો એક સમય કી સ્થિતિવાલે અના-
નુપૂર્વીદ્રવ્ય ઓર દો સમય કી સ્થિતિવાલે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કી હી પ્રધા-
નતા માનીજાતી હૈ હસ પ્રકાર ઓર બી બાતેં આગમ મેં વિરોધ ન આવે
હસ પ્રકાર સે સમક્ષ લેની ચાહિયે । તથા-(નાનાદ્રવાઈ પહુચ્ચ નિયમા
સર્વલોપ હોડજા) અનેક આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી ચિવક્ષા કરકે નિયમ સે
આનુપૂર્વીદ્રવ્ય સમસ્ત લોક મેં રહતે હૈ અર્થાત્ ડ્યાદિ સમય કી સ્થિતિ-
વાલે અનેક આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી સત્તા સમસ્ત લોક મેં બી પાચી જાતી
હૈ હસલિયે નાના આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે અનેક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
સમસ્ત લોક વ્યાપી હોકર રહતે હૈ । (એવં અણાણુપુલ્લીદલ્લં) હસી પ્રકાર

એ, તો આ રીતે અચિત્ત મહાસ્કંધ વડે પૂરિત (વ્યાપ્ત) થયેલાં લોકમાં પણ
ઓછામાં ઓછો એક પ્રદેશ એવો હોય છે કે જેમાં અનાનુપૂર્વી અને
અવક્તવ્યક દ્રવ્યને રહેવાને માટે સ્થાન મળી જાય છે. એ કે તે એક પ્રદેશમાં
પણ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રહે છે, છતાં પણ તેમાં તેમને પ્રધાનરૂપે ગણી શકાય
નહીં તે એક પ્રદેશમાં તો એક સમયની સ્થિતિવાળા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની
અને એ સમયની સ્થિતિવાળા અવક્તવ્યક દ્રવ્યની જ પ્રધાનતા માનવી પડે
છે. એજ પ્રમાણે બીજી વાતોને પણ આગમની વિરૂદ્ધ ન પડે એવી રીતે
સમજી લેવી જોઈએ.

તથા-(નાનાદ્રવાઈ પહુચ્ચ નિયમા સર્વલોપ હોડજા) અનેક આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેઓ નિયમથી જ સર્વલોકમાં
રહેલાં હોય છે, એમ સમજવું જોઈએ. એટલે કે ત્રણ આદિ સમયની
સ્થિતિવાળાં અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ સમસ્ત લોકમાં પણ હોય છે.
તેથી જ અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અવગાહના આગતમાં એવું કથન કરવામાં
આવ્યું છે કે અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સમસ્ત લોકમાં વ્યાપ્ત થઈને રહે છે.

પૂર્વી દ્રવ્યમાશ્રિત્ય અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમપિ લોકસ્યાસંખ્યેયમાગધ્યાપિ ભવતિ ।
 અત્રેદં બોધ્યમ્—યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વામનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં લોકસ્યાસંખ્યેયમાગે ભવતિ,
 તથા કાલાનુપૂર્વામપિ તસ્યાસંખ્યેયમાગવર્તિત્વં બોધ્યમ્ । યતો યત્કાલત્ત એક-
 સમયસ્થિતિકં તત્ક્ષેત્રતોડપ્યેકપ્રદેશાવગાદં ભવતિ । તત્ત્વ લોકસ્યાસંખ્યેયમાગે એવં
 ભવતિ । પ્રકારાન્તરમુપશ્રિત્યાહ—‘આપસંતરેણ વા’ इत्यादि । आदेशान्तरेण=प्रका-
 रान्तरमाश्रित्य अनानुपूर्वी द्रव्यं सर्वपृच्छासु=संख्येयमागे, असंख्येयमागे,
 संख्येयमागेषु असंख्येयमागेषु सर्वलोके वा, भवति । अयं भावः—अचित्तमहास्क-

સે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કે વિષય મેં બી જાનનાં ચાહિયે—અર્થાત્ એક અના-
 નુપૂર્વીદ્રવ્ય કો આશ્રિત કરકે એક અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય બી લોક કે અસં-
 ક્યાત ભાગ મેં રહતા હૈ—યહાં એસા સમજનાં ચાહિયે—જૈસે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી
 મેં એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે અસંક્યાતવેં ભાગ મેં રહતા હૈ, ડસી
 પ્રકાર સે કાલાનુપૂર્વી મેં બી વહ લોક કે અસંક્યાતવેં ભાગ મેં રહતા
 હૈ । ક્યોં કિ કાલ કી અપેક્ષા જિસકી એકસમય કી સ્થિતિ હૈ વહ
 ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા બી એક પ્રદેશ મેં સ્થિત હોતા હૈ । યહ એકપ્રદેશ મેં
 રહના હી લોક કે અસંક્યાતવેં ભાગ મેં ડસકા રહના હૈ । (આપસંતરેણ
 વા સર્વપુચ્છાસુ હોજા) અથવા સૂત્રકાર પ્રકારાન્તર કો આશ્રિત
 કરકે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કે વિષય મેં ડસ પ્રકાર સે કહતે હૈં કિ યદિ કોઈ
 એસા પૂછે કિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે સંક્યાત ભાગ મેં અથવા અસં-
 ક્યાતભાગ મેં અથવા સંક્યાત ભાગોં મેં અથવા સર્વલોક મે રહતા

(एवं अणानुपूर्वी द्रव्यं) એવું જ કથન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યના વિષયમાં
 પણ સમજવું બોધ્ય છે એટલે કે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર
 કરવામાં આવે, તો એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય પણ લોકના અસંખ્યાત ભાગમાં
 રહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે સમજવો—જેવી રીતે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં
 એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકનાં અસંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, એજ પ્રમાણે
 કાલાનુપૂર્વીમાં પણ તે લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહે છે, કારણ કે કાળની
 અપેક્ષાએ જેની એક સમયની સ્થિતિ હોય છે, તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ
 એક પ્રદેશમાં અવગાહિત (રહેલું) હોય છે. આ એક પ્રદેશમાં રહેલું, તેનું
 નામ જ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહેલું છે.

(આપસંતરેણ વા સર્વપુચ્છાસુ હોજા) અથવા સૂત્રકાર અન્ય પ્રકારે
 આનુપૂર્વી દ્રવ્યના વિષયમાં નીચે પ્રમાણે કથન કરે છે—જો કોઈ એવો પ્રશ્ન
 પૂછે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કે અસંખ્યાત
 ભાગોમાં રહે છે, કે સમસ્ત લોકમાં રહે છે ?

अनुयोगवन्दित्रका टीका सूत्र १३२ क्षेत्रद्वारस्पर्शनाद्वारनिरूपणम्

५७१

न्धस्य दण्डाद्यवस्थाः परस्परं भिन्नाः, आकारादि भेदात्, द्वित्रिचतुःप्रदेशिकादि स्कन्धवत्। ततश्च ता दण्डाद्यवस्था एकैकसमयवृत्तित्वात् पृथगनानुपूर्वीद्रव्याणि। तेषु च मध्ये किमपि कियस्यपि क्षेत्रे वर्तते, इत्यनया विवक्षया किल एकमनानुपूर्वीद्रव्यं प्रकारान्तरेण एतत्सूत्रोक्तसंख्येयभागादिकासु पञ्चस्वपि पृच्छासु लभ्यते। तथा नानाद्रव्याणि प्रतीत्याऽनानुपूर्वीद्रव्याणि सर्वस्मिन्नपि लोके भवन्ति। एक है? तो उसका उत्तर इस प्रकार से है—दो तीन चारप्रदेशवाले स्कंध आदि की तरह अचिन्त महास्कंध की दण्ड, कपाट और मन्थान अवस्थाएँ आकार आदि के भेद से परस्पर में भिन्न २ हैं। इस प्रकार ये दण्डादिक अवस्थाएँ एक एक समयवर्ती होने के कारण पृथक् २ अनानुपूर्वी द्रव्य हैं। इनके बीच में कोई एक अनानुपूर्वी द्रव्य लोक के कितने भी क्षेत्र में रहता है जब इस प्रकार की विवक्षा होती है तब—इस विवक्षा से एक अनानुपूर्वी द्रव्य प्रकारान्तर से इस सूत्रोक्त संख्येय भागादिक पाँचों ही पृच्छाओं में लभ्य हो जाता है—तात्पर्य कहने का यह है कि एक समय की स्थितिवाला अनानुपूर्वी द्रव्य होता है और इस अनानुपूर्वी द्रव्य में से कोई एक द्रव्य लोक के संख्यात भाग में रहता है कोई एक द्रव्य असंख्यात भाग में रहता है, कोई एक द्रव्य संख्यात भागों में रहता है। कोई एक असंख्यात भागों में रहता है और कोई एक सर्वलोक में रहता है। तथा नाना अनानुपूर्वीद्रव्यों

तो आ प्रश्नो जेवो उत्तर आपी शक्य के जे, त्रय, चार प्रदेशवाला स्कंध आदिनी जेम अचिन्त महास्कंधनी दंड, कपाट अने मन्थान अवस्थाओ आकार आदिनी अपेक्षाओ ओके जीअथी बिन्न बिन्न होय छे आ प्रकारे ते दंडादिक अवस्थाओ ओके ओके समयवर्ती होवाने कारणे अलग अलग अनानुपूर्वी द्रव्य रूप होय छे। तेमांगुं कौछ ओके अनानुपूर्वी द्रव्य लोकना केटला य क्षेत्रमां रहे छे। ज्यारे आ प्रकारनी विवक्षा थाय छे, त्थारे आ विवक्षानी अपेक्षाओ ओके अनानुपूर्वी द्रव्य प्रकारान्तरनी अपेक्षाओ आ सूत्रोक्त संख्येय भागादि पांचे प्रकारना भागोमां उपलब्ध थाय छे। आ कथननो भावार्थ ओ छे के ओके समयनी स्थितिवाला अनानुपूर्वी द्रव्यनी अवगाढनानो विचार करवामां आवे, तो कौछ ओके अनानुपूर्वी द्रव्य लोकना संख्यात भागमां रहे छे, कौछ ओके अनानुपूर्वी द्रव्य लोकना असंख्यात भागमां रहे छे, कौछ ओके अनानुपूर्वी द्रव्य लोकना संख्यात भागोमां रहे छे, कौछ ओके अनानुपूर्वी द्रव्य लोकना असंख्यात भागोमां रहे छे अने कौछ ओके अनानुपूर्वी द्रव्य सर्वलोकमां यणु रहे छे, अनेक अनानुपूर्वी द्रव्योनी

૫૭૨

અનુયોગદ્વારસૂચ

સમયસ્થિતિકાનાં દ્રવ્યાણાં સર્વત્ર સર્વાદિતિ । એવમ્-અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણ્યપિ યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામ્ । અયં ભાવઃ-અવક્તવ્યકદ્રવ્યં ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામિવ કાલાનુપૂર્વ્યામપિ લોકસ્યાસંખ્યેયમાગે એવ મ્ભવતિ । યતો યત્કાલતો દ્વિપ્રમયસ્થિતિકં તત્ક્ષેત્રતો ઽપિ દ્વિપ્રદેશાગાઢમ્, તત્ત્વ લોકસ્યાસંખ્યેયમાગમેવ વ્યાપ્નોતિ । અથવા-દ્વિપ્રમયસ્થિતિકં દ્રવ્યં સ્વભાવાદેવ લોકાસંખ્યેયમાગવ્યાપિ મ્ભવતિ, ન તતોઽધિકવ્યાપિ । તથા-આદેશાન્તરેણ વા-‘મહાસંધવજ્જમન્નદવ્વેસુ આદ્લલ્લવડપુચ્છાસુ હોઝ્જા ’’ ઇતિ મોક્તમ્ ।

કી અપેક્ષા કરકે નાના અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વલોક મેં ખી રહતે હેં । કયોંકિ એક સમય કી સ્થિતિવાલે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કા સર્વત્ર સર્વ રહતા હે । (એવં અવસાન્વગદ્વવાણિ વિ જહા સેત્તાણુપુઠ્ઠીએ) હસી પ્રકાર ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કી તરહ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ખી હેં । તાત્પર્ય યહ હે કિ જિસ પ્રકાર સે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોક કે અસંખ્યાત ભાગવર્તી બતલાયા ગયા હે ઉસી પ્રકાર સે યહાં કાલાનુપૂર્વી મેં ખી વહ લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં રહનેવાલા બતલાયા ગયા હે । કયોં કિ કાલકી અપેક્ષા જિસકી સ્થિતિ દો સમય કી હોતી હે વહ લોક કે દો પ્રદેશોં મેં હી અવગાઢ હોતા હે । દો પ્રદેશોં મેં અવગાઢ હોના હી લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં વ્યાપ્ત કરના હે । અથવા દો સમય કી સ્થિતિવાલા દ્રવ્ય સ્વભાવ સે હી લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં વ્યાપ્ત હોના હે હસ સે અધિક ભાગ કો

અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેઓ સર્વલોકવ્યાપી હોય છે, એમ સમજવું, કારણ કે એક સમયની સ્થિતિવાળાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ સર્વત્ર હોય છે. (એવં અવસાન્વગદ્વવાણિ વિ જહા સેત્તાણુપુઠ્ઠીએ) ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અવગાહના વિષે જેવું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અહીં પણ સમજવું જોઈએ આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે- ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યને લોકના અસંખ્યાત ભાગવર્તી બતાવ્યું છે, એજ પ્રમાણે અહીં કાલાનુપૂર્વીમાં પણ તેને લોકના અસંખ્યાત ભાગમાં રહેલું જ બતાવવામાં આવ્યું છે, કારણ કે કાળની અપેક્ષાએ જેની સ્થિતિ બે સમયની હોય છે, તે દ્રવ્ય લોકના બે પ્રદેશોમાં જ અવગાઢ હોય છે. આ પ્રકારે બે પ્રદેશમાં રહેલું તેનું નામ જ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગને વ્યાપ્ત કરવે. અથવા બે સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય સ્વભાવથી જ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગને વ્યાપ્ત કરે છે, તેનાં કરતાં અધિક ભાગને તે વ્યાપ્ત કરતું નથી.

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १३२ क्षेत्रद्वारस्पर्शनाद्वारनिरूपणम्

५३३

अत्रेदमनुसन्धेयम्—किमपि द्विसमयस्थितिकं द्रव्यं लोकस्य संख्येयतमभाग-
मवगाहते, किमप्यसंख्येयतमभागम् किमपि संख्येयान् भागान्, किमपि तु
असंख्येयान् भागान् न तु सर्वलोकमवगाहते। सर्वलोकव्यापित्वं तु महास्कन्धस्य।
स चाष्टसमयैर्निष्पद्यते, न तु द्वाभ्यां समयाभ्याम्। अतो द्विसमयस्थितिकत्वा-
भावेन महास्कन्धस्यावक्तव्यकत्वाभावादवक्तव्यकद्रव्यविषये पञ्चमपृच्छा न भवति।
अत एव—‘महाखंधवज्जं’ इत्युक्तम्। नानाद्रव्याणि तु सर्वलोकव्यापीनि भव-
न्तीति। इति क्षेत्रद्वारम्। स्पर्शनाद्वारं निरूपयितुमाह—‘कुसणा’ इत्यादि। स्पर्शना-
द्वारमपि तथैव=क्षेत्रानुपूर्वीवदेव विज्ञेयम् ॥मू० १३२॥

यह व्यास नहीं करता है। तथा—“आदेशान्तरेण वा—महाखंधवज्जमन्न-
दव्वेसु आइल्लच्चउ पुच्छासु होज्जा” ऐसा जो कहा है उसका भाव
इस प्रकार से है—कि दो समय की स्थितिवाला कोई एक अवक्तव्यक
द्रव्य लोक के संख्यातवें भाग में अवगाह होता है कोई असंख्यातवें
भाग में अवगाह होता है, कोई संख्यात भागों में अवगाह होता है,
और कोई असंख्यात भागों में अवगाह होता है परन्तु सर्वलोक में
अवगाह नहीं होता है। सर्वलोक में अवगाहतो महास्कंध होता है। यह
महास्कंध आठ समयों से निष्पन्न होता है। दो समयों से नहीं। इस-
लिये इस महास्कंध में द्विसमयस्थितिकता का अभाव होने से अवक्तव्यक-
द्रव्यत्व का अभाव है। इसलिये अवक्तव्यक द्रव्य के विषय में पांचवां
प्रश्न नहीं होता है। इसीलिये “महाखंधवज्ज” ऐसा कहा है। तथा
नाना अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा करके नाना अवक्तव्यक द्रव्य सर्व-

तथा—“आदेशान्तरेण वा—महाखंधवज्जमन्नदव्वेसु आइल्लच्चउपुच्छासु
होज्जा” आ प्रमाणे જે કહ્યું છે તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જે સમયની
સ્થિતિવાળું કોઈ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગમાં અવગાહ
(રહેલું) હોય છે, કોઈ અસંખ્યાતમાં ભાગમાં અવગાહ હોય છે, કોઈ સંખ્યાત
ભાગોમાં અવગાહ હોય છે, કોઈ અસંખ્યાત ભાગોમાં અવગાહ હોય છે,
પરન્તુ કોઈ પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય સમસ્ત લોકમાં અવગાહ હોતું નથી.
મહાસ્કન્ધ જ સર્વલોકમાં અવગાહ હોય છે. આ મહાસ્કન્ધ આઠ સમયોમાં
નિષ્પન્ન થાય છે—જે સમયોમાં નિષ્પન્ન થતો નથી આ રીતે આ મહાસ્કન્ધમાં
જે સમયની સ્થિતિનો અભાવ હોવાને કારણે તેને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ ગણી
શકાય નહીં” આ રીતે અવક્તવ્યક દ્રવ્યની અવગાહનાની ખામતમાં પાંચમી
વાત (સર્વલોકવ્યાપતા) સંભવી શકતી નથી તેથી જ “મહાખંધવજ્જ”
આ સૂત્રાંશ મૂકવામાં આવ્યો છે. અનેક અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ ત્રિઆશ
કવવામાં આવે તો એવું કથન ગ્રહણ કરવું જોઈએ કે—

અથ કાલદ્વારમાહ—

મૂલમ્—નેમમવવહારાણં આણુપુઘીદ્વાઈં કાલઓ કેવચ્ચિરં
હોતિ ? ઇમં દઘં પહુચ્ચ જહણ્ણેણં તિણિણ સમયા ઉક્કોસેણં
અસંખેજ્જં કાલં । નાણાદ્વાઈં પહુચ્ચ સઘદ્ધા । નેમમવવહારાણં
આણુપુઘીદ્વાઈં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ ? ઇમં દઘં પહુચ્ચ
અજહન્નમણુક્કોસેણં એકં સમયં, નાણાદ્વાઈં પહુચ્ચ સઘદ્ધા ।
અવત્તગદ્ધાણં પુચ્છા, ઇમં દઘં પહુચ્ચ અજહણ્ણમણુક્કોસેણં દો
સમયા, નાણાદ્વાઈં પહુચ્ચ સઘદ્ધા ॥સૂ૦ ૧૩૩॥

છાયા—નેમમવવહારયોરાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ?
એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન ત્રીન સમયાન્ ઉત્કર્ષેણ—અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ
પ્રતીત્ય સર્વાદ્ધા । નેમમવવહારયોઃ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવ-
ન્તિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ એકં સમયં, નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય
સર્વાદ્ધા । અવત્તવ્યકદ્રવ્યાણાં પૃચ્છા । એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ દ્વી
સમયી, નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય સર્વાદ્ધા ॥સૂ૦ ૧૩૩॥

ટીકા—‘ નેમમવવહારાણં ’ इत्यादि ।

નેમમવવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ?
इति प्रश्नः । उत्तरयति—एकं द्रव्यं प्रतीत्य आनुपूर्वीद्रव्याणां जघन्यतः त्रीन
लोक व्यापी होते हैं । इस प्रकार यहां तक क्षेत्रद्वार की प्ररूपणा हुई है ।
(फुमणा कालाणुपुव्वीए वि तहा चेव भाणियव्वा) स्पर्शना द्वार भी
इसका कालानुपूर्वी में क्षेत्रानुपूर्वी की तरह जानना चाहिये ॥सू० १३२॥

अथ सूत्रकार कालद्वार का कथन करते हैं—

‘ नेममववहाराणं ’ इत्यादि ।

वाच्यार्थ—(नेममववहाराणं) नैममववहारनयसंमत (आणुपुव्वी-
वव्वाइं) समस्त आणुपूर्वीद्रव्य (कालओ) कालकी अपेक्षा करके (केव-
चिचरं होई) कितने समयतक रहते हैं ?—

અનેક અવકાશ્યક દ્રવ્યો સર્વલોકવ્યાપી હોય છે. આ પ્રકારે આ
સૂત્રમાં ક્ષેત્રદ્વારની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. (ફુમણા કાલાણુપુવ્વીએ વિ તહા-
ચેવ ભાણિયવ્વા) આ કાલાનુપૂર્વીમાં સ્પર્શના દ્વારનું કથન પણ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીની
જેમ જ સમજવું ભેદથી. ॥સૂ૦ ૧૩૨॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १३३ कालद्वारमित्युपनिषद्

५७५

समयान् स्थितिः, उत्कर्षेण चासंख्येयं कालं स्थितिः। अयं भावः आनुपूर्वी
द्रव्याणां मध्ये त्रिसमयस्थितिकं द्रव्यं सर्वतो जघन्यं, तच्च त्रीन् समयानेव
तिष्ठति। अतो जघन्यतस्त्रिसमयं यावदानुपूर्वीद्रव्याणां स्थितिः। उत्कृष्टतस्तु
असंख्येयं कालं स्थितिर्बोद्धव्या। ततः परमेकैर्न तद्रूपेण परिणामेन द्रव्यावस्थान-

उत्तर—(एवं द्रव्यं पञ्च) एक आनुपूर्वीद्रव्य की अपेक्षा करके
आनुपूर्वीद्रव्यों की (जहण्णेणं) जघन्य से (तिणिण समय) तीन समयकी
स्थिति है, और (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट से (असंखेज्जं कालं) असंख्यात-
काल की स्थिति है। इसका तात्पर्य यह है। आनुपूर्वीद्रव्यों के बीच में
तीन समय की स्थितिवाला द्रव्य सब से कम है यह तीन समय
तक ही ठहरता है—रहता है। इसलिये आनुपूर्वीद्रव्यों की स्थिति
जघन्य से तीन समय तक की कही गई है। और उत्कृष्ट से
जो असंख्यात काल की स्थिति कही गई है उसका तात्पर्य यह है कि
द्रव्य असंख्यात काल के बाद आनुपूर्वीरूप परिणाम से परिणमित

हवे सूत्रकार कालद्वारमुं कथन करे छे—

“जेगमववहारणं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(जेगमववहारणं) जेगमववहार नयसंभत (आनुपूर्वीद्रव्याहं)
संभस्त आनुपूर्वी द्रव्ये (कालजो) काणनी अपेक्षाजे (केवचिचरं होई?) केटला
समय सुधी रहे छे?

उत्तर—(एवं द्रव्यं पञ्च) ओक आनुपूर्वी द्रव्यनी अपेक्षाजे विचार
करवामां आवे, तो आनुपूर्वी द्रव्यनी (जहण्णेणं तिणिण समय) जघन्य
(ओछामां ओछी) स्थिति त्रयु समयनी कही छे अने (उक्कोसेणं असंखेज्जं
कालं) उत्कृष्ट (वधारमां वधार) स्थिति असंख्यात काणनी कही छे. आ.
कथनने भावार्थ नीचे प्रभु छे—जे आनुपूर्वी द्रव्ये छे तेमां त्रयु समयनी
स्थितिवाणुं द्रव्य सौथी ओछुं छे. ते त्रयु समय सुधी न रहे छे, ते कारणे
आनुपूर्वी द्रव्येनी जघन्य स्थिति त्रयु समयनी कही छे. तेनी उत्कृष्ट स्थिति
असंख्यात काणनी कहेवातुं करवुं जे छे ते द्रव्य असंख्यात काण भाइ
आनुपूर्वी रूप परिणाम रूपे परिणमित रहेवुं न नथी,

સ્વૈવાભાવાદિતિ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સર્વાદ્વા=સર્વકાલં સ્થિતિ ઋવતિ । લોકસ્ય પ્રત્યેકસ્મિન્ પ્રદેશે તેષાં સર્વદા સદ્ભાવાત્ । તથા-નૈગમ-વ્યવહારસમ્મતાનિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ=તિષ્ઠન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ એકં સમયં તિષ્ઠન્તિ ।

રહતા હી નહીં હૈ । (નાનાદ્રવાઈં પડુચ્ચ સવ્વદ્વા) તથા નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કો આશ્રિત કરકે આનુપૂર્વીદ્રવ્યોંકી સ્થિતિ સાર્વ-કાલિક હૈ । કયોંકિ લોક કે પ્રત્યેક પ્રદેશ મેં નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંકા સદ્ભાવ રહતા હૈ (નૈગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહારનયસંમત (અણાણુ-પુઠ્ઠીદ્રવાઈં) સમસ્ત અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય (કાલઓ) કાલ કી અપેક્ષા સે (કેવચ્ચિરં) કિતને સમય તક રહતે હૈ ।

ઉત્તર—(એમં દ્રવ્યં પડુચ્ચ) એક અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કી અપેક્ષા કરકે—(અજઘનમણુકોસેણ) અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય અજઘન્ય ઓર અનુત્કર્ષ સે એક સમય તક રહતે હૈ (નાનાદ્રવાઈં પડુચ્ચ સવ્વદ્વા) ઓર નાના-દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વકાલ રહતે હૈ । કયોંકિ લોક કે હરએક પ્રદેશ મેં इनका सद्भाव रहता है । (अवत्तव्यवह-र्-द्वાणं पुच्छा) अवक्तव्यकद्रव्यों के विषय में भी इसी प्रकार से प्रश्न है कि नैगमव्यवहारनयसंमत अवक्तव्यक द्रव्य काल की अपेक्षा से कितने समय तक रहते हैं ?

(નાનાદ્રવાઈં પડુચ્ચ સવ્વદ્વા) અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંની સ્થિતિ સાર્વકાલિક છે, કારણ કે લોકના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં વિવિધ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંનો સદા સદ્ભાવ જ રહે છે.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અણાણુપુઠ્ઠીદ્રવાઈં) સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો (કાલઓ) કાળની અપેક્ષાએ (કેવચ્ચિરં) કેટલા સમય સુધી રહે છે ?

ઉત્તર—(એમં દ્રવ્યં પડુચ્ચ) એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (અજઘનમણુકોસેણ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અજઘન્ય અને અનુ-ત્કર્ષ કાળની અપેક્ષાએ એક સમય સુધી રહે છે. (નાના દ્રવાઈં પડુચ્ચ સવ્વદ્વા) અને અનેક દ્રવ્યોંની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોંની સ્થિતિ સાર્વકાલિક છે, કારણ કે લોકના હરેક પ્રદેશમાં તેમનો સદ્ભાવ રહે છે.

પ્રશ્ન—(અવત્તવ્યવહારાણં પુછા) અવક્તવ્યક દ્રવ્યોંના વિષયમાં પણ એવો પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે કે નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમય સુધી રહે છે ?

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૪ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૫૭૭

નાનાદ્રવ્યાણિ તુ પ્રતીત્ય સર્વકાલમ્, લોકસ્ય પ્રતિપ્રદેશે તેષાં સદ્ભાવાત્ । અવ-
ક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ તુ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ દ્વૌ સમયૌ તિષ્ઠન્તિ ।
નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ સર્વકાલમ્ । લોકસ્ય પ્રતિપ્રદેશે તેષાં સર્વાદાવસ્થાનાત્ ॥
એકસમયસ્થિતિકસ્યૈવાનાનુપૂર્વીત્વં, દ્વિસમયસ્થિતિકસ્યૈવાવક્તવ્યકત્ત્વમભ્યુપગમ્ય-
તેજ્ઞો નાનયોર્દ્વયોર્વિષયે જઘન્યોત્કૃષ્ટચિન્તાસંભવ इति भावः ॥ ૧૩૩ ॥

અથાન્તરદ્વારમાહ—

મૂલમ્—નેગમવવહારાણં આણુપુત્રીદવાણમંતરં કાલઓ કેવ-
ચ્ચિરં હોઈ? એગં દવ્વં પડુચ્ચ જહન્નેણં એગં સમયં, ઉક્કોસેણં દો
સમયા । નાનાદવાઈં પડુચ્ચ નત્થિ અંતરં । નેગમવવહારાણં
અનાણુપુત્રીદવાણમંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ? એગં દવ્વં
પડુચ્ચ જહન્નેણં દો સમયા, ઉક્કોસેણં અસંખેજ્ઞં કાલં નાના-
દવાઈં પડુચ્ચ નત્થિ અંતરં । નેગમવવહારાણં અવત્તવ્વગદવાણં

ઉત્તર—(એગં દવ્વં પડુચ્ચ અજહ્ણમણુકોસેણં દો સમયા નાના
દવાઈં પડુચ્ચ સવ્વદ્ધા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષા કરકે અજઘન્ય ઓર અનુ-
ત્કૃષ્ટ સે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય દો સમય તક રહતે હૈં । ઓર નાના દ્રવ્યો
ની અપેક્ષાસે સર્વકાલ રહતે હૈં । કયોંકિ લોક કે પ્રતિપ્રદેશ મેં इनका
સર્વદા અવસ્થાન રહતા હૈ । એક સમય ની સ્થિતિ ચાલાં દ્રવ્ય અનાનુપૂ-
ર્વી હૈ ઓર દો સમય ની સ્થિતિચાલા દ્રવ્ય અવક્તવ્યક હૈ इसलिये इन
दोनों के विषय में जघन्य और उत्कृष्ट को लेकर विचार नहीं किया
गया है ॥ સૂ૦ ૧૩૩ ॥

ઉત્તર—(એગં દવ્વં પડુચ્ચ અજહ્ણમણુકોસેણં દો સમયા, નાના દવાઈં
પડુચ્ચ સવ્વદ્ધા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અજઘન્ય
અને અનુત્કૃષ્ટ કાળની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય એ સમય સુધી રહે છે.
અને જો અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોની સ્થિતિ સાર્વાકાલિક છે, કારણ કે લોકના દરેક પ્રદેશમાં તેમનો સદા
સદ્ભાવ રહે છે. એક સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ છે અને
એ સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અવક્તવ્યક રૂપ છે. તે કારણે તે બંને જઘન્ય
અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. ॥સૂ૦૧૩૩॥

અ૦ ૭૩

५७८

अनुयोगद्वारसूत्रे

पुच्छा, एगं दव्वं पडुच्च जहणणेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असं-
खेज्जं कालं । णाणादव्वाइं पडुच्च णत्थि अंतरं । भाग भाव
अप्पावहुं चेव जहा खेत्ताणुपुव्वीए तहा भाणियव्वाइं जाव से
तं अणुगमे । से तं णेगमववहारणं अणोवणिहिया काला-
णुपुव्वी ॥सू० १३४॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ?
एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येन एकं समयम्, उत्कर्षेण द्वौ समयौ । नानाद्रव्याणि
प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । नैगमव्यवहारयोरनानुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतः किय-
च्चिरं भवति ? एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येन द्वौ समयौ उत्कर्षेण असंख्येयं कालम् ।
नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । नैगमव्यवहारयोस्वक्तव्यकद्रव्याणां पृच्छा ।
एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येनैकं समयम्, उत्कर्षेणासंख्येयं कालम् । नानाद्रव्याणि
प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । भागोभावोऽल्पबहुत्वं चैव यथा क्षेत्रानुपूर्वी तथा भणित-
व्यानि, यावत्सोऽसावनुगमः । सैषा नैगमव्यवहारानौपनिधिकीकालानुपूर्वी । सू. १३४ ।

टीका—‘ णेगमववहारणं ’ इत्यादि—

नैगमव्यवहारसम्मतानामानुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ?
इति प्रश्नः । उत्तरयति—एकं द्रव्यं प्रतीत्यानुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतो जघन्ये-

अथ सूत्रकार अन्तरद्वार की प्ररूपणा करते हैं ।

“णैगमववहारणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(णैगमववहारणं) नैगमव्यवहारनयसंमत (आणुपुव्वी
दव्वाणं) समस्त आनुपूर्वीद्रव्यों का (अंतरं) अंतर (कालओ) कालकी
अपेक्षा से (कियच्चिरं) कितने समयका होता है ?

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च) एक द्रव्य की अपेक्षा लेकर (जहणणेणं)
आनुपूर्वीद्रव्यों का अंतर-विरहकाल-जघन्य से (एगं समयं) एक समय का

इसे सूत्रकार अन्तरद्वारनी प्ररूपणा करे छे—

“ णैगमववहारणं ” इत्यादि—

शब्दार्थ (णैगमववहारणं) नैगमव्यवहार नयसंमत (आणुपुव्वी दव्वाणं)
समस्त आनुपूर्वी द्रव्यों (अंतरं) अंतर (विरहकाण) (कालओ) काणनी
अपेक्षाओ (कियच्चिरं) केटला समयनुं होय छे ?

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च) ओक द्रव्यनी अपेक्षाओ विचार करवामां आवे
ते। (जहणणेणं) आनुपूर्वी द्रव्यों जघन्य अंतर-जघन्य विरहकाण—(एगं

નૈકં સમયં ભવતિ, ઉત્કર્ષેણ તુ દ્વૌ સમયૌ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ નાસ્તિ અન્તરમ્ । અયં ભાવઃ—ઘ્યાદિસમયસ્થિતિકં વિવક્ષિતં કિંચિદેકમાનુપૂર્વીદ્રવ્યં તં પરિણામં પરિત્યજ્ય પરિણામાન્તરેણ સમયમેકં સ્થિત્વા પુનઃપૂર્વોક્તિનૈવ પરિણામેન ઘ્યાદિ સમયસ્થિતિકં જાયતે તદા જઘન્યત એકં સમયમન્તરં ભવતિ । યદા તદેવ દ્રવ્યં દ્વૌ સમયૌ પરિણામાન્તરેણ સ્થિત્વા પુનસ્તેનૈવ પરિણામેન ઘ્યાદિ સમયસ્થિતિકં જાયતે તદા તત્તોત્કર્ષતો દ્વૌ સમયૌ અન્તરં ભવતિ । યદિ પુનઃ પરિણામાન્તરેણ ક્ષેત્રાદિભેદતઃ સમયદ્વયાત્ પરતોઽપિ તિષ્ઠેત્ તદા તત્રાઽઘ્યાનુ-
 ઔર (ઉક્કોસેણં) ઉત્ક્રુષ્ટ સે (દો સમયા) દો સમય કા હોતા હૈ । (નાનાદ્રવાઈં પડુચ્ચ) તથા નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા લેકર હનમેં (ળસ્થિ અંતરં) અંતર નહીં હૈ) તાત્પર્યં હસકા હસ પ્રકાર સે હૈ કિ ઘ્યાદિ સમય કી સ્થિતિવાલા કોઈં વિવક્ષિત એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય આનુ-
 પૂર્વીરૂપ અપને પરિણામ કો છોડકર કે કિસી દૂસરે પરિણામ સે એક સમય તક પરિણમિત રહકર પુનઃ ડસી પરિણામ સે ઘ્યાદિસમય કી સ્થિતિવાલા બન જાતા હૈ તો એસી સ્થિતિ મેં જઘન્ય સે વહાં અંતર એક સમય કા હોતા હૈ । ઔર જિસ સમય વહી દ્રવ્ય દો સમય તક પરિ-
 ણામાન્તર સે પરિણમિત બના રહકર ફિર બાદ મેં ડસી પરિણામ સે ઘ્યાદિસમય કી સ્થિતિવાલા બનતા હૈ તો એસી દશા મેં વહાં ઉત્ક્રુષ્ટ સે દો સમય કા અન્તર માના જાતા હૈ । યદિ પરિણામાન્તર સે પરિણમિત બના હુઆ વહ દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિ સંબન્ધ કે ભેદ સે દો સમય સે અધિક

સમય) એક સમયનું અને (ઉક્કોસેણં) વધારેમાં વધારે અંતર (દો સમયા) બે સમયનું હોય છે. (નાનાદ્રવાઈં પડુચ્ચ) અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (ળસ્થિ અંતરં) અંતર (વિરહકાળ) નથી આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય પોતાના આનુપૂર્વી રૂપ પરિણામને છોડીને કોઈ અન્ય પરિણામ રૂપે એક સમય સુધી પરિણ-
 મિત રહીને ફરી ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે પરિણમિત થઈ જતું હોય, તો એવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં જઘન્ય અન્તર (વિરહકાળ) એક સમયનો ગણાય છે. પણ ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું કોઈ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પોતાના આનુપૂર્વી રૂપ પરિણામને છોડીને કોઈ અન્ય પરિણામ રૂપે બે સમય સુધી પરિણમિત રહીને ફરી ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે પરિણમિત થઈ જતું હોય, તો એવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં ઉત્ક્રુષ્ટ અન્તર બે સમયનું ગણાય છે. બે અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થયેલું તે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિ સંબંધના ભેદથી બે સમય

પૂર્વીત્વમનુભવેત્, તતોઽન્તરમેવ ન સ્યાત્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ નાસ્ત્યન્તરમ્, ત્રિસમયસ્થિતિકદ્રવ્યાણાં લોકે સર્વદા સદ્ભાવાદિતિ । તથા—નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં કાલતઃ કિયચ્ચિરમન્તરં ભવતિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન દ્વૌ સમયૌ અન્તરમ્, ઉત્કર્ષતઃ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ નાસ્તિ અન્તરમ્ । અયં ભાવઃ—એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય એકસમય-

સમય તક ખી રહતા હૈ તો ઉસ સમય વહ ઉસ સ્થિતિ મેં ખી આનુ-પૂર્વીત્વકા અનુભવન કરતા હૈ ઓર હસ સ્થિતિ મેં વહાં અન્તર હી નહીં આતા હૈ । નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે જો અન્તર નહીં કહા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ ત્રિસમય કી સ્થિતિવાલે કોઈ ન કોઈ દ્રવ્ય લોક મેં સર્વદા રહતે હી હૈં ।

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઞ્વીદ્વાણં અંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કા અન્તર કાલ કી અપેક્ષા કિતનેક સમય કા હોતા હૈ ?

ઉત્તર—(એગં દ્વવં પદ્મુચ્ચ) એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લેકર (જહન્ને ણં) જઘન્ય સે (દો સમયા) દો સમય કા ઓર (ઉક્કોસેણં) ઉત્કૃષ્ટ સે (અસંખેજ્જં કાલં) અસંખ્યાતકાલ કા અન્તર હોતા હૈ । (ણાણાદ્વાહં પદ્મુચ્ચ ણત્થિ અંતરં) તથા નાનાદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે અન્તર નહીં

કરતાં અધિક સમય સુધી પણ રહે તો તે પરિસ્થિતિમાં પણ ત્યારે તે આનુ-પૂર્વીત્વનો અનુભવ કરે છે, અને આ સ્થિતિમાં ત્યાં અંતર જ સંભવી શકતું નથી વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતર (વિરહકાળ)નો અભાવ જ કહેવાનું કારણ એ છે કે ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળાં કોઈને કોઈ દ્રવ્યો લોકમાં સર્વદા મોજૂદ જ રહે છે.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઞ્વી દ્વાણં અંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ?) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અંતર કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમયનું હોય છે ?

ઉત્તર—(એગં દ્વવં પદ્મુચ્ચ) એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (જહન્નેણં દો સમયા) જઘન્ય અન્તર (ઓછામાં ઓછો વિરહકાળ) એ સમયનું (ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં) ઉત્કૃષ્ટ અંતર (વધારેમાં વધારે વિરહકાળ) અસંખ્યાત કાળનું હોય છે. (ણાણાદ્વાહં પદ્મુચ્ચ ણત્થિ અંતરં) અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો અંતર (વિરહકાળ) હોતું નથી આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—એક સમયની સ્થિતિ-

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १३४ अन्तरद्वारनिरूपणम्

५८१

स्थितिकान्यनानुपूर्वीद्रव्याणि यदा परिणामान्तरेण समयद्वयमनुभूय पुनः पूर्वामेव स्थितिं लभेरन् तदा जघन्यतः समयद्वयमन्तरं लभ्यते । यदि तु परिणामान्तरेण एकमेव समयं तिष्ठेयुस्तदा अन्तरमेव न भवति, तत्राप्यनानुपूर्वीत्वस्यैव सद्भावात् । अथ समयद्वयात्परतो यदि परिणामान्तरेण तिष्ठेयुस्तदा जघन्यत्वमेव न स्यात् । यदा तु तान्येष द्रव्याणि असंख्येयं कालं परिणामान्तरेण स्थित्वा पुनरेकस्थितिकं परिणामं लभेरन्, तदा उत्कृष्टतोऽसंख्येयं कालमान्तरं भवति । ननु अन्यान्यद्रव्य-क्षेत्रसम्बन्धेऽनन्तमपि कालम् अन्तरं भवितुमर्हति, ततः कथमुक्तम् 'उक्कोसेण

होता है । इसका भाव यह है कि एक समय की स्थितिवाले अनानु-पूर्वीद्रव्य जिस समय दूसरे परिणाम से दो समय तक परिणमित बने रहते हैं और बादमें पुनः उसी अपनी पूर्व स्थिति में आजाते हैं तब वहां जघन्य से दो समय का अन्तर माना जाता है । और यदि वे परिणामान्तर से परिणमित बने हुए एक समय तक ही रहते हैं तो ऐसी दशा में वहां अन्तर ही नहीं होता है क्यों कि उसस्थिति में भी वहां अनानुपूर्वीत्व का सद्भाव है । और यदि वे दो समय के बाद तक भी परिणामान्तर से परिणमित बने रहते हैं तो वहां जघन्यता नहीं मानी जाती है । और जब वे ही द्रव्य असंख्यात काल तक परिणामान्तर से परिणमित रहकर पुनः एक स्थिति वाले अपने परिणाम को पाते हैं— तब उत्कृष्ट से असंख्यात काल अन्तर होता है ।—

वाणुं ठोअं ओक अनानुपूर्वीं द्रव्यं ज्यारै अन्य परिणाम इपे परिणमित थधने जे समय सुधी ते परिणाम इपे परिणमित थयेदुं रहीने त्थार पाठ पोतानी ओअ पूर्वस्थितिमां आवी जाय, तो ओवी स्थितिमां त्यां जघन्य विरहकाण जे समयनो गणाय छे. अने जे ते ओक समय सुधी अ अन्या परिणाम इपे परिणमित थयेदुं रहे छे, तो ओवी परिस्थितिमां त्यां अंतर अ ठोअुं नथी, कारणु के ओवी दशाभां ते द्रव्यभां अनानुपूर्वीत्वनो सद्भाव अ रहे छे. अने जे समय पाठ पणु जे अन्य परिणाम इपे परिणमित थयेदुं अ रहे, तो त्यां जघन्यता मानवामां आवती नथी परन्तु जे ते द्रव्य असंख्यात काण सुधी अन्य परिणाम इपे परिणमित थयेदुं रहीने, त्थार पाठ ओक समयनी स्थितिवाणा पोताना पूर्व परिणामने प्राप्त करे तो ओवी परिस्थितिमां ते अनानुपूर्वीं द्रव्यनो उत्कृष्ट विरहकाण असंख्यातकाणनो गणाय छे.

૫૮૬

અનુયોગદ્વારસૂત્ર

અસંલેખજં કાલં' ઇતિ? ઇતિ ચેદાહ—કાલાનુપૂર્વીપ્રક્રમાત્ કાલસ્યૈવાત્ર માધાન્યં વિવક્ષિતમ્, યદિ ચાત્ર અન્યાન્યદ્રવ્યક્ષેત્રસંબન્ધાદન્તરકાલબાહુલ્યં ક્રિયતે, તદા તદ દ્વારેણાન્તરકાલસ્ય બહુત્વં સ્યાત્, તદા દ્રવ્યક્ષેત્રયોરેવ માધાન્યં સ્યાત્, ન તુ કાલસ્ય । તસ્માદેકસ્મિન્નેવ પરિણામન્તરે યાવાન્ કશ્ચિદુત્કૃષ્ટઃ કાલો લભ્યતે સ એવાન્તરે ચિન્ત્યતે, સ ચાસંખ્યેય એવ । તતઃ પરમેકેન પરિણામેન વસ્તુનોડ-વસ્થાનસ્યૈવ નિષિદ્ધત્વાત્ । इदं च सूत्रस्य विवक्षावैविचित्र्यात् सर्वं पूर्वमुत्तरत्र

શંકા—અન્ય ૨ દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કે સાથ સંબન્ધ હોને પર અનન્ત-કાલ કા ખી અન્તર હો સકતા હૈ, તો ફિર સૂત્રકાર ને “ઉત્ક્રોસેણ અસંલેખજં કાલં” એસા ક્યોં કહા?

ઉત્તર—કાલાનુપૂર્વી કે પ્રકરણ સે કાલ મેં હી યહાં પ્રધાનતા વિ-વક્ષિત હુઈ હૈ, યદિ યહાં પર અન્ય ૨ દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કે સંબન્ધ સે અન્તરકાલ મેં બાહુલ્ય ક્રિયા જાતા હૈ તો યહ બાહુલ્ય ઉસમેં દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કે દ્વારા હી આયા માના જાવેગા તથતો દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કી હી પ્ર-ધાનતા હો જાવેગી કાલ કી નહીં । इसलिये एक ही परिणामान्तर में जिनका कुछ उत्कृष्ट काल लभ्य होता है वही अन्तर में विचारा जाता है और वह इस प्रकार से असंख्यात ही लभ्य होता है । इसके बाद व-स्तु का एक परिणाम रूप से अवस्थित रहना ही निषिद्ध है । यह सब कथन सूत्र की विवक्षा की विचित्रता से आगे पीछे आगम में विरोध न

શંકા—જુદાં જુદાં દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રની સાથે સંબંધ થતો હોય તો અન-તકાળનું પણ અંતર સંભવી શકે છે. છતાં સૂત્રકારે ઉત્કૃષ્ટ અંતર અસંખ્યા-તકાળનું શા કારણે કહ્યું છે ?

ઉત્તર—કાલાનુપૂર્વીનું પ્રકરણ ચાલતું હોવાને કારણે અહીં કાળમાં જ પ્રધાનતા માનીને કથન કરવામાં આવ્યું છે. જો અહીં જુદાં જુદાં દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રના સંબંધને લીધે અંતરકાળમાં બાહુલ્ય માનવામાં આવે, તો તે બાહુલ્ય તેમાં દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રના દ્વારા જ આવેલું માનવું પડશે જો એ પ્રમાણે કર-વામાં આવે તો કાળની પ્રધાનતાને બદલે દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રની જ પ્રધાનતા માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે તેથી એક જ પરિણામાન્તરમાં બેટલો ઉત્ક્ર-ષ્ટકાળ થાય છે, તેને જ ઉત્કૃષ્ટ અંતર રૂપ માનવામાં આવે છે, અને તે ઉત્કૃષ્ટ અંતર ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણે અસંખ્યાતકાળનું જ હોય છે. ત્યાર બાદ (અસંખ્યાત કાળ બાદ) વસ્તુ એક પરિણામ રૂપે અવસ્થિત (મોજૂદ) રહેવાનો જ નિષેધ છે. આ સમસ્ત કથન, સૂત્રની વિવક્ષાની વિચિત્રતાને લીધે, એવી રીતે અહીં લગાડવું જોઈએ કે આગમના આગળપાછળના કથ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૪ અન્તરદ્વારનિકુપણમ્

૫૮૩

વાગમાવિરોધેન ભાવનીયમ્ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ નાસ્ત્યન્તરમ્, લોકસ્ય પ્રતિપદેશે સર્વદા તસ્ય સદ્ભાવાદિતિ । તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામવક્તવ્યક-દ્રવ્યાણામપિ અન્તરવિષયે પૃચ્છા=પ્રશ્નોઽનાનુપૂર્વીવદ્ બોધ્યઃ । ઉત્તરસ્તુ-એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેનૈકં સમયમન્તરમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નાસ્તિ અન્તરમિતિ । અયં ભાવઃ-દ્વિસમયસ્થિતિકં કિંચિદવક્તવ્યકદ્રવ્યં પરિણામાન્તરેણ સમયમેકં સ્થિત્વા તતઃ પુનર્દ્વિસમયસ્થિતિકત્વમેવ યદા લભતે તદા આવે હસ પ્રકાર લગા લેના ચાહિયે । નાનાદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે જો અન્તર નહીં કહા ગયા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ લોક કે પ્રતિ પ્રદેશ મેં સર્વદા ઉસકા સદ્ભાવ રહા કરતા હૈ । (નૈગમવ્યવહારાણં અવત્ત-ઠ્ઠવગદ્વાણં પુચ્છા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે અન્તર કે વિષય મેં પ્રશ્ન-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કી તરહ હી જાનના ચાહિયે ।

ઉત્તર—ઉસકા હસ પ્રકાર સે હૈ—(એગં દ્વં પદ્મુચ્ચ) એક અવક્ત-વ્યક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા કરકે (જહળ્ણેણં) જઘન્ય સે અન્તર (એગં સમયં) એક સમય કા હૈ ઓર (ઉક્ષોસેણં) ઉત્કૃષ્ટ સે અન્તર (અસંખ્યેજ્જં કાલં) અસંખ્યાત કાલ કા હૈ । તથા (જાણાદ્વાઈં પદ્મુચ્ચ જાણિ અંતરં) નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે અન્તર નહીં હૈ । હસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ દો સમય કી સ્થિતિવાલા કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પરિણામાન્તર સે પરિ-

નમાં કોઈ વિરોધ સંભવે નહીં અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતર-વિરહકાળ-નો અભાવ કહેવાનું કારણ એ છે કે લોકના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં તેનો સદા સદ્ભાવ જ રહ્યા કરે છે.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અવત્તવગદ્વાણં પુચ્છા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના અંતરના વિષયમાં પણ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યના જેવો જ પ્રશ્ન સમજવો.

ઉત્તર—(એગં દ્વં પદ્મુચ્ચ) એક અવક્તવ્યક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (જહળ્ણેણં એગં સમયં) જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમયનું, અને (ઉક્ષોસેણં અસંખ્યેજ્જં કાલં) ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત કાળનું અંતર હોય છે. એટલે કે જોઈમાં જોછો એક સમયનો અને વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળનો વિરહકાળ હોય છે. (જાણાદ્વાઈં પદ્મુચ્ચ જાણિ અંતરં) વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો વિરહકાળ રૂપ અંતરનો અભાવ હોય છે.

હવે આ કથનનો ભાવાર્થ બતાવવામાં આવે છે, ધારો કે બે સમયની સ્થિતિવાળું કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પોતાના પરિણામનો ત્યાગ કરીને કોઈ

જઘન્યત એકં સમયમન્તરમ્ । યદા ચ પરિણામાન્તરેણાસંસ્થયેયં કાલં સ્થિત્વા તતઃ
પુનર્દ્વિસમયસ્થિતિકત્વં લભતે તદા ઉત્કર્ષેણ અસંસ્થયેયં કાલમન્તરં ભવતિ ।
અનાનુપૂર્વ્યાં યથાઽઽક્ષેપપરિહારૌ તથાઽત્રાપિ બોધ્યૌ । તથા-નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય
નુ નાસ્તિ અન્તરમ્, લોકે સર્વદા તેષાં સદ્ભાવાત્ । ઇત્યમન્તરદ્વારમુત્ત્વા સમ્પ્રતિ-
ભાગદ્વારં ભાવદ્વારમલ્પવહુત્વદ્વારં ચ વક્તુકામ આહ-‘ભાગ-ભાવ અલ્પાવહું ચેવ’
ઇત્યાદિ । અયં ભાવઃ-અત્રાપિ ભાગદ્વારં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીવદ્ બોધ્યમ્ । ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યાં
યથાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાપેક્ષયાઽસંસ્થયેયૈર્ભૌગૈરધિકાનિ, શેષદ્રવ્યાણિ તદ-
પેક્ષયાઽસંસ્થયેયભાગન્યૂનાનિ તથાઽત્રાપિ બોધ્યમ્ । ઇદમત્ર બોધ્યમ્-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં

ળમિત હુઆ એક સમય તક રહતા હૈ ઓર બાદ મૈં ફિર વહ દો સમય
કી અપની પૂર્વસ્થિતિ કો પ્રાપ્ત કરલેતા હૈ તથ હસ સ્થિતિ મૈં વિરહકાલ
જઘન્યરુપ સે એક સમય કા માના જાતા હૈ ઓર જબ દો સમય કી
સ્થિતિવાલા કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પરિણામાન્તર સે પરિણમિત અસં-
સ્થ્યાત કાલ તક બના રહકર ફિર દો સમય કી અપની પૂર્વસ્થિતિ મૈં
આ જાતા હૈ તથ હસ દશા મૈં વહાં ઉસકા અન્તર અસંસ્થ્યાત કાલ કા
માના જાતા હૈ । અનાનુપૂર્વી મૈં જિસ પ્રકાર સે આક્ષેપ ઓર ઉસકા
પરિહાર કિયા ગયા હૈ ઉસી પ્રકાર સે યહીં પર ભી અક્ષેપ ઓર ઉસકા
પરિહાર ઉસી પદ્ધતિ સે કિયા ગયા જાનના ચાહિયે । તથા નાના અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા જો અન્તર નહીં કહા ગયા હૈ ઉસકા કારણ
યહ હૈ કિ લોક મૈં સર્વદા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કા સદ્ભાવ રહતા હૈ ।
(ભાગ, ભાવ, અલ્પાવહું ચેવ જહાં લેક્ષણપુર્વવીં તહાં ભાણિયવ્વાહં

અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થઈ જાય છે. ત્યાર બાદ તે એક સમય સુધી
એજ દશામાં રહીને ફરી બે સમયની પોતાની પૂર્વસ્થિતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે.
તો એવી પરિસ્થિતિમાં જઘન્ય વિરહકાળ એક સમયનો ગણાય છે. પરંતુ
કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થઈને અસંસ્થ્યાત
કાળ સુધી તે અન્ય પરિણામ રૂપે જ રહીને ત્યાર બાદ બે સમયની પોતાની
પૂર્વસ્થિતિમાં આવી જાય છે, તો એવી પરિસ્થિતિમાં તે અવક્તવ્યક દ્રવ્યનું
ઉત્કૃષ્ટ અંતર અસંસ્થ્યાત કાળનું માનવામાં આવે છે. અનાનુપૂર્વીમાં જે
પ્રકારની શંકા ઉઠાવવામાં આવી છે તે પ્રકારની શંકા અહીં પણ ઉઠાવી
શકાય છે. આ શંકાનું ત્યાં જે પ્રકારે નિવારણ કરવામાં આવ્યું છે એજ
પ્રકારે અહીં પણ નિવારણ કરી શકાય છે,

વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતરનો અભાવ કહેવાનું કારણ એ છે કે
લોકમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનો સદા સદ્ભાવ રહે છે. (ભાગ, ભાવ, અલ્પાવહું

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૪ અન્તરદ્વારનિરૂપણમ્

૫૮૫

હિ એકસમયસ્થિતિલક્ષણમેકં સ્થાનં લભતે, અવક્તવ્યકદ્રવ્યં તુ દ્વિસમયસ્થિતિલક્ષ-
ણમેકં સ્થાનં લભતે । આનુપૂર્વીદ્રવ્યં તુ ત્રિસમયચતુઃસમયપચ્ચસમયસ્થિતિલક્ષણાનિ
સ્થાનાન્યારમ્યાસંખ્યેયસ્થિતિલક્ષણપર્યન્તેષુ સ્થાનેષુ એકં સ્થાનં લભતે । इत्थं
આનુપૂર્વીદ્રવ્યં શેષદ્રવ્યાપેક્ષયાઽસંખ્યેયભાગાધિકમ્ । શેષદ્રવ્યાણિ તદપેક્ષયાઽસં-

જાવ સે તં અણુગમે) ભાગદ્વાર, આવદ્વાર ઓર અલ્પવદ્વાર દ્વાર ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વી કી તરહ યજ્ઞાં પર ખી જાનના ચાહિયે । અર્થાત્ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં જેસે
સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ભાગો સે
અધિક-અસંખ્યાતગુણિત-માને ગયે હૈં ઓર શેષ દ્રવ્ય-અનાનુપૂર્વી એં
અવક્તવ્યક દ્રવ્ય-ફનકી અપેક્ષા અસંખ્યાતભાગવ્યૂન માને હૈં વસી
પ્રકાર યજ્ઞાં પર ખી ભાગદ્વાર કે વિષય મેં કથન જાનના ચાહિયે । યજ્ઞાં
એસા જાનના-અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક સમય કી સ્થિતિરૂપ એક સ્થાન કો
પ્રાપ્ત કરતા હૈં ઓર જો અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં વહ દ્વિસમય કી સ્થિતિ-
રૂપ એક સ્થાન કો પાતા હૈં, તથા જો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈં, વહ ત્રિસમય,
ચાર સમય પાંચ સમય કી સ્થિતિરૂપ સ્થાનોં સે લેકર અસંખ્યાત સમય
તક કી સ્થિતિરૂપ સ્થાનોં મેં એક એક સ્થાન કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં । इस
પ્રકાર આનુપૂર્વી દ્રવ્ય શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ભાગો સે અધિક

એવ જહા સેત્તાણુપુર્વીર તહા માણિયવ્વાઈ જાવ સે તં અણુગમે) ભાગદ્વાર,
આવદ્વાર અને અલ્પવદ્વારનું કથન ક્ષેત્રાનુપૂર્વીની જેમ જ આહીં પણ
સમજવું જોઈએ એટલે કે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં જેવી રીતે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યને
બાકીનાં દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાતગણું કહેવામાં આવ્યું છે, અને બાકીનાં
દ્રવ્યોને (અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને) આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં
અસંખ્યાત ભાગપ્રમાણ કહેવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણે આહીં પણ
ભાગદ્વારના વિષયમાં કથન બહુ થવું જોઈએ આ કથનનું વધુ સ્પષ્ટીકરણ
નીચે પ્રમાણે સમજવું.

અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક સમયની સ્થિતિ રૂપ એક સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે
છે, અને જે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે તે બે સમયની સ્થિતિ રૂપ એક સ્થાનને
પ્રાપ્ત કરે છે, તથા જે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે તે ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિ સમ-
યની સ્થિતિ રૂપ સ્થાનોથી લઈને અસંખ્યાત સમય પર્યન્તની સ્થિતિ રૂપ
સ્થાનોમાંના એક એક સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે. આ પ્રકારે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
બાકીનાં બે દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાતગણું અધિક સંખવી શકે છે અને બાકીના

સ્થેયમાગન્યુનાનીતિ । તથા-ભાવદ્વારે આનુપૂર્વનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકાનાં ત્રયાણામપિ દ્રવ્યાણાં સાદિપારિણામિકભાવવર્તિત્વં પૂર્વવદ્ બોધ્યમ્ । તથા-एषां त्रयाणां द्रव्याणामल्पबहुत्वद्वारमेवं बोध्यम्-अवक्तव्यकद्रव्याणि हि सर्वस्तोकानि, तेषां स्वभावत एव स्तोक्तत्वात् । अनानुपूर्वीद्रव्याणि तु ततो विशेषाधिकानि, अनानुपूर्वीद्रव्याणामवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया विशेषाधिकत्वात् । आनुपूर्वीद्रव्याणि तु उक्तो-
मयद्रव्यापेक्षया असंख्येयभागाधिकानि । असंख्येयभागाधिकत्वं त्वेषाम् उपरि-
भागद्वारे निर्दिष्टं तथैवात्राऽपि बोध्यम् । भागादि विषये क्षेत्रानुपूर्वीवत् सर्वं बोध्यमिति । इत्थं नैगमव्यवहारसम्मतोऽनौपनिधिकी काळानुपूर्वीवत् उपसंहृतेति

લભ્ય હોતા હૈ । ઓર શેષ દો દ્રવ્ય ઉત્તરી અપેક્ષા અસંખ્યાતભાગન્યૂન લભ્ય હોતે હૈ । ભાવદ્વાર મેં આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક યે ત્રીનોં ભી દ્રવ્ય પૂર્વ કે જૈસે સાદિ પારિણામિક ભાવવર્તી હૈ । તથા-
इन तीनों द्रव्यों का अल्पबहुत्वद्वार इस प्रकार से जानना चाहिये-
समस्त अवक्तव्यक द्रव्य स्वभाव से ही कम होने से शेष दो द्रव्यों की अपेक्षा से कम हैं । अनानुपूर्वी द्रव्य अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा से कुछ-विशेष अधिक हैं । तथा जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे इन दोनों द्रव्यों की अपेक्षा असंख्यात गुणा अधिक हैं । असंख्यात भागा-
धिकता जिस प्रकार से ऊपर भागद्वार में प्रकट की गई है उसी प्रकार से यहां पर भी जानना चाहिये । तात्पर्य कहने का यह है कि इन भागादिद्वारों के विषय में सब कथन क्षेत्रानुपूर्वी की तरह ही जानना चाहिये । इस प्रकार (जाव से तं अ.) यावत् यह अनुगम का स्वरूप

બે પ્રકારનાં દ્રવ્યો આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ભાગપ્રમાણ ન્યૂન હોઈ શકે છે.

ભાવદ્વારમાં આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક, આ ત્રણે દ્રવ્યોને આગળ કહ્યા પ્રમાણે સાદિપારિણામિક ભાવવર્તી કહ્યાં છે.

આ ત્રણેના અલ્પબહુત્વદ્વારનું કથન આ પ્રમાણે સમજવું-સમસ્ત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય સ્વાભાવિક રીતે જ ઓછું હોવાને કારણે બાકીનાં અને દ્રવ્યો કરતાં ઓછું છે. અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો વિશેષા-
ધિક છે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત ભાગપ્રમાણ અધિકતાનું સ્પષ્ટીકરણ ઉપર ભાગદ્વારમાં બે પ્રમાણે કરવામાં આવ્યું છે તે પ્રમાણે અહીં પણ સમજાવેલું આ સમસ્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ ભાગાદિ દ્વારોના વિષયમાં સમસ્ત કથન ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના જેવું જ સમજવું (જાવ સે તં અનુગમે) “ આ પ્રકારનું અનુગમનું સ્વરૂપ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૫ અનોપનિધિકીકાલાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૫૮૭

સૂચયિતુમાહ—‘સે તં’ इत्यादि। सैषा नैगमव्यवहारसंमतता अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी ॥सू० १३४॥

અથ સંગ્રહનયમતેન અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી ? સંગહસ્સ અણોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી પંચવિહા પળ્ણસા, તં જહા—અત્થપયપરુવણયા, ભંગસમુક્કિત્તણયા, ભંગોવદંસણયા, સમોચારે, અણુગમે ॥સૂ૦ ૧૩૫॥

છાયા—અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી ? સંગ્રહસ્ય અનોપનિધિકી સમાસ હોતે હી નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીકા યહ પ્રકરણ સમાસ હો રહા હૈ ઇસ બાત કો સૂચિત કરને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (સે તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી) ઇસ પ્રકાર સે યહ નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી હૈ ॥સૂ૦ ૧૩૪॥

અથ સૂત્રકાર સંગ્રહનય કે મન્તવ્યાનુસાર અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં —“સે કિં તં સંગહસ્સ” इत्यादि।

શબ્દાર્થ -- (સે કિં તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી) હે ભદંત । સંગ્રહનયમાન્ય અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર -- (સંગહસ્સ અણોવણિહિયા) સંગ્રહનય માન્ય અનોપનિધિકી (કાલાણુપુઘ્વી) કાલાનુપૂર્વી (પંચવિહા પળ્ણસા) પાંચ પ્રકાર કી

છે.” આ કથન પર્યન્તનું ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાંનું સમસ્ત કથન અહીં પ્રહલ્ય કરવું બેઠબે તેની સમાપ્તિ થતાં જ નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીનું આ પ્રકરણ સમાપ્ત થઈ રહ્યું છે, એ વાતને સૂચિત કરવાને માટે સૂત્રકાર આ પ્રમાણે કહે છે—(સે તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી) “નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીનું ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણેનું સ્વરૂપ છે.” ॥સૂ૦ ૧૩૪॥

હવે સૂત્રકાર સંગ્રહનયના મંતવ્ય અનુસાર અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીનું કથન કરે છે—“સે કિં તં સંગહસ્સ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી ?) હે ભગવન્ ! સંગ્રહનયમાન્ય અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સંગહસ્સ અણોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી પંચવિહા પળ્ણસા) સંગ્રહનય-

૫૮૮

અનુયોગદ્વારચર્યે

પનિધિકી કાલાનુપૂર્વી પચ્ચવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા—અર્થપદપ્રરૂપણતા, મંગ્ગસમુત્કીર્તનતા, મંગ્ગોપદર્શનતા, સમવતારઃ અનુગમઃ ॥સૂ. ૧૩૫॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યાસ્ય પૂર્વવદ્ બોધ્યા ॥સૂ. ૧૩૫॥

અર્થપદપ્રરૂપણતાદીનાં નિરૂપણાયાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં સંગહસ્સ અત્થપયપરૂવણયા ? ઇયાઈ પંચ વિ દારાઈ જહા લેત્તાણુપુવ્વીણ સંગહસ્સ તહા કાલાણુપુવ્વીણ વિ માણિયવ્વાણિ, ણવરં ટિઈ અમિલાવો, જાવ સે તં અણુગમે સે તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા કાલાણુપુવ્વી ॥સૂ. ૧૩૬॥

છાયા—અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા ? એતાનિ પચ્ચાપિ દ્વારાણિ યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યાં સંગ્રહસ્ય તથા કાલાનુપૂર્વ્યાંમપિ મણિત્વયાનિ, નવરં સ્થિત્યમિલાપઃ, યાવત્ સ ઇત્યોઅનુગમઃ । સૈવા સંગ્રહસ્ય અનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી ॥સૂ. ૧૩૬॥

ટીકા—“સે કિં તં” ઇત્યાદિ ।

અથ કા સા સંગ્રહસમ્મતાડર્થપદપ્રરૂપણતા ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—એતાનિ=અર્થપ્રરૂપણતાદીનિ પચ્ચાપિ દ્વારાણિ સંગ્રહમતે ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામેકોત્તરશતતમે સૂત્રે કહી ગઈ છે (તં જહા) જેસે—(અટ્ટપયપ્રરૂવણયા મંગ્ગસમુક્કિત્તણયા, મંગ્ગોવદંસણયા ‘સમોયારે’ અણુગમે) અર્થપદપ્રરૂપણતા, મંગ્ગસમુત્કીર્તનતા, મંગ્ગોપદર્શનતા સમવતાર ઓર અનુગમ ઇસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા પહિલે કી ગઈ વ્યાખ્યા કે અનુસાર હી જાનની વાહિયે ॥સૂ. ૧૩૫॥

“સે કિં તં સંગહસ્સ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગહસ્સ અટ્ટપયપ્રરૂવણયા) હે ભદંત ! સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદ પ્રરૂપણતા કયા છે ? (ઇયાઈ પંચ વિ દારાઈ જહા લેત્તાણુપુવ્વીણ સંગહસ્સ તહા કાલાણુપુવ્વીણ વિ માણિયવ્વાણિ)

સંમત અનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. “તં જહા” તે પાંચ પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(અટ્ટપયપ્રરૂવણયા મંગ્ગસમુક્કિત્તણયા, મંગ્ગોવદંસણયા, સમોયારે, અણુગમે) (૧) અર્થપદ પ્રરૂપણતા, (૨) મંગ્ગસમુત્કીર્તનતા, (૩) મંગ્ગોપદર્શનતા, (૪) સમવતાર અને (૫) અનુગમ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા પહેલાં કહા પ્રમાણે સમજવી ॥સૂ. ૧૩૫॥

“સે કિં તં સંગહસ્સ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગહસ્સ અટ્ટપયપ્રરૂવણયા) હે ભગવન્ ! સંગ્રહનયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઇયાઈ પંચ વિ દારાઈ જહા લેત્તાણુપુવ્વીણ સંગહસ્સ તહા કાલાણુપુવ્વીણ વિ માણિયવ્વાણિ) સંગ્રહનયસંમત ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં આ પાંચે દારાણું

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૬ અર્થપદ્ધત્તરૂપણાદીનાં નિરૂપણમ્

૫૮૯

યથા સન્તિ તથા કાલાનુપૂર્વ્યમપિ સંગ્રહમતે મણિતવ્યાનિ । નવરં=વિશેષસ્ત્વયમેવ-
યદ્વચ્ચ સ્થિત્યમિલાપઃ કર્તવ્યઃ । અયં ભાવઃ-ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યો “તિષ્પસોગાદે આણુ-
પુઞ્વી, ચડસ્પસોગાદે આણુપુઞ્વી” इत्याद्युक्तम्, एवमिह-“निममयद्विह
आणुपुञ्जी, चउसमयद्विह आणुपुञ्जी” इत्यादि वक्तव्यमिति । ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યત્
કિયદ્વચિવક્તવ્યમ્? इत्याह-“जाव से तं” इति । यावत्स एवोऽनुगम इति
पर्यन्तं ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યવદેવ વક્તવ્યમિતિ । પ્રકૃતસુપસંહરન્નાહ-‘સે તં સંગહસ્સ’
इत्यादि । સૈવા સંગ્રહનયસમ્પતા અનોપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીતિ ॥મુ० ૧૩૬॥

ઉત્તર--સંગ્રહનય માન્ય હન પાંચો દ્વારોં કા કથન જિસ પ્રકાર કા
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં મેં કિયા ગયા હૈ ઉસી પ્રકાર કા કથન સંગ્રહનયસંમત હન
પાંચો દ્વારોં કા હસ કાલાનુપૂર્વીં મેં બી જાનનાં ચાહિયે । (જવરં ટિઈ
અમિલાબો જાવ સે તં અણુગમે) પરન્તુ વિશેષતા કેવલ હતની હૈ કિ
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં મેં “અપ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વીં ચતુષ્પ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વીં”
હસ પ્રકાર સે ભંગોં કા આલાપ કરને મેં આયા હૈ તથ યહાં પર ” તિ
સમયદ્વિહ આણુપુઞ્વી ચડસમયદ્વિહ આણુપુઞ્વી ” इत्यादि પ્રકાર સે
ભંગોં કા આલાપ કરનાં ચાહિયે । ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં કીં તરહ હન આનુપૂર્વીં
આદિ ભંગોં કા સંગ્રહ કહાં તક કરનાં ચાહિયે હસકે લિયે સૂત્રકાર ક-
હતે હૈં કિ “સે તં અણુગમે” હસ પ્રકાર યહ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં સંવન્ધી અનુ-
ગમ કા સ્વરૂપ હૈ ” યહાં તક સંગ્રહ કરનાં ચાહિયે । (સેતં સંગહસ્સ અ-
જોવણિહિયા કાલાનુપુઞ્વી) હસ પ્રકાર યહ સંગ્રહનય સંમત અનોપ-
નિધિકી કાલાનુપૂર્વીં હૈ ।

જેવું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન સંગ્રહનયસંમત આ કાલા-
નુપૂર્વીના પાંચે દ્વારોના વિષયમાં પણ સમજી લેવું. (જવરં ટિઈ અમિલાબો
જાવ સે તં અણુગમે) પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના કથન કરતાં આ કથનમાં નીચે
પ્રમાણે વિશિષ્ટતા રહેલી છે-ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં “ અપ્રદેશાવગાઠ
આનુપૂર્વી, ચતુષ્પ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી, ” (આ પ્રકારે બંનેનું કથન કરવામાં
આવ્યું છે, ત્યારે સંગ્રહનયસંમત કાલાનુપૂર્વીમાં “ તિસમયદ્વિહ આણુપુઞ્વી,
ચડસમયદ્વિહ આણુપુઞ્વી, ” इत्यादि પ્રકારે બંનેનું કથન કરવું જોઈએ
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રકરણગત પાઠનું કથન, “ સે તં અણુગમે ” “ આ પ્રકારનું
અનુગમનું સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રપાઠ પર્યન્ત કરવું જોઈએ. (સે તં સંગહસ્સ
અજોવણિહિયા કાલાનુપુઞ્વી) આ પ્રકારનું સંગ્રહનયસંમત અનોપનિધિકી
કાલાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

અથ ઔપનિષિકીં કાલાનુર્વીં પ્રરૂપયિતુમાદ-

મૂષ્મ-સે કિં તં ઓવણિહિયા કાલાણુપુર્વી ? ઓવણિહિયા કાલાણુપુર્વી તિવિહા પળગત્તા, તં જહા-પુઘાણુપુર્વી પચ્છાણુપુર્વી અણાણુપુર્વી । સે કિં તં પુઘાણુપુર્વી ? પુઘાણુપુર્વી સમણ, આવ-લિયા, આણ, પાણૂ, થોવે, લવે, મુહુત્તે, અહોરત્તે, પક્ષ્વે, માસે, ઉઝ, અયણે, સંવચ્છરે, જુગે, વાસસણ, વાસસહસ્સે, વાસસય-સહસ્સે, પુઠ્ઠંગે, પુઠ્ઠવે, તુડિયંગે, તુડિણ, અડઢંગે, અડઢે, અવ-વંગે, અવવે, હુહુઅંગે, હુહુણ, ઉપ્પલંગે, ઉપ્પલે, પડમંગે, પડમે, ણલિણંગે, ણલિણે, અત્થનિઝરંગે, અત્થનિઝરે, અડઅંગે, અડણ, નડઅંગે, નડણ, પડઅંગે, પડણ, ચૂલિઅંગે, ચૂલિયા, સીસપહેલિ-અંગે, સીસપહેલિયા, પલિઓવમે, સાગરોવમે, ઓસ્સણ્ણિ, અવ-વંગે, અવવે, હુહુઅંગે, હુહુણ, ઉપ્પલંગે, ઉપ્પલે, પડમંગે, પડમે, ણલિણંગે, ણલિણે, અત્થનિઝરંગે, અત્થનિઝરે, અડઅંગે, અડણ, નડઅંગે, નડણ, પડઅંગે, પડણ, ચૂલિઅંગે, ચૂલિયા, સીસપહેલિ-અંગે, સીસપહેલિયા, પલિઓવમે, સાગરોવમે, ઓસ્સણ્ણિ,

માવાર્થ-- સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સંગ્રહનય માન્ય અનૌપનિ-વિકી કાલાનુર્વીં કે અર્થપદપ્રરૂપણતા આદિ પાંચ દ્વારોં કે સ્વરૂપ કથન કે વિષય મેં યહ સમજાયા હૈ કિં હન પાંચ દ્વારોં કે સ્વરૂપ કા કથન ક્ષેત્રાનુર્વીં મેં સંગ્રહનય કી માન્યતા કે પ્રકરણ મેં જિસ પ્રકાર સે કિયા ગયા હૈ વૈસા હી સ્વરૂપ કથન હનકા હસ કાલાનુર્વીં મેં હસ પ્રકરણ મેં જાનનાં ચાહિયે । પરન્તુ હસ પ્રકરણ મેં પ્રદેશોં કો લેકર આનુર્વીં આદિ ભંગોં કા સ્વરૂપ કથન કરને મેં આયા હૈ-તથા કિં યહાં પર સમયોં કો લેકર આનુર્વીં આદિ ભંગોં કા સ્વરૂપ દિશાયા ગયા હૈ । સૂ. ૧૩૬ ।

ભાવ.ર્થ--સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિષિકી કાલાનુર્વીંના અર્થપદ પ્રરૂપણતા આદિ પાંચ દ્વારોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે-સંગ્રહનયસંમત ક્ષેત્રાનુર્વીંના પ્રકરણમાં આ પાંચ દ્વારો વિષે જેવું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અહીં પણ ગ્રહણ કરવાનું કહ્યું છે. તે પ્રકરણના કથન કરતાં આ પ્રકરણના કથનમાં એટલી જ વિશેષતા છે કે તે પ્રકરણમાં પ્રદેશોની અપેક્ષાએ ભંગોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, પરન્તુ અહીં સમયોની અપેક્ષાએ આનુર્વીં આદિ દ્રવ્યોના ભંગોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું. । સૂ. ૧૩૬ ।

अनुयोगधम्मिका टीका सूत्र १३७ औपनिधिक्कीकालानुपूर्वीनिरूपणम्

५९१

उत्सर्पिणी, पोग्गलपरियट्टे, अईयद्धा, अणागयद्धा, सब्बद्धा ।
 से किं तं पच्छाणुपुव्वी? पच्छाणुपुव्वी-सब्बद्धा अणागयद्धा जाव
 समए । से तं पच्छाणुपुव्वी । से किं तं अणाणुपुव्वी ? अणाणु-
 पुव्वी-एयाए चेव एगाइयाए इगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए
 सेढीए अणमण्णब्भासो दुरुवूणो । से तं अणाणुपुव्वी । अहवा
 ओवणिहिया कालाणुपुव्वी तिविहा पणत्ता, तं जहा-पुव्वाणु-
 पुव्वी, पच्छाणुपुव्वी, अणाणुपुव्वी । से किं तं पुव्वाणुपुव्वी ?
 पुव्वाणुपुव्वी-एगसमयट्ठिइए, दुसमयट्ठिइए, तिसमयट्ठिइए
 जाव दससमयट्ठिइए संखिज्जसमयट्ठिइए असंखिज्जसमयट्ठिइए
 से तं पुव्वाणुपुव्वी । से किं तं पच्छाणुपुव्वी ? पच्छाणुपुव्वी-
 असंखिज्जसमयट्ठिइए जाव एगसमयट्ठिइए । से तं पच्छाणुपुव्वी ।
 से किं तं अणाणुपुव्वी ? अणाणुपुव्वी-एयाए चेव एगाइयाए
 एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो
 दुरुवूणो, से तं अणाणुपुव्वी । से तं ओवणिहिया कालाणुपुव्वी ।
 से तं कालाणुपुव्वी ॥सू० १३७॥

छाया—अथ का सा औपनिधिक्की कालानुपूर्वी ? औपनिधिक्की कालानुपूर्वी
 त्रिविधा मज्झन्ता, तद्यथा—पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी अनानुपूर्वी । अथ का सा पूर्वानु-
 पूर्वी ? पूर्वानुपूर्वी—समयः आवल्लिका आनः प्राणः स्तोकः लवः सुहृत्तः अहोरात्रः पक्षः
 मासः ऋतुः अयनं संवत्सरः युगं वर्षशतं वर्षसहस्रं वर्षशतसहस्रं पूर्वार्द्धं पूर्वं श्रुतिताङ्गं
 श्रुतितम् अट्टाङ्गम् अट्टम् अववाङ्गम् अववम् हुहुकाङ्गं हुहुकम् उत्पलाङ्गम् उत्पलं
 पषाङ्गं पषं, नल्लिनाङ्गं नल्लिनम् अर्थनिपूराङ्गम् अर्थनिपूरम् अयुताङ्गम् अयुतं नयुताङ्गं
 नयुतं मयुताङ्गं मयुतं चूलिकाङ्गं चूलिका शीर्षमहेलिकाङ्गं शीर्षप्रहेलिका परशोपमं
 सागरोपमम् अवसर्पिणी उत्सर्पिणी पुद्गलपरिवर्तः अधीताद्धा अनागताद्धा सर्वाद्धा ।
 तेषां पूर्वानुपूर्वी । अथ का सा पश्चानुपूर्वी ? पश्चानुपूर्वी—सर्वाद्धा अनागताद्धा

યાવત્ સમયઃ । સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી-એતસ્યા-મેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયામનન્તગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોઽન્યાભ્યાસો દ્વિરુપોનઃ । સૈષાઽનાનુપૂર્વી । અથવા-ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી ત્રિવિધા મજ્ઞમા, તથા-પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-એકસમયસ્થિતિકો દ્વિસમયસ્થિતિકઃ ત્રિસમયસ્થિતિકો યાવદ્ દશસમયસ્થિતિકઃ સંસ્ખેયસમયસ્થિતિકઃ અસંસ્ખેયસમયસ્થિતિકઃ । સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી ? પશ્ચાનુપૂર્વી-અસંસ્ખેયસમયસ્થિતિકો યાવત્ એકસમયસ્થિતિકઃ । સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયામસંસ્ખેયગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોઽન્યાભ્યાસો દ્વિરુપોનઃ । સૈષા અનાનુપૂર્વી । સૈષા ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી । સૈષા કાલાનુપૂર્વી ॥મૂ० ૧૩૭॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

અથ કા સા ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી ? इति मञ्जः । उत्तरयति-औपनिधिकी कालानुपूर्वी पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वनानुपूर्वीभेदेन त्रिविधा मज्जमा । तत्र पूर्वानुपूर्वी-समयः=वक्ष्यमाणस्वरूपः सर्वसुक्ष्मः कालांशः एष हि सर्वममाणानां प्रभव-

અથ સૂત્રકાર ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી કી પ્રરુપણા કરતે હૈં-

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ — (સે કિં તં ઓવણિહિયા કાલાનુપુર્વી ?) હે ભદન્ત । ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર-- (ઓવણિહિયા કાલાનુપુર્વી) ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી (ત્રિવિદ્યા પળ્લગ્તા) ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ (તં જહા) વે પ્રકાર વે હૈ (પુર્વાણુપુર્વી, પચ્છાણુપુર્વી, અણાણુપુર્વી) ? પૂર્વાનુપૂર્વી ૨ પશ્ચાનુપૂર્વી ૩ અનાનુપૂર્વી । (સે કિં તં પુર્વાણુપુર્વી) હે ભદન્ત । પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર--“સમય, આવલિયા, આણ, પાણુ, થોવે, લવે, મુહુસે, અહો-

હવે સૂત્રકાર ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીની પ્રશ્નના કર છે-

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” इत्यादि—

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં ઓવણિહિયા કાલાનુપુર્વી ?) હે ભગવન્ । ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(ઓવણિહિયા કાલાનુપુર્વી) ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીના (ત્રિવિદ્યા પળ્લગ્તા, તંજહા) નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કલા છે--(પુર્વાણુપુર્વી, પચ્છાણુપુર્વી, અણાણુપુર્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી, અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન--(સે કિં તં પુર્વાણુપુર્વી) હે ભગવન્ । પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(સમય, આવલિયા, આણ, પાણુ, થોવે, લવે, મુહુસે, અહોરસે,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૭ ઔપનિથિકીકાલાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્ ૫૧

રસે, પક્ષે, માસે, રુઝ, અયણે", સમય આવલિકા, આન, પ્રાણ, સ્તોક લવ, હુહૂત્ત, અહોરાત્ર, પક્ષ, માસ, ઋતુ, અયન (સંવચ્છરે) સંવત્સર (જુગે) યુગ, (વાસસર્) વર્ષશત (વાસસહસ્ત્રે) વર્ષ સહસ્ત્ર, (વાસસયસહસ્ત્રે) વર્ષશતસહસ્ત્ર, (પુઞ્વંગે) પૂર્વાઙ્ગ (પુઞ્વે) પૂર્વ (તુઙિયંગે) ત્રુટિતાંગ (તુઙિય) ત્રુટિત, (અઙ્ગે) અટટાઙ્ગ (અઙ્ગે) અટટ (અવવંગે) અવવાઙ્ગ (અવવે) અવવ (હુહુઅંગે) હુહુકાઙ્ગ (હુહુય) હુહુક (ઉપ્પલંગે) ઉત્પલાઙ્ગ (ઉપ્પલે) ઉત્પલ (પડમંગે) પદ્માઙ્ગ (પડમે) પદ્મ (ળલિંગે) નલિનાઙ્ગ (ળલિયે) નલિન (અત્થનિઝાંગે) અર્થ નિપૂરાઙ્ગ (અત્થનિઝરે) અર્થ નિપૂર (અઙ્ગે) અયુતાઙ્ગ (અઙ્ગે) અયુત (નઙ્ગે) નયુતાઙ્ગ (નઙ્ગે) નયુત (પડમંગે) પ્રયુતાઙ્ગ (પડમે) પ્રયુત (ચૂલિંગે) ચૂલિકાઙ્ગ (ચૂલિયા) ચૂલિકા (સીસપહેલિઅંગે) શીર્ષપહેલિકાઙ્ગ (સીસપહેલિયા) શીર્ષપહેલિકા (પલિઓષમે) પલ્યોપમ (સાગરોવમે) સાગરોપમ (ઓસપ્પિણી) અવસર્પિણી (ઉત્સપ્પિણી) ઉત્સર્પિણી (પોગલપરિયટ્ટે) પુદ્ગલપરિવર્ત (અઈયદ્ધા) અતીતાદ્ધા (અજાગયદ્ધા) અનાગતાદ્ધા (સન્નદ્ધા) સર્વાદ્ધા । યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । સમય કા સ્વરૂપ આગે સ્વયં સૂત્રકાર કહેંગે । યહ કાલ કા સઘ સે સૂક્ષ્મ અંશ હૈ । ઇસસે હી સમસ્ત પ્રમાણોં કી આવલિકા આદિકોં કી - ૭-

પક્ષે, માસે, રુઝ, અયણે, સમય, આવલિયા, આન, પ્રાણ, સ્તોક, લવ, હુહૂત્ત, અહોરાત્ર, પક્ષ, માસ, ઋતુ, અયન, (સંવચ્છરે, જુગે) સંવત્સર, યુગ, (વાસસર્) વર્ષશત, (વાસસહસ્ત્રે) વર્ષસહસ્ત્ર, (વાસસયસહસ્ત્રે) વર્ષશતસહસ્ત્ર (લાખવર્ષ) (પુઞ્વંગે, પુઞ્વે) પૂર્વાંગ, પૂર્વ (તુઙિયંગે, તુઙિય) ત્રુટિતાંગ, ત્રુટિત, (અઙ્ગે, અઙ્ગે) અટટાંગ, અટટ, (અવવંગે, અવવે) અવવાંગ, અવવ, (હુહુઅંગે, હુહુય) હુહુકાંગ, હુહુક, (ઉપ્પલંગે, ઉપ્પલે) ઉત્પલાંગ, ઉત્પલ (પડમંગે, પડમે) પદ્માંગ, પદ્મ, (ળલિંગે, ળલિયે) નલિનાંગ, નલિન, (અત્થનિઝાંગે) અર્થનિપૂરાંગ, (અત્થનિઝરે) અર્થનિપૂર, (અઙ્ગે) અયુતાંગ, (અઙ્ગે) અયુત, (નઙ્ગે, નઙ્ગે) નયુતાંગ, નયુત, (પડમંગે) પ્રયુતાંગ, (પડમે) પ્રયુત, (ચૂલિઅંગે) ચૂલિકાંગ, (ચૂલિયા) ચૂલિકા, (સીસપહેલિઅંગે) શીર્ષપહેલિકાંગ, (સીસપહેલિયા) શીર્ષપહેલિકા, (પલિઓષમે) પલ્યોપમ, (સાગરોવમે) સાગરોપમ, (ઓસપ્પિણી) અવસર્પિણી, (ઉત્સપ્પિણી) ઉત્સર્પિણી, (પોગલપરિયટ્ટે) પુદ્ગલપરિવર્ત, (અઈયદ્ધા) અતીતાદ્ધા, (અજાગયદ્ધા) અનાગતાદ્ધા, (સન્નદ્ધા) સર્વાદ્ધા, આ કમે પદોને ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. કાળના સૌથી સૂક્ષ્મ અંશનું નામ 'સમય' છે. સૂત્રકાર ચોતે જ તેનું સ્વરૂપ આગળ સમજાવવાના છે. તે સમયને આધારે જ આવલિકા આદિ કાળપ્રમાણોની

ત્વાત્ મથમં નિર્દિષ્ટઃ, આંવલિકા इयं हि असंख्येयैः समपैर्निष्पद्यते । आन=एक
 उच्छ्वासः संख्येयाऽऽवलिकारूपः, उपलक्षणात्संख्येयावलिकारूपो निःश्वासोऽपि-
 ग्राह्यः । माणः=संख्येयावलिकारूपयोरुच्छ्वासनिःश्वासयोः कालः, स्तोकाः=सप्त-
 माणात्मकः, लवः=सप्तस्तोकात्मकः, मुहूर्तः=सप्तसप्ततिलवात्मकः, अहोरात्रः=
 त्रिंशन्मुहूर्तात्मकः, पक्षः=पञ्चदशाहोरात्ररूपः, मासः=पक्षद्वयरूपः, ऋतुः=मास-
 द्वयरूपः, अयनम्=ऋतुत्रयात्मकम्, संवत्सरः=अयनद्वयात्मकः, युगं=पञ्चवर्षात्म-
 कम्, वर्षशतं=त्रिंशत्तियुगात्मकम्, वर्षसहस्रम्, वर्षशतसहस्रम्-शतगुणितं सहस्रं-
 शतसहस्रं-वर्षाणां शतसहस्रं वर्षशतसहस्रं-लक्षवर्षाणि, पूर्वाङ्गम्=चतुरशीतिलक्ष-
 त्पत्ति होती है इसलियે સૂત્રકાર ને સર્વ પ્રથમ હસકા ઉપન્યાસ કિયા હૈ ।
 અસંખ્યાન સમયોં કોં એક આવલિકા હોતી હૈ । સંખ્યાન આવલિકાઓં
 કા એક ઉચ્છ્વાસ હોતા હૈ । હસી પ્રકાર સંખ્યાત આવલિકા રૂપ એક
 નિશ્વાસ હોતા હૈ । સંખ્યાત આવલિકા રૂપ જો ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસ
 કા કાલ હૈ વહી પ્રાણ હૈ સાત પ્રાણોં કા એક સ્તોક હોતા હૈ । સાત સ્તો-
 કોં કા એક લવ હોતા હૈ । સત્તહત્તરલવોં કા એક મુહૂર્ત્ત હોતા હૈ । તી-
 સ મુહૂર્ત્તોં કા એક અહોરાત્ર હોતા હૈ । ૧૫ અહોરાત્ર કા એક પક્ષ હો-
 તા હૈ । દો પક્ષોં કા એક માસ હોતા હૈ । દો મહીનોં કી એક ઋતુ હોતી
 હૈ । ત્રીન ઋતુઓં કા એક અયન હોતા હૈ । દો અયનોં કા એક સંવત્સર
 હોતા હૈ । પાંચ વર્ષ કા એક યુગ હોતા હૈ । બીસ યુગોં કા એક સૌ વર્ષ
 હોતા હૈ । દશસૌ વર્ષોં કા એક વર્ષસહસ્ર હોતા હૈ । સૌ હજાર વર્ષોં કા
 એક લાખ વર્ષ હોતા હૈ । ચૌરાસી લાખ વર્ષોં કા ૧ પૂર્વાંગ હોતા હૈ ।

ગણતરી કરી શકાય છે, તેથી જ સૂત્રકારે સૌથી પહેલાં સમયનો ઉપન્યાસ
 કર્યો છે. અસંખ્યાત સમયોની એક આવલિકા થાય છે. સંખ્યાત આવલિ-
 કાઓનો એક નિઃશ્વાસ (નિઃશ્વાસ પ્રમાણ કાળ) થાય છે. સંખ્યાત આવલિ-
 કાઓ ૩૫ જે ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસનો કાળ છે. તેનું નામ જ પ્રાણ છે. સાત
 પ્રાણોનો એક સ્તોક થાય છે સાત સ્તોકનો એક લવ થાય છે. ૭૭ લવનું
 એક મુહૂર્ત્ત થાય છે. ૩૦ મુહૂર્ત્તનું એક અહોરાત્ર (દિનરાત્રિ) થાય છે ૧૫
 અહોરાત્રનું એક પક્ષ (પખવાડિયું) થાય છે. જે પક્ષોનો એક માસ થાય
 છે. જે માસની એક ઋતુ થાય છે. ત્રણ ઋતુનું એક અયન થાય છે. જે
 અયનનું એક સંવત્સર (વર્ષ) થાય છે પાંચ સંવત્સરનો એક યુગ થાય છે.
 બીસ યુગના શતવર્ષ થાય છે હસ સૌ વર્ષપ્રમાણ કાળને વર્ષસહસ્ર કહે છે.
 સૌ હજાર (લાખ) વર્ષપ્રમાણ કાળને લાખવર્ષ કહે છે ૮૪ લાખ વર્ષોનું એક

અનુયોગચંદ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૨૭ ઔપનિધિકીકાલાનુપૂર્વનિરૂપણમ્ ૫૨૫

વર્ષાત્મકમ્, પૂર્વમ્=ચતુરશીત્યા લક્ષ્યેર્ગુણિતે ચતુરશીતિકથાત્મકેઽક્ષે યાવતી સંખ્યા-
લભ્યતે સત્પમાણમ્, સા સંખ્યાચ-સત્પતિકોટિલક્ષ્યાણિ પદ્મશ્ચાશ્ચ કોટિસદસાણિ
(૭૦૫૬૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦) વર્ષાણામ્ । ઉક્તંચ—

“પુત્રસ્સ ૩ પરિમાણં, સયરી સ્વલ્લ હુંતિ કોટિલક્ષ્યાઽઽ ।

છપ્પણં ચ સદસસા, બોદ્ધવ્યા વાસકોટીણં ॥”

છાયા—પૂર્વસ્ય તુ પરિમાણં સમ્પતિઃ સ્વલ્લ ભવન્તિ કોટિલક્ષ્યાઃ ।

પદ્મશ્ચાશ્ચ સદસાણિ બોદ્ધવ્યા વર્ષકોટીનામ્ ॥ઈતિ॥

इदमपि चतुरशीत्यालक्षैर्गुणितं त्रुटिताङ्गं भवति । त्रुटिताङ्गं हि चतुरशीत्यालक्षै-
र्गुणितं सदेकं त्रुटितं भवति । त्रुटितं च चतुरशीत्यालक्षैर्गुणितं सदेकम् अट्टाङ्गं
भवति । चतुरशीत्यालक्षैर्गुणितं च अट्टाङ्गमेकमट्टं भवति । एवमेव इतः प्रभृति

ચૌરાસી લાખપૂર્વાઙ્ગ કા? પૂર્વ હોતા હૈ । હસમે વર્ષોં કા સંખ્યા ૭૦૫૬૦૦૦,
૦૦૦,૦૦૦૦ હતની આતી હૈ । યહી બાત “પુત્રસ્સ ૩ પરિમાણ” ઇત્યાદિ
ગાથા દ્વારા પ્રકટ કી હૈ । હન વર્ષોં મેં ૮૪ લાખ કા ગુણા કરને પર જો
સંખ્યા આતી હૈ વહ ત્રુટિતાઙ્ગ કા પરિમાણ હૈ । ત્રુટિતાઙ્ગ પરિમાણ મેં
ચૌરાસીલાખ કા ગુણા કરને પર એક ત્રુટિત હોતા હૈ । એક ત્રુટિત કો
૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ અટ્ટાઙ્ગ હોતા હૈ । એક અટ્ટાઙ્ગ કો ચૌરા-
સી લાખ સે ગુણા કરને પર એક અટ્ટ હોતા હૈ । ૧ અટ્ટ પ્રમાણ મેં
ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ એક અવવાઙ્ગ હોતા હૈ । ૧ અવવાઙ્ગ
મેં ૮૪ લાખ કા ગુણા કરને પર એક અવવ હોતા હૈ । હસી પ્રકાર આગેર
શીર્ષપ્રહેલિકા તક કે પ્રમાણોં મેં એસે હી કરતે ચલે જોના ચાહિયે ।
અર્થાત્ ૧ અવવ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ હુલુકાઙ્ગ, ૧ હુ-
લુકાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ હુલુક, ૧ હુલુક મેં ચૌરાસી

પૂર્વાઙ્ગ થાય છે, અને ૮૪ લાખ પૂર્વાઙ્ગનું એક પૂર્વ થાય છે. એક પૂર્વના
૭૦૫૬૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦ વર્ષ થાય છે. એજ વાત સૂત્રકારે “પુત્રસ્સ ૩
પરિમાણ” ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ૮૪ લાખ પૂર્વનું એક
ત્રુટિતાઙ્ગ થાય છે એટલે કે ૭૦૫૬૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦ વર્ષને ૮૪ લાખ વડે
ગુણવાથી જેટલાં વર્ષ આવે છે, તેટલાં વર્ષપ્રમાણ કાળને એક ત્રુટિતાઙ્ગ કહે
છે ૮૪ લાખ ત્રુટિતાઙ્ગનું એક ત્રુટિત થાય છે. ૮૪ લાખ ત્રુટિતાઙ્ગનું એક
અટ્ટાઙ્ગ થાય છે. ૮૪ લાખ અટ્ટાઙ્ગનું એક અવવાઙ્ગ થાય છે. ૮૪ લાખ
અવવાઙ્ગનું એક અવવ થાય છે. એક અવવના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી
એક હુલુકાઙ્ગપ્રમાણ કાળ બને છે. ૮૪ લાખ હુલુકાઙ્ગનું એક હુલુક બને છે

પૂર્વે પૂર્વે ચતુરશીત્યાલક્ષેશ્વતુરશીત્યાલક્ષેશ્વ ગુણિતમ્ ઉત્તરોત્તરમેકૈકકાલપ્રમાણં યાત્રત્
શીર્ષપ્રહેલિકાન્તં બોધ્યમ્ । શીર્ષપ્રહેલિકાયાઃ સ્વરૂપમદ્ભૂત એવં બોધ્યમ્-૭૫,૮૨-

લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ ઉત્પલાઙ્ગ એક ઉત્પલાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે
ગુણા કરને પર એક ઉત્પલ, ૧ ઉત્પલ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧-
પદ્માઙ્ગ, ૧ પદ્માઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર એક પદ્મ એક પ-
દ્મ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ નલિનાઙ્ગ, ૧ નલિનાઙ્ગ મેં ચૌરાસી
લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ નલિન ૧ નલિન મેં ૮૪ સે ગુણા કરને પર
૧ અર્થનિપૂરાઙ્ગ એક અર્થનિપૂરાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર
૧ અર્થનિપૂર ૧ અર્થનિપૂર મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર એક અયુતાંગ
૧ અયુતાંગ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ અયુત, ૧ અયુત મેં ૮૪
લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ નયુતાંગ ૧ નયુતાઙ્ગ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા ક-
રને પર ૧ નયુત ૧ નયુત મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ પ્રયુતાઙ્ગ ૧-
૧ પ્રયુતાઙ્ગ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ પ્રયુત, ૧ પ્રયુત મેં ૮૪ લાખ સે
ગુણા કરને પર એક ચૂલિકાઙ્ગ, ૧ ચૂલિકાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા
કરને પર ચૂલિકા એક એક ચૂલિકા મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ શીર્ષ
પ્રહેલિકાઙ્ગ ઓર એક શીર્ષ પ્રહેલિકાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને
પર ૧ શીર્ષપ્રહેલિકા કા પ્રમાણ હોતો હૈ । હસ શીર્ષપ્રહેલિકા કે અંકો

હુહુકને ૮૪ લાખ વડે ગુણવાથી એક ઉત્પલાંગ થાય છે. ૮૪ લાખ ઉત્પલાં-
ગોના એક ઉત્પલ કાળ થાય છે ૮૪ લાખ ઉત્પલનું એક પદ્માંગ થાય છે
અને ૮૪ લાખ પદ્માંગોનું એક પદ્મ થાય છે. તેના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી
એક નલિનાંગ થાય છે. એક નલિનાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક
નલિન આવે છે. નલિનના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અર્થનિપૂરાંગ આવે
છે એક અર્થનિપૂરાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અર્થનિપૂર આવે છે.
એક અર્થનિપૂરના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અયુતાંગ, એક અયુતાંગના
૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અયુત, એક અયુતના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી
એક નયુતાંગ, એક નયુતાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક નયુત, એક
નયુતના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક પ્રયુતાંગ, એક પ્રયુતાંગના ૮૪ લાખ ગણાં
કરવાથી એક પ્રયુત, એક પ્રયુતના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક ચૂલિકાંગ,
એક ચૂલિકાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક ચૂલિકા, એક ચૂલિકાના
૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક શીર્ષપ્રહેલિકાંગ અને એક શીર્ષપ્રહેલિકાંગના
૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક શીર્ષપ્રહેલિકા નામના કાળનું પ્રમાણ આવે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૭ ઔપનિધિકીકાલાનુપૂર્વીનિરૂપણમ ૫૯૭

૧૩, ૨૫, ૩૦, ૭૩૦, ૧૦, ૨૪, ૧૧, ૫૭, ૧૭, ૩૫, ૬૧, ૧૭, ૫૬, ૧૬, ૪૦, ૬૨, ૧૮, ૧૬, ૬૮, ૪૮૦, ૮૦૧૮, ૩૨, ૧૬, એતદગ્રે ચત્વારિંશદુત્તરૈકશતસંખ્યકાનિ શૂન્યાનિ (૧૪૦) નિક્ષેપ્તવ્યાનિ । તદેવં શીર્ષપ્રહેલિકાયાં ચતુર્નવત્યધિકશતસંખ્યકાનિ અક્લ્પસ્થાનાનિ ભવન્તિ । અનેન પૂર્વોક્તેન કાલમાનેન કેષાંચિદ્ રત્નપ્રમાનારકાણાં ભવનપતિવ્યવસ્થાપણાં સુપમદુષ્પમારકસમ્ભવિનાં નરતિરથાં ચ યથાસંભવમાયુષો માનં ભવતિ । એતસ્માચ્ચ પરતોઽપિ સંખ્યેયઃ કાલોઽસ્તિ, કિન્તુ તસ્ય અતિશય-જ્ઞાનવર્જિતાનાં છદ્મસ્થાનામસંઘવહાર્યત્વાત્, સર્ષપાદ્યુપમયાઽત્ર વક્ષ્યમાણત્વાચ્ચ નેહોક્તઃ । કિં તર્હિ? ઉપમામાત્રપ્રતિપાદ્યાનિ પલ્યોપમાદીન્યેવ । તત્ર પલ્યોપમસા-

કા પ્રમાણ ૭૫૮૨૬૩૨૫૩૦૭૩૦૧૦૨૪૧૧, ૫૭૯૭૩૫૬૯, ૧૭૫૬૯૬૪-૦૬૨૧૮૯૬૮૪૮૦૮૦૧૮૩૨૯૬, ઔર इसके ૧૪૦ શૂન્ય રાखने से इतना होता है । इस समस्त अंको की संख्या का योग १९४ अंक प्रमाण होता है । इस पूर्वोक्त काल प्रमाण से कितनेक रत्नप्रमाणत नारकों की तथा भवनपति, व्यन्तर देवों की और सुपमदुष्पमारक में उत्पन्न हुए मनुष्य तिर्यक्षो की यथासंभव आयु का प्रमाण कहा जाता है । इससे आगे भी संख्यात काल है । परन्तु वह यहां जो नहीं कहा गया है । उसका कारण यह है कि एकतो वह अतिशयज्ञान वर्जित जो छद्मस्थ प्राणी हैं उनके द्वारा असंघवहार्य है । तथा दूसरे सर्षप आदि की उपमा देकर सूत्रकार आगे उसे इसी शास्त्र में स्वयं कहेंगे भी । उपमा मात्र देकर जिनका स्वरूप समझाया जा सकता है ऐसे पल्योपम

ઉપરના કોષ્ટકને આધારે એક શિર્ષપ્રહેલિકાનાં વર્ષોની ગણતરી કરવામાં આવે તો ૧૬૪ આંકડાની સંખ્યા આવે છે. તે સંખ્યા નીચે પ્રમાણે છે- ૭૫૮૨૬૩૨૫૩૦૭૩૦૧૦૨૪૧૧૫૭૬૭૩૫૬૯૭૫૬૬૬૪૦૬૨૧૮૬૬૬૮૪૮૦૮૦૧૮૩૨૯૬ આ ૫૪ આંકડા ઉપર જમણી તરફ ૧૪૦ શૂન્ય મૂકવાથી જે ૧૬૬ આંકડાની સંખ્યા આવે છે, તે સંખ્યા એક શિર્ષપ્રહેલિકાનાં વર્ષો બતાવે છે. આ પૂર્વોક્ત કાળપ્રમાણને આધારે કેટલાક રત્નપ્રમા નરકના નારકોના, ભવનપતિ દેવોના, વ્યન્તર દેવોના, અને સુપમદુષ્પમ આરામાં ઉત્પન્ન થયેલા મનુષ્યોના યથાસંભવ આયુનું પ્રમાણ કહી શકાય છે. શીર્ષપ્રહેલિકાની આગળ પણ સંખ્યાત કાળ છે. પરન્તુ અહીં તેનું કથન કરવામાં આવ્યું નથી કારણ કે તે અતિશય જ્ઞાનવર્જિત છદ્મસ્થ જીવો દ્વારા અસંઘવહાર્ય છે-છદ્મસ્થ જીવો દ્વારા તેનો વ્યવહારમાં ઉપયોગ થઈ શકે તેમ નથી સૂત્રકાર સર્ષપ (સરસવ) આદિની ઉપમા દ્વારા તે કાળપ્રમાણનું આગળ ઉપર નિરૂપણ કરવાના છે. ઉપમા દ્વારા જ જેના સ્વરૂપને સમજાવી શકાય

મરોપમે વક્ષ્યમાણસ્વરૂપે । દશમાગરોપમકોટાકોટિષમાણાત્વવસર્પિણી, તાવન્મા-
નૈવ ઉત્સર્પિણી । અનન્તા અવસર્પિણ્યુત્સર્પિણ્યઃ પુદ્ગલપરિવર્ત્તઃ । અનન્તાઃ પુદ્ગલપરા-
વર્ત્તી અતીતાદ્વા । અનાગતાદ્વાઽપ્યનન્તપુદ્ગલપરાવર્ત્તમાનૈવ बोध्या । અતીતાઽના-
ગતવર્ત્તમાનકાલસ્વરૂપા સર્વાદ્વા । इयं पूर्वानुपूर्वी । पश्चानुपूर्वी तु 'सर्वाद्वा' इत्या-
रभ्य 'समयः' इत्यन्ता बोध्या । अनानुपूर्वी तु—'समयः' इत्याद्यारभ्य 'सर्वाद्वा'

और सागरोपम जो काल हैं उन्हें सूत्रकार आगे प्रगट करेंगे । दश सा-
गरोपम कोटि कोटि का एक अवसर्पिणी काल और इतने ही प्रणाम
वाला एक उत्सर्पिणी काल होता है । एक पुद्गल परावर्त काल अनन्त अ-
वसर्पिणी उत्सर्पिणी काल का होता है । तथा जो अतीताद्व-काल
होता है उसमें अनन्त पुद्गल परावर्त होते हैं । अर्थात् अनन्त पुद्गलपरा-
वर्तों का एक अतीताद्व काल होता है । इसी प्रकार जो अनागताद्व
काल होता है वह भी अनन्त पुद्गल परावर्तों का होता है । तथा जो
सर्वाद्व काल है वह अतीत अनागत और वर्तमान काल इन तीनों का
संमिलित रूप होता है । इस प्रकार यह पूर्वानुपूर्वी है । तथा सर्वाद्व से
छेकर समय पर्यन्त जो व्युत्क्रम से इनकी स्थापना-विन्यास-करना है
वह पश्चानुपूर्वी है । यही बात (से किं तं पच्छाणुपुव्वी ?) हे भदन्त ! प-
श्चानुपूर्वी क्या है इस प्रश्न के उत्तर में (सव्वाद्व अनागतद्व जाव स-
मय) इन पदों द्वारा प्रगट की गई है । (से तं पच्छाणुपुव्वी) इस प्रकार

એમ છે એવાં પદ્યોપમકાળ અને સાગરોપમ કાળનું સ્વરૂપ સૂત્રકાર આગળ
પ્રકટ કરવાના છે. હસ સાગરોપમ કોટિકોટિને એક અવસર્પિણીકાળ થાય છે
અને ઉત્સર્પિણી કાળનું પણ એટલું જ પ્રમાણ કહ્યું છે. અનંત અવસ-
ર્પિણીકાળને એક પુદ્ગલપરવર્ત કાળ થાય છે. અનંત પુદ્ગલપરાવર્તને
એક અતીતાદ્વા-કાળ થાય છે એટલે કે અતીતાદ્વામાં અનંત પુદ્ગલપરાવ-
ર્તકાળ હોય છે. એજ પ્રમાણે અનંત પુદ્ગલપરાવર્તને એક અનાગતાદ્વા-
કાળ થાય છે. જે સર્વાદ્વા કાળ છે તે અતીત, અનાગત અને વર્તમાન, આ
ત્રણે કાળના સંમિલિતકાળ રૂપ હોય છે. આ પ્રકારનું 'પૂર્વાનુપૂર્વી'નું સ્વરૂપ છે.

હવે પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—

પ્રશ્ન—(સે કિં પચ્છાણુપુવ્વી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?
ઉત્તર—(સવ્વાદ્વા, અનાગતદ્વા જાવ સમય) સર્વાદ્વા, અનાગતાદ્વા ઇત્યાદિ
જિલ્લા ક્રમે સમય પર્યન્તના પદોને વિન્યાસ (સ્થાપના) કરવે, તેનું નામ
પશ્ચાનુપૂર્વી છે. (સે તં પચ્છાણુપુવ્વી) આ પ્રકારનું પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૭ ઔપનિષિકીકાલાનુપૂર્વીનિરૂપણમ

૫૨૧

इत्यभ्यासानामन्योऽन्याभ्यासे ये अनन्ता भङ्गा भवन्ति, तेषु आद्यन्तरूपभङ्गकद्वय-
विवक्षामपहाय सर्वभङ्गगुणनास्मिन्ना बोध्या । अत्र कालविचारस्य प्रस्तुतत्वात्
समयादेशकालत्वेन प्रसिद्धत्वात् अनुपपन्नतो विनेयानां समयादिकालज्ञानं भवतु,
इति प्रकारान्तरेण कालानुपूर्वीमाह-‘अहवा’ इत्यादिना । अथवा औपनिषिकी
कालानुपूर्वी पूर्वाणुपूर्व्यादिभेदेन त्रिविधा प्रपञ्चता । तत्र-पूर्वाणुपूर्वी-एकसमय-
यह पञ्चानुपूर्वी का स्वरूप है । (से किं तं अणानुपुर्वी?) हे भदन्त? अना-
नुपूर्वी का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए सेदीए अणमणग्भासो दूहवूणो) अनानुपूर्वी में समयादि पदों का एकर
की वृद्धि पूर्वक उपन्यास किया जाता है, फिर बाद में आपस में इनका
गुणा किया जाता है । इस प्रकार गुणा करने पर जो अनन्त भंगरूप रा-
शि उत्पन्न होती है उसमें से आदि और अन्त के दो भंग घटा दिये
जाते हैं । इस प्रकार से अनानुपूर्वी अनन्त भंगात्मक होती है । यहां
काल का विचार प्रस्तुत है और समयादिक कालरूप से प्रसिद्ध हैं । इस
लिये शिष्यों को समयादिरूप कालका आनुषंगिकरूप से ज्ञान हो जावे
इसलिये सूत्रकार प्रकारान्तर से कालानुपूर्वीका कथन करते हैं—(अहवा
ओवणिहिया कालानुपुर्वी तिविहा पणत्ता) अथवा औपनिषिकी
कालानुपूर्वी तीन प्रकार की कही गई है (तं जहा) जैसे (पुव्वाणुपुर्वी
पच्छाणुपुर्वी, अणानुपुर्वी) पूर्वाणुपूर्वी, पञ्चानुपूर्वी और अनानुपूर्वी ।

ઉત્તર—(એયા એવે એગાઇયાએ એગુત્તરિયાએ અણંતગચ્છગયાએ સેદીએ અણ-
મણગ્ભાસો દૂહવૂણો) અનાનુપૂર્વીમાં સમયાદિ પદોનો એક એકની વૃદ્ધિથી
ઉપન્યાસ કરવામાં આવે છે. ત્યાર બાદ આપસમાં (અંદરો અંદર) તેમના
ગણાં (તેમનો ગુણાકાર) કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે ગુણાકાર કરવાથી જે
અનંત ભંગરૂપ રાશિ ઉત્પન્ન થાય છે તેમાંથી શરૂઆતનો અને અન્તનો
એક, એમ બે ભંગો ઓછાં કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે અનાનુપૂર્વી
અનંત ભંગરૂપ હોય છે. અહીં કાળનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે અને સમ-
યાદિક કાળરૂપે પ્રસિદ્ધ છે. તેથી શિષ્યોને સમયાદિ રૂપ કાળનું આનુષંગિક
રૂપે જ્ઞાન થઇ બાકી તે હેતુથી સૂત્રકાર કાલાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું અન્ય પ્રકારે
નિરૂપણ કરે છે—(અહવા ઓવણિહિયા કાલાનુપુર્વી તિવિહા પણત્તા) અથવા—
ઔપનિષિકી કાલાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની હતી છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારે
નીચે પ્રમાણે છે—(પુવ્વાણુપુર્વી, પચ્છાણુપુર્વી, અણાણુપુર્વી) પૂર્વાણુપૂર્વી,
પચ્ચાણુપૂર્વી અને અનાનુપૂર્વી.

સ્થિતિક:- એક: સમય: સ્થિતિર્યસ્ય દ્રવ્યવિશેષસ્ય સ તથાપ્રતો દ્રવ્યવિશેષો બોધ્ય: ।
 एवमेव-द्विसमयस्थितिकस्त्रिसमयस्थितिको यावदशसमयस्थितिकः संख्येयसमय-
 स्थितिकोऽसंख्येयसमयस्थितिकश्च द्रव्यविशेषः पूर्वानुपूर्वी बोध्या । पश्चानुपूर्वीतु-
 असंख्येयसमयस्थितिको यावदेकसमयस्थितिकश्च । अनानुपूर्वीतु- एकसमयस्थिति-
 काधारम्य असंख्येयसमयस्थितिकानामन्योन्याभ्यासेऽसंख्येया भङ्गा भवन्ति, तेषु
 आद्यन्तरूपभङ्गकद्रव्यविक्षामपहाय सर्वभङ्गगुणनात्मिका बोध्या । इयमौपनिधिकी
 कालानुपूर्वी बोध्या । एतदेवाह-‘ से तं ओवणिहिया’ इत्यादि । तैपा औपनिधि-

(સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) હે ભદન્ત ! પૂર્વાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હે ?

उत्तर—(पुञ्वाणुपुञ्वी) पूर्वानुपूर्वी का स्वरूप इस प्रकार से है-
 (एगसमयद्विहए, दुसमयद्विहए, तिसमयद्विहए जाव दस समयद्विहए
 संखिज्जसमयद्विहए असंखिज्जसमयद्विहए) एक समय की स्थितिवाला,
 दो समय की स्थितिवाला, तीन समय की स्थितिवाला यावत् दश स-
 मय की स्थितिवाला संख्यातसमय की स्थितिवाला असंख्यातसमय की
 स्थितिवाला जितना भी द्रव्य विशेष है वह सय पूर्वानुपूर्वी है । (से किं
 तं पच्छाणुपुञ्वी) हे भदन्त ! पश्चानुपूर्वी का कया स्वरूप है ? (असंखि-
 ज्जसमयद्विहए जाव एगसमयद्विहए पच्छाणुपुञ्वी) असंख्यातसमय की
 स्थितिवाले द्रव्य से लेकर एकसमय तक की स्थितिवाला जो द्रव्य
 विशेष है वह पश्चानुपूर्वी है । (से तं पच्छाणुपुञ्वी) यह पश्चानुपूर्वी
 का स्वरूप है । (से किं तं अणाणुपुञ्वी?) हे भदन्त अनानुपूर्वी का

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પુજ્વાણુપુજ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(એગસમય-
 દ્વિહए, दुसमयद्विहए, तिसमयद्विहए जाव दससमयद्विहए, संखिज्जसमयद्विहए,
 असंखिज्जसमयद्विहए) એક સમયની સ્થિતિવાળાં, બે સમયની સ્થિતિવાળાં,
 ત્રણથી લઈને દસ પર્યન્તની સ્થિતિવાળાં, સંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અને
 અસંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યવિશેષો તેઓ પૂર્વાનુપૂર્વી રૂપ છે.

પ્રશ્ન-(એ કિં તં પચ્છાણુપુજ્વી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અસંખિજ્જસમયદ્વિહए जाव एगसमयद्विहए पच्छाणुपुञ्वी) અસંખ્યાત
 સમયની સ્થિતિવાળાંથી લઈને એક સમય પર્યન્તની સ્થિતિવાળાં બે દ્રવ્યવિ-
 શેષો છે, તે પશ્ચાનુપૂર્વી રૂપ છે. (સે તં પચ્છાણુપુજ્વી) આ પ્રકારનું પશ્ચાનુ-
 પૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુજ્વી?) હે ભગવન્ ! અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૮ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૦૧

કો કાલનુર્વી । इत्थं कालानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह-‘ से तं ’ इत्यादि-
सैषा कालानुपूर्वीति ॥सू० १३७॥

અથ પૂર્વોક્તામુત્કીર્તનાનુપૂર્વી પ્રતિપાદયિતુમાહ-

मूलम्-से किं तं उक्त्तिणाणुपुर्वी ? उक्त्तिणाणुपुर्वी तिविहा
पणत्ता, तं जहा-पुष्पाणुपुर्वी पच्छाणुपुर्वी अणाणुपुर्वी । से किं
तं पुष्पाणुपुर्वी ? पुष्पाणुपुर्वी-उसमे अजिए संभवे अभिणंदणे
सुमई पउमप्पहे सुपासे खंदप्पहे सुविहा सीयले सेजंसे वासु-

कया स्वरूप है ? (एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छ-
गयाए सेहीए अन्नमन्नभासो दुरूवणो अणाणुपुर्वी)

उत्तर-एक से लेकर असंख्यात तक एकर की वृद्धि करते हुए
असंख्यातश्रेणि मांडो, फिर इन श्रेणियों में परस्पर में गुणा कर दो
और उस उत्पन्न असंख्यात भंग रूप महाराशि में से आदि अंत के
दो भंगों-पूर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी रूप दो भंगों और अवक्तव्यक
भंगों को कम कर दो-यही अनानुपूर्वी का स्वरूप है । (से तं ओवणि-
हिया कालाणुपुर्वी-से तं कालाणुपुर्वी) इस प्रकार औपनिधिकी काला-
नुपूर्वी है । इसके समाप्त होते ही पूर्वप्रक्रान्त कालानुपूर्वी का कथन
समाप्त हो गया ॥सू० १३७॥

ઉત્તર-(एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छगयाए सेहीए
अन्नमन्नभासो दुरूवणो अणाणुपुर्वी) એકથી લઈને અસંખ્યાત પર્યંત એક
એકની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં અસંખ્યાત શ્રેણી સુધીનાં દ્રવ્યોનો ઉપન્યાસ કર-
વામાં આવે છે ત્યાર બાદ તે શ્રેણીઓનો પરસ્પરમાં ગુણાકાર કરવામાં આવે
છે અને આ પ્રકારે જે અસંખ્યાત ભંગ રૂપ મહારાશિ ઉત્પન્ન થાય છે,
તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે ભાગાઓ-‘પૂર્વાનુપૂર્વી’ અને ‘પશ્ચાનુપૂર્વી’ રૂપ
બે ભાગાઓ-બાદ કરવામાં આવે છે આ પ્રકારનું ‘અનાનુપૂર્વી’નું સ્વરૂપ છે
(સે તં અણાણુપુર્વ) આ ઔપનિધિકી ‘અનાનુપૂર્વી’ છે. (સે તં ઓવણિહિયા
કાલાણુપુર્વ-સે તં કાલાણુપુર્વ) આ પ્રકારનું ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ છે. તેના સ્વરૂપનું કથન સમાપ્ત થતાની સાથે જ પૂર્વપ્રક્રાન્ત કાલા-
નુપૂર્વીના સ્વરૂપનું કથન પણ સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ૦૧૩૭॥

અં ૭૬

६०२

अनुयोगद्वारसूत्रे

पुजे विमले अणंते धम्मे संती कुंथू अरे मल्ली मुणिसुव्वए
णमी अरिट्ठणेमी पासे वद्धमाणे । से तं पुव्वानुपुव्वी । से किं
तं पच्छानुपुव्वी ? पच्छानुपुव्वी—वद्धमाणे जाव उसभे । से तं
पच्छानुपुव्वी । से किं तं अणानुपुव्वी ? अणानुपुव्वी—एयाए
चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए चउवीसगच्छगयाए सेढीए अण्ण-
मण्णव्वासो दुरुव्वणो । से तं अणानुपुव्वी । से तं उक्कित्तणा-
णुपुव्वी ॥सू० १३८॥

छाया—अथ का सा उत्कीर्तनानुपूर्वी ? उत्कीर्तनानुपूर्वी त्रिविधा प्रज्ञप्ता,
तद्यथा—पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी अनानुपूर्वी । अथ का सा पूर्वानुपूर्वी ? पूर्वानुपूर्वी—
ऋषभः अजितः संभवः अभिनन्दनः सुषतिः पद्मप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः
शीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः शान्तिः कुन्धुः अरः मल्लिः
मुनिसुव्रतः नमिः अरिष्टनेमिः पार्श्वो रद्धमानः । सैषा पूर्वानुपूर्वी । अथ का सा
अनानुपूर्वी ? अनानुपूर्वी—एतस्यामेव एकादिकायामेकोत्तरिकायां चतुर्विंशति-
गच्छगतायां श्रेण्यामन्योन्याभ्यासो द्विरूपोनः । सैषा अनानुपूर्वी । सैषा उत्की-
र्तनानुपूर्वी ॥सू० १३८॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ का सा उत्कीर्तनानुपूर्वी ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—उत्कीर्तनं=कथ-
नम् अभिधानोच्चारणमिति यावत्, तस्य आनुपूर्वी=अनुपरिपाटिः पूर्वानुपूर्वादि-

अथ सूत्रकार पूर्वोक्त उत्कीर्तनानुपूर्वी का प्रतिपादन करते हैं—

‘से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ? इत्यादि ।

शब्दार्थ—हे भद्वन् ! (से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ?) पूर्व प्रकान्त
उत्कीर्तनानुपूर्वी का स्वरूप क्या है ?

उत्तर—(उक्कित्तणाणुपुव्वी त्रिविहा पण्णत्ता) उत्कीर्तनानुपूर्वी तीन

ढवे सूत्रकार पूर्वोक्त उत्कीर्तनानुपूर्वीना स्वरूपनुं निरूपणुं करे छे—

“से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ?) छे भगवन् ! पूर्वप्रकान्त उत्की-
र्तनानुपूर्वीनुं स्वरूपुं केवुं छे ?

उत्तर—(उक्कित्तणाणुपुव्वी त्रिविहा पण्णत्ता—तंजहा) उत्कीर्तनानुपूर्वीना

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૮ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૦૩

મેદેન ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા । તત્ર-પૂર્વાનુપૂર્વી-ઋષભાદિ વર્દમાનાન્તા । સર્વપથમોત્પન્નાદ્
ઋષભસ્ય પ્રથમમુપાદાનમ્ । તદનન્તરં ક્રમેણ અજિતાદય ઉક્તાઃ । પશ્ચાનુપૂર્વી તુ-
પ્રકાર કી કહી ગઈ છે । (તં જહા) ઉસકે વે પ્રકાર યે હૈં-(પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી,
પચ્છાણુપુઠ્ઠી, અણાણુપુઠ્ઠી) પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી ઓર અનાનુપૂર્વી ।
ઉત્કીર્તન શબ્દ કા અર્થ નામ કા ઉચ્ચારણ કરના એસા હૈં । હસ ઉત્કી-
ર્તન કી જો પરિપાટી હૈ ઉસકા નામ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં
પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી) પૂર્વ પ્રકાનન પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(ઉસમે અજિએ સંભવે અભિનંદણે, સુમદ્દે, પદમપ્પહે,
સુપાસે, ચંદ્રપ્પહે, સુવિહી, સીયલે, સેઝ્જંસે, વાસુપુઝ્જે, વિમલે, અણંતે,
ધમ્મે, સંતી, કુંથૂ, અરે, મલ્લી, સુણિસુવ્વણ, ણમી, અરિટ્ઠણેમી, પાસે,
વદ્દમાણે, સે તં પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી) ઋષભ, અજિત, સંભવ, અભિનંદન, સુમતિ,
પદ્મપ્રભ, સુપાર્શ્વ, ચંદ્રપ્રભ, સુવિધિ, શીતલ, શ્રેયાંસ, વાસુપૂજ્ય,
વિમલ, અનન્ત, ધર્મ, શાન્તિ, કુન્થુ, અર, મલ્લી, સુનિસુવ્રત, નમિ,
અરિષ્ટનેમિ, પાર્શ્વ, ઓર વર્દમાન । હસ પ્રકાર પરિપાટિરૂપ સે નામો-
ચ્ચારણ કરના હસકા નામ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી કા પ્રથમ મેદ પૂર્વાનુપૂર્વી
હૈ । ઋષભનાથ સઘ સે પ્રથમ ઉત્પન્ન હુણ હૈં । હસલિયે ડનકા પ્રથમ
નામોચ્ચારણ કિયા હૈ । તદનન્તર ક્રમશઃ અન્ય અજિત આદિ હુણ
હૈં હસલિયે ડનકા નામોચ્ચારણ હુઆ હૈ । પશ્ચાનુપૂર્વી મેં વર્દમાન કો

નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી, પચ્છાણુપુઠ્ઠી, અણાણુપુઠ્ઠી)
(૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

“ નામનુ' ઉચ્ચારણ કરવું ” એટલે ઉત્કીર્તન આ ઉત્કીર્તનની (નામનુ'
ઉચ્ચારણ કરવાની) જે પરિપાટી (પદ્ધતિ) છે, તેનું નામ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી) હે લગવન! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઉસમે, સંભવે, ચંદ્રપ્પહે, સુવિહી, સીયલે, સેઝ્જંસે, વાસુપુઝ્જે,
વિમલે, અણંતે, ધમ્મે, સંતી, કુંથૂ, અરે, મલ્લી, સુણિસુવ્વણ, ણમી, અરિટ્ઠણેમી,
પાસે, વદ્દમાણે, સે તં પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી) ઋષભ, અજિત, સંભવ, અભિનંદન,
સુમતિ, પદ્મપ્રભ, સુપાર્શ્વ, ચંદ્રપ્રભ, સુવિધિ, શીતલ, શ્રેયાંસ, વાસુપૂજ્ય,
વિમલ, અનન્ત, ધર્મ, શાન્તિ, કુન્થુ, અર, મલ્લી, સુનિસુવ્રત, નમિ, અરિ-
ષ્ટનેમિ, પાર્શ્વ અને વર્દમાન, આ પ્રકારે પરિપાટી રૂપે નામોચ્ચારણ કરવું
તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. તે ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વીના પ્રથમ ભેદ રૂપ છે. ઋષભ-
નાથ લગવાન સૌથી પહેલાં થઈ ગયા હોવાથી તેમના નામનું ઉચ્ચારણ સૌથી
પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. ત્યાર બાદ અજિત આદિ તીર્થંકરો ક્રમશઃ થઈ
ગયા હોવાથી તેમના નામનું ક્રમશઃ ઉચ્ચારણ કરાયું છે.

વર્ધમાનાદિ ઋષમાન્તા બોધ્યા । અનાનુપૂર્વી તુ-ઋષમાદિવર્ધમાનાન્તાનાં ચતુર્વિ-
શતિપદાનામન્થોઽન્યાભ્યાસે આદ્યન્તરૂપમ્બ્રુકદ્વયવિવક્ષામપઢાય મ્બ્રુકા વિષાતન્વા-
સ્તદાત્મિકા બોધ્યા । નનુ ઔપનિધિકયા દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યા અસ્યાશ્ચ કો ભેદઃ ? ઉચ્યતે,
તત્ર હિ દ્રવ્યાણાં વિન્યાસમાત્રમેવ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિભાવેન વિન્નિતતમ્ । અત્ર તુ તેષામેવ
તથેવોત્કીર્તનં ક્રિયતે-ઇત્યેતાવન્માત્રેણ ઇત્યોર્ભેદો બોધ્યઃ । નનુ અસ્યેવંતથાઽ-
પ્યત્ર શાસ્ત્રે આવશ્યકસ્ય પ્રસ્તુતત્વાદત્રાપિ સામાયિકાદ્યધ્યયનાનામેવોત્કીર્તનં યુક્તમ્,

આદિ કરકે-ઋષમપદ કો અન્ત મેં ઉચ્ચરિત ક્રિયા જાતા હૈ । તથા
અનાનુપૂર્વી આદિ કે ઋષમપદ સે લેકર અન્તિમ વર્ધમાન તક કે ચૌ-
વીસ પદોં કા પરસ્પર મેં ગુણા કરને પર ઔર ગુણિતરાશિ મેં સે આદિ
અન્ત રૂપ ભંગ દ્વય કી વિવક્ષા કો કમ કરને પર જિતને ભંગ થ્ચતે હેં
ઉન ભંગ સ્વરૂપ હોતી હૈ ।

શંકા—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી સે હસ મેં કયા ભેદ હૈ ?

ઉત્તર—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં દ્રવ્યોં કા કેવલ વિન્યાસ હી
પૂર્વાનુપૂર્વી આદિરૂપ સે વિચારિત હોતા હૈ ઔર હસ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી
મેં ઝ઼હી દ્રવ્યોં કા આનુપૂર્વી આદિરૂપ સે નામોચ્ચારણ ક્રિયા જાતા હૈ ।

શંકા—હસ શાસ્ત્ર મેં આવશ્યક કા પ્રકરણ હોને સે હસ આનુપૂર્વી
મેં મી સામાયિક આદિ અધ્યયનોં કા હી ઉત્કીર્તન કરના ઉચિત થા—

પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-ઉપર બે ક્રમે નામોચ્ચારણ
કરાયું છે તેના કરતાં ઊલટા ક્રમે નામોચ્ચારણ કરવાથી પશ્ચાનુપૂર્વી બને છે.
તેમાં વર્ધમાનથી લઈને ઋષભ પર્યન્તના પદોનું ઉચ્ચારણ કરાય છે આ રીતે
'વર્ધમાન' પદ પહેલું અને 'ઋષભ' પદ છેલ્લું આવે છે. અનાનુપૂર્વીમાં
શરૂઆતના ઋષભ પદથી લઈને છેલ્લા વર્ધમાન પર્યન્તના ૨૪ પદોનો પર-
સ્પરની સાથે શુણ્ણાકાર કરવામાં આવે છે અને તેથી બે મહારાશિ આવે છે
તેમાંથી આદિ અને અન્ત રૂપ બે ભંગોને બાદ કરવામાં આવે છે. આ બે
ભંગો બાદ કરવાથી બે ભંગો બાકી રહે છે, તે ભંગોરૂપ અનાનુપૂર્વી હોય છે.

શંકા—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કરતાં આ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વીમાં શો તફાવત છે ?

ઉત્તર—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં દ્રવ્યોનો કેવળ વિન્યાસ જ પૂર્વાનુ-
પૂર્વી આદિ રૂપે કરવામાં આવે છે, પરન્તુ આ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વીમાં તે બેજ
દ્રવ્યોનું આનુપૂર્વી આદિ રૂપે ઉચ્ચારણ કરવામાં આવે છે.

શંકા—આ શાસ્ત્રમાં આવશ્યકનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી આ આનુ-
પૂર્વીમાં સામાયિક આદિ અધ્યયનોનું જ ઉત્કીર્તન (ઉચ્ચારણ) કરાયું હોત

કથમપ્રક્રાન્તાનામૃષમાદીનામુત્કીર્તનં કૃતમ્ ? इति चेदाह—इदं शास्त्रं सर्वव्यापक-
मित्यादावेवम् उक्तम् । तत्समर्थयितुमेव ऋषमादीनामुपादानं कृतम् । ऋषमादीनां
तीर्थकर्तृत्वात्तन्नामोच्चारणे सकलमपि श्रेयः प्राप्नोति जन इति युक्तमेव तेषां
मगवतां नामोच्चारणम् । एवं विधस्थलेऽन्यत्राप्येवमेव समाधेयमिति । प्रकृतमुप
संहरन्नाह—‘ से तं ’ इत्यादि । सैषा उत्कीर्तनानुपूर्वी ॥सू० १३८॥

अथ पूर्वोक्तमेव गणनानુपूर्वीं निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं गणणाणुपुर्वी ? गणणाणुपुर्वी तिविहा पण्णत्ता,
तं जहा—पुव्वाणुपुर्वी पच्छाणुपुर्वी अणाणुपुर्वी । से किं तं पुव्वा-
णुपुर्वी ? पुव्वाणुपुर्वी—एगो, दस, सयं, सहस्सं, दस सहस्साइं,

तो फिर अपक्रान्त-प्रकरण बाह्य-ऋषभ आदिकों का उत्कीर्तन
सूत्रकारने क्यों किया ?

उत्तर—यह तो पहिले ही कहा जा चुका है कि यह शास्त्र सर्व
व्यापक है । सो इसी बात का समर्थन करने के लिये यहां ऋषभादिकों
का उत्कीर्तन किया है । ये ऋषभ आदि तीर्थ कर्ता हैं । इनके नाम का
उच्चारण करने वाला मनुष्य समस्त श्रेयको पा लेता है । अतः उनके
नाम का उच्चारण करना युक्त ही है । दूसरे और भी इसी प्रकार के
स्थलों में ऐसा ही समाधान समझना चाहिये । इस प्रकार से यह
उत्कीर्तनानुपूर्वी है । सूत्रस्थ बाकी पद सुगम्य हैं अतः उनका भिन्न
भिन्न रूप से अर्थ नहीं लिखा है ॥सू० १३८॥

તે ઉચિત ગણાત તેને બદલે અપ્રક્રાન્ત (પ્રકરણના વિષયથી બાહ્ય એવાં)
ઋષભ આદિકોનું ઉત્કીર્તન સૂત્રકારે શા કારણે કર્યું છે ?

ઉત્તર—એ વાત તો પહેલાં જ કહેવામાં આવી ચુકી છે કે શાસ્ત્ર
સર્વવ્યાપક છે. એજ વાતનું સમર્થન કરવાને માટે અહીં ‘ઋષભાદિકોનું’
ઉત્કીર્તન (નામોનું ઉચ્ચારણ) કરવામાં આવ્યું છે. આ ઋષભ આદિ તીર્થ-
કરોએ તીર્થની સ્થાપના કરી હતી. તેમનાં નામનું ઉચ્ચારણ કરનાર મનુષ્યનું
હરેક પ્રકારે શ્રેય જ થાય છે. તેથી તેમનાં નામોનું ઉચ્ચારણ કરવું ઉચિત જ
ગણી શકાય આ પ્રકરનાં બીજાં સ્થાનોમાં પણ આ પ્રકારનું જ સમાધાન સમજવું.

આ પ્રકારનું ઉત્કીર્તનનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે આ સૂત્રમાં આવેલાં બાકીનાં
પદોને અર્થ સુગમ હોવાથી અહીં તેમનું, વધુ સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં
આવ્યું નથી. ॥સૂ० ૧૩૮॥

સયસહસ્રં, દસ સયસહસ્રાઈ, કોડી, દસ કોડીઓ, કોડીસયં, દસ કોડિસયાઈં । સે તં પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી । સે કિં તં પચ્છાણુપુઠ્ઠી? પચ્છાણુપુઠ્ઠી—દસ કોડિસયાઈં જાવ ઇગો સે તં પચ્છાણુપુઠ્ઠી । સે કિં તં અણાણુપુઠ્ઠી? અણાણુપુઠ્ઠી—પયાપ ચેવ ઇગાઈયાપ ઇગુત્તરિયા । દસકોડિસયગચ્છગયાપ સેઢીપ અન્નમન્નઞ્ઞાસો દુરુવૂણો । સે તં અણાણુપુઠ્ઠી । સે તં ગણાણુપુઠ્ઠી ॥સૂ૦ ૧૩૯॥

છાયા—અથ કા સા ગણનાનુપૂર્વી? ગણનાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી? પૂર્વાનુપૂર્વી—એકો, દશ, શતં, સહસ્રં, દશ સહસ્રાણિ, શતસહસ્રં, દશ શતસહસ્રાણિ, કોટિઃ, દશકોટયઃ, કોટિશતં, દશકોટિશતાનિ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી દશકોટિશતાનિ યાવદેકઃ । સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી ઇતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયાં દશકોટિશતગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યમન્યોન્યામ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ । સૈવા અનાનુપૂર્વી । સૈવા ગણનાનુપૂર્વી ॥સૂ૦ ૧૩૯॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા ગણનાનુપૂર્વી? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—ગણનાનુપૂર્વી પૂર્વાનુપૂર્વાદિભેદેન ત્રિવિધા । તત્ર—એકાદિદશકોટિશતાન્તાપૂર્વાનુપૂર્વી, દશકોટિશતાચે-

ગણનાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ—હમ યાત કો અથ સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરતે હૈ —“સે કિં તં ગણાણુપુઠ્ઠી?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ગણાણુપુઠ્ઠી)

પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત? ગણનાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ગણાણુપુઠ્ઠી તિવિહા પળગતા) ગણનાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તંજહા) જૈસે (પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી પચ્છાણુપુઠ્ઠી, અણાણુપુઠ્ઠી)

હવે સૂત્રકાર ગણનાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ગણાણુપુઠ્ઠી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ગણાણુપુઠ્ઠી?) હે ભગવન્! ગણનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ગણાણુપુઠ્ઠી તિવિહા પળગતા) ગણનાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની ઠહી છે—(તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠી, પચ્છાણુપુઠ્ઠી, અણાણુપુઠ્ઠી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂચ ૧૩૯ ગણનાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૦૭

કાન્તા પશ્ચાનુપૂર્વી । તથા-एतस्यामेव एकादिकायामेकोत्तरिकायां दशकोटिशत-
गच्छगतायां श्रेण्यामन्योन्याभ्यासो द्विरूपोनः-अनानुपूर्वी, व्याख्या पूर्ववत् ।

पूर्वानुपूर्वी, पश्चानुपूर्वी, अनानुपूर्वी (से किं तं पुत्र्वाणुपुर्व्वी) हे भदन्त !
पूर्वानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ?

उत्तर-- (पुत्र्वाणुपुर्व्वी) पुर्वानुपूर्वी का स्वरूप इस प्रकार से है-
(एगो) एक (दस) दश, (सयं) सौ (सहस्सं) हजार (दससहस्साइं) दश
हजार (सयसहस्साइं) लाख (दससयसहस्साइं) दश लाख (कोडी)
करोड़ (दस कोडीओ) दस करोड़ (कोडीसयं) अर्ब, (दस कोडिसयाइं) दस
अर्ब (से तं पुत्र्वाणुपुर्व्वी) यह पूर्व प्रश्नान्त पूर्वानुपूर्वी है । (से किं तं पच्छाणु-
पुर्व्वी?) हे भदन्त ! गणनानुपूर्वी के भेद रूप पश्चानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ?

उत्तर-- (पच्छाणुपुर्व्वी) पश्चानुपूर्वी का स्वरूप इस प्रकार से है ।
(दस कोडिसयाइं जाव एगो) दस अर्ब से लेकर व्युत्क्रम से एक तक
गिनना (से तं पच्छाणुपुर्व्वी) सो पश्चानुपूर्वी है । (से किं तं अणाणुपुर्व्वी)
हे भदन्त ! अनानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ? (अणाणुपुर्व्वी) अनानुपूर्वी
का स्वरूप इस प्रकार से है--(एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए दस
कोडिसयगच्छगयाए सेदीए अन्नमन्नभ्मासो दूरूवूणो) एक से लेकर

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પુત્ર્વાણુપુર્વ્વી?) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર-(પુત્ર્વાણુપુર્વ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(एगो) એક,
(दस) દસ, (सयं) સો, (सहस्सं) હજાર, (दससहस्साइं) દસ હજાર, (सयसह-
स्साइं) લાખ, (दससयसहस्साइं) દસ લાખ, (कोडी) કરોડ, (दस कोडीओ)
દસ કરોડ, (कोडीसयं) અબજ, (दस कोडीसयाइं) દસ અબજ, (से तं
पुत्र्वाणुपुर्व्वी) ઇત્યાદિ રૂપે ગણના કરવી તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પચ્છાણુપુર્વ્વી?) હે ભગવન્ ગણનાનુપૂર્વીના બીજા ભેદ
રૂપ પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુર્વ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(दसकोडी-
सयाइं जाव एगो) દસ અબજથી લઈને જિલ્લા કેમે એક સુધીની ગણતરી
કરવી (સે તં પચ્છાણુપુર્વ્વી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુર્વ્વી?) હે ભગવન્ ! ગણનાનુપૂર્વીના ત્રીજા ભેદ
રૂપ અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અણાણુપુર્વ્વી) અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(एयाए चेव
एगाइयाए एगुत्तरियाए दसकोडिसयगच्छगयाए सेदीए अन्नमन्नभ्मासो दूरूवूणो)

૬૦૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

અત્રોક્તાઃ સંખ્યા ઉપલક્ષણમાત્રમ્, અત્રિતોડન્યા અપિ સંભાવ્યમાનાઃ સંખ્યા અવગન્તવ્યાઃ । ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વા નામમાત્રોત્કીર્તનં કૃતમ્, અત્ર ગણનાનુપૂર્વા તુ-
 एकादि संख्यानामभिधानं कृतमिति बोध्यम् । प्रकृतमुखसंहरन्नाह-‘सेतं’
 इत्यादि । सैषा गणनानुपूर्वी ॥सू० १३९॥

અથ પ્રાગુદિષ્ટામેવ સંસ્થાનાનુપૂર્વીમાહ-

મૂલમ્-સે કિં તં સંઠાણાણુપુર્વી ? સંઠાણાણુપુર્વીતિવિહા પપ્પણ્તા,
 તં જહા-પુઘ્વાણુપુર્વી પચ્છાણુપુર્વી અણાણુપુર્વી । સે કિં તં
 પુઘ્વાણુપુર્વી ? પુઘ્વાણુપુર્વી-સમચ્ચરંસે નિગ્ગોહમંડલે સાદી
 खुजे वामणे हुंडे । से तं पुष्पाणुपूर्वी । से किं तं पच्छाणुपूर्वी ?
 पच्छाणुपूर्वी-हुंडे जाव चउरंसे । से तं पच्छाणुपूर्वी । से किं
 तं अणाणुपूर्वी ? अणाणुपूर्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरि-
 याए छ गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नवभासो दुरुवूणो । से तं
 अणाणुपूर्वी । सा एसा संठाणाणुपूर्वी ॥सू० १४०॥

છાયા-અથ કા સા સંસ્થાનાનુપૂર્વી ? સંસ્થાનાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા-
 પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-સમચ-
 તુરસં ન્યગ્રોધમળ્ડલં સાદિ કુબ્જં વામનં હુળ્ડમ્ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા
 પશ્ચાનુપૂર્વી ? પશ્ચાનુપૂર્વી-હુળ્ડં યાવત્ સમચતુરસમ્ । સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા

દશ કોટિશતક કી એક એક કી વૃદ્ધિવાલી શ્રેણી મેં સ્થાપિત સંખ્યા
 का परस्पर में गुणा करने पर और उत्पन्न उस महाराशि में से भग
 व्रज की विवक्षा को कम करने पर अवशिष्टभंगात्मक (सेतं अणाणुपु-
 र्ववी) अनानुपूर्वी है (सेतं गणणाणुपुर्ववी) इस प्रकार यह गणनानुपूर्वी
 का स्वरूप है ॥सू० १३९॥

એકથી લઇને દસ અબજ પર્યંતની એક એકની વૃદ્ધિવાળી શ્રેણીમાં સ્થાપિત
 સંખ્યાના પરસ્પરની સાથે ગુણાકાર (સંયોજન) કરીને જે ભંગોની મહારાશિ
 ઉત્પન્ન થાય છે તેમાંથી આદિ અને અંતના બે ભંગોને બાદ કરવાથી જે ભંગો
 બાકી રહે છે, તે ભંગોને (સેતં અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી રૂપ ગણવામાં આવે
 છે. (સેતં ગણાણુપુર્વી) આ પ્રકારનું ગણનાનુપૂર્વાનુ ૨૧૩૫ છે. ॥સૂ૦ ૧૩૯॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૦ સંસ્થાનાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૦૯

સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-પ્રતસ્થાનેન એકાદિકાયામે કોચરિકાયાં છ ગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યામ્યાસો દ્વિરુપોતઃ। સૈવા અનાનુપૂર્વી। સૈવા સંસ્થાનાનુપૂર્વી॥સૂ.૧૪૦॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા સંસ્થાનાનુપૂર્વી? ઇતિ પ્રશ્નઃ। ઉત્તરયતિ-સંસ્થાનાનુપૂર્વી સંસ્થાનાનિ-
=આકૃતિવિશેષાઃ, તેષામાનુપૂર્વી=ચરિવાટી સંસ્થાનાનુપૂર્વી આકૃતિવિશેષરૂપાણિ।
સંસ્થાનાનિ જીવાજીવભેદેન યથાપિ દ્વિવિધાનિ તથાપિ ‘સમચતુરંસે’ ઇત્યાદ્યમિ-
ધાનેન જીવસમ્બન્ધીન્યેવ તાનિ વૈધ્યાનિ। ઇયં સંસ્થાનાનુપૂર્વ્યપિ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિ-
ભેદેન ત્રિવિધા પ્રોક્તાઃ તત્ર-પૂર્વાનુપૂર્વી-સમચતુરસ્રમ્-સમં=નાભેરુપ્યંથશ્ચ સકલ-
પુરુષલક્ષણોપેનાનવરતયા ચતુરસ્રમ્ અન્યુનાધિકાશ્ચતસ્રઃ અસ્રયઃ-કોણા યસ્ય તત્

અથ સૂત્રકાર પૂર્વોક્ત સંસ્થાનાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ કથન કરતે હૈં--

“સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી” ઇત્યાદિ।

શબ્દાર્થ-- (સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી?) હે ભદ્રંત! પૂર્વપ્રકાન્ત સંસ્થાનાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર-- (સંઠાણાણુપુઞ્વી તિવિહા પળ્ળત્તા) સંસ્થાનાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ (તં જહા) વે પ્રકાર વે હૈ -- (પુઞ્વાણુપુઞ્વી, પચ્છાણુપુઞ્વી, અણાણુ પુઞ્વી,) પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાતુપૂર્વી ઓર અનાનુપૂર્વી (સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર-- (પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ--(સમ-
ચતુરંસે, નિગ્ગોહમંડલે, સાદી, સુઝ્જે વામણે હુંડે) સમચતુરસ્ર સંસ્થાન,
ન્યગ્રોધમંડલ સંસ્થાન, સાદિસંસ્થાન, કુઝ્જ સંસ્થાન, વામન સંસ્થાન.

હવે સૂત્રકાર પૂર્વોક્ત સંસ્થાનાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે--

“સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી?” ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ-- (સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્! પૂર્વોક્ત સંસ્થાના-
નુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર--(સંઠાણાણુપુઞ્વી તિવિહા પળ્ળત્તા) સંસ્થાનાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની
કહી છે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે--(પુઞ્વાણુપુઞ્વી પચ્છાણુપુઞ્વી
અણાણુપુઞ્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી (૨) પશ્ચાતુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી

પ્રશ્ન--(સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્! પૂર્વાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર--(પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે--(સમચતુરંસે,
નિગ્ગોહમંડલે, સાદી, સુઝ્જે, વામણે, હુંડે) સમચતુરસ્ર સંસ્થાન, ન્યગ્રોધમંડલ
સંસ્થાન, સાદિ સંસ્થાન, કુઝ્જ સંસ્થાન, વામન સંસ્થાન અને હુંડ સંસ્થાન,

चतुरस्रम् । अतयोः कर्मधारयः । तुल्यारोहपरिणाहः सम्पूर्णलक्षणोपेताङ्गोपाङ्गावयवः
स्वाङ्गुलाष्टाधिकशतोच्छ्रायः सर्वसंस्थानेषु मुख्यः पञ्चेन्द्रियजीवशरीराकारविशेष

और हुंड संस्थान । आकृति विशेष का नाम संस्थान है । इन संस्थानों की जो परिपाटी है उसका नाम आनुपूर्वी है । यद्यपि ये संस्थान जीव और अजीव के संबन्धी होने से दो प्रकार के हैं तो भी ” इस प्रकार के कथन से यहाँ जीवसंबन्धी ही ग्रहण किये गये हैं । जिस संस्थान में नाभि से ऊपर के और नीचे के समस्त अवयव सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार अपने २ प्रमाण से युक्त हों, हीनाधिक न हों उसका नाम सम-चतुस्र है, ” समं चतुस्रम् यस्य तत् समचतुरस्रम् ” यह इसकी व्युत्पत्ति है । इसका तात्पर्य यह है कि इस संस्थान में जितने भी शरीर के नाभि से ऊपर नीचे के अंग उपांग रूप अवयव होते हैं वे सब समस्त लक्षणों से सहित होते हैं । न्यूनाधिक भाव इनमें नहीं होता है शरीर के चारों कोने इसमें बराबर होते हैं । इस संस्थान में आरोह और परिणाह-उतार बढ़ाव-एकसा होता है । सामुद्रिक शास्त्र में सुहावने शरीर के जितने भी लक्षण कहे गये हैं वे सब लक्षण इस संस्थान वाले शरीर के अंग और

આ ક્રમે સંસ્થાનોનો વિન્યાસ કરવો તેને સંસ્થાનાનુપૂર્વાના પ્રથમ ભેદ ૩૫ પૂર્વાનુપૂર્વી કહે છે.

સંસ્થાન એટલે આકાર આ આકારોની જે પરિપાટી તેનું નામ આનુ-પૂર્વી છે જો કે આ સંસ્થાન જીવ અને અજીવ વિષયક હોવાને કારણે મુખ્ય બે પ્રકારનું હોય છે, પરંતુ “સમચતુસ્રે” ઇત્યદિ પદો દ્વારા અહીં જીવસંબંધી સંસ્થાનોને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે,

સમચતુસ્ર સંસ્થાન જે સંસ્થાનમાં (આકાર વિશેષમાં) નાભિની નીચેના અને નાભિની ઉપરનાં સમસ્ત અવયવો સામુદ્રિક શાસ્ત્રમાં જતાવ્યા પ્રમાણેના પોતપોતાનાં પ્રમાણવાળાં હોય છે-હીન અથવા અધિક પ્રમાણવાળાં હોતાં નથી, તે સંસ્થાનને સમચતુસ્ર સંસ્થાન કહે છે. તેની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે-

“સમં ચતુસ્રમ્ यस્ય તત્ સમચતુસ્રમ્” આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-આ સંસ્થાનમાં નાભિની ઉપરનાં અને નીચેનાં સમસ્ત અંગ ઉપાંગો સમસ્ત લક્ષણોથી યુક્ત હોય છે. કોઈ પણ અંગ ઉપાંગ ન્યૂન અથવા અધિકપ્રમાણ-વાળું હોતું નથી. પણ સપ્રમાણ હોય છે તેમાં શરીરના ચારે ખૂણા બરાબર હોય છે આ સંસ્થાનમાં આરોહ અને અવરોહ-ચઢાવ અને ઉતાર-એક સરખો હોય છે. સામુદ્રિક શાસ્ત્રમાં સુંદર શરીરના જેટલાં લક્ષણો કહ્યાં છે, તે બધાં લક્ષણો આ શરીરના અંગઉપાંગોમાં જોવામાં આવે છે. આ સંસ્થા-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૦ સંસ્થાનાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૧૧

इत्यर्थः । न्यग्रोधमण्डलम्=न्यग्रोधो वटवृक्षरतद्वन्मण्डलं यस्य तत्तथा, यथा-न्यग्रोध उपरि सम्पूर्णवियवोऽधस्तनभागे पुनर्न तथा, तथेदमपि नाभेरुपरि विस्तर-बहुलं शरीरलक्षणोक्तप्रमाणभागम्, अधस्तु हीनाधिकप्रमाणं विज्ञेयम्। सादि-आदिरिह उत्सेधाख्यो नाभेरधस्तनो देहभागो गृह्यते। आदिना=नाभेरधस्तनकाय-लक्षणेन सह वर्तते इति सादिः। यद्यपि सर्वशरीरमादिना सह वर्तते तथापि सादि-त्वविशेषणान्यथाऽनुपपत्त्या विशिष्ट एव प्रमाणलक्षणोपपन्न आदिरिह गृह्यते, तत

उपांगों में रहा करते हैं। अपने अंगुल से इस संस्थान वाला शरीर १०८ अंगुल की ऊँचाईवाला होता है। यह संस्थान समस्त संस्थानों में मुख्य होता है। और यह पंचेन्द्रिय जीव के शरीरका एक विशेष आकाररूप होता है। न्यग्रोधमण्डल-न्यग्रोध नाम वटवृक्ष का है। इसके समान जिसका मंडल हो- अर्थात् जिस प्रकार न्यग्रोध-वटवृक्ष-ऊपर में संपूर्ण अवयवोंवाला होता है और नीचे वैसा नहीं होता, उसी प्रकार यह संस्थान भी नाभि से ऊपर में बहुत विस्तारवाला होता है और नाभि से नीचे हीनाधिक प्रमाणवाला होता है ऐसे संस्थान का नाम न्यग्रोध मंडल है। सादि-नाभि से नीचे का जो उत्सेध नाम का देह भाग है वह यहां आदि से ग्रहण किया है। नाभि से नीचे का भाग कायरूप आदि के साथ जो रहता है उसका नाम सादि है। यद्यपि समस्त शरीर आदि सहित होते हैं तो भी संस्थान का जो सादि विशेषण

નવાળા મનુષ્યની ઊંચાઈ તેના ૧૦૮ આંગળપ્રમાણુ હોય છે. આ સંસ્થાન ખંધાં સંસ્થાનોમાં મુખ્ય (શ્રેષ્ઠ) ગણાય છે. અને આ સંસ્થાન પંચેન્દ્રિય ઊવના શરીરના એક આકારવિશેષ રૂપ હોય છે.

ન્યગ્રોધમંડલસંસ્થાન-વડના વૃક્ષને ન્યગ્રોધ કહે છે. તે વડના જેવું જે સંસ્થાન (આકાર) હોય છે તે સંસ્થાનનું નામ ન્યગ્રોધમંડલસંસ્થાન છે. જેમ વડનો ઉપરનો ભાગ સંપૂર્ણ અવયવોવાળો હોય છે, પણ નીચે એવો હોતો નથી, એજ પ્રમાણે આ સંસ્થાન નાભિથી ઉપરના ભાગમાં ઘણા વિસ્તાર-વાળું હોય છે, પરંતુ નાભિની નીચેનો ભાગમાં ન્યૂનાધિક પ્રમાણુવાળું હોય છે. માટે આ પ્રકારના સંસ્થાનનું નામ ન્યગ્રોધમંડલ સંસ્થાન છે.

સાદિસંસ્થાન નાભિની નીચેનો જે ઉત્સેધ નામનો શરીરનો ભાગ છે, તેને અહીં “આદિ” પદ વડે ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. નાભિથી નીચેનો જે ભાગ કાયરૂપ આદિની સાથે રહે છે તેનું નામ ‘સાદિ’ છે. જે કે સમસ્ત શરીરો આદિ સહિત જ હોય છે, છતાં પણ અહીં જે સાદિ વિશેષણ લગા-

ઉક્તમ્-ઉત્સેધવહુલમિતિ। અત્રેદયુક્ત' ભવન્તિ-યત્સ્થાનં નામેરધ્વઃ પ્રમાણોપપન્ન-મુખ્યૈ ચ હીનં તત્સાદીતિ बोध्यम्। કુબ્જ-યત્ર સંસ્થાને શિરો ગ્રીવં હસ્તપાદા-દિકં ચ યથોક્તપ્રમાણલક્ષણોપેતમ્, ઉદગદિમણ્ડલં ચ યથોક્તપ્રમાણરહિતં તત્ કુબ્જમિત્યુચ્યતે। વામનમ્-યત્ર તુ હૃદયોદરપૃષ્ઠં સર્વલક્ષણોપેતં શેષં તુ હીનલક્ષણં તદ્ વામનમ્-કુબ્જવિપરીતમિત્યર્થઃ। હુણ્ડમ્=યત્ર સંસ્થાને સર્વેઽવયવયાઃ પ્રાયો લક્ષણવિરુદ્ધા ભવન્તિ, તત્સંસ્થાનં હુણ્ડમિત્યુચ્યતે। ચતુરસ્રસંસ્થાનસ્ય સમસ્તલક્ષ-

રવા હૈ वह अन्यथानुपपत्ति के बल से विशिष्ट प्रमाणलक्षणोपेत आदि से ही संबंधित होता है। इसीलिये उत्सेधवहूल ऐसा कहा है। इसका तात्पर्य यह है कि नाभि से नीचे का भाग जिस संस्थान में बहुत विस्तारवाला होता है और नाभि से ऊपर का भाग हीन होता है वह संस्थान सादि है। कुब्ज जिस संस्थान में शिर, ग्रीवा, हाथ, पग आदि यथोक्त प्रमाणवाले हों और उदर आदि का मंडल यथोक्त प्रमाण से विहीन हो वह कुब्ज संस्थान है। वामन-जिस संस्थान में हृदय, उदर और पीठ ये समस्त लक्षणों से युक्त हों और बाकी के अवयव हीन लक्षणवाले हों उसका नाम वामन संस्थान है। यह संस्थान कुब्ज से विपरीत होता है। हुण्ड संस्थान-जिस संस्थान में समस्त अवयव प्रायः लक्षणहीन होते हैं उसका नाम हुण्ड संस्थान है। समचतुस्र संस्थान समस्त लक्षणों से

ડવામાં આવ્યું છે, તે અન્યથાનુપપત્તિના બળથી વિશિષ્ટ પ્રમાણ લક્ષણોપેત આદિ વડે જ સંબંધિત હોય છે. તેથી જ તેને ઉત્સેધ બહુલ કહ્યું છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે સંસ્થાનમાં નાભિની નીચેનો ભાગ ઘણા વિસ્તારવાળો હોય, પરંતુ નાભિની ઉપરનો ભાગ હીનપ્રમાણવાળો હોય છે, તે સંસ્થાનને સાદિ સંસ્થાન કહે છે.

કુબ્જસંસ્થાન-જે સંસ્થાનમાં શિર, ગ્રીવા, હાથ, પગ આદિ અંગો શાસ્ત્રોક્ત પ્રમાણવાળાં હોય, પરંતુ ઉદર આદિ અંગો યથોક્ત પ્રમાણથી વિહીન હોય છે, તે સંસ્થાનને કુબ્જસંસ્થાન કહે છે.

વામનસંસ્થાન-જે સંસ્થાનમાં હૃદય, પેટ, અને પીઠ, આ અંગો સમસ્ત લક્ષણોથી યુક્ત હોય છે, પરંતુ બાકીનાં અવયવો હીન લક્ષણવાળાં હોય છે, તે સંસ્થાનને વામનસંસ્થાન કહે છે. આ સંસ્થાન કુબ્જસંસ્થાન કરતાં વિપરીત લક્ષણોવાળું હોય છે.

હુંડસંસ્થાન-જે સંસ્થાનમાં શરીરનાં બધા અવયવો યથોક્ત લક્ષણોવાળાં હોવાને બદલે વિપરીત લક્ષણોવાળાં હોય છે, તે સંસ્થાનને હુંડસંસ્થાન કહે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૦ સંસ્થાનાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૧૩

ળોપેત્ત્વાત્ મુલ્લત્તમ્ । તતઃ શેષાણાં યથાક્રમં હીનત્વાદ્ દ્વિતીયાદિત્વં बोध्यम् ।
 સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી बोध्या । पश्चानुपूર્वी तु, हुण्डादिचतुरस्तान्ता बोध्या । तथा-चतुर-
 स्तादि हुण्डान्तानां पदानामन्योन्याभ्यासो द्विरूपोनः । आद्यन्तरूपद्वयभङ्गकविव-
 क्षामपहाय ये भङ्गास्ते-अनानुपूर्वीति । ननु यदीत्यं संस्थानानुपूर्वी प्रोच्यते, तर्हि
 संहननवर्णरसस्पर्शाद्यानुपूर्व्योऽपि वक्तव्याः स्युः, तथा सति आनुपूर्व्याः प्राग्
 द्वासप्ततितमसूत्रोक्तदशसंख्यकत्वमेव परिहीयेत, एवं च आनुपूर्व्याः दशविधत्व

યુક્ત હોતા હૈ इसलिये उस में मुख्यता है । शेष प्रमाणोपेत-लक्षणों से
 यथाक्रम हीन हैं इसलिये उन में भगुरुयता द्वितीयता आदि है । यही
 पूर्वप्रक्रान्त पूर्वानुपूर्वी है । हुण्ड संस्थान से लेकर समचतुरस्र संस्थान
 तक पश्चानुपूर्वी होती है । तथा समचतुरस्र से लेकर हुण्ड संस्थान तक
 के पदों का परस्पर में गुणाकरने पर और उस गुणिन राशि में आदि
 अंत के भेगद्वय की विवक्षा कम करने पर जो भेग होते हैं उन भेग
 स्वरूप अनानुपूर्वी होती है । शंका-यदि इस प्रकार से संस्थानानुपूर्वी
 आप कहते हैं तो संहनन, वर्ण, रस, स्पर्श आदि को भी आनुपूर्वियों
 आपको कहनी चाहिये । इस प्रकार से आनुपूर्वियां कहने पर जो ७२
 वें सूत्र में " आनुपूर्वियां दश होती हैं " ऐसा कहा है सो उस संख्या
 में ही आती है ।

સમચતુરસ્ર સંસ્થાન સમસ્ત લક્ષણોથી યુક્ત હોય છે. તેથી તેમાં
 પ્રધાનતા માનીને તેનું કથન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. બાકીનાં સંસ્થાનો
 શાઓક્ત લક્ષણો કરતાં ક્રમશઃ ઓછાં ઓછાં લક્ષણો ધરાવે છે તેથી તે
 સંસ્થાનોને ગૌણ ગણીને તેમનું કથન સમચતુરસ્રસંસ્થાનનું કથન કર્યા બાદ
 કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રકારનો કથનનો જે ક્રમ છે તેને જ અહીં
 'પૂર્વાનુપૂર્વી' રૂપ ગણવામાં આવેલ છે. હુંડ સંસ્થાનથી લઈને ઊલટા ક્રમે
 સમચતુરસ્ર પર્યન્તના સંસ્થાનોનો ક્રમ રાખવાથી પશ્ચાનુપૂર્વી રૂપ બીજી
 સંસ્થાનનુપૂર્વી બને છે

અનાનુપૂર્વી-સમચતુરસ્ર સંસ્થાનથી લઈને હુંડસંસ્થાન પર્યન્તની એક
 એકની વૃદ્ધિવાળી શ્રેણિમાં સ્થાપિત સંસ્થાનોનો પરસ્પરની સાથે શુણ્ણાકાર
 (સંયોજન) કરવાથી જે શુણ્ણિતરાશિ આવે તેમાંથી આદિ અને અન્તના જે
 ભાગોને બાદ કરવાથી જે ભાગસમૂહ બાકી રહે છે, તે ભાગસમૂહ
 રૂપ અનાનુપૂર્વી હોય છે.

શંકા-જે આ પ્રકારે આપ સંસ્થાનાનુપૂર્વીનું કથન કરો છો, તો સંહનન,
 વર્ણ, રસ, સ્પર્શ આદિકોની આનુપૂર્વીઓનું આપે કથન કરવું જોઈએ આ
 પ્રકારે આનુપૂર્વીઓ કહેવામાં આવે તો ૭૨માં સૂત્રમાં " આનુપૂર્વીઓ દસ
 હોય છે, " આ પ્રકારનું જે કથન કર્યું છે તે કેવી રીતે સંમત માની શકાય ?

કથનમસંગતમ્ ? इति चेदाह पूर्वोक्तमानुपूर्व्या दशविधत्वं नो संख्याया नियाम-
कम् अपि तु उपलक्षणमात्रम् । अतो दशविधानुपूर्व्यतिरिक्ता अन्या अपि
संभाव्यमाना आनुपूर्व्यः सुधिया स्वधिया विभावनीयाः ॥सू० १४०॥

અથ સામાચાર્યાનુપૂર્વીમાહ-

મૂલમ્—સે કિં તં સામાયારી આણુપુઠ્વી ? સામાયારી આણુપુઠ્વી
તિવિહા પળણત્તા, તં જહા—પુઠ્વાણુપુઠ્વી પચ્છાણુપુઠ્વી અણાણુ-
પુઠ્વી । સે કિં તં પુઠ્વાણુપુઠ્વી ? પુઠ્વાણુપુઠ્વી—ઇચ્છાગારો, મિચ્છા-
ગારો, તહકારો, આવસિસયા, નિસીહિયા, આપુચ્છળા, પહિપુચ્છળા,
છંદળા, નિમંતળા, ઉવસંપયા । સે તં પુઠ્વાણુપુઠ્વી । સે કિં તં
પચ્છાણુપુઠ્વી ? પચ્છાણુપુઠ્વી—ઉવસંપયા જાવ ઇચ્છાગારો । સે તં
પચ્છાણુપુઠ્વી । સે કિં તં અણાણુપુઠ્વી ? અણાણુપુઠ્વી—અયાણ ચેવ
અગાઈયાણ અગુત્તારિયાણ દસગચ્છમયાણ સેઠીણ અન્નમન્નભાસો
દુરુવૂળો । સે તં અણાણુપુઠ્વી । સે તં સામાયારી આણુપુઠ્વી । સૂ. ૧૪૧।

છાયા—અથ કા સા સામાચાર્યાનુપૂર્વી ? સામાચાર્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞા,
તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી—ઇચ્છાકારઃ,
મિથ્યાકારઃ, તથાકારઃ, આવશ્યકી, નૈષેધિકી, આપચ્છના, પ્રતિપચ્છના, છન્દના,

उत्तर — पहिले जो आनुपूर्वी में दश प्रकारता प्रकट की है वह
संख्यात की नियामकता रूप से प्रकट की है, किन्तु वह तो उपलक्षण
मात्र से कही है । इसलिये दश प्रकार की आनुपूर्वियों से भी अतिरिक्त
और भी आनुपूर्वियां संभवित होती हैं ऐसा इससे भाव निकलना है ।
इसलिये ऐसी आनुपूर्वियों को बुद्धि शाली जन अपनी बुद्धि से उद्भा-
वित करलें । सूत्र " १४० "

ઉત્તર—પહેલાં આનુપૂર્વીમાં જે દસ વિધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે
તે સંખ્યાતની નિયામકતા રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવી નથી, પણ તે તો ઉપ-
લક્ષણ માત્રની અપેક્ષાએ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. તેથી દસ પ્રકારની
આનુપૂર્વીઓ સિવાયની બીજી આનુપૂર્વીઓ પણ સંભવિત હોય છે, એવો
તે કથનનો ભાવાર્થ સમજવો તેથી બુદ્ધિશાળી માણસોએ એવી આનુપૂર્વી-
ઓને યોગ્યતાની બુદ્ધિથી જ ઉદ્ભાવિત કરી લેવી જોઈએ. ॥સૂ૦૧૪૦॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૧ સામાચાર્યાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૧૫

નિમન્ત્રણા, ઉપસંપત્ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી-
ઉપસંપદ યાવદિચ્છાકારઃ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુ
પૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયમેત્તેત્તરિકાયાં દશગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યા-
ધ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ । સૈવા અનાનુપૂર્વી । સૈવા સામાચાર્યાનુપૂર્વી ॥મૂ૦ ૧૪૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા સામાચાર્યાનુપૂર્વી ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । સામાચાર્યાનુપૂર્વી-
સમાચરણં સમાચારઃ શિષ્ટજનાચરિતઃ ક્રિયાકલાપઃ, સ એવ સામાચારી, સ્વાર્થ-
વ્યજ્, પિત્વાન્ડીપ્, તદ્રૂપા આનુપૂર્વી સામાચાર્યાનુપૂર્વી । સા હિ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિ

અથ સૂત્રકાર સામાચારી આનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં —

“સે કિં તં સામાચારી આનુપૂર્વી” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સામાચારી આનુપૂર્વી) હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વપ્રકાન્ત
સામાચારી આનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સામાચારી આનુપૂર્વી તિવિહા પળ્લણસા) સામાચારી આનુપૂર્વી
કા તાત્પર્ય હૈ શિષ્યજનો દ્વારા આચરિત ક્રિયાકલાપ રૂપ સમાચાર । યહ
સમાચાર હી સ્વાર્થ મેં વ્યજ્ પ્રત્યય ઓર ડીષ્ હોને સે સામાચારી એસા બન
જાતા હૈ । હસ સામાચારી રૂપ જો આનુપૂર્વી હૈ । વહ સામાચારી આનુપૂર્વી
કહી જાતી હૈ । યહ આનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તં જહા)
જૈસે (પુવ્વાણુપુવ્વી, પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી ઓર
અનાનુપૂર્વી । (સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી) હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વાપૂર્વી સામાચારી કયા હૈ ?

હવે સૂત્રકાર સામાચારી આનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં સામાચારી આનુપૂર્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સામાચારી આનુપૂર્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત
સામાચારી આનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સામાચારી આનુપૂર્વી તિવિહા પળ્લણસા, તંજહા) શિષ્યજનો દ્વારા
આચરિત ક્રિયાકલાપ રૂપ સમાચારને સામાચારી આનુપૂર્વી કહે છે. તે સમા-
ચાર જ સામાચારી રૂપ હોવાથી તેનું નામ સામાચારી પડ્યું છે. આ
સામાચારી રૂપ જે આનુપૂર્વી છે તેને સામાચારી આનુપૂર્વી કહે છે. તેના
નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે—(પુવ્વાણુપુવ્વી પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી)
(૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વી સામાચારીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

મેદેન ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા । તત્ત્વ-પૂર્વાનુપૂર્વીં હચ્છાકારઃ, મિથ્યાકારઃ, તથાકારઃ, તત્ત્વ-હચ્છાકારઃ-હચ્છાવા વલામિયોગમન્તરેણ કરણમ્ ॥૧॥મિથ્યાકારઃ=મિથ્યા=યદેતન્મયાઽઽચરિતં તદસદિતિ મનસિ કરણમ્ । કર્મિમશ્વિદકૃત્યે કર્મણિ કૃતે સત્તિ ભવ્યેનૈવં વિચિન્ત્યતે-યદિદં મયા કૃતં તદ્ ભગવતાઽનુક્તત્વાત્ મિથ્યાભૂતમ્, અતો મયેદં દુષ્કૃતં કૃતમિત્યેવં યદસત્ક્રિયાતો નિવૃત્તિઃ સ મિથ્યાકાર ઇતિ ભાવઃ ॥૨॥

ઉત્તર — (પુઠ્ઠવાણુપુઠ્ઠવી) પૂર્વાનુપૂર્વીં સામાચારી હસ પ્રકાર સે હૈ—(હચ્છાગારો મિચ્છાગારો, તદ્વચ્ચકારો આવસ્થિયા નિસીહિયા, આપુચ્છણા' પહિપુચ્છણા છંદણા' નિમંતણા, ઉવસંપયા) હચ્છાકાર, મિથ્યાકાર, તથાકાર, આવશ્યકી, નૈષેધિકી, આપ્રચ્છના, પ્રતિપ્રચ્છના, છન્દના, નિમંત્રણા, ઓર ઉપસંપન્ । કિસી કી જવર્દસ્તી વિના વ્રતાદિક આચાણ કરને કી હચ્છા કરના હસકા નામ હચ્છાકાર હૈ । મેરે પ્રમાદ આદિ સે અકૃત્ય કા સેવન હો ગયા હૈ વહ મેરા નિષ્ફલ હો-અસત્ હો એસા મન મેં વિચાર કરના હસકા નામ મિથ્યાકાર હૈ । કોઈ અકૃત્ય કર્મ જવ બન જાતા હૈ । તવ બળ્યપુરુષ મન મેં એસા ચિન્તવન કરતા હૈ કિ જો યહ મેંને કિયા હૈ વહ ભગવાન્ દ્વારા અનુક્ત હોને સે મિથ્યાભૂત હૈ । હસલિયે યહ દુષ્કૃત્ય હૈ ઓર યહ મેંને કિયા હૈ-અવ આગે નહીં કરુંગા-હસ પ્રકાર

ઉત્તર-(પુઠ્ઠવાણુપુઠ્ઠવી) પૂર્વાનુપૂર્વીં સામાચારીતુ' સ્વરૂપ આ પ્રકારતુ' છે- (હચ્છાગારો, મિચ્છાગારો, તદ્વચ્ચકારો, આવસ્થિયા, નિસીહિયા, આપુચ્છણા, પહિપુચ્છણા, છંદણા, નિમંત્રણા, ઉવસંપયા) હચ્છાકાર, મિથ્યાકાર, તથાકાર, આવશ્યકી, નૈષેધિકી, આપ્રચ્છના, પ્રતિપ્રચ્છના, છન્દના, નિમંત્રણા અને ઉપસંપત્, આ કર્મે પહોનો વિન્યાસ (સ્થાપના) કરવો તેતુ' નામ પૂર્વાનુપૂર્વીં સામાચારી છે. હવે હચ્છાકાર આદિ પહોનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે- કોઈની બળજબરી વિના-અકારના કોઈ પણ દબાણ વિના-વ્રતાદિક આચરવાની હચ્છા કરવી તેતુ' નામ હચ્છાકાર છે.

“મારા દ્વારા પ્રમાદ આદિને કારણે આ અકૃત્યતુ' જે સેવન થઈ ગયું છે, તે મારું અકૃત્ય નિષ્ફલ (મિથ્યા) હો,” આ પ્રકારનો મનમાં વિચાર કરવો તેતુ' નામ મિથ્યાકાર છે. જ્યારે કોઈ અકૃત્યતુ' સેવન થઈ જાય છે ત્યારે બળ્યપુરુષ મનમાં એવું ચિન્તવન કરે છે કે “આ મેં જે કયું છે તે ભગવાન દ્વારા અનુક્ત હોવાથી મિથ્યાભૂત છે. તેથી તે દુષ્કૃત્ય રૂપ જ છે. એવું દુષ્કૃત્ય મારા વડે સેનાઈ ગયું છે, પરંતુ હવેથી હું તેતુ' સેવન નહીં કરું,” આ પ્રકારનો વિચાર કરીને અસત્ ક્રિયાઓથી દૂર રહેવું-એવી ક્રિયાઓ કરતાં પાછાં હઠવું, તેતુ' નામ મિથ્યાકાર છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૧ સામાચાર્યાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૧૬

તત્કાલકારશ્ચ-સૂત્રવ્યાખ્યાનાદૌ પ્રસ્તુતે ગુરુભિઃ કસ્મિંશ્ચિદ્ વચસ્યુદીરિતે સતિ યથા મવન્તઃ પ્રતિભાદયન્તિ તથૈવૈત" દિત્યેવં કરણમ્-વિતર્કમકૃત્વૈવ ગુર્વાજ્ઞાઽભ્યુપગમ હત્યર્થઃ ॥૩॥ આવશ્યકી-જ્ઞાનાઘર્થમુપાશ્રયાદવશ્યં બહિર્ગમને સમુપસ્થિતે 'અવશ્ય-મિદં કર્તવ્યમતોઽહં ગચ્છામિ' ઇત્યેવં યા ગુરું પ્રતિ નિવેદના સા આવશ્યકીતિ તાત્પર્યમ્ ॥૪॥ નૈષેધિકી-નિપેષે મા ॥-નૈષેધિકી=ઉપાશ્રયાદ્ બહિઃ કર્તવ્યવ્યાપારં પરિસમાપ્ય પુનસ્તત્રૈવ પ્રવિશતઃ સાધોઃ શેષસાધૂનામુત્ત્રાસાદિ-દોષપરિજિહ્વીર્યયા બહિર્વ્યાપારનિવેધેન ઉપાશ્રયપ્રવેશમુચનમ્ ॥૫॥ આપ્રચ્છના="મદન્ત ! કરોમીદ"

વિચાર કર અસન્ ક્રિપા પ્રોં સે પીછે હટના અને દૂર રહના હસકા નામ મિથ્યાકાર હૈ । સૂત્ર વ્યાખ્યાન આદિ જવ હો રહા હો તથ ઉસ સમય મુરુજન જો કોઈ મી વચન ઉચ્ચરિત કરે તથ એસા કહના કિ જિમ્ પ્રકાર આપ કહતે હૈં વહ વૈસા હી હૈ । હસકા નામ તથાકાર હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ વિતર્ક કિયે વિના હી ગુરુદેવ કી આજ્ઞા કા સ્વીકાર કરના તથાકાર હૈ । આવશ્યક કર્તવ્ય કરને કે લિયે ઉપાશ્રય સે બહિર્ગમન યદિ અવશ્ય કર્તવ્ય રૂપ મેં ઉપસ્થિત હો તથ " અવશ્ય કર્તવ્યમિદમ્ અતો ગચ્છામિ" એસા ક્યાલ વરકે ગુરુ સે બાહર જાને કી આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરને કે લિયે નિવેદન કરના હસકા નામ આવશ્યકી હૈ । ઉપાશ્રય સે બાહિર કર્તવ્ય કર્મ કો સમાપ્ત વરકે જબ સાધુ ઉપાશ્રય મેં પ્રવેશ કરે, તથ શેષ સાધુ જનોં કો મેરે દ્વારા કોઈ ઉત્ત્રાસ આદિ ન હો હસ પ્રકાર કે ક્યાલ સે ઉપાશ્રય મેં અપને પ્રવેશ કી સૂચના દેના હસકા નામ નૈષેધિકી હૈ ।

સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આદિ બ્યારે આલી રહું હોય, ત્યારે ગુરુ જે વચને કહે તેને સ્વીકારી લેવાં-“ હે ગુરુદેવ ! આપ જે કહે છે તે ખરું જ છે-આપની વાત યથાર્થ છે, ” આ પ્રકારનાં વચનેનું ઉચ્ચારણ કરવું તેનું નામ તથાકાર છે. એટલે કે વિતર્ક કર્યા વિના જ ગુરુની આજ્ઞાને સ્વીકાર કરવો તેનું નામ તથાકાર છે.

આવશ્યકી-આવશ્યક કર્તવ્ય કરવાને માટે ઉપાશ્રયમાંથી બહાર જવાનું જે અવશ્ય કર્તવ્ય રૂપે ઉપસ્થિત થાય, તે “ અવશ્ય કર્તવ્યમિદમ્ અતો ગચ્છામિ ” આ કાર્ય અવશ્ય કરવા યોગ્ય છે, ” આ પ્રકારનો વિચાર કરીને બહાર જવાની આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરવા માટે ગુરુની આગળ નિવેદન કરવું તેનું નામ આવશ્યકી છે. ઉપાશ્રયની બહારના કાર્યને પતાવીને બ્યારે સાધુ ઉપાશ્રયમાં પ્રવેશ કરે, ત્યારે તે પોતાના ઉપાશ્રયમાં પાછાં ફરવાની સૂચના આપે છે. આ પ્રકારે ઉપાશ્રયમાં પુનઃપ્રવેશની જે સૂચના અપાય છે તેને નૈષેધિકી કહે છે. આમ કરવાનું કારણ એ છે કે તેના આગમનની પ્રતીક્ષા કરતા બાકીના

મિત્યેવં ગુરું પ્રતિ પ્રચ્છનમ્ ॥૬॥ પ્રતિપ્રચ્છના=કિંચિત્કર્ત્તવ્યમુદ્દિશ્ય શિષ્યેણ પૃષ્ઠં ગુરુઃ તત્કાર્યં કર્તું દત્તાહ્નોઽપિ પુનઃ કાર્યારંભસમયે કથયતિ-સા પ્રતિપ્રચ્છના અથવા-ગ્રામાન્તરગમનાય ગુરુણાદિષ્ટઃ શિષ્યો ગમનકાલે યત્પુનર્ગુરું પ્રતિપૃચ્છતિ સા પ્રતિપ્રચ્છના 'एवं प्रत्येककार्येऽपि बोध्यम्' ॥૭॥ છન્દના=સાધુઃ સ્વાનીતાશનાદુષ્ભોગવિષયે ગુર્વાજ્ઞયા 'परिशुद्धस्वेदं कुरु मयि कृपाम्' इत्येवं-યથારાત્નિક મન્યસાધૂન્ પ્રતિ આગ્રહં કરોતિ, સા છન્દના ॥૮॥ નિમન્ત્રણા='इमं-पदार्थमुप

हे भदन्त । मैं यह काम करता हूँ इस प्रकार से गुरु महाराज से पूछना इसका नाम आप्रचछना है । किसी कर्तव्य कार्य को उद्देश्य करके जब शिष्य गुरुजन से उस कार्य को करने की आज्ञा प्राप्त करने के लिये पूछता है, और कार्य की आज्ञा होने पर भी कार्य करने के समय में गुरु से पुनः पूछना इसका नाम प्रतिप्रचछना है । अथवा दूसरे ग्राम में जाने के लिये गुरुद्वारा आदिष्ट हुआ शिष्य जब जाने लगे तो उसका कर्तव्य है कि वह जाते समय पुनः गुरु महाराज से पूछे-इस प्रकार के पूछने का नाम भी प्रतिप्रचछना है । यह प्रतिप्रचछना प्रत्येक कार्य में भी हो सकती है । साधु अपने भाग का आहार आदि के लिये यथारात्रिक अन्य साधुओं से गुरु की आज्ञा प्राप्त कर जो ऐसा आग्रह

સાધુઓને તેના આગમનની ખબર પડે છે અને તેના દ્વારા ડોકાવેને ઉત્પન્ન થવાની સંભાવના રહેતી નથી.

આપ્રચ્છના-“હે ભગવન્! હું આ કામ કરું છું” આ પ્રકારે ગુરુ મહાજને પૂછવું તેનું નામ આપ્રચ્છના છે.

પ્રતિપ્રચ્છના-કોઈ કામ કરવા માટે શિષ્ય ગુરુ પાસે આજ્ઞા માગે, અને તે કાર્યની શુદ્ધિ આજ્ઞા આપ્યા છતાં પણ કાર્ય કરતી વખતે આ પ્રમાણે ગુરુને ફરીથી પૂછવું તેનું નામ પ્રતિપ્રચ્છના છે.

અથવા-બીજે ગામ જવાની શુરુ દ્વારા આજ્ઞા મળી હોય, છતાં પણ બીજે ગામ ગમન કરતી વખતે શિષ્યે ફરીથી ગુરુની આજ્ઞા લેવી જોઈએ આ પ્રકારે પૂર્વે આજ્ઞા પ્રાપ્ત થઈ ગયા બાદ ગમન કરતી વખતે ગુરુને ફરી બે પૂછવામાં આવે છે તેનું નામ પ્રતિપ્રચ્છના છે પ્રત્યેક કાર્યમાં પણ આ પ્રતિપ્રચ્છના સંભવી શકે છે.

છંદના-પોતાના ભાગના આહારાદિને ભોજનાદિ રૂપે ગ્રહણ કરવાની અન્ય સાંભોગિક સાધુઓને વિનંતિ કરવી તેનું નામ છંદના છે. ગુરુની આજ્ઞા લઈને તે સાધુ યથારાત્નિક અન્ય સાધુઓને આ પ્રમાણે આગ્રહ કરે

લભ્યાહં તુમ્યં દાસ્યામીતિ મે ભાવો વર્તતે ' इत्येवं पदार्थप्राप्ते: पूर्वमेव यत्साधु-
नामामन्त्रणं सा निमन्त्रणा । उक्तं च —

“पुञ्चगहिणं छंदण निमंतणा होई अगगहिणं”

છાયા—પૂર્વગૃહીતેન છન્દના નિમન્ત્રણા ભવત્યગૃહીતેનેતિ ॥૧॥

તથા—ઉપસમ્પત્=“સ્વદીયોઽહ” મિત્યેવં રૂપેણ શ્રુતાધર્મમન્યદીયસત્તાઽમ્યુપગમઃ
॥૧૦॥ इह धर्मस्य परानुपतापमूलत्वात् इच्छाकारस्य आज्ञाबलाभियोगलक्षणपरो-
पतापवर्जकत्वात् प्राधान्येन प्रथममुपन्यासः । परानुपतापकेनापि च कथंचित्स्खलने

करता है कि मुझ पर कृपा करके इसे आप ग्रहण करिये—अपने उप-
योग में लाइये उसका नाम छंदना है । पदार्थ प्राप्ति के पहिले ही जो
अन्य साधुजनों से ऐसा कहना कि इस पदार्थ को लाकर मैं तुम्हें दूंगा
इसका नाम निमंत्रणा है । उक्तं च करके (पुञ्चगहिणं) इत्यादि गाथा
द्वारा यही बात कही गई है । श्रुनादिके अर्थ को सीखने के लिये मैं
आपका ही हूँ इस प्रकार से अन्य साधु आदि की आधीनता स्वीकार
करना इसका नाम उपसंपत् है । धर्म परानुपतापमूलक होता है—
अर्थात् धर्म वही है कि जिस से—किसी भी प्राणी को कष्ट न हो ।
इच्छाकार इसी प्रकार का धर्म है । क्योंकि इसमें जिनव्रतादिकों को
आचरण करनेकी इच्छा की जाती है उसमें पर की आज्ञा और बला-
भियोग काम नहीं करता है । क्योंकि इन से दूसरे प्राणियों को संताप

છે—“કૃપા કરીને આપ આ આહારાદિને ગ્રહણ કરો અને તેનો ઉપયોગ
કરો.” આ પ્રકારની સાધુ સામાચારીનું નામ છંદના છે.

નિમંત્રણા—પદાર્થની પ્રાપ્તિ થયાં પહેલાં કોઈ પણ સાધુને કોઈ પણ
અન્ય સાધુ દ્વારા એવું જો કહેવામાં આવે છે કે અમુક પદાર્થ વહેારી
લાવીને હું આપને આપીશ, આ પ્રમાણે કોઈ પણ વસ્તુ લાવી આપવાનો
ભાવ છે તેમ કહેવું તેનું નામ નિમંત્રણા છે. “પુન્ચગહિણ” ઇત્યાદિ
સૂત્રપાઠ દ્વારા આ વાત જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

ઉપસંપત્—શ્રુતાદિનો અર્થ શીખવાને માટે “હું આપનો જ છું,”
આ પ્રકારનાં વચનો દ્વારા અન્ય સાધુની આધીનતાનો સ્વીકાર કરવો તેનું
નામ ઉપસંપત્ છે.

ધર્મ પરાનુપતાપમૂલક હોય છે. એટલે કે ધર્મ તેને જ કહી શકાય કે
જેના દ્વારા કોઈ પણ પ્રાણીને કષ્ટ ન થાય ઇચ્છાકાર એજ પ્રકારનો ધર્મ
છે, કારણ કે તેમાં જે વ્રતાદિકોનું આચરણ કરવાની ઇચ્છા કરાય છે, તેમાં
અન્યની આજ્ઞા અથવા બળબળરી ચાલી શકતી નથી, કારણ કે એવી આજ્ઞા

મિથ્યાદુષ્કૃતં દાતવ્યમિતિ તદનન્તરં મિથ્યાકારસ્યોપન્યાસઃ । एतौ य गुरुवचन-
 प्रतिपत्तावेव ज्ञातुं शक्यौ, गुरुवचनं च तथाकारकरणेनैव सम्यक् प्रतिपन्नं भवतीति
 तदनन्तरं तथाकारस्यોपन્યાसः । गुरुवचनं स्वीकृत्यापि शिष्य उपाश्रयाद् बहि-
 निर्गमनकाले गुरुं पृष्ट्वैव निर्गच्छेत्, अतस्तथाकारानन्तरं गुरुपृच्छारूपाया आव-
 श्यक्याः कथनम् । बहिर्निर्गतः शिष्यो नैषેધિકपूर्वकमेवोपाश्रये प्रविशेदिति आव-
 श्यक्या अनन्तरं नैषેધिक्याः कथनम् । उपाश्रये प्रविष्टः साधुर्गुरुमापृच्छयेव सर्व-
 होता है या हो सकता है । अतः व्रतादिकों की चाहना में आत्मा की
 निज इच्छा ही काम करती हैं । इसलिये इच्छाकार में प्रधानता होने से
 उसका यहां सर्व प्रथम उपन्यास किया है । दूसरों को अनुपतापक होने
 वाले भी गुरुजन द्वारा कथंचित् व्रतादिक से स्वलिप्त होने पर शिष्या-
 दिजनों के लिये मिथ्यादुष्कृत दिया जाता है इसलिये इच्छाकार के
 बाद में मिथ्या दुष्कृत का पाठ रखा है । इच्छाकार और मिथ्यादुष्कृत
 ये दोनों गुरुवचनों पर विश्वास रखने पर या उनकी स्वीकृति करने पर
 ही ज्ञातुं शक्य हैं इसलिये गुरुमहाराज के वचनों का स्वीकार किया
 जाना तथाकार से ही जाना जाता है इसलिये मिथ्याकारके बाद
 तथाकार का पाठ रखा है । गुरुवचन को स्वीकार करके भी शिष्य
 का कर्तव्य है कि जब वह उपाश्रय से बाहर जावे तो गुरु से पूछकर
 ही जावे इस बात को स्पष्ट करने के लिये तथाकार के बाद आवश्यक

અને બળબળરી કરવામાં આવે તો અન્ય જીવને સંતાપ થાય છે કે થઈ
 શકે છે. તેથી વ્રતાદિકોની આહવામાં આત્માની યોતાની જ ઇચ્છા કાર્યસાધક
 બને છે. આ પ્રકારે ઇચ્છાકારમાં પ્રધાનતા હોવાને કારણે અહીં સૌથી પહેલાં
 ઇચ્છાકારનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે. બ્યારે કોઈ સાધુ કોઈ અકૃત્યનું
 સેવન કરે છે અથવા વ્રતાદિકોનો ભંગ કરે છે ત્યારે અન્ય જીવોને કષ્ટ
 નહીં આપનારા એવાં ગુરુજનો દ્વારા મિથ્યાદુષ્કૃત દેવામાં આવે છે, તેથી
 ઇચ્છાકારનો ઉપન્યાસ કર્યા બાદ મિથ્યાકારનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે.
 ઇચ્છાકાર અને મિથ્યાદુષ્કૃત, આ બન્નેનો સદ્ભાવ ત્યારે જ હોઈ શકે છે
 કે બ્યારે ગુરુનાં વચનો પર શિષ્યને વિશ્વાસ હોય છે ગુરુના વચનોનો શિષ્ય
 સ્વીકાર કરે છે, એ વાત તથાકાર વડે જ બાણી શકાય છે. તે કારણે મિથ્યા-
 કાર પછી તથાકારનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો છે.

ગુરુના વચનનો તથાકાર દ્વારા સ્વીકાર કરનાર શિષ્યે ઉપાશ્રયમાંથી કોઈ
 આવશ્યક કાર્ય નિમિત્તે બહાર જવા માટે ગુરુની આજ્ઞા લેવી જોઈએ, એજ
 વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે તથાકાર પછી આવશ્યકીનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૧ સામાચાર્યાનુપૂર્વાનિરૂપણમ્

૬૨૧

મનુષિષ્ઠેદિતિ નૈષેધિક્યા અનન્તરમાપ્રચ્છનાયાઃ કથનમ્ । કિંચિત્કાર્યં કર્તુમધ્યવ-
સિતઃ પ્રાપ્તાઙ્ગોઽપિ શિષ્યઃ કાર્યકરણસમયે ગુરું પુનઃ પૃચ્છેદિતિ ગુરોરનુમતિ
પ્રાપ્તુકામઃ કારણમદર્શનપૂર્વકં પુનઃપૃચ્છેદિતિ આપ્રચ્છનાનન્તરં પ્રતિપ્રચ્છનાયાઃ
કથનમ્ । પ્રતિપૃષ્ઠેન ગુરુનાઽનુજ્ઞાતઃ શિષ્યો સ્વસંધિમાગપ્રાપ્તાશનાદ્યાદારપરિમોગાર્થે
પર્યાયજ્યેષ્ઠક્રમેણ સાધુનામન્ત્રયેદિતિ પ્રતિપ્રચ્છનાનન્તરં છન્દનાયા ઉપન્યાસઃ ।

કા પાઠ રખા છે । બાહર ગયા હુઆ શિષ્ય નૈષેધિકીપૂર્વક હી ઉપાશ્રય
મેં પ્રવેશ કરે इस विषय को बनाने के लिये आवश्यक की के बाद नैषे-
धिकी का पाठ रखा है । उपाश्रय में प्रविष्ट हुआ शिष्य जो कुछ भी
करे वह गुरुमहाराज की आज्ञा लेकर ही करे इस विषय को कहने के
लिये नैषेधिकी के बाद आप्रचक्ष्णा का पाठ रखा है । किसी कर्तव्य
कार्य को करने के लिये शिष्य गुरु महाराज से पूछे परन्तु वे यदि उस
कार्य को करने की आज्ञा देवे शिष्य तत्पश्चात् पुनः आवश्यक कार्य
को करने के लिये गुरु महाराज से आवेदन करे और उस
कार्य को करने की उनसे आज्ञा प्राप्त करने के लिये पूछे यह संबंध
बताने के लिये आप्रचक्ष्णा के बाद प्रतिप्रचक्ष्णा का पाठ रखा है । गुरु
महाराज से आज्ञा प्राप्त कर अशनादिक को लाया हुआ शिष्य उसके
परिभोग के लिये सादर अन्य साधुओं को आमंत्रित करे इस बात को

છે. ઉપાશ્રયની બહાર ગયેલા સાધુએ નૈષેધિકીપૂર્વક જ ઉપાશ્રયમાં પ્રવેશ
કરવો જોઈએ, એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે આવશ્યકીના પાઠ પછી નૈષેધિ-
કીનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો છે. ઉપાશ્રયમાં પ્રવિષ્ટ થયેલો શિષ્ય જે કામ
કરે તે કામ તેણે ગુરુમહારાજની આજ્ઞા લઈને જ કરવું જોઈએ, એ વાત
પ્રકટ કરવાને માટે નૈષેધિકીના પાઠ પછી આપ્રચ્છનાનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો
છે. કોઈ પણ કાર્ય કરવા માટે શિષ્ય ગુરુની આજ્ઞા માગે અને ગુરુ તે કાર્ય
કરવાની આજ્ઞા આપે, તે પછી થોડીવાર થોડીને તેણે ફરીથી કાર્યનો
આરંભ કરતી વખતે ગુરુની ફરીથી આજ્ઞા માગવી તે બતાવવા માટે
પ્રતિપ્રચ્છના (ફરી પૂછવા)નો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે, તે કારણે સૂત્રકારે
આપ્રચ્છના પછી પ્રતિપ્રચ્છનાનો પાઠ મૂક્યો છે. ગુરુમહારાજની આજ્ઞા લઈને
જે આહારાદિ સાધુ લાવ્યો હોય તેના ઉપસોગને માટે અન્ય સાધુઓને
માનપૂર્વક બોલાવવા જોઈએ, એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે પ્રતિપ્રચ્છના પછી
છન્દનાનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો છે.

છન્દના તુ ગૃહીત એવાશનાદૌ સંભવેત્, અગૃહીતેતુ નિમન્ત્રણૈવ, અતઃછન્દનાયા અનન્તરં નિમન્ત્રણાયા ઉપન્યાસઃ । ૧ ગુરુપસત્તિમન્તરેણ=ગુરુસામીપ્યં વિના ઇચ્છા-કારાદિનિમન્ત્રણાન્તા સર્વાઽપિ સામાચારી ગુરુપસત્તિમન્તરેણ=ગુરુસામીપ્યં વિના ન જ્ઞાયતે ઇતિ સર્વાન્તે ઉપસમ્પદ ઉપન્યાસઃ ૧ । ઇતિ પૂર્વાનુપૂર્વીત્વે હેતુર્બોધ્યઃ । ઉપસંહરન્નાહ-સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વીતિ । પશ્ચાનુપૂર્વી તુ ઉપસમ્પદાદીચ્છાકારાન્તા બોધ્યા ।

કહને કે લિયે પ્રતિપ્રચ્છના કે બાદ છન્દના કા પાઠ રહ્યા હૈ । ગૃહીત અશનાદિક મેં હી છન્દના હોતી હૈ પરન્તુ જો અગૃહીત અશનાદિક હૈં ઉનમેં તો નિમંત્રણા હી હોતી હૈ । હસલિયે છન્દના કે બાદ નિમંત્રણા કા પાઠ રહ્યા હૈ । ઇચ્છાકાર સે લગાકર નિમંત્રણા તક કી જિતની બી સામાચારી હૈં વે સબ ગુરુ મહારાજ કી નિકટના કે વિના નહીં જાની જા સકતી હૈ હસ બાત કો કહને કે લિયે અન્ત મેં ઉપસંપદ્ કા ઉપન્યાસ કિયા હૈ । હસ પ્રકાર હસ સામાચારી કે પૂર્વાનુપૂર્વીત્વ મેં યહ સબ હેતુ જાનના ચાહિયે ।

(સે તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) હસ પ્રકાર યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્વી) હે ભદન્ત ! પશ્ચાનુપૂર્વી સામાચારી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(ઉવસંપયા જાવ ઇચ્છાગારો) ઉપસંપદા સે ઇચ્છાકાર પર્યન્ત (પચ્છાણુપુઞ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુઞ્વી ?) હે ભદન્ત !

ગૃહીત અશનાદિના વિષયમાં જ છન્દના સંભવી શકે છે, પરન્તુ અગૃહીત અશનાદિકના વિષયમાં નિમંત્રણા સંભવી શકે છે, તે કારણે છન્દનાના પાઠ પછી નિમંત્રણાનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો છે ઇચ્છાકારથી લઈને નિમંત્રણા પર્યન્તની જેટલી સામાચારી છે, તેમને બધુવાને માટે ગુરુની નિકટતાની જરૂર રહે છે, એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે સૌથી છેલ્લો ઉપસંપદનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે. સામાચારીમાં ઇચ્છાકાર આદિ ક્રમે પહેલી જે સ્થાપના કરવામાં આવે છે તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. આ પહેલે આ પ્રકારનો ક્રમ આપવાનું કારણ ઉપર પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. (સે તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) આ પ્રકારનું પૂર્વાનુપૂર્વી સામાચારીનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્વી ?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વી સામાચારીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઉવસંપયા જાવ ઇચ્છાગારો) ઉપસંપદાથી લઈને ઇચ્છાકાર પર્યન્તના બીજા ક્રમમાં પહેલો ઉપન્યાસ (સ્થાપના) કરવો (પચ્છાણુપુઞ્વી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૨ ભાવાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૨૩

તથા-ઇચ્છાકારાણ્યુપસમ્પદન્તાનાં પદાનામન્યોઽન્યામ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ-આગન્તપદ-
દ્વયવિવક્ષામપદાય યે મજ્ઞાસ્તે-અનાનુપૂર્વીં બોધ્યાઃ । પદ્ધત્સુપસંહરન્નાહ-સૈવા
સામાચાર્યાનુપૂર્વીતિ ॥સૂ૦ ૧૪૧॥

અથ ભાવાનુપૂર્વીમાહ—

પૂર્વમ્-સે કિં તં ભાવાણુપુટ્વી? ભાવાણુપુટ્વી તિવિહા પળ્ળતા,
તં જહા-પુઠ્વાણુપુટ્વી પચ્છાણુપુટ્વી અણાણુપુટ્વી । સે કિં તં
પુઠ્વાણુપુટ્વી ? પુઠ્વાણુપુટ્વી-ઉદણ ૧, ઉવસમિણ ૨, ય્વાહિણ ૩,
ચ્ચાવસમિણ ૪, પારિણામિણ ૫, સંનિવાહિણ ૬, । સે તં પુટ્વાણુ-
પુટ્વી । સે કિં તં પચ્છાણુપુટ્વી? પચ્છાણુપુટ્વી સંનિવાહિણ જાવ
ઉદહિણ । સે તં પચ્છાણુપુટ્વી । સે કિં તં અણાણુપુટ્વી ? અણા-

અનાનુપૂર્વીં કયા હૈ ? (અણાણુપુટ્વી) અનાનુપૂર્વીં સામાચારી હસ પ્રકાર
સે હૈ (ણ્યાણ ચેવ ણમોહ્યાણ ઉગુત્તરિયાણ દસ ગચ્છગયાણ સેદીણ અળ્ળ-
મન્નવ્માસો દુરુવૂળો) ઇચ્છાકાર સે લેકર ઉપસંપદા તક કે દશ પદોં
કા એક એક અધિક સંખ્યા કર કે પરસ્પર મેં ગુણા કરના ચાહિયે ઓર
હસ પ્રકાર સે જો રાશિ ઉત્પન્ન હોવે ઉસમેં સે આદિ અન્ત કે ભંગ દ્વય
કી વિવક્ષા કો કમ કર દેના ચાહિયે । અન્ત મેં જિતને ભંગ થયતે હૈ
ઉન ભંગાત્મક યહ અનાનુપૂર્વીં સામાચારી હોતી હૈ । (સે તં સામાચારી
આણુપુટ્વી) હસ પ્રકાર યહ સામાચારી આનુપૂર્વીં હૈ ॥સૂ૦ ૧૪૧॥

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુટ્વી) હે ભગવન્ ! અનાનુપૂર્વીં સામાચારીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અણાણુપુટ્વી) અનાનુપૂર્વીં સામાચારીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-
(ણ્યાણ ચેવ ણમોહ્યાણ ઉગુત્તરિયાણ દસગચ્છગયાણ સેદીણ અળ્ળમન્નવ્માસોદુરુવૂળો)
ઇચ્છાકારથી લઈને ઉપસંપદા પર્યન્તના દસ પદોને એક એક અધિક સંખ્યા
લઈને પરસ્પરમાં ગુણાકાર કરવો જોઈએ આ પ્રકારે જે રાશિ પ્રાપ્ત થાય
તેમાંથી આદિ અને અન્તના એ ભંગોની વિવક્ષા બાદ કરી નાખવી જોઈએ.
આ એ ભંગો બાદ જતાં જેટલા ભંગો બાકી રહે છે તેટલા ભંગોરૂપ આ
અનાનુપૂર્વીં સામાચારી હોય છે. (સે તં સામાચારી આણુપુટ્વી) સામાચારી
આનુપૂર્વીંનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ૦ ૧૪૧॥

પુપ્ત્ત્વી-પ્યાષ ચેવ પગાદ્યાષ પગુત્તરિથાષ છ ગચ્છગ્યાષ
સેઠીષ અન્નમન્નઘભાસો દુરૂવૂળો । સે તં અણાણુપુત્ત્વી । સે તં
ભાવાણુપુત્ત્વી । સે તં આણુપુત્ત્વી । આણુપુત્ત્વીતિ પયં સમત્તં ॥ સૂ. ૧૪૨ ॥

છાયા—અથ કા સા ભાવાનુપૂર્વી ? ભાવાનુપૂર્વી ત્રિવિધા મજ્જપ્તા, તથા—
પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી—ઔદ-
યિકઃ ૧, ઔપશમિકઃ ૨, ક્ષાયિકઃ ૩, ક્ષાયોપશમિકઃ ૪, પારિણામિકઃ ૫, સાન્નિ-
પાતિકઃ ૬ । સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી ? પશ્ચાનુપૂર્વી—સાન્નિપાતિકો
યાવદૌદયિકઃ । સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી—પત-
સ્થમેવ ઇકાદિકાયામ્ ઇકોત્તરિકાયાં વજ્રગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોઽન્યાભ્યાસો
ક્લિપ્તોનઃ । સૈષા અનાનુપૂર્વી । સૈષા ભાવાનુપૂર્વી । સૈષા આનુપૂર્વી । આનુપૂર્વીતિ
પદં સમાપ્તમ્ ॥ સૂ. ૧૪૨ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા ભાવાનુપૂર્વી ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—ભાવાનુપૂર્વી—
ભાવાઃ=ભાવ્યન્તે વિન્ત્યંતે પદાર્થા યૈસ્તે ભાવાઃ—અન્તઃકરણપરિણતિવિશેષઃ ।
શૂયતે તેન તેન રૂપેણાઽઽત્મના યૈસ્તે ભાવાઃ જીવસ્ય પરિણામવિશેષા ઔદયિકાદયઃ,
તેષામાનુપૂર્વી=ભાવાનુપૂર્વી । સા પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિમેદૈસ્ત્રિવિધા મજ્જપ્તા । તત્ર—પૂર્વાનુ-

અથ સૂત્રકાર ભાવાનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં—

‘ સે કિં તં ભાવાણુપુત્ત્વી ? ’ ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવાણુપુત્ત્વી ?) હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત ભાવા-
નુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(‘ભાવાણુપુત્ત્વી’ ભાવાનુપૂર્વી (ત્રિવિધા) ત્રીન પ્રકાર કી
(પણ્ણત્તા) કહી ગઈ હૈ । (તં જહા) ઉસકે વે ત્રીન પ્રકાર ચે હૈં—(પુત્ત્વાણુ-
પુત્ત્વી) ૧ પૂર્વાનુપૂર્વી (વચ્છાણુપુત્ત્વી) ૨ પશ્ચાનુપૂર્વી ઓર (અણાણુપુત્ત્વી)

હે સૂત્રકાર ભાવાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“ સે કિં તં ભાવાણુપુત્ત્વી ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવાણુપુત્ત્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વેક્ત ભાવાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કહેવું છે.

ઉત્તર—(ભાવાણુપુત્ત્વી ત્રિવિધા પણ્ણત્તા—તંજહા) ભાવાનુપૂર્વીનાં ત્રીણે પ્રમાણે
ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે—(પુત્ત્વાણુપુત્ત્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (વચ્છાણુપુત્ત્વી) (૨)
પશ્ચાનુપૂર્વી અને (અણાણુપુત્ત્વી) (૩) અનાનુપૂર્વી.

મનુષ્યોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૨ ભાવાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૨૫

પૂર્વા-ઔદયિકઃ ઔપશમિકઃ ક્ષાયિકઃ ક્ષાયોપશમિકઃ પારિણામિકઃ સાન્નિપાતિશ્ચેતિ ષટ્ । ઔદયિકાદિસ્વરૂપસ્ય પુસ્તાદ વક્ષ્યમાણત્વેનાત્ર તેષાં સ્વરૂપનિરૂપણં ન ક્રિયતે । અત્ર ગ્રાહ્યે નારકાદિગતિરૌદયિકો ભાવ इति વક્ષ્યતે ।

૧ અનાનુપૂર્વી । જિનકે દ્વારા પદાર્થોં કા વિચાર ક્રિયા જાતા હૈં ઉનકા નામ ભાવ હૈં । ઓર યે ભાવ અન્તઃકરણ કી પરિણતિ વિશેષરૂપ હૈં । અથવા આત્મા ઉમ્ ૨ રૂપ સે હોતા હૈં વે ભાવ હૈં । એસે વે ભાવ જીવ કે પરિણામ વિશેષરૂપ હૈં । ઓર યે પરિણામ વિશેષ ઔદયિક આદિ રૂપ હોતે હૈં । इन परिणाम रूप भावों की आनुपूर्वी का नाम भावानुपूर्वी है । (સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી?) હે મદન્ત ! ભાવાનુપૂર્વી કા ભેદ જો પૂર્વાનુપૂર્વી હૈં ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈં અર્થાત્ વહ કયા હૈં ?

ઉત્તર--(પુન્વાણુપુન્વી) વહ પૂર્વાનુપૂર્વી ઇમ પ્રકાર સે હૈ--(ઉદય) ઔદયિક (ઉવસમિ) ઔપશમિક (સ્વાહ) ક્ષાયિક (સ્વબોવસમિ) ક્ષાયોપશમિક (પારિણામિ) પારિણામિક (સંનિવાહ) ઓર સાન્નિપાતિક इन औदयिक आदिकों का स्वरूप आगे कहा जायगा, इसलिये यहां उसका स्वरूप निरूपण नहीं किया है । इस शास्त्र में नारकादि रूप चारों गतियां औदयिक भाव रूप से कही जावेंगी इसलिये औद-

જેમના દ્વારા પદાર્થોના વિચાર કરવામાં આવે છે, તેમનું નામ ભાવ છે. આ ભાવો અન્તઃકરણની પરિણતિવિશેષ રૂપ (પરિણામ રૂપ) હોય છે. અથવા આત્મા જે જે રૂપે હોય છે તે તે રૂપનું નામ ભાવ છે. એવાં તે ભાવો જીવના પરિણામવિશેષ રૂપ હોય છે. અને તે પરિણામવિશેષ ઔદયિક આદિ રૂપ હોય છે. તે પરિણામો રૂપ ભાવોની આનુપૂર્વીનું નામ ભાવાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન--(સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી?) હે ભગવન્ ! ભાવાનુપૂર્વીનો જે પૂર્વાનુપૂર્વી નામનો પહેલો ભેદ છે, તેનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર--(પુન્વાણુપુન્વી) તે પૂર્વાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે--(ઉદય) ઔદયિક, (ઉવસમિ) ઔપશમિક, (સ્વાહ) ક્ષાયિક, (સ્વબોવસમિ) ક્ષાયોપશમિક, (પારિણામિ) પારિણામિક, (સંનિવાહ) અને સાન્નિપાતિક, આ ક્રમે પહેલો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી ભાવાનુપૂર્વી છે.

આ ઔદયિક આદિ પદોનો અર્થ સૂત્રકાર દ્વારા આજળ પ્રકટ કરવામાં આવશે, તેથી અહીં તેમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કયું નથી. આ શાસ્ત્રમાં નરકાદિ રૂપ ચારે ગતિઓનું ઔદયિક ભાવ રૂપે પ્રતિષ્ઠાન કરવામાં આવશે તેથી ઔદયિક ભાવ રૂપ નરકાદિ ગતિઓનો સદ્ભાવ હોય, તો જ આઠીના

ઔદાયિકભાવરૂપનાસ્કાદિગતૌ મત્વામેવ ઔપશમિકાદયઃ શેષભાવા યથાસમ્ભવં પ્રાદુર્ભવન્તીતિ શેષમાશાધારસ્ત્વેન ઔદયિકસ્ય પ્રાધાન્યમ્ । અતઃ એવ મથમં તદુપ-
ન્યાસઃ । તતઃ શેષાણાં પञ्ચાનામપિ ભાવાનાં મધ્યે ઔપશમિકસ્ય સ્તોકવિષયત્વાત્
સ્તોકતયા પ્રતિપાદયિષ્યતે इति સૂચીકઠાહન્યાયેન ઔદાયિકાનન્તરમવશિષ્ટેષુ
પञ्ચસુ મધ્યે પૂર્વમૌપશમિકસ્વોપન્યાસઃ । ઔપશમિકાવેશવાઽધિકવિષયત્વાત્ક્ષાયિ-
કસ્ય તદનન્તરમુપન્યાસઃ । તત્તથ વિષયાણાં તારતમ્યમાશ્રિત્ય ક્રમેણ ક્ષાયોપશ-
મિકસ્ય પારિણામિકસ્ય ચોપન્યાસઃ । સાન્નિયાતિશભાવો हि पूर्वोक्तभावानां
द्विकादिसंयोगेन समुत्पद्यते इति सर्वान्તે સાન્નિયાતિશભાવોપન્યાસઃ । इयं भावानां
यिक भावरूप नरकादि गतिर्यो के होने पर ही शेष औपशमिक आदि
भाव यथासंभव उत्पन्न होते हैं । इसलिये શેષ ભાવોં કા આધારભૂત
હોને સે ઔદયિક ભાવ ઝેં પ્રધાનતા હૈ । ઇત્તઃ કારણ ઉત્પન્ન સર્વપ્રથમ
સૂત્રકારને વિન્યાસ કિયા હૈ । ઇસ કે બાદ અવશિષ્ટ પાંચોં ભાવોં કે
બીચ મેં ઔપશમિક ભાવ સ્તોક વિષયવાલા હૈ । ઇસલિયે વહ સ્વયં
સ્તોક હૈ ઇસ પ્રકાર સે આગે પ્રતિપાદિત કિયા જાવેગા, અતઃ સૂચીક-
ઠાહન્યાય સે ઔદયિક કે અનન્તર અવશિષ્ટ પાંચ ભાવોં કે બીચમેં
સે પહિલે ઔપશમિક કા પાઠ કિયા ગયા હૈ । ઔપશમિક કી અપેક્ષા
અધિક વિષયવાલા હોને સે ક્ષાયિક કા પાઠ ઔપશમિક કે બાદ કિયા
ગયા હૈ । ઇસ કે અનન્તર વિષયોં કી તારતમતા કા આશ્રય કરકે ક્રમ
સે ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક કા પાઠ કિયા ગયા હૈ । ઇન પૂર્વોક્ત
ભાવોં કે દ્વિકાદિ સંયોગ સે સાન્નિયાનિક ભાવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઇસલિયે

ઔપશમિક આદિ ભાવોઃ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે આ પ્રકારે બાકીના ભાવોના
આધાર રૂપ હોવાને લીધે ઔદયિક ભાવમાં પ્રધાનતા છે. તેથી જ સૂત્રકારે
તેનો વિન્યાસ સૌથી પહેલાં કર્યો છે—એટલે કે તેને સૌથી પહેલું સ્થાન
આપ્યું છે. બાકીના પાંચ ભાવોમાંનો ઔપશમિક ભાવ સ્તોક (અલ્પ) વિષય-
વાળો હોવાથી તે પોતે જ સ્તોક છે. (આ વાતનું સૂત્રકાર આગળ પ્રતિપા-
દન કરશે) તેથી સૂચીકઠાહ ન્યાયે ઔદયિક ભાવ પછી ઔપશમિક ભાવને
મૂકવામાં આવ્યો છે. ઔપશમિક ભાવ કરતાં અધિક વિષયવાળો હોવાને
કારણે ક્ષાયિકભાવને ઔપશમિક ભાવ પછી મૂકવામાં આવેલ છે. વિષયોની
અધિકતરતા અને અધિકતમતાને કારણે ક્ષાયિક ભાવ પછી અનુક્રમે ક્ષાયો-
પશમિક અને પારિણામિક ભાવોને મૂકવામાં આવ્યા છે. આ પૂર્વોક્ત ભાવોના
દ્વિકસંયોગ આદિથી સાન્નિયાનિક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી સૌથી છેલ્લે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૨ ભાવાનુપૂર્વીનિરૂપણમ્

૬૨૬

પૂર્વાનુપૂર્વી । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વીતિ । પશ્ચાનુપૂર્વી તુ સાન્નિપાતિકાઔદયિકાન્ત
 બોધ્યા । તથા-ઔદયિકાદિ સાન્નિપાતિકાન્તાનાં પળ્લાં પદાનામન્યોન્યાખ્યાસં
 દ્વિરૂપોનઃ-આધન્તપદદ્વયવિવક્ષામપહાય યે મજ્ઞાસ્તદાત્મિકાઽનાનુપૂર્વી બોધ્યા
 સબ કે અન્ત મેં સાન્નિપાતિક ભાવ કા ઉપન્યાસ કિયા ગયા હૈ । (સે
 તં પુ૦) હસ પ્રકાર યહ ભાવોં કી પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં પચ્છાણુ
 પુઁવી) હે મદન્ત ! પશ્ચાનુપૂર્વી કયા હૈ ? (પચ્છાણુપુઁવી) પશ્ચાનુપૂર્વી હસ
 પ્રકાર સે હૈ-(સંનિવાહૈ જાવ ઉદહૈ) સાન્નિપાતિક ભાવ સે લેકા
 ઔદયિક ભાવ તક પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં પચ્છાણુપુઁવી) યહી પૂર્વપ્રકા
 ન્ત ભાવોં કી પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુઁવી ?) હે મદન્ત
 ભાવોં કી અનાનુપૂર્વી કયા હૈ ? (અયાણુ ચેવ અગાહ્યાણુ અગુત્તરિયાણુ
 છ ગચ્છગયાણુ સેઢીણુ અન્નમન્નજ્ઞાસો દુરૂઘ્ણો) ઔદયિકાદિ સાન્નિ
 પાતિકાન્ત છહ પદોં કો પરસ્પર મેં ગુણા કરના ઓર ગુણિત રાશિરૂપ
 ભાગોં મેં સે આદિ અન્ત કે પદદ્વય કી વિવક્ષા કો કમ કરના હસ
 પ્રકાર જો મંગ ચલ્તે હૈં ડન મંગ સ્વરૂપ યહ ભાવોં કી (અણાણુ પુ૦
 અનાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં અણાણુપુઁવી) યહી પૂર્વપ્રકાન્ત અનાનુપૂર્વી હૈ
 (સે તં ભાવાણુપુઁવી) હસ પ્રકાર યહ ભાવાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં આણુપુઁવી)

સાન્નિપાતિક ભાવનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે. (સે તં પુઁવાણુપુઁવી) આ
 પ્રકારની આ ભાવોની પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પચ્છાણુપુઁવી ?) હે ભગવન્ ! ભાવાનુપૂર્વીની પશ્ચાનુપૂ-
 ર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુઁવી) પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(સંનિવાહૈ
 જાવ ઉદહૈ) પૂર્વાનુપૂર્વી કરતાં ઊલટા ક્રમના-એટલે કે સાન્નિપાતિક ભાવથી
 લઈને ઔદયિકભાવ પર્યન્તના-ભાવે ને પશ્ચાનુપૂર્વી કહે છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુઁવી ?) હે ભગવન્ ! ભાવોની અનાનુપૂર્વીનું
 સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અયાણુ ચેવ અગાહ્યાણુ અગુત્તરિયાણુ છ ગચ્છગયાણુ સેઢીણુ અન્નમન્ન-
 જ્ઞાસો દુરૂઘ્ણો) ઔદયિકથી લઈને સાન્નિપાતિક પર્યન્તના છ પદોનો પરસ્પ-
 રની સાથે ગુણાકાર કરવો, અને તેને લીધે જે રાશિરૂપ ભાંગાઓ આવે
 તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે ભાંગાઓ બાદ કરવાથી જે ભાંગાઓ બાકી
 રહે છે, તે ભાંગાઓ રૂપ (અણાણુપુઁવી) અનાનુપૂર્વી સમજવો.

(સે તં ભાવાણુપુઁવી) આ પ્રકારની ભાવાનુપૂર્વી હોય છે (સે તં આણુ-
 પુઁવી) આ પ્રકારે નામાનુપૂર્વીથી લઈને ભાવાનુપૂર્વી પર્યન્તની હસે આનુપૂ-
 ર્વીઓના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે, એ વાત સૂચિત કરવા માટે

૬૨૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

મકૃતમુપસંહરન્નાહ-સૈષા ભાવાનુપૂર્વીતિ । નામાનુપૂર્વ્યાદિ ભાવાનુપૂર્વ્યન્તા દશા-
ડ્યાનુપૂર્વ્યઃ સમુદિષ્ટા इति सूचयितुमाह-સૈષા આનુપૂર્વીતિ । इत्युपक्रमस्य
आनुपूर्वीनामकः प्रथमो भेदः समुदिष्ट इति सूचयितुमाह-आनुपूर्वीति पदं
समाप्तमिति ॥सू० १४२॥

સમ્પત્યુપક્રમસ્ય નામામિધેયં દ્વિતીયં ભેદં વ્યાખ્યાયતુમાહ—

મૂલ્-સે કિં તં નામે ? નામે દસવિહે પળણત્તે, તં જહા-
ણગામે, દુણામે તિણામે, ચડગામે, પંચગામે, છગામે, સત્ત-
નામે, અટ્ટગામે, નવગામે, દસગામે ॥સૂ૦ ૧૪૩॥

છાયા-અય કિં તન્નામ? નામ દશવિધં મજ્જપ્તમ્, તથથા-એકનામ, દ્વિનામ, ત્રિનામ,
ચતુર્નામ, પચ્ચનામ, ષણ્ણામ, સપ્પનામ, અષ્ટનામ, નવનામ, દશનામ ॥સૂ૦ ૧૪૩॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ इत्यादि—

શિષ્યઃપૃચ્છતિ—અથ કિં તન્નામ? इति । उत्तरयति-नाम-जीवगतज्ञानादिपर्यायाजीवगतरूपादिपर्यायानुसारेण प्रतिवस्तुभेदेन नमति=तदभिधायकत्वेन वक्तव्ये
यहां तक नामानुपूर्वी से लेकर भावानुपूर्वी तक जो दश आनुपूर्वियां हैं
वे सब प्रतिपादित हो चुकी इसकी सूचना के लिये सूत्रकारने “ से तं
आणुपुर्वी ” यह कहा है । (आणुपुर्वीतिपयं समत्तं) इस प्रकार यहां
तक उपक्रम का यह आनुपूर्वी नाम का प्रथम भेद कथित हो चुका
अर्थात् समाप्त हुआ ॥सू० १४२॥

અથ સૂત્રકાર ઉપક્રમ કા જો દ્વિતીય ભેદ નામ નામ કા હૈ ઉસકી
વ્યાખ્યા કરને કે લિયે કહતે હૈં કિ-“સે કિં તં નામે ?” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ — (સે કિં તં નામે) હૈ અદન્ત । પૂર્વપ્રકાન્ત નામ કયા
હૈ ? (નામે દસવિહે પળણત્તે)

સૂત્રકારે “ સે તં આણુપુર્વી ” આ પ્રકારનો સૂત્રપઠ મૂક્યો છે (આણુપુર્વી-
તિપયં સમત્તં) આ પ્રકારે ઉપક્રમના આનુપૂર્વી નામના પ્રથમ ભેદનું નિરૂપણ
અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ૦ ૧૪૨॥

ઉપક્રમનો બીજો ભેદ ‘ નામ ’ છે હવે સૂત્રકાર તે નામનું નિરૂપણ કરે છે-
“ સે કિં તં નામે ? ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નામે ?) હૈ અગત્ય ! ઉપક્રમના બીજા પ્રકાર રૂપ
નામ થું છે ?

इति नाम-वस्तुभिधानमित्यर्थः । उक्तं च-

“जं वस्तुणोऽभिहाणं पञ्जयभेयाणुसारि तं नामं ।

पइभेअं जं नमई, पइभेयं जाइ जं भणिअं” ॥१॥

छाया—यद्दस्तુનોઽભિહાણં, પર્યયભેદાનુસારિ તન્નામ ।

પ્રતિભેદં યન્નમતિ, પ્રતિભેદં યાતિ યદ્ ભણિતમ્ ॥૩૮૮॥

एवंविधमिदं नाम दशविधं प्रवृत्तम् । दशविधत्वमाह-तद्यथा-एकनाम द्विनाम त्रिनामेत्यादि । तत्र-येन केन एकेनापि सता नाम्ना सर्वेऽपि विवक्षितपदार्था अभिधानुं शक्यन्ते, तदेकनाम बोध्यम् । एवं याभ्यां द्वाभ्यां नामभ्यां सर्वेऽपि

उत्तर — यह नाम दश प्रकार का कहा गया है । जीवगत ज्ञानादिक पर्यायों और अजीवगत रूपादिक पर्यायों के अनुसार जो प्रतिवस्तु के भेद से नमता है — झुकना है — अर्थात् उनका अभिधायक-वाचक होता है वह नाम है । उक्तंच-करके “ जं वस्तुणोऽभिहाणं” इत्यादि गाथा द्वारा यही नाम शब्द की व्युत्पत्ति स्पष्ट की है । (तं जहा) नाम के दस प्रकार ये हैं — (एगणामे, दुणामे, तिणामे, चउणामे, पंचणामे, छणामे, सत्तणामे, अट्ठणामे, नवणामे, दसणामे) एक नाम, दो नाम, तीन नाम, चार नाम, पांच नाम, छह नाम, सात नाम, आठ नाम, नौ नाम, और दश नाम । जिस एक नाम से समस्त पदार्थों का कथन हो जाता है वह एक नाम है । जैसे सत्, सत् इस नाम से समस्त पदार्थों का युगपत् कथन हो जाता है क्यों कि ऐसा कोई भी पदार्थ

ઉત્તર-(નામે દસવિધે વળગતે) તે નામના દસ પ્રકાર કહ્યા છે જીવગત જ્ઞાનાદિક પર્યાયો અને અજીવગત રૂપાદિક પર્યાયો પ્રમાણે જે પ્રત્યેક વસ્તુના લેહથી નમે છે-ચૂકે છે-એટલે કે તેમનું અભિધાયક (વાચક) હોય છે, તેનું નામ “નામ” છે. “જં વસ્તુણોઽભિહાણં” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા ‘નામ’ શબ્દની ઉપર પ્રમાણેની વ્યુત્પત્તિ જે પ્રકટ કરવામા આવી છે.

(તંજહા) નામના દસ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(એગણામે, દુણામે, તિણામે, ચઉણામે, પંચણામે, છણામે, સત્તણામે, અટ્ઠણામે, નવણામે, દસણામે) (૧) એક નામ, (૨) બે નામ, (૩) ત્રણ નામ, (૪) ચાર નામ, (૫) પાંચ નામ, (૬) છ નામ, (૭) સાત નામ, (૮) આઠ નામ, (૯) નવ નામ અને (૧૦) દસ નામ.

જે એક નામથી સમસ્ત પદાર્થોનું કથન થઈ જાય છે, તેને “એકનામ” કહે છે. જેમ કે “સત્” “સત્” આ નામથી સમસ્ત પદાર્થોનું એક સાથે કથન થઈ જાય છે, કારણ કે એવો કેઈ પણ પદાર્થ નથી કે જે આ સત્

૬૩૦

અનુયોગદ્વારસ્થ

વિવક્ષિતપદાર્થા અભિધાતું શક્યન્તે તદ્ દ્વિનામ । તથા—યૈસ્તુ ત્રિભિર્નામભિઃ સર્વેઽપિ વિવક્ષિતપદાર્થા અભિધાતું શક્યન્તે તદ્ ત્રિનામ । एवं रीत्या चतुर्नामादि-दशनामान्तविषयेऽपि बोध्यम् ॥सू० १४३॥

તત્રોદ્દેશક્રમેણ નિર્દેશન્ પ્રથમમેકનામસ્વરૂપં નિર્દેશતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઇગળામે ? ઇગળામે—જામાણિ જાણિ કાણિ વિ, દ્રવ્યાણ ગુણાણ પઞ્જવાણ ચ । તેસિં આગમનિહસે, નામંતિ પરુવિયા સપ્પણા ॥૧॥ સે તં ઇગળામે ॥સૂ૦ ૧૪૪॥

છાયા—અથ કિં તદેક નામ ? એકનામ—નામાનિ યાનિ કાન્યપિ દ્રવ્યાણાં ગુણાનાં પર્યયાણાં ચ । તેષામાગમનિકષે—નામેતિ પ્રરુપિતા સંજ્ઞા । તદેત-દેકનામ ॥સૂ૦ ૧૪૪॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि

अथ किं तदेकनाम ? इति शिष्यपत्रः । उत्तरयति—एकनाम—एकं सद नामेति विग्रहः । तत्स्वरूपमेवाह—‘ नामाणि जाणि ’ इति गाथया । अयं भावः—द्रव्याणां= नहीं है जो इस सत् नाम रहित हो । अतः सत् यह एक नाम है । इसी प्रकार जिन दो नामों से समस्त विवक्षित पदार्थ अभिधातुं शक्य होते हों वह दो नाम है । तथा जिन तीन नामों से समस्त विवक्षित पदार्थ कहने में आ जाते हों वह त्रि नाम हैं । इसी प्रकार से चतुर्नामादि से लेकर दशनाम तक के विषय में भी जानना चाहिये ॥ सू० १४३॥

उद्देश क्रम से निर्देश करने वाले सूत्रकार सर्व प्रथम एक नाम के स्वरूप का कथन करते हैं—“से किं तं इगलामे ?” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं इगलामे) हे अदन्त ! पूर्वप्रक्रान्त एक नाम क्या है ?

નામથી રહિત હોય તેથી ‘સત્’ એક નામરૂપ છે. એજ પ્રમાણુ જે એ નામોથી સમસ્ત વિવક્ષિત પદાર્થોનું કથન થઈ જાય છે, તેમને એ નામ રૂપ સમજવા તથા જે ત્રણ નામોથી સમસ્ત વિવક્ષિત પદાર્થોનું કથન થઈ જાય છે, તે ત્રણ નામોને ત્રિનામ કહે છે. એજ પ્રમાણુ ચતુર્નામથી લઈને દસ નામ પર્યન્તના નામના પ્રકારો વિષે પણ સમજવું. ॥સૂ૦ ૧૪૩॥

પૂર્વસૂત્રમાં નામના પ્રકારો પ્રકટ કરવામાં આવ્યાં હવે સૂત્રકાર નામના પ્રથમ પ્રકાર રૂપ એકનામના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઇગળામે ?” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं इगलामे?) हे अदन्त ! पूर्वप्रक्रान्त एकनाम शु-
छे ? એટલે કે એકનામનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૪ એકનામસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૩૧

જીવાજીવભેદાનાં, ગુણાનાં=જ્ઞાનાદીનાં રૂપાદીનાં ચ, તથા-પર્યાયાણાં=નારકત્વા-
દીનામેકગુણકૃષ્ણત્વાદીનાં ચ નામાનિ=અભિધાનાનિ યાનિ કાનિચિલ્લોકે
રૂઢાનિ, તથા-જીવો જન્તુરાત્મા પ્રાણીત્યાદિ, આકાશં નભસ્તારાપથો વ્યોમામ્બ-
રમિત્યાદિ । તથા-જ્ઞાનં બુદ્ધિર્બોધં ઇત્યાદિ, તથા-રૂપં રસો ગંધ ઇત્યાદિ, તથા-
નારકસ્તિર્યઙ્મનુષ્ય ઇત્યાદિ, એકગુણકૃષ્ણો દ્વિગુણકૃષ્ણ ઇત્યાદિ । તેષાં સર્વેષા-
મપ્યભિધાનાનામ્-આગમનિકષે-આગમ એવ નિકષઃ=હેમરજતસદૃશ જીવાદિ-
પદાર્થસ્વરૂપપરિજ્ઞાનહેતુત્વાત્ કષપદ્વસ્તસ્મિન્ 'નામ' ઇત્યેવંરૂપા સંજ્ઞા=આરૂપા

ઉત્તર — (ગામાણિ જાણિ કાણિ વિ, દઢવાણ, ગુણાણ, પઞ્જવાણ
ચ । તેસિં આગમનિહસે નામંતિ પરૂવિયા સળ્ળા "૧" સે તં એગણામે)
એક હોકર જો નામ શોતા હૈ વહ એક નામ હૈ । હસી કા સ્વરૂપ હસ
ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ને કહા હૈ—જીવ અજીવ ભેદ વિશિષ્ટ દ્રવ્યો કે,
જ્ઞાનાદિક ગુણો કે, રૂપાદિ ગુણો કે તથા નારકત્વ આદિ પર્યાયો કે
લોક મેં જિતને બી નામ રૂઢ હૈ — જૈસે-જીવ-જન્તુ, આત્મા પ્રાણી
ઈત્યાદિ, આકાશ, નભસ તારાપથ, વ્યોમન્ (વ્યોમ) અમ્બર ઇત્યાદિ તથા
જ્ઞાન બુદ્ધિ, બોધ ઇત્યાદિ, તથા રૂપ, રસ, ગંધ, ઇત્યાદિ તથા નારક તિર્યઙ્
મનુષ્ય ઇત્યાદિ એક ગુણ કૃષ્ણ, દો ગુણ કૃષ્ણ ઇત્યાદિ—इन सब
अभिधानों की "नाम" ऐसी एक संज्ञा आगम रूप निकष (कसौटी)
कही गई है । सो ये सब जीव जन्तु आदि अभिधान एक नामत्व

ઉત્તર-(ગામાણિ જાણિકાણિ વિ, દઢવાણ, ગુણાણ, પઞ્જવાણ ચ તેસિં આગમ
નિહસે' નામંતિ પરૂવિયા સળ્ળા ॥૧॥ સે તં એગણામે) એક જ અર્થને પ્રકટ
કરનાર જે નામ હોય છે તેને 'એકનામ' કહે છે. તે એકનામનું સ્વરૂપ
સૂત્રકારે ઉપરની ગાથા દ્વારા પ્રકટ કર્યું છે. તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

જીવ અજીવ રૂપ ભેદવાળાં દ્રવ્યોના જ્ઞાનાદિક ગુણોના, રૂપાદિ ગુણોના,
તથા નારકત્વ આદિ પર્યાયોના લોકમાં જેટલાં નામો રૂઢ (પ્રચલિત) છે, તે
અર્થાં અભિધાનોની (નામોની) 'નામ' એવી એક સંજ્ઞા આગમ રૂપ
નિકષ (કસૌટી) કહેવામાં આવી છે. જેમ કે જીવ-જન્તુ, આત્મા, પ્રાણી
ઈત્યાદિ. તથા જ્ઞાન, બુદ્ધિ, બોધ ઇત્યાદિ તથા નભ, તારાપથ, વ્યોમ, આકાશ,
અમ્બર ઇત્યાદિ તથા રૂપ, રસ, ગંધ ઇત્યાદિ તથા નારક, તિર્યઙ્, મનુષ્ય
ઈત્યાદિ એક ગણું કૃષ્ણ, બે ગણું કૃષ્ણ ઇત્યાદિ આ અર્થાં અભિધાનોની
"નામ" એવી એક સંજ્ઞા-આગમરૂપ કસૌટી-કહી છે. તેથી તે સઘળા
જીવ-જન્તુ આદિ અભિધાનને એક નામત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ "એકનામ"

મરુપિતા=વ્યવસ્થાપિતા । અર્થ ભાષઃ—સર્વાણ્યપિ જીવો જન્તુરિત્યાદ્યભિધાનાનિ નામત્વસામાન્યમાશ્રિત્યૈકેન નામ શબ્દેનોચ્યન્તે इति । इत्थं च एकेनाप्यनेन नामशब्देन लोकरूढाभिधानानि सर्वाण्यपि वस्तूनि प्रतिपाद्यन्ते इत्येतदेकनामोच्यते । तदेव उपसंहरन्नाह तदेतदेकनामेति ॥सू० १४४॥

સામાન્ય કે આશ્રય સે એક નામ શબ્દ સે કહે જાતે હૈં । હસ પ્રકાર એક બી હસ નામ શબ્દ સે વસ્તુઓં કે, ગુણોં કે ઔર પર્યાયોં કે જો બી લોક રૂઢ નામ હૈં વે સવ" નામત્વ" હસ એક સામાન્ય પદ સે ગૃહીત હો જાતે હૈં । હસલિયે હસ એક બી નામ શબ્દ સે લોકરૂઢાભિધાન ચાલી સવ બી વસ્તુઈં પ્રતિપાદિત હો જાતી હૈં । અતઃ એક નામ કહ-લાના હૈં । (સે તં ઇગગામે) હસ પ્રકાર યહ એક નામ હૈં ।—

ભાવાર્થ— એક નામ કયા હૈં હસ જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરને કે નિમિત્ત મૂત્રકાર ને યહાં ડસી કા વર્ણન કિયા હૈં । હસમેં ડન્હોંને સમ-જાયા હૈં કી જિતને સંસાર મેં દ્રવ્યોં કે, પર્યાયોં કે ઔર ગુણોં કે લોક રૂઢ નામ હૈં—ચપિ વે સવ જુદે ૨ હૈં । ફિર બી નામત્વ સામાન્ય કે આ-શ્રયભૂત હોને કે કારણ વે સવ એક હી હૈં । હસ પ્રકાર નામત્વ સામાન્ય કી દૃષ્ટિ સે વે સવ નામ એક હૈં—કયોં કિ જિતને અભિધાનરૂપ વ્યક્તિ હૈં ડન સવ મેં નામત્વરૂપ સામાન્ય રહતા હૈં । યહી બાત આગમરૂપ

શબ્દ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવે છે. આ રીતે એક પણ આ નામ વડે—શબ્દ વડે—વસ્તુઓના ગુણોનાં અને પર્યાયોનાં જે નામો લોકમાં રૂઢ થયેલા હોય છે, તે બધાંને “નામત્વ” આ એક સામાન્ય પદ વડે ગ્રહણ કરી શકાય છે. તેથી આ એક નામ શબ્દથી પણ લોકમાં રૂઢ એવા અભિધાનવાળી બધી વસ્તુઓ પ્રતિપાદિત થઈ જાય છે. તેથી તેને એક નામ કહે છે. (સે તં ઇગગામે) આ પ્રકારનું એક નામનું સ્વરૂપ છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં, ‘એક નામ શું છે,’ આ પ્રશ્નનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તેમણે આ સૂત્રમાં એ વાત સમજાવી છે કે સંસારમાં દ્રવ્યોનાં, પર્યાયોનાં અને ગુણોનાં જેટલાં લોકરૂઢ (લોકમાં પ્રચલિત) નામો છે, તે નામો જે કે જુદાં જુદાં છે, છતાં પણ નામત્વ સામાન્યના આશ્રયભૂત હોવાને કારણે તેઓ સૌ એક જ છે. આ રીતે નામત્વ સામાન્યની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે બધાં નામો એકનામ રૂપ જ છે, કારણ કે જેટલા અભિધાન રૂપ પદાર્થો છે, તે સઘળા પદાર્થોમાં નામત્વ રૂપ સામાન્યનો સદ્ભાવ રહે છે. એજ વાત આગમ રૂપ કસોટીની ઉપમા દ્વારા

અનુષોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૫ દ્વિનામાદિસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૩૩

મૂળમ્-સે કિં તં દુનામે? દુનામે દુવિહે પળ્લત્તે, તં જહા-
 ષગ્ગવ્વરિણ્ણ ય અળેગ્ગવ્વરિણ્ણ ય । સે કિં તં ષગ્ગવ્વરિણ્ણ? ષગ-
 વ્વરિણ્ણ અળેગ્ગવિહે પળ્લત્તે, તં જહા-હી, સી, ધી, થી, । સે તં
 ષગ્ગવ્વરિણ્ણ । સે કિં તં અળેગ્ગવ્વરિણ્ણ? અળેગ્ગવ્વરિણ્ણ અળેગ્ગ-
 વિહે પળ્લત્તે, તં જહા-કન્ના વીળા લયા માલા । સે તં અળેગ્ગ-
 વ્વરિણ્ણ । અહવા-દુનામે દુવિહે પળ્લત્તે, તં જહા-જીવનામે ય
 અર્જીવનામે ય । સે કિં તં જીવનામે? જીવનામે અળેગ્ગવિહે
 પળ્લત્તે, તં જહા-દેવદત્તો જળ્લદત્તો વિઠ્ઠુદત્તો સોમદત્તો । સે
 તં જીવનામે । સે કિં તં અર્જીવનામે? અર્જીવનામે અળેગ્ગવિહે
 પળ્લત્તે, તં જહા-ઘડો પડો કડો રહો । સે તં અર્જીવનામે ।
 અહવા દુનામે દુવિહે પળ્લત્તે, તં જહા-વિસેસિણ્ણ ય અવિસેસિ-
 ણ્ણ ય । અવિસેસિણ્ણ દઢ્ઠ્વે, વિસેસિણ્ણ જીવદઢ્ઠ્વે અર્જીવદઢ્ઠ્વે ય ।
 અવિસેસિણ્ણ જીવદઢ્ઠ્વે, વિસેસિણ્ણ ણેરહ્ણે તિરિક્કજ્જોણિણ્ણ મળ્ણ-

કસૌટી સે પસિદ્ધ કી ગઈ હૈ । યદ્દાં પર આગમ કો જો કસૌટી કી ઉપમા
 દી ગઈ હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિં જિસ પ્રકાર હેમ રજત આદિ કે વાસ્ત-
 વિક સ્વરૂપ કા પરિજ્ઞાન નિકષપટ્ટ સે હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર હેમ રજત કે
 સદશ જો જીવાદિ પદાર્થ હૈં ઉન કે સ્વરૂપ કા પરિજ્ઞાન શાસ્ત્ર-આગમ
 -સે હી હોના હૈ । અતઃ ઉનકે સ્વરૂપ કે પરિજ્ઞાન કા હેતુ હોને સે આગમ
 કો યહાં સૂત્રકાર ને નિકષ કી ઉપમા સે ઉપમિત કિયા હૈ ॥સૂ.૦૧૪૪॥

વ્યક્ત કરવામાં આવી છે. આહીં આગમને કસૌટી ઉપમા દેવાનું કારણ એ
 છે કે જેવી રીતે સંતુ, આંત્રી આદિના વાસ્તવિક સ્વરૂપનું પરિજ્ઞાન નિકષ-
 પટ્ટ (કસૌટી કરવાનો પથ્થર) વડે થાય છે, એજ પ્ર-ત્યે સોનાઆંત્રી જેવા
 જીવાદિ પદાર્થો છે તેમના વાસ્તવિક સ્વરૂપનું પરિજ્ઞાન આગમ (શાસ્ત્ર) વડે
 જ થાય છે. તેથી તેમના સ્વરૂપના પરિજ્ઞાનના હેતુભૂત હોવાને કારણે સૂત્ર-
 કારે આગમને આહીં નિકષ (કસૌટી પથ્થર)ની ઉપમા આપી છે ॥સૂ.૦૧૪૪॥

स्से देवे । अविसेसिए णेरइए, विसेसिए रयणप्पहाए सक्करप्पहाए
 वालुअप्पहाए पंकप्पहाए भूमप्पहाए तमाए तमतमाए । अविसे-
 सिएरयणप्पहापुढवीणेरइए, विसेसिए पज्जत्तए य अपज्जत्तए य ।
 एवं जाव अविसेसिए तमतमापुढवी नेरइए, विसेसिए पज्जत्तए य
 अपज्जत्तए य । अविसेसिए तिरिक्खजोणिए, विसेसिए एगिंदिए
 बेइंदिए तेइंदिए चउरिंदिए पंचिंदिए । अविसेसिए एगिंदिए,
 विसेसिए पुढविकाइए आउकाइए तेउकाइए वाउकाइए वणस्सइ-
 काइए । अविसेसिए पुढविकाइए, विसेसिए सुहुमपुढविकाइए य
 बादरपुढविकाइए य । अविसेसिए सुहुमपुढविकाइए, विसेसिए
 पज्जत्तयसुहुमपुढविकाइए य अपज्जत्तयसुहुमपुढविकाइए य ।
 अविसेसिए य बादरपुढविकाइए, विसेसिए पज्जत्तयबादरपुढ-
 विकाइए य अपज्जत्तयबादरपुढविकाइए य । एवं आउकाइए
 तेउकाइए वाउकाइए वणस्सइकाइए अविसेसिए, विसेसिए य
 पज्जत्तय अपज्जत्तय भेएहिं भाणियव्वा । अविसेसिए बेइंदिए,
 विसेसिए पज्जत्तय बेइंदिए य अपज्जत्तय बेइंदिए य । एवं तेइंदिय-
 चउरिंदियावि भाणियव्वा । अविसेसिए पंचिंदियतिरिक्खजो-
 णिए, विसेसिए जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिए थलयरपंचिंदिय-
 तिरिक्खजोणिए खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिए । अविसेसिए
 जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिए विसेसिए संमुच्छिमजलयर-
 पंचिंदियतिरिक्खजोणिए य गब्भवक्कंतियजलयरपंचिंदियतिरि-
 क्खजोणिए य । अविसेसिए संमुच्छिमजलयरपंचिंदियतिरिक्ख-
 जोणिए, विसेसिए पज्जत्तयसंमुच्छिमजलयरपंचिंदियतिरिक्ख-

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १४५ द्विनामादिस्वरूपनिरूपणम्

६३५

जोणिए य। अपज्जत्तयसंमुच्छिमजलयरपंचिदियतिरिक्खजो-
 णिए य। अविसेसिए गढभवकंतियजलयरपंचिदियतिरिक्ख-
 जोणिए, विसेसिए पज्जत्तयगढभवकंतियजलयरपंचिदियतिरि-
 क्खजोणिए य, अपज्जत्तगढभवकंतियजलयरपंचिदियतिरिक्खजो-
 णिए य। अविसेसिए थलयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए, विसेसिए
 चउप्पयथलयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए य परिसप्पथलयरपंचि-
 दियतिरिक्खजोणिए य अविसेसिए चउप्पयथलयरपंचिदियति-
 रिक्खजोणिए, विसेसिए सम्मुच्छिमचउप्पयथलयरपंचिदियतिरि-
 क्खजोणिए य गढभवकंतियचउप्पयथलयरपंचिदियतिरिक्खजो-
 णिए य। अविसेसिए सम्मुच्छिमचउप्पयथलयरपंचिदियतिरि-
 क्खजोणिए, विसेसिए पज्जत्तयसंमुच्छिमचउप्पयथलयरपंचि-
 दियतिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तयसंमुच्छिमचउप्पयथलयर-
 पंचिदियतिरिक्खजोणिए य। अविसेसिए गढभवकंतियचउप्प-
 यथलयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए, विसेसिए पज्जत्तयगढभवकं-
 तियचउप्पयथलयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तयगढभ-
 वकंतियचउप्पयथलयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए य। अविसेसिए
 परिसप्पथलयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए, विसेसिए उरपरिसप्प-
 थलयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए य भुयपरिसप्पथलयरपंचिदिय-
 तिरिक्खजोणिए य। एए वि सम्मुच्छिमा पज्जत्तगा अपज्जत्तगा
 य, गढभवकंतिया वि पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य भाणियन्वा।

અવિસેસિણ સ્વહયરપંચિદિયતિરિક્સજોણિણ, વિસેસિણ સમ્મુ-
 ચ્છિમસ્વહયરપંચિદિયતિરિક્સજોણિણ ય ગઘ્ભવકંતિયસ્વહયર-
 પંચિદિયતિરિક્સજોણિણ ય । અવિસેસિણ સંમુચ્છિમસ્વહયરપંચિ-
 દિયતિરિક્સજોણિણ, વિસેસિણ પઙ્ગત્તયસંમુચ્છિમસ્વહયરપંચિ-
 દિયતિરિક્સજોણિણ ય અપઙ્ગત્તયસંમુચ્છિમસ્વહયરપંચિદિયતિ-
 રિક્સજોણિણ ય । અવિસેસિણ ગઘ્ભવકંતિયસ્વહયરપંચિદિયતિ-
 રિક્સજોણિણ, વિસેસિણ પઙ્ગત્તયગઘ્ભવકંતિયસ્વહયરપંચિદિય-
 તિરિક્સજોણિણ ય અપઙ્ગત્તયગઘ્ભવકંતિયસ્વહયરપંચિદિયતિ-
 રિક્સજોણિણ ય । અવિસેસિણ મણુસ્સે, વિસેસિણ સંમુચ્છિમમ-
 ણુસ્સે ગઘ્ભવકંતિયમણુસ્સે । અવિસેસિણ સંમુચ્છિમમણુસ્સે,
 વિસેસિણ પઙ્ગત્તયસંમુચ્છિમમણુસ્સે ય અપઙ્ગત્તયસંમુચ્છિમમણુસ્સે
 ય । અવિસેસિણ ગઘ્ભવકંતિયમણુસ્સે, વિસેસિણ કમ્મભૂમિઓ
 ય અકમ્મભૂમિઓ ય અંતરદીવઓ ય સંઘિજ્જવાસાઉય અસં-
 ઘિજ્જવાસાઉય પઙ્ગત્તાપઙ્ગત્તઓ । અવિસેસિણ દેવે વિસેસિણ
 ભવણવાસી વાળમંતરે જોહિસિણ વેમાણિણ ય । અવિસેસિણ ભવ-
 ણવાસી, વિસેસિણ અસુરકુમારે નાગકુમારે સુવણ્ણકુમારે વિજ્ઞુ-
 કુમારે અગ્નિકુમારે દીવકુમારે ઉદહિકુમારે દિસીકુમારે વાડ-
 કુમારે થણિયકુમારે । સઘ્વેસિંપિ અવિસેસિયવિસેસિય પઙ્ગત્તય
 અપઙ્ગત્તયભેયા માણિયઘ્વા । અવિસેસિણ વાળમંતરે, વિસેસિણ
 પિસાણ, મૂણ, જક્ખલે, રક્ખલે, કિલ્લે, કિંપુરિસે, મહોરગે, ગંધઘ્વે
 ણ્ણસિંપિ અવિસેસિયવિસેસિયપઙ્ગત્તયઅપઙ્ગત્તયભેયા માણિ

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १४५ द्विनामादिस्वरूपनिरूपणम्

६३७

यत्वा। अविसेसिए जोइसिए, विसेसिए चंदसूरे गहगणे नक्खत्ते ताराख्वे। एएसिं पि अविसेसियविसेसियपज्जत्तयअपज्जतय-
भेया भाणियव्वा अविसेसिए वेमाणिए, विसेसिए कप्पोवगे य कप्पातीयगे य। अविसेसिए कप्पोवगे, विसेसिए सोहम्मए ईसा-
णए सणकुमारए माहिंदए बंभलोए लंतयए महासुकए सह-
स्तारए आणयए पाणयए आरणए अच्चुयए। एएसिंपि अवि-
सेसियविसेसियपज्जत्तगअपज्जत्तगभेया भाणियव्वा। अविसे-
सिए कप्पातीयए, विसेसिए गेवेज्जगे य अणुत्तरोववाइए य
अविसेसिए गेवेज्जए, विसेसिए हेट्ठिमे, मज्झिमे, उवरिमे। अवि-
सेसिए हेट्ठिमगेवेज्जए, विसेसिए हेट्ठिमहेट्ठिमगेवेज्जए, हेट्ठिम-
मज्झिमगेवेज्जए, हेट्ठिम उवरिमगेवेज्जए। अविसेसिए मज्झि-
मगेविज्जए, विसेसिए मज्झिमहेट्ठिमगेवेज्जए, मज्झिममज्झिम-
गेवेज्जए, मज्झिम उवरिमगेवेज्जए। अविसेसिए उवरिमगेवेज्जए,
विसेसिए उवरिमहेट्ठिमगेवेज्जए उवरिममज्झिमगेवेज्जए उव-
रिमउवरिमगेवेज्जए य। एएसिंपि सव्वेसिं अविसेसियविसंस्ति-
यपज्जत्तगापज्जत्तगभेया भाणियव्वा। अविसेसिए अणुत्तरोव-
वाइए, विसेसिए विजयए वेजयंतए जयंतए अपराजियए
सव्वट्ठसिद्धए य। एएसिंपि सव्वेसिं अविसेसियविसेसियपज्ज-
त्तगापज्जगभेया भाणियव्वा। अविसेसिए अजीवदव्वे, विसेसिए
धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए
अद्धासमए य। अविसेसिए पोग्गलत्थिकाए, विसेसिए

परमाणुयोगगले दुप्पएसिए तिप्पएसिए जाव अणंतपएसिए
य । से तं दुनामे ॥सू० १४५॥

छाया—अथ किं तद् द्विनाम ? द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-एकाक्ष-
रिकं च अनेकाक्षरिकं च । अथ किं तदेकाक्षरिकम् ? एकाक्षरिकम् अनेकविधं
प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-ह्रीः श्रीः श्रीः स्त्री । तदेतदेकाक्षरिकम् । अथ किं तदनेकाक्षरिकम् ?
अनेकाक्षरिकमनेकविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-कन्या बीणा लजा माळा । तदेतदनेका-
क्षरिकम् । अथवा-द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा जीवनाम च अजीवनाम च ।
अथ किं तद् जीवनाम ? जीवनाम अनेकविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-देवदत्तो यज्ञदत्तो
विष्णुदत्तः सोमदत्तः । तदेतद् जीवनाम । अथ किं तदजीवनाम ? अजीवनाम
अनेकविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-घटः पटः कटो रथः । तदेतदजीवनाम । अथवा-
द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-विशेषितं च अविशेषितं च । अविशेषितं द्रव्यम्,
विशेषितं जीवद्रव्यमजीवद्रव्यं च । अविशेषितं जीवद्रव्यम्, विशेषितम्-नैरयिकः,
तिर्यग्योनिकः, मनुष्यो देवः । अविशेषितम् नैरयिकः, विशेषितम् रत्नप्रभाकः,
शर्कराप्रभाकः, बालुकाप्रभाकः, पङ्कप्रभाकः, धूम्रप्रभाकः, तमस्कः, तमसाप्रस्कः ।
अविशेषितम्-रत्नप्रभापृथिवीनैरयिकः, विशेषितम्-पर्याप्तकश्च अपर्याप्तकश्च ।
एवं यावत् अविशेषितम्-तमस्तमः पृथिवी-नैरयिकः, विशेषितम्-पर्याप्तकश्च
अपर्याप्तकश्च । अविशेषितम्-तिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-एकेन्द्रियो द्वीन्द्रियस्त्रीन्द्रि-
यश्चतुरिन्द्रियः पञ्चेन्द्रियः । अविशेषितम्-एकेन्द्रियः, विशेषितम्-पृथिवीकायिकः,
अष्कायिकः, तेजस्कायिकः, वायुकायिकः, वनस्पतिकायिकः । अविशेषितम्-
पृथिवीकायिकः, विशेषितम्-सूक्ष्मपृथिवीकायिकश्च वादरपृथिवीकायिकश्च । अवि-
शेषितम्-सूक्ष्मपृथिवीकायिकः, विशेषितम्-पर्याप्तकसूक्ष्मपृथिवीकायिकश्च अप-
र्याप्तकसूक्ष्मपृथिवीकायिकश्च । अविशेषितं च-वादरपृथिवीकायिकः, विशेषितम्-
पर्याप्तकवादरपृथिवीकायिकश्च अपर्याप्तकवादरपृथिवीकायिकश्च । एवम्-अष्का-
यिकः, तेजस्कायिको वायुकायिको वनस्पतिकायिकः, अविशेषितं विशेषितं पर्याप्त-
कापर्याप्तकभेदाभ्याम् भणितव्ये अविशेषितम्-द्वीन्द्रियः, विशेषितम्-
पर्याप्तकद्वीन्द्रियश्च अपर्याप्तकद्वीन्द्रियश्च । एवं त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियावपि भणितव्यौ ।
अविशेषितम्-पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः,
स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, खेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः । अविशेषितम्-जलचर-
पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-संमूर्च्छिमजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च गर्भ-
व्युत्क्रान्तिकजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-संमूर्च्छिमजलचरपञ्चे-

न्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम् पर्याप्तक-संमूर्च्छिमजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च
 अपर्याप्तकसंमूर्च्छिमजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-गर्भव्युत्क्रान्ति-
 कजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-पर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकजलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च ।
 अविशेषितम् स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-चतुष्पदस्थलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च परिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-चतु-
 ष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-संमूर्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च गर्भव्युत्क्रान्तिकचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियग्योनिकश्च ।
 अविशेषितम्-संमूर्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-
 पर्याप्तकसंमूर्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकसंमू-
 र्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-गर्भव्युत्क्रान्तिकचतु-
 ष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-पर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकचतुष्पद-
 स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकचतुष्पदस्थलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-परिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशे-
 षितम्-उरःपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च भुजपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रिय-
 तिर्यग्योनिकश्च । एतेऽपि संमूर्च्छिमाः पर्याप्तका अपर्याप्तकाश्च, गर्भव्युत्क्रान्तिका अपि
 पर्याप्तका अपर्याप्तकाश्च भणितव्याः । अविशेषितम् खेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकविशे-
 षितम् संमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च गर्भव्युत्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्य-
 ग्योनिकश्च । अविशेषितम्-संमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-पर्या-
 ष्तकसंमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अपर्याप्तकसंमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रिय-
 तिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-गर्भव्युत्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः विशे-
 षितम् पर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकगर्भव्यु-
 त्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-मनुष्यः, विशेषितम्-संमू-
 र्च्छिममनुष्यश्च गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यश्च । अविशेषितम्-संमूर्च्छिममनुष्यः, विशे-
 षितम्-पर्याप्तकसंमूर्च्छिममनुष्यश्च अपर्याप्तकसंमूर्च्छिममनुष्यश्च । अविशेषितम्-
 गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यः, विशेषितम्-कर्मभूमिजश्च अकर्मभूमिजश्च अन्तरद्वीपजश्च,
 संख्येयवर्षायुष्कः असंख्येयवर्षायुष्कः पर्याप्तकः अपर्याप्तकः । अविशेषितम्-देवः,
 विशेषितम्-भवनवासी वानव्यन्तरः उद्योतिषिको वैमानिकश्च । अविशेषि-
 तम्-भवनवासी, विशेषितम्-अमृत्कुमारो नागकुमारः सुपर्णकुमारो विष्णुत्कुमारः
 अश्विन्कुमारो ह्रीपकुमारः उदधिकुमारो दिक्कुमारो वायुकुमारः स्तनितकुमारः सर्वपा-
 नपि अविशेषितविशेषितपर्याप्तापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितवानव्यन्तरः,

६४७

अनुयोगद्वारसूत्रे

विशेषितम्-पिशाचो भूतो यक्षो राक्षसः किन्नरः किंपुरुषो महोरगो गन्धर्व ।
 एतेषामपि अविशेषितविशेषितपर्याप्तापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्-
 ज्योतिषिकः, विशेषितम्-चन्द्रः सूर्यः ग्रहगणः नक्षत्रं तारारूपम् । एतेषामपि
 अविशेषितविशेषितपर्याप्तापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्-वैमानिकः,
 विशेषितम्-कल्पोपगश्च कल्पातीतकश्च । अविशेषितम्-कल्पोपगः, विशेषितम्-
 सौधर्मकः ईशानकः सनत्कुमारको माहेन्द्रको ब्रह्मलोकको छान्तकको महाशुक्रकः
 सइक्षारक आनतकः प्राणतकः आरणकः अच्युतकः । एतेषामपि अविशेषितविशे-
 पितपर्याप्तकापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्-कल्पातीतकः, विशेषितम्-
 ग्रैवेयकश्च अनुत्तरोपपातिकश्च । अविशेषितम्-ग्रैवेयकः, विशेषितम्-अधस्तनः,
 मध्यामः उपरितनः । अविशेषितम्-अधस्तनग्रैवेयकः, विशेषितम्-अधस्तनाधस्तन-
 ग्रैवेयकः, अधस्तनमध्यमग्रैवेयकः, अधस्तनोपरितनग्रैवेयकः । अविशेषितम्-मध्य-
 मग्रैवेयकः, विशेषितम्-मध्यमाधस्तनग्रैवेयकः, मध्यममध्यमग्रैवेयकः, मध्यमोपरि-
 तनग्रैवेयकः । अविशेषितम्-उपरितनग्रैवेयकः, विशेषितम्-उपरितनाधस्तनग्रैवेयकः,
 उपरितनमध्यमग्रैवेयकः, उपरितनोपरितनग्रैवेयकश्च । एतेषामपि सर्वेषां अविशे-
 पितविशेषितपर्याप्तकापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्-अनुत्तरोपपातिकः,
 विशेषितम्-विजयको वैनयन्तको जयन्तकः अपराजितकः सर्वार्थसिद्धकश्च । एतेषा-
 मपि सर्वेषाम् अविशेषितविशेषितपर्याप्तकापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषि-
 तम्-अजीवद्रव्यम्, विशेषितम्-धर्मास्तिकायः, अधर्मास्तिकायः, आकाशास्ति-
 कायः, पुद्गलास्तिकायः, अद्वासमयश्च । अविशेषितम्-पुद्गलास्तिकायः, विशेषि-
 तम्-परमाणुपुद्गलो द्विप्रदेशिकः त्रिप्रदेशिको यावदनन्तप्रदेशिकश्च । तदेतद्
 द्विनाम ॥ सू० १४५ ॥

टीका—'से किं तं' इत्यादि—

अयं किं तद् द्विनाम ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—द्विनाम—द्विविधं नाम-
 द्विनाम । द्विनामत्वादेवेदं द्विप्रकारकं बोध्यम् । द्विप्रकारकत्वमेवाह—तद्यथा—एका-

अथ सूत्रकार द्विनाम की प्ररूपणा करते हैं—

“से किं तं दुनामे ?” इत्यादि

शब्दार्थ—(से किं तं दुनामे) हे भगवन् ! वह द्विनाम क्या है ?

हवे सूत्रकार द्विनामना स्वप्नं निरूपणु करे छे—

“से किं तं दुनामे” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं दुनामे ?) हे भगवन् ! नामना पीछा प्रकार रूप
 द्विनामनुं स्वप्न करे छे ?

एकाक्षरिकं च अनेकाक्षरिकं च । तत्रैकाक्षरिकम्—एकं च तदक्षरं चेति एकाक्षरम्, तेन निर्वृत्तमेकाक्षरिकम्, तद्धि—ह्रीः—लज्जा, श्रीः—लक्ष्मीः, धीः—बुद्धिः, इत्यादिकमेकाक्षरिकं द्विनाम बोध्यम् । तथा—अनेकाक्षरिकम्—अनेकानि च तान्यक्षराणि—अनेकाक्षराणि तैर्निर्वृत्तमनेकाक्षरिकम्, तद्धि—कन्या वीणा लता मालेत्यादिकमनेकाक्षरिकं द्विनाम बोध्यम् । एवं ‘बलाका पताका’ इत्यादि त्र्याक्षरनिष्पन्नमपि

उत्तर—(दुनाમે દુવિહે પળણ્ણે) દ્વિનામ-દ્વિવિધનામ-દો પ્રકાર કા હૈ । યહાં દ્વિનામ કા તાત્પર્ય દો પ્રકાર કે નામ સે હૈ । દો પ્રકાર કા જો નામ હૈ વહ દ્વિનામ હૈ (તં જહા) નામ કે દો પ્રકાર યે હૈ—(एगक्खरिए य अणेगक्खरिए य) एकाक्षरिक और अनेकाक्षरिक एक अक्षर से जो नाम निष्पन्न हो वह एकाक्षरिक नाम है और जो अनेक अक्षरों से निष्पन्न होता है वह अनेकाक्षरिक नाम है । जैसे ‘ह्री’ लज्जा, ‘श्री’ लक्ष्मी, ‘धी’ बुद्धि, स्त्री, ये सब एकाक्षरिक द्विनाम हैं । कन्या, वीणा, लता, माला ये सब अनेकाक्षरिक द्विनाम हैं । यही बात (से किं तं एगक्खरिए ? एगक्खरिए अणेगविहे पण्णत्ते,) तं जहा—ह्री, सी, धी, धी, से तं एगक्खरिए—से किं तं अणेगक्खरिए ? अणेगक्खरिए—अणेगविहे पण्णत्ते—तं जहा—कण्णा, वीणा, लया, माला, से तं अणेगक्खरिए) इस सूत्रपाठ द्वारा प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्रकारने प्रदर्शित की है । इसी प्रकार “बलाका पताका” इन तीन अक्षरों से निष्पन्न हुआ नाम

ઉત્તર—(દુનામે દુવિહે પળણ્ણે) દ્વિનામ-દ્વિવિધનામ જે પ્રકારનું છે—અહીં દ્વિનામ ૫૬ જે પ્રકારના અર્થમાં વપરાયું છે. તેથી જે પ્રકારનું જે નામ છે તેનું નામ દ્વિનામ છે. (તંજહા) નામના જે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(एगक्खरिए य अणेगक्खरिए य) (૧) એકાક્ષરિક અને (૨) અનેકાક્ષરિક જે નામ એક અક્ષર વડે નિષ્પન્ન થાય છે, તે નામને એકાક્ષરિક નામ કહે છે; અને જે નામ અનેક અક્ષરો વડે નિષ્પન્ન થાય છે, તેને અનેકાક્ષરિક નામ કહે છે.

જેમ કે “હ્રી” (लज्जा), “શ્રી” (लक्ष्मी), “ધી” બુદ્ધિ, ‘સ્ત્રી’ આદિ એકાક્ષરિક દ્વિનામ છે. કન્યા, વીણા, લતા, માલા, આદિ અનેકાક્ષરિક દ્વિનામ છે. એજ વાત સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક પ્રકટ કરી છે—

(से किं तं एगक्खरिए ? एगक्खरिए अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा—ह्री, सी, धी, धी, से तं एगक्खरिए । से किं तं अणेगक्खरिए ? अणेगक्खरिए अणेगविहे पण्णत्ते—तंजहा—कण्णा, वीणा, लया, माला, से तं अणेगक्खरिए) આ સૂત્રપાઠનો કાવાર્થ ઉપર પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. એજ પ્રમાણે “बलाका,

૬૪૨

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

બોધ્યમ્ । इत्थमेकाक्षरानेकाक्षरेति द्विकारेण नाम्ना विवक्षितस्य समस्तस्यापि वस्तुजातस्य प्रतिपादनाद् द्विनामेत्युच्यते । द्विरूपं सत् सर्वस्य नामेति द्विनाम । द्वयोर्नाम्नोः समाहार इति पक्षे तु द्विनामेतिच्छाया बोध्या । अथ प्रकारान्तरेण द्विनाम निरूपयति—अथवा—द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—जीवनाम च अजीवनाम चेति । तत्र—देवदत्तयज्ञदत्तादिभेदेन जीवनाम अनेकविधम् । तथा—घटपटादिभेदेना-

भी अनेकाक्षर निष्पन्न नाम में अन्तर्हित जानना चाहिये । इस प्रकार एकाक्षर और अनेकाक्षर से निष्पन्न दो प्रकारवाले नाम से, विवक्षित समस्त भी वस्तु समूह का प्रतिपादन होता है इससे दो नाम ऐसा कहा जाता है । “द्विरूपं सत् सर्वस्य नामेति द्विनाम” सर्व का नाम दो रूपवाला होता है । इसलिये वह द्विनाम है । एकाक्षरिक और अनेकाक्षरिक ये ही नाम के दो रूप हैं । “द्वयोः नाम्नोः, समाहारः इति द्विनाम” इस पक्ष में भी द्विनाम ऐसी ही छाया जाननी चाहिये ।

अब सूत्रकार प्रकारान्तर से द्विनाम का निरूपण करते हैं—(अहवा-दुनामे दुविहे पणत्ते) अथवा—द्विनाम दो प्रकार का प्रज्ञप्त-हुआ है (तं जहा) जैसे (जीव नामे य अजीव नामे य) जीव नाम और अजीव नाम (से किं तं जीवनामे ?) हे भदन्त ! जीव नाम क्या है ?—(जीवनामे अणेगविहे पणत्ते) जीव नाम अनेक प्रकार का प्रज्ञप्त हुआ

પતાકા ” આ ત્રણ અક્ષરોથી નિષ્પન્ન થતા નામનો અનેકાક્ષર નિષ્પન્ન નામમાં જ સમાવેશ કરવો જોઈએ આ પ્રકારે એકાક્ષર અને અનેકાક્ષર વડે નિષ્પન્ન થતા એ પ્રકાશવાળા નામ વડે વિવક્ષિત સમસ્ત વસ્તુસમૂહનું પ્રતિપાદન થાય છે, તેથી તેને દ્વિનામ રૂપ ગણવામાં આવે છે. “દ્વિ રૂપં સત્ સર્વસ્ય નામેતિ દ્વિનામ” સર્વનું નામ એ રૂપવાળું હોય છે, તેથી તે દ્વિનામ રૂપ છે એકાક્ષરિક અને અનેકાક્ષરિક, આ એ જ, નામનાં એ રૂપો છે. “દ્વયોઃ નામ્નોઃ સમાહારઃ ઇતિ દ્વિનામ” આ પક્ષે પણ ‘દ્વિનામ’ એવી જ છાયા સમજવી જોઈએ હવે સૂત્રકાર બીજી રીતે દ્વિનામનું નિરૂપણ કરે છે—

(અહવા-દુનામે દુવિહે પણત્તે) અથવા—દ્વિનામ એ પ્રકારના ઠહ્યા છે—(તં જહા) તે એ પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(જીવનામે ય, અજીવનામે ય) (૧) જીવનામ અને (૨) અજીવ નામ.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં જીવનામે ?) હે ભગવન ! જીવનામ એટલે શું ?

ઉત્તર—(જીવનામે અણેગવિહે પણત્તે) જીવનામના અનેક પ્રકાર ઠહ્યા છે. (તં જહા) જેમ કે... (દેવદત્તો જણદત્તો વિણદત્તો સોમદત્તો) દેવદત્ત, યજ્ઞદત્ત, વિણદત્ત, સોમદત્ત, વગેરે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૫ દ્વિનામાદિસ્વરૂપનિરૂપણમ્

૬૪૬

જીવનામાપ્યનેકવિધમ્ । જીવાજીવેતિ દ્વાભ્યાં નામભ્યામેવ વિરક્ષિતસમસ્તપદાર્થનાં સંગ્રહાદ દ્વિનામેત્યુચ્યતે । પુનરેતદેવ પ્રકારાન્તરેણાહ—અથવા દ્વિનામ દ્વિવિધં પ્રજ્ઞ-સમ્—અવિશેષિતં ચ વિશેષિતં ચ । તન્ન—અવિશેષિતં દ્રવ્યમ્ । વિશેષિતં—જીવદ્રવ્યમ્—જીવદ્રવ્યં ચ । પ્રત્યેકમિદમવિશેષિતવિશેષિતભેદાત્ પુનર્ભેદાન્તરાચ્ચાનેકપ્રકારકં ભવતીતિ મૂલાદેવ વિજ્ઞેયમ્ । સૌગમ્યાચ્ચ મૂલસ્ય વ્યાખ્યાના ન ક્રિયતે । અન્નેદં બોધ્યમ્—

હૈ । (તં જહા) જૈસે (દેવદત્તો જળદત્તો વિષ્ણુદત્તો સોમદત્તો) દેવદત્ત, યજ્ઞદત્ત, વિષ્ણુદત્ત, સોમદત્ત આદિ । (સે કિં તં અજીવ નામે) વહ અજીવ નામ કયા હૈ ? (અજીવનામે અણેગચિહે પળ્ળત્તે)

ઉત્તર—અજીવ નામ અનેક પ્રકાર કા પ્રજ્ઞસ હુઆ હૈ (તં જહા) જૈસે (ઘડો, પડો, કડો, રહો) ઘટ, પટ, કટ, રથ, આદિ । (સે તં અજીવ નામે) વહ અજીવ નામ હૈ । (અહવા દુનામે દુવિહે પળ્ળત્તે) અથવા—દ્વિનામ દો પ્રકાર કા પ્રજ્ઞસ હુઆ હૈ । (તં જહા) જૈસે (વિસેસિય ય અવિસેસિય ય) વિશેષિત ઓર અવિશેષિત (અવિસેસિય દ્રવ્યે વિસેસિય જીવદ્રવ્યે અજીવદ્રવ્યે ય) અવિશેષિત દ્રવ્ય કહ-લાતા હૈ ઓર વિશેષિત ઉસકે ભેદ કહલાતે હૈ । દ્રવ્ય એસા નામ અવિશેષિત દ્વિનામ હૈ । ઓર દ્રવ્ય દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—૧ જીવ દ્રવ્ય ઓર દૂસરા અજીવ દ્રવ્ય એસા નામ વિશેષિત દ્વિનામ હૈ । હનમેં જીવ દ્રવ્ય ઓર અજીવ દ્રવ્ય યે અવિશેષિત ઓર વિશેષિત કે ભેદ સે તથા ઓર ભી ભેદાન્તરોં સે અનેક પ્રકાર કે હો જાતે હૈં વહ બાત મૂલ સે

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અજીવનામે?) હે ભગવન! અજીવનામ એટલે શું ?

ઉત્તર—(અજીવનામે અણેગચિહે પળ્ળત્તે) અજીવનામના અનેક પ્રકારો કહ્યા છે. (તં જહા) જેમ કે (ઘડો, પડો, કડો, રહો) ઘટ પટ, કટ (ચટાઈ), રથ વગેરે (સે તં અજીવનામે) આ પ્રકારનું અજીવનામ હોય છે. (અહવા દુનામે દુવિહે પળ્ળત્તે) અથવા દ્વિનામના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તં જહા) જેમ કે.... (વિસેસિય ય અવિસેસિય ય) (૧) વિશેષિત અને (૨) અવિશેષિત (અવિસેસિય દ્રવ્યે, વિસેસિય જીવદ્રવ્યે અજીવદ્રવ્યે ય) દ્રવ્યને વિશેષિત રૂપ કહેવાય છે અને દ્રવ્યના જીવ અજીવ રૂપ ભેદને વિશેષિત કહેવાય છે. ‘દ્રવ્ય’ એવું નામ અવિશેષિત દ્વિનામ છે. દ્રવ્ય બે પ્રકારનું હોય છે—(૧) જીવ દ્રવ્ય અને (૨) અજીવદ્રવ્ય આ જીવદ્રવ્ય અને અજીવદ્રવ્ય રૂપ નામને વિશેષિત દ્વિનામ કહે છે. વળી જીવ દ્રવ્ય અને અજીવ દ્રવ્યના અવિશેષિત અને અવિશેષિત નામના બે ભેદો તથા બીજાં પશુ વધુ ભેદો પડતા હોવાથી તે દ્રવ્યોના અનેક પ્રકાર હોય છે, આ વાત મૂળ સૂત્રમાંથી જ બાકી લેવી જેમ કે—

૧૪૪

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

યે તુ સંમૂર્ચ્છન્તિ=તથાવિધકર્મોદયાદ્ ગર્ભમન્તરેણૈવોત્પદ્યન્તે તે સંમૂર્છિમાઃ । યેષાં તુ ગર્ભે વ્યુત્ક્રાન્તિઃ=ઉત્પત્તિસ્તે ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકાઃ । પરિસર્પન્તિ યે તે પરિસર્પાઃ । તે દિ-ઉરઃપરિસર્પ-શુજપરિસર્પભેદાભ્યાં દ્વિપકારાઃ । તત્ર-ઉરઃપરિસર્પાઃ-સર્પા-દયઃ । શુજપરિસર્પાસ્તુ ગોધાનકુલાદયઃ । ઇતિ । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-તદેતદ્ દિનામેતિ ॥૬૦ ૧૪૫॥

હી જાન લેની ચાહિયે જૈસે— (અવિસેસિય જીવદ્રવ્યે, વિસેસિય ગેરહૈય તિરિક્ષજોણિય, મણુસે દેવે) જીવ દ્રવ્ય એસા નામ અવિશેષિત દ્વિનામ હૈ તથા નારક, તિર્યગ્થોનિક, મનુષ્ય, દેવ યે વિશેષિત દ્વિનામ હૈ । (ગેરહૈય અવિસેસિય) નૈરયિક યહ અવિશેષિત દ્વિનામ હૈ ઓર (રયણપ્પહાણ સક્કરપ્પહાણ, વાલુઅપ્પહાણ, પંકપ્પહાણ, ધૂમપ્પહાણ તમાણ, તમતમાણ વિસેસિય) રત્નપ્રભાગત નૈરયિક, શર્કરા પ્રભાગત નૈરયિક, વાલુકા પ્રભાગત નૈરયિક, પંક પ્રભાગત નૈરયિક, ધૂમ પ્રભાગત નૈરયિક, તમઃપ્રભાગત નૈરયિક તમસ્તમઃપ્રભાગત નૈરયિક યે વિશેષિત દ્વિનામ હૈ । આગે ઓ હસી પ્રકાર સે સૂત્ર કે અન્ત તક પ્રત્યેક ભેદ મેં અવિશેષિત ઓર વિશેષિત દ્વિનામ કી યોજના કર લેની ચાહિયે । સૂત્ર સુગમ હોને સે આગે કે પદોં કી વ્યાખ્યા નહીં કી હૈ । સંમૂર્ચ્છિમ યે જીવ હૈ જો તથાવિધ કર્મ કે ઉદય સે ગર્ભ કે વિના હી ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । વ્યુત્ક્રાન્તિ કા તાત્પર્ય ઉત્પત્તિ હૈ । જિન જીવોં કી ઉત્પત્તિ

(અવિસેસિય જીવદ્રવ્યે, વિસેસિય ગેરહૈય તિરિક્ષજોણિય મણુસે, દેવે) ‘અવદ્રવ્ય’ આ નામ અવિશેષિત દ્વિનામ છે, તથા નારક, તિર્યગ્, મનુષ્ય અને દેવ, આ ચારે વિશેષિત દ્વિનામો છે.

(ગેરહૈય અવિસેસિય) ‘નારક’ આ નામને જો અવિશેષિત દ્વિનામ કહેવામાં આવે, તો (રયણપ્પહાણ, સક્કરપ્પહાણ, વાલુઅપ્પહાણ, પંકપ્પહાણ ધૂમપ્પહાણ, તમાણ, તમતમાણ વિસેસિય) રત્નપ્રભાના નારક, શર્કરાપ્રભાના નારક, વાલુકાપ્રભાના નારક, પંકપ્રભાના નારક, ધૂમપ્રભાના નારક, તમઃપ્રભાના નારક, અને તમસ્તમઃપ્રભાના નારકને વિશેષિત દ્વિનામ કહે છે. એજ પ્રકારે સૂત્રના અન્ત સુધીના પ્રત્યેક ભેદમાં અવિશેષિત અને વિશેષિત દ્વિનામની યોજના કરી લેવી જોઈએ સૂત્ર સુગમ હોવાથી પછીનાં પદોની વ્યાખ્યા આપવામાં આવી નથી જે એવો તથાવિધ કર્મના ઉદયથી ગર્ભ વિના જ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, તે એવાને સંમૂર્ચ્છિમ એવો કહે છે. ‘વ્યુત્ક્રાન્તિ’ પદનો અર્થ ‘ઉત્પત્તિ’ થાય છે. જે એવાની ઉત્પત્તિ ગર્ભજન્મથી થાય છે,

त्रिनाम निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं त्रिनामे ? त्रिनामे तिविहे पणत्ते, तं जहा दद्वणामे गुणणामे पज्जवणामे य। से किं दद्वणामे ? दद्वणामे छविहे—पणत्ते, तं जहा—धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगा-सत्थिकाए जीवत्थिकाए पुग्गलत्थिकाए अच्चासमए य। से तं दद्वणामे। से किं तं गुणणामे ? गुणणामे पंचविहे पणत्ते, तं जहा—वणणामे गंधणामे रसणामे फासणामे संठाणणामे। से किं तं वणणामे ? वणणामे पञ्चविहे पणत्ते, तं जहा—काल-वणणामे नीलवणणामे लोहियवणणामे हालिद्ववणणामे सुक्खिलवणणामे। से तं वणणामे। से किं तं गंधणामे—गंध-नामे दुविहे पणत्ते, तं जहा—सुरभिगंधणामे य दुरभिगंधणामे य। से तं गंधणामे। से किं तं रसणामे ? रसणामे पंचविहे पणत्ते, तं जहा—तित्तरसणामे कडुयरसणामे कसायरसणामे अंबिलरसणामे महुररसणामे य। से तं रसणामे। से किं तं

गर्भ जन्म से होती है वे गर्भव्युत्क्रान्ति जीव हैं। जो सरकते हैं वे परिसर्प हैं। उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प के भेद से परिसर्प जीव दो प्रकार के हैं। सर्पादिक जीव जो कि छाती से सरकते हैं—उरः परिसर्प हैं। और गोधा, नकुल आदि जीव जो भुजाओं से सरकते—चलते हैं वे भुजपरिसर्प हैं। इस प्रकार यह त्रिनाम हैं ॥सू० १४६॥

ते लोवोने गर्भव्युत्क्रान्तिक लोवो कडे છે, જે લોવો સરકતાં સરકતાં ચાલે છે તે લોવોને પરિસર્પ કહે છે. પરિસર્પ લોવોના ઉરઃપરિસર્પ અને ભુજપરિસર્પ નામના બે ભેદ પડે છે. સર્પાદિક જે લોવો છાતીના બળથી સરકે તે લોવોને ઉરઃપરિસર્પ કહે છે. ગરૂણી, નાળિયા આદિ લોવો ભુજબળેના બળથી સરકે (ચાલે) છે, તેથી તેમને ભુજપરિસર્પ કહે છે. આ પ્રકારનું આ ત્રિનામનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ० ૧૪૬॥

६४६

अनुयोगद्वारख्ये

फासणामे ? फासणामे अट्टविहे पणत्ते, तं जहा—कक्खडफास-
णामे मउयफासणामे गरुयफासणामे लहुयफासणामे सीयफा-
सणामे उसिणफासणामे णिद्धफासणामे लुक्खफासणामे । से तं
फासणामे । से किं तं संठाणनामे ? संठाणनामे—पंचविहे पणत्ते
तं जहा परिमंडलसंठाणनामे वट्टसंठाणनामे तंसंठाणनामे
चउरंसंठाणनामे आययसंठाणनामे । से तं संठाणनामे से
तं गुणनामे ॥सू० १४६॥

छाया—अथ किं तत् त्रिनाम ? त्रिनाम त्रिविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—द्रव्यनाम,
गुणनाम पर्यवनाम च । अथ किं तद् द्रव्यनाम ? द्रव्यनाम षड्विधं प्रज्ञप्तम्,
तद्यथा—धर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायः आकाशास्तिकायो जीवास्तिकायः पुद्गला-
स्तिकायः अद्वासमयश्च । तदेतद् द्रव्यनाम । अथ किं तद् गुणनाम ? गुणनाम
पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—वर्णनाम गन्धनाम रसनाम स्पर्शनाम संस्थाननाम ।
अथ किं तद् वर्णनाम ? वर्णनाम पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—कालवर्णनाम नील-
वर्णनाम लोहितवर्णनाम हारिद्रवर्णनाम शुकवर्णनाम तदेतद्वर्णनाम । अथ किं तत्
गन्धनाम ? गन्धनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—सुरभिगन्धनामच दुरभिगन्धनाम
च । तदेतद् गन्धनाम । अथ किं तद् रसनाम ? रसनाम पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—
तिक्तारसनाम, कटुकरसनाम, कषायरसनाम अम्लरसनाम मधुररसनाम च ।
तदेतद् रसनाम । अथ किं तत् स्पर्शनाम ? स्पर्शनाम—अष्टविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—
कर्कशस्पर्शनाम मृदुकस्पर्शनाम गुल्फस्पर्शनाम लघुकस्पर्शनाम शीतस्पर्शनाम उष्ण-
स्पर्शनाम स्निग्धस्पर्शनाम रूक्षस्पर्शनाम । तदेतत् स्पर्शनाम । अथ किं तत् संस्थान-
नाम ? संस्थाननाम पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—परिमण्डलसंस्थाननाम वृत्तसंस्था-
ननाम त्र्यसंस्थाननाम चतुरसंस्थाननाम आयतसंस्थाननाम । तदेतत् संस्थान-
नाम । तदेतद् गुणनाम ॥सू० १४६॥

टीका—‘से किं तत् त्रिनाम ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—त्रिनाम=त्रिरूपं
नाम त्रिनाम तत् त्रिविधं प्रज्ञप्तम् । यत् एवेदं त्रिनाम अत एवेदं त्रिविधं

अथ त्रिनाम का सूत्रकार निरूपण करते हैं—

“से किं तं त्रिनामे ” इत्यादि ।

इवे सूत्रकारे त्रिनामनु निरूपयु करे छे—

“से किं तं त्रिनामे ” इत्यादि—

બુદ્ધિયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૩૫ ત્રિનામનિરૂપણમ્

૬૪૭

કોધ્યમ્ । ત્રૈવિધ્યમેવાહ-તથા-દ્રવ્યનામ-દ્રવતિ=ગચ્છતિ તાંસ્તાન પર્યાયાન માપ્નોતીતિ દ્રવ્યં, તસ્ય નામ-દ્રવ્યનામ । ગુણનામ-ગુણ્યન્તે=સંસ્થાયન્તે इति ગુણાસ્તેષાં નામ-ગુણનામ । તથા-વર્ણનામ-વર્ણ્યતે=અલક્ષ્યક્રિયતે વસ્ત્વનેનેતિ વર્ણઃ, તસ્ય નામ વર્ણનામ । एषु त्रिविधेषु नामसु प्रथमं द्रव्यनाम जिज्ञासमानः शिष्यः पृच्छति-अथ किं तद् द्रव्यनाम ? उत्तरयति-द्रव्यनाम हि धर्मास्तिकायादिभेदैः बहुविधम् । धर्मास्तिकायादीनां व्याख्या पूर्व कृता । गुणनामतु वर्णगन्धरसस्पर्श-

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં તિનામે ?) હે ખદન્ત ! ત્રિનામ કયા હે ?

ઉત્તર—(તિનામે તિવિદ્દે પળ્લસે) ત્રિનામ ત્રીન પ્રકાર કા કહા ગયા હે ત્રીન રૂપ વાલા જો નામ હૈ વહ ત્રિનામ હૈ ! ત્રિનામ સે હી યહ ત્રિવિધ હૈ । (તં જહા) વે ત્રીન પ્રકાર યે હૈ—(દ્રવ્યનામે, ગુણનામે, પદ્મજ-વનામે) દ્રવ્યનામ, ગુણનામ, પર્યાય નામ । उन २ पर्यायों को जो प्राप्त करता है उसका नाम द्रव्य है । इस द्रव्य का जो नाम है वह द्रव्यनाम है । जो गिने जावें उनका नाम गुण है यह गुण शब्द की व्युत्पत्ति है । इनका जो नाम है वह गुण नाम हैं । पर्याय का जो नाम है वह पर्याय नाम है । पर्याय नाम का वर्णन सूत्रकार १४७ वें सूत्र में करेंगे । (से-किं तं द्रव्यनामे) वह द्रव्य नाम क्या है ?

ઉત્તર—(દ્રવ્યનામે છવિદ્દે પળ્લસે) દ્રવ્ય નામ ૬ પ્રકાર કા કહા હૈ । (તં જહા) જૈસે—(ધર્મસ્થિકાણ, અધર્મસ્થિકાણ, આગાસથિકાણ

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં તિનામે ?) હે ભગવન્ ! ત્રિનામ એટલે શુ ?

ઉત્તર—(તિનામે તિવિદ્દે પળ્લસે) ત્રિનામના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. ત્રણ રૂપ-વાળું જે નામ છે, તેને ત્રિનામ કહે છે ત્રિનામ હોવાને લીધે જ તે ત્રણ પ્રકારનું છે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(દ્રવ્યનામે, ગુણનામે, પદ્મજવનામે) (૧) દ્રવ્યનામ, (૨) ગુણનામ અને (૩) પર્યાયનામ (પર્યાયનામ.)

જુદી જુદી પર્યાયોને જે પ્રાપ્ત કરે છે, તેનું નામ દ્રવ્ય છે. આ દ્રવ્યનું જ નામ છે તેને દ્રવ્ય નામ કહે છે. ગુણ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે. “જે ગણાય તે ગુણ છે.” તે ગુણનું જે નામ છે તેને ગુણનામ કહે છે. પર્યાયનું જે નામ છે, તેનું નામ પર્યાયનામ છે. આગળ ૧૪૭માં સૂત્રમાં સૂત્રકાર આ પર્યાયનામનું વર્ણન કરવાના છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં દ્રવ્યનામે?) તે દ્રવ્યનામ શું છે ?

ઉત્તર—(દ્રવ્યનામે છવિદ્દે પળ્લસે) દ્રવ્યનામ છ પ્રકારનું કહ્યું છે. (તં જહા) જેમ કે....(ધર્મસ્થિકાણ, અધર્મસ્થિકાણ, આગાસથિકાણ, જીવસ્થિકાણ, પુગ્ગલસ્થિ-

સંસ્થાનમેદૈઃ પञ्चविधम् । तत्र वर्णनाम-कृष्णनीललोहितहारिद्रशुक्लनाममेदૈઃ पञ्च-
विधम् । धूसरारुणरूप कपिशादयस्तु वर्णा संयोगेनैवोत्पद्यन्ते, नत्वेते तेभ्यो भिन्ना
इति न पृथगुपात्ताः । तथा-गन्धनाम-गन्ध्यते=आघ्रायते इति गन्धस्तस्य नाम=
गन्धनाम । तद्धि-सुरभिदुरभिमेदाद् द्विविधम् । तत्र-सौम्यसुखकृत् सुरभिः, वैमृक्ष्य-
जीवस्थिकाए, पुग्गलस्थिकाए, अद्धासमए य) धर्मास्तिकाय, अधर्मा-
स्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और अद्धा
समय । इन सबकी व्याख्या पहिले की जा चुकी है । अतः यहां नहीं
की है । (से तं दब्बनामे) इस प्रकार यह द्रव्य नाम है । (से किं तं गुण-
नामे) वह गुण नाम क्या है ?

उत्तर—(गुणनामे पंचविहे पण्णत्ते) गुणानाम पांच प्रकार का कहा
गया है । (तं जहा) जैसे—(वण्णणामे, गंधणामे, रसणामे, फास णामे,
संठाणणामे) वर्णनाम, गंध नाम, रस नाम, स्पर्श नाम, संस्थान नाम ।
वस्तु जिससे अलंकृत की जाती है वह वर्ण शब्द की व्युत्पत्ति है । इस
वर्ण का जो नाम है वह वर्ण नाम है । जो सूंघी जावे वह गंध है । इस
गंध का जो नाम है वह गंधनाम है । जो चखा जाता है वह रस है । रस
का जो नाम है वह रस नाम है । जो स्पर्श से जाना जाता
है वह स्पर्श है । संस्थान नाम आकार का है । इस संस्थान का जो नाम
है वह संस्थान नाम है ।

કાણ, અદ્ધાસમણ ય) ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકા-
ય, પુદ્ગલાસ્તિકાય અને અદ્ધાસમય (કાળ) આ બધાં પદોની વ્યાખ્યા
પહેલાં આપવામાં આવી છે, તેથી અહીં તેમની વ્યાખ્યા આપવામાં આવી
નથી (સે તં દબ્બનામે) આ પ્રકારનું તે દ્રવ્યનામ છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં ગુણનામે?) હે ભગવન્ ! શુષુનામ કોને કહે છે ?

ઉત્તર—(ગુણનામે પંચવિહે પણ્ણત્તે-તં જહા) શુષુનામ પાંચ પ્રકારનું કહ્યું
છે. તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(વણ્ણણામે, ગંધણામે, રસણામે, ફાસણામે,
સંઠાણણામે) વર્ણનામ, ગંધનામ, રસનામ, સ્પર્શનામ અને સંસ્થાનનામ
વસ્તુને જેના વડે અલંકૃત કરાય છે, તેને વર્ણ કહે છે. તે વર્ણનું જે નામ
છે તેને વર્ણનામ કહે છે. સૂંઘવાથી જેનો અનુભવ થાય છે, તે ગંધ છે.
આ ગંધનું જે નામ છે તેને ગંધનામ કહે છે. ચાખવાથી જેનો અનુભવ
થાય તે રસ છે. એવા રસનું જે નામ છે, તે રસનામ છે. કોઈ પણ વસ્તુને
અડકવું તેનું નામ સ્પર્શ છે. આ સ્પર્શનું જે નામ છે તેને સ્પર્શનામ કહે
છે. સંસ્થાન એટલે આકાર આ સંસ્થાનના નામને સંસ્થાનનામ કહે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૬ ત્રિનામનિરૂપણમ્

૧૪૬

કુરુમિઃ । તથા-રસનામ-રસ્યતે=આસ્વાદ્યતે ઇતિ રસસ્તસ્ય નામ રસનામ તત્ત્વ-તિક્તકટુકકષાયામ્લમધુરનામ ભેદાત્ પञ्ચવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તત્ર-તિક્તરસનામ-શ્લેષ્માદિદોષહન્તા રસઃ, તસ્ય નામ તિક્તરસનામ । તિક્તરસસેવનફલમુક્તમાયુર્વેદશાસ્ત્રે-“શ્લેષ્મામરુચિઃ પિત્તં તૃપ્તં કુષ્ઠં વિષં ઝવરમ્ । હન્યાત્તિક્તો રસો બુદ્ધેઃ કષ્ઠ

(સે કિં તં વર્ણનામે) વર્ણનામ કયા હૈ ?

ઉત્તર-(વર્ણનામે પંચવિદે વર્ણનામે) વર્ણનામ પાંચ પ્રકાર કા કહ ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે-(કાલવર્ણનામે, નીલવર્ણનામે, લોહિયવર્ણનામે, હાલિદ્રવર્ણનામે, સુક્લિલવર્ણનામે) કાલ કૃષ્ણ-વર્ણનામ, નીલવર્ણનામ, લોહિતવર્ણનામ, હારિદ્રવર્ણનામ, શુક્લવર્ણનામ ધૂસર, અરુણ રૂપ જો કપિશાદિ વર્ણ હૈ-વે સંયોગ સે હી ઉત્પન્ન હોતે હૈ, ઇસલિયે વે સ્વતંત્રવર્ણ નહીં હૈ ઇસલિયે ઇનકા સ્વતંત્ર રૂપ સે સૂઝ મેં પાઠ નહીં કિયા હૈ । સુરભિગંધ ઓર દુરભિગંધ કે ભેદ સે ગંધ ગુણ દો પ્રકાર કા હૈ । જો ગંધ અપની ઓર આકૃષ્ટ કરતી હૈ વહ સુરભિગંધ ઓર જો અપને સે વિમુક્ત કરતી હૈ વહ દુરભિગંધ હૈ । તિક્ત કટુક, કષાય, અમ્લ ઓર મધુર નામ કે ભેદ સે રસ પાંચ પ્રકાર હૈ શ્લેષ્મા આદિ દોષોં કો નષ્ટ કરનેવાલા જો રસ હૈ વહ તિક્ત રસ હૈ તિક્ત રસ કે સેવન કા ફલ આયુર્વેદ શાસ્ત્ર મેં એસા કહા હૈ-માત્રા સે

પ્રશ્ન-(સે કિં તં વર્ણનામે) કે ભગવન્ ! વર્ણનામનુ સ્વરૂપ કેવું હોય છે?

ઉત્તર-(વર્ણનામે પંચવિદે વર્ણનામે) વર્ણનામ પાંચ પ્રકારના કહ્યાં છે.

(તં જહા) જેમ કે....(કાલવર્ણનામે, નીલવર્ણનામે, લોહિયવર્ણનામે, હાલિદ્રવર્ણનામે, સુક્લિલવર્ણનામે) (૧) કૃષ્ણવર્ણનામ, (૨) નીલવર્ણનામ, (૩) લોહિત (રક્ત) વર્ણનામ, (૪) હારિદ્ર (પીળો) વર્ણનામ, અને (૫) શુક્લવર્ણનામ.

આ સિવાયના જે ધૂસર આદિ વર્ણો છે, તેઓ ઉપર્યુક્ત વર્ણોના સંયોગથી જ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેમને સ્વતંત્ર વર્ણ રૂપ ગણી શકાય નહીં, તેથી અહીં તેમને સ્વતંત્ર પ્રકારો રૂપે બતાવવામાં આવેલ નથી સુરભિગંધ (સુગંધ) અને દુરભિગંધ (દુર્ગંધ)ના બેઠથી ગંધગુણના બે પ્રકાર પડે છે. જે ગંધ જીવોને પોતાની તરફ આકર્ષે છે તે ગંધને સુરભિગંધ અને જે ગંધ જીવોને પોતાની તરફ ખેંચવાને બદલે વિમુખ કરે છે એવી ગંધને દુરભિગંધ કહે છે. રસના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર છે-(૧) તિક્ત (તીખો), (૨) કટુક (કડવો), (૩) કષાય (તુરો), (૪) અમ્લ (ખાટો) અને (મધુર) કદ્દ આદિ દોષોનો નાશ કરનાર જે રસ છે તેનું નામ તિક્તરસ છે. આયુર્વેદ શાસ્ત્રમાં તિક્તરસના સેવનના નીચે પ્રમાણે લાભો બતાવ્યા છે-યોગ્ય માત્રામાં

માત્રોપસેવિતઃ” । इति । तथा—कटुकरसनाम—गन्धरोगप्रशमनो मरिचिनागराद्याश्रितो रसः—कटुकरसः—तस्य नाम—कटुकरसनाम । कटुकरससेवनफलमुक्तमायुर्वेदे—कटुर्गालामयं शोफं, हन्ति युक्त्योपसेवितः । दीपनः पाचको रुच्यो बृंहणोऽतिकफापहः । इति॥ तथा—कषायरसनाम—रक्तदोषाद्यपनेताविभीतकामलककपित्थाद्याश्रितो रसः—कषायरसः, तस्य नाम कषायरसनाम । उक्तंचास्य सेवनफलम्—“रक्तदोषं कफं पित्तं, कषायो हन्ति सेवितः । रुक्षः शीतो गुणग्राही रोचकश्च स्वरूपतः” ॥इति॥

સેવન ક્રિયા તિક્તરસ લેખ્યા—કફ અરુચિ, પિત્ત, તૃષા, કુષ્ઠ, વિષ, જ્વર, હનકા નાશ કરતા હૈ ઓર બુદ્ધિ કો બઢાતા હૈ । હસ તિક્તરસ કા જો નામ હૈ વહ તિક્તરસ નામ હૈ । ગલે કે રોગ કો પ્રશાન્ત કરનેવાલા એવં મરિચ ઓર નાગર આદિ મેં—રહનેવાલા જો રસ હૈ વહ કટુકરસ હૈ । હસ કટુકરસ કે સેવન કા ફલ આયુર્વેદશાસ્ત્ર મેં એસા કહા હૈ—યુક્તિ સે સેવન ક્રિયા ગયા કટુક રસ....શોફ—સૂજન કો નષ્ટ કરતા હૈ, દીપક, પાચક, રુચ્ય ઓર બૃંહણ હોતા હૈ । બઢે હુણ કફ કો નષ્ટ કરતા હૈ । રક્ત દોષ આદિ કા નોશક—વિભીતક—બહેઢા આમલક—આંબલા એવં કપિથ આદિ કે આશ્રિત જો રસ હૈ વહ કષાય રસ હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ કષાય રસ નામ હૈ । હસકે સેવન કા ફલ એસા કહા હૈ—સેવિત હુઆ યહ કષાય રસ રક્તદોષ, કફ, પિત્ત, કો નાશ કરતા હૈ । યહ સ્વરૂપ સે રુક્ષ, શીત ઓર ગુણગ્રાહી હોતા હૈ તથા

તિક્તરસનું જે સેવન કરવામાં આવે, તે કફ, અરુચિ, પિત્ત, તૃષા, કુષ્ઠ, વિષ અને જ્વરનો નાશ થાય છે અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ થાય છે. આ તિક્તરસનું જે નામ છે, તે તિક્તરસ નામ છે.

ગળાના રોગોને પ્રશાન્ત કરનારો અને મરિચ અને નાગર આદિમાં રહેનારો જે રસ છે, તે રસનું નામ કટુકરસ (કડવોસ્વાદ) છે. આયુર્વેદ શાસ્ત્રમાં આ કટુક રસના સેવનનું ફળ નીચે પ્રમાણે કહ્યું છે—યોગ્ય માત્રામાં જે કટુક રસનું સેવન કરવામાં આવે, તે શરીરના કેઈ પણ ભાગનો સોજો ઉતરી જાય છે, દીપક (પાચનક્રિયામાં મદદ રૂપ) હોય છે, રુચ્ય અને બૃંહણ (શક્તિવર્ધક) હોય છે તે વધારાના કફનો નાશ કરે છે.

રક્તદોષ આદિનો નાશક, ખડેડા, આમળાં, કેઠાં આદિમાં રહેલો જે રસ છે તેને કષાય (તુરો) રસ કહે છે. તેનું જે નામ છે તે કષાયરસ નામ છે. અયુર્વેદમાં કષાયરસના સેવનનું ફળ નીચે પ્રમાણે કહ્યું છે—જે યોગ્ય રીતે સેવન કરવામાં આવે તે કષાયરસ રક્તદોષ, કફ, અને પિત્તનો નાશ કરે છે. તે રુક્ષ, શીત, શુષ્કગ્રાહી અને રોચક હોય છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૬ ત્રિનામનિરૂપણમ્

૨૫૨

તથા-અમ્લરસનામ-અગ્નિદીપનાદિકૃદમ્લીકાયાશ્રિતો રસઃ-અમ્લરસઃ, તસ્ય નામ-અમ્લરસનામ । ઉક્તં चास्य फलम्-“अम्लोऽग्निदीपतिकृत् स्निग्धः, शोफ-पित्तकफापहः । क्लेदनः पाचनो रुच्यो, गूढवातानुलोमकः ॥” इति । तथा-मधुररस-नामपित्तादिप्रशमनः खण्डशर्करायाश्रितो रसो मधुररसः, तस्य नाम-मधुररसनाम । उक्तं चास्य फलम्-“पित्तं वातं विषं हन्ति, धातुवृद्धिकरो गुरुः । जीवनः केश-कृद् बालवृद्ध क्षीणौजसां हितः” ॥ इति । अन्यत्र हि सिन्धुलवणायाश्रितो लवण-रोचक होता है । अम्लीक-इमली आदि में रहा हुआ जो रस है वह अम्लरस है । यह अग्निदीपन आदि का करने वाला होता है । इस रस का जो नाम है वह अम्ल रस नाम है । इसका फल इस प्रकार कहा है—यह रस अग्निदीपक होता है, स्निग्ध होता है । शोफ, पित्त और कफ को नाश करता है । क्लेदन, (पसीना उत्पन्न करनेवाली शरीरका अग्निविशेष) पाचन करता है—और रुच्य होता है तथा गूढ वायु का अनुलोमक होता है । पित्तादिका प्रशमन करने वाला जो रस है वह मधुर रस है । यह मधुर रस खांड, शर्कर आदि को आश्रित रहता है । इसका जो नाम है वह मधुररसनाम है । इसका फल ऐसा कहा है कि मधुररस पित्त, वात, और विषका नाशक होता है, धातु की वृद्धि करता है गुरु होता है । बालक, वृद्ध और क्षीण शक्ति वालों का यह हित कर्ता होता है । जीवनप्रद और केशवर्धक होता है । दूसरी जगह सिन्धु लवणसैन्धव-आदि के आश्रित लवण रस भी

આમલી આદિમાં રહેલા રસને અમ્લરસ (ખાટોરવાદ) કહે છે. તે અગ્નિદીપન (જઠરાગ્નિને સતેજ કરનારો) આદિ કરનારો હોય છે. આ રસનું જે નામ છે તે અમ્લરસ નામ છે. અમ્લરસના સેવનનું ફળ આ પ્રકારનું કહ્યું છે—આ રસ અગ્નિદીપક અને સ્નિગ્ધ હોય છે. સોજા પિત્ત અને કફનો નાશક હોય છે ક્લેદન, પાચન કરે છે. અને રુચ્ય (રુચિકર) હોય છે વળી આ રસ ગૂઢ વાયુનો અનુલોમક હોય છે.

(પિત્તાદિકનું) શમન કરનારો જે રસ છે તેનું નામ મધુરરસ છે. તે ખાંડ, શાકર, ગોળ આદિમાં રહેલો હોય છે. તેનું જે નામ છે તે મધુરરસનામ છે તેના સેવનનું ફળ આ પ્રકારનું કહ્યું છે—મધુરરસ વાત, પિત્ત અને વિષનો નાશક હોય છે, ધાતુની વૃદ્ધિ કરનારો અને ગુરુ હોય છે બાલકો, વૃદ્ધો અને કમજોર માણસોને લાલકારી હોય છે, જીવનપ્રદ અને કેશવર્ધક હોય છે કેટલાક વૈદો લવણરસ (ખારો રવાદ) ને પણ એક પ્રકારના સ્વતંત્ર રસ

સ્પર્શોઽપિ પઠયતે । અયં રસો हि स्तम्भिताहारबन्धविध्वंसादिकर्ता भवति । अयं रसो हि मधुरादिरससंसर्गजत्वात्तदभिन्तत्वेन विवक्ष्यते । यतो लवणरसयोगादेवान्ये-
 ऽपि रसाः स्वादीयस्त्वं मज्जन्ते, अतस्तिक्तादिषु पञ्चसु रसेषु लवणरसस्यान्तर्भावः,
 अत एव न तस्य पृथगुपादानम् । मरुत्तमुपसंहरन्नाह-तदेतद्रसनामेति । अथ गुण-
 नाम्नश्चतुर्थभेदं जिज्ञासितुकामः पृच्छति-अथ किं तत् स्पर्शनाम ? इति । उत्तरयति-
 स्पर्शनाम-स्पर्श्यते=स्वगिन्द्रियेणावबुध्यते इति स्पर्शः, तस्य नाम स्पर्शनाम ।
 तदिदं अष्टविधम्=अष्टसंख्यकं बोध्यम् । अष्ट विधस्त्वमेवाह-तद्यथा-कर्कश स्पर्शनाम-

एक-एक स्वतंत्र रस कहा गया है । यह रस स्तंभित आहार
 आदि का विध्वंस कर्ता होता है आहार बंधक एवं मलब-
 दता नाशक होता है । यह रस मधुर आदि रस के संसर्ग
 से उत्पन्न होने के कारण उनसे-अभिन्न ही माना गया है ।
 क्यों कि लवण रस के भोग से ही अन्य दूसरे रस स्वादिष्ट लगते
 हैं । इसलिये तिक्तादि पांच रसों में ही लवण रस का अन्तर्भाव हो
 जाता है । इसलिये इस रस का स्वतंत्र रूप से सूत्रकार ने कथन नहीं
 किया है । यह अर्थ “से किं तं गंधनामे” यहाँ से लेकर ”मधुररसणामे”
 यहाँ तक के पाठ का किया है । (से तं रसणामे) इस प्रकार यह रस
 नाम है । (से किं तं फासणामे) हे भदन्त ! गुणनाम का जो चतुर्थ भेद
 स्पर्श नाम है वह क्या है ?

उत्तर—(फासणामे अट्टविहे पण्णसे) स्पर्श नाम आठ प्रकार
 का मज्जस हुआ है । स्पर्शन इन्द्रिय से जो जाना जाता है वह स्पर्श है ।

इપે ગણુવે છે. સિંધાણુ, નમક, આદિમાં આ રસનો સદ્ભાવ હોય છે.
 આ રસ સ્તંભિત આહાર આદિનો વિધ્વંસ કરવાવાળો હોય છે.
 આહારવર્ધક અને બંધકોશનો નાશક હોય છે. આ રસ મધુર આદિ
 રસના સંસર્ગથી ઉત્પન્ન થતો હોવાને કારણે, તે રસોથી અભિન્ન જ
 ગણીને અહીં તેને સ્વતંત્ર પ્રકારે ઇપે ગણવામાં આવેલ નથી કારણ કે
 લવણરસના યોગથી જ અન્ય રસો સ્વાદિષ્ટ લાગે છે. તેથી તિક્તાદિ પાંચે
 રસોમાં લવણરસનો સમાવેશ થઈ બંધ છે. તેથી જ સૂત્રકારે આ રસનું
 સ્વતંત્ર ઇપે કથન કયું નથી “સે કિં તં ગંધનામે” આ સૂત્રથી લઈને
 “મધુરરસણામે” આ સૂત્ર પર્યંતના સૂત્રપાઠનો ભાવાર્થ ઉપર પ્રકટ કરવામાં
 આવ્યો છે. (સે તં રસણામે) આ પ્રકારનું રસનામનું સ્વરૂપ સમજવું.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં ફાસણામે ?) હે ભગવન્ ! શુચુનામના થોથા લેદ ઇપ
 ને સ્પર્શનામ છે, તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ફાસણામે અટ્ટવિહે પણ્ણસે) સ્પર્શનામ આઠ પ્રકારનું પ્રજ્ઞસ થયું
 . સ્પર્શેન્દ્રિયની મદદથી જે અનુભવ થાય છે, તેનું નામ સ્પર્શ છે

અયોગચંદ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૬ ત્રિનામનિરૂપણમ્

૬૫૩

સ્તબ્ધતાકારણં પાષાણાદિગતઃ સ્પર્શઃ-કર્કશસ્પર્શઃ-તસ્ય નામ કર્કશસ્પર્શનામ ।
 મૃદુકસ્પર્શનામ-કોમલસ્પર્શકારણં વિનિશ્ચલતાદિગતઃ સ્પર્શઃ-મૃદુકસ્પર્શસ્તસ્ય
 નામ । ગુરુકસ્પર્શનામ-અધઃપતનહેતુરયોગોલકાદિગતઃ સ્પર્શઃ-ગુરુકસ્પર્શસ્તસ્ય
 નામ । લઘુકસ્પર્શનામપ્રાયસ્તિર્યગૂર્ધ્વાધોગમનહેતુરર્કતૂલાદિ નિશ્ચિતઃ સ્પર્શઃ-લઘુ-
 કસ્પર્શ સ્પર્શ કા જો નામ હૈ વહ સ્પર્શ નામ હૈ । (તંજહા) હસકે આઠ
 પ્રકાર યે હૈ—(કક્ષલ્હકાસણામે, મઝયકાસણામે, ગરુયકાસણામે, લઘુ-
 કાસણામે, સીયકાસણામે, ઇસિણકાસણામે, ણિદ્ધકાસણામે, લુક્ષ્વ-
 કાસણામે) કર્કશ સ્પર્શ નામ મૃદુક સ્પર્શ નામ, ગુરુકસ્પર્શ નામ, લઘુ-
 કસ્પર્શ નામ, શીતસ્પર્શ નામ, ઉષ્ણસ્પર્શ નામ, સ્નિગ્ધસ્પર્શ નામ, રુક્ષ-
 સ્પર્શ નામ । કર્કશસ્પર્શ પાષાણ આદિ મેં રહતા હૈ । યહ સ્પર્શ સ્તબ્ધતા
 કા કારણ હોતા હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ કર્કશસ્પર્શ નામ હૈ ।
 કોમલસ્પર્શ કા જો કારણ હોતા હૈ તથા વિનિશ્ચલતા-વેત્ર લતા આદિ
 મેં જો રહતા હૈ વહ મૃદુકસ્પર્શ હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ મૃદુકસ્પર્શ
 નામ હૈ । જો અધઃપતન કા કારણ હોતા હૈ ઓર અયોગોલક આદિ મેં
 રહતા હૈ વહ ગુરુકસ્પર્શ હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ ગુરુકસ્પર્શ નામ હૈ ।
 જો સ્પર્શ પ્રાયઃ તિર્યગ્ ઊર્ધ્વ, અધઃ ગમન મેં કારણ હોતા હૈ ઓર જો
 અર્કતૂલ આદિ કે આશ્રય રહતા હૈ વહ લઘુક સ્પર્શ હૈ । હસકા જો

આ સ્પર્શનું જે નામ છે તે સ્પર્શનામ છે. (તંજહા) તે સ્પર્શનામના આઠ
 પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(કક્ષલ્હકાસણામે, મઝયકાસણામે, ગરુયકાસણામે, લઘુ-
 કાસણામે, સીયકાસણામે, ઇસિણકાસણામે, ણિદ્ધકાસણામે, લુક્ષ્વકાસણામે)
 (૧) કર્કશસ્પર્શનામ, (૨) મૃદુસ્પર્શનામ, (૩) ગુરુસ્પર્શનામ, (૪) લઘુસ્પર્શ-
 નામ, (૫) શીતસ્પર્શનામ, (૬) ઉષ્ણસ્પર્શનામ, (૭) સ્નિગ્ધસ્પર્શનામ
 (૮) રુક્ષસ્પર્શનામ.

પાષાણુ આદિમાં કર્કશ સ્પર્શનો સદ્ભાવ હોય છે. આ સ્પર્શ સ્તબ્ધ-
 તાના કારણભૂત બને છે. તેનું જે નામ છે તે કર્કશસ્પર્શનામ છે કોમલ-
 સ્પર્શનો અનુભવ કરાવનાર વિનિશ્ચલતા (વેત્રલતા) આદિના સ્પર્શને મૃદુ-
 સ્પર્શ કહે છે તેનું જે નામ છે તે મૃદુકસ્પર્શનામ છે. જે વસ્તુના
 અધઃપતનમાં કારણભૂત બને છે એવા લોહાના ગોળા આદિના સ્પર્શને
 ગુરુકસ્પર્શ કહે છે. આ સ્પર્શ દ્વારા વસ્તુ ભારે છે એવો અનુભવ થાય છે.
 આ ગુરુક સ્પર્શનું જે નામ છે તે ગુરુકસ્પર્શનામ છે. આંકડો તેલ આદિ
 હલકી વસ્તુઓના સ્પર્શને લઘુકસ્પર્શ કહે છે આ સ્પર્શ વસ્તુના તિર્યગ્-
 મન, ઉર્ધ્વગમન અને અધોગમનમાં કારણભૂત બને છે, તેનું જે નામ છે તે

૬૫૪

અનુયોગદ્વારસંજ્ઞે

કસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । શીતસ્પર્શનામ-દેહસ્તમ્ભાદિ હેતુઃ હિમાધાશ્રિતઃ સ્પર્શઃ શીત-
સ્પર્શસ્તસ્ય નામ । ઉષ્ણસ્પર્શનામ-આહારપાકાદિકારણં વહન્યાદ્યનુગતઃ સ્પર્શઃ
ઉષ્ણસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । સ્નિગ્ધસ્પર્શનામ-પુદ્ગલદ્રવ્યાણાં મિથઃ સંયુજ્યમાનાનાં બન્ધ-
નિબન્ધનં તૈલાદિસ્થિતઃ સ્પર્શઃ સ્નિગ્ધસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । તથા-રુક્ષસ્પર્શનામપુદ્ગલ-
દ્રવ્યાણામબન્ધનિબન્ધનં ભસ્માદિસ્થિતઃ સ્પર્શઃ રુક્ષસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । इत्यष्टविधं
સ્પર્શનામ बोध्यम् । तदेतदुपसंहरन्नाह-तदेतत्स्पर्श नामेति । अथ किं तत् संस्थान-
नाम ? इति प्रश्नः । उत्तरयति-संस्थाननाम हि परिमण्डलसंस्थाननामादिभेदैः

નામ હૈ વહ લઘુક સ્પર્શ નામ હૈ । દેહસ્તમ્ભ આદિ કા જો હેતુ
હોતા હૈ એવં જો હિમ આદિ કે સહારે રહતા હૈ વહ શીતસ્પર્શ હૈ ।
इसका जो नाम है वह शीतस्पर्श नाम है । आहार के पकाने आदि का
जो कारण होता है ऐसा अग्नि आदि के सहारे रहा हुआ जो स्पर्श
है वह उष्णस्पर्श है । इसका जो नाम है वह उष्णस्पर्श नाम है । परस्पर
मिले हुए पुद्गल द्रव्यों के संश्लिष्ट होने का कारण होता है ऐसा तैला-
दिक पदार्थ के सहारे रहा हुआ स्पर्श-स्निग्धस्पर्श है । इसका जो
नाम है वह स्निग्धस्पर्श नाम है । जो पुद्गल द्रव्यों के अबन्ध का कारण
होना है ऐसा भस्मादि स्थित स्पर्श रुक्षस्पर्श है । इसका जो नाम है
वह रुक्षस्पर्श नाम है । (से तं फासणामे) इस प्रकार यह आठ प्रकार
का स्पर्शनाम है । (से किं तं संठाणणामे) वह संस्थान नाम क्या है ?

લઘુકસ્પર્શનામ છે હિમ, ખરફ આદિના સ્પર્શથી જે સ્પર્શને અનુભવ થાય
છે તે સ્પર્શને શીતસ્પર્શ કહે છે. શરીર કુંઠવાઈ જવામાં કે અકડાઈ જવામાં
આ સ્પર્શ કારણભૂત બને છે. તેવું જે નામ છે, તે શીતસ્પર્શનામ છે.
આહારને રાંધવા આદિમાં જે કારણભૂત થાય છે અને અગ્નિ આદિમાં જેનો
સદ્ભાવ હોય છે, તે સ્પર્શને ઉષ્ણસ્પર્શ કહે છે તેવું જે નામ છે તે ઉષ્ણ-
સ્પર્શનામ છે. તેલ, ઘી આદિ પદાર્થોમાં જે સ્પર્શનો સદ્ભાવ હોય છે તે
સ્પર્શને સ્નિગ્ધસ્પર્શ કહે છે. પરસ્પર મળેલાં પુદ્ગલ દ્રવ્યોના એક બીજા
સાથે સંશ્લિષ્ટ રહેવામાં આ સ્પર્શ કારણભૂત બને છે. તેવું જે નામ છે તે
સ્નિગ્ધસ્પર્શનામ છે જે સ્પર્શ પુદ્ગલ દ્રવ્યોના અબન્ધમાં કારણભૂત બને છે
તે સ્પર્શને રુક્ષસ્પર્શ કહે છે ભસ્મ આદિમાં આ સ્પર્શનો સદ્ભાવ હોય છે.
તેવું જે નામ છે તે રુક્ષસ્પર્શનામ છે (સે તં ફાસણામે) આ પ્રકારનું આઠ
પ્રકારના સ્પર્શનામનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં સંઠાણણામે ? હે ભગવન્ ! સંસ્થાન નામનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

अनुयोगव्यक्ति टीका सूत्र १४७ पर्यवनामनिरूपणम्

६५५

पंचविधं प्रवृत्तम् । संस्थानमाकारविशेषस्त्वरूपं प्रसिद्धमेव । तदेतदुपसंहरन्नाह-
तदेतत् संस्थाननामेति । इत्थं गुणनाम प्ररूपितमिति सूचयितुमाह-तदेतत्
गुणनामेति ॥सू० १४६॥

मूलम्—से किं तं पञ्जवणामे ? पञ्जवणामे अणोगविहे
पण्णत्ते, तं जहा-एगगुणकालए दुगुणकालए तिगुणकालए
जाव दसगुणकालए संखिज्जगुणकालए असंखिज्जगुणकालए
अणंतगुणकालए । एवं नीललोहियहालिहसुकिह्हा वि भाणि-
यट्वा । एगगुणसुरभिगंधे दुगुणसुरभिगंधे तिगुणसुरभिगंधे

(संठाणनामे पंचविहे पण्णत्ते) संस्थान नाम पांच प्रकार का प्रज्ञप्त हुआ
है (परिमंडलसंठाणनामे, वट्टसंठाणनामे, तंस संठाणनामे, चउरंस-
संठाणनामे आययसंठाणनामे) संस्थान नाम आकार विशेष का है ।
यह संस्थान नाम परिमंडल संस्थान नाम आदि के भेद से पांच प्रकार
का है । इन संस्थानों का स्वरूप प्रसिद्ध ही है । संस्थान के नाम इस
प्रकार से हैं—परिमंडल संस्थान, वृत्त संस्थान, त्र्यस्रसंस्थान, चतुरस्र-
संस्थान, और आयतसंस्थान । (से तं संठाणनामे) इस प्रकार यह
संस्थान नाम है । (से तं गुणनामे) इस प्रकार से यहांतक यह गुणनाम
का वर्णन है । द्रव्यों के नाम द्रव्यनाम, वर्ण रस आदिकोंके नाम
गुणनाम है । ॥सू० १४६॥

उत्तर—(संठाणनामे पंचविहे पण्णत्ते) संस्थाननामना पांच प्रकार कहे।
ॐ. (तं जहा) ते प्रकारे नीचे प्रमाणे छे—(परिमंडलसंठाणनामे, वट्टसंठाणनामे,
तं संस्थाणनामे, चउरंससंठाणनामे, आययसंठाणनामे) आकार विशेषतुं नाम
संस्थान छे आ संस्थाननामना परिमंडल संस्थान नाम आदि पांच प्रकारे
छे. आ संस्थानेतुं स्वरूप बख्खितुं होवाथी अही तेमनुं वख्खुं करवाभां
आओं नथी संस्थाननां नाम आ प्रमाणे छे—(१) परिमंडलसंस्थान (२)
वृत्तसंस्थान, (३) त्र्यस्रसंस्थान, (४) चतुरस्रसंस्थान अने (५) आयत-
संस्थान. (से तं संठाणनामे) आ प्रकारतुं संस्थान नामतुं स्वरूप छे. (से तं
गुणनामे) वख्खुं, रस, गंध, स्पर्श अने संस्थाननाम रूप गुणनामतुं आ
प्रकारतुं स्वरूप छे द्रव्योनां नामने द्रव्यनाम कहे छे अने वख्खुं रस गंध,
स्पर्श अने संस्थानना नामने शब्दानाम कहे छे. ॥सू० १४६॥

જાવ અણંતગુણસુરભિગંધે । एवं दुरभिगंधोऽपि भाणियव्वो
 एगगुणतित्ते जाव अणंतगुणतित्ते । एवं कडुयकमाय अंबिल
 सहुरावि भाणियव्वा । एगगुणकक्खडे । जाव अणंतगुणकक्खडे
 एवं मउयगरुयलहुयसीतउसिणणिळलुक्खावि भाणियव्वा ।
 से तं पज्जवणामे ॥सू. १४७॥

છાયા—અથ કિં તત્ પર્યવનામ ? પર્યવનામ અનેકવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથા—
 એકગુણકાલકઃ, દ્વિગુણકાલકઃ, ત્રિગુણકાલકો યાવદ્ દશગુણકાલકઃ સંસ્થેય-
 ગુણકાલકઃ અસંસ્થેયગુણકાલકઃ અનન્તગુણકાલકઃ । एवं नीललोहितहारिद्रथुला
 अपि भणितव्याः । एकगुणसुरभिगन्धो द्विगुणसुरभिगन्धः त्रिगुणसुरभिगन्धो
 यावदनन्तगुणसुरभिगन्धः । एवं दूरभिगन्धोऽपि भणितव्यः । एकगुणतित्ते
 यावदनन्तगुणतित्तिः । एवं कटुककषायाम्लमधुरा अपि भणितव्याः । एकगुणकर्कशो
 यावदनन्तगुणकर्कशः । एवं मृदुकगुरुकलघुकशीतोष्ण स्निग्धरुक्षा अपि भणितव्याः ।
 तदेतत् पर्यवनाम ॥सू० १४७॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

સમ્પ્રતિ પર્યવનામ પરિજ્ઞાતું પૃચ્છતિ—અથ કિં તત્ પર્યવનામ ? इति । उत्तर-
 यति—पर्यवनाम—परि=समन्तात् अवन्ति=अपगच्छन्ति न तु द्रव्यवत् सर्वदैवाववि-
 ष्णन्ते इति पर्यवाः । अथवा—परि=समन्तात् अवजानि=गमनान्ति=द्रव्यस्यावस्था-
 न्तरमाप्तिरुपाणीति पर्यवाः=एकगुणकालत्वादयस्तेषां नाम—पर्यवनाम । पर्याय-

“સે કિં તં પજ્જવણામે” ? ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પજ્જવણામે) હે ભદ્રન્ત ! પર્યવ નામ કયા હે ?

ઉત્તર—(પજ્જવણામે અણેગવિહે પળણ્તે) પર્યવનામ અનેક પ્રકાર
 का प्रज्ञप्त हुआ है । द्रव्य के जैसी जो सर्वदा नहीं ठहरती हैं—किंतु
 बदलती रहती हैं वे पर्यव हैं । अथवा जो द्रव्य की भिन्न २ अवस्थारूप
 हों वे पर्यव हैं । ये पर्यव एक गुणकालत्व आदि हैं । इनका नाम पर्यव-

હવે પર્યવનામની પ્રજ્ઞપણા કરવામાં આવે છે—

“સે કિં તં પજ્જવણામે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પજ્જવણામે?) હે ભગવન્ ! પર્યવનામનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પજ્જવણામે અણેગવિહે પળણ્તે) પર્યવનામ અનેક પ્રકારના કદમાં
 છે. દ્રવ્યની જેમ જેનું અસ્તિત્વ સદા રહેતું નથી, પણ જે બદલાતી જ રહે
 છે તેનું નામ પર્યવ અથવા પર્યવ છે અથવા તે દ્રવ્યની કિન્ન કિન્ન અવ-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૭ પર્યવનામનિરૂપણમ્

૬૫૪

નામેતિ પાઠાન્તરપક્ષે-પરિ=સમન્તાત્ અયન્તે=અપગચ્છન્તીતિ પર્યાયાઃ । યદ્વા-
પરિ=સામસ્ત્યેન યન્તિ=અગ્નિગચ્છન્તિ વસ્તુતામિતિ પર્યાયાસ્તેષાં નામપર્યાયનામ ।
અત્રપક્ષેઽપ્યર્થઃ પૂર્વોક્ત એવ બોધ્યઃ । પર્યવનામ હિ અનેકવિધં પ્રક્ષપ્તમ્ । અનેક-
વિધરવમેવાહ-તથા-એકગુણકાલકઃ-અગ્નિ ગુણશબ્દોઽસ્યાર્થકઃ । એકગુણેન=એકા-
શેન કાલકઃ=કૃષ્ણઃ પરમાઘ્વાદિરેકગુણકાલક ઇત્યુચ્યતે । સમસ્તસ્યાપિ ત્રૈલોક્ય-

નામ હૈં । જબ “ પઞ્જવનામે ” હસકી સંસ્કૃત છાયા પર્યાયનામ એસી
હોતી હૈ તબ હસ પાઠાન્તર પક્ષ મૈં ભી યહી પર્યવ નામોક્ત અર્થ હી
નિકલતા હૈ (તંજહા) યહ પર્યવનામ અનેક પ્રકાર કા હસ પ્રકાર સે હૈ-
(એકગુણકાલ, દુગુણકાલ, ત્રિગુણકાલ, જાવ દસગુણકાલ, સંસ્થિજ્જગુણકાલ,
અસંસ્થિજ્જગુણકાલ અણંતગુણકાલ) એક
ગુણકાલ, દ્વિગુણકાલ, ત્રિગુણકાલ, યાવત્ દશગુણકાલ, સંખ્યા-
તગુણકાલ, અસંખ્યાતગુણકાલ, અનંતગુણકાલ । યહાં ગુણ
શબ્દ અંશ કા વાચક હૈ । જિસ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય મૈં કૃષ્ણ ગુણ કા
એક અંશ હો વહ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય એક ગુણકાલ હૈ । હસી પ્રકાર
જિસ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય મૈં કૃષ્ણ ગુણ કે દો અંશ હૈં વહ દ્વિગુણકા-
લ હૈ ત્રીન અંશ કૃષ્ણ ગુણ કે હૈં વહ ત્રિગુણકાલ હૈ યાવત્
સંખ્યાત અંશ કૃષ્ણગુણ કે હૈં વહ સંખ્યાતગુણકાલ હૈ અસંખ્યાત

સ્થાઓ ૩૫ હોય છે. દ્રવ્યની એક ગણી, બે ગણી કાળાશ આદિ ૩૫ આ
પર્યાય હોય છે. “ પઞ્જવનામે ” આ પદની સંસ્કૃત છાયા ‘ પર્યાયનામ ’
થાય છે. તે પર્યાયનામનો અર્થ પણ પર્યવનામ થાય છે. આ રીતે પર્યાય
અને પર્યવ, આ બન્ને સમાન અર્થી પદો છે.

(તંજહા) તે પર્યવનામના અનેક પ્રકારો છે જેમ કે (એકગુણકાલ,
દુગુણકાલ, ત્રિગુણકાલ, જાવ દસગુણકાલ, સંસ્થિજ્જગુણકાલ, અસંસ્થિ-
જ્જગુણકાલ, અણંતગુણકાલ) એક શુણકાલક, દ્વિશુણકાલક, ત્રિશુણકાલક અને
દસશુણ પર્યન્તનું કાલક, સંખ્યાત શુણકાલક, અસંખ્યાત શુણકાલક અને
અનંતશુણકાલક અહીં ‘ શુણ ’ શબ્દ અંશનો વાચક છે. જે પરમાણુ આદિ
દ્રવ્યમાં કાળાશનો એક અંશ હોય છે તે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યને એકશુણ
કાલક દ્રવ્ય કહે છે. એજ પ્રમાણે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં કાળાશના બે
અંશ હોય છે તે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યને દ્વિશુણકાલક દ્રવ્ય કહે છે એજ પ્રમાણે
દસશુણકાલક પર્યન્તના દ્રવ્યનો અર્થ પણ સમાજવો જે દ્રવ્યમાં કાળાશના
સંખ્યાત અંશ હોય છે તે દ્રવ્યને સંખ્યાત શુણકાલક કહે છે જે દ્રવ્યમાં

ગતકાલકસ્ય અસત્કલ્પનયા પિણ્ડિતસ્ય ચ એકઃ=સર્વજઘન્યો ગુણઃ=અંશસ્તેન કાલકઃ-એકગુણકાલકઃ-સર્વજઘન્ય-કૃષ્ણ इत्यर्थः। एवं द्विगुणकालकप्रभृत्यनन्त-गुणकालकान्ताः परमाणवो बोध्याः। एवमेव एकगुणनीलकादय एकगुणलोहित-

અંશ કૃષ્ણગુણ કે હૈં વહ અસંખ્યાત ગુણકાલક હૈં ઓર અનંત અંશ કૃષ્ણ ગુણ કે હૈં વહ અનંતગુણકાલક હૈં। એક ગુણ સે જો કાલા હૈં એસા પરમાણ્વાદિ દ્રવ્ય એક ગુણકાલક શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈં। હસી પ્રકાર સે અન્યત્ર ધી-દ્વિગુણકાલક આદિ મેં ધી સમજના ચાહિયે। તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ ત્રીન લોક મેં જિતના ધી કાલક ગુણ હૈં ડસકો અસત્ કલ્પના સે એકત્રિત કરલો, ફિર ડસમેં સે ડસ કૃષ્ણ વર્ણ કા સબસે જઘન્ય અંશ લેલો-હસ જઘન્ય કૃષ્ણાંશ સે જો કાલા હો-વહ એક ગુણકાલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈં। (એવં) હસી પ્રકાર (નીલલોહિયહાલિહસુકિલા વિ ભાણિયઞ્વા) એક ગુણ-અંશ નીલવર્ણ કા જિસમેં હૈં વહ એક ગુણનીલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈં। ડો ગુણ-અંશ-નીલવર્ણ કે જિસમેં હૈં વહ દ્વિગુણનીલક હૈં। હસી પ્રકાર સે ત્રીન ચાર આદિ સંખ્યાત, અસંખ્યાત ઓર અનન્ત અંશ નીલવર્ણ કે જિસમેં હૈં વે ત્રીન ગુણનીલક, ચાર ગુણનીલક યાવત્ સંખ્યાત ગુણનીલક

કાળાશના અસંખ્યાત અંશ હોય છે, તે દ્રવ્યને અસંખ્યાત ગુણ કાલક કહે છે અને જે દ્રવ્યમાં કાળાશના અનંત અંશ હોય છે તે દ્રવ્યને અનંતગુણ કાલક કહે છે. આ રીતે કાળાશના એક ગુણ અથવા અંશવાળું પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય “એકગુણકાલક”નું સમાનાર્થી પદ છે. એજ પ્રમાણે દ્વિગુણ-કાલક આદિના વિષયમાં પણ સમજવું આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે- ત્રણે લોકમાં જેટલો કાલકગુણ (કાળાશ) છે તેને ધારો કે અસત્કલ્પનાને આધારે એકત્ર કરવામાં આવે ત્યાર બાદ તેમાંથી તે કૃષ્ણ વર્ણના જઘન્ય (સૌથી નાનો) અંશ લઈ લો. આ જઘન્ય કૃષ્ણઅંશ પ્રમાણ કાળા દ્રવ્યને એક ગુણ કાલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય કહે છે. (એવં) એજ પ્રમાણે (નીલ, લોહિય, હાલિહસુકિલા વિ ભાણિયઞ્વા) જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં નીલ વર્ણના એક અંશ હોય છે તેને એક ગુણ નીલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય કહે છે જેમાં નીલવર્ણના જે અંશ હોય છે તેને દ્વિગુણનીલક દ્રવ્ય કહે છે એજ પ્રમાણે ત્રણ, ચાર આદિ ડસ પર્યન્તના નીલવર્ણના અંશ જેમાં હોય છે તે દ્રવ્યોને ત્રણગુણ નીલક, ચારગુણનીલક, (યાવત્) ડસ ગુણનીલક દ્રવ્ય કહે છે એજ પ્રમાણે સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનંત અંશ નીલવર્ણ ધરાવતાં દ્રવ્યોને

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૭ પર્યવનામનિકૂળમ્

૬૫૨

કાદય એકગુણહારિદ્રાદય એકગુણશુક્લાદયશ્ચ પરમાણ્વો બોધ્યાઃ । તથા-એકગુણસુ-
રભિગન્ધાન્નનન્તગુણસુરભિગન્ધાન્તાઃ પરમાણ્વો બોધ્યાઃ । એવમેકગુણદુરભિગન્ધાઘ-

અસંખ્યાત ગુણનીલક એવં અનન્ત ગુણનીલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈ ।
इसी प्रकार एक आदि अंश लोहितवर्ण का जिसमें है वह एक गुण
लोहितक परमाणु आदि द्रव्य है, एक गुण आदि पीतवर्ण का जिसमें
है वह एक गुण पीतवर्णवाला दो गुण पीत वर्णवाला परमाणु आदि द्रव्य
है । इसी प्रकार से एक गुण आदि शुल्क वर्णवाले परमाणु आदि द्रव्य
भी जानना चाहिये । (एकगुणसुरभिगंधे दुगुणसुरभिगंधे, तिगुण-
सुरभिगंधे जाब अणंतगुणसुरभिगंधे-एवं दुरभिगंधोऽपि भाणियन्वो)
एक-जघन्य-अंश सुरभिगंधवाला परमाणु आदि दो अंश सुरभिगंध-
वाले परमाणु आदि यावत् अनंत अंश सुरभि गंधवाले परमाणु आदि
भी जानना चाहिये ! एक जघन्य अंश दुरभिगंध का जिसमें है वह
एक गुण दुरभिगंधवाला परमाणु आदि द्रव्य है यावत् अनंत अंश
दुरभिगंध के जिसमें हैं वे अनन्त गुण दुरभिगंधवाले परमाणु आदि हैं ।

અનુક્રમે સંખ્યાત ગુણનીલક, અસંખ્યાત ગુણનીલક અને અનંતગુણનીલક
દ્રવ્યો કહે છે. એજ પ્રમાણે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં લાલવર્ણનો એક
અંશ હોય છે, તે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યને એક ગુણ લોહિતક દ્રવ્ય કહે છે
એજ પ્રમાણે દ્વિગુણલોહિતકથી લઈને અનંતગુણ લોહિતક પર્યન્તના પદોનો
અર્થ બોલે જ સમજી શકાય એવો છે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં પીળાવ-
ર્ણનો એક અંશ હોય છે, તેને એક ગુણ પીતવર્ણવાળું કહે છે એજ પ્રમાણે
દ્વિગુણ પીત વર્ણવાળાં દ્રવ્યોથી લઈને અનંતગુણપીતવર્ણવાળાં દ્રવ્યો વિષે
પણ સમજવું એજ પ્રમાણે શુક્લ વર્ણના એકથી લઈને અનંત પર્યન્તના
અંશવાળા પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય વિષે પણ સમજવું.

પર્યવનામના વધુ પ્રકારોને હવે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—

(એકગુણસુરભિગંધે, દુગુણસુરભિગંધે, ત્રિગુણસુરભિગંધે, જાબ અણંતગુણ
સુરભિગંધે, એવં દુરભિગંધોઽપિ ભાણિયન્વો) એક સુરભિગુણવાળું પરમાણુ આદિ
(ઓછામાં ઓછા સુરભિના અંશવાળું પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય), સુરભિના જે અંશ-
વાળું, અને ત્રણથી લઈને અનંત પર્યન્તના સુરભિગંધના અંશોવાળાં પરમાણુ
આદિ દ્રવ્યો પણ હોય છે એજ પ્રમાણે એકથી લઈને અનંત પર્યન્તના દુરભિ-
ગંધના અંશોવાળાં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો હોય છે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં
દુર્ગંધનો ઓછામાં ઓછો અંશ-એક અંશ-હોય તે દ્રવ્યને એક ગુણ દુરભિ-
ગંધવાળું કહે છે. એજ પ્રમાણે બાકીનાં પદોનો અર્થ પણ સમજી લેવો.

૬૬૦

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

નન્તગુણદુરભિગન્ધાન્તાઃ પરમાણ્વો બોધ્યાઃ । તથા-એકગુણતિક્તાઘનન્તગુણતિક્ત-
પર્યન્તાઃ પરમાણ્વો બોધ્યાઃ । એવમેવ-એકગુણકટુકાદયઃ, એકગુણ કષાયાદયઃ,
એકગુણામ્લાદયઃ, એકગુણમધુરાદયશ્ચાપિ પરમાણ્વો બોધ્યાઃ । તથા-એકગુણકર્કશ-
મૃદુસ્પ્યનન્તગુણકર્કશાન્તાઃ બોધ્યાઃ । એવમેવ-એકગુણમૃદુકાદયઃ, એકગુણગુરુકા-
દયઃ, એકગુણલઘુકાદયશ્ચ-કર્કશમૃદુ-ગુરુલઘુસ્પર્શાઃ પરમાણુષુ ન લભ્યન્તે, एषां
बादरानन्तप्रदेशिस्कन्धेष्वेव सङ्गावात्, ततोऽत्रपरमाणवो न ग्राह्य इति । तथा
એકગુણશીતાદયઃ, એકગુણોષ્ણાદયઃ, એકગુણસ્નિગ્ધાદયઃ, એકગુણરુક્ષાદયશ્ચ

તથા એક ગુણ તિક્ત કા જિસમેં હૈ વહ એક ગુણ તિક્તવાલા પરમાણુ
આદિ હૈ યાવત્ અનંત અંશ તિક્ત ગુણ કે જિસમેં હૈ વે અનંત ગુણ
તિક્તવાલે પરમાણુ આદિ હૈ એસા જાનના ચાહિયે । હસી પ્રકાર સે એક
ગુણ કટુકાદિવાલે, એક ગુણ કષાય આદિવાલે, એક ગુણ અમ્લાદિવાલે
ઔર એક ગુણ મધુરાદિ રસવાલે પરમાણુ આદિ બી જાનના ચાહિયે
તથા એક ગુણ કર્કશ સ્પર્શવાલે સે લેકર અનંત કર્કશાંશવાલે બી એસે
હી જાનના ચાહિયે ! હસી પ્રકાર એક ગુણ મૃદુક આદિવાલે, એક ગુણ
ગુરુ સ્પર્શ આદિવાલે એક ગુણ લઘુ સ્પર્શ આદિવાલે બી જાનના ચાહિયે ।
કર્કશ મૃદુ-ગુરુ લઘુ યે ચાર સ્પર્શ પરમાણુ મેં નહીં હોતે હૈ, ક્યોં કિ યે
ચાર સ્પર્શ બાદર અનન્તપ્રદેશી સ્કંધ મેં હી હોતે હૈ । તથા એક ગુણ

રસની અપેક્ષાએ પર્યાયના નીચે પ્રમાણે પ્રકારો છે-એક ગુણતિક્ત
રસવાળું પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય એજ પ્રમાણે અનંત પર્યન્તના તિક્તગુણવાળાં
પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો પણ હોય છે. એજ પ્રમાણે એક ગુણ કટુકથી લઈને
અનંતગુણ કટુક પર્યન્તના, એક ગુણ કષાયથી લઈને અનંત ગુણ કષાય
એક ગુણ અમ્લરસથી લઈને અનંતગુણ પર્યન્તના અમ્લ રસવાળાં અને
એક ગુણ મધુરથી લઈને અનંત પર્યન્તના મધુરગુણવાળાં દ્રવ્યો પણ હોય છે.

સ્પર્શની અપેક્ષાએ પર્યાયના નીચે પ્રમાણે પ્રકારો છે-એક ગુણ કર્કશ
સ્પર્શવાળાથી લઈને અનંતગુણ કર્કશ સ્પર્શવાળા, એજ પ્રમાણે એક ગુણ
મૃદુકથી લઈને અનંત ગુણ મૃદુક પર્યન્તના, એક ગુણથી લઈને અનેક ગુણ
પર્યન્તના ગુરુ સ્પર્શવાળાં, એક ગુણથી અનેક ગુણ પર્યન્તના લઘુ સ્પર્શવાળાં,
એક ગુણથી લઈને અનેક ગુણ શીતસ્પર્શવાળાં, એકથી લઈને અનેક ગુણ ઉષ્ણ-
સ્પર્શવાળાં, એકથી લઈને અનેક ગુણ પર્યન્તના સ્નિગ્ધ સ્પર્શવાળાં અને
એકથી અનેક ગુણ પર્યન્તના રુક્ષસ્પર્શવાળાં, દ્રવ્યો પણ હોય છે કર્કશ, મૃદુ,

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૭ પર્યવનામનિરૂપણમ્

૬૬૧

બોધ્યાઃ । નન્નુ-ગુણપર્યાયયોઃ કો ભેદઃ ? ઇતિ ચેદુચ્યતે-સર્વદા સહવર્તિનો ગુણાઃ, ક્રમવર્તિનઃ પર્યાયાઃ, એવં ચ-સદૈવ સહવર્તિત્વાદ્ વર્ણગન્ધરસાદયઃ સામાન્યેન ગુણા ઉચ્યન્તે, ન હિ મૂર્તે વસ્તુનિ કદાચિદપિ વર્ણગન્ધરસાદયો નિવર્તન્તે । એકગુણ-કાલકૃત્વાદયસ્તુ પર્યાયાઃ । દ્વિગુણકાલકૃત્વાવસ્થાયામેકગુણકાલત્વસ્યામાવેન

શીતાદિવાલે, એક ગુણ ઉષ્ણાદિવાલે, એક ગુણસ્નિગ્ધાદિવાલે ઓર એક ગુણ રુક્ષાદિવાલે મી જાનના ચાહિયે ।

શંકા-ગુણ ઓર પર્યાય મેં કયા ભેદ હેં ? શંકાકાર કા યહ અભિ-પ્રાય હે કિ દ્રવ્ય મેં ગુણ ઓર પર્યાયે યુગપત્ રહા કરતી હેં તથ યે દોનોં એક હી હેં-ફિર ગુણ ઓર પર્યાયોં કો સૂત્રકાર ને અલગ અલગ કયોં કહા ?

ઉત્તર-ગુણ ઓર પર્યાયેં યયપિ દ્રવ્ય મેં એકસાથ રહતી હેં-ફિર મી હનમેં યહ ભેદ હે કિ ગુણ તો દ્રવ્ય કે સહવર્તી હોતે હેં ઓર પર્યાયેં ક્ષણ વિઘ્વંસી હોને કે કારણ દ્રવ્ય કી સહવર્તી નહીં હોતી હેં । યે તો ક્રમવર્તિની હી હોતી હેં । ઇસલિયે સર્વદા સહવર્તી હોને કે કારણ વર્ણ ગંધ, ઓર રસાદિક સામાન્ય સે ગુણ કહે જાતે હેં ઓર ડનકી એક ગુણ કાલકૃત્વાદિ ક્રમવર્તી અવસ્થાએ પર્યાય કહી જાતી હેં । યે વર્ણ, ગંધ, આદિ ગુણ મૂર્ત વસ્તુ જો પુદ્ગલ હેં ડસસે કમી મી નિવૃત્ત નહીં હોતે હેં ।

ગુરુ અને લઘુ, આ ચાર સ્પર્શોના પરમાણુમાં સદલાવ હોતો નથી, કારણ કે તે ચાર સ્પર્શોના સદલાવ બાદર અનંત પ્રદેશી રકન્ધમાં જ હોય છે.

શંકા-ગુણ અને પર્યાય વચ્ચે શો ભેદ છે ? (આ પ્રશ્નને લાવાર્થ એ છે કે દ્રવ્યમાં ગુણ અને પર્યાયો એક સાથે જ રહેતાં હોય છે આ રીતે તે બન્ને એક જ હોવા છતાં પણ સૂત્રકારે ગુણ અને પર્યાયોનું ગુદા ગુદા વિષય રૂપે શા માટે કથન કર્યું છે ?)

ઉત્તર-ગુણ અને પર્યાયો એ કે દ્રવ્યમાં એક સાથે રહે છે, છતાં પણ તે બન્નેમાં આ પ્રમાણે ભેદ છે-

ગુણતો દ્રવ્યોના સહવર્તી હોય છે, પરન્તુ પર્યાયો ક્ષણ વિઘ્વંસી હોવાને કારણે દ્રવ્યના સહવર્તી હોતા નથી વર્ણ, ગંધ, રસ આદિ સર્વદા સહવર્તી હોવાને કારણે તેમને ગુણ કહેવામાં આવે છે. પણ તેમની એક ગુણકાલત્વ આદિ ક્રમવર્તી અવસ્થાએને પર્યાય કહેવામાં આવે છે. વર્ણ, ગંધ આદિ જે ગુણો છે તેમનો મૂર્ત વસ્તુમાંથી-પુદ્ગલમાંથી-કદી પણ નાશ (નિવૃત્તિ) થતો નથી ગુણોના અંશોનું નામ પર્યાય છે. ગુણનો એક અંશ બે અંશોની

एकगुणकालकत्वावस्थायां द्विगुणकालकत्वस्याभावेन च एकगुणकालकत्वादीनां क्रमवृत्तिस्त्वात् पर्यायत्वं बोध्यम् । उक्तं च—

“सहवर्तिनो गुणाः, यथा जीवस्य चैतन्यामूर्त्तत्वादयः ।

क्रमवर्तिनः पर्यायाः यथा तस्यैव नारकत्वतिर्यक्त्वादयः ॥” इति ।

નનુ યદ્યેવં તર્હિ વર્ણાદિસામાન્યસ્ય ભવતુ ગુણત્વમ્, તદ્વિશેષાણાં કૃષ્ણાદીનાં તુ ગુણત્વં ન સ્યાત્, તેષામનિયમિતત્વાત્, ઇતિ ચેદાહ-કૃષ્ણાદીનાં વર્ણસામાન્યભેદા-

ગુણો કે ગુણાંશ પર્યાય હૈં । ગુણ કા એક અંશ દો અંશોં કી અવસ્થા મૈં નિવૃત્ત હો જાતી-હૈં । ઇસલિયે યે ગુણાંશ પર્યાય હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જબ પરમાણુ દ્રવ્ય મૈં સર્વ જઘન્ય રૂપ કૃષ્ણાદિ ગુણ રહતે હૈં તબ વે, દો અંશ કૃષ્ણાદિ ગુણોં કે આને પર નિવૃત્ત હો જાતે હૈં । ઇસી પ્રકાર કૃષ્ણાદિ ગુણોં કે દો અંશ એક અંશ કૃષ્ણાદિ ગુણોં કી અવસ્થા મૈં નિવૃત્ત હો જાતે હૈં । ઇસલિયે કૃષ્ણાદિ ગુણોં કે યે એક, દો ત્રીન યાવત્ સંખ્યાત અસંખ્યાત ઔર અનંત અંશ સબ પર્યાય હૈં । ક્યોંકિ યે ક્રમવર્તી હૈં । ઉક્તં-“સહવર્તી” ઇત્યાદિ ગુણ સહવર્તી હોતે હૈં-જૈસે જીવ કે ચૈતન્ય અમૂર્ત્ત્વ આદિ । પર્યાયે ક્રમવર્તી હોતી હૈં-જૈસે જીવ કી નારક તિર્યક આદિ પર્યાયે ।

સંકા-યદિ યહી બાત હૈ તો ફિર વર્ણાદિ સામાન્ય મૈં હી ગુણપના હોના ચાહિયે-વર્ણાદિકોં કે વિશેષ જો કૃષ્ણ આદિ હૈં ડનમૈં ગુણપના

અવસ્થામાં નિવૃત્ત થઈ જાય છે અને બે અંશ એક અંશની અવસ્થામાં પણ નિવૃત્ત થઈ જાય છે. તેથી તે ગુણાંશને પર્યાય રૂપ ગણવામાં આવે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-ધારો કે કોઈ દ્રવ્યમાં ઓછામાં ઓછા પ્રમાણુવાળા એટલે કે એક ગુણ (અંશ) કાળાશ આદિ ગુણ રહેલો હોય પરંતુ બે અંશ (ગુણ) કૃષ્ણાદિ ગુણોનું તે દ્રવ્યમાં આગમન થતાં જ તે એક ગુણ કૃષ્ણાદિ ગુણોની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે એજ પ્રમાણે કૃષ્ણાદિ ગુણોના બે અંશ રહેલા હોય, તો એક ગુણકૃષ્ણાદિ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ થતાં જ તે બે અંશોની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે તેથી કૃષ્ણાદિ ગુણોના એક, બે, ત્રણ, ચાર, આદિથી લઈને સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનંત પર્યાંતના બધા અંશો પર્યાય રૂપ છે, કારણ કે તેઓ ક્રમવર્તી હોય છે. કહ્યું પણ છે કે-“સહવર્તી” ઇત્યાદિ આ કથન દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે ગુણ સહવર્તી હોય છે. જેમ કે જીવના ચૈતન્ય, અમૂર્ત્ત્વ આદિ ગુણો સહવર્તી છે. પર્યાયો ક્રમવર્તી હોય છે. જેમ કે જીવની નારક, તિર્યક આદિ પર્યાયો.

સંકા-જો એવું હોય, તો વર્ણાદિ સામાન્યમાં જ ગુણપણ હોવું જોઈએ પરંતુ કાળાશ આદિ જે વર્ણવિશેષો છે તેમાં ગુણપણનો બલાવ હોવો જોઈએ,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સ્વ ૧૪૭ પર્યવનામનિરૂપણમ્

૬૬૩

નામપિ પ્રભૂતકાલં પ્રાયઃ સદ્વાવસ્થાયિત્વમિતિ તેષામપિ ગુણત્વં बोध्यम् । नन्वेते गुणपर्यायाः पुद्गलास्तिकायस्यैव भवताऽभिहिताः, न तु धर्मास्तिकायादीनाम् । इदयन्ते च धर्मास्तिकायादीनामपि गुणा गतिस्थित्यवगाहोपयोगवर्त्तनादयः, पर्यायाश्च प्रत्येकमनन्ता अगुरुलघ्वादय इति चेदाह—इन्द्रियप्रत्यक्षगम्यत्वात् सुमति-
 नहीं होना चाहिये । क्योंकि ये अनियमित हैं । शंकाकार की इस शंका का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार गुण के एक अंश दो-अंश आदि अनियमित है इसलिये ये पर्याय हैं उसी प्रकार कृष्णादि भी अनियमित है अतः इन्हे भी-पर्याय ही मानना चाहिये-गुण नहीं । सो इस शंका का उत्तर यह है कि वर्ण सामान्य के भेद जो ये-कृष्णादि हैं वे प्रायः बहुत समय तक द्रव्य के साथ अवस्थित रहते हैं । इसलिये इनमें गुणता मानी गई है । पर्यायों इस प्रकार से द्रव्य के साथ नियमित प्रभू-
 तकाल तक-नहीं रहती हैं । इसलिये अचिरस्थायी होने से उनमें गुणता नहीं मानी गई है ।

शंका-ये गुण पर्यायों आपने पुद्गलास्तिकाय की ही कही हैं धर्मा-
 स्तिकायादिकों की नहीं कहीं हैं । सो ऐसा तो है नहीं क्योंकि पुद्गला-
 स्तिकाय के जैसा धर्मास्तिकायादिकों में भी गतिहेतुत्व, स्थितिहेतुत्व,
 अवगाहहेतुत्व, उपयोग एवं वर्त्तनादि गुण और इनमें प्रत्येक में
 अनन्त अगुरुलघु आदि रूप पर्यायों देखी जाती हैं-

કારણ કે તેઓ અનિયમિત છે, અહીં શંકા કરનાર વ્યક્તિ એવું કહેવા માગે છે કે જેમ ગુણના એક અંશ, એ અંશ આદિ અનિયમિત હોવાથી તેમને પર્યાય રૂપ ગણવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે કૃષ્ણાદિ ગુણો પણ અનિયમિત હોય છે, તેથી તેમને પણ ગુણરૂપ માનવાને બદલે પર્યાય રૂપ જ માનવા જોઈએ.

આ શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય—

વર્ણસામાન્યતા ભેદ રૂપ જે કૃષ્ણાદિ વર્ણો છે, તેઓ સામાન્ય રીતે ઘણા સમય સુધી દ્રવ્યની સાથે અવસ્થિત રહે છે (વિદ્યમાન રહે છે) તેથી કૃષ્ણાદિ વર્ણને દ્રવ્યના ગુણરૂપ માનવામાં આવેલ છે પરંતુ પર્યાયો એ રીતે દ્રવ્યની સાથે લાંબા સમય સુધી રહેતા નથી આ રીતે અચિરસ્થાયી હોવાને કારણે તેમને દ્રવ્યના ગુણરૂપ માનવાતે બદલે દ્રવ્યની પર્યાયો રૂપ માનવામાં આવે છે.

શંકા-આપે અહીં પુદ્ગલાસ્તિકાયના જ ગુણો અને પર્યાયોનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. ધર્માસ્તિકાય આદિના ગુણો અને પર્યાયોનું તો આપે કથન જ કર્યું નથી પુદ્ગલાસ્તિકાયની જેમ ધર્માસ્તિકાય આદિકોમાં પણ ગતિ હેતુત્વ, સ્થિતિ-
 હેતુત્વ, અવગાહહેતુત્વ, ઉપયોગ અને વર્તનાદિ ગુણોનો અને અનંત અગુરુ લઘુ આદિ પર્યાયોનો અહીં શા કારણે ઉલ્લેખ કરાયો નથી ?

પાઘતયા પુદ્ગલદ્રવ્યસ્યૈવ ગુણપર્યાયા ઉક્તાઃ, ન તુ શેષાણાં ધર્માસ્તિકાયાદીનામ્ ।
તસ્માદ્ યત્ કિમપિનામ તેન સર્વેણાપિ દ્રવ્યનામ્ના ગુણનામ્ના પર્યાયનામ્ના ના
ભવિત્વવ્યમ્, નાતઃ પરં કિમપિ નામાસ્તિ । તતઃ સર્વસ્યૈવાનેન સંપ્રહાત્ ત્રિનામૈ-
તદુચ્યતે ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૪૭ ॥

ઉત્તર-પુદ્ગલ દ્રવ્ય કો ગુણ પર્યાયેં ઇન્દ્રિય પ્રત્યક્ષ દ્વારા ગમ્ય હોને સે
સુપ્રતિપાદ્ય હૈં હસલિયે સૂત્રકારને સ્મકી હી ગુણ ઓર પર્યાયેં યહાં
કહી હૈં શેષ ધર્માસ્તિકાયાદિકોં કી નહીં । હસલિયે જો ખી કોઈ નામ
હૈં વહ યા તો દ્રવ્ય કા નામ હોગા, યા પર્યાય કા નામ હોગા યા ગુણ
કા નામ હોગા । હસસે આગે ઓર કોઈ નામ નહીં હોગા અતઃ સમસ્ત
નામોં કા હસ ત્રિનામ સે સંગ્રહ હો જાને સે યહ ત્રિનામ કહલાતા હૈં ।

ભાવાર્થ-સૂત્રકારને હસ સૂત્ર દ્વારા ત્રિનામ કી વ્યાખ્યા કી હૈ-
હસમેં ઉન્હોને યહ સ્પષ્ટ કિયા હૈં કિ ત્રીન પ્રકાર કા જો નામ હૈં વહ
ત્રિનામ હૈં । નામ કે ત્રીન પ્રકાર દ્રવ્ય ગુણ ઓર પર્યાય નામ હૈં । જો ખી
નામ હોગા વહ યા તો દ્રવ્ય કો લેકર હોગા, યા ગુણ કો લેકર હોગા
યા પર્યાય કો લેકર હોગા । ધર્માસ્તિકાય આદિ જો નામ હૈં વે દ્રવ્યાશ્રિત
નામ હૈં । અર્થાત્-દ્રવ્યોં કે જો નામ હૈં વે દ્રવ્ય નામ હૈં । ગુણોં કે જો

ઉત્તર-પુદ્ગલદ્રવ્યના ગુણો અને પર્યાયો ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ દ્વારા અનુભવી
શકાય તેવાં હોવાથી તેમનું પ્રતિપાદન સરળતાપૂર્વક કરી શકાય છે પરંતુ
ધર્માસ્તિકાયાદિના ગુણ પર્યાયોના ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ દ્વારા અનુભવ કરી શકતો
નથી તેથી જ સૂત્રકારે અહીં પુદ્ગલ દ્રવ્યના જ ગુણો અને પર્યાયોનું પ્રતિ-
પાદન કર્યું છે, બાકીનાં ધર્માસ્તિકાય આદિકોના ગુણો અને પર્યાયોનું પ્રતિ-
પાદન કર્યું નથી તેથી જ જે કોઈ પણ નામ હશે તે કાં તો દ્રવ્યનું નામ હશે,
કાં તો ગુણનું નામ હશે કાં તો પર્યાયનું નામ હશે તેનાં કરતાં આગળ બીજું
કોઈ પણ નામ નહીં હોય તેથી સમસ્ત નામોના આ ત્રિનામ વડે સંગ્રહ
થઈ જવાથી, તેમને અહીં ત્રિનામ રૂપ કહેવામાં આવેલ છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા ત્રિનામનું નિરૂપણ કર્યું છે આ સૂત્રમાં
તેમણે એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે ત્રણ પ્રકારનું જે નામ છે તે ત્રિનામ છે.
નામના ત્રણ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દ્રવ્યનામ, (૨) ગુણનામ, અને (૩)
પર્યાયનામ જે કોઈ પણ નામ હશે કાં તો દ્રવ્યને આધારે હશે, કાં તો
ગુણને આધારે હશે, કાં તો પર્યાયને આધારે હશે ધર્માસ્તિકાય આદિ
જે નામો છે તેઓ દ્રવ્યાશ્રિત નામો છે એટલે કે દ્રવ્યોનાં જે નામ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૭ પર્યવનામનિરૂપણમ્

૬૬૫

નામ હૈં વે ગુણનામ હૈં—હસીલિયે ગુણનામ પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ। યદ્યપિ ગુણ રૂપ રસાદિ કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર કા હોતા હૈ પરન્તુ સંસ્થાન કો ભી પુદ્ગલ દ્રવ્યાશ્રિત સર્વદા હોને કે કારણ ગુણરૂપ માન લિયા ગયા હૈ હસીલિયે ગુણનામ મૈં પંચવિધતા કહી ગઈ હૈ। પાંચ પ્રકાર કે વર્ણો કા, દો પ્રકાર કે ગંધો કા, પાંચ પ્રકાર કે રસો કા ઓર આઠ પ્રકાર કે સ્પર્શો કા તથા પાંચ પ્રકાર કે પરિમંડલ આદિ આકારો કા જો ૨ નામ હૈ વહ ગુણ નામ હોકર ભી ભિન્ન ૨ રૂપ સે વર્ણાદિ નામ હૈ। હસ પ્રકાર યે ગુણનામ ૨૫ પ્રકાર કે હોકર ભી એક ગુણનામ મૈં હી અન્તર્ભૂત હૈં। પર્યાય નામ નિયમિત નહીં હૈં—કર્ણોકિ પર્યાયે સ્વયં અનેકવિધ હૈં। રૂપ, રસ, ગંધ આદિ જિતને ભી ગુણ હૈં उन सब में उनके एक दो तीन चार आदि संख्यात, असंख्यात अनंत अंश हैं एक कृष्ण गुण को ही ले लीजिये—कोई पदार्थ कम कृष्ण है, कोई उससे अधिक कृष्ण है और कोई उससे भी अधिक कृष्ण हैं। यह कृष्ण गुण की तरतमता उसके अंशों के ऊपर निर्भर है। कृष्ण गुण का सबसे कम जो एक

છે તે દ્રવ્યનામ છે. ગુણોનાં જે નામ છે તે ગુણનામ છે. તે ગુણનામ પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે જો કે વર્ણ, રસ, ગંધ, અને સ્પર્શ રૂપ ચાર ગુણ હોય છે, પરન્તુ સંસ્થાન (આકાર)નો પણ પુદ્ગલ દ્રવ્યમાં સદા સદ્ભાવ રહે છે, તે કારણે અહીં સંસ્થાનને પણ ગુણ રૂપ ગણીને ગુણનામમાં પંચવિધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. પાંચ પ્રકારના વર્ણોના, જે પ્રકારના ગંધોનાં, પાંચ પ્રકારના રસોના, આઠ પ્રકારના સ્પર્શોનાં અને પાંચ પ્રકારના સંસ્થાનોનાં (આકારોનાં) જે જે નામે છે તે ગુણનામ હોવા છતાં પણ જુદાં જુદાં વર્ણાદિ નામ રૂપ છે. આ પ્રકારે આ ગુણનામ ૨૫ પ્રકારના હોવા છતાં પણ એક ગુણનામમાં જ સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે. પર્યાયનામ નિયમિત નથી, કારણ કે પર્યાયો અનેકવિધ હોય છે રૂપ, રસ, ગંધ આદિ જેટલા ગુણો છે તેમાં વર્ણાદિના એક, બે, ત્રણ, ચાર, આદિથી લઈને ૧૦ પર્યાયના અંશોનો, સંખ્યાત અંશોનો, અસંખ્યાત અંશોનો અને અનેક અંશોનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે. એકલા કૃષ્ણ વર્ણ રૂપ ગુણનો જ દાખલો લઈએ કોઈ પદાર્થમાં ઘણી ઓછી કાળાશ હોય છે, કોઈકમાં અધિક કાળાશ હોય છે, કોઈમાં અધિકતર કાળાશ હોય છે, તે કોઈમાં અધિકતમ કાળાશ હોય છે. આ કૃષ્ણ ગુણની ન્યૂનાધિકતાનો આધાર તેમાં રહેલી કાળાશના અંશો પર આધાર રાખે છે. કૃષ્ણ ગુણનો જે સૌથી જઘન્ય (ન્યૂનમાં ન્યૂન) અંશ છે તે એક અંશ રૂપ

પુનઃપ્રકારાન્તરેણ ત્રિનામ પ્રોચ્યતે—

મૂલ્ષ્—તં પુણ ણામં તિવિહં, ઇત્થી પુરિસં ણપુંસગં ચેવ ।

एएसिं तिण्हंपि य, अंतंमि य परूवणं वोच्छं ॥૧॥

तत्थ पुरिसस्स अंता, आई ऊओ हवंति चत्तारि ।

ते चेव इत्थियाओ, हवंति ओकारपरिहीणा ॥૨॥

અંશ હૈ વહ કૃષ્ણ ગુણ કા જઘન્ય અંશ હૈ । યહ કૃષ્ણ ગુણાંશ કૃષ્ણ-ગુણ કા પર્યાય હૈ । ઇસ પર્યાયવાલા જો પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈ વહ કૃષ્ણ ગુણ કી એક અંશ રૂપ પર્યાયવાલા હોને સે એક ગુણ કૃષ્ણવાલા—એક ગુણકાલક-પરમાણુ આદિ ઇસ નામ સે કહા જાતા હૈ । ઇસી પ્રકાર સે અન્ય દ્વિગુણ આદિ કાલક દ્રવ્ય પર્યાય નામ મેં જાનનાં ચાહિયે । ઇસી પ્રકાર સે અન્ય ગંધાદિ ગુણોં કે એકાદિ અંશોપેત પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોં કે નામ કે વિષય મેં જાનનાં ચાહિયે । યહાં પર કૃષ્ણાદિ ગુણોં કી એક અંશ દો અંશ આદિ પર્યાયોં કહી હૈં ઓર ઇન પર્યાયોં કે આશ્રિત એક ગુણ કાલક પરમાણુ એસા જો નામ હૈ વહ પર્યાયાશ્રિત નામ હૈ । પર્યાયાશ્રિત નામ મેં પર્યાય કી મુખ્યતા રહતી હૈ । ગુણ ઓર પર્યાયોં મેં સહવર્તિત્વ ઓર ક્રમવર્તિત્વ અનિયમિતત્વ-કો લેકર ભેદ હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સહવર્તી ગુણ ઓર ક્રમવર્તી પર્યાયોં હૈં । ॥સૂ૦૧૪૭॥

ગણાય છે તે કૃષ્ણ ગુણાંશ કૃષ્ણ ગુણની પર્યાય રૂપ ગણાય છે. આ પર્યાય-વાળું જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હોય છે તે કૃષ્ણ ગુણના એક અંશ રૂપ પર્યાયવાળું હોવાથી તેને એક ગુણ કૃષ્ણતાવાળું અથવા એક ગુણ કાલક પરમાણુ આદિ રૂપ કહેવામાં આવે છે. દ્વિગુણ આદિ કાલક દ્રવ્યપર્યાયના વિષયમાં પણ એજ પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ સમજવું એજ પ્રમાણે અન્ય ગંધાદિ ગુણોના એક આદિ અશોવાળા પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોના નામ વિષેનું કથન પણ સમજવું ભેદબોધ.

અહીં કૃષ્ણાદિ ગુણોના એક અંશ, બે અંશ આદિને પર્યાયો રૂપ કહેવામાં આવેલ છે. અને તે પર્યાયોને આધારે એક ગુણ કાલક પરમાણુ, આદિ જે નામો આપવામાં આવ્યાં છે, તે પર્યાયાશ્રિત નામો છે પર્યાયાશ્રિત નામનાં પર્યાયની પ્રધાનતા રહે છે ગુણ અને પર્યાયમાં સહવર્તિત્વ અને ક્રમવર્તિત્વ (અનિયમિતત્વ)ની અપેક્ષાએ ભેદ હોય છે એટલે કે ગુણ સહવર્તી હોય છે અને પર્યાય ક્રમવર્તી હોય છે. ॥સૂ૦૧૪૭॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १४८ प्रकारान्तरेण त्रिनामनिरूपणम्

६६७

अंतिअ इंतिय उंतिय—अंताउ णपुंसगस्स बोद्धव्वा ।
 एएसिं तिण्हंपि य, वोच्छामि निदंसणे एत्तो ॥३॥
 आगारंतो राया, ईगारंतो गिरी य सिहरी य ।
 ऊगारंतो विण्हू, दुमो य अंतो उ पुरिसाणं ॥४॥
 आगारंता माला, ईगारंतो सिरी य लच्छी य ।
 ऊंगारंता जंबू, बहू य अंता उ इत्थीणं ॥
 अंकारंतं धन्नं, इंकारंतं नपुंसगं अत्थि ।
 उंकारंतं पीलुं महुं च अंता णपुंसाणं ॥से तं तिणामे ॥सू. १४८॥

छाया—तत्पुनर्नाम त्रिविधम्, स्त्री पुरुषो नपुंसकं चैव ।
 एतेषां त्रयाणामपि च, अन्ते च प्ररूपणां वक्ष्ये ॥
 तत्र पुरुषस्य अन्ताः, आईऊओ भवन्ति चत्वारः ।
 तएव स्त्रियाः, भवन्ति ओकारपरिहीनाः ॥
 अं इति च इं इति च, उं इति च अन्तास्तु नपुंसकस्य बोधव्याः ।
 एतेषां त्रयाणामपि, वक्ष्यामि निदर्शनमितः ॥
 आकारान्तो 'राया' ईकारान्तो 'गिरी' च 'सिहरी' च ।
 ऊकारान्तो 'विण्हू' 'दुमो' च अन्तस्तु पुरुषाणाम् ॥
 आकारान्ता 'माला' ईकारान्ता 'सीरी' च 'लच्छी' च ।
 ऊकारान्ता 'जंबू' 'बहू' च अन्यस्तु स्त्रीणाम् ॥
 अंकारान्तं 'धन्नं' इंकारान्तं नपुंसकम् 'अत्थि' ।
 उंकारान्तः 'पीलुं' 'महुं' च अन्तो नपुंसकानाम् ॥

तदेतत् त्रिनाम ॥सू० १४८॥

टीका—'तं पुण' इत्यादि—

द्रव्यसम्बन्धि तत्पुनर्नाम स्त्रीपुंनपुंसकभेदेन त्रिविधं विज्ञेयम् । एषां त्रयाणामपि च नाम्नाम् अन्ते यान्याकारादीन्यक्षराणि तद्वद्वारा नाम्नः प्ररूपणां करि-

प्रकारान्तर से पुनः इसी त्रिनाम को सूत्रकार कहते हैं—

“तं पुण णामं त्रिविहं” इत्यादि—

७६ सूत्रकार त्रिनामनुं भीम प्रकारे कथन करे छे—

“तं पुण णामं त्रिविहं” इत्यादि—

ધ્યામિ ॥૧॥ તત્ર=ત્રિવિધનામ્નો મધ્યે પુરુષસ્ય=પુલ્લિજ્ઞનામ્નઃ અન્તાઃ=અન્ત-
સ્થિતા વર્ણા 'આઈ ડઝો' હિતિ ભવન્તિ । તથા-સ્ત્રીલિજ્ઞ નામ્નઃ અન્તસ્થિતા વર્ણા
ઓકારસ્વર્જિતાઃ પૂર્વોક્તા એવ વર્ણા બોધ્યાઃ । આકારાન્તા ઈકારાન્તા ડકારાન્તાથ
શબ્દા સ્ત્રીલિજ્ઞા બોધ્યાઃ ॥૨॥ તથા-નપુંસકશબ્દાનામ્ 'અં' હિતિ ચ 'ઈ' હિતિ ચ
'ઉં' હિતિચ અન્તા બોધ્યાઃ । અયં ભાવઃ-અંકારાન્તા ઈકારાન્તા ડકારાન્તાથ શબ્દા
નપુંસકલિજ્ઞે બોધ્યાઃ । હિતોડગ્રે એતેષાં ત્રયાણામપિ નિર્દર્શનમ્=ઉદાહરણં વક્ષ્યામિ=

શબ્દાર્થ—દ્રવ્ય સંબન્ધી (તં પુણનામં) વહ નામ (તિવિહં) ત્રીન
પ્રકારકા હૈ (હસ્થી પુરિસં નપુંસગં ચેવ) સ્ત્રીનામ પુરુષનામ ઔર નપુંસક
નામ । (એસિં તિણંપિ અંતમિયપરુવણં વોચ્છં) મેં હન ત્રીનો બી નામો
હી અન્ત મેં આગત આકારાદિ અક્ષરોં દ્વારા પ્રરુપણા કરૂંગા । (તથ)
ત્રીન પ્રકાર કે નામ કે બીચ મેં (પુરિસસ) પુલ્લિજ્ઞ નામ કે (અંતો)
અન્ત મેં (આઈઝ ઓ ચત્તારિ હવંતિ) આ ઈ ડ, ઓ, યે ચાર વર્ણ હોતે હૈં ।
(હસ્થિયાઓ) સ્ત્રીલિજ્ઞ નામ કે અન્ત મેં (ઓકાર પરિહીણા) ઓકાર વર્ણ
સે રહિત યે પૂર્વોક્ત હી વર્ણ (હવંતિ) હોતે હૈં । અર્થાત્ આકારાન્ત,
ઈકારાન્ત ઔર ડકારાન્ત શબ્દ સ્ત્રીલિજ્ઞવાલે હોતે હૈં । તથા (અન્તાઃ)
જિનકે અન્ત મેં (અંતિઅ હંતિય ડંતિય) અં, ઈં, ડં યે વર્ણ હોતે હૈં યે
(નપુંસગસ) શબ્દ નપુંસકલિજ્ઞ, કે (બોદ્ધવ્વા) જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય
યહ હૈ કિ પ્રાકૃત ભાષા મેં અં, ઈં, ડં, અન્તવાલે શબ્દ નપુંસકલિજ્ઞ,

શબ્દાર્થ—દ્રવ્ય વિષયક (તં પુણનામં) તે નામ (તિવિહં) ત્રણ પ્રકારનું
હોય છે. જેમ કે (હસ્થી પુરિસં નપુંસગં ચેવ) (૧) સ્ત્રીનામ, (૨) પુરુષનામ
(૩) નપુંસકનામ (એસિં તિણંપિ અંતમિયપરુવણં વોચ્છં) હવે આ ત્રણે
પ્રકારનાં નામોની તેમના અંત્યાક્ષરો દ્વારા પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે એટલે
કે સ્ત્રીલિંગ, આદિનાં નામોને અન્તે કયા કયા અક્ષરો આવે છે, તે પ્રકટ
કરવામાં આવે છે—(તથ પુરિસસ અંતા આ, ઈ, ડ, ઓ ચત્તારિ હવંતિ) પુરુ-
ષનામો (પુલ્લિજ્ઞનામો, નરજાતિનાં નામો) ને અન્તે આ, ઈ, ડ કે ઓ, આ
ચારમાંનો કોઈ પણ વર્ણ (અક્ષર) હોય છે. (હસ્થિયાઓ ઓકારપરિહીણા)
સ્ત્રીનામો (નારી જાતિનાં નામો) ને અન્તે 'ઓ' સિવાયના પૂર્વોક્ત વર્ણો
એટલે કે આ, ઈ કે ડ (હવંતિ) હોય છે એટલે કે આકારાન્ત, ઈકારાન્ત અને
ડકારાન્ત શબ્દો નારી જાતિનાં (સ્ત્રીલિંગ) હોય છે, તથા (અન્તાઃ) જે શબ્દને
અન્તે (અંતિઅ હંતિય ડંતિય) અં, ઈં કે ડં હોય છે, તે શબ્દોને (નપુંસ-
ગસ) નપુંસક લિંગના (નાન્યેતર જાતિના) (બોદ્ધવ્વા) સમજવા આ કથનનું
તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાકૃત ભાષામાં અં, ઈં અને ડં અન્તવાળા પદોને નપું-

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૮ પ્રકારાન્તરેણ ત્રિનામનિરૂપણમ્

૬૬૯

કથયિષ્યામિ ॥૩॥ અથ પુલ્લિજ્જશ્વદોદાહરણમાહ—‘રાયા’ ઇતિ આકારાન્તઃ શ્વદો બોધ્યઃ । ‘ગિરી’ ‘સિહરી’ ચ શ્વદૌ ઈકારાન્તૌ, । ‘વિઠ્ઠ’ ઇતિ ઝકારાન્તઃ ‘દુમો’ ઇતિ ઓકારાન્તઃ । એતે પુલ્લિજ્જશ્વદાઃ ॥૪॥ અથ સ્ત્રીલિજ્જશ્વદોદાહરણાન્યાહ— ‘માલા’ ઇતિ આકારાન્તઃ શ્વદઃ । ‘સિરીલચ્છી’ શ્વદૌ ઈકારાન્તૌ । ‘જંબૂ બહૂ’ શ્વદૌ ચ ઝકારાન્તૌ । આકારાન્તા ઈકારાન્તા ઝકારાન્તાશ્ચ માલાદયઃ શ્વદાઃ સ્ત્રીલિજ્જા બોધ્યાઃ ॥૫॥ અથ નપુંસકલિજ્જશ્વદોદાહરણાન્યાહ—‘અંકારં તં ધનં’ માને ગયે હૈં । (એતેસિં તિળ્હંપિ ય એતો ગિદંસણે વોચ્છામિ) અથ મૈં યહાં સે આગે ઇન તીનોં કે ઉદાહરણ કહતા હૂં—(આગારંતો રાયા, ઈંગારંતો ગિરી, ય સિહરી ય, ઝગારંતો વિઠ્ઠ દુમો ય અંતો ડ પુરિસાણં) “રાયા” યહ પુલ્લિજ્જકે આકારાન્ત શ્વદ કા ઉદાહરણ હૈં “ગિરી” એવં “સિહરી” યે દો શ્વદ પુલ્લિજ્જ, કે ઈકારાન્ત શ્વદ કે ઉદાહરણ હૈં । “વિઠ્ઠ” યહ પુલ્લિજ્જ કે ઓકારાન્ત શ્વદ કા ઉદાહરણ હૈં । ઓર “દુમો” યહ પુલ્લિજ્જકે ઝકારાન્ત શ્વદ કા ઉદાહરણ હૈં । (ઇત્થીણ) સ્ત્રીલિજ્જ શ્વદ કે ઉદાહરણ યે હૈં—(આગારંતા માલા) આકારાન્ત “માલા” શ્વદ (ઈંગારંતા) ઈકારાન્ત (સિરી ય લચ્છી ય) “સિરી” ઓર “લચ્છી” યે દો શ્વદ (ઝગારંતા જંબૂ બહૂય) ઓકારાન્ત “જંબૂ” ઓર “બહૂ” યે દો શ્વદ । હસ પ્રકાર આકારાન્ત, ઈકારાન્ત ઓર ઝકારાન્ત માલાદિકશ્વદ સ્ત્રીલિજ્જ જાનના ચાહિયે । અથ સૂત્રકાર નપુંસકલિજ્જ શ્વદોં કે ઉદાહરણ

સકલિંગના નામે ગણુવામાં આવે છે. (એતેસિં તિળ્હંપિ ય એતો ગિદંસણે વોચ્છામિ) હવે આ ત્રણે લિંગના પદોના ઉદાહરણે આપનામાં આવે છે— (આગારંતો રાયા, ઈંગારંતો ગિરી, ય સિહરી ય, ઝગારંતો વિઠ્ઠ, ઓગારંતો દુમો, અંતો ડ પુરિસાણં) પુલ્લિજ્જના આકારાન્ત પદનું ઉદાહરણ “રાયા” (રાબ્), છે. “ગિરી” (ગિરિ) અને “સિહરી” (શિખરી) આ બે પદો ઇકારાન્ત નરબતિનાં પદો છે. “વિઠ્ઠ (વિઠ્ઠુ)” આ પદ ઝકારાન્ત નરબતિનું પદ છે. “દુમો (વૃક્ષ, દુમ)” આ પ્રાકૃત પદ ઓકારાન્ત નરબતિનું પદ છે. (ઇત્થીણ) સ્ત્રીલિંગ (નારીબતિનાં) પદોના નીચે પ્રમાણે ઉદાહરણ છે—(આગારંતા માલા) “માલા” આ પદ આકારાન્ત નારીબતિનું છે, (ઈંગારંતા સિરી ય લચ્છી ય “સિરી” અને “લચ્છી” આ બે પ્રાકૃત પદો ઇકારાન્ત—નારી બતિનાં પદો છે, (ઝગારંતા જંબૂ, બહૂય) “જંબૂ” અને “બહૂ” આ બે પદો ઝકારાન્ત નારીબતિનાં પદો છે. આ પ્રકારે આકારાન્ત, ઇકારાન્ત અને ઝકારાન્ત માલા આદિ પદોને સ્ત્રીલિંગ સમજવા બેઠાએ હવે સૂત્રકાર નપુંસક

અંકારાન્તઃ શબ્દઃ ‘ધન્નં’ इति विज्ञेयः । ‘अत्थि’ इति शब्द इंकारान्तो बोध्यः । ‘पीलुं महुं’ चेति शब्द द्वयं उंकारान्तं बोध्यम् । एते अंकारान्तादयः शब्दा नपुंसकलिङ्गा बोध्याः । लिङ्गत्रये य एते शब्दा उक्तास्ते सविभक्तिज्ञाः प्राकृतशब्दा विज्ञेयाः प्रकृतमुपसंहरन्नाह—तदेतत् त्रिनामेति ॥सू० १४८॥

કહતે હૈં—(અંકારાન્ત ધન્નં) અંકારાન્ત શબ્દ “ધન્નં” હૈં । (ઈંકારાન્ત નપુંસગં અર્થિ) ઇંકારાન્ત શબ્દ “અર્થિ” હૈ (ઉંકારાન્ત પિલું મહું ચ) ઓર ઉંકારાન્ત “પીલું” “મહું” હૈં યે અંકારાન્તાદિ શબ્દ (અન્તા) કિ જિનકે અન્ત મેં “અં” “ઈં” “ઉં” યે વર્ણ હૈં વે (નપુંસગાણં) નપુંસકલિંગ હૈં । તીનોં લિંગોં મેં જો યે ઉદાહરણ કહે ગયે હૈં વે વિભક્તિયુક્ત પ્રાકૃત શબ્દ હૈં । (સે તં તિણમે) ઇસ પ્રકાર યહ ત્રિનામ હૈ ।

ભાવાર્થ—પ્રાકૃત ભાષા મેં ત્રીન લિંગ હૈં । ડનમેં જિન શબ્દોં કે અન્ત મેં “આ ઈં ડ ઓ” યે ચાર વર્ણ હોં વે પુલિલિંગ હૈં—જૈસે “રાયા” યહ શબ્દ “સંસ્કૃત મેં “રાયા” કી છાયા “રાજન્” હૈ । ઓર યહ વહાં હલન્તપુલિલિંગ મેં નકારાન્ત શબ્દ હૈ । “ગિરી ઓર સિહરી” યે દો શબ્દ ઇકારાન્તપુલિલિંગ કે ઉદાહરણ હૈં । સંસ્કૃત મેં ઇન કી છાયા “ગિરિ”

લિંગના (નાન્યતર જાતિનાં) પદોના ઉદાહરણો આપે છે—(અંકારાન્ત ધન્નં) “ધન્નં” આ પ્રાકૃત પદ અંકારાન્ત નપુંસક લિંગનું પદ છે. (ઈંકારાન્ત નપુંસગં અર્થિ) “અર્થિ” આ પ્રાકૃત પદ ઇકારાન્ત નપુંસક લિંગનું પદ છે. (ઉંકારાન્ત પીલું મહું ચ) “પીલું” અને “મહું” આ પદો ઉંકારાન્ત નપુંસક લિંગના પદો છે. જે શબ્દોને અન્તે “અં, ઈં, કે ઉં” છે તે પદો (નપુંસગાણં) નપુંસકલિંગના હોય છે, આ વાત તો પહેલાં પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે. ત્રણે લિંગોનાં (જાતિનાં) આ જે પદોના ઉદાહરણો આપવામાં આવ્યા છે, તે વિલક્ષિતયુક્ત પ્રાકૃત શબ્દો છે. (સે તં તિણમે) આ પ્રકારનું ત્રિનામનું સ્વરૂપ સમજવું.

ભાવાર્થ—પ્રાકૃત ભાષામાં ઉપર્યુક્ત ત્રણ લિંગ હોય છે. જે શબ્દોને અન્તે “ આ, ઈં, ડ કે ઓ ” આ ચાર વર્ણમાંનો કોઈ પણ વર્ણ હોય છે તે પદો પુલિલિંગ હોય છે જેમ કે આકારાન્ત “ રાયા ” પદ આ શબ્દની સંસ્કૃત છાયા “ રાજન્, ” થાય છે તેને ગુજરાતીમાં “ રાજ ” કહે છે. આ શબ્દ આકારાન્ત પુલિલિંગનું ઉદાહરણ છે. “ ગિરી ” અને “ સિહરી ” આ બે પદો ઇકારાન્ત પુલિલિંગના ઉદાહરણો રૂપે અહીં વપરાયાં છે. “ ગિરી ” આ પ્રાકૃત પદની સંસ્કૃત છાયા “ ગિરી ” થાય છે, “ સિહરી ” આ પદની

और “शिखरी” ऐसी होती है—गिरि शब्द वहाँ अजन्त पुल्लिङ्ग और शिखरिन् शब्द हलन्तपुल्लिङ्ग है। “विण्” यह शब्द उकारान्त पुल्लिङ्ग का है। इसकी संस्कृत छाया “विष्णु” ऐसी है। विष्णु शब्द यहाँ अजन्त पुल्लिङ्ग है। “द्रुमो” यह शब्द ओकारान्त पुल्लिङ्ग का है। इसकी छाया “द्रुमः” ऐसी है। यह शब्द वहाँ अकारान्त पुल्लिङ्ग है। स्त्रीलिङ्ग में प्राकृत आकारान्त माला शब्द है। संस्कृत छाया इसकी माला ही है। संस्कृत में भी यह शब्द अजन्त स्त्रीलिङ्ग ही है। प्राकृत भाषा में ओकारान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग नहीं माना जाता है। जैसे देवो आदि शब्द। ओकारान्त शब्द सब ही पुल्लिङ्ग है। लच्छी सिरी—कि जिनकी संस्कृत छाया लक्ष्मीः और श्री ऐसी होती है दोनों शब्द ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग हैं। उकारान्त जंबू बहू शब्द प्राकृत में स्त्रीलिङ्ग हैं। संस्कृत में भी ये दोनों स्त्रीलिङ्ग में हैं। प्राकृत भाषा में नपुंसकलिङ्ग की निशानी अं इं उं है। जिनके अन्त में ये अं इं उं होते हैं वे नपुंसकलिङ्ग माने जाते हैं। जैसे अस्थि=अस्थि, महुं=मधु पीलुं=पीलु। इस प्रकार

સંસ્કૃત છાયા “શિખરી” થાય છે, ગુજરાતીમાં તેને અર્થ પર્વત થાય છે “વિણ્” આ પદ ઉકારાન્ત પુલ્લિંગના ઉદાહરણ રૂપ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા “વિષ્ણુ” થાય છે. “દ્રુમો” આ પદ ઓકારાન્ત પુલ્લિંગના ઉદાહરણ રૂપ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા “દ્રુમઃ” થાય છે તેને ગુજરાતીમાં “વૃક્ષ” કહે છે સંસ્કૃતમાં ‘દ્રુમ’ પદ અકારાન્તપુલ્લિંગ છે. આકારાન્ત સ્ત્રીલિંગ પદતું ઉદાહરણ “માલા” પદ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા પણ ‘માલા’ જ થાય છે સંસ્કૃતમાં પણ આ શબ્દ આકારાન્ત સ્ત્રીલિંગ જ છે પ્રાકૃતમાં ઓકારાન્ત શબ્દને સ્ત્રીલિંગવાળો ગણવામાં આવતો નથી જેમ કે “દેવો” બધાં ઓકારાન્ત પદો પુલ્લિંગ જ હોય છે “સિરી અને લચ્છી” આ બંને પદો ઉકારાન્ત સ્ત્રીલિંગનાં ઉદાહરણો છે તેમની સંસ્કૃત છાયા અનુક્રમે “શ્રી” અને “લક્ષ્મી” છે. સંસ્કૃતમાં પણ આ બંને પદો સ્ત્રીલિંગનાં જ પદો છે. ઉકારાન્ત “જંબૂ” અને “બહૂ” આ બંને પ્રાકૃતમાં સ્ત્રીલિંગના શબ્દો છે સંસ્કૃત ભાષામાં પણ આ બંને શબ્દો સ્ત્રીલિંગ જ છે. જે શબ્દોના અન્યાસરે “અં” “ઈ” “ઉં” હોય છે, તે શબ્દો નપુંસકલિંગના હોય છે જેમ કે “અસ્થિ” આ પદ ઈકારાન્ત, “મહું” પદ ઉંકારાન્ત અને “પીલું” આ પદ ઉંકારાન્ત અને ‘ધજ્જં’ આ પદ અંકારાન્ત નપુંસકલિંગના પદો છે સંસ્કૃતમાં તેમના અર્થના વાચક અનુક્રમે “મધુ”, ‘પીલુ’

અથ ચતુર્નામ નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં ચડનામે? ચડનામે ચડ઼વિહે પળ્લત્તે, તં જહા—આગમેળં લોવેળં પયર્ઘ્ણ વિગારેળં। સે કિં તં આગમેળં? આગમેળં વંકં, વયંસે, અઙ્મુત્તણ્ણ। સે તં આગમેળં। સે કિં તં લોવેળં? લોવેળં તે ઇત્થ=તેઽત્થ, પહો ઇત્થ=પહોઽત્થ, ઘહો ઇત્થ=ઘહોઽત્થ। સે તં લોવેળં। સે કિં તં પર્ગર્ઘ્ણ? પર્ગર્ઘ્ણ—હોઙ્ગ ઇહ ગહ્ણે આવહંતી, આલિક્ખામો ઇર્ણિહ, અહો અચ્છરિયં। સે તં પર્ગર્ઘ્ણ। સે કિં તં વિગારેળં? વિગારેળં—દંડસ્સ અર્ગ્ગં=દંડર્ગ્ગં, સા આગયા=સાઽઽગયા, દહિ ઇર્ણં=દહીર્ણં, નર્ઘ્ણિહ=નર્ઘ્ણિહ, મહુ ઉદર્ગં=મહુદર્ગં વહુ ઉહો=વહુહો। સે તં વિગારેળં। સે તં ચડનામે ॥સૂ૦ ૧૪૯॥

છાયા—અથ કિં તચ્ચતુર્નામ? ચતુર્નામ ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞતમ્, તથા—આગમેન, લોપેન, પ્રકૃત્યા, વિકારેળં। અથ કિં તદાગમેન? આગમેન—વક્રમ્, વયસ્યઃ, અતિમુક્તકઃ। તદેતદાગમેન। અથ કિં તદ્ લોપેન? લોપેન—તે અત્ર=તેઽત્ર, પટો અત્ર=પટોઽત્ર, ઘટો અત્ર=ઘટોઽત્ર। તદેતદ્ લોપેન। અથ કિં તત્ પ્રકૃત્યા? પ્રકૃત્યા—ભવતિ—ઈહ, ગર્ત્તે આપતન્તી અલેક્ષ્યામ ઇદાનીમ્, અહો આશ્ચર્યમ્ તદેતત્ પ્રકૃત્યા। અથ કિં તદ્ વિકારેળં વિકારેળં દંડસ્ય અર્ગ્ગમ્=દંડાર્ગ્ગમ્, સા આગતા=સાઽઽગતા, દધિ ઇદમ્=દધીદમ્, નદી ઇહ=નદીહ, મધુ ઉદકમ્=મધુદકમ્, વધુ ઉહા=વધુહઃ। તદેતદ્ વિકારેળં। તદેતત્ચતુર્નામ ॥મૂ૦ ૧૪૯॥

સ્ત્રીલિંગ, પુલિંગ્ગ ઓર નપુંસકલિંગ્ગ સંબન્ધી શબ્દોં સે નિષ્પન્ન સ્ત્રીનામ-પુલ્લિંગ્ગ નામ ઓર નપુંસક નામ હૈં। ઇસ પ્રકાર લિંગ્ગાનુસાર યહ ત્રિનામ સ્વરૂપ હૈ ॥સૂ૦ ૧૪૮॥

અને “વન” છે આ પ્રકારનાં સ્ત્રીલિંગ, પુલિંગ્ગ અને નપુંસકલિંગના શબ્દોમાંથી બનતાં નામોને અનુક્રમે સ્ત્રીનામ, પુલિંગ્ગનામ અને નપુંસકનામ કહે છે. લિંગ (બાતિ) અનુસાર ત્રિનામનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ સમજવું. ॥સૂ૦ ૧૪૮॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૯ ચતુર્નામનિરૂપણમ્

૬૭

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં ચતુર્નામ ? ઇતિ ઉત્તરયતિ—ચતુર્નામ—ચતુષ્પ્રકાર નામ—ચતુર્નામ, તદ્દિ ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞતમ્ । ચતુર્વિધત્વમેવાહ—આગમેન, લોપેન, પ્રકૃત્ય વિકારેણ ચેતિ । આગમેનેત્યાદિષુ સર્વં ‘નિષ્પન્ન’—મિત્યધ્યાહાર્યમ્ । તત્ર—આગમેન નિષ્પન્નમ્—‘વંકં, વયંસે, અહમુંતણ’ વંકં, વયસ્યઃ, અતિમુક્તકઃ, અત્ર પ્રાકુ આગમરૂપોડનુસારઃ, “વક્રાદાવન્તઃ” (૮૧।૨૬) તથા લોપેન નિષ્પન્નં નામ—

અથ સૂત્રકાર ચાર પ્રકાર કે નામ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં ચઙગામે” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ચઙગામે) હે ભદન્ત ! વહ ચતુર્નામ કયા હૈ ।

ઉત્તર—(ચઙગામે ચઙગિવહે પળત્તે) ચતુર્નામ—ચાર પ્રકાર થ પ્રજ્ઞપ્ત હુઆ હૈ । (તં જહા) જૈસે (આગમેણ, લોવેણં પયઈણ, વિગારેણં) એક આગમ નિષ્પન્ન નામ, દૂસરા લોપનિષ્પન્ન નામ તૈસરા પ્રકૃતિ નિષ્પન્ન નામ ઓર ચૌથા વિકાર નિષ્પન્ન નામ । (સે કિં તં આગમેણ હે ભદન્ત ! આગમ નિષ્પન્ન નામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(આગમેણં વંકં વયંસે, અહમુંતણ) આગમનિષ્પન્ન નામ વક્ર વયસ્ય ઓર અતિમુક્તક હૈ । (સે તં આગમેણં) હસ પ્રકાર થે સ આગમ સે નિષ્પન્ન નામ હૈ । (સે કિં તં લોવેણં) હે ભદન્ત ! લોપ નિષ્પ નામ કયા હૈ ?

હવે સૂત્રકાર ચતુર્નામની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં ચઙગામે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ચઙગામે) હે ભગવન્ ! નામના ચોથાભેદ રૂપ ચતુર્નામનુ સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ચઙગામે ચઙગિવહે પળત્તે) ચતુર્નામ ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે—(તંજહા) તે ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(આગમેણ, લોવેણં, પયઈણ, વિગારેણં) (૧) આગમનિષ્પન્ન નામ, (૨) લોપનિષ્પન્ન નામ, (૩) પ્રકૃતિનિષ્પન્ન નામ (૪) વિકારનિષ્પન્ન નામ.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં આગમેણં) હે ભગવન્ ! આગમનિષ્પન્ન નામ કેને કહે છે ?

ઉત્તર—(આગમેણં વંકં, વયંસે, અહમુંતણ) વંકં, વયસ્ય અને અતિમુક્તક, આ પદો આગમનિષ્પન્ન નામો છે. (સે તં આગમેણં) આ પ્રકારનાં આગમનિષ્પન્ન નામો હોય છે

પ્રશ્ન—(સે કિં તં લોવેણં) હે ભગવન્ ! લોપનિષ્પન્ન નામ કેવું હોય છે ?

एत्थ तेत्थ, पडो एत्थ पडोत्थ' ते अत्र=तेऽत्र, पटो अत्र=पटोऽत्र इत्यादि, अत्र प्राकृतप्रयोगे 'एत्थ' इत्यस्य एकारस्य लोपः "त्यदाद्यव्ययात् तत्स्वरस्य लृक्" (८।१।४०)। तथा-प्रकृत्या निष्पन्नं नाम-‘गड्डे-आवडंती, आलेक्खामो-एण्हि, होइ-इह’ गर्त्ते आपतन्ती, आलेक्ष्याम इदानीम्, भवति-इह, इत्यादि। अत्र “एदोतोःस्वरे” (८।१।७) “त्यादेः” (८।१।९) एतत्सूत्रानुसारेण प्राकृते प्रकृतिभावो भवति। तथा-विकारेण निष्पन्नं नाम-‘दंडस्स अग्गं दंडग्गं, सा आगया-

उत्तर—(लोवेणं) लोप निष्पन्न नाम इस प्रकार से हैं—(ते एत्थ=तेऽत्थ, पडो एत्थ=पडोऽत्थ, घडो एत्थ=घडोऽत्थ) ते अत्र=तेऽत्र पटो अत्र=पटोऽत्र घटो अत्र=घटोऽत्र (से तं लोवेणं) इस प्रकार ये लोपसे निष्पन्न नाम हैं। (से किं तं पगईए?) हे भदन्त! प्रकृति भाव से निष्पन्न नाम क्या है? (पगईए) प्रकृति भाव से निष्पन्न नाम इस प्रकार से है (होइ इह, गड्डे आवडंती आलिक्खामो एण्हि अहो अच्छरियं) भवति इह गर्त्ते आपतन्ती, आलेक्ष्याम इदानीम्, अहो आश्चर्यम् (से तं पगईए) इस प्रकार ये प्रयोग प्रकृति भाव से निष्पन्न नाम हैं। (से किं तं विगारेणं) हे भदन्त! विकार से निष्पन्न नाम क्या है?

उत्तर—(विगारेणं) विकार से निष्पन्न नाम इस प्रकार से है—(दंडस्स+अग्गं=दंडग्गं, सा+आगया=साऽगया, दहि+इणं=दहीणं, नई+

ઉત્તર—(લોવેણં) લોપનિષ્પન્ન નામ આ પ્રકારના હોય છે—(તે એત્થ=તેઽત્થ, પડો એત્થ=પડોઽત્થ, ઘડો એત્થ=ઘડોઽત્થ) તેઅત્ર=તેઽત્ર(તેત્ર, તે અને ત્ર વચ્ચે ‘ડ’ આડું જે નિશાન છે તેને અવગ્રહચિહ્ન કહે છે. આ પ્રકારનું નિશાન પછીના પદના ‘જ’ નો લોપ થયો છે એમ સૂચવે છે) પટોઅત્ર=પટોઽત્ર, અને ઘટોઅત્ર=ઘટોઽત્ર (આ પદોમાં અત્રના અ નો લોપ થવાથી અવગ્રહચિહ્ન મૂકવામાં આવ્યાં છે. (સે તં લોવેણં) આ પ્રકારે લોપથી નિષ્પન્ન જે નામો હોય છે તેમને લોપનિષ્પન્ન નામો કહે છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પગઈએ?) હે ભગવન્! પ્રકૃતિભાવથી નિષ્પન્ન નામ કેવું હોય છે?

ઉત્તર—(પગઈએ) પ્રકૃતિભાવથી નિષ્પન્ન નામ આ પ્રકારનું હોય છે—(હોइ इह, गड्डे आवडंती, आलिक्खामो एण्हि, अहो अच्छरियं) ભવતિ ઇહ, ગર્ત્તે આપતન્તી, આલેક્ષ્યામ ઇદાનીમ્, અહો આશ્ચર્યમ્ (સે તં પગઈએ), આ પ્રકારના આ પ્રયોગો પ્રકૃતિભાવનિષ્પન્ન નામના ઉદાહરણો પૂરાં પાડે છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં વિગારેણં) હે ભગવન્! વિકારનિષ્પન્ન નામ કેવું હોય છે?

ઉત્તર—(વિગારેણં) વિકારનિષ્પન્ન નામ આ પ્રકારનું હોય છે—(દંડસ્સx

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૪૯ ચતુર્નામનિરૂપણમ્

૬૭૬

સાગયા'દળ્ડસ્ય-અગ્ર દળ્ડાગ્રમ્, સા-આગતા સાડગતા'ઇત્યાદિ बोध्यम् । વિકારો હિ વર્ણસ્ય સ્થાને વર્ણાન્તરાપાદનરૂપઃ । નામત્વંચાત્ર તેન તેન રૂપેણ નમનાત્ પરિણમનાદ્ बोध्यम् । લોકે હિ યાન્તઃ શબ્દાસ્તે આગમાદ્યન્યતમનિષ્પન્ના સ્વ સન્તિ । યે ચ હિત્ય હવિત્યાદયઃ કૈશ્ચિદ્વ્યુત્પન્નત્વેનાભિમતાસ્તેऽપિ શાકટાયનમસૈ વ્યુત્પન્ના એવ । ઉક્તંચ—

“નામ ચ ધાતુનમાહ નિરુક્તે, વ્યાકરણે શકટસ્યચ સ્તોકમ્ (અપત્યમ્) ।

યન્ન પદાર્થવિશેષસમુત્થં, પ્રત્યયતઃ પ્રકૃતેશ્ચ તદૂહમ્ ” ॥૩૮૧॥

ઇત્યં ચ સર્વેષાં શબ્દાનામાગમાદિમિશ્રભુર્મિઃ સંગ્રહાદિદમાગમાદિકં ચતુર્નામેત્યુચ્યતે । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-તદેતચ્ચતુર્નામેતિ ॥સૂ૦ ૧૪૯॥

इह=नईह महु+उदगं+महूदगं, बहू+ऊहो=बहूहो । दण्ड+अग्र=दण्डाग्र सा+आगता=सागता दधि+इदं=इधीदं नदी+इह=नदीह, मधु+उदक=मधूदक, वधू+ऊह वधूहः (से तं विगारेणं) इस प्रकार के ये शब्द विकार निष्पन्न नाम हैं । (से तं चउणामे) ये पूर्वोक्त चतुर्नाम हैं ।

આવાર્થ—આગમ નિષ્પન્ન, લોપ નિષ્પન્ન, પ્રકૃતિ નિષ્પન્ન ઓર વિકાર નિષ્પન્ન હસ પ્રકાર સે ચતુર્નામ ચાર પ્રકાર કે હોતે હૈં । આગમ રૂપ અનુસ્વાર સે જો શબ્દ નિષ્પન્ન હોતે હૈં વે આગમ નિષ્પન્ન ચતુર્નામ હૈ+જૈસે પ્રાકૃત ભાષા મેં વંકં, વયંસે, અઈ મુંતણ યે શબ્દ હૈં । “વક્રાદાવન્તઃ” હસ સૂત્ર સે પ્રાકૃત ભાષા મેં વક્રાદિ શબ્દો મેં આગમરૂપ અનુસ્વાર હોતા હૈ । “વંકં” શબ્દકી સંસ્કૃત છાયા “વક્રમ્” હૈ । વયંસે “શબ્દ કી

अगं=इदगं, सा+आगता=साडगता, दहि+इदं=दहीदं, नई×इह=नईह, महु×उदगं=महूदगं, बहू×ऊहो=बहूहो) ढंउ+अग्र=ढंउाग्र, सा+आगता=सागता, दधि×इदं=इधीदं, नदी×इह=नदीह, मधु+उदक=मधूदक, वधू×ऊह=वधूहः (से तं विगारेणं) आ अधां शब्दो विकारनिष्पन्न नामो छे. (से तं चउणामे) आ अधां नामो पूर्वोक्त चतुर्नाम ३५ गण्ठाय छे.

આવાર્થ—ચતુર્નામના ચાર પ્રકાર છે—આગમનિષ્પન્ન, લોપનિષ્પન્ન, પ્રકૃતિનિષ્પન્ન, અને વિકારનિષ્પન્ન આગમ ૩૫ અનુસ્વાર વડે જે જે શબ્દો અને તેમને આગમનિષ્પન્ન ચતુર્નામ ૩૫ સમજવા જેમ કે પ્રાકૃત ભાષાના “વંકં, વયંસે અને અઈમુંતણ” આ શબ્દો આગમનિષ્પન્ન ચતુર્નામો છે. “વક્રાદાવન્તઃ” આ સૂત્ર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે પ્રાકૃત ભાષામાં વક્રાદિ શબ્દોમાં આગમ ૩૫ અનુસ્વાર હોય છે. “વંકં” આ પ્રાકૃત શબ્દની સંસ્કૃત છાયા “વક્રમ્” છે. “વયંસે” આ પ્રાકૃત પદની સંસ્કૃત છાયા

સંસ્કૃત છાયા” વચસ્ય:” હૈ । “અહમુત્તૃ” કી જગહ પર અહમુત્તૃ ખી રૂપ હોતે હૈ । પરન્તુ વંકં આદિ જો યે નામ-પ્રતિપાદિક સંજ્ઞક શબ્દ હૈ વે આગમ નિષ્પન્ન નામ હૈ અર્થાન્ અનુસ્વાર કે આગમ સે બને હુએ નામ હૈ । તે+૯૨થ, પઢો+૯૨થ, ઇન પ્રાકૃત પ્રયોગો મેં “૯૨થ” શબ્દ કે ઇકાર કા લોપ “ત્યદાશ્વવ્યયાત્ તત્સ્વરસ્ય લુક્” ઇસ સૂત્ર સે હોના હૈ । ઇસલિયે “તે૨થ પઢો૨થ” યે લોપ નિષ્પન્ન નામ હૈ । “ગઙ્ગે આવહંતી, આલેક્ષ્મો એહિં હોઈ ઇહ” ઇન પ્રકૃતિભાવ નિષ્પન્ન નામોં મેં “એદેતોઃ સ્વરે ત્યાદેઃ ઇન સૂત્રોં કે અનુસાર પ્રાકૃત ભાષા મેં પ્રકૃતિભાવ હોતા હૈ । જો પ્રયોગ જૈસે હૈં ડનકા વૈસા હી રૂપ રહના ઇસકા નામ પ્રકૃતિ ભાવ હૈ । પ્રકૃતિ ભાવ મેં મૂલ રૂપ મેં કોઈ વિકાર નહીં હોતા હૈ । ગત્તે+આપતન્તી યહાં પર સંસ્કૃત વ્યાકરણ કે અનુસાર ૯ કે સ્થાન મેં અવ્ હોના ચાહિયે, આલેક્ષ્યામ+હદાનીમ્ યહાં પર “આદ્ગુણ” સે ૯ ગુણ હોના ચાહિયે, ભવતિ+ઈહ યહાં પર અકઃ સર્વળેં દીર્ઘઃ” સે દીર્ઘ હોના ચાહિયે-પરન્તુ પ્રકૃતિ ભાવ હોને પર ઇન નામોં મેં કોઈ ખી સંધિરૂપ વિકાર નહીં હુઆ હૈ ।

“વચસ્યઃ” છે. “અહમુત્તૃ” આ પ્રાકૃત પદની સંસ્કૃત છાયા “અતિમુક્તકઃ” છે. “વંકં” આ પદની જગ્યાએ “વલ્કં,” “વચસે” આ પદની જગ્યાએ “વચસે” અને “અહમુત્તૃ” આ પદની જગ્યાએ “અહમુત્તૃ” આ રૂપોનો પણ પ્રયોગ થાય છે. પરન્તુ વંકં આદિ ઉપર્યુક્ત નામો-પ્રતિપાદન કરનારા ઉદાહરણ રૂપ શબ્દો-આગમનિષ્પન્ન નામો છે, કારણ કે આ નામો અનુસ્વારના આગમથી બનેલાં છે. “ત્યદાશ્વવ્યયાત્ તત્સ્વરસ્ય લુક્” આ સૂત્રમાં બતાવેલા નિયમ અનુસાર “તે+૯૨થ” અને “પઢો+૯૨થ” આ પ્રાકૃત પદોમાં “૯૨થ” પદના “૯” નો લોપ થવાથી “તે૨થ” અને “પઢો૨થ”, આ લોપનિષ્પન્ન નામો બન્યાં છે. “એદેતોઃ સ્વરે ત્યાદેઃ” આ સૂત્રમાં બતાવેલા નિયમ પ્રમાણે “ગઙ્ગે આવહંતી” અને “આલેક્ષ્મો એહિં, હોઈ ઇહ” આ પ્રકૃતિભાવ નિષ્પન્ન નામોમાં પ્રકૃતિભાવનો સદ્ભાવ રહે છે પ્રકૃતિભાવમાં મૂળરૂપમાં કોઈ પણ પ્રકારનો વિકાર થતો નથી પરન્તુ જે પ્રયોગ જેવા સ્વરૂપે હોય એવાં જ સ્વરૂપે રહે છે. “ગત્તે+આપતન્તી” આ બે પદોની સંધિ થતાં સંસ્કૃત વ્યાકરણના નિયમ પ્રમાણે “૯” નો ‘અવ્’ થવો જોઈએ, અને “આલેક્ષ્યામ+હદાનીમ્” આ પદોની સંધિ કરતાં અ+હ=૯ આ નિયમ અનુસાર “આલેક્ષ્યામેદાનીમ્” થવું જોઈએ, “ભવતિ+ઈહ” આ પદોમાં ઇ+હ=ઈ થવાથી ‘ભવતીહ’ થવું જોઈએ; પરન્તુ આ પદો પ્રકૃતિભાવ નિષ્પન્ન નામો હોવાથી, તે નામોમાં કોઈ પણ પ્રકારનો સંધિ રૂપ વિકાર થયો નથી.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૦ પચ્ચનામનિરૂપણમ્

૬૭૭

અથ પચ્ચનામ નિરૂપયિતુમાહ—

પૂઠ્ઠમ્—સે કિં તં પંચનામે? પંચનામે—પંચવિહે પળળત્તે, તં જહા—નામિયં ણેવાહ્યં અવ્ઘાહ્યં ઓવસગિયં મિસ્સં। આસે

દળ્લ+અગ્ગં દળ્લ+અગ્ગમ્ સા આગયા, દહિ+હ્ણં, નર્હ+ર્હ્ મહુ+ડદર્ગ, વહુ+ઝહો, इन विकार निष्पन्न नामों में सर्वत्र दीर्घरूप विकार हुआ है। वर्ण के स्थान में दूसरे वर्ण का होना इसका नाम विकार है तथा उस उस रूप से परिणमन होना इसका नाम नाम है। विकार होने पर इनका “दंडमं साऽऽगया, दहीणं, नर्ह महुदगं, वहुहो” ऐसा रूप हो जाता है। लोक में जितने भी शब्द हैं वे आगम आदि किसी एक से निष्पन्न हुए ही होते हैं। तथा “डित्थ डवित्थ आदि जो शब्द अव्युत्पन्न किन्हीं के द्वारा माने हुए हैं वे भी शाकटायन के मत में व्युत्पन्न ही माने गये हैं। उक्तंच—नाम च धातुजमाह निरुक्ते व्याकरणे शकटस्य च तोकम्। यन्न पदार्थविशेषसमुत्थं, प्रत्ययतः प्रकृतेश्च तदूहम्” इस प्रकार समस्त शब्दों का इन आगमादि चारों से संग्रह हो जाता है इसलिये आगमादिक चतुर्नाम कहे जाते हैं ॥सू० १४९॥

“दंड+अगं सा+आगया दहि+ह्णं, नर्ह+र्ह, महु+उदगं, अने वहु+ऊहो” આ બધાં પદોમાં સન્ધિ રૂપ વિકાર થઈને “દંડાગમ્, સાગયા, દહીણં, નર્હ, મહુદગં, વહુહો” ઇત્યાદિ વિકારનિષ્પન્ન નામો બન્યાં છે. કોઈ એક વર્ણને સ્થાને બીજા વર્ણનો પ્રયોગ થયો તેનું નામ વિકાર છે. જે નામોમાં આ પ્રકારનું પરિણમન થયું હોય છે, તે નામોને વિકારનિષ્પન્ન નામો કહે છે. “દંડ+અગ્ગ” આદિ ઉપર્યુક્ત પદોમાં સન્ધિને કારણે વિકાર થઈ જવાથી “દળ્લ+અગ્ગ, સાઽઽગયા, દહીણં, નર્હ, મહુદગં વહુહો” આ પ્રકારનાં રૂપો બની ગયાં છે. લોકમાં જેટલાં શબ્દો છે, તેઓ આગમ આદિ પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકારોમાંના કોઈ એક પ્રકારે નિષ્પન્ન થયેલાં હોય છે. તથા “ડિત્થ ડવિત્થ” આદિ જે શબ્દોને કોઈ કોઈ લોકો દ્વારા અવ્યુત્પન્ન માનવામાં આવે છે, પરંતુ શાકટાયનના મત અનુસાર તેમને પણ વ્યુત્પન્ન જ માનવામાં આવેલ છે. કહ્યું પણ છે કે—“નામ ચ ધાતુજમાહ નિરુક્તે વ્યાકરણે શકટસ્ય ચ તોકમ્ ચન્ન પદાર્થવિશેષસમુત્થં, પ્રત્યયતઃ પ્રકૃતેશ્ચ તદૂહમ્” આ પ્રકારે સમસ્ત પદોનો આ આગમ આદિ ચારેમાં સમાવેશ થઈ જાય છે. તેથી આગમાદિ રૂપ ચતુર્નામ રૂપે અહીં તેમને પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. ॥સૂ० ૧૪૯॥

૬૭૮

અનુચોગદ્વારસૂત્રે

તિ નામિયં, યલુ તિ નેવાહયં, ધાવહિતિ અઘ્વાહયં, પરિતિ
ઓવસગિયં, સંજણ તિ મિસ્સં । સે તં પંચનામ ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

છાયા—અથ કિં તત્ પંચનામ? પંચનામ પંચવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથા-
નામિકં, નૈપાતિકમ્, આહ્યાતિકમ્, ઔપસર્ગિકં, મિશ્રમ્ । અશ્વ ઇતિ નામિકમ્ ।
'યલુ' ઇતિ નૈપાતિકમ્ । 'ધાવતિ' ઇતિ આહ્યાતિકમ્ । 'પરિ' ઇતિ ઔપસર્ગિકમ્ ।
સંયત ઇતિ મિશ્રમ્ । તદેતત્ પંચનામ ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

ટીકા—'સે કિં તં' ઇત્યાદિ—

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં તત્ પંચનામ? ઇતિ । ઉત્તરયતિ—પંચનામ—પંચ-
પ્રકારકં નામ—પંચનામ, તદ્દિ પંચવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । પંચવિધસ્વમેવાહ—નામિકમિ-
ત્યાદિ । તત્ર—અશ્વ ઇતિ નામિકમ્—વસ્તુવાચકત્વાત્ । 'યલુ' ઇતિ નૈપાતિકમ્—
નિપાતેષુ પઠિતત્વાત્ । ધાવતીતિ આહ્યાતિકં ક્રિયાપ્રધાનત્વાત્ । 'પરિ' ઇતિ

અથ સૂત્રકાર પંચનામ કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં પંચનામે” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પંચનામે?) હે ભદ્રન્ ! પંચનામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(પંચનામે પંચવિદે પળ્લત્તે) પંચ નામ પાંચ પ્રકાર કા પ્રજ્ઞસ
હુઆ હૈ । (તં જહા) ડસ કે પાંચ પ્રકાર યે હૈં—(નામિયં, ણેવાહયં, અઘ્વા-
હયં, ઓવસગિયં મિસ્સં) નામિક નૈપાતિક, આહ્યાતિક, ઔપસર્ગિક,
ઔર મિશ્ર । વસ્તુ કા વાચક હોને સે (આસેતિ નામિયં)—અશ્વ યહ
શબ્દ નામિક હૈ । (યલુતિ નેવાહયં) યલુ શબ્દ નિપાતોં મેં પઠિત હોને
કે કારણ નૈપાતિક હૈ । ક્રિયાપ્રધાન હોને સે (ધાવહિતિ અઘ્વાહયં)
ધાવતિ” યહ નિજ્ઞન્ત પદ આહ્યાતિક હૈ । (પરિતિ ઓવસગિયં) પરિ

હવે સૂત્રકાર પંચનામનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં પંચનામે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પંચનામે?) હે ભગવન્ ! પંચનામ કોને કહે છે ?

ઉત્તર—(પંચનામે પંચવિદે પળ્લત્તે) પંચનામ પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે.
(તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નામિયં, ણેવાહયં, ઓવસગિયં, મિસ્સં)
(૧) નામિક, (૨) નૈપાતિક, (૩) આહ્યાતિક, (૪) ઔપસર્ગિક અને (૫) મિશ્ર.

વસ્તુનું વાચક હોવાને કારણે (આસેતિ નામિયં) “અશ્વ” પદ નામિ-
કના ઉદાહરણ રૂપ સમજવું (યલુતિ નેવાહયં) “યલુ” પદ નિપાતોમાં
વપરાતું હોવાને કારણે નૈપાતિકના ઉદાહરણ રૂપ સમજવું (ધાવહિતિ અઘ્વા-
હયં) “ધાવતિ” આ પદ ક્રિયાપ્રધાન હોવાને કારણે આહ્યાતિકના ઉદાહરણ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૧ ષણ્ણામનિરૂપણમ્

૧૭૯

ઔપસર્ગિકમ્ ઉપસર્ગેષુ પઠિતસ્વાત્ । ‘સંયતઃ’ ઇતિ મિશ્રમ્-ઉપસર્ગનામોભવનિષ્ણ-
સ્વાત્ । एतैर्नामिकादिभिः पञ्चभिः सकलशब्दसंग्रहणात् पञ्चनामत्वं बोध्यम् ।
प्रकृतमुपसंहरन्नाह-तदेतत् पञ्चनामेति ॥सू० १५०॥

અથ ષણ્ણામં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં છળ્ણામે? છળ્ણામે છવિહે પળ્ણત્તે,
તં જહા-ઉદ્દિણ, ઉવસમિણ સ્વદ્દિણ સ્વઓવસમિણ પારિણામિણ
સંનિવાદ્દિણ ॥સૂ૦ ૧૫૧॥

છાયા—અથ કિં તત્ પળ્ણામ? પળ્ણામ ષડ્વિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા-ઔદયિકઃ,
ઔપશમિકઃ, ક્ષાયિકઃ, ક્ષાયોપશમિકઃ, પારિણામિકઃ, સાન્નિપાતિકઃ ॥સૂ૦ ૧૫૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્ પળ્ણામ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-પળ્ણામ ષટ્-
પ્રકારકં નામ-પળ્ણામ, તદ્દિ-ઔદયિકાદિભેદેન ષડ્વિધં વિજ્ઞેયમ્ । નન્વત્ર પ્રકૃતં
પહ્ ઉપસર્ગ, ઉપસર્ગો મેં પઠિત હોને સે ઔપસર્ગિક હૈ । (સંજણ સ્તિ
મિસ્સં) સંયત યહ સુચન્ત પદ ઉપસર્ગ ઓર નામ इन दोनों से निष्पन्न
होने के कारण मिश्र है । इन नामिक आदि पांचों से समस्त शब्दों का
संग्रह हो जाता है इसलिये ये पांच नाम कहे जाते हैं । (से तं पंचनाम)
इस प्रकार यह पंचनाम का स्वरूप है ॥सू० ૧૫૦॥

અથ સૂત્રકાર છહનામ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—‘સે કિં તં છળ્ણામે’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં છળ્ણામે?) હે મદન્ત! છહ નામ કયા હૈ?

ઉત્તર—(છળ્ણામે છવિહે પળ્ણત્તે) છહ નામ છહ પ્રકાર કા પ્રજ્ઞસ

૩૫ છે. (પરિત્તિ ઓવસગિયં) “પરિ” આ ઉપસર્ગ છે. ઉપસર્ગ ૩૫ તેને।
પ્રયોગ થાય છે, તે કારણે તેને ઔપસર્ગિક કહે છે (સંજણ સ્તિ મિસ્સં) સંયત
પદ ‘સમ્’ ઉપસર્ગ અને ‘યત’ પદના સંયોગથી અન્યુ હોવાથી તેને
મિશ્રના ઉદાહરણ ૩૫ ગણી શકાય આ નામિક આદિ પાંચે પંચનામો વડે
સમસ્ત શબ્દોનો સંગ્રહ થઈ જાય છે, તેથી તેમને પંચનામ કહે છે. (સે તં
પંચનામ) આ પ્રકારનું પંચનામનું સ્વરૂપ સમજવું. ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

હવે સૂત્રકાર છનામની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં છળ્ણામે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં છળ્ણામે?) હે મગવન્! નામના છહ પ્રકાર ૩૫
છનામનું સ્વરૂપ કેવું કહ્યું છે?

ઉત્તર—(છળ્ણામે છવિહે પળ્ણત્તે) છનામના ૬ પ્રકારો કહ્યા છે (તેનામના

નામ, ન તુ પદર્થાઃ, એવં ચ નામ્નઃ પ્રકરણે તદર્થાનાં ભાવલક્ષણાનાં પ્રરૂપણમયુક્તમિતિ ચેદાહ, નામ નામવતોરભેદોપચારાદ્ નાનાર્થપ્રરૂપણમય્યદુષ્ટમેવેતિ ન કશ્ચિદ્ દોષઃ । તત્ર જ્ઞાનાવરણાદીનામષ્ટાનાં સ્વ સ્વરૂપેણ વિપાકતોઽનુભવનમ્ ઉદયઃ, સ એવ ઔદયિકઃ । અથવા-ઉદયેન નિષ્પન્ન ઔદયિકઃ । ઔદયિકશ્ચ ભાવ એવ સામર્થ્યાદ્ ગમ્યતે । એવમગ્રેઽપિ ભાવ इत्याक्षेप्यઃ સામર્થ્યાત્ । ઉપશમ-હુમા હૈ । છહ પ્રકારવાલા જો નામ હૈ વહ છહ નામ હૈ । યહ નામ છહ પ્રકારવાલા હૈ હસીલિયે યહ છહ ભેદવાલા હૈ । (તં જહા) ઉસકે વે છહ પ્રકાર યે હૈ—(ઉદય, ઉવસમિય, સ્વય, સ્વઓવસમિય, પારિણમિય, સંનિવાય) ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક પારિણમિક ઓર સાન્નિયાતિક ।

શંકા—યહાં પ્રકાર નામ કા ચલ રહા હૈ । નામ કે અર્થો કા નહીં હસ પ્રકાર નામકે પ્રકરણમેં ઉસકે અર્થરૂપ ભાવોં કી પ્રરૂપણા કરના યુક્ત નહીં હૈ?

ઉત્તર—નામ ઓર નામવાલે અર્થ મેં અભેદ કે ઉપચાર સે નામાર્થ કી પ્રરૂપણા કરના અયુક્ત નહીં હૈ । ઔદયિક ભાવ-જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કે અપનેર રૂપ સે વિપાક કા અનુભવ કરના હસ કા ઉદય હૈ । હસ ઉદય કા નામ હી ઔદયિક હૈ । અથવા ઉદય સે નિષ્પન્ન હુમા જો ભાવ હૈ વહ ઔદયિક હૈ । ઔદયિક પદ કી સામર્થ્ય સે યહાં ઔદયિક ભાવ હી લિયા ગયા હૈ । હસી પ્રકાર સે આગે બી

૧ પ્રકારો હોવાને બીધે જ અહીં તેને પડનામ (છનામ કહ્યું છે) તે ૧ બેરો નીચે પ્રમાણે છે—

(ઉદય, ઉવસમિય, સ્વય, સ્વઓવસમિય, પારિણમિય, સંનિવાય) (૧) ઔદયિક, (૨) ઔપશમિક, (૩) ક્ષાયિક, (૪) ક્ષાયોપશમિક, (૫) પારિણમિક અને (૬) સાન્નિયાતિક.

શંકા—અહીં નામનું પ્રકરણ આવી રહ્યું છે. નામના અર્થોનું આ પ્રકરણ નથી આ પ્રકારના નામના પ્રકરણમાં તેના અર્થરૂપ ભાવોની પ્રરૂપણા કરવી તે ઉચિત લાગતું નથી છતાં આપે શા કારણે અહીં અર્થરૂપ ભાવોની પ્રરૂપણા કરી છે ?

ઉત્તર—નામ અને નામવાળા અર્થમાં અભેદ માનીને આ પ્રકારે નામાર્થની પ્રરૂપણા કરવી અયુક્ત નથી.

ઔદયિકભાવ-જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોના કળ રૂપ વિપાકનો—અનુભવ કરવો, તેનું નામ ઉદય છે આ ઉદયનું નામ જ ઔદયિક છે. અથવા ઉદયથી નિષ્પન્ન થયેલો જે ભાવ છે તેનું નામ ઔદયિક છે. ઔદયિક પદ અહીં ઔદયિક ભાવનું જ વાચક છે. એજ પ્રમાણે ઔપશ-

નમ્-ઉપશમઃ-કર્મણોઽનુદયાક્ષીણાવસ્થા મસ્મરાશ્યન્તરાલ્લિપ્તવહ્નિવત્, સ एव, તેન વા નિર્વૃત્ત ઔપશમિકઃ । ક્ષયઃ=કર્મણોઽપગમઃ, સ एव તેન વા નિર્વૃત્તઃ-ક્ષાયિકઃ । ક્ષાયોપશમિકઃ-ક્ષય ઉપશમશ્ચ ઉક્ત एव, તદેવ ભાવઃ ક્ષાયોપશમિકઃ, તેન નિર્વૃત્તો વા ક્ષાયોપશમિકઃ । અયં ચ-ઈષદ્વિધ્યાતમસ્મવહ્નિવદ્ બોધ્યઃ ।

ઔપશમિક ભાવ ક્ષાયિક ભાવ, ક્ષાયોપશમિક ભાવ, પારિણામિક ભાવ, ઔર સાન્નિપાતિક ભાવ उन ૨ પદોં સે જાનના ચાહિયે । ઔપશમિક-કર્મોંં કા ઉદય મેં નહીં રહના, કિન્તુ उनकी ઉપશમાવસ્થા કા હોના હસી કા નામ અનુદયાક્ષીણાવસ્થા હૈ । હસી અવસ્થા કા નામ ઉપશમ હૈ । જૈસે મસ્મરાશિ કે ખીતર અગ્નિ છુપી રહતી હૈ ઉસી પ્રકાર સે હસ ઉપશમ અવસ્થાં મેં કર્મોંં કા ઉદય નહીં હૈ કિન્તુ બે સત્તા મેં બેઠે રહતે હૈં । હસ ઉપશમ કા નામ હી ઔપશમિક ભાવ હૈ । અથવા હસ ઉપશમ સે જો ભાવ નિવૃત્ત (બનતા) હોતા હૈ વહ ઔપશમિક ભાવ હૈ । કર્મોંં કા અત્યંત વિનાશ હોના હસકા નામ ક્ષય હૈ । યહ ક્ષય હી ક્ષાયિક હૈ । અથવા હસ ક્ષય સે જો ઉત્પન્ન હોતા હૈ-વહ ક્ષાયિક હૈ । કર્મોંં કા ક્ષય ઔર ઉપશમ હોના હસકા નામ ક્ષયોપશમ હૈ । યહ ક્ષયોપશમ હી ક્ષાયોપશમિક હૈ । અથવા ક્ષયોપશમ સે જો ભાવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ ક્ષાયોપશમિક ભાવ હૈ । યહ ભાવ કુછ બુઝી હુઈ અગ્નિ કે જૈસા જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ હસ ક્ષયો-

મિકભાવ, ક્ષાયિકભાવ, ક્ષાયોપશમિકભાવ, પારિણામિકભાવ અને સાન્નિપાતિક ભાવને પણ ઔપશમિક આદિ પદો વડે નિષ્પન્ન થયેલા સમજવા બોધ્યો.

ઔપશમિક-કર્મોંં ઉદયાવસ્થામાં રહેલાં ન હોય, પણ ઉપશમાવસ્થામાં રહેલાં હોય, ત્યારે તે અવસ્થાને અનુદયાક્ષીણાવસ્થા કહે છે એજ અવસ્થાનું નામ ઉપશમ છે. જેમ રાખના ઢગલા નીચે અગ્નિ છુપાયેલો રહે છે, એજ પ્રમાણે ઉપશમ અવસ્થામાં કર્મોંના ઉદય હોતો નથી પણ તેમનું અસ્તિત્વ તો હોય છે જ આ ઉપશમનું નામ જ ઔપશમિક ભાવ છે અથવા આ ઉપશમ વડે જે ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે તે ભાવનું નામ ઔપશમિક ભાવ છે કર્મોંના અત્યંત વિનાશ થયો તેનું નામ ક્ષય છે. તે ક્ષય જ ક્ષાયિક રૂપ સમજવો, અથવા આ ક્ષયથી જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તે ભાવને ક્ષાયિકભાવ કહે છે કર્મોંના ક્ષય અને ઉપશમ થયો તેનું નામ ક્ષયોપશમ છે. તે ક્ષયોપશમ જ ક્ષાયોપશમિક છે. અથવા ક્ષયોપશમ વડે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તે ભાવનું નામ ક્ષયોપશમિક ભાવ છે આ ભાવને થોડી થોડી બુઝાયેલી અગ્નિ જેવો

પરિણામઃ—તેન તેન રૂપેણ વસ્તૂનાં પરિણમનં—ભવનમ્, સ એવ, તેન વા નિર્વૃત્તઃ પારિણામિકઃ । સન્નિપાતઃ=અનન્તરોક્તાનાં ભાવાનાં દ્વયાદિરૂપેણ મેલનં સ એવ, તેન વા નિર્વૃત્તઃ સાન્નિપાતિકઃ ॥સૂ૦ ૧૫૧॥

સમ્પતિ ઇતેષાં ભાવાનાં સ્વરૂપં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઉદદ્વિષ? ઉદદ્વિષ દુર્વિહે પળણત્તે, તં જહા-
ઉદદ્વિષ ય ઉદયનિષ્કળે ય । સે કિં તં ઉદદ્વિષ? ઉદદ્વિષ—
અટ્ટુળહં કમ્મપયડીણં ઉદદ્વિષં સે તં ઉદદ્વિષ । સે કિં તં ઉદય-
નિષ્કળે? ઉદયનિષ્કળે—દુર્વિહે પળણત્તે, તં જહા—જીવોદય-

પશમ મેં કિતનેક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોં (અંશો) કા ઉદયાભાવી ક્ષય
ઔર કિતનેક સર્વઘાતિસ્પર્દ્ધકોં કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ હોતા હૈ
ઔર દેશઘાતિ પ્રકૃતિરૂપ જો સમ્યક્ પ્રકૃતિ હૈ ઉસકા ઉદય રહતા હૈ ।
इसलिये इस भाव को कुछ बुझी हुई और कुछ नहीं बुझी हुई अग्नि
की उपमा दी गई है । उस २ रूप से वस्तुओं का जो परिणमन होता
है वह परिणाम है । वह परिणाम ही पारिणामिक भाव है । अथवा इस
परिणाम से जो भाव उत्पन्न होता है वह पारिणामिक भाव है । इन
पांच भावों का द्वयादि संयोगरूप से जो मिलना है वह सन्निपात है ।
यह सन्निपात ही सान्निपातिक भाव है । अथवा इस सन्निपात से जो
भाव उत्पन्न होता है वह सान्निपातिक भाव है ॥सू० १५१॥

સમજવો આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે આ ક્ષયોપશમમાં કેટલાક સર્વઘાતિ
સ્પર્દ્ધકોનો (અંશોનો) ઉદયાભાવી ક્ષય અને કેટલાક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોનો
સદવસ્થા રૂપ (વિદ્યમાનતા રૂપ) ઉપશમ થાય છે, અને દેશઘાતિ પ્રકૃતિ રૂપ
જે સમ્યક્ પ્રકૃતિ છે તેનો ઉદય રહે છે તેથી આ ભાવને થોડી ખુઝાયેલી
અને થોડી ન ખુઝાયેલી અગ્નિની ઉપમા આપવામાં આવી છે. તે તે રૂપે
વસ્તુઓનું જે પરિણમન થાય છે તેને પરિણામ કહે છે. તે પરિણામ જ
પારિણામિક ભાવ છે. અથવા તે પરિણામ વડે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે,
તેને પારિણામિકભાવ કહે છે આ પાંચ ભાવોનું જે દ્વિકસંયોગ આદિ સંયોગ
રૂપે મિલન (સંયોગ) થાય છે, તેનું નામ સન્નિપાત છે. તે સન્નિપાત જ
સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ છે અથવા તે સન્નિપાત વડે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય
છે, તેનું નામ સાન્નિપાતિક ભાવ છે. ॥સૂ૦ ૧૫૧॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १५२ औदयिकादिभावानां स्वरूपनिरूपणम् ६६३

निष्पण्णे य अजीवोदयनिष्पण्णे य। से किं तं जीवोदयनिष्पण्णे ? जीवोदयनिष्पण्णे—अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा—णेरइए तिरिक्खजोणिए मणुस्से देवे पुढविकाइए जाव तसकाइए कोहकसाई जाव लोहकसाई, इत्थीवेदए पुरिसवेदए णपुंसगवेदए कण्हलेसे जाव सुकलेसे मिच्छादिट्ठी सम्मदिट्ठी मीसदिट्ठी अविरए असण्णी अण्णाणी आहारए छउमत्थे सजोगी संसारत्थे असिद्धे । से तं जीवोदयनिष्पण्णे । से किं तं अजीवोदयनिष्पण्णे ? अजीवोदयनिष्पण्णे—अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा—उरालियं वा सरीरं, उरालियसरीरपओगपरिणामियं वा दव्वं, वेउव्वियं वा सरीरं, वेउव्वियसरीरपओगपरिणामियं वा दव्वं, एवं आहारगं सरीरं, तेयगं सरीरं, कम्मगं सरीरं च भाणियव्वं । पओगपरिणामिए वण्णे गंधे रसे फासे । से तं अजीवोदयनिष्पण्णे । से तं उदयनिष्पण्णे से तं उदइए ॥सू० १५२॥

छाया—अथ कोऽसौ औदयिकः ? औदयिको द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—औदयिकश्च उदयनिष्पन्नश्च । अथ कोऽसौ औदयिकः ? औदयिकः—अष्टानां कर्म-प्रकृतीनामुदयः खलु । स एष औदयिकः । अथ कोऽसौ उदयनिष्पन्नः ? उदयनिष्पन्नो द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—जीवोदयनिष्पन्नश्च अजीवोदयनिष्पन्नश्च । अथ कोऽसौ जीवोदयनिष्पन्नः ? जीवोदयनिष्पन्नः अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—नैरयिकः तिर्यग्योनिको मनुष्यो देवः पृथिवीकायिको यावत् त्रसकायिकः क्रोधकर्षापी यावद् लोभकषापी स्त्रीवेदकः पुरुषवेदको नपुंसकवेदकः कृष्णलेश्यो यावत् शुक्लेश्यो मिथ्यादृष्टिः सम्यग्दृष्टिः मिश्रदृष्टिः अविरतः असंज्ञी अज्ञानी आहारकः छन्नस्थः सयोगी संसारस्थः असिद्धः । स एष जीवोदयनिष्पन्नः । अथ कोऽसौ अजीवोदयनिष्पन्नः ? अजीवोदयनिष्पन्नः—अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—औदारिकं वा शरीरम्, औदारिकशरीरपयोगपरिणामितं वा द्रव्यम्, वैकुर्विकं वा शरीरं वैकुर्विकशरीरपयोगपरिणामितं वा एवम्द्रव्यम्, —आहारकं शरीरम्, तैजस्कं

૬૮૪

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

શરીરં કાર્મકં શરીરં ચ મણિતવ્યમ્ । પ્રયોગપરિણામિતો વર્ણો ગન્ધો રસઃ સ્પર્શઃ ।
સ एषोऽजीवोदयनिष्पन्नः । स एष उदयनिष्पन्नः । स एष औदयिकः ॥सू० १५२॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ

અથ કોઽસી ઔદયિકઃ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—ઔદયિકો દ્વિવિધઃ
મજ્જસઃ । દૈવિધ્યમેવાહ—ઔદયિકઃ ઉદયનિષ્પન્નશ્ચ । તત્ર ઔદયિકઃ—જ્ઞાનાવરણી-
યાદીનામષ્ટકર્મપ્રકૃતીનામુદયઃ । ‘જં’ ઇતિ વાક્યાલક્ષ્ણે । અયં પ્રથમો ભેદઃ ।
દ્વિતીયશ્ચ ભેદ ઉદયનિષ્પન્નઃ । સ હિ—જીવોદયનિષ્પન્નઃ, અજીવોદયનિષ્પન્નશ્ચ ।

અથ સૂત્રકાર इन्होंने भावों का स्वरूपनिरूपण करते हैं—

‘સે કિં તં ઉદહરે’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉદહરે ?) હે ભદન્ત ! પૂર્વપ્રકાન્ત ઔદયિક
ભાવ કયા છે ?

ઉત્તર—(ઉદહરે દુવિદ્ધે પળણતે) ઔદયિક ભાવ દો પ્રકાર કા
મજ્જસ હુઆ છે । (તં જહા) ઉસકે વે દો પ્રકાર યે છે—(ઉદહરે ય ઉદય
નિષ્કળ્ણે ય) એક ઔદયિક ઔર દુસરા ઉદયનિષ્પન્ન (સે કિં તં ઉદહરે ?)
હે ભદન્ત ! ઔદયિક ભાવ કયા છે ? (અદ્વઘ્ઠં કમ્મપયહીજં ઉદદણં ઉદહરે)

ઉત્તર—જ્ઞાનાવરણીય ઔદિ આઠ કર્મ પ્રકૃતિયોં કા ઉદય ઔદ-
યિક છે । (સે તં ઉદહરે) હસ પ્રકાર યહ ઔદયિક છે ।

(સે કિં તં ઉદયનિષ્કળે ?) હે ભદન્ત ! ઉદયનિષ્પન્ન કયા છે ?

આગલા સૂત્રમાં ઔદયિક આદિ બે ભાવો પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે,
તે ભાવોના સ્વરૂપનું હવે સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઉદહરે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉદહરે ?) હે ભગવન્ ! નામના છ ભેદમાંના
પહેલા ભેદ રૂપ ઔદયિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(ઉદહરે દુવિદ્ધે પળણતે) ઔદયિક ભાવ બે પ્રકારનો કહ્યો છે.
(તં જહા) તે બે પ્રકાર નીચે પ્રમાણે સમજાવો—(ઉદહરે ય ઉદયનિષ્કળે ય) (૧)
ઔદયિક અને (૨) ઉદયનિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં ઉદહરે ?) હે ભગવાન્ ! ઔદયિકનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે.

ઉત્તર—(અદ્વઘ્ઠં કમ્મપયહીજં ઉદદણં ઉદહરે) જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ
કર્મપ્રકૃતિઓનો ઉદય ઔદયિક રૂપ સમજાવો (સે તં ઉદહરે) આ રીતે ઔદયિકનું
સ્વરૂપ સમજાવું.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં ઉદયનિષ્કળે ?) હે ભગવન્ ! ઉદયનિષ્પન્નનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૨ ઔદયિકાદિભાવાનાં સ્વરૂપનિરૂપણમ્ ૬૮૫

તત્ર-જીવોદયનિષ્પન્ન:-જીવે ઉદયેન નિષ્પન્ન: । ઔદયિકભાવોઽનેકવિધ:મજ્જસ: ।
અનેકવિધત્વમેવાહ-‘જેરહૈ’ ઇત્યાદિ । નૈરયિકાદિરસિદ્ધાન્તો જીવોદયનિષ્પન્ન
ઔદયિકો ભાવો बोध्य: । નૈરયિકાદય: શબ્દા ભાવપરા बोध्या: । નારકત્વાદય:
પર્યાયા: કર્મણામુદયેનૈવ જીવે નિષ્પન્નન્તે ઇત્યત एते જીવોદયનિષ્પન્ના ઇતિ ભાવ: ।

ઉત્તર—(ઉદયનિષ્કળ્ણે-દુવિદ્ધે પળ્ણત્તે) ઉદયનિષ્કળ્ણ દો પ્રકાર કા
કહા ગયા હૈ । (તં જહા) વે દો પ્રકાર યે હૈ—(જીવોદયનિષ્કળ્ણે ય અજી-
વોદયનિષ્કળ્ણે ય)—એક જીવોદય નિષ્કળ્ણ ઓર દૂસરા અજીવોદય-
નિષ્કળ્ણ । (સે કિં તં જીવોદયનિષ્કળ્ણે ?) હે ભદન્ત ! જીવ મેં ઉદય સે
જો ભાવ નિષ્પન્ન હોતા હૈ વહ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(જીવોદયનિષ્કળ્ણે અજેગવિદ્ધે પળ્ણત્તે) જીવ મેં ઉદય સે
જો ઔદયિક ભાવ નિષ્કળ્ણ હોતા હૈ વહ અનેક પ્રકાર કા કહા હૈ (તં
જહા) જૈસે—(જેરહૈ, તિરિક્કજ્જોળીય, મળ્ણસે, દેવે, પુદવિકાહૈ જાવ
તસકાહૈ, કોહકસાઈ, જાવ લોહકસાઈ, ઇત્થીવેદૈ, પુરિસવેદૈ, ણપું-
સગવેદૈ, કળ્હલેસે, જાવ સુક્કલેસે મિચ્છાદિટ્ઠી, સમ્મદિટ્ઠી; મીસદિટ્ઠી,
અવિરય, અસળ્ણી, અળ્ણાળી, આહારય, છઝમત્થે, સજોળી, સંસાર-
ત્થે, અસિદ્ધે) નૈરયિક, તિર્યગ્ચોનિક, મનુષ્ય, દેવ, પૃથિવીકાયિક યાવત્
ત્રસકાયિક, ક્રોધકષાયી, યાવત્ લોભકષાયી, સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક,
નપુંસકવેદક, કૂળ્ણલેશ્યા, યાવત્ શુક્લેશ્યા, મિથ્યાદટ્ઠિ, સમ્યકૂદટ્ઠિ,

ઉત્તર—(ઉદયનિષ્કળ્ણે દુવિદ્ધે પળ્ણત્તે) ઉદયનિષ્પન્નના બે પ્રકાર પડે છે.
(તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(જીવોદયનિષ્કળ્ણે ય, અજીવોદયનિષ્કળ્ણે ય)
(૧) જીવોદય નિષ્પન્ન, (૨) અજીવોદય નિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં જીવોદયનિષ્કળ્ણે ?) હે ભગવાન ! જીવમાં ઉદયથી જે
ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે, તે ભાવનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(જીવોદયનિષ્કળ્ણે અજેગવિદ્ધે પળ્ણત્તે) જીવમાં ઉદયથી જે ઔદયિક-
ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તે અનેક પ્રકારનો હોય છે (તંજહા) જેમ કે....(જેર-
હૈ, તિરિક્કજ્જોળીય, મળ્ણસે, દેવે, પુદવિકાહૈ જાવ તસકાહૈ, કોહ કસાઈ
જાવ લોહકસાઈ, ઇત્થીવેદૈ, પુરિસવેદૈ, ણપુંસગવેદૈ, કળ્હલેસે જાવ સુક્કલેસે,
મિચ્છાદિટ્ઠી, સમ્મદિટ્ઠી, મીસદિટ્ઠી, અવિરય, અસળ્ણી, અળ્ણાળી, આહા-
રય, છઝમત્થે, સજોળી, સંસારત્થે, અસિદ્ધે) નારક, તિર્યગ્ચોનિક, મનુષ્ય, દેવ,
પૃથ્વીકાયિક આદિ સ્થાવર, ત્રસકાયિક, ક્રોધકષાયીથી લઈને લોભકષાયી પર્ય-
ન્તના, સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવેદક, કૂળ્ણલેશ્યાથી લઈને શુક્લેશ્યા

નનુ નારકત્વાદિભ્યોઽન્યેઽપિ નિદ્રાપશ્ચક વેદનીયહાસ્યાદયો બહવઃ કર્મોદયજન્યાઃ પર્યાયાઃ સન્તિ, કથં તર્हि નારકત્વાદયઃ કતિપય एवોદાહતાઃ ? इति चेदाह— नारकत्वादयोऽत्रोपलक्षणत्वेनोदाहृताः, अत एभ्योऽन्येऽपि सम्भविनः पर्याया बोध्याः । ननु कर्मोदयजनितानां नारकत्वादीनां भवत्वत्रोपन्यासः, परन्तु लेश्यास्तु मिश्रदृष्टि अविरत, असंज्ञी, अज्ञानी, आहारक, छद्मस्थ, सयोगी संसारस्थ, असिद्ध । ये सब नैरयिक से लेकर असिद्ध पर्यन्त जीवोदय-निष्पन्न औदयिक भाव हैं । नैरयिक आदि शब्द भाव परक जानना चाहिये । नारकत्व आदि पर्यायों कर्मों के उदय से ही जीव में निष्पन्न होती हैं इसलिये ये जीवोदय निष्पन्न हैं ।

શંકાઃ—નારકત્વ આદિ સે ભિન્ન ઓર મી નિદ્રાપશ્ચક-નિદ્રા નિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલા પ્રચલા, સ્થાનગૃહિ વેદનીય ઓર હાસ્યાદિ અનેક કર્મોદય જન્ય પર્યાયોં છે । તો ફિર સૂત્રકાર ને યહાં હન નારક આદિ થોડી સો પર્યાયોં કો હી ઉદાહૃત કર્યોં કિયા હૈ ?

ઉત્તરઃ—સૂત્રકાર ને જો યહાં હન નારક આદિ પર્યાયોં કો ઉદાહૃત કિયા હૈ વહ કેવલ ઉપલક્ષણ રૂપ સે કિયા હૈ । હસલિયે હન સે મી અતિરિક્ત જિતની મી પર્યાયોં કર્મોદય જન્ય હૈ વે સબ હનસે ગૃહીત હો જાતી હૈ ।

શંકા—કર્મોદય જનિત હન નારક આદિ પર્યાયોં કા ઔદયિક ભાવ

પર્યન્તની લેશ્યાવાળા, મિથ્યાદૃષ્ટિ, સમ્યક્દૃષ્ટિ, મિશ્રદૃષ્ટિ, અસંજી, અજ્ઞાની, આહારક, છદ્મસ્થ, સયોગી, સંસારસ્થ અને અસિદ્ધ, આ બધાં જીવોદય-નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવો છે. નૈરયિક આદિ શબ્દોને ભાવપરક સમજવા બોધ્યે નારકત્વ આદિ પર્યાયોં કર્મોના ઉદયથી જ જીવમાં નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન) થાય છે, તેથી તેમને જીવોદયનિષ્પન્ન કહેવામાં આવેલ છે.

શંકા—નારકત્વ આદિ ઉપયુક્ત પર્યાયોં સિવાયની નિદ્રાપશ્ચક (નિદ્રા, નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલાપ્રચલા, સ્થાનગૃહિ), વેદનીય અને હાસ્યાદિક અનેક કર્મોદય જન્ય પર્યાયોં છે. છતાં સૂત્રકારે તે પર્યાયોંને ગણાવવાને બદલે માત્ર નારકાદિ પર્યાયોંને જ કેમ ગણાવેલ છે ?

ઉત્તર—સૂત્રકારે તો અહીં ઉદાહરણ રૂપે નારકાદિ પર્યાયોંને જીવોદય-નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ રૂપે ગણાવેલ છે. કેવળ ઉપલક્ષણ રૂપે જ આ પ્રમાણે કરવામાં આવ્યું છે. પરન્તુ તે સિવાયની કર્મોદય જન્ય બેટલા પર્યાયોં છે, તેમને પણ અહીં ગણાવેલ કરી શકાય છે.

શંકા—કર્મોદય જનિત આ નારક આદિ પર્યાયોંને ઔદયિક ભાવમાં ભડે

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૨ ઔદયિકાદિભાવાનાં સ્વરૂપનિરૂપણમ્ ૬૮૭

કસ્યચિત્ કર્મણ ઉદયે ભવન્તીત્યેતન્નપ્રસિદ્ધમ્, તત્ કથમિદ્ કુષ્ણલેશ્યાદયઃ પઠ્યન્તે ? इति चेदाह—लेश्यास्तु योगपरिणामः त्रिविधोऽपि योगः कर्मोदयजन्य एव, ततो लेश्यानामपि योगकर्मोदयेत्युभयजन्यत्वं न विरुध्यते इति नास्ति लेश्यानाम पाठे कश्चिद् दोषः। केचिच्चेवं मन्यन्ते—यथा कर्माष्टकोदयात् संसारस्थत्वमसिद्धत्वं च जायते, तथैव लेश्यावत्त्वमपि जायते, इति। प्रकृतमुप-संहरन्नाह—स एष जीवोदयनिष्पन्न इति। अथ कोऽसौ अजीवोदयनिष्पन्नः ?

મેં ઉપન્યાસ ભણે રહો, પરન્તુ લેશ્યાઈ ઔદયિક હૈં યહવાત સંભવિત નહીં હોતી, ક્યોંકિ લેશ્યાઈ કિસી કર્મ કે ઉદય સે હોતો હોં યહ વાત પ્રસિદ્ધ નહીં હૈં । અતઃ જબ એસી વાત હૈ, તો ફિર સૂત્રકાર ને ઔદયિક ભાવ મેં ઇનકા પાઠ ક્યોં રખા હૈ ?

ઉત્તરઃ—લેશ્યાઈ યોગોં કે પરિણામ—પ્રવૃત્તિ રૂપ હૈં । ઓર ત્રીનો પ્રકાર કા જો યોગ હૈ વહ શરીર નામ કર્મોદય જન્ય હૈ । ઇસલિએ લેશ્યાઓં કો યોગ ઓર શરીર નામકર્મોદય ઇન દોનોં દ્વારા જન્ય કે હોને કે કારણ ઇનકા પાઠ—ઔદયિક ભાવ મેં રખના નિર્દોષ હૈ । કોઈ ૨ ઇસ વિષય મેં એસા માનતે હૈં—કિ જૈસે આઠ કર્મોં કે ઉદય સે સંસાર-સ્થત્વ ઓર અસિદ્ધત્વ હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર લેશ્યાવત્ત્વ મી હોતા હૈ. (સે તં જીવોદયનિષ્કર્ણે) ઇસ પ્રકાર યહ જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ હૈં । (સે કિં તં અજીવોદય-નિષ્કર્ણે) હે ભદન્ત ! અજીવોદય-નિષ્પન્ન ઔદાયિક ભાવ કયા હૈ ? ।

સમાવિષ્ટ કરવામાં આવે, પરન્તુ લેશ્યાઓ ઔદયિક હોવાનું સંભવી શકતું નથી, કારણ કે લેશ્યાઓને કર્મોદયજન્ય માનવામાં આવતી નથી છતાં પણ સૂત્રકારે શા કારણે ઔદયિક ભાવમાં તેનો સમાવેશ કર્યો છે ?

ઉત્તર—લેશ્યાઓ યોગોના પરિણામ—પ્રવૃત્તિ-રૂપ હોય છે અને ત્રણે પ્રકારના યોગ શરીરનામ કર્મજન્ય હોય છે. તેથી યોગ અને શરીરનામ કર્મોદય આ બંને દ્વારા જન્ય હોવાને કારણે લેશ્યાઓનો ઉપયુક્ત ઔદયિક ભાવમાં સમાવેશ કરવામાં કોઈ દોષ જણાતો નથી કોઈ કોઈ લોકો એવું માને છે કે—જેવી રીતે આઠ કર્મોના ઉદયથી સંસારીપણાની અને અસિદ્ધત્વની પ્રાપ્તિ થાય છે, એજ પ્રમાણે લેશ્યાયુક્તાત્વ પણ પ્રાપ્ત થાય છે. (સે તં જીવોદયનિષ્કર્ણે) આ પ્રકારનું જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અજીવોદયનિષ્કર્ણે?) હે ભગવન્ ! અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति-अजीवोदयनिष्पन्नः-अजीवे उदयेन निष्पन्न औद-
यिक भावः अनेकविधः प्रज्ञप्तः । अनेकविधत्वमेवाह-तद्यथा-औदारिकं वा शरीरम्=
विशिष्टाकारपरिणतं तिर्यङ्मनुष्यदेवरूपमौदारिकं शरीरकम् । औदारिकशरीरप्रयो-
गपरिणामितं वा द्रव्यम्-औदारिकशरीरस्य प्रयोगेण=व्यापारेण परिणामितं=
निष्पादितं वा द्रव्यम् । एतद्द्रव्यमपि अजीवे=पुद्गलद्रव्ये औदारिकशरीरनाम-
कर्मोदयेन निष्पद्यते, अत एतद् द्रव्यम् अजीवोदयनिष्पन्न औदयिको भाव उच्यते ।
एवं वैकुण्ठिकादिवत्तुःशरीरविषयेऽपि बोध्यम् । औदारिकादि शरीरप्रयोगेण यत्

उत्तर-(अजीवोदयनिष्पन्ने अणोगविहे पण्णत्ते) अजीव में उदय
से निष्पन्न औदयिक भाव अनेक प्रकार का कहा गया है । (तं जहा)
जेसे-(उरालियं वा सरीरं उरालियसरीरं पओगपरिणामियं
वा दब्बं) विशिष्ट आकार परिणत हुआ तिर्यञ्चों और मनुष्यों
का देहरूप औदारिक शरीर, अथवा औदारिक शरीर के
व्यापार से निष्पादित द्रव्य, ये दोनों भी अजीवपुद्गलद्रव्य-
में औदारिक शरीर नामकर्म के उदय से निष्पन्न होते हैं ।
इसलिये ये दोनों अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव कहे जाते हैं ।
(वेउव्वियं वा सरीरं, वेउव्वीयसरीरपओगपरिणामियं वा दब्बं एवं
आहारगं सरीरं, तेयगं सरीरं कम्मगं सरीरं च भाणियव्वं) इसी प्रकार से
वैक्रिय शरीर, अथवा वैक्रिय शरीर के व्यापार से निष्पादित द्रव्य, आहारक
शरीर अथवा आहारक शरीर के व्यापार से निष्पादित द्रव्य, तैजस
शरीर अथवा तैजस शरीर के व्यापार से निष्पादित द्रव्य, कामीण

ઉત્તર-(અજીવોદયનિષ્પન્ને અણોગવિહે પણ્ણત્તે) અજીવમાં ઉદયથી નિષ્પન્ન
ઔદયિકભાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે...(ઉરાલિયં વા સરીરં
ઉરાલિયસરીરં-પઓગપરિણામિયં વા દબ્બં) વિશિષ્ટ આકારમાં પરિણત થયેલું
તિર્યંચો અને મનુષ્યોના દેહરૂપ ઔદારિક શરીર, અથવા ઔદારિક શરીરના
વ્યાપારથી નિષ્પાદિત દ્રવ્ય આ બન્ને અજીવ-પુદ્ગલ દ્રવ્ય-માં ઔદારિક શરીર
નામકર્મના ઉદયથી નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન) થાય છે. તેથી તે બન્નેને અજીવોદય
નિષ્પન્ન ઔદયિકભાવ કહેવામાં આવે છે. (વેઉવ્વિયં વા સરીરં, વેઉવ્વિય-
સરીરપઓગપરિણામિયં વા દબ્બં, एवं આહારગં સરીરં, તેયગં સરીરં, કમ્મગં
સરીરં ચ ભાણિયવ્વં) એજ પ્રકારે વૈક્રિય શરીર, અથવા વૈક્રિય શરીરના વ્યા-
પારથી નિષ્પાદિત દ્રવ્ય, આહારક શરીર અથવા આહારક શરીરના વ્યાપારથી
નિષ્પાદિત દ્રવ્ય, તેજસ શરીર અથવા તેજસ શરીરના વ્યાપારથી નિષ્પાદિત

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૨ ઔદયિકાદિભાવાનાં સ્વરૂપનિરૂપણમ્ ૬૮૯

પરિણમ્યતે દ્રવ્યં તત્ સ્વયમેવ દર્શયતિ સૂત્રકાર:-‘પ્રયોગપરિણામિ’ इत्यादि । प्रयोगपरिणामितो वर्णो गन्धो रसः स्पर्शः । अयं भाव-औदारिकादीनां पञ्चानामपि शरीराणां प्रयोगेण निष्पादितं वर्णगन्धरसस्पर्शस्वरूपं द्रव्यं बोध्यम् । एतद्विद्यमानमाणादिकमपि यच्छरीरे उत्पद्यते तदप्युपलक्षणत्वाद् ग्राह्यमिति । ननु यथा नारकत्वादयः पर्याया जीवे भवन्तीति जीवोदयनिष्पन्ने औदयिके पठ्यन्ते, एवं शरीराण्यपि जीवे एव भवन्ति, अत एतान्यपि जीवोदयनिष्पन्ने औदयिक एव पठनीयानि, कथं पुनर्जीवोदयनिष्पन्ने औदयिके पठ्यन्ते ? इति

શરીર અથવા કાર્માણુ શરીર કે વ્યાપાર સે નિષ્પાદિત દ્રવ્ય કે વિષય મેં જી જાનના ચાહિયે । ઔદારિકાદિ શરીર કે વ્યાપાર સે જો દ્રવ્ય ઔદારિકાદિ રૂપ પરિણામિત હોતા હૈં ઉસે સૂત્રકાર સ્વયં દિશલાતે હૈં-(પ્રયોગપરિણામિ વર્ણ, ગંધ, રસ, ફાસે,) પ્રયોગ પરિણામિત વર્ણ, ગંધ, રસ, ઔર સ્પર્શ હૈં । હિસકા તાત્પર્ય યહ હૈં-કિ ઔદારિક આદિ પાંચે જી શરીરોં કે વ્યાપાર સે જો દ્રવ્ય નિષ્પાદિત હોતા હૈં વહ વર્ણ, ગંધ, રસ, ઔર સ્પર્શરૂપ હૈં । હિનસે અિન્ન આન પ્રાણ આદિક જી જો શરીર મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં વે જી ઉપલક્ષણ સે યહાં ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે ।

શંકા-જૈસે નારકત્વ આદિ પર્યાયેં જીવ મેં હોતી હૈં હિસ અભિપ્રાય સે વે જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ મેં કહી ગઈ હૈં, હિસી પ્રકાર શરીર જી જીવ મેં હી હોતે હૈં-અતઃ વે જી જીવોદયનિષ્પન્ન ઔદયિક

દ્રવ્ય અને કાર્માણુ શરીર અથવા કાર્માણુ શરીરના વ્યાપારથી નિષ્પાદિત દ્રવ્યના વિષયમાં પણ સમજવું ઔદારિક આદિ શરીરના વ્યાપારથી જે દ્રવ્ય ઔદારિક આદિ રૂપે પરિણમિત થાય છે, તેને સૂત્રકાર પોતે જ બતાવે છે-(પ્રયોગપરિણામિ વર્ણ, ગંધ, રસ, ફાસે) પ્રયોગપરિણમિત વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-ઔદારિક આદિ પાંચે શરીરના વ્યાપારથી જે દ્રવ્ય નિષ્પાદિત થાય છે, તે વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શ રૂપ હોય છે. આ સિવાય જે આન, પ્રાણાદિકની શરીરમાં ઉત્પત્તિ થાય છે તેમને પણ ઉપલક્ષણની અપેક્ષાએ અહીં ગ્રહણ કરવા જોઈએ.

શંકા-જેવી રીતે નારકત્વ આદિ પર્યાયોના જીવમાં સદ્ભાવ હોય છે, અને તે કારણે તે તે પર્યાયોના જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવમાં સમાવેશ કરવામાં આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે શરીરનો પણ જીવમાં સદ્ભાવ હોય છે, તેથી તેમનો પણ જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવોમાં સમાવેશ થવો જોઈતા હતો

વેદાદિ-યદ્યપ્યૌદારિકાદિશરીરાણિ જીવે ભવન્તિ તથાપિ ઔદારિકાદિશરીરનામ કર્મમૌદયસ્ય મુખ્યતયા શરીરપુદ્ગલેષ્વેવ વિપાકો ભવતિ, અતઃ એતાનિ ઔદારિકાદિશરીરણિ પશ્ચશરીરણિ અજીવોદયનિષ્પન્ને ઔદયિકા એવં ભાવે પઠ્યન્તે, અતઃ નાસ્તિ કશ્ચિદ્ દોષઃ । इत्थमजीवोदयनिष्पन्न औदयिकभावः प्ररूपित इति सूचयितुमाह-स एषोऽजीवोदयनिष्पन्न इति । उदयनिष्पन्नो भावः सकलोऽपि प्ररूपित इति सूचयितुमाह-स एष उदय निष्पन्न इति । एतावता औदयिको भाव प्ररूपित इति सूचयितुमाह-स एष औदयिक इति । इत्थं द्विविधोऽप्यौदयिक भावः प्ररूपित इति विज्ञेयम् ॥મૂ० ૧૫૨॥

ભાવ મેં હી કહના चाहिये थे, फिर क्यों-उन्हे अजीवोदयनिष्पन्न औदयिक भाव में रखा है ?

ઉત્તર-યદ્યપિ ઔદારિક આદિ શરીર જીવ મેં હોતે હૈં, તો બી ઔદારિક આદિ શરીર નામ કર્મકા વિપાકમુખ્યતયા શરીર પુદ્ગલોં કે હી હોતા હૈ, इसलिये इन औदारिक आदि पांच शरीरों को अजीवोदय निष्पन्न औदारिक भाव में ही रखा है । इसलिये इसमें कोई दोष नहीं है । (से तं अजीवोदयनिष्पण्णे) इस प्रकार से यह अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव का कथन है । (से तं उदयनिष्पण्णे, से तं उदइए) एतावता औदयिक भाव प्ररूपित हो चुका । और इस प्ररूपणासे दोनो प्रकार का भी औदयिक भाव कथित हो चुका ऐसा जानना चाहिये ।

भावार्थ-સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા ઔદયિક ભાવ કા કથન કિય હૈ । इसमें उन्होंने यह समझाया है कि अप्रविध कर्मों का जो उदय है

છતાં અહીં તેને અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ રૂપે શાકારણે ગણવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર-જો કે ઔદારિક આદિ શરીરોનાં જીવમાં સદ્ભાવ હોય છે, છતાં પણ ઔદારિક આદિ શરીર નામકર્મનાં વિપાક મુખ્યતરે શરીર પુદ્ગલોમાં જ થાય છે. તેથી ઔદારિક આદિ પાંચ શરીરોને અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ રૂપ કહેવામાં આવેલ છે. તેથી તે પ્રકારનું કથન નિર્દોષ જ ગણી શકાય. (સે તં અજીવોદયનિષ્પણ્ણે) આ પ્રકારનું અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવનું સ્વરૂપ સમજવું (સે તં ઉદયનિષ્પણ્ણે, સે તં ઉદइए) આ પ્રકારે ઔદયિક ભાવની પ્રરૂપણા અહીં સમાપ્ત થાય છે આ પ્રરૂપણા દ્વારા બન્ને પ્રકારના ઔદયિક ભાવોની પ્રરૂપણા સમાપ્ત થઈ જાય છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા ઔદયિક ભાવનું કથન કર્યું છે. આ સૂત્ર દ્વારા તેમણે એ વાતનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે આઠ પ્રકારનાં કર્મોના

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १५२ औदयिकादिभावानां स्वरूपनिरूपणम् ६९१

एक तो वह औदयिक भाव है, दूसरा अष्टविध कर्मों के उदय से जो भाव उत्पन्न होता है वह औदयिक भाव है। यह कर्मोदय निष्पन्न औदयिक भाव जीवोदय निष्पन्न और अजीवोदय निष्पन्न के भेद से दो प्रकार का कहा गया है। कर्मों के उदय से जो भाव जीव में उदित होता है वह जीवोदय निष्पन्न और जो अजीव में उदित होता है वह अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव है। वह जीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव में चारों गतियां चारों कषाय, तीनों वेद मिथ्या दर्शन अज्ञान छहों लेश्याएँ असंयम, असिद्धभाव आदि परिणामित किये गये हैं। क्योंकि ये सब जीव में ही विवक्षित अपने कर्म के उदय से निष्पन्न होते हैं—जैसे मनुष्यगति नाम के उदय से मनुष्य गति, तिर्यञ्चगतिनामकर्म के उदय से तिर्यञ्चगति, देवगति नामकर्म के उदय से देवगति और नरकगति नामकर्म के उदय से नरक गति उत्पन्न होती है। इसी प्रकार से चारों कषाय वेदनीय के उदय से होता है। तात्पर्य यह है कि मोहनीय कर्म दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के भेद से दो प्रकार का है

७ उदय छे ते औदयिक भाव रूप छे अने जीवुं ओ पणु प्रकट कथुं छे के आठ प्रकारना कर्मोना उदयथी ७े भाव उत्पन्न थाय छे ते पणु औदयिक भाव रूप छे ते कर्मोदय निष्पन्न औदयिक भावना नीचे प्रमाणे मे लेह कहे छे—(१) लुवोदय निष्पन्न अने (२) अलुवोदय निष्पन्न. कर्मोना उदयथी ७े भाव लुवमां उदित थाय छे तेने लुवोदयनिष्पन्न औदयिक भाव कहे छे. अने कर्मोना उदयथी ७े भाव अलुवोमां उत्पन्न (उदित) थाय छे, तेने अलुवोदय निष्पन्न औदयिक भाव कहे छे. लुवोदयनिष्पन्न औदयिक भावमां यारे गतिओ, यारे कषायो, त्रणे वेद, मिथ्यादर्शन अज्ञान, छओ लेश्याओ, असंयम, असिद्धभाव आदिने गणुवामां आवेत्त छे, कारणु के ओ अधां भावोना लुवमां ७ सहभाव डोय छे. अने ज्ञानावरणु आदि कर्मोना उदयथी आ भावो निष्पन्न थता डोय छे ७ेम के मनुष्यगति नामकर्मना उदयथी मनुष्यगति, तिर्यञ्चगति नाम कर्मना उदयथी तिर्यञ्चगति, देवगति नामकर्मना उदयथी देवगति अने नरकगति नामकर्मना उदयथी नरकगति उत्पन्न थाय छे. यारे कषायोनी उत्पत्ति पणु कषायवेदनीयना उदयथी थाय छे आ कथननुं तात्पर्य ओ छे के—मोहनीय कर्मना मे प्रकार छे—अस्मिन्-मोहनीय अने दर्शनमोहनीय दर्शनमोहनीयना नीचे प्रमाणे त्रणु लेह पडे

દર્શનમોહનીયકે, સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ ઓર તદુભય-સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વ યે ત્રીન ભેદ હૈં । ચારિત્ર મોહનીયકે કષાયવેદનીય ઓર નો કષાયવેદનીય યે દો ભેદ હૈં । इनमें जो कषाय वेदनीय है, उसके उदय होने पर क्रोध मान, मोया और लोभ ये चारों कषायें उत्पन्न होते है । और नोकषाय चारित्र मोहनीय के उदय होने पर तीन वेद निष्पन्न होते हैं । मिथ्यात्व मोहनीय के उदय से मिथ्या दर्शन होता है । किसी ज्ञानावरण कर्म के उदय से अज्ञान भी होता है । लेश्याएँ योग परिणाम रूप हैं । इसलिये ये योग जनक शरीर नामकर्म उदय के फल है । चारित्रमोहनीय के सर्वघाति स्पर्धकों (कर्मों के अंश) के उदय से असंयत भाव होता है । किसी भी कर्म के उदय से असिद्ध भाव होता है इस प्रकार जो भी जीव में कर्मोदय से पर्याय निष्पन्न होती है वह सब औदयिक भाव है ऐसा जानना चाहिए । अजीव में उदय से निष्पन्न जो भाव है वह अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव है । यह अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव अनेक प्रकार का कहा गया है । जैसे औदारिक आदि शरीर अथवा औदारिक शरीर आदि के व्यापार से निष्पादित द्रव्य । ये शरीरादि अजीवोदय निष्पन्न औद-

છે--સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ અને તદુભય (સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વ) ચારિત્ર મોહનીયના ત્રીણ પ્રમાણે બે ભેદ પડે છે--(૧) કષાયવેદનીય અને (૨) નોકષાયવેદનીય ત્યારે કષાયવેદનીયનો ઉદય થાય છે ત્યારે ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ રૂપ ચારે કષાયો ઉત્પન્ન થાય છે અને નોકષાયચારિત્ર મોહનીયનો ઉદય થાય ત્યારે ત્રણ વેદ (સ્ત્રી, પુરુષ અને નપુંસક રૂપ ત્રણ વેદ) નિષ્પન્ન થાય છે મિથ્યાત્વ મોહનીયના ઉદયથી મિથ્યાદર્શન ઉત્પન્ન થાય છે. જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ઉદયથી અજ્ઞાનભાવ ઉત્પન્ન થાય છે લેશ્યાઓ યોગપરિણામ રૂપ ગણાય છે તેથી યોગજનક શરીર-નામકર્મના ઉદયના ફલ રૂપ તેમને ગણી શકાય છે. ચારિત્રમોહનીયના સર્વઘાતિ સ્પર્ધકોના (કર્મોના અંશોના) ઉદયથી અસંયત ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે કેટલે પછી કર્મના ઉદયથી અસિદ્ધભાવ ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે કર્મોદયને કારણે જીવમાં જે પર્યાયો ઉત્પન્ન થાય છે તે બધી પર્યાયોને ઔદયિક ભાવ રૂપ સમજવી જોઈએ.

અજીવમાં કર્મોદયને લીધે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તે ભાવને અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ કહે છે. આ અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિકભાવ અनेक प्रकारનો બતાવ્યો છે જેમ કે ઔદારિક આદિ શરીરો અથવા ઔદારિક આદિ શરીરોના વ્યાપારથી નિષ્પાદિત દ્રવ્ય આ શરીરાદિને અજીવોદય

અથ ઔપશમિકં ભાવં નિર્દિશતિ—

મૂલ્ય—સે કિં તં ઉવસમિષ્? ઉવસમિષ્ દુવિહે પળ્લણત્તે, તં જહા—ઉવસમે ય ઉવસમનિષ્પળ્લણે ય। સે કિં તં ઉવસમે? ઉવસમે—મોહણિજસ્સ કમ્મસ્સ ઉવસમેણં। સે તં ઉવસમે। સે કિં તં ઉવસમનિષ્પળ્લણે? ઉવસમનિષ્પળ્લણે અળેગવિહે પળ્લણત્તે, તં જહા—ઉવસંતકોહે જાવ ઉવસંતલોહે ઉવસંતપેજ્જે ઉવસંતદોસે ઉવસંતદંસળમોહણિજ્જે ઉવસંતમોહણિજ્જ ઉવસમિયા સમ્મત્તલહ્હી ઉવસમિયા ચરિત્તલહ્હી ઉવસંતકસાય છુમત્થવીયરામે। સે તં ઉવસમનિષ્પળ્લણે। સે તં ઉવસમિષ્ ॥સૂ૦ ૧૫૩॥

છાયા—અથ કોડસી ઔપશમિકઃ? ઔપશમિકો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથથા—ઉપશમશ્ચ ઉપશમનિષ્પન્નશ્ચ। અથ કોડસાવુપશમઃ—મોહનીયસ્ય કર્મેળ ઉપશમઃ સ્વલ્લ। સોડસાવુપશમઃ। અથ કોડસાવુપશમનિષ્પન્નઃ? ઉપશમનિષ્પન્નઃ અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથથા—ઉપશાન્ત—ક્રોધો યાવદુપશાન્તલોભ, ઉપશાન્તમેમ ઉપશાન્તદ્વેષ ઉપશાન્તદર્શનમોહનીય ઉપશાન્તમોહનીયઃ ઔપશમિકી સમ્યક્તત્તલબ્ધિઃ ઔપશમિકી ચારિત્રલબ્ધિઃ ઉપશાન્તરૂપાયછદ્ધસ્થવીતરામઃ। સ ઇષ ઉપશમનિષ્પન્નઃ। સ ઇષ ઔપશમિકઃ ॥સૂ૦ ૧૫૩॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ।

ચિક્ષુ ભાવે ઇસલિયે કહે ગયે હૈં કિ ઔદારિક આદિ શરીર નામ કર્મ કા વિપાક મુખ્યત્વે ઇન શરીર પુદ્ગલોં મેં હી હોતા હૈ। ઇસીલિયે ઇન્હે પુદ્ગલ વિપાકી પ્રકૃતિયોં મેં પરિણમિત કિયા ગયા હૈ। ॥સૂ૦ ૧૫૨॥

અથ સૂત્રકાર ઔપશમિક ભાવ કા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં ઉવસમિષ્” ઇત્યાદિ।

નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ રૂપે પ્રકટ કરવાનું કારણ એ છે કે ઔદારિક આદિ શરીર નામકર્મનો વિપાક મુખ્યત્વે આ શરીરપુદ્ગલોમાં જ થાય છે. તેથી તેમને પુદ્ગલવિપાકી પ્રકૃતિઓમાં પરિણમિત કસાયેલ છે। ॥સૂ૦ ૧૫૨॥

હવે સૂત્રકાર ઔપશમિક ભાવનું પ્રતિપાદન કરે છે—

“સે કિં તં ઉવસમિષ્” ઇત્યાદિ—

૬૨૪

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-અથ કોઽસૌ ઔપશમિકઃ ? इति । उत्तरयति-औपशमिकः-
 उपशमोपशमनिष्पन्नभेदेन द्विविधः प्रज्ञप्तः । तत्र-मोहनीयस्य कर्मण उपशम एव
 उपशम इत्युच्यते । 'णं' इति वाक्यालङ्कारे । अयं प्रथमो भेदोऽष्टाविंशतिविधस्य
 मोहनीयस्यैव कर्मण उपशमश्रेण्यां द्रष्टव्यः, 'मोहस्सेवोपसमो' (मोहस्यैवोपशमः)
 इति वचनात् । अथ द्वितीयं भेदमाह-अथ कौऽसौ उपशमनिष्पन्नः ? इति प्रश्नः ।
 उत्तरयति-उपशमनिष्पन्न उपशान्तक्रोधाद्युपशान्तकषायछन्नस्थवीतरागान्तो

हे भदन्त ! (से किं तं उवसमि ए ?) वह औपशमिकभाव क्या है ?
 (उवसमि ए दुविहे पणत्ते).

उत्तर-औपशमिक भाव दो प्रकार का कहा गया है । (तंजहा)
 उसके वे दो प्रकार ये हैं-(उवसमे य उवसमनिष्फण्णे य) एक उपशम
 और दूसरा उपशम निष्पन्न है । (से किं तं उवसमे ?) हे भदन्त ! वह
 उपशम क्या है ?

उत्तर-(उवसमे मोहणिज्जस्स कम्मस्स उवसमेणं) अट्ठाईस प्रकार
 के समस्त मोहनीय कर्मका जो उपशम है वही उपशम है ।

यह उपशम ८ वें ९ वें १० वें ११ वें गुणस्थान रूप उपशमश्रेणी
 में होता है । (से तं उवसमे) इस प्रकार यह उपशम है । (से किं तं
 उवसमनिष्फण्णे ?) हे भदन्त ! वह उपशम निष्पन्न क्या है ?

उत्तर-(उवसमनिष्फण्णे अणेगविहे पणत्ते) उवशम निष्पन्न

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં ઉવસમિ એ ?) હે ભગવન્ ! તે ઔપશમિકભાવનું
 સ્વરૂપ કેવું કહ્યું ?

ઉત્તર-(ઉવસમિ એ દુવિહે પણત્તે) ઔપશમિક ભાવ બે પ્રકારનો કહ્યો છે
 (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(ઉવસમે ય ઉવસમનિષ્ફણ્ણે ય) (૧) ઉપશમ
 અને (૨) ઉપશમનિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં ઉવસમે ?) હે ભગવન્ ! તે ઉપશમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઉવસમે મોહણિજ્જસ્સ કમ્મસ્સ ઉવસમેણં) ૨૮ પ્રકારના સમસ્ત
 મોહનીય કર્મના ઉપશમને જ અહીં ઉપશમ ભાવ કહેવામાં આવ્યો છે.
 આઠ, નવ, દસ અને અગિયારમાં ગુણસ્થાન રૂપ ઉપશમ શ્રેણીમાં આ ઉપ-
 શમ ભાવનો સદ્ભાવ રહે છે (સે તં ઉવસમે) આ પ્રકારનું ઉપશમનું સ્વરૂપ હોય છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં ઉવસમનિષ્ફણ્ણે ?) હે ભગવન્ ! ઔપશમિક ભાવના
 બીજા ભેદ રૂપ ઉપશમ નિષ્પન્નનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઉવસમનિષ્ફણ્ણે અણેગવિહે પણત્તે) ઉપશમ નિષ્પન્ન ઔપશમિક

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૩ ઔપશમિકભાવનિરૂપણમ્

૬૧૫

બોધ્યઃ । અત્રેદં બોધ્યમ્-મોહનીયસ્યોપશમેન દર્શનમોહનીયં ચારિત્રમોહનીયં ચોપ-
શ્ચાન્તં મવતિ, એતદ્વયે ઉપશાન્તે ક્રોધાદય ઉપશાન્તા મવન્તીતિ । સ ણ્ણોડનન્ત
રીક્કો દ્વિતીયો મેદો બોધ્યઃ । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-સ ણ્ણ ઔપશમિક ઇતિ । ઇત્યં
નિર્દિષ્ઠો દ્વિવિધોડપ્યૌપશમિકો ભાવઃ ॥૪૦ ૧૫૩॥

ઔપશમિક ભાવ અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) જૈસે-(ઉવ-
સંત કોહે) ક્રોધ કા ઉપશાન્ત હોના (જાવ ઉવસંતલોહે) યાવત્ લોભ
કા ઉપશાન્ત હોના, (ઉવસંતપેમે) પ્રેમ-રાગ-કા ઉપશાન્ત હોના
(ઉવસંત દોસે) દ્વેષ કા ઉપશાન્ત હોના (ઉવસંત દંસણમોહણિજ્જે)
દર્શનમોહનીય કા ઉપશાન્ત હોના (ઉવસંતમોહણિજ્જે) મોહનીય કર્મ
કા ઉપશાન્ત હોના (ઉપસમિયા સમ્મત્તલઢ્ઢી) ઔપશમિકી સમ્યત્તવ
લબ્ધિ, (ઉવસમિયા ચરિત્તલઢ્ઢી) ઔપશમિકી ચારિત્રલબ્ધિ (ઉવસંત
કસાય છઠ્ઠમત્થવીયરાગે) ઉપશાન્ત કષાય, છઠ્ઠસ્થવીત રાગ (સે તં
ઉપસમનિષ્કળ્ણે) ઇસ પ્રકાર યહ ઉપશમ નિષ્પન્ન ઔપશમિક
ભાવ હૈ । (સે તં ઉવસમિય) ઇસ પ્રકાર દોનો પ્રકાર કા ઔપશમિક
નિર્દિષ્ટ હો ચુકા ।

ભાવાર્થ-ઇસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારને ઔપશમિક ભાવ કા સ્વરૂપ
દિલ્લાયા હૈ । ડસમેં ડન્હોને યહ સ્પષ્ટ કિયા હૈ કિ ઉપશમ સે હોનેવાલા
ઔપશમિક ભાવ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । એક પ્રકાર કા ઔપશમિક

ભાવ અનેક પ્રકારના કહ્યા છે. (તંજહા) જેમ કે-(ઉવસંતે કોહે જાવ ઉવસંતે
લોહે) ક્રોધ ઉપશાન્ત થવો, માનઉપશાન્ત થવું, માયાઉપશાન્ત થવી, લોભ
ઉપશાન્ત થવો, (ઉવસંત પેમે) પ્રેમ (રાગ) ઉપશાન્ત થવો, (ઉવસંતદાસે) દ્વેષ
ઉપશાન્ત થવો, (ઉવસંત દંસણ મોહણિજ્જે) દર્શનમોહનીયનું ઉપશાન્ત થવું,
(ઉવસંતમોહણિજ્જે) મોહનીય કર્મનું ઉપશાન્ત થવું, (ઉપસમિયા સમ્મત્તલઢ્ઢી)
ઔપશમિકી સમ્યક્ત્વલબ્ધિ, (ઉવસમિયા ચરિત્તલઢ્ઢી) ઔપશમિકી ચારિત્રલબ્ધિ
(ઉવસંત કસાય છઠ્ઠમત્થવીયરાગે) ઉપશાન્ત કષાય, છઠ્ઠસ્થવીતરાગ, (સે તં
ઉપસમનિષ્કળ્ણે) ઇત્યાદિ રૂપ આ ઉપશમનિષ્પન્ન ઔપશમિક ભાવ છે. (સે તં
ઉવસમિય) આ પ્રકારનું અન્ને પ્રકારના ઔપશમિક ભાવોનું સ્વરૂપ સમજવું.

ભાવાર્થ-આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે ઔપશમિક ભાવના સ્વરૂપનું નિરૂપણ
કયું છે. સૂત્રકારે ઉપશમ જનિત ઔપશમિક ભાવના એ પ્રકારે બતાવ્યા છે.
એક પ્રકારનો ઔપશમિક ભાવ એવો હોય છે કે જે માત્ર મોહનીયકર્મના

ભાવ વહ હૈ જો કેવલ મોહનીય કર્મ કે હી ઉપશમ સ્વરૂપ હોતા હૈ । તાત્પર્ય' હસ કથન કા યહ હૈ કિ કર્મો' કી દસ અવસ્થાઓ મેં એક ઉપશાન્ત અવસ્થાભી હૈ । જિન કર્મ પરમાણુઓ કી ઉદીરણા સંભવ નહીં અર્થાત્ જો ઉદીરણા કે અયોગ્ય હોતે હૈં વે ઉપશાન્ત કહલાતે હૈં । યહ અવસ્થા આઠોં કર્મો' મેં સમ્ભવિત હૈ । પ્રકૃત મેં હસ ઉપશાન્ત અવસ્થા સે પ્રયોજન નહીં હૈ । કિન્તુ અધઃ કરણ આદિ પરિણામોં સે જો મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ હોતા હૈ પ્રકૃત મેં ઉસી સે પ્રયોજન હૈ । હસીલિયે “મોહનીયસ્યૈવોપશમઃ” એસા પાઠ યહાં જાનના ચાહિયે કયોં કિ અન્યત્ર એસા હી પાઠ હૈ । મોહનીય કર્મ દર્શનમોહનીય કે ૩ ભેદોં ઓર ચરિત્ર મોહનીય ને ૨૫ ભેદોં કો લેકર ૨૮ પ્રકાર કા હૈ, હસ સમ્પૂર્ણ મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ, ઉપશમ શ્રેણી મેં હોતા હૈ, હસલિયે મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ રૂપ ઔપશમિક ભાવ ઉપશ્રેણી મેં હોના કહા ગયા હૈ । દુસરા-ઉપશમ નિબ્ધન ઔપશમિક ભાવ અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ સો ઉસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ મોહનીય કે ઉપશમ સે દર્શન મોહનીય ઓર ચારિત્ર મોહનીય વે દોનોં ઉપશાન્ત હો જાતે હૈં । હનકે ઉપશાન્ત હોને પર ક્રોધાદિક ભી ઉપશાન્ત હો જાતે હૈં હસ પ્રકાર યહ ઔપશમિક ભાવ કા વિવેચન હૈ । ॥સૂ૦૧૫૩॥

ઉપશમ ૩૫ હોય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે-કર્મોની દસ અવસ્થા-ઓમાંની એક ઉપશમ અવસ્થા પણ છે. જે કર્મપરમાણુઓની ઉદીરણા શક્ય હોતી નથી, એટલે કે જે કર્મપરમાણુઓ ઉદીરણાને માટે અયોગ્ય હોય છે, તેમને ઉપશાન્ત કહે છે આ અવસ્થાનો આઠ પ્રકારનાં કર્મોમાં સંભવ હોય છે. પ્રકૃતમાં (અહીં) આ ઉપશાન્ત અવસ્થાનું પ્રયોજન નથી, પરંતુ અધઃ-કરણ આદિ પરિણામોથી જે મોહનીય કર્મોનો ઉપશમ થાય છે, તેનું જ અહીં પ્રયોજન છે. તેથી જ “મોહનીયસ્યૈવોપશમઃ” આ પ્રકારનો પાઠ અહીં સમજવો જોઈએ કારણ કે અન્યત્ર એવો જ પાઠ આવે છે.

દર્શન મોહનીયકર્મના ત્રણ ભેદો અને ચારિત્રમોહનીયના પચીસ ભેદો મળીને મોહનીયકર્મના કુલ ૨૮ પ્રકાર છે આ સંપૂર્ણ મોહનીયકર્મનો ઉપશમ, ઉપશમ શ્રેણીમાં થાય છે તેથી મોહનીય કર્મના ઉપશમ ૩૫ ઔપશમિક ભાવ ઉપશમ શ્રેણીમાં હોવાનું કહેવામાં આવ્યું છે. બીજા પ્રકારનો જે ઉપશમનિબ્ધન ઔપશમિક ભાવ છે, તે અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-મોહનીયના ઉપશમથી દર્શનમોહનીય અને ચારિત્રમોહનીય, એ બન્ને ઉપશાન્ત થઈ જાય છે તેઓ ઉપશાન્ત થઈ જવાથી ક્રોધાદિક પણ ઉપશાન્ત થઈ જાય છે આ પ્રકારનું ઔપશમિક ભાવના સ્વરૂપનું વિવેચન અહીં કરવામાં આવ્યું છે. ॥સૂ૦૧૫૩॥

अथ क्षायिकं नाम निरूपयति-

मूलम्-से किं तं खइए? खइए दुविहे पणत्ते, तं जहा-
 खइए य खयनिप्फण्णे य । से किं तं खइए? खइए-अट्ठण्हं
 कम्मपयडीणं खए णं से तं खइए । से किं तं खयनिप्फण्णे ?
 खयनिप्फण्णे अणेगविहे पणत्ते, तं जहा-उप्पण्णणाणदंसणधरे
 अरहा जिणे केवली, खीण आभिणिशोहियणाणावरणे, खीण
 सुयणाणावरणे, खीण ओहिणाणावरणे, खीणमणपज्जवणाणाव-
 रणे, खीणकेवलणाणावरणे, अणावरणे, निरावरणे, खीणावरणे,
 णाणावरणिज्जकम्मविप्पमुक्के, केवलदंसी, सव्वदंसी, खीणनिहे,
 खीणनिदानिहे, खीणपयले, खीणपयलापयले, खीण थीणगिद्धी,
 खीणचक्खुदंसणावरणे, खीणअचक्खुदंसणावरणे खीण-
 ओहिदंसणावरणे, अणावरणे, निरावरणे, खीणावरणे,
 दरिसणावरणिज्जकम्मविप्पमुक्के, खीणसायावेयणिजे खीण-
 असायावेयणिजे, अवेयणे, निव्वेयणे खीणवेयणे,
 सुभासुभवेयणिज्जकम्मविप्पमुक्के, खीणकोहे, जाव खीण-
 लोहे, खीणपेजे, खीणदोसे, खीणदंसणमोहणिजे, खीण-
 चरित्तमोहणिजे, अमोहे, निम्मोहे, खीणमोहे, मोहणिज्जकम्म-
 विप्पमुक्के, खीणणेरइयाउए, खीणतिरिक्खजोणिआउए,
 खीणमणुस्साउए, खीणदेवाउए, अणाउए, निराउए, खीणा-
 उए, आउकम्मविप्पमुक्के, गइजाइसरीरंगोवंगबंधणसंघायण-
 संघयणोसंठाण अणेगबोदि विंदसंघायविप्पमुक्के, खीणसुभणामे,
 खीण असुभणामे, अणामे निण्णामे, खीणनामे, सुभासुभ-

णामकम्मविप्पमुक्के, खीणउच्चागोए, खीणणीयागोए, अगोए,
निग्गोए, खीणगोए, उच्चणीयगोत्तकम्मविप्पमुक्के, खीणदाणं-
तराए, खीणलाभंतराए, खीणभोगंतराए, खीणउवभोगंतराए,
खीणवीरियंतराए, अणंतराए, णिरंतराए, खीणंतराए, अंतराय-
कम्मविप्पमुक्के, सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिणिव्वुए, अंतगडे, सव्व-
दुक्खप्पहीणे । से तं खयनिष्फण्णे । से तं खइए ॥सू० १५४॥

छाया—अथ कोऽसौ क्षायिकः ? क्षायिको द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—क्षायि-
कश्च क्षयनिष्पन्नश्च । अथ कोऽसौ क्षायिकः ? क्षायिकः—अष्टानां कर्मप्रकृतीनां
स्रवः खेत्तु । सोऽसौ क्षायिकः । अथ कोऽसौ क्षयनिष्पन्नः ? क्षयनिष्पन्नोऽनेक-
विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः अरहा जिनः केवली क्षीणाभिनिबो-
धिकज्ञानावरणः क्षीणश्रुतज्ञानावरणः क्षीणावधिज्ञानावरणः क्षीणमनःपर्यवज्ञाना-
वरणः क्षीणकेवलज्ञानावरणः अनावरणः निरावरणः क्षीणावरणो ज्ञानावरणीयकर्म-
विप्रमुक्तः केवलदर्शी सर्वदर्शी, क्षीणनिद्रः क्षीणनिद्रानिद्रः क्षीणप्रचलः क्षीणप्रचला
प्रचलः क्षीणस्त्यानगृद्धिः, क्षीणचक्षुदर्शनावरणः क्षीणाचक्षुर्दर्शनावरणः क्षीणावधि-
दर्शनावरणः क्षीणकेवलदर्शनावरणः अनावरणः निरावरणः क्षीणावरणः दर्शनावर-
णीयकर्मविप्रमुक्तः । क्षीणसातावेदनीयः क्षीणासातावेदनीयः अवेदनो निर्वेदनः
क्षीणवेदनः शुभाशुभवेदनीयकर्मविप्रमुक्तः । क्षीणक्रोधो यावत् क्षीणलोभः क्षीणमेमा
क्षीणद्वेषः क्षीणदर्शनमोहनीयः क्षीणचारित्रमोहनीयः अमोहो निर्मोहः क्षीणमोहो
मोहनीयकर्मविप्रमुक्तः । क्षीण नैरयिकायुष्कः क्षीणतिर्यग्गोनिकायुष्कः क्षीणमनुष्या-
युष्कः क्षीणदेवायुष्कः अनायुष्को निरायुष्कः क्षीणायुष्कः आयुर्कर्मविप्रमुक्तो, गति
जातिशरीराङ्गोपाङ्गवन्धनसंघातनसंहननसंस्थानानेकशरीरवृन्दसंघातविप्रमुक्तः क्षी-
णशुभनामा क्षीणाशुभनामा अनामा निर्नामा क्षीणनामा शुभाशुभनामकर्मविप्रमुक्तः ।
क्षीणोच्चगोत्रः क्षीणनीचगोत्रः अगोत्रः निर्गोत्रः उच्चनीचगोत्रकर्मविप्रमुक्तः । क्षीणदा-
नान्तरायः क्षीणलाभान्तरायः क्षीणभोगान्तरायः क्षीणवीर्यान्तरायः अनन्तरायो
निरन्तरायः क्षीणान्तरायः अन्तरायकर्मविप्रमुक्तः । सिद्धो बुद्धो मुक्तः परिनिर्वृत्तः
चरन्तकृतः सर्वदुःखप्रहीणः । सोऽसौ क्षयनिष्पन्नः । सोऽसौ क्षायिकः ॥सू० १५४॥

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાયિકભાવનિરૂપણમ્

૬૫૨

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કોડમૌ ક્ષાયિકઃ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-ક્ષાયિકઃ ક્ષય એવ, ક્ષયેન નિષ્પન્નો વા ક્ષાયિકઃ । સ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । દ્વૈવિધ્યમેવાહ-તથા-ક્ષાયિકઃ ક્ષયનિષ્પન્નશ્ચ । તત્ર-ક્ષાયિકઃ સ્વલુ અઘ્ઠાનાં કર્મપ્રકૃતીનાં=જ્ઞાનાવરણીયાઘટ્ટનિક-કર્મપ્રકૃતીનાં ક્ષયઃ । ક્ષયનિષ્પન્નસ્તુ અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । અનેકવિધત્વમાહ-

અથ સૂત્રકાર ક્ષાયિક ભાવ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સે કિં તં સ્વહૃ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સ્વહૃ ?) હે ભદ્રન્ત ! વહ ક્ષાયિક કયા હૈ ?

ઉત્તર—(સ્વહૃ દુવિદ્દે પળ્લસે) ક્ષાયિક દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—
(તંજહા) (જૈસે-સ્વહૃ ય સ્વયનિષ્કળ્લે ય) એક ક્ષય રૂપ ક્ષાયિક ઓર દુસરા ક્ષય નિષ્પન્ન । (સે કિં તં સ્વહૃ) હે ભદ્રન્ત ! વહ ક્ષાયિક કયા હૈ ? (અટુળ્લં કર્મપયડીળં સ્વહૃ) આઠ કર્મ પ્રકૃતિયોં કા જો ક્ષય હૈ વહી ક્ષાયિક હૈ । (સેતં સ્વહૃ) હસ પ્રકાર વહ યહ ક્ષાયિક હૈ (સે કિં તં સ્વયનિષ્કળ્લે) હે ભદ્રન્ત ! વહ ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક કયા હૈ ? (સ્વયનિષ્કળ્લે અળેગવિદ્દે પળ્લસે),

ઉત્તર—ક્ષય નિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવ અનેક પ્રકાર કા હૈ । (તંજહા) જૈસે—(ઉપ્પળ્લણાળદંસળ્લધરે અરહા જિળે કેવલી) ઉત્પન્ન જ્ઞાન દર્શન કો

હવે સૂત્રકાર ક્ષાયિક ભાવનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં સ્વહૃ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સ્વહૃ ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રકાન્ત ક્ષાયિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સ્વહૃ દુવિદ્દે પળ્લસે) ક્ષાયિક ભાવ બે પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(સ્વહૃ ય સ્વયનિષ્કળ્લે ય) (૧) ક્ષય રૂપ ક્ષાયિક અને (૨) ક્ષયનિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં સ્વહૃ ?) હે ભગવન્ ! તે ક્ષાયિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અટુળ્લં કર્મપયડીળં સ્વહૃ) આઠ કર્મપ્રકૃતિઓના ક્ષયનું નામ જ ક્ષાયિક છે. (સે તં સ્વહૃ) ક્ષાયિકનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં સ્વયનિષ્કળ્લે ?) હે ભગવન્ ! ક્ષાયિક ભાવના બીજા કોઈ રૂપ ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સ્વયનિષ્કળ્લે અળેગવિદ્દે પળ્લસે) ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિકભાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે... (ઉપ્પળ્લણાળદંસળ્લધરે અરહા જિળે કેવલી) ઉત્પન્ન જ્ઞાનદર્શનધારી અહંતા જિન કેવલી ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે. એવી

તથા-ઉત્પન્નજ્ઞાનદર્શનધર:-ઉત્પન્નયો:-અવનીતમહાદર્શમણ્ડલમભાવત્ સકલ
 દ્વાવરણાપગમાદમિવ્યક્તયોઃ જ્ઞાનદર્શનયોર્ધર:-ધારકઃ, અરહા:-નાસ્તિ રહઃ=
 રહસ્યં યસ્યાસૌ અરહા:-અવિદ્યમાનરહસ્યઃ, નાસ્પ કિંચિદપિ ગોપ્યમસ્તીતિ ભાવઃ
 જિનઃ-આવરણશ્ચત્રુજેતૃત્વાત્, કેવલી-કેવલં-સંપૂર્ણ જ્ઞાનમસ્યાસ્તીતિ કેવલી-
 કેવલજ્ઞાનવાન્, ક્ષીણામિનિબોધિકજ્ઞાનાવરણઃ-ક્ષીણમામિનિબોધિકજ્ઞાનાવરણ

ધારણ કરનેવાલે અર્હંત જિન કેવલી-જિસ પ્રકાર-મલ કે અપગમ સે
 આદર્શ મણ્ડલ કી પ્રભા મેં પદાર્થ પ્રતિબિમ્બિત હોને લગતે હૈં, ઉર્સ
 પ્રકાર-મૂલરૂપ જ્ઞાનાવરણ ઔર દર્શનાવરણ કર્મોં કે વિનાશ સે ઉત્પન્ન
 નિર્મલ અનન્ત જ્ઞાન ઔર અનન્ત દર્શન મેં ત્રિકાલવર્તિ સમસ્ત જ્ઞેય
 જલકને લગતે હૈં એસે જ્ઞાન ઔર દર્શન કો જો ધારણ કરતે હૈં તથા જો
 અરહા-જિનકે લિયે-કોઈ મી જગત કા પદાર્થ ગોપ્ય નહીં હૈં। આવરણ
 રૂપ શત્રુ કે વિજેતા હોને સે જો જિન હૈં, તથા જિનકા જ્ઞાન સંપૂર્ણ હૈં,
 હસલિયે જો કેવલી હૈં, યહાં કેવલ શબ્દ કા અર્થ સમ્પૂર્ણ જ્ઞાન હૈં। હસ
 સમ્પૂર્ણ જ્ઞાન રૂપ કેવલ જ્ઞાન સે જો યુક્ત હૈં એસે ઘે ઉત્પન્ન જ્ઞાનદર્શન
 કો ધારણ કરનેવાલે અરહા જિન કેવલી ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવરૂપ હૈં।

અવ સૂત્રકાર પ્રત્યેક કર્મ કે નષ્ટ હોને સે જો ૨ નામ હોતે હૈં ઊનકા યહાં
 સે કથન કરતે હૈં-યહ કથન સિદ્ધ પરમેષ્ટી કી અપેક્ષા સે જાનના ચાહિયે-
 કયોં કિ વે હી પ્રત્યેક કર્મ કે ક્ષય સે ક્ષાયિક ભાવ રૂપ નિષ્પન્ન હોતે હૈં।

રીતે અરીસા ઉપરનો મેલ દૂર કરી નાખવામાં આવે તો અરીસામાં પદાર્થનું
 સ્પષ્ટ પ્રતિબિંબ દેખાય છે, એજ પ્રમાણે જ્ઞાનાવરણ અને દર્શનાવરણ રૂપ
 કર્મ મળ દૂર થઈ જવાને લીધે ઉત્પન્ન થયેલા નિર્મળ, અનંત જ્ઞાન અને
 અનંત દર્શનમાં ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થો સ્પષ્ટ રૂપે દેખવા માંડે છે.
 એવા જ્ઞાન અને દર્શનના ધારક અર્હંત જિન કેવલી ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક
 ભાવ રૂપ છે. ‘અરહા’-જેમને માટે જગતનો કોઈ પણ પદાર્થ ગોપ્ય
 (અદ્ય) નથી અથવા જેમણે કામ, ક્રોધાદિ શત્રુઓનો નાશ કરી નાખ્યો
 છે એવાં તીર્થંકર ભગવાનોને અરહા અથવા અર્હંત કહે છે. કર્મારિ રૂપ
 શત્રુઓ પર વિજય મેળવનારા હોવાથી તેમને જિન કહ્યા છે- તેમનું જ્ઞાન
 સંપૂર્ણ હોવાથી તેમને કેવલી કહ્યા છે કેવલજ્ઞાન એટલે સંપૂર્ણજ્ઞાન.

હવે સૂત્રકાર પ્રત્યેક કર્મનો નાશ થવાથી જે જે નામ થાય છે, તેમનું
 નિરૂપણ કરે છે આ કથન સિદ્ધ પરમાત્માની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે
 એમ સમજવું, કારણ કે તેમના પ્રત્યેક કર્મનો ક્ષય થવાને કારણે તેઓ જ
 ક્ષાયિક ભાવ રૂપે નિષ્પન્ન થાય છે.

મનુષ્યોગચ્છિન્નિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાયિકભાવનિરૂપણમ્

૭૦૧

યસ્ય સ તથા, એવં-ક્ષીણશ્રુતાવધિમનઃપર્યવકેવલજ્ઞાનાવરણરૂપાણિ ચત્વારિ પદાનિ
બોધ્યાનિ । તથા-અનાવરણઃ-અવિદ્યમાનમાવરણં યસ્ય ત તથા, વિમલપ્રકાશવત્વાત્
નિર્મલાકાશસ્થિતચન્દ્રવત્ । નિરાવરણઃ-નિર્ગતમ્ આવરણં યસ્ય સ તથા સમસ્તાવરણ-

જ્ઞાનાવરણ કર્મ પાંચ પ્રકાર કા હૈ—

૧ મતિ જ્ઞાનાવરણ, શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, અવધિજ્ઞાનાવરણ, મનઃપર્યવ-
જ્ઞાનાવરણ ઓર કેવલજ્ઞાનાવરણ જીવ જબ અહંત જિન કેવલી બનતા
હૈ, તબ હસકા સમ્પૂર્ણ જ્ઞાનાવરણકર્મ નષ્ટ હો જાતા હૈ—હસલિયે
(સ્ત્રીણ આભિણિબોહિયણાવારણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ આભિનિબોધિક
જ્ઞાનાવરણ જિસકા (સ્ત્રીણસુયણાવારણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ શ્રુતજ્ઞાના-
વરણ કર્મ જિસકા (સ્ત્રીણઓહિયણાવારણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ અવધિ
જ્ઞાનાવરણ કર્મ જિસકા (સ્ત્રીણ મળપજ્જવણાવારણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ
મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ જિસકા, (સ્ત્રીણકેવલણાવારણે) ક્ષીણ હો ગયા
હૈ કેવલજ્ઞાનાવરણ જિસકા, એસા હોને કે કારણ ક્ષીણાભિનિબોધિક
જ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણ શ્રતજ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણાવધિજ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણ મનઃપર્યવ-
જ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણ કેવલજ્ઞાનાવરણ યે મિત્ર ૨ નામ સમસ્ત જ્ઞાનાવર-
ણીય કર્મ કે ક્ષય હો જાને કી અપેક્ષા સે નિષ્પન્ન હો જાતે હૈ । ઇસી
પ્રકાર સે (અણાવરણે નિરાવરણે, સ્ત્રીણાવરણે, ણાણાવરણિજ્જકમ્મવિપ્પ-
સુકે) જબ સમસ્ત આવરણ કર્મ નષ્ટ હો જાતા હૈ તબ વહ આત્મા

જ્ઞાનાવરણ કર્મ પાંચ પ્રકારનાં છે—

(૧) મતિજ્ઞાનાવરણ, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, (૩) અવધિજ્ઞાનાવરણ,
(૪) મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ અને (૫) કેવલજ્ઞાનાવરણ.

જીવ જ્યારે અહંત જિન કેવલી બને છે, ત્યારે તેના સમસ્ત જ્ઞાનાવ-
રણ કર્મોના નાશ થઈ જાય છે, તેથી તે (સ્ત્રીણ આભિણિબોહિય ણાણાવરણે)
ક્ષીણ આભિનિબોધિક જ્ઞાનાવરણવાળો, (સ્ત્રીણ સુયણાવારણે) ક્ષીણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણ
કર્મવાળો, (સ્ત્રીણ ઓહિયણાવારણે) ક્ષીણ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મવાળો, (સ્ત્રીણ
મળપજ્જવણાવારણે) ક્ષીણ મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ કર્મવાળો અને (સ્ત્રીણ કેવલ-
જ્ઞાનાવરણે) ક્ષીણ કેવલજ્ઞાનાવરણ કર્મવાળો થઈ જાય છે તે કારણે સમસ્ત
જ્ઞાનાવરણીય કર્મોના ક્ષય થઈ જવાને કારણે તેના આ પાંચ નામો નિષ્પન્ન
થાય છે. (૧) ક્ષીણાભિનિબોધિકજ્ઞાનાવરણ, (૨) ક્ષીણશ્રુતજ્ઞાનાવરણ, (૩)
ક્ષીણાવધિજ્ઞાનાવરણ, (૪) ક્ષીણ મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ અને (૫) ક્ષીણ કેવલજ્ઞા-
નાવરણ એજ પ્રમાણે (અણાવરણે, નિરાવરણે, સ્ત્રીણાવરણે, ણાણાવરણિજ્જકમ્મ-
વિપ્પસુકે) જ્યારે સમસ્ત આવરણ કર્મોના નાશ થઈ જાય છે ત્યારે તે આત્મા

રહિતત્વાત્ । વિગતમલસ્વર્ણવત્, ક્ષીણાવરણ:-ક્ષીણો નિઃસત્તાકીભૂતઃ આવરણો
યસ્ય સ તથા, અપુનર્માવાવરણરહિતત્વાત્ । અપોકૃતમલાવરણજાત્યમણિવત્ । ઉપ-
સંદરભ્નાહ-જ્ઞાનાવરણીયકર્મવિપ્રમુક્તઃ-જ્ઞાનાવરણીયેન કર્મણા વિવિધૈઃ=અનેકમકારૈઃ
પ્રકર્ષેણ મુક્તઃ । एषां पदानां नयमतभेदेन भेदो बोध्यः । इत्थं ज्ञानावरणीयक्षया-
पेक्षाणि नामान्युक्तानि ।

નિર્મલ આકાશ મેં સ્થિતપૂર્ણ ચન્દ્ર કે જૈસા નિર્મલ પ્રકાશવાલા હો જાતા
હૈં હસલિયે અવિદ્યમાન આવરણવાલા હોને સે હસકા “અનાવરણ”
એસા નામ હો જાતા હૈં । અતઃ અનાવરણ યહ હસકી નામ રૂપ અવસ્થા
આવરણ કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હોને કે કારણ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ હૈં । આગે
કિસી ખી પ્રકાર કે આવરણ કર્મ કા સંબન્ધ ફિર હસ આત્મા સે હોત્તા
મહીં હૈં હસલિયે વહ નિરાવરણ અવસ્થા વિશિષ્ટ બન જાતા હૈં । તક
હસકા નામ “નિરાવરણ” એસા હો જાતા હૈં । હસી પ્રકાર વહ નિઃસત્તા
કી મૂત આવરણવાલા હોને કે કારણ ક્ષીણ મલાવરણવાલે જાત્યમણિ
કે જૈસા “ક્ષીણાવરણ” હસ નામવાલા બન જાતા હૈં । હસ પ્રકાર વિવિધ
પ્રકાર સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ દ્વારા વિપ્રમુક્ત બને હુણ હસ આત્મા કે યે
પૂર્વોક્ત સમસ્ત નામ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષય કી અપેક્ષા સે કહે મમે
હૈં । યદ્યપિ શબ્દનયકી અપેક્ષા સે હનમેં કોઈ ખી ભેદ નહીં હૈં હસકિમે

નિર્મળ આકાશમાં રહેલા પૂર્ણચન્દ્રના સમાન વિમલ પ્રકાશવાળો બની જાય
છે. આ રીતે અવિદ્યમાન આવરણવાળો હોવાને લીધે તેનું “અનાવરણ” નામ
નિષ્પન્ન થાય છે આ ‘અનાવરણ’ નામ રૂપ તેની અવસ્થા આવરણના ક્ષયથી
ઉત્પન્ન થયેલી હોવાને કારણે ક્ષાયિક ભાવરૂપ ગણાય છે.

અવિદ્યમાં કોઈ પણ પ્રકારનું આવરણ કર્મ તે આત્માને લાગવાનું
નથી, તેથી તે આત્મા નિરાવરણ અવસ્થા સંપન્ન બની જાય છે. તેથી તેનું
‘નિરાવરણ’ નામ નિષ્પન્ન થઈ જાય છે એજ પ્રમાણે તે આત્મા નિઃસત્તા-
ભૂત આવરણવાળો (આવરણના અસ્તિત્વ વિનાનો) બની જવાને કારણે ક્ષીણ
મલાવરણવાળા ઉત્કૃષ્ટ મણિની જેમ “ક્ષીણાવરણ” આ નામવાળો બની જાય
છે આ પ્રકારે વિવિધ પ્રકારે જ્ઞાનાવરણીય કર્મમાંથી વિપ્રમુક્ત થયેલા તે
આત્માને પૂર્વોક્ત સમસ્ત નામો જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ કહે-
વામાં આવ્યાં છે જો કે શબ્દનયની અપેક્ષાએ તે નામો વચ્ચે કોઈ પણ ભેદ
ન હોવાને કારણે આ શબ્દોને પર્યાયવાચી શબ્દો જ ગણી શકાય છે, પરંતુ

અથ દર્શનાવરણીયક્ષયાપેક્ષાણિ નામાન્યાહ-કેવલદર્શી-કેવલેન=ક્ષીણાવરણેન દર્શનેન પચ્યતીતિકેવલદર્શી-સર્વ પચ્યતીતિ સર્વદર્શી-ક્ષીણદર્શનાવરણત્વાત્ સકલ-પદાર્થદર્શી। एवं क्षीणनिद्रादीनि पञ्चनामानि तथा दर्शनावरणचतुष्कक्षयसम्भ-वीन्यपराण्यपि क्षीणचक्षुर्दर्शनावरणादीनि नामानि बोध्यानि। तत्र निद्रापञ्चक-लक्षणमेवमवगन्तव्यम्-

ये पर्यायवाची शब्द हैं। फिर भी समझिरूढनय की अपेक्षा से इनके वाच्यार्थ में भिन्नता होने से इनमें भेद है, ऐसा जानना चाहिये।

अब सूत्रकार दर्शनावरणीय कर्म के क्षय की अपेक्षा से जायमान नामों को कहते हैं-(केवलदंसी) आत्मा से जब दर्शनावरणीय कर्म सर्वथा निर्मूल हो जाता है, तब वह आत्मा, क्षीणावरणवाले दर्शन से, सामान्यरूप में समस्त जेथों को देखता है, इसलिये केवलदर्शी वह कहलाने लगता है। (सर्वदंसी) क्षीण दर्शनावरणवाला होने से समस्त पदार्थों का वह दृष्टा बन जाता है। इसलिये वह सर्वदर्शी कहलाता है। (क्षीणनिद्रे, क्षीणनिद्रानिद्रे, क्षीणपयले, क्षीणपयलापयले, क्षीणधीन-गिद्धी, क्षीणचक्षुदंसणावरणे, क्षीण अचक्षुदंसणावरणे, क्षीण ओहि-दंसणावरणे क्षीण केवलदंसणावरणे अणावरणे, निरावरणे, क्षीणा-वरणे) निद्रादर्शनावरणीय कर्म नष्ट होने से वह क्षीण निद्र हो जाता है; निद्रानिद्रा दर्शनावरणीयकर्म निर्मूल होने से क्षीणनिद्रानिद्र, प्रचला दर्शनावरणीय कर्म नष्ट होने से क्षीण प्रचल,

समक्षिरूढ नयनी अपेक्षाये तेमना वाच्यार्थभां भिन्नता होवाना कारणे तेमनी वच्ये लेह (अंतर-तक्षवत) छे, ओम समजबु ओधओ.

હવે સૂત્રકાર દર્શનાવરણીય કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ જે નામે નિષ્પન્ન થાય છે તેમનું કથન કરે છે-(કેવલદંસી) આત્મા પરથી જ્યારે દર્શનાવરણીય કર્મો સર્વથા નિર્મૂળ થઈ જાય છે ત્યારે તે આત્મા, ક્ષીણાવરણવાળા દર્શન વડે સામાન્ય રૂપે સમસ્ત જોય પદાર્થોને દેખી શકે છે, તેથી તેને 'કેવલદર્શી' કહેવામાં આવે છે. (સર્વદંસી) ક્ષીણદર્શનાવરણવાળો થઈ જવાને કારણે તે આત્મા સમસ્ત પદાર્થોનો દ્રષ્ટા બની જાય છે, તેથી તેને "સર્વદર્શી" કહેવામાં આવે છે. (ક્ષીણનિદ્રે, ક્ષીણનિદ્રા નિદ્રે, ક્ષીણપયલે, ક્ષીણપયલાપયલે, ક્ષીણ ક્ષીણગિદ્ધી, ક્ષીણ ચક્ષુદંસણાવરણે, ક્ષીણ અચક્ષુદંસણાવરણે, ક્ષીણ ઓહિદંસણાવરણે, ક્ષીણ કેવલદંસણાવરણે, અણાવરણે નિરાવરણે, ક્ષીણાવરણે) તે આત્માના નિદ્રા-વરણીય કર્મનો નાશ થઈ જવાને લીધે તે 'ક્ષીણનિદ્ર' કહેવાય છે, તેના નિદ્રાનિદ્રા દર્શનાવરણીય કર્મ નિર્મૂળ થઈ જવાથી તે 'ક્ષીણનિદ્રાનિદ્ર' કહેવાય છે. તેના પ્રચલા દર્શનાવરણીય કર્મ નષ્ટ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણ-

“સુહ પહિવોહા નિદ્રા દુહપહિવોહા ય નિદ્રનિદ્રાય ।
 પયલા હોઈ ઠિયસ્સ ડ, પયલાપયલા ય ચંદ્રમઓ ॥૧॥
 અસંકિલ્હિકમ્માણુ વેયણો હોઈ યીણગિદ્ધી ય ।
 મહનિદ્રા દિળચિંતિયવાતાર પસાહણી પાયં ॥૨॥”

છાયા—સુખપ્રતિવોધા નિદ્રા દુઃસ્વપ્રતિવોધા ચ નિદ્રાનિદ્રા ચ ।
 પ્રચલા ભવતિ સ્થિતસ્ય પ્રચલાપચલા ચ ચક્લ્લમતઃ ॥૧॥
 અતિસંક્લિષ્ટકર્માનુવેદનો ભવતિ સ્થાનગૃદ્ધિસ્તુ ।
 મહાનિદ્રા દિનચિન્તિતવ્યાપાર પ્રસાધનીપ્રાયઃ ॥૨॥ઈતિ ।

પ્રચલા પ્રચલા દર્શનાવરણીય કર્મ નષ્ટ होने से क्षीण પ્રચલાપ્રચલા, સ્થાનગૃદ્ધિ દર્શનાવરણીય કર્મ ક્ષીણ होने से ક્ષીણ સ્થાનગૃદ્ધિ ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય કર્મ નષ્ટ होने से ક્ષીણ ચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ કર્મનષ્ટ होने से ક્ષીણ અચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અવધિદર્શનાવરણ કર્મ નષ્ટ होने से ક્ષીણાવધિદર્શનાવરણ, કેવલદર્શનાવરણ કર્મ નષ્ટ होने से ક્ષીણ કેવલદર્શનાવરણ કહલानે લગતા है । अर्थात् दर्शनावरण કર્મ के सर्वथा विगम क्षय हो जाने से उस आत्मा के ये पूर्वोक्त नाम निष्पन्न हो जाते हैं । निद्रा પંચક का लक्षण इस प्रकार से है—सुहपडिबोहा—इत्यादि—जिस कर्म के उदय से सुख पूर्वक जाग सके ऐसी निद्रा आवे वह निद्रा दर्शनावरण कर्म है । जिसके उदय से निद्रा से जागना अत्यन्त दुष्कर हो वह निद्रानिद्रा दर्शनावरण-

પ્રચલ 'કહેવાય છે. તેના પ્રચલાપ્રચલા દર્શનાવરણીય કર્મ' નષ્ટ થઈ જવાથી તેને ક્ષીણપ્રચલાપ્રચલ કહેવાય છે, તેના સ્થાનગૃદ્ધિ દર્શનાવરણીય કર્મને ક્ષય થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણસ્થાનગૃદ્ધિ' કહેવાય છે. તે આત્માના ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય કર્મને નાશ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણચક્ષુર્દર્શનાવરણ' કહેવાય છે. તેના અચક્ષુર્દર્શનાવરણ કર્મને નાશ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણઅચક્ષુર્દર્શનાવરણ' કહેવાય છે. તેના અવધિદર્શનાવરણ કર્મને ક્ષય થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણાવધિદર્શનાવરણ' કહેવાય છે તેના કેવલ દર્શનાવરણ કર્મને નાશ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણકેવલદર્શનાવરણ' કહેવાય છે એટલે કે દર્શનાવરણ કર્મને સંપૂર્ણતઃ નાશ થઈ જવાને કારણે તે આત્માના પૂર્વોક્ત નામો નિષ્પન્ન થાય છે.

નિદ્રાપંચકનાં લક્ષણ નીચે પ્રમાણે સમજવાં—

“સુહપહિવોહા” ઇત્યાદિ—જે કર્મના ઉદયથી સુખપૂર્વક જાગી શકાય એવી નિદ્રા આવી જાય છે, તે કર્મને નિદ્રાદર્શનાવરણ કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી નિદ્રામાંથી જાગવાનું અત્યંત દુષ્કર થઈ જાય છે, તે કર્મને નિદ્રાનિદ્રા

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાયિકભાવનિરૂપણમ્

૭૦૬

તથા-અનાવરણાદિશબ્દાઃ પૂર્વે જ્ઞાનાવરણાભાવાપેક્ષયા પ્રોક્તાઃ, અત્રતુ દર્શનાવરણા-
ભાવાપેક્ષયા बोध्याः । उपसंहरन्नाह-दर्शनावरणीयकर्मविप्रमुक्त इति ।

કર્મ છે । जिस कर्म के उदय से बैठे २ या खड़े २ ही नींद आ जावे वह प्रचलादर्शनावरण कर्म है । जिस कर्म के उदय से चलते २ ही निद्रा आ जावे वह प्रचला प्रचला दर्शनावरण कर्म है । स्थानगृद्धि यह महानिद्रा है । इस निद्रावस्था में, जागृत अवस्था में सोचे हुए काम करने का सामर्थ्य प्रकट हो जाता है । जिस जीव को अति संक्लिष्ट कर्मका उदय होता है उसी जीव के यह स्थानगृद्धि होती है । इस निद्रा में सहज बल से कई अनेक गुण अधिक बल प्रकट होता है । -
પહિલે जिस પ્રકાર જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે અભાવ કો લેકર અનાવરણ નિરાવરણ, ક્ષીણાવરણ, इन शब्दों का अर्थ प्रकट किया गया है उसी प्रकार यहां पर दर्शनावरण कर्म के अभाव की अपेक्षा लेकर इन शब्दों का अर्थ लगा लेना चाहिये । (दरिसणावरणिज्जकम्मविप्पमुक्के इस प्रकार ये पूर्वोक्त नाम दर्शनावरणीय कर्म के क्षय की अपेक्षा से सूत्रकार ने कहे हैं ।

દર્શનાવરણુ કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી બેઠાં બેઠાં કે ઊભાં ઊભાં નિદ્રા આવી જાય છે, તે કર્મને પ્રચલાદર્શનાવરણુ કર્મ કહે છે. જે કર્મના ઉદયથી ચાલતાં ચાલતાં નિદ્રા આવી જાય છે, તે કર્મને પ્રચલાપ્રચલા દર્શનાવરણુ કર્મ કહે છે 'સ્થાનગૃદ્ધિ' આ પદ મહાનિદ્રાનું વાચક છે. આ પ્રકારની નિદ્રાવસ્થામાં જાગૃત અવસ્થામાં જે કામો કરવાનો વિચાર કરવામાં આવ્યો હોય તે કામ કરવાનું સામર્થ્ય પ્રકટ થઈ જાય છે. જે જીવમાં અતિ સંક્લિષ્ટ કર્મનો ઉદય હોય છે, એજ જીવમાં આ સ્થાનગૃદ્ધિ દર્શનાવરણુનો સદ્ભાવ રહે છે સ્વાભાવિક બળ કરતાં કેટલાય ગણાં અધિક બળનો આ પ્રકારની નિદ્રામાં અનુભવ થાય છે.

આગળ જ્ઞાનાવરણુ કર્મના અભાવની અપેક્ષાએ અનાવરણુ, નિરાવરણુ અને ક્ષીણાવરણુ, આ પદોનો અર્થ પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે એજ પ્રકારે અહીં દર્શનાવરણુ કર્મના અભાવને અનુલક્ષીને અનાવરણુ, નિરાવરણુ અને ક્ષીણાવરણુનો અર્થ સમજી લેવો જોઈએ.

(दरिसणावरणिज्जकम्मविप्पमुक्के) सूत्रकारे दर्शनावरणीय कर्मना क्षयनी अपेक्षाએ કેવળદર્શીથી લઈને નિરાવણુ પર્યન્તના ઉપયુક્ત નામો પ્રકટ કર્યા છે.

इत्थं दर्शनावरणीयक्षयापेक्षया नामान्युक्त्वा सम्प्रति वेदनीयकर्मक्षयापेक्षाणि नामानि प्रतिपादयितुमाह—‘स्त्रीणसायावेयणिज्जे’ इत्यादि। वेदनीयं द्विविधं भवति—सातम् असातं च, तत्र—सातं मीत्युत्पादकम्, असातम् अमीत्युत्पादकम्, तत्क्षये क्षीणसातावेदनीयः क्षीणासातावेदनीयश्च भवति। तथा—अवेदनः=वेदना-रहितः—अयम् अल्पवेदनोऽपि व्यवह्रीयते। तथा—निर्वेदनः=सर्ववेदनाभ्यो रहितः। कालान्तरेऽपि वेदना न भवतीति सूचयितुमाह—क्षीणवेदनः—क्षीणा=अपुनर्भाविताया

અવ વે વેદનીય કર્મ કે ક્ષય કી અપેક્ષા સે જાયમાન નામોં કો કહતે હૈ—

(સ્ત્રીણસાયાવેયણિજ્જે સ્ત્રીણ અસાયાવેયણિજ્જે) વેદનીય કર્મ દો પ્રકાર કા હૈ—૧. સાતા વેદનીય કર્મ ૨. અસાતા વેદનીય કર્મ—જિસ કર્મ કે ઉદય સે જીવ કો સુખ કા અનુભવ હોં વહ સાતા વેદનીય ૩. જિસ કર્મ કે ઉદય સે પ્રાણી કો દુઃખ કા અનુભવ હો વહ અસાતા વેદનીય હૈ। इन दोनों प्रकार के वेदनीय कर्म के क्षय होने पर जीव क्षीणसातावेदनीय और क्षीणासातावेदनीय हो जाता है। (अवेयणे, निव्वेयणे) वेदनारहित हो जाता है। अवेदन शब्द का अर्थ अल्प वेदनावाला ऐसा भी होता है। क्योंकि अवेदन में जो “अ” है वह ईषदर्थ—में भी प्रयुक्त होता है। इसलिये निर्वेदन—सर्व प्रकार की वेदना से वह रहित बन जाता है। (स्त्रीणवेयणे) कालान्तर में भी वेदना इस जीव को नहीं होती है—इसलिये क्षीणवेदन अर्थात् अपुनर्भाविवेदन हो

હવે વેદનીય કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ જે નામો નિબંધન થાય છે, તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—(સ્ત્રીણસાયાવેયણિજ્જે સ્ત્રીણ અસાયાવેયણિજ્જે) વેદનીય કર્મના બે પ્રકાર પડે છે—(૧) સાતાવેદનીય કર્મ અને (૨) અસાતાવેદનીય કર્મ જે કર્મના ઉદયથી જીવને સુખનો અનુભવ થાય છે, તે કર્મને સાતાવેદનીય કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી જીવને દુઃખનો અનુભવ થાય છે, તે કર્મને અસાતાવેદનીય કર્મ કહે છે આ બંને પ્રકારના વેદનીય કર્મોના ક્ષય થઈ જવાથી જીવ “ક્ષીણસાતાવેદનીય” અને “ક્ષીણાસાતાવેદનીય” બની જાય છે. (અવેયણે, નિવ્વેયણે) વેદનીય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી આત્મા વેદનારહિત બની જાય છે. “અવેદન” પદ અદ્યપવેદનાનું પણ વાચક છે, કારણ કે ‘અવેદન’ પદમાં જે ‘અ’ ઉપસર્ગ છે તે અદ્યપતાના અર્થમાં પણ પ્રયુક્ત થાય છે. તેથી સૂત્રકારે ‘નિર્વેદન’ પદના પ્રયોગ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરી છે કે વેદનીય કર્મનો સર્વથા ક્ષય થવાથી આત્મા સર્વપ્રકારની વેદનાથી રહિત થઈ જાય છે. (સ્ત્રીણવેયણે) કાલાન્તરે (ભવિષ્યમાં) પણ તે જીવને વેદનાનો અનુભવ કરવો પડતો નથી તેથી તે જીવને “ક્ષીણવેદન” કહ્યો છે.

મૈત્રેયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાયિકભાવનિરૂપણમ્

૭૦૭

સર્વથા વિનશ્ચા વેદના યસ્ય સ તથા । एतदुपसंहरन्नाह—शुभाशुभवेदनीयकर्मविप्रमुक्त इति । अथ मोहनीयक्षयापेक्षाणि नामानि प्ररूपयितुमाह—‘स्त्रीणकोहे’ इत्यादि । मोहनीयं द्विविधं भवति—दर्शनमोहनीयं चारित्रमोहनीयं च । तत्र—दर्शनमोहनीयं सम्यक्त्वमिश्र मिथ्यात्वभेदात् त्रिविधं भवति । चारित्रमोहनीयं तु क्रोधादिकषाय हास्यादि नोकषायभेदात् द्विविधं भवति । एतत्क्षये यानि नामानि भवन्ति तान्याह सूत्रकारः—क्षीणक्रोधो यावत् क्षीणलोभः । एतानि नामानि सुबोध्यानि । तथा—क्षीणप्रेमा—क्षीणं प्रेम=मायालोभौ यस्य स तथा—अपगतमायालोभ इत्यर्थः ।

જાતા હૈ, (સુભાસુભવેગણિજ્ઞકર્મવિપ્પમુક્તકે) શુભ ઓર અશુભવેદનીય કર્મ સે વિપ્રમુક્ત હુએ उस जीव के ये पूर्वोक्त क्षीण सातावे-दनीय आदि नाम हैं ।

અથ સૂત્રકાર મોહનાય કર્મ કે ક્ષય સે જો નામ હોતે હૈ ઉન્હે' કહતે હૈ—

(સ્ત્રીણ કોહે જાવ સ્ત્રીણલોહે) મોહનીય કર્મ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ એક દર્શન મોહનીય ઓર દૂસરા ચારિત્ર મોહનીય—इनमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्वमिश्रमिथ्यात्व और मिश्र के भेद से दर्शन मोहनीय तीन प्रकार का है— तथा चारित्र मोहनीय, क्रोधादिकषाय और हास्यादिक नोकषाय के भेद से दो प्रकार का है—इस दोनों प्रकार के मोहनीय के क्षय होने पर जो नाम होते हैं उन्हे सूत्रकारने क्षीण क्रोध यावत् क्षीण लोभ इन शब्दों द्वारा प्रकट किया है । ये नाम सुबोध्य हैं । (સ્ત્રીણપેજ્જે) પ્રેમ શબ્દ

(સુભાસુભવેગણિજ્ઞ કર્મવિપ્પમુક્તકે) શુભ અને અશુભ વેદનીય કર્મથી વિમુક્ત થયેલા તે જીવના ક્ષીણસાતાવેદનીય આદિ પૂર્વોક્ત નામો સમજવાં.

હવે સૂત્રકાર મોહનીય કર્મના ક્ષયથી આત્માનાં જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે તેમનું નિરૂપણ કરે છે—

(સ્ત્રીણ કોહે જાવ સ્ત્રીણ લોહે) મોહનીય કર્મના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પડે છે—(૧) દર્શનમોહનીય અને (૨) ચારિત્ર મોહનીય મિથ્યાત્વ, સમ્યક્ત્વ-મિથ્યાત્વ અને મિશ્રના લેહથી દર્શનમોહનીય કર્મ ત્રણ પ્રકારના કહ્યાં છે. ક્રોધાદિક કષાય અને હાસ્યાદિક નોકષાયના લેહથી ચારિત્ર મોહનીય કર્મ બે પ્રકારનું કહ્યું છે. આ બંને પ્રકારના મોહનીય કર્મના આત્મામાંથી ક્ષય થઈ જવાથી આત્માનાં નીચેનાં નામો નિષ્પન્ન થાય છે— ક્ષીણક્રોધ, ક્ષીણમાન, ક્ષીણમાયા અને ક્ષીણલોભ આ નામોના અર્થ સુગમ હોવાથી તેમના વિષે વધુ સ્પષ્ટતા કરવાની જરૂર નથી. (સ્ત્રીણ પેજ્જે) પ્રેમ

ક્ષીણદ્રેષઃ=ક્ષીણો દ્રેષઃ=ક્રોધમાર્ગી यस્ય સ તથા-અપગત ક્રોધમાન इत्यर्थः । તથા-
અમોહઃ-અપગતમોહનીયકર્મા, અયં ચ અલ્પમોહોદયોઽપિ લોકે વ્યવહ્રિયતે ।
વચઃ-નિર્મોહઃ-નિર્ગતો મોહાન્નિર્મોહઃ । યતોઽમોહઃ, અત एव નિર્મોહો बोध्यः ।
નિર્મોહસ્તુ કાલાન્તરે મોહોદયયુક્તોઽપિ સ્યાદુપશાન્તમોહવદિતિ મત્વયો મા મઘ-
ત્ત્વિતિ હેતોરાહ-ક્ષીણમોહઃ-અપુનર્ભાવિમોહોદયઃ इत्यर्थः, एतदुपसंहरन्नाह-મોહ-

માયા ઓર લોભ કા બોધક હૈ । મોહનીય કર્મ કે-નષ્ટ હોને પર માયા
ઓર લોભ નષ્ટ હો જાતે હૈ । (ક્ષીણ દોસે) હસી પ્રકાર દ્રેષ-માન ઓર
ક્ષોધ-બી નષ્ટ હો જાતો હૈ । અતઃ ક્ષીણ પ્રેમા, ક્ષીણ દ્રેષ યે નામ-
હોતે હૈ । (અમોહે નિમ્મોહે, ક્ષીણમોહે) અમોહ નિર્મોહ ક્ષીણ મોહ-યે
નામ બી મોહનીય કર્મ કે અભાવ મે હોતે હૈ । અલ્પ મોહવાલે મેં બી
અમોહ શબ્દ કા પ્રયોગ હોતા હૈ સો એસા અમોહ યહાં નહીં લિયા ગયા
હૈ કિન્તુ મોહનીય કર્મ સે જો અપગત હૈ વહી અમોહ હૈ, એસા અમોહ
હી યહાં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । જિસ કારણ યહ અમોહ હૈં હસલિયે
નિર્મોહ હૈ । કોઈ એસી શંકા બી કર સકતા હૈ કિ જો નિર્મોહ હોતા
હૈ, વહ કાલાન્તર મેં મોહોદય સે યુક્ત બી બન સકતા હૈ-જેસે ઉપશાન્ત
મોહવાલા બન જાતા હૈ । સો હસ આશંકા કો નિર્મૂલ કરને કે લિયે
સૂત્રકાર ને ક્ષીણમોહ યહ પદ રખા હૈ । હસસે ડન્હોને, યહ સ્પષ્ટ કિયા
હૈ કિ અપુનર્ભાવ મોહોદય જિસ જીવ કે હોતે હૈ, વહી યહાં અમોહ

શબ્દ માયા અને લોભનો બોધક છે. મોહનીય કર્મનો નાશ થઈ જવાથી
છવના માયા અને લોભ નષ્ટ થઈ જાય છે, તેથી તે છવને ‘ક્ષીણપ્રેમા’
કહેવાય છે. (ક્ષીણ દોસે) એજ પ્રમાણે મોહનીય કર્મનો નાશ થઈ જવાથી
આત્માનો દ્રેષ ભાવ પણ નષ્ટ થઈ જાય છે તેથી તે આત્માનું “ક્ષીણદ્રેષ”
નામ નિષ્પન્ન થાય છે. (અમોહે નિમ્મોહે, ક્ષીણમોહે) મોહનીય કર્મનો અભાવ
થઈ જવાથી આત્માનાં ‘અમોહ,’ ‘નિર્મોહ,’ અને ક્ષીણમોહ નામો પણ
નિષ્પન્ન થાય છે અલ્પ મોહવાળામાં પણ અમોહ શબ્દનો પ્રયોગ થાય છે.
પરંતુ અમોહ શબ્દનો એવો અર્થ અહીં અહણ કરવાનો નથી. અહીં તે
મોહનીય કર્મનો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાને લીધે આત્મામાં મોહનો સર્વથા
અભાવ જ અહણ કરવાનો છે. જે કારણે તે આત્મામાં આ અમોહનો સદ્-
ભાવ છે એજ કારણે નિર્મોહનો પણ સદ્ભાવ છે. કદાચ કોઈ એવી શંકા
ઉઠાવે કે કાળાન્તરે નિર્મોહી આત્મામાં મોહનો ઉદય થઈ જવાથી તે મોહો-
દયયુક્ત પણ બની શકે છે, તો તે આશંકાનું નિવારણ કરવાને માટે સૂત્રકારે
‘ક્ષીણમોહ’ પદનો પ્રયોગ કર્યો છે, આ પદ દ્વારા સૂત્રકારે એ વાત પ્રકટ

શ્રીભગવદ્ગિતા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાયિકભાવનિરૂપણમ્

૭૦૯

નીચકર્મવિપ્રમુક્ત ઇતિ । નારકાયુષ્કાદિભેદેન આયુષ્કર્મ ચતુર્વિધં बोध्यम् ।
સંમતિ તત્સયોદ્ધવાનિ નામાનિ પ્રરૂપયતિ-ક્ષીણનૈરયિકાયુષ્કઃ, ક્ષીણતિર્યગ્યો-
નિકાયુષ્કઃ, ક્ષીણમનુષ્યાયુષ્કઃ, ક્ષીણદેવાયુષ્કઃ । एतानि चत्वार्यपि पदानि
सुगमानी । तथा-अनायुष्कः=अविद्यमानायुष्कः । अविद्यमानायुष्कस्तु तद्विक्रायुः

નિરમોહ નામવાલા મહાન ક્રિયા ગયા છે । इस प्रकार (मोहणिज्जकम्म
विष्णुमुक्के) मोहनीय कर्म से विप्रमुक्त बने हुए जीव के ये क्षीण क्रोध
से लेकर क्षीण मोह तक के नाम हैं । अब आयुर्कर्म के क्षयापेक्ष जो
नाम होते हैं, उन्हें सूत्रकार स्पष्ट करते हैं-आयु कर्म चार प्रकार का
है-नरक आयु तिर्यगायु, मनुष्य आयु देव आयु सो इनमें से (क्षीण-
णेरइयाउए, क्षीणतिरिक्खजोणिआउए, क्षीण मणुस्साउए क्षीण-
देवाउए) नरकायुष્क के क्षय होने से क्षीण नरकायुष્क, तिर्यग्योनिक
आयुष्क के क्षय होने से क्षीणतिर्यग्योनिकायुष्क, मनुष्य आयुष्क-के
नष्ट होने से क्षीण मनुष्यायुष्क और देवायुष्क के नष्ट होने से क्षीण
देवायुष्क ये नाम होते हैं (अणाउए, नीराउए, खीणाउए) अनायुष્क,
निरायुष્क और और क्षीणायुष્क ये नाम भी होते हैं तद्वत् संबंधी आयु

કરી છે કે જે જીવમાં અપુનર્ભાવિભાહોદય (ભવિષ્યમાં ફરી ઉદયમાં ન આવે
એવો અભાહ) હોય છે, તે જીવને જ અહીં ‘અભાહ’ અને ‘નિર્મોહ’
નામનાં બે કહ્યો છે. (મોહણિજ્જકમ્મવિષ્ણુમુક્કે) મોહનીય કર્મથી સંપૂર્ણતઃ વિમુક્ત
થયેલા જીવના ક્ષીણક્રોધથી લઈને ક્ષીણમોહ પર્યંતનાં ઉપયુક્ત નામો સમજવાં.

હવે સૂત્રકાર આયુકર્મના ક્ષયથી આત્માના જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય
છે, તેમનું નિરૂપણ કરે છે—

આયુકર્મના ચાર પ્રકાર છે—(૧) નરકાયુ, (૨) તિર્યગાયુ, (૩) મનુષ્યાયુ
અને (૪) દેવાયુ. (ક્ષીણણેરइयाउए, क्षीणतिरिक्खजोणि आउए, क्षीणमणु-
स्साउए, क्षीण देवाउए) નરકાયુષ્કનો ક્ષય થઈ જવાને ક્ષીણ જીવ ‘ક્ષીણનરકાયુષ્ક’
બની જાય છે, તિર્યગ્યોનિક આયુષ્યનો ક્ષય થઈ જવાથી જીવ “ક્ષીણતિર્ય-
ગ્યોનિકાયુષ્ક” બની જાય છે, મનુષ્ય આયુષ્કનો ક્ષય થઈ જવાથી જીવ
“ક્ષીણમનુષ્યાયુષ્ક” થઈ જાય છે અને દેવાયુષ્કનો ક્ષય થઈ જવાથી જીવ
“ક્ષીણદેવાયુષ્ક” થઈ જાય છે. આ પ્રકારે ચારે ગતિના આયુષ્યનો ક્ષય થઈ
જવાથી જીવના ઉપયુક્ત ચાર નામો નિષ્પન્ન થાય છે. (अणाउए, निराउए,
क्षीणाउए) આયુકર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી જીવનાં “અનાયુષ્ક,” “નિરાયુષ્ક”
અને “ક્ષીણાયુષ્ક” આ ત્રણ નામોપણ નિષ્પન્ન થાય છે. તદ્ભવ સંબંધી (તે

સમમાત્રેડપિ મ્ભવતી, ત્યત્રાહ-નિરાયુષ્કઃ-નિર્ગતાયુષ્ક ઇતિ । નિરાયુષ્કસ્તુ શૈલે ક્ષીમવસ્થાં કિંચિદવતિષ્ઠમાનાયુઃ-શેષોડપિ ઉપચારતઃ સ્પાદત આહ-ક્ષીણાયુષ્ક ઇતિ । ઇતદુપસંહરઆહ-આયુષ્કર્મવિપ્રમુક્ત ઇતિ । નામકર્મસામાન્યેન શુભાશુભમેદતો દ્વિવિધમ્, વિશેષતસ્તુ ગતિજાતિશરીરાક્ષોપાક્ષાદિ મેદાદ્ દ્વિચત્વારિંશદાદિમેદં-

જિસ જીવ કી નષ્ટ હો ગઈ હો એસા જીવ બી અનાયુષ્ક કહલાતા હૈ-અતઃ એસા અનાયુષ્ક યહાં ગૃહીત નહીં હૈ કિન્તુ જિસકા આયુકર્મ સમાપ્ત હો ચુકા હૈ એસા હી નિરાયુષ્ક અનાયુષ્ક યહાં લિયા ગયા હૈ । યદિ હસ પર એસી આશંકા કી જાવે કિ એસી નિરાયુષ્ક અવસ્થા જીવ કી શૈલેશી અવસ્થા મેં હો જાતી હૈ-પરન્તુ યહાં સમ્પૂર્ણરૂપ સે વહ જીવ નિરાયુષ્ક તો નહીં બનતા હૈ-ફિર બી નિરાયુષ્ક હસ નામ સે કિંચિત આયુ અવશિષ્ટ હોને પર બી ઉપચાર સે કહા હી જાતા હૈ । અતઃ હસ આશંકા કો દૂર કરને કે લિયે સૂત્રકારને ક્ષીણાયુષ્ક યહ પદ રચ્લા હૈ । હસલિયે અનાયુષ્ક નિરાયુષ્ક યે નામ તબ હી જાનના યાહિયે કિ જબ સમ્પૂર્ણરૂપ સે આયુકર્મ નષ્ટ હોચુકા હોતા હૈ । (આયુકર્મવિપ્પમુક્કે) હસ પ્રકાર સે આયુકર્મ કે સર્વથા અભાવ હોને પર ક્ષીણનરકાયુષ્ક આદિ યે નામ નિષ્પન્ન હોતે હૈ । (ગઈજાઈ

ભવતુ) જેતું આયુષ્ય નષ્ટ થઈ ગયું હોય છે એવા જીવને પણ અનાયુષ્ક કહી શકાય છે. પરન્તુ એવા અનાયુષ્કની વાત અહીં કરવામાં આવી નથી અહીં તો એવા અનાયુષ્કની વાત કરવામાં આવી છે કે જેના આયુકર્મનો સંહતર ક્ષય થઈ ચુક્યો હોવાને કારણે જે નિરાયુષ્ક બની ગયેલો છે એટલે કે અહીં નિરાયુષ્ક (આયુષ્યરહિત) જીવને જ અનાયુષ્ક પદ વડે પ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. કહાય અહીં કેઈ એવી શંકા ઉઠાવે કે એવી નિરાયુષ્ક અવસ્થા તો જીવની શૈલેશી અવસ્થામાં થઈ જાય છે, પરન્તુ આ અવસ્થાવાળો જીવ સંપૂર્ણ રૂપે નિરાયુષ્ક બનતો નથી; છતાં પણ ‘નિરાયુષ્ક’ આ નામનો પ્રયોગ, થોડું આયુ બાકી હોવા છતાં પણ ઔપચારિક રૂપે કરવામાં આવે છે. આ આશંકાને દૂર કરવાને માટે સૂત્રકારે “ક્ષીણાયુષ્ક” પદ મૂક્યું છે તેથી આત્માને અનાયુષ્ક, અને નિરાયુષ્ક રૂપે ત્યારે જ ગણી શકાય કે ત્યારે આયુકર્મનો સંપૂર્ણપણે ક્ષય થઈ ગયો હોય છે. (આયુકર્મવિપ્પમુક્કે) આ પ્રકારે આયુકર્મનો સર્વથા અભાવ થઈ જવાથી આત્માનાં ક્ષીણનરકાયુષ્ક અર્થે ઉપયુક્ત નામો નિષ્પન્ન થાય છે.

હવે નામકર્મના ક્ષયથી આત્માના જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે, તે નામોની સૂત્રકાર પ્રકૃષ્ટા કરે છે—

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાધિકભાવનિરૂપણમ્

૭૧૧

સ્થાનાન્તરાદ્ વિશ્લેષમ્ । અત્ર તુ તત્સયભાગીનિ ક્રિયન્ત્યપિ તન્નામાનિ પ્રાહ-ગતિ
જાતિશરીરાઙ્ગોપાઙ્ગબન્ધનસંચાતનસંઘનનસંસ્થાનાનેકશરીરવૃન્દસંચાતવિપ્રમુક્તઃ—તત્ર
ગતિઃ=નારકાદિગતિચતુષ્ટયહેતુભૂતં ગતિનામ, જાતિઃ=એકેન્દ્રિયાદિ જાતિપશ્ચક-
કારણં જાતિનામ, શરીરમ્=ઔદારિકાદિશરીરપશ્ચકનિબન્ધનશરીરનામ, અઙ્ગો-
પાઙ્ગમ્=ઔદારિકવૈક્રિયાહારકશરીરત્રયાઙ્ગોપાઙ્ગનિર્વૃત્તિકારણમ્ અઙ્ગોપાઙ્ગનામ,
બન્ધનમ્=કાષ્ટાદિસ્વષ્ટસંયોજકલાક્ષાદિદ્રવ્યમિવ શરીરપશ્ચકપુદ્ગલાનાં પરસ્પરં

સરીરંગોવંગબંધનસંચાયણસંઘાણઅણેગર્થોદિવિંદસંચાયવિપ્પમુક્કે) નામ-
કર્મ સામાન્ય સે શુભનામકર્મ ઓર અશુભનામકર્મ હસ પ્રકાર
દો ભેદવાલા હૈ ઓર વિશેષરૂપ સે ગતિ જાતિ શરીર અંગો-
પાઙ્ગ આદિ કે ભેદ સે ૪૨ પ્રકાર કે હૈ । તથા ૪૨ પ્રકાર સે ઓ ઓર
અધિક ભેદવાલા હૈ । હસકે યે સબ ભેદ અન્ય શાસ્ત્રો સે જાનહેના
ચાહિયે । યહાં પર તો સૂત્રકારને હસ નામકર્મ કે ક્ષય સે જો નામ
ઉત્પન્ન હોતે હૈ ઉન્હે કહા હૈ । નારક આદિ ચાર ગતિયોં કા હેતુભૂત
જો કર્મ હૈ વહ ગતિ નામકર્મ હૈ । એકેન્દ્રિય આદિ પાંચ જાતિ કા જો
કારણ હોતા હૈ વહ જાતિનામકર્મ હૈ । ઔદારિક આદિ પાંચ
શરીર કા જો કારણ હોતા હૈ વહ શરીર નામકર્મ હૈ । ઔદારિક
અંગોપાંગ, વૈક્રીય અંગોપાંગ ઓર આહારક અંગોપાંગ કી રચના કા
જો હેતુ હો વહ અંગોપાંગ નામકર્મ હૈ । જિસ પ્રકાર કાષ્ટાદિ સ્વષ્ટોં

(ગહજાહસરીરંગોવંગબંધનસંચાયણસંઘાણઅણેગર્થોદિવિંદસંચાયવિપ્પમુક્કે) નામ-
કર્મના નીચે પ્રમાણે યે મુખ્ય લેહ કહ્યા છે. (૧) શુભનામકર્મ અને
(૨) અશુભનામકર્મ. પરન્તુ વિશેષ રૂપે વિચાર કરવામાં આવે તો ગતિ,
જાતિ, શરીર, અંગોપાંગ આદિના લેહથી નામ કર્મના ૪૨ લેહ પડે છે, તથા
આ ૪૨ લેહો સિવાયના કેટલાક વધુ લેહો પણ પડે છે તેના આ સઘળા
લેહો વિષેની માહિતી અન્ય શાસ્ત્રોમાંથી મેળવી લેવી અહીં તો સૂત્રકારે આ
નામકર્મના ક્ષય થઈ જવાથી આત્માના જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે તેમનું
જ કથન કર્યું છે. નારક આદિ ચાર ગતિઓની પ્રાપ્તિના કારણભૂત જે કર્મ
છે તેનું નામ ગતિનામકર્મ છે એકેન્દ્રિય આદિ પાંચ જાતિના કારણભૂત જે
કર્મ છે તેને જાતિનામકર્મ કહે છે. ઔદારિક આદિ શરીરના કારણરૂપ જે
કર્મ છે તેનું નામ શરીરનામકર્મ છે. ઔદારિક અંગોપાંગ, વૈક્રીય અંગો-
પાંગ અને આહારક અંગોપાંગની રચનાના કારણભૂત જે કર્મ છે તેને
અંગોપાંગ નામકર્મ કહે છે. જેવી રીતે કાષ્ટાદિના દુકડાઓને લાખ આદિ

૭૧૨

અનુયોગદ્વારજ્ઞે

બન્ધહેતુર્વન્ધનનામ, સંઘાતનં=કાષ્ઠસમુચ્ચયકારકઃ કર્મકર ઇવ તેષામેવ પુદ્ગલાનાં પરસ્પરં બન્ધનાર્થમન્યોઽન્ય સાંનિધ્યરૂપ સઙ્ઘાતકારણં સઙ્ઘાતનામ, સંહનનમ્=કપાટાદીનાં લોહપટ્ટાદિરિવ ઔદારિકશરીરાસ્થનાં પરસ્પરબન્ધવિશેષનિબન્ધનં સંહનનનામ, સંસ્થાનમ્=સંસ્થાનનામ-સંતિષ્ઠતે વિશિષ્ટાવયવરચનાત્મિકયા શરીરાકૃત્યા જન્તવો ભવન્તિ येन तत् संस्थाननाम। इदं हि समचतुरस्त्रादिसंस्थानकारणम्। तथा-अनेकशरीरवृन्दसंघातः-अनेकानि शरीराणि-अनेकशरीराणि-

જો પરસ્પર મેં જોડેનેવાલા લાલ્હ આદિ દ્રવ્ય હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર પાંચ ઔદારિક શરીર આદિ કે પુદ્ગલોં કો જો પરસ્પર મેં જોડતા હૈ । વહ બંધન નામકર્મ હૈ । કાષ્ઠકો ચુન ચુન ર કર રલ્હને વાલે કર્મકર કી તરહ જો ઁઁહીં પુદ્ગલોં કો પરસ્પર મેં બન્ધને કે લિયે અન્યોન્યસાંનિધ્યરૂપ સંઘાત કા કારણ હોતા હૈ । અર્થાત્ વદ્ધ પુદ્ગલોં કો શરીર કે નાના વિધ આકારોં મેં વ્યવસ્થિત કરને વાલા જો કર્મ હૈ વહ સંઘાત કર્મ હૈ । જૈસે કપાટ આદિકોં કો લોહ પટ્ટ પરસ્પર મેં બાંધ દેતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો ઔદારિક શરીર કી હડ્ડિયોં કો પરસ્પર મેં બાંધ દેતા હૈ વહ સંહનન નામકર્મ હૈ । અર્થાત્ યહ નામકર્મ અસ્થિબંધ કી વિશિષ્ટ રચના રૂપ હોતા હૈ । જિસકર્મ સે અવયવોં કી વિશિષ્ટ રચનારૂપ શરીર કી આકૃત્તિ બને વહ સંસ્થાન નામકર્મ સમચતુરસ્ત્રાદિ સંસ્થાન કા કારણ હૈ । તથા-અનેક શરીરોં કા જો સમૂહ રૂપ સંઘાત હૈ વહ અનેક શરીરવૃન્દ સંઘાત

દ્રવ્યો વડે પરસ્પરની સાથે જોડવામાં આવે છે, જેજ પ્રમાણે પાંચ ઔદારિક શરીર આદિના પુદ્ગલોને પરસ્પરની સાથે જોડનારું જે કર્મ છે તેનું નામ બંધન નામ કર્મ છે, યોગ્ય કાષ્ઠને વીણી વીણીને જોડવાના કારીગર (સુથાર)ની જેમ, જેજ કર્મ પુદ્ગલોને પરસ્પરની સાથે બાંધવાને માટે અન્યોન્ય સાંનિધ્ય રૂપ સંઘાતમાં જે કર્મ કારણભૂત બને છે-એટલે કે બદ્ધ પુદ્ગલોને શરીરના વિવિધ આકારોમાં જોડવાનારું (સ્થાપિત કરનારું) જે કર્મ છે તેનું નામ સંઘાત કર્મ છે. જેવી રીતે કમ્પાઝ આદિનાં પાટિયાંજોને લોહાની પાટી પરસ્પરની સાથે બાંધી દે છે, જેજ પ્રમાણે ઔદારિક શરીરનાં હાડકાંજોને પરસ્પરની સાથે બાંધી દેનારું જે કર્મ છે તેને સંહનન નામકર્મ કહે છે એટલે કે આ નામકર્મ અસ્થિબંધની વિશિષ્ટ રચના રૂપ હોય છે. જે કર્મ અવયવોની વિશિષ્ટ રચના રૂપ શરીરની આકૃતિ બનાવવામાં કારણભૂત બને છે તે કર્મનું નામ સંસ્થાન નામકર્મ છે. આ સંસ્થાન નામકર્મ સમચતુરસ્રાદિ સંસ્થાનમાં કારણભૂત બને

તૈષાં વૃન્દ=સમૂહસ્તદેવ પુદ્ગલસંઘાતરૂપત્વાત્ સંઘાતઃ—અનેકશરીરવૃન્દસંઘાતઃ, શરીરાનેકત્વં જન્માન્તરીયશરીરાણ્યાદાય । અસ્મિન્નપિ જન્મનિ જઘન્યત ઔદારિક-તૈજસકાર્મણરૂપશરીરત્રયસ્થ સદ્ભાવાદ્ વા શરીરાનેકત્વં बोध्यम् । ગત્યાદિશબ્દનાં વૃન્દસમાસઃ, તૈ વિપ્રમુક્તો યઃ સ તથા । શરીરશબ્દેન શરીરનિબન્ધનં નામકર્મ ગ્રહીતમ્, ‘શરીરવૃન્દે’ ત્યજ શરીરશબ્દેન તુ તત્કાર્યભૂતશરીરાણ્યેવ ગૃહ્યન્તે, इत्यमयो-र्भेदः, અતો ન પૌનરુત્થયમ્, તથા—ક્ષીણશુભનામા—ક્ષીણં=વિનષ્ટં શુભનામ=તીર્થંકર

શરીરની અનેકતા છે । અથવા જીવને બીજા જન્મમાં તૈજસ અને કાર્મણ એ બે શરીર સાથે રહેતો હોય, હવે એ જન્માન્તરીય શરીરોનો ઉપયોગ કરીને એક જ જન્મમાં તૈજસ અને કાર્મણ એ બે શરીર રહેતો હોય । આ અપેક્ષાથી જ શરીરની અનેકતા રૂપ-અનેક શરીર વૃન્દ સંઘાત સમજાવા છે । આ ગત્યાદિક શબ્દોમાં વૃન્દ સમાસ છે, આ ગત્યાદિકોમાં જે વિપ્રમુક્ત છે તે ગતિ જાતિ-શરીર-અંગોપાંગ બન્ધન-સંઘાત સંહનન સંસ્થાન-અનેક શરીરવૃન્દસંઘાત વિપ્રમુક્ત શબ્દનો અર્થ છે । ગતિ જાતિ શરીર આદિમાં જે શરીર શબ્દ છે તેનો અર્થ શરીર નામકર્મ છે, આ નામકર્મને ઉદયથી ઔદારિક આદિ શરીરોની રચના થાય છે તથા “અનેક શરીર વૃન્દ”માં જે શરીર શબ્દ આવે છે, તે શરીર નામકર્મના કાર્ય-ભૂત એ ઔદારિક આદિ શરીરોનો અર્થ છે । આ પ્રકારે આમાં

જે અનેક શરીરોના સમૂહરૂપને સંઘાત છે તેને અનેક શરીરવૃન્દ સંઘાત કહે છે. તે અનેક શરીરવૃન્દ સંઘાત શરીરની અનેકતા રૂપ હોય છે અથવા જીવની સાથે રહે છે. તેથી આ જન્માન્તરીય શરીરોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો એક જીવમાં ઔદારિક, તૈજસ અને કાર્મણ, આ ત્રણ શરીરોના સદ્ભાવ હોય છે આ દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો શરીરની અનેકતા રૂપ અનેક શરીરવૃન્દ સંઘાતનું પ્રતિપાદન થઈ જાય છે ઉપર્યુક્ત ગતિ આદિ શબ્દોમાં વૃન્દ સમાસ છે. આ ગતિ આદિમાં જે જીવ વિપ્રમુક્ત થઈ ગયેલો હોય છે તે જીવને ગતિ, જાતિ, શરીર, અંગોપાંગ, બન્ધન, સંઘાત, સંહનન, સંસ્થાન અને અનેક શરીરવૃન્દસંઘાતવિપ્રમુક્ત ગણવામાં આવે છે. એટલે કે એવા જીવના ગતિવિપ્રમુક્ત જાતિવિપ્રમુક્ત આદિ નામો નિષ્પન્ન થાય છે. ગતિ, જાતિ, શરીર આદિમાં જે શરીર શબ્દ છે તેનો અર્થ શરીરનામકર્મ છે. આ નામકર્મના ઉદયથી ઔદારિક આદિ શરીરોની રચના થાય છે. તથા— “અનેક શરીરવૃન્દ” આ પદમાં જે ‘શરીર’ શબ્દ આવ્યો છે તે શરીર શબ્દ શરીર નામકર્મના કાર્યભૂત તે ઔદારિક આદિ શરીરોનો અર્થ છે.

૭૧૪

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

શુભસુભગસુસ્વાનાદેયયશઃકીર્ત્યાદિકં यस્ય સ તથા । ક્ષીણાશુભનામા-ક્ષીણમ્
અશુભનામ=નરકગત્યશુભદુર્ભગદુઃસ્વાનાદેયાયશઃકીર્ત્યાદિકં यस્ય સ તથા ।
અનામા નિર્નામા ક્ષીણનામા ઇતિ ત્રયોઽપિ શબ્દાઃ ‘અમોહઃ’ ઇત્યાદિવદ્ ભાવ-
નીયાઃ । ઉપસંહરન્નાહ-શુભાશુભનામકર્મવિપ્રમુક્ત ઇતિ । ગોત્રમ્-ઉચ્ચનીચભેદેન
દ્વિવિધં ભવતિ । સમ્પતિ તત્ક્ષયસંભવીની નામાન્યાહ-‘ક્ષીણોચ્ચગોત્રઃ’ ઇત્યારમ્ય

ભિન્નતા જાનની યાહિયે । (ક્ષીણ સુભનામે) નામકર્મ કે નષ્ટ હોને પર
તીર્થકર, શુભ, સુગમ, સુસ્વર, આદેય ઓર યશઃકીર્તિ આદિ-જો શુભ
નામ હૈં યે સબ વિનષ્ટ હો જાતે હૈં ઇસલિયે “ક્ષીણશુભનામા” યહ
નામ નિષ્પન્ન હોતા હૈ । (ક્ષીણ અસુભનામે) ઇસી પ્રકાર નામકર્મ કે
નષ્ટ હોને પર નરકગતિ, અશુભ, દુર્ભગ, દુઃસ્વર અનાદેય, ઓર અયશઃ
કીર્તિ આદિક અશુભ નામ નષ્ટ હો જાતે હૈં । ઇસલિયે ‘ક્ષીણાશુભ-
નામા” યહ નામ નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ । (અનામે, નિષ્ણામે, ક્ષીણનામે)
અનામ, નિર્નામ ઓર ક્ષીણનામ યે ત્રીનો શબ્દ મી અમોહ આદિ
શબ્દો કે જૈસે સમજના યાહિયે । (સુભાસુભનામકર્મવિપ્રમુક્તે)
ઇસ પ્રકાર ગતિ વિપ્રમુક્ત સે હેકર ક્ષીણનામ તક કે યે નામ ઇસ
શુભાશુભનામકર્મ સે સર્વથા રહિત હો જાને પર નિષ્પન્ન હોતે હૈં ।
(ક્ષીણ ઉચ્ચાગોત્ર ક્ષીણ નીયાગો) અથ સૂત્રકાર ગોત્રકર્મ સે વિપ્રમુક્ત

આ પ્રકારે તેમની વચ્ચે ભિન્નતા સમજવી ભેઈએ. (ક્ષીણસુભનામે) નામકર્મનો
નાશ થતાં જ તીર્થકર, શુભ, સુગમ, સુસ્વર, આદેય, યશ કીર્તિ યુક્ત આદિ
જે શુભ નામો હોય છે તેમનો પણ નાશ થઈ જાય છે, તેથી એવા જીવનું
“ક્ષીણશુભનામા” આ નામ નિષ્પન્ન થાય છે. (ક્ષીણ અસુભનામે) એજ પ્રમાણે
નામકર્મનો નાશ થતાં જ નરકગતિ, અશુભ, દુર્ભગ, દુઃસ્વર, અનાદેય,
અયશઃકીર્તિ આદિ અશુભ નામોનો પણ નાશ થઈ જાય છે તેથી એવા
જીવનું “ક્ષીણાશુભનામા” નામ નિષ્પન્ન થાય છે. (અનામે, નિષ્ણામે, ક્ષીણ-
નામે) વળી નામકર્મ નિર્મૂળ થઈ જવાથી જીવતા “અનામ, નિર્નામ, અને
ક્ષીણનામ” આ નામો પણ નિષ્પન્ન થાય છે. આ ત્રણે શબ્દોનો ભેદ અમોહ,
નિર્મોહ અને ક્ષીણમોહના એવો જ સમજવો. (સુભાસુભનામકર્મવિપ્રમુક્તે)
જ્યારે આત્મા શુભાશુભ નામકર્મથી સર્વથા રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેના
ગતિવિપ્રમુક્તથી ક્ષીણનામ પર્યન્તના ઉપયુક્ત નામો નિષ્પન્ન થાય છે.

હવે સૂત્રકાર ગોત્રકર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી આત્માના જે જે નામો નિષ્પન્ન
થાય છે, તેમનું નિરૂપણ કરે છે—

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાયિકભાવનિરૂપણમ્

૭૧૫

‘ઉચ્ચનીચકર્મવિપ્રમુક્તઃ’ इत्यन्तैः पदैः । एषां व्याख्या पूर्ववद् भावनीया । अन्तरायकर्म हि दानान्तरायादिभेदैः पञ्चविधं बोध्यम् । सम्प्रति तत्क्षयनिष्पन्नानि नामानि प्राह—‘क्षीणदानान्तरायः’ इत्यारभ्य ‘अन्तरायकर्मविप્રमुक्तः’ इति । एष होने पर जो नाम निष्पन्न होते हैं उन्हें कहते हैं । गोत्र कर्म दो प्रकार का है—उच्च गोत्र और नीच गोत्र । संतान क्रम से चले आये हुए जीव के आचरण का नाम गोत्र है । प्रतिष्ठा प्राप्त हो ऐसे कुलमें जन्म दिलानेवाला कर्म उच्च गोत्र और शक्ति रहने पर भी प्रतिष्ठा न मिल सके ऐसे कुल में जन्म दाता कर्म, नीच गोत्र कहलाना है । गोत्र कर्म के अभाव होते ही उच्च और नीच दोनों प्रकार का गोत्र नष्ट हो जाता है—अतः क्षीणोच्चगोत्र और क्षीण नीचगोत्र ये नाम निष्पन्न होते हैं । (अगोए निग्गोए खीणगोए) इन अगोत्र निग्गोत्र क्षीणगोत्र शब्दों की व्याख्या पहिले जैसी ही जाननी चाहिये । अब सूत्रकार अन्तराय कर्म के अभाव में जो नाम निष्पन्न होते हैं उन्हें बताते हैं—दानान्तराय आदि के भेद से अन्तराय कर्म ५ प्रकार का है । इनमें (खीणदानान्तराय, खीणलाभन्तराय, खीणभोगन्तराय, खीणउवभोगन्तराय, खीणवीरियन्तराय) दानान्तराय के क्षय होने से क्षीण दानान्तराय,

(ક્ષીણ ઉચ્ચગોત્ર ક્ષીણ નીચગોત્ર) ગોત્રકર્મના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પડે છે—(૧) ઉચ્ચગોત્ર, (૨) નીચગોત્ર જે કુળમાં જન્મ થવાથી પ્રતિષ્ઠા મળે છે, એવા કુળમાં જન્મ અપાવનાર કર્મને ઉચ્ચગોત્ર કર્મ કહે છે શક્તિ હોવા છતાં પણ—યોગ્યતા હોવા છતાં પણ પ્રતિષ્ઠા ન મળે એવા કુળમાં જન્મ અપાવનાર કર્મને નીચ ગોત્રકર્મ કહે છે ગોત્રકર્મનો ક્ષય થતાંની સાથે જ ઉચ્ચ અને નીચ, આ બંને પ્રકારના ગોત્રનો નાશ થઈ જાય છે તેથી જેના ગોત્રકર્મનો નાશ થઈ ગયો છે એના જીવના “ક્ષીણુચ્ચગોત્ર” અને “ક્ષીણુનીચગોત્ર” નામે નિષ્પન્ન થાય છે. (અગોત્ર, નિગોત્ર, ક્ષીણગોત્ર) વળી એવા આત્માને “અગોત્ર” “નિગોત્ર” અને “ક્ષીણુગોત્ર” પણ કહેવામાં આવે છે. આ પદોની વ્યાખ્યા ‘અમેહ’ આદિની વ્યાખ્યાને આધારે સમજી શકાય એવી છે.

હવે સૂત્રકાર અન્તરાય કર્મના અસાવથી આત્માના જે જે નામે નિષ્પન્ન થાય છે, તેમનું કથન કરે છે—

દાનાન્તરાય આદિના લેદથી અન્તરાયકર્મ પાંચ પ્રકારના કહેવા છે. (ક્ષીણદાનાન્તરાય, ક્ષીણલાભન્તરાય, ક્ષીણભોગન્તરાય, ક્ષીણઉવભોગન્તરાય, ક્ષીણવીરિયન્તરાય) જીવના દાનાન્તરાયકર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી ‘ક્ષીણુદાનાન્તરાય,’

આત્મ્યાડપિ પૂર્વવદેવ બોધ્યા । इत्थं ज्ञानावरणायन्तरायकर्मान्ताष्टमकृतीनामेकैक-
स्येण निष्पन्नानि नामान्यभिधाय सम्प्रति समुदिताष्टकर्म प्रकृतिस्येयानि नामानि-
निष्पद्यन्ते तान्याह-‘सिद्धे’ इत्यादि-सिद्धः=सिद्ध समस्तप्रयोजनत्वात् सिद्धः ।
बुद्धः=बोधस्वरूपत्वाद् बुद्धः । मुक्तः=बाह्याभ्यन्तरग्रन्थबन्धन मुक्तत्वाद् मुक्तः । परि-

જ્ઞાનાન્તરાય કે ક્ષય હોને સે ક્ષીણ લાભાન્તરાય, ભોગાન્તરાય કે ક્ષય
હોને સે ક્ષીણ ભોગાન્તરાય ઉપભોગાન્તરાય કે નષ્ટ હોને સે
ક્ષીણ ઉપભોગાન્તરાય ઓર વીર્યાન્તરાય કે નષ્ટ હોને સે
ક્ષીણ વીર્યાન્તરાય યે નામ નિષ્પન્ન હોતે હૈં (અર્ણતરાય, ગિરંતરાય,
ક્ષીર્ણતરાય) તથા અનન્તરાય નિરન્તરાય ઓર ક્ષીણાન્તરાય યે નામ
નિષ્પન્ન હોતે હૈં । इस प्रकार ये सब पूर्वोक्त नाम (अंतरायकर्मविषय
मुक्ते) अन्तराय कर्म से विप्रमुक्त होने पर होते हैं । (सिद्धे बुद्धे मुक्ते
परिणिव्युए, अंतगडे, सव्वदुक्खप्पहीणे) अब सूत्रकार यह कहते
हैं कि ये जो ज्ञानावरण आदि से लेकर अन्तराय कर्म पर्यन्त आठकर्म
हैं उनमें से एक एक कर्म के नाश होने से जैसे ये भिन्न २ नाम कहे
गये हैं उसी प्रकार से आठ कर्मों के सर्वथा नष्ट होने पर जो नाम होते
हैं वे ये हैं-सिद्ध-समस्त प्रयोजन सिद्ध हो जाने से सिद्ध-यह नाम

લાભાન્તરાય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી “ ક્ષીણુલાભાન્તરાય,” ભોગાન્તરાયનો
ક્ષય થઈ જવાથી “ ક્ષીણુભોગાન્તરાય,” ઉપભોગાન્તરાયનો ક્ષય થઈ જવાથી
“ ક્ષીણુઉપભોગાન્તરાય,” અને વીર્યાન્તરાયનો ક્ષય થઈ જવાથી “ ક્ષીણુવીર્યા-
ન્તરાય ” આ પ્રકારનાં જીવનાં નામો નિષ્પન્ન થાય છે. (અર્ણતરાય, ગિરંતરાય,
ક્ષીર્ણતરાય) તથા જીવના અન્તરાય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી તેના “ અન-
તરાય,” ‘ નિરન્તરાય ’ અને ‘ ક્ષીણાન્તરાય ’ આ નામો નિષ્પન્ન થાય છે.
ક્ષીણુજ્ઞાનાન્તરાયથી લઈને ક્ષીણાન્તરાય પર્યન્તના ઉપર્યુક્ત નામો આત્માને
ત્યારે જ ઓળખી શકાય છે કે જ્યારે તેના અન્તરાય કર્મનો સંપૂર્ણતા
ક્ષય થઈ જાય છે.

(સિદ્ધે, બુદ્ધે, મુક્તે, પરિણિવ્યુષ્ટે, અંતગડે, સવ્વદુક્ખપ્પહીણે) જ્ઞાનાવરણથી
લઈને અન્તરાય પર્યન્તના પ્રત્યેક કર્મનો નાશ થવાથી જીવના જે ભિન્ન ભિન્ન
નામો નિષ્પન્ન થાય છે. તેમનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર, આઠે કર્મોનો સર્વથા
વિનાશ થવાથી જીવના જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે, તે નામોને પ્રકટ કરે છે-

આઠે પ્રકારના કર્મોના જ્યારે સર્વથા ક્ષય થઈ જાય છે ત્યારે જીવના
સમસ્ત પ્રયોજનો સિદ્ધ થઈ જાય છે તેથી એવા જીવનું “ સિદ્ધ ” ‘ સિદ્ધ ’

अनुयोगबन्धिका टीका सूत्र १५३ क्षायिकभावनिरूपणम्

७१७

निर्वृतः=परि=समन्तात्-सर्वप्रकारैः निर्वृतः=शीतीभूतः परिवृत्तिः परिनिर्वृतत्वं च सर्वोत्कृष्टसकलसमीहितमोक्षरूपार्थपाप्त्या बोध्यम् । अन्तकृतः-अन्तकृतत्वं तु समस्तसंसारान्तकारित्वाद् बोध्यम् । तथा-सर्वदुःखप्रहीणः । सर्वदुःखप्रहीणत्वं तु शारीरमानसदुःखानामात्यन्तिकक्षयेण बोध्यम् । सम्प्रति प्रकृतमुपसंहरन्नाह-स एष क्षयनिष्पन्न इति । निरूपितः क्षायिको भाव इति सूचयितुमाह-स एष क्षायिक इति ॥सू० १५४॥

निष्पन्न होता है ।-बुद्ध-बोध स्वरूप हो जाने से बुद्ध यह नाम निष्पन्न होता है । मुक्त-बाह्य और आभ्यन्तररूप परिग्रह बन्धन से छूटजाने से मुक्त यह नाम निष्पन्न होता है । परिनिर्वृत-सर्व प्रकार से, सब तरफ से शीती भूत हो जाने से परिनिर्वृत यह नाम निष्पन्न होता है । सकल समीहितो में सर्वोत्कृष्ट समीहित एक मोक्ष ही है-सो उसकी प्राप्ति से परिनिर्वृतपना-जानना चाहिये । अन्तकृत-समस्त संसार का अन्तकारी होने से अन्तकृत यह नाम निष्पन्न होता है सर्व दुःखप्रहीण-शारीरिक एवं मानसिक समस्त दुःखों के आत्यन्तिक क्षय हो जाने से सर्व दुःख प्रहीण यह नाम निष्पन्न होता है ।

अब सूत्रकार इस प्रकरण का उपसंहार करने के निमित्त कहते हैं

नाम निष्पन्न थाय छे. એવો છવ કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શનથી મુક્ત થઈ જવાને કારણે “બુદ્ધ” ગણાય છે. એવો છવ બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિ-અહરૂપ બન્ધનમાંથી મુક્ત થઈ બાધ છે તેથી તેને “મુક્ત” કહેવામાં આવે છે. એવો છવ સર્વપ્રકારના પરિતાપથી નિર્વૃત્ત થઈને શીતલીભૂત થઈ બાધ છે, તેથી તેનું ‘પરિનિર્વૃત્ત’ નામ નિષ્પન્ન થાય છે. સકળ સમીક્ષિતોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ સમીક્ષિત તો માત્ર મોક્ષ જ ગણાય છે, તે મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ જવાના કારણે તે આત્મામાં પરિનિર્વૃત્તતા સમજવી એવો છવ સમસ્ત સંસારનો અન્તકારી બને છે તેથી તેને “અન્તકૃત” કહે છે. એવા છવના શારીરિક અને માનસિક સમસ્ત દુઃખોનો આત્યંતિક (સંપૂર્ણતા) ક્ષય થઈ જવાને કારણે તેને સર્વદુઃખ પ્રહીણ કહે છે. આ પ્રકારે આઠે કર્મોના સર્વથા ક્ષય કરી નાખનાર છવના નીચે પ્રમાણે નામો નિષ્પન્ન થાય છે-(૧) સિદ્ધ, (૨) બુદ્ધ, (૩) મુક્ત, (૪) પરિનિર્વૃત્ત, (૫) અન્તકૃત અને (૬) સર્વદુઃખપ્રહીણ.

હવે આ સૂત્રનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—

(સે તં ક્ષયનિષ્કળે) આ પ્રકારનું ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

કિ (સે તં સ્વનિષ્પન્ને) હસ પ્રકાર ગ્રહ ક્ષય નિષ્પન્ન હૈ । (સે તં સ્વહૃ) હસ પ્રકાર ગ્રહ ક્ષાયિક ભાવ કા નિરૂપણ હૈ—

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને હસ સૂત્ર દ્વારા ક્ષાયિક ભાવ કા નિરૂપણ કિયા હૈ । ઉસમેં ઉઘ્ઠોને ગ્રહ કહા હૈ કિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કા જો ક્ષય હૈ એક તો ગ્રહ ક્ષાયિક ભાવ હૈ—ઔર દુસરા ક્ષાયિક ભાવ ગ્રહ હૈ જો હન કર્મોં કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હોતા હૈ । કર્મોં કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હુઆ ક્ષાયિક અનેક પ્રકાર કા કહા હૈ । ઉનમેં પાંચ પ્રકાર કે જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે નૌ પ્રકાર કે દર્શનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે દો પ્રકાર કે વેદનીય કર્મ કે ક્ષય સે, ૨૮ પ્રકાર કે મોહનીય કર્મ કે ક્ષય સે ચાર પ્રકાર કે આયુ કર્મ કે ક્ષય સે, ૪૨ પ્રકાર કે નામ-કર્મ કે ક્ષય સે, દો પ્રકાર કે ગોત્રકર્મ કે ક્ષય સે ઔર પાંચ પ્રકાર કે અન્તરાય કે ક્ષય સે સૂત્ર પ્રદર્શિત જિતને બી નામ નિષ્પન્ન હોતે હૈં વે સબ ક્ષાયિક હૈં । કયોંકિ યે ભિન્ન ૨ પ્રકાર કે કર્મોં કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હોતે હૈં । ઘર્યાપર ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવ મેં ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક નામોં કા કથન જો કિયા ગયા હૈ ગ્રહ આપ્રાસંગિક નહીં હૈ, કયોંકિ ક્ષાયિક

(સે તં સ્વહૃ) ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવનું નિરૂપણ સમાપ્ત થવાથી ક્ષાયિક ભાવના સ્વરૂપનું નિરૂપણ પણ અહીં પૂરું થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા ક્ષાયિક ભાવનું નિરૂપણ કર્યું છે. તેમાં તેમણે ક્ષાયિક ભાવના બે પ્રકાર બતાવ્યા છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોના બે ક્ષય છે તેને ક્ષાયિક રૂપ પહેલા પ્રકાર ગણવામાં આવે છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયથી નિષ્પન્ન થતાં ક્ષાયિક ભાવને ક્ષય-નિષ્પન્ન રૂપ બીજા પ્રકારનો ક્ષાયિક ભાવ કહ્યો છે. કર્મોના ક્ષયથી નિષ્પન્ન થતો ક્ષાયિક ભાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. પાંચ પ્રકારના જ્ઞાનાવરણ કર્મોના ક્ષયથી, નવ પ્રકારના દર્શનાવરણ કર્મોના ક્ષયથી, બે પ્રકારના વેદનીય કર્મોના ક્ષયથી, ૨૮ પ્રકારના મોહનીય કર્મોના ક્ષયથી, ચાર પ્રકારના અયુકર્મોના ક્ષયથી, ૪૨ પ્રકારના નામકર્મોના ક્ષયથી, બે પ્રકારના ગોત્રકર્મોના ક્ષયથી, અને પાંચ પ્રકારના અન્તરાય કર્મોના ક્ષયથી સૂત્રોક્ત બેઠલાં નામ નિષ્પન્ન થાય છે, તેમને ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવ રૂપે ગણવા બેઠ્યો, કારણ કે તે નામો ભિન્ન ભિન્ન પ્રકારનાં કર્મોના ક્ષયથી નિષ્પન્ન થાય છે.

આ સૂત્રમાં ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવોમાં ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક નામોનું બે કથન કરવામાં આવ્યું છે, તે અપ્રાસંગિક નથી. તેનું કારણ નીચે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૪ ક્ષાયિકભાવનિરૂપણમ્

૭૧૨

ભાવ કાતાત્પર્ય હૈ ક્ષય સે ઉત્પન્ન હુઈ અવસ્થા કે પરિણામ। यह आत्मा की निज स्वाभाविक अवस्था है। इसमें जो भी परिणाम हैं वे सब शुद्ध आत्मस्वरूप हैं। इन्हीं परिणामों को लेकर—जो नाम कहे गये हैं। वे नाम, स्थापना या द्रव्यरूप नहीं हैं, किन्तु भावरूप हैं। कर्मों के नष्ट होने पर आत्मा का जो मौलिक रूप प्रकट हो जाता है, उसी मौलिकरूप के ये वाचक हैं इसलिये इन नामों का क्षायिकभाव के प्रकरण में विवेचन करना युक्ति युक्त ही है। अप्रासंगिक नहीं है। जैसे जब केवलज्ञानावरण नष्ट हो जाता है तब आत्मा में केवलज्ञानगुण प्रकट हो जाता है केवलज्ञानावरण के नष्ट होते ही क्षायोपशमिक चार ज्ञान क्षायिकरूप हो जाते हैं—अर्थात् केवल ज्ञान में अन्तर्हित हो जाते हैं। तब इस आत्मा का क्षीण केवल ज्ञानावरण ऐसा नाम जो होता है वह नाम, स्थापना या द्रव्यरूप नहीं है। किन्तु भावनिपेक्ष रूप है। कारण उस प्रकार की पर्याय उस आत्मा में निष्पन्न हो चुकी है, और उसी का यह वाचक है। इसी प्रकार से शेष कर्मों के क्षय से निष्पन्न हुए नामों में भी जनाना चाहिये। इसीलिये क्षायिक भाव के प्रकरण में सूत्रकार ने इनका निर्देशन किया है। ॥ सू० १५४ ॥

પ્રમાણુ છે-ક્ષયથી ઉત્પન્ન થયેલી અવસ્થાના પરિણામને ક્ષાયિક ભાવ ગણાય છે. તે આત્માની નિજ સ્વાભાવિક અવસ્થા છે. તેમાં જે જે પરિણામો છે, તે બધાં પરિણામો શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપ છે. તે પરિણામોનો વિચાર કરીને જે નામો બતાવવામાં આવ્યાં છે તેઓ નામ, સ્થાપના કે દ્રવ્યરૂપ નથી, પરંતુ ભાવરૂપ છે. કર્મોનો ક્ષય થઈ જવાથી આત્માનું જે મૌલિક મૂલ રૂપ પ્રકટ થઈ જાય છે, એજ મૌલિક રૂપના તેઓ વાચક છે. તેથી તે નામોનું ક્ષાયિક ભાવના પ્રકરણમાં વિવેચન કરવું તે અનુચિત અથવા અપ્રાસંગિક નથી, પરંતુ ઉચિત અને પ્રાસંગિક જ છે. જેમ કે કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મોના સંપૂર્ણ ક્ષય થઈ જતાં જ આત્મામાં કેવળજ્ઞાનગુણ પ્રકટ થઈ જાય છે. કેવળજ્ઞાનાવરણનો નાશ થતાં જ ક્ષાયોપશમિક ચાર જ્ઞાન ક્ષાયિક રૂપ થઈ જાય છે, એટલે કે આ ચારે જ્ઞાન કેવળજ્ઞાનમાં જ સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે. ત્યારે તે આત્માનું “ક્ષીણકેવળજ્ઞાનાવરણ” આ નામ નિષ્પન્ન થઈ જાય છે. તે નામ, સ્થાપના અથવા દ્રવ્યરૂપ હોતું નથી, પરંતુ ભાવનિપેક્ષ રૂપ જ હોય છે, કારણ કે તે પ્રકારની પર્યાય તે આત્મામાં નિષ્પન્ન થઈ ચુકી હોય છે, અને આ નામ તેનું જ વાચક છે. એજ પ્રમાણુ બાકીનાં કર્મોના ક્ષયથી નિષ્પન્ન થયેલાં નામોના વિષયમાં પણ સમજવું. તેથી જ ક્ષાયિક ભાવના પ્રકરણમાં સૂત્રકારે તેમનો નિર્દેશ કર્યો છે. ॥ સૂ० ૧૫૪ ॥

अथ क्षायोपशमिकं नाम निरूपयति—

मूलम्—से किं तं खओवसमिण्? खओवसमिण् दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—खओवसमे य, खओवसमनिष्फण्णे य। से किं तं खओवसमे? खओवसमे चउण्हं घाइकम्माणं खओवसमेणं, तं जहा—णाणावरणिज्जस्स, दंसणावरणिज्जस्स, मोहणिज्जस्स, अंतरायस्स, खओवसमेणं, से तं खओवसमे। से किं तं खओवसमनिष्फण्णे? खओवसमनिष्फण्णे अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा खओवसमिया आंभिणिबोहियणाणलद्धी, जाव खओवसमिया मणपज्जवणाणलद्धी, खओवसमिया मइअण्णाणलद्धी, खओवसमिया सुयअण्णाणलद्धी, खओवसमिया विभंगणाणलद्धी, खओवसमिया चक्खुदंसणलद्धी, अचक्खुदंसणलद्धी ओहिदंसणलद्धी, एवं सम्मदंसणलद्धी मिच्छादंसणलद्धी, सम्ममिच्छादंसणलद्धी, खओवसमिया सामाइयचरित्तलद्धी, एवं छेयोवट्ठावणलद्धी, परिहारविसुद्धियलद्धी, सुहुमसंपरायचरित्तलद्धी, एवं चरित्ताचरित्तलद्धी, खओवसमिया दाणलद्धी, एवं लाभलद्धी, भोगलद्धी, उवभोगलद्धी, खओवसमिया वीरियलद्धी, एवं पंडियवीरियलद्धी, बालवीरियलद्धी, बालपंडियवीरियलद्धी, खओवसमिया सोइंदियलद्धी, जाव खओवसमिया फासिंदियलद्धी, खओवसमिण् आयांरंगधरे, एवं सुयगडंगधरे, ठाणंमधरे, समवायंगधरे, विवाहपण्णत्तिधरे, नायाधम्मकहाधरे, उवासगदसाधरे, अंतगडदसाधरे, अणुत्तरोववाइयदसाधरे, पण्हावागरणधरे, विवागसुयधरे

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १५५ क्षायोपशमिकभावनिरूपणम्

७८१

खओवसमिण दिट्ठिवायधरे, खओवसमिण णवपुट्ठी, खओवसमिण जाव चउदस्सपुट्ठी, खओवसमिण गणी, खओवसमिण वायए, से तं खओवसमनिष्फण्णे, से तं खओवसमिण ॥सू० १५५॥

छाया—अथ कोऽसौ क्षायोपशमिकः ? क्षायोपशमिकः द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—क्षायोपशमश्च क्षायोपशमनिष्पन्नश्च । अथ कोऽसौ क्षायोपशमः ? क्षायोपशमः—चतुर्णां धातिकर्मणां क्षायोपशमः खलु तद्यथा—ज्ञानावरणीयस्य, दर्शनावरीयस्य मोहनीयस्य, भन्तरायस्य क्षायोपशमः खलु, स एष क्षायोपशमः । अथ कोऽसौ क्षायोपशमनिष्पन्नः ? क्षायोपशमनिष्पन्नः अनेकविधः प्रज्ञप्तः—तद्यथा—क्षायोपशमिकी आभिनिर्वाञ्छिक, ज्ञानलब्धिः, यावत् क्षायोपशमिकी मनः पर्ययज्ञानलब्धिः, क्षायोपशमिकी मत्प्राप्तलब्धिः, क्षायोपशमिकी श्रुताज्ञानलब्धिः, क्षायोपशमिकी विभक्तज्ञानलब्धिः, क्षायोपशमिकी चक्षुर्दर्शनलब्धिः, अचक्षुर्दर्शनलब्धिः, अवधिदर्शनलब्धिः, एवं सम्यक्दर्शनलब्धिः, मिथ्यादर्शनलब्धिः, सम्यग्मिथ्यादर्शनलब्धिः, क्षायोपशमिकी सामायिकचारित्र्यलब्धिः, एवं छेदोपस्थापनलब्धिः परिहारविशुद्धिकलब्धिः, सूक्ष्मसंपरायचारित्र्यलब्धिः, एवं चरित्राचरित्रलब्धिः क्षायोपशमिकी दामलब्धिः, एवं लोमलब्धिः, भोगलब्धिः, उपभोगलब्धिः, क्षायोपशमिकी वीर्यलब्धिः, एवं पण्डितवीर्यलब्धिः, बालवीर्यलब्धिः बालपण्डितवीर्यलब्धिः, क्षायोपशमिकी श्रेष्ठेन्द्रियलब्धिः, यावत् क्षायोपशमिकी स्पर्शेन्द्रियलब्धिः, क्षायोपशमिकः आचाराङ्गधरः एवं सूत्रकृताङ्गधरः, स्थानाङ्गधरः समवायाङ्गधरः, व्याख्याप्रज्ञप्तिधरः, इत्यादिभिरङ्गधरः, उपासकदशाधरः, अन्तर्दृष्टाधरः, अनुचरोपपादिकदशाधरः, मन्त्रयाकरणधरः, विपाकश्रुतधरः, क्षायोपशमिको दृष्टिवादधरः, क्षायोपशमिको नवपूर्वाधरः, क्षायोपशमिको यावत् चतुर्दशपूर्वाधरः, क्षायोपशमिको गणी, क्षायोपशमिको वाचकः । स एष क्षायोपशमनिष्पन्नः । स एष क्षायोपशमिकः ॥सू० १५५॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ कोऽसौ क्षायोपशमिकः ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—क्षायोपशमिकः

अथ सूत्रकार क्षायोपशमिकभावका निरूपण करते हैं—

‘से किं तं खओवसमिण’ इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं खओवसमिण ?) हे भदन्त ! वह क्षायोपशमिक क्या है ?

इसे सूत्रकार क्षायोपशमिक भावना निरूपण करे छे—

“से किं तं खओवसमिण” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं खओवसमिण ?) हे भदन्त ! वह क्षायोपशमिक क्या है ?

अ० ९१

ક્ષયોપશમ-ક્ષયોપશમનિષ્પન્નેતિ દ્વિવિધઃ । તત્ર-ક્ષયોપશમઃ-કેવલજ્ઞાનપ્રતિબંધક-
સ્ય જ્ઞાનાવરણીયદર્શનાવરણીયમોહનીયાન્તરાયરૂપઘાતિકર્મચતુષ્ટયસ્ય ક્ષયોપશમો-
બોધ્યઃ । અયં ભાવઃ-વિવક્ષિતજ્ઞાનાદિગુણવિષાતકસ્ય કર્મણઃ ઉદયપ્રાપ્તસ્ય ક્ષયઃ=
સર્વથાઽપગમઃ, અનુદીર્ઘસ્ય તસ્યૈવ કર્મણ ઉપશમઃ=વિપાકત ઉદયાભાવઃ । તતઃ
ક્ષયોપલક્ષિતઃ ઉપશમ ઇતિ । નનુ ઔપશમિકે ભાવે ઉદયપ્રાપ્તસ્ય કર્મણઃ સર્વથા

ઉત્તર-સ્વઓવસમિષ્ણુવિદ્ધે પળ્લસે) ક્ષયોપશમિક દો પ્રકાર
કા પ્રજ્ઞસ હુઆ હૈ । (તં જહા) જૈસે-સ્વઓવસમે ય સ્વઓવસમનિષ્ણ-
ળે ય) એક ક્ષયોપશમરૂપ ક્ષાયોપશમિક ઓર દસરા ક્ષયોપશમનિષ્ણ
ક્ષાયોપશમિક ।

(સે કિં તં સ્વઓવસમે ?) હે ખદન્ત । વહ ક્ષાયોપશમ વ્યા હૈ ।

ઉત્તર-(સ્વઓવસમે ચરુહં ઘાઠકમ્માણં સ્વઓવસમેણં) કેવલ
જ્ઞાન કે પ્રતિબંધક જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય મોહનીય ઓર અન્ત-
રાય ઇન ચાર ઘાતિક કર્મોં કા જો ક્ષયોપશમ હૈ વહ ક્ષાયોપશમ હૈ ।
હસકા તાત્પર્યં યહ હૈ કિં વિવક્ષિત જ્ઞાનાદિક ગુણોં કો ઘાત કરને વાલે
ઉદય પ્રાપ્ત કર્મ કા ક્ષય-સર્વથા અપગમ-ઓર અનુદીર્ઘં ઉસી કર્મ કા
ઉપશમ-વિપાક કી અપેક્ષા સે ઉદયાભાવ હસ પ્રકાર ક્ષય સે ઉપલક્ષિત
જો ઉપશમ હૈ વહી ક્ષયોપશમ હૈ ।

શંકા-ઔપશમિક ભાવ મેં ઉદય પ્રાપ્ત કર્મકા સર્વથા ક્ષય હૈ ઓર

ઉત્તર—(સ્વઓવસમિષ્ણુવિદ્ધે પળ્લસે, તંજહા) ક્ષાયોપશમિક ભાવના
નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર કહ્યા છે—(સ્વઓવસમે ય સ્વઓવસમનિષ્ણળે ય) (૧)
ક્ષયોપશમ રૂપ ક્ષાયોપશમિક અને (૨) ક્ષયોપશમ નિષ્પન્ન ક્ષાયોપશમિક.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં સ્વઓવસમે ?) હે ભગવન્ ! તે ક્ષાયોપશમનું સ્વરૂપ
કેવું છે ?

ઉત્તર—(સ્વઓવસમે ચરુહં ઘાઠકમ્માણં સ્વઓવસમેણં) કેવળજ્ઞાનના પ્રતિબં-
ધક-કેવળજ્ઞાનને પ્રકટ થતું શૈકનારાં-જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય
અને અન્તરાય, આ ચાર ઘાતિકા કર્મોના જે ક્ષયોપશમ રૂપ ભાવ છે, તેને
ક્ષયોપશમ કહે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—વિવક્ષિત જ્ઞાનાદિક
ગુણોના ઘાત કરનારા ઉદય પ્રાપ્ત કર્મોના ક્ષય (સર્વથા અપગમ) અને
અનુદીર્ઘ એજ કર્મોના ઉપશમ (વિપાકની અપેક્ષાએ ઉદયાભાવ), આ પ્રકારનો
ક્ષયથી ઉપલક્ષિત જે ઉપશમ છે, તેનું નામ જ ક્ષયોપશમ છે.

શંકા—ઔપશમિક ભાવમાં ઉદયપ્રાપ્ત કર્મોના સર્વથા ક્ષય થાય છે અને

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૧ ક્ષાયોપશમિકભાવનિરૂપણમ્

૭૨૩

ક્ષયઃ, અનુદયપ્રાપ્તં તુ કર્મ ન ક્ષીણં નાપિ તસ્યોદયોઽતસ્તસ્યોપશમશ્ચ ઉચ્યતે, ક્ષાયોપશમિકેઽસ્મિન્નપિ ભાવે ઉદીર્ણસ્ય ક્ષયઃ, અનુદીર્ણસ્ય ચોપશમ ઇત્યુચ્યતે, ઇત્યમનયોઃ કો ભેદઃ? इति चेदाह-कर्मणः क्षयोपशमे तु विपाकत एवोदयाभावः, प्रदेशस्तु अस्त्येवोदयः, औपशमिके भावे तु कर्मणः प्रदेशतोऽप्युदयो नास्तीत्यनयोर्भेदो बोध्यः। क्षयोपशमस्तु ज्ञानावरणादि कर्मचतुष्टयस्यैव भवति, नान्येषां

અનુદય પ્રાપ્ત જો કર્મ છે તેનો ક્ષય પણ થતો તથા અને ઉદય પણ થતો નથી પરંતુ ઉપશમ જ થાય છે. એજ પ્રકારે ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં પણ ઉદીર્ણ કર્મનો ક્ષય અને અનુદીર્ણ કર્મનો ઉપશમ થતો હોય છે. તે પછી ઔપશમિક અને ક્ષાયોપશમિકમાં શો ભેદ છે ?

ઉત્તર-ક્ષયોપશમ ભાવમાં જો કર્મનો ઉપશમ કહેવામાં આવ્યો છે તે વિપાકની અપેક્ષાએ જ ઉદયાભાવ (ઉદયનો અભાવ) રૂપ ઉપશમ બતાવવામાં આવ્યો છે, પ્રદેશની અપેક્ષાએ બતાવવામાં આવ્યો નથી. પ્રદેશની અપેક્ષાએ તે ત્યાં કર્મનો ઉદય જ છે. પરંતુ ઔપશમિક ભાવમાં જે ઉપશમ બતાવવામાં આવ્યો છે, તે વિપાક અને પ્રદેશ, આ બંનેની અપેક્ષાએ બતાવવામાં આવ્યો છે એટલે કે ઔપશમિક ભાવમાં કર્મનો વિપાકોદય હોતો નથી, પણ પ્રદેશોદય હોય છે. નીરમ્પ કરાયેલાં કર્મો દ્વિકૈતુ' વેદન પ્રદેશોદય રૂપ છે અને રસવિશિષ્ટ દ્વિકૈતુ' વિપાકવેદન વિપાકોદય રૂપ છે. જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય

અનુદય પ્રાપ્ત જે કર્મ છે તેનો ક્ષય પણ થતો તથા અને ઉદય પણ થતો નથી પરંતુ ઉપશમ જ થાય છે. એજ પ્રકારે ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં પણ ઉદીર્ણ કર્મનો ક્ષય અને અનુદીર્ણ કર્મનો ઉપશમ થતો હોય છે. તે પછી ઔપશમિક અને ક્ષાયોપશમિકમાં શો ભેદ છે ?

ઉત્તર-ક્ષયોપશમ ભાવમાં કર્મનો જે ઉપશમ કહેવામાં આવ્યો છે તે વિપાકની અપેક્ષાએ જ ઉદયાભાવ (ઉદયનો અભાવ) રૂપ ઉપશમ બતાવવામાં આવ્યો છે, પ્રદેશની અપેક્ષાએ બતાવવામાં આવ્યો નથી. પ્રદેશની અપેક્ષાએ તે ત્યાં કર્મનો ઉદય જ છે. પરંતુ ઔપશમિક ભાવમાં જે ઉપશમ બતાવવામાં આવ્યો છે, તે વિપાક અને પ્રદેશ, આ બંનેની અપેક્ષાએ બતાવવામાં આવ્યો છે એટલે કે ઔપશમિક ભાવમાં કર્મનો વિપાકોદય હોતો નથી, પણ પ્રદેશોદય હોય છે. નીરમ્પ કરાયેલાં કર્મો દ્વિકૈતુ' વેદન પ્રદેશોદય રૂપ છે અને રસવિશિષ્ટ દ્વિકૈતુ' વિપાકવેદન વિપાકોદય રૂપ છે. જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય

૭૨૪

અનુયોગશાસ્ત્ર

કર્મિણી, નિષિદ્ધત્વાત્ । સમ્પતિ પ્રથમં મેદ્યુપસંહરન્નાહ-સ एष क्षयोपशम इति ।
 મેદ્યુપસં મેદ્ય પૃચ્છતિ-અથ કોડસો ક્ષયોપશમનિષ્પન્નઃ? इति । उत्तरयति-क्षयोपश-
 म्निषण्णः अनेकविधः प्रपन्नः । अनेकविधस्त्वमेवाह-तद्यथा-क्षायोपशमिकी आभि-
 निबोधिकज्ञानलब्धिः क्षयोपशમેन निषण्णा क्षायोपशमिकी, सा का? इत्यु-
 आभिनिबोधिकज्ञानलब्धिरिति । आभिनिबोधिकज्ञानं=मतिज्ञानं तस्य लब्धिः=प्राप्तिः
 इयं हि-स्वावरणकर्मक्षयोपशમેनोपसम्पद्यते, अत एवेयं क्षायोपशमिकीत्युच्यते ।
 इत आरभ्य क्षायोपશમિકી મનઃ પર્યવજ્ઞાનલબ્ધિરિતિ યાવદ્ વક્તવ્યમ્ । તત્તજ્ઞાન

દે અન્ય કર્મો કો નહીં હોતા હૈ । (સે તં સ્વઓવસમે) હસ પ્રકાર યહ-
 ક્ષયોપશમ હૈ (સે કિં તં સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે ?) હે મદંત ! ક્ષયોપશમ
 નિષ્પન્ન ક્ષાયોપશમિક ભાવ કયા હૈ ?

ઉત્તર-(સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે અણેગવિહે પણ્ણતે) ક્ષયોપશમ નિષ્પન્ન
 ક્ષાયોપશમિક ભાવ અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) હે
 પ્રકાર યે હૈ-

(સ્વઓવ સમિયા આભિણિબોહિયાણલહ્દી જાવ સ્વઓવસમિયા મણ-
 પજ્જવણાણલહ્દી) ક્ષયોપશમિકી આભિણિબોધિક જ્ઞાનલબ્ધિ-અભિ-
 નિબોધક નામ મતિજ્ઞાન હૈ । હસ મતિજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા નામ આભિણિબોધિક
 જ્ઞાનલબ્ધિ હૈ । યહ આભિણિબોધિકજ્ઞાનલબ્ધિ મતિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે
 ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । હસલિયે હસે ક્ષાયોપશમિકી કહી હૈ, હસી પ્રકાર
 શ્રુતજ્ઞાનલબ્ધિ શ્રુતજ્ઞાનાવરણકર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । અવધિ-

નીય અને અંતરાય, આ ચાર પ્રકારનાં કર્મોનાં જ ક્ષયોપશમ થાય છે, અન્ય કર્મોનાં
 ક્ષયોપશમ થતો નથી. (સે તં સ્વઓવસમે) આ પ્રકારનું ક્ષયોપશમનું સ્વરૂપ છે.
 પ્રશ્ન-(સે કિં તં સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે ?) હે ભગવન્ ! ક્ષયોપશમનિષ્પન્ન
 ક્ષાયોપશમિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે અણેગવિહે પણ્ણતે) ક્ષયોપશમનિષ્પન્ન ક્ષાયો-
 પશમિક ભાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે....(સ્વઓવસમિયા
 આભિણિબોહિયાણલહ્દી જાવ સ્વઓવસમિયા મણપજ્જવણાણલહ્દી) ક્ષાયોપશમિકી
 આભિણિબોધિક જ્ઞાનલબ્ધિ મતિજ્ઞાનને આભિણિબોધિક જ્ઞાન કહે છે. આ
 મતિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિનું નામ આભિણિબોધિક જ્ઞાનલબ્ધિ છે. મતિજ્ઞાનાવરણ
 કર્મના ક્ષયોપશમથી આ આભિણિબોધિક જ્ઞાનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે તેથી
 તેને ક્ષાયોપશમિકી કહેવામાં આવી છે. જોજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનાવરણ કર્મના
 ક્ષયોપશમથી શ્રુતજ્ઞાનલબ્ધિની, અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી

વિરૂપ:-કુત્સિતો મજ્જો વિમજ્જઃ, સ એવ જ્ઞાનં-વિમજ્જજ્ઞાનમ્-જ્ઞાનત્વં ચાસ્ય અર્થપરિજ્ઞા-
નાત્મકત્વાદુ બોધ્યમ્ । મિથ્યાદૃષ્ટિદેનાદેરવધિજ્ઞાનં વિમજ્જજ્ઞાનમુચ્યતે । વિમજ્જજ્ઞાનસ્ય-
લબ્ધિઃ=વિમજ્જજ્ઞાનલબ્ધિઃ । इयमपि स्वाशरणक्षयोपशममेनैव भवति, अतोऽस्या अपि
क्षायोपशમિકીર્ત્ત્વં बोध्यम् । एवं मिथ्यात्वादिकर्मणः क्षयोपशमसाध्याः शेषा अपि
सम्यग्दर्शनादिलब्धयो यथासम्भवं भावनीयाः । तथा-क्षायोपशमिकी वीर्यलब्धिः-
इयं हि वीर्यान्तरायकर्मक्षयोपशमाद् भवति । एवं-पण्डितवीर्यलब्धिः, बालवीर्यलब्धिः,

અચક્ષુર્દંસણલઢી) ક્ષાયોપશમિકીચક્ષુઃ દર્શન લબ્ધિ, (અચક્ષુર્દંસણ-
લઢી, ઓહિદંસણલઢી) અચક્ષુર્દર્શનલબ્ધિ અવધિદર્શનલબ્ધિ હૈ । इन
में चक्षुर्दर्शनावरण के क्षयोपशम से चक्षुर्दर्शन लब्धि, अचक्षुर्दर्शनावरण
के क्षायोपशम से अचक्षुर्दर्शनलब्धि और अवधिदर्शनावरण के क्षयोप-
शम से अवधिदर्शनलब्धि होती है, (एवं सम्मदंસणलઢી, મિચ્છાદંસણ-
લઢી સમ્મમિચ્છાદંસણલઢી) इसप्रकार से सम्यक्दर्शनलब्धि, मिथ्या-
दर्शनलब्धि (खओवसमिया सामाह्यचरित्तलઢી, एवं છેયોવટ્ટાવણલઢી,
પરિહારવિસુદ્ધિલઢી સુદ્ધમસંપરાયચરિત્તલબ્ધિ एवं ચરિત્તાચરિત્તલઢી)
ક્ષાયોપશમિકી સામાયિક ચરિત્રલબ્ધિ છેદોપસ્થાપનાલબ્ધિ, પરિહારવિ-
શુદ્ધિક લબ્ધિ, સૂક્ષ્મ સંપરાયચારિત્રલબ્ધિ, ચારિત્રાચરિત્રલબ્ધિ (खओव
समिया दाणलઢી, एवं લાભલઢી, મોગલઢી, ઉપમોગલઢી) ક્ષાયોપશ-
મિકી દાનલબ્ધિ લાભલબ્ધિ, મોગલબ્ધિ ઉપમોગલબ્ધિ, (खओवसमिया

(खओवसमिया चक्षुर्दंसणलઢી) ક્ષાયોપશમિકી ચક્ષુઃ દર્શનલબ્ધિ,
(અચક્ષુર્દંસણલઢી, ઓહિદંસણલઢી) અચક્ષુર્દર્શનલબ્ધિ અને અવધિદર્શનલબ્ધિ
પણ ક્ષાયોપશમ નિવૃત્તિના ક્ષાયોપશમિક લાવરૂપ છે, કારણ કે ચક્ષુઃદર્શનાવરણ
કર્મના ક્ષાયોપશમથી ચક્ષુઃદર્શનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ
કર્મના ક્ષાયોપશમથી અચક્ષુર્દર્શનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે અને અવધિદર્શના-
વરણના ક્ષાયોપશમથી અવધિદર્શનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે. (एवं सम्मदंસणલઢી,
મિચ્છાદંસણલઢી, સમ્મમિચ્છાદંસણલઢી) એજ પ્રમાણે સમ્યક્દર્શનલબ્ધિ,
મિથ્યાદર્શનલબ્ધિ, સમ્યગ્મિથ્યાદર્શનલબ્ધિ, (खओवसमिया सामाह्यचरित्त-
लઢી, एवं છેયોવટ્ટાવણલઢી, પરિહારવિસુદ્ધિલઢી) ક્ષાયોપશમિકી સામાયિક
ચારિત્રલબ્ધિ, છેદોપસ્થાપનાલબ્ધિ, પરિહારવિશુદ્ધિકલબ્ધિ, (सुद्धमसंपराय
चरित्तलઢી, एवं ચરિત્તાચરિત્તલઢી) સૂક્ષ્મ સંપરાય ચરિત્રલબ્ધિ, ચારિત્રા-
ચારિત્રલબ્ધિ, (खओवसमिया दाणलઢી, एवं લાભલઢી, મોગલઢી, ઉપમોગલઢી)
ક્ષાયોપશમિકી દાનલબ્ધિ, લાભલબ્ધિ, મોગલબ્ધિ અને ઉપમોગલબ્ધિ,
(खओवसमिया वीरियलઢી) ક્ષાયોપશમિકી વીર્યલબ્ધિ, (एवं પંથિયવીરિયલઢી,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૫ ક્ષાયોપશમિકભાવનિરૂપણમ્

૭૨૭

બાલપંડિતવીર્યલબ્ધિરિતિ બોધ્યમ્ । અયં ભાવઃ—પંડિતાઃ=સાધવઃ, બાલાઃ= અવિરતાઃ, બાલપંડિતાઃ=દેશવિરતાઃ । एषां स्वस्ववीर्यान्तरायकर्मक्षयोपशमेन स्वस्ववीर्यलब्धिः प्रादुर्भवतीति । तथा—ક્ષાયોપશમિકી શ્રોત્રેન્દ્રિયલ્લબ્ધિઃ યાવત્ ક્ષાયોપશમિકી સ્પર્શેન્દ્રિયલ્લબ્ધિઃ । અત્ર—ઇન્દ્રિયાણિ લઙ્ઘ્યુપયોગરૂપાણિ ભાવેન્દ્રિયાણિ બોધ્યાનિ, તેષાં લ્લબ્ધિઃ=મતિશ્રુતજ્ઞાનચલ્લુરચલ્લુર્દર્શનાવરણક્ષયોપશમજન્યત્વાત્ ક્ષાયોપશમિકીતિ બોધ્યમ્ । તથા—ક્ષાયોપશમિક આચારાઙ્ગધરે સ્ત્યારમ્બ ક્ષાયોપશમિકો વાચકે સ્ત્યન્તોઽપિ શ્રુતજ્ઞાનાવરણકર્મક્ષયોપશમજન્યો બોધ્યઃ । આચારાઙ્ગધરત્વાદિ પર્યાયા દિ શ્રુતજ્ઞાનમમત્તાઃ, શ્રુતજ્ઞાનં ચ તદાવરણકર્મક્ષયોપશમેન નિષ્પદ્યતે, અત આચારાઙ્ગધરાદયઃ ક્ષાયોપશમિકા બોધ્યા ઇતિ ભાવઃ ।

વીર્યલબ્ધી) ક્ષાયોપશમિકી વીર્યલબ્ધિ, (એવં પંડિયવીર્યલબ્ધી) પંડિત વીર્યલબ્ધિ (બાલ વીર્યલબ્ધી) બાલવીર્યલબ્ધિ (બાલપંડિયવીર્યલબ્ધી) બાલપંડિત વીર્યલબ્ધિ (સ્વઓવસમિયા સોહંદિયલબ્ધી) ક્ષાયોપશમિકી શ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધિ (જાવ) યાવત્ (સ્વઓવસમિયા ફાસિંદિયલબ્ધી) ક્ષાયોપશમિકી સ્પર્શન ઇન્દ્રિયલબ્ધિ (સ્વઓવસમિય આચારંગધરે) ક્ષાયોપશમિક આચારાંગધારી, (એવં સુયગઙ્ગધરે, ઠાળંગધરે, સમવાયંગધરે, વિવાહપણ્ણસિધરે, નાયાધમ્મકહાધરે) સૂત્રકૃતાંગધારી, સ્થાનાંગધારી, સમવાયાઙ્ગધારી, વિવાહપ્રજ્ઞસિધારી જ્ઞાતાધર્મકથાધારી (ઉવાસગદસાધરે) ઉપાસકદશાધારી, (અંતગઙ્ગદસાધરે) અન્તકૃદશાધારી, (અણુત્તરોવવાહ્યદસાધરે) અણુત્તરોપપાતિક દશાધારી, (પણ્ણવાગરણધરે) પ્રશ્નવ્યાકરણધારી, (વિવાગ સુયધરે) વિપાક શ્રુતધારી (સ્વઓવસમિય દિદ્ધિવાયધરે) ક્ષાયોપશમિક દિદ્ધિવાદધારી (સ્વઓવસમિય ણવપુઠ્ઠી) ક્ષાયોપશમિક નવ-

બાલવીર્યલબ્ધી, બાલપંડિયવીર્યલબ્ધી) ક્ષાયોપશમિકી પંડિતવીર્યલબ્ધિ, બાલવીર્યલબ્ધિ અને બાલપંડિતવીર્યલબ્ધિ.

(સ્વઓવસમિયા સોહંદિયલબ્ધી જાવ સ્વઓવસમિયા ફાસિંદિયલબ્ધી) ક્ષાયોપશમિકી શ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધિથી લઈને ક્ષાયોપશમિકી સ્પર્શેન્દ્રિયલબ્ધિપર્યન્તની પાંચ પ્રકારની લબ્ધિઓ, (સ્વઓવસમિય આચારંગધરે) ક્ષાયોપશમિક આચારાંગધારી, (એવં સુયગઙ્ગધરે, ઠાળંગધરે, સમવાયંગધરે, વિવાહ પણ્ણસિધરે, નાયાધમ્મકહાધરે, ઉવાસગદસાધરે, અણુત્તરોવવાહ્યદસાધરે, પળ્ણવાગરણધરે, વિવાગસુયધરે,) એજ પ્રમાણે ક્ષાયોપશમિક સૂત્રકૃતાંગધારી, સ્થાનાંગધારી, સમવાયાંગધારી, વિવાહપ્રજ્ઞસિ (વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસિ)ધારી, ઉપાસકદશાધારી, અન્તકૃતદશાધારી, અણુત્તરોપપાતિક દશાધારી, પ્રશ્નવ્યાકરણધારી વિપાકશ્રુતધારી, (સ્વઓવસમિય દિદ્ધિવાયધરે)

પ્રકૃતપ્રસંગસંહારગ્રાહ-સ. એષ ક્ષાયોપશમનિષ્પન્ન ઇતિ । ક્ષાયોપશમિકો ભાવઃ પ્રકૃષ્ટિઃ
ઈતિ સૂચયિતુમાદ-સ એષ ક્ષાયોપશમિક ઇતિ ॥૬૦ ૧૫૫॥

પૂર્વધારી (સ્વઓવસમિષ્ણ જાવ ચઢદસ પુઞ્વી) ક્ષાયોપશમિક યાવત્
ચતુર્દશપૂર્વધારી (સ્વઓવસમિષ્ણ ગણી) ક્ષાયોપશમિક ગણી સ્વઓવસમિષ્ણ
વાયવ) ક્ષાયોપશમિકવાચક (સે તં સ્વઓવસમનિષ્ણ)
હસપ્રકાર યે સર્વ ક્ષાયોપશમ નિષ્ણ હૈં (સે તં સ્વઓવસમિષ્ણ) યહ ચહ
ક્ષાયોપશમિક હૈ । -

આવાર્થ-હસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારને ક્ષાયોપશમિક ક્યા હૈં હસકા
વિવેચન કિયા હૈં । ઉન્હોને કહા-હૈં કિ એક તો ક્ષાયોપશમ હી ક્ષાયોપશ-
મિક હૈં ઓર દૂસરા ક્ષયોપશમ નિષ્ણ ક્ષાયોપશમિક હૈં । હનમેં ચાર
ધાતિક કર્મોં કા ક્ષય ઉપલક્ષિત જો ઉપશમ હૈં વહ ક્ષાયોપશમિક હૈં ।
ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાન કે આવારક જો કર્મ હૈં હનમેં સર્વધાતિસ્પર્દક
(કર્માંશ) ઓર દેશધાતિસ્પર્દક યે દોનોં પ્રકાર કે સ્પર્દક પાયે જાતે હૈં ।
હસલિયે હનકા ક્ષયોપશમ હોતા હૈં । નવ નોકધાયોં મેં કેવલ દેશધા-
તિસ્પર્દક હી પાયે જાતે હૈં હસલિયે હનકા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા કેવલ
જ્ઞાનાવરણ આદિ પ્રકૃતિયોં મેં કેવલ સર્વધાતિસ્પર્દક પાયે જાતે હૈં

ક્ષાયોપશમિક દ્વિવાહધારી, (સ્વઓવસમિષ્ણ જહપુઞ્વી) ક્ષાયોપશમિક નવપૂર્વ
ધારીથી લક્ષને (સ્વઓવસમિષ્ણ જાવ ચઢદસપુઞ્વી) ક્ષાયોપશમિક ચૌદ પૂર્વધારી
પર્યન્તના હવે, (સ્વઓવસમિષ્ણ ગણી) ક્ષાયોપશમિક ગણી, (સ્વઓવસમિષ્ણ
વાયવ) અને ક્ષાયોપશમિક વાચક (સે તં સ્વઓવસમનિષ્ણ) આ બધા ક્ષાયો
પશમ નિષ્ણ બાવે છે. (સે તં સ્વઓવસમિષ્ણ) ક્ષાયોપશમિકેનું આ પ્રકારનું
સ્વરૂપ છે.

આવાર્થ-આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે ક્ષાયોપશમિક ભાવના સ્વરૂપનું
વિવેચન કર્યું છે તેમાં તેમણે એવું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે એક તો ક્ષાયોપશમ જ
ક્ષાયોપશમિક છે અને બીજું ક્ષયોપશમનિષ્ણ ક્ષાયોપશમિક છે. ચાર ધાતિયા
કર્મોના ક્ષયથી ઉપલક્ષિત જે ઉપશમ છે, તેનું નામ ક્ષાયોપશમિક છે.
ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનનું આવરણ કરનારા જે કર્મો છે તેમાં સર્વધાતિ સ્પર્દકો
અને દેશધાતિ સ્પર્દકો રૂપ બન્ને પ્રકારના સ્પર્દકોના સદ્ભાવ રહે છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૫ ક્ષયોપશમિકભાવનિરૂપણમ્

૭૩૧

इसलिये उनका भी क्षयोपशम नहीं होता है। यद्यपि प्रत्याख्यानावरण और अप्रत्याख्यानावरण कषाय सर्वघाति ही हैं—किन्तु उन्हें अपेक्षाकृत देशघाति मान लिया जाता है इसलिये अनंतानुबंधी आदि क्लेशयोपशम बन जाता है। अघातिया कर्मों में तो देशघाति और सर्वघाति यह द्विकल्प ही संभव नहीं, इसलिये उनके क्षयोपशम का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः सूत्रकारने यह तो क्षयोपशम की सामान्य योग्यता का विवेचन किया है। क्षयोपशम और उपशम में केवल अन्तर इतना ही है कि क्षयोपशम में किननेक सर्वघातिस्पर्द्धकों का उदयाभावी क्षय रहता है और कितनेक उन्हीं सर्वघातिस्पर्द्धकों का सदवस्था रूप उपशम रहता है—तथा देशघातिस्पर्द्धकों का उदय रहता है। तब कि उपशम में किसी का भी उदय नहीं रहता है। सबका उपशम ही रहता है—

अब सूत्रकार यह कहते हैं कि किन २ कर्मों के क्षयोपशम से कौन २ से भाव प्रकट होते हैं—मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण अवधिज्ञानावरण, और मनःपर्यवज्ञानावरण के क्षयोपशम से मति, श्रुत,

તેથી તેમનો ક્ષયોપશમ થાય છે. નવ નોકષાયોમાં કેવળ દેશઘાતિ સ્પર્દ્ધકો (કર્મહક્ષિકો)નો જ સદ્ભાવ હોય છે, તેથી તેમનો ક્ષયોપશમ થતો નથી કેવળજ્ઞાનાવરણ આદિ પ્રકૃતિઓમાં કેવળ સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોનો જ સદ્ભાવ હોય છે, તેથી તેમનો ક્ષયોપશમ પણ થતો નથી જો કે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ અને અપ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય સર્વઘાતિ જ છે, પરંતુ તેમને અપેક્ષાકૃત દેશઘાતિ માની લેવામાં આવેલ છે, તેથી અનંતાનુબંધી આદિનો ક્ષયોપશમ સંભવિત બની જાય છે. અઘાતિયા કર્મોમાં તો દેશઘાતિ અને સર્વઘાતિ રૂપ વિકલ્પ જ સંભવી શકતો નથી, તેથી તેમના ક્ષયોપશમનો તો પ્રશ્ન જ ઉદ્ભવતો નથી આ પ્રકારે સૂત્રકારે ક્ષયોપશમની સામાન્ય યોગ્યતાનું અહીં વિવેચન કર્યું છે ક્ષયોપશમ અને ઉપશમ વચ્ચે નીચે પ્રમાણેનું અંતર સમજવું—ક્ષયોપશમમાં કેટલાક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોના ઉદયાભાવી ક્ષય રહે છે અને કેટલાક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે તથા દેશઘાતિ સ્પર્દ્ધકોના ઉદય રહે છે પરંતુ ઉપશમમાં તેમનો ઉદય રહેતો નથી પણ ઉપશમ જ રહે છે.

હવે સૂત્રકાર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે કયાં કયાં કર્મોના ક્ષયોપશમથી કયા કયા ભાવ પ્રકટ થાય છે—મતિજ્ઞાનાવરણ, શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, અવધિજ્ઞાનાવરણ અને મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ કર્મોના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે મતિજ્ઞાન, શ્રુત-

૭૩૪

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

અર્થે અને મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રકટ હોતે હૈં। સૂત્ર મેં લઙ્ઘિ શબ્દ ક અર્થ પ્રાપ્તિ હૈ। યહ સ્ત્રીલિંગ હૈ હસલિયે “ક્ષાયોપશમિકી” શબ્દ મેં સ્ત્રીલિંગ મેં વ્યવહૃત કિયા ગયા હૈ। અપને ૨ આચારક કર્મોં કે ક્ષાયોપશમ સે મતિજ્ઞાનાદિકોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ। હસલિયે યહ પ્રાપ્તિ ક્ષાયોપશમિકી હૈ। કેવલજ્ઞાન કો ક્ષાયોપશમિક નહીં માના ગયા હૈ। યહ તો ક્ષાયિક હૈ। કયોં કિ યહ કેવલજ્ઞાનાવરણ કે ક્ષય સે હોતા હૈ।

શંકા-યદિ કેવલજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે હોતા હૈ-તો ફિર ઉસે એસા કયોં કહા જાતા હૈ કિ યહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે હોતા હૈ?

ઉત્તર-આત્મા કા સ્વભાવ કેવલજ્ઞાન હૈ। ઈસે કેવલજ્ઞાનાવરણ આવૃત કિયે છુપ હૈં। તથાપિ વહ પૂરા આવૃત નહીં હો-પાતા, અતિમન્ય જ્ઞાન પ્રકટ હી બના રહતા હૈ। જિસે મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ આવૃત કરતે હૈં, ઈસસે સ્પષ્ટ હૈ કિ કેવલજ્ઞાન કો પ્રકટ ન હોને દેના જ્ઞાનાવરણ કે પાંચોં મેદોં કા સાક્ષાત્ રોકતા હૈ ઓર મતિજ્ઞાનાવરણ આલિ પંચરા સે। ઈસલિયે જ્ઞાનાવરણકર્મ કે ક્ષય સે કેવલજ્ઞાન હોતા હૈ

જ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રકટ થાય છે. સૂત્રમાં જે ‘લઙ્ઘિ’ પદ વપરાયું છે તેનો અર્થ ‘પ્રાપ્તિ’ સમજવો। ‘લઙ્ઘિ’ પદ સ્ત્રીલિંગમાં હોવાથી તેની સાથે ‘ક્ષાયોપશમિકી’ આ પદનો પણ સ્ત્રીલિંગમાં જ પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે મતિજ્ઞાન આદિકોની પ્રાપ્તિ ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે તે પ્રત્યેક જ્ઞાનના આવરણ (આવરણ કરનારાં) કર્મોનો ક્ષયોપશમ થાય છે. તેથી તેમની તે પ્રાપ્તિને ક્ષાયોપશમિકી કહી છે. કેવળજ્ઞાનને ક્ષયોપશમિક ગણવામાં આવતું નથી, તેને તો ક્ષાયિક જ ગણવામાં આવે છે, કારણ કે કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયથી જ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે.

શંકા-જો કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયને લીધે કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થતું હોય, તો એવું શા માટે કહેવામાં આવે છે કે જ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષય થવાથી કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે?

ઉત્તર-આત્માનો સ્વભાવ કેવળજ્ઞાન છે તેના ઉપર કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મનું આવરણ હોય છે છતાં પણ તે પૂરેપૂરું આવૃત થઈ શકતું નથી અતિ મન્દ જ્ઞાન પ્રકટ જ થતું રહે છે, કે જેને મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ આવૃત કરે છે તેથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે કેવળજ્ઞાનને પ્રકટ ન થવા દેવામાં જ્ઞાનાવરણના પાંચે ભેદો કારણભૂત બને છે કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મ કેવળજ્ઞાનને રાક્ષાત્ રૂપે રોકે છે અને મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર કર્મો તેને પરંપરા

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૫ ક્ષાયોપશમિકભાવનિરૂપણમ

૫૭૧

ऐसा कहा जाता है। मतिअज्ञानावरण, श्रुतअज्ञानावरण, और विभंगज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से मत्त्यज्ञान, श्रुताज्ञान, और विभंगज्ञान प्रकट होते हैं। यहां अज्ञान से तात्पर्य ज्ञानाभावा से नहीं है, क्योंकि ज्ञानावरण रूप अज्ञान औदयिक भाव है। यह ज्ञानावरण कर्म के उदय से होता है। किन्तु कुत्सित ज्ञान का नाम अज्ञान है। जब मतिज्ञान आदि मिथ्यादर्शन के उदय से दूषित होते तब वे कुत्सितज्ञान कहलाते हैं। विभंग में भंगशब्द प्रकरणवशावधि वाचक है। वैसे तो यह प्रकार भेद-का वाचक है। और “वि” शब्द विरूप-कुत्सित अर्थ का वाचक है। इस तरह विरूपः भंगः विभंगः विभंग एव ज्ञानम्” ऐसी इसकी व्युत्पत्ति है। इस विभंग में जो ज्ञान पना है, वह अर्थ परिज्ञानात्मक होने से है। मिथ्यादृष्टि देवादिकों का अवधिज्ञान विभंगज्ञान कहलाता है। चक्षुर्दर्शनावरण, अचक्षुर्दर्शनावरण, और अवधिदर्शनावरण के क्षयोपशम से चक्षुर्दर्शन अचक्षुर्दर्शन और अवधिदर्शन प्रकट होते हैं। इसलिये क्षायोपशमिक सम्पददर्शन

રૂપે રોકે છે. તેથી “ જ્ઞાનાવરણકર્મના ક્ષયથી કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે.” એવું કહેવામાં આવે છે.

મતિઅજ્ઞાનાવરણ, શ્રુતઅજ્ઞાનાવરણ અને વિભંગજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે મત્યજ્ઞાન, શ્રુતાજ્ઞાન અને વિભંગજ્ઞાન પ્રકટ થાય છે. અહીં “ અજ્ઞાન ” પદ દ્વારા જ્ઞાનાભાવ સમજવાનો નથી કારણ કે જ્ઞાનાભાવ રૂપ અજ્ઞાન તો ઔદયિક ભાવરૂપ છે, અને જ્ઞાનાવરણ કર્મના ઉદયથી તે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે. પરંતુ કુત્સિતજ્ઞાનને અજ્ઞાન કહે છે. ત્યારે મતિજ્ઞાન આદિ મિથ્યાદર્શનના ઉદયથી દૂષિત હોય છે, ત્યારે તેમને કુત્સિત જ્ઞાનરૂપ ગણવામાં આવે છે. ‘વિભંગ’ પદમાં જે “ભંગ” પદ છે તે અહીં અવધિવાચક છે. આમ તો તે પદ પ્રકારભેદનું વાચક ગણાય છે. અને “વિ” પદ વિરૂપકુત્સિત અર્થનું વાચક છે. વિભંગજ્ઞાનની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે-“વિરૂપઃ ભંગઃ વિભંગઃ વિભંગ એવ જ્ઞાનં વિભંગજ્ઞાનમ્” આ વિભંગમાં જે જ્ઞાનપણ છે તે અર્થપરિજ્ઞાનાત્મકતાની અપેક્ષાએ છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ દેવાદિકોના અવધિજ્ઞાનને વિભંગજ્ઞાન કહે છે. ચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ અને અવધિદર્શનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે ચક્ષુર્દર્શન અચક્ષુર્દર્શન અને અવધિદર્શન પ્રકટ થાય છે. તેથી તેમને પણ ક્ષાયોપશમિક કહેવામાં આવેલ છે. મિથ્યાત્વકર્મના ક્ષયોપશમથી ક્ષયોપશમિક સમ્પદ

કી પ્રાપ્તિ મિથ્યાત્વ કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । હસી પ્રકાર સે ઔર બી લલ્લિયોં મેં યથાસંભવ ક્ષાયોપશમિકતા જાન લેની ચાહિયે । વીર્ય લલ્લિ વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । હસી પ્રકાર સે પંડિતવીર્ય લલ્લિ બાલવીર્ય લલ્લિ, બાલપંડિતવીર્ય લલ્લિ કો બી જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-પંડિત સે યહાં સાધુજન બાલ સે અવિરતિજન, ઔર બાલપંડિત સે દેશવિરતજન લિયે ગયે હૈં । હનકો અપને ૨ વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે અપની ૨ વીર્યલલ્લિ પ્રકટ હોતી હૈ ।

સમ્યગ્મિથ્યાદર્શનલલ્લિ સમ્યક્ત્વ કા ભેદ હૈ । હસલિયે યહ લલ્લિ મિથ્યાત્વકર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । સામાયિકચારિત્રલલ્લિ, છેદોપસ્થાપનલલ્લિ, પરિહારવિશુદ્ધિકલલ્લિ, સૂક્ષ્મ સંપરાયચારિત્રલલ્લિ ઔર ચારિત્રાચારિત્રલલ્લિ યે સબ ચારિત્ર-મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । હસીલિયે હનમેં ક્ષાયોપશમિકતા હૈ । સંયત કે કર્મોં કો નિવારણ કરને કે લિયે જો અન્તરંગ ઔર બહિરંગ પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ વહ ચારિત્ર હૈ-અર્થાત્ આત્મિક શુદ્ધ દશા મેં સ્થિર રહને કા પ્રયત્ન કરના હી ચારિત્ર હૈ । પરિણામ શુદ્ધિ કે તરતમ ખાવ કી અપેક્ષા ઔર નિમિત્ત ભેદ સે

ગદશ'નની પ્રાપ્તિ થાય છે. એજ પ્રમાણે બીજી બધી સૂત્રોક્ત લલ્લિઓમાં પણ યથાસંભવ ક્ષાયોપશમિકતા સમજી લેવી. વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષાયોપશમથી વીર્યલલ્લિ પ્રકટ થાય છે. એજ પ્રમાણે પંડિતવીર્ય લલ્લિ, બાલ વીર્યલલ્લિ અને બાલપંડિતવીર્ય લલ્લિને પણ ક્ષાયોપશમિક જ સમજવી જોઈએ. પંડિતપદ અહીં સાધુજનનું, બાલપદ અવિરતયુક્તજનનું અને બાલ-પંડિતપદ દેશવિરત જનનું વાચક છે. તેમને પોતપોતાના વીર્યાન્તરાય કર્મનો ક્ષાયોપશમ થવાથી પંડિતવીર્ય લલ્લિ આદિની પ્રાપ્તિ થાય છે.

સમ્યગ્મિથ્યાદર્શન લલ્લિ સમ્યક્ત્વના એક ભેદ રૂપ છે. તેથી મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમથી તે લલ્લિની પ્રાપ્તિ થાય છે, સામાયિક ચારિત્ર લલ્લિ, છેદોપસ્થાપનલલ્લિ, પરિહાર વિશુદ્ધિક લલ્લિ, સૂક્ષ્મ સંપરાય લલ્લિ અને ચારિત્રાચારિત્ર લલ્લિ, આ બધી લલ્લિઓની પ્રાપ્તિ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમને લીધે થાય છે, તેથી તેમનામાં ક્ષાયોપશમિકતા સમજવી જોઈએ. કર્મોંનું નિવારણ કરવા માટે સંયત જે અન્તરંગ અને બહિરંગ પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું નામ ચારિત્ર છે. એટલે કે આત્મિક શુદ્ધ દશામાં સ્થિર રહેવાનો પ્રયત્ન કરવો તેનું જ નામ ચારિત્ર છે. પરિણામ શુદ્ધિના

ચારિત્ર કે સામાયિક આદિ પાંચ વિભાગ કિયે ગયે છે । વિશેષ ચુલાસા
 હસ પ્રકાર સે હૈ-સામાયિક કા અર્થ હૈ સમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન, સંયમ ઓર
 તપ હનકે સાથ એકય સ્થાપિત કરને કી અર્થાત્ સમભાવ મેં સ્થિર રહને
 કે લિયે સમ્પૂર્ણ અશુદ્ધ પ્રવૃત્તિયોં કો ત્યાગ કરને કી આત્મપરિણામોં
 કી વૃત્તિ બનાયે રલ્ખના । હસ સામાયિક ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ સામાયિક
 ચારિત્ર લલ્ગિ હૈ । સામાયિક ચારિત્ર મેં રાગદ્વેષ કા નિરોધ કર કે સબ
 આવશ્યક કર્તવ્યોં મેં સમતા બનાયે રલ્ખના હી હોતા હૈ । હસકે નિયત-
 કાલ ઓર અનિયતકાલ એસે દો ભેદ હોતે હૈ । જિનકા સમય નિશ્ચિત
 હૈ એસે સ્વાધ્યાય આદિ નિયતકાલ સામાયિક હૈ । ઓર જિન કા સમય
 નિયત નહીં હૈ એસે ઈર્ષ્યાપથ આદિ અનિયતકાલ સામાયિક હૈ । જૈસે
 અહિંસાવ્રત સબ વ્રતોં કા મૂલ હૈ, વૈસે હી સામાયિક ચારિત્ર સબ
 ચારિત્રોં કા મૂલ હૈ । મૈં “ સર્વસાવચ્ચયોગ સે જીવન પર્યંત વિરત હૂં ”
 હસ એક વ્રત મેં સમાવેશ હો જાને સે એક સામાયિક વ્રત માના હૈ ઓર
 વહી એક વ્રત પાંચ રૂપ સે વિવક્ષિત હોને કે કારણ છેદોપસ્થાપના
 ચારિત્ર કહલાતા હૈ । પ્રથમ દીક્ષા લેને કે બાદ વિશિષ્ટ શ્રુત કા અભ્યાસ

તત્તમ ભાવની અપેક્ષાએ અને નિમિત્ત ભેદની અપેક્ષાએ ચારિત્રના સામાયિક
 આદિ પાંચ વિભાગ પાડવામાં આવ્યા છે. તેનું વધુ સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે-
 સમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન, સંયમ અને તપની સાથે એકય સ્થાપિત કરવાની-એટલે કે
 સમભાવમાં સ્થિર રહેવાને માટે સમસ્ત અશુદ્ધ પ્રવૃત્તિઓનો ત્યાગ કરવાની
 આત્મપરિણામોની વૃત્તિ રાખવી તેનું નામ સામાયિક છે આ સામાયિક
 ચારિત્રની પ્રાપ્તિનું નામ સામાયિક ચારિત્ર લલ્ગિ છે. સામાયિક ચારિત્રની
 આરાધનામાં રાગદ્વેષનો નિરોધ કરીને સઘળાં આવશ્યક કર્તવ્યોમાં સદા
 સમભાવ જ રાખવો પડે છે. તેના નિયતકાળ અને અનિયતકાળ રૂપ એ
 ભેદો છે જેમનો સમય નિશ્ચિત છે એવાં સ્વાધ્યાય આદિને નિયતકાળ
 સામાયિક કહે છે. જેમનો સમય નિયત નથી એવા ઇર્ષ્યાપથ આદિને અનિ-
 યતકાળ સામાયિક કહે છે. જેમ અહિંસાવ્રતને સઘળાં વ્રતોનું મૂળ માનવામાં
 આવે છે, એજ પ્રમાણે સામાયિક ચારિત્રને સઘળાં ચારિત્રોનું મૂળ માન-
 વામાં આવે છે. “હું જીવનપર્યંત સર્વ સાવચયોગેથી વિરત થઈ છું”
 આ એક વ્રતમાં સમાવેશ થઈ જવાને કારણે સામાયિક વ્રતને એક જ વ્રત
 ગણવામાં આવ્યું છે. અને એજ એક વ્રત પાંચ રૂપે વિવક્ષિત થવાને
 કારણે છેદોપસ્થાપના ચારિત્ર કહેવાય છે. પ્રથમ દીક્ષા લીધા બાદ વિશિષ્ટ

કર ચુકને પર વિશેષ શુદ્ધિ કે નિમિત્ત જો જીવન પર્યન્ત પુનઃ દીક્ષા લી જાતી છે એવું પ્રથમ લી હુઈ દીક્ષા કા છેદ કરકે ફિર નવેસરે સે જો દીક્ષા કા આરોપણ કિયા જાતા છે-વહ છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર છે. જિસમેં સ્વાસ વિશિષ્ટ પ્રકાર કે તપઃ પ્રધાન આચાર કા પાલન કિયા જાતા છે વહ પરિહારવિશુદ્ધિ ચારિત્ર છે. જિસમેં ક્રોધ આદિ કષાયોં કા તો ઉદય નહીં હોતા, સિર્ફ લોભ કા અંશ અતિ સૂક્ષ્મરૂપ મેં રહતા છે, વહ સૂક્ષ્મ સંપરાય ચારિત્ર છે. યહ ચારિત્ર કેવલ દશવેં ગુણસ્થાન મેં હોતા છે. ચારિત્રાચારિત્ર કા નામ દેશ ચારિત્ર છે. યહ અનન્તાનુબંધી આદિ અષ્ટવિધ કષાય કે ક્ષયોપશમ આદિ સે આવિર્ભૂત હોતા છે. તથા સર્વવિરતિ રૂપ ચારિત્ર અનન્તાનુબંધી આદિ ૧૨ પ્રકાર કે કષાય કે ક્ષાયોપશમ આદિ સે આવિર્ભૂત હોતા છે. દાન, લાભ, ભોગ, ઉપભોગ ઓર વીર્ય इनकी लब्धि वीर्यान्तराय कर्म के दानान्तराय आदि के क्षायोपशम आदि से होती है,, । श्रोत्रेन्द्रिय से लेकर जो स्पर्शान्द्रिय तक की लब्धियां कही हैं । वे द्रव्येन्द्रिय की अपेक्षा से नहीं कही हैं, किन्तु भावेन्द्रिय की अपेक्षा से कही हैं ।

શ્રુતનો અભ્યાસ કરી લીધા બાદ વિશેષશુદ્ધિને નિમિત્તે જે જીવનપર્યન્તની પુનઃ દીક્ષા લેવામાં આવે છે અને પ્રથમ લીધેલી દીક્ષાનો છેદ કરીને (ત્યાગ કરીને) ફરી નવેસરથી જે દીક્ષાનું આરોપણ કરવામાં આવે છે, તેનું નામ છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર છે. જેમાં વિશિષ્ટ પ્રકારના તપઃ પ્રધાન આચારનું પાલન કરવામાં આવે છે, તેનું નામ પરિહારવિશુદ્ધિ ચારિત્ર છે. જે ચારિત્રમાં ક્રોધાદિ કષાયોનો ઉદય રહેતો નથી, પરંતુ લોભનો અંશ અતિ સૂક્ષ્મ પ્રમાણમાં બાકી રહી જાય છે એવા ચારિત્રનું નામ સૂક્ષ્મ સંપરાય ચારિત્ર છે. દસમાં ગુણસ્થાનમાં જે આ ચારિત્રનો સદ્ભાવ રહે છે અંશતઃ ચારિત્ર અથવા દેશચારિત્રને ચારિત્રાચારિત્ર કહે છે. અનન્તાનુબંધી આદિ આઠ પ્રકારના કષાયના ક્ષયોપશમ આદિથી તેનો આવિર્ભાવ થાય છે. સર્વવિરતિ રૂપ ચારિત્ર અનન્તાનુબંધી આદિ ૧૨ પ્રકારના કષાયના ક્ષયોપશમ આદિથી આવિર્ભૂત (પ્રકટ) થાય છે. અન્તરાય કર્મના પ્રકાર રૂપ દાનાન્તરાય, લાભાન્તરાય, ભોગાન્તરાય, ઉપભોગાન્તરાય અને વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે દાનલબ્ધિ, લાભલબ્ધિ, ઉપભોગલબ્ધિ અને વીર્યલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે. એજ પ્રમાણે શ્રોત્રેન્દ્રિયથી લઈને સ્પર્શેન્દ્રિયલબ્ધિ પર્યન્તની પણ પાંચ લબ્ધિઓ કહી છે. આ પાંચે લબ્ધિઓ દ્રવ્યેન્દ્રિયની અપેક્ષાએ કહી નથી, પણ ભાવે-

સમ્પતિ પારિણામિકં નામ નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં પારિણામિષ ? પારિણામિષ દુવિહે પળ્લસે, તં જહા—સાહપારિણામિષ ય અણાહપારિણામિષ ય। સે કિં તં સાહપારિણામિષ ? સાહપારિણામિષ અળેગવિહે પળ્લસે તં જહા—જુળ્લસુરા, જુળ્લગુલો જુળ્લઘયં જુળ્લતંદુલા ચેવ। અબ્ભા ય અબ્ભરુક્કલા સંજ્ઞાગંધવળ્લગરા ય ॥૧॥ ઉક્કાવાયા દિસાદાહા

ભાવેન્દ્રિયલબ્ધિ ઉપયોગ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કી હૈ । इनकी लब्धि मति ज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, चक्षुर्दर्शनावरण, अचक्षुर्दर्शनावरण, के क्षयोपशम से होती है । तात्पर्य यह है कि मतिज्ञानावरणीय कर्म आदि का क्षायोपशम जो एक प्रकार का आत्मिक परिणाम है वह लब्धीन्द्रिय हैं । और लब्धि, निवृत्ति, तथा उपकरण इन तीनों के मिलने से जो रूपादि विषयों का सामान्य और विशेषबोध होता है वह उपयोगेन्द्रिय है । मतिज्ञान तथा चक्षु अचक्षुर्दर्शनरूप है । इसी प्रकार आचाराङ्ग, आदि १२ अंगों को धारण करने रूप तथा वाचकरूप पर्यायि हैं वे सब श्रुतज्ञान प्रभव हैं । श्रुतज्ञान, श्रुतज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से होता है । इसलिये ये आचाराङ्गधर आदि पर्यायें क्षायोपशमिक हैं । इस प्रकार क्षायोपशम निष्पन्न क्षायोपशमिक भाव का स्वरूप है ॥सू०१५५॥

ન્દ્રિયની અપેક્ષાએ કહી છે ભાવેન્દ્રિયો લબ્ધિ ઉપયોગના લેદથી બે પ્રકારની છે મતિજ્ઞાનાવરણ, શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, ચક્ષુઃદર્શનાવરણ અને અચક્ષુઃદર્શનાવરણના ક્ષયોપશમથી તેમની લબ્ધિ થાય છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે મતિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ આદિના ક્ષયોપશમ રૂપ બે એક પ્રકારનું આત્મિક પરિણામ છે, તે લબ્ધીન્દ્રિય રૂપ છે અને લબ્ધિ, નિવૃત્તિ તથા ઉપકરણ, આ ત્રણે મળવાથી રૂપાદિ વિષયોનો બે સામાન્ય અને વિશેષ બોધ થાય છે તે ઉપયોગેન્દ્રિય રૂપ છે ઉપયોગેન્દ્રિય મતિજ્ઞાન તથા ચક્ષુ અચક્ષુ દર્શન-રૂપ છે એજ પ્રમાણે આચારાંગ આદિ ૧૨ અંગને ધારણ કરવા રૂપ તથા વાચક રૂપ બે પર્યાયો છે તે શ્રુતજ્ઞાન સ્વરૂપ છે શ્રુતજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી શ્રુતજ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી આચારાંગધર આદિ ૧૨ પર્યાયો પણ ક્ષાયોપશમિક છે. આ પ્રકારનું ક્ષયોપશમ નિષ્પન્ન ક્ષાયોપશમિક ભાવનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ०૧૫૫॥

गजियं विज्जू णिग्घाया जूव्या जक्खादित्ता धूमिया महिया
 रयुग्घाया चंदोवरागा सूरुवरागा चंदपरिवेसा सूरपरिवेसा पडि-
 चंदा पडिसूरा इंदधणू उदगमच्छा कविहसिया अमोहावासा
 वासधरा गामा णगरा घरा पव्वया पायाला भवणा निरया
 रयणप्पहा सक्करप्पहा वालुयप्पहा पंकप्पहा धूमप्पहा तमप्पहा
 तमतमप्पहा सोहम्मे जाव अच्चुए गेवेज्जे अणुत्तरे ईसिप्पभारा
 परमाणुपोग्गले दुपएसिए जाव अणंतपएसिए । से तं साइ-
 पारिणामए । से किं तं अणाइपारिणामए ? अणाइपारिणामिए
 धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए
 पुग्गलत्थिकाए अच्चासमए लोए अलोए भवसिद्धिया अभव-
 सिद्धिया । से तं अणाइपारिणामिए । से तं पारिणामिए ॥सू०१५६॥

छाया—अथ कोऽसौ पारिणामिकः ? पारिणामिको द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-
 सादिपारिणामिकश्च अनादिपारिणामिकश्च । अथ कोऽसौ सादिपारिणामिकः
 सादिपारिणामिकः—अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—जीर्णसुरा जीर्णगुडः जीर्णघृतम्
 जीर्णतण्डुलाश्चैव । अभ्राणि च अभ्रवृक्षाः संध्या गन्धर्वनगराणि च ॥१॥ उत्का-
 पाताः, दिग्दाहाः, गर्जितं, विद्युन्, निर्घाताः, यूपकाः, यक्षा दीप्तकानि,
 धूमिका, मिहिका, रजउव्धाताः, चन्द्रोपरागाः, सूर्योपरागाः, चन्द्रपरिवेष्टाः,
 सूर्यपरिवेष्टाः, प्रतिचन्द्राः, प्रतिसूर्याः, इन्द्रधनुः, उदकमत्स्याः, कपिहसितानि,
 अमोघा, वर्षाणि, वर्षधराः, ग्रामाः, नगराणि, गृहाः, पर्वताः, पातालाः, भव-
 नानि, निरया, रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा,
 तमस्तःप्रभा, सौधमौ, यावत् अच्युतः, ग्रैवेयकः, अनुत्तरः, ईशप्रभाभारा, परमाणु
 पुद्गलो, द्विप्रदेशिको, यावत् अनन्तप्रदेशिकः । सएष सादिपारिणामिकः । अथ को-
 ऽसौ अनादिपारिणामिकः ? अनादिपारिणामिकः—धर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायः,
 आकाशस्तिकायः जीवास्तिकायः पुद्गलस्तिकायः अच्चासमयः, लोकाः, अलोकः,
 भवसिद्धिकाः, अभवसिद्धिकाः, सएष अनादि पारिणामिकः । सएष पारिणा-
 मिकः ॥ सू ० १५६ ॥

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૬ પારિણામિકભાવનિરૂપણમ્

૭૩૭

ટીકા- ‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ-

અથ કોઽસૌ પારિણામિકઃ ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-પારિણામિકઃ-
પરિણમનં=સર્વથાઽપરિત્યક્તપૂર્વાવસ્થસ્ય યદ્રૂપાન્તરેણ ભવનં સ પરિણામઃ, ઉક્તંચ-

‘પરિણામો હ્યર્થાન્તરગમનં ન ચ સર્વથા વ્યવસ્થાનમ્ ।

ન ચ સર્વથા વિનાશઃ, પરિણામસ્તદ્વિદામિષ્ટઃ ॥ ઇતિ ।

સ એવ તેન ત્રા નિર્વૃત્તઃ પારિણામિકઃ । સ સાદિ પારિણામિકાનાદિ પારિણામિકેતિ શેઢ-
દ્વયવિશિષ્ટઃ । તત્ર સાદિપારિણામિકઃ અનેકવિધઃ મજ્જતઃ, તદ્યથા-જીર્ણસુરા, જીર્ણગૃહો,

અથ સૂત્રકાર પારિણામિક ભાવ કા નિરૂપણ કરતે હૈં-

“સે કિં તં પારિણામિય ?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થઃ- (સે કિં તં પારિમાણામિય) હે મદન્ત ! પારિણામિક ભાવ
કયા હૈ ?

ઉત્તર-(પારિણામિય, દુવિદે પળ્લસે) પારિણામિક ભાવ દો પ્રકાર
કા-કહા ગયા હૈ । (તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈં-(સાહપારિણમિય ય અણાહ
પારિણામિય ય સાદિ પારિણામિક ઔર અનાદિ પારિણામિક । જિસમેં
દ્રઘ્ય કી પૂર્વઅવસ્થા કા તો સર્વથા પરિત્યાગ હો નહીં ઔર એક અવસ્થા
સે દૂસરી અવસ્થાઈં હોતી રહેં હસીકા નામ પરિણમન-પરિણામ હૈ ।
કહા બી હૈ-“પરિણામો” ઇત્યાદિ યહી વાત અન્યત્ર કહી હૈ, કિ
એક અવસ્થા સે દૂસરી અવસ્થા કા હોના યહી પરિણામ હૈ । અર્થાત્ સ્વ-
રૂપ મેં સ્થિત રહકર ઉત્પન્ન તથા નષ્ટ હોના પરિણામ હૈ, સર્વથા વ્યવસ્થાવ

હવે સૂત્રકાર પારિણામિક ભાવના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે-

“સે કિં તં પારિણામિય ?” ઇત્યાદિ-

શબ્દાર્થઃ-(સે કિં તં પારિણામિય ?) હે ભગવન્ ! પારિણામિક ભાવનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પારિણામિય દુવિદે પળ્લસે, તંજહા) પારિણામિક ભાવના નીચે પ્રમાણે
બે પ્રકાર કહ્યા છે-(સાહ પારિણામિય ય અણાહ પારિણામિય ય) (૧) સાદિ પારિ-
ણામિક અને (૨) અનાદિ પારિણામિક જે પારિણામમાં દ્રવ્યની પૂર્વ અવસ્થાનો
સર્વથા પરિત્યાગ થતો ન હોય એવી રીતે એક અવસ્થામાંથી બીજી અવસ્થાઓ
થતી રહે, એવા પારિણમનને સાદિપરિણામ કહે છે કહ્યું પણ છે કે-“પરિણામો”
ઇત્યાદિ એજ વાત બીજી જગ્યાએ પણ આ પ્રમાણે જ કહી છે-એક અવ-
સ્થામાંથી બીજી અવસ્થા રૂપ પારિણમન થવું તેનું નામ પારિણામ છે

યા સર્વથા વિનાશ પરિણામ નહીં છે । પરિણામ કા દૂસરા નામ પર્યાય છે । જિસ દ્રવ્ય કા જો સ્વભાવ છે ઉસી કે ખીતર ઉસકા પરિણમન-પરિવર્તન હોતા છે । જૈસે મનુષ્ય બાલક સે ઓર યુવા યુવા સે વૃદ્ધ હોતા છે પર વહ મનુષ્યત્વ કા પરિત્યાગ નહીં કરતા, વૈસે હી પ્રત્યેક દ્રવ્ય અપની મર્યાદા કે ખીતર રહતા હુઆ હી પરિવર્તન કરતા રહતા છે । વહ ન તો સર્વથા નિત્ય છે ઓર ન સર્વથા ક્ષણિક હી । નૈયાયિક આદિ ભેદવાદી દર્શન જો ગુણ ઓર દ્રવ્ય કા સર્વથા-એકાન્ત-ભેદ માનતે હૈં ઉનકે મન્તવ્યાનુસાર દ્રવ્ય તો સર્વથા અવિકૃત રહતા છે ઓર ગુણ ઉસમેં ઉત્પન્ન વિનષ્ટ હોતે રહતે હૈં યહી વહ પરિણામ છે । તથા બૌદ્ધલોગ વસ્તુમાત્ર કો ક્ષણસ્થાયી ઓર નિરન્વય વિનાશી માનતે હૈં, ઉનકે મતાનુસાર પરિણામ કા અર્થ ઉત્પન્ન હોકર વસ્તુ કા સર્વથા નાશ હો જાના એસા નિકલતા છે । ઇન્હી મન્તવ્યોં કા નિરાકરણ કરને કે નિમિત્ત “ન ચ સર્વથા વ્યવસ્થાનમ્” ન ચ સર્વથા વિનાશઃ પરિણામઃ” એસા કહેા છે । અતઃ ‘અર્થાન્તરગમનપરિણામઃ’ યહી પરિણામ કા લક્ષણ યુક્તિ યુક્ત છે । એસા જો પરિણામ છે વહી પારિણામિક છે અથવા ઇસ

એટલે કે સ્વરૂપમાં સ્થિત રહિને ઉત્પન્ન તથા નષ્ટ થવું તેનું નામ પરિણામ છે સર્વથા વ્યવસ્થાન અથવા સર્વથા વિનાશને પરિણામ કહી શકાય નહીં પરિણામનું ખીલું નામ પર્યાય છે. જે દ્રવ્યને જે સ્વભાવ છે તે સ્વભાવમાં રહીને જ તેનું પરિણમન (પરિવર્તન) થાય છે. જેમ કે મનુષ્ય બાલકમાંથી યુવાન અને યુવાનમાંથી વૃદ્ધ અને છે, પરંતુ તે મનુષ્યત્વને પરિત્યાગ કરતો નથી. એજ પ્રમાણે પ્રત્યેક દ્રવ્ય પોતાની મર્યાદામાં રહીને જ પરિણમન પામતું રહે છે. તે સર્વથા નિત્ય પણ નથી અને સર્વથા ક્ષણિક પણ નથી. નૈયાયિક આદિ ભેદવાદી દર્શન જે ગુણ અને દ્રવ્યને સર્વથા (એકાન્તતઃ) ભેદ માને છે તેમની માન્યતા પ્રમાણે દ્રવ્ય તો સર્વથા અવિકૃત જ રહે છે, અને તેમાં ગુણની ઉત્પત્તિ તથા વિનાશ થતો રહે છે. તેનું નામ જ પરિણામ છે. બૌદ્ધ મતવાદીઓ વસ્તુ માત્રને ક્ષણસ્થાયી અને નિરન્વય વિનાશી માને છે. તેમના મત પ્રમાણે પરિણામને અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—“ઉત્પન્ન થઈને વસ્તુને સર્વથા નાશ થઈ જવો તેનું નામ પરિણામ છે” આ માન્યતાઓનું ખંડન કરવા માટે સૂત્રકારે અહીં આ પ્રકારનું કથન કર્યું છે—“ન ચ સર્વથા વિનાશઃ પરિણામઃ” તેથી “અર્થાન્તરગમનપરિણામઃ” આ પરિણામનું લક્ષણ જ યુક્તિયુક્ત લાગે છે. એવું જે પરિણામ છે, એજ પારિણામિક છે. અથવા તે પરિણામથી જે નિષ્પન્ન છે, તેનું નામ જ પારિણામિક છે.

‘अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १५६ पारिणामिकभावनिरूपणम्

७३९

जीर्णघृतं, जीर्णतण्डुला इति । अत्र जीर्णत्वपरिणामस्य सादित्वात् सादिपारिणामिकता बोध्या सुरादि-द्रव्याणि नव्यजीर्णोभयावस्थयोरप्यनुगतानि । तत्र नव्यतायां निवृत्तायां जीर्णतारूपेण यः परिणामः स सुखावबोधो भवति, अतो जीर्णेति विशेषणविशिष्टाः सुरादयः शब्दा उक्ताः । सुरादिद्रव्याणां तु नव्यावस्थायामपि सादि पारिणामिकत्वमस्त्येव । कारणद्रव्यस्यैव नूतनसुरादिरूपेण परिणमनात्, परिणाम से जो निर्वृत्ति (निष्पन्न) है वह पारिणामिक है । (से किं तं साहपारिणामि ?) हे भदन्त ! सादिपारिणामिक क्या है ?

उत्तर—(साहपारिणामि ए अणेगविहे पणत्ते) सादि पारिणामिक अनेक प्रकार का कहा गया है । (तं जहा) जैसे—(जुणसुरा, जुणगुल्फे, जुणघयं, जुणतंदुला चैव) जीर्णसुरा, जीर्णगुड़, जीर्णघृत, जीर्णतंदुल, सुरा में, गुड़ में घृत में, एवं तंदुलों में जो जीर्णपर्यायरूप परिणाम आया है वह सादि है । क्योंकि जीर्णता के काल की पूर्वकोटि ज्ञात हो सकती है । सुरादि द्रव्य नव्य पर्याय और जीर्ण पर्याय इन दोनों अवस्थाओं में भी अनुगतरूप से रहते हैं । जब नव्य-नवीनता-पर्याय इनसे निवृत्त हो जाती है—तब जीर्णता पर्याय आजाती है यह बात सभी के लिये स्पष्ट है । इसी कारण सूत्रकार ने यहां जीर्ण विशेषण से विशिष्ट इन सुरा आदि शब्दों को रखा है ।

शंका—यह बात हम मानते हैं कि सुरादिक द्रव्यों में जीर्ण अवस्था में सादि पारिणामिकता है क्योंकि इनमें जीर्णअवस्था के समय की

प्रश्न—(से किं तं साह पारिणामि ?) हे भगवन् ! सादि पारिणामिकत्वं स्वप्न डेवुं छे ?

उत्तर—(साहपारिणामि ए अणेगविहे पणत्ते) सादि पारिणामिक भाव अनेक प्रकारान्ना कही छे. (तं जहा) जेम के—(जुणसुरा, जुणगुल्फे, जुणघयं, जुणतंदुला चैव) अर्थात् सुरा, अर्थात् गोण, अर्थात् घी, अने अर्थात् तंदुल. अन्ना सुराभां, गोणभां, घीभां अने तंदुलभां जे अर्थात् पर्याय रूप पारिणाम आब्धुं छे, ते सादि पारिणामिक भाव रूप छे, कारण के अर्थात् ताना काणनी पूर्व कोटि नाष्ठी शक्य छे. सुरादि द्रव्य नवी पर्याय अने अर्थात् पर्याय, जे गन्ने अवस्थाओमां पक्ष अनुगत रूपे रहै छे न्यारे नवीनता पर्याय आ द्रव्यो-भांथी निवृत्त थरुं नाथ छे त्यारे ते द्रव्योमां अर्थात् ता पर्याय आवी नाथ छे, आ बात सौने भाटे स्पष्ट छे. ते कारणे ज सूत्रकारे अर्थात् विशेषण युक्त सुरादिक द्रव्योने सादि पारिणामिक भावना हुंटा-तो रूपे अही प्रकट करैल छे.

शंका—जे बात तो अमे भानी लक्ष्ये छीमे के सुरादिक द्रव्योमां अर्थात् अवस्थाभां सादि पारिणामिकता डेय छे, कारण के ते द्रव्योमां अर्थात्

अन्यथा कार्यानुत्पत्तिः पसज्येत । तथा-अभ्राणि=मेघाः। अभ्रवृक्षाः=वृक्षाकारेण
परिमतान्यभ्राण्येव । सन्ध्या=कृष्ण नीलाद्याकाशपरिणतिमान् अहोरात्रसन्धि-

पूर्वकोटि જ્ઞાત હો જાતી છે । પરંતુ ફનકી જો નવ્ય અવસ્થા છે ઉસમેં
સાદિપારિણામિકતા કેસે માની જા સકતી છે ? ક્યોંકિ ઉસકે
સમય કી પૂર્વકોટિ તો જ્ઞાત નહીં છે ?

ઉત્તર-એસી બાત નહીં છે-ક્યોંકિ નવ્ય પર્યાય કે ભી સમય કી
પૂર્વકોટિ જ્ઞાત હો જાતી છે । વહ ફસ પ્રકાર સે-કિ સુરાદિરૂપ જો નવ્ય
પર્યાય છે । વહ સુરાદિજનક કારણ દ્રવ્યોં સે હી ઉદ્ભૂત હુઈ છે । અતઃ
ઉસમેં ભી સાદિ પારિણામિકતા છે । તાત્પર્ય કહને કા યહ છે, કિ સુરાદિ
જનક જો દ્રવ્ય હેં વે હાં સુરાદિરૂપ પરિણામ સે પરિણમિત હો જાતે હેં
અતઃ યહ સુરાદિરૂપ પર્યાય ઉનકી સાદિ પર્યાય હેં ઓર જબ યહ સાદિ-
રૂપ પર્યાય ઉનમેં સે કાલાન્તર મેં નિવૃત્ત હો જાતી છે તથ ઉસકી નિવૃત્તિ
હોતે હી ઉનમેં જીર્ણતારૂપ પર્યાય આ જાતી છે । ફસ પ્રકાર સુરાદિદ્રવ્યોં
મેં નવ્યતા જીર્ણતા સાદિ પરિણામ છે । યદિ યહ બાત ન માની જાવે
કિ ઉપાદાન કારણ દ્રવ્ય હી કાર્યરૂપ સે પરિણમિત હોતા છે તો ફિર
કાર્ય કી ઉત્પત્તિ હી નહીં હો સકતી છે ।

અવસ્થાના સમયની પૂર્વકોટિ જ્ઞાત થઈ જાય છે, પરંતુ તેમની જે નવ્ય
(નવીન) અવસ્થા છે, તેમાં સાદિ પારિણામિકતા કેવી રીતે માની શકાય તેમ
છે ? તેના સમયની પૂર્વકોટિ તો જ્ઞાત હોતી નથી ?

ઉત્તર—એવી વાત શક્ય નથી, કારણ કે નવીન પર્યાયના સમયની પૂર્વ
કોટિ પણ જ્ઞાત થઈ જાય છે. તે આ પ્રકારે સમજવું-સુરાદિ દ્રવ્ય રૂપ જે
સંબંધી પર્યાય છે તે સુરાદિજનક કારણ દ્રવ્યોમાંથી જ ઉદ્ભવી હોય છે. તેથી
તેમાં પણ સાદિ પારિણામિકતાનો સદ્ભાવ રહે છે. આ કથનનો બાવાર્થ
એ છે કે સુરાદિજનક જે દ્રવ્યો છે તેઓ જ સુરાદિરૂપ પરિણામમાં પરિણમિત
થઈ જાય છે, તેથી તેમની આ સુરાદિરૂપ પર્યાય સાદિ પર્યાય રૂપ જ છે,
અને જ્યારે કાલાન્તરે આ સાદિ રૂપ પર્યાય તે દ્રવ્યોમાંથી નિવૃત્ત થઈ જાય
છે, ત્યારે તેની નિવૃત્તિ થતાં જ તે દ્રવ્યોમાં જીર્ણતા રૂપ પર્યાય આવી
જાય છે, આ પ્રકારે સુરાદિ દ્રવ્યોમાં નવીનતા (નવ્યતા) અને જીર્ણતા સાદિ
પરિણામ રૂપ જ ગણી શકાય છે, જે એ વાત માનવામાં ન આવે કે ઉપા-
દાનકારણ દ્રવ્ય જ કાર્ય રૂપે પરિણમિત થાય છે, તે કાર્યની ઉત્પત્તિ જ થઈ શકે નહીં.

તથા-(અન્નયા ય અન્નરુક્ષા, સંજ્ઞા, ગંધઘ્વણગરા ય) અન્ન (મેઘ),

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १५६ पारिणामिकभावनिरूपणम्

७४१

कालः। गन्धर्व नगराणि=उत्तमोत्तम प्रासादोपशोभित नगराकृतितया परिणतास्त-
थाविधनमःपुद्गलाः। उल्कापाताः=आकाशप्रदेशतस्तेजः पुञ्जपतनानि। दिग्दाहा=
अन्यतरस्यां दिशि नमःप्रदेशे ज्वालामालाकरालित ज्वालावभासनानि। तथा-गर्जितं
विद्युत् एतौ प्रसिद्धावेव। निर्घाताः=विद्युत्पाताः। तथा-यूपकाः=शुक्लपक्षीय-
दिनप्रयावस्यायिनः संध्याच्छेदावरणा बालचन्द्रेति प्रसिद्धाः=॥उक्तं चावश्यकं-

“संज्ञाच्छेद्यावरणो य जूपओ सुकदिण तिन्नि” ॥

छाया—संध्याच्छेदावरणश्च यूपकः शुक्ले दिनानि त्रीणि—इति ॥

तथा-यक्षादीप्तानि=नभसि दृश्यमानाः पिशाचाकृतयोऽग्नयः धूमिका=नभसि
रुक्षः प्रविरलो धूम इव दृश्यमानो ‘धूमिका’ इत्युच्यते। महिका-जलकणयुता

तथा-(अन्धाय अन्धकृत्वा, संज्ञा गंधर्वनगराय)अभ्र-मेघ अभ्र-
वृक्ष-वृक्षाकार में परिणमित हुए मेघ, संध्या-अहोरात्रका संधिकाल कि
जिसमें आकाश कृष्ण, नीलादिरूप में परिणत हो जाता है। गंधर्व-
नगर-उत्तमोत्तम प्रासाद से शोभित नगर की आकृति जैसे घने हुए
आकाश पुद्गल (उल्कावाया) उल्कापात आकाश प्रदेश से गिरता हुआ
तेजः पुंज (दिसा दाहा) दिग्दाह-किसी एक दिशाकी ओर आकाश में
जलती हुई अग्नि का आभास-(दिखलाई देना) होना (गज्जिया) गर्जित
मेघ की गर्जना, (विज्जू) विजली (णिग्घाया) निर्घात-विजली का पात
(जूवया) यूपक-शुक्लपक्षसंबन्धी तीन दिनका बालचन्द्र, (जक्खादिता)
पक्षदीप्त-आकाश में दिखलाई देती हुई पिशाचाकृति जैसी अग्नि (धूमिया)
धूमिका-आकाश में रुक्ष एवं विरल दिखलाई पड़ती हुई धूमकी तरह
एक प्रकार की धूमस, (महिया) महिका-जलकण युक्त धूम जैसी भाप

अभ्रवृक्ष (वृक्षाकारे परिणमित भवेत्ता मेघ) संध्या (दिवस अने रात्रिने।
संधिकाण के जेभां आकाश कृष्ण, नीलादि रूपे परिणमित थछ जाय छे),
गंधर्वनगर (उत्तमोत्तम प्रासादोधी शोभता नगरनी आकृति जेवां अनेवां
आकाशपुद्गलो), (उल्कावाया) उल्कापात (आकाशभंडमां सरकतो तेजःपुंज),
(दिसादाहा) दिग्दाह (कौं ओक दिशाभां आकाशनी अंदर प्रवर्तित अग्निने।
आभास थवो), (गज्जिया) मेघनी गर्जना, (विज्जू) विजली, (णिग्घाया), निर्घात
(विजली पडवी), (जूवया) यूपक (शुक्ल पक्षने। तथु दिवसने। बालचन्द्र),
(जक्खादिता) पक्षादीप्त (आकाशभां देखाती पिशाचाकृति जेवी अग्नि), (धूमिया)
धूमिका (धूमस) (महिया) महिका (जलकण युक्त धुमाडा जेवे। वाड धूमस)

सैव । रजउद्धाताः=दिक्षु रजसामुत्थानानि । चन्द्रोपरागाः सूर्योपरागाः-चन्द्र-सूर्याणां राहुग्रहणानि । अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रवर्तिनोऽनेके चन्द्रसूर्याः सन्ति, अतः 'चन्द्रोपरागाः सूर्योपरागाः' इति पदद्वयं बहुत्वेन निर्दिष्टम् । तथा-चन्द्रपरिवेष्टाः सूर्यपरिवेष्टाः-चन्द्रसूर्ययोः परितो बलयाकारपुद्गलपरिणामाः । प्रतिचन्द्रः प्रतिसूर्यः-उत्पातसूचकं द्वितीयचन्द्रादित्यदर्शनम् । इन्द्रधनुः=नभसि नीलपीतादिवर्णविशिष्टं धनुराकारं यद् दृश्यते तदिन्द्रधनुरित्युच्यते । इदं च लोके प्रसिद्धम् । उदकमत्स्याः=इन्द्रधनुः खण्डानि । कपिहसितानि=यदा कदाचिन्नभसि जायमाना अत्युग्रशब्दाः श्रूयन्ते, त एव कपिहसितान्युच्यन्ते । अमोघाः=सूर्यस्य उदयास्तसमये तत्किरणैः समुत्पद्यमाना रेखाविशेषाः । वर्षाणि भरतादीनि । वर्षधराः=

कुहरा-(रघुगवाया) रजउद्धात-दिशाओं में धूलि का उड़ना, (चंदो-बराग-चन्द्रोपराग-चंद्रग्रहण (सूरोबराग) सूर्यग्रहण (चंद्रपरिवेष्टा, सूर-परिवेष्टा) चन्द्र परिवेष्ट-चन्द्रमा की चारों ओर गोलाकार में परिणत हुए पुद्गल परमाणुओं का चक्रबाल (गोल मंडल) सूर्य की चारों ओर गोल चूड़ी के जैसे आकार में परिणत हुए पुद्गल परमाणुओं का चक्र-बाल (पडिचंद्र) प्रतिचंद्र (पडिसूरा) प्रतिसूर्य-उत्पात सूचक द्वितीय चंद्र की ओर सूर्यका दिखलाई पड़ना (इंद्रधनु) इन्द्रधनुष-आकाश में नीलपीत आदि वर्ण विशिष्ट जो धनुष के आकार दिखलाई देता है वह कि जिसे भाषा में "मदान" कहते हैं (उदगमच्छा) उदक मत्स्य इन्द्र धनुष के खंड (कपिहसिया) कपिहसित-यदा कदाचित्-जब कभी आकाश में सुनाई पड़नेवाले अत्युग्रशब्द (अमोहा) अमोघ सूर्य के उदय और अस्त के समय में उसकी किरणोंद्वारा उत्पन्न रेखा विशेष-(वासा) भरत

(रघुगवाया) रजउद्धात (दिशाओं में धूल उड़ती है) (चंदोबराग) चन्द्रोपराग (चन्द्र-ग्रहण), (सूरोबराग) सूर्यग्रहण, (चंद्रपरिवेष्टा, सूरपरिवेष्टा) चन्द्रपरिवेष्ट (चन्द्रने-द्वरतुं) गोलाकार में परिणत थयेला पुद्गलपरमाणुओं 'गोलाकारतुं' मंडण), सूर्यपरिवेष्ट (सूर्यनी आसपास आरे दिशा में गोला बूझतीना आकारे परिणत थयेला पुद्गलपरमाणुओं 'गोलाकारतुं' मंडण (पडिचंद्र) प्रतिचन्द्र (उत्पात सूचक भीला चन्द्रतुं देखावु), (पडिसूरा) प्रतिसूर्य (उत्पात सूचक भीला सूर्यतुं देखावु), (इंद्रधनु) मेघधनुष (आकाश में आभासा में के सप्तरंगी कामडी देखावु छे ते), (उदगमच्छा) उदक मत्स्य (मेघधनुषना मंड), (कपिहसिया) कपिहसित (आकाश में थी क्यारेक संभणता अतिउग्र कडाका), (अमोहा) अमोघ (सूर्योदय अने सूर्यास्त वअने सूर्यना किरणों द्वारा उत्पन्न होती

હિમવદાદયઃ પર્વતાઃ । ગ્રામાદયઃ પ્રસિદ્ધાઃ । પાતાલાઃ=પાતાલકલશઃ । શેષા
ભવનાઘનન્તપ્રદેશિકાન્તાઃ પ્રસિદ્ધા એવ । નનુ વર્ષધરાદયઃ શાશ્વતાઃ, ન તે કદા-
ચિદપિ સ્વકીયં ભાવં શુશ્રન્તિ, તત્કથં પુનરેષાં સાદિપારિણામિકત્વમુક્તમ્ ? इति-
चेदाह-वर्षधरादीनां शाश्वतत्वं तदाकारमात्रेणैवावतिष्ठमानत्वाद् बोध्यम् । પુદ્ગલા-

આદિ ક્ષેત્ર (વાસધરા) હિમવત્ આદિ પર્વત (ગામા, નગરા, ઘરા, પઢ્વયા, પાયાલા) ગ્રામ, નગર, ઘર, પર્વત, પાતાલકલશ (ભવણા) ભવન (નિરયા) નરક, (રથણપ્પહા) રત્નપ્રભા (સક્કરપ્પહા) શર્કરાપ્રભા (વાલુયપ્પહા) ચાલુકા પ્રભા (પંકપ્પહા) પંક પ્રભા (ધૂમપ્પહા) ધૂમપ્રભા (તમપ્પહા) તમઃપ્રભા (તમ તમપ્પહા) તમસ્તમઃ પ્રભા (સોહમ્મે) સૌધર્મ (જાવઅચ્ચુપ્પ) યાવત્ અચ્યુત (મેવેજ્જે અણુત્તરે) ઐવેયક, અનુત્તર, (હસિપ્પગ્મારા) હૃષ્ટપ્રા-
મારા (પરમાણુપોગલે) પરમાણુપુદ્ગલ (કુપ્પસિપ્પ) દ્વિપ્રદેશિક (જાવ અણંત પ્પસિપ્પ) યાવત્ અનંતપ્રદેશિક (સે તં સાહપારિણામિપ્પ) હસ પ્રકાર વહ
યહ સાદિ પારિણામિક હૈ ।

શંકા-વર્ષધરાદિક તો શાશ્વત હૈ । ક્યોંકિ યે કમી મી અપને અસ્તિત્વ કા પરિત્યાગ નહીં કરતે હૈ । ફિર इन्हें सादि परिणामवाला कैसे सूत्रकारने कहा है ?

ઉત્તર-વર્ષધરાદિકોં મેં જો શાશ્વતપના કહા હૈ વહ “વે અપને આકાર માત્ર સે હી સદા અવસ્થિત રહતે હૈ ”इसी खयाल से कहा गया

રેખાવિશેષ), (વાસા) ભરત આદિ ક્ષેત્ર. (વાસધરા) હિમવાન્ આદિ પર્વત, (ગામા, નગરા, ઘરા, પઢ્વયા પાયાલા) ગ્રામ, નગર, ઘર, પર્વત, પાતાલકલશ, (ભવણા) ભવન, (નિરયા) નરક, (રથણપ્પમા) રત્નપ્રભા, (સક્કરપ્પમા) શર્કરાપ્રભા, (ચાલુયપ્પમા) ચાલુકાપ્રભા, (પંકપ્પહા) પંકપ્રભા, (ધૂમપ્પહા) ધૂમપ્રભા, (તમ-પ્પહા) તમઃપ્રભા, (તમતમપ્પહા) તમસ્તમઃપ્રભા, (સોહમ્મે જાવ અચ્ચુપ્પ) સૌધ-મંથી લઈને અચ્યુત પર્યન્તના કહ્યો, (મેવેજ્જે અણુત્તરે) ઐવેયકો, અનુત્તર વિમાનો, (હસિપ્પગ્મારા) હૃષ્ટપ્રાગ્મારા, (પરમાણુ પોગલે) પરમાણુ પુદ્ગલ (કુપ્પ-પ્પસિપ્પ જાવ અણંતપ્પસિપ્પ) દ્વિપ્રદેશિકથી લઈને અનંતપ્રદેશિક પર્યન્તના કહ્યો, (સે તં સાહ પારિણામિપ્પ) આ બધાંને સાદિપારિણામિક જાવ રૂપ સમજવા.

શંકા-વર્ષધર આદિ પર્વતો તો શાશ્વત છે, કારણ કે તેઓ કદી પણ પોતપોતાના અસ્તિત્વનો પરિત્યાગ કરતા નથી છતાં સૂત્રકારે તેમને સાદિ પારિણામિક શા કારણે કહ્યા છે ?

ઉત્તર-વર્ષધર આદિકોમાં જે શાશ્વતતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેનું કારણ એ છે કે તેઓ તેમના આકાર માત્રની અપેક્ષાએ જ સદા અવસ્થિત

स्तु असंख्येयकालाद्धर्षं परिणमन्त एव । साम्प्रति केषु वर्षधरादिषु ये पुद्गलाः सन्ति ते चोत्कृष्टसौऽसंख्येयकालाद्धर्षमवगमिष्यन्त्येव (१) उक्तंचात्रविषयेऽत्रैवसूत्रे—“नेगमव्यवहाराणं आणुपुन्वीदव्वाइं कालओ कियच्चिरं होइ? एगं दव्वं पडुच्च जहण्णेणं एगं समयं उकोसेणं असंखेज्जं कालं” इति । सू० ६ पृ. ११३ सुद्रित पृष्ठ ५७ सू० ८५ तत्स्थाने अपरेऽपरे पुद्गलाः संगताः सन्तस्तद्भावेन परिणमिष्यन्ति, अतः पुद्गलपरिवृत्तिमादाय वर्षधरादीनां सादि पारिणामिकत्वं न विरुध्यते इति नास्ति दोषः । एतदुपसंहरन्नाह—स एष सादिपारिणामिक इति । द्वितीयभेदविषये शिष्यः पृच्छति—अथ कोऽसौ अनादिपारिणामिकः ? इति । उत्तरयति—अनादिपारिणामिकः—धर्मास्तिकायाद्य-

है । इसका—तात्पर्य यह थोड़े ही हो सकता है कि उनमें परिणमन नहीं होता है । वर्षधरादिक पौद्गलिक हैं । पुद्गल असंख्यातकाल के बाद परिणमन करते हैं । इस समय के वर्षधरादिकों में जो पुद्गल हैं वे वहाँ ज्यादा से ज्यादा असंख्यात काल तक रहेंगे—बाद में वहाँ से च्युत हो जावेंगे । यह बात इसी सूत्र के ८५ वें सूत्र में पहिले स्पष्ट ही की जा चुकी है कि नैगमव्यवहारनयसंमत आनुपूर्वीद्रव्य कालकी अपेक्षा आनुपूर्वी रूप में जघन्य से एक द्रव्यको आश्रित करके एक समय तक और उत्कृष्ट से असंख्यात काल तक रहते हैं । च्युत हुए उन पुद्गलों के स्थान में और दूसरे दूसरे पुद्गल संगत होकर उस रूप से परिणम जावेंगे । इसलिये पुद्गल की इस परिवृत्ति—परिणमन को लेकर के वर्षधरादिकों में सादि पारिणामिकता का कथन विरुद्ध नहीं पड़ता है । (से किं तं अणाइपारिणामिए) हे भदन्त ! वह अनादि पारिणामिक क्या है ?

रहे छे. तेने। अर्थ जेवो थतो नथी के तेमनामां परिणमनं न थतुं नथी तेमनामां परिणमन तो नइर थतुं न रहै छे वर्षधरादिक पौद्गलिक छे पुद्गलो तो असंख्यात काण भाइ परिणमन करे न छे. डालना वर्षधर आदिकोमां न पुद्गलो डालमां छे. तेजो त्यां वधारेमां वधारे असंख्यात काण सुधी रहेशे, त्यार भाइ तेजो त्यांधी यवीने नशे आगण ८५मां सूत्रमां आ वात स्पष्ट करवामां आवी छे ते सूत्रमां जेवुं प्रतिपादन करवामां आंथुं छे के “नैगमव्यवहार नयसंमत आनुपूर्वी” द्रव्य काणनी अपेक्षाजे जेक द्रव्यनी इच्छिजे विचार करवामां आवे तो जेछामां जेछा जेक समय सुधी अने वधारेमां वधारे असंख्यात काण सुधी आनुपूर्वी” द्रव्य इये रहै छे.” यवेला थयेला ते पुद्गलोने स्थाने अन्य पुद्गलो संगत थछने ते इये परिणमी नशे तेथी पुद्गलोनी आ परिवृत्ति (परिणमन)ने कारणे वर्षधरादिकोमां पण सादि पारिणामिकताजुं कथन विरुद्ध पडतुं नथी.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૭ સાન્નિપાતિકભાવનિરૂપણમ્

૭૪૫

ભવસિદ્ધિકાન્તો बोध्यः । धर्मास्तिकायादयोऽनादिकालादेव तत्तद्रूपतया परिणतः सन्ति, अत एवामनादिपारिणामिकत्वम् । एतदुपसंहरन्नाह—स एवोऽनादिपारिणामिक इति । पारिणामिको भावः प्ररूपित इति सूचयितुमाह—स एव पारिणामिक इति ॥ सू० १५६ ॥

અથ સાન્નિપાતિકં નામ પ્રરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં સણિવાહૈ? સણિવાહૈ યદ્યપિ એવ ઉદ્દૈય ઉવસમિય—સ્વદૈય—સ્વઓવ સમિયપારિણામિયાણં ભાવાણં દુગસંજોણં તિયસંજોણં ચઠકસંજોણં પંચગસંજોણં જે

ઉત્તર—(અણાહપારિણામિય ધમ્મત્થિકા, અધમ્મત્થિકા, આગાસ-
ત્થિકા, જીવત્થિકા, પુગ્ગલત્થિકા, અદ્દાસમય, લો, અલો, ભવ-
સિદ્ધિયા અભવસિદ્ધિયા) અનાદિ પારિણામિક ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિ-
કાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય, અદ્દાસમય,
લોક, અલોક ભવસિદ્ધિક અભવસિદ્ધિક છે । (સે તં અણાહપારિણામિય)
યહ અનાદિ પારિણામિક છે । તાત્પર્યેં હસકા યહ છે કિ ધર્માસ્તિકાયા-
દિક અનાદિ કાલ સે હી ઉસ ૨ રૂપ સે પરિણત છે । હસલિયેં હનમેં
અનાદિ પારિણામિકતા છે । (સે તં પારિણામિય) હસપ્રકાર પારિણામિક
ભાવ કા નિરૂપણ છે ॥ સૂ૦ ૧૫૬ ॥

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અણાહ પારિણામિય?) હે અભવન્ ! અનાદિ પારિણામિક
ભાવનું ૨૧૩૫ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણાહ પારિણામિય ધમ્મત્થિકા, અધમ્મત્થિકા, આગાસત્થિકા,
જીવત્થિકા, પુગ્ગલત્થિકા, અદ્દાસમય, લો, અલો, ભવસિદ્ધિયા, અભવસિ-
દ્ધિયા) ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલા-
સ્તિકાય, અદ્દાસમય (કાળ), લોક, અલોક, ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક,
આ ભાવો અનાદિ પારિણામિક છે ધર્માસ્તિકાય આદિ અનાદિ કાળથી જ
ધર્માસ્તિકાય આદિ રૂપે પરિણત હોવાને કારણે તેમને અનાદિ પારિણામિક
ભાવો કહ્યા છે. (સે તં અણાહ પારિણામિય) આ પ્રકારનું અનાદિ પારિણામિક
ભાવનું ૨૧૩૫ છે. (સે તં પારિણામિય) આદિ પારિણામિક અને અનાદિ પારિ-
ણામિક ભાવોનું નિરૂપણ સમાપ્ત થવાથી પારિણામિક ભાવનું કથન
અહીં પૂરું થાય છે. ॥ સૂ૦ ૧૫૬ ॥

અં ૧૪

૭૬૬

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

નિષ્કજ્ઞદ્વ સત્ત્વે સે સન્નિવાદૈ નામે । તત્થ ણં દસ દુયસંજોગા,
દસ તિયસંજોગા, પંચ ચત્તકસંજોગા, ઇમે પંચગસંજોગે ॥સૂ.૧૫૭॥

છાયા—અથ કોડસૌ સાન્નિપાતિકઃ? સાન્નિપાતિકઃ—એતેષામેવ ઔદયિકૌ-
પશ્ચિમિક્ષાયિક્ષાયોપશ્ચિમિકપારિણામિકાનાં ભાવાનાં દ્વિકસંયોગેન ત્રિકસંયોગેન
ચતુષ્કસંયોગેન પશ્ચકસંયોગેન યો નિષ્પદ્યતે સર્વઃ સ સાન્નિપાતિકો નામ । તત્ર સ્વલ્પ દશ
દ્વિકસંયોગાઃ, દશ ત્રિકસંયોગાઃ, પશ્ચચતુષ્કસંયોગાઃ, એકઃ પશ્ચકસંયોગઃ ॥સૂ.૧૫૭॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

અથ કોડસૌ સાન્નિપાતિકઃ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—सान्निपातिकः—
सन्निपतनम्—औदयिकादिभावानां द्वयादिसंयोगेन संयोजनं सन्निपातः, स एव
तेन निर्वृत्तो वा सान्निपातिकः । अमुमेवार्थमाह—सूत्रकारः—‘एएसि चेव’ इत्या-
दिना । एतेषामेव औदयिकादीनां पञ्चानां भावानां द्विकत्रिकचतुष्कपञ्चकसंयोगेन
यौ यो भावः सम्पद्यते स सर्वोऽपि भावः सान्निपातिको बोध्यः । स सांनिपातिक-
भाव एव सांनिपातिकनामेत्युच्यते । तत्र हि दश द्विकसंयोगा भवन्ति, दश
त्रिकसंयोगाः, पञ्च चतुष्कसंयोगाः, एकः पञ्चकसंयोग इति ॥सू० १५७॥

અથ સૂત્રકાર સાન્નિપાતિક ભાવકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

“સે કિં તં સણિવાદૈ” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સણિવાદૈ?) हे भदन्त ! वह सान्निपातिक
भाव क्या है ? (सण्णिवाद्दए एएसिचेव उद्दए उवसमिय—खइय—
खओवसमिय पारिणामियाणं भावाणं दुगसंजोएणं तिथ संजोएणं चउ-
वकसंजोएणं पंचकसंजोएणं जे निष्कज्जइ)

ઉત્તર—इन औदयिक आदि पांच भावों के दो के, तीन के चार के
और पांच के संयोग से जो जो भाव निष्पन्न होते हैं वे सब भी भाव
सान्निपातिक भाव है । इस सान्निपातिक भावों में दश भाव द्विकसंयोगज,

હેવે સૂત્રકાર સાન્નિપાતિક ભાવની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં સણિવાદૈ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સણિવાદૈ?) डेलगवन्त ! पूर्वप्रकान्त सान्निपातिक
भावयुं स्वरूपं केयुं છે ?

ઉત્તર—(सण्णिवाद्दए एएसिं चेव उद्दए उवसमिय—खइय—खओवसमिय—
पारिणामियाणं भावाणं दुगसंजोएणं, तिथसंजोएणं, चउवकसंजोएणं, पंचकसंजो-
एणं जे निष्कज्जइ) औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायेःपशमिक, અને પારિ-
ણામિક, આ પાંચ ભાવોના દ્વિકસંયોગ, ત્રિકસંયોગ ચતુષ્કસંયોગ અને
પંચક સંયોગથી જે ભાવો નિષ્પન્ન થાય છે તે બધા ભાવોને સાન્નિપાતિક
ભાવો કહે છે આ રીતે દ્વિકસંયોગ જન્ય ૧૦ ભાવો, ત્રિકસંયોગ જન્ય ૧૦

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૮ દ્વિકાદિસંયોગનિરૂપણમ્

૭૭

દ્વિકાદિ પञ्ચકાન્તાઃ સંયોગા સસંખ્યકા ઉક્તાઃ । તત્ર દ્વિકાદિસંયોગાઃ કેઃ
ઈતિ તાન્ પ્રદર્શયિતુમાહ—

મૂલમ્—एतथ णं जे ते दस दुगसंयोगा ते णं इमे—अस्थि
णामे उदइयउवसमियनिष्फण्णे ? अस्थि णामे उदइयखाइग-
निष्फण्णे २, अस्थि णामे उदइयखओवसमियनिष्फण्णे ३, अस्थि
णामे उदइयपारिणामियनिष्फण्णे ४, अस्थि णामे उवसमिय-
खइयनिष्फण्णे ५, अस्थि णामे उवसमिय खओवसमियनिष्फ-
ण्णे ६, अस्थि णामे उवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ७, अस्थि
णामे खइयखओवसमियनिष्फण्णे ८, अस्थि णामे खइयपारि-
णामियनिष्फण्णे ९, अस्थि णामे खओवसमियपारिणामियनि-
ष्फण्णे १० । कयरे से णामे उदइय उवसमियनिष्फण्णे ? उदइय
उवसमियनिष्फण्णे उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया ।
एसणं से णामे उदइय उवसमियनिष्फण्णे ॥ १ ॥ कयरे से णामे
उदइयखाइयनिष्फण्णे ? उदइयखाइयनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणु-
स्से खइयं सम्मत्तं । एस णं से णामे उदइयखइयनिष्फण्णे ॥ २ ॥
कयरे से णामे उदइयखओवसमियनिष्फण्णे ? उदइयखओव-
समियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं ।
एस णं से णामे उदइयखओवसमियनिष्फण्णे ॥ ३ ॥ कयरे से

દશભાવ ત્રિકાસંયોગજ, પાંચભાવ ચતુષ્ક સંયોગ, ઓર એક ભાવ પંચક
સંયોગજ બનતે હે । હસ પ્રકાર યે ૨૬ સાન્નિપાતિક ભાવ હે । ॥સૂ.૧૫૭॥

ભાવો, ચતુષ્કસંયોગ જન્ય પાંચ ભાવો અને પંચકસંયોગ જન્ય એક ભાવ
નિષ્પન્ન થાય છે. આ પ્રકારે કલ ૨૬ સાન્નિપાતિક ભાવો થાય છે. ॥સૂ.૧૫૭॥

णामे उदइयपारिणामियनिष्फण्णे? उदइयपारिणामियनिष्फण्णे-
 उदइयत्ति मणुस्से पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइय-
 पारिणामियनिष्फण्णे ॥४॥ कयरे से णामे उवसमियखइयनिष्फ-
 ण्णे? उवसमियखइयनिष्फण्णे-उवसंता कसाया-खइयं सम्मत्तं ।
 एस णं से णामे उवसमियखइयनिष्फण्णे ॥५॥ कयरे से णामे
 उवसमियखओवसमियनिष्फण्णे? उवसमियखओवसमियनि-
 ष्फण्णे-उवसंता कसाया खओवसमियाइं इंदियाइं एस णं
 से णामे उवसमियखओवसमियनिष्फण्णे ॥६॥ कयरे से णामे
 उवसमियपारिणामियनिष्फण्णे? उवसमियपारिणामियनिष्फ-
 ण्णे-उवसंता कसाया पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उव-
 समियपारिणामियनिष्फण्णे ॥७॥ कयरे से णामे खइयखओव-
 समियनिष्फण्णे? खइयखओवसमियनिष्फण्णे-खइयं सम्मतं
 खओवसमियाइं इंदियाइं । एस णं से णामे खइयखओवसमिय-
 निष्फण्णे ॥८॥ कयरे से णामे खइयपारिणामियनिष्फण्णे? खइय-
 पारिणामियनिष्फण्णे-खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे । एस णं
 से णामे खइयपारिणामियनिष्फण्णे ॥९॥ कयरे से णामे खओवस-
 मियपारिणामियनिष्फण्णे? खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे-
 खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे । एस णं णामे
 खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ॥१०॥ ॥सू० १५८॥

छाया—अत्र खलु ये ते दश द्विकसंयोगास्ते खलु इमे-अस्ति नाम औद-
 यिकौपशमिकनिष्पन्नम् ॥१॥ अस्ति नाम औदयिकसायिकनिष्पन्नम् ॥२॥ अस्ति
 नाम औदयिकसायोपशमिकनिष्पन्नम् ॥३॥ अस्ति नाम औदयिकपारिणामिक-

મનુયોગચષ્ટિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૮ દ્વિકાદિસંયોગનિરૂપણમ્

૭૪૯

નિષ્પન્નમ્॥૪॥ અસ્તિ નામ ઔપશમિકક્ષાયિકનિષ્પન્નમ્॥૫॥ અસ્તિ નામ ઔપશ-
મિકક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્॥૬॥ અસ્તિ નામ ઔપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્॥૭॥
અસ્તિ નામ ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્॥૮॥ અસ્તિ નામ ક્ષાયિકપારિણામિક-
નિષ્પન્નમ્॥૯॥ અસ્તિ નામ ક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્॥૧૦॥ કતરત્તન્નામ
ઔદયિકૌપશમિકનિષ્પન્નમ્? ઔદયિકમિતિ માનુષ્યમ્, ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ।
એતત્ સ્વલુ તન્નામ ઔદયિકૌપશમિકનિષ્પન્નમ્॥૧૧॥ કતરત્તન્નામ ઔદયિકક્ષાયિક-
નિષ્પન્નમ્? ઔદયિકક્ષાયિકનિષ્પન્નમ્ ઔદયિકમિતિમાનુષ્યં, ક્ષાયિકં સમ્યક્-
ત્વમ્। એતત્ સ્વલુ તન્નામ ઔદયિકક્ષાયિકનિષ્પન્નમ્॥૧૨॥ કતરત્તન્નામ ઔદયિક-
ક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્? ઔદયિકક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્—ઔદયિકમિતિ માનુષ્યં
ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ। એતત્ સ્વલુ તન્નામ ઔદયિકક્ષાયોપશમિક-
નિષ્પન્નમ્॥૧૩॥ કતરત્તન્નામ ઔદયિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્? ઔદયિકપારિણામિક
નિષ્પન્નમ્ ઔદયિકમિતિ મનુષ્યમ્ પારિણામિકો જીવઃ। એતત્ સ્વલુ તન્નામ
ઔદયિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્॥૧૪॥ કતરત્ તન્નામ ઔપશમિકક્ષાયિકનિષ્પન્નમ્?
ઔપશમિકક્ષાયિકનિષ્પન્નમ્—ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વમ્। એતત્
સ્વલુ તન્નામ ઔપશમિકક્ષાયિકનિષ્પન્નમ્॥૧૫॥ કતરત્ તન્નામ ઔપશમિકક્ષાયોપ-
શમિકનિષ્પન્નમ્? ઔપશમિકક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્—ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ ક્ષાયો-
પશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ। એતત્ સ્વલુ તન્નામ ઔપશમિકક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્॥૧૬॥
કતરત્ તન્નામ ઔપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્? ઔપશમિકપારિણામિકનિષ્પ-
ન્નમ્—ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ, પારિણામિકો જીવઃ। એતત્ સ્વલુ તન્નામ ઔપશમિક-
પારિણામિકનિષ્પન્નમ્॥૧૭॥ કતરત્ તન્નામ ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્?
ક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્—ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ।
એતત્ સ્વલુ તન્નામ ક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્॥૧૮॥ કતરત્ તન્નામ ક્ષાયિક-
પારિણામિકનિષ્પન્નમ્? ક્ષાયિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્—ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં પારિ-
ણામિકો જીવઃ। એતત્ સ્વલુ તન્નામ ક્ષાયિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્॥૧૯॥ કતરત્
તન્નામ ક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્? ક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્—
ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણામિકો જીવઃ। એતત્ સ્વલુ તન્નામ ક્ષાયોપ-
શમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્ ॥૧૦॥મૂ૦૧૫૮॥

ટીકા—‘एत्थ णं’ इत्यादि—

अत्र=तान्निपातिके भावे दश द्विकसंयोगा उक्ताः, ते दश द्विकसंयोगाः

दो दो भावों के संयोग से जो १० भाव निष्पन्न होते हैं। सूत्र-
कार उन्हें कहते हैं—“एत्थ णं जे ते” इत्यादि

બખે બાવોના સંયોગથી જે ૧૦ ભાવો નિષ્પન્ન થાય છે, તેમને
સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—“एत्थ णं जे ते” इत्यादि—

૬૫૦

અનુયોગદ્વારસૂત્ર

મજ્ઞા—‘અસ્તિ નામ ઔદયિકૌપશમિકનિષ્પન્નમ્’ इत्यारभ्य ‘अस्ति नाम
‘अस्ति नाम क्षायोपशमिकपारिणामिकनિष्पन्नम्’ इत्यन्ता बोध्याः । एषु
औदयिकेन सह औपशमिकादि भावचतुष्टयसंयोगात् चत्वारो मज्ज्ञाः,
औपशमिकेन सह क्षायिकादिभावत्रयस्य संयोगात् त्रयो मज्ज्ञाः, क्षायिकेन
सह क्षायोपशमिकादि भावद्वयसंयोगात् द्वौ मज्ज्ञौ, तथा—क्षायोपशमिकेन सह

શબ્દાર્થ—(एत्थ णं जे ते दस दुगसंयोगा, ते णं इमे) यहां जो दो दो
भावों के संयोग से भाव निष्पन्न-होते हैं वे इस प्रकार से हैं—
(अस्थिणामे उदइयउवसमियनिष्फण्णे ?) पहिला औदयिक और औप-
शमिक के संयोग से निष्पन्न भाव एक, (अस्थिणामे उदइयखाइग
निष्फण्णे २) दूसरा औदयिक और क्षायिक के संयोग से निष्पन्न
भाव (अस्थिणामे उदइयखओवसमनिष्फण्णे) तीसरा—औदयिक
और क्षायोपशमिक के संयोग से निष्पन्न भाव (अस्थि-
णामे उदइयपारिणामियनिष्फण्णे) चौथा औदयिक और पारि-
णामिक के संयोग से निष्पन्न भाव (अस्थिणामे उवसमियखइय
निष्फण्णे) पांचवा—औपशमिक और क्षायिक के संयोग से निष्पन्न भाव
(अस्थिणामे उवसमिय खओवसमियनिष्फण्णे) छठा—औपशमिक और
क्षायोपशमिक के संयोग से निष्पन्न भाव (अस्थिणामे उवसमियपारि-
णामियनिष्फण्णे) सातवां—औपशमिक और पारिणामिक के संयोग से
निष्पन्न भाव (अस्थिणामे खइय, खओवसमियनिष्फण्णे) आठवां—क्षायिक
और क्षायोपशमिक के संबंध से निष्पन्न भाव (अस्थिणामे खइय पारि-

શબ્દાર્થ—(एत्थ णं जे ते दस दुगसंयोगा, ते णं इमे) અગ્ગે ભાવેના સંયો-
ગથી જે દસ ભાવો નિષ્પન્ન થાય છે તે નીચે પ્રમાણે છે—(અસ્થિણામે ઉદइय
उवसमिय निष्फण्णे) (१) ઔદયિક અને ઔપશમિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ
(અસ્થિણામે ઉદइयखाइयनिष्फण्णे २) (२) ઔદયિક અને ક્ષાયિકના સંયોગથી
નિષ્પન્ન થયેલો ભાવ (અસ્થિણામે ઉદइय खओवसमनिष्फण्णे ३) (३) ઔદયિક
અને ક્ષાયોપશમિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલો ભાવ (અસ્થિણામે ઉદइय
पारिणामियनिष्फण्णे) (४) ઔદયિક અને પારિણામિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન
ભાવ (અસ્થિણામે उवसमियखइयनिष्फण्णे) (५) ઔપશમિક અને ક્ષાયિકના
સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ (અસ્થિણામે उवसमियखओवसमियनिष्फण्णे) (६)
ઔપશમિક અને ક્ષાયોપશમિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલો ભાવ (અસ્થિણામે
उवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) (७) ઔપશમિક અને પારિણામિકના સંયો-
ગથી નિષ્પન્ન ભાવ (અસ્થિણામે खइयखओवसमियनिष्फण्णे) (८) ક્ષાયિક

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૧૫૮ દ્વિકાદિસંયોગનિરૂપણમ્

૭૫૧

પારિણામિકભાવસ્ય સંયોગાદેકો મજ્જઃ । इति दश भङ्गा बोध्याः । इत्थं सामान्यतो दश भङ्गान् ज्ञात्वा विशेषतस्तान् जिज्ञासितुकामः शिष्यः पृच्छति—कतरत् तन्नाम औदयिकौपशमिकनिष्पन्नम्—औदयिकौपशमिकभावेन यन्निष्पद्यते तन्नाम किम् ? इति । उत्तरयति—औदयिकौपशमिकनिष्पन्नमेवं विज्ञेयम्—औदयिकमितिमातुष्यम्,

णामિયનિષ્કળે) ૯વાં-ક્ષાદિક ઓર પારિણામિક કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન ભાવ (અત્થિણામે સ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે) ૧૦ વાં-ક્ષાયોપશમિક ઓર પારિણામિક કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન દુઆ ભાવ । હસ પ્રકાર યે ઔદાયિક કે સાથ ઔપશમિક આદિ ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે ૪ ભંગ, ઔપશમિક કે સાથ ક્ષાયિક આદિ ત્રીન ભંગોં કે સંયોગ સે ત્રીનભંગ, ક્ષાયિક કે સાથ ક્ષાયોપશમિક આદિ દો ભાવોં કે સંયોગ સે દો ભંગ તથા ક્ષાયોપશમિક કે સાથ પારિણામિક ભાવ કે સંયોગ સે એક ભંગ યે દશ ભંગ હો જાતે હૈં । હસ પ્રકાર સામાન્ય સે દશ ભંગોં કો જાનકર વિશેષરૂપ સે શિષ્ય પૂછતા હૈં । કિ (કયરે સે ણામે ઉદહય ઉવસમિય નિષ્કળે ? હે મદન્ત ! ઔદયિક એવં ઔપશમિક ભાવ કે સંયોગ સે જો સાન્નિપાતિક ભાવરૂપ ભંગ નિષ્પન્ન હોતા હૈં વહ કૈસા હૈં ?

ઉત્તર—(ઉદહયઉવસમિયનિષ્કળે) ઔદયિક એવં ઔપશમિક

અને ક્ષાયોપશમિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ (અત્થિણામે સ્વહય પારિણામિયનિષ્કળે) (૯) ક્ષાયિક અને પારિણામિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ (અત્થિણામે સ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે) (૧૦) ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ આ પ્રકારે ઔદયિકની સાથે ઔપશમિક આદિ ચારના સંયોગથી ૪ ભંગ, ઔપશમિક ભાવની સાથે ક્ષાયિક આદિ ત્રણ ભાવના સંયોગથી ૩ ભંગ, ક્ષાયિકભાવની સાથે ક્ષાયોપશમિક આદિ બે ભાવના સંયોગથી ૨ ભંગ તથા ક્ષાયોપશમિકની સાથે પારિણામિક ભાવના સંયોગથી એક ભંગ બને છે આ રીતે દ્વિકસંયોગી કુલ ૧૦ ભંગ બને છે.

આ પ્રકારે આ ભંગોત્ત્વ સામાન્ય કથન કરીને હવે સૂત્રકાર દરેક ભંગના સ્વરૂપત્વ વિવેચન કરે છે—

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉદહયઉવસમિયનિષ્કળે?) હે ભગવન્ ! ઔદયિક અને ઔપશમિક ભાવના સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ભંગ નિષ્પન્ન થાય છે, તેત્ત્વ સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ, ઇતિ । અયં ભાવઃ—ઔદયિકે ભાવે મનુષ્યત્વં=મનુષ્યગતિ-
રૂપયતે । ઉપલક્ષણમિદમ્—તિર્યગાદિગતિજાતિશરીરનામાદિકર્મણામપિ, તેષામ-
પ્યત્ર સંભવાત્ । ઔપશમિકે ભાવે તુ કષાયા ઉપશાન્તા ભવન્તિ । ઇદમપ્યુદાહરણ-
માત્રમ્—દર્શનમોહનીયનો કષાયમોહનીયાત્રપિ ઔપશમિકે ભાવે સમુપયતે । એત-
દુપસંહરન્નાહ—‘એસ ણં’ ઇત્યાદિ । એતત્=અનન્તરોક્તં, ‘સ્વલુ’ ઇતિ વાક્યાલક્ષારે,
તત્—પ્રસિદ્ધમ્ ઔદયિકૌપશમિકનિષ્પન્નં નામ બોધ્યમિતિ પ્રથમદ્વિકયોગે યદિદ-
મુક્તં તદ વિવક્ષામાત્રમ્ । ન પુનરીદશો મજ્ઞઃ કચિજ્જીવે સંભવતિ તથાહિ યસ્ય

ભાવ કે સંયોગ સે જો સાન્નિપાતિક ભાવરૂપ ભંગ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ
એસા હૈ—(ઉદ્દિશ્વસિમણુસે ઉવસંતા કસાયા) ઔદયિકભાવ મેં મનુષ્યસ્વ-
મનુષ્યગતિ—ઉપશાંત કષાય યહાં “મણુસે” યહ પદ ઉપલક્ષણ હૈ,
હસસે તિર્યગાદિ ચારો ગતિયાં, જાતિ ઔર શરીરનામાદિકર્મોં કા બી
ગ્રહણ હુઆ હૈ । કયોંકિ યહાં પર ઉનકા બી સદ્ભાવ પાયા જાતા
હૈ । ઔપશમિકભાવ મેં કષાય ઉપશાન્ત હોતી હૈ । સો યહ બી—ઉદા-
હરણ માત્ર હૈ । કયોંકિ ઔપશમિક ભાવ મેં દર્શનમોહનીય ઔર નો
કષાયમોહનીય હન દોનોં કા બી ઉપશમ રહતા હૈ । (એસ ણં સે ણામે
ઉદ્દિશ્વસિમણુસે) હસ પ્રકાર યહ ઔદયિકૌપશમિક-
નામ કા પ્રથમ સાન્નિપાતિકભાવરૂપ ભંગ હૈ । હસ પ્રથમ ભંગરૂપ સાન્નિ-
પાતિક ભાવ મેં મનુષ્યગતિ ઉપશાંત કષાય એસા જો કહા હૈ વહ કેવલ
વિવક્ષામાત્ર હૈ । કયોંકિ એસા સાન્નિપાતિક ભાવ કિસી બી જીવ મેં

ઉત્તર—(ઉદ્દિશ્વસિમણુસે) ઔદયિક અને ઔપશમિક ભાવના
સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવરૂપ ભંગ ઉત્પન્ન થાય છે તે આ પ્રકારનો
છે—(ઉદ્દિશ્વસિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા) ઔદયિક ભાવમાં મનુષ્યત્વ—મનુષ્ય-
ગતિ અને ઔપશમિકભાવમાં ઉપશાન્ત કષાયને ગણાવી શકાય. અહીં
‘મનુષ્યગતિ’ આ પદ ઉદાહરણ રૂપે વપરાયેલું હોવાથી તેના દ્વારા તિર્યંચ
આદિ ચારે ગતિઓ, જાતિ અને શરીરનામાદિક કર્મોને પણ ગ્રહણ કરવામાં
આવેલ છે. કારણ કે અહીં તેમનો પણ સદ્ભાવ રહે છે ઔપશમિક ભાવમાં
કષાય ઉપશાન્ત હોય છે આ વાત પણ ઉદાહરણ રૂપે જ આપવામાં આવી
છે, કારણ કે ઔપશમિક ભાવમાં દર્શન મોહનીય અને નોકષાયમોહનીય,
આ અને પ્રકારના કર્મોનો પણ ઉપશમ રહે છે. (એસં સે ણામે ઉદ્દિશ્વ
સિમણુસે) આ પ્રકારનો આ ઔદયિકૌપશમિક નામનો પ્રથમ સાન્નિ-
પાતિક ભાવ રૂપ ભંગ છે. આ પ્રથમ ભંગમાં “મનુષ્યગતિ અને ઉપશાન્ત
કષાય” આ પ્રકારનું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે, તે કથન માત્ર વિવક્ષારૂપ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૮ દ્વિકાદિસંયોગનિરૂપણમ્

૭૫૩

જીવસ્ય ઔદયિકી મનુષ્યગતિઃ, ઔપશ્ચમિકાઃ કષાયાઃ ભવન્તિ, તસ્ય ક્ષાયોપશ્ચ-
મિકાનીન્દ્રિયાણિ પારિણામિકં જીવત્વં ચાપિ ભવન્તિ । કસ્યચિત્તુ ક્ષાયિકં સમ્ય-
ક્ત્વમપિ સંભવતિ । एवं नवमभङ्गातिरिक्तसर्वेषु भङ्गेषु बोध्यम् । नवमो भङ्गस्तु
सिद्धविषयो बोध्यः । सिद्धस्य क्षायिकं सम्यक्त्वं पारिणामिकं तु जीवत्वमित्येतद्
भावद्वयं भवति । इतः परो न कोऽपि भावो भवति । तस्मात् सिद्धस्थायमेक एव
भङ्गो भवतीति बोध्यम् । नवमातिरिक्ता नव भङ्गास्तु प्ररूपणामात्रमेव । यतः सिद्धाति-

સંભવિત નહીં હોતા હૈ । જિસ જીવ કો મનુષ્યગતિ હૈ ઓર કષાય ઉપ-
શમિત હૈ સો હસ પ્રકાર સે ઉસકે ઔદયિક ઓર ઔપશ્ચમિક
इन दो भावों के संयोग से निष्पन्न औदयिकौपशमिक नाम का प्रथम
सान्निपातिक भाव मोना जाता तब कि जब उसके और दूसरे भाव
नहीं होते । औदयिकौपशमिकभाव के साथ वहाँ क्षायोपशमिक भाव
रूप इन्द्रियां पारिणामिक भाव रूप जीवत्व भी है । किसी २ जीव को
इस औदयिकौपशमिक के साथ क्षायिकसम्यक्त्व भी संभवित होता
है इस प्रकार का विचार नौवें-भंग के सिवाय समस्त भंगों में जानना
चाहिये । क्योंकि जो नौवां भंग है वह सिद्ध भगवान् की अपेक्षा से
है । सिद्ध भगवान् में क्षायिक सम्यक्त्व और पारिणामिक भाव रूप
जीवत्व रहता है । इनके अतिरिक्त और भाव वहाँ नहीं रहते हैं ।
इसलिये सिद्ध में यह नौवां भंगरूप एक सान्निपातिक भाव ही है ।

જ છે, કારણ કે એવો સાન્નિપાતિક ભાવ કોઈ પણ જીવમાં સંભવિત હોતો
નથી જે જીવમાં મનુષ્યગતિ છે અને કષાય ઉપશમિત છે, આ પ્રકારે તેના
ઔદયિક અને ઔપશ્ચમિક, આ બંને ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન ઔદયિકૌ-
પશ્ચમિક નામનો પ્રથમ સાન્નિપાતિક ભાવ તો ત્યારે જ માની શકાય કે ત્યારે
તે જીવમાં અન્ય કોઈ ભાવનો સદ્ભાવ જ ન હોય ઔદયિકૌપશ્ચમિક ભાવની
સાથે ત્યાં ક્ષાયોપશ્ચમિક ભાવ રૂપ ઇન્દ્રિયો અને પારિણામિક ભાવ રૂપ
જીવત્વનો પણ સદ્ભાવ રહે છે. કોઈ કોઈ જીવમાં આ ઔદયિકૌપશ્ચમિકની
સાથે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ પણ સંભવિત હોય છે. આ પ્રકારનો વિચાર નવમાં
ભંગ સિવાયના સમસ્ત ભંગોમાં સમજવો જોઈએ, કારણ કે જે નવમો ભંગ
છે તે સિદ્ધ ભગવાનની અપેક્ષાએ અદ્ભુત કરવાનો છે. સિદ્ધ ભગવાનમાં ક્ષાયિક
સમ્યક્ત્વ અને પારિણામિક ભાવ રૂપ જીવત્વનો સદ્ભાવ રહે છે. તે સિવાયના
અન્ય ભાવોનો તેમનામાં સદ્ભાવ હોતો નથી તેથી જ સિદ્ધ જીવોમાં નવમાં
ભંગ રૂપ એક સાન્નિપાતિક ભાવનો સદ્ભાવ કહ્યો છે તે સિવાયના જે નવ

સ્થિતાનામન્યેષાં જીવાનાં ન્યૂનતોઽપિ ઔદયિકી ગતિઃ ક્ષાયોપશમિકાનીન્દ્રિયાણિ
પારિણામિકં તુ જીવત્ત્વમ્, इत्येतद् भावत्रयं लभ्यते एवेति बोध्यम् ॥सू० १५८॥

इसके अतिरिक्त और जो नौ भंग हैं वे केवल प्ररूपणा मात्र ही हैं। क्योंकि सिद्धों के सिवाय जितने भी संसारी जीव हैं, उनको कम से कम तीन भाव तो होते ही हैं। जिस गति में वे हैं एक तो वह, तथा इन्द्रियां और जीवत्वगति औदयिक भाव है। इन्द्रियां क्षायोपशमिक भाव है और जीवत्व पारिणामिक भाव है।

भावार्थ—सूत्रकारने दो भावों के संयोग होने पर जो दश सान्निपातिक भाव होते हैं उनके विषय में इस सूत्रद्वारा विवेचन किया है। इसमें जहां पर औदयिक भाव प्रत्येक संयोग में प्रधान रूप से रहता है, और शेष औपशमिक आदि में से एक २ छूटता चला जाता है वह पहिला द्वि भाव संयोगी भेद होता है। इसके चार भंग बनाये गये हैं। उनमें औदयिक औपशमिक-सान्निपातिक भाव नाम का पहिला भंग है। जैसे यह मनुष्य उपशान्त कषाय है। अर्थात् यह मनुष्य उपशान्त क्रोधी यथा मनुष्य उपशान्त लोभी है— यहां पर उपशान्त क्रोध होने से तो औपशमिक भाव और मनुष्य कहने से मनुष्यगति कर्म के उदय से

ભગો છે તેમનો ઉલ્લેખ તો માત્ર પ્રરૂપણાની અપેક્ષાએ જ કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે સિદ્ધ જીવો સિવાયના જે સંસારી જીવો છે તે જીવોમાં તો જ્યોષ્ઠામાં જ્યોષ્ઠા ત્રણ ભાવો અવશ્ય હોય છે. જે ગતિમાં તેમનો સદ્ભાવ છે તે ગતિ તથા ઇન્દ્રિયો અને જીવત્વગતિ ઔદયિક ભાવ છે ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે.

ભાવાર્થ—અહીં ભાવોનો સંયોગ થવાથી જે દસ સાન્નિપાતિક ભાવો નિબપન્ન થાય છે, તેમના વિષયમાં સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં વિવેચન કર્યું છે. પહેલા ચાર દ્વિભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવોમાં ઔદયિક ભાવ પ્રધાન રૂપે રહે છે. ઔદયિક ભાવની સાથે ઔપશમિકથી લઈને પારિણામિક પર્યન્તના ચાર ભાવોનો સંયોગ કરીને પહેલા ચાર ભંગ (ભાંગાઓ) બને છે. તેમાં ઔદયિક અને ઔપશમિક ભાવોના સંયોગથી પહેલા સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ભંગ બન્યો છે જેમ કે...આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત કષાય છે એટલે કે આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત ક્રોધી, ઉપશાન્ત માની, ઉપશાન્ત માયી અને ઉપશાન્ત લોભી છે. આ પ્રકારનું કથન કરવાથી પહેલા સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારે ચતુર્ણ થાય છે અહીં ક્રોધ ઉપશાન્ત થયેલા હોવાથી ઔપશમિક ભાવનો, અને મનુષ્ય

ઔદયિક ભાવ ઘટિત હોતા હૈ । હસી પ્રકાર સે મનુષ્ય ઉપશાંત માની, મનુષ્ય ઉપશાંત માયી ઔર મનુષ્ય ઉપશાંત ક્રોધી હન હન વચનો મેં મી ઘટિત કર હેના ચાહિયે । ઔદયિક ક્ષાયિક સાન્નિપાતિક નામ કા દૂસરા ભંગ હૈ—હસકા દ્રષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર સેં જાનનો ચાહિયે કિ જૈસે યહ મનુષ્ય ક્ષીણકલાયી હૈ । ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક નામ કા તૈસરા સાન્નિપાતિક ભંગ હૈ જૈસે મનુષ્ય પંચેન્દ્રિય હૈ । ઔદયિક પારિણામિક નામ કા ચૌથા સાન્નિપાતિક ભંગ હૈ જૈસે મનુષ્ય જીવ હૈ । જહાં પર ઔદયિક ભાવ કો છોડ કર ઔપશમિક ભાવ કે સાથ ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક ભાવોં કા સંયોગ કર ભંગ બનાયે જાતે હૈં વહાં ૫ વર્ગ ૬ ઠા ઔર સાતવાં યે સાન્નિપાતિક ભાવ બનતે હૈં । ઉનમેં ઔપશમિક ક્ષાયિક યહ સાન્નિપાતિક નામ કા પહિલા ભંગ હૈ । જૈસે યહ ઉપશાંત લોભી દર્શન મોહનીય કે ક્ષીણ હોજાને સે ક્ષાયિક સમ્યગ્દષ્ટિ હૈ । ઔપશમિક ક્ષાયિક નામકા દૂસરા ભંગ હૈ જૈસે યહ ઉપશાંત માની આભિનિબોધિક જ્ઞાની હૈ । ઔપશમિક પારિણામિક નામ કા તૈસરા ભંગ હૈ—જૈસે ઉપશાન્ત માયાકલાય વાલા ભવ્ય । જહાં પર ઔપશમિક

કહેવાથી મનુષ્ય ગતિ કર્મના ઉદયને લીધે ઔદયિક ભાવનો સદ્ભાવ બતાવ્યો છે. એજ પ્રમાણે ઉપશાન્ત માની મનુષ્ય, ઉપશાન્ત માયી મનુષ્ય અને ઉપશાન્ત લોભી મનુષ્ય, આ ત્રણે પ્રકારના કથનમાં પણ ઔદયિક અને ઔપશમિક ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન સાન્નિપાતિક ભાવ જ ઘટિત થઈ બચ્ય છે. “ઔદયિક ક્ષાયિક સાન્નિપાતિક ભાવ” નામના બીજા ભંગનું દ્રષ્ટાન્ત નીચે પ્રમાણે છે—“આ મનુષ્ય ક્ષીણ કલાય છે.”

“ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક” નામના ત્રીજા સાન્નિપાતિક ભંગનું દ્રષ્ટાન્ત—“મનુષ્ય પંચેન્દ્રિય છે.” ઔદયિક પારિણામિક નામના ચોથા સાન્નિપાતિક ભંગનું દ્રષ્ટાન્ત—“મનુષ્ય જીવ છે.”

ઔપશમિક ભાવની સાથે અનુક્રમે ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવના સંયોગથી પાંચમાં, છઠ્ઠા અને સાતમાં સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ત્રણ ભંગો નિષ્પન્ન થાય છે.

“ઔપશમિક ક્ષાયિક” નામના પાંચમાં સાન્નિપાતિક ભંગનું દ્રષ્ટાન્ત—“આ ઉપશાન્ત લોભી દર્શનમોહનીય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી ક્ષાયિક સમ્યગ્દષ્ટિ છે.”

“ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક” નામના છઠ્ઠા સાન્નિપાતિક ભંગનું દ્રષ્ટાન્ત—“આ ઉપશાન્ત માની આભિનિબોધિક જ્ઞાની છે.”

“ઔપશમિક પારિણામિક” નામના સાતમાં સાન્નિપાતિક ભંગનું દ્રષ્ટાન્ત—“ઉપશાન્ત માયા કલાયવાળો ભવ્ય.”

ભાવ મી છોદ્દિયા જાતા હૈ । વહાં ક્ષાયિકભાવ કે સાથ ક્ષાયોપશમિક ઓર પારિણામિક ભાવકા સંબન્ધ હોનેપર તીસરા દ્વિભાવ સંયોગી ભેદ હોતા હૈ—ઉસકે દો ભંગ હસપ્રકાર સે હૈ—અનમે ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક પ્રથમ સાન્નિપાતિકભાવ હૈ ઓર દૂસરા ક્ષાયિક પારિણામિક હૈ । અનમે પ્રથમ કા દૃષ્ટાન્ત ક્ષાયિક સમ્યગ્દૃષ્ટિ શ્રુતજ્ઞાની હૈ ઓર દૂસરે કા દૃષ્ટાન્ત ક્ષીણકણથી અન્ય હૈ । જહાંપર ક્ષાયિકભાવ કા મી પરિત્યાગ હો જાતા હૈ કેવલ ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક રૂપ સંયોગ રહતા હૈ, વહાં પર એક હી ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક એસા ભંગ હોતા હૈ । અસકા દૃષ્ટાન્ત—જૈસે અવધિજ્ઞાની જીવ હૈ । અસપ્રકાર યે દ્વિભાવ સંયોગી ભંગ મિલકર ૧૦ હૈ । અનમે જો નૌર્વા ભંગ હૈ કિ જિસકા નામ ક્ષાયિક પારિણામિક હૈ વહ સિદ્ધજીવોં કી અપેક્ષા સે હૈ ઓર વહી શુદ્ધનિર્દોષ હૈ બાકી કે અવશિષ્ટ નૌ ભંગ વિવક્ષા માત્ર હૈ—ક્યોંકિ અનમે અન્ય ભાવોં કા મી સંબન્ધ ઘટિત હોના હૈ । જૈસે યહ મનુષ્ય ઉપશાંત ક્રોધી હૈ યહાં પર મનુષ્ય કો મનુષ્યગતિનામ કર્મકો ઉદય હૈ અસલિયે ઔદયિક ભાવ હૈ । ક્રોધ કા ઉપશમ હૈ, અસલિયે ઔપશમિક ભાવ હૈ ।

ક્ષાયિક ભાવની સાથે અનુક્રમે ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવનો સંયોગ કરવાથી આઠમાં અને નવમાં સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ બે ભંગો અને છે.

“ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક” નામના આઠમાં સાન્નિપાતિક ભંગનું દૃષ્ટાન્ત—ક્ષાયિક સમ્યગ્દૃષ્ટિ શ્રુતજ્ઞાની અને ‘ક્ષીણકણથી અન્ય’ ક્ષાયિક પારિણામિક નામના નવમાં સાન્નિપાતિક ભંગના દૃષ્ટાન્ત રૂપ છે.

ક્ષાયોપશમિક ભાવ અને પારિણામિકભાવના સંયોગથી ૧૦ મેં સાન્નિપાતિક ભંગ અને છે. “અવધિજ્ઞાની જીવ,” આ ભંગના દૃષ્ટાન્ત રૂપ છે.

આ પ્રકારે બે ભાવોના સંયોગથી કુલ ૧૦ ભંગ અને છે. તેમાં બે નવમે ભંગ (ક્ષાયિક પારિણામિક નામનો ભંગ) છે, તે સિદ્ધ જીવોને લાગુ પડે છે. આ ભંગ જ ખરી રીતે સંભવી શકે છે તેથી આ ભંગ જ શુદ્ધ નિર્દોષ ભંગ રૂપ છે. બાકીના બે નવ ભંગો છે તેમનું તો અહીં વિવક્ષા માત્ર રૂપે જ (પ્રરૂપણ કરવા માટે જ) કથન કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે તે ભાવોમાં અન્ય ભાવોનો સંબંધ પણ શક્ય હોય છે જેમ કે “આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત ક્રોધી છે.” અહીં મનુષ્યમાં મનુષ્યગતિ નામકર્મનો ઉદય છે, તેથી ઔદયિક ભાવનો સદ્ભાવ છે, અને ક્રોધનો ઉપશમ હોવાથી ઔપશમિક ભાવનો પણ સદ્ભાવ છે. પરંતુ સાથે સાથે તે મનુષ્યમાં બીજાં ભાવો પણ

અથ ત્રિકયોગાન્નિરૂપયિતુમાહ—

મૂળમ્—તત્થ ણં જે તે દસ તિગસંજોગા તે ણં હમે—અત્થિ
 ણામે ઉદહયુવસમિયસ્વહયનિપ્પણે ૧ અત્થિ ણામે ઉદહયુવ-
 સમિયસ્વઓવસમિયનિપ્પણે ૨, અત્થિ ણામે ઉદહયુવસમિય-
 પારિણામિયનિપ્પણે ૩, અત્થિ ણામે ઉદહયુ સ્વહયસ્વઓવસમિય-
 નિપ્પણે ૪, અત્થિ ણામે ઉદહયુસ્વહયપારિણામિયનિપ્પણે ૫,
 અત્થિ ણામે ઉદહયુસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિપ્પણે ૬, અત્થિ
 ણામે ઉવસમિયસ્વહયસ્વઓવસમિયનિપ્પણે ૭, અત્થિ ણામે
 ઉવસમિયસ્વહયપારિણામિયનિપ્પણે ૮, અત્થિ ણામે ઉવસમિય
 સ્વઓવસમિયપારિણામિયનિપ્પણે ૯, અત્થિ ણામે સ્વહયસ્વઓવ-
 સમિયપારિણામિયનિપ્પણે ૧૦। કયરે સે ણામે ઉદહયુવસમિ-
 યસ્વહયનિપ્પણે ? ઉદહયુવસમિયસ્વહયનિપ્પણે—ઉદહયુત્તિ
 મણુસ્સે ઉવસંતા કસાયા સ્વહયં સમ્મત્તં। ઇસ ણં સે ણામે ઉદહ-
 યુવસમિયસ્વહયનિપ્પણે ॥ ૧ ॥ કયરે સે ણામે ઉદહયુવસમિય-
 સ્વઓવસમિયનિપ્પણે ? ઉદહયુવસમિયસ્વઓવસમિયનિપ્પણે-
 ઉદહયુત્તિ મણુસ્સે ઉવસંતા કસાયા સ્વઓવસમિયાઙ્કંદિયાઙ્કં।
 ઇસ ણં સે ણામે ઉદહયુવસમિયસ્વઓવસમિયનિપ્પણે ॥ ૨ ॥
 કયરે સે ણામે ઉદહયુવસમિયપારિણામિયનિપ્પણે ? ઉદહયુ-
 ઉવસમિયપારિણામિયનિપ્પણે—ઉદહયુત્તિ મણુસ્સે ઉવસંતા

પરન્તુ સાથ ૨ વસ્તુકે ઓર મી, માવ મોજૂદ હૈં । કયોંકિ સમસ્ત સંસારી
 જીવોં મેં કમ સે કમ ત્રીન માવ તો હોતે હી હૈં । ॥ સૂ. ૧૫૮ ॥

મોજૂદ હોય છે, કારણ કે સમસ્ત સંસારી જીવોમાં જોઈતામાં જોઈતા ત્રણ
 વસ્તુઓ તો અવશ્ય સંજોગ હોય છે. ॥ સૂ. ૧૫૮ ॥

कसाया पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइयउवसमियपारि-
 णामियनिष्फण्णे॥३॥ कयरे से णामे उदइयखइयखओवसमिय-
 निष्फण्णे? उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से
 खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं । एस णं से णामे उदइय-
 खइयखओवसमियनिष्फण्णे॥४॥ कयरे से णामे उदइयखइय-
 पारिणामियनिष्फण्णे? उदइयखइयपारिणामियनिष्फण्णे—उदइ-
 एत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे
 उदइएखइयपारिणामियनिष्फण्णे॥५॥ कयरे से णामे उदइय-
 खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे? उदइयखओवसमियपारि-
 णामियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं
 पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइयखओवसमियपारि-
 णामियनिष्फण्णे॥६॥ कयरे से णामे उवसमियखइयखओव-
 समियनिष्फण्णे? उवसमियखइयखओवसमियनिष्फण्णे—उव-
 संता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं । एस णं से
 णामे उवसमियखइयखओवसमियनिष्फण्णे॥७॥ कयरे से णामे
 उवसमियखइयपारिणामियनिष्फण्णे? उवसमियखइयपारिणा-
 मियनिष्फण्णे—उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं पारिणामिए
 जीवे । एस णं णामे उवसमियखइयपारिणामियनिष्फण्णे॥८॥
 कयरे से णामे उवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे?
 उवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे—उवसंता कसाया
 खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उव-

समियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे॥९॥ कयरे से णामे खइय
खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे? खइयखओवसमियपारि-
णामियनिष्फण्णे—खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं
पारिणामिए जीवे। एस णं से णामे खइयखओवसमिय पारि-
णामियनिष्फण्णे॥१०॥सू०१५९॥

छाया—तत्र खलु ये ते दश त्रिकसंयोगास्ते खलु इमे—अस्ति नाम औदयिकौ-
पशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्१, अस्ति नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्२
अस्ति नाम औदयिकौपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्३, अस्ति नाम औदयिकक्षायि-
कक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्४, अस्ति नाम औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्५,
अस्ति नाम औदयिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्६, अस्ति नाम औपश-
मिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्७, अस्ति नाम औपशमिकक्षायिकपारिणामिक-
निष्पन्नम्८, अस्ति नाम औपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्९, अस्ति
नाम क्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्१०। कतरत् तन्नाम औदयिकौ-
पशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्? औदयिकौपशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति
मानुष्यम् उपशान्ताः कषायाः क्षायिकं सम्यक्त्वम्। एतत्खलु तन्नाम औदयिकौ-
पशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्॥१॥ कतरत् तन्नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकनि-
ष्पन्नम्? औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यं उप-
शान्ताः कषायाः क्षायोपशमिकानोन्द्रियाणि। एतत्खलु तन्नाम औदयिकौपशमिक-
क्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥२॥ कतरत् तन्नाम औदयिकौपशमिकपारिणामिक-
निष्पन्नम्? औदयिकौपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यम्
उपशान्ताः कषायाः पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपशमिक-
पारिणामिकनिष्पन्नम्॥३॥ कतरत् खलु औदयिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्?
औदयिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यम्, क्षायिकं
सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकानोन्द्रियाणि। एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायिकक्षायो-
पशमिकनिष्पन्नम्॥४॥ कतरत् तन्नाम औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्?
औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यं क्षायिकं सम्यक्त्वं
पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्प-
न्नम्॥५॥ कतरत् तन्नाम औदयिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्? औदयि-
कक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—औदयिकमितिमानुष्यं क्षायोपशमिकानि

इन्द्रियाणि पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायोपशमिक-
 निष्पन्नम्॥६॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ?
 औपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्-उपशान्ताः कषायाः क्षायिकं
 सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि। एतत् खलु तन्नाम औपशमिकक्षायिक-
 क्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥७॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायिकपारिणामिक-
 निष्पन्नम् ? औपशमिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्-उपशान्ताः कषायाः
 क्षायिकं सम्यक्त्वं पारिणामिको जीवः एतत् खलु तन्नाम औपशमिकक्षायिक-
 पारिणामिकनिष्पन्नम्॥८॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिक-
 निष्पन्नम् ? औपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्-उपशान्ताः कषायाः
 क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औपशमिक-
 क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥९॥ कतरत् तन्नाम क्षायिकक्षायोपशमिक-
 पारिणामिकनिष्पन्नम् ? क्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्-क्षायिकं
 सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम
 क्षायिक क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥१०॥ सू० १५९॥

टीका—‘तत्थ णं जे ते दस’ इत्यादि—

त्रિક संयोगેડપિ દશ મજ્ઞા ભવન્તિ । તત્ર આદ્ય ભાવદ્વયં પરિપાટયા નિશ્ચિય
 અવશિષ્ટાનાં ત્રયાણાં મધ્યે ક્રમેણ એકૈકસ્ય તત્ર સંયોગે કૃતે સતિ ત્રયો મજ્ઞા

અથ સૂત્રકાર ત્રીન ભાવોંકે સંયોગ સે જો સાન્નિપાતિક ભાવ બનતે
 હેં ઉનકા કથન કરતે હેં—“તત્થળં જે તે” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે તે દસ તિગ સંજોગા તે ણં હમે) इन सांनिपा-
 तिक भावों में जो तीन २ भावों के संयोग से १० सांनिपातिक भाव के
 दश अंग बनते हैं—वे इस प्रकार से हैं—(अस्थिणामे उदइयउवसमिय
 खइयनिष्फण्णे?) औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, इन तीनों भावों के
 संयोग से निष्पन्न औदयिकौपशमिक क्षायिक सांनिपातिक भाव
 एक (अस्थि णामे उदइयउवसमियखओवसमियनिष्फण्णे २) दूसरा—

ત્રણ ભાવોના સંયોગથી એ સાન્નિપાતિક ભાવો બને છે તેમનું સૂત્રકાર
 હવે નિરૂપણ કરે છે—“તત્થ ણં જે તે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે તે દસતિગસંજોગા તેણં હમે...) ત્રણ ત્રણ ભાવોના
 સંયોગથી એ દસ સાન્નિપાતિક ભાવો બને છે તે નીચે પ્રમાણે છે—(અસ્થિ-
 ણામે ઉદइयउवसमिय—खइयनिष्फण्णे?) (૧) ઔદયિક, ઔપશમિક અને
 ક્ષાયિક, આ ત્રણે ભાવોના સંયોગથી બનતો “ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક
 સાન્નિપાતિક ભાવ.” (અસ્થિ ણામે ઉદइयउवसमियखओवसमियनिष्फण्णे) (૨)

औदयिक औपशमिक, एवं क्षायोपशमिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ औदयिकौपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव (अस्थिणामे उदइय उवसमिय पारिणामिय निष्कण्णे) तीसरा-औदयिक, औपशमिक और पारिणामिक, इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ औदयिक औपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव (अस्थिणामे उदइयखइयखओवसमियनिष्कण्णे) चौथा-औदयिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औदयिक क्षायिक, क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव (अस्थिणामे उदइय खइय पारिणामिय निष्कण्णे) पांचवां-औदयिक क्षायिक और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औदयिक क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव (अस्थिणामे उदइय खओवसमियपारिणामियनिष्कण्णे) छठा-औदयिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव (अस्थिणामे उवसमियखइयखओवसमियनिष्कण्णे) सातवां-औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औपशमिक, क्षायिक क्षायोपशमिक नाम का सान्निपातिक भाव

औदयिक, औपशमिक અને ક્ષાયોપશમિક, આ ત્રણુ ભાવોના સંયોગથી બનતો.
“ औदयिकौपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव.”

(अस्थिणामे उदइयउवसमियपारिणामियनिष्कण्णे) (३) औदयिक, औपशमिक અને પારિણામિક આ ત્રણુ ભાવોના સંયોગથી બનતો “औदयिकौपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव.”

(अस्थिणामे उदइयखइयखओवसमियनिष्कण्णे) (४) औदयिक, क्षायिक અને ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ.”

(अस्थिणामे उदइयखइयपारिणामियनिष्कण्णे) (५) औदयिक, क्षायिक અને પારિણામિક, આ ત્રણુ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો “औदयिक क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव.”

(अस्थिणामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्कण्णे) (६) औदयिक, क्षायોપશમિક અને પારિણામિક ભાવોના સંયોગથી બનતો “ औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव.”

(अस्थिणामे उवसमियखइयखओवसमियनिष्કण्णे) (७) औपशमिक, क्षायिक અને ક્ષાયોપશમિક, આ ત્રણુ ભાવોના સંયોગથી બનતો “ औપશમિક क्षायिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव.”

(અસ્થિનામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) આઠવાં-ઔપશ-મિક ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न औपशमिक क्षायिक पारिणामिक नाम का सान्निपातिक भाव (अस्थि-नामे उवसमियस्वओवसमिपारिणामियनिकण्णे) नौवां-औपश-मिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न औपशमिक क्षायोपशमिक पारिणामिक नाम का सान्निपातिक भाव, अस्थिनामे स्वह्यस्वओवसमिपारिणामियनिकण्णे) दसवां-क्षायिक, क्षायोपशमिक, और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक नामका सान्निपातिक भाव । (कयरे से णामे उद्दह्यउवसमिपस्वह्यनिकण्णे)

પ્રશ્ન-હે ભદ્રન્ત ! ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક નામ કા જો પ્રથમ ત્રિક ભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ વહ કૈસા હૈ ?

ઉત્તર-(ઉદહ્ય ઉવસમિયસ્વહ્યનિકળ્ણે) ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક-નામ કા જો પ્રથમ ત્રિક સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ વહ એસા હૈ-ઉદ્દહ્યત્તિમણુસે ઉવસંતા-કસાયા સ્વહ્યં સંમત્તં) મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવ મેં હૈ કષાયોં કા ઉપશમ ઔપશમિક ભાવ મેં હૈ ઔર ક્ષાયિક

(અસ્થિ ણામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિકળ્ણે) (૮) ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો “ ઔપશમિક ક્ષાયિક પારિણામિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ. ”

(અસ્થિનામે ઉવસમિય સ્વહ્યપારિણામિયનિકળ્ણે) (૯) ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો “ ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ. ”

(અસ્થિનામે સ્વહ્યસ્વહ્યપારિણામિયનિકળ્ણે) (૧૦) ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશ-મિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો “ ક્ષાયિક ક્ષાયોપ-શમિક પારિણામિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ. ”

પ્રશ્ન-(કયરે સે ણામે ઉદ્દહ્યઉવસમિયસ્વહ્યનિકળ્ણે ?) હે ભગવન્ ! ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક નામનો જે પહેલો ત્રિકભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ છે તે કેવો છે ?

ઉત્તર-(ઉદ્દહ્યઉવસમિયસ્વહ્યનિકળ્ણે) ઔદયિક ઔપશમિક ક્ષાયિક નામનો જે પહેલો ત્રિકભાવસંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ છે તે આ પ્રકારનો છે-(ઉદ્દહ્ય ત્તિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા સ્વહ્યં સંમત્તં) મનુષ્ય ગતિ ઔદયિક ભાવ છે, કષાયોનો ઉપશમ ઔપશમિક ભાવ છે અને ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १५९ त्रिकसंयोगनिरूपणम्

७६३

सम्पत्तव क्षायिक भाव में है—(एसणं से णामे उदइयउवसमियखइय-
निष्फण्णे) इस प्रकार यह औदयिक औपशमिक क्षायिक निष्पन्न नाम
सान्निपातिक भाव है। (कयरे से णामे उदइयउवसमियखओव-
समियनिष्फण्णे) हे भदन्त ! औदयिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक
भाव कैसा है ?

उत्तर—(उदइय उवसमियखओवसमियनिष्फण्णे) औदयिक औप-
शमिक क्षायोपशमिक नामका सान्निपातिक भाव ऐसा है (उदइय
स्तिमणुस्से उवसंता कसाया खओवसमियाइं इंदियाइं) मनुष्यगति औद-
यिक, उपशान्तकषाये औपशमिक, और इन्द्रिया क्षायोपशमिक (एसणं
से णामे उदइयउवसमियखओवसमियनिष्फण्णे) इस प्रकार यह
औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव है। (कयरे
से णामे उदइयउवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ?) हे भदन्त ! औद-
यिक औपशमिक पारिणामिक नाम का तीसरा सान्निपातिक भाव कैसा
है ? (उदइयउवसमियपारिणामियनिष्फण्णे)

उत्तर—औदयिक औपशमिक पारिणामिक नामका जो तीसरा सान्नि-
पातिक भाव है वह ऐसा है—(उदइयएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया पारि-

क्षायिक भाव छे. (एसणं से णामे उदइयउवसमियखइयनिष्फण्णे) आ प्रकारने
आ औदयिक औपशमिक क्षायिक निष्पन्न नामने सान्निपातिक भाव छे.

प्रश्न—कयरे से णामे उदइयउवसमियखओवसमियनिष्फण्णे ? हे लगवन् !
औदयिक औपशमिक सान्निपातिक भाव केवो छे ?

उत्तर—(उदइयउवसमियखओवसमियनिष्फण्णे) औदयिक औपशमिक—क्षायोपशमिक
नामने सान्निपातिक भाव आ प्रकारने छे—(उदइयएत्ति मणुस्से, उवसंता-
कसाया, खओवसमियाइं इंदियाइं) मनुष्य गति औदयिक भाव छे, उपशान्त
कषाये औपशमिक भाव छे अने इन्द्रिये क्षायोपशमिक भाव छे. (एसणं से
णामे उदइयउवसमियखओवसमियनिष्फण्णे) आ प्रकारने आ औदयिक औपशमिक
क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव छे.

प्रश्न—(कयरे से णामे उदइयउवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ? हे लगवन् !
औदयिक औपशमिक पारिणामिक नामने त्रीन्ने सान्निपातिक भाव केवो छे ?

उत्तर—(उदइयउवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ?) औदयिक औपशमिक पारिणामि-
क नामने त्रीन्ने सान्निपातिक भाव आ प्रकारने छे—(उदइयएत्ति
मणुस्से, उवसंता कसाया, पारिणामिक जीवे) मनुष्य गति औदयिक भाव छे,

ણામિષ્ (જીવે) મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવ હૈ કષાયોં કી ઉપશાંતિ ઔપશમિક ભાવ હૈ ઔર જીવ પારિણામિક ભાવ હૈ । (एसणं से णामे उदइयउवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) इस प्रकार यह औदयिकौपशमिकपारिणामिक नाम का सान्निपातिक भाव हॆ । (कयरे से णामे-उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे ?) हे भदन्त ! औदयिक क्षायिक और क्षायोपशमिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ औदयिक क्षायिकक्षायोपशमिक नाम का सान्निपातिक भाव कैसा है ?

उत्तर—(उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे) औदयिक क्षायिक क्षायोपशमिक नाम का सान्निपातिक भाव ऐसा है—

(उदएस्सि मणुस्से खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं) मनुष्य गति औदयिक भाव में है । क्षायिक सम्यक्त्व यह क्षायिकभाव में है, और इन्द्रियां क्षायोपशमिकभाव में हैं । (एसणं से णामे उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे) इस प्रकार यह औदयिकक्षायिकक्षायोपशमिक नामका सान्निपातिक भाव है ।

(कयरे से णामे उदइयखइयपारिणामियनिष्फण्णे ?) हे भदन्त ! औदयिक क्षायिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव कैसा है ? (उदइयखइयपारिणामियनिष्फण्णे)

કષાયોની ઉપશાન્તિ ઔપશમિક ભાવ છે અને ઔપ પારિણામિક ભાવ છે. (एसणं से णामे उदइयउवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) આ પ્રકારનું ઔદયિકૌપશમિક પારિણામિક નામના સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉદइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे) હે ભગવન ! ઔદયિક ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક આ ત્રણે ભાવોના સંયોગથી બનતા ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામના ચોથા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे) ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામના ચોથા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(उदइए स्सि मणुस्से, खइयं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं) મનુષ્ય ગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે. (एसणं से णामे उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे) આ પ્રકારનું ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામના સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉદइयखइयपारिणामियनिष्फण्णे ?) હે ભગવન ! ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક ભાવોના સંયોગથી બનતા પાંચમાં સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

उत्तर-औदयिक क्षायिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक नामका भाव इस प्रकार से है—(उदइएत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे) मनुष्य गति यह औदयिक भाव है, क्षायिक सम्पत्त्व यह क्षायिक भाव है और जीव यह पारिणामिक भाव है। (एसणं से णामे उदइयखइयपारिणामिय-निष्फण्णे) इसप्रकार यह औदयिकक्षायिक पारिणामिक नामका सान्निपातिक भाव है। (कयरे से णामे उदइय खओवसमियपारिणामिय-निष्फण्णे ?) हे भदन्त ! औदयिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव कैसा है ?

उत्तर—(उदइय खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव ऐसा है—(उदइएत्तिमणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) मनुष्यगति यह औदयिक भाव है। इन्द्रियां ये क्षायोपशमिक भाव हैं और जीव यह पारिणामिक भाव है। (एसणं से णामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) इस प्रकार से यह औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक नाम का सान्निपातिक भाव है।

उत्तर—(उदइयखइयपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक क्षायिक अने पारिष्वाभिक, आ त्रषु आवेना स'योगथी अनता पांयमे सान्निपातिक भाव आ प्रकारने छे—(उदइएत्ति मणुस्से, खइयं सम्मत्तं, पारिणामिए जीवे) मनुष्य गति औदयिक भाव ३५ छे, क्षायिक सम्पत्त्व क्षायिक भाव ३५ छे अने ७५ पारिष्वाभिक भाव ३५ छे। (एसणं से णामे खइयपारिणामियनिष्फण्णे) आ प्रकारनुं औदयिक क्षायिक पारिष्वाभिक नामना सान्निपातिक भावनुं स्व३५ छे।

प्रश्न—(कयरे से णामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ?) हे भगवन् ! औदयिक, क्षायोपशमिक अने पारिष्वाभिक, आ त्रषु आवेना स'योगथी अनता छका सान्निपातिक भावनुं स्व३५ केवुं छे ?

उत्तर—(उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक, क्षायोपशमिक अने पारिष्वाभिक, आ त्रषु आवेना स'योगथी अनता छका सान्निपातिक भावनुं स्व३५ आ प्रकारनुं छे—(उदइए मणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे) मनुष्यगति औदयिक भाव ३५ छे, इन्द्रियो क्षायोपशमिक भाव ३५ छे अने ७५ पारिष्वाभिक भाव ३५ छे। (एसणं से णामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) आ प्रकारने औदयिक क्षायोपशमिक पारिष्वाभिक नामने सान्निपातिक भाव छे।

ળમિણ જીવે) ઉપશમિત ક્ષયોઃ ઔપશમિક ભાવ હૈ ક્ષાયિક સમ્પત્તિભાવ હૈ ઔપશમિક ભાવ હૈ । (એસણં સે ણામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) હસપ્રકાર યહ ઔપશમિકક્ષાયિક ઔપશમિક હન ત્રીન ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ સાન્નિપાતિકભાવ હૈ । (કયરે સે ણામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે ?) હે ભદન્ત ! ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક ઔપશમિક હન ત્રીનો ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ સાન્નિપાતિકભાવકૈસા હૈ ?

ઉત્તર—(ઉવસમિય સ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક, ઔપશમિક હન ત્રીન ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ સાન્નિપાતિક ભાવ હસ પ્રકાર સે હૈ—(ઉવસંતા કસાયા સ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) આ પ્રકારનેઃ ઔપશમિક ક્ષાયિક પારિણામિક નામનેઃ સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ । (કયરે સે ણામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) હે ભદન્ત ! ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક

થયેલા ક્ષાયોઃ ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્પત્તિભાવ રૂપ છે અને સ્વહ્ય પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (એસણં સે ણામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) આ પ્રકારનેઃ ઔપશમિક ક્ષાયિક પારિણામિક નામનેઃ સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે ?) હે ભગવન્ ! ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો નવમો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

ઉત્તર—(ઉવસમિય સ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો નવમો સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારનેઃ છે—(ઉવસંતા કસાયા, સ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) આ પ્રકારનેઃ ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક નામનેઃ સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે સ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કણ્ણે ?) હે ભગવન્ ! ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો નવમો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सांनिपातिक भाव कैसा है ?

उत्तर—(खड्गखओवसमियपारिणामियनिष्कण्णे) क्षायिक क्षायो-
पशमिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ
सांनिपातिक भाव ऐसा है—(खड्गं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं
पारिणामिए जीवे) क्षायिक सम्यत्त्व क्षायिक भाव है, इन्द्रियां क्षायो-
पशमिक भाव हैं तथा जीव यह पारिणामिक भाव है। (एस णं से णामे
खड्गखओवसमियपारिणामियनिष्कण्णे) इस प्रकार यह क्षायिक
क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न
हुआ क्षायिकक्षायोपशमिक पारिणामिक नामका सांनिपातिक भाव है—

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा तीन भावों के संयोग से जो
१० सांनिपातिक रूप भंग होते हैं उनका प्रदर्शन किया है। इनमें औद्-
यिक और औपशमिक इन दो भावों को परिपाटी से निक्षिप्त कर के
अवशिष्ट क्षायिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीनों भावों में
से एक एक भाव का उनके साथ संयोग किया है। इस प्रकार करने से
तीन भंग निष्पन्न होते हैं, इनमें औदयिकौपशमिक क्षायिक सांनिपा-
तिक भाव इस प्रकार से घटित करना चाहिये कि यह मनुष्य उपशान्त
क्रोधादि कषायवाला होकर क्षायिक सम्यक् दृष्टि है। मनुष्य से यहाँ

ઉત્તર—(खड्ग खओवसमियपारिणामियनिष्कण्णे) क्षायिक, क्षायोपशमिक
अने पारिष्णामिक, आ त्रयु भावेना संयोगथी अनता इसभां सांनिपातिक
भाव आ प्रकारने छे—(खड्गं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए
जीवे) क्षायिक सम्यत्त्व क्षायिक भाव इय छे, इन्द्रियो क्षायोपशमिक भाव
इय छे अने एव पारिष्णामिक भाव इय छे. (एसणं से णामे खड्ग खओवस-
मियपारिणामियनिष्कण्णे) आ प्रकारनुं क्षायिक, क्षायोपशमिक अने पारिष्णामिक,
आ त्रयु भावेना संयोगथी अनता इसभां सांनिपातिक भावतुं स्वइय छे.

भावार्थ—त्रयु भावेना संयोगथी ने इस सांनिपातिक भाव इय १०
भंग अने छे, तेभनुं सूत्रकारे आ सूत्रभां निरूपयु कथुं छे औदयिक अने
औपशमिक भावेनी साथे अनुक्रमे क्षायिक, क्षायोपशमिक अने पारिष्णामिक
भावोना संयोग करवाथी पड़ेला त्रयु भंग अन्या छे.

(१) “औदयिकौपशमिक सांनिपातिक भाव” इय पड़ेला भंगतुं
ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે—“આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત ક્રોધાદિ કષાયવાળો છે અને
ક્ષાયિક સમ્યક્દૃષ્ટિ છે.” મનુષ્ય પદ અહીં મનુષ્યગતિનું વાચક છે. મનુષ્ય
ગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ હોય છે, કારણ કે મનુષ્યગતિ નામકર્મના ઉદયથી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૨ ત્રિકસંયોગનિરૂપણમ્

૭૬૧

भवन्ति । तत आद्यं तृतीयं च परिपाटया निक्षिप्य अवशिष्टयोर्द्वयोस्तत्र क्रमेण संयोगे भङ्गद्वयम् । ततः प्रथमचतुर्थपञ्चमभावानां संयोगे एको भङ्गः । इत्थं पञ्च भङ्गाः । ततो द्वितीयं च भावपरिपाटया निक्षिप्य तत्र चतुर्थपञ्चमयोः क्रमेण योगे भङ्गद्वयम् । ततो द्वितीयचतुर्थपञ्चमभावानां च योगे एको भङ्गः । तथा-तृतीयचतु-

મનુષ્યગતિ લી ગઈ છે । મનુષ્યગતિ યહ ઔદયિક ભાવ છે । ક્યોં કિ મનુષ્યગતિ નામકર્મ કે ઉદય સે મનુષ્ય હોતા છે । ઉપશાંત ક્રોધાદિ કષાયવાલા કહને સે ઔપશમિક ભાવ ઘટિત હોતા છે ઔર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ સે ક્ષાયિક ભાવ । હસી પ્રકાર સે શેષ દો ભંગોં મેં-ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ મેં યહ મનુષ્ય ઉપશાન્ત કષાયવાલા પંચેન્દ્રિય છે યથા ઔદયિકૌપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક ભંગ મેં યહ મનુષ્ય ઉપશાંત કષાયવાલા જીવ છે-ઘટિત કરલેના ચાહિયે । જહાં પર ઔપશમિક ભાવ કા પરિત્યાગ કર ઔદયિક ઔર ક્ષાયિક ભાવ કા ગ્રહણ હો તથા ક્ષાયોપશમિક એવં પારિણામિક ભાવોં મે સે એક ૨ કો ગ્રહણ હો વહ દૂસરા ત્રિભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ કા ભેદ છે-હસકે દો ભંગ હેં-એક ઔદયિક ક્ષાયિકક્ષાયોપશમિક ઔર દૂસરા ઔદયિક ક્ષાયિક પારિણામિક, પહિલેકા દૃષ્ટાન્ત-ક્ષીણ કષાયી મનુષ્ય

મનુષ્ય ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે. ઉપશાન્ત ક્રોધાદિ કષાયવાળો કહેવાથી ઔપશમિક ભાવ ઘટિત થાય છે અને ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ યુક્ત કહેવાથી ક્ષાયિક ભાવ ઘટિત થાય છે એજ પ્રમાણે બીજા અને ત્રીજા ભંગોને ભાવાર્થ પણ સમજી શકાય એવો છે.

(૨) “ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ” ૩૫ બીજા ભંગનું ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે-

‘આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત કષાયવાળો પંચેન્દ્રિય જીવ છે.’

(૩) ઔદયિકૌપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક ભંગનું ઉદાહરણ.

“આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત કષાયવાળો જીવ છે.”

ત્યાર પછીનો ચોથો અને પાંચમો ભંગ આ પ્રમાણે બને છે-અહીં ઔદયિકભાવની સાથે ઔપશમિક ભાવ લેવાને બદલે ક્ષાયિક ભાવ લેવો અને ઔદયિક અને ક્ષાયિક ભાવની સાથે અનુક્રમે ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવોનો સંયોગ કરવાથી ચોથો અને પાંચમો ભંગ બને છે.

(૪) ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવનું ઉદાહરણ
“ક્ષીણ કષાયી મનુષ્ય શ્રુતજ્ઞાનિ.”

અં ૧૭

ર્થપશ્ચમભાવાનાં ચ યોમે ઈકો મજ્ઞઃ । ઇત્યં સર્વે મજ્ઞા દશ સંખ્યકા મવન્તિ ।
 ઇતેષામેવ સ્વરૂપવિવરણાય પ્રાહ-‘કયરે સે ગામે’ ઇત્યાદિ । ઈર્ષાં વ્યાખ્યા પૂર્વ-
 વદ્ બોધ્યા । ઇત્ર પશ્ચમો મજ્ઞઃ કેવલિનાં સંમવતિ । કેવલિનાં હિ-ઔદયિકી

શ્રુતજ્ઞાની ઔર દૂસરે કા દૃષ્ટાન્ત જિસકા દર્શન મોહનીયાદિ કર્મ ક્ષીણ
 હો ગયા હૈ ઈસા વહ મનુષ્ય જીવ હૈ । જહાંપર કેવલ ઔદયિક ભાવકા
 ગ્રહણ હૈ ઔર ઔપશમિક ઇવં ક્ષાયિક કા પરિત્યાગ હૈ વહ તીસરા
 ત્રિભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ । ઇસકા ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક
 પારિણામિક ઇક-ઈસા છઠા ભંગ હૈ । ઇસકા દૃષ્ટાન્ત-જિસ પ્રકાર મનુષ્ય
 મનોયોગી જીવ હૈ । જહાં પર ઔદયિક ભાવ કો છોડકર શેષ ઔપશ-
 મિકાદિ ચાર ભાવોં મેં ઇક ૨ કા પરિત્યાગ કિયા જાવે વહ ચૌથા
 ત્રિભાવ સંયોગી ભેદ હૈ ઔર ઇસકે ઇસ પ્રકાર સે ચાર ભંગ માને ગયે
 હૈ-પહલા ભંગ-ઔપશમિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક નામ
 કા દૂસરા ભંગ ઔપશમિક ક્ષાયિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક નામકો
 તીસરા ભંગ-ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક નામ
 કા । ચૌથા-ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક નામ કો
 ઇસ પ્રકાર યે સઘ ભંગ ૧૦ હો જાતે હૈ । ઇનમેં જો ઔદયિક ક્ષાયિક
 ઇવં પારિણામિક ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન પર્વા સાન્નિપાતિક ભાવકા

(પ) ઔદયિક ક્ષાયિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક ભાવનું દૃષ્ટાન્ત-“જેના
 દર્શનમોહનીય આદિ કર્મ ક્ષીણ થઈ ગયાં છે એવો મનુષ્ય જીવ.”

જે સાન્નિપાતિકભાવમાં ઔદયિક ભાવની સાથે ઔપશમિક અને ક્ષાયિક,
 આ જો ભાવોને લેવાને બદલે બાકીના જો ભાવો લેવામાં આવે છે એવો
 છટ્ટો ભંગ નીચે પ્રમાણે છે-“ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક
 ભાવ તેનું દૃષ્ટાન્ત નીચે પ્રમાણે છે-“મનુષ્ય મનોયોગી જીવ છે.”

બાકીના ચાર ભંગ આ પ્રકારે બન્યા છે-આ ચારે ભંગમાં ઔદયિકભાવ
 સિવાયના ચાર ભાવોમાંના ત્રણ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી ચાર ભંગ બન્યા છે,

ઔપશમિક અને ક્ષાયિક, આ જો ભાવો સાથે ક્ષાયોપશમિક ભાવના
 સંયોગથી સાતમો ભંગ અને પારિણામિકભાવના સંયોગથી આઠમો ભંગ બન્યો છે.

નવમાં ભંગમાં ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવોના
 સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવ બને છે તે ગ્રહણ કરવો અને દસમાં ભંગમાં
 ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો
 સાન્નિપાતિક ભાવ ગ્રહણ થયો છે. આ પ્રકારે કુલ ૧૦ ભંગ બને છે.

ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન પાંચમા
 સાન્નિપાતિક ભાવનો તો માત્ર કેવલીઓમાં જ સદ્ભાવ હોય છે, કારણ કે

અંતુયોગવન્દિકા ટીકા સૂત્ર ૧૫૯ ત્રિકસંયોગનિરૂપણમ્

૭૭૧

મનુષ્યગતિઃ ક્ષાયિકાણિ જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાણિ પારિણામિકં જીવત્વમિતિ ત્રયો ભાવા મવન્તિ । ઔપશમિકસ્તુ તેષુ નાસ્તિ, ઔપશમિકસ્ય મોહનીયાશ્રયત્વાત્, કેવલિષુ મોહનીયસ્યાસંભવાત્ । ક્ષાયોપશમિકો ભાવોઽપ્યેષાં નાસ્તિ, ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાદિપદાર્થત્વેનાભિમતાઃ, ઇન્દ્રિયાદિપદાર્થાસ્તુ કેવલિષુ ન સન્તિ, તેષામતીન્દ્રિયત્વાત્ । ઉક્તંચાપિ-‘અતીન્દ્રિયાઃ કેવલિનઃ’ ઇતિ । इत्थं च औदयिक-ક્ષાયિકપારિણામિકેતિ ભાવત્રયનિષ્પન્નઃ પશ્ચમો મજ્ઞઃ કેવલિનાં સંભવતિ । પશ્ચો મજ્ઞસ્તુ નારકાદિષુ ચતસ્રષુ ગતિષુ बोध्यः । तथाहि-नारकादन्यतमा गतिः औद-

ભંગ હૈ वह केवलियों के संभवता है-क्योंकि केवलियों के औदयिक-मनुष्यगति है ज्ञानदर्शन और चारित्र ये क्षायिकरूप हैं । और पारिणा-मिक रूप जीवत्व है । वहां ये तीन भाव हैं । औपशमिक भाव उनमें नहीं है, क्योंकि औपशमिक मोहनीय के आश्रय से होता है । और मोह-नीय केवलियों में है नहीं । क्षायोपशमिक भाव भी केवलियों में नहीं होता है । क्योंकि क्षायोपशमिक भाव इन्द्रिय आदि पदार्थरूप माने गये हैं । इन्द्रियादिरूप पदार्थ केवलियों में नहीं है । क्यों कि वे इन्द्रियातीत हैं । “अतीन्द्रिया केवलिनः ” ऐसा अन्यत्र कहा है । तात्पर्य इसका यह है कि केवलियों का ज्ञान इन्द्रियातीत-अतीन्द्रिय-है । इस प्रकार औद-यिक क्षायिक और पारिणामिक इन तीन भावों से निष्पन्न पंचम भंग केवलियों में संभवता है । तथा जो छठा औदयिक क्षायोपशमिक एवं

કેવલીઓમાં મનુષ્ય ગતિ રૂપ ઔદયિક ભાવનો, જ્ઞાનદર્શન રૂપ ક્ષાયિક ભાવનો અને જીવત્વ રૂપ પારિણામિક ભાવનો સદ્ભાવ રહે છે આ રીતે કેવલીઓમાં આ ત્રણ ભાવોનો જ સદ્ભાવ રહે છે. તેમનામાં ઔપશમિક ભાવનો સદ્ભાવ હોતો નથી કારણ કે ઔપશમિક ભાવ મોહનીય કર્મના ઉપશમ પર આધાર રાખે છે. કેવલીઓમાં મોહનીય કર્મનો સદ્ભાવ જ હોતો નથી કેવલીઓમાં ક્ષાયોપશમિક ભાવનો પણ સદ્ભાવ હોતો નથી કારણ કે ક્ષાયોપશમિક ભાવ ઇન્દ્રિયાદિ પદાર્થ રૂપ મનાય છે છે ઇન્દ્રિયાદિ રૂપ પદાર્થ કેવલીઓમાં હોતા નથી, કારણ કે તેઓ ઇન્દ્રિયાતીત હોય છે. “અતીન્દ્રિયા કેવલિનઃ” એવું સિદ્ધાન્તકથન છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે કેવલીઓનું જ્ઞાન ઇન્દ્રિયાતીત (અતીન્દ્રિય) હોય છે આ પ્રકારે ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો પાંચમો ભંગ માત્ર કેવલીઓમાં જ સંભવી શકે છે.

ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતા સાત્ત્વિક ભાવ રૂપ છઠો ભંગ નારકાદિ ચારે ગતિઓમાં

યિકી, ક્ષાયોપશ્મિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણામિકં જીવત્વમ્, ઇતિ ઔદયિક-ક્ષાયોપશ્મિકપારિણામિકેતિ ભાવત્રયનિષ્પન્નઃ ષષ્ઠો મજ્ઞો નારકાદિગતિચતુષ્ટયે સંભવતિ। અતઃ સ્તરેત્વષ્ઠૌ મજ્ઞાઃ પ્રરૂપણામાત્રમ્, તેષાં કાઽપ્યસંભવાત્ ॥સૂ.૧૫૯॥

અથ ચતુષ્કસંયોગાન્નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—તત્થ ણં જે તે પંચ ચઠ્ઠકસંજોગા તે ણં ઇમે—અર્થિ
 ણામે ઉદઈય—ઉવસમિય—લઈય—સ્વઓવસમિયનિષ્કળ્લે? અર્થિ
 ણામે ઉદઈય—ઉવસમિયસ્વઈયપારિણામિયનિષ્કળ્લે૨, અર્થિ
 ણામે ઉદઈયઉવસમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્લે૩, અ-
 ર્થિ ણામે ઉદઈયસ્વઈયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્લે૪,
 અર્થિ ણામે ઉવસમિયસ્વઈયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્લે૫।
 ‘કયરે સે ણામે ઉદઈયઉવસમિયસ્વઈયસ્વઓવસમિયનિષ્કળ્લે ?,
 ઉદઈયઉવસમિયસ્વઈયસ્વઓવસમિયનિષ્કળ્લે-ઉદઈયત્તિ મળુસ્સે,

પારિણામિક ઇન ભાવોં સે—નિષ્પન્ન ભંગ હૈ વહ નારકાદિ ચારોં ગતિયોં
 મેં હોતા હૈ કયોં કિ યે નારકાદિ ગતિયાં ઔદયિકી માની ગઈ હૈ ઔર
 વહાં જો ઇન્દ્રિયાં હૈં વે ક્ષાયોપશ્મિક ભાવરૂપ હૈ ઔર જીવત્વ વહાં
 પારિણામિક ભાવરૂપ હૈ। ઇસ પ્રકાર ઔદયિક ક્ષાયોપશ્મિક ઔર
 પારિણામિક ઇન ત્રીન ભાવોં સે નિષ્પન્ન યહ છઠા ભંગ નારક આદિ
 ચારોં ગતિયોં મેં સંભવતા હૈ। તથા ઇનસે અતિરિક્ત ઔર જો આઠ ભંગ
 હૈં વે કેવલ પ્રરૂપણા માત્ર હૈં। કયોં કિ ઇન ભંગોં કી કહીં પર સ્ત્રી
 સંભાવના નહીં હૈ ! ॥સૂ.૧૫૯॥

સંભવી શકે છે, કારણ કે નારકાદિ ગતિઓને ઔદયિક માનવામાં આવે છે.
 આ ગતિના જીવોમાં જે ઇન્દ્રિયો હોય છે તે ક્ષાયોપશ્મિક ભાવ રૂપ ગણાય
 છે. અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ ગણાય છે આ રીતે ઔદયિક, ક્ષાયો-
 પશ્મિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો છઠો
 ભંગ નારકાદિ ચારે ગતિઓમાં સંભવી શકે છે.

પાંચમાં અને છઠા ભંગ સિવાયના આઠે ભંગોની કોઈ પણ જગ્યાએ
 શક્યતા હોતી નથી તેથી માત્ર પ્રરૂપણા કરવા નિમિત્તે જ તે ભંગોનું કથન
 આહીં કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું. ॥સૂ.૧૫૯॥

उवसंता कसाया, खइअं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं ।
 एस णं से णामे उदइयउवसमियखइयखओवसमियनिष्फण्णे ?,
 कयरे से णामे उदइयउवसमियखइयपरिणामियनिष्फण्णे ?,
 उदइयउवसमियखइयपरिणामियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से,
 उवसंता कसाया, खइयं सम्मत्तं, पारिणामिए जीवे । एस णं
 से णामे उदइयउवसमियखइयपरिणामियनिष्फण्णे २ । ‘कयरे
 से णामे उदइयउवसमियखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे—
 उदइयउवसमियखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे उदइएत्ति
 मणुस्से, उवसंता कसाया, खओवसमियाइं इंदियाइं,
 पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइयउवसमियखओव-
 समियपरिणामियनिष्फण्णे ३ । कयरे से णामे उदइयखइयख-
 ओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे ? उदइयखइयखओवसमिय-
 परिणामियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से, खइयं सम्मत्तं, खओ-
 वसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे । एस णं से नामे उद-
 इयखइयखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे ४ । कयरे से नामे
 उवसमियखइयखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे ?, उवसमि-
 यखइयखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे—उवसंता कसाया,
 खइयं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे ।
 एस णं से नामे उवसमियखइयखओवसमियपरिणामिय-
 निष्फण्णे ५ ॥ सू० १६० ॥

छाया—तत्र खलु ये ते पञ्च चतुष्कसंयोगाः, ते खलु इमे—अस्ति नाम औदयि-
 कौपशमिकक्षाधिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ? अस्ति नाम औदयिकौपशमिकक्षाधिक-
 पारिणामिकनिष्पन्नम् २, अस्ति नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकपरिणा-

મિકનિષ્પન્નમ્૩, અસ્તિ નામ ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્૪,
અસ્તિ નામ ઔપશમિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્૫, કતરત્

અથ સૂત્રકાર-ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન સાન્નિપાતિક ભાવોં
કી પ્રસ્થાપના કરતે હૈં—“ તત્થ ણં જે તે પંચ ” હત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ-(તત્થ ણં જે તે પંચ ચત્તકસંજોગા તે ણં હમે) યહાં જો
ચતુષ્ક સંયોગી પાંચ ભંગ હૈં વે હસ પ્રકાર સે હૈં-(અસ્થિ ણામે ઉદહય,
ઉવસમિય-સ્વહય-સ્વઓવસમિયનિષ્કળ્લે) ઔદયિક, ઔપશમિક
ક્ષાયિક ઔર ક્ષાયોપશમિક હન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન પહિલા
ભંગ હૈ । (અસ્થિ ણામે ઉદહય-ઉવસમિય-સ્વહય-પારિણામિયનિષ્કળ્લે) ઔદયિક,
ઔપશમિક, ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવોં કે
સંયોગ સે નિષ્પન્ન દુસરા ભંગ હૈ । (અસ્થિ ણામે ઉદહય ઉવસમિય, સ્વઓ-
વસમિય-પારિણામિય નિષ્કળ્લે) ઔદયિક, ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક
ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન ત્રીસરા ભંગ હૈ ।
(અસ્થિ ણામે ઉદહયસ્વહયસ્વઓવસમિય પારિણામિયનિષ્કળ્લે)
ઔદયિક ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવોં કે
સંયોગ સે નિષ્પન્ન ચૌથા ભંગ હૈ (અસ્થિ ણામે ઉવસમિયસ્વહયસ્વઓવ-

ચાર ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતા સાન્નિપાતિક ભાવોનું સૂત્રકાર
હવે નિરૂપણ કરે છે-“ તત્થ ણં જે તે પંચ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ-(તત્થ ણં જે તે પંચ ચત્તકસંજોગા તે ણં હમે) ચાર ભાવોના સંયોગથી
બનતા ચતુષ્કસંયોગી પાંચ ભંગ બને છે, તે ચતુષ્કસંયોગી પાંચ ભંગો
નીચે પ્રમાણે છે-(અસ્થિ ણામે ઉદહય-ઉવસમિય-સ્વહય-સ્વઓવસમિયનિષ્કળ્લે)
પહેલો ભંગ-ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ચાર
ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ (અસ્થિ ણામે ઉદહય, ઉવસમિય,
સ્વહય, પારિણામિય, નિષ્કળ્લે) બીજો ભંગ-ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને
પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ

(અસ્થિ ણામે ઉદહય-ઉવસમિય-સ્વઓવસમિય-પારિણામિયનિષ્કળ્લે) ત્રીજો
ભંગ-ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર
ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ.

ચોથો ભંગ-(અસ્થિ ણામે ઉદહય-સ્વહય-સ્વઓવસમિય-પારિણામિયનિષ્કળ્લે)
ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયો-
ગથી નિષ્પન્ન થતો સાન્નિપાતિક ભાવ.

પાંચમો ભંગ-(અસ્થિ ણામે ઉવસમિય-સ્વહય-સ્વઓવસમિય-પારિણામિય

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १५४ चतुष्कसंयोगनिरूपणम्

994

तन्नाम औदयिकौपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ? औदयिकौपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यम्, उपशान्ताः कषायाः क्षायिकं सम्यक्त्वं, क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि। एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ?। कतरत् तन्नाम औदयिकोपशमिक क्षायिक-

समिध-पारिणामियनिष्फण्णे ?) औपशमिक क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न ५वां भंग है । (कथरे से नामे उद्दह्यउवसमिधखइयखओवसमिधनिष्फण्णे) हे भदन्त ! औदयिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक इन चार भंगों के संयोग से जो सान्निपातिक भाव रूप भंग निष्पन्न होता है वह कैसा है ?

उत्तर—(उदइयउवसमियखइयखओवसमियनिष्फण्णे) औदयिक औपशमिक-क्षायिक और क्षायोपशमिक इन चार भावों के संयोग से जो सान्निपातिक भाव निष्पन्न होता है वह ऐसा है—(उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं) यहां मनुष्य गति यह औदयिक भावरूप है, उपशांत कषाय ये औपशमिक भावरूप है, क्षायिक सम्पत्तय यह क्षायिक भावरूप है, इन्द्रियां क्षायोपशमिक भाव रूप हैं । (एस गं से णामे उदइयउवसमिय, खइयखओवसमिय-निष्फण्णे) इस प्रकार यह औदयिकौपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक नाम का इन भावों से निष्पन्न सान्निपातिक भाव का प्रथम भेग है ।

નિષ્કર્ણ) ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયેપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ.

प्रश्न—(कचरे से जामे उद्देश्यवर्धनमयस्वच्छताभोवसमियनिष्कर्ण?) हे भगवन् ! औद्योगिक, औपशमिक, क्षायिक अने क्षायोपशमिक, आचार लायोना संयोग्धी अनता आनिपातिक भाव इप पडेता अंगनुं स्वइप डेवुं छे ?

ઉત્તર-(ઉદ્દય ઉવસમિયસ્વદ્યસ્વઓવસમિયનિષ્કળે) ઔદયિક, ઔપ-
શમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી જે સાન્નિ-
પાતિક ભાવ રૂપ ભંગ અને છે તે આ પ્રકારનો છે-(ઉદ્દયપત્તિ મણુરસે, ઉવસંતા
કસાયા, સ્વદ્ય સમ્મતં, સ્વઓવસમિયાઈં હંદિયાઈં) આ સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્ય
ગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે, ઉપશાન્ત કપાય ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક
સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવરૂપ છે.
(પસ જં સે જામે ઉદ્દય ઉવસમિયસ્વદ્યસ્વઓવસમિયનિષ્કળે) આ પ્રકારનો
તે ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ચાર ભાવોના
સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

૨૭૬

મનુયોગદ્વારસ્ત્ર

પારિણામિકનિષ્પન્નમ્? ઔદયિકૌપશમિકક્ષાયિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્-ઔદયિક-
મિતિ માનુષ્યં, ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ, ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં, પારિણામિકો જીવઃ।
एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपशमिकक्षायिकपारिणामिकनિष्पन्नम्२, कतरत्
तन्नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्?, औदयिकौपश-

(કચરે સે નામે ઉદય્યુવસમિયસ્વયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે?) હે ભદન્ત !
ઔદયિક ઔપશમિક, ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક इन चार भावों के
संयोग से निष्पन्न जो सान्निपातिक भाव रूप भंग है वह कैसा है ?

उत्तर—(उदय्युवसमि यस्वयपारिणामियनिष्कण्णे) औदयिक
औपशमिक, क्षायिक, एवं पारिणामिक इन चार भावों के-संयोग से
निष्पन्न हुआ भंग ऐसा है—(उदय्येति मणुस्से उवसंता कसाया, स्वयं
सम्मत्तं पारिणामिए जीवे) यहां मनुष्यगति यह औदयिक है, उपशान्त
हुई कषाये औपशमिक भावरूप है, क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिकरूप है।
तथा जीवस्व यह पारिणामिक रूप है। (एसणं से णामे उदय्युवस-
मिय स्वयपारिणामियनिष्कण्णे) इस प्रकार औदयिक, औपशमिक,
क्षायिक और पारिणामिक इन चार भंगों से निष्पन्न हुआ इस नाम
का यह-द्वितीय भंग है। (कचरे से णामे उदय्युवसमियस्वओवस-
मियपारिणामियनिष्कण्णे?) हे भदन्त ! औदयिक, औपशमिक, क्षायो-

પ્રશ્ન—(કચરે સે નામે ઉદય્યુવસમિયસ્વયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) હે
ભગવન્ ! ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના
સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો જે સાન્નિપાતિક ભાવરૂપ બીજો ભંગ છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઉદય્યુવસમિયસ્વયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક, ઔપશ-
મિક ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા
સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(ઉદય્યેતિ મણુસ્સે, ઉવસંતા કસાયા,
સ્વયં સમ્મત્તં, પારિણામિય જીવે) આ સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્યગતિ ઔદ-
યિક ભાવ રૂપ છે, ઉપશાન્ત કષાયો ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક
સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને જીવસ્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે.
(एसणं से णामे उदय्युवसमियस्वयपारिणामियनिष्कण्णे) આ પ્રકારનું ઔદયિક
ઔપશમિક ક્ષાયિક અને પારિણામિક આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનેલા
સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ બીજા ભંગનું સ્વરૂપ છે.

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १६० चतुष्कसंयोगनिरूपणम्

७७७

मिक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्-औदयिकमितिमानुष्यम्, उपशान्ताः कषायाः, क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि, पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औदयिकोपशमिक क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्३। कतरत् तन्नाम औदयिक सायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्? औदयिकसायिकक्षायोपशमिक-पशमिक, और पारिणामिक इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ भंग कैसा है ?

उत्तर-(उदइयउवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न तीसरा भंग ऐसा है-(उदएत्ति मणुस्से, उवसंता कसाया, खओवसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे) मनुष्य गति यह औदयिक भावरूप है, उपशान्त हुई कषाये औपशमिक भाव हैं, इन्द्रियां क्षायोपशमिक भाव रूप है और जीवत्व यह पारिणामिक भाव रूप है। (एस णं से णामे उदइयउवसमियखओवसमिय पारि-णामियनिष्फण्णे) इस प्रकार यह औदयिक, औपशमिक और पारिणा-मिक इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नामका तृतीय भंग है। (कयरे से णामे उदइय खइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ?) हे भदन्त ! औदयिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न भंग कैसा है ?

प्रश्न-(कयरे से णामे उदइयउवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) हे भगवन् ! औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक अने पारिष्णामिक, आ चार भावोना संयोगथी अनता सान्निपातिक भाव इप त्रीण लंगुं स्वइप डेवुं छे ?

उत्तर-(उदइयउवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक, औप-शमिक क्षायोपशमिक अने पारिष्णामिक, आ चार भावोना संयोगथी अनतो त्रीणे सान्निपातिक भाव आ प्रकारने छे-(उदइएत्ति मणुस्से, उवसंता कसाया, खओवसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे) त्रीण प्रकारना सान्निपा-तिक भावमां मनुष्यगति औदयिक भाव इप छे, उपशान्त कषाये औपशमिक भाव इप छे, इन्द्रिये क्षायोपशमिक भाव इप छे अने जीवत्व पारिष्णामिक भाव इप छे। (एसणं से णामे उदइयउवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) आ प्रकारने आ “ औदयिकोपशमिक क्षायोपशमिक पारिष्णामिक ” नामने त्रीणे लंग छे.

प्रश्न-(कयरे से णामे उदइयखइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ?) हे भगवन् ! औदयिक, क्षायिक क्षायोपशमिक अने पारिष्णामिक, आ चार भावोना संयोगथी अनता चोथा प्रकारना सान्निपातिक भावनुं स्वइप डेवुं छे.

પારિણામિકનિષ્પન્નમ્-ઔદયિકમિતિ માનુષ્યં, ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં, ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણામિકો જીવઃ । એતત્ સ્વલુ તન્નામ ઔદયિકક્ષાયિક-ક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્૪ । કતરત્ તન્નામ ઔપશમિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્ ?, ઔપશમિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્-ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ, ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં, ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણા-

(ઉદ્દય સ્વદયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક-ઔર પારિણામિક ફન ચાર ભાવો કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન-હુઆ ભંગ એસા હૈ-(ઉદ્દયેત્તિ મણુસે સ્વદયં સમ્મત્તં, સ્વઔવસમિયાઈં ઇંદિયાઈં, પારિણામિજીવે) મનુષ્યગતિ યહ ઔદયિક ભાવરૂપ હૈ, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ યહ ક્ષાયિક ભાવરૂપ હૈ, ઇંદ્રિયાં યે ક્ષાયોપશમિક ભાવરૂપ હૈ ઔર જીવત્વ યહ પારિણામિક ભાવરૂપ હૈ । (એસ જં સે નામે ઉદ્દય સ્વદયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ફસ પ્રકાર યહ ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક ફનચાર ભાવો સે નિષ્પન્ન હુઆ ફસ નામકા ચતુર્થ ભંગ હૈ । (કયરે સે નામે ઉવસમિય સ્વદયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે ?) હે મદન્ત ! ઔપશમિક ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક ફન ચાર ભાવો કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ પાંચવાં ભંગ કેસા હૈ ?

ઉત્તર—(ઉવસમિયસ્વદયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે)

ઉત્તર—(ઉદ્દયસ્વદયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે, એટલે કે ચોથા ભંગ આ પ્રકારનો છે—(ઉદ્દયેત્તિ મણુસે, સ્વદયં સમ્મત્તં, સ્વઔવસમિયાઈં ઇંદિયાઈં, પારિણામિજીવે) આ ચોથા પ્રકારના સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે, ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (એસ જં સે નામે ઉદ્દયસ્વદય-સ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) આ પ્રકારનું ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા “ ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક ” નામના ચોથા ભંગનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે નામે ઉવસમિયસ્વદયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે?) હે ભગવન્ ! ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા પાંચમાં પ્રકારનો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

મિકો જીવઃ । एतत् खलु तन्नाम औपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिक-
निष्पन्नम् ५ ॥ सू० १६०॥

ટીકા—‘તત્થ ણં જે તે પંચ’ ઇત્યાદિ—

પશ્ચસુ ભાવેષુ પશ્ચમં ભાવં પરિહાય અવિશિષ્ટભાવનિષ્પન્નત્વેન પ્રથમો મજ્ઞો
બોધ્યઃ । चतुर्थं परिहाय शेषनिष्पन्नत्वेन द्वितीयो मज्ज्ञः । तृतीयं परिहाय शेष-

औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन चार भावों
के संयोग से निष्पन्न हुआ भंग ऐसा है—(उवसंता कसोया, खइयं सम्म-
सं, खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) उपशान्त हुई कषाये
औपशमिकभाव है, क्षायिक सम्पत्त्व क्षायिक भाव रूप है, इन्द्रियां
क्षायोपशमिक भावरूप है, और जीवत्व यह पारिणामिक भाव रूप है
(एस णं से नामे उवसमिय खइयखओवसमियपारिणामियनिष्करणे)
इस प्रकार यह औपशमिकक्षायिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन
चार भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नामका पांचवां भंग है ।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकारने चार २ भावों के संयोग
से ५ भंग निष्पन्न हुए हैं वे कहे हैं । इनमें पांचवां भाव
जो पारिणामिक भाव है उसे छोड़कर बाकी के चार भावों के
संयोग से प्रथम भंग निष्पन्न हुआ है । चौथा भाव जो क्षायोपशमिक
भाव है उसे छोड़कर शेष चार भावों के संयोग से द्वितीय भंग निष्प-

ઉત્તર—(उवसमियखइयखओवसमियपारिणामियनिष्करणे) औपशમિક,
ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતો
પાંચમો ભંગ આ પ્રકારનો છે—(उवसंता कसोया, खइयं सम्मसं, खओवसमियाइं
इंदियाइं) पारिणामिए जीवे) આ સામ્પ્રિપાતિક ભાવમાં ઉપશાન્ત કષાયો
औपशमिक ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્પત્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે, ઇન્દ્રિયો
ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (एस णं से
नामे उवसमियखइयखओवसमिय, पारिणामियनिष्करणे) આ પ્રકારનો
औपशमिक, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના
સંયોગથી બનતો “ औપશમિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક ” નામનો
પાંચમો ભંગ સમજવો.

भावार्थ—चार चार भावोना संयोगથી बनता पांचवां भंगोनुं सूत्रकारे
आ सूत्र द्वारा निरूपण कियुं છે. પહેલો ભંગ આ પ્રકારે બન્યો છે—પાંચ
ભાવોના છેલ્લા પારિણામિક ભાવ ત્રિવાચના સંયોગથી પહેલો ભંગ બન્યો છે.

નિષ્પન્નત્વેન તૃતીયો મજ્જઃ । દ્વિતીયં પરિહાય શેષનિષ્પન્નત્વેન ચતુર્થો મજ્જઃ । પ્રથમં પરિહાય અવશિષ્ટભાવચતુષ્ટયનિષ્પન્નત્વેન પञ्चમશ્ચ મજ્જો बोध्यः । एतान् पञ्च मज्जान् विवरीतुमाह-‘कयरे से णामे’ इत्यादि । एषां व्याख्या पूर्ववद् बोध्या । एषु पञ्चसु मज्जेषु तृतीयो मज्જો नारकादिगतिचतुष्टये भवति । तथाहि- औदयिकी नारकाद्यन्यतमा गतिः, नारकतिर्यग्देवगतिषु प्रथमसम्यक्त्वलाभकाले एव उपशमभावो भवति, मनुष्यगतौ तु तत्रोपशमश्रेण्यां चौपशमिकं सम्यक्त्वम्, क्षायोपशमिकानीन्द्रियाणी, पारिणामिकं जीवत्वम्, इत्येवमयं मज्जकः सर्वोऽप्यु

ન્ન હુઆ છે । તૃતીય ભાવ જો ક્ષાયિક ભાવ છે તેને છોડીને બાકી કે ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે તૃતીય ભંગ નિષ્પન્ન હુઆ છે । દ્વિતીય જો ઔપશમિક ભાવ છે તેને છોડીને શેષ ભાવોં કે સંયોગ સે ચતુર્થ ભંગ નિષ્પન્ન હુઆ છે । પ્રથમ ભાવ જો ઔદયિક ભાવ છે તેને છોડીને શેષ-ભાવોં કે સંયોગ સે પંચમ ભંગ નિષ્પન્ન હુઆ છે । इन पांच भंगों में से जो औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक इन चार भावोंके संयोग से निष्पन्न तृतीयभंग है वह नारक आदि चारगतियों में होता है । वहाँ विवक्षितगति औदयिकी है । इनमें प्रथम सम्यत्त्व के लाभकाल में ही उपशमभाव होता है । मनुष्यगति में उपशमश्रेणी में औपशमिक सम्यत्त्व होता है । इंद्रियां यहां क्षायोपशमिक भावरूप हैं । जीवत्व पारिणामिक भाव है इस प्रकार यह तृतीयभंग सर्व गतियो

બીજો ભંગ-ક્ષાયોપશમિક ભાવ નામના ચોથા ભાવને છોડીને બાકીના ચાર ભાવોના સંયોગથી બીજો ભંગ બન્યો છે.

ત્રીજો ભંગ-ક્ષાયિક ભાવ નામના ત્રીજા ભાવ સિવાયના ચારે ભાવોના સંયોગથી ત્રીજો ભંગ બન્યો છે.

ચોથો ભંગ-ઔપશમિક નામના બીજા ભાવને છોડી દઈને બાકીના ચાર ભાવોના સંયોગથી ચોથો ભંગ બન્યો છે.

પાંચમો ભંગ-ઔદયિક નામના પહેલા ભાવને છોડી દઈને બાકીના ચાર ભાવોના સંયોગથી પાંચમો ભંગ બન્યો છે.

ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી જે ત્રીજો ભંગ બને છે-જે ત્રીજા પ્રકારનો સાન્નિપાતિક ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે તેનો નારક આદિ ચારે ગતિઓમાં સદ્ભાવ હોય છે ત્યાં નારક આદિ ગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે. આ ગતિઓમાં પ્રથમ સમ્યક્ત્વના પ્રાપ્તિ કાળે જ ઉપશમ ભાવનો સદ્ભાવ હોય છે, મનુષ્ય ગતિમાં તો ઉપશમ શ્રેણીમાં ઔપશમિક સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ હોય છે ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપ-

ઐનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૦ ચતુષ્કસંયોગનિરૂપણમ્

૬૮૧

ગતિષ્વપલભ્યતે । યદિહ સૂત્રે-‘ઉદ્દહણ્તિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા’ इत्युक्तम्, તન્મનુષ્યગત્યપેક્ષયોક્તમ્ । ઉપશમશ્રેણ્યાં મનુષ્યત્વોદયઃ કષાયોપશમશ્ચ ભવતઃ । મૂલોક્તં તૂપલક્ષણં બોધ્યમ્ । एवम् औदयिकक्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिक-निष्पन्नश्चतुर्थभङ्गोऽपि नारकादिगतिचतुष्टयविषयो बोध्यः । તૃતીયમજ્ઞવદેવાત્રાપિ માવના કર્તવ્યા । વિશેષસ્ત્રવ્યમેવ-તૃતીયમજ્ઞે યદુપશમસમ્યક્ત્વમુક્તં તત્સ્થાનેત્વિહ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં વાચ્યમ્ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં તુ સર્વાસ્વપિ ગતિષુ જાયતે । નારકતિર્યગ્દેવગતિષુ પૂર્વપ્રતિપન્નસ્ય પ્રતિપદ્યમાનસ્ય ચાપિ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં

મેં પાયા જાતા હૈ । જો હસ સૂત્રમેં “ઉદ્દહણ્તિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા” એસાપાઠ કહા હૈ વહ મનુષ્યગતિ કી અપેક્ષા સે કહા હૈ । ઉપશમશ્રેણી મેં મનુષ્યત્વ કા ઉદય ઓર કષાયોં કા ઉપશમ હોતા હૈ । મૂલોક્તપાઠ ઉપલક્ષણ હૈ એસાજાનના ચાહિયે । હસીપ્રકાર ઔદયિક ક્ષાયિક, ક્ષાયો-પશમિક ઓર પારિણામિક હનચાર ભાવોં કે સંયોગ સે ચૌથા ભંગ બના હૈ, વહ ભી નારક આદિ ચારગતિયોં મેં હોતા હૈ એસા જાનના ચાહિયે । તૃતીય ભંગ કી તરહ હી યહાં પર ભી કથન સમજના ચાહિયે । પરન્તુ હસમેં વિશેષતા હતની હી હૈ કિ તૃતીય ભંગ મેં ઉપશમ સમ્યક્ત્વ કહા હૈ સો ઉસકે સ્થાન મેં યહાં ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ સમજના ચાહિયે । ક્ષાયિકસમ્ય-ત્વ ચારોં ગતિયોં મેં હોતા હૈ । નારક, તિર્યક્ ઓર દેવ હન ગતિયોં મેં-પૂર્વ પ્રતિપન્ન જીવ કો હી ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । ઓર મનુષ્યગતિ

શમિક લાવ રૂપ અને જીવત્વ પારિણામિક લાવરૂપ હોય છે. આ પ્રકારે ત્રીજો ભંગ બધી ગતિઓમાં શક્ય અને છે. આ સૂત્રમાં “ઉદ્દહણ્તિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા” આ પ્રકારનો જે પાઠ આપવામાં આવ્યો છે તે મનુષ્ય ગતિની અપેક્ષાએ આપવામાં આવ્યો છે. ઉપશમ શ્રેણીમાં મનુષ્યત્વનો ઉદય અને કષાયોનો ઉપશમ હોય છે. મૂલોક્ત પાઠ ઉપલક્ષણ છે એવું સમજવું જોઈએ.

એજ પ્રમાણે ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર લાવોના સંયોગથી જે ચોથો ભંગ બને છે, તેનો પણ નારક આદિ ચારે ગતિઓમાં સંભવ હોય છે, એમ સમજવું ત્રીજા ભંગના જેવું જ કથન અહીં પણ સમજવું જોઈએ, પરન્તુ ત્રીજા ભંગમાં જે ઉપશમ સમ્યક્ત્વ કહ્યું છે તેને બદલે અહીં ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ સમજવું જોઈએ ચારે ગતિઓમાં ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ સંભવી શકે છે. નારક, તિર્યક અને દેવ, આ ત્રણ ગતિઓમાં પૂર્વપ્રતિપન્ન જીવમાંજ ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ હોય છે. પરન્તુ મનુષ્યગતિમાં તો પૂર્વપ્રતિપન્નમાં અને પ્રતિપદ્યમાનમાં ક્ષાયિક

ભવતિ । इत्थं चात्र तृतीयचतुर्थ भङ्गौ एव वस्तुगतत्वेन संभवतः । इतरे भङ्गास्तु प्रदर्शनमात्रम् । तद्रूपेण तेषां वस्तुन्यसंभवादिति ॥सू० १६०॥

અથ પञ્ચકસંયોગં નિરૂપયતિ—

પૂલ્મ્—તત્થં ણં જે સે એકે પંચગસંજોએ સે ણં હમે—અત્થિ નામે ઉદહય ઉવસમિય યહ્યયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે? કયરે સે નામે ઉદહય ઉવસમિય યહ્યયસ્વઓવસમિયપારિણામિય-નિષ્કળ્ણે?, ઉદહય ઉવસમિય યહ્યયસ્વઓવસમિયપારિણામિય-નિષ્કળ્ણે—ઉદહયેત્તિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા યહ્યયં સમ્મત્તં યહ્યઓવસમિયાહં હંદિયાહં પારિણામિયે જીવે । એસ ણં સે ણામે જાવ પારિણામિયનિષ્કળ્ણે । સે તં સન્નિવાહ્યે । સે તં છળ્ણામે ॥સૂ० ૧૬૧॥

છાયા—તથા સ્વલુ યઃ સ એકઃ પચ્ચકસંયોગઃ સ સ્વલુ અયમ્—અસ્તિ નામ ઔદયિકોપશમિક્ષાયિક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્? । કતરત્ તન્નામ મેં પૂર્વ પ્રતિપન્ન કો ઓર પ્રતિપચ્ચમાન કો ભી હોતા હૈ । હસપ્રકાર તૃતીય ઓર ચતુર્થ યે દો ભંગ હી વાસ્તવિક રૂપ મેં વસ્તુગત સંભવિત હોતે હૈં । હતર શેષ—ત્રીન ભંગ નહીં પાવે જાતે હૈં ॥સૂ० ૧૬૦॥

અથ સૂત્રકાર પાંચ ભાગોં કે સંયોગ સે જો-ભંગ નિષ્પન્ન હોતા હૈ ઉસકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—“તત્થ ણં જે સે એકે” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે સે એકે પંચક સંયોગે સે ણં હમે) પાંચોં ભાગોં કે સંયોગ સે જો એક ભંગ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ હસ પ્રકાર સે હૈ—

સમ્યક્ત્વ હોય છે. આ પ્રકારે અહીં ત્રીજો અને ચોથો, આ બે ભંગ જ વાસ્તવિક રૂપે વસ્તુગત સંભવિત હોય છે બાકીના ત્રણ ભંગો વાસ્તવિક રૂપે તો સંભવિત જ નથી છતાં પ્રરૂપણા કરવાના હેતુથી જ અહીં તે ભંગોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. ॥સૂ० ૧૬૦॥

પાંચ ભાવોના સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે, તેની સૂત્રકાર હવે પ્રરૂપણા કરે છે—“તત્થ ણં જે સે એકે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે સે એકે પંચગસંજોગે સે ણં હમે) પાંચે ભાવોના સંયોગથી જે એક ભંગ બને છે તે આ પ્રમાણે છે—(અત્થિનામે ઉદહયઉવસ-

औदयिकौपशमिकक्षाधिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्?, औदयिकौपशमिक-
क्षाधिक क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम् औदयिकमितमानुष्यम्, उपशान्ताः
कषायाः, क्षायिकं सम्यक्त्वं, क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि, पारिणामिको जीवः ।

(अस्थि णामे उदइय उवसमियखइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे?)
औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन
पांचों भावों के संयोग से निष्पन्न-हुआ औदयिकौपशमिक क्षायिक
क्षायोपशमिक पारिणामिक इस नामका सान्निपातिक भाव है । (कयरे
से नामे उदइय उवसमियखइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे?) हे
भदन्त! औदयिकौपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक नाम का
जो पांचों भावों के संयोग से निष्पन्न सान्निपातिक-भाव वह कैसा है?

उत्तर-(उदइय उवसमियखइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे)
औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणा-
मिक इन पांचों भावों के संयोग से जो सान्निपातिक भाव निष्पन्न
होता है वह ऐसा है-(उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मसं
खओव समियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) यहां इस सान्निपातिक भाव
में मनुष्य गति यह औदयिकी है, उपशमित कषाये औपशमिक भाव है
क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिक भाव है इन्द्रियां क्षायोपशमिक भाव है जीवत्व

મિય સ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્ફણ્ણે) ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક,
ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ પાંચે ભાવોના સંયોગથી અનુતો
“ ઔદયિકૌપશમિક-ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક ” નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ, આ
એક જ ભંગ અને છે.

પ્રશ્ન-(કયરે સે નામે ઉદઈય ઉવસમિયસ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્ફણ્ણે ?)
હે ભગવન્ ! ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક,
આ પાંચે ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

ઉત્તર-(ઉદઈય ઉવસમિયસ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્ફણ્ણે) ઔદયિક,
ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ પાંચે ભાવોના
સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારનો છે-(ઉદઈએત્તિ
મણસ્સે, ઉવસંતા કસાયા, સ્વહયં સમ્મસં, સ્વઓવસમિયાઈં ઈંદિયાઈં, પારિણામિય
જીવે) આ સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે, ઉપશાન્ત
કષાયો ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે,
ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે,

एष खलु तन्नाम यावत् पारिणामिकनिष्पन्नम् । स एव सान्निपातिकः । तदेतत् षण्णाम ॥सू० १६१॥

टीका—‘तत्त णं’ इत्यादि—

व्याख्या सुगमा । अयं पञ्चक संयोगस्तस्यैव संभवति यः क्षायिकसम्प-
ग्दृष्टिः सन् उपशमश्रेणिं प्रतिपद्यते । अन्यस्य तु न संभवति । अन्यत्र हि समुद्दि-
तभावपञ्चकस्यास्यासंभवादिति । अत्रेदं बोध्यम्—एकः क्षायिकपारिणामिक-
भावद्वयनिष्पन्नरूपो नवमो भङ्गो द्विकसंयोगे, औदयिकक्षायिकपारिणामिक
भावत्रयनिष्पन्नरूपः पञ्चमः, औदयिकक्षायोपशमिकपारिणामिक भावत्रयनिष्पन्न-

यह पारिणामिक भाव है । (एसणं से णामे जाव पारिणामियनिष्कण्णे, से तं सन्निवाइए से तं छण्णामे) इस प्रकार यह पांच भावों के संयोग से निष्पन्न हुए इस नाम के सान्निपातिक भाव का स्वरूप है । यहां तक औदयिक भाव से लेकर पारिणामिक भाव तक के पांच भावों के संयोग से जीतने सान्निपातिक भाव निष्पन्न होते हैं उनका प्रतिपादन किया— इस प्रकार यह छह प्रकार के नामका स्वरूप कथन समाप्त हुआ ।—

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा पांचो भावों के संयोग से निष्पन्न हुए सान्निपातिक भाव का कथन किया है । यह पंचक संयोग रूप सान्निपातिक भाव उसी को संभवित होता है, जो क्षायिक सम्पग्दृष्टि होकर उपशम श्रेणी पर चढता है । अन्यजीव को नहीं क्योंकि; उस को इस समुचित भाव पंचकरूप सान्निपातिक भावका अभाव होता है । यहां पर इस प्रकार से जानना चाहिये—द्विक संयोग में क्षायिक और

(एस णं से णामे जाव परिणामियनिष्कण्णे, से तं सन्निवाइए, से तं छण्णामे) આ પ્રમાણે આ પાંચે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ આ નામનું સાન્નિપા-
તિક સ્વરૂપ છે અહીં સુધી ઔદયિક લાવથી માંડીને પારિણામિક ભાવ સુધીના પાંચ લાવેના સંયોગથી બેટલા સાન્નિપાતિક ભાવો નિષ્પન્ન થાય છે. તેમનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. આ પ્રમાણે આ છ પ્રકારના નામનું સ્વરૂપ-
કથન પૂરું થયું છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર વડે પાંચે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ સાન્નિપાતિક ભાવનું કથન કર્યું છે. આ પંચક સંયોગ રૂપ સાન્નિપાતિક ભાવ તેમને જ સંભવે છે કે જે ક્ષાયિક સમ્પગ્દૃષ્ટિ થઈને ઉપશમ શ્રેણી પર ચઢે છે. બીજાઓને નહિ કારણ કે તેમને આ સમુદ્ભાવ પંચક રૂપ સાન્નિ-
પાતિક લાવનો અભાવ હોય છે અહીં એમ સમજવું જોઈએ કે દ્વિક-
સંયોગમાં ક્ષાયિક અને પારિણામિક આ બે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન

વષ્ટ્યેતિ દ્વૌ મજ્ઞૌ ત્રિકસંયોગે, ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિકપારિણામિક ભાવ
 ચતુષ્ટયનિષ્પન્નરૂપરત્તીયઃ, ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકભાવચતુષ્ટય
 નિષ્પન્નરૂપશ્ચતુર્થશ્ચેતિ દ્વૌ મજ્ઞૌ ચતુષ્કસંયોગે, ભાવપશ્ચકરૂપ ઈકો મજ્ઞઃ પશ્ચક-
 સંયોગે। ઇત્યેવમેતે વદ્મજ્ઞાઃ સમ્ભાવ્યત્વેન વોધ્યાઃ। ઇતોઽપરેવિંશતિર્મજ્ઞાસ્તુ
 સંભાવ્યત્વરહિતા અપિ યોગપદર્શનાર્થમેવ પ્રોક્તાઃ। વળ્ણામસૂત્રે યે દ્વિકસંયોગ-

પારિણામિક, इन दो भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ जो इस नाम
 का नौवां भंग है वह, तथा त्रिक संयोग में औदयिक, क्षायिक और
 पारिणामिक, इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नाम का
 पांचवां-भंग और औदयिक, क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक, इन तीन
 भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नामका छठा भंग, तथा चतुष्क
 संयोग में औदयिक, औपशमिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन
 चार भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नाम का तृतीय भंग, और
 औदयिक क्षायिक, क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक इन चार भावों के
 संयोग से निष्पन्न हुआ इस नाम का चौथा भंग तथा पांचो भावों के
 संयोग से निष्पन्न हुआ एक इस नाम का भंग ये छह भंग जीवों में
 वास्तविकरूप से पाये जाते हैं और इनसे अतिरिक्त जो २० भंग हैं;
 वे वास्तविक रूप से-नहीं पाये जाते हैं; ऐसा, जानना चाहिये। २०
 भंग जब कि अव्ययत्व रहित हैं तो फिर ये क्यों कहे गये हैं ? तो इस

થયેલ જે આ નવમે ભંગ છે તે તેમજ ત્રિકસંયોગમાં ઔદયિક ક્ષાયિક,
 અને પારિણામિક આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ આ નામનો
 પાંચમે ભંગ અને ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ત્રણ
 ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ છઠો ભંગ તેમજ ચતુષ્ક સંયોગમાં ઔદ-
 યિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર ભાવોના સંયો-
 ગથી નિષ્પન્ન થયેલ આ નામનો ત્રીજો ભંગ અને ઔદયિક, ક્ષાયિક,
 ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ
 આ નામે ચોથો ભંગ તથા પાંચે ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ એક
 આ નામે ભંગ એ છ ભંગો છવોમાં વાસ્તવિક રૂપે મળે છે અને એમના
 સિવાય જે ૨૦ ભંગો છે. તે વાસ્તવિક રૂપે પ્રાપ્ત થતા નથી આમ સમજવું
 જોઈએ ૨૦ ભંગો જ્યારે અવ્યત્વ રહિત છે તો પછી એમનું કયન શા
 માટે કરવામાં આવ્યું છે ? આ શંકાનું નિરાકરણ આ પ્રમાણે છે કે આ ૨૭

ત્રિકસંયોગચતુષ્કસંયોગપञ्चકસંયોગલક્ષણા મજ્ઞાસ્તે કિલ્લ સિદ્ધકેવલિગતિચતુષ્ટયોપશાન્તમોહમનુષ્યવિષયા વિજ્ઞેયાઃ । ઇયમત્રમાવના-ત્રિકસંયોગમજ્ઞેષ્વેકઃ ક્ષાયિકપારિણામિકભાવદ્વયનિષ્પન્નરૂપો નવમો મજ્ઞઃ સિદ્ધેષુ ભવતિ । ત્રિકસંયોગમજ્ઞેષુ ઔદયિકક્ષાયિકપારિણામિકભાવત્રયનિષ્પન્નરૂપઃ પञ્ચમો મજ્ઞઃ કેવલિષુ, ઔદયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકભાવત્રયનિષ્પન્નરૂપઃ ષષ્ઠો મજ્ઞો ગતિચતુષ્ટયે ભવતિ । ચતુષ્કસંયોગમજ્ઞેષુ-ઔદયિકોપશમિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકભાવચતુ-

શંકાં કા સમાધાન યહ હૈ કિ-યે ૨૦વીસભંગ યોગ પ્રદર્શન કે નિમત્ત હી કહે ગયે હૈં અર્થાત્ ઇન પાંચ ભાવોં કે યોગ સે કિસ ૨ પ્રકાર સે કિતને ભંગ થન સકતે હૈં ? યહ પ્રકટ કરને કે અભિપ્રાય સે કહે ગયે હૈં । ષળ્ળામ સૂત્ર મેં જો ત્રિકસંયોગ, ત્રિકસંયોગ, ચતુષ્કસંયોગ ઔર પંચકસંયોગ રૂપ ભંગ હૈં, વે સિદ્ધોં મેં, કેવલિયોં મેં, ચારોં ગતિયોં મેં, ઔર ઉપશાંત મોહમનુષ્યોં મેં પાયેજાતે હૈં; એસા જાનના ચાહિયે-અર્થાત્ ત્રિકસંયોગવાલે ભંગોં મેં જો ક્ષાયિક પારિણામિક ભાવદ્વય સે નિષ્પન્ન નૌવાં ભંગ હૈ, વહ સિદ્ધોં મેં પાયા જાતા હૈ । ત્રિકસંયોગવાલે ભંગોં મેં જો ઔદયિક, ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક, ઇન ત્રીન ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ પંચમ ભંગ હૈ, વહ કેવલિયોં મેં પાયા જાતા હૈ । ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક, ઔર પારિણામિક ઇન ત્રીન ભાવોં કે સંયોગ સે જન્ય હુઠા ભંગ ચાર ગતિયોં-મેં પાયા જાતા હૈ । ચતુષ્ક સંયોગવાલે ભંગોં મેં ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક-ઇન

ભંગો યોગ પ્રદર્શનના નિમિત્તથી કહેવામાં આવ્યા છે. એટલે કે આ પાંચ ભાવોના યોગથી કેવી રીતે કેટલા ભંગો થઈ શકે છે? આ સ્પષ્ટ કરવાના ઉદ્દેશથી જ કહેવામાં આવ્યા છે. ‘પણ્ણામ’ સૂત્રમાં જે દ્વિકસંયોગ, ત્રિકસંયોગ, ચતુષ્ક સંયોગ અને પંચક સંયોગ રૂપ ભંગો છે તે સિદ્ધોમાં કેવલિઓમાં, ચારે ગતિઓમાં અને ઉપશાંત મોહવાળા માણસોમાં મળે છે. આમ સમજવું જોઈએ એટલે કે દ્વિકસંયોગવાળા ભંગોમાં જે ક્ષાયિક પારિણામિક ભાવદ્વયથી નિષ્પન્ન નવમો ભંગ છે તે સિદ્ધોમાં પ્રાપ્ત થાય છે. ત્રિકસંયોગવાળા ભંગોમાં જે ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ પંચમ ભંગ છે, તે કેવલિઓમાં પ્રાપ્ત થાય છે. ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન છઠા ભંગ ચારે ગતિઓમાં પ્રાપ્ત થાય છે ચતુષ્ક સંયોગવાળા ભંગોમાં ઔદયિક ઔપશમિક-ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ ત્રીજો ભંગ તેમજ ઔદયિક, ક્ષાયિક,

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૧ પञ्चमसंयोगनिरूपणम्

૭૮૭

દ્રુપનિષ્પન્નરૂપસ્તૃતીયઃ, ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકભાવચતુષ્ટય-
નિષ્પન્નરૂપશ્ચતુર્થશ્ચેત્યેતાવપિ દ્વૌ મજ્ઞૌ ગતિચતુષ્ટયેऽપિ લભ્યેતે । ભાવપશ્ચકનિષ્પન્ન-
રૂપ ઇકો મજ્ઞ ઉપશાન્તમોહમનુષ્યેષ્વેવ લભ્યેતે । વિસ્તરતસ્તુ સ્વસ્વમજ્ઞસ્વરૂપે
વિલોકનીયમ્ । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-સ એવ સાન્નિપાતિક ઇતિ । इत्यमुक्तः सान्नि-
पातिको भावः । उक्ते तस्मिन्वाक्ताः षडपि भावाः । ते च तद्वाचकैर्नामभिर्विना
પ્રરૂપયિતું ન શક્યન્તે ઇતિ તદ્વાચકાન્યૌદયિકાદીનિ નામાન્યપ્યુક્તાનિ । एतैश्च पदभि-
रपि धर्मास्तिकायादेः समस्तस्यापि वस्तुनो ग्रहणात् इदं पदं प्रकारकं सत् समस्तस्या-
पि वस्तुनो नाम षण्णामेत्युच्यते । एतदेवोपसंहरन्नाह-तदेतत् षण्णामेति॥सू. १६१॥

ચારભાવો કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ તૃતીયભંગ તથા ઔદયિકક્ષાયિક,
ક્ષાયોપશમિક એવં-પારિણામિક इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न
हुआ चौथा भंग चारों गतियों में पाये जाते हैं, तथा पांचों भावों के
संयोग से-निष्पन्न हुआ चौथाभंग ये दोनों भी भंग चारों गतियों में
पाये जाते हैं तथा पांचों भावों के संयोग से-निष्पन्न हुआ एकभंग उप-
शांतमोही मनुष्यों में ही पाया जाता है । વિસ્તાર પૂર્વક इनका कथन
अपने २ भंग-स्वरूप में देखलेना चाहिये । इसप्रकार सान्निपातिकभाव
का कथन है-इस भाव के कथित होने पर अब छहों भाव कथित हो
चुके । इन भावोंका कथन उनके वाचक नामों के बिना हो नहीं सकता
है इसलिये उन भावों के वाचक औदयिक आदि नामों को-भी यहाँ
कहा गया है । इन छह नामों से भी-धर्मास्तिकायादिक समस्त
वस्तुओं का ग्रहण हो जाता है, इसलिये ये समस्त वस्तु के नाम छह
प्रकार के होने से छह नाम इस प्रकार से कहलाये हैं । ॥सू० १६१॥

ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ
ચોથો ભંગ આ બન્ને ભંગો પણ ચારે ગતિઓમાં પ્રાપ્ત થાય છે. તેમજ
પાંચે ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ એક ભંગ ઉપશાંત મોહી માણુસોમાં
જ પ્રાપ્ત થાય છે. આ વિષે સવિસ્તર વિવેચન પોતપોતાના ભંગ-સ્વરૂપમાં
બેઠે લેવું બેઠેએ આ પ્રમાણે સાન્નિપાતિક ભાવનું કથન છે. આ ભાવને
કહ્યા બાદ છએ છ ભાવો કથિત થઈ ગયા. આ ભાવોનું કથન તેમના
વાચકનામો વગર સંભવે જ નહિ એટલા માટે તે ભાવોના વાચક ઔદયિક
વગેરે નામોનું પણ અહીં કથન થયું છે. આ છ નામોથી પણ ધર્માસ્તિ-
કાયાદિક સમસ્ત વસ્તુઓનું ગ્રહણ થઈ ગય છે એટલા માટે આ બધી વસ્તુઓના
છ પ્રકારના નામો હોવાથી છ નામો આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યાં છે. ॥સૂ. ૧૬૧॥

૭૮૮

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

અથ સપ્તનામ પ્રરૂપયતિ—

મૂઢ્ઢ્—સે કિં તં સત્ત નામે ? સત્તનામે—સત્ત સરા પળ્ળત્તા, તં જહા—સજ્જે રિસહે ગંધારે, મજ્જિમે પંચમે સરે । ધેવણ્ણ ચેવ નિસ્સાણ્ણ સરા સત્ત વિયાહિયા ॥૧॥સૂ૦૧૬૨॥

છાયા—અથ કિં તત્ સપ્ત નામ ? સપ્ત નામ—સપ્ત સ્વરાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથથા—પઙ્ગજઃ ક્ષપ્પમઃ ગાન્ધારઃ મધ્યમઃ પચ્ચમઃ સ્વરઃ । ધૈવતસ્યૈવ નિષાદઃ, સ્વરાઃ સપ્ત વ્યાહ્યાતાઃ ॥૧॥સૂ૦૧૬૨॥

ટીકા—‘સે કિં તં સત્તનામે’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્ સપ્તનામ ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—સપ્તનામ=સપ્તવિંધં નામ સપ્તનામ, તત્ત્વ—સપ્ત=સપ્ત સંખ્યકાઃ સ્વરાઃ=ધ્વનિવિશેષાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । તાનેવ સ્પષ્ટયતિ—તથથા—પઙ્ગજ ક્ષપ્પમ ઇત્યાદિના । તત્ત્વ—પઙ્ગજઃ—નાસિકાકંઠોરસ્તાલુજિહ્વા-દન્તેતિ પટ્ટસ્થાનસંજ્ઞાતસ્થાન્ અયં સ્વરઃ પઙ્ગજ ઇત્યુચ્યતે । ઉક્તંચ—

અથ સૂત્રકાર સપ્ત નામ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં સત્તનામે ?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સત્તનામે ?) હે ભદ્રન્ત ! સપ્તનામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(સપ્તનામ) સપ્ત પ્રકાર રૂપ—જો સપ્તનામ હૈ વહ (સત્તસરા-પળ્ળત્તા) સાતસ્વર સ્વરૂપપ્રજ્ઞપ્ત હુઆ હૈ । અર્થાત્ સાતસ્વર હી સપ્તનામ હૈ । (તં જહા) વે સાત સ્વર ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(સજ્જે રિસહે ગંધારે, મજ્જિમે, પંચમે સરે । ધેવણ્ણ—ચેવ નિસ્સાણ્ણ સરા સત્ત વિયાહિયા) પઙ્ગજ ક્ષપ્પમ, ગાન્ધાર, મધ્યમ, પંચમ, ધૈવત, ઓર નિષાદ । નાસિકા, કંઠ, ઊરસ્થાન, તાલુ, જિહ્વા ઓર દન્ત ઇન છહ સ્થાનો સે ઉત્પન્ન હોને કે કારણ પ્રથમ સ્વર ‘પઙ્ગજ’ કહલાતા હૈ । ઉક્તંચ કારકે “નાસાં કળ્ઠ”

હવે સૂત્રકાર સપ્તનામની પ્રરૂપણા કરે છે.

“સે કિં તં સત્તનામે ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સત્તનામે ?) હે ભદ્રન્ત ! સપ્તનામ શું છે ? તે બતાવતાં કહે છે તે (સત્ત સરા પળ્ળત્તા) સાત સ્વર સ્વરૂપ પ્રજ્ઞપ્ત થયેલ છે. એટલે કે સાત સ્વર જ સપ્તનામો છે. (તંજહા) તે સાત સ્વરો આ પ્રમાણે છે—(સજ્જે રિસહે, ગંધારે, મજ્જિમે, પંચમે, સરે । ધેવણ્ણ ચેવ નિસ્સાણ્ણ સરા સત્ત વિયાહિયા) પઙ્ગજ ક્ષપ્પમ, ગાંધાર, મધ્યમ, પંચમ ધૈવત અને નિષાદ. નાસિકા, કંઠ, ઊરસ્થાન, તાલુ, જિહ્વા અને દંત આ છ સ્થાનોથી ઉત્પન્ન થવાના કારણથી પ્રથમ સ્વર

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૨ સત્ત્વસ્વરનામનિરૂપણમ્

૭૮૯

“નાસાં કણ્ઠમુરસ્તાલું જિહ્વાદન્તૌઞ્ચ સંશ્રિતઃ ।

ષડ્ભિઃ સંજાયતે યસ્માન્તસ્માત્ ષડ્જ ઇતિ સ્મૃતઃ ॥ ઇતિ ॥

તથા-ઋષભો-વૃષભઃ, તદ્વદ્ યો વર્તતે સ ઋષભઃ । ઉક્તંચાસ્ય લક્ષણમ્-

“વાયુઃ સમુત્થિતો નાભેઃ, કણ્ઠશીર્ષસમાહતઃ ।

નર્દનૃ વૃષભવદ્ યસ્તત્, તસ્માત્, વૃષભ ઉચ્યતે ॥ ઇતિ ॥

તથા-ગાન્ધારઃ-ગન્ધમ્ ઇર્યતિ-પ્રાપ્નોતીતિ ગન્ધારઃ, સપ્ત ગાન્ધારઃ ગન્ધપ્રાપકઃ સ્વરવિશેષઃ । ઉક્તંચ -

વાયુઃ સમુત્થિતો નાભે-હૃદિકણ્ઠે સમાહતઃ ।

નાનાગન્ધવહઃ પુણ્યો ગાન્ધારસ્તેન હેતુના ॥ ઇતિ ॥

इत्यादि श्लोक द्वारा यही बात कही गई है । ऋषभनाम बैल का है । बैल के स्वर के जैसे जो स्वर होता है, उसका नाम ऋषभ है । इसका लक्षण इस प्रकार कहा हुआ है-नाभि से जो वायु उठता है, वह कण्ठ और शीर्ष में जाकर टकराना है । इससे बैल के स्वर के जैसे आवाज होती है । इसलिये इस स्वर का नाम ऋषभ है । गंध को जो स्वर प्राप्त करता है उसका नाम 'गांधार' स्वर है । इस का लक्षण इस प्रकार कहा गया है-जो वायु नाभि से उत्थित होकर हृदय और कंठ में टकराना है तथा नाना प्रकार के गंधों को वहन करता है इसलिये हृदय और कंठ से टकराने पर जो आवाज उत्पन्न होता है, उसका नाम 'गान्धार' है । शरीर के बीच में जो स्वर होता है, उसका नाम 'मध्यम' स्वर है । इसका लक्षण इस प्रकार से है-नाभिप्रदेश से उत्पन्न हुआ

૫૬ જ કહેવાય છે ઉક્તંચ પછી “ નાસા કણ્ઠ ” વગેરે શ્લોક વડે એજ વાત સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. ઋષભ બળદનું નામ છે. બળદના સ્વરની જેમ જે સ્વર હોય છે તેનું નામ ઋષભ છે. આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે-નાભિસ્થાનથી જે વાયુ ઉપર ઉઠે છે તે કંઠ અને શીર્ષમાં જઈને અથડાય અને તેથી બળદની જેમ અવાજ થાય છે. એટલા માટે જ આ સ્વરનું નામ ઋષભ છે. ગંધને જે સ્વર પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ ‘ગાંધાર’ સ્વર છે. આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યું છે. જે વાયુ નાભિસ્થાનથી ઉપર ઉઠીને હૃદય અને કંઠ સ્થાનમાં અથડાય છે તેમજ વિવિધ બાતના ગંધોનું વહન કરે છે એટલા માટે હૃદય અને કંઠને અથડાયા પછી જે સ્વર ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ ગાન્ધાર છે. શરીરની વચ્ચે જે સ્વર હોય છે તેનું નામ મધ્યમ સ્વર છે આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે છે નાભિસ્થાનથી ઉત્પન્ન થયેલ વાયુ

તથા-મધ્યમઃ-મધ્યે કાયસ્ય મયો મધ્યમઃ । ઉક્તંચ-

વાયુઃ સમુત્થિતો નામેરુરોહદિ સમાહતઃ ।

નામિ પ્રાપ્તો મહાનાદો, મધ્યમત્વં સમશ્રુતે ॥

યદ્વા-“તદ્વદેવોત્થિતો વાયુ રુરઃ કણ્ઠસમાહતઃ । નામિ પ્રાપ્તો મહાનાદો મધ્યસ્થ-
સ્તેન મધ્યમઃ ॥ ઇતિ ॥

તથા-પંચમઃ-પંચાનાં=પદ્મજાદિસ્વરાનુસારેણ પંચસંખ્યકાનાં સ્વરાણાં પૂરણઃ
સ્વરઃ પંચમઃ । યદ્વા-પંચમુ નામ્યાદિ સ્થાનેષુ માતીતિ પંચમઃ । ઉક્તંચ-

“વાયુઃ સમુદ્રતો નામે રુરો હત્કઠ્ઠમૂર્ધસુ ।

વિચરન્ પંચમસ્થાનમાપ્ત્યા પંચમ ઉચ્યતે” ॥ ઇતિ ॥

વાયુ ઊરસ્થલ ઓર હૃદય મેં ટકરાતા હૈ ઓર ફિર નાભિસ્થાન મેં આકર
ઘડી આવાજ ઉત્પન્ન કરતા હૈ-હસલિયે હસ સ્વર કા નામ મધ્યમ
સ્વર હૈ । અથવા-ઊસી પ્રકાર સે ઉત્થિત હુઆ વાયુ ઊરસ્થલ ઓર
કણ્ઠ મેં ટકરાતા હૈ ફિર નાભિસ્થલ મેં પહુંચ કર ઘડે ભારી શબ્દ કો
ઉત્પન્ન કરતા હૈ । હસ પ્રકાર મધ્યસ્થ હોને સે યહ સ્વર મધ્યમ કહા
ગયા હૈ । પદ્મજા આદિ સ્વરોં કી યહ સ્વર પાંચવી સંખ્યા કી પૂર્નિ
કરતા હૈ હસલિયે હસ સ્વર કા નામ ‘પંચમ’ સ્વર હુઆ હૈ । અથવા
નાભિ આદિ પાંચ સ્થાનોં મેં યહ સ્વર સમા જાતા હૈ હસલિયે યહ-સ્વર
પંચમ સ્વર કહલાયા હૈ । હસ કા લક્ષણ હસ પ્રકાર સે કહા ગયા હૈ-
નાભિસ્થાન સે જો વાયુ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ વક્ષસ્થલ હૃદય કંઠ ઓર
મસ્તક મેં ટકરાતા હુઆ પંચમસ્થાન મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । હસલિયે હસ

ઉત્પન્ન અને હૃદયમાં અથડાય છે અને પછી નાભિસ્થાનમાં આવીને મોટો
અવાજ ઉત્પન્ન કરે છે, એટલા માટે આ સ્વરનું નામ મધ્યમસ્વર છે. અથવા
પહેલાની જેમ જ ઉપરની તરફ ઉઠતો વાયુ ઉત્પન્ન અને કંઠમાં અથડાય
છે પછી નાભિસ્થાનમાં પહોંચીને બહુ મોટો અવાજ ઉત્પન્ન કરે છે. આ
પ્રમાણે મધ્યસ્થ હોવા બદલ આ સ્વર મધ્યમ કહેવાય છે. પદ્મજા વગેરે
સ્વરોમાં આ સ્વર પાંચમી સંખ્યાને પૂરે છે એટલા માટે આ સ્વરનું નામ
પંચમસ્વર છે. અથવા નાભિ વગેરે પાંચ સ્થાનોમાં આ સ્વર સમાવિષ્ટ થઈ
જાય છે. એથી આ સ્વર પંચમસ્વર કહેવાય છે આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે
કહેવામાં આવ્યું છે નાભિસ્થાનમાંથી જે વાયુ ઉત્પન્ન થાય છે તે વક્ષસ્થળ
હૃદય કંઠ અને મસ્તકમાં અથડાઈને પંચમસ્થાનમાં ઉત્પન્ન થાય છે. એટલા
માટે આનું નામ આ પ્રમાણે રાખવામાં આવ્યું છે. જે સ્વર આઠી રહેલા

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૨ સપ્તસ્વરનામનિરૂપણમ્

૭૯૧

તથા-ધૈવતઃ-અભિસન્ધયતે=અનુસન્ધયતિ શેષસ્વરાનિતિ ધૈવતઃ । યદ્વા-ધીમતા-મયં ધૈવતઃ । પશ્ચદ્રયેડપિ પૃષોદરાદિન્વાત્ સાધુત્વમ્ । ઉક્તંવાસ્ય લક્ષણમ્-

“અભિસન્ધયતે યસ્માદેતાન્ પૂર્વોદિતાન્ સ્વરાન્ ।

તસ્માદસ્ય સ્વરસ્યાપિ, ધૈવતત્વં વિધીયતે” ॥ ઇતિ ।

તથા-નિષાદઃ-નિષીદન્તિ સ્વરા યસ્મિન્ સ નિષાદઃ । ઉક્તં વાપિ—

“નિષીદન્તિ સ્વરાઃ યસ્મિન્, નિષાદસ્તેન હેતુના ।

સર્વાંશ્રામિ ભવત્યેષ, યદાદિત્યોડસ્ય દૈવતમ્” ॥ ઇતિ ।

તદેવંસપ્ત=સપ્તસંખ્યકાઃ સ્વરાઃ=જીવાજીવાશ્રયાઃ સ્વરાઃ વ્યાખ્યાતાઃ=વિવિધપ્રકારેણ તીર્થઙ્કરગણધરૈઃ કથિતાઃ । નનુ કાર્યં હિ કારણાયત્તં, તત્ત્વ કારણં કાર્યભૂતાનાં સ્વરાણાં જિહ્વાદિકં, તાનિ ચ દ્વીન્દ્રિયાદિ ત્રસજીવાનામસંખ્યેયત્વાદસંખ્યેયાનિ કિમુતાજીવનિસૃતાનાં તતઃ કથં સ્વરાણાં સપ્તસંખ્યકત્વં ન વિરુદ્ધ્યતે ? ઉચ્યતે—

કા નામ એસા કહા ગયા હૈ । જો સ્વર શેષ સ્વરોં કા અનુસંધાન કરતા હૈ વહ ‘ધૈવત’ હૈ । અથવા સંગીત વિશારદોં કા જો સ્વર હૈ વહ ‘ધૈવત’ હૈ । હસ કા લક્ષણ હસ પ્રકાર સે કહા હૈ—“ અભિસંધયતે ” હત્યાદિ હસ શ્લોક કા અર્થ સ્પષ્ટ હૈ । જિસ મેં સ્વર ઠહરતા હૈ ઉસકા નામ નિષાદ સ્વર હૈ । યહ સ્વર સપ્ત સ્વરોં કા પરાભવ કરતા હૈ કયોંકિ હસકા દેવ આદિત્ય હૈ । યે જો સાત સ્વર હૈં વે જીવ ઓર અજીવ દોનોં કે આશ્રય રહતે હૈં । એસા તીર્થંકર ભગવંતોને કહા હૈ ।

શંકા—કાર્ય કારણોં કે આધીન હોતા હૈ । ઇન સાત સ્વરસ્વરૂપ કાર્ય કે કારણ જિહ્વા આદિક હૈં । યે જિહ્વા આદિ કારણ દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોં કે અસંખ્યાત હોને સે અસંખ્યાત હૈ । અજીવ નિસૃત સ્વરોં કે વિષય કી તો વાત હી કયા હૈ । હસલિયે સ્વરોં કા સાત પ્રકાર કા કહના ઠીક નહીં હૈ ।

સ્વરોંનું અનુસંધાન કરે છે તે “ ધૈવત ” છે. અથવા સંગીત વિશારદોનોં જે સ્વર છે. તે ધૈવત છે આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. “ અભિસન્ધયતે હત્યાદિ ” આ પ્રયોગનો અર્થ સ્પષ્ટ જ છે જેમાં સ્વર સ્થિર થાય છે તેનું નામ નિષાદ સ્વર છે. આ સ્વર બધા સ્વરોંને પરાભૂત કરે છે કેમ કે આનો દેવ આદિત્ય છે જે આ સાત સ્વર છે તે જીવ અને અજીવ બન્ને ને આશ્રિત રહે છે. આમ તીર્થંકર ભગવંતોએ કહ્યું છે.

શંકા—કાર્ય કારણોંને અધીન હોય છે. આ સાત સ્વર રૂપ કાર્યના કારણોં જિહ્વા વગેરે છે. આ જિહ્વા વગેરે કારણોં દ્વીન્દ્રિય વગેરે ત્રસ જીવોં અસંખ્યાત હોવાથી અસંખ્યાત છે અજીવ નિસૃત સ્વરોંના વિષયની તો વાત જ શી કરવી? એટલા માટે સ્વરોંના સાત પ્રકારોં યોગ્ય કહેવાય નહિ.

૭૧૨

મનુયોગદ્વારજ્ઞે

વિશેષમાશ્રિત્યાસંખ્યેયા અપિ સ્વરાઃ સામાન્યેન સર્વેઽપિ સપ્તસ્વેવાન્તર્ભવતિ । યદ્વા સૂત્રે સ્વરાણાં યત્ સપ્તસંખ્યકત્વમુક્તં તત્ સ્થૂલસ્વરાન્ ગીતં ચાશ્રિત્ય પ્રોક્તં, સર્વેષાં સ્વરાણાં સપ્તસ્વરાનુપાતિત્વાદતો નાસ્તિ કોઽપિ સ્વરાણાં સપ્તસંખ્યાગણને દોષ इति ॥ સૂ૦ ૧૬૨॥

इत्थं स्वरान्नामतो निरूप्य संप्रति तानेव कारणत आह—

મૂલમ્—एएसिं णं सत्तण्हं सराणं सत्त सरट्ठाणा पणत्ता, तं जहा—सज्जं च अग्गजीहाए, उरेण रिसहं सरं । कंटुग्गएण गंधारं, मज्झजीहाए मज्झिमं ॥१॥ नासाए पंचमं बूया, दंतोद्वेण य धेवयं । मुद्धाणेण य णेसायं, सरट्ठाणा वियाहिया॥३॥ सत्तसरा जीवणिसिसया पणत्ता, तं जहा—सज्जं रवइ मऊरो, कुक्कुडो रिसभं सरं । हंसोरवइ गंधारं, मज्झिमं च गवेलगा ॥४॥ अह कुसुमसंभवे काले, कोइला पंचमं सरं । छट्ठं च सरसा कौचा, नेसायं सत्तमं गया ॥५॥ सत्तसरा अजीवणिसिसया पणत्ता, तं जहा—सज्जं रवइ मुयंगो, गोमुही रिसहं सरं । संखो रवइ गंधारं,

उत्तर—विशेष की अपेक्षा लेकर स्वर यद्यपि असंख्यात हैं परन्तु, ये सब असंख्यात स्वर सामान्यरूप से इन सात स्वरों में ही अन्तर्भूत हो जाते हैं । अथवा सूत्रकारने जो “सात स्वर हैं ” ऐसा सूत्र कहा है, वह स्थूल स्वरों से एवं गीत को लेकर कहा है ऐसा जानना चाहिये । क्योंकि और जितने भी स्वर हैं, वे सब इन्हीं सात स्वरों में समा जाया करते हैं । इसलिये स्वर सात हैं इस प्रकार के कथन में कोई दोष नहीं है । सू० १६२॥

ઉત્તર—વિશેષની અપેક્ષાથી સ્વર જો કે અસંખ્યાત છે છતાં એ આ બધાં અસંખ્યાત સ્વરો સામાન્ય રૂપથી આ સાત સ્વરોમાં જ અન્તર્ભૂત થઇ જાય છે. અથવા સૂત્રકારે જે ‘સાત સ્વરો છે’ આમ કહ્યું તે સ્થૂલ સ્વરો અને ગીતને લઇને કહ્યું છે આમ બાળુબું બોઈએ કેમ કે બીજા જેટલા સ્વરો છે તે બધા જોજ સાત સ્વરોમાં સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે એટલા માટે સ્વર સાત છે આ બાતના કથનમાં કોઈ પણ બાતનો દોષ નથી. ॥સૂ૦૧૬૨॥

મજ્જિમં પુળ જ્ઞહરી ॥૬॥ ચઠ્ઠચરણપદ્ધાણા, ગોહિયા પંચમં સરં ।
આહંબરો ધેવદ્યં, મહાભેરી ય સત્તમં ॥૭॥સૂ૦૧૬૩॥

છાયા—એતેણાં સ્વરનાં સ્વરણાં સસ સ્વરસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞપાનિ, તથા—
ષડ્જં ચ અગ્રજિહ્વા, ઊરસા ઋષભ સ્વરમ્ । કળ્થાગ્રેણ ગાન્ધારં, મધ્યે જિહ્વા મધ્ય-
મમ્ ॥૨॥ નાસિકયા પશ્ચમે બ્રૂયાત્, દન્તોઠ્ઠેન ચ ધૈવતમ્ । મૂર્ધ્ના ચ નિષાદમ્, સ્વર-
સ્થાનાનિ વ્યાહ્યાતાનિ ॥૩॥ સસસ્વરાઃ જીવનિશ્રિતાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા—ષડ્જં

હસ પ્રકાર નામ્ સે સ્વરોં કા કથન કરકે અય સૂત્રકાર ઝઠ્ઠીં સ્વરોં
કા કારણ કી અપેક્ષા લેકર કથન કરતે હૈ—

‘एएसिं णं सत्तण्हं’ इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(एएसिं) इन (सत्तसराणं) सात स्वरों के (सस)सात
(सरट्टाणा) स्वरस्थान (पणत्ता) कहे गये हैं । (तं जहा) वे इस प्रकार
से हैं ।—(सज्जं च अगगजीहाए) जिह्वा के अग्र भाग से षड्ज
स्वर बोलना चाहिये (उरेण रिसहं सरं) वक्षस्थल से ऋषभस्वर
बोलना चाहिये (कंदुगएणं गंधारं) कण्ठ के अग्रभाग से गांधार स्वर
बोलना चाहिये । (मज्झजीहाए मज्झिमं) जिह्वा के मध्य भाग से
मध्यम स्वर बोलना चाहिये । (नासाए पंचमं) नासिका से पंचम स्वर
बोलना चाहिये (दंतोठ्ठेण य धेवयं) दन्तोष्ठ से धैवत स्वर बोलना
चाहिये (मुद्धाणेणं य णेसायं ब्रूया) और मूर्धा से निषाद स्वर बोल-

આ પ્રમાણે સ્વરોનું નામની અપેક્ષાએ કથન કરીને હવે સૂત્રકાર તેજ
સ્વરોનું કારણની અપેક્ષાએ કથન કરે છે—

“एएसिं णं सत्तण्हं” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(एएसिं णं) आ (सत्तसराणं) सात स्वरों के (सस) सात (सर-
ट्टाणा) स्वरस्थानों (पणत्ता) कहेवालों आयां છે. (तं जहा) ते आ प्रमाणे છે
(सज्जं च अगगजीहाए) જીહ્વાના અગ્રભાગથી ષડ્જ સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું
જોઈએ. (उरेण रिसहं सरं) વક્ષસ્થળથી ઋષભ સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ.
(कंदुगएणं गंधारं) કંઠના અગ્રભાગથી ગાંધાર સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ.
(मज्झजीहाए मज्झिमं) જીહ્વાના મધ્યભાગથી મધ્યમ સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું
જોઈએ. (नासाए पंचमं) નાસિકાથી પંચમસ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ.
(दंतोठ्ठेण य धेवयं) દન્તોઠ્ઠથી ધૈવત સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ (मुद्धाणेणं य
णेसायं ब्रूया) અને મૂર્ધાથી નિષાદ સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ. (सरट्टाणा
वियाहिया) આ પ્રમાણે સાત સ્વર સ્થાનોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે.

રૌતિ મયૂરઃ, કુક્કુટઃ ઋષભં સ્વરમ્ । હંસો રૌતિ ગાંધારં, મધ્યમં ચ ગવેલકઃ
(મેષાઃ) ॥૪॥ અથ કુસુમસંભવે કાલે, કોકિલાઃ પશ્ચમં સ્વરમ્ । પઠં ચ સારસાઃ
ક્રૌંચાઃ, નિષાદં સપ્તમં ગજાઃ ॥૫॥ સપ્તસ્વરાઃ અજીવનિશ્ચિતાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ તથા—
ષડ્જં રૌતિ મૃદંગો, ગોમુહી ઋષભં સ્વરં । શંખો રૌતિ ગાંધારં, મધ્યમં પુનર્જ-
લ્લરી ॥ ૬ ॥ ચતુશ્ચરણપ્રતિષ્ઠાના, ગોધિકા પશ્ચમં સ્વરં । આડમ્બરો ધૈવતકં, મહા-
મેરીશ્ચ સપ્તમમ્ ॥ સૂ૦ ૧૬૩ ॥

ના ચાહિયે । (સરદ્વાળા વિચાહિયા) હસ પ્રકાર સે સાત સ્વરસ્થાન ધ્યા-
લ્યાત કિયે હૈં । (સત્તસરા જીવનિસ્સિયા પળ્લતા) સાત સ્વર જીવ-
નિશ્ચિત કહે ગયે હૈં । (તંજહા) વે હસ પ્રકાર સે હૈં—(સડ્જં રવહ
મરો) ષડ્જસ્વર મયૂર બોલતા હૈ (કુક્કુડો રિસહં સરં) કુક્કુટ—
ઋષભસ્વર બોલતા હૈ । (હંસો રવહ ગંધારં) હંસ ગાંધાર સ્વર
બોલતા હૈ (મજ્જિમં ચ ગવેલગા) ગવેલક-મેષ મધ્યમ-સ્વર
બોલતે હૈં । (અહ કુસુમસંભવે કાલે કોહલા પંચમં સરં)
પુષ્પોત્પત્તિકાલ મેં કોયલ પંચમ સ્વર બોલતી હૈ (છટ્ઠં ચ
સારસા કૌંચા) છટા ધૈવત સ્વર સારસ ઓર કૌંચ પક્ષી બોલતે હૈં ।
(સત્તમં નેસાયં ગયા) સાતવાં જો નિષાદ સ્વર હૈં ઉસે ગજ બોલતે હૈ ।
(સત્ત સરા અજીવનિસ્સિયા પળ્લતા) સાત સ્વર અજીવનિશ્ચિત કહે
ગયે હૈં—(તં જહા) વે હસ પ્રકાર સે હૈં—(સડ્જં રવહ મુયંગો) ષડ્જ
મૃદંગ બોલતા હૈ (ગોમુહી રિસહં સરં) ગોમુહી-વાદ્યવિશેષ-ઋષભ સ્વર
બોલતા હૈ । (શંખો ગંધારં રવહ) શંખ-ગાંધાર સ્વર બોલતા હૈ । (જલ્લરી-
મજ્જિમં) જલ્લરી મધ્યમસ્વર બોલતા હૈ । (ચતુશ્ચરણપદ્ધાળા ગોહિયા)

(સત્તસરા જીવનિસ્સિયા પળ્લતા) સાત સ્વરો અનિશ્ચિત કહેવામાં આળ્યા છે
(તંજહા) તે આ પ્રમાણે છે—(સડ્જં રવહ મરો) ષડ્જ સ્વર મયૂર-મેર-મેલે
છે. (કુક્કુડો રિસહં સરં) કુકુડો ઋષભ સ્વર બોલે છે. (મજ્જિમં ચ ગવેલગા)
ગવેલક-મેષ-મધ્યમ સ્વર બોલે છે (અહ કુસુમસંભવે કાલે કોહલા પંચમં સરં)
પુષ્પોત્પત્તિ કાલમાં-કોયલ પંચમસ્વર બોલે છે. (છટ્ઠં ચ સારસા કૌંચા) છટા
ધૈવત સ્વર સારસ અને-કૌંચપક્ષી વિશેષ બોલે છે. (સત્તમં નેસાયં ગયા)
સાતમે નિષાદ સ્વર હાથી બોલે છે (સત્તસરા અજીવનિસ્સિયા પળ્લતા) સાત
સ્વરો અનિશ્ચિત કહેવામાં આળ્યા છે (તંજહા) તે આ પ્રમાણે છે—
સડ્જં રવહ મુયંગો) ષડ્જ સ્વર મૃદંગમાંથી નીકળે છે. (ગોમુહી રિસહં સરં)
ગોમુહી-વાદ્ય વિશેષમાંથી ઋષભ સ્વર નીકળે છે. (શંખો ગંધારં રવહ) શંખ-
માંથી ગાંધાર સ્વર નીકળે છે. (જલ્લરી મજ્જિમં) જલ્લરીમાંથી મધ્યમ સ્વર
નીકળે છે. (ચતુશ્ચરણપદ્ધાળા ગોહિયા) ચારે પગે બેના જમીન પર મૂકવામાં

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૩ કારણતો સ્વરનિરૂપણમ્

૭૧૫

ટીકા—‘एएसि णं’ इत्यादि—

एतेषां सप्तानां स्वराणां सप्त स्वरस्थानानि प्रज्ञप्तानि, अयं भावः एते षड्जादि सप्तस्वरा यस्मात् यस्मात् स्थानात् समुत्पद्यते तानि जिह्वाग्रभागादिस्वरस्थानान्यपि सप्तसंख्यकानि सन्ति । नाभेरुत्थितो ऽविकारी स्वर आभोगतोऽनाभोगतो वा जिह्वादिस्थानं प्राप्य विशेषमासादयतीति तत् स्वरस्योपकारकमतस्तत् स्वरस्थानमुच्यते, इति । तान्येव स्थानानि दर्शयति—तद्यथा—षड्जं स्वरम् अग्रजिह्वा—अग्रभूता जिह्वा—अग्रजिह्वा, तथा जिह्वाग्रभागेन ब्रूयात् । षड्जस्वरस्य स्थानं जिह्वाग्रचारोपैरौ से जमीन ऊपर रखी गई ऐसो गोधिका—वाद्यविशेष—(पंचमं सरं) पंचम स्वर को बोलती है (आडंबरो धेवयं) आडंबर धेवत स्वर को बोलता है (महाभेरीय सत्तमं) और महाभेरी सप्तम जो निषाद स्वर है, उसे बोलती है ।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकारने सात स्वरों के सात स्थानों का कथन किया है । षड्ज आदि सात स्वर जिस २ स्थान से उत्पन्न होते हैं, वे जिह्वाग्रभाग आदि स्वरोत्पादक स्थान सात हैं । नाभिस्थान से उत्थित अविकारी स्वर आभोग (अनजान) से जिह्वा आदि स्थान को प्राप्त हो करके अपने में विशेषता प्राप्त कर लेता है, इसलिये वह जिह्वा आदि स्थान उस स्वर का उपकारक होता है । अतः वह उस स्वर का स्थान कहा जाता है । सूत्रकारने इन्हीं सात स्वर स्थानों को यहां दिखलाया है । षड्ज स्वर जिह्वाग्रभाग से बोला जाता है । इसलिये उसका स्थान जिह्वाग्रभाग है ।

આવે છે. એની ગોધિકા-વાદ્ય વિશેષમાંથી (પંચમં સરં) પંચમ સ્વર નીકળે છે (આડંબરો ધેવયં) આડંબરમાંથી ધેવત સ્વર નીકળે છે. (મહાભેરીય સત્તમં) અને મહાભેરીમાંથી સાતમો જે નિષાદ નામે સ્વર છે કે નીકળે છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર વડે સૂત્રકારે સાત સ્વરોના સ્થાનોનું કથન કર્યું છે. ષડ્જ વગેરે સાત સ્વર જે જે સ્થાન વિશેષથી ઉત્પન્ન થાય છે. તે જિહ્વાગ્ર ભાગ વગેરે સાત સ્વરોત્પાદક સ્થાનો છે નાભિસ્થાનથી ઉત્થિત થયેલ અવિકારી સ્વર આભોગ (અજ્ઞ) થી કે અનાભોગ (અભજ્ઞ)થી જિહ્વા વગેરે સ્થાન સુધી પહોંચીને પોતાની જાતમાં એક વિશેષતા મેળવી લે છે. એટલા માટે જિહ્વા વગેરે સ્થાન તે સ્વર માટે ઉપકારક હોય છે. એથી તે તે સ્વરનું સ્થાન કહેવાય છે. સૂત્રકારે એજ સાત સ્વર સ્થાનોનું અહીં સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે ષડ્જ સ્વર જિહ્વાગ્ર ભાગથી ઉત્પન્ન થઈ કરવામાં આવે છે તેથી તેનું નામ જિહ્વાગ્ર ભાગ છે.

માગ્નિજિહ્વા-
ચસ્વરાન્તરેષ્વપ્યાશ્રીયતે તત્કથં ષડ્જાદિષ્વેકૈકસ્ય સ્વરસ્ય ઇન્દ્રિયાદિરુપમેકૈક
સ્થાનમુચ્યતે? इति चेदाह—यद्यपि षड्जादयः सर्वेऽपि स्वराः जिह्वाग्रभागादीनि
सर्वाण्यपि स्थानान्यपेक्षन्ते, तथापि विशेषत एकैकस्वरो जिह्वाग्रभागादिष्वेकैकं स्थान-
मादायैव व्यव्यते । अतस्तत्तत्स्वरस्य तत्तत्स्थानमुक्तमिति बोध्यम् । तथा—उरसा=
वक्षसा ऋषभं स्वरं ब्रूयात् । ऋषभस्वरस्य स्थानं वक्षो बोध्यम् । तथा—कण्ठोद्गतेन
कण्ठोद्गतम्-उद्गतिः=स्वरनिष्पत्तिहेतुभूताक्रिया तेन गान्धारं स्वरं ब्रूयात् । गान्धार-

શંકા—ષડ્જ સ્વર કે ઉચ્ચારણ કરને મેં કણ્ઠોદિક સ્થાનોં કા
મી સહારા લેના પડતા હૈ, તથા અગ્નિજિહ્વા દૂસરે સ્વરોં મેં મી ઉપ-
યુક્ત હોતી હૈ, તો ફિર ષડ્જ-આદિ સ્વરોં મેં સે એક ૨ સ્વર કા અગ્નિ-
જિહ્વા આદિ રુપ એક ૨ સ્થાન પ્રતિનિયત કેસે કહા જા સકતા હૈ ?

ઉત્તર—યદ્યપિ ષડ્જ આદિ સમસ્ત મી સ્વર જિહ્વાગ્રભાગ આદિ
રુપ સમસ્ત સ્થાનોં કી અપેક્ષા કરતે હૈં, તો મી વિશેષ રુપ સે એક ૨
સ્વર જિહ્વાગ્રભાગાદિક રુપ સ્થાનોં મેં સે એક ૨ સ્થાન કો આશ્રિત
કરકે હી અભિવ્યક્ત (પ્રકટ) હોતા હૈ । ફસલિયે ઉસ ૨ સ્વર કા વહ-
વહ સ્થાન કહા જાતા હૈ । ફસી અભિપ્રાય કો લેકર યહાં સૂત્રકારને એક ૨
સ્વર કા એક એક સ્થાન કહા હૈ । વક્ષસ્થલ સે ઋષભ સ્વર બોલના
બાહિયે ફસ કથન સે યહી જાના જાતા હૈ કિ—‘ઋષભ સ્વર કા વક્ષ-
સ્થલ સ્થાન હૈ । સ્વર કી નિષ્પત્તિ કી હેતુભૂત જો ક્રિયા કંઠ સે હોતી

શંકા—ષડ્જ સ્વરનો ઉચ્ચાર કરતાં કંઠ વગેરે સ્થાનોના પણ આધાર
લેવા પડે છે. તેમજ અગ્નિજિહ્વા બીજા પણ કેટલાક સ્વરોના ઉચ્ચારણ માટે
સહાયભૂત હોય છે. તો પછી ષડ્જ વગેરે સ્વરોમાંથી એક એક સ્વરનું
અગ્નિજિહ્વા વગેરે રૂપ એક એક સ્થાન પ્રતિનિયત કેવી રીતે કહેવાય?

ઉત્તર—જો કે ષડ્જ વગેરે બધા સ્વરો જિહ્વાગ્ર ભાગ વગેરે બધાં
સ્થાનોનો ઉપયોગ કરે છે. છતાં એ વિશેષ રૂપથી દરેક સ્વર જિહ્વાગ્ર ભાગા-
દિક સ્થાનોમાંથી કેાઈ એક સ્થાનને સમાશ્રિત કરીને જે વ્યક્ત (દિશ્યરિત)
થાય છે. એટલા માટે તે સ્વરનું તે સ્થાન કહેવાય છે એજ અભિપ્રાયને લઈને
અહીં સૂત્રકારે દરેક સ્વરનું એક એક સ્થાન કહ્યું છે. વક્ષસ્થળથી ઋષભ
સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ આ કથનથી એજ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે ઋષભ
સ્વરનું સ્થાન વક્ષસ્થળ છે સ્વરની નિષ્પત્તિમાં હેતુભૂત જે ક્રિયા કંઠથી થાય છે.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૩ કારણતો સ્વરનિરૂપણમ્

૭૧૭

સ્વરસ્ય સ્થાને કળ્થો બોધ્યમ્ તથા-મધ્ય જિહ્વાજિહ્વાયા મધ્યો ભાગો મધ્યજિહ્વા, તથા-મધ્યમં સ્વરં બ્રૂયાત્ । જિહ્વાયા મધ્યભાગો મધ્યમસ્વરસ્ય સ્થાનમિતિભાવઃ । તથા-નાસયા=નાસિકયા પશ્ચમં સ્વરં બ્રૂયાત્ । પશ્ચમસ્વરસ્ય સ્થાનં નાસિકેત્યર્થઃ । તથા-દન્તોષ્ઠેન=દન્તોષ્ઠક્રિયાયા ધૈવતં સ્વરં બ્રૂયાત્ । ધૈવતસ્વરસ્ય સ્થાનં દન્તોષ્ઠં બોધ્યમ્ । તથા-મૂર્ધ્ના=મૂર્ધસ્થાનેન નિષાદં સ્વરં બ્રૂયાત્ । નિષાદસ્વરસ્ય સ્થાનં મૂર્ધાં બોધ્યમ્ । एतानि जिह्वाग्रभागादीनि सप्त स्वरस्थानानि भगवता व्याख्यातानि । इत्थं स्वरस्थानान्युक्त्वा सम्प्रति 'को जीवः कं स्वरं ब्रूते' इति दर्शयति-‘सत्त सरा जीवनिस्सिया’ इत्यादिना ‘णिसापं सत्तमं गया इत्यन्तेन । अर्थः स्पष्टः । नवरम्-गावश्च-एलकाश्चेति गवेलकाः, यद्वा गवेलकाः-मेषा एव । कुसुमसंभवे-

है, उसका नाम 'कंठोद्गत' है इससे गांधार स्वर बोला जाता है, अतः गांधार स्वर का स्थान -कंठ है । जिह्वा का जो मध्य भाग है-उससे मध्यम स्वर बोला जाता है; इस कारण मध्यम स्वर का स्थान जिह्वा का मध्य भाग है । 'नासिका से पंचम स्वर बोलना चाहिये' इस कथन से यही जाना जाता है-कि 'पंचम स्वर का स्थान नासिका है ।' 'दन्तो-ष्ठ क्रिया से धैवत स्वर को बोलना चाहिये' इस कथन से यही स्पष्ट होता है कि 'धैवत स्वर का स्थान दन्तोष्ठ है' । 'मूर्धा से निषाद स्वर बोलना चाहिये' इससे यही जाना जाता है कि 'निषाद स्वर का स्थान मूर्धा है ।' ये जिह्वाग्रभागादिक सप्तस्वरस्थान भगवान् ने कहे हैं । इस प्रकार सात स्वरों के स्थान कहकर सूत्रकारने पुनः यह बत-लाया है कि-कौन २ जीव किस २ स्वर को बोलता है-? "गवेलक" में गौ और एलक ये दो प्राणी आये हैं । अथवा गवेलक का अर्थ मेष

તેનું નામ કંઠોદ્ગત છે. એનાથી ગાંધાર સ્વર ઉચ્ચરિત થાય છે એથી ગાંધાર સ્વરનું નામ કંઠ છે. જિહ્વાના મધ્ય ભાગથી મધ્યમ સ્વરનું ઉચ્ચારણ થાય છે. એથી જિહ્વાનો મધ્ય ભાગ મધ્યમ સ્વરનું સ્થાન છે નાકથી પંચમ સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ આ કથનથી આ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે પંચમ સ્વરનું સ્થાન નાસિકા છે. દન્તોષ્ઠ ક્રિયાથી ધૈવત સ્વર બોલવો જોઈએ આ કથનથી એજ વાત જણાય છે કે ધૈવત સ્વરનું સ્થાન દન્તોષ્ઠ છે મૂર્ધાથી નિષાદ સ્વર બોલવો જોઈએ એથી એ વાત જણાય છે કે, નિષાદ સ્વરનું સ્થાન મૂર્ધા છે એ જિહ્વાના ભાગ વગેરે સપ્તસ્વર સ્થાનો ભગવાને કહ્યા છે.

આ પ્રમાણે સપ્તસ્વરોના સ્થાન વિષે માહિતી આપીને સૂત્રકાર ફરી એ બતાવે છે કે-કયા કયા જીવો કયા કયા સ્વરથી બોલે છે? "ગવેલક"માં ગૌ અને એલક એ બે પ્રાણીઓ છે અથવા ગવેલકનો અર્થ મેષ પણ છે.

૭૨૮

અનુયોગદ્વારસ્ત્રે

કાહે=વસન્તસમયે । અથ યસ્માત્ યસ્માત્ વાઘાદ યો યઃ સ્વરો નિર્ગચ્છાત, તં તપાહ-તથયા-તદ્દર્શયંતિ-‘સત્ત સરા અજીવનિસ્સિયા’ ઇત્યાદિના ‘મહામેરી ય સત્તમં’ ઇત્યન્તેન । અર્થઃ સ્પષ્ટઃ । નવરં-ગોમુખી=યસ્યા મુખે ગોમુખાદિ વસ્તુ સ્થાપ્યતે સા ‘કાહલા’ ઇત્યપરનામ્ના પ્રસિદ્ધા । ચતુશ્ચરણપ્રતિષ્ઠાના ગોધિકા=ચતુર્મિશ્ચરણૈઃ પ્રતિષ્ઠાનં શ્રુતિ યસ્યાઃ સા તથાભૂતા ગોધિકા-ગોધૈવ ગોધિકા ચર્માવનદ્વા દર્દરિકેત્યપરનામ્ના પ્રસિદ્ધા વાઘવિશેષઃ । આહમ્બરઃ=પટહઃ । સપ્તમં=નિષાદમ્ । અત્રેદં બોધ્યમ્-યદ્યપિ મૃદંગાદિ જનિતેષુ સ્વરેષુ નામ્યુરઃકળ્ઠાદ્યુત્પન્ન-માનરૂપો વ્યુત્પત્ત્યર્થો ન ઘટતે, તથાપિ-મૃદંગાદિ વાઘેભ્યઃ ષડ્જાદિસ્વરસદૃશ-સ્વરા ઉત્પન્નંતે । અતएવ તેષાં મૃદંગાદ્યજીવનિશ્રિતત્વમુક્તમ્ ॥સૂ૦૧૬૩॥

સંપતિ ણ્ણાં સપ્તસ્વરાણાં લક્ષણાન્યાહ—

મૂલમ્—પ્ણસિં ણં સત્તપ્પહં સરાણં સત્ત સરલક્ષણા ષણ્ણત્તા, તં જહા—સજ્જેણ લહર્હૈ વિત્તિં, કયં ચ ન વિણસ્સહ । ગાવો પુત્તા ય મિત્તા ય, નારીણં હોહિ વલ્લહો॥૧॥ રિસહેણ ઉ ઇસજ્જં, સેણા-

મી હૈ । કુસુમસંભવકાલ કા તાત્પર્ય વસન્ત ઋતુ સે હૈ । જિસકે મુલ પર ગોશ્રંગ આદિ સ્થાપિત કિયા જાતા હૈ તથા જિસકા દૂસરા નામ ‘કાહલા’ હૈ, વહ વાઘવિશેષ ‘ગોમુખી’ કહલાતા હૈ । ચતુશ્ચરણ પ્રતિષ્ઠાના ગોધિકા મી ઇક પ્રકાર કા વાઘવિશેષ હોતા હૈ હિસ કા નામ ‘દર્દરિકા’ હૈ । યહ ચમકે સે મદા હુઆ હોતા હૈ । ‘આહમ્બર’ પટહ કો કહતે હૈ । યદ્યપિ મૃદંગ આદિ જનિત સ્વરોં મેં નામિ ડરસ કળ્ઠ આદિ સે ઉત્પન્ન હોના રૂપ વ્યુત્પત્ત્યર્થ ઘટિત નહીં હોતા હૈ, તો મી મૃદંગ આદિ વાઘોં સે ષડ્જ આદિ સ્વરોં કે સદૃશ સ્વર ઉત્પન્ન હોતે હૈ, હિસલિયે ઉન્હેં મૃદંગરૂપ અજીવ સે નિશ્રિત કહા હૈ ॥સૂ૦૧૬૩॥

કુસુમ સંભવકાલ એટલે વસન્ત ઋતુ છે જેનાં મુખ પર ગોશ્રંગ, વગેરે સ્થાપિત કરવામાં આવે છે તેમજ જેનું ખીજું નામ ‘કાહલા’ છે તે વાઘવિશેષ ‘ગોમુખી’ કહેવાય છે ચતુશ્ચરણ પ્રતિષ્ઠાના ગોધિકા યથુ એક વાઘવિશેષ છે એનું નામ ‘દર્દરિકા’ છે. એ ચામકથી બનાવેલું હોય છે ‘આહમ્બર’ પટહને કહે છે. એ કે મૃદંગ વગેરેથી ઉત્પન્ન સ્વરોમાં નાભિ, ડરસ, કંઠ વગેરેથી ઉત્પત્તિ રૂપ વ્યુત્પત્ત્યર્થ નીકળતો નથી, છતાં એ મૃદંગ વગેરે વાઘોથી ષડ્જ વગેરે સ્વરોની જેમ જ સ્વર ઉત્પન્ન થાય છે. એથી તેમને મૃદંગ રૂપ અશ્રુવથી નિશ્રિત કહ્યા છે. ॥સૂ૦૧૬૩॥

મનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૪ સત્ત્વસ્વરલક્ષણનિકૂપણમ્

૭૯૯

વચ્ચં ધનાણિ ય । વત્થ ગંધમલંકારં, ઇતિથો સયનાણિ યા॥૨॥
 ગંધારે ગીયજુત્તિણ્ણા, વજ્જવિત્તો કલાહિયા । હવંતિ કહ્ણો
 પળ્ણા, જે અળ્ણે સત્થપારગા॥૩॥ મજ્ઞિમસ્સરસંપન્ના, હવંતિ
 સુહર્જીવિણો । લાયઈ પિયઈ દેઈ, મજ્ઞિમસ્સરમસ્સિઓ॥૪॥
 પંચમસ્સરસંપન્ના હવંતિ પુઢવીવઈ । સૂરા સંગહકત્તારો અળેગ-
 ગળનાયગા॥૫॥ ધેવયસ્સરસંપન્ના હવંતિ કલહપ્પિયા । સાઠિણિયા
 વગ્ગુરિયા, સોયરિયા મચ્છવંધા ય ॥૬॥ ચંડાલા મુટ્ઠિયા સેયા,
 જે અન્ને પાવકમ્મિણો । ગોઘાતગા ય જે ચોરા, ણિસાયં
 સરમસ્સિયા ॥૭॥ સૂ૦ ૧૬૪॥

છાયા—એતેષાં ચલ્લ સમાનાં સ્વરાણાં સત્ત્વ સ્વરલક્ષણાણિ પ્રજ્ઞપ્તાણિ, તથા—
 ષડ્જેન લભતે વૃત્તિ, કૃતં ચ ન વિનશ્યતિ । ગાયઃ પુત્રાશ્ચ મિત્રાણિ ચ, નારીણાં

અથ સૂત્રકારે એ સાત સ્વરોં કે લક્ષણોં કો કહતે હૈં—

“एएसि णं सत्तण्हं” इत्यादि ।—

શબ્દાર્થ—(एएसि सत्तण्हं सराणं) એ સાત સ્વરોં કે (सरलक्खणा)
 સ્વર લક્ષણ-તત્ તત્-ફલ કી પ્રાપ્તિ કે અનુસાર સ્વર તત્ત્વ-(सत्त) સાત
 (पणत्ता) કહે ગયે હૈં । (तंजहा) વે હસ પ્રકાર સે હૈં—(सज्जेण वित्तिं ल-
 हई) ષડ્જ સ્વર સે મનુષ્ય-આજીવિકા પ્રાપ્ત કરતા હૈં । (कयं च ण विण-
 स्सइ) તથા ષડ્જ સ્વરવાલે વ્યક્તિ કા કૃતકર્મ નષ્ટ નહીં હોતા હૈં ।
 (गावो पुत्ता य मिता य नारीणं होइ वल्लहो) હસ કો ગાયેં પુત્ર ઓર

હવે સૂત્રકાર એ સાત સ્વરોના લક્ષણો કરે છે—

“एएसि णं सत्तण्हं” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(एएसि णं सत्तण्हं सराणं) એ સાત સ્વરોના (सरलक्खणा)
 સ્વરલક્ષણ-તે તે જણની પ્રાપ્તિની અપેક્ષાએ સ્વરતત્ત્વ (सत्त) સાત (पणत्ता) કહે-
 વામાં આવ્યા છે (तंजहा) તેઓ આ પ્રમાણે છે (सज्जेण वित्तं लहई) ષડ્જ સ્વરથી
 માણસ આજીવિકા પ્રાપ્ત કરે છે (कयं च ण विणस्सइ) તેમજ ષડ્જ સ્વરવાળી વ્યક્તિ
 એના કૃતકર્મો નાશ પામતા નથી અર્થાત્ કાર્ય સિદ્ધ કરે છે. (गावो पुत्ता य मिता य
 नारीणं होइ वल्लहो) આને ગાયો પુત્ર અને મિત્ર હોય છે. સ્ત્રીઓને એ બહુજ

भवति बलमः॥१॥ ऋषभेण तु ऐश्वर्यं सेनापत्यं धनानि च । वस्त्रगन्धम् अलंकारम्,
स्त्रियः शयनानि च ॥२॥ गान्धारे गीतयुक्तिज्ञाः वर्धवृत्तयः कलाधिकाः । भवन्ति
कवयो प्राज्ञाः, ये अन्ये शास्त्रपारगाः ॥३॥ मध्यम स्वरसम्पन्ना भवन्ति-सुख-
जीविनः । खादति पिबति ददाति, मध्यमस्वरमाश्रितः ॥४॥ पञ्चमस्वरसम्पन्ना
भिन्न होते हैं । यह स्त्रियों को बहुत प्यारा होता है । (रिसहेण उ
एसज्जं) ऋषभ स्वर से मनुष्य ऐश्वर्य-ईशानशक्तिवाला-होता है (सेणा-
वच्चं घणाणिय) इस स्वर के प्रभाव से वह सेनापतित्व को धन को,
(वत्थगंधमलंकारं इत्थिओ सयणाणिय) वस्त्रों को गंधपदार्थों को, अलं-
कारों को, स्त्रियों को, और शयनों को पाता है । (गंधारे गीय जुत्तिण्णा)
गान्धार स्वर से गाना गानेवाले मनुष्य (वज्जवित्ती कलाहिया) श्रेष्ठ
आजीविकावाले होते हैं तथा कलाओं के ज्ञाताओं में शिरोमणि होते
हैं । (कइणो पण्णा हवन्ति) कवि-काव्यकर्त्ता-होते हैं अथवा-“कइणो-
कृतिनः” इस छाया पक्ष में कर्तव्यशील होते हैं । प्राज्ञः-सद्बोध
संपन्न-होते हैं । (जे अण्णे सत्थपारगा) तथा जो पूर्वोक्त गीत युक्तिज्ञ
आदि कों से जो भिन्न होते हैं-वे, सकलशास्त्रों में निष्णात होते हैं !
(मज्झिमस्सरसंपन्ना) जो मध्यम स्वर से युक्त होते हैं, वे (सुहजीविणो
हवन्ति) सुखजीवि होते हैं । (खायई पियई देई मज्झिमस्सरमस्सिओ)
सुखजीवि कैसे होते हैं ? इसी बात को सूत्रकार कहते हैं कि वे सुस्वादु
भोजन को मनमाना खाते हैं, दुग्धादि का पान करते हैं । दूसरों को

પ્રિય હોય છે (રિસહેણ ઉ એસિજ્જં) ઋષભ સ્વરથી માણસ ઐશ્વર્ય-ઈશન શક્તિ
સંપન્ન-હોય છે (સેણાવચ્ચં ઘણાણિય) આ સ્વરના પ્રભાવથી સેનાપતિત્વને,
ધનને, (વત્થગંધમલંકારં' इत्थिओ सयणाणिय) વસ્ત્રો, ગંધપદાર્થો, અલંકારો,
સ્ત્રીઓ, તેમજ શયનોને મેળવે છે. (ગંધારે ગીય જુત્તિણ્ણા) ગાન્ધાર સ્વરથી
ગાનારા માણસો (વજ્જવિત્તી કલાહિયા) શ્રેષ્ઠ આજીવિકાવાળા હોય છે તેમજ
કલાવિદોમાં શ્રેષ્ઠ ગણાય છે. (કહ્ણોવણ્ણા હવંતિ) કાવ્યકાર હોય છે અથવા
'કહ્ણો-કૃતિનઃ' આ છાયા પક્ષમાં કર્તવ્યશીલ હોય છે પ્રાજ્ઞઃ-સદ્બોધ
સંપન્ન હોય છે. (જે અણ્ણે સત્થપારગા) તેમજ પૂર્વોક્ત ગીત યુક્તિજ્ઞ વગેરેથી
જે ભિન્ન હોય છે તેઓ સકલ શાસ્ત્રોમાં નિષ્ણાત છે. (મજ્ઞિમસરસંપન્ના)
જેઓ મધ્યમ સ્વર સંપન્ન હોય છે તેઓ (સુહજીવિણો હવંતિ) સુખજીવી
હોય છે. (ચાયઈ પિયઈ દેઈ, મજ્ઞિમસરમસ્સિઓ) સુખજીવી કેવી રીતે હોય
છે ? એજ વાતને સૂત્રકાર હવે સ્પષ્ટ કરે છે-કે તેઓ પોતાની ઇચ્છા

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૪ સત્ત્વસ્વરલક્ષણનિરૂપણમ્

૮૦૨

भवन्ति पृथिवीपतयः । शूराः संग्रहकर्तारः, अनेकगणनायकाः ॥५॥ धैवतस्वर-
सम्पन्ना भवन्ति कलहप्रियाः । शाकुनिका वागुरिकाः सौकरिका मत्स्यबन्धाश्च ॥६॥
चाण्डालामौष्टिकाः सेया ये अन्ये पापकर्माणि । गोघातकाश्च ये चोरा निषाद-
स्वरमाश्रिताः ॥ ७ ॥ ॥ सू० १६४ ॥

મી इसी प्रकार से खिलाते पिलाते रहते हैं । (पंचमस्वरसंपन्ना हवन्ति पुढवीवई) जो पंचमस्वर से युक्त होते हैं वे पृथिवीपति होते हैं । (सूरा संग्रहकर्तारो अणेगगणनायगा) शूरवीर होते हैं, संग्रह करनेवाले होते हैं और अनेक गणों के नायक होते हैं । तथा जा (धैवयस्वरसंपन्ना हवन्ति कलहप्रिया) जो धैवतस्वरवाले होते हैं वे कलहप्रिय होते हैं-लड़ाई झगडा करना उन्हें बहुत पसन्द आता है । (साउणिद्यावगुरिया सोयरिया, मच्छबन्धा य) शाकुनिक-पक्षियों का शिकार करनेवाले, होते हैं, वागुरिक-हरिणों की हत्या करनेवाले, होते हैं, सौकरिक-सुअरों का शिकार करनेवाले, होते हैं, और मत्स्यबंध-मछलियों को मारनेवाले, होते हैं ! (चंडाला) तथा जो चांडाल-रौद्रकर्मा हैं (मुष्टिया) मुष्टि से प्रहार करनेवाले हैं (सेया) अधम जातीय हैं-(जे अन्ने पावकम्मिणो) तथा इनसे भिन्न जो पाप कर्मों में परायण बने हुए प्राणी हैं, तथा जो (गोघातगा) गोघात करनेवाले हैं (जे चोरा) जो चोरी करनेवाले हैं (निषाद्यं सरमस्सिया) वे सब निषाद स्वर से आश्रित

મુજબ તુસિદાયક સુસ્વાદુ લોજન મેળવે છે. દૂધ વગેરે પીવે છે. બીજાઓને પશુ એવી રીતે ખવડાવતા પીવડાવતા રહે છે. (પંચમસ્વરસંપન્ના હવંતિ, પુઢવીવઈ) જેઓ પંચમ સ્વર સંપન્ન હોય છે તેઓ પૃથ્વીપતિ હોય છે. (સૂરા સંગ્રહક્તારો અણેગગણનાયગા) શૂરવીર હોય છે, સંગ્રહ કરનાર હોય છે અને ધણા ગણોના નેતા હોય છે. (ધૈવયસ્વરસંપન્ના) તેમજ જે ધૈવત સ્વરવાળા હોય છે. (હવંતિ કલહપ્રિયા) તે કલહ પ્રિય હોય છે લડાઈ, કંકાસ, તકરાર તેમને બહુ ગમે છે. (સાઉણિયા વગુરિયા સોયરિયા, મચ્છબંધા ય) શાકુનિક-પક્ષીઓના શિકાર કરનાર હોય છે વાગુરિક-હરણોની હત્યા કરનારા હોય છે સૌકરિક-સુવરનો શિકાર કરે છે અને મત્સ્ય બંધ-માછલીઓને મારનાર હોય છે. (ચંડાલા) તેમજ ચાંડાલ-રૌદ્રકર્મા-છે, (મુટ્ટિયા) મુટ્ટિપ્રહાર કરનારા હોય છે. (સેયા) અધમ ભતવાળા હોય છે (જે અન્ને પાવકમ્મિણો) તેમજ એમનાથી ભિન્ન જે પાપકર્મોમાં રત રહે છે તથા જે (ગોઘાતગા) ઓવધ કરનાર હોય છે (જે ચોરા) જેઓ ચોરી કરનારા છે. (નિષાદ્યં સર-

૨૭૨

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

ટીકા—‘एएसि णं’ इत्यादि—

एतेषां स्थानां स्वराणां सप्त स्वरलक्षणानि=तत्तत्फल्गुमाद्यनुसारीणि स्वर-
 लक्ष्यानि कथितानि । तान्येव फलत आह—तद्यथा—षड्जेन लभते वृत्तिम्
 इत्यादिभिः सप्तभिः श्लोकैः । तथाहि—षड्जेन स्वरेण जनो वृत्तिः=जीविकां लभते ।
 तथा षड्जस्वरवतो जनस्य कृतं कर्म विनष्टं न भवति सफलमेव भवतीत्यर्थः ।
 यस्य गावः पुत्रा मित्राणि च भवन्ति । तथा स स्त्रीणां बल्लभः=प्रियश्च भवति ।
 ऋषभेण स्वरेण तु ऐश्वर्यम्=ईश्वरशक्तिमत्त्वं, सैन्यपत्यं=सेनापतित्वं, धनानि, वस्त्र-
 गन्धम्=वस्त्राणि गन्धाश्च, अलंकारं स्त्रियः शयनानि च लभते । तथा—गान्धारे=
 गान्धारस्वरे गीतयुक्तिज्ञाः=गीतयोजनावेत्तारः—गान्धारस्वरगानकर्तार इत्यर्थः,
 वर्यवृत्तयः=वर्याः=श्रेष्ठा वृत्तिः=जीविका येषां ते तथा—श्रेष्ठजीविकावन्तः, कला-
 धिकाः=कलाभिरधिकाःकलाज्ञेषु मूर्धन्याश्च भवन्ति । तथा—कवयः=काव्यकर्तारः,
 ‘कृतिनः’ इतिच्छायापसे—कर्तव्यशीलाः, प्राज्ञाः=सद्बोधाश्च भवन्ति । ये अन्ये=
 पूर्वोक्तेभ्यो गीतयुक्तिज्ञादिभ्यो ये भिन्ना भवन्ति ते शास्त्रपारगाः=सकल शास्त्र-
 निष्णाता भवन्ति । तथा—मध्यमस्वरसम्पन्नास्तु सुखजीविनः=सुखेन जीवितुं शीला
 भवन्ति । सुखजीवित्वमेव प्रकटयति मध्यमस्वरमाश्रितो जनो हि खादति=सुस्वादु
 भोजनं भुङ्क्ते, पिबति=दुग्धादिपानं करोति, ददाति=अन्यान्पि भोजयति पाय-
 यति च । पञ्चमस्वरसम्पन्नास्तु पृथिवीपतयो भवन्ति, तथा—शूराः संग्रहकर्तारः
 अनेकगणनायकाश्च भवन्ति । तथा—धैवतस्वरसम्पन्नास्तु कलहप्रियाः=क्लेशकारका
 भवन्ति तथा—शकुनिकाः=शकुनेन=श्येनेन पर्यटन्ति, शकुनान्=पक्षिणो घ्नन्ति
 वा शकुनिकाः=पक्षिघातका लुब्धकविशेषाः । वागुरिकाः=वागुरा=मृगबन्धिनी,
 तथा चरन्तीति वागुरिकाः=हरिणघातका लुब्धकविशेषाः, सौकरिकाः=सूकरेण-
 सूकरवधार्थं चरन्ति, सूकरान् घ्नन्ति वा सौकरिकाः=सूकरघातका लुब्धक-
 विशेषाः, तथा—मत्स्यबन्धाः=मत्स्यघातिनश्च भवन्तीति । तथा—ये चाण्डालाः
 चाण्डकर्मणः, मौष्टिकः=मुष्टिः प्रहरणं येषां ते तथा, मुष्टिभिः प्रहरणशीला
 इत्यर्थः, सेयाः=अथमजातीया मनुष्याश्च सन्ति, एभ्योऽन्ये च ये पापकर्मणः=
 पापकर्मपरायणाः सन्ति, तथा च ये गोघातकाः सन्ति, ये च चौराः सन्ति, ते
 सर्वे निषादस्वरमाश्रिता विज्ञेयाः इति । एष पाठः स्थानाङ्गानुसारेण व्याख्यातो
 गृहीतश्च ॥सू० १६४॥

હું, એસા જાનનાં ચાહિયે । યહ પાઠ સ્થાનાઙ્ગ કે અનુસાર વ્યાખ્યાત કિયા
 હૈ—ઔર वहीं से लिया है । ॥સૂ० ૧૬૪॥

મસ્તિઓ) તે નિષાદ સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરે છે સ્થાનાંજ પ્રમાણે જ આ પાઠ અહીં
 આખ્યાત કરવામાં આવ્યો છે—અને ત્યાંથી જ લેવામાં આવ્યો છે. ॥સૂ૦૧૬૪॥

धनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १६५ स्वराणां ग्रामान् मूर्च्छनांश्चनिरूपणम् ८०३

अथैषां स्वराणां ग्रामान् एकैकग्रामस्य मूर्च्छनाश्चाह—

मूळम्—एएसिं णं सत्तण्हं सराणं तओ गामा पणत्ता, तं जहा—सज्जगामे मज्झिमगामे गंधारगामे। सज्जगामस्स णं सत्त मुच्छणाओ पणत्ताओ, तं जहा—मंगीकोरव्वीया हरी य, रयणी य सारकंता य। छट्ठी य सारसी नाम, सुद्धसज्जा य सत्तमा॥१॥ मज्झिमगामस्स णं सत्त मुच्छणाओ पणत्ताओ, तं जहा—उत्तर मंदा रयणी, उत्तरा उत्तरा समा। समोकंता य सोवीरा, अभीरु हवइ सत्तमा ॥२॥ गंधारगामस्स णं सत्त मुच्छणाओ पणत्ताओ, तं जहा—नंदी य खुड्डिया पूरिमा य, चउत्थी य सुद्धगंधारा। उत्तरगंधारा वि य, पंचमिया हवइ मुच्छा उ॥३॥ सुद्धत्तर मायामा, सा छट्ठी नियमसो उ णायव्वा। अह उत्तरायया कोडिमा य सा सत्तमी मुच्छा ॥४॥ सू०१६५॥

छाया—एतेषां खलु समानां स्वराणां त्रयो ग्रामा मङ्गलाः, तत्रैवा षड्ग्रामाः मध्यमग्रामः गान्धारग्रामः। षड्ग्रामस्य खलु सप्त मूर्च्छनाः मङ्गलाः,

अथ सूत्रकारेण स्वरो के ग्रामों को और एक एक ग्राम की मूर्च्छनाओं को कहते हैं—“एएसिं णं सत्तण्हं सराणं” इत्यादि।

शब्दार्थ—(एएसिं णं सत्तण्हं सराणं) इन सातस्वरो के (तओ गामा पणत्ता) तीन ग्राम कहे गये हैं। (तं जहा) वे इसप्रकार हैं—(सज्जगामे, मज्झिमगामे गंधारगामे) १ षड्ग्राम, २ मध्यमग्राम, ३ गान्धारग्राम, ४ (सज्जगामस्स णं सत्तमुच्छणाओ पणत्ताओ) षड्ग्राम की सात

इसे सूत्रकार आ स्वरोना ग्रामो अने हरेके हरेके ग्रामनी मूर्च्छनाओ विषे कथन करे छे—“एएसिं णं सत्तण्हं सराणं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(एएसिं णं सत्तण्हं सराणं) आ सात स्वरोना (तओ गामा पणत्ता) त्रयु ग्रामो कहेवाय छे (तं जहा) ते आ ग्रामो छे। (सज्जगामे, मज्झिमगामे गंधारगामे) १ षड्ग्राम, २ मध्यमग्राम, ३ गान्धारग्राम, (सज्जगामस्स णं सत्तमुच्छणाओ पणत्ताओ) षड्ग्राम आभनी सात मूर्च्छनाओ कहे-

एते सप्तस्वराः कुतो भवन्ति ? इत्यादि प्रश्नचतुष्टयपूर्वाणि तदुत्तराणि प्रोच्यन्ते—

મૂળમ્—સત્ત સરા કઓ સંભવંતિ ? ગીયસ્સ કા હવંતિ જોણી ? ।
કઈ સમયા ઉસ્સાસા ? કઈ વા ગીયસ્સ આગારા ? ॥૧॥ સત્ત
સરા નાભીઓ હવંતિ, ગીયં ચ રુહયજોણિયં । પાયસમા ડસાસા,
તિણિય ય ગીયસ્સ આગારા ॥૨॥ આહમિડ આરમંતા સમુવ્વહંતા
ય મઙ્ગારંમિ । અવસાણે તઙ્ગર્વિતો, તિન્નિ ય ગીયસ્સ
આગારા ॥૩॥સૂ૦ ૧૬૬॥

छाया— सप्त स्वराः कुतः संभवन्ति ? गीतस्य का भवन्ति योनयः ? कति
समया उच्छ्वासाः ? कति वा गीतस्य आकाराः ? ॥१॥ सप्तस्वरा नाभितो,
भवन्ति, गीयं च रुदितयोनिकम् । पादसमाउच्छ्वासाः, त्रयश्च गीतस्य आ-

ये सात स्वर कहां से होते हैं इत्यादि जो चार प्रश्न हैं उनका उच्चा-
वन करते हुए सूत्रकार उनका उत्तर देते हैं—

“ सत्तसरा कओ ” इत्यादि ।—

શબ્દાર્થ—(સત્તસરા કઓ સંભવંતિ) પ્રશ્ન—સાત સ્વર ક્યાંથી ઉત્પન્ન
હોતે હે ? (ગીયસ્સ કા હવંતિ જોણી) ગીત કી જાતિયાં કયા હે ? (કઈ
સમયા ઉસ્સાસા ?) ગીત કે ઉચ્છ્વાસ કિતને સમય કે પ્રમાણવાળે હોતે
હે (કતિ વા ગીયસ્સ આગારા) ગીત કે આકાર કિતને હોતે હે ?

ઉત્તર—(સત્તસરાનાભીઓ હવંતિ) સાત સ્વર નાભિ સે ઉત્પન્ન હોતે
હે । (ગીયં ચ રુહયજોણિયં) ગીત રુદિતયોનિક હોતા હે । (પાયસમા ડસાસા)
પાદ સમા ઉચ્છ્વાસ હોતે હે । (ગીયસ્સ તિણિય આગારા) ગીત કે ત્રીન

એ સાત સ્વરો ક્યાંથી પ્રગટ થાય છે વગેરે જે ચાર પ્રશ્નો છે તેમનું
ઉદ્ભાવન કરતાં સૂત્રકાર તેમના જવાબમાં કહે છે કે—

“ સત્તસરા કઓ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સત્તસરા કઓ સંભવંતિ) પ્રશ્ન સાત-સ્વરો ક્યાંથી ઉત્પન્ન થાય
છે ? (ગીયસ્સ કા હવંતિ જોણી) ગીતોના ઉત્પત્તિ સ્થાનો કયા છે ? (કઈસમયા
ઉસ્સાસા ?) ગીતના ઉચ્છ્વાસ કેટલા સમયના પ્રમાણવાળા હોય છે ? (કતિ વા ગીયસ્સ
આગારા) ગીતના આકારો કેટલા હોય છે ?

ઉત્તર—(સત્ત સરા નાભીઓ હવંતિ) સાત સ્વરો નાભિયોથી ઉત્પન્ન થાય
છે. (ગીયં ચ રુહયજોણિયં) ગીત રુદિત યોનિક હોય છે. (પાયસમા ડસાસા)

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १६६ स्वरोत्पत्तिनिरूपणम्

८०७

काराः ॥२॥ आदिमृदुम् भारभमाणाः समुद्रहन्तश्च मध्यकारे । अवसाने क्षपयन्तः,
प्रयोऽपि गीतस्य आकाराः ॥३॥ सू१६६॥

टीका—‘सत्त सरा’ इत्यादि—

एते षड्जादिसप्तस्वराः कुतः संभवन्ति=उत्पद्यन्ते? तथा-गीतस्य का योनयो=जातयो भवन्ति? तथा गीतस्य कति समयाः=कियत्काल-प्रमाणा उच्छ्वासो भवन्ति? तथा-गीतस्य कति वा=कियन्तो वा आकाराः=आकृतयः-स्वरूपाणि भवन्ति? इति चत्वारः प्रश्नाः । उत्तरयति-षड्जादयः सप्त स्वरा नाभितो भवन्ति=जायन्ते । गीतं च रुदितयोनिकम्-रुदितं योनिः समानरूपतया जातिर्यस्य तत्तथाविधं भवति, गीतं रोदनसमानं भवतीत्यर्थः । उच्छ्वासाश्च पादसमा भवन्ति । यावत्ता समयेन वृत्तस्य पादः समाप्यते आकार होते हैं । (आइमिड आरभंता, समुद्रहन्ता य मञ्जुगारमि, अवसाणे तज्ज्वितो तिन्निय गीयस्स आगारा) सर्व प्रथम गीत मृदुध्वनि-वाला होता है । मध्यभाग में वह तेजध्वनिवाला और अन्त में मन्द्र-ध्वनिवाला होता है ।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा “षड्ज आदि सात स्वर कहां से उत्पन्न होते हैं? गीत की जातियां क्या हैं? गीत के उच्छ्वासों के समय का प्रमाण कितने हैं, और गीत किस आकार का होना है?—” इन चार प्रश्नों के उत्तर दिये हैं । इसमें उन्होंने यह प्रकट किया है कि—ये पूर्वोक्त षड्ज आदि सात स्वर नाभिस्थान से उत्पन्न होते हैं । गीत रोने की जाति के जैसा होता है । यहां योनि शब्द का अर्थ जाति है । छन्द का पाद जितने समय में समाप्त होता है उतना ही समय गीत के

पादसम उच्छ्वास होय छे । (गीयस्स तिणिण आगारा) गीतना प्रधु आकार होय छे । (आइमिड आरभंता, समुद्रहन्ता य मञ्जुगारमि अवसाणे तज्ज्वितो तिन्निय गीयस्स आगारा) सर्व प्रथम गीत मृदुध्वनि युक्त होय छे । मध्य-भागमां ते तीमध्वनि युक्त होय छे अने छेवटे मन्द्रध्वनि युक्त होय छे ।

भावार्थ—सूत्रकारे आ सूत्र वडे “षड्ज” वगेरे सात स्वरो कथांथी उत्पन्न थया छे? गीतना उत्पत्ति स्थानो कथा छे? गीतना उच्छ्वासानुं प्रमाण डेटहुं छे? अने गीतना आकार कथं जातना छे? ओ आर प्रश्नोना जवाणो आपवाभां आण्यो छे आभां तेमणे स्पष्ट कथुं छे के पूर्वोक्त षड्ज वगेरे सात स्वरो नाभिस्थानमांथी उत्पन्न थया छे गीतनी जाति रुदन जेवी होय छे, अही योनि शब्दने

તાવત્સમયા ગીતે ઉચ્છ્વાસા મવન્તીત્યયઃ । તથા-ગીતસ્ય આકારાશ્ચ વચો મવન્તિ । તાનેવાદ-પ્રાદિમૃદુઃ આદૌ પ્રારમ્ભે મૃદું ગીતધ્વનિમારભમાણાઃ, મધ્યકારે મધ્યભાગે સમુદ્રહન્તઃ=મહતીં ગીતધ્વનિં કુર્વન્તઃ, ચ=પુનઃ અવસાને=અન્તે ક્ષપ-યન્તઃ=ગીતધ્વનિં મન્દ્રીકુર્વન્તશ્ચ ગાયકા ગીતં ગાયન્તિ । અતો ગાને સ્વરઃ આદૌ મૃદુઃ, મધ્યે તારઃ, અન્તે ચ મન્દ્રો મવતિ । તતશ્ચ મૃદુતારમન્દ્રધ્વનિરૂપાસ્રય આકારા ગીતસ્ય વિજ્ઞેયાઃ ॥ સૂ૦ ॥ ૧૬૬ ॥

સમ્પ્રતિ ગીતે હેયોપાદેયાદિકં પ્રવક્તુમ્પ્રવક્રમતે—

મૂલમ્—છદોસે અટ્ટગુણે, તિણિણ ય વિત્તાઈં દો ય મળિઈંઓ ।
જાણાહિહિ સોગાહિહિ, સુસિલ્લિઓ રંગમજ્ઞાંમિ ॥૧॥ મીયં
દુયં રહસ્સં, ગાયંતો માય ગાહિ ઉત્તાલં । કાકસ્સરમણુણાસં, ચ
હોંતિ ગીયસ્સ છદોસા ॥૨॥ પુપ્પં રત્તં ચ અલંકિયં ચ વત્તં તહા
અવિષુટ્ટં । મહુરં સમં સુલલિયં અટ્ટગુણા હોંતિ ગીયસ્સા ॥૩॥ ઊર-
કંઠસિરપસત્થં, ગિજ્જઈ મઝયરિભિયપદવહ્ણં । સમતાલપહુ-
ક્ખેવં, સત્તસ્સરસીમ્મરં ગીયં ॥૪॥ નિદ્દોસં સારમંતંચ, હેઽઝુત્તમલં-
કિયં । ઉવળીયં સોવયારં ચ, મિયં મહુરમેવ ય ॥૫॥ સમં અદ્ધ-

ઉચ્છ્વાસોં કા હૈ । ગાનેવાલે સબસે પહિલે ગીત કો મૃદુધ્વનિ સે પ્રારંભ કરતે હૈં, ફિર વીચ મેં હસે જોર કી આવાજ સે ગાતે હૈં બાદ મેં અન્ત મેં મન્દ્રધ્વનિ સે હસે સમાપ્ત કરતે હૈં । હસલિયે ગાને મેં સ્વર આદિ મેં મૃદુ, મધ્ય મેં તાર, ઔર અન્ત મેં મંદ હોતા હૈ—અતઃ મૃદુ, તાર, ઔર મન્દ્ર ઇન ત્રીન ધ્વનિરૂપ આકાર ગાને કે જાનને ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૬૬ ॥

અર્થ જાતિ છે. છન્દનો પાઠ (ચરણ) બેટલા સમયમાં સમાપ્ત થાય છે તેટલો જ સમય ગીતના ઉચ્છ્વાસોનો છે ગાયકો સૌ પહેલાં ગીતને મૃદુધ્વનિથી પ્રારંભ કરે છે. પછી મધ્યમાં મોટા સ્વરે તેને ગાય છે ત્યાર પછી અંતે મંદ્રધ્વનિમાં તેને સમાપ્ત કરે છે. એટલા માટે ગાતી વખતે પ્રારંભમાં સ્વર મૃદુ મધ્યમાં સ્વર તાર અને અંતમાં સ્વર મંદ્ર હોય છે એથી મૃદુ, તાર, અને મન્દ્ર આ ત્રણ ધ્વનિ રૂપ આકાર ગીતનો સમજવો બેધિએ. ॥ સૂ૦ ૧૬૬ ॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १६७ गीते हेयोपादेयनिरूपणम्

८०९

समं चेव, सवत्थ विसमं च जं । तिणिण वित्तपयाराइं, चउत्थं
नोवलब्भइ ॥६॥ सकया पायया चेव, दुहा भणिईओ आहिया ।
सरमंडलंमि गिजंते, पसत्था इसिभासिया ॥७॥ केसी गायइ
मधुरं केसी गायइ खरं च रुक्खं च । केसी गायइ चउरं, केसी
य विलंबियं दुतं केसी ? ॥८॥ विस्सरं पुण केरिसी—सामा गायइ
मधुरं, काली गायइ खरं च रुक्खं च । गोरी गायइ चउरं, काणा-
विलम्बं दुतं च अंधा ॥९॥ विस्सरं पुण पिगला, तंतिसमं
तालसमं, पायसमं लयसमं गहसमं च । नीससिऊससियसमं,
संचारसमं सरा सत्त ॥१०॥ सत्तसरा तओ गामा मुच्छणा
एकवीसई । ताणा षगूणपण्णासं, सभ्मत्तं सरमंडलं ॥११॥
से तं सत्तनामे ॥सू० १६७॥

छाया— षड्दोषान् अष्टगुणान् त्रीणि च वृत्तानि द्वेच भणितो । शास्यति
स गास्यति सुशिक्षितो रत्नमध्ये ॥१॥ भीतं द्रुतं ह्रस्वं गायन् मा च गाय उचालम् ।
काकस्वरमनुनासं च भवन्ति गेयस्य षड्दोषाः ॥२॥ पूर्णं रक्तं च अलंकृतं च व्यक्तं
तथा अविघुष्टम् । मधुरं समं सुललितम् अष्टगुणा भवन्ति गेयस्य ॥३॥ हरः
कण्ठशिरः मध्वस्तं च गीयते मृदुक-रिभित-पदबद्धम् । समताल प्रत्युत्क्षेपं सप्त-
स्वरसीमं गीतम् ॥४॥ निर्दोषं सारवच्च, हेतुयुक्तमलंकृतम् । उपनीतं सोपचारं च,
भितं मधुरमेव च ॥५॥ समम् अर्धसमं चैव, सर्वत्र विषमं च यत् । त्रयो वृत्त-
प्रकाराः, चतुर्थः नोपलभ्यते ॥६॥ संस्कृताः प्राकृताश्चैव द्विविधा भणितय आ-
ख्याताः । स्वरमण्डले गीयन्ते प्रशस्ता ऋषिभाषिताः ॥७॥ कीदृशी गायति मधुरं ?
कीदृशी गायति खरं च रुक्षं च ? ॥ कीदृशी गायति चतुरं ? कीदृशी च विलम्बितं
द्रुतं कीदृशी ? ॥८॥ विस्वरं पुनः कीदृशी ? श्यामा गायति मधुरं काली गायति
खरं च रुक्षं च । गोरी गायति चतुरं काणा विलम्बं द्रुतं च अन्धा ॥९॥ विस्वरं
पुनः पिङ्गला । तन्त्रीसमं तालसमं पादसमं लयसमं ग्रहसमं च । निःश्वसितोच्छ्व-
सितसमं संचारसमं स्वराः सप्त ॥१०॥ सप्तस्वराः त्रयो ग्रामा मूर्च्छनाः एकविंशति ।
तानाः एकोनपञ्चाशत्, समाप्तं स्वरमण्डम् ॥११॥ तदेतत् सत्तनाम ॥ सू० १६७॥

अ० १०२

ટીકા—‘છદોસે’ इत्यादि—

गीते हि षड् दोषाः, अष्टगुणाः, त्रीणि वृत्तानि, द्वे भणितौ च भवन्ति ।
 यो जन एतान् यथावद् ज्ञास्यति स एव सुशिक्षितः सन् रङ्गमध्ये=नाट्यशालायां
 मास्यति ॥संप्रति तानाह ‘भीयं’ इत्यादिना । हे गायक ! गीतं गाय च त्वं भीतं=
 भयपूर्वकं च मा गाय=गानं मा कुरु, द्रुतं=त्वरितं च मा गाय, ह्रस्वम्=अल्पस्वरेण
 च मा गाय, ॥३॥ उत्तालम्=उद्गतं=श्रीचित्र्याद्ध्वं मतस्तालो यत्र तत् उत्तालम्=
 अतितालमस्थानतालं चेत्यर्थः, तथा मा गाय । तालस्तु कांस्यादिशब्दो बोध्यः ।

अथ सूत्रकार गीत में हेय और उपादेय आदि को कहते हैं—

“छदोसे अट्टगुणे” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(छदोसे अट्टगुणे तिणिण्य वित्ताइं दो य भणिईओ) छह
 दोषों को, आठगुणों को, तीन वृत्तों को और दो भणितियों को (जाणा-
 हिइ) जो यथावत् जानेगा (सो) वही (सुसिस्त्रिओ) सुशिक्षित-गान
 कला में निपुण हुआ व्यक्ति (रंगमज्झंमि) रंगशाला में (गाहिइ)
 गावेगा—। गीत के छहदोष-इस प्रकार से हैं (भीयं दुयं रहस्सं गायंतो
 मा य गाहि उत्तालं, कागस्सरमणुणासंच हों ति गीयस्स छदोसा) जब
 गायक गाना गाने को तैयार होने लगता है, तब उससे कहा जाता है
 कि—‘हे गायक ! तुम गीत गाओ तो सही-परन्तु भीत-भयभीत होकर
 मत गाना, गाने में उनावली मत करना, अर्थात् जल्दी २ से मत गाना,
 अल्प स्वर से मत गाना-उत्ताल मत गाना-अर्थात् अतिताल होकर

હવે સૂત્રકાર ગીતમાં હેય અને ઉપાદેય વગેરેનું કથન કરે છે—

“છદોસે અટ્ટગુણે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(છદોસે અટ્ટગુણે તિણિણ્ય વિત્તાઈં દો ય ભણિઈઓ) છ દોષોને,
 આઠગુણોને, ત્રણ વૃત્તોને અને બે ભણિતિયોને (જાણાહિઈ) જે સારી રીતે જાણશે
 (સો) તે (સુસિસ્ત્રિઓ) સુશિક્ષિત-ગાનકલામાં નિપુણ થયેલ કલાકાર (રંગમજ્ઞંમિ)
 રંગશાળામાં (ગાહિઈ) ગાશે ગીતમાં છ દોષો આ પ્રમાણે છે. (भीयं दुयं
 रहस्सं गायंतो माय गाहि उत्तालं कागस्सरमणुणासंच होंति गीयस्स छदोसा)
 જ્યારે ગાયક ગાવા માટે પ્રસ્તુત થાય છે ત્યારે તેને કહેવામાં આવે છે કે
 હે ગાયક ! તમે ગીત ગાવો તે બરાબર છે પણ તમે બીતા બીતા ગાશો
 નહિ ગાવામાં ખોટી ઉતાવળ કરશો નહિ એટલે કે જલ્દી જલ્દી ગાશો નહિ,
 અલ્પ સ્વરમાં ગાશો નહિ, ઉત્તાલ (તાલવગર) ગાશો નહિ, એટલે કે અતિતાલ
 થઇને કે અસ્થાનતાલ થઇને ગાશો નહિ. કાગડાના સ્વર જેવા સ્વરથી ગીત

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १६७ गीते हेयोपादेयनिरूपणम्

८११

तथा—काकस्वरम्—काकस्य स्वरइव स्वरो यस्मिन् गीते तत्, श्लक्षणाश्रयस्वरमित्यर्थः, तथा मा गाय । अनुनासम्—सानुनासिकं च मा गाय । यत एते मीतादयः षट् गेयस्य दोषा भवन्तीति । इत्थं दोषानुक्त्वा सम्प्रति गुणानाह—‘पुर्ण’ इत्यादिना । पूर्णम्—यत्र गीते सर्वाः स्वरकलाः गायकैः प्रदर्श्यन्ते तत्र ‘पूर्ण’—नामां गुणो भवति ॥१॥ रक्तम्—गायको गीतरागेण रक्तः=भावितः सन् यद् गीतं गायति तत्र ‘रक्त’ नामा गुणो भवति ॥२॥ अलङ्कृतम्—यत्र गाने गायकोऽन्यान्यस्फुटशुभस्वरविशेषैर्गीतमलङ्करोति तत्र ‘अलङ्कृत’—नामको गुणः ॥३॥ व्यक्तम्—यत्र गाने गायकोऽक्षरान् स्वरांश्च स्फुटतयोच्चारयति तत्र ‘व्यक्त’—नामा गुणः ॥४॥ अविघुष्टम्—विकोशनमिव यद्विस्वरं भवति तद् विघुष्ट—मुच्यते, यत्र विघुष्टं न

या अस्थानताल होकर नहीं गाना, काक के स्वर के समान स्वर वाले होकर गान को मत गाना, सानुनासिक मत गाना । क्योंकि ये भीत आदि छ गान के दोष हैं ।

इस प्रकार दोष को कहकर अब गुणों को सूत्रकार कहते हैं—(पुर्णं रक्तं च अलंकियं च वत्तं तद्वा अविघुष्टं, महुरं समं सुललियं, अट्टगुणा होति गीयस्स) जिस गीत में समस्त स्वरकलाएँ गीतकार गायन कला को दिख लाते हैं, वहां पूर्ण नामका गुण होता है । गायक गीतराग-से भावित होता हुआ जिस गीत को गाता है वहां ‘रक्त’ नामका गुण होता है । जिस गान में गायक अन्य अन्य स्फुटस्वर विशेषों द्वारा गीत को सजाता है, वहां ‘अलंकृत’ नाम का गुण होता है । — जिस गान में गायक अक्षरों एवं स्वरों को स्फुटरूप से उच्चारित करता है, वहां ‘व्यक्त’ नाम का गुण होता है । विकोशन—गुस्से में आये हुए व्यक्ति के स्वर के जैसा अथवा चिछाते हुए व्यक्ति के स्वर के जैसा

गाथो નહિ નાકમાં ગાથો નહિ કેમકે આ બીત વગેરે છ ગીતના દોષો છે. આ પ્રમાણે ગીતના દોષોનું સ્પષ્ટીકરણ કરીને હવે સૂત્રકાર શુભો વિષે કહે છે કે (પુર્ણં રક્તં ચ અલંકિયં ચ વત્તં તદ્વા અવિઘુટ્ટં, મહુરં સમં સુલલિયં અટ્ટ ગુણા-હોતિ ગીયસ્સ) જે ગીતમાં ગીતકાર સમસ્ત ગાયન કળાનું પ્રદર્શન કરે છે તે પૂર્ણ નામે શુભ કહેવાય છે. ગાયક ગીત રાગથી ભાવિત થઈને જે ગીતને ગાય છે, તે રક્ત નામે શુભ કહેવાય છે. જે ગીતમાં ગાયક બીજા વિશેષ સ્ફુટ સ્વરોથી ગીતને અલંકૃત કરે છે. તે અલંકૃત શુભ કહેવાય છે. જે ગીતમાં ગાયક અક્ષરો અને સ્વરોને સ્ફુટ રૂપમાં ઉચ્ચારે છે તે વ્યક્ત નામે શુભ કહેવાય છે. વિકો-શન—ગુસ્સામાં ભરેલી વ્યક્તિની જેમ અથવા તો ઘાંટા પાડતી વ્યક્તિના સ્વરની જેમ જે ગાનારનો સ્વર હોય તે ગાન ‘વિઘુષ્ટ’ કહેવાય છે. જે ગાનમાં વિઘુષ્ટ ન

भवति तत्र 'अविघुष्ट' नामा गुणो बोध्यः॥५॥ मधुरम्-मधुमत्तकोकिलकल काक-
लीवत् यत्र गाने गायकस्य मधुरः स्वरो भवति तत्र 'मधुरस्वर'-नामा गुणः॥६॥
समम्-तालवंशस्वरादिसमनुगतो यत्र स्वरो भवति, तत्र 'सम'-नामको गुणः॥७॥
सुललितम्-स्वरघोलनाप्रकारेण शुद्धातिशयेन शब्दस्पर्शनेन श्रोत्रेन्द्रियस्य सुखो-
त्पादनाद् वा, ललतीव यत् तत् सुललितम्-सुकुमारमित्यर्थः, अयं गेयस्याष्टमो
गुणः॥८॥ एते अष्ट गुणा गीतस्य भवन्ति। एतद्विरहितं गीतं तु गातमेव न
भवति। तत्तु गीताभासं विज्ञेयम्॥ इतोऽन्येऽपि गीतगुणाः सन्ति, तान् प्रदर्शयि-
तुमाह-'उरकंठ' इत्यादि। च=पुनः उरःकण्ठशिरःप्रशस्तम्-उरःकण्ठशिरसां
द्वन्द्वः, ततः प्रशस्तेन सह तृतीयातत्पुरुषः। एवं च-उरः प्रशस्तं कण्ठप्रशस्तं शिरः
प्रशस्तमिति शुद्धमिति पदत्रयं लभ्यते। तत्र-उरसि यदा विशालः स्वरो भवति,

જો ગાન સ્વર વિહીન હોતા હૈ, વહ 'વિઘુષ્ટ' ગાન કહલાતા હૈ! જિસ
ગાન મેં વિઘુષ્ટ નહીં હોતા વહાં, 'અવિઘુષ્ટ' નામ કા યહ ગુણ હોતા હૈ।
વસન્ત મેં મસ કોકિલાકી કલકાકલી કે જૈસા જિસ ગાન મેં ગાયક કા
સ્વર મધુર હોતા હૈ, ઉસ ગાન મેં 'મધુર' સ્વર નામ કા ગુણ હોતા હૈ।
જિસ ગાન મેં તાલ, વંશ-સ્વર આદિ સે સમનુગત સ્વર હોતા હૈ ઉસ
ગાન મેં 'સમ' નામકા ગુણ હોતા હૈ। સ્વર ઘોલના પ્રકાર સે શુદ્ધાતિ-
શય સે અથવા શબ્દસ્પર્શન સે જો શ્રોત્રેન્દ્રિય કો સુખોત્પાદક હોતા હૈ
ઔર હસી કારણ જો વિશેષ પ્રિય લગતા હૈ વહ સુલલિત હૈ-યહ ગાન
કા અષ્ટમગુણ હૈ। હસ પ્રકાર યે ગીત કે ૮ ગુણ હૈં। હન ગુણોં સે રહિત
હુઆ ગીત (ગાન) ગીત હી નહીં કહલાતા હૈ। વહ તો ગીતાભાસ હૈ।
હન ગુણોં સે અન્ય ઔર ખી ગીત કે ગુણ હૈં, જો હસ પ્રકાર સે હૈં (ઉર-
કંઠશિરપસત્થં) ઉર:પ્રશસ્ત કંઠપ્રશસ્ત ઔર શિર:પ્રશસ્ત, ગાન કા

હોય ત્યાં 'અવિઘુષ્ટ' નામક ગુણ કહેવાય છે. વસન્તમાં મત્ત કોયલની કલ-
કાકલીની જેમ જે ગીતમાં ગાયકનો સ્વર મધુર હોય છે, તે ગીતમાં મધુર
સ્વર નામે ગુણ હોય છે જે ગીતમાં તાલ, વંશ, સ્વર વગેરેથી સમનુગત
સ્વર હોય છે તે ગીતમાં 'સમ' નામક ગુણ હોય છે. સ્વરઘોલના પ્રકારથી,
શુદ્ધાતિશયથી અથવા શબ્દ સ્પર્શનથી જે શ્રોત્રેન્દ્રિયને સુખ અર્પે છે અને
એથી જે વિશેષ પ્રિય લાગે છે તે સુલલિત છે આ ગીતનો આક્રમે ગુણ છે
આ પ્રમાણે આ ગીતના આઠ ગુણો છે. આ ગુણોથી હીન ગીત ગીત કહી
શકાય જ નહીં તે તો ગીતાભાસ છે. આ ગુણોની સાથે સાથે બીજા પશુ
કેટલાક ગીતના ગુણો છે તે આ પ્રમાણે છે-(ઉરકંઠશિરપસત્થં) ઉર:પ્રશસ્ત,
કંઠપ્રશસ્ત અને શિર:પ્રશસ્ત ગીતનો વિશાળ સ્વર જ્યારે વક્ત્રસ્થળમાં પૂરિત

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સુત્ર ૧૯૭ ગીતે હેયોપાદેયનિરૂપણમ્

૮૧૩

તદા-ઉરઃપ્રશસ્તં વિજ્ઞેયમ્। યદા ચ કળ્થે સ્વરો વર્તિતોઽતિસ્ફુટિતશ્ચ તદા કળ્થ મશસ્તમ્। યદા ચ શિરસિ પ્રાપ્તઃ સ્વરઃ સ ચેદાનુનાસિક્યરહિતસ્તદા શિરઃપ્રશસ્તમ્। યદ્વા-ઉરઃકળ્થશિરસ્તુ કકરહિતેષુ સન્તુ યન્ પ્રશસ્તં ગીતં ભવતિ તત્-ઉરઃ કળ્થશિરઃપ્રશસ્તમ્। તથા-મૃદુકરિમિતપદવદ્ધમ્-મૃદુના=કોમલેન સ્વરેણ યદ્ ગીયતે તદ્ મૃદુકમ્, યત્ર અક્ષરેષુ ધોલનયા સંચરન્ સ્વરો રજ્જતીવ તદ્ ધોલના-બહુલં રિમિતમ્, પદૈઃ=ગેયપદૈઃ વદ્ધમ્=વિશિષ્ટરચનયા રવિતં-પદવદ્ધમ્। પદત્રયસ્ય કર્મધારયઃ। તથા ચ-સમતાલમત્યુક્ષેપમ્-ત્રાલઃ=દ્વસ્તતાલસમુત્થઃ શબ્દઃ, મત્યુ-

વિશાલસ્વર જય વક્ષઃસ્થલ મેં ભર જાતા હૈ તય વહ ઉરઃપ્રશસ્ત ગાન કહલાતા હૈ, ગાન કા યહ ઉરઃપ્રશસ્ત ગુણ હૈ। ગાન કા સ્વર જય કંઠ મેં ભર જાતા હૈ ઓર વહ અતિસ્ફુટ હોતા હૈ તય વહ કળ્થ પ્રશસ્ત ગાન કહલાતા હૈ। ગાન કા યહ કળ્થપ્રશસ્ત ગુણ હૈ। જય ગાન કા સ્વર શિર મેં જાકર યદિ અનુનાસિક સે વહ રહિત હો જાતા હૈ તય વહ ગાન શિરઃપ્રશસ્ત કહલાતા હૈ। ગાન કા યહ શિરઃ-પ્રશસ્ત ગુણ હૈ। અથવા-રુફ રહિત હોને પર ઉર, કંઠ ઓર શિર યે સય પ્રશસ્ત રહતે હૈં, ડસ સમય ગાયા ગયા ગીત ભી પ્રશસ્ત હોતા હૈ। એસા ગીત ઉરઃ કંઠ શિરઃપ્રશસ્ત કહલાતા હૈ। (મઝયરિમિયપદવદ્ધ) તથા મૃદુક રિમિત ઓર પદવદ્ધ, ભી ગાન કે ૩ ત્રીન ગુણ હૈં-જો ગાન કોમલ સ્વર સે ગાયા જાતા હૈ, 'મૃદુક' ગુણવાલા ગાના હૈ। જહાં અક્ષરોં મેં ધોલના સે સંચાર કરતા હુઆ સ્વર ચલતા રહતા હૈ એસા વહ ધોલના બહુલ ગાન 'રિમિત' ગુણવાલા ગાન કહા જાતા હૈ। જિસ ગાન

યથ્ જય છે ત્યારે તે ઉરઃપ્રશસ્ત ગીત કહેવાય છે. ગીતનો આ ઉરઃપ્રશસ્ત ગુણ છે ગાનનો સ્વર જ્યારે કંઠપ્રદેશમાં ભરાઈ જાય છે અને તે અતિસ્ફુટ હોય છે ત્યારે તે કંઠપ્રશસ્ત ગીત કહેવાય છે ગાન નો આ કંઠપ્રશસ્ત ગુણ છે. જ્યારે ગાનનો સ્વર મસ્તકમાં જઈને તે અનુનાસિક વિનાનો થઈ જાય છે ત્યારે તે ગાન શિરઃપ્રશસ્ત કહેવાય છે ગાનનો આ શિરઃપ્રશસ્ત ગુણ છે. અથવા કહ રહિત હોવા બાદ ઉર, કંઠ, અને શિર આ બધા પ્રશસ્ત રહે છે તે વખતે ગવાયેલ ગીત પણ પ્રશસ્ત હોય છે એવું ગીત ઉરઃ કંઠ, શિરઃપ્રશસ્ત કહેવાય છે. (મઝયરિમિયપદવદ્ધ) તેમજ મૃદુક રિમિત અને પદબદ્ધ આ પ્રમાણે પણ ગીતના ત્રણ ગુણો છે જે ગાન કોમળ સ્વરમાં ગવાય છે તે મૃદુક ગુણ યુક્ત ગાન કહેવાય છે જ્યાં અક્ષરોમાં ધોલનાથી સંચરણ કરતો સ્વર ચાલતો રહે છે એવું તે ધોલન બહુલ ગીત 'રિમિત' ગુણ યુક્ત ગીત કહેવાય છે જે ગીતમાં પદોની રચના વિશિષ્ટ હોય છે, તે 'પદ-

ત્ક્ષેપઃ=મુરજકાંસ્પાદીનાં ગીતોપકારકાણાં ધ્વનિઃ, નર્તકીપદમક્ષેપલક્ષણો વા, સમૌ તાલપ્રત્યુક્ષેપૌ યત્ર તત્ । તથા-સપ્તસ્વરસીમરમ્-સપ્ત સ્વાઃ સીમરન્તિ=અક્ષરા-દિધિઃ સહ સમા યત્ર ભવન્તિ તત્ । एवं विभं यद् गीतं गीयते तदेव सुगीतं भवति । इत्थं च उरःकण्ठ शिरःमशस्तत्वादयोऽपि गीतगुणा बोध्याः 'सप्त-स्वरसીमरम्' इत्युक्तं, तत्र ये सप्त स्वरास्ते क्वचिन् एवमुक्ताः—

“अक्षरसमं पदसमं तालसमं च लयसमं ग्रहसमं ।

नीलसिन्धोसलियसमं સંચારસમં સરા સત્ત ॥

છાયા—અક્ષરસમં પદસમં તાલસમં ચ લયસમં ગ્રહસમમ્ ।

નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિતસમં સચ્ચારસમં સ્વાઃ સપ્ત । ઇતિ ॥

અયમર્થઃ—અક્ષરસમમ્—યત્ર દોર્ધેઽક્ષરે દીર્ઘૌ ગીતસ્વરઃ ક્રિયતે, હ્રસ્વે હ્રસ્વઃ, પ્લુતે પ્લુતઃ, સાનુનાસિકે સાનુનાસિકઃ, તદક્ષરસમમ્ ॥૧॥ પદસમમ્—યત્ પદં=ગીત-

મેં પદોં કી રચના વિશિષ્ટ હોતી હૈ, વહ ‘પદ્યદ્વ’ ગાન હૈ । (સમતાલ-પદુક્ષેવં) જિસ ગાન મેં તાલ-હસ્તતાલ સે ઉત્પન્ન હુઆ શબ્દ ઓર પ્રત્યુક્ષેવ-મૃદંગ કાંસ્થ આદિ કા જો કિ ગીત કે ઉપકારક હોતે હૈ ડકરી ધ્વનિ અથવા નર્તકીજન કા પાદપ્રક્ષેપ યે દોનોં જિસમેં એક સાથ હોતે હૈ વહ સમતાલ પ્રત્યુક્ષેવ ગાન હૈ । યહ ગાન કા ગુણ હૈ । (સપ્ત-સ્વરસીમરં ગીયં) જિસ ગાન મેં સાત સ્વર અક્ષરોં કે સાથ સમાન હોતે હૈં વહ ગાન ‘સપ્તસ્વરસીમર’ કહલાતા હૈ । હસ પ્રકાર કા જો ગાના ગાયા જાતા હૈ વહી સુગીત (ગીત) કહલાતા હૈ । સપ્તસ્વર સીમર મેં જો સાત સ્વર કહે ગયે હૈં, વે કહીં૨ પર હસ પ્રકાર સે કહે ગયે હૈં—અક્ષર-સમ૧, પદસમ૨, તાલસમ૩, લયસમ૪, ગ્રહસમ૫, નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિત-સમ૬, ઓર સંચારસમ ૭, જિસ ગાન મેં દીર્ઘ અક્ષર પર દીર્ઘસ્વર, હ્રસ્વ અક્ષર પર હ્રસ્વ સ્વર પ્લુત અક્ષર પર પ્લુત સ્વર ઓર સાનુનાસિક

બદ્ધ’ ગીત છે. (સમતાલ પદુક્ષેવં) જે ગીતમાં તાલ-હસ્તતાલથી ઉત્પન્ન થયેલ શબ્દ અને પ્રત્યુક્ષેવ-મૃદંગ કાંસ્થ વગેરેના કે જે ગીતના માટે ઉપકારક હોય છે તેમના ધ્વનિ અથવા નર્તકીઓનું પાદપ્રક્ષેપણુ એ બંને જેમાં એકી સાથે હોય છે તે સમતાલ પ્રત્યુક્ષેવ ગીત છે. આ ગીતનો ગુણ છે. (સપ્તસ્વરસીમરં ગીયં) જે ગીતમાં સાતસ્વર અક્ષરોની સાથે સમાન હોય છે તે ગીત ‘સપ્તસ્વર સીમર’ કહેવાય છે. આ પ્રમાણે જે ગીત ગવાય છે તે સુગીત (ગીત) કહેવાય છે. ‘સપ્તસ્વર સીમર’માં જે સાત સ્વરો કહેલા છે તેઓ કોઈક સ્થાને આ પ્રમાણે પણ કહેવામાં આવ્યા છે—૧ અક્ષરસમ, ૨ પદસમ, ૩ તાલસમ, ૪ લયસમ, ૫ ગ્રહસમ, ૬ નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિતસમ, અને ૭ સંચારસમ, જે ગીતમાં દીર્ઘઅક્ષર પર દીર્ઘસ્વર, હ્રસ્વઅક્ષર પર હ્રસ્વ-સ્વર, પ્લુત અક્ષર પર પ્લુતસ્વર અને સાનુનાસિક પર સાનુનાસિક સ્વર

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૭ ગીતે હેયોપાદેયનિરૂપણમ્

૮૧૫

પદમ્ યત્ર સ્વરે અનુપાતિ ભવતિ તત્ત્રૈવ યદા ગીયતે તદા પદસમં ભવતિ॥૨॥
 તાલસમમ્-યત્ પરસ્પરાભિહતહસ્તતાલસ્વાનુસારિણા સ્વરેણ ગીયતે તત્તાલ-
 સમમ્ ॥૩॥ લયસમં શૃંગ-દાર્વાઘન્યતમવસ્તુમયેનાઙ્ગુલીકોશેન સમાહૃતે તન્વંશદૌ
 યસ્તસ્વરપ્રકારઃ સ લયઃ, તમનુસરતા સ્વરેણ યદ્ ગીયતે તદ્લયસમમ્ ॥૪॥
 ગ્રહસમમ્-પ્રથમતો વંશતન્વ્યાદિભિર્યઃ સ્વરો ગૃહીતઃ સ ગ્રહઃ, તત્સમેન સ્વરેણ યદ્
 ગીયતે તદ્ ગ્રહસમમ્ ॥૫॥ નિઃશ્વાસિતોચ્છ્વસિતસમમ્-નિઃશ્વાસિતોચ્છ્વસિતમાન-
 મનતિક્રમતો યદ્ ગેયં તદ્ નિઃશ્વાસિતોચ્છ્વસિતસમમ્ ॥૬॥ સંચારસમમ્-વંશતન્વ્યા-
 દિષ્વેવ અઙ્ગુલીસંચારસમં યદ્ ગીયતે તત્સંચારસમમ્ ॥૭॥ એવમેતે સપ્તસ્વરા ભવન્તિ ।

પર સાનુનાસિક સ્વર હોતા હૈં વહ અક્ષરસમ હૈં । જિસ સ્વર મેં જો
 ગીતપદ અનુપાતી હોતા હૈં, વહ ગીત પદ જબ વહીં પર ગાયા જાતા હૈં
 તથ પદસમસ્વરવાલા ગીત હોતા હૈં । જો ગાના પરસ્પરાભિહત હસ્તતલ
 કે તાલસ્વર કે અનુસારવાલે સ્વર સે ગાયા જાતા હૈં વહ ગાના તાલસમ
 સ્વરવાલા કહલાતા હૈં । શૃંગ અથવા દારુ કાષ્ઠ આદિ કિસી એક વસ્તુ
 કે બને હુણ અંગુલી કોશ સે તંત્રી આદિ કે ષજાને પર જો ધ્વનિ નિક-
 લતી હૈં, ઉસકા નામ લય હૈં । ઉસ લય કા અનુસરણ કરનેવાલે
 સ્વર સે જો ગાના ગાયા જાતા હૈં વહ લયસમસ્વરવાલા ગાના
 કહલાતા હૈં । વંશતંત્રી આદિકોં દ્વારા જો સ્વર પહિલે સે ગૃહીત
 કર લિયા જાતા હૈં ઉસકા નામ ગ્રહ હૈં । હિસ ગ્રહ કે
 સમાન સ્વર સે જો ગીત ગાયા જાતા હૈં વહ ગ્રહસમ સ્વરવાલા
 ગીત કહલાતા હૈં । નિઃશ્વાસ ઉચ્છ્વાસ કે પ્રમાણાનુસાર જો ગાનાગાયા
 જાતા હૈં વહ નિશ્વાસિતોચ્છ્વસિત સમ હૈં । વંશતંત્રી આદિ કોં

હોય છે તે અક્ષરસમ છે. જે સ્વરમાં જે ગીત પદ અનુપાતી હોય છે, તે
 ગીત પદ બ્યારે ત્યાંજ ગાવામાં આવે છે, ત્યારે પદ સમસ્વરવાળું ગીત
 કહેવાય છે. જે ગીત પર સ્વરાભિહત હસ્તતલના તાલસ્વર ને અનુસરતા
 સ્વરથી ગવાય છે. તે ગીત તાલસમ સ્વરવાળું કહેવાય છે શૃંગ અથવા દારુ-કાષ્ઠ
 વગેરે કોઈ પણ એક વસ્તુના બનેલા અંગુલી કોશથી તંત્રી વગેરે વગાડવાથી
 જે ધ્વનિ નીકળે છે તેનું નામ લય છે તે લયને અનુસરનાર સ્વરથી જે
 ગીત ગવાય છે તે લયસમસ્વરવાળું ગીત કહેવાય છે. વંશ તંત્રી વગેરે વડે
 જે સ્વર પહેલાથી જ ગૃહીત કરવામાં આવે છે તેનું નામ ગ્રહ છે. આ ગ્રહના
 સમાન સ્વરથી જે ગીત ગવાય છે તે ગ્રહસમ સ્વર યુક્ત ગીત કહેવાય છે.
 નિઃશ્વાસ ઉચ્છ્વાસના પ્રમાણ યુગ્મ જે ગીત ગવાય છે તે નિઃશ્વાસિતોચ્છ્વ-

અત્રેદં બોધ્યમ્-एकोऽपि गीतस्वरोऽक्षरपदादिभिः सप्तभिः स्थानैः सह समत्वं प्रतिपद्यमानः सप्तधात्वं भजते, अतोऽक्षरसमादयः सप्तस्वरा भवन्तीति। अत्र तु सूत्रोपान्ते ‘तंतिसमं तालसमं’ इति गाथया सप्तस्वरा उच्यन्ते इति बोध्यम्। तथा गीते यः सूत्रबन्धः सोऽष्टगुण एव कर्तव्य इति तानाह-‘निर्दोषं’ इत्यादि। निर्दोषम्=‘अलियमुवघायजणयं’ इत्यादि द्वात्रिंशदोषरहितम् १, सारवत्=विशिष्टार्थयुक्तम् २ हेतुयुक्तम्-गीतानामर्थबोधोऽनायासेन श्रोतॄणां भवत्विति हेतुमुपलक्ष्य यद् रचितं गीतं तत्, प्रासादगुणयुक्तमित्यर्थः ३, अलङ्कृतम्-उपमाद्यन्कङ्कारयुक्तम् ४,

કે ઉપર હી જો અંગુલી કે સંચાર કે સાથ ૨ ગાના ગાયા જાતા હૈ, વહ સંચારસમ હૈ। હસ પ્રકાર યે સાત સ્વર હોતે હૈં। યહાં પર એસા જાનના ચાહિયે કિ-એક હી ગીત સ્વર અક્ષર પદ આદિ સાત સ્થાનોં કે સાથ ઉનકી સમાનતા કો પાતા હુઆ સાત પ્રકાર કા હો જાતા હૈ। હસલિયે અક્ષરસમ આદિ સાત સ્વર હોતે હૈં। યહાં તો સૂત્ર કે ઉપાન્ત મેં “તં-તિસમં, તાલસમં” હસ ગાથા દ્વારા સાતસ્વર કહે ગયે હૈં। તથા ગીત મેં જો સૂત્રબંધ-કિયા જાવે વહ આઠ ગુણવાલા હી કિયા જાના ચાહિયે। આઠ ગુણ હસ પ્રકાર સે હૈં-(નિર્દોષ સારમંતંષ હેઝજુત્તમલંકિયં ઉવ-ળીયં સોવયારંચ મિયં મહુરમેવ ય) નિર્દોષ-અલીક, ઉપધાત જનક હ્યાદિ ૩૨ દોષોં સે રહિત હોનાં હસકા નામ ‘નિર્દોષ’ હૈ। સારવત્-વિશિષ્ટ અર્થ સે યુક્ત હોનાં હસકા નામ ‘સારવાન્’ હૈ। શ્રોતાજનોં કો અનાયાસ હી ગીત કે અર્થ કા બોધ હો જાવે, હસ હેતુ કો ધ્યાન મેં રત્ન કર જો ગીત રચા ગયા હો વહ ‘હેતુયુક્ત’ હૈ। તાત્પર્ય યહ હૈ કિ

સિત સમ છે વંશ તંત્રી વગેરેની ઉપર જ જે આંગળીના સંચારની સાથે સાથે ગવાય છે તે ‘સંચારસમ’ છે. આ પ્રમાણે આ બધા સાત થાય છે. અહીં એમ સમજવું જોઈએ કે દરેક ગીત સ્વર અક્ષર ૫૬ વગેરે સાત સ્થાનોની સાથે સાથે તેમની સમાનતા મેળવતું સાત પ્રકારનું થઈ જાય છે. અહીં સૂત્રના ઉપાન્તમાં “તંતિસમં તાલસમં” આ ગાથા વડે સાત સ્વરો કહેવામાં આવ્યા છે, તેમજ ગીતમાં જે સૂત્રબંધ કરવામાં આવે તે આઠ ગુણ યુક્ત જ હોવો જોઈએ આઠ ગુણો આ પ્રમાણે છે-(નિર્દોષ સારમંતંષ હેઝજુત્તમલંકિયં ઉવળીયં સોવયારંચ મિયં મહુરમેવયં) નિર્દોષ-અલીક, ઉપધાતજનક વગેરે બત્રીશ દોષ રહિત થવું તે નિર્દોષ છે. સારવત્-વિશિષ્ટ અર્થથી યુક્ત હોય તે સારવત્ છે. સાંભળનારાઓને અનાયાસ જ ગીતના અર્થનું જ્ઞાન થાય એ વાતને ધ્યાનમાં રાખીને જે ગીતની રચના કરવામાં આવે છે તે ‘હેતુયુક્ત’ કહેવાય છે મતલબ એ છે કે ગીત પ્રાસાદ ગુણ યુક્ત હોવું જોઈએ

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૭ ગીતે દેયોપાદેયનિરૂપણમ્

૮૧૭

ઉપનીતમ્-ઉપનયનિગમનયુક્તમ્-ઉપસંહારયુક્તમિત્યર્થઃ૫, સોપચારમ્-ક્ષિપ્તવિરુદ્ધ-લજ્જાસ્પદાર્થવાચકં સાનુપ્રાસં વા ગીતમ્૬, મિતમ્-અતિવચનવિસ્તરરહિતં, સંક્ષિપ્તાક્ષરમિત્યર્થઃ૭, તથા-મધુરમ્-માધુર્યગુણસમન્વિતં-સુશ્રવ્યશબ્દાર્થયુક્ત-મિત્યર્થઃ૮, एतादृशं यत् गीतं तदेव गानयोग्यं भवति । अथ यदुक्तं त्रीणि वृत्ता-नीति तान्याह-‘समं’ इत्यादि । यत्र वृत्ते चतुर्ष्वपि चरणेषु समानि अक्षराणि भवन्ति, तद् वृत्तं समम् । यत्र प्रथम तृतीययोर्द्वितीयचतुर्थयोश्च चरणयोः सामान्या-क्षराणि भवन्ति तदर्धसमम् । तथा-यत्र=वृत्ते सर्वत्र=चतुर्ष्वपि चरणेषु अक्षराणां

ગીત કો પ્રાસાદ ગુણ યુક્ત હોના ચાહિયે । ઉપમા આદિ અલંકારોં સે જો ગીત સજા હુઆ હોતા હૈ વહ ગીત ‘અલંકૃત ગુણ વાલા કહલાતા હૈ જો ગીત ઉપસંહાર સે યુક્ત હો જાતા હૈ વહ ઉપનીત ગુણ યુક્ત ગીત માના જાતા હૈ । જો ગીત ક્ષિપ્ત વિરુદ્ધ એવં લજ્જાસ્પદ પદાર્થ કા વાચક નહીં હોતા અથવા અનુપ્રાસ યુક્ત હોતા હૈ વહ ‘સોપચાર’ ગીત કહલાતા હૈ । જિસ ગીત મેં વચનોં કા વિસ્તાર અધિક નહીં હોતા હૈ અર્થાત્ જો ગીત સંક્ષિપ્ત અક્ષરોં વાલા હોતા હૈ, વહ ‘મિત’ ગુણ વાલા ગાન હૈ । જો ગાન સુશ્રાવ્ય શબ્દ ઓર અર્થ વાલા હોતા, હૈ વહ મધુર ગુણ યુક્ત ગાન કહ લાતા હૈ । એસા જો ગાન — હોતા હૈ વહી ગાન યોગ્ય હોતા હૈ । ગીત કી ત્રીન ભણિતિયાંં ઇસ પ્રકાર સે હૈં—(સમં અદ્વસમં ચેવ સન્વયવિસમં ચ યં, તિણિ વિસપચારાહં ચઉત્થં નોવલભ્મહ) જિસ વૃત્ત મેં ચારોં ચરણોં મેં સમાન અક્ષર હોતે હૈં, વહ ‘સમવૃત્ત’ હૈ । જિસ વૃત્ત મેં પ્રથમ તૃતીય પાદોં મેં ઓર દ્વિ-તીય ચતુર્થ પાદોં મેં સમાન અક્ષર હોતે હૈં વહ અર્દ્ધસમવૃત્ત હૈ । તથા

ઉપમા વગેરે અલંકારોથી જે ગીત અલંકૃત હોય છે તે ગીત અલંકૃત ગુણ-વાળું કહેવાય છે. જે ગીત ઉપસંહારથી યુક્ત હોય છે તે ઉપનીત ગુણ યુક્ત ગીત કહેવાય છે જે ગીત ક્ષિપ્ત, વિરુદ્ધ, અને લજ્જાસ્પદ પદાર્થ વાચક ન હોય અને અનુપ્રાસ યુક્ત હોય છે તે ‘સોપચાર’ ગીત કહેવાય છે. જે ગીતમાં વચનવિસ્તાર વધારે ન હોય એટલે કે જે ગીત સંક્ષિપ્ત અક્ષરો યુક્ત હોય છે, તે ‘મિત’ ગુણયુક્ત ગીત છે. જે ગીત સુશ્રાવ્ય શબ્દ અને અર્થવાળું હોય છે તે મધુર ગુણ યુક્ત ગીત કહેવાય છે. એવું જે ગીત હોય છે તેજ ગીત ગાવાલાયક હોય છે ગીતની ત્રણ બહિતીઓ આ પ્રમાણે છે—(સમં અદ્વસમં ચેવ સન્વય વિસમં ચ યં, તિણિ વિસપચારાહં ચઉત્થં નોવલભ્મહ) જે વૃત્તમાં ચારે ચરણોમાં સમ અક્ષરો હોય છે તે ‘સમવૃત્ત’ છે જે વૃત્તમાં પ્રથમ-તૃતીય પાદમાં અને દ્વિતીય ચતુર્થ પાદોમાં સમાન અક્ષર હોય છે તે

વૈષમ્યં તદ્વૃત્તં વિષમમ્ । એ તે ત્રય એવ વૃત્તપ્રકાર મળે છે, ચતુર્થ વૃત્તં તુ નોપલભ્યતે ।
 તથા-મણિતયઃ=ભાષાઃ સંસ્કૃતાઃ પ્રાકૃતાશ્ચ દ્વિવિધા દ્વિપ્રકારકા એવ આશ્રયતાઃ=
 ઉક્તાઃ । એતા ઋષિમાણિતા અતએવ પ્રશસ્તા ભાષા બોધ્યાઃ । અત એવ એતાઃ
 સ્વરમણ્ડલે=વજ્રાદિ સ્વરસમૂહે ગીયન્તે ॥ અત્ર ગીતવિચારઃ પ્રસ્તુતઃ, અતઃ
 ‘કીદશી સ્ત્રી કથં ગાયતિ?’ ઇતિ પૃચ્છતિ-‘કેસી ગાયઈ’ ઇત્યાદિના-કીદશી
 સ્ત્રી મધુર=મધુરસ્વરેણ ગાયતિ? ચ=પુનઃ કીદશી સ્ત્રી સ્વરં=સ્વરસ્વરેણ રુક્ષં=
 રુક્ષસ્વરેણ ચ ગાયતિ? કીદશી સ્ત્રી ચતુરં=ચાતુર્થેણ-ગીતશાસ્ત્રોક્તયથાવિધિ
 જિસ વૃત્ત મેં ચારોં હી પાદોં મેં અક્ષરોં કી વિષમતા રહતી હૈ, વહ
 ‘વિષમવૃત્ત’ હૈ । યે ત્રીન વૃત્તોં કે પ્રકાર હૈં ઓર ચતુર્થ પ્રકાર વૃત્ત કા
 કોઈ નહીં હૈ । (સકકયા પાપયા ચેવ દુહા મળિઈઓ આહિયા । સરમંડ-
 લંમિ ગિજ્જંતે પસસ્થા ઇસિમાસિયા) તથા-મણિતિ-ભાષા-સંસ્કૃત
 ઓર પ્રાકૃત કે ભેદ સે દો પ્રકાર કી હી કહી ગઈ હૈ । યે ઋષિજનોં દ્વારા
 માણિત હુઈ હૈં, ઇસલિયે ઇન્હેં પ્રશસ્ત ભાષા જાનના ચાહિયે । પ્રશસ્ત
 ભાષા હોને કે કારણ હી યે દોનોં પ્રકાર કી ભાષાઈં વજ્રજ આદિ સ્વર
 સમૂહ મેં ગાઈ જાતી હૈં । યહાં પર ગીત કા વિચાર ચલ રહા હૈ ઇસલિયે
 પૂછા જા રહા હૈ કિ-કેસી સ્ત્રી કિસ પ્રકાર સે ગાતી હૈ? ઇસી વાત કો
 સૂત્રકાર-અવ પ્રકટ કર રહેં હૈં-(કેસી ગાયઈ મધુર) કેસી સ્ત્રી ગીત કો
 મધુર સ્વર સે ગાતી હૈ? (કેસી ગાયઈ સ્વરં ચ રુક્ષં ચ) કેસી સ્ત્રી ગીત
 કો સ્વર સ્વર સે ગાતી હૈ? કેસી સ્ત્રી ગીત કો રુક્ષસ્વર સે ગાતી હૈ?
 (કેસી ગાયઈ ચતુરં? કેસી ય વિલંબિયં દુતં કેસી?) કેસી સ્ત્રી ચતુરાઈ

‘અર્ધ-સમવૃત્ત’ છે તેમજ એ વૃત્તમાં ચારેયાર ચરણોમાં અક્ષરોની વિષ-
 મતા રહે છે તે ‘વિષમવૃત્ત’ છે આ ત્રણે વૃત્તોના પ્રકાર છે એ શિવાય
 વૃત્તનો ચોથો પ્રકાર નથી. (સકકયા પાપયા ચેવ દુહા મળિઈઓ આહિયા ।
 સરમંડલમિ ગિજ્જંતે પસસ્થા ઇસિમાસિયા) તેમજ મણિતિ-ભાષા-સંસ્કૃત
 અને પ્રાકૃતના ભેદથી એ પ્રકારની કહેવામાં આવી છે એ ઋષિઓ વડે
 માણિત થયેલી છે એથી તેને પ્રશસ્ત ભાષા બોલુવી નોઈએ એ પ્રશસ્ત
 ભાષા હોવા બદલજ આ બંને જાતની ભાષાઓ વજ્રજ વગેરે સ્વર સમૂહોમાં
 ગવાય છે અહીં ગીત સંબંધી પ્રકરણ ચાલી રહ્યું છે એથી આ પ્રમાણે
 પૂછવામાં આવી રહ્યું છે કે કઈ સ્ત્રી કેવી રીતે ગાય છે? એજ વાતને સૂત્ર-
 કાર હવે પ્રકટ કરે છે. (કેસી ગાયઈ મધુર) કેવી સ્ત્રી મધુર સ્વરે ગીત ગાય
 છે? (કેસી ગાયઈ સ્વરં ચ રુક્ષં ચ) કઈ સ્ત્રી ગીતને ખર સ્વરથી ગાય છે?
 કઈ સ્ત્રી રુક્ષસ્વરથી ગીત ગાય છે? (કેસી ગાયઈ ચતુરં? કેસી વિલંબિયં

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૭ ગીતે હેયોપાદેયનિરૂપણમ્

૮૧૯

સ્વરવિધાનેન ગાયતિ ? કીદશી ચ સ્ત્રી વિલમ્બિતં=મન્યર (મન્દ) સ્વરેણ ગાયતિ ? કીદશી સ્ત્રી દ્રુતં=દ્રુતસ્વરેણ ગાયતિ ? તથા-કીદશી ચ સ્ત્રી વિસ્વરં=વિકૃતં સ્વરં કૃત્વા ગાયતિ ? ઉત્તરયતિ-‘સામા’ ઇત્યાદિના । વ્યાખ્યા સ્પષ્ટા । નવરં-પિંગ્લા-કપિલા । ‘સપ્તસીમરમ્’ ઇતિ યદુક્તમ્, તન્ન સપ્ત સ્વરાઃ કે ? ઇતિ દર્શયતિ-‘તંત્રીસમં’ ઇત્યાદિ-તન્ત્રીસમમ્-તન્ત્રી-ત્રીણા, તસ્યાઃ શબ્દેન સમં=તુલ્યં મિલિતં

સે અર્થાત્ ગીત શાસ્ત્ર મેં કથિત વિધિ કે અનુસાર સ્વરવિધાન સે ગાત્રી હૈ ? કેસી સ્ત્રી વિલમ્બિત-મન્યર સ્વર-સે ગાતી હૈ ? કેસી સ્ત્રી દ્રુતસ્વર સે ગાતી હૈ ? (વિસ્સરં પુણ કેરિસી) ઓર કેસી સ્ત્રી વિકૃત સ્વર સે ગાતી હૈ અર્થાત્ સ્વર કો વિકૃત કર ગાતી હૈ ?

ઉત્તર-(સામા ગાયહ મહુરં) રથામા-પોડશવાર્ષિકી-સ્ત્રી મધુર-સ્વર સે ગાતી હૈ (કાલી ગાયહ સ્વરં ચ રુક્ષંચ) કાલી કૃષ્ણરૂપ-વાલી સ્ત્રી ગીત કો સ્વર સે ઓર રુક્ષ સ્વર સે ગાતી હૈ । (ગોરી ગાયહ ચડરં) ગૌરવર્ણસંપન્ના સ્ત્રી ગીત કો ચતુરાઈ સે ગાતી હૈ । (કાળા વિલમ્બં દ્રુતંચ અંધા) કાળી સ્ત્રી-एकाक्षी નારી ગીત કો મંદ સ્વર સે ગાતી હૈ । અંધી સ્ત્રી ગીત કો દ્રુતસ્વર સે ગાતી હૈ । (વિસ્સરં પુણ પિંગલા) ઓર જો કપિલા-કપિલ વર્ણ વાલી સ્ત્રી હોતી હૈ વહ ગીત કો વિકૃત સ્વર સે ગાતી હૈ । (તંત્રીસમં, તાલસમં, પાયસમં, લયસમં, ગહસમં ચ નીસસિઝસ-સિયસમં સંચારસમં સરા સત્ત) તંત્રીસમ-તંત્રી-ત્રીણા કે સમાન

દ્રુતં કેસી ?) કઈ સ્ત્રી ચતુરતાથી એટલે કે ગીતશાસ્ત્રમાં કથિત વિધિ મુજબ સ્વરવિધાનથી ગાય છે ? કઈ સ્ત્રી વિલમ્બિત-મન્યર-સ્વરથી ગીત ગાય છે ? કઈ સ્ત્રી દ્રુતતર સ્વરથી ગીત ગાય છે ? (વિસ્સરં પુણ કેરિસી) અને કઈ સ્ત્રી વિકૃત સ્વરથી ગીત ગાય છે એટલે કે સ્વરને વિકૃત કરીને ગાય છે ?

ઉત્તર-(સામા ગાયહ મહુરં) રથામા-પોડશ વાર્ષિકી એટલે કે સોળ વર્ષની સ્ત્રી મધુર સ્વરથી ગીત ગાય છે. (કાલી ગાયહ સ્વરં ચ રુક્ષંચ) કાળી કૃષ્ણ રૂપવાળી-કાળારંગની-સ્ત્રી ખર અને રુક્ષ સ્વરથી ગાય છે. (ગોરી ગાયહ ચડરં) ગૌરવર્ણ સંપન્ના એટલે કે ગોરી સ્ત્રી ચતુરાઈથી ગીત ગાય છે. (કાળા વિલમ્બં દ્રુતં ચ અંધા) કાળી સ્ત્રી-એક આંખવાળી-સ્ત્રી મંદ સ્વરથી ગીત ગાય છે આંખળી સ્ત્રી દ્રુતસ્વરથી-ઉતાવળથી-ગીત ગાય છે. (વિસ્સરં પુણ પિંગલા) અને જે કપિલા કપિલવર્ણવાળી સ્ત્રી હોય છે તે વિકૃત સ્વરથી ગીત ગાય છે. (તંત્રીસમં તાલસમં, પાયસમં, લયસમં ગહસમં ચ નીસસિઝસિયસમં સંચારસમં સરા સત્ત)-તંત્રી સમ-તંત્રી ત્રીણા-ના શબ્દ જેવો અથવા તેના સ્વરની

વા ગેયમ્ । એવમગ્રેઽપિ ગેયમિતિ સંવન્ધનીયમ્ । ‘તાલસમમ્’ ઇત્યારમ્ય સંચાર-સમમ્’ ઇત્યન્તં પદષટ્કં પૂર્વે વ્યાખ્યાતમ્ । ગેયસ્વરયોરનર્થાન્તરત્વાદાહ-‘સત્ત સરા’ ઇતિ । ઇત્યં સ્વરા બોધ્યા ઇતિ ભાવઃ । સમ્પ્રતિ સમસ્તં સ્વરમંડલં સંક્ષેપેનાહ-ષડ્જાદયઃ સપ્ત સ્વરા વિજ્ઞેયાઃ, ગ્રામાશ્ચ ત્રયઃ, મૂર્છનાશ્ચ એકવિંશતિઃ તતા, તંત્રી, તાન ઇતિ પર્યાયાઃ મળ્યન્તે, તત્ર ષડ્જાદિષુ સ્વરેષુ પ્રત્યેકં સપ્તમિસ્તાનૈર્વીયતે ઇત્યતઃ સપ્ત તન્ત્રિકાયાં વીણાયામેકોનપશ્ચાન્નતાના ભવન્તિ । એવમેવ એકતન્ત્રિકાયાં ત્રિતન્ત્રિકાયાં વા વીણાયાં કળ્થેનાપિ વા ગીયમાના એકોનપશ્ચાન્ન-

અથવા ઉસકે સાથ મિલા હુઆ જો સ્વર આતા હૈ , વહ તંત્રી સમસ્વર હૈ । હસી પ્રકાર સે તાલ સમ આદિ કે સાથ બી ‘ગેય’ હસકા સંબંધ કર લેના ચાહિયે । ગેય ઓર સ્વર મેં અર્થ ભેદ નહીં હૈ । હસલિયે ગેય સે યહાં સ્વર લેના ચાહિયે । હસ પ્રકાર યે સાત સ્વર હૈં । તાલસમ સે છેકર સંચારસમ તક કે ૬ પદોં કી વ્યાખ્યા પહિલે કરદી ગઈ હૈ । (સત્તસરા તઓ ગામા મુચ્છળા એકવીસઈ, તાળા ઇગૂળપળ્ણાસં સમ્મત્તં સરમંડલં) હસ પ્રકાર સંક્ષેપસે સમસ્તસ્વર મંડલ સાતસ્વર, ત્રીન ગ્રામ હવકીસ મૂર્છના ઓર ૪૯ તાન હસ પ્રકાર સે હૈં । તતા, તંત્રી, તાન, યે સઘ પર્યાયવાચી-શબ્દ હૈં । ષડ્જ આદિ સાત સ્વરોં મેં સે પ્રત્યેક સ્વર સાત તાનોં સે ગાયા જાતા હૈ । હસલિયે સસ તંત્રિકા વાલી વીણા મેં ૪૯ તાનેં હોતી હૈં । હસી પ્રકાર એક તંત્રિકા વાલી અથવા ત્રિતંત્રિકાવાલી વીણા મેં કંઠ સે બી ગાઈ ગઈ તાનેં ૪૯ હી હોતી હૈં । હસ પ્રકાર સાત-

સાથે મિશ્રિત થયેલો જે સ્વર છે તે ‘તંત્રીસમ સ્વર’ છે આ પ્રમાણે તાલ-સમ વગેરે માટે પણ ‘ગેય’ શબ્દનો સંબંધ સમજવો જોઈએ ગેય અને સ્વરમાં અર્થ-ભેદ નથી એટલા માટે ગેયથી અહીં સ્વર લેવો જોઈએ આ પ્રમાણે સ્વરો સાત છે ‘તાલ સમ’થી લઈને ‘સંચાર સમ’ સુધીના છ પદોની વ્યાખ્યા પહેલા કરવામાં આવી છે. (સત્તસરા તઓ ગામા મુચ્છળા એક-વીસઈ, તાળા ઇગૂળપળ્ણાસં સમ્મત્તં સરમંડલં) આ પ્રમાણે ટૂંકમાં સમસ્ત સ્વર-મંડળ-સાતસ્વર, ત્રણગ્રામ, એકવીસ મૂર્છના અને ૪૯ તાન-આ પ્રમાણે છે તતા-તંત્રી, તાન, આ બધા પર્યાયવાચી શબ્દો છે ષડ્જ વગેરે સાત સ્વરોમાંથી દરેકે દરેક સાત તાનોથી ગવાય છે. એથી સસ તંત્રિકા યુક્ત વીણામાં ૪૯ તાનો હોય છે આમ એક તંત્રિકા યુક્ત વીણા અથવા ત્રિતંત્રિકા-વાળી વીણામાં ૪૯થી ગવાયેલ તાનો પણ ૪૯ હોય છે આ પ્રમાણે સાત

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૮ અષ્ટનામનિરૂપણમ્

૮૨૧

દેવ તાના ભવન્તિ । इत्थं षड्जादिभिः सप्तभिर्नामभिः सर्वस्यापि स्वरमण्डलस्य ग्रहणादिदं सप्तनामेत्युच्यते । इदमेवोपसंहरन्नाह—‘तदेतत् सप्तनामे’ति॥सू. ૧૬૭॥

અથાષ્ટનામ નિરૂપયિતુમાહ—

મૂળમ્—સે કિં તં અટ્ટનામે ? અટ્ટનામે અટ્ટવિહા વચણવિભક્તી પળણત્તા, તં જહા—નિદ્દેસે પઢમા હોઈ, વિહયા ઉવણસણે । તહયા કરણમ્મિ કયા, ચઉત્થી સંપયાવણે॥૧॥ પંચમી ય અવાયાણે, છટ્ટી સસ્સામિવાયણે । સત્તમી સણિહાણત્થે, અટ્ટમાઽઽમંતણી ભવે॥૨॥ તત્થ પઢમા વિભક્તી, નિદ્દેસે સો ઇમો અહં વત્તિ । વિહયા પુણ ઉવણસે ભણ કુણસુ ઇમં વ તંવત્તિ॥૩॥ તહયા કરણમ્મિ કયા, મણિયં ચ કયં ચ તેણ વ મણ વા । હંદિ ણમો સાહાણ, હવઈ ચઉત્થી પયાણમ્મિ॥૪॥ અવણય મિણહય ષ્તો, ઇઉત્તિ વા પંચમી અવાયાણે । છટ્ટી તસ્સ ઇમસ્સ વ ગયસ્સ વા સામિસંબંધે॥૫॥ હવઈ પુણ સત્તમી તં, ઇમંમિ આહારકાલ-ભાવે ય । આમંતણે ભવે અટ્ટમી ઉ જહા હે જુવાણત્તિ॥૬॥ સે તં અટ્ટનામે ॥સૂ. ૧૬૮॥

છાયા—અથ કિં તત્ અષ્ટનામ ? અષ્ટનામ—અષ્ટવિધાઃ વચનવિમ્ભકતયઃ પ્રવ્રપ્તાઃ, તથા—નિર્દેશે પ્રથમા ભવતિ, દ્વિતીયા ઉપદેશને । તૃતીયા કરણે કૃતા, ચતુર્થી નામો સે સમસ્ત મી સ્વરમંડલ કા ગ્રહણ હો જાતા હૈ । ઇસલિયે યહ સસનામ એસા કહા જાતા હૈ । (સેસં સસનામે) ઇસ પ્રકાર સે યહ સસનામ હૈ । ॥સૂ. ૧૬૭ ॥

અથ સૂત્રકાર અષ્ટ નામ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સે કિં તં અટ્ટનામે” ઇત્યાદિ ।

નામોથી આખા સ્વરમંડળનું અહણુ સમજવું જોઈએ એથી ‘સસનામ’ આમ કહેવાય છે. (સે તં સત્તનામે) આ પ્રમાણે આ સસનામો છે. ॥સૂ. ૧૬૭॥

હવે સૂત્રકાર અષ્ટ નામનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં અટ્ટનામે” ઇત્યાદિ—

૨૨૨

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

સંપ્રદાપને ॥૧॥ પશ્ચમી ચ અપાદાને, ષષ્ઠી સ્વસ્વામિવાચને । સપ્તમી સન્નિધાનાર્થે, અષ્ટમી આમન્ત્રણી ભવેત્ ॥૨॥ તત્ર પ્રથમાવિભક્તિઃ, નિર્દેશે સઃ અયમ્ અહં વા ઇતિ । દ્વિતીયા પુનરુપદેશે મળ કુરુ ઇદમ્ વા તત્ વા ઇતિ ॥૩॥ તૃતીયા કરણે કૃતા

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં અદ્વનામે) હે ભદ્રન્ત ! વહ અષ્ટ નામ કયા હૈ ? (અદ્વ વિહા વચનવિભક્તી પળ્લતા)

ઉત્તર-આઠ પ્રકાર કી જો વચનવિભક્તિ હૈ વહ અષ્ટ નામ હૈ । જો કહે જાતે હૈ, વે ‘વચન’ હૈ । તથા કર્તા, કર્મ આદિરૂપ અર્થ જિસકે દ્વારા પ્રકટ કિયા જાતા હૈ વહ ‘વિભક્તિ’ હૈ । વચનો-પદો, કી જો વિભક્તિ હૈ વહ ‘વચનવિભક્તિ’ હૈ । એસા તીર્થંકર એવં ગણધરો ને કહા હૈ । વચનવિભક્તિ સે યહાં પર સુબન્ત રૂપ પ્રથમા આદિ વિભક્તિયો કો કહનેવાલી વચનવિભક્તિ ગૃહીત હુઈ હૈ । તિજ્જન્તરૂપ આજ્યાત વિભક્તિ નહીં । (તંજહા) વચનવિભક્તિ કે આઠ પ્રકાર યે હૈ-(નિહેસે પદમા હોઈ) પ્રાતિપદિક અર્થમાત્ર કા પ્રતિપાદન કરના ઇસકા નામ નિર્દેશ હૈ । ઇસ નિર્દેશ મેં “સુ ઔ, જસૂ” યહ પ્રથમા વિભક્તિ હોતી હૈ । (ઉવપ્સણે બિહ્યા) કિસી એક ક્રિયા મેં પ્રવર્તન હોને કે લિયે ઇચ્છા કે ઉત્પાદન કરને મેં “અમ્ ઔદ્ર શસૂ” યહ દ્વિતીયા વિભક્તિ હોતી હૈ । “ઉવપ્સણ” યહ પદ ઉપલક્ષણ હૈ । ઇસસે “ગ્રામં ગચ્છતિ” ઇત્યાદિ પદ મેં ઇસકે વિના બી દ્વિતીયા વિભક્તિ હોતી હૈ । (કરણમ્મિ

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં અદ્વનામે) હે ભદ્રન્ત ! આ અષ્ટનામ શુ છે ? (અદ્વ વિહા વચનવિભક્તી પળ્લતા.)

ઉત્તર-આઠ પ્રકારની જે વચન વિભક્તિ છે તે અષ્ટનામ છે. જે કહેવામાં આવે છે, તે ‘વચન’ છે તેમજ કર્તા, કર્મ વગેરે રૂપ અર્થ જેના વડે પ્રકટ કરવામાં આવે છે તે ‘વિભક્તિ’ છે. વચનો-પદોની જે વિભક્તિ છે તે વચન-વિભક્તિ છે. આમ તીર્થંકરોએ અને ગણધરોએ કહ્યું છે વચનવિભક્તિથી અહીં સુબન્ત રૂપ પ્રથમા વિભક્તિઓને પ્રકટ કરનારી વચન વિભક્તિ ગૃહીત થયેલી છે તિજ્જન્ત રૂપ આજ્યાત વિભક્તિ નથી (તંજહા) વચન વિભક્તિના આઠ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે. (નિહેસે પદમા હોઈ) પ્રાતિપદિક અર્થ માત્રનું પ્રતિપાદન કરવું તેનું નામ નિર્દેશ છે. આ નિર્દેશમાં ‘સુ ઔ જસૂ’ આ પ્રથમા વિભક્તિ હોય છે. (ઉવપ્સણે બિહ્યા) કોઈ એક ક્રિયામાં પ્રવર્તિત થવા માટે ઇચ્છા ઉત્પન્ન કરવામાં ‘અમ્, ઔદ્ર શસૂ’ આ દ્વિતીયા વિભક્તિ હોય છે. “ઉવપ્સણ” આ પદ ઉપલક્ષણ છે એનાથી “ગ્રામં ગચ્છતિ” વગેરે પદોમાં

મણિતં ચ કૃતં ચ તેન વા મયા વા । હન્દિ નમઃ સ્વાહાયૈ મવતિ ચતુર્થીપદાને॥૪॥
અપનય ગૃહાણ ચ અસ્માત્ રતઃ રતિ વા પશ્ચમી અપાદાને । ષષ્ઠી તસ્ય અસ્ય વ
ગતસ્ય વા સ્વામિસમ્બન્ધે॥૫॥ મવતિ પુનઃ સપ્તમી સા અસ્મિન્ આધારકાલમાવે
ચ । આમન્ત્રણે મવેત્ અષ્ટમી તુ યથા હે યુવન્ રતિ॥૬॥ તદેતદ્ અષ્ટનામ્॥સૂ.૧૬૮॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ રૂપ્યાદિ—

અથ કિં તત્ અષ્ટનામ ? રૂપિય મન્નઃ । ઉત્તરયતિ—અષ્ટનામ—અષ્ટવિધં
નામ—અષ્ટનામ, તથાહિ—અષ્ટવિધા=અષ્ટપ્રકારા વચનવિભક્તિઃ—ઉચ્યન્તે રૂપિ-
વચનાનિ=પદાનિ, વિમજ્યન્તે=પ્રકટીક્રિયન્તે કર્તુકર્માદિરૂપોડયોડનયેતિ વિભક્તિઃ,
વચનાનાં વિભક્તિઃ—વચનવિભક્તિઃ મજ્જતા=કથિતા તીર્થકરગણધરૈઃ । વચનવિમ-

તરૂપા કયા) કરણ મેં “ઠા, ધ્યામ્ મિસ્” યહ તૃતીયા વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય
(સંપયાવળે ચતુર્થી) સંપદાન મેં ચતુર્થી રૂપિય, ધ્યામ્ ધ્યામ્—યહ વિભક્તિ
રૂપિય રૂપિય । (અવાયાળે પંચમીચ) અપાદાન મેં ઠસિ ધ્યામ્, ધ્યામ્, “યહ
પંચમી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । (સસ્વામિવાયળે છટ્ટી) સ્વ સ્વામી સંબંધ
પ્રતિપાદન કરને મેં “ઠસ્ ઓસ્ આમ્” યહ ષષ્ઠી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય ।
(સણિગ્રહાણત્યે સસમી) સન્નિધાન અર્થ મેં “ઠિ ઓસ્ સુપ્” યહ
સસમી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । (આમંત્રણી અટ્ટમા મવે) સન્મુખ કરને કે
અર્થ મેં સંબોધનરૂપ આઠવી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । તાત્પર્ય કહને કા યહ રૂપિય
કિ—‘યહાં પર સૂત્રકાર ને અષ્ટ નામ કયા રૂપિય ? યહ કહા રૂપિય । નામ કે
વિચાર કા પ્રસ્તાવ રૂપિય રૂપિય સે પ્રથમાદિ વિભક્ત્યન્ત નામ કા રૂપિય
ગ્રહણ કિયા ગયા રૂપિય રૂપિય । યહ નામ વિભક્તિ કે રૂપિય રૂપિય સે આઠ

એના વગર પશુ દ્વિતીયા વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । (કરણમ્મિ તરૂપા કયા) કરણમાં
“ઠા, ધ્યામ્, મિસ્” આ તૃતીયા વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । (સંપયાવળે ચતુર્થી)
સંપદાનમાં ચતુર્થી “રૂપિય, ધ્યામ્, ધ્યામ્” આ વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । (અવાયાળે
પંચમી ચ) અપાદાનમાં “ઠસિ, ધ્યામ્, ધ્યામ્,” આ પાંચમી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય ।
(સસ્વામિવાયળે છટ્ટી) સ્વ સ્વામી સંબંધ પ્રતિપાદન કરવામાં ‘ઠસ્ ઓસ્
આમ્’ આ ષષ્ઠી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । (સણિગ્રહાણત્યે સસમી) સન્નિધાન અર્થમાં
‘ઠિ ઓસ્, સુપ્’ આ સસમી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । (આમંત્રણી અટ્ટમા મવે)
અભિમુખ કરવાના અર્થમાં સંબોધન રૂપ આઠવી વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય । મતલબ
આ રૂપિય રૂપિય ‘અહીં’ સૂત્રકારે અષ્ટનામ એટલે શું ? આ રૂપિય રૂપિય નામવિચાર
વિષે જ પ્રસ્તાવ રૂપિય રૂપિય પ્રથમા વગેરે વિભક્ત્યન્ત નામનું જ અર્થ કર-
વામાં આવ્યું રૂપિય રૂપિય આ નામ વિભક્તિ રૂપિય રૂપિય આઠ પ્રકારના રૂપિય રૂપિય । પ્રથમા

ક્તિસ્તુ નામવિભક્તિઃ સુવન્તરૂપા પ્રથમાદિકા बोध्या, न तु तिङन्तरूपा-आख्यात-
विभक्तिः। अष्टप्रकारां वचनविभक्तिमेवाह-तद्यथा-निर्देशे-प्रातिपदिकार्थमात्रस्य
प्रतिपादनं निर्देशस्तस्मिन् 'सु औ जस्' इति प्रथमा विभक्तिर्भवति। उपदेशने-
अन्यतरक्रियायां प्रवर्त्तनेच्छोत्पादने 'अम् औट् शस्' इति द्वितीया विभक्ति
भवति। उपदेशनमित्युपलक्षणम्, तेन ग्रामं गच्छतीत्यादौ तदन्तरेणापि भवति।
करणे 'टा भ्यां भिस्' इति तृतीया विभक्ति भवति। अत्र करण शब्दस्तन्त्रेण
निर्दिष्टः। तेनात्र कर्तरि=क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितेऽर्थे देवदत्तादौ करणे=
क्रियासिद्धौ प्रकृष्टोपकारके च तृतीयाविभक्ति भवति। करोतीति करणः, 'कृत्य-
ल्युटो बहुल' मिति बाहुलकात् कर्तरि ल्युट्। क्रियतेऽनेनेति करणम्, करणे

પ્રકાર કા હોતા હૈ । પ્રથમા વિભક્તિ દ્વિતીયા વિભક્તિ આદિ
કે ભેદ સે વિભક્તિયાં આઠ હૈ । इनमें प्रातिपादिकार्थ मात्र के प्रतिपादन
में प्रथमा विभक्ति होती है । संस्कृत में कारक विभक्तियों को प्रकट
करने के लिये सु औ जस् आदि २१ विभक्तियां=प्रत्यय, हैं । ये सुप्-
प्रत्यय कह लाते हैं । ये सुप्प्रत्यय जिन शब्दों में जुड़ते हैं उन्हें 'प्राति-
पदिक' कहते हैं । सुप्प्रत्यय जुड़ने पर ही प्रातिपादिक शब्दों का वाक्य
में प्रयोग हो सकता है । करण में तृतीया विभक्ति होती है । ऐसा जो
कहा है वह तंत्र (१) से कहा है । इसलिये तृतीया विभक्तिकर्ता में-
क्रिया में स्वतंत्ररूप से विवक्षित देवदत्त आदि रूप अर्थ में-एवं
करण में-क्रिया की सिद्धि में प्रकृष्टतम उपकारक में-होती है । "कृत्य-
ल्युटो बहुलम्" इस सूत्र के अनुसार कृत्य और ल्युट्प्रत्यय कर्ता और

વિભક્તિ દ્વિતીયા વિભક્તિ વગેરેના લેઈથી વિભક્તિઓ આઠ છે આમાં ૩૬૦
પ્રાતિપદિકાર્થના પ્રતિપાદનમાં પ્રથમા વિભક્તિ હોય છે સંસ્કૃતમાં કારક વિભ-
ક્તિઓને પ્રકટ કરવામાં માટે સુ, ઔ, જસ્ વગેરે ૨૧ વિભક્તિના પ્રત્યયો છે.-
છે એ સુપ્-પ્રત્યયો કહેવાય છે એ સુપ્ પ્રત્યયો જે શબ્દોમાં ઉમેરાય છે
તે પ્રાતિપદિક કહેવાય છે સુપ્ પ્રત્યય ઉમેરાયા પછી જ પ્રાતિપદિક શબ્દોનો
વાક્યમાં પ્રયોગ થઈ શકે છે. કરણમાં તૃતીયા વિભક્તિ હોય છે, એવું જે
કહેવામાં આવ્યું છે તે તંત્ર (સિધ્ધાંત)થી કહેવામાં આવ્યું છે એટલા માટે
તૃતીયા વિભક્તિ કર્તામાં, ક્રિયામાં સ્વતંત્ર રૂપથી વિવક્ષિત દેવદત્ત વગેરે
રૂપ અર્થમાં અને કરણમાં ક્રિયાની સિદ્ધિમાં પ્રકૃષ્ટતમ ઉપકારક હોય છે.
'કૃત્યલ્યુટો બહુલમ્' આ સૂત્ર મુજબ 'કૃત્ય' અને 'લ્યુટ્' પ્રત્યય કર્તા અને
કરણ એ બંનેમાં હોય છે આ પ્રમાણે 'કરોતિ' इति करणम्, क्रियते

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૮ અષ્ટનામનિરૂપણમ્

૮૨૫

લ્યુટ્ । સંપ્રદાપને-સંપ્રદાને-દાનસ્ય કર્મણા યોઽમિમેતસ્તસ્મિન્ 'હિ મ્યામ્ મ્યસ્' ઇતિ ચતુર્થી વિભક્તિર્ભવતિ । અપાદાને-અપાયાવધિભૂતે 'હસિ મ્યામ્ મ્યસ્' ઇતિ પંચમી વિભક્તિર્ભવતિ । સ્વસ્વામિવાચને-સ્વસ્-ભૃત્યાદિ, સ્વામી-રાજાદિસ્તયો-વાંચને-તત્સમ્બન્ધપ્રતિપાદને 'હસ્ ઓસ્ આમ્' ઇતિ ષષ્ઠી વિભક્તિર્ભવતિ । સન્નિધાનાર્થે વાચ્યે 'હિ ઓસ્ સુપ્' ઇતિ સપ્તમી વિભક્તિર્ભવતિ । તથા-અષ્ટમી=સંબોધનવિભક્તિઃ આમન્ત્રણી=અભિમુખી કરણાર્થા ભવતિ । इत्थं सामान्येनोक्त्वा सम्प्रति सोदाहरणमाह-निर्देशे प्रथमा, विभक्तिर्भवति, यथा-सः अयम् अहं वेति । उपदेशे पुनः द्वितीया विभक्तिर्भवति । यथा-'भण कुरु इदं वा तद्वेति' इदं प्रत्यक्षं यत् श्रुतं तद् भण, इदं प्रत्यक्षं कार्यं कुरु, तत्-परोक्षं वा यत् श्रुतं तद्

करण इन दोनों में होते हैं । इस प्रकार करोति इति करणः क्रियतेऽने-नेति करणम् "यहां दोनो जगह ल्युट् प्रत्यय हुआ है । दान रूप क्रिया के कर्म का जिसके साथ संबन्धकर्ता को इष्ट हो उसमें चतुर्थी विभक्ति होती है । अपाय की अवधिभूत पदार्थ का नाम अपादान है । इसमें पंचमी विभक्ति होती है । स्वस्वामी संबंध में सेव्य सेवक आदि भाव लिया गया है । स्व का तात्पर्य सेवक, भृत्यादि से है और स्वामी का सेव्य राजादि से । सन्निधान और आमन्त्रणी इन शब्दों का अर्थ स्पष्ट है । इस प्रकार सामान्य से कह कर अब सूत्रकार इस अष्ट नाम को उदाहरण देकर समझाते हैं-(तत्थ निहेमे पढमा विभत्ती) निर्देश में प्रथमा विभक्ति होती है-जैसे (सो इमो अहं वत्ति) वह यह अथवा मैं । (विहया पुण उवएसे) उपदेश में द्वितीयाविभक्ति होती है जैसे-(भण कुणसु इमं व तं वत्ति) जो तुमने प्रत्यक्ष में सुना है, उसे कहो, इस सामने के काम को करो, जो परोक्ष में तुमने सुना है उसे कहो अथवा उस

अनेन इति करणम् 'અહીં' અને સ્થાને લ્યુટ્ પ્રત્યય થયેલ છે. દાનરૂપ ક્રિયાના કર્મને જેની સાથે સંબંધ કરાવે છે તેમાં ચતુર્થી વિભક્તિ થાય છે. અપાય (જુદા થવું)ની અવધિભૂત પદાર્થનું નામ અપાદાન છે આમાં પંચમી વિભક્તિ થાય છે સ્વસ્વામી સંબંધમાં સેવ્ય સેવક વગેરે ભાવ પ્રહણ કરવામાં આવે છે સ્વનું 'તાત્પર્ય' સેવક ભૂત્ય વગેરેથી છે અને સ્વામીનું સેવ્ય રાજા વગેરેથી સન્નિધાન અને આમન્ત્રણી આ સંબોધન શબ્દોનો અર્થ સ્પષ્ટ છે.

આ પ્રમાણે સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપમાં ઉદ્દેશ કરીને હવે આ અષ્ટ-નામને સોદાહરણ સમજાવે છે. (તત્થ નિહેમે પદમા વિભત્તિ) નિર્દેશમાં પ્રથમા વિભક્તિ હોય છે. જેમ કે (સો ઇમો અહં વત્તિ) 'તે,' 'આ' કે 'હું' (વિહયા પુણ ઉવણસે) ઉપદેશમાં બીજી વિભક્તિ હોય છે. જેમ કે (મણ કુણસુ ઇમં વ તં વત્તિ) જે તમે પ્રત્યક્ષમાં સાંભળ્યું છે, તેને કહો, આ સામેનું કામ

મળ, તત્-પરોક્ષં કાર્યં વા કુરુ ઇતિ। તૃતીયા વિભક્તિઃ કરણે-કર્તરિકરણે ચ ભવતિ। યથા-મણિતં ચ કૃતં ચ તેન વા મયા વેતિ, કર્તરીદમુદાહરણમ્। કરણેતુ 'રથેન યાતિ' ઇત્યાદિકં સ્વબુદ્ધયા વિભાવનીયમ્। સંપ્રદાને ચતુર્થી વિભક્તિર્ભવતિ, યથા-મુનયે દાનં દદાતિ। નમઃ શબ્દયોગેઽપિ ચતુર્થી વિભક્તિર્ભવતિ, યથા- 'હન્દિ! નમો જિનેશ્વરાય' ઇતિ। 'હન્દિ' હતિ કોમલામન્ત્રણે। અપાદાને પંચમી ભવતિ, યથા- 'ઉપનય ગૃહાણ એતસ્માદિતો વે'તિ। સ્વામિસંબન્ધે=સ્વસ્વામિ ભાવસંબન્ધે વાચ્યે પૃષ્ઠી ભવતિ, તથા- 'ગતસ્ય તસ્ય, ગતસ્ય અસ્ય વા દદમસ્તિ'

પરોક્ષ કાર્ય કો કરો। (તદ્વ્યા કરણમિ-કયા) તૃતીયા વિભક્તિ કરણ કર્તા ઓર કરણ-મેં હોતી હૈં જૈસે-(મણિયં ચ કયં ચ તેણ મણવા) ઉસને ઓર મૈને કહા અથવા ઉસને ઓર મૈને કિયા। યહ ઉદાહરણકર્તા મેં હૈં। કરણ મેં ઉદાહરણ "વહ રથ સે જાતા હૈ" બાદિ હૈં। એસે ઉદાહરણ અપની બુદ્ધી સે ઓર મી કલ્પિત કરહેના ચાહિયે। (ચતુર્થી સંપયાણમિ હવહ) ચતુર્થી વિભક્તિ સંપ્રદાન મેં હોતી હૈ- જૈસે (હન્દિ જમો સહાય) હન્દિ! જિનેશ્વર કે લિયે નમસ્કાર હો, અગ્નિ કે લિયે સ્વાહા હો (યહાં પર 'હન્દિ' યહ શબ્દ કોમલામન્ત્રણ મેં આયા હૈ। હસી પ્રકાર સે 'દા' ધાતુ કે યોગ મેં ચતુર્થી હોતી હૈ-જૈસે વહ મુનિ કે લિયે દાન દેતા હૈ। (અવાયાણે પંચમી) અપાદાન મેં પંચમી હોતી હૈ- જૈસે (અવળય ગિળ્હ ય એત્તો હ ઉત્તિવા) હસસે દૂર કરો અથવા હસસે હેલો (સ્વામિ સંબંધે) જહાં સ્વ-સ્વામી સંબન્ધ વાચ્ય હોતા હૈ યહાં પર પૃષ્ઠી વિભક્તિ હોતી હૈ, જૈસે (ગયસ્સ તસ્સ ગયસ્સ હમસ્સ વ) ગયે દુપ

કરો જે પરોક્ષમાં તમે સાંભળ્યું છે તેને કહો અથવા તે પરોક્ષક્રમને કરો. (તદ્વ્યા કરણમિ કયા) ત્રીજી વિભક્તિ કરણ કર્તા અને કરણમાં હોય છે જેમ કે (મણિયં ચ કયં તેણ મણવા) તેણે અને મેં કહ્યું અથવા તેણે અને મેં કયું આ ઉદાહરણ કર્તામાં છે કરણમાં ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે-તે રથથી બાય છે વગેરે છે એવા ઉદાહરણો। પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કરી લેવા બોધ્યે (ચતુર્થી સંપયાણમિ હવહ) ચતુર્થી વિભક્તિ સંપ્રદાનમાં હોય છે જેમ કે (હન્દિ જમો સહાય) હન્દિ! જિનેશ્વર માટે મારા નમસ્કાર અગ્નિ માટે સ્વાહા અહીં 'હન્દિ' આ શબ્દ કોમલામન્ત્રણ માટે આવે છે આ પ્રમાણે 'દા' ધાતુના યોગમાં ચતુર્થી હોય છે જેમ કે તે મુનિ માટે દાન આપે છે. (અવાયાણે પંચમી) અપાદાનમાં પંચમી હોય છે જેમ કે (અવળય ગિળ્હ ય એત્તો હ ઉત્તિવા) આને દૂર કરો અથવા એનાથી લઈ લો. (સ્વામિ સંબંધે) જ્યાં સ્વસ્વામિ સંબંધ વાચ્ય હોય છે ત્યાં પૃષ્ઠી વિભક્તિ થાય છે જેમ કે (ગયસ્સ તસ્સ ગયસ્સ હમસ્સવ) ગયેલ

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १६८ अष्टनामनिरूपणम्

८१७

इति । आधारकालभावे=आधारे काले भावे च सप्तमी भवति, यथा-‘तत् अस्मि’
निति, अस्मिन् कुण्डादी तद् बदरादिकं तिष्ठति, इत्यर्थः । अत्राधारे सप्तमी
बोद्धा । काले यथा-‘मधौ रमते’ भावे तु-‘चारित्र्येऽवतिष्ठते’ इति । आमन्त्रणे
तु अष्टमी विभक्ति भवति । यथा-‘हे युव’-न्निति । अत्र च नामविचारप्रस्तावाद्
प्रथमादि विभक्त्यन्तं नामैव गृह्यते । तथा चाष्ट विभक्तिभेदादष्टविधमिदं भवति ।
न च प्रथमादि विभक्त्यन्तनामाष्टकमन्तरेणाऽपरं नामास्ति, अतोऽनेन नामाष्टकेन
सर्वस्य वस्तुनोऽभिधानद्वारेण सङ्ग्रहादष्टनामेत्युच्यते, इति भावार्थः । एतदुप
संहरन्नाह-तदेतदष्टनामेति ॥ सू० १६८ ॥

उसको अथवा गये हुए इसकी यह वस्तु है । (आहारकालभावे य सप्तमी पुण हवइ) आधार में, काल में और भाव में सप्तमी विभक्ति
होती है । जैसे-तं इमस्मि) इस कुण्ड आदि में बदरादि फल हैं । यह
आधार में सप्तमी विभक्ति का दृष्टान्त है । काल में सप्तमी विभक्ति का
दृष्टान्त “मधौ रमते” कोयल वसन्त में आनंद पाती है, यह है । भाव
में सप्तमी विभक्ति का दृष्टान्त-“चारित्र्येऽवतिष्ठते” यह साधु अपने
चारित्र्य में उहरा हुआ है-यह है । (आमंत्रणे अष्टमी भवे) आमंत्रण
अर्थ में अष्टमी विभक्ति होती है । (जहा)-जैसे-(हे जुवाणस्ति) ये युवन्-
तरुण ! यहां पर नाम के विचार का प्रस्ताव होने से प्रथमादि विभक्त्य-
न्त नाम ही ग्रहण किया गया है । इस प्रकार आठ प्रकार की विभ-
क्तियों के भेद से नाम आठ प्रकार का होता है । प्रथमादि विभक्त्यन्त
नामाष्टक के बिना और दूसरा नाम नहीं है । इसलिये इस नामाष्टक

तेની અથવા ગયેલ આની આ વસ્તુ છે. (આહાર કાલભાવે ય સપ્તમી પુણ હવઈ)
આધારમાં, કાળમાં અને ભાવમાં સપ્તમી વિભક્તિ હોય છે જેમ કે-(તં
ઇમસ્મિ) આ કુંડ વગેરેમાં બદર વગેરે ફળો છે આ આધારમાં સપ્તમી વિભ-
ક્તિનું ઉદાહરણ છે હાલમાં સપ્તમી વિભક્તિનું ઉદાહરણ “મધૌ રમતે”
કોયલ વસંતમાં આનંદ માણે છે ભાવમાં સપ્તમી વિભક્તિનું ઉદાહરણ
“ચારિત્ર્યેઽવતિષ્ઠતે” આ સાધુ પોતાના ચારિત્ર્યમાં જ સ્થિર છે. (આમંત્રણે
અષ્ટમી) આમંત્રણ અર્થમાં આઠમી વિભક્તિ હોય છે. (જહા) જેમ કે (હે જુવા-
ણત્તિ!) હે યુવન્! તરુણ! અહીં નામવિચાર પ્રસ્તાવને લીધે પ્રથમા વગેરે
વિભક્ત્યંત નામ જ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યાં છે આ પ્રમાણે આઠ પ્રકારની
વિભક્તિઓના ભેદથી નામ આઠ પ્રકારના હોય છે પ્રથમા વગેરે વિભક્ત્યંત

અથ નવનામ નિર્દિશતિ—

મૂલ્ય—સે કિં તં નવનામે?, નવનામે—ળવ કઢ્વરસા પળ્ળત્તા, તં જહા—વીરો સિંગારો અબ્બુઓ ય રોહો ય હોહ બોદ્ધવ્વો। વેલ્ળળઓ બીભચ્છો, હાસો કલુળો પસંતો ય ॥૧॥સૂ૦૧૬૯॥

છાયા—અથ કિં તત્ત્વ નવ નામ? નવનામ—નવ કાવ્યરસાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા—વીરઃ શૃંગારઃ અદ્ભુતશ્ચ રૌદ્રશ્ચ ભવતિ બોદ્ધવ્યઃ। વ્રીડનકો બીભત્સો હાસ્યઃ કરુણઃ પ્રશાન્તશ્ચ ॥ ૧ ॥સૂ૦ ૧૬૯॥

સે સમસ્તવસ્તુઓં કે કથન કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ—અતઃ યહ અષ્ટ-નામ એસા કહા ગયા હૈ। (સે તં અટ્ટનામે) હસ પ્રકાર યહ અષ્ટ નામ હૈ। ॥ સૂ૦ ૧૬૮ ॥

અથ સૂત્રકાર નવ નામકા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં નવનામે?” ઇત્યાદિ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નવ નામે?) હે ભદન્ત! વહ નવ પ્રકાર કા નામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(નવ નામે) નવ નામ હસ પ્રકાર સે હૈ—(ળવ કઢ્વરસા પળ્ળત્તા) કાવ્યકે જો નૌ રસ હૈં, વે હી નવ નામ રૂપ સે પ્રજ્ઞસ હુણ હૈં। (તં જહા) વે નૌ રસ યે હૈં—(વીરો સિંગારો, અબ્બુઓ ય રોહો ય હોહ બોદ્ધવ્વો। વેલ્ળળઓ બીભચ્છો હાસો કલુળો પસંતો ય) વીરરસ, શૃંગારરસ, અદ્ભુતરસ, રૌદ્રરસ, વ્રીડનકરસ, બીભત્સરસ, હાસ્યરસ, કરુણરસ, ધૌર પ્રશાન્તરસ।

જામાબ્દક સિવાય બીજુ' નામ નથી એટલા માટે આ નામાબ્દકથી બધી વસ્તુઓનો સંગ્રહ થઈ જાય છે. એથી આ અબ્દનામ આમ કહેવામાં આવ્યું છે (સે તં અટ્ટનામે) આમ આ આઠનામે છે. ॥સૂ૦૧૬૮॥

હવે સૂત્રકાર નવ નામનું કથન કરે છે—

“સે કિં તં નવનામે?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નવનામે?) હે ભદન્ત! તે નવપ્રકારનું નામ શું છે?

ઉત્તર—(નવનામે) નવ નામ આ પ્રમાણે છે. (ળવ કઢ્વરસા પળ્ળત્તા) કાવ્યના બે નવ રસો છે તેજ નવ નામથી પ્રજ્ઞસ થયેલ છે. (તંજહા) તે નવ નામે આ પ્રમાણે છે. (વીરો સિંગારો, અબ્બુઓ ય રોહો ય હોહ બોદ્ધવ્વો। વેલ્ળળઓ બીભચ્છો હાસો કલુળો પસંતો ય) વીરરસ, શૃંગારરસ, અદ્ભુતરસ, રૌદ્રરસ, વ્રીડનકરસ, બીભત્સરસ, હાસ્યરસ, કરુણરસ અને પ્રશાન્તરસ.

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્ નવ નામ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—નવનામ—નવવિધં નવનામ—નવસંખ્યકાઃ કાવ્યરસાઃ—કવેઃ કર્મ કાવ્યમ્, રસ્યન્તે—અન્તરાત્મનાડુનુ-ભૂયન્તે ઇતિ રસાઃ, તત્તત્સહકારિ કારણસામીપ્યાત્સમુદ્ભૂતાશ્ચિત્તોત્કર્ષવિશેષા હત્યર્થઃ, ઉક્તં ચ—

“વાહ્યાર્થાલ્ભવનો યસ્તુ, સુહસો માનસો ભવેત્ ।

સ ભાવઃ કથ્યતે સન્નિસ્તસ્યોત્કર્ષો રસઃ સ્મૃતઃ ॥” ઇતિ॥

—કાવ્યે સમુપનિબદ્ધા રસાઃ કાવ્યરસાઃ પ્રજ્ઞસાઃ=કથિતાઃ । તાનેવાહ—‘વીરઃ શૂદ્રારઃ’ ઇત્યાદિના—વીરયતિ=વિક્રમયુક્તં કરોતિ ત્યાગતપઃ—કર્મ શત્રુનિગ્રહેષુ પ્રેરયતિ જનમિતિ વીરઃ—ઉત્તમ પ્રકૃતિ પુરુષ—વરિતશ્રવણાદિ હેતુ સમુદ્ભૂતો દાના-

કવિ કે કર્મકા નામ ‘કાવ્ય’ હૈ । અન્તરાત્મા સે જિનકા અનુભવ ક્રિયા જાતા હૈ ડનકા નામ રસ હૈ । યે રસ તત્તત્સહકારી કારણોં કી સમીપતા સે ચિત્તમેં જો ઉત્કર્ષ વિશેષ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ડનરૂપ હોતે હૈં । કહાં ખી હૈ—“વાહ્યાર્થ ઇત્યાદિ—વાહ્યાર્થ કે અવલમ્બન સે જો માનસિક ઉદ્ઘાસ હોતા હૈ વહ ‘ભાવ’ હૈ । હસ ભાવ કા ઉત્કર્ષ રસ હૈ । કાવ્ય મે ઉપનિબદ્ધ હુઅ રસ કાવ્યરસ શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈં । જો રસ મનુષ્ય કો વિક્રમ યુક્ત કરતા હૈ—અર્થાત્ ત્યાગ મેં શત્રુઓં કે નિગ્રહ કરને મેં પ્રેરિત કરતા હૈ—વહ વીરરસ હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ—રસ કા જો વીર યહ વીશેષણ હૈ વહ અન્યરસોં કી અપેક્ષા હસમેં યહી વિશેષતા પ્રકટ કરતા હૈ, કિ હસરસ કે સદ્ભાવ મેં ત્યાગ મેં તપશ્ચરણ મેં, ઓર કર્મરૂપ શત્રુ કે નિગ્રહ કરને મેં વિક્રમયુક્ત આત્મપારિણામ હોતા

કવિકર્મ કાવ્ય કહેવાય છે. અન્તરાત્માથી જે અનુભવાય છે તે રસ કહેવાય છે એ રસો તત્તત્સહકારી કારણોની સમીપતાથી ચિત્તમાં જે ઉત્કર્ષ વિશેષ ઉત્પન્ન કરે છે તે અનુરૂપ હોય છે કહ્યું પણ છે કે—“વાહ્યાર્થ ઇત્યાદિ—” વાહ્યાર્થના અવલંબનથી જે માનસિક ઉદ્ઘાસ હોય છે તે ‘ભાવ’ છે. તે ભાવનો ઉત્કર્ષ રસ છે કાવ્યમાં ઉપનિબદ્ધ થયેલ રસ કાવ્ય રસ શબ્દોનો વાચ્યાર્થ છે જે રસ ભાણસને વીરત્વપૂર્ણ કરે છે એટલે કે ત્યાગમાં, તપમાં અને કર્મ-રૂપ શત્રુઓના નિગ્રહ કાર્યમાં પ્રેરિત કરે છે તે વીર રસ છે. તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે કે રસનું જે વીર વિશેષણ છે તે બીજા રસો કરતાં આમાં એજ વિશેષતા પ્રકટ કરે છે કે આ રસના સદ્ભાવમાં, ત્યાગમાં, તપશ્ચરણમાં અને કર્મરૂપ શત્રુનિગ્રહમાં વીરત્વપૂર્ણ આત્મપરિણામ હોય છે, અને

દ્યુત્સાહપ્રકર્ષાત્મકો રસઃ । રસ इति सर्वत्र योजनीयः ॥૨॥ શૃંગારઃ શૃંગ્—પ્રાધાન્યમ્ ઇર્યતિ—ગચ્છતીતિ—શૃંગારઃ । અતएव—

“શૃંગાર—હાસ્યકરુણ,—રૌદ્ર—વીર મયાનકાઃ ।

વીમત્સાડ્દ્ભુતશાન્તાશ્ચ, નવ નાટ્યે રસાઃ સ્મૃતાઃ” ॥

इत्यत्र शृङ्गारस्यैव प्रथममुपादानं कृतम् । अत्र तु वीररसस्य प्रथमत उपादानम् । अत्रायं हेतुः—त्यागतपःकर्मनिग्रहगुणो वीररसे भवति । अतोऽस्य सर्वरसप्रधानत्वम् । उक्तं च—“त्यागेन कर्ममलमेति लयं समस्तं, त्यागेन निर्मलतरत्वमुपैति जीवः । त्यागेन केवलमवाप्य समेति सिद्धिः, त्यागो गुणो गुणशतादधिको मतो मे” ॥१॥

है । और वह परिणाम उस मनुष्य को उस ओर बढ़ने के लिये प्रेरणा देता है । इस प्रकार के परिणाम की—उद्भूति के कारण उत्तम प्रकृतिवाले सत्पुरुषों के चरित्र श्रवण वगैरह हैं । इसलिये यह रस दानादिको में उत्साह का प्रकर्ष होने रूप है 'रस' शब्द का संबंध सर्वत्र वीर, शृंगार आदि के साथ लगा लेना चाहिये “शृंगप्राधान्यं इर्यति गच्छति इति शृंगारः” जो रस प्रधान रूप से विषयों की ओर प्रेरित करता है वह रस शृंगार है । इसलिये—“शृंगार हास्य—करुण” इत्यादि श्लोक में इस शृंगार रसका प्रथम उपादान किया गया है । परन्तु यहां सूत्र में वीररस का प्रथम पाठ रखा है सो उसका कारण यह है कि लोग में, तप में एवं कर्मनिग्रह करने में प्रेरणा देना रूप जो गुण है वह एक इस वीररस में है । इसलिये इसमें सर्व रसों की अपेक्षा प्रधानता है कहा भी है “त्यागेन इत्यादि”—

તે પરિણામ તે માણુએ તે તરફ આગળ વધવામાં પ્રેરણા આપે છે આ જાતના પરિણામની ઉદ્ભૂતિમાં ઉત્તમ પ્રકૃતિ (સ્વભાવવાળા) સંતોના ચરિત્ર શ્રવણ વગેરે જ કારણ છે. એટલા માટે આ રસ દાન વગેરેમાં ઉત્સાહના—પ્રકર્ષ માટે છે વીર, શૃંગાર વગેરે રસોની સાથે પણ રસ શબ્દનો સંબંધ બધો લગાડવો જોઈએ. (શૃંગ—પ્રાધાન્યં ઇર્યતિ ગચ્છતિ इति शृंगारः—જે રસ પ્રધાનત્વા વિષયો તરફ વાળે છે તે રસ શૃંગાર છે. એથી જ “શૃંગારહાસ્યકરુણ” “વગેરે શ્લોકમાં આ શૃંગાર રસનું સૌથી પહેલાં શ્રદ્ધણ કરવામાં આવ્યું છે. પણ અહીં સૂત્રમાં વીરરસનો પાઠ પહેલાં રાખવામાં આવ્યો છે. તેનું કારણ એ છે કે લોકોને તપ અને કર્મનિગ્રહ કરવામાં જે પ્રેરણાત્મક ગુણ હોય છે તે આ કૃત વીરરસમાં જ હોય છે. એટલા માટે આમાં બધાં રસોની અપેક્ષાએ પ્રાધાન્ય છે. કહ્યું પણ છે કે “त्यागेन इत्यादि” त्यागથી

અધ્યયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૬૯ નવનામનિકૂળનમ્

૮૩૧

ઈતિ, 'પરલોકાતિગં ધામ તપઃ શ્રુતમ્' ઇતિ ચ । તપઃ શ્રુતં ચેત્યપિ મોક્ષમાપકમિત્યર્થઃ અતોઽન્ન વીરરસસ્ય પ્રથમમુપાદાનમ્ ॥૨॥ અદ્ભુતઃ-શ્રુતં શિલ્પં ત્યાગતપશૌર્યકર્માદિ વા यस્ય સકલતનાતિગમસ્તિ, તદેવંવિધમપૂર્વં કિમપિ વસ્તુ અદ્ભુતમિત્યુચ્યતે । તદર્શનશ્રવણજો રસોઽપ્યુપવારાદ્ વિસ્મયરૂપોઽદ્ભુતઃ ॥૩॥ રૌદ્રઃ રોદયતિ=અતિદારુણતયા અશ્રુણિ મોચયતીતિ રૌદ્રમ્-શત્રુજન-મહારણ્ય-ગાઢતિમિરાદિ, તદર્શનાશુદ્ભવો વિકૃતાધ્યવસાયરૂપો રસોઽપિ રૌદ્રઃ ॥૪॥ વ્રીહ્યતિ-

ત્યાગ સે કર્મરૂપ મૈલ વિલય-વિનાશ-કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, ત્યાગ સે જીવનિર્મલતા કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ, ત્યાગ સે હી કેવલજ્ઞાન કો પાકર કે આત્મસિદ્ધિ કો પાતા હૈ । ફસલિયે સૈંકડોં ગુણો સે અધિક એક ત્યાગ ગુણ માના ગયા હૈ । તથા-"પરલોકાતિગં ધામ તપઃ શ્રુતમ્" અર્થાત્ તપઃ શ્રુત ઓર શ્રુત યે બી મોક્ષ કો પ્રાપ્ત કરાનેવાલે હૈ " ફસલિયે યહાં સૂત્ર િ વીર રસ કા સર્વ પ્રથમ ઉપાદાન કિયા ગયા હૈ । શ્રુત, શિલ્પ, અથવા ત્યાગ, તપ, શૌર્ય કર્મ આદિ જિસકે સકલ જનોં કી અપેક્ષા અધિકાં ફસ પ્રકાર કી વહ કોઈ બી અપૂર્વ વસ્તુ અદ્ભુત કહલાતી હૈ । ઉસ અપૂર્વવસ્તુ કે દર્શન સે યા શ્રવણ સે જો રસ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ રસ બી ઉપચાર સે 'અદ્ભુત રસ' કહલાતા હૈ । યહ વિસ્મય રૂપ હોતા હૈ જો અતિદારુણ હોને કે કારણ રુલાતા હૈ-અર્થાત્ અશ્રુઓં કો નિકલવાતા હૈ વહ 'રૌદ્ર' હૈ । શત્રુ, જન, મહાઅરણ્ય ગાઢતિમિર આદિ રૌદ્ર હૈ । ફનકે દર્શન આદિ સે અદ્ભુત હુઆ વિકૃત અધ્યવસાય-પરિણામ

કર્મરૂપ માલિન્ય વિલય-વિનાશ-ને પામે છે. ત્યાગથી જીવનિર્મળ થાય છે. ફક્ત ત્યાગથી જ કેવળજ્ઞાનને મેળવીને આત્મા સિદ્ધિ પામે છે. એટલા માટે હજારો ગુણો કરતાં પણ વધારે પડતો ત્યાગગુણ મનાય છે. તેમજ "પરલોકાતિગં ધામ તપઃશ્રુતમ્" એટલે કે તપ અને શ્રુત પણ મોક્ષ આપનારા છે એથી અહીં સૂત્રમાં 'વીરરસત્' સર્વપ્રથમ ઉપાદાન કરવામાં આવ્યું છે શ્રુત, શિલ્પ, અથવા ત્યાગ, તપ શૌર્ય કર્મ વગેરે જેના સૌ કરતાં વધારે છે, એવી જમ્મે તે વસ્તુ હોય-તો તે પણ અદ્ભુત કહેવામાં આવશે જ એ પૂર્વ વસ્તુના દર્શનથી કે શ્રવણથી જે રસ ઉદ્ભવે છે તે રસ પણ ઉપચારથી અદ્ભુત રસ કહેવાય છે. આ વિસ્મય રૂપ હોય છે. જે અતિદારુણ હોવા બદલ રડાવે છે એટલે કે અશ્રુ વહેવડાવે છે તે રૌદ્ર છે. શત્રુઓ, મહારણ્ય, ગાઢતિમિર, વગેરે રૌદ્ર છે. એમના દર્શન વગેરેથી ઉદ્ભવેલ વિકૃત અધ્યવસાય-પરિણામ રૂપ રસ પણ રૌદ્ર છે જે લક્ષ્મણનક છે તે

લજ્જામુત્પાદયતીતિ ત્રીઢનકઃ—લજ્જાસ્પદવસ્તુદર્શનાદિ—જન્યો મનોગ્લાનાદિ સ્વ-
રૂપોઽયં રસઃ । અસ્ય સ્થાનેઽન્યત્ર ભયાનકો રસઃ પ્રોક્તઃ । અયં હિ—ભયજનક
સંગ્રામાદિ દર્શનેન જાયતે । અસ્ય રૌદ્રરસેઽન્તર્ભાવનાદત્ર નાયં પૃથગુક્તઃ ॥ ૫ ॥
ત્રીભત્સઃ—શુકશોણિતોચ્ચારપ્રસ્રવણાદ્યનિષ્ટોદ્વેગજનકવસ્તુદર્શનશ્રવણાદિજો જુગુ-
પ્સાપ્રકર્ષો રસો ત્રીભત્સઃ ॥ ૬ ॥ હાસ્યઃ—હાસ્યાસ્પદવિકૃતાઽસંબદ્ધપરવચનવેષાલ-
ઙ્કારાદિશ્રવણદર્શનજો મનઃપ્રકર્ષાદિ ચેષ્ટાત્મકો રસો હાસ્યરસઃ ॥ ૭ ॥ કરુણઃ—
મિયવિપ્રયોગાદિ દુઃખહેતુસમુદ્ભવઃ શોકપ્રકર્ષસ્વરૂપો રસઃ કરુણરસઃ । કુત્સ્તિતં

રૂપ રસ બી રૌદ્ર છે । જો લજ્જા કો ઉત્પન્ન કરતા છે વહ 'ત્રીઢનક' છે । યહ રસ લજ્જાસ્પદ વસ્તુ કે દેખને આદિ સે ઉત્પન્ન મનોગ્લાનિ આદિ રૂપ હોતા છે । ઇસકે સ્થાન મેં દૂસરી જગહ ભયાનક રસ કહા ગયા છે । યહ ભય જનક સંગ્રામ આદિ કે દેખને સે ઉત્પન્ન હોતા છે । ઇસકા અન્તર્ભાવ રૌદ્ર રસ મેં કરલિયા છે, ઇસલિયે ઉસે યહાં પૃથક્ નહીં કહા ગયા છે । શુક, શોણિત, ઉચ્ચાર-વિષ્ટા, પ્રસ્રવણ-પેશાશ, મૂત્ર, આદિ જો અનિષ્ટ એવં ઉદ્વેગ જનક વસ્તુએં હૈં, ઉનકે દેખને સે, સુનને આદિ સે જો જુગુપ્સા કા પ્રકર્ષ હોતા છે વહી જુગુપ્સા પ્રકર્ષ ત્રિભત્સ રસ કહલાતા છે । હાસ્યાસ્પદ, વિકૃત એવં અસંબદ્ધ એસે દૂસરોં કે વચન સુનને સે, વેષ અલંકાર આદિ કે દેખને સે જો મનપ્રકર્ષ આદિ કેચેષ્ટાત્મક રસ હોતા છે વહ 'હાસ્ય રસ' છે । પ્રિય પદાર્થ કે વિયોગ સે જન્ય દુઃખ આદિ હેતુ સે ઉદ્ભૂત હુઆ શોક પ્રકર્ષ સ્વરૂપ જો રસ છે વહ 'કરુણરસ' છે । જીસસે પ્રાણી ઘુરી તરહ સે રોતા છે અથવા જિસકે

ત્રીઢનક છે. આ રસ લજ્જાજનક વસ્તુ જેવા વગેરેથી ઉત્પન્ન થયેલ મનોગ્લાનિ વગેરે રૂપ હોય છે. એના સ્થાને બીજી જગ્યાએ ભયાનક રસ કહેવામાં આવ્યો છે. આ ભયાનક રસ સંગ્રામ વગેરે જેવાથી ઉત્પન્ન થાય છે એના અન્તર્ભાવ રૌદ્ર રસમાં જ કરવામાં આવ્યો છે. એથી અહીં 'પૃથક્ કથન કયું' નથી શુક, શોણિત, ઉચ્ચાર-મલવિષ્ટા, પ્રસ્રવણ-મૂત્ર વગેરે જે અનિષ્ટ અને ઉદ્વેગજનક વસ્તુઓ છે એમને જેવાથી, સાંભળવા વગેરેથી જે જુગુપ્સાત્મક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તેજ જુગુપ્સાપ્રકર્ષ રસ ત્રીભત્સ રસ કહેવાય છે. હાસ્યજનક, વિકૃત અને અસંબદ્ધ એવા બીજા માણસોના વચનો સાંભળવાથી વેષ અલંકાર વગેરે જેવાથી જે મનઃપ્રકર્ષ વગેરે ચેષ્ટાત્મક રસ હોય છે તે હાસ્ય રસ છે. પ્રિયપદાર્થના વિયોગથી જન્ય દુઃખ વગેરે હેતુથી ઉદ્ભૂત થયેલ શોક પ્રકર્ષ સ્વરૂપ જ રસ છે તે કરુણ રસ છે જેનાથી પ્રાણી ભયંકર રીતે રડે છે અથવા

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १७० सलक्षणवीररसनिरूपणम्

८३३

रौत्यनेनेति करुणास्पदत्वाद् वा करुणः, इत्युभयविधाऽपि करुणशब्दव्युत्पत्ति-
र्बोध्या ॥८॥ प्रशान्तः परमगुरुवचःश्रवणादि हेतुसमुद्भव उपशमप्रकर्षात्मको रसः
प्रशान्त रसः । प्रशाम्यति—क्रोधादिजनितचित्तविक्षेपादिरहितो भवत्यनेनेति
प्रशान्तशब्दव्युत्पत्तिर्बोध्या ॥ ९ ॥ सू० १६९ ॥

एतानेव रसान् लक्षणादि द्वारेण विवक्षुः प्रथमं तावद् वीररसं लक्षणनिर्देश-
पुरस्सरं निरूपयति—

मूलम्—तत्थ परिच्चायंमि य, तवचरणसत्तुजणविणासे
य । अणणुसयाधिइपरक्कम—लिंगो वीरो रसो होइ ॥१॥ वीरो रसो
जहा—सो नाम महावीरो, जो रज्जं पयहिऊणपव्वइओ । काम-
कोहमहासत्तुपक्खनिग्घायणं कुणइ ॥२॥ सू० १७० ॥

छाया—तत्र—परित्यागे च तपश्चरणे शत्रुजनविनाशे च । अननुशयधृतिपराक्रम-

कारण प्राणी करुणा का आस्पद (स्थान) बनता है, वह रस 'करुणरस'
है । करुणशब्द की दोनों प्रकार की यह व्युत्पत्ति संगत जाननी चाहिये ।
परमगुरुओं के वचन श्रवणादिरूप हेतु से उद्भूत जो उपशम की प्रक-
र्षात्परस है, वह 'प्रशान्तरस' है । जिसके द्वारा प्राणी क्रोध आदिसे
जनित-चित्त विक्षेप आदि से विहीन बन जाता है ऐसी यह प्रशान्त
शब्द की व्युत्पत्ति है । ॥ सू० १६९ ॥

अब सूत्रकार इन्हीं रसों को लक्षणादि द्वारा कहने की इच्छा से
सर्व प्रथम लक्षण निर्देश पुरस्सर वीररस का कथन करते हैं ।

“तत्थ परिच्चायंमि” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(तत्थ) इन नवरसों के बीच में (परिच्चायंमि य तवचरण-

जेनाथी प्राणी कइष्ठापुष्ठां थर्ध नाय छे ते रस कइष्ठा रस छे. कइष्ठा शब्दनी
आ भन्ने प्रहारनी व्युत्पत्ति योग्य न कइवाय परमगुरुजानेना वचन श्रवण
वगेरे इप डेतुथी उद्भूत जे उपशमनी प्रकर्षता इप रस छे ते प्रशान्त रस
छे. जेना वडे प्राणी क्रोध वगेरेथी उद्भवेव चित्तविक्षेपादिथी विहीन थर्ध
नाय छे प्रशान्त शब्दनी आ व्युत्पत्ति छे. ॥सू० १६९॥

इवे सूत्रकार जेन रसेने लक्षणा वगेरे द्वारा रूपट करवानी अपेक्षाथी
अहीं सर्व प्रथम वीर रसनुं कथन लक्षणा निर्देश पुरस्सर करे छे—

“तत्थ परिच्चायंमि” इत्यादि—

शब्दार्थ—(तत्थ) आ नव रसोभां (परिच्चायंमि य तवचरणसत्तुजण
अ० १०५

લિંગો વીરો રસો ભવતિ ॥૧॥ વીરો રસો યથા-સ નામ મહાવીરો યો રાજ્યં પ્રહાય
પ્રવ્રજિતઃ । કામક્રોધમહાશત્રુપક્ષનિર્વાતનં કરોતિ ॥૨॥ સૂ૦ ॥૧૭૦ ॥

ટીકા—‘તત્થ’ इत्यादि—

તત્ર તેષુ નવ રસેષુ મધ્યે પરિત્યાગે ચ તપશ્ચરણે ચ શત્રુજનવિનાશે અનુ-
શયધૃતિપરાક્રમલિંગો વીરો રસો ભવતિ । અયં ભાવઃ—પરિત્યાગે—દાને અનુશય-
લિંગઃ—અનુશયઃ—ગર્વઃ પશ્ચાત્તાપો વા, સ લિંગં=લક્ષણં યસ્ય સોઽનુશયલિંગઃ, ન
અનુશયલિંગઃ અનુશયલિંગઃ—દાનં દત્વાઽહંકારં પશ્ચાત્તાપં વા ન કરોતિ તદા વીરો
રસો બોધ્યઃ । તપશ્ચરણે =તપસિ ધૃતલિંગઃ=ધૈર્યચિહ્નઃતપશ્ચર્યાયાં ધૈર્યમેવ કરોતિ
ન પશ્ચાત્તાપં તદા વીરો રસો ભવતિ । શત્રુવિનાશે=શત્રુણામુન્મૂલને પરાક્રમલિંગઃ=

સત્તુજનવિનાસેય) પરિત્યાગ કરને મેં, તપશ્ચરણ કરને મેં ઓર શત્રુજન
કે વિનાશ કરને મેં અણણુસયધિહપરક્રમ-લિંગો વીરરસો હોઈ) અન-
નુશય ધૃતિ, પરાક્રમ હન ચિન્હોં વાલા વીરરસ હોતા હૈ । અનુશય
શબ્દ કા અર્થ ગર્વ અથવા પશ્ચાત્તાપ હૈ । યહ જિસકા લક્ષણ હૈ,
વહ અનુશયલિંગ હૈ યહ લિંગ જિસમેં નહીં હોતા વહ
અનનુશય લિંગ હૈ દાન દેકર કે જો અહંકાર યા પશ્ચાત્તાપ નહીં
કરતા હૈ, ઉસસમય વીરરસ હોતા હૈ । તપશ્ચર્યા કરને મેં જો ધૈર્યસ્વતા
હૈ—પશ્ચાત્તાપ નહીં કરતા હૈ વહ વીરરસ કા કામ હૈ । “શત્રુજન કે
વિનાશ કરને મેં જો પરાક્રમકા અબલમ્બન કરતા હૈ વૈકલ્ય-વિકલતા
કમજોરી હૃદય મેં નહીં લાતા હૈ, યહ સબ વીરરસ કે દ્વારા હોતા હૈ ।
હન અનનુશય, ધૈર્ય ઓર પરાક્રમ લક્ષણોં સે યહ જાના જાતા હૈ કિ
‘યહ મનુષ્ય વીરરસ મેં વર્તમાન હૈ । હસીપ્રકાર સે અન્યત્ર બી સમમ્બન

વિનાસેય) પરિત્યાગ કરવામાં, તપશ્ચરણ કરવામાં, અને શત્રુઓના વિનાશ
કરવામાં (અણણુસયધિહપરક્રમલિંગો વીરરસો હોઈ) અનનુશય, ધૃતિ, પરા-
ક્રમ આ લક્ષણોવાળો રસ વીરરસ કહેવાય છે. અનુશય શબ્દનો
અર્થ ગર્વ—અથવા પશ્ચાત્તાપ છે. આ જેનું લક્ષણ છે, તે અનુશય લિંગ
છે. એ એમાં હોતો નથી. તે અનનુશય લિંગ છે. દાન આપીને એ
અહંકાર કે પશ્ચાત્તાપ કરતો નથી તે વીરરસ કહેવાય છે. તપશ્ચર્યામાં
એ ધૈર્ય રાખે છે—પશ્ચાત્તાપ કરતો નથી તે વીરરસને લીધે જ. શત્રુજનના
વિનાશાર્થે એ પરાક્રમ બતાવે છેવૈકલ્ય-વિકલતા—નબળાપણું બતાવતો નથી તે
વીર રસને લીધે જ. આ સર્વે અનનુશય, ધૈર્ય અને પરાક્રમના લક્ષણોથી એમ
જણાય છે કે ‘આ માણસ વીરરસ યુક્ત છે.’ આ પ્રમાણે બીજે પણ સમજવું બોધ્યું.

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૭૦ સંલક્ષણવીરરસનિરૂપણમ્

૮૩૫

પરાક્રમચિહ્નઃ પરક્રમતે ન તુ વૈકલ્યમવલમ્બતે તદા ચ વીરો રસો ભવતિ । એત્સિ-
મિર્લક્ષણૈ જ્ઞાતે યદયં જનો વીરે રસે વર્તતે ઇતિ । એવમન્યત્રાપિ બોધ્યમ્ । સમ્પ્રતિ
ઉદાહરણં દર્શયિતુમાહ —વીરો રસો યથા યથા=યેન પ્રકારેણ વીરો રસો જ્ઞાયતે-
તથોચ્યતેઽનુપદવક્ષ્યમાણયા ગાયવા ‘સો નામ’ ઇત્યાદિ રૂપયા । યો રાજ્યં પરિ-
ત્યજ્ય પ્રવ્રજિતઃ સન્ કામક્રોધરૂપમહાશત્રુપક્ષસ્ય નિર્ધાતનં=વિનાશં કરોતિ સ
નામ=નિશ્ચયેન મહાવીરો ભવતિ । વીરરસે યથા પુરુષચેષ્ટાપ્રતિપાદ્યતે તથૈવૈવંચિષેષુ
કાવ્યેષુ પુરુષચેષ્ટાપ્રતિપાદનાત્ વીરો રસો બોધ્યઃ । તથા ચાત્ર મોક્ષપ્રતિપાદકે
મસ્તુતશાસ્ત્રે મહાપુરુષવિજેતવ્યકામક્રોધાદિભાવશત્રુજયેનૈવ વીરરસોદાહરણમ્ । પ્રા-
ચાહિયે । અવ સૂત્રકાર (વીરો રસો જહા) વીરરસ જિસ પ્રકાર કે દૃષ્ટાન્ત
સે જાના જાતા હૈ, ઉસ પ્રકાર કે દૃષ્ટાન્ત કો ઇસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ
કરતે હૈ—(સો નામ મહાવીરો જો રજ્ઞં પયહિજ્ઞ પવ્વહઓ, કામક્રોહ-
મહાસત્તુપક્ષનિગ્ધાયણં કુણહ) ‘ જો રાજ્ય કા પરિત્યાગ કરકે
દીક્ષિત હોતો હૈ ઓર દીક્ષિત હોકર જો-કોમ ક્રોધ રૂપ
મહાશત્રુ કે પક્ષકા વિનાશ કરતા-હૈ વહ નિશ્ચય સે મહાવીર હોતા હૈ ।
વીરરસ મેં જૈસી પુરુષ ચેષ્ટા કહી જાતી હૈ વૈસી હી પુરુષ ચેષ્ટા ઇસ
પ્રકાર કે કાવ્યોં મેં પ્રકટ કી જાતી હૈ અર્થાત્ વર્ણિત કી જાતી હૈ—ઇસ-
લિયે વહાં વીરરસ જાનના ચાહિયે । યહ પ્રસ્તુત શાસ્ત્ર મોક્ષ કા પ્રતિ-
પાદન કરને વાલા હૈ । ઇસલિયે ઇસમેં મહા પુરુષ દ્વારા વિજેતવ્ય જો
કામ ક્રોધ આદિ ભાવશત્રુ હૈ, ઉનકે જીતને સે હી વીરરસ કા ઉદા-
હરણ કહા ગયા હૈ । સાધારણ મનુષ્યદ્વારા સાધ્ય-પેસે સંસાર કા કારણ

હવે સૂત્રકાર આ (વીરો રસો જહા) વીરરસ જે પ્રકારના દૃષ્ટા-
ન્તથી બજુવામાં આવે છે તે પ્રકારના દૃષ્ટાન્તને આ ગાથા વડે
સ્પષ્ટ કરે છે—(સો નામ મહાવીરો જો રજ્ઞં પયહિજ્ઞ પવ્વહઓ, કામક્રોહ
મહાસત્તુપક્ષનિગ્ધાયણં કુણહ) ‘ જે રાજ્યના વૈભવને ત્યજીને દીક્ષા ગ્રહણ
કરે છે અને દીક્ષિત થઈને જે કામ-ક્રોધ રૂપ મહાશત્રુનાં પક્ષને વિનષ્ટ કરે
છે, તે ચોક્કસ મહાવીર હોય છે. વીરરસમાં જેવી પુરૂષ-ચેષ્ટા કહેવામાં આવે
છે તેવી પુરૂષચેષ્ટા આ જાતના કાવ્યોમાં પ્રકટ કરવામાં આવે છે એટલે કે
વર્ણવવામાં આવે છે. એથી ત્યાં વીરરસ બજુવો જોઈએ આ પ્રસ્તુતશાસ્ત્ર
મોક્ષપ્રતિપાદક છે. એટલા માટે આ શાસ્ત્રમાં મહાપુરૂષ વડે વિજેતવ્ય કામ,
ક્રોધ વગેરે શત્રુભાવો છે, તેમને જીતવાના જ વીરરસના ઉદાહરણો પ્રસ્તુત
માનવામાં આવ્યાં છે. સામાન્ય માણસો વડે સાધ્ય એવા સંસારના કારણભૂત

૮૩૬

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

કૃતમનુજસાધ્યસંસારકારણદ્રવ્યશત્રુનિગ્રહસ્થાપસ્તુત્ત્વાન્ન તથાવિધોદાહરણમન્ન
દસ્યુ । એવમન્યત્રાપિ બોધ્યમ્ ॥સૂ૦ ૧૭૦॥

અથ દ્વિતીયં શૃંગારરસં સલક્ષણં નિરૂપયતિ—

મૂલ્ય—સિંગારો નામ રસો રતિસંજોગાભિલાસસંજનણો ।
મંડળવિલાસવિદ્યોયહાસલીલારમણલિંગો ॥૪॥ સિંગારો રસો
જહા મધુરવિલાસસલિયં હિયુઝમ્માદનકરં જુવાણાણં । સામા
સદ્દુદામં દાણતી મેહલાદામં ॥૫॥ ધી ધીમં સિંગારે, સાદૂણં
જો ઉવજ્જિયદ્વો ય । મોક્ષગિહઅગ્ગલા સો, નાયરિયદ્વો ય
મુણિહિ હમો ॥૬॥સૂ૦ ૧૭૧॥

છાયા— શૃંગારો નામરસો રતિસંયોગાભિલાષસંજનનઃ । મળ્ડનવિલાસ વિ-
વ્બોક હાસ્યલીલારમણલિંગોઃ ॥૪॥ શૃંગારો રસો યથા—મધુરવિલાસમુલ્લિતં દ્વદ-
યોન્માદનકરં યુનામ્ । ઇયામા શબ્દોદામં દર્શયતિ મેલલાદામ ॥૫॥ ધિગ્ધિગ્ ઇમં
શૃંગારં, સાધૂનાં યસ્તુ વર્જિતવ્યશ્ચ । મોક્ષગૃહાર્ગલા સઃ, નાચરિતવ્યશ્ચ મુનિ-
મિરયમ્ ॥૬॥ સૂ૦ ૧૭૧॥

ટીકા —‘સિંગારો’ इत्यादि—

શૃંગારો નામ રસો દિ-રતિસંયોગાભિલાષસંજનનઃ-રતિઃ રતિકારણાનિ
લક્ષનાદીનિ ગૃહ્યન્તે કાર્યે કારણોપચારાત્, તત્સંયોગાભિલાષસ્ય-લક્ષનાભિઃ સહ
બુત જો દ્રવ્ય શત્રુ કા નિગ્રહ કરના હૈ વહ યહાં અપસ્તુત હૈ । હસલિયે
સૂત્રકારને હસ પ્રકાર કા ઉદાહરણ યહાં નહીં દિયા હૈ હસી પ્રકાર સે
અન્યત્ર ભી જાનના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૭૦ ॥

અથ સૂત્રકાર લક્ષણ સહિત શૃંગાર રસ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સિંગારો નામ રસો” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ— (સિંગારો નામ રસો રતિસંજોગાભિલાસ-સંજનણો)
શૃંગાર નામક રસ રતિસંયોગાભિલાષ જનક હોતા હૈ । રતિ સે

જે દ્રવ્યશત્રુનું દમન કરવું તે અહીં અપસ્તુત છે. એથી જ સૂત્રકારે આ બાતનું
ઉદાહરણ અહીં આપ્યું નથી આ પ્રમાણે બીજે પણ બાબતું બોધ્યું. ॥સૂ૦ ૧૭૦॥

હવે સૂત્રકાર લક્ષણસહિત શૃંગારરસનું નિરૂપણ કરે છે—

“સિંગારો નામ રસો” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સિંગારો નામ રસો રતિસંજોગાભિલાસસંજનણો) શૃંગાર રસ
રતિસંયોગાભિલાષજનક હોય છે. અહીં રતિથી કાર્યમાં કારણના ઉપચારથી

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૭૧ સલક્ષણશૃંગારરસનિરૂપણમ્

૮૩૭

સક્ષમેન્દ્રાયાઃ સંજનનઃ=સમુત્પાદકઃ, તથાચ મળ્ડનવિલાસવિન્બોકહાસ્યરમણ-
લિંગઃ-મળ્ડનમ્-અલક્ષારૈર્ગત્રાલક્ષણમ્, વિલાસઃ-પ્રિયસમીપગમને યઃ સ્થાનાસ-
નગમનવિલોકિતેષુ વિકારોઽકસ્માચ્ચ ક્રોધસ્મિતચમત્કારમુખચિહ્નવનં સવિલાસઃ,
વિન્બોકઃ=અભિમતપ્રાપ્તોવપિ ગર્વીદનાદરઃ, સાપરાધસ્ય સ્વચ્ચન્દનાદિના સંયમનં
તાડનં ચ, હાસ્યમ્=પતીતાર્થમ્, લીલા=સકામગમનભાષિતાદિ રમણીયચેષ્ટા,
અલબ્ધપ્રિયસમાગમયા સ્ત્રિયા સ્વચિત્તવિનોદાર્થે પ્રિયસ્ય યા વેષગતિદૃષ્ટિહસિતમ્-
ણિતૈરનુકૃતિઃ ક્રિયતે સા વા લીલા, રમણં=ક્રીડનમ્, एतानि लिङ्गं-ચિહ્નં યસ્ય
સ તથાવિધો ભવતિ । ઉદાહરણમાહ-શૃંગારો રસો યથા-શ્યામા-ષોડશવર્ષદે-

યહાં પર કાર્ય મેં કારણ કે ઉપચાર સે રતિ કે કારણભૂત જો
લલના આદિ પદાર્થ હૈં, વે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । ઉનકે સાથ સંગમ કી
ઈચ્છા કા જનક યહ શૃંગાર રસ હોતા હૈ । (મંડળાવિલાસવિન્બોય,
હાસ, લીલારમણલિંગો) અલંકારોં સે શરીર કો સહિજત=અલંકૃત,
કરના હસકા નામ 'મળ્ડન' હૈ । પ્રિય કે સમીપ જાને મેં જો સ્થાન,
આસન, ગમન, એવં વિલોકન મેં વિકાર ઔર અકસ્માત ક્રોધ, સ્મિત,
ચમત્કાર, મુખ ચિહ્નવન હોતા હૈ, વહ વિલાસ હૈ । અભિમત કી પ્રાપ્તિ
મેં બી ગર્વ (અહંકાર) સે અનાદર, કરના ઔર અપરાધસહિત કા
સ્વક-માલા ચંદન આદિ સે સંયમન કરના, તાડન કરના, યહ વિન્બોક
હૈ । હાસ્ય-હૈંસના । સકામ ગમન એવં ભાષિત આદિ જો રમણીય ચેષ્ટાપૈ
હૈ, વે 'લીલા' હૈ । અથવા જિસ સ્ત્રી કો પ્રિય કા સમાગમ અલબ્ધ હો
રહા હૈ, વહ જો અપને ચિત્ત કો વિનોદિત કરને કે લિયે પ્રિય કે વેષ

રતિના કારણ જે લલના વગેરે પદાર્થો છે તેમનું ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે.
તેમની સાથે સંગમની ઇચ્છાને ઉદ્ભાવક આ શૃંગાર રસ હોય છે. (મંડળ-
વિલાસવિન્બોય, હાસ, લીલા રમણલિંગો) અલંકારોથી શરીરને સુસજ્જિત-
અલંકૃત-કરવું તેનું નામ 'મંડન' છે. પ્રિયની પાસે જતાં જે સ્થાન,
આસન, ગમન અને વિલોકનમાં વિકાર તેમજ આચિંતા-ક્રોધ, સ્મિત, ચમ-
ત્કાર, મુખચિહ્નવન હોય છે, તે વિલાસ છે અભિમતની પ્રાપ્તિમાં પણ ગર્વ
(અહંકાર)થી અનાદર કરવો, તેમજ અપરાધીનું સ્વક-માલા-ચંદન વગેરેથી
સંયમન કરવું, તાડન કરવું વિખેલું છે હાસ્ય-હંસનું સકામ ગમન અને
ભાષિત જે રમણીય ચેષ્ટાઓ છે, તે 'લીલા' છે. અથવા જે સ્ત્રી પ્રિયસમા-
ગમ મેળવી શકી નહીં તેવી સ્ત્રી પોતાના ચિત્તને પ્રસન્ન કરવા માટે પ્રિયના
વેષનું ગતિનું દૃષ્ટિનું, હાસ્યનું, વાણીનું અનુકરણ કરે છે, તે 'લીલા' છે.

૮૨૮

અનુયોગદ્વારસ્વરૂ

શીયા-સ્ત્રી, 'શ્યામા ષોડશવાર્ષિકી' રસમિધાનાત્, શબ્દોદામ-શબ્દઉદામા= પ્રચુરો યત્ર તત્-કિઙ્કિણી સ્વનમુલરમ્ 'ઉદામ' શબ્દસ્ય પરનિપાત આર્ષત્વાત્, અતઃ એવ યૂનાં=તરુણાનાં હૃદયોન્માદકરમ્ પ્રબલસ્મરપ્રકટીકરણાત્ હૃદયોન્મત્તતા વિધાયકં સ્વકીયં મેહલાદામ=કટિસૂત્રં મધુરવિલાસસુલલિતમ્-મધુરૈઃ=કામિજનહૃદયા હ્રાદકતયા માધુર્યમુરગતૈઃ વિલાસૈઃ સકામચેષ્ટાવિશેષૈઃ સુલલિતમ્=અતિશયમનોહારિ યથાસ્યાત્તથા દર્શયતિ । શૃંગારપ્રધાનચેષ્ટાપ્રતિપાદનાદયં શૃંગારો રસઃ,

કા, ગતિ કા, દષ્ટિ કા, હાસ્ય કા, બોલી કા અનુકરણ કરતી છે, વહ 'લીલા' છે । ક્રીડા કરના હસકા નામ રમણ છે । હસ શૃંગાર રસ કે મંડન, વિલાસ, વિબોધ, હાસ્ય, લીલા ઓર રમણ યે ચિહ્ન છે ।

અવ સૂત્રકાર (સિંગારો રસો જહા) યહ શૃંગાર રસ જિસ પ્રકાર સે જાના જાતા છે, ઉસ પ્રકાર કો હસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરતે છે—(સામો) "શ્યામા ષોડશવાર્ષિકી" હસ કથનાનુસાર કોઈ ષોડશવર્ષદેશીયા—સોલહ વર્ષ કી અવસ્થા વાલી તરુણ વયસ્કા-સ્ત્રી (સહુદામ) શુદ્ધચંદિકાઓં કે શબ્દ સે સુલલિત અતઃ (જુવાણાણં) યુવા પુરુષોં કે (હિય-ઉન્માદનકરં) હૃદય કો પ્રબલસ્મરકી પીડા ઉત્પન્ન કરને સે ઉન્મત્ત કરને વાલે ઈસે (મેહલાદામ) અપને કટિસૂત્ર કો (મધુરવિલાસ-સુલલિયં) કામિજનોં કે હૃદય કો આહ્વાદક હોને કે કારણ મધુર લગને વાલે વિલાસોં-સકામ ચેષ્ટા વિશેષોં-સે અતિશય મનોહારો જૈસે વહ હોતા છે ઉસ પ્રકાર સે (દાપતી) દિલ્લલાતે છે હસ શૃંગારરસ મેં શૃંગારપ્રધાન ચેષ્ટાઓં કા પ્રતિપાદન હોતા છે હસલિયે હસે 'શૃંગારરસ'

ક્રીડા કરવી તે રમણ કહેવાય છે મંડન, વિલાસ, વિબોધ, હાસ્ય, લીલા તેમજ રમણ આ સર્વે શૃંગાર રસના ચિહ્નો છે.

હવે સૂત્રકાર (સિંગારો રસો જહા) શૃંગારરસ બેનાથી જણાય છે તેનું આ ગાથા વડે કથન કરે છે. (સામો) "શ્યામા ષોડશવાર્ષિકી" આ કથન મુજબ કોઈ સોળ વર્ષની અવસ્થાવાળી તરુણવયસ્કા-સ્ત્રી (સહુદામ) શુદ્ધચંદિકાઓથી સુપરિત તેથી (જુવાણાણં) યુવકોના (હિય-ઉન્માદનકરં) હૃદયોને પ્રબલતમ સ્મર પીડાથી યુક્ત કરીને ઉન્મત્ત કરનાર (મેહલાદામ) પોતાના કટિ-સૂત્રને (મધુરવિલાસસુલલિયં) કામુકોના હૃદયને આર્હિલાદક હોવા બદલ મધુર લાગે તેવા વિલાસો-સકામ ચેષ્ટા વિશેષોથી અતિશય મનોહારી લાગે તેમ (દાપતી) તેને બતાવે છે. આ શૃંગાર રસમાં શૃંગાર પ્રધાન ચેષ્ટાઓનું પ્રતિપાદન થાય છે એથી આને શૃંગાર રસ કહેવામાં આવે છે. (ધી ધીમે

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂત્ર ૧૭૨ સલક્ષણમદ્ભુતરસનિરૂપણમ્

૮૩૯

इति बोध्यम् ॥ इमं = पूर्वोक्तस्वरूपं शृंगारं = शृंगाररसं धिग् धिग् = धिगस्तु यस्तु साधूनां = सर्वविरतिमतां मुनीनां वर्जितव्यः । स शृंगारः मोक्षमार्गाङ्का = मोक्षद्वार-
स्यागलाभूतोऽतोऽसौ शृंगाररसः मुनिभिर्नावरितव्यः = न सेवनीयः ॥ ६ ॥ सू० १७१ ॥

अथ तृतीयमद्भुतरसं सलक्षणं दाह—

मूलम्—विम्हयकरो अपुव्वो, अनुभूयपुव्वो य जो रसो होइ ।
हरिसविसा उप्पत्ति,—लक्खणो अब्भुओ नाम ॥ ६ ॥ अब्भुओ
रसो जहा—अब्भुयतरमिहएत्तो अन्नं किं अत्थि जीवलोगंमि ।
जं जिणवयणे अत्था तिकालजुत्ता मुणिजंति ? ॥ ७ ॥ सू० १७२ ॥

छाया—विस्मयकरः अपूर्वः अनुभूतपूर्वश्च यो रसो भवति । इर्षविषादोत्प-
त्तिलक्षणः अद्भुतो नाम ॥ अद्भुतो रसो यथा—अद्भुतरसमिह एतरमात् अन्यत्
किमस्ति जीवलोके । यत् त्रिजवचने अर्थाः त्रिकालयुक्ता ज्ञायन्ते ॥ सू० १७२ ॥

टीका—‘विम्हयकरो’ इत्यादि—

अपूर्वः=अननुभूतपूर्वः, अनुभूतपूर्वः—पूर्वमनुभूतो वा વિસ્મયકરઃ—કર્મિ-
શ્ચિદ્દ્ભુતે પદાર્થે દૃષ્ટે યદાશ્ચર્યં જાયતે, અતઃ સ પદાર્થો વિસ્મયકર ઉચ્યતે,

કહા હે । (ધી ધીમં શૃંગારં) ઇસપૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાલે શૃંગારસ—કો ધિક્કાર
હો ધિક્કાર હો (જો ડ) ક્યોંકિ યહ (સાહૂણં) સાધુ જનોં કો (વજ્જિયવ્વો)
છોડ્ઢને યોગ્ય કહા ગયા હૈ । કારણ ઇસકા યહ હૈ કિ યહ (મોક્ષગિહ
અગ્ગલાઓ) મોક્ષ રૂપી ઘરકી અગ્ગલા રૂપ હૈ । અતઃ (મુણિહિ ઇમો નાય-
રિયવ્વો) મુનિ જનોં કો ઇસકા સેવન નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૭૧ ॥

अथ सूत्रकार लक्षणनिर्देश पुरस्सर तीसरे अद्भुतरस का कथन
करते हैं ।—“विम्हय करो अपुव्वो अनुभूयपुव्वो” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(अपुव्व) पूर्व में कभी अनुभव में नहीं आये अथवा (अनु-

सिगार) आ उपरोक्त स्वरूपवाला शृंगार रसने धિક્કાર છે, ધિક્કાર છે.
(જો ડ) કેમ કે એ (સાહૂણં) સાધુ જનોને સર્વ વિરતિ સંપન્ન મુનિજનોના
આટે (વિવજ્જિયવ્વો) ત્યાજ્ય કહેવામાં આવ્યો છે. કેમ કે આ (મોક્ષગિહ-
અગ્ગલાઓ) મોક્ષરૂપી ઘરની અગ્ગલા છે. એથી (મુણિહિ ઇમો નાયરિયવ્વો)
મુનિજનો આ રસનું સેવન કરે નહીં. ॥ સૂ૦ ૧૭૧ ॥

હવે સૂત્રકાર લક્ષણ સહિત ત્રીજા અદ્ભુત રસનું કથન કરે છે—

“વિમ્હયકરો અપુવ્વો અનુભૂયપુવ્વો” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અપુવ્વ) પૂર્વે કોઈ પણ દિવસે ન અનુભવેલ અથવા તે

તદર્શનોદ્ભવો રસોડપિ વિસ્મયકરો બોધ્યઃ एतादृशो यो रसो भवति स हर्षविषा
 दोत्पत्तिलक्षणः आश्चर्यमये शुभे वस्तुनि दृष्टे हर्षोत्पत्तिः, तथैवाशुभे वस्तुनि दृષ્ટं
 विषादोत्पत्तिः, एतदुभयविद्वः अद्भुतो नाम रसो बोध्यः । उदाहरणमाह—अद्भुतं
 रसो यथा—इह=अस्मिन् जीवलोके=संसारे इतोऽन्यत्=अस्मात्परम् अद्भुततरम्
 आश्चर्यतरम् किमस्ति ?=न किंचिदप्यस्ति । कुतो न ? इत्याह—यत्=यस्मात् कारणात्
 जिनवचने त्रिकालयुक्ताः=अतीतानागतवर्तमानरूपत्रिकालयुक्ता अपि अर्थः=
 जीवादयः सूक्ष्मव्यवहिततिरोहितातीन्द्रियामूर्त्तादिस्वरूपा ज्ञायन्ते इति॥મૂ० ૧૭૨।

મૂયપુઢ્વો) અનુભવ મેં મી આયે હુણ એસે (વિમ્હયકરો) કિસી અદ્ભૂત
 પદાર્થ કે દેલ્લને પર જો આશ્ચર્ય હોતા હૈ, ઉસ આશ્ચર્ય કા જનક વા
 પદાર્થ વિસ્મય કર કહલાતા હૈ તથા ઉસસે જો રસ ઉત્પન્ન હોતા હૈ
 વહ રસ—મી વિસ્મયકર કહા જાતા હૈ । હસ અદ્ભૂત રસ કા— લક્ષણ
 હર્ષ ઓર વિષાદ કી ઉત્પત્તિ હોના હૈ । આશ્ચર્ય જનક કિસી શુભવસ્તુ
 કે દેલ્લને પર હર્ષોત્પત્તિ હોતી હૈ, ઓર અશુભવસ્તુ દેલ્લને પર વિષાદો
 ત્પત્તિ હોતી હૈ । અતઃ યહ અદ્ભૂત રસ હન દોનોં ચિહ્ન વાલા હોતા હૈ
 એસા જાનના ચાહિયે । અવ સૂત્રકાર હસ રસ કો જાનને કે લિયે ઉદા
 હરણ કહતે હૈ । વે કહતે હૈ કિ (અવ્મુઓ રસો) ‘યહ અદ્ભૂત રસ
 હસપ્રકાર સે હૈ (જહા) જૈસે—(અવ્મુયતરમિહ ઇત્તો અન્નં કિં અત્થિજીવ
 લોગંમિ) હસ—જીવલોક મેં હસસે અત્રિક ઓર દૂસરા આશ્ચર્ય-
 વ્યા હૈ ? (જં જિણવયણે તિકાલજુત્તા અત્થા મુણિજ્જંતિ) જો જિન વચન
 મેં સ્થિત ત્રિકાલ—અતીત —અનાગત—ઓર વર્તમાન કાલવર્તી સમસ્ત

(અનુમૂયપુઢ્વો) અનુભવેલ (વિમ્હયકરો) કોઈ પણ અદ્ભૂત પદાર્થને જોઈને
 જે આશ્ચર્ય થાય છે, તે આશ્ચર્યને ઉત્પન્ન કરનાર તે પદાર્થ વિસ્મયકારી
 કહેવાય છે. તેમજ તેના વડે જે રસ ઉત્પન્ન થાય છે, તે રસ પણ વિસ્મય-
 કર કહેવાય છે આ અદ્ભૂત રસનું લક્ષણ હર્ષ અને વિષાદની ઉત્પત્તિ થવી
 તે છે આશ્ચર્યોત્પાદક કોઈ શુભ વસ્તુને જોવાથી હર્ષ ઉત્પન્ન થાય છે.
 અને અશુભ વસ્તુને જોવાથી વિષાદની ઉત્પત્તિ થાય છે. એથી
 આ અદ્ભૂત રસ આ બન્ને ચિહ્નો યુક્ત હોય છે. હવે સૂત્રકાર આ રસને
 બાબુના માટે ઉદાહરણ પ્રસ્તુત કરે છે. તેઓ કહે છે કે (અવ્મુઓ રસો)
 આ અદ્ભૂત રસ આ પ્રમાણે છે—(જહા) જેમ કે (અવ્મુયતરમિહ ઇત્તો અન્નં
 કિં અત્થિ જીવલોગંમિ) આ જીવલોકમાં એના કરતાં બીજી કંઈ નવાઈ
 પ્રમાણે તેવી વાત છે. કે (જં જિણવયણે તિકાલ જુત્તા અત્થા મુણિજ્જંતિ) જે
 જિન વચનમાં સ્થિત ત્રિકાલ—અતીત—અનાગત અને વર્તમાનકાલીન સર્વ

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १७३ सलक्षणरौद्ररसनिरूपणम्

२४३

अथ चतुर्थ रौद्ररसं सलक्षणमाह—

मूलम्—भयजणणरूवसद्वंधयारचिंताकहासमुप्पण्णो । समीहि-
संभमविसायमरणलिङ्गो रसो रोदो ॥८॥ रोदो रसो जहा—भिउडो
विडंबियमुहो संदट्ठोइ इयरुहिरमाकिण्णो । हणसि पसुं असुरणिभो
भीमरसिय अइरोइ ! रोदोऽसि ॥९॥ सू० १७३॥

छाया—भयजननरूपशब्दान्धकारचिन्ताकथासमुत्पन्नः । सम्मोहसंभममि-
षादमरणलिङ्गो रसो रौद्रः ॥ रौद्रो रसो यथा—भ्रुकुटिविडम्बितमुत्तः संवहो
इति रुधिरमाकीर्णः । हंसि पशुम् असुरनिभो भीमरसित अतिरौद्रः ।
रौद्रोऽसि । सू० १७३॥

टीका—‘भयजणण’ इत्यादि—

भयजननरूपशब्दान्धकारचिन्ताकथासमुत्पन्नः—रूपं=शत्रुपिशाचादीनामाकृतिः,

सूक्ष्म व्यवहित एवं तिरोहित पदार्थ जान लिये जाते हैं । स्वभाव विप्र-
कृष्ट परमाणु आदि पदार्थ सूक्ष्म हैं । काल विप्रकृष्ट—राम—रावण अमरि-
आदि पदार्थ व्यवहित हैं देश विप्रकृष्ट—सुमेरु पर्वत आदि पदार्थ
तिरोहित हैं । इस प्रकार अतीन्द्रिय एवं अमूर्त स्वरूप जितने भी आगम
कथित त्रिकालवर्ति जीवादिक पदार्थ हैं, वे सब जिनबचन के प्रमाण
से प्रत्यक्ष और परोक्षरूप से जानलिये जाते हैं ॥ सू० १७२ ॥

अथ सूत्रकार चौथा रौद्र रस का लक्षण निर्देशपूर्वक कथन
करते हैं—“भयजणणरूव” इत्यादि

शब्दार्थ—(भयजणणरूवसद्वंधयारचिंताकहासमुप्पण्णो) भय,

सूक्ष्म व्यवहित अने तिरोहित पदार्थों जल्ली देवाय छे स्वभावः विप्रकृष्ट
परमाणु वगेरे पदार्थों सूक्ष्म छे । कालविप्रकृष्ट राम—रावण वगेरे पदार्थों
व्यवहित छे, देशविप्रकृष्ट सुमेरुपर्वत वगेरे पदार्थों तिरोहित छे । आ आगम
केटकां आगम कथित त्रिकालवर्ती अतीन्द्रिय अने अमूर्त स्वरूप लुभाकि
पदार्थों छे, ते सबे जिन वचनना प्रलावथी प्रत्यक्ष तेमज परीक्ष रीते
जल्ली देवाय छे ॥ सू० १७२ ॥

इवे सूत्रकार चतुर्थ रौद्र रसनं लक्षण सहित कथन करे छे—

“ भयजणणरूव ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(भयजणणरूवसद्वंधयारचिंता कहा समुप्पण्णो) भयेत्यादि

अ० १०६

શબ્દઃ=તેષામેવ શત્રુપિશાચાદીનાં શબ્દઃ, અન્ધકારઃ-નિવિહતમઃ, एतेषां द्वन्द्वः,
 भयजनकः=भयोत्पादका ये रूपशब्दान्धकाराः-तेषां चिन्ता=तत्स्वरूपपर्यालो-
 कनरूपा स्मृतिः, कथा=स्वरूपप्रकथनं च, उपलक्षणत्वाद् दर्शनमपि बोध्यम्, ततः
 समुत्पन्नः=संजातः, तथा-संमोहसंभ्रमविषादमरणलिङ्गः-संमोहः विवेकरहित्यम्,
 संभ्रमः=व्याकुलता, विषादः=ममाऽत्रप्रदेशे समागमनमशोभनमित्येवं शोकः,
 मरणं=भयोद्विग्नस्य गजसुकुमालहन्तुः सोमिलब्राह्मणस्येव झटिति प्राणोत्क्रमणम्,
 चिह्नं चिह्नानि=चिह्नानि यस्य स तथाभूतो रौद्रो रसो भवति । नन्वयं भयजन-
 क इति स्मरणकथनदर्शनसमुत्पन्नः सम्मोहादिलक्षणो भयानक एव भवति,
 कथनस्य रौद्ररसत्वमभिहितम् ? इति चेदाह-यद्यप्ययं भवत्कथनानुसारेण भयानक

जनक रूप, શબ્દ ઔર અન્ધકાર કી સ્વરૂપપર્યાલોચનારૂપ સ્મૃતિ સે
 સ્વરૂપ કથનરૂપ કથા સે 'દર્શન સે ઉત્પન્ન હુઆ (સંમોહસંભ્રમવિસા-
 યમરણલિંગો) તથા વિવેકરહિતપના રૂપ સંમોહ વ્યાકુલતારૂપ સંભ્રમ
 શોક રૂપ વિષાદ ઔર પ્રાણવિસર્જન રૂપ મરણ હન-લિંગો ચિહ્નો બાલા
 (રોહો રસો) રૌદ્ર રસ હોતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ યહ રૌદ્ર
 રસ' ભયજનક રૂપાદિકોં કે સ્મરણ આદિ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઔર
 યે સંમોહ ચિહ્નો સે જાના જાતા હૈ મેરા હસ પ્રદેશ મેં સમાગમન
 ઈતિ કહી હૈ, હસ પ્રકાર સે શોક કરને કા નામ વિષાદ હૈ । ગજ
 સુકુમાલ કો મારને વાલે સોમિલ બ્રાહ્મણ કી તરહ ભયોદ્વિગ્ન વ્યક્તિ
 કો જો જલ્દી સે પ્રાણોં કા ઉત્ક્રમણ હૈ વહ મરણ હૈ ।

શંકા-ભયજનક રૂપાદિકોં કે સ્મરણ સે, કથન સે एवं દર્શન સે,-

શબ્દ અને અન્ધકારની સ્વરૂપ પર્યાલોચના રૂપ સ્મૃતિથી, સ્વરૂપ કથન રૂપ
 દર્શનથી ઉત્પન્ન થયેલ (સંમોહસંભ્રમવિસાયામરણલિંગો) તેમજ
 વિવેકરહિત-રૂપ સંમોહ, વ્યાકુલતા રૂપ સંભ્રમ, શોકરૂપ વિષાદ અને
 મરણવિસર્જન રૂપ મરણ આ ચિહ્નો યુક્ત (રોહો રસો) રૌદ્ર રસ હોય છે.
 આ પ્રમાણે છે કે આ રૌદ્ર રસ ભયોત્પાદક રૂપ વગેરેના સ્મરણથી
 ઉત્પન્ન થાય છે. આ સંમોહન ચિહ્નોથી બાણવામાં આવે છે માટે આ
 પ્રદેશમાં સમાગમન ઉચિત નથી, આ પ્રમાણે ચિન્તા કરવી તે વિષાદ છે.
 ગજસુકુમાલને મારવાર સોમિલ બ્રાહ્મણની જેમ ભયોદ્વિગ્ન વ્યક્તિના
 પ્રાણોત્ક્રમણે જલ્દી ઉત્ક્રમણ છે, તે મરણ છે.

શંકા-ભયોત્પાદક રૂપાદિકોં સ્મરણથી, કથનથી અને દર્શનથી ઉત્પન્ન

અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકા સૂચ ૧૭૩ સલક્ષણરૌદ્રસનિરૂપણમ્

૮૭૭

एव, तथाऽपि पिशाचादिरौद्रवस्तुसंजातत्वादस्य रौद्रत्वं विवक्षितम् । किंच शत्रुजनादिदर्शने तच्छिरच्छेदने समुद्युक्तानां ज्ञानशूकरादिवधादिमवृत्तानां च यो रौद्राध्यवसायात्मको भुक्तुमीभङ्गादिलिङ्गो रौद्रो रौद्रोऽप्युपलक्षणत्वादत्रैव बोध्यः । अन्यथा स निरास्पद एव स्यात् । अत एवात्र रौद्रपरिणामवत्पुरुषचेष्टाप्रतिपादकमेवोदाहरणं वक्ष्यति । भयत्रस्तचेष्टाप्रतिपादनं कदाचित्

उत्पन्न हुआ संमोहादिलक्षणोंवाला भयानक रसही होता है, फिर इस रौद्ररस रूप कैसे कहा ?

उत्तर-यद्यपि यह आपके कथनानुसार भयानक रस ही है-तो भी पिशाच आदि रौद्र वस्तु के देखने आदि से यह उत्पन्न होता है, इस लिये इसमें रौद्रता विवक्षित हुई है । किंच-शत्रुजन आदि के दर्शन होनेपर उनके शिरच्छेद करने में कटिबद्ध हुए व्यक्तियों के और बकरा, शूकर एवं कुरंग-हिरण-आदि जानवरों की हिंसा करने में प्रवृत्त हुए व्यक्तियों के जो रौद्र परिणाम होते हैं, कि जो भुक्तुमी भङ्गादिलिङ्गों से जाने जाते हैं वे भी रौद्ररस स्वरूप ही होते हैं । अतः उपलक्षण से रौद्ररस यहां पर जानना चाहिये । नहीं तो, रौद्राध्यवसाय रूप-रौद्ररस निराश्रय मानना पड़ेगा । इसीलिये रौद्रपरिणाम उत्पन्न पुरुष की चेष्टाओं का प्रतिपादक ही उदाहरण यहां सूत्रकार ने कहा है । भय से त्रस्त हुए व्यक्तियों की चेष्टाओं का प्रतिपादन करने वाला उदा-

થયેલ સંમોહાદિ લક્ષણવાળો ભયાનક રસ જ હોય છે, ત્યારે એને રૌદ્ર રસ ક્વ યા માટે કહેવામાં આવ્યો છે ?

ઉત્તર-એ કે તમારા કથા સુજન તો આ ભયાનક રસ જ છે છતાં જો પિશાચ વગેરે રૌદ્ર વસ્તુને જોવા વગેરેથી તે ઉત્પન્ન થાય છે, એથી આમાં રૌદ્રત્વ વિવક્ષિત છે, કિંચ શત્રુજન વગેરેના દર્શનથી, તેમજ શિરચ્છેદન કરવા માટે તત્પર થયેલ વ્યક્તિઓને અને બકરા, શૂકર તેમજ કુરંગ-હિરણ વગેરે જાનવરોની હિંસા કરવા માટે પ્રવૃત્ત થયેલ વ્યક્તિઓના જે રૌદ્ર રસ પરિણામ હોય છે અને જે ભુક્તુમી-ભંગ વગેરે ચિહ્નોથી જાણવામાં આવે છે તે પણ આ રૌદ્રરસ સ્વરૂપ જ હોય છે. માટે ઉપલક્ષણથી રૌદ્રરસ અહીં જ જાણવો જોઈએ નહિતર, રૌદ્રાધ્યવસાય રૂપ રૌદ્રરસ નિરાશ્રય માનવો પડશે એથી રૌદ્ર પરિણામ યુક્ત પુરૂષની ચેષ્ટાઓનું પ્રતિપાદક ઉદાહરણ જ અહીં સૂત્રકારે કહ્યું છે. ભય સંત્રાસ વ્યક્તિની ચેષ્ટાઓનું પ્રતિપાદન કરનાર

૮૫૭

અનુયોગદ્વારસૂત્રે

સ્વપ્નેશ્ચાપ્યુદ્ધમ્ । અતોદાહરણમાહ-રોદ્ધો રસો યથા-મુકુટીવિડમ્બિતમુલ્લઃ-મુકુટિઃ
 =ક્રોધાદિના ક્લાદાસંકોચનં તથા વિડમ્બિતં=વિકૃતી-ભૂતં મુલ્લં યસ્ય સ તથા,
 પુનઃ-સન્દષ્ટીષ્ઠઃ-સન્દષ્ટઃ=દન્તૈર્-દર્ષ્ટ ઓષ્ઠો યેન સ તથાભૂતઃ, ઇતિ=અતશ્ચ-
 રધિરાકીર્ણઃ-રધિરૈઃ આકીર્ણઃ-શોણિતસંકુલો હે મીમરસિન-મીમં=મયંકરં
 રસિતં યસ્ય તત્સંબુદ્ધી, -હે મયજનકશબ્દકારિન્ ! ત્વમ્ અસુરનિભઃ=દૈત્ય ઇવ પશું
 હસિ, અતો હે અતિરોદ્ધ=અતિશયરોદ્ધરૂપધારિન્ । ત્વં રોદ્ધોઽસિ=રોદ્ધપરિણામયુક્તો-
 મ્યુદ્ધિ નરકનિગોદાદિદુઃસ્વં મોક્ષ્યસે ॥ સૂ૦ ૧૭૩ ॥

હરણ તો અપને આપ જાન લેના ચાહિયે । રોદ્ધરસ કા જ્ઞાન જિસપ્રકાર
 લે, રોદ્ધો સંકુલ હૈ સૂત્રકાર (રોદ્ધો રસો જહા) इन पदोंद्वारा उसी प्रकार के
 ઉપમારૂપકા પ્રકટ કરતે હૈ-જૈસે-(મિત્તી વિડંબિયમુહો સંદોદ્ધય
 સ્થિતિમાકિણ્ણો) પશુહિંસા મેં નિરત બને હુવ કિસી હત્યારે મનુષ્ય સે
 કોઈ ધર્માત્મા મનુષ્ય યહ કહ રહા હૈ કિ અરે ! યહ તેરા મુલ્લ ઇસ
 સમય મુકુટી સે વિકરાલબના હુઆ હૈ । ક્રોધાદિક કે આવેગ સે તેરે યે
 દાંત અધરોષ્ઠ કો હસ રહે હૈ । લૂન સે તેરા શરીર લથ પથ હો રહા
 હૈ (મીમરસિય) જો તેરે મુલ્લ સે શબ્દ નિકલ રહે હૈ, બદે મયાવને હૈ ।
 બુદ્ધઃ મહામયજનક શબ્દ બોલને વાલે તુમ (અસુરનિભો) અસુર જૈસે
 બને હુવ હો ઔર (પશું હણસિ) પશુકી હત્યા કર રહે હો । અતઃ (અરો-
 દ્ધ) અતિશય રોદ્ધરૂપધારી તુમ (રોદ્ધોઽસિ) રોદ્ધપરિણામોં સે યુક્ત હોને
 કે કારણ રોદ્ધરસ રૂપ હો-સો યાદ રલ્લો, નરકનિગોદ આદિ કે દુઃસ્વોં
 કો મોર્ગો ॥ સૂ૦ ૧૭૩ ॥

ઉદાહરણ તો પોતાની મેળે જ જાણી લેવું જોઈએ. જે રીતે રોદ્ધ
 રસનું જ્ઞાન થઈ શકે છે હવે સૂત્રકાર (રોદ્ધોરસો જહા) તે પ્રમાણ આ પદો
 વડે ઉદાહરણો પ્રસ્તુત કરીને સ્પષ્ટ કરે છે. જેમ કે-(મિત્તી વિડંબિયમુહો
 સંદોદ્ધયકહિરમાકિણ્ણો) પશુ હિંસા માટે તત્પર થયેલા કેઈ ધાતક
 માણસને કેઈ ધર્માત્મા પુરૂષ આ પ્રમાણે કહે કે અરે ! આ તારું મોં
 હમણાં મુકુટીઓથી વિકરાલ બની રહ્યું છે-ક્રોધ વગેરેના આવેગથી તારા દાંત
 અધરોષ્ઠોને લીંસી રહ્યા છે તારું શરીર લોહીથી ખરડાઈ રહ્યું છે. (મીમર-
 સિય) તારા વચનો અતી અયોગ્યપાતક છે. એથી મહાભયજનક શબ્દો બોલ-
 નાર તું, (અસુરનિભો) અસુર જેવો થઈ ગયો છો અને (પશું હણસિ) પશુની
 હત્યા કરી રહ્યો છો. એથી (અરોદ્ધ) અતિશય રોદ્ધ રૂપ ધારીતું (રોદ્ધોઽસિ)
 રોદ્ધ-પરિણામથી યુક્ત હોવા બદલ રોદ્ધરસ રૂપ છો તો તું યાદ રાખ કે
 મિજાદ વગેરેના દુઃખો ભોગવવા પડશે. ॥સૂ૦૧૭૩॥

अनुयोगचन्द्रिका टीका सूत्र १७४ सलक्षणव्रीडनकरसनिरूपणम्

८७

अथ पञ्चमं व्रीडनकरसं सलक्षणं निरूपयति—

मूलम्—विणओवयारगुज्झगुरुदारमेरावइवइकमुप्पण्णो ।
वेलणओ नाम रसो, लज्जासंकाकरणलिंगो ॥१०॥ वेलणओ रसो
जहा—किं लोइयकरणीओ लज्जणी अतरंति लज्जयामुत्ति । वारि
जम्मि गुरुयणो परिवंदइ जं बहुप्पोत्तं ॥११॥ सू० १७४॥

छाया—विनयोपचारगुह्यगुरुदारमर्यादाव्यतिक्रमोत्पन्नः । व्रीडनको नाम
रसो लज्जासंकाकरणलिङ्गः ॥ व्रीडनको रसो यथा—किं लौकिककरण्या लज्जजीव
तर् लज्जयामीति । वारिज्जे गुरुजनः परिवन्दते यत् बहुपोतम् ॥ सू० १७४॥

टीका—‘विणओ’ इत्यादि—

विनयोपचारगुह्यगुरुदारमर्यादाव्यतिक्रमोत्पन्नः—विनयोपचारः—विनय
योग्यं=मातापितादिगुरुजने विनयकरणम्, गुह्यं=रहस्यम्, गुरुदारमर्यादा=विह
र्यकलाबादीदि गुरुजनमार्याभिः सह औचित्येन वर्त्तनम्, एतेषां द्वन्द्वः, तेषा
व्यतिक्रमः—विनययोग्यस्मादुत्पन्नः—संजातः, तथा—लज्जासंकाकरणलिङ्गः—लज्जा=

अथ सलक्षणं व्रीडनकरसं का लक्षणं को कहते हुए
कह्यन करते हैं—‘विणओवयार गुज्झ’ इत्यादि ।

शब्दार्थ—(विणओवयारगुज्झगुरुदार मेरावइवइकमुप्पण्णो) विनय
करने के योग्य माता पिता आदि गुरु जनों की विनय के व्यभिचार-
उल्लंघन से भिक्षादिजनों की गुप्त बातों आदि रूप रहस्य को लज्जाजनों
के सम्मुख प्रकट करने से तथा पितृव्य-माता, एवं कलाबादी आदि
गुरुजनों की धर्मवर्त्तिनों के साथ औचित्यपूर्ण व्यवहार का व्यतिक्रम
कहने से व्रीडनकर रस उत्पन्न होता है । (लज्जासंकाकरणलिंगो)

इहै सूत्रकार पांचमो व्रीडनकर रसनुं लक्षणसहित कथन करे छे—

“विणओवयारगुज्झ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(विणओवयारगुज्झगुरुदारमेरावइवइकमुप्पण्णो) विनय करवा
योग्य मातापिता वगेरे गुरुओंनी साथे अविनयपूषुं व्यवहार करवायी,
भिक्षा वगेरेनी गुप्त बात वगेरे रूप रहस्यने भीजओनी साथे प्रकट करवायी
तेमजे पितृव्य (काका) अने कलाबादी वगेरे मान्यजनोनी धर्मपत्नीओ साथे
औचित्यपूषुं व्यवहारना अतिक्रम करवायी आ व्रीडनकर रस उत्पन्न आव
छे. (लज्जा संका करणलिंगो) लज्जा अने शंका उत्पन्न भवी ते आ रसनुं

૬૪૬

અનુયોગના રસ

શિરોઽધોઽવનમનાદિરૂપા, શક્કા=માં ન કશ્ચિત્ કિંચિદ્ વદે? દિત્તિરૂપા, તયો કરણં=વિવાનં લિઙ્ગં=લક્ષણં यस્ય સ તથાભૂતો વ્રીહનકો નામ રસો ભવતિ । અ માત્રઃ-વિનયયોગ્યાનાં માતાપિત્રાદિપૂજ્યજનનાં વિનયોપચારવ્યતિક્રમે સર્વિ સજ્જનસ્ય પશ્ચાદ્ વ્રીહા પ્રાદુર્ભવતિ-અહો ! મયા કથં માતાપિત્રાદીનામપમાન કૃતો ? इति, तथा-સુહૃદાં રહસ્યસ્ય અન્યજનસન્નિધૌ કથને પશ્ચાદ્ સજ્જનસ્ય વ્રીહા ભવતિ-કથં મયા સુહૃદો રહસ્યમન્યજનસન્નિધૌ નિવેદિતમ્ ? इति, तथा-તથા-પિતૃવ્યકલાચાર્યાદિગુરુજનનાં માર્યાણાં શીલમજ્ઞે કૃતે સર્વિ પશ્ચાદ્ વ્રીહ સમુત્પદ્યતે-અહો ! મયા દુરાત્મના કિમિદં દુષ્કૃતં કૃતમ્ ? इति इत्येवं रूपेण व्रीहनको रसः समुत्पद्यते । तथा च-शिरोऽधोऽवमनगात्रसंकोचरूपा लज्जा, म

લજ્જા, ઓર શંકાકરના એ હસ રસ કે ચિહ્ન હોતે હૈં । એસા (વેલણ અં મામ રસો) યહ વ્રીહનક નામ કા રસ હોતા હૈ । તાત્પર્ય હસકા યા હૈ, કિ- ' વિનય યોગ્ય પૂજ્ય માતા પિતા આદિ ગુરુજનોં કા યથાયોગ્ય વિનયોપચાર જય ઉલ્લંઘિત હો જાતા હૈ, તય સજ્જન પુરુષોં કો બાદ ં લજ્જા આતી હૈ । વે વિચારતે હૈં કિ અરે ! હમને કયોં માતા પિત્ર અસહિ જનોં કા અપમાન કિયા હૈ ? તથા અપને મિત્રજનોં કા રહસ્ય જય દુસરે વ્યક્તિયોં કો પાસ પ્રગટ કરતા હૈ, તય બાદ મેં હસ ઉત્પન્નકર્તા સજ્જન કો લજ્જા આતી હૈ ઓર વહ સોચતા હૈ કિ ' કયાંકે દુસરોં કો સમક્ષ અપને મિત્ર કો રહસ્ય કા ઉદ્ઘાટન કિયા તમિ-પિતૃવ્ય, કલાચાર્ય આદિ ગુરુજનોં કી માર્યાઓં કા શીલમંમ ક હૈં પ્ર મનુષ્ય કો બાદ મેં વ્રીહા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । વહ સોચતા હૈ-સુહૃદુસત્મા મે યહ દુષ્કૃત કયોં કિયા ? હસ પ્રકાર સે યહ વ્રીહનક રસ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । શિર કો નીચા નમાના શરીર કો સંકુચિત કરનાં હ

ચિહ્ન છે. એવો વ્રીહનક નામ રસ હોય છે. તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે કે વિનય યોગ્ય પૂજ્ય માતાપિતા વગેરે ગુરુજનો સાથેના ઉચિત વિનયોપચાર બધા જ ગુરુજનો વડે ઉલ્લંઘિત થાય છે ત્યારે તેમને લજ્જાની અનુભૂતિ થાય છે. તેઓ વિચાર કરે છે, કે ' અરે ! અમે માતાપિતા વગેરેનું અપમાન કર્યું છે. ' તેમજ માણસ પોતાના મિત્રોની શુભ વાત બધારે બીજાને કહે છે ત્યારે તેને શુભ વાત કહ્યા બાદ લજ્જાની અનુભૂતિ થાય છે અને તે વિચાર કરે છે કે ' અરે ! મેં દુરાત્માએ આ કામ શું કામ કર્યું ? ' આ પ્રમાણે તે વ્રીહનક રસ ઉત્પન્ન થાય છે લજ્જામાં મસ્તક નીચે થવું અને શરીર સંકુચિત

જેનુવીનગણનાંકા ટીકા સૂત્ર ૧૭૪ સલક્ષણત્રીડનકરસનિરૂપણમ

કથિત્ કથિત્ કિમપિ કથયિષ્યતિ તુ ન ? इत्येवं सर्वत्र या मनसोऽभिप्रेक्षा, या
 शङ्का, तयोः कारणं=निष्पादनमेवास्य लक्षणमिति । अस्योदाहरणमाह-त्रीडनक
 रसो यथा-लौकिककरणया=लौकिकक्रियायाः परं लज्जनीयतरम्=अतिशयलज्ज-
 स्पदं किमस्ति ? नातः परं किमपि लज्जास्पदमस्तीत्यर्थः, इत्यतोऽहं लज्ज-
 लज्जायां हेतुमाह-यत्=यस्मात् कारणात् वारिज्जम्मि देशी शब्दोऽयम्,
 विवाहे वधूवरयोः प्रथमसंगमे जाते 'वारिज्जंमि विवाहे इत्यर्थः' गुरुजन-
 भश्चभथुरारिः वधूपोतं=स्तुवापरिधानवस्त्रं परिवन्दते=नमस्करोति । अस्य गाथाया
 अवतरणमेवं बोद्धव्यम्-कस्मिंश्चिद् देशेऽयं व्यवहारोऽस्ति, यत् वधूवरयोः प्रथम-
 रूपे 'लज्जा' होती है । 'मुझसे कोई कुछ कहेगा तो नहीं ?' इस
 प्रकार सर्वत्र जो मन में आशंका बन जाती है उसका नाम 'शंका'
 है । लज्जा और शंका इनका उत्पन्न करना ही इस त्रीडनक रस के
 लक्षण हैं । इसका ज्ञान जिस प्रकार से होता है, सूत्रकार उस प्रकार
 की (बेलणओ रसो जहा) इन पदों द्वारा प्रकट करने की सूचना देते
 हैं । वे कहते हैं कि- 'यह त्रीडनक रस इस प्रकार से है ।' जैसे- (कि
 लोइयकरणीओ लज्जणीअतरं ति लज्जया मुत्ति) इस लौकिकक्रिया
 से अधिक और लज्जास्पद बात क्या हो सकती है ? मैं तो
 इससे बहुत लज्जाती हूँ । (वारिज्जम्मि गुरुजणो परिवंदइ जं बहुप्पोत्तं)
 वधूवर के प्रथम संगम होनेपर गुरुजन-सास ससुर आदि-जो वधूपोत
 को-बहु द्वारा परिधृत वस्त्र की प्रशंसा करते हैं । इस गाथा का अव-
 तरण इसप्रकार से है-किसी देश में ऐसे चाल है-कि 'जब वधूवर का

કરતું થાય છે 'મને કોઈ કંઈ કહેશે તો નહીં ?' આ પ્રમાણે
 મનમાં જે આશંકાઓ ઉત્પન્ન થાય છે તે 'શંકા' છે લલ્લના અને શંકા
 ઉત્પન્ન થવી તેજ ત્રીડનક રસનું લક્ષણ છે આ રસનું જ્ઞાન કેવું
 હોય છે, સૂત્રકાર તે વિષયમાં કહે છે કે 'આ ત્રીડનકરસ આ પ્રમાણે
 છે, જેમ કે (કિ લોઈયકરણીઓ લજ્જણીઅતરંતિ લજ્જયા મુત્તિ) આ લૌકિક
 વ્યવહારથી વધારે કંઈ લલ્લસ્પદ વાત થઈ શકે છે ? 'મને તો એનાથી
 ખહુજ શરમ આવે છે.' (વારિજ્જમ્મિ ગુરુજણો પરિવંદહ જં વહુપ્પોત્તં) મને તો
 આનાથી ખહુજ શરમ આવે છે (વારિજ્જમ્મિ ગુરુજણો પરિવંદહ જં વહુપ્પોત્તં)
 વધૂ-વરના પ્રથમ-સમાગમ પછી ગુરુજનો-સાસુસસરા વગેરે-વહુએ પહેરેલા
 વસ્ત્રના વખાણુ કરે છે. આ ગાથાનું અવતરણુ આ પ્રમાણે છે-કોઈ એક

૬૫૯

અનુયોગદ્વાર

જાણે વધી વધવા નિવસનં શોષિતામિષિકં ભવતિ, તદા સા પૂર્વમકૂતસંગમમ્ભર
સતી વર્તેતે इति लोका मन्यन्ते । तस्यास्तद्रक्तारुणितं वसनं वृत्ततीत्यख्यापना
कविद्वये आम्ब्यते । तस्याः श्वशुरादयो गुरुजना बहुमानपुरस्सरं तद्वस्त्रं वन्दते
सर्वं देशाचारमनुसृत्य कस्याश्चिद्वध्वास्तथाविधं निवसनं प्रतिगृहं नीयते गुरुजनैः
कम्बुच्यते । तद् दृष्ट्वा वधूः स्वसखीं वदति - 'किं लोभ्यकरणीओ' इत्यादि ॥ सू. १७४
इति श्री निम्बविल्यात जगद्गल्लमादिपदभूषित बालब्रह्मचारी 'जैनाचार्य' पूज्य
घासीलालव्रतिविरचिता "अनुयोगद्वारसूत्रस्य" अनुयोगचन्द्रिकाख्यायां टीका

પ્રથમો ભાગઃ સમાપ્તઃ

સુદાગરાત્રિ મેં પ્રથમ સંગમ હોતા-હે-તથા ઉસ સંગમ મેં-ચદિ વધુ
પરિણા હુમા વસ્ત્ર-સ્ત્રન સે યુક્ત હોતા તો, ઉસસે વહ એસી જાની જાણ
હે-કિ-“યહ પહેલે અકૂનસંગમા રહી હે અતઃ સતી હે । એસા સ્ત્રો
જાણતે હે । ઉસકે ઉસ રુધિરરક્ત-વસ્ત્ર કો હર એક ઘર મેં ઉસકે સતી
કે વસ્ત્રવન કે લિયે ઘુમાયા જાતા હે । ઉસકે શ્વશુર આદિ ગુરુજન
જુમાન પુરસ્સર ઉસ વસ્ત્ર કી પ્રશંસા કરતે હે । હસી દેશાચાર કં
કેકર કિસી વધુ કે ઉસ પ્રકાર કે વસ્ત્ર કો ગુરુજનો દ્વારા વંદિત હોત
હુમા દેલ-કર કિસી વધુ ને અપની સહી સે એસા કહા હે-કિ” િ
લોભ્યકરણીઓ इत्यादि । ॥ सू० १७४ ॥

જૈનાચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજીમહારાજકૃત ‘અનુયોગદ્વાર’ સૂત્ર ની
અનુયોગચન્દ્રિકાટીકા કા પ્રથમ ભાગ સમાપ્ત

જાણે એવી પ્રથા છે કે બ્યારે સુદાગરાત્રિમાં વધુવરને પ્રથમ-સમાગમ
જાણે છે ત્યારે તે સંગમમાં જો વધુએ પહેરેલું વસ્ત્ર લોહીવાળું થઈ જાય
કે તે તેથી એમ માનવામાં આવે છે કે તે સતી પહેલા અકૂતસંગમાં રહી છે.
એથી તે સતી છે. એવું લોકો માને છે તેથી વધુના તે લોહીથી ખરડાયેલા
વસ્ત્રને તેના સતીત્વની પ્રસિદ્ધિ માટે દરેકે દરેક ઘરમાં બતાવવામાં આવે છે
તેના શ્વશુર વગેરે ગુરુજનો ભારે સન્માનપૂર્વક તે વસ્ત્રોના ખૂબજ વખાણ
કરે છે આ બતાવના લોકાચારને અનુલક્ષીને કોઈ એક વધુના વસ્ત્રને ગુરુજનો
વધે પ્રશંસિત થવું જોઈને તે વધુએ પોતાની સખીને આ પ્રમાણે કહ્યું છે કે-
“કિં લોભ્યકરણીઓ इत्यादि ” ॥સૂ૦૧૭૪॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજીમહારાજકૃત ‘અનુયોગદ્વાર સૂત્ર’ ની અનુયોગ-
ચન્દ્રિકાટીકાનો પહેલો ભાગ સમાપ્ત.

